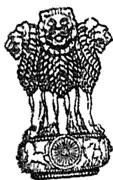
तीसरी पंचवर्षीय योजना





योजना-आयोग, भारत-सरकार
की ओर से प्रकाशित

ज्येष्ठ 1884 (मई 1962)

निदेशक, प्रकाशन-विभाग, पुराना सचिवालय, दिल्ली-६, द्वारा प्रकाशित
तथा प्रबन्धक, भारत-सरकार-मुद्रणालय, फरीदाबाद, द्वारा मुद्रित ।

तीसरी पंचवर्षीय योजना

संक्षिप्त विषय-सूची

विषय-सूची

भूमिका

इस रिपोर्ट में तीसरी पंचवर्षीय योजना के विकास-सम्बन्धी उद्देश्यों, नीतियों और कार्यक्रमों को प्रस्तुत किया गया है ।

विगत दो पंचवर्षीय योजनाओं ने आर्थिक तथा सामाजिक जीवन की बुनियादें मज़बूत करने में सहायता दी है और औद्योगिक एवं आर्थिक विकास तथा वैज्ञानिक एवं टेक्नोलाजी-सम्बन्धी प्रगति को प्रोत्साहित किया है ।

तीसरी पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य संविधान के सामाजिक लक्ष्यों को अधिक ठोस रूप देना है तथा इससे उस महान् प्रगति का आभास मिलता है, जो उन उद्देश्यों की पूर्ति की दिशा में हुई है । इसमें पहली दो योजनाओं की सफलताओं और विफलताओं को दृष्टि में रखते हुए अगले 15 वर्षों या इससे भी अधिक अवधि में पूरे किए जानेवाले विकास-कार्यों को प्रस्तुत किया गया है ।

तीसरी योजना तैयार करने का काम सन् 1958 के अन्त में प्रारम्भ हुआ और इसे तीन प्रमुख चरणों में पूरा किया गया । पहला चरण जुलाई 1960 के आरम्भ में प्रारम्भिक रूपरेखा के प्रकाशन के साथ समाप्त हुआ और इस अवधि में राज्यों तथा केन्द्रीय सरकार-द्वारा नियुक्त कार्यकारी दलों ने विस्तृत अध्ययन किया । संसद् ने अगस्त 1960 में प्रारम्भिक रूपरेखा को सामान्य स्वीकृति प्रदान की ।

प्रारम्भिक रूपरेखा पर देश-भर में विचार-विमर्श हुआ और इसके आधार पर राज्यों की योजनाएं तैयार की गई । इन पर सितम्बर-नवम्बर 1960 में राज्यों के मुख्य मन्त्रियों के साथ मिलकर विचार-विमर्श किया गया । जनवरी 1961 में राष्ट्रीय विकास-परिषद् ने तीसरी योजना के सम्पूर्ण आकार और स्वरूप के सम्बन्ध में अपनी सिफारिशें दीं; परिषद् ने तीसरी योजना के लिए साधनों के अधिकतम संग्रह के उपायों पर सुझाव देने के लिए एक बचत-समिति भी नियुक्त की । अन्त में, 31 मई और 1 जून, 1961 को राष्ट्रीय विकास-परिषद् ने तीसरी योजना की प्रारम्भिक रिपोर्ट पर विचार किया और सामान्यतः उसे स्वीकृति दी ।

नवम्बर 1960 में पांच संसदीय समितियों ने तीसरी योजना के उद्देश्यों तथा प्राथमिकताओं पर सावधानी से विचार किया । इस रिपोर्ट में उक्त समितियों के सुझावों और टीकाओं से लाभ उठाने का पूरा-पूरा प्रयत्न किया गया है । समय-समय पर विभिन्न राजनीतिक दलों से सम्बद्ध संसत्सदस्यों की समिति के समक्ष, जिसके अध्यक्ष प्रधान मन्त्री थे, योजना के विभिन्न पहलू विचारार्थ प्रस्तुत किए गए । योजना-आयोग से सम्बद्ध संसत्सदस्यों की सलाहकार समिति ने भी विभिन्न चरणों में योजना पर विचार-विमर्श किया ।

योजना-निर्माण की सम्पूर्ण अवधि में प्रमुख लोकनेताओं, विद्वानों, व्यावसायिक संघों, उद्योगों एवं श्रमिकों से सम्बद्ध संगठनों तथा स्वतन्त्र विशेषज्ञों ने उदारतापूर्वक अपने समय और अनुभवों का लाभ प्रदान किया । योजना-आयोग को अपने अर्थशास्त्रियों और विज्ञानवेत्ताओं के मंडलों तथा भूमि-सुधार, कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आवास-सम्बन्धी

मंडलों के परामर्श और सुझावों का भी लाभ प्राप्त हुआ। कार्यक्रम-मूल्यांकन-संगठन, अनुसन्धान-कार्यक्रम-समिति, योजना की परियोजनाओं-सम्बन्धी समिति, केन्द्रीय अंक-संकलन-संगठन, भारतीय अंक-संकलन-संस्था और अनुसन्धान के क्षेत्र में संलग्न अन्य संगठनों के अध्ययन के परिणामों से भी आयोग को सहायता मिली। जिला, खंड और ग्राम-स्तर पर—विशेष रूप से कृषि, सहकारिता, शिक्षा एवं ग्रामोद्योगों के विकास के सम्बन्ध में—योजनाओं का निर्माण राष्ट्रीय योजना तथा राज्यों की योजनाएं तैयार करने की प्रक्रिया का एक अविच्छेद्य अंग था। ये स्थानीय योजनाएं पंचायती राज की सफलता का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग हैं, क्योंकि पंचायती राज के ज़रिए हर क्षेत्र के निवासियों पर अपने विकास के लिए पहल करने, ज़िम्मेदारी सम्भालने और तीव्र प्रगति के लिए समुचित उपाय तथा साधन ढूंढ़ने का भार डाला गया है।

इस प्रकार, तीसरी योजना की तैयारी एक विशाल राष्ट्रीय प्रयत्न था, जिसमें अनेक क्षेत्रों से मूल्यवान सहयोग मिला है और हर चरण पर राज्य-सरकारों तथा केन्द्रीय मन्त्रालयों का घनिष्ठतम सहयोग रहा है।

तीसरी योजना अगले 15 वर्षों या इससे भी अधिक समय के दीर्घकालीन विकास की एक बड़ी योजना का प्रथम चरण है। उस बड़ी योजना की तैयारी का काम अब हाथ में लिया जाएगा। इस योजना की अवधि में भारत की अर्थव्यवस्था का सिर्फ तेज़ी से विस्तार ही नहीं होना चाहिए, बल्कि उसे आत्मनिर्भर और आत्मचालित भी बनाना चाहिए। इस दीर्घकालीन दृष्टिकोण का उद्देश्य देश के प्राकृतिक साधनों के विकास, कृषिगत एवं औद्योगिक प्रगति, सामाजिक ढांचे में परिवर्तन और प्रादेशिक तथा राष्ट्रीय विकास की एक सुसम्बद्ध योजना को एक सामान्य स्वरूप देना है।

इस योजना में पांच वर्ष की अवधि के लिए बड़े-बड़े उद्देश्य और लक्ष्य निश्चित किए गए हैं। 'बड़े' वे सिर्फ विगत योजनाओं की तुलना में हैं, देश की आवश्यकताओं और उन्हें पूरा करने की देश की सामर्थ्य की दृष्टि से नहीं। वस्तुत: वे न्यूनतम आवश्यकताओं को प्रकट करते हैं, जिनकी पूर्ति होनी ही चाहिए; परन्तु उनका मूल उद्देश्य अत्यधिक तात्कालिकता अनुभव करने तथा उसे पूरा करने के लिए सघन प्रयत्नों का मार्ग प्रशस्त करना है।

परन्तु साथ ही, कार्य की विशालता और बहुमुखी चुनौतियों को भी कम नहीं समझा जाना चाहिए। योजना में सबसे अधिक बल व्यावहारिक परिणाम प्राप्त करने के लिए उसकी कार्यान्विति तथा दोषहीनता और ऐसी परिस्थितियों के निर्माण पर दिया जाना चाहिए, जिनमें अधिकतम उत्पादन हो, अधिकतम लोगों को रोज़गार मिले तथा मानवीय साधनों का अधिकतम विकास हो। सामाजिक और आर्थिक प्रगति तथा समाजवाद की स्थापना के लिए अनुशासन और राष्ट्रीय एकता ही आधार-सदृश हैं। तीसरी योजना में हर कदम पर और हर स्तर पर निष्ठावान नेतृत्व की आवश्यकता होगी; सरकारी कर्मचारियों से कर्त्तव्यपरायणता और कुशलता के उच्चतम स्तर की अपेक्षा की जाएगी; तथा जनता में व्यापक रूप से योजना के प्रति समझदारी एवं सहयोग-भाव बढ़ाने और भविष्य में उसे अपनी ज़िम्मेदारी का पूरा हिस्सा निभाने तथा अपेक्षाकृत अधिक बोझ उठाने के लिए तत्पर करने की आवश्यकता होगी।

योजना-आयोग

अध्यक्ष :

जवाहरलाल नेहरू

उपाध्यक्ष :

गुलज़ारीलाल नन्दा

सदस्य :

मोरारजी आर० देसाई
वी० के० कृष्णमेनन
सी० एम० त्रिवेदी
श्रीमन्नारायण
टी० एन० सिंह
ए० एन० खोसला,
पी० सी० महलानवीस,

सचिव :

विष्णु सहाय

अतिरिक्त सचिव :

तरलोक सिंह

अध्याय 1

योजनाबद्ध विकास के उद्देश्य

(1)

भूमिका

भारत के विकास का मूलभूत उद्देश्य, निश्चित रूप से, यह होना चाहिए कि भारतीय जनता को सुचारु जीवन व्यतीत करने का अवसर मिले। वस्तुतः सब देशों का अपनी जनता के प्रति यही उद्देश्य होता है, यद्यपि सुचारु जीवन की व्याख्या विभिन्न प्रकार से हो सकती है। सारे विश्व को ध्यान में रखते हुए, भारत के साथ-साथ अन्य देशों के लिए भी इस उद्देश्य की पूर्ति इस बात से गहरा सम्बन्ध रखती है और इसी पर निर्भर करती है कि विश्व में शान्ति कायम रहे। आधुनिक हथियारों से लड़े जानेवाले युद्ध से न केवल उन्नति की सब आशाओं पर पानी फिर जाएगा, अपितु मानव-जाति का अस्तित्व भी संकट में पड़ जाएगा। इसलिए, शान्ति का सबसे अधिक महत्व है और राष्ट्रीय उन्नति के लिए वह सबसे पहले जरूरी है। जब तक अर्द्धविकसित और निर्धनताग्रस्त राष्ट्र तथा लोग रहेंगे, तब तक वे स्वयं शान्ति-रक्षा के लिए अनिवार्य संकट बने रहेंगे। इसलिए अब इस बात को अधिक-से-अधिक स्वीकार किया जा रहा है कि विश्व की शान्ति और कल्याण के लिए प्रत्येक देश में गरीबी, बीमारी और अज्ञान का अन्त होना चाहिए, जिससे एक उन्मुक्त मानवता का निर्माण हो सके।

2. प्रत्येक प्रमुख संस्कृति और सभ्यता की कुछ अपनी विशेषताएं होती हैं, जिनकी जड़ें भूतकाल में जमी रहती हैं और जिन पर उस संस्कृति की छाप होती है। भारत पर, जिसका हजारों साल पुराना इतिहास है, अब भी अपनी निजी विशेषताओं की गहरी छाप मौजूद है। परम्परागत समाज और भूतकाल की अवरुद्ध अर्थव्यवस्था के, जिसे औपनिवेशिक शासन ने कुछ हद तक जड़ीभूत कर दिया था, परिणामस्वरूप व्यापक और भयंकर गरीबी ने आज उन विशेषताओं को ढंक दिया है। पर संस्कृति की ये आवश्यक बातें ऊपरी तौर पर समाज की परम्परागत रचना के साथ जुड़ी रहने पर भी किसी भी तरह उसका अविच्छेद्य अंग नहीं हैं। दरअसल, ये नैतिक और आचार-शास्त्र के कुछ ऐसे मूल्य हैं, जिन्होंने भूतकाल में कई युगों तक भारतीय जीवन को प्रभावित किया है, चाहे जनता इनके अनुसार अपना जीवन भले न बिता सकी हो। ये मूल्य भारत के चिन्तन का एक अंग हैं, यद्यपि यह चिन्तन आधुनिक विश्व की वैज्ञानिक और टेक्नोलाजिकल सभ्यता के प्रभाव की ओर अधिकाधिक उन्मुख है। कुछ हद तक भारत की समस्या यह है कि इन दोनों के बीच किस प्रकार मेल पैदा किया जाए। आधुनिक जगत में, सम्भवतः अन्य कोई देश गांधी पैदा नहीं कर सकता था; टैगोर का भी, जिनका जीवन की समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण एकदम आधुनिक था, भारत की प्राचीन संस्कृति और चिन्तन-पद्धति की ओर झुकाव था। इस प्रकार, उनका सन्देश इन दोनों के बीच समन्वय का सन्देश है।

3. भारत की 40 करोड़ से भी कुछ अधिक जनता के लिए सुखद जीवन की व्यवस्था करना एक महान् कार्य है और इस लक्ष्य की उपलब्धि में बहुत समय लगेगा। पर इससे कम लक्ष्य की बात नहीं सोची जा सकती, क्योंकि वर्तमान में उठाया गया प्रत्येक पग अन्तिम उद्देश्य के अनुकूल होना चाहिए। बनाई जा रही योजनाओं के पीछे भविष्य की दृष्टि है—ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार भारतीय जनता के दीर्घकालीन राष्ट्रीय संघर्ष के पीछे स्वतन्त्रता और स्वाधीनता की दृष्टि थी। इन योजनाओं में भविष्य के प्रति आस्था और विश्वास है। अपनी मौजूदा दिक्कतों के प्रति हम पूर्णतः सजग हैं और इसके साथ ही हमें यह दृढ़ विश्वास है कि इन दिक्कतों पर विजय पा ली जाएगी। आयोजन के पिछले दस सालों में प्राप्त अनुभव और अब तक के बड़े-बड़े सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों ने यह धारणा पैदा कर दी है कि भारत विश्वास-पूर्वक आनेवाले समय में सतत आर्थिक प्रगति की आशा कर सकता है। इस प्राचीन भूमि में भी, जहां चिरकाल से परम्पराओं का राज्य रहा है, परिवर्तन की ऐसी हवाएं बह रही हैं, जो न केवल नगर-निवासी को, किन्तु अपने खेतों में काम करनेवाले किसानों को भी प्रभावित कर रही हैं। प्रत्येक पग पर नए गतिरोध और नई चुनौतियां सामने आती हैं। इनका मुकाबला साहस और विश्वास के साथ करना होगा। ज्यों-ज्यों भारत की विकास-योजनाओं का नाटक आगे बढ़ता है, त्यों-त्यों भारत के परिवर्तनगत स्वरूप में एक नया उत्साह, एक नई उत्तेजना, परिलक्षित होती है।

4. इस समय सर्वप्रथम ध्यान देने-योग्य समस्या गरीबी और इससे पैदा होनेवाली सारी बुराइयों का मुकाबला करने की है और यह बात समझ ली गई है कि यह काम केवल सामाजिक और आर्थिक प्रगति से ही हो सकता है। इसके फलस्वरूप एक ऐसे समाज का निर्माण होगा, जो टेक्नोलाजिकल दृष्टि से परिपक्व होगा, और एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था बनेगी, जिसमें सब नागरिकों के लिए समान अवसर प्राप्त होंगे। इसके लिए बुनियादी सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन करने होंगे और प्राचीन परम्परागत व्यवस्था के स्थान पर एक सशक्त समाज कायम करना होगा। इस दिशा में बढ़ने के लिए न केवल विज्ञान और आधुनिक टेक्नोलाजी का दृष्टिकोण और उसका प्रयोग अपनाना होगा, बल्कि सामाजिक रिवाजों और संस्थाओं में भी दूरगामी परिवर्तन करने होंगे। कुछ सीमा तक पिछली कई पीढ़ियों से भारतीय मानस में इन दोनों प्रकार के परिवर्तनों के लिए तत्परता मौजूद हैं। धीमे-धीमे, इसने ज्यादा ठोस रूप ग्रहण किया है और अब यह आयोजन का आधार बन गई है।

5. यह बात अपरिहार्य थी कि भारत के स्वतन्त्रता-संघर्ष-काल में स्वाधीनता का राजनीतिक पक्ष अन्य सब चीज़ों पर हावी हो जाता है। फिर भी, शुरू से ही भारत की राष्ट्रीयता में आर्थिक चिन्तन और समाज-सुधार के तत्व बड़ी मात्रा में मौजूद थे। कुछ हद तक यह बात एक राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए असाधारण थी। आम लोगों की गरीबी को दूर करने, तथा भारत के सामाजिक और आर्थिक जीवन के समस्त ढांचे के पुनर्निर्माण के लिए स्वतन्त्रता को ही अनिवार्य साधन माना जाता था। दादाभाई नौरोजी से लेकर, जिनका पत्र 'दि पावर्टी आफ इंडिया' (भारत की गरीबी) विषयक लेख 1876 में पेश किया गया था, परवर्ती अनेक राष्ट्रीय नेताओं ने इन उद्देश्यों को राष्ट्रीय संग्राम में सर्वोपरि स्थान दिया। ज्यों-ज्यों राष्ट्रीय आन्दोलन

बढ़ा और उसका विस्तार भारत की जनता के मध्य हुआ, इसका सामाजिक तत्व प्रबलतर होता गया। महात्मा गांधी के आविर्भाव के साथ, यह आन्दोलन बड़ी तेज़ी से भारत के किसानों और मजदूरों में फैला। गांधीजी के लिए स्वतन्त्रता केवल एक राजनीतिक लक्ष्य नही था, बल्कि उसका मतलब आम लोगों को गरीबी और अधःपतन से ऊंचा उठाना था। उन्होंने भारतीय जनता के साथ अपने को मिला दिया, विशेषतः उनके साथ, जो सामाजिक व्यवस्था में एकदम निम्न श्रेणी के थे। उनके नेतृत्व में राष्ट्रीय आन्दोलन ने आम जनता की अधिकाधिक सेवा में अपने को संलग्न किया और क्रमशः अधिक-से-अधिक किसान इसमें सम्मिलित हुए। फलस्वरूप इसके कार्यक्रम में कृषि-सम्बन्धी समस्या ने एक प्रमुख स्थान प्राप्त कर लिया—ठीक वैसे ही, जैसे गांधीजी के नेतृत्व में दलितों और अधिकारहीनों का उत्थान इस आन्दोलन का एक प्रमुख अंग बना।

6. इस प्रकार, स्वतन्त्रता के लिए राजनीतिक संघर्ष जैसे-जैसे विकसित हुआ और इसने विशाल आन्दोलनों का रूप धारण किया, वैसे-वैसे इसका सम्बन्ध कुछ सीमा तक भारत की बुनियादी, सामाजिक और आर्थिक समस्याओं के साथ और खास तौर पर कृषि-समस्याओं के साथ जुड़ा। स्वतन्त्रता-संघर्ष के सामाजिक और आर्थिक ध्येय निरन्तर अधिक रूप में स्पष्ट होते गए। सन् 1931 में एक व्यापक आर्थिक कार्यक्रम और सन् 1936 में एक कृषि-कार्यक्रम स्वीकार किया गया। सन् 1938 के अन्त में एक राष्ट्रीय आयोजन-समिति गठित की गई, और इस प्रकार आयोजन के विचार ने भारत में प्रमुखता प्राप्त की। परन्तु शीघ्र ही द्वितीय विश्व-युद्ध प्रारम्भ हो जाने के कारण, राष्ट्रीय आयोजन-समिति अपना काम प्रभावशाली ढंग से न कर सकी और इस अवधि में इसके कई सदस्यों को जेल भेज दिया गया। पर इसने आयोजन के लगभग सभी पहलुओं पर विचार कर लिया था और अन्त में एक ऐसी अध्ययन-माला भी प्रस्तुत की थी, जिसमें सामाजिक और आर्थिक नीतियों तथा कार्यक्रमों के बारे में विवरण दिया गया था, जो स्वतन्त्रता के बाद आयोजन के और अधिक संगठित प्रयास का आधार बने।

7. द्वितीय विश्व-युद्ध के परिणामस्वरूप, परिस्थितियों से बाध्य होकर, भारत में कुछ उद्योगों का विकास हुआ। स्वतन्त्रता-प्राप्ति से पहले भी, अन्तरिम सरकार ने आयोजन की ओर ध्यान दिया और एक सलाहकार आयोजन-बोर्ड कायम किया, जिसका काम आयोजन के लिए समस्त उपलब्ध सामग्री का संग्रह करना था। देश-विभाजन के भयंकर परिणामों और बड़ी संख्या में जनता के बेघरबार होकर पाकिस्तान से भारत और भारत से पाकिस्तान जाने के कारण, इस बोर्ड की सिफारिशों को क्रियान्वित करने में कुछ देर हो गई। सन् 1950 के प्रारम्भ में भारत की संविधान सभा-द्वारा नया संविधान मंजूर किए जाने के बाद भारत-सरकार ने योजना-आयोग स्थापित किया, जिसका उद्देश्य देश के भौतिक, पूंजीगत और मानवीय साधनों का मूल्यांकन करना और इनके अत्यधिक प्रभावशाली एवं सन्तुलित उपयोग की योजना बनाना था।

8. संविधान में बुनियादी उद्देश्य 'राज्य-नीति के निदेशक सिद्धान्तों' में कहे गए हैं। इन 'निदेशक सिद्धान्तों' में भी कहा गया है कि :

"राज्य जनता के कल्याण की अभिवृद्धि का प्रयत्न एक ऐसी सामाजिक

व्यवस्था की यथासम्भव प्रभावशाली रूप में स्थापना और उसकी रक्षा करके करेगा, जिसके अन्तर्गत न्याय—सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक—राष्ट्रीय जीवन की समस्त संस्थाओं में व्याप्त होगा।"

यह भी कहा गया है कि :

"राज्य अपनी नीति का संचालन खास तौर पर निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए करेगा :

(अ) नागरिकों को—पुरुषों और स्त्रियों, दोनों को समान रूप से—जीवन-निर्वाह के पर्याप्त साधनों का अधिकार प्राप्त होगा;

(आ) समाज के भौतिक साधनों के स्वामित्व और नियन्त्रण का वितरण इस प्रकार किया जाएगा कि सर्वोत्तम रूप से सबका भला हो ;

(इ) आर्थिक प्रणाली की कार्यान्विति का परिणाम ऐसा न हो कि धन और उत्पादन के साधनों का जमाव आम जनता के हितों के विरुद्ध हो जाए ;

दिसम्बर 1954 में इन सामान्य सिद्धान्तों को और भी निश्चित दिशा प्रदान की गई, जब संसद ने सामाजिक और आर्थिक नीति के उद्देश्य-रूप में 'समाजवादी ढंग के समाज' का आदर्श स्वीकार किया। यह सिद्धान्त, जिसमें समाजवाद और लोकतन्त्र के मूल्य तथा योजनाबद्ध विकास के प्रति दृष्टिकोण मूर्तिमान हैं, अचानक किसी परिवर्तन का सूचक नहीं था, बल्कि इसकी जड़ें भारत के स्वतन्त्रता-संग्राम में गहरे रूप में मौजूद थीं।

9. इस प्रकार, स्वतन्त्रता के बाद दो मुख्य लक्ष्यों ने भारत के योजनाबद्ध विकास का पथ-प्रदर्शन किया है—लोकतान्त्रिक साधनों से एक द्रुत विस्तारशील और टेक्नोलाजी की दृष्टि से पर्याप्त प्रगतिशील अर्थ-व्यवस्था का निर्माण; और एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना, जो न्याय पर आधारित हो और प्रत्येक नागरिक को समान अवसर प्रदान करे। एक परम्परागत समाज को एक शक्तिशाली समाज में बदलना—वह भी एक ऐसे देश में, जिसकी आबादी विशाल हो और जहां के लोग अपनी प्राचीन रूढ़ियों से बुरी तरह ग्रस्त हों—एक बहुत बड़ा काम था। चूंकि यह काम शान्तिमय और लोकतान्त्रिक साधनों से तथा जनता की रज़ामन्दी से करना था, इसलिए यह और भी कठिन हो गया। परन्तु यह अनिवार्य था कि भारत शान्तिमय और लोकतान्त्रिक साधनों को स्वीकार करता, क्योंकि स्वतन्त्रता-संग्राम में भी वह इन्हीं तरीकों को काम में लाया था।

10. इन उद्देश्यों को दृष्टि में रखते हुए, पहली पंचवर्षीय योजना ने सीमित साधनों और अपर्याप्त तथ्यों के आधार पर इस काम को हाथ में लिया। इसमें जो तात्कालिक उद्देश्य रखे गए थे, वे पूरे हुए और इस सफलता ने राष्ट्र में विश्वास पैदा किया। दूसरी पंचवर्षीय योजना कुछ अधिक अनुभव और अधिक ज्ञान पर आधारित थी। इसमें अपेक्षाकृत बड़े लक्ष्य निश्चित किए गए और 'समाजवादी ढंग के समाज' के सिद्धान्त के आधार पर आर्थिक और औद्योगिक प्रगति के लिए एक दीर्घकालीन

नीति स्वीकार की गई। योजनाबद्ध विकास किस प्रकार किया जा सकता है, इसका वर्णन करते हुए दूसरी पंचवर्षीय योजना में कहा गया :

> "एक अर्द्धविकसित देश के सामने केवल मौजूदा आर्थिक और सामाजिक संस्थाओं के ढांचे के भीतर और अधिक अच्छे परिणाम प्राप्त करने का ही सवाल नहीं होता, बल्कि उन्हें इस तरह ढालने और बनाने का भी सवाल होता है, जिससे वे और अधिक विस्तृत और गहरे सामाजिक मूल्यों की प्राप्ति में प्रभावशाली ढंग से अपना अंशदान कर सकें।
>
> "इन मूल्यों अथवा बुनियादी उद्देश्यों को हाल में एक वाक्य में संक्षिप्त कर दिया गया है : 'समाजवादी ढंग का समाज'। निश्चय ही, इसका मतलब यह है कि प्रगति की दिशा निश्चित करते समय बुनियादी आधार निजी लाभ नहीं, बल्कि सामाजिक लाभ होना चाहिए और विकास का स्वरूप तथा सामाजिक-आर्थिक सम्बन्ध का ढांचा ऐसा होना चाहिए कि उससे न केवल पर्याप्त मात्रा में राष्ट्रीय आय और रोज़गार की वृद्धि हो, बल्कि आय और धन के मामले में और अधिक समानता की स्थिति पैदा हो। उत्पादन, वितरण, खपत और पूंजी-विनियोग—दरअसल समस्त महत्वपूर्ण सामाजिक-आर्थिक सम्बन्धों—से सम्बद्ध प्रमुख निर्णय ऐसी एजेन्सियों-द्वारा किए जाने चाहिएं, जिन्हें सामाजिक उद्देश्य की जानकारी हो। आर्थिक विकास के लाभ समाज के उन वर्गों को ज़्यादा-से-ज़्यादा प्राप्त होने चाहिएं, जिन्हें अपेक्षाकृत कम सुविधाएं प्राप्त हैं; और आय, धन तथा आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण में क्रमशः कमी होनी चाहिए। समस्या इस प्रकार की अवस्थाएं पैदा करने की है, जिनमें एक मामूली आदमी को, जिसे संगठित प्रयत्न-द्वारा प्राप्त होनेवाली विकास की बहुत सारी सम्भावनाओं को देखने और उनमें भाग लेने का बहुत कम अवसर प्राप्त हुआ है, यह अवसर प्राप्त हो कि वह अपने लिए उच्चतर जीवन-स्तर प्राप्त करने और देश के लिए और अधिक समृद्धि बढ़ाने में अपना सर्वोत्तम योगदान दे सके। इस प्रक्रिया में वह आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से ऊंचा उठता है। इस प्रकार, श्रम की उदग्र चलिष्णुता श्रम की क्षैतिज चलिष्णुता से कम आवश्यक नहीं है, क्योंकि आशा को विनष्ट करने और प्रयत्न को निकम्मा बनाने के लिए इससे अधिक और कोई भावना नहीं हो सकती कि जन्म की घटना अथवा छोटी स्थिति से जीवन का प्रारम्भ होना किसी योग्य व्यक्ति को आर्थिक और सामाजिक स्तर में ऊंचा उठने से रोके।
>
> "समाजवादी ढंग के समाज को कोई निश्चित अथवा अपरिवर्तनीय स्वरूप नहीं मानना चाहिए। यह किसी सिद्धान्त अथवा रूढ़ि से उद्भुत नहीं है। हरेक देश अपनी प्रतिभा और परम्पराओं के अनुसार विकसित होता है। ऐतिहासिक परिस्थितियों को दृष्टि में रखकर ही समय-समय पर आर्थिक और सामाजिक नीति का निर्माण करना

पड़ता है। यह न तो ज़रूरी है और न ही वांछनीय कि अर्थ-व्यवस्था एक के ऊपर एक रखे हुए पत्थर की तरह हो अथवा एक ऐसी संस्था बन जाए, जिसमें उसके स्वरूप और काम करने के ढंग के बारे में परीक्षण करने की गुंजायश ही न रहे। सरकारी क्षेत्र के विस्तार का यह मतलब भी नहीं है कि निर्णय करने और अधिकार के प्रयोग का केन्द्रीकरण हो। वस्तुतः उद्देश्य यह होना चाहिए कि कामों का ठीक ढंग से बंटवारा हो और सरकारी उद्यमों को विस्तृत निदेशों और व्यवहार में आनेवाले नियमों के ढांचे के भीतर काम करने की पूरी तौर पर स्वतन्त्रता मिले।

"समाजवादी ढंग के समाज में निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति—जीवन-स्तर को ऊंचा करना, सबके लिए समान अवसर सुलभ करना, सुविधाहीन वर्गों में उद्यम की भावना बढ़ाना और समाज के सब हिस्सों में साझेदारी की भावना का निर्माण करना—पर ज़ोर दिया जाता है। ये निश्चित लक्ष्य मूलभूत निर्णयों की कसौटी हैं। संविधान में राज्य-नीति के निदेशक सिद्धान्तों में खुलासे के साथ इस दृष्टिकोण का संकेत किया गया है; समाजवादी ढंग के समाज में इस दृष्टिकोण की ओर अधिक मूर्त अभिव्यक्ति है। आर्थिक नीति और संस्थागत परिवर्तन का आयोजन इस ढंग से करना होगा कि लोकतान्त्रिक ढंग से और सबके हित में आर्थिक प्रगति हो। लोकतन्त्र के विषय में कहा गया है कि वह विशेष संस्थागत व्यवस्थाओं की अपेक्षा जीवन का एक तरीका है। समाजवादी ढंग के बारे में भी यही कहा जा सकता है।"

(2)

योजनाबद्ध विकास

11. जब स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, तब भारत का औद्योगिक आधार बड़ा दुर्बल था। परम्परागत खेती-बाड़ी के ढांचे के बोझ के नीचे उसके लाखों ग्रामवासी पिस रहे थे। जन-संख्या के बढ़ते हुए दबाव की पृष्ठभूमि में अवरुद्ध आर्थिक विकास की लम्बी अवधि, जिसके बाद विश्व-युद्ध का बोझ पड़ा, के परिणामस्वरूप भारत की अर्थ-व्यवस्था कमज़ोर हो गई थी। चारों ओर गरीबी और अभाव का बोलबाला था। देश के विभाजन ने लाखों लोगों को अपने घरों से उखाड़ दिया था और आर्थिक जीवन विशृंखल हो गया था। कृषि और उद्योग का उत्पादन निम्न स्तर पर पहुंच गया था। आवश्यकताओं के अनुपात में, उपलब्ध स्वदेशी बचत बहुत कम थी। स्वतन्त्रता का लक्ष्य तभी पूरा हो सकता था, जब आर्थिक नींव काफी सुदृढ़ हो जाती। संविधान ने नागरिकता के समान अधिकारों की व्यवस्था कर दी और अब इनकी अभिव्यक्ति जीवन-स्तर को ऊंचा करने और जन-समुदाय के लिए और अधिक अवसर प्रदान करने के द्वारा ही हो सकती थी। यह ज़रूरी था कि ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था का

पुर्ननिर्माण हो, औद्योगिक और वैज्ञानिक उन्नति की नींव रखी जाए और शिक्षा तथा अन्य समाज-सेवाओं का विस्तार किया जाए। इसके लिए राष्ट्रीय स्तर पर आयोजन की जरूरत थी, जिसमें आर्थिक और सामाजिक जीवन के समूचे स्वरूप समा जाएं। इसके साथ-साथ साधनों का संग्रह करने के लिए प्रयत्नों की, प्राथमिकताएं और लक्ष्य निर्धारित करने की, एवं परिवर्तन तथा टेक्नोलाजी-सम्बन्धी उन्नति के लिए विशाल दृष्टिकोण अपनाने की भी आवश्यकता थी। इस प्रकार, योजनाबद्ध विकास एक ऐसा साधन था, जिससे यथासम्भव द्रुत गति से उन्नति का ऊंचा स्तर प्राप्त किया जाता, आर्थिक और सामाजिक जीवन की संस्थाओं का पुर्ननिर्माण होता, और राष्ट्रीय विकास-कार्य के लिए जनता की शक्तियों का संचय किया जा सकता।

12. पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा विकास के जिस स्वरूप की कल्पना की गई है, उसके मुख्य अंगों को यहां संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है। मूलभूत उद्देश्य यह है कि सतत आर्थिक उन्नति के लिए दृढ़ आधार की व्यवस्था हो, लाभदायक रोज़गार के लिए अवसरों को और अधिक बढ़ाया जाए, और आम लोगों के जीवन-स्तर तथा काम करने की परिस्थितियों को सुधारा जाए। विकास की योजना में पहली प्राथमिकता, निश्चय ही, कृषि की है और जहां तक सम्भव हो, कृषि-उत्पादन को उच्चतम स्तर तक बढाना है। पंचवर्षीय योजनाओं में ऐसे सर्वागीण और विविध प्रकार के प्रयत्नों का समावेश है, जिससे किसान के दृष्टिकोण और उसके चारों ओर की अवस्थाओं में परिवर्तन आ सके। कृषि की उन्नति और मानवीय साधनों का विकास, ये दोनों ही बातें समान रूप से उद्योग की प्रगति पर अवलम्बित हैं। उद्योग से न केवल नए औज़ार मिलते है, बल्कि किसानों का मानसिक दृष्टिकोण भी बदलता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आज भारत के अधिकांश कृषक नए औज़ार काम में ला रहे हैं और खेती के नए तरीकों का परीक्षण कर रहे है तथा इससे उनके दृष्टिकोण में परिवर्तन आ रहा है। भारत के गांवों में बाइसिकिलों का बड़ी संख्या में आना न केवल जीवन-स्तर के ऊंचा होने का परिचायक है, बल्कि एक नए और परिवर्तनशील दृष्टिकोण का भी प्रतीक है। खेती और उद्योग को विकास की एक ही प्रक्रिया के अभिन्न अंग मानना चाहिए। इसलिए योजनाबद्ध विकास के द्वारा उद्योग की प्रगति को तेज़ करना होगा और आर्थिक उन्नति में गति लानी होगी। खास तौर पर, भारी उद्योगों और मशीन-निर्माण-उद्योगों को विकसित करना होगा, सरकारी क्षेत्र का विस्तार करना होगा और एक बड़े तथा उन्नतिशील सहकारी क्षेत्र का निर्माण करना होगा। सरकारी क्षेत्र से आशा की जाती है कि बुनियादी और नीतिमूलक महत्व के उद्योगों के साथ-साथ ऐसे उद्योगों के, जो जनोपयोगी सेवा से सम्बद्ध हैं, और अधिक विकास के लिए खास तौर पर व्यवस्था करे तथा जहां तक ज़रूरी हो, अन्य उद्योगों को भी हाथ में ले। अर्थव्यवस्था की आवश्यकता के अनुसार, राज्य-व्यापार को भी वृद्धिशील पैमाने पर हाथ में लेना होगा। संक्षेप में, विकास की योजना में, प्राप्त एजेंसियों का पूरा लाभ उठाते हुए, सरकारी क्षेत्र से आशा की जाती है कि वह पूरे तौर पर, और तुलनात्मक दृष्टि से भी, निजी क्षेत्र से अधिक तेज़ी से विकसित हो।

13. अर्थव्यवस्था के तीव्र विस्तार के साथ, सरकारी क्षेत्र और निजी क्षेत्र, दोनों के विकास के लिए अवसर उत्पन्न होते हैं, और कई प्रकार से दोनों के कार्य परस्पर-पूरक हैं। निजी क्षेत्र में केवल संगठित उद्योग ही शामिल नहीं है, किन्तु कृषि, छोटे उद्योग,

व्यापार, इमारत और निर्माण तथा दूसरे क्षेत्रों में किए जानेवाले बहुत-से अन्य कार्य भी शामिल हैं। क्रमशः इस प्रयत्न को सहकारी स्वरूप ग्रहण करना है। सरकार ने जिन कार्यक्रमों को हाथ में लिया है, उनके मुख्य लक्ष्य हैं: कृषि के, विशेषतः सिंचाई के, विकास की सुविधाओं का विस्तार; अर्थव्यवस्था को कायम रखने के लिए ज़रूरी चीज़ों—जैसे, रेल और सड़क-यातायात, बन्दरगाह और बिजलीघर—का निर्माण; और शिक्षा, स्वास्थ्य तथा अन्य सामाजिक सेवाओं का विस्तार। इन सुविधाओं के द्वारा जिन कार्यों को बढ़ावा मिलता है, वे अधिकतर निजी व्यक्तियों और संगठनों के हाथ में हैं और उनमें से अधिक-से-अधिक की सहायता की जा रही है। इस प्रकार, पंचवर्षीय योजनाएं व्यक्तिगत साहस और सहकारी तथा सम्मिलित प्रयत्न के क्षेत्र का विस्तार करती हैं। बड़े पैमाने के औद्योगिक उद्यम के सीमित क्षेत्र में ही मुख्यतः यह प्रश्न उठता है कि देश की विशेष परिस्थितियों में, अप्रैल 1956 के औद्योगिक नीति-विषयक प्रस्ताव के अनुसार और सामाजिक लक्ष्यों को दृष्टि में रखते हुए, खास प्रकार के काम सरकारी क्षेत्र को दिए जाएं अथवा निजी क्षेत्र को। देश के योजनाबद्ध विकास को दृष्टि में रखते हुए, निजी क्षेत्र के पास एक ऐसा विस्तृत क्षेत्र है, जिसमें वह विकास और विस्तार कर सकता है। निश्चय ही, इसे राष्ट्रीय आयोजन के ढांचे के भीतर और उसके सामान्य उद्देश्यों के साथ समन्वय रखते हुए काम करना होगा तथा निजी क्षेत्र के उद्योगों पर लगातार यह ज़ोर दिया जाएगा कि समूचे समुदाय के प्रति उनके जो कर्त्तव्य हैं, उनका वे पालन करेंगे। साथ ही, निजी क्षेत्र को जो अवसर दिए जाएं, उनके बारे में भी यह देखना ज़रूरी है कि कुछ थोड़े-से व्यक्तियों तथा व्यापारियों के हाथ में आर्थिक शक्ति जमा न हो जाए और आय तथा धन के क्षेत्र में जो विषमताएं हैं, वे निरन्तर कम होती जाएं।

14. पंचवर्षीय योजनाओं में विकास के जिस रूप की कल्पना की गई है, उसमें यह आशा की गई है कि सहकारिता आर्थिक जीवन की कई शाखाओं में संगठन का क्रमशः मुख्य आधार बनेगी—विशेषतः कृषि, लघु उद्योग, वितरण, निर्माण और स्थानीय समुदायों के लिए आवश्यक सुविधाओं की व्यवस्था करने के क्षेत्र में। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास में ग्रामीण और छोटे पैमाने के उद्योगों का विशिष्ट स्थान है, क्योंकि इनके द्वारा जहां उपभोगमूलक तथा अन्य सामान और बड़े पैमाने पर रोज़गार मिलता है, वहां वे राष्ट्रीय आय के अधिक न्यायसंगत वितरण का तरीका पेश करते हैं और कुशलता तथा जन-शक्ति के प्राप्त साधनों के प्रयोग के साधन प्रदान करते हैं। विभिन्न क्षेत्रों के विकास के स्तरों में जो विषमताएं हैं, उन्हें निरन्तर कम करना होगा और उद्योगीकरण से जो लाभ प्राप्त होते हैं, उनका देश के विभिन्न भागों में समान रूप से फैलाव करना होगा। जैसा कि औद्योगिक नीति के प्रस्ताव में कहा गया है, इन उद्देश्यों की प्राप्ति प्रत्येक क्षेत्र की औद्योगिक और कृषि-सम्बन्धी अर्थव्यवस्था के सन्तुलित और समन्वित विकास के द्वारा और योजनाबद्ध नगरीकरण तथा आर्थिक और सामाजिक सेवाओं के विकास द्वारा करनी होगी। विकास के प्रारम्भिक चरणों में, प्रायः एक दुविधा का सामना करना पड़ता है: क्या यह बेहतर है कि पहले उन क्षेत्रों के विकास पर शक्ति केन्द्रित की जाए, जो अधिक अनुकूल स्थानों पर मौजूद हैं और इस प्रकार लगाई गई पूंजी का अधिक जल्दी और बड़ी मात्रा में लाभ मिल जाए, अथवा देश के और अधिक सन्तुलित विकास पर ध्यान दिया जाए तथा इस दिशा में

अधिक पिछड़े हुए इलाकों पर ज़्यादा ध्यान दिया जाए ? आर्थिक बातों को निश्चय ही महत्व देना होगा, पर कुछ सामाजिक और प्रादेशिक स्वरूपों की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती । निश्चय ही, ज्यों-ज्यों आर्थिक व्यवस्था का विकास होगा, त्यों-त्यों यह सम्भव होता जाएगा कि कम विकसित क्षेत्रों में अधिक सघन विकास का इन्तज़ाम किया जाए ।

15. जिन नीतियों का ऊपर वर्णन किया गया है, वे आर्थिक विकास को शीघ्र प्राप्त करने और समाजवादी ढंग के समाज को मूर्त रूप देने के कार्यक्रम का बड़ा हिस्सा हैं। इस प्रकार की योजना में, सामाजिक नीतियों और आर्थिक प्रगति की दिशा निर्धारित करने में मूलभूत सिद्धान्त समूचे समाज का और खास तौर पर इसके निर्बल अंगों का हित होना चाहिए । द्रुत गति से विकासशील अर्थव्यवस्था में उसकी सफलता और शक्ति के द्वारा संगठन और प्रबन्ध तथा सामाजिक नीति की नई समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। इसलिए मौजूदा सामाजिक और आर्थिक संस्थाओं का समय-समय पर इस दृष्टि से मूल्यांकन किया जाना चाहिए कि राष्ट्र के विकास में उनकी भूमिका क्या है। जब ये संस्थाएं सामाजिक उद्देश्य को उचित रूप से पूरा न करें अथवा योजनाबद्ध विकास के आर्थिक उद्देश्यों को पूरा करने में चूक जाएं, तब उनका स्थान नई संस्थाओं को देना होगा, अथवा उनमें परिवर्तन लाना होगा।

16. विकास की योजनाओं से उन परिवर्तनों का, जो देश के आर्थिक और सामाजिक ढांचे में आ रहे हैं और उस दिशा का, जिस ओर इस ढांचे का पुनः संगठन करना होगा एवं उसे मजबूत बनाना होगा, पता चलता है। लोकतन्त्र में परिवर्तन के ये कदम एक बड़ी सीमा तक जनता की समझदारी में वृद्धि और जनता की प्रतिक्रिया पर तथा बड़ी संख्या में जनता के वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास पर निर्भर करते हैं। आर्थिक और सामाजिक लक्ष्यों के अतिरिक्त, आयोजन के शिक्षा-सम्बन्धी अंगों का बड़ा महत्व है। योजनाओं को बनाने और उन्हें पूरा करने की ज़िम्मेदारी अधिक-से-अधिक लोगों में बांटने और सब प्रकार के विचारों का प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्थाओं एवं विश्वविद्यालयों तथा शिक्षण-संस्थाओं और स्वैच्छिक समाज-सेवी संस्थाओं-द्वारा आयोजन की प्रक्रिया में योगदान करने के रूप में इस बात पर विशेष बल दिया गया है। सम्पूर्ण समुदाय की ओर से राज्य पर यह बड़ी ज़िम्मेदारी है कि वह वैयक्तिक, विभागीय अथवा प्रादेशिक स्वार्थों के मुकाबले में राष्ट्र की विस्तृत दीर्घकालीन आवश्यकताओं का मूल्यांकन करे और जिन लक्ष्यों को प्राप्त करना है, उनका निश्चय करे।

(3)
समाजवाद की ओर प्रगति

17. भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में यह मलभूत वचन दिया गया है कि लोकतान्त्रिक विधि से और जनता के व्यापक योगदान-द्वारा समाजवादी आधार पर किए जानेवाले विकास से तीव्र आर्थिक उन्नति होगी और रोज़गार की सम्भावनाओं का विस्तार होगा; साथ ही, आय और धन की विषमताओं में कमी आएगी, आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण रुकेगा और एक स्वतन्त्र तथा समानतामूलक समाज के उपयुक्त

मूल्यों तथा मनोवृत्ति का जन्म होगा। ये महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं। जहां जनता का एक बड़ा समुदाय गरीबी की चक्की में पिसता है, वहां सामाजिक न्याय, काम करने के अधिकार, समान अवसर और जीवन के न्यूनतम स्तर-निर्धारण की बातें बहुत आवश्यक हो जाती हैं और उनकी शीघ्रातिशीघ्र व्यवस्था अपेक्षित होती है। इसलिए, आर्थिक गतिविधियां इस प्रकार संगठित की जानी चाहिएं कि उत्पादन और विकास तथा न्याय-संगत वितरण की आवश्यकताएं पूरी हों। सब नागरिकों के—खास तौर पर उनके, जो निम्न आय-वर्ग में हैं अथवा जिन्हें काम का अवसर नहीं मिलता—जीवन-स्तर को ऊंचा उठाने के लिए यह ज़रूरी है कि लम्बी अवधि तक लगातार आर्थिक विकास का ऊंचा स्तर कायम रखा जाए। आबादी में वृद्धि और मूलभूत उत्पादन-शक्तियों के साथ-साथ आर्थिक तथा सामाजिक मदों में, जिनका लाभ काफ़ी समय बाद मिलता है, पूंजी लगाने की ज़रूरत का विकासोन्मुख अर्थव्यवस्था पर बड़ा बोझ पड़ता है। एक ओर, वे थोड़े समय में जीवन-स्तर को ऊंचा उठाने के क्षेत्र को सीमित कर देते हैं और दूसरी ओर, अगर ये लक्ष्य पूरे भी हों, तो इनका बोझ सबको झेलना पड़ेगा और समुदाय के हर हिस्से को अपनी शक्ति के अनुसार त्याग करना पड़ेगा।

18. समाजवाद की ओर उन्मुख प्रगति कई दिशाओं में होती है और प्रत्येक दिशा दूसरी दिशाओं के मूल्य को बढ़ाती है। सब से बड़ी बात यह कि समाजवादी अर्थ-व्यवस्था सुदक्ष होनी चाहिए, विज्ञान और टेक्नोलाजी के प्रति प्रगतिशील दृष्टिकोण होना चाहिए, और दृढ़ता से ऐसे स्तर तक बढ़ने की शक्ति होनी चाहिए जिससे सर्व-साधारण का कल्याण हो सके। एक अर्द्धविकसित देश में, आर्थिक प्रगति की ऊंची दर, और एक बड़े सरकारी क्षेत्र का विकास और सहकारिता का क्षेत्र, उन मुख्य साधनों में हैं, जिनसे समाजवाद की ओर संक्रमण करने में शक्ति प्राप्त होती है। दूसरी बात यह कि समाजवादी अर्थव्यवस्था में प्रत्येक नागरिक को समान अवसर मिलना चाहिए। पहले कदम के रूप में, इसे बुनियादी ज़रूरतें पूरी करनी चाहिएं, खास तौर पर, खाद्य, रोज़गार, शिक्षा का अवसर, स्वास्थ्य और सफाई की उचित व्यवस्था, रिहायश के हालात में सुधार और आय का एक निम्नतम स्तर, ताकि अवस्था के अनुसार सन्तोषजनक जीवन-स्तर अवश्य प्राप्त हो सके। तीसरी बात यह कि इसके अन्तर्गत जो सार्वजनिक नीतियां अपनाई जाएं, उनके द्वारा समाजवादी अर्थव्यवस्था न केवल पहले से मौजूद आर्थिक और सामाजिक विषमताओं को कम करे, बल्कि इस बात का भी भरोसा दिलाए कि आर्थिक शक्ति और एकाधिकार के केन्द्रीकरण के बिना अर्थव्यवस्था का तेज़ी से विस्तार हो। अन्त में, लोकतन्त्र और समाजवाद के आधार पर विकसित होनेवाले समाज में यह बात ज़रूरी है कि सामाजिक मूल्यों और प्रेरणाओं पर सर्वाधिक बल दिया जाए और समुदाय के सब वर्गों में ऐसी भावना पैदा की जाए, जिसमें सामान्य हित और कर्तव्य का ऊंचा स्थान हो। कठोर जात-पांत और आर्थिक विभिन्नताओं के कारण, भारत के सामाजिक ढांचे में पहले से ही आर्थिक प्रगति अवरुद्ध करनेवाले गतिरोध एवं रुकावटें विद्यमान हैं। अब, जब कि कुछ पुराने भेद दूर हो रहे हैं और इन्हें दूर करने की प्रक्रिया को क्रमशः तीव्र किया जा रहा है, नगरी-करण और आधुनिक उद्योग के विकास के फलस्वरूप आय और अवसरों के स्तर में नई विषमताएं पैदा होने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ रही है। यह प्रवृत्ति रहन-सहन के ढंग में, सामाजिक व्यवहार में और संग्रह करने की भावना में प्रकट हो रही है। सरकारी

नीति का उद्देश्य यह है कि इन अवांछनीय प्रवृत्तियों पर रोक लगे और इनके चलते उस समाज के निर्माण में बाधा न पड़े, जो मूलतः भीतर से संगठित है और जो सामान्य मूल्यों तथा सामूहिक नागरिकता की भावना से बल प्राप्त करता है।

(4)

समान अवसर

19. अवसरों की समानता और राष्ट्रीय न्यूनतम आय प्राप्त करने की सबसे पहली शर्त यह है कि हरेक आदमी के लिए, जो काम चाहता है, लाभप्रद रोजगार की व्यवस्था हो। एक अर्द्धविकसित देश में पूरा रोजगार न मिलने का कारण आर्थिक ढांचे में कुछ मूलभूत अभावों की उपस्थिति होता है। जब तक औद्योगिक बुनियाद बहुत मज़बूत न हो और शिक्षा तथा अन्य समाज-सेवाएं विकसित न हों, तब तक अर्थ-व्यवस्था में विकास की वह गति नहीं आ सकती, जिससे समूची श्रम-शक्ति को उचित वेतन-स्तर पर काम दिया जा सके। विकास की इन प्रक्रियाओं में निश्चय ही समय लगता है और उसके लिए इतने बड़े पैमाने पर कोशिशें और पूंजी दरकार होती है, जिसकी उपलब्धि ऐसे देश की अर्थव्यवस्था की पहली अवस्थाओं में उसकी शक्ति से बाहर की बात होती है। उन इलाकों में 'गरीबी बहुत ज्यादा है, जहां या तो आबादी बहुत अधिक है, अथवा स्थानीय साधनों के अल्प विकास के कारण उत्पादन के स्तर निम्न हैं और निरन्तर काम का अभाव है। इसलिए काम के अतिरिक्त अवसर होने चाहिए, जिससे न्यूनतम आयवाले वर्ग भी उत्पादनशील रोजगार से इतना तो कमा ही लें, जिससे अपनी न्यूनतम ज़रूरियात को पूरा कर सकें। तीसरी योजना में यह कल्पना की गई है कि बड़े और छोटे उद्योगों, कृषि और आर्थिक तथा समाज-सेवा के विकास के कार्यक्रमों के साथ-साथ ग्रामीण कामों के लिए भी बड़े पैमाने के कार्यक्रम होंगे—विशेषतः, उन इलाकों में जहा आबादी घनी है और उस समय के लिए, जब खेती-बारी का काम कम हो जाने के कारण, लोगों के पास काम-धन्धों की कमी पड़ जाती है।

20. उन्नत देशों में, आबादी के विभिन्न वर्गों के लिए अवसरों की अधिक समानता और अधिक सामाजिक स्थिरता की स्थिति पैदा करने के क्षेत्र में शिक्षा के विकास और अन्य समाज-सेवाओं ने बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। समाज-सेवाओं ने आय के पुनर्वितरण और बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने में भी बड़ी सहायता दी है। भारत में भी समाज-सेवाओं के विस्तार का ऐसा ही प्रभाव पड़ेगा—खास तौर पर प्रारम्भिक स्तर पर मुफ्त और अमि शिक्षा के विस्तार से, शिल्पगत, और ऊंची शिक्षा के अधिक अवसर देने से, छात्रवृत्तियां तथा सहायता के अन्य उपाय करने से, और स्वास्थ्य, सफाई, पानी की आपूर्ति एवं रिहायश की दशाओं में सुधार करने से। इस प्रकार, अनुसूचित जातियों, आदिम जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के कल्याण के कार्यक्रम, ग्रामीण इलाकों में न्यूनतम सुविधाओं की व्यवस्था के लिए ग्राम-स्तर पर स्थानीय विकास के लिए और औद्योगिक मज़दूरों की रिहायश और गन्दी बस्तियों की सफाई और सुधार के लिए तैयार किए गए कार्यक्रम केवल समाज-सेवाओं के विस्तार के रूप में ही नहीं, बल्कि आर्थिक विकास की योजना के सबल अन्तरिक तत्व के रूप

में भी स्वीकार किए जाने चाहिएं । तीसरी योजना तथा बाद की पंचवर्षीय योजनाओं में इस प्रकार की तथा अन्य सामाजिक सुविधाएं पिछले दशक की तुलना में अधिक विस्तृत रूप में उपलब्ध करनी होंगी । इनके लिए अधिक साधनों की ज़रूरत होगी—न केवल सरकार को, बल्कि प्रत्येक समुदाय को ये साधन जुटाने होंगे और स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं को अधिक-से अधिक संख्या में इसमें भाग लेना होगा ।

21. जैसे-जैसे आर्थिक विकास का काम बढ़ता है, वैसे-वैसे सामाजिक सुरक्षा और बीमे को ऊंची प्राथमिकता मिलती जाएगी । औद्योगिक मज़दूरों के लिए प्राविडेंट फंड और स्वास्थ्य-बीमा की योजना के द्वारा इस दिशा में प्राथमिक आवश्यक कदम पहले ही उठा लिए गए हैं। तीसरी योजना की अवधि में, औद्योगिक मज़दूरों के लिए रोज़गार-सहायता की योजना चालू करने का प्रस्ताव है और असहाय व्यक्तियों, अनाथों और शारीरिक दृष्टि से अक्षम व्यक्तियों को, जिनकी सहायता और निर्वाह का कोई साधन नहीं है, सहायता और राहत प्रदान करने की दिशा में एक छोटे पैमाने पर काम आरम्भ करने की योजना है । उन इलाकों में, जहां ग्रामीण कार्यों से सम्बद्ध कार्यक्रम चालू किए गए हैं, काम चाहनेवाले व्यक्तियों के नाम पंजीबद्ध करने की सुविधाएं सुलभ की गई हैं। इस प्रकार सघन आर्थिक विकास के साथ-साथ समाज-सेवाएं प्रशिक्षिण, और शिक्षा के क्षेत्र में छात्रवृत्तियां तथा अन्य सुविधाओं की व्यवस्था और सामाजिक सुरक्षा का प्रारम्भ—ये सब बातें समुदाय के विभिन्न अंगों के लिए अधिक समान अवसर देने की दिशा में कुछ दूर तक सहायक हो सकती हैं ।

22. कृषि-उत्पादन में वृद्धि, आधुनिक उद्योग और परिवहन तथा बिजली का विकास और अर्थव्यवस्था में सरकारी और सहकारिता के क्षेत्रों का विकास—इन सबसे ऐसे हालात पैदा होंगे, जिनसे समाजवाद की ओर बढ़ना और जीवन-स्तर को सुधारना सम्भव हो सकेगा । उस दिशा में इनका और अधिक सामाजिक महत्व होगा, जिसमें समुदाय के स्तर पर समाजवाद विकसित होता है और व्यापक स्थानीय पैमाने पर सहयोग प्राप्त करता है । समाजवाद और लोकतन्त्र के मूल्य ज्यों-ज्यों अधिक व्यापक होंगे और उनका प्रभाव दिनानुदिन के दृष्टिकोण और व्यवहारों पर पड़ेगा, त्यों-त्यों समुदाय के सब वर्गों के लिए विस्तृत अवसर खुलेंगे—खास तौर पर उन लोगों के लिए, जो कम सुविधा-प्राप्त हैं।

23. भारत की विकास-योजनाओं का एक बड़ा भाग सामुदायिक विकास के द्वारा आम जनता तक पहुंचता है । इसलिए ग्रामीण जनता में समुदाय के स्तर पर समाजवाद के विकास को प्रोत्साहन देने के लिए, पंचवर्षीय योजनाओं में सामुदायिक विकास-आन्दोलन को जो भूमिका प्रदान की गई है, उस पर विशेष ज़ोर दिया जाना चाहिए । सब से बढ़कर, सामुदायिक विकास को यह प्रयत्न करना चाहिए कि कृषि-उत्पादन में वृद्धि हो, उत्पादन का स्तर ऊंचा उठे और उपलब्ध मानव-शक्ति तथा अन्य साधनों का अधिक उपयोग हो । इस आन्दोलन में स्थानीय पहल एवं दायित्व और सहकारी आत्म सहायता के विकास पर ज़ोर दिया गया है और इसका लक्ष्य एक बड़े क्षेत्र में विस्तृत विकास के कार्यक्रमों का नेतृत्व करना है, जिनमें कृषि, सहकारिता, सिंचाई, लघु ग्राम-उद्योग, गांवों में बिजली की व्यवस्था और कृषि-सम्बन्धी सुधार शामिल हैं। इसका एक मुख्य उद्देश्य एक ऐसी विकासशील सहकारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था के

विकास के लिए उपयुक्त परिस्थितियां तैयार करना है जिसका ढांचा विविध व्यवसायगत हो और जिसमें समुदाय के निर्बल अंगों को शीघ्रता से, शेष सबल अंगों के समकक्ष पहुंचने का अवसर मिले। सहकारी कृषि-औद्योगिक अर्थव्यवस्था का ग्रामीण क्षेत्रों में विकास आवश्यक है, ताकि उद्योगीकरण के लाभों का विस्तार समानता के साथ आबादी के विभिन्न भागों में और विभिन्न क्षेत्रों में हो तथा प्रत्येक क्षेत्र के ग्रामीण और औद्योगिक विकास के बीच अधिक मात्रा में समन्वय हो।

24. ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक विकास-आन्दोलन की नवीनतम देन 'पंचायती राज' है। ग्राम, खण्ड और ज़िला के स्तर पर विकास का दायित्व गांव की पंचायतों, पंचायत-समितियों और ज़िला-परिषदों को सौंपा गया है और इन्हें काफी अधिकार दिए गए हैं। ज़िले के भीतर प्रशासन के ढांचे और ग्राम-विकास के स्वरूप में यह एक क्रान्तिकारी परिवर्तन है और ग्रामीण वातावरण को बदलनेवाले इसके उल्लेखनीय परिणाम सामने आ रहे हैं।

25. गांवों में, मूल-स्तर पर समाजवाद के निर्माण का काम उस समय सुभीते के साथ हो जाता है, जब भूमि-सुधार और सहकारी विकास की नीतियों को कार्यान्वित किया जाता है और प्रत्येक ग्रामीण समुदाय के भीतर भूदान और श्रमदान तथा सामान्य दायित्व की भावना पनपने लगती है। कस्बों और शहरों में भी उचित सामाजिक नीतियों की समान रूप से आवश्यकता है। नागरिक क्षेत्रों में लोगों के आ-आकर बसते जाने से न केवल वहां के अधिकांश निवासियों के जीवन-स्तर में गिरावट आती है, बल्कि ज़मीन-जायदाद की कीमतें चढ़ जाने से भी कई नई प्रकार की विषमताएं पैदा हो जाती हैं। इनके निरोध के लिए कई प्रकार के उपायों का अवलम्बन किए जाने की ज़रूरत है, जैसे—भूमि के उपयोग के लिए सावधानीपूर्वक आयोजन करना; भूमि हस्तगत करने के लिए बड़े पैमाने के कार्यक्रम; रिहायश और भूमि देने-सम्बन्धी ऐसी नीतियों का अवलम्बन, जिनसे कम आयवाले और गरीब लोगों को सहायता पहुंचे; पूंजीगत मुनाफों और शहरी जायदादों पर उचित कराधान; दिखावटी और निकम्मी इमारतों के निर्माण की रोकथाम; तथा रैयती और लगानों की शर्तों पर सार्वजनिक कड़ी नज़र।

(5)

आर्थिक शक्ति का वितरण

26. पिछले दशक में संगठित निजी क्षेत्र की अभिवृद्धि से यह प्रश्न सामने आया है कि किन साधनों से आर्थिक विकास प्राप्त किया जाए, ताकि आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण न हो और एकाधिकार की प्रवृत्तियों का प्रादुर्भाव न हो। यह तय है कि शीघ्र आर्थिक विकास की प्रक्रिया से सुव्यवस्थित कम्पनियों को अपना आकार बढ़ाने और व्यवसाय उद्योग के नए क्षेत्र में प्रवेश करने के अधिक अवसर मिल जाते हैं। नई कम्पनियों और छोटे व्यवसाय-उद्योगों के मुकाबले में उन्हें संगठन और विशेषज्ञों का, पूंजी-बाजार में पहुंचने और विदेशी सहयोग-प्राप्ति का लाभ मिल जाता है; सामान्यतः : उन्हें ऐसे साधनों का भी लाभ प्राप्त होता है, जिन्हें प्रयुक्त करने की स्थिति में वे होते हैं। किसी

उद्योग में पूंजी-विनियोग के लिए उपलब्ध साधनों का एक महत्वपूर्ण भाग संगठित क्षेत्र के अन्तर्गत ही तैयार होता है। इस कारण भी किसी नई इकाई की तुलना में पहले से विद्यमान इकाई को अपना विस्तार करने की अधिक सुविधा रहती है। कई उद्योगों में टेक्नोलाजी की दृष्टि से बड़े पैमाने की इकाइयां स्थापित करना विशेष उपयुक्त होता है और इसके चलते पूंजीगत एवं उत्पादन-व्यय में बचत होती है। फलतः, कई कठिन समस्याएं उपस्थित हो जाती हैं। एक ओर, पंचवर्षीय योजनाओं में निर्दिष्ट प्राथमिकताओं के अनुसार ये विद्यमान बड़े व्यवसाय-उद्योग जिस हद तक विकास-कार्य को हाथ में लेते हैं और बड़े पैमाने पर काम किए जाने के कारण अनिवार्यतः होनेवाली बचत का लाभ उठाते हैं, उसी हद तक अर्थव्यवस्था के विकास में भी सहायक होते हैं। दूसरी ओर, कुछ थोड़े लोगों के हाथ में अत्यधिक आर्थिक शक्ति के आ जाने और उनके द्वारा उसके मनचाहे ढंग से प्रयोग के कारण लोकतन्त्र के शक्ति-सन्तुलन में, गड़बड़ी पैदा हो जाती है, सामाजिक ढांचा नए खिचावों और तनावों का शिकार हो जाता है और आर्थिक अवसरों का विस्तार अवरुद्ध हो जाता है।

आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति का मुकाबला कई प्रकार के उपायों से करना होगा—पहला सरकारी क्षेत्र का उन क्षेत्रों में विस्तार, जहां बड़े पैमाने की इकाइयां और भारी पूंजी लगाने की आवश्यकता हो; दूसरा, नए आनेवालों, मध्यम तथा छोटी इकाइयों और उन उद्योगों के लिए, जो सहकारिता पर आधारित हों, अवसरों का विस्तार; और तीसरा, नियन्त्रण और नियमन-विषयक सरकारी अधिकारों का सशक्त प्रयोग और उचित वित्तीय कार्रवाइयां। संक्षेप में, उद्देश्य केवल यह नहीं होना चाहिए कि आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण और एकाधिकार की प्रवृत्तियों को रोका जाए, बल्कि औद्योगिक संगठन के ऐसे स्वरूप को बढ़ावा दिया जाए, जिससे उत्पादन के ऊंचे स्तर प्राप्त हों, और राष्ट्रीय आयोजन के ढांचे के भीतर नए उद्यमियों, मध्यम और छोटे पैमाने के व्यवसाय-उद्योग और सहकारी संगठनों को विकास का पूरा मौका मिल सके।

27. आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण और एकाधिकार की प्रवृत्तियों को रोकने के लिए राज्य के पास जो एक निर्णायक अस्त्र है, वह है सरकारी क्षेत्र का द्रुत विस्तार। इससे दो उद्देश्य पूरे होते हैं: आर्थिक ढांचे में जो मूलभूत कमियां होंगी, उन्हें दूर करने में यह सहायता करेगा और साथ ही, धन और बड़ी आयों को निजी रूप से लोगों के हाथों में जमा होने से रोकेगा। बिजली पैदा करने और उसके वितरण में अब सरकारी क्षेत्र का प्रमुख हिस्सा है और इसका शीघ्रता से विस्तार किया जा रहा है। परिवहन में भी इसका भाग निरन्तर बढ़ रहा है। बड़े उद्योगों और खनिज उद्योगों में भी तीसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में, सरकारी क्षेत्र का कुल पूंजी-विनियोग, निश्चय ही, निजी क्षेत्र से ज्यादा होगा। 1950-51 की तुलना में तीसरी योजना के अन्त तक संगठित उत्पादक उद्योगों में सरकारी क्षेत्र का अंशदान 2 प्रतिशत से कुछ कम से बढ़कर करीब एक-चौथाई हो जाएगा। इसी प्रकार, खनिज-उत्पादन में सरकारी क्षेत्र का हिस्सा एक-दशमांश से कुछ कम से बढ़कर एक-तिहाई से कुछ अधिक हो जाएगा। ये उल्लेखनीय नए परिवर्तन हैं, पर इसके साथ ही उन साधनों की ओर विशेष ध्यान देना होगा, जिनसे सरकारी क्षेत्र की विस्तार-क्षमता अधिक तेजी से बढ़े— जैसे

उसकी कार्य-संचालन की कुशलता बढ़े, प्रशिक्षित प्रशासकीय और तकनीकी कर्मचारियों की अधिक संख्या में उपलब्धि हो और अधिक लाभ प्राप्त करने की उसकी योग्यता में वृद्धि हो। यह भी ज़रूरी है कि अधिकतम सीमा तक, जहां तक सम्भव हो, सरकारी उद्योगों के भवन-निर्माण और सम्भरण के काम सार्वजनिक और सहकारी संस्थाओं को सौंपे जाएं। जैसे-जैसे सरकारी क्षेत्र का योगदान सापेक्ष रूप से बढ़ेगा वैसे-वैसे आर्थिक विकास में उसकी भूमिका क्रमशः उल्लेखनीय होती जाएगी और सरकार अधिक मज़बूत स्थिति में होकर सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के स्वरूप और पद्धति का निर्धारण कर सकेगी।

28. निजी क्षेत्र को कार्य का जो क्षेत्र सौंपा गया है, उसके अन्तर्गत नीति का मुख्य उद्देश्य यह है कि उद्योग में स्वामित्व विस्तृत आधार पर हो, उद्यम का फैलाव हो और नए आनेवालों के लिए उदार सहूलियतें हों तथा सहकारी संगठनों का विकास हो। इन उद्देश्यों को पूरा करने के साधन बहुत हद तक पहले से ही प्राप्त हैं, पर ज़रूरत इस बात की है कि केन्द्रीय और राज्य-सरकारें और उनके नीचे काम करनेवाली विभिन्न संस्थाएं पिछले सालों की अपेक्षा अब इनका अधिक सोद्देश्यता के साथ और ज़्यादा सहयोग से इस्तेमाल करें। नई औद्योगिक इकाइयों को लाइसेंस और मौजूदा इकाइयों के विस्तार को मंजूरी देते समय इस बात की काफी सावधानी बरतना आवश्यक है कि विद्यमान बड़े व्यवसायों का बहुत अधिक विकास न हो जाए, नई कम्पनियों को व्यवसाय-क्षेत्र में प्रवेश करने की सुविधा मिले और छोटे तथा मध्यम उद्योगों और सहकारी संगठनों को प्रोत्साहन प्राप्त हो। पिछले सालों में कई वित्तीय एवं प्रोत्साहनमूलक संस्थाएं स्थापित की गई हैं—जैसे, औद्योगिक वित्त-निगम, राज्य-वित्त-निगम, भारतीय औद्योगिक ऋण एवं पूंजी-विनियोग-निगम आदि। दूसरी पंचवर्षीय योजना से प्राप्त अनुभव के आधार पर इन तथा अन्य वित्तीय संस्थाओं को अपनी मौजूदा प्रशासकीय नीतियों और काम के तरीकों पर फिर से विचार करना चाहिए, ताकि उद्योग में नए प्रवेश करनेवालों, मध्यम तथा छोटे उद्योगों और सहकारी उद्योगों को उनकी सहायता शीघ्र और पर्याप्त परिमाण में प्राप्त हो। उन्हें ऐसे समुचित तरीके भी ढूंढ़ने चाहिए, जिनसे इन दिशाओं में हुई प्रगति को जांचा जा सके। स्टेट बैंक आफ इंडिया के साथ-साथ अन्य व्यापारी बैंकों से यह आशा की जाती है कि वे मध्यम, छोटे और सहकारी उद्योगों को वित्तीय सहायता देने में ज़्यादा हिस्सा लेंगे। जीवन-बीमा-निगम के साधन भी इन उद्देश्यों की पूर्ति में बहुत सहायक हो सकते हैं। हाल में स्थापित किया गया पूंजी-विनियोग-केन्द्र नए उद्योगों के लिए विदेशी मुद्रा सुलभ करने में सहायता दे सकता है। अन्त में, औद्योगिक बस्तियों की भूमिका और ग्राम तथा लघु उद्योगों, ग्रामीण बिजली-व्यवस्था, प्रादेशिक आयोजन और नए नगरों की अवस्थिति के कार्य-क्रमों की भी संक्षेप में चर्चा कर ली जाए, जिनके बारे में आगे के अध्यायों में विचार किया गया है। ये विकास-कार्यक्रम उद्योगीकरण के लाभों को छोटे शहरों और गांवों तक ले जाने-सम्बन्धी पंचवर्षीय योजनाओं की सर्वाधिक महत्वपूर्ण निश्चित कार्रवाइयों में स्थान रखते हैं।

29. एक विकासशील अर्थव्यवस्था में सामाजिक नीति का एक मुख्य अंग कराधान है और योजना की आवश्यकताओं के अनुसार ऐसे साधनों—जैसे, बट्टा (रिबेट) रिआयत

और प्रोत्साहन—का उपयोग करना ही पड़ता है, जिनसे आर्थिक स्वार्थों के केन्द्रीकरण पर रोक लगे और नई इकाइयों तथा मध्यम और छोटे पैमाने के व्यवसायों तथा सहकारिता-उद्योगों को बढ़ावा मिले। इसके लिए जरूरी व्यवस्थाएं पहले से ही व्यक्तिगत और सामूहिक कराधान, धन कर, दान कर, पूंजीगत लाभ कर और सम्पत्ति कर के अन्तर्गत विद्यमान हैं। इनका संगठित रूप से प्रयोग होना चाहिए। कर से बचने और कर को टालने से सम्बद्ध समस्याओं और इनके निराकरण के उपायों पर सावधानी से विचार किया जा रहा है। 1956 के कम्पनी अधिनियम के पास होने तथा उसमें हाल में किए गए संशोधनों से कम्पनी की व्यवस्था-सम्बन्धी कतिपय बातों—जैसे, अन्तःसम्बद्ध पूंजी-विनियोग, परस्पर-सम्बद्ध निदेशकता, आन्तरिक साधनों का प्रयोग और निदेशकों तथा अन्य उच्चस्तरीय व्यवस्था कर्मचारियों का वेतन आदि—पर अधिक समीप से नज़र रखी जा सकती है और ऐसे कदम उठाए जा सकते हैं, जिनसे इनके बारे में कानूनी व्यवस्थाओं का अधिक प्रभावशाली ढंग से पालन हो सके। औद्योगिक विकास और नियमन अधिनियम के अन्तर्गत प्राप्त अधिकारों का भी आवश्यकता के अनुसार, उत्पादन, वितरण और मूल्य-निर्धारण के सम्बन्ध में प्रयोग किया जा सकता है। संक्षेप में, आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण से सम्बद्ध समस्याओं से निबटने के लिए मुख्य उद्देश्यों पर पहले से ही एकमत कायम है और इसके लिए आवश्यक कानून तथा आदेश भी एक बड़ी हद तक उपलब्ध हैं। इसलिए वर्तमान सन्दर्भ में यह बात विशेष महत्वपूर्ण है कि इन उपायों में निहित तत्व और उन्हें अमल में लाने के लिए प्रयुक्त साधन और प्रशासकीय तरीके व्यवहारतः ऐसे हों, जो विस्तृत सामाजिक लक्ष्य की पूर्ति में सहायता पहुंचाएं और तीसरी योजना के कामों और प्राथमिकताओं की दृष्टि से वर्तमान व्यवस्थाओं पर पुनर्विचार किया जाए।

(6)
आय में विषमताएं

30. आर्थिक विकास की प्रक्रिया के सशक्त होने से पहले एक बड़े अंश तक परम्परागत समाज में चिरकाल से प्रचलित विशेष तत्व—जैसे, सामन्ती अधिकार और जायदाद अथवा सामाजिक ढांचे के साथ जुड़े हुए विशेष अधिकार तथा बाधाएं—विषमताएं पैदा करते हैं। अतीत के इन भग्नावशेषों को पहले गिराना होगा। आयोजित विकास के द्वारा इस प्रक्रिया को तेज़ करना होगा, ताकि अर्थव्यवस्था को भीतर से कम रुकावटों का सामना करना पड़े और वह आगे बढ़ने में समर्थ हो सके। अतः भूमि-सुधार के कार्यक्रम को जिसमें बिचौलियों के अधिकारों का अन्त, काश्तकारों की सुरक्षा और लगान में कमी और कृषि-भूमि पर जोत की अधिकतम सीमा के अनिवार्य रूप से प्रयोग पर बल दिया गया था, ग्रामीण अर्थव्यवस्था की उत्पादक शक्तियों को विमुक्त करने के लिए आवश्यक समझा गया। इस दिशा में प्रगति हुई है, पर काश्त-विषयक सुधारों के पर्याप्त रूप से कार्यान्वित न किए जाने के कारण और काश्त की अधिकतम सीमा के कार्यक्रम को पूरा करने में देरी होने के कारण, जितनी आशा थी, उतना काम नहीं हो सका है। राज्यों में जो कानून बने हैं, उन्हें अमल में लाने के लिए अब अधिक प्रयत्न किए जा रहे हैं।

31. औद्योगिक और आर्थिक विकास के कारण आय और सम्पत्ति में जो विषमताएं पैदा होती हैं, उनसे कई पेचीदा समस्याएं खड़ी हो जाती है। इनमें पहली समस्या का सम्बन्ध अर्जित आय के स्तरों की विभिन्नता से है। उन्नत देशों में अब इनमें बहुत कमी आ गई है। दूसरी ओर, अर्द्धविकसित देशों में आर्थिक विकास के पहले चरण में विशेष उपाय न करने पर इनके और अधिक बढ़ जाने की सम्भावना रहती है। ऐसा विभिन्न कारणों से होता है—विशेषतः प्रशिक्षित व्यक्तियों की सापेक्षिक कमी, सामाजिक परिवर्तनशीलता के अभाव और मुद्रास्फीति के प्रभावों की उपस्थिति के कारण। यहां असली समस्या यह है कि उच्चतर और निम्नतर आयों के फैलाव को कम किया जाए और न्यूनतम के स्तर को ऊंचा किया जाए। इसके लिए अन्य बातों के साथ-साथ बड़े पैमाने पर प्रशिक्षण के कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है और ऐसे पग उठाने की ज़रूरत पड़ती है, जिनसे यह पूरा भरोसा हो कि अर्थव्यवस्था की समस्त शाखाओं में सार्वजनिक और निजी दोनों में—योग्यता के आधार पर अवसरों का द्रुत गति से विस्तार हो रहा है। कर-सम्बन्धी नीतियों की भी महत्वपूर्ण भूमिका है और इनका इस तरह प्रयोग होना चाहिए कि ऊंची आय वालों की कमाई युक्तियुक्त स्तर तक लाई जा सके। इस समय यह प्रश्न कड़ी सीमाएं निश्चित करने-विषयक प्रयत्न का उतना नहीं है, जितना सार्वजनिक नीति और सार्वजनिक चिन्तन-धारा को सामान्य निर्देश देने का। इस सम्बन्ध में यह स्मरण रखना चाहिए कि कराधान-जांच-आयोग ने यह विचार व्यक्त किया है कि कर देने के बाद, आय की उपयुक्त परिधि औसतन पारिवारिक आय की करीब 30-गुनी होनी चाहिए। मोटे तौर पर प्रस्तुत किया गया यह लक्ष्य क्रमशः अगली दो या तीन योजनाओं की अवधि में प्राप्त किया जाना चाहिए। अधिकांश जनता की निम्न आय के कारण, यह परिधि भी काफी विषमता की द्योतक है, पर ज्यों-ज्यों निम्नतर आयों में वृद्धि होगी, त्यों-त्यों इसमें और कमी आती जाएगी।

32. आय की विषमताओं का एक महत्वपूर्ण पहलू ग्रामीण और अग्रामीण आय के बीच की खाई से सम्बद्ध है, जो औद्योगिक और आर्थिक विकास के प्रभाव के कारण बढ़ने की प्रवृत्ति दिखाती है। ग्रामीण और नागरिक आय के बीच की इस खाई को पाटने के कुछ मुख्य उपाय ये हैं—कृषि-सम्बन्धी उत्पादन में बढ़ोतरी, भूमि पर निर्भरता में कमी, उद्योग के विस्तार और सामाजिक सेवाओं के पर्याप्त विकास से आर्थिक स्वरूप की विविधता, और कृषि-सम्बन्धी ऐसी मूल्य-नीति, जो नागरिक उपभोक्ता के लिए समुचित होने के साथ-साथ किसान के हित की रक्षा करनेवाली हो। बहुसंख्यक ग्रामीण आबादीवाले देश में इन नीतियों का बड़ा महत्व है।

33. एक विकासशील अर्थव्यवस्था में, ऊंची आय मुख्य रूप से पूंजी के लाभ से, व्यापार से और सट्टे के लाभों से तथा कानून-द्वारा मंजूरशुदा एक अथवा दूसरे प्रकार के भत्ते से प्राप्त होती है। अतः इस सम्बन्ध में दोतरफ़ा कार्रवाई की जानी चाहिए। पहली, सामाजिक नीति-द्वारा यानी, पूंजी पर लाभ, सट्टा, इत्यादि से जो आय हो, वह अवश्य सीमित होनी चाहिए और सरकार को उसमें उचित हिस्सा अवश्य मिलना चाहिए। और दूसरी, कर-व्यवस्था के विस्तार एवं सुधार-द्वारा, अर्थात् इस प्रकार के कदम उठाए जाने चाहिएं कि ऐसी आयों पर पूरा कर लगे, आय से बचाव के प्रति कठोर कार्रवाई हो और कर को टालने के अवसर कम से कम पैदा हों।

34. रोजगार के द्रुत विकास और विस्तार के कारण, उद्योग में और सेवाओं में लगे श्रमिकों की बड़ी संख्या की और अपने धन्धे में लगे लोगों की---जैसे, किसान और कुशल कारीगर आदि की---आय में स्थिर रूप से और उत्पादकता के अनुपात में वृद्धि होने की सम्भावना है। वे लोग, जो एक निश्चित आय प्राप्त करते हैं, प्रायः निम्न-मध्य श्रेणी-वर्गों में आते हैं; इन्हें अनिवार्य रूप से विशेष समस्याओं का सामना करना पड़ता है, क्योंकि मूल्यों में दीर्घकालीन चढ़ाव की प्रवृत्ति होती है। दूसरी ओर, इन वर्गों में, महिलाओं के अधिक संख्या में रोजगार में प्रवेश करने और रोजगार की बढ़ोतरी से, पारिवारिक आय के बढ़ने के क्षेत्र विस्तृत हो गए हैं। इस वर्ग के लिए और साथ ही निम्नतम आय के वर्गों के लिए, यह ज़रूरी है कि आवश्यक चीज़ों के दाम नीचे रखे जाएं और सामाजिक सेवाएं, विशेषतः शिक्षा, स्वास्थ्य तथा आवास, इनकी सहज पहुंच के भीतर रहें। इस दिशा के दूसरे किनारे पर, सबसे अधिक ध्यान उनकी ओर दिया जाना चाहिए, जो एकदम बेरोज़गार हैं अथवा घोर अल्प रोज़गार से पीड़ित हैं। रोज़गार के अवसरों की सर्वाधिक प्राथमिकता इन्हीं लोगों के लिए है। रोज़गार के साथ-साथ, शिक्षा और सामाजिक सेवा के लाभ भी यथासम्भव पूरी तौर पर इन तक पहुंचने चाहिएं।

(7)
आर्थिक और सामाजिक समन्वय

35. एक विकासशील अर्थव्यवस्था में, समाजवादी ढंग का समाज प्रगति की एक मुख्य दिशा प्रस्तुत करता है। यह अर्थव्यवस्था दिन-प्रति-दिन अधिकाधिक पेचीदा होती जा रही है और इसमें सामाजिक, आर्थिक और अन्य तत्वों की विविधता का निरन्तर एक दूसरे पर प्रभाव पड़ रहा है। निश्चय ही, एक सामूहिक प्रक्रिया-द्वारा इस लक्ष्य की प्राप्ति होती है, जो विभिन्न मार्गों-द्वारा प्राप्त उन्नति का परिणाम होती है। कई कारणों से, इस लक्ष्य तक पहुंचने के लिए शीघ्रता और कदम जल्दी बढ़ाने की भावना होनी चाहिए। यह ठीक है कि अगर सामाजिक लक्ष्य उपलब्ध करने हैं, तो आर्थिक नींव दृढ़ होनी चाहिए। इसके साथ ही, आर्थिक और सामाजिक विकास के बीच किसी प्रकार की रुकावट से नए दबाव पैदा हो जाते हैं। बहुत ही विस्तृत तथ्य इस समय नहीं मिल रहे हैं और इनके बिना निश्चित उपाय निर्धारित कर सकना कठिन है। इसलिए, योजना-आयोग के द्वारा अक्तूबर 1960 में नियुक्त एक विशेषज्ञ-समिति जीवन-स्तर में आए परिवर्तनों पर, जो पहली और दूसरी योजना की अवधि में आए हैं, ध्यान दे रही है, आय और सम्पत्ति के वितरण-सम्बन्धी हाल की प्रवृत्तियों का अध्ययन कर रही है, और खास तौर पर इस बात की जांच कर रही है कि आर्थिक व्यवस्था को कार्यान्वित करने के फलस्वरूप कहां तक सम्पत्ति और उत्पादन के साधनों का केन्द्रीकरण हुआ है।

36. प्रगति के विभिन्न मार्गों की अपनी-अपनी सीमाएं हैं। कई बार ऐसा हो सकता है कि विभिन्न उद्देश्यों और उन्हें प्राप्त करने के लिए उपलब्ध साधनों के बीच गतिरोध हो। इनके बीच संगति स्थापित करनी होगी। यद्यपि योजनाबद्ध विकास की योजना के अन्तर्गत स्थान-स्थान पर कुछ खामियां रह सकती हैं, फिर भी समाजवाद का ढांचा तैयार हो रहा है और वास्तविक कार्यरूप देते समय इसे दृढ़ और अधिक

शक्तिशाली बनाने की जरूरत है। सार्वजनिक प्रशासन और आर्थिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों मे जिन नीतियों और कार्यक्रमों को स्वीकार किया गया है, उनका पूरा-पूरा और दृढ़ता के साथ कार्यान्वियन होना चाहिए तथा मूल्यांकन के लिए अधिक गम्भीर कसौटियो का अवलम्बन करना चाहिए। इसके अलावा हर हालत मे नैतिक, मानवीय और आध्यात्मिक मूल्यों पर पर्याप्त जोर देना चाहिए, क्योंकि इन्ही से आर्थिक प्रगति को सार्थकता प्राप्त होती है। अगर राष्ट्र में आवश्यक एकता और अनुशासन हो, तो विकास के बोझों को सहन करने की तत्परता और समुदाय के विभिन्न अंगो में इस बात की समझदारी कि मौजूदा संकटकाल में आर्थिक और सामाजिक प्रगति के क्षेत्र में उनका क्या योगदान होना चाहिए, उससे कहीं तेजी से बढ़ेगी, जितनी सामान्य तौर पर बढती है। पहले से कार्यान्वित नीतियां सामाजिक प्रगति को बल प्रदान करने; श्रमिक-संघों, सहकारिता-आन्दोलन, स्वैच्छिक संस्थाओं और विश्वविद्यालयों-जैसी शक्तियों को मज़बूत करने तथा ग्रामीण तथा नागरिक समुदायों में विस्तृत आधार पर रचनात्मक नेतृत्व विकसित करने के क्षेत्र में बड़ी सहायक होंगी। आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण और एकाधिकार के विकास को रोकने में भी ये शक्तियां सहायक होंगी तथा सास्कृतिक और आर्थिक सम्बन्धों को दृढ करेंगी और भारत के प्रत्येक नागरिक के लिए काम करने, समान अवसर और न्यूनतम जीवन-स्तर के अधिकार का आश्वासन देगी। अन्तिम विश्लेपण मे यह प्रकट होता है कि आर्थिक विकास एक लक्ष्य को प्राप्त करने का साधन-मात्र है। यह लक्ष्य है: सम्मिलित प्रयास और त्याग-द्वारा एक ऐसे समाज का निर्माण करना, जिसमें जाति, वर्ग और विशेषाधिकारियों का स्थान न हो, और जो समुदाय के प्रत्येक अंग को और देश के समस्त भागों को आगे बढ़ने तथा राष्ट्रीय कल्याण में योगदान करने के अधिकतम अवसर प्रदान करे।

37. आयोजन एक निरन्तर चलनेवाली प्रक्रिया है और छोटी-छोटी अवधियों के लिए उसे बाटा नही जा सकता। इस प्रकार, तीसरी पंचवर्षीय योजना पहली और दूसरी योजनाओं का परवर्ती विस्तार और अगला हिस्सा है तथा इसके द्वारा चौथी तथा आगे की योजनाओं का रास्ता साफ होगा। आयोजन वाछित लक्ष्य की ओर सतत चलने-वाला एक आन्दोलन है, और इसी कारण समस्त मुख्य निर्णय उन अभिकरणों-द्वारा किए जाते है, जिन्हे इन लक्ष्यों और इनमे अन्तर्निहित सामाजिक उद्देश्यो की जानकारी है। पंचवर्षीय अवधि पर विचार करते समय भी, आगामी और दीर्घकालीन आयोजन को हमेशा ध्यान में रखना होगा। वस्तुत. सब अंगों को दृष्टि में रखते हुए आयोजन करना ही आयोजन की प्रक्रिया का सार है। ज्यों-ज्यों यह प्रक्रिया विकसित होती है, त्यों-त्यों जनता के विकास के क्षेत्र में एक विस्तारात्मक संगति आती है, और लोगों में उद्यम तथा सफलता की भावना विकसित होती है, वे जीवन की उद्देश्यात्मकता के प्रति सजग होते है और यह अनुभव करते है कि एक इतिहास के निर्माण में वे योगदान कर रहे है। अन्ततोगत्वा, मानव और उसके व्यक्तित्व का विकास ही सर्वोपरि चीज है। यद्यपि आयोजन में भौतिक पूजी-विनियोग की जरूरत पडती है, पर इससे भी ज्यादा ज़रूरी बात मानव मे पूजी-विनियोग करना है। अपनी सारी परेशानियो और समस्याओ के साथ, भारत की जनता आज एक नए संसार की सीमा पर निवास करती है, जिसके निर्माण में वह स्वयं सहायता कर रही है। इस सीमा को पार करने के लिए जनता के पास उत्साह और उद्यम, धैर्य की भावना, कठोर श्रम की शक्ति तथा भविष्य के प्रति जागरूकता होनी चाहिए।

अध्याय 2

दीर्घकालीन आर्थिक विकास

(1)

व्यापक दृष्टि की आवश्यकता

खपत, बचत, उत्पादकता और रोज़गार के निम्न स्तर उस केन्द्रीय समस्या के विभिन्न पहलू हैं, जो अन्य अर्द्धविकसित देशों के समान भारत के सामने भी उपस्थित हैं। बुनियादी तौर पर, मुख्य कार्य ज्ञान-विज्ञान और टेक्नोलाजी के यथासम्भव अधिक प्रयोग के द्वारा देश के प्राकृतिक और मानवीय साधनों का विकास करना तथा एक सुविचारित दीर्घकालीन योजना के ढांचे के अन्तर्गत ही संगठनात्मक सुधार करना है। अधिकांश जनता के जीवन-स्तर में उल्लेखनीय सुधार करने और बेरोज़गारी की समस्या को हल करने के लिए काफी मात्रा में और निरन्तर आर्थिक उन्नति होनी ही चाहिए।

2. गत कई दशाब्दियों से भारत की अर्थव्यवस्था जड़वत रही है। इसका विकास-क्रम मुश्किल से जनसंख्या की वृद्धि से कुछ अधिक रहा है। गत दशाब्दी में इसमें औसतन 4 प्रतिशत वार्षिक की प्रगति हुई है। कुल राष्ट्रीय आय में यह वृद्धि लगभग 42 प्रतिशत की है। इस सामान्य-सी वृद्धि से दूसरी योजना में विशेष रूप से निर्मित अर्थव्यवस्था के विकास-सामर्थ्य का पूरा संकेत नहीं मिलता है। जब कि कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों में, जिन से राष्ट्र की आधी आय प्राप्त होती है, आय में वृद्धि एक-तिहाई से कुछ ही अधिक हुई है। संगठित उत्पादन-क्षेत्र की कुल आय बढ़ कर लगभग दुगुनी हो गई है। संगठित उद्योग के क्षेत्र में भी पूंजीगत सामान-उद्योगों की उन्नति औसत से काफी तेज रही है। फिर भी, चूंकि जनसंख्या में वृद्धि अनुमान से अधिक हुई है, इसलिए प्रति व्यक्ति आय में केवल 16 प्रतिशत की ही वृद्धि हो सकी है। इसी अवधि में विज्ञान और टेक्नोलाजी की द्रुत प्रगति और उन्नत देशों में प्राप्त की गई विकास की तेज़ रफ़्तार के कारण उन्नत और कम उन्नत देशों के बीच की विषमताएं और भी बढ़ गई हैं। गत दशाब्दी में भारत में जो अनुभव प्राप्त हुआ है, उससे यह स्पष्ट हो गया है कि अधिकांश जनता के जीवन-स्तर में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाने के लिए आर्थिक विकास की गति को काफी तेज़ करना होगा और जनसंख्या में वृद्धि की दर को कम करने के लिए विशेष प्रयत्न करने होंगे।

3. इस पृष्ठभूमि में, भारत के भावी विकास के बारे में संक्षेप में विचार करना, समस्या के आवश्यक तत्वों का पता लगाने का प्रयत्न करना और आगामी 15 वर्षों या उससे भी अधिक समय के आर्थिक विकास के स्वरूप की रूपरेखा तैयार करना उपयोगी होगा। विकास की प्रक्रिया का क्रम सतत होता है, जिसमें प्रत्येक अवधि की प्राथमिकताएं और लक्ष्य भविष्य के एक बड़े व्यापक चित्र के साथ सम्बद्ध होते हैं। दीर्घकालीन भावी स्वरूप का वास्तविक महत्व इस समय किए जानेवाले निर्णयों से सम्बद्ध होता है, क्योंकि इस प्रकार की एक व्यापक दृष्टि के अभाव में किए जाने वाले निर्णय गलत और व्ययसाध्य हो सकते हैं और उनमें बाद में बड़े पैमाने पर संशोधन करने की आवश्यकता पड़ सकती है। जब एक दीर्घकालीन

योजना पर्याप्त विस्तार के साथ बनाई जाती है, तब अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की परस्पर-निर्भरता स्पष्ट हो जाती है और अर्थव्यवस्था के विकास में सम्भावित बाधाओं को समझने में सहायता मिलती है। राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि और निर्धारित सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति के कारण उत्पन्न माग और सम्भरण की समस्याओं का विश्लेषण करने से साधनों के समुचित प्रयोग, मात्रा और स्थिति की अर्थव्यवस्थाओं, और आर्थिक गतिविधियों के प्रादेशिक आधार पर वितरण के सम्बन्ध में सुस्थिर एवं सामयिक निर्णय करने में सहायता मिलती है। यह अन्तिम बात, प्रादेशिक आधार पर वितरण की बात, विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि भारत-जैसे विशाल एवं विविधतामय देश में कुछ ऐसी समस्याओं को, जिनका सम्बन्ध प्रादेशिक ढंग के गतिरोधों से हो, केवल एक ऐसी दीर्घकालीन योजना से ही हल किया जा सकता है, जो राष्ट्रीय विकास के एक बृहत्तर ढांचे में विभिन्न प्रदेशों को उपयुक्त स्थान प्रदान करे। विशेष रूप से इस बात की आवश्यकता है कि औद्योगिक क्षेत्र के लिए, जिसमें बिजली, परिवहन, वैज्ञानिक अनुसन्धान, और तकनीकी शिक्षा भी शामिल है, विशिष्ट रूप में अग्रिम आयोजन किया जाए। प्रत्येक चरण पर इन क्षेत्रों के विकास के कार्यक्रम सुविचारित, समग्र रूप से स्वीकृत तथा नियत अवधि के आगे भी विस्तारशील होने चाहिएं। इन क्षेत्रों में निरन्तर समन्वित प्रयत्नों की आवश्यकता है, और इनके परिणाम अनेक वर्षों में उपलब्ध होते हैं। विकास की दीर्घकालीन दृष्टि जहां नीतियों और कार्यक्रमों के निर्माण तथा प्रगति के मूल्यांकन में उपयोगी पथ-प्रदर्शक हो सकती है, वहां वास्तविक उपलब्धियों और अनुभवों के आधार पर समय-समय पर स्वयं इसका भी मूल्यांकन होते रहना चाहिए।

4. पहली और दूसरी, दोनों ही योजनाओ को देश के दीर्घकालीन सामाजिक और आर्थिक विकास में सोपान-सदृश माना गया था। पहली योजना ने सन् 1951 से लेकर सन् 1981 तक की अवधि में विस्तृत आर्थिक विकास के क्षेत्र में एक सामान्य शुरुआत की। जनसंख्या में वृद्धि की गति; राष्ट्रीय आय में वृद्धि के अनुपात, जो विकास के प्रत्येक स्तर पर पुनः पूंजी-विनियोग के रूप में प्रयुक्त हो सकती थी; और किए गए पूंजी-विनियोग के फलस्वरूप प्राप्त अतिरिक्त उत्पादन के बारे में कुछ कल्पनाएं की गईं थीं। विकास के इस स्वरूप में यह आशा की गई थी कि सन् 1950-51 का राष्ट्रीय आय का स्तर सन् 1970-71 तक तथा प्रति व्यक्ति आय का परिमाण सन् 1977-78 तक दुगुना हो जाएगा। पहली योजना की कल्पनाओं एवं धारणाओं की अर्थव्यवस्था के विकास की तुलना में, जो योजना के प्रथम पांच वर्षो के लिए अनुमानित परिमाण से कही अधिक रहा, दूसरी योजना की रिपोर्ट में विवेचना की गई और यह सुझाया गया कि सन् 1950-51 की तुलना में राष्ट्रीय आय सन् 1967-68 तक और प्रति व्यक्ति आय सन् 1973-74 तक दुगुनी हो जा सकती है। जनसंख्या में वृद्धि और पहली तथा दूसरी योजनाओं की 10 वर्षों की अवधि में राष्ट्रीय आय में वस्तुतः हुई वृद्धि को देखते हुए यह आवश्यक है कि अर्थव्यवस्था का अधिक-से-अधिक विस्तार किया जाए। जनसंख्या में वृद्धि तथा सम्भावित प्रवृत्तियों को देखते हुए, राष्ट्रीय आय में निरन्तर 6 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि होने के बावजूद, दूसरी योजना की इस आशा का पूरा होना कठिन प्रतीत होता है कि सन् 1950-51 का प्रति व्यक्ति आय का स्तर पांचवीं योजना के मध्य तक दुगुना हो जायगा।

5. एक अर्द्धविकसित अर्थव्यवस्था में, जहां प्रति व्यक्ति पूंजी बहुत कम हो, जनसंख्या में वृद्धि की तीव्र गति के कारण बचत की दर बढ़ना बड़ा कठिन हो जाता है, जब कि बचत ही उच्च उत्पादकता और आय-वृद्धि के क्षेत्र में सफलता का बहुत-कुछ निश्चय करती है। इसके अतिरिक्त, पूंजी-विनियोग के सीमाबद्ध रहने पर उसका एक काफी बड़ा भाग पूंजीगत सामान-उद्योगों में कमी करके अनिवार्य उपभोक्ता सामग्रियों के उत्पादन में लगाना पड़ता है। इसके फलस्वरूप भी उन्नति की गति धीमी पड़ जाती है।

आर्थिक विकास की तुलना में जनसंख्या के महत्व को सन् 1961 की जनगणना के परिणामों से समझा जा सकता है। भारत की जनसंख्या में सन् 1951 और सन् 1961 के बीच हुई वृद्धि (लगभग 7 करोड़ 70 लाख) पिछली दो दशाब्दियों में हुई वृद्धि (लगभग 8 करोड़ 20 लाख) के आसपास ठहरती है।

सन् 1959 के प्रारम्भ में, जन्म और मृत्यु की दर-सम्बन्धी कुछ धारणाओं के आधार पर, केन्द्रीय सांख्यिकी-संगठन ने जनसंख्या की वृद्धि के बारे में कतिपय अनुमान लगाए थे, जिन्हें जनगणना होने तक तीसरी योजना की तैयारी के लिए एक कार्यकारी आधार के रूप में स्वीकार किया गया था। नीचे की तालिका में जनसंख्या में वृद्धि के इन अनुमानों को, सन् 1961 की जनगणना के परिणामों के आधार पर अस्थायी रूप से कूते गए अनुमानों के साथ प्रस्तुत किया गया है। सन् 1961 की जनगणना के विस्तृत आंकड़ों का और अधिक अध्ययन किए जाने तक, इनका योजना के निर्माण में प्रयोग किया जा सकता है।*

तालिका-संख्या 1

भारत की जनसंख्या का अनुमान

(करोड़ में)

	1961	1966	1971	1976
केन्द्रीय सांख्यिकी-संगठन का अनुमान (1959)	43.1	48.0	52.8	57.8
अस्थायी अनुमान (1961)	43.8	49.2	55.5	62.5

सन् 1971 और सन् 1976 के लिए वर्तमान अस्थायी अनुमानों के आधार पर, सन् 1961 से सन् 1976 तक की अवधि में जनसंख्या में कुल वृद्धि 18.7 करोड़ तक के आसपास हो सकती है। जनसंख्या में इस वृद्धि को ध्यान में रखते हुए यह अनुमान है कि इस अवधि में श्रमिकों की संख्या में 7 करोड़ की वृद्धि हो जाएगी। इसमें से 1 करोड़ 70 लाख की वृद्धि तो तीसरी योजना की अवधि में ही होगी। इन बढ़े हुए श्रमिको में से लगभग दो-तिहाई को कृषि से भिन्न कामों में लगाने की आवश्यकता होगी। स्पष्टतः यह एक बहुत

*जिन धारणाओं के आधार पर जनसंख्या में वृद्धि के अनुमान तैयार किए गए हैं, उन्हें परिशिष्ट (ग) में प्रस्तुत किया गया है।

बड़ा काम है और इसके लिए आगामी 15 वर्षों में आवश्यक विकास के स्वरूप और गति के बारे में पुनः विचार करना होगा ।

(2)

दीर्घकालीन विकास का मार्ग-निर्धारण

6. विभिन्न तथ्यों के कारण, जिनकी ओर ऊपर ध्यान दिलाया जा चुका है, अनिवार्य रूप से आगामी तीन योजनाओं की अवधि में आर्थिक उन्नति की सभी सम्भावनाओं को पूर्णतः और प्रभावशाली ढंग से गतिशील करना होगा । इसके लिए यह आवश्यक है कि आर्थिक विकास की एक व्यापक नीति के आधार पर आगे बढ़ा जाए। इसी से अर्थव्यवस्था के द्रुत गति से विस्तृत होने की एवं उसके न्यूनतम सम्भव समय में ही आत्मनिर्भर और आत्मचालित होने की गारण्टी मिलेगी। तीसरी और बाद की योजनाओं की पूर्ति के लिए नीति का जो स्वरूप प्रदर्शित किया गया है, उसमें कृषि और उद्योग, आर्थिक और सामाजिक विकास, राष्ट्रीय और प्रादेशिक विकास तथा घरेलू और विदेशी साधन-स्रोतों की परस्पर-निर्भरता पर विशेष बल दिया गया है । इसमें वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक प्रगति के लिए अपनाए जानेवाले उपायों एवं उत्पादकता के आम स्तर को ऊंचा उठाने-सम्बन्धी कार्रवाइयों तथा जनसंख्या, रोज़गार और सामाजिक परिवर्तन-विषयक नीतियों पर भी बहुत बल दिया गया है ।

7. **कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था :** गांवों में उपलब्ध जनशक्ति के उपयोग एवं स्थानीय साधनों के अधिकाधिक प्रयोग पर आधारित कृषि-विकास देश के द्रुत विकास की कुंजी है । अभी कृषि-उपज का परिमाण इतना कम है कि पर्याप्त सिचाई-व्यवस्था; खाद, सुधरे हुए बीजों और औज़ारों की आपूर्ति; कृषि के अच्छे तरीकों को अपनाने के लिए किसानों को प्रशिक्षण; भूमिकाश्त-विषयक सुधार तथा सहकारिता के आधार पर कृषि-अर्थव्यवस्था के विकास के द्वारा बहुत थोड़े समय में ही उत्पादन के स्तर में भारी वृद्धि की जा सकती है । अन्य क्षेत्रों की तरह, जिनमें अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत उपलब्ध साधनों के भरपूर उपयोग से प्रगति की जा सकती है, कृषि-उत्पादन में भी उस हद तक वृद्धि की जानी चाहिए, जितनी भौतिक रूप से सम्भव है । विकास के वर्तमान चरण में खाद्यान्नों के साथ-साथ कपास, तेलहन और अन्य व्यावसायिक वस्तुओं का पर्याप्त उत्पादन भी समान रूप से महत्वपूर्ण है । एक बार यदि उत्पादन की क्षमता का निर्माण हो जाए, तो अपेक्षाकृत कम समय में ही उसे समुदाय की बदलती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के अनुकूल भी किया जा सकता है । इस अवधि में जो लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं, वे हैं—कृषि की एक विविधतापूर्ण और सुदक्ष पद्धति का विकास, जिसमें पशुपालन, दूध-उत्पादन, मांस-उत्पादन, मछलीपालन और कुक्कुट-पालन आदि भी शामिल हैं; समस्त जनता के लिए सन्तुलित और पर्याप्त आहार की व्यवस्था; तथा व्यावसायिक फसलों का विकास जिससे उद्योग और निर्यात की बढ़ती हुई ज़रूरतें पूरी की जा सकें।

8. कृषि-विकास के लिए बड़े पैमाने पर सिंचाई-सुविधाओं के विस्तार की आवश्यकता होती है । अनुमान है कि कुल सिंचित क्षेत्र की दृष्टि से इस समय सिंचाई की टेक्नोलाजी-विषयक सम्भावनाएं बढ़कर 17 करोड़ 50 लाख एकड़ भूमि के लिए हो गई हैं।

इसमें से 10 करोड़ एकड़ भूमि बड़े और मध्यम तथा शेष छोटे सिंचाई-कार्यक्रमों-द्वारा सिंचित है। सिंचाई और निश्चित वर्षा का लाभ उठाने के लिए रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकताओं का हाल में जो अनुमान लगाया गया है, उसके अनुसार 40 लाख टन नत्रजनयुक्त, 20 लाख टन फास्फेटयुक्त और 10 लाख टन पोटाशयुक्त उर्वरक चाहिए। परन्तु सिंचाई की सम्पूर्ण सम्भावनाओं का लाभ उठा लेने के बाद भी भारत की कुल कृषि-भूमि में से आधी वर्षा पर ही निर्भर करेगी। इसलिए विकास-कार्यक्रम में भूमि और नमी-संरक्षण को उच्च प्राथमिकता मिलती ही रहनी चाहिए।

9. किसी भी दीर्घकालीन योजना में कृषि-विकास की सम्भावनाओं का इन क्षेत्रों में प्राप्त सफलताओं से गहरा सम्बन्ध होता है:

(क) टेक्नोलाजी-विषयक परिवर्तन, विशेष रूप से वैज्ञानिक कृषि-पद्धति, सुधरे हुए उपकरणों एवं अन्य औज़ारों का उपयोग;

(ख) ग्रामीण क्षेत्रों की जनशक्ति का पूर्ण उपयोग और अधिकतम स्थानीय प्रयास का संगठन;

(ग) सहकारिता के आधार पर, जिसमें सेवा, ऋण, हाट-व्यवस्था, विधायन और वितरण तथा सहकारी कृषि भी शामिल हैं, ग्रामीण अर्थव्यवस्था का पुर्नगठन;

(घ) भूमि-प्रयोग के व्यवस्थित आयोजन, बहुविध फसलों का विस्तार और बुवाई के सुधरे हुए तरीकों के द्वारा उपलब्ध भूमि का समुन्नत उपयोग; तथा

(ङ) ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि से भिन्न कार्यों का इस प्रकार विस्तार, जिससे पेशे-सम्बन्धी स्वरूप में विविधता आए और कृषि पर निर्भर रहनेवालों की संख्या में कमी हो।

ये लक्ष्य पहले ही स्वीकार कर लिए गए हैं तथा इनकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न किए जा रहे हैं। फिर भी, प्रत्येक क्षेत्र में प्रयत्नों को ज़ोरदार और तीव्र किया जाना चाहिए।

10. **बुनियादी और भारी उद्योग :** यह ठीक है कि कृषि और उद्योग एक ही विकास-प्रक्रिया के परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध दो पहलू हैं, फिर भी इसमें सन्देह नहीं कि द्रुत आर्थिक प्रगति के क्षेत्र में उद्योग की भूमिका विशेष प्रमुख है। अपने प्राकृतिक साधन-स्रोतों के कारण भारत पर्याप्त औद्योगिक प्रगति कर सकता है। भारत में खनिज लोहा, मैंगनीज़, बाक्साइट, कोयला, अबरख और खनिज थोरियम—जैसी परमाणविक सामग्रियों के प्रचुर भण्डार हैं। सर्वेक्षण और खोजों से तेल-स्रोतों की सम्भावनाओं का भी संकेत मिला है। पनबिजली पैदा करने की भी क्षमता प्रभूत है। अच्छी किस्म के खनिज लोहे के बड़ी मात्रा में उपलब्ध होने के कारण भारत उचित लागत पर इस्पात का स्वयं उत्पादन करने में समर्थ है। इस्पात और अन्य बुनियादी वस्तुओं का अपेक्षाकृत कम खर्च में निर्माण करने की अपनी क्षमता तथा घरेलू बाज़ार के निरन्तर बढ़ते जाने के कारण भारत इस स्थिति में है कि मशीनों का तथा विकास के लिए आवश्यक इंजीनियरिंग रासायनिक और बिजली के विविध सामान का उत्पादन कर सके।

परिणामतः इनसे मध्यम और छोटे उद्योगों के विकास में मदद मिलेगी तथा शहरी और ग्रामीण, दोनों क्षेत्रों में रोज़गार की सम्भावनाएं बढ़ेंगी । इस प्रकार, पहले ही स्थापित बुनियादों पर एक सम्बद्ध औद्योगिक ढांचे का निर्माण तथा वास्तविक सापेक्ष लाभ के आधार पर औद्योगिक उत्पादन का विस्तार सम्भव होना चाहिए। फिर भी, अभी कुछ समय पूर्व तक, औद्योगिक क्षेत्र में बुनियादी और भारी उद्योगों के विकास के लिए बहुत ही सीमित आधार उपलब्ध था। पूंजीगत और अन्तर्वर्ती सामान-उद्योग के लघु आकार को देखते हुए इस्पात, कोयला, तेल, बिजली, मशीन-निर्माण, और रासायनिक उद्योगों पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। यदि भावी उद्योगीकरण की आवश्यकताओं को पर्याप्त मात्रा में स्वदेशी साधनों से ही पूरा करना है, तो इन उद्योगों का तेज़ी से विकास होना ही चाहिए। दूसरे शब्दों में, आत्मनिर्भर और आत्मचालित विकास के लिए इन उद्योगों का विकास एक आवश्यक शर्त है।

11. औद्योगिक विकास को, और विशेषतः बुनियादी तथा भारी उद्योगों के विकास को, विकास के उस व्यापक ढांचे का एक अग समझना चाहिए, जो अन्ततः औद्योगिक और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को—बड़े और छोटे उद्योगों की अर्थव्यवस्था को बड़े औद्योगिक केन्द्रों तथा छोटे कस्बों और गांवों की अर्थव्यवस्था को—आपस में जोड़ता है और दोनों के सम्बन्धों को बहुत निकट ला देता है । इस प्रकार, इससे समग्र अर्थव्यवस्था में उच्च गतिशीलता और आर्थिक अखण्डता का आश्वासन प्राप्त होता है।

12. **मानवीय साधन और उत्पादकता :** दीर्घकालीन आयोजन का एक अनिवार्य पहलू यह है कि सम्पूर्ण राष्ट्र के उत्पादकता के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए प्रभावशाली और गतिमान साधन प्रस्तुत किए जाएं। केवल इसी के द्वारा जनसामान्य के जीवन-स्तर को कारगर ढग से ऊंचा उठाया जा सकता है। इस सम्पूर्ण प्रयत्न के मूल में देश के मानवीय साधनों को संगठित करने के लिए अनेक विकास-कार्यक्रम है, जिनमें विशेष रूप से शिक्षा और स्वास्थ्य, पिछड़े वर्गों के विकास के उपाय, दक्षता और तकनीकी ज्ञान के स्तर को ऊंचा उठाने और वैज्ञानिक एवं टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान के कार्यक्रम शामिल हैं । हमें जितनी संख्या में वैज्ञानिक एवं तकनीकी कर्मचारियों की आवश्यकता है, उसकी पूर्ति में तथा वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिए एक दृढ़ आधार का निर्माण करने में 20 वर्ष या इससे भी अधिक समय लग सकता है । प्रशिक्षित व्यक्तियों की संख्या बढ़ाने के कार्यक्रमों को अनिवार्य रूप से व्यापक आधार पर उनकी मांग उपस्थित होने से बहुत पहले ही प्रारम्भ किया जाना चाहिए। साथ ही, यह भी उतनी ही महत्वपूर्ण बात है कि उपलब्ध जनशक्ति को यथासम्भव पूर्ण और प्रभावशाली ढंग से काम में लाया जाए। सामान्य शिक्षा के लिए सुविधाएं बढ़ाने के महत्व के बारे में जितना भी कहा जाए, कम ही होगा। जब कि 6 से 11 वर्ष तक के वय-वर्ग के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा के कार्यक्रम पर अमल प्रारम्भ कर दिया गया है तथा इस दिशा में उल्लेखनीय प्रगति भी हुई है, हमारा अगला कदम भी बहुत ही महत्वपूर्ण है । यह कदम है : 14 वर्ष तक की अवस्था के सभी बच्चों को शिक्षा की व्यवस्था करना। इस बात का संविधान में भी उल्लेख है । चौथी और पांचवीं योजनाओं की अवधि में इस लक्ष्य को प्राप्त कर लिया जाना चाहिए ।

13. **जनसंख्या :** बढ़े हुए उत्पादन का एक बहुत बड़ा भाग बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकता-पूर्ति में ही खप जाता है। स्वास्थ्य और स्वच्छता की स्थितियों में सुधार

के कारण मृत्यु-दर में, विशेषत: बाल-मृत्युओं की संख्या में, और कमी हो जाएगी और यह भी सम्भव है कि कुछ समय तक जन्म-संख्या की गति में वृद्धि की प्रवृत्ति रहे। इसलिए एक उपयुक्त अवधि में जनसंख्या की वृद्धि को स्थिर करने का लक्ष्य योजनाबद्ध विकास के केन्द्र में होना चाहिए। अतएव, परिवार-आयोजन का कार्यक्रम, जिसमें बहुत अधिक शिक्षण, बड़े पैमाने पर सुविधाओं और परामर्श देने की व्यवस्था तथा ग्रामीण और शहरी जनसमाज में व्यापक लोकप्रिय प्रयत्न भी शामिल हैं; सर्वाधिक महत्व का है।

14. **रोजगार :** एक विशाल जनसंख्यावाले देश में, जहां अधिकांश जनता कृषि पर निर्भर करती है, विकास का पिछड़ापन सबसे अधिक बेकारी की उग्र समस्या में प्रतिबिम्बित होता है। जब तक आर्थिक ढांचा सुदृढ़ नहीं हो जाता और उपकरणों और कच्चे माल की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को अर्थव्यवस्था अपने ही साधन-स्रोतों से पूरा करने में समर्थ नहीं हो जाती तब तक वृद्धिशील उत्पादक कार्यों में अतिरिक्त श्रमिकों को भी एक उचित वेतन-स्तर पर खपाना बड़ा कठिन होता है। संक्रमण-काल में ग्रामीण सार्वजनिक कार्य विकास की योजना में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। फिर भी, यह आशा की जाती है कि यदि आगामी तीन योजनाओं में विकास-कार्यों को इस अध्याय में बताए गए पैमाने पर अंजाम दिया गया, तो कृषि से भिन्न क्षेत्र में भी उत्पादक रोजगार के अवसर पर्याप्त मात्रा में बढ़ने चाहिएं।

15. **सामाजिक नीति :** एक ऐसे देश में, जहां अधिकांश जनसंख्या ग्रामों में निवास करती है, जीवन-यापन का स्तर बहुत नीचा है और प्रादेशिक तथा सांस्कृतिक भिन्नताएं बहुत व्यापक हैं, वहां विकास के सामाजिक पहलू आर्थिक पहलू से कम महत्व के नहीं होते। बद्धमूल गहरी सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिए द्रुत गति से विकास-शील अर्थव्यवस्था का होना आवश्यक है। फिर भी, आर्थिक विकास की प्रगति के साथ ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच की विषमताएं बढ़ सकती हैं, देश के विभिन्न भागों में विकास के स्तर में अन्तर बढ़ सकता है और आर्थिक विषमता की समस्याएं कुछ विकट बन सकती हैं। इस सम्बन्ध में सामाजिक उद्देश्यों के अनुरूप खपत के स्वरूप का विकास विशेष महत्व रखता है। दीर्घकालीन विकास की किसी भी योजना में इन पहलुओं पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, ताकि पूर्व वर्णित सामाजिक उद्देश्यों को शीघ्रता से प्राप्त किया जा सके।

16. **विकास के लिए साधन :** एक आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के निर्माण के लिए, जिससे उन्नति की उच्च गति का क्रम बना रह सके, जो बातें आवश्यक होती हैं, उनमें पर्याप्त स्वदेशी पूंजी की व्यवस्था, निर्यात बढ़ाने के लिए यथासम्भव प्रयत्न और संक्रमण-काल की नाजुक अवधि में विदेशी सहायता की सुलभता का भी स्थान है।

बचत करने और निर्यात में वृद्धि-सम्बन्धी प्रगति मुख्यत: इस बात पर निर्भर करती है कि समुदाय कितना भार वहन करने को तत्पर है। गत एक दशाब्दी में हुए विकास के परिणामस्वरूप आर्थिक जड़ता की स्थिति समाप्त हो गई है। अभी अधिकांश जनता का खपत का स्तर इतना नीचा है कि अर्थव्यवस्था के अतिरिक्त उत्पादन का एक काफी बड़ा भाग लोगों का जीवन-स्तर सुधारने में ही लगाया जाना चाहिए। फिर भी, यदि पूंजी के संग्रह और आर्थिक एवं सामाजिक सेवाओं का, जिन पर आर्थिक

उन्नति निर्भर करती है, विकास करना है, तो आगामी कई वर्षों तक खपत के स्तर में, विशेषतः ऐसी वस्तुओं या ऐसी सेवाओं के स्तर में, जिन्हें भारत के आर्थिक विकास के प्रारम्भिक चरणों में अनावश्यक समझा जाता है, सीमित मात्रा में ही उन्नति सम्भव है। यह काम प्रजातन्त्र को समाज के व्यापक हित की दृष्टि से सर्वसाधारण की सहमति से करना ही होता है और इसके लिए समुचित सामाजिक नीतियां अपनानी पड़ती हैं।

विकास की नीति-रचना का एक बुनियादी उद्देश्य ऐसी परिस्थितियां निर्मित करना है, जिससे यथाशीघ्र विदेशी सहायता पर निर्भरता की स्थिति समाप्त हो जाए। इसके लिए निर्यात का व्यापक पैमाने पर विस्तार आवश्यक है। तीसरी योजना मे निर्यात-वृद्धि का जो कार्यक्रम रखा गया है, उसका उद्देश्य चौथी और पाचवी योजनाओं में निर्यात के और अधिक प्रयत्नों के लिए एक सुदृढ़ आधार स्थापित करना है। इसके लिए खपत में संयम, निर्यात के लिए आवश्यक फालतू माल प्राप्त करने के उपाय, और उत्पादकता बढ़ाने तथा उत्पादन और वितरण के व्यय में कमी करने सम्बन्धी नीतिया अपनानी होंगी।

17. **विदेशी सहायता :** सक्रमण की अवधि में बुनियादी और भारी उद्योगों तथा मशीनों के निर्माण की क्षमता बढ़ाने के प्रयासों ने, जिसके बिना राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की प्रगति अवरुद्ध हो जाएगी, भुगतान-सन्तुलन की समस्या को बढ़ा दिया है। आयात की स्थान-पूर्ति का प्रश्न अनिवार्यत. देश मे ही उत्पादन-क्षमता के विकास के प्रश्न के साथ सम्बद्ध है। एक विकासशील अर्थव्यवस्था के सामने, जो देश के ही साधनों को अधिकतम गतिशील बनाने के लिए प्रयत्नशील होती है, यह कठिनाई आती है कि उसके विकास के प्रयत्न आयात की, विशेषतः मशीनों, कच्चे माल और पुर्जों के आयात की, आवश्यकता को बढा देते हैं, जिनका एक अवधि तक वह अपने निर्यात से अर्जित राशि से भुगतान नही कर सकती। ऐसी स्थिति मे विदेशी सहायता की आवश्यकता अनिवार्य होती है। इस प्रकार की सहायता ने भारत की आर्थिक उन्नति को गति देने में बड़ा भारी काम किया है और इसका महत्व बहुत अधिक है। अन्तर्राष्ट्रीय अभिकरणों की और एक देश-द्वारा दूसरे देश को दी जानेवाली सहायता का, कम उन्नत देशों के आर्थिक विकास के लिए जो महत्व है, वह विश्व-समुदाय के निर्माण की तुलना मे, जिसमें प्रत्येक देश अपनी क्षमता के अनुसार दूसरे देश के विकास के लिए कुछ देता है, कम नहीं है। यह एक ऐसा दायित्व है, जिसे भारत स्वीकार करता है और जैसे-जैसे उसकी अर्थव्यवस्था विकसित होगी, वह अपने साधनों की सीमा में रहते हुए अन्य विकासरत देशों के साथ अपने अनुभवों का आदान-प्रदान करने का प्रयास करेगा।

(3)

1961-76 के लिए दृष्टिकोण

18. तीसरी योजना के निर्माण-काल के प्रारम्भ में, दूसरी योजना के सुझाव को स्वीकार करते हुए 5 प्रतिशत वार्षिक की दर से विकास की निरन्तर गति की बात सोची गई थी। 5 वर्ष पूर्व जनसंख्या में वृद्धि की दर के बारे में जो धारणा बनाई गई थी, उसके अनुसार इससे प्रति व्यक्ति वार्षिक आय में 4 प्रतिशत से कुछ कम की

वृद्धि होगी। अब यह अन्दाज़ा लगाया गया है कि आगामी 15 वर्षों तक जनसंख्या में प्रति वर्ष दो प्रतिशत से कुछ अधिक की वृद्धि होगी। इस अवधि में अर्थव्यवस्था को अनेक क्षेत्रों की—खाद्यान्न और कच्चा माल, कपड़ा, इस्पात, कोयला, बिजली, परिवहन, रोज़गार, शिक्षा और अन्य सामाजिक सेवाओं और प्रशिक्षित् जनशक्ति की—बढ़ती हुई विशाल मांगों को पूरा करना होगा। इन परिस्थितियों में, यह विचार किया गया है कि आगामी 15 वर्षों में विकास की संयुक्त गति 6 प्रतिशत वार्षिक के यथा-सम्भव निकट होनी चाहिए। तीसरी योजना के लिए भौतिक कार्यक्रमों और लक्ष्यों को निर्धारित करते समय इस विचार को सामान्यतः सामने रखा गया। यदि इन्हें योजना के अनुसार 5 वर्ष की अवधि में पूर्णतः प्राप्त कर लिया गया, तो कुल राष्ट्रीय आय में 34 प्रतिशत की या 6 प्रतिशत वार्षिक की वृद्धि हो जाएगी। इसके लिए जिन अन्य महत्व-पूर्ण शर्तों को पूरा किया जाना चाहिए, वे हैं: आर्थिक स्थिरता-विषयक परिस्थितियों को बनाए रखना और अधिकांश जनता के जीवनयापन-व्यय के स्तर को नीचे रखना; विदेशी साधनों की पर्याप्तता और समय पर सुलभता; राष्ट्रीय आय के 12 प्रतिशत से कुछ अधिक स्वदेशी बचत का पुनः विनियोग; उद्योग, परिवहन और बिजली के अधीन कार्यक्रमों का पूर्णतः समन्वित और सुचारु रूप से परिपालन; सभी स्तरों पर कृषि-विषयक एवं अन्य कार्यक्रमों का दक्षतापूर्वक कार्यान्वियन; और आयोजन तथा पूरा किए गए कामों के मूल्यांकन के लिए सुधरी हुई तकनीकों का प्रयोग जहां तीसरी योजना की सफलता के लिए यह महत्वपूर्ण है कि इन क्षेत्रों में सघन प्रयास किए जाएं वहां विकास की वास्तविक गति इस बात पर निर्भर करेगी कि इन शर्तों को कहां तक पूरा किया गया है।*

19. भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास के व्यापक स्वरूप को दृष्टि में रखते हुए यह अपेक्षा की गई है कि 1960-61 के मूल्यों के आधार पर दूसरी योजना के अन्त की राष्ट्रीय आय 14,500 करोड़ रु० से बढ़कर तीसरी योजना के अन्त में 19,000 करोड़ रु०, चौथी योजना के अन्त में 25,000 करोड़ रु० और पांचवीं योजना के अन्त में 33,000 करोड़ से 34,000 करोड़ रु० तक हो जानी चाहिए। जनसंख्या में वृद्धि को भी देखते हुए, इन अनुमानों के आधार पर, 1960-61 के अन्त की प्रति व्यक्ति औसत आय 330 रु० से बढ़कर 1966, 1971 और 1976 में क्रमशः 385, 450 और 530 रु० हो जाएगी। राष्ट्रीय और प्रति व्यक्ति आय के इन अनुमानों में निहित विनियोग की मात्रा और दर में वृद्धि प्राप्त करना सुगम नहीं है फिर भी, साधनों और विज्ञान एवं आधुनिक टेक्नोलाजी-द्वारा उपलब्ध जानकारियों की पृष्ठभूमि में तथा उपलब्ध सामाजिक और आर्थिक प्रक्रियाओं के बारे में समझदारी बढ़ने के कारण यह विचार किया गया है कि ऊपर जो लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं, उन्हें व्यवहारतः पूरा भी किया जा सकता है।

20. ऊपर जिस पैमाने पर विकास की बात कही गई है तथा जिसमें वास्तविक उपलब्धि के समय और अधिक सुधार किया जाना चाहिए, उसके अनेक महत्वपूर्ण फलितार्थ

*** चौथे और पांचवें अध्याय में तीसरी योजना में 5 प्रतिशत से कुछ अधिक वार्षिक की दर से राष्ट्रीय आय में वृद्धि का जो लक्ष्य सुझाया गया है, वह इन शर्तों पर विचार के उपरान्त किए गए सम्पूर्ण निर्णय के रूप में है।**

है। इसका यह तकाजा है कि देश के जनशक्ति विषयक-साधनों का पूरा-पूरा उपयोग करने के लिए सघन रूप से और अनवरत प्रयास किया जाए; पूजी-विनियोग के लिए उपलब्ध स्रोतों का अधिक-से-अधिक उपयुक्त ढंग से प्रयोग किया जाए; स्वदेशी बचत पर बल दिया जाए और उसे पुनः उपयुक्त क्षेत्रों में लगाया जाए तथा निर्यात के विस्तार के लिए स्वदेशी उत्पादन का काफी अतिरिक्त माल प्राप्त किया जाए। राष्ट्रीय आय के अनुपात में कुल पूंजी-विनियोग की मात्रा वर्तमान 11 प्रतिशत से बढकर तीसरी, चौथी और पांचवीं योजनाओं के अन्त में क्रमश: 14-15, 17-18 और 19-20 हो जानी चाहिए। दूसरे शब्दो में तीसरी योजना में कुल विनियोग के लिए निर्धारित राशि 10,500 करोड़ रु० की तुलना में चौथी और पांचवीं योजनाओं में यह राशि लगभग 17,000 करोड़ रु० और 25,000 करोड़ रु० होनी चाहिए। इसी अनुपात से स्वदेशी बचत की मात्रा भी, जो अभी 8.5 प्रतिशत है, तीसरी, चौथी और पांचवीं योजनाओं के अन्त में बढ़कर क्रमशः राष्ट्रीय आय का 11.5, 15-16 और 18-19 प्रतिशत हो जानी चाहिए। इसका एक अर्थ यह भी है कि कुल नियोजित राशि में विदेशी सहायता का अनुपात क्रमशः कम होता जाएगा और पांचवीं योजना के अन्त में अर्थव्यवस्था इतनी सुदृढ़ हो जाएगी कि वह विदेशी पूंजी के सामान्य नियोजन के अतिरिक्त विदेशी सहायता पर निर्भर किए बिना सन्तोषजनक गति से विकसित हो सकेगी।

21. जैसा कि पहले कहा जा चुका है, दीर्घकालीन योजनाओं के व्यावहारिक ब्याज का एक बहुत बड़ा भाग वर्तमान योजनाओं पर काम करने और निर्णय लेने में पथ-प्रदर्शन और पहले से ही आयोजन के बारे में सुविधाएं प्रदान करने में निहित है। बुनियादी उद्योगों में इन बातों का विशेष महत्व है। इन मामलों मे, समन्वित विकास से सम्बद्ध तकनीकी और अन्य समस्याओं; भौतिक साधनों और विदेशी मुद्रा-सम्बन्धी पेचीदगियों, और आर्थिक गतिविधियों का स्थान निर्धारित करने-सम्बन्धी प्रश्नों पर सुदीर्घ अध्ययन और तैयारी की आवश्यकता होती है। तीसरी योजना के प्रारम्भिक अध्ययनों के क्रम में सन् 1970-71 के लिए कुछ महत्वपूर्ण वस्तुओं के उत्पादन की क्षमता के अनुमानित लक्ष्य इस प्रकार सुझाए गए हैं :

तालिका-संख्या 2

1970-71 में उत्पादन-क्षमता के लक्ष्य

वस्तु	क्षमता का लक्ष्य
इस्पात की सिल्लिया	180—190 लाख टन
कच्चा लोहा	30—40 लाख टन
अलुमीनियम	2.3—2.5 लाख टन
बिजली	210—230 लाख किलोवाट
कोयला	17-18 करोड़ टन
तेलशोधन	180—200 लाख टन
नत्रजन्युक्त उर्वरक (नत्रजन में)	20—22 लाख टन
सीमेण्ट	2.4—2.6 करोड़ टन
मशीन-निर्माण	1,600 करोड़ रुपये का उत्पादन
रेलवे-द्वारा माल-परिवहन—लम्बी दूरी का यातायात	38—42 करोड़ टन
खाद्यान्न	12.5 करोड़ टन
निर्यात	1,300—1,400 करोड़ रुपये

इन लक्ष्यों से यह प्रकट होता है कि इस दिशा में कितना अधिक प्रयत्न किए जाने की आवश्यकता है । तकनीकी स्तर पर और अधिक अध्ययन करने की दिशा में भी इन्हें उपयोगी आधार बनाया जा सकता है ।

(4)

दीर्घकालीन विकास-योजना की तैयारी

22. विगत वर्षों में दीर्घकालीन योजना की तैयारी के लिए नई तकनीकों और सिद्धान्तों के विकास के क्षेत्र में विशेष प्रगति हुई है। आर्थिक आयोजन के लिए इनका प्रयोग मुख्यतः उपलब्ध तकनीकी और आंकड़ों-सम्बन्धी सूचनाओं की कोटि पर निर्भर करता है । तदनुसार ही, तीसरी योजना में उपलब्ध आंकड़ों एवं तकनीकी सूचनाओं में परिष्कार के लिए विशेष कदम उठाए जा रहे हैं। विकासशील अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं में ठीक अनुपात रखने और जटिल सम्बन्धों का विश्लेषण करने के लिए उनकी विशेष रूप से आवश्यकता पड़ती है । विकास के प्रत्येक चरण में सम्पूर्ण कार्यक्रम को एक अविच्छिन्न भौतिक प्रक्रिया के रूप में देखना चाहिए। कच्ची सामग्रियों, सहायक उत्पादनों, मशीनों और आवश्यक सेवाओं (यथा, बिजली और परिवहन तथा आवश्यक प्रशिक्षित कर्मचारियों) का उचित मात्रा और संख्या में ठीक समय पर उपलब्ध होना आवश्यक है। अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में होनेवाले उत्पादनों का ठीक समय पर विनियोग या खपत के लिए उपयोग किया जाना चाहिए। स्वदेशी बचत और विदेशी मुद्रा की उपलब्धता उत्पादन और खपत की मांग को ठीक समय पर पूरा करनेवाली होनी चाहिए। आर्थिक, तकनीकी और संख्या-सम्बन्धी विश्लेषण बड़े पैमाने पर किया जाना चाहिए। इसमें प्रत्येक नियत अवधि में उपभोक्ताओं की माल और सेवाओं-सम्बन्धी मांग का अनुमान; सहायक सामान, कच्ची सामग्रियों और तकनीकी कर्मचारियों की मांग का निश्चय करने के उद्देश्य से अन्तःउद्योग-सम्बन्धों का अध्ययन; और विनियोग की आवश्यकताओं, आयात में कमी की सम्भावनाओं तथा निर्यात का विकास भी शामिल होना चाहिए।

23. एक ऐसे देश के लिए, जहां बहुत गहरी सामाजिक और आर्थिक समस्याएं हैं, जहां जनसंख्या विशाल और निरन्तर बढ़नेवाली है और जहां परस्पर भिन्न परिस्थितियां हैं, विकास की एक दीर्घकालीन योजना, जिसमें विशिष्ट कार्यक्रम और नीतियां बताई गई हों, सफल आयोजन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार की योजना न केवल व्यापक राष्ट्रीय आधार पर बनाई जानी चाहिए, अपितु इसमें देश के प्रत्येक क्षेत्र के स्रोतों के विकास की सम्भावनाओं को भी ध्यान में रखना चाहिए, ताकि उन्नति की गति को धीमा किए बिना ही विकास के लाभ को यथासम्भव व्यापक क्षेत्र में वितरित किया जा सके। इसलिए दीर्घकालीन योजना को आर्थिक और सामाजिक विकास का एक ऐसा सामान्य स्वरूप प्रस्तुत करना चाहिए, जो प्रत्येक क्षेत्र की आवश्यकताओं और सम्भावनाओं को ध्यान में रखे तथा उनको राष्ट्रीय प्रगति के समन्वित प्रयत्नों के साथ सम्बद्ध करे। इस आधार पर एक दीर्घकालीन योजना तैयार करने के लिए केन्द्र और राज्यों के विभिन्न सरकारी अभिकरणों में और वैज्ञानिक, आर्थिक एवं सामाजिक अनुसन्धान करनेवाली प्रमुख संस्थाओं में निरन्तर और निकट सम्पर्क तथा सहयोग होना चाहिए।

दीर्घकालीन योजना की रूपरेखा को प्राप्त नवीनतम आंकड़ों और सूचनाओं के आधार पर पूरा किया जाएगा और समय-समय पर योजना में टेक्नोलाजी-विषयक विकास, साधनों की अधिक जानकारी और अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं में हुई प्रगति को ध्यान में रखते हुए आवश्यक परिवर्तन और परिवर्द्धन किए जाएंगे। इस ढंग से योजना-आयोग और कुछ स्वतन्त्र अनुसन्धान-संस्थाओं ने कार्य प्रारम्भ भी कर दिया है। साथ ही, सोचा गया है कि आगामी 3 वर्षों में पर्याप्त साधन-शक्ति लगा कर विकास की एक ऐसी समग्र योजना तैयार की जाए, जिसकी परिधि में पांचवीं योजना की समाप्ति तक की अवधि आ जाए।

अध्याय 3

आयोजन के दस वर्ष

पहली और दूसरी योजनाएं

मार्च 1961 में दूसरी पंचवर्षीय योजना की पूर्ति के साथ-साथ भारत के योजनाबद्ध विकास का प्रथम दशक भी समाप्त हुआ। इस दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था का द्रुत गति से विस्तार हुआ, देश के भावी सामाजिक और आर्थिक स्वरूप की रूपरेखा निश्चित हुई और पिछले अध्यायों में वर्णित मूलभूत उद्देश्यों तथा दीर्घकालीन आर्थिक लक्ष्यों की पूर्ति के लिए नींव भी रखी गई।

2. पहली पंचवर्षीय योजना ने ऐसी कई परियोजनाएं हाथ में लीं, जिन्हें पहले ही तैयार किया गया था और उन्हें समस्त देश के आर्थिक तथा सामाजिक विकास की सुसंगठित योजना के साथ सम्बद्ध किया। इस योजना का, जिसमें कृषि, सिंचाई, बिजली और परिवहन पर बल दिया गया, उद्देश्य यह था कि भविष्य में अधिक तेजी से आर्थिक और औद्योगिक प्रगति करने का आधार तैयार हो जाए। देश के आर्थिक विकास में सामाजिक परिवर्तन और संस्थागत सुधारों पर बल देते हुए इस योजना ने कुछ मूलभूत नीतियों को जन्म दिया, जिन्हें दूसरी योजना के अन्तर्गत और अधिक विकसित किया गया।

पहली योजना के कुछ उल्लेखनीय अंग ये थे : पुराने ढंग की भूमि-पद्धति में, जिससे कृषि-सम्बन्धी उत्पादन में बाधा पड़ रही थी, सुधार; विशाल सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अंग के रूप में राष्ट्रव्यापी कृषि-विस्तार-सेवा की स्थापना; सहकारिता-आन्दोलन को पुनः सबल बनाना; बड़े पैमाने पर सिंचाई और बिजली की सुविधाओं का विस्तार; देश के प्रशासकीय ढांचे को सुधारना और दृढ़ बनाना; तथा कृषि और उद्योग को कर्ज देने, छोटे पैमाने के उद्योगों का विकास करने और आबादी के पिछड़े हुए अंगों को विशेष सहायता देने के लिए कुछ विशिष्ट संस्थाओं की स्थापना। इस योजना में तीव्र आर्थिक प्रगति और सामाजिक न्याय का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए योजनाबद्ध प्रयत्न करने की महती आवश्यकता की ओर राष्ट्र का ध्यान आकर्षित किया गया। इसने जनता को केवल वे उद्देश्य ही नहीं बताए, जिनके लिए काम किए जाने की ज़रूरत थी, बल्कि वे साधन भी बतलाए, जिनकी सहायता से परस्पर-स्वयंसेवा, सहकारिता एवं स्थानीय साधनों के संगठन-द्वारा उन्हें पूरा किया जा सकता था।

3. पहली योजना के अन्तर्गत जो मूलभूत नीतियां स्वीकार की गई थीं, उन्हें दूसरी योजना में एक कदम आगे और बढ़ा कर यह निश्चित किया गया कि पूंजी-विनियोग, उत्पादन और रोजगार में अधिक वृद्धि हो। इस दूसरी योजना का मुख्य योगदान यह रहा कि उसने अर्थव्यवस्था को अगली महत्वपूर्ण विकास-अवस्था की ओर प्रेरित किया, जो कि देश-द्वारा पहले ही स्वीकृत योजनाबद्ध विकास की नीति का एक न्यायसंगत परिणाम थी। इसमें बुनियादी और भारी उद्योगों के विकास पर विशेष जोर दिया गया, क्योंकि

भारत में प्राकृतिक साधनों के पहले से पर्याप्त मात्रा में मौजूद रहने के कारण आगामी 15 या 20 वर्षों में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास को द्रुत गति देने के कार्यक्रम का यह एक आवश्यक अंग था। इस योजना में यह बात भी अधिक स्पष्ट रूप में कही गई कि देश के आर्थिक विकास में सरकारी क्षेत्र की कितनी प्रमुख भूमिका होगी। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास की गति अधिक तेज़ करने और भविष्य में द्रुत विकास के अनुकूल अवस्थाओं का निर्माण करने पर ज़ोर देने के साथ-साथ दूसरी योजना ने राष्ट्र के सामने समाजवादी ढंग का समाज बनाने का लक्ष्य प्रस्तुत किया। रोज़गार के अवसर अधिक बढ़ाने, आय तथा सम्पत्ति की विषमताओं को कम करने और आर्थिक शक्ति के अधिक न्यायसंगत वितरण के उद्देश्यों को भी इसने निश्चित किया।

4. आर्थिक आयोजन के परिणामस्वरूप पूंजी-विनियोग की दर में पर्याप्त बढ़ोतरी हुई, विशेषत: उन दिशाओं में, जिनसे देश के आर्थिक विकास में गति आ सकती थी। अर्थव्यवस्था में कुल पूंजी-विनियोग (निजी तथा सरकारी, दोनों) पहली योजना के प्रारम्भ की राशि 500 करोड़ रु० वार्षिक से बढ़ कर पहली योजना के अ
में 850 करोड़ रु० वार्षिक तक और दूसरी योजना के अन्त में लगभग 1,600 क
रु० वार्षिक तक पहुंच गया। उपर्युक्त अवधियों में सरकारी अधिकारियों-द्वारा पूं
विनियोग की राशियां क्रमश: 200 करोड़ रु०, 450 करोड़ रु० और 800 क
रु० रहीं। मौजूदा कीमतों के अनुसार, दोनों योजनाओं की अवधि में कुल पू
विनियोग 10,110 करोड़ रु० का हुआ, जिसमें से 5,210 करोड़ रु० का श्रेय सर
क्षेत्र को और 4,900 करोड़ रु० का श्रेय निजी क्षेत्र को था। दोनों योजनाओं
ब्योरा नीचे दिया गया है :

तालिका-संख्या 1

पहली और दूसरी योजनाओं में व्यय तथा पूंजी-विनियोग*

(करोड़ रु०)

क्षेत्र	पहली योजना 1951-56	दूसरी योजना 1956-61	योग 1951-61
सरकारी क्षेत्र का व्यय	1,960	4,600	6,560
सरकारी क्षेत्र का पूंजी-विनियोग	1,560	3,650	5,210
निजी क्षेत्र का पूंजी-विनियोग†	1,800	3,100	4,900
समस्त पूंजी-विनियोग	3,360	6,750	10,110

*** मौजूदा कीमतों के अनुसार**

† पहले निजी क्षेत्र का पूंजी-विनियोग पहली योजना में 1,600 करोड़ रु० और दूसरी योजना में 2,400 करोड़ रु० दिखाया गया था। पूरी सूचना प्राप्त होने पर इन अनुमानों को संशोधित किया गया है। सरकारी क्षेत्रों से हस्तान्तरित साधन इसमें शामिल नहीं हैं।

5. नीचे की तालिका में सरकारी क्षेत्र के व्यय के विकास की विभिन्न मदों में वितरण दिखाया गया है :

तालिका-संख्या 2

व्यय का वितरण

(करोड़ रुपये)

मद	पहली योजना		दूसरी योजना	
	व्यय	प्रतिशत	व्यय	प्रतिशत
कृषि और सामुदायिक विकास	291	15	530	11
बड़ी और मध्यम सिंचाई	310*	16	420	9
बिजली	260	13	445	10
ग्राम और छोटे उद्योग	43	2	175	4
उद्योग और खनिज पदार्थ	74	4	900	20
परिवहन और संचार-साधन	523	27	1,300	28
सामाजिक सेवाएं और विधि	459	23	830	18
योग	1,960	110	4,600	100

व्यय-वितरण में परिवर्तन इस बात का संकेत देते हैं कि दोनों योजनाओं में किस प्रकार अलग-अलग मदों पर बल दिया गया। पहली योजना में ऐसे कार्यक्रमों पर ज्यादा बल दिया गया था, जिनसे देश की कृषि-शक्ति का विकास होता। इसलिए योजना के कुल खर्च का 31 प्रतिशत भाग कृषि और सिंचाई के लिए निश्चित किया गया। दूसरी योजना में औद्योगिक विकास पर ज़्यादा ज़ोर दिया गया और उद्योगों तथा खनिज पदार्थों का सापेक्ष भाग 4 प्रतिशत से बढ़कर 20 प्रतिशत हो गया। परिवहन और संचार-साधनों को दोनों ही योजनाओं में ऊंची प्राथमिकता दी गई। सामाजिक सेवाओं और विविध मदों को पहली योजना के कुल व्यय का 23 प्रतिशत भाग और दूसरी योजना के कुल व्यय का 18 प्रतिशत भाग प्राप्त हुआ।

वित्त-व्यवस्था का स्वरूप

6. दोनों योजनाओं में सरकारी क्षेत्र के व्यय के लिए जो वित्त-व्यवस्था हुई, वह अगले पृष्ठ पर दी गई है।

*** इसमें बाढ़-नियन्त्रण शामिल है।**

तालिका-संख्या 3

सरकारी क्षेत्र में वित्तीय साधन

(करोड़ रु०)

	पहली योजना		दूसरी योजना	
	वास्तविक	प्रतिशत	अनुमानित	प्रतिशत
योजना पर व्यय	1,960	100	4,600	100
आन्तरिक साधन	1,772	90	3,510*	76
विदेशी सहायता	188	10	1,090†	24

विशेष रूप से दूसरी योजना की अवधि में, कर-सम्बन्धी प्रयत्नों में पर्याप्त वृद्धि की गई। कई नए प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष कर लगाए गए। साधनों के अभाव को कुछ तो घाटे की वित्त-व्यवस्था से और कुछ विदेशी सहायता से पूरा किया गया। दूसरी योजना के प्रारम्भिक वर्षों में बजट-सम्बन्धी घाटे कुछ ज़्यादा थे। परवर्ती वर्षों में उन्हें घटाने की कोशिश की गई। दूसरी योजना की अवधि में वास्तविक घाटे की वित्त-व्यवस्था 948 करोड़ रु० की थी।

7. पहली योजना की अवधि में भुगतान-सन्तुलन ने कोई समस्या पैदा नहीं की। सम्पूर्ण योजना-अवधि में वास्तविक घाटा 318 करोड़ रु० का रहा। इस घाटे को 196 करोड़ रु० तक विदेशी सहायता से और 122 करोड़ रु० देश के विदेशी मुद्रा-कोष से निकाल कर पूरा किया गया। चूंकि दूसरी योजना में उद्योगीकरण पर विशेष बल दिया गया था, इसलिए स्वभावतः ही विदेशी मुद्रा के अधिक व्यय की आवश्यकता उपस्थित हुई। दूसरी योजना की रिपोर्ट में यह अनुमान लगाया गया था कि पांच वर्ष की अवधि में भुगतान-सन्तुलन की मद में कुल घाटा करीब 1,100 करोड़ रु० का होगा और इसमें से करीब 400 करोड़ रु० की पूर्ति विदेशी सहायता से की जाएगी। परन्तु योजना आरम्भ में ही कुछ अप्रत्याशित भुगतान-सन्तुलन-सम्बन्धी कठिनाइयों में फंस गई और सन 1958 में उस पर पुनः विचार करना पड़ा। कम आवश्यक आयातों पर कुछ कठोर बन्दिशें लगानी पड़ीं। दूसरी योजना की अवधि में विदेशी मुद्रा-कोष से 600 करोड़ रु० निकालने पड़े। इसके अतिरिक्त, 872 करोड़ रु० तक की विदेशी सहायता का सरकारी और निजी क्षेत्र में इस्तेमाल करना पड़ा। इसके अतिरिक्त, पी० एल० 480 सहायता के अन्तर्गत 534 करोड़ रु० की वस्तुएं आयात करनी पड़ीं और 55 करोड़ रुपये अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष से निकालने पड़े।

*इसमें सरकारी ऋण में रिज़र्व बैंक और स्टेट बैंक-द्वारा पी० एल० 480 की जमा राशियों से दी गई राशियां शामिल हैं।

†इसमें सन 1960-61 में विशेष सिक्यूरिटियों में पी० एल०480 के कोष से रिज़र्व बैंक-द्वारा किया गया पूंजी-विनियोग शामिल है।

8. पिछले 10 वर्षों में विकास की गति एक-जैसी नहीं रही है । इसमें कई उल्लेखनीय उतार-चढ़ाव आते रहे— कभी प्राकृतिक कारणों अथवा अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं से और कभी कार्यान्वियन-सम्बन्धी कमजोरियों से । पहली योजना की अवधि में, अधिकांशतः कृषि-उत्पादन में विशेष प्रगति होने के कारण राष्ट्रीय आय में 18 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि लक्ष्य 12 प्रतिशत का ही था । दूसरी ओर, दूसरी योजना में राष्ट्रीय आय में 20 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई, जब कि लक्ष्य 25 प्रतिशत का था ।

9. पर समूचे दशक पर विचार करते समय जो चित्र हमारे सामने आता है, वह चौमुखी उन्नति का है । बुनियादी सुविधाएं—जैसे, सिंचाई, बिजली और परिवहन, जो कि कृषि-सम्बन्धी और औद्योगिक विकास के लिए ज़रूरी हैं— बहुत विस्तृत हुई हैं । बहुमूल्य खनिज-भाण्डार मिले हैं, जो छोटे और बड़े उद्योगों की ज़रूरतों को पूरा करेंगे । मुख्यतः विदेशी मुद्रा के संकट के कारण कुछ देरी होने के बावजूद कई परियोजनाएं पूरी हो चुकी हैं और इनमें से कुछ ने तो उत्पादन शुरू भी कर दिया है— शेष निकट भविष्य में ही उत्पादन शुरू करेंगी । कृषि-उत्पादन करीब 41 प्रतिशत और खाद्यान्नों का उत्पादन करीब 49 प्रतिशत बढ़ गया है । संगठित उत्पादक उद्योगों का शुद्ध उत्पादन करीब दुगुना हो गया है । इसमें सरकारी क्षेत्र के उद्योगों का हिस्सा 1.5 प्रतिशत से बढ़ कर 8.4 प्रतिशत हो गया है । यह वृद्धि मुख्यतः इस्पात, कोयला-खनन और भारी रसायन-जैसे महत्वपूर्ण उद्योगों में हुई हैं । इसके साथ ही, बिजली-उत्पादन की क्षमता में भी बड़ा विस्तार हुआ है और देश की परिवहन और संचार-पद्धति में काफी सुधार हुआ है, मुख्यतः सरकारी क्षेत्र में । संगठित उद्योगों का आमतौर पर विस्तार हुआ है और कार्यरत कम्पनियों की चुकता पूंजी दुगुनी से भी ज्यादा बढ़ गई है । इसके साथ ही, ग्राम और लघु उद्योगों का भी काफी विकास हुआ है । शिक्षा और तकनीकी प्रशिक्षण की सुविधाएं पहले की अपेक्षा कहीं अधिक विस्तृत हुई हैं । अस्पतालों और दवाखानों की संख्या उल्लेखनीय रूप से बढ़ी है, मलेरिया के उन्मूलन के लिए खास उपाय काम में लाए गए हैं और स्वास्थ्य की दशा में आम तौर पर सुधार हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप जीवन-सीमा में वृद्धि हुई है । पिछले दशक में राष्ट्रीय आय में 42 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, परन्तु आबादी में वृद्धि होते रहने के कारण प्रति व्यक्ति आय में केवल 16 प्रतिशत की ही वृद्धि हो सकी है ।

10. पिछले दशक में अर्थव्यवस्था के विकास का एक सामान्य परिचय अगले पृष्ठ की तालिका में दिए गए कतिपय महत्वपूर्ण तथ्यों और अध्याय 5 के अनुबन्ध 1 में प्रस्तुत विस्तृत आंकड़ों से प्राप्त किया जा सकता है ।

तालिका-संख्या 4

विकास-सम्बन्धी कतिपय महत्वपूर्ण तथ्य

विषय	इकाई	1950-51	1955-56	1960-61	1950-51 की तुलना में 1960-61 में प्रतिशत वृद्धि
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
राष्ट्रीय आय (1960-61 की कीमतों पर)	करोड़ रु०	10,240	12,130	14,500	42
आबादी	लाख	3,610	3,970	4,380	21
प्रति व्यक्ति आय (1960-61 की कीमतों पर)	रु०	284	306	330	19
कृषि-उत्पादन का सूचनांक	1949-50=100	96	117	135	41
खाद्यान्न-उत्पादन	लाख टन	522*	658*	760	46
नत्रजनयुक्त उर्वरक की खपत	हज़ार टन नत्रजन के रूप में	55	105	230	318
सिंचित क्षेत्र (शुद्ध योग)	लाख एकड़	515	562	700	36
सहकारिता-आन्दोलन (किसानों को पेशगी)	करोड़ रु०	22.9	49.6	200	773
औद्योगिक उत्पादन का सूचनांक	1950-51=100	100	139	194	94

*उत्पादन के अनुमान सन् 1956-57 तक सांख्यिकी औसत और अनुमान के तरीकों में परिवर्तनों के अनुसार ठीक किए गए हैं।

तालिका-संख्या 4—जारी

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
निम्नलिखित का उत्पादन :					
इस्पात की सिल्लियां	लाख टन	14	17	35	150
एलुमीनियम	हज़ार टन	3.7	7.3	18.5	400
मशीनी औज़ार (वर्गीकृत)	मूल्य करोड़ रु० में	0.34	0.78	5.5	1518
गन्धक-अम्ल	हज़ार टन	99	164	363	267
पेट्रोलियम की चीज़ें	लाख टन	—	46	57	—
कपड़ा :					
मिल का बना	करोड़ गज़	372	510.2	512.7	38
खादी, हथकरघा और बिजली का करघा	करोड़ गज़	89.7	117.3	234.9	162
योग	करोड़ गज़	461.7	687.5	747.6	62
खनिज पदार्थ :					
खनिज लोहा	लाख टन	32	43	107	234
कोयला	लाख टन	323	384	546	69
निर्यात	करोड़ रु०	624	609	645	3
बिजली : स्थापित क्षमता	लाख किलोवाट	23†	34†	57	148
रेलवे : माल ले जाया गया	लाख टन	915	1140	1540	68
सड़कें : पक्की, राष्ट्रीय राजपथ-सहित	हज़ार मील	97.5	122	144	48
चालू व्यावसायिक गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	116	166	210	81

†ये आंकड़े कैलेंडर-वर्ष 1950 और 1955 से सम्बद्ध हैं ।

जहाज़रानी	लाख ग्रॉस रजिस्टर्ड टन	3.9	4.8	9	131
सामान्य शिक्षा : विद्यालयों में छात्र	लाख (सख्या)	235	313	435	85
तकनीकी शिक्षा : इंजीनियरी श्रौर टेक्नोलाजी, डिग्री स्तर पर प्रवेश	हजार (संख्या)	4.1	5.9	13.9	239
स्वास्थ्य :					
श्रस्पतालों में शय्याएं	हजार (संख्या)	113	125	186	65
डाक्टर (प्रैक्टिस करनेवाले)	हजार (संख्या)	56	65	70	25
खपत का स्तर :					
भोजन	प्रति व्यक्ति प्रति दिन कैलो-रियां	1,800	1,950	2,100	17
कपड़ा	प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष गज	9.2	15 5	15 5	68

*श्रथ व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में जो प्रगति हुई, ; उस पर नीचे संक्षेप में प्रकाश डाला गया है।

कृषि

11. सन 1949-50 के बाद कृषि-उत्पादन की प्रवृत्ति निम्नलिखित तालिका में दिखाई गई है :

तालिका-संख्या 5

कृषि-उत्पादन का सूचनांक

(1949-50 = 100)

	1950-51	1955-56	1960-61
सब फसलें	96	117	135
खाद्य-फसलें	91	115	132
अन्य फसलें	106	120	142

वर्ष-प्रति-वर्ष उतार-चढ़ाव की स्थिति रहने के बावजूद विस्तार के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। विकास की सामूहिक दर करीब 3.5 प्रतिशत प्रतिवर्ष रही, जो कि पिछले किसी भी दशक की तुलना में अधिक है । पिछले दशक में खाद्यान्न-उत्पादन का औसत स्तर लगभग 5 करोड़ टन था, जिसे पहली योजना के शुरु में ही पार कर लिया गया और सन 1960-61 में 7 करोड़ 60 लाख टन खाद्यान्न* का उत्पादन हुआ, जब कि सन 1949-50 में यह परिमाण 5 करोड़ 76 लाख टन और सन 1950-51 में 5 करोड़ 22 लाख टन था। इस दशक में प्रति एकड़ उपज भी बढ़ी। उदाहरण के लिए चावल की औसत प्रति एकड़ उपज सन 1946-47 से सन 1950-51 तक के पांच वर्षों की अवधि में 694 पौंड थी। पहली योजना में यह परिमाण बढ़ कर 727 पौंड और दूसरी योजना में 807 पौंड हो गया। मुख्य कृषि-वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि इस प्रकार हुई :

तालिका-संख्या 6

मुख्य फसलों का उत्पादन

फसल	इकाई	1950-51	1955-56	1960-61
खाद्यान्न (अनाज और दालें)	लाख टन	522	658	760
तेलहन	लाख टन	51	56	71
गन्ना (गुड़)	लाख टन	56	60	80
कपास	लाख गांठें	29	40	51
पटसन	लाख गांठें	33	42	40

***नवीनतम अनुमानों के अनुसार सन 1960-61 में 7 करोड़ 80 लाख टन से भी अधिक खाद्यान्न-उत्पादन होने की उम्मीद है।**

12. इस दशक में खेती, सामुदायिक विकास और सिंचाई पर कुल 1,551 करोड़ रु० खर्च हुए। कृषि-उत्पादन के जो मुख्य कार्यक्रम हाथ में लिए गए, उनका सम्बन्ध सिंचाई के विस्तार, रासायनिक उर्वरकों की आपूर्ति, खाद के स्थानीय साधनों के विकास, सुधरे हुए बीजों के बहुगुणन और वितरण तथा उन्नत कृषि-तरीकों को अपनाने और भूमि के पुनरुद्धार. एवं विकास से था।

13. अनुमान है कि सिंचित कुल क्षेत्र का परिमाण सन 1950-51 के 515 लाख एकड़ से बढ़ कर सन 1960-60 में लगभग 700 लाख एकड़ हो गया। पहली और दूसरी योजनाओं में जो बड़ी और मध्यम सिंचाई-परियोजनाएं शुरू की गई थीं, उनके पूर्ण विकास हो जाने पर करीब 380 लाख एकड़ क्षेत्र में सिंचाई की व्यवस्था सम्भव हो सकेगी। सन 1960-61 के अन्त तक करीब 40 लाख एकड़ क्षेत्र का पुनरुद्धार किया गया। करीब 5 लाख एकड़ क्षेत्र में मशीन-द्वारा खेती की व्यवस्था की गई और भूमि-सुधार का काम करीब 15 लाख एकड़ क्षेत्र में हुआ। देश के समस्त कृषि-क्षेत्र के लिए सुधरे हुए बीज सुलभ करने की एक योजना के अन्तर्गत लगभग 4,000 बीज-फार्म कायम किए गए। सन 1950-51 और सन 1960-61 के बीच नत्रजनयुक्त उर्वरकों की खपत (नत्रजन की मात्रा के अनुसार) 55 हज़ार टन से बढ़ कर 2.3 लाख टन और फास्फेटयुक्त उर्वरकों की खपत (पी$_2$ ओ$_5$ की मात्रा के अनुसार) 7,000 टन से बढ़ कर 70,000 टन हो गई। शहरी खाद और खाद के स्थानीय साधनों के विकास पर भी ध्यान दिया गया। अनुमान है कि दूसरी योजना के अन्त तक 118 लाख एकड़ क्षेत्र में हरी खाद डालने की व्यवस्था की गई। करीब 27 लाख एकड़ क्षेत्र भूमि-संरक्षण-कार्यक्रमों के अन्तर्गत आया। पशुपालन, मछलीपालन, दूध-आपूर्ति, सब्ज़ियों और फलों की खेती तथा वन-रोपण के विकास के लिए भी उपाय किए गए। उदाहरण के लिए, दूध का उत्पादन 170 लाख टन से बढ़ कर 220 लाख टन और मछली का उत्पादन 7 लाख टन से बढ़ कर 14 लाख टन हो गया। वन-रोपण का कार्यक्रम लगभग 5 लाख एकड़ क्षेत्र में लागू किया गया।

14. विकास के कार्यक्रम बनाने और उन्हें कार्यान्वित करने के अतिरिक्त पहली और दूसरी योजनाओं में कृषि-विषयक स्वरूप को पुनर्गठित करने के बारे में भी सोचा गया। इस दिशा में जो उपाय किए गए, उनमें बिचौलियों (जैसे, ज़मींदारों और जागीर-दारों) का उन्मूलन, काश्त के अधिकारों की रक्षा और उनमें सुधार तथा जोत की अधिकतम सीमा निश्चित करना शामिल हैं। कई राज्यों में चकबन्दी को प्रोत्साहन देने के भी प्रयत्न किए गए। खेतिहर श्रमिकों की आर्थिक अवस्था सुधारने के कार्यक्रम में गैर-आबाद तथा फिर से सुधारी हुई ज़मीनों पर उन्हें बसाने और कानून-द्वारा उनका न्यूनतम पारिश्रमिक निश्चित करने की बातें भी शामिल की गईं।

15. पिछले दशक में कृषि-अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में जो कई अत्यधिक उल्लेखनीय काम हुए, उनमें सामुदायिक विकास-आन्दोलन के एक अभिन्न अंग के रूप में समस्त देश में विस्तार-सेवाओं की व्यवस्था करना और ग्रामीण विकास-कार्य का लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण उल्लेखनीय हैं। दूसरी योजना के अन्त तक सामुदायिक विकास-आन्दोलन के अन्तर्गत करीब 3,70,000 गांवों और देश की आधी से अधिक ग्रामीण जनता

आ गई थी। लगभग 60,000 ग्राम-सेवकों और तकनीकी अधिकारियों को विस्तार-कार्य में विशेष प्रशिक्षण दिया गया। इस कार्यक्रम को आगे बढ़ाने और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए ज़िला-स्तर से नीचे विकास की ज़िम्मेदारी सार्वजनिक संस्थाओं को हस्तान्तरित की जा रही है, ताकि विकास-कार्यक्रमों की तैयारी और कार्यान्विति, दोनों में जनता का पूरा-पूरा सहयोग मिल सके। गांव प्राथमिक इकाई होगा और ग्राम-स्तर पर सामाजिक तथा आर्थिक विकास का दायित्व और पहल करने का काम पूरी तरह ग्राम-पंचायत और ग्राम-सहकारिता-समिति को सौंप दिया जाएगा। पिछले दशक में सहकारिता-आन्दोलन ने काफी प्रगति की है। दूसरी योजना के अन्त तक 2,10,000 प्राथमिक कृषि-समितियां थीं। यह संख्या सन 1950-51 की तुलना में लगभग दुगुनी थी। लगभग 1,870 सहकारी क्रय-विक्रय-समितियां और 41 सहकारी चीनी-कारखाने स्थापित किए गए। सहकारी खेती की दिशा में कई उपयोगी परीक्षण आरम्भ किए गए और सहकारी खेती की प्रगति के लिए 'राष्ट्रीय सहकारी खेती सलाहकार मण्डल' कायम किया गया।

उद्योग

16. पिछले दशक में उद्योग के क्षेत्र में उल्लेखनीय विकार
[illegible]गिक विकास के स्वरूप की दृष्टि से भी।

[illegible]ोड़ा संकेत औद्योगिक उत्पादन के निम्नलिखि

तालिका-संख्या 7

औद्योगिक उत्पादन के सूचनांक*

(1950-51 = 100)

वर्ग	1955-56	1960-61
सामान्य सूचनांक	139	194
सूती वस्त्र	128	133
लोहा और इस्पात	122	238
मशीनें (सब तरह की)	192	503
रसायन	179	288

17. इस प्रकार औद्योगिक उत्पादन का सूचनांक करीब 7 प्रतिशत प्रति वर्ष विस्तार की सामूहिक दर बताता है। परन्तु वास्तविक वृद्धि उपर्युक्त अंकों-द्वारा निर्दिष्ट वृद्धि से कहीं अधिक हुई थी, क्योंकि कई नए उद्योगों को, जिन्होंने सामान्यतः अधिक उल्लेखनीय प्रगति की है, सूचनपत्र में पर्याप्त स्थान नहीं मिल पाया है।

***यह सूचनांक वस्तुतः सरकारी सूचनांक ही हैं, सिवाय इसके कि तुलना का आधार कैलेंडर वर्ष 1951 से बदल कर वित्तीय वर्ष 1950-51 कर दिया गया है, ताकि योजनाकाल में हुई उन्नति को सुविधा से मापा जा सके।**

18. औद्योगिक उन्नति के परिमाण से भी अधिक महत्वपूर्ण बात उसकी विस्तार की दिशा है, खास तौर पर, दूसरी योजना के अन्तर्गत। पहली योजना की अवधि में बड़े उद्योग के लिए जो प्रस्ताव प्रारम्भ में किया गया था, उसका मुख्य उद्देश्य यही था कि पहले से मौजूद कारखाने अपनी क्षमता का पूरा-पूरा प्रयोग करें। इस हल्के प्रोत्साहन से भी, औद्योगिक उत्पादन इन पांच वर्षों में 39 प्रतिशत बढ़ गया।

19. पहली योजना के सफलतापूर्वक समाप्त हो जाने के बाद बड़ी हद तक नए उद्योगों का, खास तौर पर पूंजीगत और उत्पादक सामान-उद्योगों का, जो कि किसी भी द्रुत औद्योगिक विकास-सम्बन्धी कार्यक्रम की बुनियाद हैं, विकास करना सम्भव हुआ। औद्योगिक क्षमता को बढ़ाने में धातु-शोधन, मेकैनिकल और बिजली-सम्बन्धी इंजीनियरी तथा रासायनिक उद्योगों ने जो सफलता प्राप्त की है, उसके आधार पर और हाल में ही भारी मशीन बनानेवाली जो परियोजनाएं शुरू की गई हैं, उन्हें ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के लक्ष्य की ओर बढ़ानेवाले द्रुत विकास के लिए जिन बुनियादी शर्तों को पूरा करने की ज़रूरत होती है, उनमें से कुछ पिछले दशक में सफलता के साथ पूरी की जा चुकी हैं।

20. बुनियादी और भारी उद्योगों के विकास में सरकारी क्षेत्र को एक महत्वपूर्ण भूमिका दी गई थी। इस दशक में सरकारी क्षेत्र ने उद्योगों और खनिज पदार्थों पर कुल 974 करोड़ रु० खर्च किए। केवल दूसरी योजना की अवधि में ही 870 करोड़ रु० की पूंजी लगाई गई, जो सरकारी एवं निजी संगठित उद्योग में लगी कुल पूंजी का 56 प्रतिशत भाग थी। इससे भी ज़्यादा महत्व की बात यह है कि सरकारी क्षेत्र के अधिकांश उद्योग भारी अथवा बुनियादी ढंग के थे। इस बात से न केवल सरकारी क्षेत्र को सबल बनने में सहायता मिली है, बल्कि निजी क्षेत्र में मध्यम और हल्के उद्योगों की द्रुत प्रगति में सहायक परिस्थितियां भी पैदा हुई हैं।

21. सरकारी क्षेत्र में इस्पात के तीन नए कारखानों की स्थापना और निजी क्षेत्र के दो कारखानों के विस्तार के साथ एक बड़ा कदम आगे बढ़ाया गया। नई परियोजनाएं अब उत्पादन की अवस्था में पहुंच गई हैं और इस्पात की सिल्लियों का उत्पादन सन 1950-51 के 14 लाख टन से बढ़ कर सन 1960-61 में 35 लाख टन पर तथा कच्चे लोहे का उत्पादन 3.5 लाख टन से बढ़ कर 9 लाख टन पर पहुंच गया है। अन्य आवश्यक औद्योगिक सामान—जैसे, एलुमीनियम, सीमेण्ट, भारी रसायन, और रंग के सामान, कोयला और पेट्रोल-सदृश ईंधन एवं बिजली—की भी उपलब्धता सन 1950-51 के बाद काफी बढ़ी है।

22. दूसरी उल्लेखनीय बात मशीन-निर्माण-उद्योग का द्रुत विकास है। भारत अब खेती और परिवहन में काम आनेवाले तथा रसायन और औषध, कपड़ा, पटसन, सीमेंण्ट, चाय, चीनी, आटा और तेल की मिलें, कागज़, खनिज आदि उद्योगों के लिए क्रमश: अधिक परिमाण में मशीनी औज़ार और मशीनें तैयार कर रहा है। डीज़ेल तथा बिजली के ईंजिनों को छोड़ कर रेलवे के लिए आवश्यक अधिकांश मशीनें और उपकरण तैयार करने की स्वदेशी क्षमता बढ़ गई है। बहुत-सारे बिजली के सामान और वैज्ञानिक यन्त्रादि भी अब देश में ही बनने लगे हैं। देश में उत्पादित वर्गीकृत मशीनी औज़ारों का मूल्य सन 1950-51 के 34 लाख रु० से बढ़ कर सन 1960-61 में 550 लाख रु० तक पहुंच गया है। अभी हाल में

रांची में भारी मशीन-निर्माण-संयन्त्र और ढलाई-गढ़ाई-संयन्त्र तथा दुर्गापुर में कोयला-खनन-मशीन-सन्यन्त्र लगाने के लिए कदम उठाए गए हैं। विभिन्न प्रकार की औद्योगिक मशीनों और पूंजीगत सामान का कुल मूल्य इस दशक के प्रारम्भ की तुलना में 11-गुना बढ़ गया है। भोपाल में भारी बिजली-सम्बन्धी परियोजना प्रारम्भिक उत्पादन की अवस्था में पहुंच गई है। जब यह परियोजना पूर्णतः कार्यान्वित हो जाएगी, तब 25 करोड़ रु० कीमत के उपकरण तैयार होने लगेंगे।

23. रासायनिक उद्योगों, खास तौर पर औषध, भारी रसायन और उर्वरक-उद्योगों, ने भी जो प्रगति की है, वह उल्लेखनीय है और इससे अनेक प्राथमिक कार्बानिक रासायनों की उत्पादन-क्षमता बढ़ी है।

24. महत्वपूर्ण उद्योगों को—जैसे, पटसन, सूती वस्त्र और चीनी-उद्योगों को—आधुनिक स्वरूप देने और उनकी पुरानी मशीनों के स्थान पर नई मशीनें लगाने के काम में अच्छी प्रगति हुई है। पटसन-उद्योग में, कताई-क्षेत्र में, यह कार्यक्रम काफी आगे बढ़ चुका है। पटसन-उद्योग के प्रारम्भिक और कताई-विभाग के आधुनिकीकरण के लिए आवश्यक अधिकांश मशीनों का निर्माण देश में ही किया गया है।

25. इस विचाराधीन अवधि की एक दूसरी सफलता यह है कि देश में बननेवाली औद्योगिक वस्तुओं में स्वदेशी सामग्रियों की मात्रा काफी बढ़ी है। देश के औद्योगिक विकास का एक दूसरा संकेत यह है कि कई नई औद्योगिक चीजें यहां बनने लगी हैं, जैसे, औद्योगिक बायलर, पीसनेवाली मशीनें और अन्य प्रकार के मशीनी औज़ार, ट्रैक्टर, औद्योगिक विस्फोट के पदार्थ, सल्फा और ऐंटीबायोटिक दवाएं, डी० डी० टी०, अखबारी कागज़, मोटर-साइकिलें और स्कूटर, कैलशियम कारबाइड, रंजक, रेशेवाले कपड़े, इत्यादि,

26. उपभोक्ता सामान-उद्योगों के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय प्रगति हुई है। पुराने उद्योगों—जैसे कपड़ा और चीनी—के उत्पादन में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है। इसके अलावा, विशेष जीवन-कालवाली चीजें—जैसे, मोटर-गाडियां, बाइसिकिलें, मोटर-साइकिलें, स्कूटर, पंखे, रेडियो, बिजली की बत्तियां और सिलाई की मशीनें—का निर्माण करनेवाले उद्योगों में और अधिक प्रगति हुई।

27. नीचे की तालिका से इस बात की कुछ जानकारी मिल जाएगी कि पहले दशक में महत्वपूर्ण उत्पादक और उपभोक्ता-वस्तुओं के उत्पादन में कितनी प्रगति हुई है :

तालिका-संख्या 8

महत्वपूर्ण उद्योगों में उत्पादन

वस्तु	इकाई	1950-51	1960-61
इस्पात की सिल्लियां	लाख टन	14	35
अलुमीनियम	हज़ार टन	3.7	18.5
डीज़ल इंजिन	हज़ार (संख्या)	5.5	40
बिजली के तार (ए० सी० एस० आर० कंडक्टर)	हज़ार टन	1.7	22

तालिका-संख्या 8—जारी

वस्तु	इकाई	1950-51	1960-61
नत्रजनयुक्त उर्वरक (नत्रजन की मात्रा)	हज़ार टन	9	110
फास्फेटयुक्त उर्वरक (पी० $_2$ ओ० $_5$ की मात्रा)	हज़ार टन	9	55
गन्धक-अम्ल	हज़ार टन	99	363
सीमेंट	लाख टन	27	85
सूती वस्त्र (मिल का बना)	करोड़ गज़	372	512.7
चीनी*	लाख टन	11	30
कागज़ और गत्ता	हज़ार टन	114	350
बाइसिकिलें (केवल संगठित क्षेत्र)	हज़ार (संख्या)	101	1,050
मोटर-गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	16.5	53.5

खनिज पदार्थ

28. विचाराधीन अवधि का एक दूसरा उल्लेखनीय अंग यह है कि खनिज पदार्थों की खोज और उत्पादन की ओर विशेष ध्यान दिया गया। देश के खनिज साधनों की खोज करनेवाले, मूल्यांकन करनेवाले और उन्हें उपलब्ध करनेवाले संगठनों को काफी मज़बूत बनाया गया। जिन मुख्य खनिज पदार्थों के मामले में सफलता के साथ खोज और उत्पादन किया गया, वे थे—कोयला, खनिज लोहा और बाक्साइट। कोयले का उत्पादन सन 1950-51 के 323 लाख टन से बढ़ कर सन 1960-61 में 546 लाख टन हो गया। इसी तरह, बाक्साइट का उत्पादन सन 1951 के 64 हज़ार टन से बढ़ कर सन 1960 में 377 हज़ार टन हो गया। इनमें से अधिकांश बढ़ोतरियां दूसरी योजना की अवधि में हुई।

29. देश में खनिज तेल का उत्पादन अभी तक तो कम है, पर असम के नहरकटिया क्षेत्र में बहुमूल्य तेल-स्रोत प्राप्त हुए हैं और गुजरात के खम्भात-अंकलेश्वर क्षेत्र में काफी तेल विद्यमान रहने के संकेत मिले हैं। कुछ अन्य क्षेत्रों में भी जांच-पड़ताल चल रही है। तेल-उपलब्धि के स्वदेशी स्रोत स्थापित करने के महत्व को दृष्टि में रखते हुए एक 'तेल और प्राकृतिक गैस-आयोग' कायम किया गया, जो कि काफी बड़े पैमाने पर भूगर्भ-सम्बन्धी सर्वेक्षण, भूभौतिकी जांचों तथा तेल की खोज करने का काम करता है। नूनमती और बरौनी में दो सरकारी तेल-शोधक-केन्द्रों की स्थापना का काम हाथ में लिया गया और सन 1959 में तेल-उत्पादनों के वितरण के लिए 'इंडियन आयल कम्पनी' नामक एक सरकारी संस्था का निर्माण किया गया।

ग्राम और लघु उद्योग

30. विस्तारशील राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के एक अभिन्न अंग के रूप में ग्राम और लघु उद्योगों का विकास शुरू से ही पंचवर्षीय योजनाओं के प्रमुख कार्यक्रमों में से एक रहा है।

*फसल-वर्ष, नवम्बर-अक्तूबर से सम्बद्ध

यह आशा की जाती है कि इनसे स्थानीय साधनों का अधिक पूर्ण रूप में उपयोग हो सकेगा और उपभोक्ता-सामान की वृद्धिशील मांग का एक बड़ा हिस्सा पूरा किया जा सकेगा। ये खेती और बड़े पैमाने के उद्योगों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी का काम देंगे और ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में रोज़गार के अवसरों में वृद्धि होगी। पिछले दशक में, इन उद्योगों के विकास के लिए सरकार की ओर से 218 करोड़ रु० खर्च किए गए हैं। छोटे पैमाने के उद्योगों—जैसे, हथकरघा-उद्योग, खादी और ग्राम-उद्योग, हस्तशिल्प, नारियल-जटा-उद्योग और रेशम-उद्योग—के विकास के समन्वित कार्यक्रम तैयार करने, उन्हें दिशा-निदेश देने तथा कुछ हद तक कार्यान्वित करने के लिए कई अखिल भारतीय मण्डल कायम किए गए हैं। एक औद्योगिक विस्तार-सेवा को जन्म दिया गया और प्रत्येक राज्य में लघु उद्योग-सेवा-संस्थान कायम किए गए—साथ ही, 53 विस्तार-केन्द्र भी स्थापित किए गए। करीब 50 औद्योगिक बस्तियां, जिनमें बिजली का इस्तेमाल करनेवाले एक हज़ार से अधिक छोटे कारखाने हैं, कायम की गईं। ऋण, तकनीकी परामर्श और कच्चा माल सुलभ करने तथा किश्त-खरीद की शर्तों पर आयातित एवं देशी मशीनें देने की विशेष व्यवस्था की गई। पिछले दस साल की एक खास बात यह है कि थोड़ी पूंजी से छोटे व्यवसाय करनेवाले लोगों के एक प्रबल वर्ग का विकास हुआ है। पिछले 5 वर्षों में कई उद्योगों में—खासकर, मशीनी औज़ार, सिलाई की मशीनें, बिजली के मोटर और पंखे, बाइसिकिलें, इमारती लोहे का सामान और दस्ती औज़ार के क्षेत्र में उत्पादन 25 से 50 प्रतिशत तक बढ़ा है। उत्पादन तो और अधिक होता, पर कुछ बुनियादी कच्ची सामग्रियों—जैसे, इस्पात और अलौह धातुओं—की कमी के कारण ऐसा न हो सका। परम्परागत उद्योगों में, जिनमें काफी रोज़गार की गुंजायश रहती है, हथकरघा-वस्त्र का उत्पादन 74.2 करोड़ गज़ से बढ़ कर करीब 190 करोड़ गज़ हो गया। इसी तरह, सन 1950-51 और सन 1960-61 के बीच खादी का उत्पादन 73 लाख गज़ से बढ़ कर 740 लाख गज़ और कच्चे रेशम का उत्पादन करीब 25 लाख पौंड से बढ़ कर 36 लाख पौंड हो गया। इस अवधि में सरकारी गारंटी पर छोटे पैमाने के उद्योगों को बैंकों-द्वारा उधार दिलवाने की सुविधाओं का विस्तार करने-सम्बन्धी एक योजना चालू करने, बुनकरों की सहकारी समितियों को बिजली के करघे खरीदने के लिए सहायता देने तथा सुधरे हुए (अम्बर) चर्खे के निर्माण और वितरण को प्रोत्साहन देने के लिए कदम उठाए गए।

बिजली

31. बड़े और छोटे, दोनों ही तरह के उद्योगों के विकास के लिए पर्याप्त बिजली की व्यवस्था बुनियादी ज़रूरतों में से एक है। पनबिजली और तापीय बिजली की कई परियोजनाएं इस अवधि में तैयार की गईं और बिजली के लिए सरकारी क्षेत्र में कुल पूंजी-विनियोग 705 करोड़ रु० का हुआ। चार बहूद्देश्यीय परियोजनाएं—दामोदर-घाटी, भाखड़ा-नंगल, तुंगभद्रा और हीराकुड—जो पहली योजना से पहले ही आरम्भ की गई थीं, नदी-घाटी-विकास के सम्बद्ध कार्यक्रम के साथ संयुक्त कर दी गईं। पिछले दशक में जो नदी-घाटी परियोजनाएं शुरू की गईं, उनमें चम्बल, रिहन्द, कोयना और नागार्जुन-सागर उल्लेखनीय हैं। तापीय शक्ति के उत्पादन का भी एक बड़ा कार्यक्रम हाथ में लिया गया। पिछले दशक में पनबिजली की स्थापित क्षमता 5.6 लाख किलोवाट

से बढ़ कर 19.3 लाख किलोवाट हो गई और तापीय शक्ति की स्थापित क्षमता 17.4 लाख किलोवाट से बढ़ कर 37.7 लाख किलोवाट हो गई। इस प्रकार, कुल स्थापित क्षमता सन 1950 के 23 लाख किलोवाट से बढ़ कर सन 1960-61 में 57 लाख किलोवाट हो गई। यह वृद्धि यद्यपि प्रभावशाली है, तथापि 69 लाख किलोवाट के लक्ष्य से काफी कम है। यह कमी बहुत-कुछ दूसरी योजना के प्रारम्भिक वर्षों में उपस्थित विदेशी मुद्रा की दिक्कतों और कुछ बड़ी परियोजनाओं को पूरा करने में देरी होने के कारण हुई। ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली पहुंचाने की ओर विशेष ध्यान दिया गया, क्योंकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को विकसित करने और आधुनिक बनाने के लिए इसे ज़रूरी समझा गया था। बिजलीवाले कस्बों और गांवों की संख्या सन 1950-51 के 3,687 से बढ़ कर सन 1960-61 में 23,000 हो गई।

परिवहन और संचार-साधन

32. पिछले दशक में देश की परिवहन-व्यवस्था का काफी सुधार और विस्तार हुआ। सरकारी क्षेत्र में इस मद में कुल व्यय 1,823 करोड़ रु० का हुआ। पहली योजना में मुख्य काम यह था कि रेल-इंजिनों और डिब्बों और स्थिर सम्पत्ति का पुनस्संस्थापन और परिवर्तन किया जाए, क्योंकि लड़ाई और देश-विभाजन के कारण इनकी दशा बहुत बिगड़ गई थी। कृषि-सम्बन्धी और औद्योगिक क्षेत्रों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए दूसरी योजना में रेल-इंजिनों और डिब्बों की वृद्धि एवं नई रेल-लाइनों के निर्माण-द्वारा अतिरिक्त सुविधाएं प्रदान की गई। सड़क-परिवहन, जहाज़-रानी और हवाई सेवाओं में भी काफी विस्तार किया गया। परिवहन-सेवाओं का पिछले दशक में जो विकास हुआ, उसकी एक झांकी नीचे की तालिका में मिल सकती है :

तालिका-संख्या 9

परिवहन

विषय	इकाई	1950-51	1955-56	1960-61
रेलवे				
नई लाइनें बिछाई गईं	मील	—	380*	800*
इंजिन तथा डिब्बे :				
इंजिन	हज़ार (संख्या)	8.5	9.2	10.6
सवारी डिब्बे	हज़ार (संख्या)	20.5	23.2	28.2
माल गाड़ी के डिब्बे	हज़ार (संख्या)	222.4	268.5	341
यात्री-मील	अर्ब में	413	388	486
ढोया गया बोझ	लाख टन	915	1140	1540

* इसका सम्बन्ध क्रमशः सन 1955-56 और सन 1960-61 को समाप्त होनेवाले पांच वर्षों से है।

तालिका-संख्या 9—जारी

विषय	इकाई	1950-51	1955-56	1960-61
सड़कें				
पक्की-सड़कें—राष्ट्रीय राजपथ-सहित	हज़ार मील	97.5	122	144
कच्ची सड़कें	हज़ार मील	151	195	250
सड़क-परिवहन				
चालू-व्यावसायिक गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	116	166	210
जहाज़रानी				
टन-भार	लाख ग्रॉस रजिस्टर्ड टन	3.9	4.8	9
मुख्य बन्दरगाह				
क्षमता	लाख टन	200	250	370

33. औद्योगिक और व्यावसायिक गतिविधियों के विस्तार का प्रभाव संचार-सुविधाओं की मांग पर भी पड़ा। सन 1950-51 और सन 1960-61 के बीच डाक से भेजी जानेवाली सामग्रियों की संख्या करीब 80 प्रतिशत बढ़ी और ट्रंक टेलीफोनों की संख्या में करीब पांच-गुनी वृद्धि हुई। डाकखानों की संख्या 36,000 से बढ़कर 77,000 और टेलीफोनों की संख्या 1,68,000 से बढ़ कर 4,60,000 हो गई। प्रसारण के क्षेत्र में भी काफी प्रगति हुई है। प्रत्येक भाषा-क्षेत्र में एक प्रसारण-केन्द्र की व्यवस्था की गई। सन 1960-61 में इनकी संख्या 28 थी। ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक रेडियो-सेट लगाने का कार्यक्रम भी हाथ में लिया गया। इस अवधि में रेडियो-लाइसेंसों की संख्या करीब चौगुनी हो गई।

सामाजिक सेवाएं

34. योजनाबद्ध विकास का एक बड़ा उद्देश्य यह है कि शिक्षा, स्वास्थ्य और समाज-कल्याण की सुविधाएं प्रदान कर देश के मानवीय साधनों का विकास किया जाए। पहली और दूसरी योजनाओं में सामाजिक सेवाओं को काफी महत्व दिया गया था और इस दशक में कुल 1,289 करोड़ रु० उनके विकास पर खर्च किए गए, पर निस्सन्देह आवश्यकता इससे बहुत ज्यादा धन की है।

35. **शिक्षा :** शिक्षा के क्षेत्र में बहुमुखी विकास हुआ। विद्यालयों में छात्रों की संख्या सन 1950-51 के 235 लाख से बढ़ कर सन 1960-61 में 435 लाख हो गई, अर्थात 85 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वय-वर्ग के हिसाब से, विद्यालय जानेवाले बच्चों की संख्या इस प्रकार बढ़ी—6–11 वय-वर्ग : 42.6 प्रतिशत से बढ़ कर 61.1 प्रतिशत; और 11–14 वय-वर्ग : 12.7 प्रतिशत से बढ़ कर 22.8 प्रतिशत। प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 2,10,000 से बढ़ कर 3,42,000 हो गई, जब कि उच्च और माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 7,300 से बढ़ कर 17,000 हो गई। विश्वविद्यालयों की संख्या 27 से बढ़ कर

46 और कालेजों की संख्या 542 से बढ़ कर 1,050 हो गई। इसमें इंटरमीडिएट कालेज शामिल नहीं हैं।

36. तकनीकी शिक्षा विकास का मूलाधार है; अतः उसकी सुविधाओं पर विशेष ज़ोर दिया गया। पहले से विद्यमान संस्थाओं में सुविधाओं का विस्तार और सुधार किया गया तथा पिछले दस साल में 51 नए डिग्री कालेज और 110 पालिटेकनिक खोले गए। इन संस्थाओं में छात्रों की कुल संख्या सन 1950-51 के 10,000 से बढ़ कर सन 1960-61 में 39,400 हो गई। नए निकलनेवाले इंजीनियरी के स्नातकों की संख्या लगभग तीन-गुनी और डिप्लोमाधारियों की संख्या तीन-गुनी से भी ज्यादा बढ़ी। सरकारी क्षेत्र के कुछ औद्योगिक संस्थानों में, खासकर इस्पात और बिजली के सन्यन्त्रों में, तकनीकी शिक्षा दिए जाने की व्यवस्था की गई। छोटे पैमाने के विभिन्न उद्योगों की शिक्षा के लिए भी विशेष प्रशिक्षण-सुविधाएं दी गईं। कृषि और पशु-चिकित्सा कालेजों में छात्रों का वार्षिक प्रवेश करीब चार-गुना बढ़ गया।

37. **वैज्ञानिक अनुसन्धान :** वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान को अधिक प्राथमिकता दी गई और कई नई अनुसन्धान-संस्थाएं स्थापित की गईं। इनमें 20 राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं और 3 प्रादेशिक अनुसन्धान-केन्द्र भी शामिल हैं। न्यैष्टिक विज्ञान के बुनियादी और व्यावहारिक अनुसन्धान तथा परमाणु-शक्ति के शान्तिपूर्ण उपयोग के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई और एक सशक्त वैज्ञानिक एवं तकनीकी संगठन कायम किया गया, जिसके चलते विदेशी तकनीकी परामर्श के बिना ही इस कार्य के लिए आवश्यक उपकरणों तथा सन्यन्त्रों का डिजाइन बनाने और विकास करने में सहायता मिली। विश्वविद्यालयों के अनुसन्धान-विभागों को भी काफ़ी सुदृढ़ बनाया गया।

38. **स्वास्थ्य :** स्वास्थ्य-सेवाओं का काफ़ी विस्तार हुआ। नए अस्पताल, दवाखाने, स्वास्थ्य-टुकड़ियां और प्रसूति तथा शिशु-कल्याण-केन्द्र बड़ी संख्या में खोले गए। जल-व्यवस्था और सफाई, छूत के रोगों पर नियन्त्रण और प्रशिक्षण-सुविधाओं के विस्तार से सम्बद्ध विशेष कार्यक्रम भी हाथ में लिए गए। सन 1950-51 में 8,600 चिकित्सा-संस्थाएं थीं, जिनमें करीब 1,13,000 शय्याएं थीं। सन 1960-61 में ये संख्याएं बढ़ कर क्रमशः 12,600 और 1,85,600 हो गई। इसके अतिरिक्त, 2,800 प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्र खोले गए। मेडिकल कालेजों की संख्या 30 से बढ़ कर 57 हो गई और प्रैक्टिस करनेवाले डाक्टर 56,000 से बढ़ कर 70,000 हो गए। सारा देश मलेरिया-उन्मूलन-कार्यक्रम के अन्तर्गत आ गया है। इन सब उपायों के परिणाम-स्वरूप, जन्म के आधार पर औसत जीवन-काल में पिछले 10 साल में करीब 10 साल की वृद्धि हुई है।

39. पहली योजना के प्रारम्भ में ही परिवार-आयोजन को उन्नत करने का काम सरकारी नीति के रूप में हथ में लिया गया था और सन 1960-61 में 549 शहरी केन्द्र तथा 1,100 ग्रामीण केन्द्र परिवार-आयोजन के काम में लगे हुए थे। परिवार-आयोजन के काम में लगी हुई कई गैर-सरकारी संस्थाओं को विशेष वित्तीय एवं तकनीकी सहायता दी गई। परन्तु यह कार्यक्रम पूरा करना बड़ा ही कठिन है और इसके क्रम में कई पेचीदा समस्याएं खड़ी हो जाती है। काफी समय तक चलनेवाले निरन्तर और सघन

प्रयत्नों से ही परिवार-आयोजन एक लोकप्रिय आन्दोलन का रूप लेगा और आम लोग इसे स्वीकार करेंगे।

40. **आवास :** आबादी बढ़ने और शहरी तथा औद्योगिक विस्तार की तीव्र गति के कारण, आवास की समस्या, काफी कठिन हो गई है। गन्दी बस्तियों की सफ़ाई और सुधार तथा औद्योगिक श्रमिकों तथा कम आय-वर्गवालों के लिए आवास की व्यवस्था करने के उद्देश्य से कुछ काम हाथ में लिए गए। ग्रामीण आवास की समस्या को हल करने के लिए भी कुछ प्रयत्न प्रारम्भ किया गया। पर इस समस्या की विशालता को देखते हुए, जो साधन मुहय्या किए जा सकते थे, वे बहुत ही कम थे। अतः आवास-समस्या, के समाधान के क्षेत्र में बहुत ही कम सफलता प्राप्त हुई है और आवास की समस्या, विशेषतः शहरी क्षेत्रों में, चिन्ताजनक है।

41. **सामाजिक कल्याण :** अनुसूचित आदिम जातियों, हरिजनों और अन्य पिछड़े हुए वर्गों के लिए विशेष कल्याणमूलक कार्यक्रम हाथ में लिए गए। इस अवधि में 36 लाख एकड़ ज़मीन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों को दी गई तथा 26 लाख एकड़ ज़मीन अन्य पिछड़े हुए वर्गों को दी गई। इन वर्गों के करीब 68,000 मैट्रिक पास छात्रों को छात्रवृत्तियां दी गईं। इन वर्गों के जिन लोगों के सामने खास दिक्कतें आईं, उन्हें वित्तीय सहायता, शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाएं और रोजगार के अवसरों-द्वारा सहायता दी गई, ताकि वे अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति सुधार सकें और समाज के बाकी अंगों के साथ पूरे तौर पर मिल जाएं।

42. **पुनर्वास :** देश-विभाजन के बाद करीब 89 लाख विस्थापित लोग भारत आए—47 लाख पश्चिम-पाकिस्तान से और बाकी पूर्व-पाकिस्तान से। पहली और दूसरी योजनाओं में इनकी सहायता और पुनर्वास को प्रमुखता दी गई। पहली योजना शुरू होने से पहले इनके पुनर्वास पर 71 करोड़ रुपये खर्च किए गए थे। दोनों योजनाओं के अन्तर्गत पुनर्वास पर किया गया कुल खर्च करीब 168 करोड़ रु० पड़ा। इसमें से करीब 71 करोड़ रु० आवास पर, 31 करोड़ रु० शिक्षा और शिल्प-प्रशिक्षण पर, 29 करोड़ रु० कृषि-कार्य के लिए ग्रामीण कर्ज़ पर, 11 करोड़ रु० छोटे उद्योगों, व्यापार और व्यवसाय के लिए शहरी कर्ज़ पर और बाकी रुपये विभिन्न योजनाओं पर खर्च किए गए। विस्थापित लोगों को आबाद करने के लिए कई नगर और नई बस्तियां बसाई गईं और 7 लाख से ज़्यादा रिहायशी मकान सरकार-द्वारा अथवा सरकारी सहायता से विस्थापित व्यक्तियों-द्वारा बनाए गए। पूर्वी पाकिस्तान के विस्थापित कृषक-परिवारों को पुनः आबाद करने के लिए दूसरी योजना की अवधि में दंडकारण्य-क्षेत्र के विकास का काम शुरू किया गया।

43. **रोज़गार :** सन 1951 से सन 1961 के बीच के दस वर्षों में आबादी में 770 लाख की वृद्धि हुई। इससे बेरोज़गारी का मसला और भी उग्र हो गया है। अनुमान है कि दूसरी योजना की अवधि में रोज़गार के अतिरिक्त अवसर करीब 80 लाख व्यक्तियों के लिए निकले, जिनमें से 65 लाख को कृषि-क्षेत्र से बाहर काम दिया गया। दूसरी योजना के अन्त में बेरोज़गार लोगों की कुल संख्या अनुमानतः 90 लाख थी।

44. ऊपर दिए गए वर्णन से यह स्पष्ट पता चलता है कि पिछले 10 साल में राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में काफ़ी उन्नति हुई। साथ ही, इस अवधि में बोझ और दबाव भी

कम नही पड़े। ये उस ग्रर्थ-व्यवस्था की बढती हुई पीड़ाएं हैं, जो गहरी गरीबी ग्रौर कई दशकों से ग्रार्थिक जड़ता से बाहर निकलने के लिए संघर्ष कर रही है। हरेक दिशा में नया क्षेत्र प्राप्त किया गया है ग्रौर ग्रमूल्य ग्रनुभवों का लाभ हुग्रा है। निश्चय ही, इस कार्य में ऐसी कमियां ग्रौर भूलें भी हुई होगी, जिनसे बचा जा सकता था। हमारे ग्रार्थिक ग्रौर सामाजिक ढांचे में कई कमजोरिया है, जो ग्रभी तक मौजूद है । देश की विकास-शक्ति का पूरा-पूरा उपयोग नही किया जा सका है। फिर भी, ये सब देश के इतिहास के एक प्रेरक काल के हिस्से है---यह निरन्तर प्रयास की एक कहानी है, जो देश के कोने-कोने में पहुच रही है ग्रौर जनता के समस्त ग्रंगों को ग्रपनी सीमा के ग्रन्तर्गत ला रही है।

अध्याय 4

तीसरी पंचवर्षीय योजना का दृष्टिकोण

प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में उसके क्षेत्र और महत्व को प्रकट करते हुए वर्तमान आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति का तथा अनेक वर्षों की परिधि में विस्तृत आर्थिक प्रगति का लेखा-जोखा दिया जाता है। इसके साथ ही इनमें देश के आधारभूत सामाजिक लक्ष्यों के सन्दर्भ में विकास के आगामी चरण एवं दीर्घकालीन आर्थिक प्रगति की सम्भावनाओं का भी चित्रण किया जाता है। इस परवर्ती विषय के बारे में दूसरे और तीसरे अध्याय में प्रकाश डाला गया है। तीसरी योजना के निर्माण के समय निम्नलिखित मुख्य लक्ष्यों को ध्यान में रखा गया है :—

1. राष्ट्रीय आय में प्रति वर्ष 5 प्रतिशत की वृद्धि प्राप्त करना, और पूंजी-विनियोग को ऐसा स्वरूप प्रदान करना कि वृद्धि की यह गति परवर्ती योजनाकालों में भी बनी रहे ;
2. खाद्यान्नों के बारे में स्वावलम्बी होना और कृषि-उत्पादन को इतना बढ़ाना कि उद्योगों और निर्यात की आवश्यकताएं पूरी हो सकें;
3. इस्पात, रसायन, ईंधन और बिजली-सरीखे आधारभूत उद्योगों का विस्तार करना और मशीन-निर्माण की क्षमता को इतना बढ़ाना कि आगामी दस वर्षों की अवधि में और अधिक उद्योगीकरण की आवश्यकताएं देश में निर्मित साधनों से ही पूरी की जा सकें;
4. देश की जनशक्ति का यथासम्भव पूरा उपयोग करना और रोजगार के अवसरों में पर्याप्त वृद्धि करना; तथा
5. क्रमशः अवसरों की अधिकतम समानता प्रदान करना, आय और सम्पत्ति की विषमता में कमी करना तथा आर्थिक शक्ति का अधिक समान रूप से वितरण करना।

2. तीसरी योजना का काल गत एक दशक या उससे कुछ अधिक समय में हुए उस सघन विकास के प्रथम चरण का प्रतिनिधित्व करता है, जिससे देश आत्म-निर्भर और आत्मचालित अर्थव्यवस्था की दिशा में आगे बढ़ा है। प्रथम और दूसरी योजनाओं में जो प्रगति हुई है, उसके परिणामस्वरूप द्रुत आर्थिक उन्नति का आधार स्थापित हो गया है। भारत की अर्थव्यवस्था अब अपने आकार और कार्यक्षेत्र के विस्तार के कारण पहले से कहीं अधिक विशाल हो गई है। इसके साथ ही वह अधिक गतिशील और जटिल भी हुई है। सभी क्षेत्रों में मांगों की संख्या और आकार बढ़ता जा रहा है। उन कार्यक्रमों और परियोजनाओं में भी पर्याप्त पूंजी का विनियोग करने की ज़रूरत पड़ेगी, जिनका लाभ केवल चौथी योजना की अवधि में ही उपलब्ध हो सकेगा। इसलिए तीसरी योजना में अधिकतम सम्भव पूंजी-विनियोग की आवश्यकता होगी।

3. तीसरी योजना में विकास का सामान्य स्वरूप अनिवार्यतः और अधिकांशतः दूसरी योजना के बुनियादी रुख और प्राप्त अनुभवों के आधार पर ही होगा। फिर

भी, कुछ महत्वपूर्ण मामलों में तीसरी योजना का दृष्टिकोण विकास की समस्याओं के प्रति अधिक व्यापक होगा तथा इसमें अधिक ज़ोरदार प्रयत्नों और द्रुत गति से काम करने की भावना की आवश्यकता होगी। तीसरी योजना का लक्ष्य विशेष रूप से कृषि अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना; उद्योगों, बिजली और परिवहन का विकास करना; औद्योगिक और टेक्नोलाजी-विषयक परिवर्तन की प्रक्रिया में तेजी लाना, अवसरों की समानता तथा समाजवादी ढंग के समाज की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति करना और समस्त श्रमिक-वर्ग को रोजगार प्रदान करना है। इन लक्ष्यों को लेकर बनाई गई विकास की योजना अनिवार्य रूप से अपनी पूर्ति के लिए देशवासियों से दूरगामी आशाएं रखती है। यह आवश्यक है कि तीसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में विकास का व्यय-भार समान रूप से वितरित किया जाए और प्रत्येक स्तर पर स्वीकृत आर्थिक, वित्तीय एवं अन्य नीतियों से अधिकांश जनता का कल्याण-साधन हो और उसके जीवन-स्तर में सुधार आए।

4. तीसरी योजना के विकास-कार्यक्रमों में उच्चतम प्राथमिकता अनिवार्यतः कृषि को दी गई है। प्रथम दो योजनाओं में, और विशेष रूप से दूसरी योजना में, जो अनुभव प्राप्त हुआ है, उससे यह प्रकट हो गया है कि इस समय कृषि-उत्पादन की जो मन्द गति है, वह देश की अर्थव्यवस्था की प्रगति को सीमित रखनेवाले प्रमुख कारणों में से एक है। इसलिए कृषि-उत्पादन यथासम्भव अधिक बढ़ाना पड़ेगा और कृषि-विषयक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए पर्याप्त साधन उपलब्ध करने होंगे। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को विभिन्न दिशाओं में मोड़ना होगा और कृषि पर निर्भर रहनेवाले लोगों के अनुपात को क्रमशः कम करना पड़ेगा। यदि ग्रामीण जनता की आमदनी और जीवन-स्तर को निरन्तर उन्नत करना है और अन्य क्षेत्रों के समान ही उनकी आमदनी की गति को बनाए रखना है, तो इन लक्ष्यों को सामने रखना ही होगा। तीसरी योजना की अवधि में कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास के कार्यक्रम बनाने और उन्हें पूरा करने में प्रेरक विचार यही रहा है कि भौतिक दृष्टि से जो-कुछ भी व्यावहारिक है, उसे वित्तीय दृष्टि से सम्भव बनाया जाए और प्रत्येक क्षेत्र की क्षमता यथासम्भव अधिक विकसित की जाए।

ज़िला, खण्ड और ग्राम-स्तरों पर लोकतान्त्रिक संस्थाओं की स्थापना से, ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए पहल करने तथा उसको मूर्त रूप देने की ज़िम्मेदारी लोकप्रिय संगठनों—ज़िला-परिषदों, पंचायत-समितियों, ग्राम-पंचायतों एवं सहकारी समितियों—पर होगी। ग्रामीण विकास के ढांचे में सेवा सहकारी समितियों का संगठन ग्राम-समाज को प्राथमिक इकाई मान कर किया जाना चाहिए। सहकारी कृषि, जो कि ग्रामीण विकास के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है, सहकारिता के विकास और ग्राम-स्तर पर सामुदायिक विकास के प्रति दृष्टिकोण का तर्क-संगत रूप है।

तीसरी योजना में कृषि के लिए एक ऐसे पैमाने पर संयुक्त रूप से प्रयत्न करने पर बल दिया गया है, जिसमें खेतिहर श्रमिकों के लाखों परिवार, ग्राम-उत्पादन-योजनाओं, और विशाल स्तर पर आयोजित सिंचाई, भूमि-संरक्षण, शुष्क कृषि, वन लगाने, तथा स्थानीय खाद-सम्बन्धी साधनों के विकास-कार्यक्रमों में भाग ले सकें। इसीलिए योजना का एक मुख्य लक्ष्य ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध जनशक्ति का लाभ उठाना है।

यह लक्ष्य योजना में निहित विकास-कार्यक्रमों तथा गांवों में उपलब्ध जनशक्ति-विषयक साधनों का उपयोग करनेवाले, विशेषतः कृषि-उत्पादन को बढ़ानेवाले व्यापक ग्राम-निर्माण-कार्यक्रमों-द्वारा प्राप्त किया जाना है।

5. दूसरी योजना की तरह तीसरी योजना में भी इस्पात, ईंधन और बिजली, मशीनों का निर्माण और रासायनिक उद्योग, आदि-जैसे बुनियादी उद्योगों का विकास देश की द्रुत आर्थिक प्रगति के लिए आधारभूत महत्व रखता है। इन्हीं उद्योगों से इस बात का निश्चय होगा कि देश की अर्थव्यवस्था किस गति से आत्मनिर्भर और आत्म-चालित बनेगी। औद्योगिक विकास के लिए कार्यक्रम समग्र रूप से अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं को सामने रख कर बनाए गए हैं। इसके लिए सरकारी और निजी क्षेत्रों पर एक साथ ही विचार किया गया है। अर्थव्यवस्था के विकास में जहां निजी क्षेत्र को अपना पर्याप्त योगदान करना है, वहां सरकारी क्षेत्र की भूमिका और अधिक प्रभावपूर्ण होगी। एक विस्तारशील सरकारी क्षेत्र, जो विशेष-रूप से बुनियादी उद्योगों के विकास में लगा हुआ है तथा जो विकास के लिए बड़ी मात्रा में माल तैयार कर रहा है, अपने-आप में ही इस बात का एक महत्वपूर्ण निर्णायक तथ्य है कि अर्थव्यवस्था किस गति से आगे बढ़ेगी। इसके अलावा, तीसरी योजना में औद्योगिक ढांचे में एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में छोटे उद्योगों को आगे बढ़ाने के प्रयत्न जारी रखे जाएंगे। इसके लिए बड़े और लघु उद्योगों में समन्वय स्थापित किया जाएगा, उद्योगीकरण के लाभ को कस्बों और गांवों में पहुंचाया जाएगा और परम्परागत ग्रामोद्योगों में सुधरी हुई तकनीकें लागू की जाएंगी।

6. तीसरी योजना में शिक्षा और अन्य सामाजिक सेवाओं के विकास पर पर्याप्त बल दिया गया है। एक ऐसी विकास-योजना में, जो जनता की समझदारी, सहयोग और स्वैच्छिक प्रयत्नों को बहुत अधिक महत्व देती है, ऐसे कार्यक्रमों पर जितना भी बल दिया जाए कम है। आर्थिक और सामाजिक विकास में एक उचित सन्तुलन स्थापित करने और योजना के आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ये आवश्यक हैं। समाज के शिक्षा-सम्बन्धी आधार को सुदृढ़ और जनता के जीवन-स्तर को उन्नत किए बिना बड़े पैमाने पर तकनीकी परिवर्तन करना और उत्पादकता बढ़ाना सम्भव नहीं है। योजना में दिए गए सामाजिक सेवा-सम्बन्धी कुछ कार्यक्रमों—यथा, वैज्ञानिक अनुसन्धान, तकनीकी शिक्षा और शिल्पियों का प्रशिक्षण, परिवार-आयोजन और आवास तथा शहरी विकास आदि—का प्रत्यक्ष रूप से आर्थिक विकास के साथ सम्बन्ध है। ऐसे और भी अनेक कार्यक्रम हैं, जो व्यापक सामाजिक दृष्टिकोण से अपरिहार्य हैं तथा कालान्तर में जिनका आर्थिक उन्नति को गति देने में बहुत बड़ा हाथ रहेगा। ये कार्यक्रम शिक्षा-सुविधाओं का विस्तार, रोगों पर नियन्त्रण, स्वास्थ्य और चिकित्सा-सेवाओं का विकास, छात्रवृत्तियां, कस्बों और गांवों में पीने के पानी की आपूर्ति और समुदाय के कम उन्नत वर्गों के लिए कल्याण-सेवाओं की व्यवस्था, आदि हैं। उपलब्ध साधनों के अनुसार तीसरी योजना में इन तथा अन्य आवश्यकताओं के लिए व्यवस्था की गई है। फिर भी, यह स्पष्ट है कि ज्यों-ज्यों योजना आगे बढ़ेगी, त्यों-त्यों कुछ क्षेत्रों में—विशेषतः, शिक्षा, ग्रामों में जल-आपूर्ति और परिवार-आयोजन के क्षेत्र में—अधिकाधिक प्रगति करने के लिए सभी सम्भव प्रयत्न करने होंगे।

7. जैसा कि पहले स्पष्ट किया गया है, जब तक अर्थव्यवस्था को पर्याप्त रूप से सुदृढ़ नहीं कर लिया जाता तब तक समस्त श्रमिक वर्ग को उचित पारिश्रमिक के साथ रोजगार दे सकना बड़ा कठिन है। इसलिए द्विविध कार्यक्रम अपनाने की आवश्यकता है। प्रथमतः, योजना में सम्मिलित विकास-कार्यक्रमों को इस ढंग से सम्पन्न करना होगा कि उनसे अधिकतम लोगों को रोज़गार मिल सके। उन्हें समन्वित ढंग से पूरा किया जाना चाहिए तथा वे प्रत्येक क्षेत्र की वास्तविक आवश्यकताओं के अनुकूल हों। दूसरी बात, अनेक क्षेत्रों में जहां, जनशक्ति का उपयोग अधिक सघन स्तर पर किया जा सकता है, योजना में निहित विकास-कार्यक्रमों को तेज़ी से अंजाम दिया जा सकता है, तथा उन्हें उसी सीमा तक बढ़ाया जा सकता है जितनी योजना के परवर्ती सोपानों के लिए आवश्यक हो। विशेषतः ऐसे क्षेत्रों में, जहां जनसंख्या बहुत अधिक है, साथ ही अर्द्धरोज़गारी भी अधिक है, इसी प्रकार की कार्रवाई करना आवश्यक है। वर्तमान आकलन के अनुसार इस योजना के विकास-कार्यक्रमों में 1 करोड़ 40 लाख अतिरिक्त श्रमिकों को रोज़गार मिल सकेगा, जब कि इस अवधि में श्रमिकों की संख्या में 1 करोड़ 70 लाख की वृद्धि होने की सम्भावना है। बाकी श्रमिकों को बड़े पैमाने के ग्रामीण निर्माण-कार्यों, ग्राम और लघु उद्योगों तथा अन्य साधनों-द्वारा काम में लगाने का प्रस्ताव किया गया है।

8. तीसरी योजना तैयार करते समय समग्र रूप से अर्थव्यवस्था की और अलग-अलग क्षेत्रों की आवश्यकताओं पर बड़ी सावधानी से विचार किया गया है। योजना में गत 10 वर्षों के विकास के परिणामों, जनता की बढ़ती हुई आशा-आकांक्षाओं, जनसंख्या में वृद्धि, बड़े पैमाने पर उद्योगीकरण के फलितार्थों तथा देश के घरेलू साधनो को अधिकतम रूप में गतिशील करने की आवश्यकता को ध्यान में रखा गया है। ऐसी स्थिति में, कम व्यापक योजना एकदम अपर्याप्त सिद्ध होती। 5 प्रतिशत की गति से प्रति वर्ष आय में वृद्धि के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक होगा कि राष्ट्रीय आय के 14 प्रतिशत से भी अधिक अंश का विनियोग किया जाए। इस समय विनियोग की दर राष्ट्रीय आय का 11.5 प्रतिशत भाग है। इसके लिए स्वदेशी बचत की गति को, जो इस समय 8.5 प्रतिशत है, बढ़ा कर तीसरी योजना के अन्त तक 11.5 प्रतिशत करना होगा। यह आवश्यक है कि मुख्य रूप से विदेशों से ऐसी मशीनों के आयात का भुगतान करने के लिए, जिनका निर्माण शीघ्र ही देश में सम्भव नहीं है, तथा अदायगी के सन्तुलन को बनाए रखने के लिए स्वदेशी साधनों को पर्याप्त विदेशी सहायता से बढ़ाया जाए। विकास के इस चरण में बाह्य साधनों एवं सहायता पर निर्भरता तीसरी योजना की अवधि में आयात की स्थान-पूर्ति तथा निर्यात-द्वारा आय बढ़ाने के लिए अपनाई गई नीतियों और की गई कार्रवाइयों के महत्व को ही प्रकट करती है।

9. तीसरी योजना के उत्पादन-कार्यक्रमों में खाद्यान्न और उपभोक्ता-सामग्री उपलब्ध करने के सम्बन्ध में पूरी सावधानी बरती गई है, फिर भी कभी-कभी, सम्भव है, मुद्रास्फीति का दबाव पड़े। इसीलिए योजना में मूल्य-नीति का भी निर्धारण किया गया है जिससे इस बात की गारण्टी मिले कि सम्बद्ध मूल्यों का उतार-चढ़ाव प्राथमिकताओं और लक्ष्यों के अनुरूप ही होगा तथा ऐसी अनिवार्य जीवनोपयोगी वस्तुओं का मूल्य, जो कम आयवाले लोगों की उपभोग-सूची में आ गई हैं, अनुचित रूप से नहीं

बढ़ेगा । यह भी आवश्यक है कि अपेक्षाकृत कम अनिवार्य वस्तुओं और सेवाओं के उपयोग में संयम से काम लिया जाए। इसके साथ ही, उत्पादन के स्वरूप का निश्चय करते समय इस बात की सावधानी बरती जानी चाहिए कि अपेक्षाकृत कम आवश्यक सामान के उत्पादन और सेवाओं में सीमित मात्रा में उपलब्ध होनेवाले साधनों का उपयोग न हो। ये कदम न केवल आर्थिक स्थायित्व की स्थिति में द्रुत विकास की उपलब्धि के लिए महत्वपूर्ण हैं, बल्कि स्वदेशी साधन और तीसरी योजना के सफल परिपालन के लिए आवश्यक विदेशी मुद्रा जुटाने के लिए भी आवश्यक हैं । तीसरी योजना के लिए आवश्यक साधन किस हद तक जुटाए जा सकते हैं, यह बहुत-कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि इसका परिपालन किस प्रकार किया जाता है—विशेषत: विभिन्न परियोजनाओं का निर्माण और संचालन किस प्रकार होता है, किस सीमा तक कृषि, उद्योग, बिजली, परिवहन, आदि की उपलब्ध क्षमता का उपयोग किया जाता है और किस पैमाने पर देश की जनशक्ति का प्रयोग किया जाता है । अगले अध्याय में तीसरी योजना के लिए जो वित्तीय आवश्यकताएं बताई गई हैं, वे स्पष्टत: इस समय उपलब्ध साधनों के अनुमान से कहीं अधिक हैं। विकास की गति को तीव्रता प्रदान करने के लिए और बड़े पैमाने पर वित्तीय साधन जुटाने के लिए निरन्तर प्रयत्न करने की आवश्यकता है। हाल ही में किए गए अध्ययनों से प्रकट हुआ है कि अनेक क्षेत्रों में यह विशालतर प्रयास व्यावहारिक सफलता प्राप्त कर सकता है।

10. तीसरी योजना में परियोजनाओं के सोपान निश्चित करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि वे परस्पर अविच्छिन्न रहें । विकास के प्रत्येक चरण पर योजनाओं की एक शृंखला का काम चालू रहना चाहिए, जिससे आयोजन और लाभ की प्राप्तियों में निरन्तरता का क्रम जारी रहे । दीर्घकाल में तैयार होनेवाली और अपेक्षाकृत कम समय में पूरी होनेवाली परियोजनाओं में भी एक सन्तुलन रहना चाहिए। परियोजनाओं के विकास-सोपानों का निर्धारण करने में भौतिक आयोजन की आवश्यकताओं का, विशेष रूप से जनशक्ति के आयोजन और साधन सामग्रियों एवं सहायक सेवाओं की व्यवस्था का, जिनमें बिजली और परिवहन भी शामिल हैं, कड़ाई से ध्यान रखना चाहिए। उद्योग, परिवहन और बिजली से सम्बद्ध क्षेत्रों में, विकास के प्रत्येक सोपान में, आयोजन में और उस पर अमल करने में निकट सामंजस्य स्थापित करना चाहिए। यह न केवल नई परियोजनाओं के लिए अपितु वर्तमान संयन्त्रों से उत्पादन के बढ़े हुए स्तर को प्राप्त करने के लिए भी उतना ही आवश्यक है । तीसरी योजना में, बिजली, परिवहन, वैज्ञानिक अनुसन्धान और तकनीकी शिक्षा के साथ-साथ जो औद्योगिक कार्यक्रम सम्मिलित है, उसे इस ढंग से बनाया गया है, कि उसमें निरन्तरता और सम्पूर्णता बनी रहे। इसलिए ऐसे कार्यक्रमों को, जिनसे अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत विकास की सामर्थ्य बढ़ाने में सहायता मिलती है, प्रारम्भ करने में और उन्हें न्यूनतम समय में पूरा करने में प्रत्येक सम्भव प्रयत्न किया जाना चाहिए। बड़ी परियोजनाओं में बहुत कम समय लगता है, परन्तु प्रारम्भ में उनके लिए अपेक्षाकृत कम पूंजी-विनियोग की आवश्यकता होती है। उनसे सम्बद्ध प्रारम्भिक काम में तीव्रता लाने से काफी कीमती समय बचाया जा सकता है।

11. दूसरी योजना की तरह तीसरी योजना में भी राज्यों की योजनाओं का देश की अर्थव्यवस्था के द्रुत विकास में अत्यधिक महत्व है। महत्वपूर्ण राष्ट्रीय उद्देश्य, जो

कृषि, शिक्षा, अन्य सामाजिक सेवाओं और ग्रामीण जनशक्ति के उपयोग के बारे में हैं, किस सीमा तक प्राप्त किए जा सकते हैं। यह इस बात पर निर्भर करता है कि राज्य-सरकारें अपनी योजनाओं को कितनी सफलता के साथ पूरा करती हैं। सामूहिक रूप से जन-कल्याण के साथ उनका गहरा सम्बन्ध है और बहुत अंश तक उन्हीं के द्वारा समाज के निर्बल-वर्ग के तथा कम उन्नत क्षेत्रों के जीवन-स्तर को ऊंचा उठाया जा सकता है। बड़े पैमाने के उद्योगों, विशेषत: बुनियादी और भारी उद्योगों के विकास के साथ राज्यों की योजनाओं को बड़े पैमाने पर बिजली और तकनीकी शिक्षा के विकास के लिए, आवास और शहरी विकास के कार्यक्रमों के लिए और ग्रामीण तथा औद्योगिक अर्थव्यवस्था के निकट एकीकरण की कार्रवाइयां करने के लिए व्यवस्था करनी है। तीसरी योजना में राज्यों की योजनाओं का निर्माण एवं उनके आकार और स्वरूप का निश्चय करते हुए यथासम्भव इन सब बातों को ध्यान में रखा गया है।

12. भारतीय अर्थव्यवस्था के निदेशन और प्रबन्ध के लिए तीसरी योजना में आयोजन और उसकी पूर्ति में सुधरे हुए तरीकों और मशीनों की उन्नत सांख्यिकी और आर्थिक बुद्धिमत्ता की, विभिन्न क्षेत्रों में तकनीकी एवं अन्य विकास-कार्यों को भली प्रकार समझने की, देश के महत्वपूर्ण साधन-स्रोतों के पूर्ण ज्ञान की और सामान्य रूप से विश्लेषण और अनुसन्धान-कार्यों के अधिक व्यवस्थित और पद्धतिपूर्ण होने की आवश्यकता अतीत की अपेक्षा कहीं अधिक है। प्रत्येक बड़े कार्यक्रम, बड़ी परियोजना या सम्बद्ध परियोजना-समूहों की प्रगति का सावधानीपूर्ण मूल्यांकन आवश्यक है। तीसरी योजना में इस बात की व्यवस्था की जा रही है। साथ ही, एक बड़े क्षेत्र में आंकड़ों—विशेष रूप से राष्ट्रीय आय और पूंजी-निर्माण के अनुमानों, कृषि और औद्योगिक उत्पादन, वितरण और रोज़गार-सम्बन्धी आंकड़ों, महत्वपूर्ण संख्याओं और उपभोक्ता-व्यय, जीवन-यापन के व्यय तथा आय के वितरण-सम्बन्धी आंकड़ों के संग्रह और अध्ययन—में सुधार की आवश्यकता है।

13. पहली दो योजनाओं में आर्थिक और सामाजिक अध्ययन का जो कार्यक्रम हाथ में लिया गया था, अब उसके परिणाम उपलब्ध हो गए हैं। इसका मुख्य उद्देश्य नगरों में ग्रामों से जनता के प्रव्रजन और रोज़गार की स्थिति की जांच करना, भूमि-सुधार और फार्म-प्रबन्ध का अध्ययन करना, कुटीरोद्योगों और छोटे उद्योगों का सर्वेक्षण, सिंचाई के लाभ का मूल्यांकन और समाज-कल्याण तथा प्रशासन की मुख्य समस्याओं का अध्ययन करना था। एक निश्चित सीमा तक अर्थव्यवस्था के व्यापक पहलू के विश्लेषणात्मक अध्ययन का कार्य भी हाथ में लिया गया। तीसरी योजना के अनुसन्धान-कार्यक्रम में, जो विश्वविद्यालयों, प्रमुख अनुसन्धान-संस्थाओं, योजना-आयोग और अन्य अभिकरणों-द्वारा पूरा किया जाएगा। अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में पूंजी-विनियोग की क्षमता, मूल्य-नीतियां और तकनीकें, विदेशी व्यापार और भुगतान-सन्तुलन, योजनाबद्ध विकास के सम्बन्ध में संगठन और प्रशासन की समस्याएं, सामाजिक परिवर्तन और सामाजिक संघर्ष की समस्याएं, भूमि-सुधार-सम्बन्धी कार्यक्रम के कामों, सहकारिता, सामुदायिक विकास, गांवों में बिजली पहुंचाना, लघु उद्योगों एवं ऐसी ही अन्य समस्याओं पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। इनमें से अनेक अध्ययनों का दीर्घकालीन विकास की योजना तैयार करने में महत्वपूर्ण लाभ होगा। इनसे तीसरी योजना में विशिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति में बहुत सुविधा होगी, और ये कार्यों के मूल्यांकन के लिए एक

कसौटी प्रदान करने तथा देश के विभिन्न भागों में जो अनुभव प्राप्त हुए हैं, उनसे शिक्षा ग्रहण करने में सहायक होंगे।

14. तीसरी योजना की अवधि में राष्ट्र को उतनी सफलता प्राप्त करने के लिए कार्य करना है, जितनी उसने पहली और दूसरी योजनाओं के दस वर्षों में प्राप्त की है। यह कार्य आकार की दृष्टि से बहुत विशाल, अनिवार्य और वर्तमान और भविष्य, दोनों के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसके प्रशासनात्मक फलितार्थ बड़े व्यापक हैं और इसके लिए कार्य के प्रत्येक क्षेत्र में योग्यता के उच्चतम स्तर प्राप्त करने की आवश्यकता है। योजना को प्रभावशाली ढंग से मूर्त रूप देने के लिए साधनों को अधिकतम गतिशील बनाने की, बदलती हुई आवश्यकताओं के साथ तालमेल रखने की, प्रत्येक महत्वपूर्ण स्थल पर साधनों के सामंजस्य और संग्रह की, कठिनाइयों और समस्याओं को पहले से ही समझने की, विकास के लिए उपयुक्त अवसर का लाभ उठाने में तत्परता की, और इन सबसे अधिक ऐसे व्यक्तियों और संगठनों की आवश्यकता है, जो दक्ष और जानकार हैं तथा योजना के लक्ष्यों के साथ जिनका तादात्म्य है। विकास की योजना चाहे कितनी ही विस्तृत और निश्चित क्यों न हो, वह एक ढांचा ही है, जो विविधतापूर्ण स्थितियों में जीवन-यापन और कार्य करनेवाले करोड़ों लोगों के सामने एक राष्ट्रीय प्रयत्न में भाग लेने के लिए कार्य का व्यापक स्वरूप प्रस्तुत करती है। इसकी सफलता विभिन्न तथ्यों पर—विकास के बोझ और उसकी चुनौतियों को व्यापक रूप से समझने, नई उत्पादक शक्तियों के मोचन, आधुनिक विज्ञान और तकनीकों के अधिकाधिक प्रयोग, दृष्टिकोण और आकांक्षाओं में परिवर्तन तथा अन्ततः इस विश्वास के वातावरण पर कि द्रुत आर्थिक विकास सामाजिक न्याय और व्यापक आर्थिक अवसर के लिए साधन-स्वरूप है—निर्भर करती है। तीसरी योजना में जिस प्रगति की कल्पना की गई है, उसे पूरी तरह प्राप्त करने के लिए ये कुछ मुख्य शर्तें हैं।

अध्याय 5

तीसरी योजना की रूपरेखा

भौतिक लक्ष्य

तीसरी योजना के प्रमुख लक्ष्यों पर पिछले अध्याय में प्रकाश डाला गया है। अगर ये लक्ष्य प्राप्त करने हैं, तो यह ज़रूरी है कि अगले पांच वर्षों में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में कुछ न्यूनतम विकास अवश्य हो जाए। तीसरी योजना के भौतिक लक्ष्य इन न्यूनतम आवश्यकताओं को दृष्टि में रख कर निश्चित किए गए हैं। इन लक्ष्यों की ब्योरेवार सूची इस अध्याय के अनुबन्ध 1 में दी गई है। अनुमान है कि अगले पांच वर्षों में राष्ट्रीय आय में लगभग 30 प्रतिशत की और प्रति व्यक्ति आय में लगभग 17 प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी। नीचे की तालिका में कुछ प्रमुख लक्ष्य शामिल किए गए हैं ताकि योजना का सार-रूप सामने आ जाए :

तालिका-संख्या 1

प्रमुख लक्ष्य

विषय	इकाई	1960-61	1965-66	1960-61 की तुलना में 1965-66 में प्रतिशत वृद्धि
कृषि-उत्पादन का सूचनांक	1949-50 = 100	135	176	30
खाद्यान्न-उत्पादन	लाख टन	760	1,000	32
नत्रजनयुक्त उर्वरक की खपत	हज़ार टन नत्रजन	230	1,000	335
सिंचित क्षेत्र (विशुद्ध योग)	लाख एकड़	700	900	29
सहकारिता-आन्दोलन :				
किसानों को पेशगी	करोड़ रु0	200	530	165
औद्योगिक उत्पादन का सूचनांक	1950-51 = 100	194	329	70
निम्नलिखित उत्पादन :				
इस्पात की सिल्लियां	लाख टन	35	92	163
अल्युमीनियम	हज़ार टन	18.5	80	332

तालिका-संख्या 1—जारी

विषय	इकाई	1960-61	1965-66	1960-61 की तुलना में 1965-66 में प्रतिशत वृद्धि
मशीनी औज़ार (वर्गीकृत)	मूल्य करोड़ रु० में	5.5	30	445
गन्धक-अम्ल	हज़ार टन	363	1,500	313
पेट्रोल के उत्पादन	लाख टन	57	99	70
वस्त्र :				
मिल का बना	करोड़ गज़	512.7	580	13
हथकरघा, बिजली का करघा और खादी	करोड़ गज़	234.9	350	49
योग	करोड़ गज़	747.6	930	24
खनिज पदार्थ :				
खनिज लोहा	लाख टन	107	300	180
कोयला	लाख टन	546	970	76
निर्यात	करोड़ रु०	645	850	32
बिजली :				
स्थापित क्षमता	लाख किलोवाट	57	127	123
रेलवे :				
माल ढोया गया	लाख टन	1,540	2,450	59
सड़क-परिवहन : चालू व्यावसायिक गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	210	365	74
जहाज़रानी : टनभार	लाख ग्रौस रजिस्टर्ड टन	9	10.9	21
सामान्य शिक्षा :				
विद्यालयों में विद्यार्थी	लाख (संख्या)	435	639	47
तकनीकी शिक्षा :				
इंजीनियरी और टेक्नोलाजी—डिग्री-स्तर पर दाखिला	हज़ार (संख्या)	13.9	19.1	37
स्वास्थ्य :				
अस्पताल—शय्याएं	हज़ार (संख्या)	186	240	29
प्रैक्टिस कर रहे डाक्टर	हज़ार (संख्या)	70	81	16

तालिका-संख्या 1—जारी

विषय	इकाई	1960-61	1965-66	1960-61 की तुलना में 1965-66 में प्रतिशत वृद्धि
उपभोग-स्तर :				
खाद्य	प्रति दिन प्रति व्यक्ति कैलोरियां	2,100	2,300	10
कपड़ा	प्रति वर्ष प्रति व्यक्ति गज़	15.5	17.2	11

भौतिक कार्यक्रम

2. आबादी में वृद्धि, जनता की बढ़ती हुई आशाएं और आगामी दो या तीन योजना-अवधियों मे आत्मचालित विकास की स्थिति प्राप्त करने की शीघ्र आवश्यकता यह ज़रूरी बना देते है कि अगले पांच वर्षों में इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक-सम्भव उपाय किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, तीसरी योजना-अवधि में ही ऐसी कुछ कार्रवाइयां की जानी चाहिएं, जिनसे चौथी योजना की भूमिका तैयार हो। तीसरी योजना के भौतिक कार्यक्रम इन दोनों उद्देश्यों को ध्यान में रख कर ही तैयार किए गए है। इन सब कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए सरकारी क्षेत्र में कुल व्यय 8,000 करोड़ रु० से कुछ ज्यादा का और निजी क्षेत्र में लगभग 4,100 करोड़ रु०* का बैठेगा।

3. यह आवश्यक है कि औद्योगिक विकास के, जिसमें बिजली, परिवहन, तकनीकी शिक्षा और वैज्ञानिक अनुसन्धान शामिल है, कार्यक्रम परस्पर संयुक्त रूप से प्राथमिकता की स्वीकृत योजना के अनुसार इस प्रकार चलने चाहिएं कि आवश्यक विदेशी मुद्रा और कर्मचारी उपलब्ध होने के साथ-साथ सम्बद्ध आन्तरिक साधन भी तैयार रहे, ताकि द्रुत प्रगति में बाधा न पड़े। कृषि, लघु उद्योगों और सामाजिक सेवाएं, जैसे क्षेत्रों में, जहां स्थानीय सामुदायिक प्रयत्नों और जन-सहयोग को आकृष्ट करने के अच्छे अवसर हैं और जहां आयात की गई वस्तुओं का प्रश्न प्रयत्नों को शिथिल नहीं करता, वहां भौतिक शक्ति की अधिकतम सीमा तक कार्य-पूर्ति का प्रयत्न होना चाहिए, उसे देश की न्यूनतम आवश्यकताओं से कम तो रहना ही नहीं चाहिए। वस्तुतः औद्योगिक और कृषि-सम्बन्धी क्षेत्रों मे जैसे-जैसे उत्पादक परियोजनाएं कार्यान्वित हों और अतिरिक्त उत्पादन उपलब्ध हों, वैसे-वैसे उन परियोजनाओं के क्षेत्र को विस्तृत करने की दिशा में अतिरिक्त साधन जुटाना सम्भव होना चाहिए, जिनमें रोज़गार देने की विस्तृत सामर्थ्य है, पर जिनके लिए विदेशी मुद्रा खर्च करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

***इसमें 200 करोड़ रु० की वह राशि शामिल नहीं है, जिसका अनुमानित हस्तान्तरण सरकारी क्षेत्र से निजी क्षेत्र में किया गया है।**

4. इन बातों से यह प्रकट होता है कि पांच वर्ष की अवधि में कार्यान्वियन के लिए जिन भौतिक कार्यक्रमों को स्वीकृत किया जाए, वे योजना-निर्माण के समय उपलब्ध वित्तीय साधनों के आधार पर ही सीमित न हों, हालांकि व्यय का निश्चय अवश्य ही वर्ष-प्रति-वर्ष वास्तव में उपलब्ध साधनों के मुताबिक करना पड़ेगा। अनुभवों से यह पता चला है कि योजना तैयार करते समय जो वित्तीय साधन दृष्टि में हों, उन्हीं के अनुसार अगर पांच वर्ष की योजना तैयार की जाए, तो उन सम्पूर्ण अवसरों का पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाया जा सकता, जो योजना के कार्यान्वियन की अवधि में उपस्थिति होते हैं।

वित्तीय व्यवस्थाएं

5. अभी 7,500 करोड़ रु० के वित्तीय साधनों का अनुमान लगाया गया है। परन्तु हाल के अध्ययनों से पता चलता है कि अगर देश की बचत को केन्द्रित करने के लिए कुछ उपाय किए जाएं, तो कुछ अतिरिक्त साधन भी उपलब्ध हो सकते हैं। वस्तुतः योजना में शामिल किए गए भौतिक लक्ष्य जिस हद तक पूरे होंगे, उसी हद तक अतिरिक्त वित्तीय साधनों में वृद्धि की सम्भावनाएं भी बढ़ेंगी। भारत की विकास-योजनाएं जिस प्रकार मित्र देशों, अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास-बैंक तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से सहयोग प्राप्त कर रही हैं, उसे दृष्टि में रखते हुए यह आशा करना युक्तिसंगत होगा कि तीसरी योजना के लक्ष्यों की प्राप्ति में विदेशी मुद्रा की कमी कोई बड़ी रुकावट नहीं होगी। दूसरी ओर, ज्यों-ज्यों योजना की प्रगति होगी, त्यों-त्यों यह बात भी सामने आ सकती है कि कार्यान्वियन के लिए स्वीकृत कुछ परियोजनाएं तीसरी योजना की अवधि में पूरी नहीं हो सकेंगी और पूंजी-विनियोग का कुछ भाग, दरअसल, चौथी योजना के प्रारम्भिक चरण तक के लिए विलम्बित करना होगा। परियोजनाओं का एक बड़ा भाग—विशेषतः उद्योग और खनन के क्षेत्र में—अपेक्षाकृत अधिक समय की मांग करता है और प्रायः कठिन तकनीकी समस्याओं का सामना करता है। औद्योगिक संयन्त्रों के डिज़ाइन बनाने और उन्हें तैयार करने अथवा सहायक विकास-कार्यों को हाथ में लेने, या ज़रूरी उपकरणों और पुर्ज़ों की प्राप्ति में विलम्ब के परिणामस्वरूप इनमें से कुछ परियोजनाओं को तीसरी योजना की अवधि से आगे ले जाना पड़ सकता है। इस प्रकार के हेर-फेर के बावजूद इस बात का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए कि तीसरी योजना के प्रमुख लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए जो परियोजनाएं बहुत आवश्यक हैं, वे समय पर पूरी हो जाएं।

6. अगले पृष्ठ की तालिका में 7,500 करोड़ रु० के वित्तीय व्यय का मुख्य मदों में वितरण दिखाया गया है।

सरकारी क्षेत्र में कुल 7,500 करोड़ रु० के वित्तीय व्यय की जो व्यवस्था की गई है, उसमें पूंजी-विनियोग* की राशि 6,300 करोड़ रु० और कर्मचारियों, सहायता-अनुदानों आदि पर व्यय आदि के द्योतक चालू व्यय† की राशि 1,200 करोड़ रु० है। इन राशियों

***भौतिक सम्पत्ति (जैसे, भवन, संयन्त्र और उपकरण) के निर्माण पर होनेवाला खर्च पूंजी-विनियोग है। इस खर्च में सम्पत्ति के निर्माण के लिए आवश्यक कर्मचारियों का खर्च भी शामिल है। मोटे तौर पर, इसे पूंजी-खाते का खर्च माना जाता है।**

†चालू व्यय का मतलब मोटे तौर पर योजना के कार्यक्रमों पर राजस्व-खाते में होनेवाले व्यय से है। यह खर्च 'पूंजी-विनियोग' के नाम से उल्लिखित खर्च से भिन्न है।

तालिका-संख्या 2

वित्तीय व्यवस्थाएं

(करोड रु०)

मद	दूसरी योजना		तीसरी योजना—वित्तीय व्यवस्थाएं				
	कुल व्यय	प्रतिशत	राज्य	संघीय क्षेत्र	केन्द्र	योग	प्रतिशत
कृषि और सामुदायिक विकास	530	11	919	24	125	1,068	14
बडी और मध्यम सिचाई-परियोजनाए	420	9	630	2	18	650	9
बिजली	445	10	880	23	109	1,012	13
ग्राम और लघु उद्योग	175	4	137	4	123	264	4
सगठित उद्योग और खनिज पदार्थ	900	20	70	—	1,450	1,520	20
परिवहन और सचार-साधन	1,300	28	226	35	1,225	1,486	20
सामाजिक सेवाए और विविध	830	18	863	87	350	1,300	17
इन्वेण्टरिया	—	—	—	—	200	200	3
योग	4,600	100	3,725*	175	3,600	7,500	100

*यह आंकड़ा अगले पैराग्राफ़ और अध्याय 6 के 27-वें पैराग्राफ़ में उल्लिखित बातों के प्रकाश में प्रस्तुत किया गया है ।

में स्थानीय संस्थाओं—जैसे, नगरपालिकाएं, पंचायतें, इत्यादि—के विकास-कार्यक्रमों पर होनेवाले खर्च का केवल वह अंश शामिल है, जिसकी व्यवस्था अपने योजना-व्यय के रूप में केन्द्रीय और राज्य-सरकारें करती हैं। इनमें खर्च के वे अंश शामिल नहीं हैं, जिनकी व्यवस्था स्थानीय संस्थाएं अपने साधनों से करती हैं। इसी प्रकार, इसमें वे अंशदान भी शामिल नहीं हैं, जो नकद तथा जिस के रूप में स्थानीय परियोजनाओं में—जिनमें स्थानीय लोगों का सहयोग होता है—स्थानीय लोगों-द्वारा दिया जाता है।

7. ऊपर की तालिका में राज्यों के लिए वित्तीय व्यवस्था 3,725 करोड़ रु० की दिखाई गई है। राज्यों की योजनाओं में जो भौतिक कार्यक्रम शामिल किए गए हैं, उनकी कुल लागत लगभग 3,847 करोड़ रु० है। राज्यों के राजस्व में हाल में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। ऐसा समझा जाता है कि अगर पर्याप्त अतिरिक्त कराधान किया जाए, तो राज्यों के लिए यह सम्भव होगा कि वे अपनी योजनाओं के भौतिक कार्यक्रमों के खर्च के लिए पूरी वित्तीय व्यवस्था स्वयं कर लें। इस प्रकार, भौतिक कार्यक्रमों और वित्तीय साधनों के बीच जो अन्तर रह जाता है, वह मुख्यतः केन्द्र से ही सम्बद्ध है। केन्द्रीय सरकार के कार्यक्रमों में विदेशी साधनों पर निर्भर करनेवाले कार्यक्रमों का अनुपात अधिक है—जैसे, उद्योग, खनिज पदार्थ, परिवहन और संचार-साधन। जब विदेशी मुद्रा सुलभ हो जाएगी, तो आवश्यक रुपया-विषयक साधनों को बढ़ाने के लिए ज़रूरी कदम उठाने पड़ेंगे।

8. जैसा कि पहले कहा गया है, योजना में सरकारी क्षेत्र-द्वारा किए जानेवाले खर्च ही शामिल नहीं हैं—इसमें निजी क्षेत्र-द्वारा किए जानेवाले खर्च भी शामिल हैं। निजी क्षेत्र-द्वारा पूंजी-विनियोग का अनुमान 4,100 करोड़ रु० है। योजना के प्रमुख मदों में सरकारी और निजी क्षेत्र के पूंजी-विनियोग का ब्योरा अगले पृष्ठ पर दिया जाता है।

9. 10,400 करोड़ रु० के पूंजी-विनियोग के लिए विदेशी मुद्रा की आवश्यकता का अनुमान 2,030 करोड़ रु० से कुछ अधिक लगाया गया है। सरकारी और निजी पूंजी-विनियोग का स्तर दूसरी योजना के अन्तिम वर्ष के 1,600 करोड़ रु० से बढ़ कर तीसरी योजना के अन्त में 2,600 करोड़ रु० हो जाने की आशा है। केवल सरकारी क्षेत्र के सन्दर्भ में ये अंक क्रमशः 800 करोड रु० और 1,700 करोड़ रु० हैं।

10. तालिका-संख्या 3 से यह स्पष्ट है कि तीसरी योजना में कुल पूंजी-विनियोग में लगभग 54 प्रतिशत की वृद्धि रखी गई है—70 प्रतिशत सरकारी क्षेत्र में और 32 प्रतिशत निजी क्षेत्र में। सरकारी क्षेत्र का अनुपात तो यहां तक ऊंचा होगा कि उसका व्यय वित्तीय व्यवस्था के 7,500 करोड़ रु० से बढ़ कर 8,000 करोड़ रु० की भौतिक योजना के करीब हो जाएगा।

राज्यीय योजनाएं

11. तीसरी योजना के सरकारी क्षेत्र में जो कार्यक्रम शामिल किए गए हैं, उनमें राज्यों की योजनाएं 3,847 करोड़ रु० की और संघीय क्षेत्रों की योजनाएं 175 करोड़ रु० की होंगी। बाकी कार्यक्रम केन्द्रीय मन्त्रालयों की योजनाओं के अन्तर्गत आते हैं। इस अध्याय के

तालिका-संख्या 3

दूसरी और तीसरी योजनाओं में पूंजी-विनियोग

(करोड़ रु०)

मदें	दूसरी योजना				तीसरी योजना			
	सरकारी	निजी	योग	प्रतिशत	सरकारी	निजी	योग	प्रतिशत
कृषि और सामुदायिक विकास	210	625	835	12	660	800	1,460	14
बड़ी और मध्यम सिंचाई-परि-योजनाएं	420	*	420	6	650	*	650	6
बिजली	445	40	485	7	1,012	50	1,062	10
ग्राम और लघु उद्योग	90	175	265	4	150	275	425	4
संगठित उद्योग और खनिज पदार्थ	870	675	1,545	23	1,520	1,050	2,570	25
परिवहन और संचार-साधन	1,275	135	1,410	21	1,486	250	1,736	17
सामाजिक सेवाएं और विविध	340	950	1,290	19	622	1,075	1,697	16
इन्वेण्टरियां	—	500	500	8	200	600	800	8
योग	3,650	3,100†	6,750	100	6,300	4,100†	10,400	100

*कृषि और सामुदायिक विकास के अन्तर्गत सम्मिलित

†सरकारी से निजी क्षेत्र में दी गई रकम को छोड़कर

अनुबन्ध 2 में इस विषय में पूरे ब्यौरे दिए गए हैं। राज्यों और केन्द्र के बीच जो व्यवस्था की गई है, उसका आधार यह है कि सामान्यत: राज्य-सरकारों-द्वारा जिन विकास-योजनाओं का कार्यान्वियन होना है, वे राज्य-योजना का अंग मानी जाएंगी और योजनाओं की कुछ सीमित श्रेणियां ही ऐसी होंगी, जो केन्द्रीय मन्त्रालयों की योजनाओं में केन्द्रीय सरकार-द्वारा प्रेरित मानी जाएंगी। इस प्रकार, राज्यों की योजनाओं के क्षेत्र को अधिक विस्तृत करने का प्रयत्न किया गया है और उनके विकास-कार्यक्रमों के संगठित कार्यान्वियन को सुविधापूर्ण बनाया गया है।

12. प्रत्येक राज्य की योजना निश्चित करते समय उसकी आवश्यकताओं, समस्याओं, अब तक की प्रगति और विकास के मार्ग में आनेवाली रुकावटों, प्रमुख राष्ट्रीय लक्ष्यों की उपलब्धि में उसका सम्भावित अंशदान, विकास की शक्ति और अपने विकास-कार्यक्रमों में राज्य-द्वारा प्रस्तुत किए जा सकनेवाले साधनों का ध्यान रखा जाता है। आवश्यकताओं और समस्याओं का मूल्यांकन करते समय इन-जैसी बातों को ध्यान में रखा गया : आबादी, क्षेत्र, आय और व्यय के स्तर, कुछ खास प्रकार की सेवाओं की प्राप्ति—जैसे, सड़कें, स्कूल और अस्पताल, दूसरी योजना में वचनबद्ध कार्यक्रम या विशेष कार्यक्रम, और तकनीकी तथा प्रशासकीय सेवाएं कहां तक प्राप्त हो सकती हैं। इस बात का भी खास ध्यान रखा गया कि ऐसे राज्य, जिनके साधन अनिवार्यत: कम हैं, अपनी विकास-योजनाओं को इतना सीमित न कर दें कि वे एकदम अपर्याप्त हो जाएं—वह भी केवल इस कारण से कि उनके साधन कम हैं। इसके साथ ही, जो राज्य अपने साधनों का संग्रह करने में अधिक परिश्रम कर सकते हैं, उन्हें बड़े पैमाने पर विकास-कार्य हाथ में लेने होंगे। राज्यों और संघीय क्षेत्रों की योजनाओं में 4,022 करोड़ रु० के जो कार्यक्रम रखे गए हैं, उनका राज्यवार ब्यौरा तथा पहली और दूसरी योजनाओं की राज्यवार तुलनात्मक संख्या इस अध्याय के अनुबन्ध 3 में दी गई हैं। राज्यों और विकास की मदों के सन्दर्भ में विस्तृत ब्यौरा इस रिपोर्ट के अन्त में परिशिष्ट 'ख' में दिया गया है।

13. भौतिक कार्यक्रमों और वित्तीय व्यवस्था की मोटे तौर पर ऊपर जो चर्चा की गई है, उससे यह पता चलता है कि योजना में किस प्रकार सर्वमुखी प्रयत्न किया गया है और इसके विभिन्न निर्धारित क्षेत्रों पर सापेक्ष रूप से कितना ज़ोर दिया गया है। इस सामान्य ढांचे के अन्तर्गत योजना में विकास के कई कार्यक्रम हैं, जिनका विवरण इस रिपोर्ट के अगले अध्यायों में दिया गया है। फिर भी, परवर्ती पैराग्राफों में इन कार्यक्रमों का एक संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

कृषि

14. कृषि, सिंचाई और सामुदायिक विकास के लिए जो कार्यक्रम तीसरी योजना में शामिल किए गए हैं, उन पर कुल व्यय 1,718 करोड़ रु० का बैठेगा, जब कि दूसरी योजना में इनका अनुमानित व्यय 950 करोड़ रु० था। इन कार्यक्रमों का लक्ष्य यह है कि आगामी पांच वर्षों में कृषि-उत्पादन में वृद्धि की गति लगभग दुगुनी हो जाए। खाद्यान्नों का उत्पादन 30 प्रतिशत और अन्य फसलों का उत्पादन 31 प्रतिशत बढ़ने की आशा है, जैसा कि अगली तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका-संख्या 4

कृषि-उत्पादन का सूचनांक

(1949-50 = 100)

फसलें	1960-61	1965-66	1960-61 की अपेक्षा 1965-66 में प्रतिशत वृद्धि
सब फसलें	135	176	30
खाद्यान्न	132	171	30
अन्य फसलें	142	186	31

15. वृद्धि की इस ऊंची गति को प्राप्त करने के लिए कई दिशाओं में सघन प्रयत्न किए जाने की आवश्यकता है। प्रथमतः, सिंचाई के विस्तृत कार्यक्रम—जिनमें बड़ी, मध्यम और छोटी सिंचाई-योजनाएं भी शामिल होंगी—हाथ में लिए जाएंगे। इससे करीब 2 करोड़ एकड़ ज़मीन में सिंचाई का विस्तार हो जाएगा, जिससे शुद्ध सिंचित क्षेत्र करीब 9 करोड़ एकड़ हो जाएगा। दूसरी बात, करीब 2 करोड़ 20 लाख एकड़ ज़मीन में शुष्क खेती की तकनीकें काम में लाई जाएंगी और 1 करोड़ 10 लाख एकड़ ज़मीन में भूमि-संरक्षण का काम किया जाएगा। तीसरे, उर्वरकों की खपत बढ़ानी पड़ेगी—नत्रजनयुक्त उर्वरकों की खपत में पांच-गुनी वृद्धि का लक्ष्य है, यानी इसे 2,30,000 टन (नत्रजन की मात्रा) से बढ़ा कर 10 लाख टन करना है; इसी तरह, फास्फेटयुक्त उर्वरकों की खपत में 6-गुनी वृद्धि होनी है, अर्थात् यह परिमाण 70,000 टन (पी$_2$ओ$_5$ की मात्रा) से बढ़ा कर 4,00,000 टन करना है। हरी खाद के अन्तर्गत क्षेत्र 118 लाख एकड़ से बढ़ा कर 410 लाख एकड़ किया जाएगा। 5 करोड़ एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र में पौधों की रक्षा के उपाय करने होंगे। चौथी बात, सुधरे हुए कृषि-उपकरणों और मशीनों के एक बड़े कार्यक्रम के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में आधुनिक टेक्नोलाजी काम में लाने के लिए विशेष प्रयत्न करना होगा। कृषि-उपकरणों का एक विशाल कार्यक्रम बनाया गया है, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक राज्य में एक केन्द्र कायम किया जाएगा, जहां सुधरे हुए ढंग के उपकरण बनाने, उनकी जांच करने, डिज़ाइन तैयार करने और तकनीकी परामर्श देने की व्यवस्था होगी; निर्माताओं को काफी मात्रा में लोहा और इस्पात देने का इन्तज़ाम होगा; सुधरे हुए उपकरणों की आपूर्ति, खरीद और उत्पादन के लिए ऋण देने की व्यवस्था होगी और राज्यों में कृषि-इंजीनियरी-सम्बन्धी कर्मचारी-मण्डल को मज़बूत किया जाएगा। पांचवीं बात, सामुदायिक विकास-कार्यक्रम का अक्तूबर 1963 तक देश के सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्र में विस्तार हो जाएगा। इस प्रकार, तकनीकी सहायता और सामान तक देश के सभी किसानों की पहुंच हो जाएगी। सब गांवों में पंचायतें और सहकारी समितियां स्थापित हो जाएंगी। ज़िला और खण्ड-स्तरों पर लोकतान्त्रिक संस्थाओं की स्थापना से सभी क्षेत्रों की जनता पर विकास का दायित्व और पहल का भार पड़ेगा। आशा की जाती है कि सेवा-सहकारी समितियों की सदस्य-संख्या बढ़ कर लगभग 3 करोड़ 70 लाख हो जाएगी, अर्थात् समस्त कृषि-परिवारों का लगभग दो-तिहाई भाग इनके अन्तर्गत आ जाएगा। सहकारी

ऋण के काफी विस्तार का लक्ष्य है—अल्प और मध्यमकालीन अग्रिम धन के सम्बन्ध में यह लक्ष्य करीब 530 करोड़ रु० का और दीर्घकालीन ऋण का लक्ष्य 150 करोड़ रु० (आशोधित ऋण) का है। सहकारी क्रय-विक्रय-समितियों की संख्या 1,869 से बढ़ा कर 2,470 की जाएगी। मंडियों में करीब 980 नए भाण्डारण-गोदाम बनाए जाएंगे और सहकारिता के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों में 9,200 छोटे गोदामों का निर्माण किया जाएगा। 25 नए सहकारी चीनी-कारखाने कायम किए जाएंगे और चावल, कपास, पटसन, मूंगफली, फल, इत्यादि के लिए सहकारी आधार पर विधायन-इकाइयां स्थापित करने की ओर अधिक ध्यान दिया जाएगा। 2,200 प्राथमिक उपभोक्ता-भाण्डार और सहकारिता के आधार पर 50 थोक भाण्डार कायम करने का भी कार्यक्रम है। सहकारी कृषि को लोकप्रिय बनाने की दिशा में प्रयत्न जारी रहेंगे और सारे देश में अग्रगामी परीक्षण के तौर पर 3,200 सहकारी फार्म संगठित किए जाएंगे। छठी बात, कुछ चुने हुए ज़िलों को, जहां खास तौर पर सिंचाई की पर्याप्त सुविधाएं हैं और निश्चित रूप से वर्षा होती है, सघन कृषि-विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत लाया जाएगा, ताकि कृषि-उत्पादन बढ़ सके। आरम्भ में, प्रत्येक राज्य में इस प्रकार का एक ज़िला चुना गया है। यह महत्वपूर्ण नया कार्यक्रम इन क्षेत्रों में तकनीकी सहायता, उर्वरक, सुधरी हुई ऋण-व्यवस्था और अन्य वस्तुएं ग्राम-पंचायतों तथा सहकारी समितियों के माध्यम से सभी किसानों तक पहुंचाएगा। इससे उत्पादन और क्रय-विक्रय-योग्य फालतू खाद्यान्न, दोनों की वृद्धि में सहायता मिलेगी।

16. इन विभिन्न कार्रवाइयों के परिणामस्वरूप यह आशा की जाती है कि मुख्य फसलों का उत्पादन बढ़ जाएगा, जैसा कि निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है :

तालिका-संख्या 5

प्रमुख फसलों का उत्पादन

फसल	इकाई	1960-61	1965-66	1960-61 की अपेक्षा 1965-66 में प्रतिशत वृद्धि
खाद्यान्न	लाख टन	760	1,000	32
तेलहन	लाख टन	71	98	38
गन्ना*	लाख टन	80	100	25
कपास	लाख गांठें	51	70	37
पटसन	लाख गांठें	40	62†	55

इस वृद्धि का एक बड़ा भाग प्रति एकड़ उपज में सुधार के ज़रिए मिलने की आशा है। उदाहरण के लिए, यह आशा की जाती है कि तीसरी योजना की अवधि में चावल की औसत उपज प्रति एकड़ 1,030 पौंड होगी, जबकि दूसरी योजना की अवधि में यह मात्रा 807 पौंड थी।

* खांडसारी या गुड़ के रूप में

† इसमें मेस्टा की फसल शामिल नहीं है, जिसके द्वारा सन् 1965-66 में 13 लाख गांठें प्राप्त होंगी।

17. इन लक्ष्यों की पूर्ति के साथ खाद्यान्नों की आपूर्ति के मामले में अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर हो जाएगी और प्रति व्यक्ति खाद्य-उपलब्धि सन् 1960-61 के 16 औस प्रति दिन से बढ़ कर सन् 1965-66 में 17.5 औंस प्रति दिन हो जाएगी । कपड़े की खपत प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष सन् 1960-61 के 15.5 गज़ से बढ़कर सन् 1965-66 में 17.2 गज़ हो जाएगी । फल और सब्ज़ियों-जैसे सहायक खाद्यों के उत्पादन पर, जिनके लिए मांग देश में लगातार बढ़ रही है, विशेष जोर दिया जाएगा और यह प्रयत्न किया जाएगा कि लोगों को वर्तमान की अपेक्षा अधिक सन्तुलित भोजन प्राप्त हो । चाय, काफी, रबर, नारियल, सुपारी, तम्बाकू, काली मिर्च, इलायची और लाख-जैसी वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाने के लिए विशेष उपाय किए जाएंगे, क्योंकि विदेशी मुद्रा के अर्जन तथा बचत की दृष्टि से ये बड़ी महत्वपूर्ण हैं ।

18. पशुपालन, दूध-व्यवसाय, मछलीपालन और वन-रक्षा के सुधार के लिए भी तीसरी योजना में बड़े-बड़े कार्यक्रम शामिल किए गए है । सघन पशु-विकास के कार्यक्रम के अन्तर्गत पहले से ही स्थापित केन्द्र ग्राम-खंडों में से 55 का विस्तार किया जाएगा और महत्वपूर्ण नस्ल-क्षेत्रों में 38 नए खंड कायम किए जाएंगे । पशु-अस्पतालों और औषधालयों की संख्या 4,000 से बढ़ा कर 8,000 की जाएगी और पशुओं की महामारी का निवारण करने के लिए पहले से ही जो कार्यक्रम हाथ में लिया गया है, उसे पूरा किया जाएगा । ऊन का उत्पादन 7 करोड़ 20 लाख पौंड से बढ़ा कर 9 करोड़ पौड किया जाएगा । दूध का उत्पादन 2 करोड़ 20 लाख टन से बढ़ा कर 2 करोड़ 50 लाख टन किया जाएगा । एक लाख से ज्यादा आबादी-वाले 55 शहरों में दूध उपलब्ध करने की नई योजनाएं हाथ में ली जाएंगी । 8 ग्रामीण मक्खन-उत्पादन-केन्द्र, 4 दूध-उत्पादन-कारखाने और 2 पनीर-कारखाने लगाए जाएंगे । मछली का उत्पादन 14 लाख टन से बढ़ा कर 18 लाख टन किया जाएगा, 4,000 मछली पकड़नेवाली नौकाओं में मशीनें लगाई जाएंगी और 35 बड़े पोत देश के मछली पकड़नेवाले बेडे में जोड़े जाएंगे । जंगलों को विकसित करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा; 7,00,000 एकड़ क्षेत्र में आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद वृक्ष लगाए जाएंगे; 6,00,000 एकड़ क्षेत्र के उजाड़प्राय जंगलों को फिर तरोताज़ा किया जाएगा और 12,00,000 एकड़ क्षेत्र में ग्राम-वर्ती जंगल लगाए जाएंगे । इस मद में पूंजी-विनियोग करने से पहले सारे देश का सर्वेक्षण इस दृष्टि से किया जाएगा कि इमारती लकड़ी और लुगदी पर आधारित बड़े पैमाने के उद्योगों के विकास की क्षमता देश में कहां तक है ।

उद्योग

19. तीसरी योजना में मूलभूत महत्व का कार्यक्रम उद्योगों के विस्तार से सम्बद्ध है खास तौर पर, पूंजीगत और उत्पादक सामान-उद्योगों के विस्तार से । इसमें मशीन-निर्माण और प्रबन्ध-सम्बन्धी कुशलता, तकनीकी जानकारी और डिज़ाइन-क्षमता पर विशेष ज़ोर दिया गया है । इस कार्यक्रम में सरकारी क्षेत्र को प्रमुख स्थान दिया गया है, पर योजना के ढांचे के भीतर निजी क्षेत्र से भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की जाने की आशा की जाती है । संगठित निर्माण उद्योगों के विशुद्ध उत्पादन में सरकारी क्षेत्र का हिस्सा सन् 1960-61 के एकदशमांश से भी कुछ कम से बढ़ कर सन् 1965-66 में करीब एक-चौथाई हो जाने की आशा है और इसका एक बड़ा अंश पूजीगत और उत्पादक सामान होगा । उद्योगों और खनिज

पदार्थों के विकास के लिए योजना में 1,882 करोड़ रु० का एक कार्यक्रम है, परन्तु अभी वित्तीय व्यवस्था सरकारी क्षेत्र में 1,520 करोड़ रु० की ही की गई है। इसके अतिरिक्त, आशा की जाती है कि निजी क्षेत्र 1,050 करोड़ रु० की व्यवस्था करेगा। साथ ही, आशा की जाती है कि युद्ध से पूर्व के कुछ उद्योगों के आधुनिकीकरण और पुरानी मशीनों की जगह नई मशीनें लगाने की मद में होनेवाले खर्च को पूरा करने के लिए निजी क्षेत्र लगभग 150 करोड़ रु० की व्यवस्था करेगा।

20. सम्पूर्ण तीसरी योजना में उन उद्योगों के विकास पर जोर दिया गया है, जो अर्थव्यवस्था को आत्मचालित बनाने में सहायक हो सकते हैं—जैसे, इस्पात, मशीन-निर्माण और उत्पादक सामान। योजना में इन सामानों को खरीदने के लिए विदेशी सहायता पर यथाशीघ्र कम-से-कम निर्भर रहने की स्थिति पैदा करने और निर्यात के आधार को विस्तृत करने की प्रेरणा देने पर भी बल दिया गया है। उपभोक्ता-सामान के उत्पादन को भी काफी बढ़ाया जाएगा, मुख्यतः निजी क्षेत्र में आशा की जाती है कि इन सबके फलस्वरूप औद्योगिक उत्पादन में लगभग 70 प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी, पर इस वृद्धि से भी अधिक महत्वपूर्ण बात होगी, लोहा और इस्पात, मशीनों और रसायनों के क्षेत्र में विकास। इसकी एक झांकी निम्नलिखित तालिका से मिल सकती है :

तालिका-संख्या 6

औद्योगिक उत्पादन का सूचनांक*

(1950-51=100)

वर्ग	1960-61	1965-66	1960-61 की अपेक्षा 1965-66 में प्रतिशत वृद्धि
सामान्य सूचनांक	194	329	70
सूती वस्त्र	133	157	18
लोहा और इस्पात	238	637	168
मशीनें (सब तरह की)	503	1,224	143
रसायन	288	720	150

जैसा कि पहले कहा गया है इस सूचनपत्र में कई नए उद्योगों को शामिल नहीं किया गया है और अब इस पर पुनर्विचार किया जा रहा है।

21. तीसरी योजना के सरकारी क्षेत्र में जो बड़ी औद्योगिक परियोजनाएं शामिल की गई हैं, वे धातु-शोधन, औद्योगिक मशीनों, मशीनी औज़ारों, उर्वरकों, बुनियादी रसायनों और अन्तरायकों, आवश्यक औषधों तथा पेट्रोल-शोधन से सम्बद्ध हैं। लोहा और इस्पात के मामले में कुल क्षमता के प्रस्तावित लक्ष्य हैं, 1 करोड़ 2 लाख टन इस्पात की सिल्लियां

***ये सूचनांक वस्तुतः सरकारी सूचनांक ही हैं, सिवाय इसके कि तुलना का आधार सन् 1951 के कैलेंडर-वर्ष से बदल कर सन् 1950-51 का वित्तीय वर्ष कर दिया गया है, ताकि योजनाकाल में हुए विकास को आंकने में सुविधा हो।**

ग्रौर 15 लाख टन कच्चा लोहा । इन लक्ष्यों की पूर्ति 59 लाख टन क्षमता क राउरकेला, भिलाई ग्रौर दुर्गापुर में स्थापित सरकारी इस्पात के कारखानों से होगी । बोकारो मे स्थापित किए जा रहे चौथे इस्पात के कारखाने से भी इसमे मदद मिलेगी । निजी क्षेत्र में भी इस्पात-विषयक क्षमता का कुछ विस्तार होगा । इस विस्तार का मुख्य साधन स्क्रैप पर ग्राधारित बिजली की भट्ठियां होंगी, जिनसे पुनरावेष्टन के लिए बिलेटो की ग्रापूर्ति बढ जाएगी । ग्राशा की जाती है कि करीब 2,00,000 टन कच्चे लोहे का उत्पादन नीची शैफ्ट की भट्ठियों में होगा, जिन्हें निजी क्षेत्र में विकेन्द्रित ग्राधार पर स्थापित करने का प्रस्ताव है । ग्रौज़ार, मिश्रित धातु, ग्रौर स्टेनलेस इस्पात के उत्पादन को तीसरी योजना में उच्च प्राथमिकता दी गई है ग्रौर यह ग्राशा की जाती है कि 2,00,000 टन उत्पादन का लक्ष्य सन् 1965-66 तक पूरा हो जाएगा । ग्रलौह धातुग्रों के क्षेत्र में, योजना का लक्ष्य 80,000 टन ग्रल्युमीनियम का उत्पादन करने का है ग्रौर देश में पहला जस्ता पिघलानेवाला कारखाना लगाने का है, जिसकी क्षमता 15,000 टन की होगी । ताबे का उत्पादन 8,900 टन से बढ़कर 20,000 टन हो जाने की ग्राशा है ।

22. तीसरी योजना की ग्रवधि की सबसे महत्वपूर्ण बात होगी, मशीन-निर्माण ग्रौर इंजीनियरी-उद्योगों का विकास । मशीन-निर्माण के लिए विशेष रूप से ग्रावश्यक ढलाई-गढ़ाई की क्षमता का तीसरी योजना में, सरकारी क्षेत्र में, बड़े पैमाने पर विकास किया जाएगा । रांची के पास एक भारी मशीनी संयन्त्र लगाया जा रहा है, जिसकी उत्पादन-क्षमता पूर्ण विकास हो जाने पर 80,000 टन की होगी ग्रौर यह प्रति वर्ष 10 लाख टन इस्पात-निर्माण की क्षमतावाले एक कारखाने की स्थापना के लिए ग्रधिकांश जरूरी सामान तैयार करेगा । तीन भारी बिजली-उपकरण-परियोजनाग्रों की भी व्यवस्था की गई है, ताकि सन् 1971 के बाद प्रति वर्ष 20 लाख किलोवाट के हिसाब से बिजली-उत्पादन-क्षमता बढ़ाने के लिए पर्याप्त बिजली-सम्बन्धी उपकरण प्राप्त हो सकें । मशीनी ग्रौज़ारों के क्षेत्र में, मौजूदा मशीनी ग्रौजार-कारखानों का विस्तार करने ग्रौर सरकारी क्षेत्र में दो नए संयन्त्र स्थापित करने की व्यवस्था है । निजी क्षेत्र में भी, मशीनी ग्रौजारों के उत्पादन के पर्याप्त विस्तार की ग्राशा है ग्रौर मशीनी ग्रौज़ार के उत्पादन का लक्ष्य 30 करोड़ रु० रखा गया है । मोटर-गाड़ी-उद्योग में 30,000 सवारी गाड़ियों ग्रौर 60,000 व्यावसायिक गाड़ियों का लक्ष्य रखा गया है ।

23. ग्रकार्बनिक उर्वरकों का उत्पादन नत्रजन के रूप में करीब 1,10,000 टन से बढ़ा कर 8,00,000 टन किया जाएगा । फास्फेटयुक्त उर्वरकों के उत्पादन में भी पर्याप्त वृद्धि करने का प्रस्ताव है । गन्धक-ग्रम्ल के उत्पादन का लक्ष्य 15 लाख टन ग्रौर कास्टिक सोडा का 3,40,000 टन रखा गया है । कार्बनिक रसायनों, प्लास्टिक, रंजकों ग्रौर ग्रौषधों का भी उत्पादन बढ़ाने की व्यवस्था की गई है । सीमेण्ट के उत्पादन का लक्ष्य 1 करोड़ 30 लाख टन रखा गया है ग्रौर शोधक कच्चे तेल का 1 करोड़ 10 लाख टन । तीसरी योजना में शामिल की गई ग्रन्य महत्वपूर्ण परियोजनाएं हैं : सनतनगर में संश्लेषित ग्रौषध-परियोजना, ऋषिकेश के पास एंटिबायोटिक्स संयन्त्र ग्रौर केरल में फाइटो-केमिकल-परियोजना । उपभोक्ता-सामान उद्योगों के क्षेत्र में, कपड़ा, कागज़, चीनी, खाद्य तेलों, घड़ियों, इत्यादि की उत्पादन-क्षमता काफी बढ़ाने का प्रस्ताव है ।

24. तीसरी योजना के कुछ महत्वपूर्ण औद्योगिक लक्ष्यों की संक्षिप्त सूची नीचे दी जाती है :

तालिका-संख्या 7

औद्योगिक उत्पादन के प्रमुख लक्ष्य

वस्तु	इकाई	1960-61	1965-66
इस्पात की सिल्लियां	लाख टन	35	92
अल्युमीनियम	हज़ार टन	18.5	80
डीज़ल इंजिन	हज़ार (संख्या)	40	66
ट्रैक्टर	हज़ार (संख्या)	2	10
बिजली के तार (ए० सी० एस० आर० कंडक्टर)	हज़ार टन	22	44
नत्रजनयुक्त उर्वरक	हज़ार टन नत्रजन	110	800
फास्फेटयुक्त उर्वरक	हज़ार टन पी$_2$ ओ$_5$	55	400
गन्धक-अम्ल	हज़ार टन	363	1,500
कास्टिक सोडा	हज़ार टन	100	340
सीमेंट	लाख टन	85	130
पेट्रोल के उत्पादन	लाख टन	57	99
मशीनी औज़ार (वर्गीकृत)	मूल्य लाख रुपयों में	550	3,000
बाल और रोलर बियरिंग	लाख (संख्या)	29	140
सूती वस्त्र (मिल का बना)	करोड़ गज़	512.7	580
चीनी*	लाख टन	30	35
कागज़ और गत्ता	हज़ार टन	350	700
बाइसिकिलें (केवल संगठित क्षेत्र)	हज़ार (संख्या)	1,050	2,000
सिलाई की मशीनें (केवल संगठित क्षेत्र)	हज़ार (संख्या)	297	700
मोटरगाड़ियां	हज़ार (संख्या)	53.5	100

खनिज पदार्थ

25. तीसरी योजना में उद्योगों के विस्तार पर अधिक ज़ोर दिए जाने के कारण खनिज पदार्थों के विकास का एक सघन कार्यक्रम अपनाने की आवश्यकता है। कुछ खनिज पदार्थ ऐसे भी हैं, जिनकी विदेशों में अच्छी खपत है और विदेशी मुद्रा-अर्जन के क्षेत्र में उनका महत्वपूर्ण स्थान है। बिजली, रेलवे, इस्पात, सीमेंट तथा कुछ अन्य ऐसे उद्योगों के कार्यक्रम को देखते हुए, जिनमें कोयले की बड़ी खपत होती है, तीसरी योजना में कोयले का उत्पादन-लक्ष्य 970 लाख टन रखा गया है। दूसरी योजना के अन्तिम वर्ष के लिए कोयला-उत्पादन का लक्ष्य 600 लाख टन रखा गया था। अब उसमें 370 लाख टन की वृद्धि करके उत्पादन के इस लक्ष्य को पूरा करना होगा। इसके अतिरिक्त 370 लाख टन में से 200 लाख टन सरकारी क्षेत्र

*फसल-वर्ष, नवम्बर-अक्तूबर से सम्बद्ध

से और 170 लाख टन निजी क्षेत्र से आएगा। इस्पात और कच्चे लोहे के लिए प्रस्तावित लक्ष्यों को पूरा करने के हेतु करीब 2 करोड़ टन खनिज लोहे की आवश्यकता पड़ने का अनुमान है। निर्यात के लिए 1 करोड़ टन खनिज लोहे की आवश्यकता पड़ेगी। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए तीसरी योजना में खनिज लोहे की उत्पादन-क्षमता का लक्ष्य 3 करोड़ 20 लाख टन निश्चित किया गया है। बिजली के काम आनेवाले तांबे के वार्षिक 11,500 टन उत्पादन के लिए नई तांबा-खानों की खोज और खुदाई की व्यवस्था की गई है। बिहार में पाइराइट की खानों की खोज, मध्यप्रदेश में हीरे की खानों के विकास, यूरेनियम काटने और उसके विधायन तथा मैंगनीज़, बाक्साइट, जिप्सम और चूने के पत्थर की खानों की सघन खोज के लिए भी इस योजना में व्यवस्था है।

26. देश में खनिज तेल-साधनों की खोज और निकासी के काम को ऊंची प्राथमिकता दी गई है। तेल और प्राकृतिक गैस-आयोग अब बड़े पैमाने पर काम करेगा, ताकि नए सुरक्षित भांडारों का पता लगे और अतिरिक्त उत्पादन की व्यवस्था हो। खोदने का काम देश के अधिकांश आशापूर्ण तलछटवाले क्षेत्रों में किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, सरकार की ओर से विदेशी कम्पनियों को तेल की इस खोज में परस्पर स्वीकार्य शर्तों पर शामिल होने के लिए आमन्त्रित किया गया है। आशा है कि असम-आयल-कम्पनी और भारत-सरकार का संयुक्त उद्यम 'आयल इण्डिया' वार्षिक 27.5 लाख टन कच्चा तेल का उत्पादन करने लगेगा। सन् 1962 मे पहली बार सरकार उत्पादक के रूप में तेल-शोधन के क्षेत्र में प्रवेश करेगी। नूनमती और बरौनी के तेल-शोधन-केन्द्रों और गुजरात के परियोजित तेल-शोधन-केन्द्र के पूरा हो जाने पर स्वदेशी तेल-शोध-क्षमता में सरकार का हिस्सा 47 प्रतिशत हो जाएगा।

ग्राम और लघु उद्योग

27. बड़े उद्योगों के साथ-साथ, ग्राम और लघु उद्योगों का भी विकास किया जाएगा, जिससे रोजगार के अवसर मिलें और उपभोक्ता-सामान तथा कुछ उत्पादक सामान के उत्पादन में वृद्धि हो। लघु उद्योगों के क्षेत्र में पहले ही काफी प्रगति की जा चुकी है। लघु उद्योग आधुनिक टेक्नोलाजी और बिजली के उपयोग के लाभों को बढ़े हुए रोज़गार के अवसरों और छोटे व्यवसायियों तथा सहकारी समितियों के लिए अधिक अवसरों के लाभों को परस्पर जोड़ते हैं। तीसरी योजना में इन उद्योगों की और तेज़ प्रगति होने और कस्बों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में इनके बड़ी मात्रा में फैलने की आशा है। ग्राम और लघु उद्योगों के कार्यक्रमों के लिए सरकारी क्षेत्र में कुल 264 करोड़ रु० रखे गए हैं, जबकि दूसरी योजना में इस मद में करीब 175 करोड़ रु० खर्च किए गए थे। कुछ अन्य कार्यक्रमों — जैसे, सामुदायिक विकास, विस्थापितों का पुनर्वास, सामाजिक कल्याण और पिछड़े वर्गों का कल्याण — से भी अतिरिक्त राशियां उपलब्ध होंगी। निजी क्षेत्र में पूंजी-विनियोग का अनुमान लगभग 275 करोड़ रु० है। छोटे उद्योगपतियों को बैंकों से ऋण लेने के लिए सरकारी गारण्टी देने का भी प्रस्ताव है। दूसरी योजना की अवधि में, जहां करीब 120 औद्योगिक बस्तियों की स्थापना के लिए अनुमति दी गई थी, वहां तीसरी योजना की अवधि में 300 नई औद्योगिक बस्तियां स्थापित की जाएंगी। कुछ चुने हुए ग्रामीण क्षेत्रों में जहां बिजली, पानी और अन्य आवश्यक सुविधाएं सुलभ हैं या निकट भविष्य में हो जाएंगी, वहां ग्रामीण औद्योगिक बस्तियां, भी स्थापित की

जाएंगी । खादी और ग्रामोद्योग-आयोग कुछ चुनी हुई ग्राम-इकाइयों में संगठित ग्रामीण विकास की ओर विशेष ध्यान देगा। ऐसी 3,000 ग्राम-इकाइयां तीसरी योजना की अवधि में शुरू की जाएंगी । हथकरघे, बिजली के करघे और खादी-उद्योगों-द्वारा कपड़े का उत्पादन सन् 1960-61 के 235 करोड़ गज़ से बढ़ कर 1965-66 में 350 करोड़ गज़ हो जाने की आशा है। इसी तरह, कच्चा रेशम का उत्पादन 36 लाख पौंड से बढ़ कर 50 लाख पौंड हो जाएगा । नारियल-जटा और हस्तशिल्पों के कार्यक्रम भी संगठित और विस्तृत किए जाएंगे ।

बिजली

28. बड़े तथा लघु, दोनों तरह के उद्योगों के विकास के लिए, बिजली बहुत ज़रूरी है । इसलिए तीसरी योजना में बिजली-उत्पादन को ऊंची प्राथमिकता दी गई है । बिजली के विकास का कार्यक्रम—सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्र मिलाकर—कुल 1,089 करोड़ रु० का है । तीसरी योजना के अन्त तक बिजली की उत्पादन-क्षमता—उन योजनाओं-सहित, जो पहले से चालू हैं, जिनका निर्माण हो रहा है और जिनकी जांच की जा रही है—134 लाख किलोवाट तक बढ़ जाने की आशा है । इसमें से 127 लाख किलोवाट बिजली व्यावसायिक उपयोग में आएगी, जबकि दूसरी योजना के अन्त में कुल 57 लाख किलोवाट बिजली इस काम में आती थी। अनुमान है कि 4,500 करोड़ किलोवाट-घंटा बिजली सन् 1965-66 में पैदा होने लगेगी, जबकि सन् 1960-61 में 1,985 करोड़ किलोवाट-घंटा बिजली तैयार होती थी। संचरण-पथ का विस्तार सन् 1960-61 के 84,000 सर्किट-मील से बढ़ा कर सन् 1965-66 में 1,50,000 सर्किट-मील में किया जाएगा । बिजलीवाले कस्बों और गांवों की संख्या सन् 1960-61 के 23,000 से बढ़ा कर सन् 1965-66 में 43,000 की जाएगी। आशा की जाती है कि अमली तौर पर 5,000 या इससे अधिक आबादीवाले सभी कस्बों और गांवों तथा 2,000 से 5,000 के बीच की आबादीवाले आधे कस्बों और गांवों को बिजली प्राप्त हो जाएगी। 3 लाख किलोवाट क्षमता का एक न्यूष्टिक शक्ति-केन्द्र भी स्थापित किया जाएगा, जो तीसरी योजना की अवधि में 1.5 लाख किलोवाट बिजली और शेष चौथी योजना के पहले वर्ष में उपलब्ध करेगा । परन्तु स्थापित उत्पादन-क्षमता का एक बड़ा हिस्सा 74 लाख किलोवाट तापीय संयन्त्रों से प्राप्त होगा और 51 लाख किलोवाट पनबिजली-संयन्त्रों से ।

परिवहन और संचार-साधन

29. पिछले कुछ वर्षों के अनुभव ने यह अच्छी तरह बता दिया है कि आर्थिक विकास में परिवहन और संचार-साधनों का कितना अधिक महत्व है । इस शीर्षक के अन्तर्गत जो कार्यक्रम हैं, उनकी कुल लागत 1,655 करोड़ रु० आएगी, जबकि फिलहाल वित्तीय व्यवस्था 1,486 करोड़ रु० की ही है । यद्यपि पहली दो योजनाओं में इस क्षेत्र में बहुत-सारा पूंजी-विनियोग किया गया था, तथापि तीसरी योजना में इसके भावी विकास के लिए एक ठोस कार्यक्रम रखा गया है । रेलवे के विकास का कार्यक्रम सन् 1960-61 में माल-यातायात के परिमाण, 1,540 लाख टन, के सन् 1965-66 में बढ़कर 2,450 लाख टन हो जाने के अनुमान पर आधारित है । माल-यातायात में इस अतिरिक्त वृद्धि के लगभग 90 प्रतिशत भाग का श्रेय लोहा और इस्पात, खनिज पदार्थों, कोयला, सीमेंट और

रेलवे-सामग्रियों के यातायात को प्राप्त होने की आशा है। 1,200 मील लम्बी नई रेल-लाइनें बिछाने, 1,600 मील लम्बी इकहरी लाइनों को दोहरा करने, डीजल और बिजली के इंजिन तैयार करने और कुछ अन्य वस्तुओं के लिए, जिनका अभी तक आयात हो रहा है, योजना में व्यवस्था की गई है। सड़क के कार्यक्रम में 25,000 मील लम्बी पक्की सड़कें बनाने की व्यवस्था की गई है। साथ ही, मौजूदा सड़कों का सुधार करने, जैसे पुल बनाना, टूटे हुए हिस्सों को जोड़ना और सड़कों की दशा सुधारना, के लिए भी व्यवस्था की गई है। सड़क-परिवहन का काम, अधिकांशतः निजी क्षेत्र मे होगा। आशा है कि व्यावसायिक गाड़ियों की संख्या सन् 1960-61 के 2.1 लाख से बढ़ कर सन् 1965-66 में 3.65 लाख हो जाएगी। सड़क-द्वारा माल-यातायात की मात्रा में अगले पांच वर्षों में 120 प्रतिशत वृद्धि होने की आशा है। योजना में बड़े और छोटे बन्दरगाहों के विकास और जहाजरानी, अन्तर्देशीय जल-परिवहन, असैनिक हवाई परिवहन, डाक और तार तथा प्रसारण-सेवाओं के विस्तार के कार्यक्रम भी शामिल किए गए हैं। परिवहन और संचार-साधनों के क्षेत्र में, तीसरी योजना के अन्तर्गत, जो महत्वपूर्ण लक्ष्य स्थिर किए गए हैं, उनकी एक झांकी निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत है :

तालिका-संख्या 8

परिवहन और संचार-साधन

मद	इकाई	1960-61	1965-66
रेलवे :			
नई लाइनें	मील	800*	1,200*
नई दोहरी लाइनें	मील	1,300*	1,600*
माल ले जाया गया	लाख टन	1,540	2,450
सड़कें और सड़क-परिवहन :			
राष्ट्रीय राजपथ-सहित पक्की सड़कें	हज़ार मील	144	169
चालू गाड़ियां :			
व्यावसायिक गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	210	365
यात्री गाड़ियां	हजार (संख्या)	50	80
माल ढोनेवाली गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	160	285
जहाजरानी :			
टन-भार	लाख ग्रौस रजिस्टर्ड टन	9	10.9
बन्दरगाह :			
बड़े बन्दरगाह—क्षमता	लाख टन	370	490
संचार-साधन :			
डाकघर	हज़ार (संख्या)	77	94
तारघर	हज़ार (संख्या)	6.5	8.5
टेलीफोन	हजार (संख्या)	460	660

***उल्लिखित वर्ष म समाप्त होनेवाली पांच वर्ष की अवधि से सम्बद्ध**

सामाजिक सेवाएं

30. **वैज्ञानिक अनुसन्धान** : वैज्ञानिक अनुसन्धान को, विशेषतः उद्योगों और कृषि के विकास पर गहरा प्रभाव डालनेवाले वैज्ञानिक अनुसन्धान को, सबल किया जाएगा। पेट्रोलियम-टेक्नोलाजी-जैसे क्षेत्रों में अनुसन्धान करने और वैज्ञानिक उपकरणों का विकास तथा उत्पादन करने के लिए नई संस्थाएं स्थापित की जाएंगी। तीसरी योजना की अवधि में उद्योगों और कृषि की बेकार जानेवाली चीजों के उपयोग और उन्हें ठिकाने लगाने की समस्याओं पर अधिक ध्यान दिया जाएगा। विश्वविद्यालयों और तकनीकी संस्थानों में बुनियादी अनुसन्धान की सुविधाएं बढ़ाने की भी व्यवस्था की जाएगी। बिजली-उत्पादन के लिए न्यैष्टिक शक्ति के उपयोग और कृषि, जीव-विज्ञान, उद्योग तथा चिकित्सा-विज्ञान के क्षेत्र में आइसोटोपों के उपयोग की दिशा में जो अमूल्य काम किया गया है, उसे और भी विस्तृत तथा सुदृढ़ किया जाएगा। आशा की जाती है कि परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान के इले-क्ट्रोनिक्स-विभाग का उत्पादन-अनुभाग तीसरी योजना की अवधि में 8 करोड़ रु० मूल्य के उपकरण तैयार करेगा। भारतीय परिस्थितियों और यहां उपलब्ध सामग्रियों के अनुकूल प्रोटोटाइप न्यैष्टिक शक्ति-केन्द्रों का डिज़ाइन तैयार करने और उनका विकास करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा, ताकि चौथी योजना की अवधि में देश को न्यैष्टिक शक्ति-केन्द्रों के डिज़ाइन तैयार करने और उनके निर्माण के मामले में विदेशों से परामर्श लेने की बिल्कुल ही ज़रूरत न पड़े। चूंकि उच्च किस्म के थोरियम का संसार का सबसे बड़ा भांडार भारत में है, इसलिए अनुसन्धान और विकास का काम इस दीर्घावधि-उद्देश्य को ध्यान में रख कर किया जाना चाहिए कि बिजली के रूप में प्रयुक्त होने-योग्य विकास थोरियम का करना है।

31. **तकनीकी शिक्षा और प्रशिक्षण** : तकनीकी शिक्षा का देश के औद्योगिक और कृषि-विकास के कार्यक्रम से बहुत गहरा सम्बन्ध है। यह अनुमान लगाया गया है कि तीसरी योजना के लिए कुल 1,51,000 और चौथी योजना के लिए 2,00,000 प्रशिक्षित इंजी-नियरों की आवश्यकता होगी। तीसरी योजना में इंजीनियरी से सम्बद्ध धन्धों के लिए करीब 8,10,000 कुशल कर्मचारियों की और गैर-इंजीनियरी धन्धों के लिए करीब 4,60,000 कुशल कर्मचारियों की ज़रूरत होगी। चौथी योजना की अवधि में यह ज़रूरत बहुत ज़्यादा होगी। इस मांग को पूरा करने के ख्याल से इंजीनियरी कालेजों की प्रवेश-क्षमता को 13,860 से बढ़ा कर 19,140 किया जाएगा और पालिटेक्निकों की संख्या 25,570 से बढ़ा कर 37,390 की जाएगी। इंजीनियरी और टेक्नोलाजी की अंशकालीन और पत्र-व्यवहार-द्वारा पढ़ाई भी शुरू की जाएगी। शिल्पियों के लिए प्रशिक्षण-संस्थाओं की संख्या भी सन् 1965-66 तक बढ़ा कर 318 कर दी जाएगी और रोज़गार में लगे औद्योगिक कर्मचारियों के लिए कारखाना के भीतर और सायंकालीन कक्षाएं चलाई जाएंगी। कुशल कर्मचारियों और शिल्पियों के लिए पर्याप्त संख्या में शिक्षकों का प्रबन्ध करने के लिए तीन मौजूदा केन्द्रीय प्रशिक्षण-संस्थाओं की शक्ति दुगुनी कर दी जाएगी और तीन नई संस्थाएं कायम की जाएंगी। इन संस्थाओं से प्रशिक्षण लेकर निकलनेवाले शिक्षकों की संख्या करीब 8,000 तक हो जाने की आशा है। कृषि-कालेजों की प्रवेश-क्षमता 4,600 से बढ़ा कर 6,200 और पशु-चिकित्सा-कालेजों की प्रवेश-क्षमता 1,300 से बढ़ा कर 1,460 की जाएगी।

ऊपर उल्लिखित इंजीनियरी और तकनीकी कर्मचारियों के अतिरिक्त जिन **अन्य** श्रेणियों के कर्मचारियों की बड़ी संख्या में आवश्यकता है, उनमें शामिल हैं: वैज्ञानिक, शिक्षक, संख्या-शास्त्री, प्रशासक, प्रबन्धक और सामुदायिक विकास एवं सहकारिता के लिए तथा सामाजिक कल्याण और पिछड़े वर्गो के कार्यक्रमो के लिए कर्मचारी-मण्डल। सभी वर्गों के शिक्षकों के लिए, विशेषत: विज्ञान के शिक्षकों के लिए, दूसरी योजना की अवधि में जहां कमी अनुभव की गई थी, वहां अब अधिक प्रशिक्षण-सुविधाएं रखी गई है। तीसरी योजना में करीब 59,000 अतिरिक्त कर्मचारियों को खण्ड-विकास-अधिकारी; कृषि, पशुपालन, उद्योग, सहकारिता और पंचायतों के विस्तार-अधिकारी; ओवरसियर, सामाजिक शिक्षा-संगठनकर्ता, ग्राम-सेवक और ग्राम-सेविका के रूप में प्रशिक्षित किया जाएगा। सहकारिता के क्षेत्र में वरिष्ठ, मध्यम और कनिष्ठ श्रेणियों के कर्मचारियों की अतिरिक्त आवश्यकता 14,000 के आस-पास होगी। महिलाओं, बच्चों और अपंग व्यक्तियों के लिए विविध कल्याण-कार्यक्रमों को अंजाम देने के हेतु करीब 3,000 कार्यकर्ताओं और निरीक्षकों की आवश्यकता होगी। सामाजिक कल्याण के क्षेत्र में काम करनेवाली स्वैच्छिक संस्थाओं को करीब 5,000 प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता होगी। पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए खण्ड-विकास-अधिकारियों, विस्तार-अधिकारियों, ग्राम-सेवकों, चिकित्सा-कर्मचारियों और अन्य कार्यकर्ताओं की 14,000 से भी अधिक संख्या में आवश्यकता होगी। तीसरी और चौथी योजनाओं में संख्या-शास्त्रियों की बडी संख्या में आवश्यकता होगी और उन्हें विश्वविद्यालयों तथा अन्य विशिष्ट संस्थाओं—जैसे, भारतीय अंक-संकलन-संस्थान और कृषि-अनुसन्धान एवं अंक-संकलन-संस्थान—में प्रशिक्षित किया जाएगा। औद्योगिक संस्थाओं के लिए भी प्रशासकीय और प्रबन्धीय कर्मचारियों की बड़ी संख्या में आवश्यकता होगी तथा उनके लिए प्रशिक्षण की सुविधाएं दूसरी योजना की अवधि में स्थापित संस्थाओं, कलकत्ता एवं अहमदाबाद में स्थापित होनेवाली नई संस्थाओं और बम्बई के औद्योगिक इंजीनियरी-प्रशिक्षण-संस्थान में उपलब्ध की जाएंगी।

32. **सामान्य शिक्षा** : तीसरी योजना में यों तो सभी स्तरों पर शिक्षा-सुविधाओं के विस्तार की बात सोची गई है, पर इसकी एक विशिष्ट बात है, 6 से 11 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए सारे देश में मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था। कुछ पिछड़े हुए इलाकों में लड़कियों की शिक्षा की मन्द गति को स्वीकार करते हुए, यह अनुमान लगाया गया है कि इस अवधि में शिक्षा प्राप्त करनेवाले बच्चों की संख्या में इस प्रकार वृद्धि होगी—6–11 वय-वर्ग: 61.1 प्रतिशत से बढ़कर 76.4 प्रतिशत; 11–14 वय-वर्ग: 22.8 प्रतिशत से बढ़ कर 28.6 प्रतिशत; और 14–17 वय-वर्ग: 11.5 प्रतिशत से बढ़ कर 15.6 प्रतिशत। विद्यालयों में पढ़ रहे छात्रों की कुल संख्या सन् 1960-61 के 4.35 करोड़ से बढ़कर सन् 1965-66 में 6.39 करोड़ हो जाएगी। तीसरी योजना में अनमानतः 5.51 लाख शिक्षकों की आवश्यकता होगी। इसलिए शिक्षकों को प्रशिक्षण देने की सुविधाओं का काफी विस्तार किया जाएगा। विश्वविद्यालयों में छात्रों की संख्या सन् 1960-61 के 9 लाख से बढ़ कर सन् 1965-66 में 13 लाख हो जाने की आशा है। तीसरी योजना में एक बड़ा काम वैज्ञानिक शिक्षा की सुविधाओं का विस्तार करने का है जिसका लक्ष्य यह होगा कि समस्त छात्रों में विज्ञान के छात्रों का अनुपात करीब 43 प्रतिशत हो जाए। विभिन्न क्षेत्रों में विज्ञान-शिक्षित लोगों की

मांग निरन्तर बढ़ रही है; उदाहरण के लिए, विद्यालयों में विज्ञान के शिक्षक चाहिए; इंजीनियरी और अन्य तकनीकी संस्थाओं के लिए विज्ञान के शिक्षा-प्राप्त छात्र चाहिए; और उद्योगों में वैज्ञानिक कर्मचारी चाहिए। अतः विज्ञान की शिक्षा का प्रसार आवश्यक है।

33. तीसरी योजना की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता होगी—बड़ी संख्या में छात्र-वृत्तियों की व्यवस्था, जिससे प्रतिभाशाली युवा छात्र उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों और कालेजों में अपनी शिक्षा पूरी कर सकें। इस मद के अन्तर्गत अभी छात्रवृत्तियों के लिए जितने धन की व्यवस्था है, तीसरी योजना में उसमें 10 करोड़ रु० की वृद्धि करने का प्रस्ताव है।

34. **स्वास्थ्य और परिवार-आयोजन** : स्वास्थ्य-सेवाओं के क्षेत्र में, तीसरी योजना का उद्देश्य वर्तमान कार्यक्रमों का विस्तार करना है। इन कार्यक्रमों का सम्बन्ध आवासीय क्षेत्रों के आस-पास की सफाई, छूत की बीमारियों का नियन्त्रण, सार्वजनिक स्वास्थ्य-सेवाओं (प्रसूति-शिशु-कल्याण, स्वास्थ्य-शिक्षा और पुष्टिकर भोजन-सहित) की व्यवस्था, परिवार-आयोजन, और चिकित्सा तथा स्वास्थ्य-कर्मचारियों के प्रशिक्षण से है। मलेरिया-उन्मूलन का कार्यक्रम पूरा कर दिया जाएगा और चेचक तथा क्षय-रोग पर नियन्त्रण पाने के लिए राष्ट्रव्यापी आन्दोलन शुरू किया जाएगा। विशेष रोगाक्रान्त क्षेत्रों में हैज़े के नियन्त्रण के लिए विशेष उपाय किए जाएंगे। तीसरी योजना की अवधि में प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों की संख्या 2,800 से बढ़ कर 5,000 और अस्पतालों में शय्याओं की संख्या 1,85,600 से बढ़ा कर 2,40,100 की जाएगी। प्रैक्टिस कर रहे डाक्टरों की संख्या 70,000 से बढ़ कर 81,000 और नर्सों की संख्या 27,000 से बढ़ कर 45,000 हो जाने की आशा है। इस योजना में शामिल अन्य महत्वपूर्ण योजनाओं का सम्बन्ध देशी चिकित्सा-पद्धतियों के विकास, स्वास्थ्य-शिक्षा, स्वास्थ्य-बीमा, विद्यालय-स्वास्थ्य-सेवा, प्रसूति एवं शिशु-कल्याण तथा पौष्टिक भोजन से है।

35. आबादी में तीव्र गति से वृद्धि होने के कारण, तीसरी योजना में परिवार-आयोजन-कार्यक्रमों को उच्च प्राथमिकता दी गई है। इन कार्यक्रमों में इन बातों की व्यवस्था की गई है: (क) परिवार-आयोजन के लिए शिक्षा और प्रेरणा, (ख) सेवाओं की व्यवस्था, (ग) प्रशिक्षण, (घ) आपूर्ति, और (ङ) अनुसन्धान। यह निश्चय किया गया है कि इस विषय का ठीक प्रकार से ज्ञान फैलाने और परिवार-आयोजन को सफल बनाने में गैर-सरकारी संस्थाओं का पूरा-पूरा सहयोग लिया जाए। परिवार-आयोजन-विषयक गतिविधियों को सामान्य स्वास्थ्य-सेवाओं के साथ सम्बद्ध कर दिया जाएगा और परिवार-आयोजन-सेवाओं की—जिनमें वन्ध्याकरण की सुविधाएं भी शामिल हैं—चिकित्सा और स्वास्थ्य-केन्द्रों के द्वारा व्यवस्था की जाएगी। परिवार-आयोजन-केन्द्रों की संख्या 1,649 से बढ़ कर 8,200 हो जाएगी।

36. **ग्रामीण जल-आपूर्ति और स्थानीय विकास-कार्य** : तीसरी योजना की प्रारम्भिक रूपरेखा में कहा गया था कि स्थानीय विकास के कार्यक्रमों में ग्रामीण क्षेत्रों के लिए ये तीन मुख्य सुविधाएं दिए जाने की व्यवस्था होनी चाहिए: (क) पीने के पानी की व्यवस्था, (ख) प्रत्येक गांव को सबसे निकटस्थ मुख्य सड़क अथवा रेलवे-स्टेशन से जोड़नेवाली सड़कों का निर्माण, और (ग) ग्रामीण विद्यालय-भवनों की व्यवस्था, जो सामुदायिक केन्द्र और ग्राम-पुस्तकालय का भी काम दे सकें। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि गांवों

में पीने के पानी की सन्तोषजनक व्यवस्था करना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, यह विचार किया गया है कि ग्रामीण जल-ग्रापूर्ति-के कार्यक्रम पर समस्त प्रयत्नों को केन्द्रित किया जाए। अन्य ग्रामीण सुविधाओं की व्यवस्था सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों और जन-शक्ति के पूर्णतर उपयोग के लिए शुरू किए जानेवाले ग्रामीण कार्यक्रमों-द्वारा की जाए।

तीसरी योजना का यह एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है कि जहां तक सम्भव हो सके, इस योजना के अन्त तक अच्छे पीने के पानी की व्यवस्था अधिकांश ग्रामों में हो जाए। यह बात ज्ञात है कि इस लक्ष्य को पूरा करना आसान नहीं है और इसके लिए इस कार्यक्रम को पूरा करने में संलग्न सभी संस्थाओं को सघन प्रयत्न करना होगा तथा उनके बीच प्रभावशाली समन्वय स्थापित करना होगा। ग्रामीण जल-ग्रापूर्ति की समस्या का सर्वेक्षण कई राज्यों में किया जा रहा है। इन सर्वेक्षणों के आधार पर और विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त अवस्थाओं का उचित ध्यान रखते हुए, ग्राम जल-ग्रापूर्ति के कार्यक्रम के लिए जो साधन रखे गए हैं, उनका इस्तेमाल (क) पिछड़े हुए इलाकों में, (ख) सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत न आनेवाले क्षेत्रों में, (ग) पूर्व-विस्तार-खण्डों में, और (घ) उन खण्डों में करने का इरादा है, जो सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के पहले और दूसरे सोपान को पार कर चुके हैं।

37. तीसरी योजना में द्रुत गति से बढ़नेवाली शहरी आबादी के लिए भी पर्याप्त जल-ग्रापूर्ति का कार्यक्रम रखा गया है। दूसरी योजना में अनुमानतः 112 करोड़ रु० की लागत की लगभग 664 जल-ग्रापूर्ति एवं जल-निकासी से सम्बन्धित योजनाओं को हाथ में लिया गया था। इनमें से जो योजनाएं अभी तक पूरी नहीं हुई है, वे पूरी की जाएंगी और आगामी पांच वर्षों में कुछ नई शहरी योजनाएं शुरू की जाएंगी।

38. **आवास :** आबादी के बढ़ने और शहरों की ओर लोगों का झुकाव होने के कारण आवास की समस्या पहले से ही बड़ी गम्भीर है तथा भविष्य में इसके और भी गम्भीर होने की आशंका है। स्पष्टतः इस समस्या का हल केवल सरकारी पूंजी-विनियोग से सम्भव नहीं है, यद्यपि कुछ सीमा तक सरकारी पूंजी-विनियोग की इसमें महत्वपूर्ण भूमिका होगी। तीसरी योजना में उन उपायों का काफी विस्तार किया जाएगा, जिन्हें पहली दोनों योजनाओं के काल में अपनाया गया था। इसके साथ ही, यह योजना सरकार-द्वारा इस मद में किए गए पूंजी-विनियोग की उद्योगों के लिए स्थान चुनने और उन्हें फैला कर कायम करने के बारे में उचित नीतियों का अवलम्बन करके, महत्वपूर्ण शहरी क्षेत्रों की 'मास्टर योजना' तैयार करके और सरकारी तथा निजी, दोनों प्रकार के विभिन्न संस्थानों-द्वारा किए जा रहे प्रयत्नों का अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से समन्वय करके अनुपूर्ति करेगी। इसमें यह प्रस्ताव भी शामिल है कि केन्द्र में और राज्यों में आवास-मण्डल कायम किए जाएं, ताकि कम और मध्यम आय के अधिकांश लोग स्वयं अपने मकान बनवाने में समर्थ हो सकें। औद्योगिक श्रमिकों और कम आयवालों के आवास, गन्दी बस्तियों की सफाई और उनका सुधार तथा भूमि प्राप्त करके उसका विकास करने के लिए दी जानेवाली वित्तीय सहायता बढ़ा दी जाएगी। कई शहरों में नगर-आयोजन और नगर-विकास के तरीकों को हाथ में लिया जाएगा। कलकत्ता की कुछ अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, जिनके कारण देश के पूर्वी क्षेत्र में एक विशेष समस्या उत्पन्न हो गई है, केन्द्रीय योजना में तो 10 करोड़ रु० की व्यवस्था की ही गई

है, पश्चिम-बंगाल की योजना में भी 10 करोड़ रु० रखे गए हैं । दूसरी योजना में ग्रामीण आवास का जो कार्यक्रम शुरू किया गया था, उसका सम्बन्ध सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के साथ और भी गहरा कर दिया जाएगा और ईंटों के भट्ठे लगाने, इमारती सामान बनाने, नए मकान बनाने के लिए क्षेत्रों का विस्तार करने और खेतिहर श्रमिकों की आवास-अवस्थाओं में सुधार करने की ओर अधिक ध्यान दिया जाएगा ।

39. **सामाजिक कल्याण :** सामाजिक कल्याण के क्षेत्र में जो विविध कार्यक्रम तैयार किए गए हैं, उनमें सबसे ऊंची प्राथमिकता शिशु-कल्याण-सेवाओं को दी गई है । यह निश्चय किया गया है कि समस्त कल्याण-कार्यक्रमों का स्पष्ट झुकाव शिशु-कल्याण की ओर होना चाहिए । इन कार्यक्रमों की एक विशिष्ट बात यह है कि रोगों का इलाज करने की अपेक्षा उनके निरोध पर अधिक बल देने का प्रस्ताव रखा गया है और तदनुसार न केवल अपंग बच्चों के मामले में ही, बल्कि सभी बच्चों के लिए शिशु-स्वास्थ्य-सेवा का संगठन किया जाएगा । क्षेत्रीय स्तर पर, बिखरी हुई सेवाओं को संगठित किया जाएगा । बच्चों में अपराध-वृत्तियों को रोकने के लिए राज्य-सरकारों को संस्थाएं स्थापित करने में सहायता दी जाएगी । बच्चों का भिक्षावृत्ति के लिए उपयोग करने के रिवाज का कठोरता से मुकाबला किया जाएगा । भिक्षावृत्ति रोकने के कार्यक्रम में सबसे अधिक ज़ोर बच्चों-द्वारा भीख मंगवाना रोकने पर दिया जाएगा । आरम्भ में यह कार्यक्रम बड़े शहरों, तीर्थस्थानों और पर्यटन-केन्द्रों में कार्यान्वित किया जाएगा । महिलाओं के लाभ के लिए बनाए गए कार्यक्रमों में महिला-मण्डलों (स्थानीय स्वैच्छिक महिला-संस्थाओं) को पुष्ट करने पर विशेष ज़ोर दिया जाएगा । पिछड़े हुए वर्गों के लिए दूसरी योजना में जो उपाय हाथ में लिए गए थे, उन्हें आगे बढ़ाया जाएगा । लगभग 300 विशेष विकास-खण्ड परिगणित जातियों के लिए बनाए जाएंगे और वन-सहकारिता-संस्थाओं के कार्यक्रम का विस्तार किया जाएगा । पाकिस्तान से आए विस्थापित व्यक्तियों के पुनर्वास पर, विशेषत: उन्हें आबाद करने के लिए दण्डकारण्य के विकास पर, पूरा-पूरा ध्यान दिया जाएगा ।

40. वैज्ञानिक अनुसन्धान, शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, सामाजिक कल्याण, इत्यादि कार्यक्रमों के लिए सामान्य शीर्षक 'सामाजिक सेवाएं और विविध' के अन्तर्गत कुल 1,526 करोड़ रु० की आवश्यकता होगी । इसके मुकाबले में, अभी वित्तीय व्यवस्था केवल 1,300 करोड़ रु० की हो सकी है । योजना को कार्यान्वित करते समय इस कमी को पूरा करने की हर कोशिश की जाएगी ।

रोज़गार

41. तीसरी योजना में जो कार्यक्रम शामिल किए गए हैं, उनसे 140 लाख लोगों को रोज़गार के अवसर मिलने की आशा है । इस बात को ध्यान में रखते हुए कि आबादी में तीव्र वृद्धि होने के कारण तीसरी योजना के अन्तर्गत श्रमिक-वर्ग में नए-नए प्रवेश करनेवालों की संख्या 170 लाख तक होगी, यह बात खास ज़रूरी है कि रोज़गार के अवसर बढ़ाए जाएं । यह काम कुछ अंश तक, ग्राम और लघु उद्योगों तथा कृषि के विस्तार से पूरा हो सकेगा । इसके अतिरिक्त, प्रस्ताव किया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर विशेष कार्य-परियोजनाएं संगठित की जाएं । अपने वर्तमान प्रारम्भिक स्वरूप के अनुसार यह कार्यक्रम तीसरी योजना के पहले वर्ष में औसतन एक लाख लोगों को एक वर्ष में 100 दिन का काम दे सकेगा । आगे चल कर, योजना के अन्तिम वर्ष में, इस कार्यक्रम

से 25 लाख लोगों को काम मिल सकेगा। पांच वर्ष की अवधि में इस कार्यक्रम पर कुल खर्च करीब 150 करोड़ रु० का बैठेगा।

42. योजना के विभिन्न कार्यक्रमों में जनता का सक्रिय सहयोग प्राप्त करने के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं के जरिए विशेष प्रयत्न किया जाएगा। इन संस्थाओं को इस बात के लिए उत्साहित करना होगा कि वे केवल सामाजिक कल्याण पर जोर देने के स्थान पर निर्माण-कार्य-जैसी सामाजिक-आर्थिक गतिविधियों पर ज़ोर दें। लोककार्य-क्षेत्र-कार्यक्रम के जरिए इन संस्थाओं को इस बात के लिए सुविधाएं दी जाएंगी कि वे ग्रामीण क्षेत्रों में कल्याणमूलक और उत्पादनमूलक, दोनों प्रकार के कार्यक्रमों में प्रभावशाली ढंग से हिस्सा ले सकें।

43. देश की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए, तीसरी योजना में शामिल किए गए लक्ष्य किसी भी प्रकार ऊंचे नहीं हैं, बल्कि निश्चित रूप से अपर्याप्त है। इसलिए इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि उपलब्ध साधनों का मितव्ययितापूर्वक उपयोग करके, अतिरिक्त साधनों की खोज करके और कार्यकुशलता बढ़ा कर इन लक्ष्यों को प्राप्त किया जाए। तीसरी योजना को कार्यान्वित करते समय केन्द्रीय सरकार और राज्य-सरकारें इस दिशा में निरन्तर प्रयत्नशील रहेंगी और इस क्रम में परियोजनाओं के विशुद्ध सन्तुलन और सोपानीकरण तथा खर्च पर पूरा-पूरा ध्यान देने की ज़रूरत होगी। यह सम्भव है कि पूरे प्रयत्न के बावजूद कुछ परियोजनाएं चौथी योजना में चली जाएं, पर इस बात का पूरा ध्यान रखना होगा कि ऐसी परियोजनाएं, जो राष्ट्रीय आय के निश्चित लक्ष्य तक पहुंचने के लिए आवश्यक हैं और अर्थव्यवस्था के उन क्षेत्रों के लिए आवश्यक है, जिन्हें सुदृढ़ करने से अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर और आत्मचालित होगी, उन्हें अवश्य ही समय पर पूरा कर दिया जाए।

राष्ट्रीय आय

44. यह अनुमान लगाया गया है कि योजना में शामिल किए गए सभी कार्यक्रम यदि समय पर पूरे हो जाएं, तो राष्ट्रीय आय में (सन् 1960-61 की कीमतों के आधार पर) करीब 34 प्रतिशत की वृद्धि होगी। कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों का विशुद्ध उत्पादन करीब 25 प्रतिशत बढ़ जाएगा, खानों और कारखानों का उत्पादन करीब 82 प्रतिशत बढ़ेगा और अन्य क्षेत्रों का उत्पादन करीब 32 प्रतिशत बढ़ेगा। कृषि, खानों और कारखानों-सम्बन्धी ये अनुमान अधिकतर योजना में मिश्रित उत्पादन के लक्ष्यों पर आधारित हैं। परन्तु अन्य क्षेत्रों के मामले में अप्रत्यक्ष अनुमान लगा सकना ही सम्भव है और कई मामलों में मूलभूत तथ्य सर्वथा अपर्याप्त हैं। राष्ट्रीय आय में अनुमानित 34 प्रतिशत की वृद्धि प्राप्त करने के लिए, जैसा कि ऊपर कहा गया है, कई कठोर शर्ते पूरी करनी होंगी। इनमें से एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण शर्त का सम्बन्ध इस अवधि में किए जानेवाले कुल पूजी-विनियोग से है। जैसा कि इस अध्याय के अनुबन्ध 2 में संकेत किया गया है, तीसरी योजना में जो भौतिक कार्यक्रम शामिल किए गए हैं—विशेषत: उद्योग और परिवहन के अन्तर्गत—उनके लिए योजना में अभी जितने वित्त और साधनों की व्यवस्था की गई है, उससे कहीं अधिक पूंजी-विनियोग की ज़रूरत पड़ेगी। साधनों के संग्रह में ज़्यादा प्रयत्न करने से, जैसा कि निश्चित किया गया है, यह आशा की जाती है कि यह अभाव की खाई कम हो जाएगी और सम्भव है कि पूरी तरह पट भी जाए। फिर भी, मौजूदा अनुमान पर और पहले कही गई बातों

को दृष्टि में रखते हुए, यह समझा जाता है कि तीसरी योजना की अवधि में राष्ट्रीय आय कम-से-कम 30 प्रतिशत बढ़ेगी। यह राशि जो दूसरी योजना के अन्त में (सन् 1960-61 की कीमतों के आधार पर) 14,500 करोड़ रु० थी, तीसरी योजना के अन्त तक करीब 19,000 करोड़ रु० हो जाएगी। आबादी के वर्तमान अनुमानों के आधार पर, प्रति व्यक्ति आय सन् 1960-61 के 330 रु० से बढ़ कर तीसरी योजना के अन्त में करीब 385 रु० हो जाएगी।

अनुबन्ध 1

उत्पादन और विकास—प्रगति और लक्ष्य

शीर्षक	इकाई	1950-51	1955-56	1960-61 (अनुमानित)	1965-66 (लक्ष्य)	1950-51 की अपेक्षा 1960-61 में हुई प्रतिशत वृद्धि	1960-61 की अपेक्षा 1965-66 में होने-वाली प्रतिशत वृद्धि
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
1. कृषि और सामुदायिक विकास							
1 1 कृषि-उत्पादन							
खाद्यान्न	लाख टन	522(क)	658 (क)	760	1,000	46	32
कपास	लाख गाठे	29	40	51	70	76	37
गन्ना-गुड़	लाख टन	56	60	80	100	43	25
तेलहन	लाख टन	51	56	71	98	39	38
पटसन	लाख गाठे	33	42	40	62(ख)	21	55

(क) उत्पादन के अनुमानों में सन् 1956-57 तक एकत्र नए आंकड़ों और आंकड़े एकत्र करने की विधि में परिवर्तन के अनुसार संशोधन कर दिया गया है।

(ख) इसमें मेस्टा शामिल नहीं है, जिससे तीसरी योजना की अवधि में 13 लाख अतिरिक्त गांठें मिल सकती हैं।

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
चाय	लाख पौंड	6,130	6,780	7,250	9,000	18	24
तम्बाकू	हज़ार टन	257	298	300	325	17	8
मछली	लाख टन	7	10	14	18	100	29
दूध	लाख टन	171	193	220	253	29	15
ऊन	लाख पौंड	600	650	720	900	20	25
1.2 कृषि-सेवाएं							
सिंचित क्षेत्र विशुद्ध योग	लाख एकड़	515	562	700	900	36	29
भूमि का उद्धार (अतिरिक्त क्षेत्र) (ग)	लाख एकड़	—	27	12	36	—	200
भूमि-संरक्षण (लाभान्वित अतिरिक्त भूमि) (ग)	लाख एकड़	—	7	20	110	—	450
नत्रजनयुक्त उर्वरकों की खपत	हज़ार टन नत्रजन	55	105	230	1,000	318	335
फास्फेटयुक्त उर्वरकों की खपत	हज़ार टन पी$_2$ ओ$_5$	7	13	70	400	900	471
बीजों के फार्म (ग)	संख्या	—	—	4,000	4,800	—	20
1.3 सामुदायिक विकास							
खंड	संख्या	—	1,069	3,110	5,223	—	68
सेवित गांव	हज़ार (संख्या)	—	106	368	550	—	49
सेवित जनता	लाख (संख्या)	—	690	2,040	3,590	—	76
1.4 सहकारिता							
प्राथमिक कृषि-ऋण-समितियां	हज़ार (संख्या)	105	160	210	230	100	10

दिए गए अल्प और मध्यमकालीन ऋण	करोड़ रु०	22.9	49.6	200	530	773	165
2. बिजली							
2.1 बिजली							
स्थापित क्षमता	लाख किलो-वाट	23 (घ)	34 (घ)	57	127	148	123
उत्पादित बिजली	करोड़ किलो-वाट घंटे	657.5 (घ)	1,077.7 (घ)	1,985	4,500	202	127
2.2 बिजलीवाले गांव और कस्बे	हज़ार (संख्या)	3.7	7.4	23	43	523	87
3. खनिज पदार्थ							
खनिज लोहा	लाख टन	32	43	107	300	234	180
कोयला	लाख टन	323	384	546	970	69	76
4. बड़े उद्योग							
4.1 धातु-शोधन-उद्योग							
इस्पात की सिल्लियां	लाख टन	14	17	35	92	150	163
तैयार इस्पात	लाख टन	10	13	22	68	120	209
कच्चा लोहा (बिक्री के लिए)	लाख टन	3.5	3.8	9	15	157	67
मिश्र धातु, औज़ार और विशेष इस्पात (तैयार)	हज़ार टन	—	—	40	200	—	400

(ग) पांच वर्ष की अवधि से सम्बद्ध

(घ) कैलेंडर-वर्ष से सम्बद्ध

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
अल्युमीनियम	हज़ार टन	3.7	7.3	18.5	80	400	332
तांबा (अग्नि-शोधित और बिजली में प्रयुक्त)	हज़ार टन	6.6	7.5	8.9	20	35	125
4.2 मैकैनिकल और इलेक्ट्रिकल इंजीनियरी उद्योग							
सीमेंट की मशीनें	मूल्य लाख रु० में	—	34 (घ)	60	450	—	650
चीनी की मशीनें	मूल्य लाख रु० में	—	19	330	1,000	—	203
औद्योगिक बायलर	मूल्य लाख रु० में	—	—	40	2,500	—	6,150
मशीनी औज़ार (वर्गीकृत)	मूल्य लाख रु० में	34	78	550	3,000	1,518	445
बाल और रोलर बियरिंग	लाख (संख्या)	1	9	29	140 (ङ)	2,800	383
डीज़ल इंजिन (स्थिर)	हज़ार (संख्या)	5.5	10	40	66	627	65
ट्रैक्टर	संख्या	—	—	2,000	10,000	—	400
बिजली की मोटरें (200 अश्व-शक्ति और नीचे)	हज़ार अश्व-शक्ति	100	272	700	2,500 (च)	600	257

बिजली के ट्रांसफार्मर (33 किलोवाट और नीचे)	हज़ार किलोवाट	179	625	1,200	3,500	570	192
बिजली के तार (ए० सी० एस० आर०) कंडक्टर	हज़ार टन	1.7	8.7	22	44	1,194	100
4.3 रेलवे-इंजिन							
वाष्पचालित	संख्या	7	179	295	1,175 (ग)	3,214	—
डीज़लचालित	संख्या	—	—	—	434 (ग)	—	—
बिजलीचालित	संख्या	—	—	—	232 (ग)	—	—
4.4 रबर-उत्पादन							
मोटरगाड़ियों के टायर	लाख (संख्या)	—	9	13.5	30	—	122
बाइसिकिलों के टायर	लाख (संख्या)	—	58	110	310	—	182

(ग) पांच वर्ष की अवधि से सम्बद्ध
(घ) कैलेंडर-वर्ष से सम्बद्ध
(ङ) तीन पालियों में पूरा काम करने से सम्बद्ध
(च) 300 अश्व-शक्ति और नीचे

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
4.5 रसायन							
नत्रजनयुक्त उर्वरक	हज़ार टन नत्रजन	9	79	110	800	1,122	627
फास्फेटयुक्त उर्वरक	हज़ार टन पी$_2$ ओ$_5$	9	12	55	400	511	627
गन्धक-अम्ल	हज़ार टन	99	164	363	1,500	267	313
सोडा ऐश	हज़ार टन	45	81	145	450	222	210
कास्टिक सोडा	हज़ार टन	11	35	100	340	809	240
सल्फा-औषध	टन	—	83 (घ)	150	1,000	—	567
डी० डी० टी०	टन	—	284	2,800	2,800	—	—
रंजक	लाख पौंड	—	40	115	180	—	57
4.6 अन्य उद्योग							
सिलाई की मशीनें (केवल संगठित क्षेत्र)	हज़ार (संख्या)	33	111	297	700	800	136
बाइसिकिलें (केवल संगठित क्षेत्र)	हज़ार (संख्या)	101	513	1,050	2,000	940	90
मोटर-साइकिल और स्कूटर	हज़ार (संख्या)	—	1.5	18	50	—	178
मोटरगाड़ियां	हज़ार (संख्या)	16.5	25.3	53.5	100	224	67

जहाज़निर्माण	हज़ार ग्रौस रजिस्टर्ड टन	—	50 (ग)	20	50–60	—	150–200
सूती वस्त्र (मिल के बने)	करोड़ गज़	372	510.2	512.7	580	38	13
रेयन फिलामेंट	लाख पौंड	4	160	470	1,400	11,650	198
चीनी (छ)	लाख टन	11.2	18.6	30	35	168	17
इस्पात का इमारती सामान	हज़ार टन	—	90	150	1,000	—	567
सीमेंट	लाख टन	27	46	85	130	215	53
पेट्रोलियम के उत्पादन	लाख टन	—	36	57	99	—	74
कागज़ ग्रौर गत्ता	हज़ार टन	114	187	350	700	207	100
प्लास्टिक	हज़ार टन	—	0.7	10	74	—	640
शीशा ग्रौर शीशे का सामान	हज़ार टन	92	125	225	440	145	96
ग्रौद्योगिक गैसें-ग्राक्सीजन	लाख सी० एफ० टी०	—	—	7,000	16,500	—	136
5. ग्राम ग्रौर लघु उद्योग							
खादी परम्परागत	लाख गज़	73	289	480		558	
ग्रम्बर	लाख गज़	—	—	260	35,000	—	49
हथकरघा	लाख गज़	7,420	14,710	19,000		1,560	
बिजली का करघा	लाख गज़	1,480 (घ)	2,730 (घ)	3,750		1,530	
रेशम	लाख पौंड	25 (ज)	32 (घ)	36 (घ)	50	44	43

(ग) पांच वर्ष की ग्रवधि से सम्बद्ध

(घ) कैलेंडर-वर्ष से सम्बद्ध

(छ) फसल-वर्ष, नवम्बर-ग्रक्तूबर, से सम्बद्ध

(ज) कैलेंडर-वर्ष 1951 से सम्बद्ध

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
6. परिवहन और संचार-साधन							
6.1 परिवहन-सेवाएं							
रेलवे : माल ढोया गया	लाख टन	915	1,140	1,540	2,450	68	59
पक्की सड़कें: राष्ट्रीय राजपथ-सहित	हज़ार मील	97.5	122	144	169	48	17
सड़क-परिवहन : चालू व्यावसायिक गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	116	166	210	365	81	74
जहाज़रानी	लाख ग्रौस रजिस्टर्ड टन	3.9	4.8	9	10.9	130	21
प्रमुख बन्दरगाह : माल चढ़ाने-उतारने की क्षमता	लाख टन	200	250	370	490	85	32
6.2 संचार-साधन							
डाकघर	हज़ार (संख्या)	36	55	77	94	114	22
तारघर	हज़ार (संख्या)	3.6	5.1	6.5	8.5	81	31
टेलीफोन	हज़ार (संख्या)	168	280	460	660	174	43
7. शिक्षा							
7.1 सामान्य शिक्षा विद्यालयों में छात्र	लाख (संख्या)	235	313	435	639	85	47

विद्यालय जानेवाले छात्रों का प्रतिशत : विभिन्न वय-वर्गों में							
प्राथमिक-स्तर	6–11 वर्ष	42.6	52.9	61.1	76.4	79 (झ)	45(झ)
माध्यमिक-स्तर	11–14 वर्ष	12.7	16.5	22.8	28.6	102 (झ)	55(झ)
उच्चतर माध्यमिक-स्तर	14–17 वर्ष	5.3	7.8	11.5	15.6	139 (झ)	57(झ)
शिक्षण-संस्थाएं							
प्राथमिक/जूनियर बुनियादी विद्यालय	हज़ार (संख्या)	209.7	278.1	342	415	63	21
माध्यमिक/सीनियर बुनियादी विद्यालय	हज़ार (संख्या)	13.6	21.7	39.6	57.7	191	46
उच्च/उच्चतर माध्यमिक विद्यालय	हज़ार (संख्या)	7.3	10.8	16.6	21.8	128	31
बहूद्देश्यीय विद्यालय	हज़ार (संख्या)	—	0.3	2.1	2.4	—	14
7.2 तकनीकी शिक्षा							
इंजीनियरी और टेक्नोलाजी							
डिग्री-स्तर (प्रवेश)	संख्या	4,120	5,890	13,858	19,137	236	38
डिप्लोमा-स्तर (प्रवेश)	संख्या	5,900	10,480	25,570	37,390	333	64
कृषि-कालेज (प्रवेश)	संख्या	1,060(ञ)	1,989	4,600	6,200	334	35
पशु-चिकित्सा-कालेज (प्रवेश)	संख्या	434	1,269	1,300	1,460	200	12

(झ) रजिस्टर में दर्ज संख्याओं के आधार पर

(ञ) सन् 1951-52 से सम्बद्ध

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
8. स्वास्थ्य							
8.1. संस्थाएं							
अस्पताल और औषधालय	हज़ार (संख्या)	8.6	10	12.6	14.6	47	16
अस्पताल—शय्याएं	हज़ार (संख्या)	113	125	186	240	65	29
प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयां	संख्या	—	725	2,800	5,000	—	79
परिवार-आयोजन-केन्द्र	संख्या	—	147	1,649	8,200	—	397
8.2 कर्मचारीगण							
मेडिकल कालेज (प्रवेश)	संख्या	2,500	3,500	5,800	8,000	132	38
डाक्टर	हज़ार (संख्या)	56	65	70	81	25	16
नर्सें (ट)	हज़ार (संख्या)	15	18.5	27	45	80	67
सहायक नर्स-मिडवाइफें और मिड-वाइफें (ट)	हज़ार (संख्या)	8	12.8	19.9	48.5	149	144
नर्स-दाइयां और दाइयां (ट)	हज़ार (संख्या)	1.8	6.4	11.5	40	539	248
स्वास्थ्य-सहायक और सफाई-निरीक्षक	हज़ार (संख्या)	3.5	4	6	19.2	71	220

(ट) प्रैक्टिस करते हुए अथवा सेवा करते हुए

अनुबन्ध 2

दूसरी योजना का व्यय और तीसरी योजना के भौतिक कार्यक्रमों की लागत—शीर्षकवार अनुमान

(लाख रु०)

विकास का शीर्षक	दूसरी योजना का अनुमानित व्यय					तीसरी योजना के कार्यक्रमों की अनुमानित लागत				
	राज्य	संघीय क्षेत्र	राज्य और संघीय क्षेत्र	केन्द्र	योग	राज्य	संघीय क्षेत्र	राज्य और संघीय क्षेत्र	केन्द्र	योग
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)
कृषि-उत्पादन	8,367	268	8,635	1,075	9,810	18,351	598	18,949	3,658	22,607
छोटी सिचाई	9,166	98	9,264	230	9,494	17,269	177	17,446	230	17,676
भूमि-संरक्षण	1,553	8	1,561	200	1,761	5,732	246	5,978	1,295	7,273
पशुपालन	1,869	73	1,942	200	2,142	4,592	172	4,764	680	5,444
दूध-व्यवसाय और दूध-आपूर्ति	958	3	961	244	1,205	3,086	24	3,110	498	3,608
जंगल	1,656	122	1,778	150	1,928	4,204	268	4,472	667	5,139
मछलीपालन	710	26	736	170	906	2,090	102	2,192	672	2,864
गोदाम, क्रय-विक्रय और भांडारण	310	18	328	170	498	843	10	853	3,300	4,153
(1) **कृषि-सम्बन्धी कार्यक्रम**	24,589	616	25,205	2,439	27,644	56,167	1,597	57,764	11,000	68,764
सहकारिता	3,278	55	3,333	50	3,383	6,959	151	7,110	900	8,010
सामुदायिक विकास	18,744	463	19,207	200	19,407	28,189	578	28,767	600	29,367

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)
पंचायतें	460	30	490	1,976 (क)	2,466	2,824	56	2,880	—	2,880
(2) सामुदायिक विकास और सहकारिता	22,482	548	23,030	2,226	25,256	37,972	785	38,757	1,500	40,257
सिंचाई	34,479	21	34,500	2,717	37,217	58,121	10	58,131	1,803	59,934
बाढ़-नियन्त्रण	(ख)	(ख)	(ख)	4,800	4,800	5,995	137	6,132	—	6,132
बिजली	41,882	914	42,796	1,753	44,549	88,315	2,345	90,660	11,312	1,01,972 (ग)
(3) सिंचाई और बिजली	76,361	935	77,296	9,270	86,566	1,52,431	2,492	1,54,923	13,115	1,68,038
उद्योग और खनिज पदार्थ	2,859	2	2,861	87,128	89,989	7,958	32	7,990	1,80,240	1,88,230
ग्राम और लघु उद्योग	6,949	294	7,243	10,323	17,566	13,703	425	14,128	12,300	26,428
(4) उद्योग और खनिज पदार्थ	9,808	296	10,104	97,451	1,07,555	21,661	457	22,118	1,92,540	2,14,658
रेलवे	—	—	—	86,011	86,011	—	—	—	94,000	94,000
सड़कें	14,326	1,598	15,924	6,440	22,364	21,830	2,575	24,405	8,000	32,405
सड़क-परिवहन	1,502	91	1,593	225	1,818	2,044	559	2,603	—	2,603
पर्यटन	144	13	157	60	217	394	22	416	350	766
बन्दरगाह	314	45	359	2,980	3,339	490	18	508	12,500	13,008

जहाज़रानी	—	—	—	5,268	5,268	—	263(घ)	263	5,500	5,763
डाक और तार	—	—	—	5,059	5,059	—	—	—	7,900	7,900
असैनिक विमान-सेवा	—	—	—	4,900	4,900	—	—	—	5,500	5,500
प्रसारण	—	—	—	468	468	—	—	—	1,100	1,100
अन्य परिवहन	52	99	151	53	204	273	25	298	1,200	1,498
अन्य संचार-साधन	—	—	—	327	327	—	—	—	930	930
(5) **परिवहन और संचार-साधन**	16,338	1,846	18,184	1,11,791	1,29,975	25,031	3,462	28,493	1,36,980	1,65,473
सामान्य शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रम	16,011	721	16,732	4,072	20,804	31,906	2,104	34,010	7,800	41,810
तकनीकी शिक्षा	2,141	31	2,172	2,600	4,772	6,986	173	7,159	7,000	14,159
वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान	—	—	—	—	—	—	—	—	7,000	7,000
स्वास्थ्य	13,021	566	13,587	8,047	21,634	27,114	2,566	29,680	4,500	34,180
आवास	6,411	266	6,677	1,356	8,033	9,620	2,076	11,696	2,500	14,196
पिछड़े वर्गों का कल्याण	5,080	214	5,294	2,647	7,941	7,498	389	7,887	3,500	11,387

(क) स्थानीय विकास-कार्यों का खर्च शामिल है।

(ख) दूसरी योजना में बाढ़-नियन्त्रण का व्यय केन्द्र के अन्तर्गत दिखाया गया है।

(ग) इसमें दामोदर-घाटी-निगम के बिजली-कार्यक्रम और बण्डील तापीय केन्द्र की आंशिक व्यवस्था शामिल है।

(घ) अंडमान और निकोबार-द्वीपसमह के लिए

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)
सामाजिक कल्याण	327	10	337	1,181	1,518	1,048	114	1,162	1,600	2,762
श्रमिक और श्रमिक-कल्याण	769	12	781	1,200	1,981	2,519	189	2,708	4,400	7,108
पुनर्वास	—	—	—	6,341	6,341	—	—	—	4,000	4,000
जन-सहयोग और स्थानीय कार्य	—	—	—	—	—	34 (ङ)	—	34	5,000	5,034
(6) **सामाजिक सेवाएं**	43,760	1,820	45,580	27,444	73,024	86,725	7,611	94,336	47,300	1,41,636
सांख्यिकी और अनुसन्धान	403	7	410			322	27	349	500	849
सूचना और प्रचार	276	21	297			562	58	620	600	1,220
स्थानीय संस्थाएं	415	44	459	5,086(च)	9,980	310	65	375	—	375
राज्यों की राजधानी-सम्बन्धी परियोजनाएं	3,196	—	3,196			2,475	—	2,475	—	2,475
अन्य	507	25	532			1,075	933	2,008	4,100	6,108

तालिका-संख्या 3

दूसरी और तीसरी योजनाओं में पूंजी-विनियोग

(करोड़ रु०)

मदें	दूसरी योजना				तीसरी योजना			
	सरकारी	निजी	योग	प्रतिशत	सरकारी	निजी	योग	प्रतिशत
कृषि और सामुदायिक विकास	210	625	835	12	660	800	1,460	14
बड़ी और मध्यम सिंचाई-परियोजनाएं	420	*	420	6	650	*	650	6
बिजली	445	40	485	7	1,012	50	1,062	10
ग्राम और लघु उद्योग	90	175	265	4	150	275	425	4
संगठित उद्योग और खनिज पदार्थ	870	675	1,545	23	1,520	1,050	2,570	25
परिवहन और संचार-साधन	1,275	135	1,410	21	1,486	250	1,736	17
सामाजिक सेवाएं और विविध	340	950	1,290	19	622	1,075	1,697	16
इन्वेण्टरिया	—	500	500	8	200	600	800	8
योग	3,650	3,100†	6,750	100	6,300	4,100†	10,400	100

*कृषि और सामुदायिक विकास के अन्तर्गत सम्मिलित

†सरकारी से निजी क्षेत्र में दी गई रकम को छोड़कर

अनुबन्ध 2 में इस विषय में पूरे ब्यौरे दिए गए हैं। राज्यों और केन्द्र के बीच जो व्यवस्था की गई है, उसका आधार यह है कि सामान्यतः राज्य-सरकारों-द्वारा जिन विकास-योजनाओं का कार्यान्वियन होना है, वे राज्य-योजना का अंग मानी जाएंगी और योजनाओं की कुछ सीमित श्रेणियां ही ऐसी होंगी, जो केन्द्रीय मन्त्रालयों की योजनाओं में केन्द्रीय सरकार-द्वारा प्रेरित मानी जाएंगी। इस प्रकार, राज्यों की योजनाओं के क्षेत्र को अधिक विस्तृत करने का प्रयत्न किया गया है और उनके विकास-कार्यक्रमों के संगठित कार्यान्वियन को सुविधापूर्ण बनाया गया है।

12. प्रत्येक राज्य की योजना निश्चित करते समय उसकी आवश्यकताओं, समस्याओं, अब तक की प्रगति और विकास के मार्ग में आनेवाली रुकावटों, प्रमुख राष्ट्रीय लक्ष्यों की उपलब्धि में उसका सम्भावित अंशदान, विकास की शक्ति और अपने विकास-कार्यक्रमों में राज्य-द्वारा प्रस्तुत किए जा सकनेवाले साधनों का ध्यान रखा जाता है। आवश्यकताओं और समस्याओं का मूल्यांकन करते समय इन-जैसी बातों को ध्यान में रखा गया : आबादी, क्षेत्र, आय और व्यय के स्तर, कुछ खास प्रकार की सेवाओं की प्राप्ति—जैसे, सड़कें, स्कूल और अस्पताल, दूसरी योजना में वचनबद्ध कार्यक्रम या विशेष कार्यक्रम, और तकनीकी तथा प्रशासकीय सेवाएं कहां तक प्राप्त हो सकती हैं। इस बात का भी खास ध्यान रखा गया कि ऐसे राज्य, जिनके साधन अनिवार्यतः कम हैं, अपनी विकास-योजनाओं को इतना सीमित न कर दें कि वे एकदम अपर्याप्त हो जाएं—वह भी केवल इस कारण से कि उनके साधन कम हैं। इसके साथ ही, जो राज्य अपने साधनों का संग्रह करने में अधिक परिश्रम कर सकते हैं, उन्हें बड़े पैमाने पर विकास-कार्य हाथ में लेने होंगे। राज्यों और संघीय क्षेत्रों की योजनाओं में 4,022 करोड़ रु० के जो कार्यक्रम रखे गए हैं, उनका राज्यवार ब्यौरा तथा पहली और दूसरी योजनाओं की राज्यवार तुलनात्मक संख्या इस अध्याय के अनुबन्ध 3 में दी गई हैं। राज्यों और विकास की मदों के सन्दर्भ में विस्तृत ब्यौरा इस रिपोर्ट के अन्त में परिशिष्ट 'ख' में दिया गया है।

13. भौतिक कार्यक्रमों और वित्तीय व्यवस्था की मोटे तौर पर ऊपर जो चर्चा की गई है, उससे यह पता चलता है कि योजना में किस प्रकार सर्वमुखी प्रयत्न किया गया है और इसके विभिन्न निर्धारित क्षेत्रों पर सापेक्ष रूप से कितना ज़ोर दिया गया है। इस सामान्य ढांचे के अन्तर्गत योजना में विकास के कई कार्यक्रम हैं, जिनका विवरण इस रिपोर्ट के अगले अध्यायों में दिया गया है। फिर भी, परवर्ती पैराग्राफों में इन कार्यक्रमों का एक संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

कृषि

14. कृषि, सिंचाई और सामुदायिक विकास के लिए जो कार्यक्रम तीसरी योजना में शामिल किए गए हैं, उन पर कुल व्यय 1,718 करोड़ रु० का बैठेगा, जब कि दूसरी योजना में इनका अनुमानित व्यय 950 करोड़ रु० था। इन कार्यक्रमों का लक्ष्य यह है कि आगामी पांच वर्षों में कृषि-उत्पादन में वृद्धि की गति लगभग दुगुनी हो जाए। खाद्यान्नों का उत्पादन 30 प्रतिशत और अन्य फसलों का उत्पादन 31 प्रतिशत बढ़ने की आशा है, जैसा कि अगली तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका-संख्या 4

कृषि-उत्पादन का सूचनांक

(1949-50 = 100)

फसलें	1960-61	1965-66	1960-61 की अपेक्षा 1965-66 में प्रतिशत वृद्धि
सब फसलें	135	176	30
खाद्यान्न	132	171	30
अन्य फसलें	142	186	31

15. वृद्धि की इस ऊंची गति को प्राप्त करने के लिए कई दिशाओं में सघन प्रयत्न किए जाने की आवश्यकता है। प्रथमतः, सिंचाई के विस्तृत कार्यक्रम—जिनमें बड़ी, मध्यम और छोटी सिंचाई-योजनाएं भी शामिल होंगी—हाथ में लिए जाएंगे। इससे करीब 2 करोड़ एकड़ ज़मीन में सिंचाई का विस्तार हो जाएगा, जिससे शुद्ध सिंचित क्षेत्र करीब 9 करोड़ एकड़ हो जाएगा। दूसरी बात, करीब 2 करोड़ 20 लाख एकड़ ज़मीन में शुष्क खेती की तकनीकें काम में लाई जाएंगी और 1 करोड़ 10 लाख एकड़ जमीन में भूमि-संरक्षण का काम किया जाएगा। तीसरे, उर्वरकों की खपत बढ़ानी पड़ेगी—नत्रजनयुक्त उर्वरकों की खपत में पांच-गुनी वृद्धि का लक्ष्य है, यानी इसे 2,30,000 टन (नत्रजन की मात्रा) से बढ़ा कर 10 लाख टन करना है; इसी तरह, फास्फेटयुक्त उर्वरकों की खपत में 6-गुनी वृद्धि होनी है, अर्थात् यह परिमाण 70,000 टन (पी$_2$ ओ$_5$ की मात्रा) से बढ़ा कर 4,00,000 टन करना है। हरी खाद के अन्तर्गत क्षेत्र 118 लाख एकड़ से बढ़ा कर 410 लाख एकड़ किया जाएगा। 5 करोड़ एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र में पौधों की रक्षा के उपाय करने होंगे। चौथी बात, सुधरे हुए कृषि-उपकरणों और मशीनों के एक बड़े कार्यक्रम के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में आधुनिक टेक्नोलाजी काम में लाने के लिए विशेष प्रयत्न करना होगा। कृषि-उपकरणों का एक विशाल कार्यक्रम बनाया गया है, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक राज्य में एक केन्द्र कायम किया जाएगा, जहां सुधरे हुए ढंग के उपकरण बनाने, उनकी जांच करने, डिज़ाइन तैयार करने और तकनीकी परामर्श देने की व्यवस्था होगी; निर्माताओं को काफी मात्रा में लोहा और इस्पात देने का इन्तज़ाम होगा; सुधरे हुए उपकरणों की आपूर्ति, खरीद और उत्पादन के लिए ऋण देने की व्यवस्था होगी और राज्यों में कृषि-इंजीनियरी-सम्बन्धी कर्मचारी-मण्डल को मज़बूत किया जाएगा। पांचवीं बात, सामुदायिक विकास-कार्यक्रम का अक्तूबर 1963 तक देश के सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्र में विस्तार हो जाएगा। इस प्रकार, तकनीकी सहायता और सामान तक देश के सभी किसानों की पहुंच हो जाएगी। सब गांवों में पंचायतें और सहकारी समितियां स्थापित हो जाएंगी। ज़िला और खण्ड-स्तरों पर लोकतान्त्रिक संस्थाओं की स्थापना से सभी क्षेत्रों की जनता पर विकास का दायित्व और पहल का भार पड़ेगा। आशा की जाती है कि सेवा-सहकारी समितियों की सदस्य-संख्या बढ़ कर लगभग 3 करोड़ 70 लाख हो जाएगी, अर्थात् समस्त कृषि-परिवारों का लगभग दो-तिहाई भाग इनके अन्तर्गत आ जाएगा। सहकारी

ऋण के काफी विस्तार का लक्ष्य है—अल्प और मध्यमकालीन अग्रिम धन के सम्बन्ध में यह लक्ष्य करीब 530 करोड़ रु० का और दीर्घकालीन ऋण का लक्ष्य 150 करोड़ रु० (आशोधित ऋण) का है। सहकारी क्रय-विक्रय-समितियों की संख्या 1,869 से बढ़ा कर 2,470 की जाएगी। मंडियों में करीब 980 नए भाण्डारण-गोदाम बनाए जाएंगे और सहकारिता के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों में 9,200 छोटे गोदामों का निर्माण किया जाएगा। 25 नए सहकारी चीनी-कारखाने कायम किए जाएंगे और चावल, कपास, पटसन, मूंगफली, फल, इत्यादि के लिए सहकारी आधार पर विधायन-इकाइयां स्थापित करने की ओर अधिक ध्यान दिया जाएगा। 2,200 प्राथमिक उपभोक्ता-भाण्डार और सहकारिता के आधार पर 50 थोक भाण्डार कायम करने का भी कार्यक्रम है। सहकारी कृषि को लोकप्रिय बनाने की दिशा में प्रयत्न जारी रहेंगे और सारे देश में अग्रगामी परीक्षण के तौर पर 3,200 सहकारी फार्म संगठित किए जाएंगे। छठी बात, कुछ चुने हुए ज़िलों को, जहां खास तौर पर सिंचाई की पर्याप्त सुविधाएं हैं और निश्चित रूप से वर्षा होती है, सघन कृषि-विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत लाया जाएगा, ताकि कृषि-उत्पादन बढ़ सके। आरम्भ में, प्रत्येक राज्य में इस प्रकार का एक ज़िला चुना गया है। यह महत्वपूर्ण नया कार्यक्रम इन क्षेत्रों में तकनीकी सहायता, उर्वरक, सुधरी हुई ऋण-व्यवस्था और अन्य वस्तुएं ग्राम-पंचायतों तथा सहकारी समितियों के माध्यम से सभी किसानों तक पहुंचाएगा। इससे उत्पादन और क्रय-विक्रय-योग्य फालतू खाद्यान्न, दोनों की वृद्धि में सहायता मिलेगी।

16. इन विभिन्न कार्रवाइयों के परिणामस्वरूप यह आशा की जाती है कि मुख्य फसलों का उत्पादन बढ़ जाएगा, जैसा कि निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है :

तालिका-संख्या 5

प्रमुख फसलों का उत्पादन

फसल	इकाई	1960-61	1965-66	1960-61 की अपेक्षा 1965-66 में प्रतिशत वृद्धि
खाद्यान्न	लाख टन	760	1,000	32
तेलहन	लाख टन	71	98	38
गन्ना*	लाख टन	80	100	25
कपास	लाख गांठें	51	70	37
पटसन	लाख गांठें	40	62†	55

इस वृद्धि का एक बड़ा भाग प्रति एकड़ उपज में सुधार के ज़रिए मिलने की आशा है। उदाहरण के लिए, यह आशा की जाती है कि तीसरी योजना की अवधि में चावल की औसत उपज प्रति एकड़ 1,030 पौंड होगी, जबकि दूसरी योजना की अवधि में यह मात्रा 807 पौंड थी।

* खांडसारी या गुड़ के रूप में

† इसमें मेस्टा की फसल शामिल नहीं है, जिसके द्वारा सन् 1965-66 में 13 लाख गांठें प्राप्त होंगी।

17. इन लक्ष्यों की पूर्ति के साथ खाद्यान्नों की आपूर्ति के मामले में अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर हो जाएगी और प्रति व्यक्ति खाद्य-उपलब्धि सन् 1960-61 के 16 औंस प्रति दिन से बढ़ कर सन् 1965-66 में 17.5 औंस प्रति दिन हो जाएगी । कपड़े की खपत प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष सन् 1960-61 के 15.5 गज़ से बढ़कर सन् 1965-66 में 17.2 गज़ हो जाएगी । फल और सब्ज़ियों-जैसे सहायक खाद्यों के उत्पादन पर, जिनके लिए मांग देश में लगातार बढ़ रही है, विशेष ज़ोर दिया जाएगा और यह प्रयत्न किया जाएगा कि लोगों को वर्तमान की अपेक्षा अधिक सन्तुलित भोजन प्राप्त हो । चाय, काफी, रबर, नारियल, सुपारी, तम्बाकू, काली मिर्च, इलायची और लाख-जैसी वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाने के लिए विशेष उपाय किए जाएंगे, क्योंकि विदेशी मुद्रा के अर्जन तथा बचत की दृष्टि से ये बड़ी महत्वपूर्ण हैं ।

18. पशुपालन, दूध-व्यवसाय, मछलीपालन और वन-रक्षा के सुधार के लिए भी तीसरी योजना में बड़े-बड़े कार्यक्रम शामिल किए गए हैं । सघन पशु-विकास के कार्यक्रम के अन्तर्गत पहले से ही स्थापित केन्द्र ग्राम-खंडों में से 55 का विस्तार किया जाएगा और महत्वपूर्ण नस्ल-क्षेत्रों में 38 नए खंड कायम किए जाएंगे । पशु-अस्पतालों और औषधालयों की संख्या 4,000 से बढ़ा कर 8,000 की जाएगी और पशुओं की महामारी का निवारण करने के लिए पहले से ही जो कार्यक्रम हाथ में लिया गया है, उसे पूरा किया जाएगा । ऊन का उत्पादन 7 करोड़ 20 लाख पौंड से बढ़ा कर 9 करोड़ पौंड किया जाएगा । दूध का उत्पादन 2 करोड़ 20 लाख टन से बढ़ा कर 2 करोड़ 50 लाख टन किया जाएगा । एक लाख से ज़्यादा आबादी-वाले 55 शहरों में दूध उपलब्ध करने की नई योजनाएं हाथ में ली जाएंगी । 8 ग्रामीण मक्खन-उत्पादन-केन्द्र, 4 दूध-उत्पादन-कारखाने और 2 पनीर-कारखाने लगाए जाएंगे । मछली का उत्पादन 14 लाख टन से बढ़ा कर 18 लाख टन किया जाएगा, 4,000 मछली पकड़नेवाली नौकाओं में मशीनें लगाई जाएंगी और 35 बड़े पोत देश के मछली पकड़नेवाले बेड़े में जोड़े जाएंगे । जंगलों को विकसित करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा ; 7,00,000 एकड़ क्षेत्र में आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद वृक्ष लगाए जाएंगे; 6,00,000 एकड़ क्षेत्र के उजाड़प्राय जंगलों को फिर तरोताज़ा किया जाएगा और 12,00,000 एकड़ क्षेत्र में ग्राम-वर्ती जंगल लगाए जाएंगे । इस मद में पूंजी-विनियोग करने से पहले सारे देश का सर्वेक्षण इस दृष्टि से किया जाएगा कि इमारती लकड़ी और लुगदी पर आधारित बड़े पैमाने के उद्योगों के विकास की क्षमता देश में कहां तक है ।

उद्योग

19. तीसरी योजना में मूलभूत महत्व का कार्यक्रम उद्योगों के विस्तार से सम्बद्ध है खास तौर पर, पूंजीगत और उत्पादक सामान-उद्योगों के विस्तार से । इसमें मशीन-निर्माण और प्रबन्ध-सम्बन्धी कुशलता, तकनीकी जानकारी और डिज़ाइन-क्षमता पर विशेष ज़ोर दिया गया है । इस कार्यक्रम में सरकारी क्षेत्र को प्रमुख स्थान दिया गया है, पर योजना के ढांचे के भीतर निजी क्षेत्र से भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की जाने की आशा की जाती है । संगठित निर्माण उद्योगों के विशुद्ध उत्पादन में सरकारी क्षेत्र का हिस्सा सन् 1960-61 के एकदशमांश से भी कुछ कम से बढ़ कर सन् 1965-66 में करीब एक-चौथाई हो जाने की आशा है और इसका एक बड़ा अंश पूंजीगत और उत्पादक सामान होगा । उद्योगों और खनिज

पदार्थों के विकास के लिए योजना में 1,882 करोड़ रु० का एक कार्यक्रम है, परन्तु अभी वित्तीय व्यवस्था सरकारी क्षेत्र में 1,520 करोड़ रु० की ही की गई है। इसके अतिरिक्त, आशा की जाती है कि निजी क्षेत्र 1,050 करोड़ रु० की व्यवस्था करेगा। साथ ही, आशा की जाती है कि युद्ध से पूर्व के कुछ उद्योगों के आधुनिकीकरण और पुरानी मशीनों की जगह नई मशीनें लगाने की मद में होनेवाले खर्च को पूरा करने के लिए निजी क्षेत्र लगभग 150 करोड़ रु० की व्यवस्था करेगा।

20. सम्पूर्ण तीसरी योजना में उन उद्योगों के विकास पर जोर दिया गया है, जो अर्थव्यवस्था को आत्मचालित बनाने में सहायक हो सकते हैं—जैसे, इस्पात, मशीन-निर्माण और उत्पादक सामान। योजना में इन सामानों को खरीदने के लिए विदेशी सहायता पर यथाशीघ्र कम-से-कम निर्भर रहने की स्थिति पैदा करने और निर्यात के आधार को विस्तृत करने की प्रेरणा देने पर भी बल दिया गया है। उपभोक्ता-सामान के उत्पादन को भी काफी बढ़ाया जाएगा, मुख्यतः निजी क्षेत्र में आशा की जाती है कि इन सबके फलस्वरूप औद्योगिक उत्पादन में लगभग 70 प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी, पर इस वृद्धि से भी अधिक महत्वपूर्ण बात होगी, लोहा और इस्पात, मशीनों और रसायनों के क्षेत्र में विकास। इसकी एक झांकी निम्नलिखित तालिका से मिल सकती है :

तालिका-संख्या 6

औद्योगिक उत्पादन का सूचनांक*

(1950-51=100)

वर्ग	1960-61	1965-66	1960-61 की अपेक्षा 1965-66 में प्रतिशत वृद्धि
सामान्य सूचनांक	194	329	70
सूती वस्त्र	133	157	18
लोहा और इस्पात	238	637	168
मशीनें (सब तरह की)	503	1,224	143
रसायन	288	720	150

जैसा कि पहले कहा गया है इस सूचनपत्र में कई नए उद्योगों को शामिल नहीं किया गया है और अब इस पर पुनर्विचार किया जा रहा है।

21. तीसरी योजना के सरकारी क्षेत्र में जो बड़ी औद्योगिक परियोजनाएं शामिल की गई हैं, वे धातु-शोधन, औद्योगिक मशीनों, मशीनी औज़ारों, उर्वरकों, बुनियादी रसायनों और अन्तरायकों, आवश्यक औषधों तथा पेट्रोल-शोधन से सम्बद्ध हैं। लोहा और इस्पात के मामले में कुल क्षमता के प्रस्तावित लक्ष्य हैं, 1 करोड़ 2 लाख टन इस्पात की सिल्लियां

***ये सूचनांक वस्तुतः सरकारी सूचनांक ही हैं, सिवाय इसके कि तुलना का आधार सन् 1951 के कैलेंडर-वर्ष से बदल कर सन् 1950-51 का वित्तीय वर्ष कर दिया गया है, ताकि योजनाकाल में हुए विकास को आंकने में सुविधा हो।**

ग्रौर 15 लाख टन कच्चा लोहा । इन लक्ष्यों की पूर्ति 59 लाख टन क्षमता क राउरकेला, भिलाई ग्रौर दुर्गापुर में स्थापित सरकारी इस्पात के कारखानों से होगी । बोकारो में स्थापित किए जा रहे चौथे इस्पात के कारखाने से भी इसमें मदद मिलेगी । निजी क्षेत्र में भी इस्पात-विषयक क्षमता का कुछ विस्तार होगा । इस विस्तार का मुख्य साधन स्क्रैप पर ग्राधारित बिजली की भट्ठियां होंगी, जिनसे पुनरावेष्टन के लिए बिलेटों की ग्रापूर्ति बढ़ जाएगी । ग्राशा की जाती है कि करीब 2,00,000 टन कच्चे लोहे का उत्पादन नीची शैफ्ट की भट्ठियों में होगा, जिन्हें निजी क्षेत्र में विकेन्द्रित ग्राधार पर स्थापित करने का प्रस्ताव है । ग्रौज़ार, मिश्रित धातु, ग्रौर स्टेनलेस इस्पात के उत्पादन को तीसरी योजना में उच्च प्राथमिकता दी गई है ग्रौर यह ग्राशा की जाती है कि 2,00,000 टन उत्पादन का लक्ष्य सन् 1965-66 तक पूरा हो जाएगा । ग्रलौह धातुग्रों के क्षेत्र में, योजना का लक्ष्य 80,000 टन ग्रल्युमीनियम का उत्पादन करने का है ग्रौर देश में पहला जस्ता पिघलानेवाला कारखाना लगाने का है, जिसकी क्षमता 15,000 टन की होगी । तांबे का उत्पादन 8,900 टन से बढ़कर 20,000 टन हो जाने की ग्राशा है ।

22. तीसरी योजना की ग्रवधि की सबसे महत्वपूर्ण बात होगी, मशीन-निर्माण ग्रौर इंजीनियरी-उद्योगों का विकास । मशीन-निर्माण के लिए विशेष रूप से ग्रावश्यक ढलाई-गढ़ाई की क्षमता का तीसरी योजना में, सरकारी क्षेत्र में, बड़े पैमाने पर विकास किया जाएगा । रांची के पास एक भारी मशीनी संयन्त्र लगाया जा रहा है, जिसकी उत्पादन-क्षमता पूर्ण विकास हो जाने पर 80,000 टन की होगी ग्रौर यह प्रति वर्ष 10 लाख टन इस्पात-निर्माण की क्षमतावाले एक कारखाने की स्थापना के लिए ग्रधिकांश ज़रूरी सामान तैयार करेगा । तीन भारी बिजली-उपकरण-परियोजनाग्रों की भी व्यवस्था की गई है, ताकि सन् 1971 के बाद प्रति वर्ष 20 लाख किलोवाट के हिसाब से बिजली-उत्पादन-क्षमता बढ़ाने के लिए पर्याप्त बिजली-सम्बन्धी उपकरण प्राप्त हो सकें । मशीनी ग्रौज़ारों के क्षेत्र में, मौजूदा मशीनी ग्रौज़ार-कारखानों का विस्तार करने ग्रौर सरकारी क्षेत्र में दो नए संयन्त्र स्थापित करने की व्यबस्था है । निजी क्षेत्र में भी, मशीनी ग्रौज़ारों के उत्पादन के पर्याप्त विस्तार की ग्राशा है ग्रौर मशीनी ग्रौज़ार के उत्पादन का लक्ष्य 30 करोड़ रु० रखा गया है । मोटर-गाड़ी-उद्योग में 30,000 सवारी गाड़ियों ग्रौर 60,000 व्यावसायिक गाड़ियों का लक्ष्य रखा गया है ।

23. ग्रकार्बनिक उर्वरकों का उत्पादन नत्रजन के रूप में करीब 1,10,000 टन से बढ़ा कर 8,00,000 टन किया जाएगा । फास्फेटयुक्त उर्वरकों के उत्पादन में भी पर्याप्ति वृद्धि करने का प्रस्ताव है । गन्धक-ग्रम्ल के उत्पादन का लक्ष्य 15 लाख टन ग्रौर कास्टिक सोडा का 3,40,000 टन रखा गया है । कार्बनिक रसायनों, प्लास्टिक, रंजकों ग्रौर ग्रौषधों का भी उत्पादन बढ़ाने की व्यवस्था की गई है । सीमेण्ट के उत्पादन का लक्ष्य 1 करोड़ 30 लाख टन रखा गया है ग्रौर शोधक कच्चे तेल का 1 करोड़ 10 लाख टन । तीसरी योजना में शामिल की गई ग्रन्य महत्वपूर्ण परियोजनाएं हैं : सनतनगर में संश्लेषित ग्रौषध-परियोजना, ऋषिकेश के पास एंटिबायोटिक्स संयन्त्र ग्रौर केरल में फाइटो-केमिकल-परियोजना । उपभोक्ता-सामान उद्योगों के क्षेत्र में, कपड़ा, कागज़, चीनी, खाद्य तेलों, घड़ियों, इत्यादि की उत्पादन-क्षमता काफी बढ़ाने का प्रस्ताव है ।

24. तीसरी योजना के कुछ महत्वपूर्ण औद्योगिक लक्ष्यों की संक्षिप्त सूची नीचे दी जाती है

तालिका-संख्या 7

औद्योगिक उत्पादन के प्रमुख लक्ष्य

वस्तु	इकाई	1960-61	1965-66
इस्पात की सिल्लियां	लाख टन	35	92
अल्युमीनियम	हज़ार टन	18.5	80
डीज़ल इंजिन	हज़ार (संख्या)	40	66
ट्रैक्टर	हज़ार (संख्या)	2	10
बिजली के तार (ए० सी० एस० आर० कंडक्टर)	हज़ार टन	22	44
नत्रजनयुक्त उर्वरक	हज़ार टन नत्रजन	110	800
फास्फेटयुक्त उर्वरक	हज़ार टन पी$_2$ ओ$_5$	55	400
गन्धक-अम्ल	हज़ार टन	363	1,500
कास्टिक सोडा	हज़ार टन	100	340
सीमेंट	लाख टन	85	130
पेट्रोल के उत्पादन	लाख टन	57	99
मशीनी औज़ार (वर्गीकृत)	मूल्य लाख रुपयों में	550	3,000
बाल और रोलर बियरिंग	लाख (संख्या)	29	140
सूती वस्त्र (मिल का बना)	करोड़ गज़	512.7	580
चीनी*	लाख टन	30	35
कागज़ और गत्ता	हज़ार टन	350	700
बाइसिकिलें (केवल संगठित क्षेत्र)	हज़ार (संख्या)	1,050	2,000
सिलाई की मशीनें (केवल संगठित क्षेत्र)	हज़ार (संख्या)	297	700
मोटरगाड़ियां	हज़ार (संख्या)	53.5	100

खनिज पदार्थ

25. तीसरी योजना में उद्योगों के विस्तार पर अधिक ज़ोर दिए जाने के कारण खनिज पदार्थों के विकास का एक सघन कार्यक्रम अपनाने की आवश्यकता है। कुछ खनिज पदार्थ ऐसे भी हैं, जिनकी विदेशों में अच्छी खपत है और विदेशी मुद्रा-अर्जन के क्षेत्र में उनका महत्वपूर्ण स्थान है। बिजली, रेलवे, इस्पात, सीमेंट तथा कुछ अन्य ऐसे उद्योगों के कार्यक्रम को देखते हुए, जिनमें कोयले की बड़ी खपत होती है, तीसरी योजना में कोयले का उत्पादन-लक्ष्य 970 लाख टन रखा गया है। दूसरी योजना के अन्तिम वर्ष के लिए कोयला-उत्पादन का लक्ष्य 600 लाख टन रखा गया था। अब उसमें 370 लाख टन की वृद्धि करके उत्पादन के इस लक्ष्य को पूरा करना होगा। इसके अतिरिक्त 370 लाख टन में से 200 लाख टन सरकारी क्षेत्र

*फसल-वर्ष, नवम्बर-अक्तूबर से सम्बद्ध

से और 170 लाख टन निजी क्षेत्र से आएगा। इस्पात और कच्चे लोहे के लिए प्रस्तावित लक्ष्यों को पूरा करने के हेतु करीब 2 करोड़ टन खनिज लोहे की आवश्यकता पड़ने का अनुमान है। निर्यात के लिए 1 करोड़ टन खनिज लोहे की आवश्यकता पड़ेगी। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए तीसरी योजना में खनिज लोहे की उत्पादन-क्षमता का लक्ष्य 3 करोड़ 20 लाख टन निश्चित किया गया है। बिजली के काम आनेवाले ताबे के वार्षिक 11,500 टन उत्पादन के लिए नई तांबा-खानों की खोज और खुदाई की व्यवस्था की गई है। बिहार में पाइराइट की खानों की खोज, मध्यप्रदेश में हीरे की खानों के विकास, यूरेनियम काटने और उसके विधायन तथा मैंगनीज़, बाक्साइट, जिप्सम और चूने के पत्थर की खानों की सघन खोज के लिए भी इस योजना में व्यवस्था है।

26. देश में खनिज तेल-साधनों की खोज और निकासी के काम को ऊंची प्राथमिकता दी गई है। तेल और प्राकृतिक गैस-आयोग अब बड़े पैमाने पर काम करेगा, ताकि नए सुरक्षित भांडारों का पता लगे और अतिरिक्त उत्पादन की व्यवस्था हो। खोदने का काम देश के अधिकांश आशापूर्ण तलछटवाले क्षेत्रों में किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, सरकार की ओर से विदेशी कम्पनियों को तेल की इस खोज में परस्पर स्वीकार्य शर्तों पर शामिल होने के लिए आमन्त्रित किया गया है। आशा है कि असम-आयल-कम्पनी और भारत-सरकार का संयुक्त उद्यम 'आयल इण्डिया' वार्षिक 27.5 लाख टन कच्चा तेल का उत्पादन करने लगेगा। सन् 1962 में पहली बार सरकार उत्पादक के रूप में तेल-शोधन के क्षेत्र में प्रवेश करेगी। नूनमती और बरौनी के तेल-शोधन-केन्द्रों और गुजरात के परियोजित तेल-शोधन-केन्द्र के पूरा हो जाने पर स्वदेशी तेल-शोध-क्षमता में सरकार का हिस्सा 47 प्रतिशत हो जाएगा।

ग्राम और लघु उद्योग

27. बड़े उद्योगों के साथ-साथ, ग्राम और लघु उद्योगों का भी विकास किया जाएगा, जिससे रोज़गार के अवसर मिलें और उपभोक्ता-सामान तथा कुछ उत्पादक सामान के उत्पादन में वृद्धि हो। लघु उद्योगों के क्षेत्र में पहले ही काफी प्रगति की जा चुकी है। लघु उद्योग आधुनिक टेक्नोलाजी और बिजली के उपयोग के लाभों को बढ़े हुए रोज़गार के अवसरों और छोटे व्यवसायियों तथा सहकारी समितियों के लिए अधिक अवसरों के लाभों को परस्पर जोड़ते हैं। तीसरी योजना में इन उद्योगों की और तेज़ प्रगति होने और कस्बों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में इनके बड़ी मात्रा में फैलने की आशा है। ग्राम और लघु उद्योगों के कार्यक्रमों के लिए सरकारी क्षेत्र में कुल 264 करोड़ रु० रखे गए हैं, जबकि दूसरी योजना में इस मद में करीब 175 करोड़ रु० खर्च किए गए थे। कुछ अन्य कार्यक्रमों — जैसे, सामुदायिक विकास, विस्थापितों का पुनर्वास, सामाजिक कल्याण और पिछड़े वर्गो का कल्याण—से भी अतिरिक्त राशियां उपलब्ध होंगी। निजी क्षेत्र में पूंजी-विनियोग का अनुमान लगभग 275 करोड़ रु० है। छोटे उद्योगपतियों को बैंकों से ऋण लेने के लिए सरकारी गारण्टी देने का भी प्रस्ताव है। दूसरी योजना की अवधि में, जहां करीब 120 औद्योगिक बस्तियों की स्थापना के लिए अनुमति दी गई थी, वहां तीसरी योजना की अवधि में 300 नई औद्योगिक बस्तियां स्थापित की जाएंगी। कुछ चुने हुए ग्रामीण क्षेत्रों में जहां बिजली, पानी और अन्य आवश्यक सुविधाएं सुलभ हैं या निकट भविष्य में हो जाएंगी, वहां ग्रामीण औद्योगिक बस्तियां, भी स्थापित की

जाएंगी। खादी और ग्रामोद्योग-आयोग कुछ चुनी हुई ग्राम-इकाइयों में संगठित ग्रामीण विकास की ओर विशेष ध्यान देगा। ऐसी 3,000 ग्राम-इकाइयां तीसरी योजना की अवधि में शुरू की जाएंगी। हथकरघे, बिजली के करघे और खादी-उद्योगों-द्वारा कपड़े का उत्पादन सन् 1960-61 के 235 करोड़ गज से बढ़ कर 1965-66 में 350 करोड़ गज हो जाने की आशा है। इसी तरह, कच्चा रेशम का उत्पादन 36 लाख पौंड से बढ़ कर 50 लाख पौंड हो जाएगा। नारियल-जटा और हस्तशिल्पों के कार्यक्रम भी संगठित और विस्तृत किए जाएंगे।

बिजली

28. बड़े तथा लघु, दोनों तरह के उद्योगों के विकास के लिए, बिजली बहुत जरूरी है। इसलिए तीसरी योजना में बिजली-उत्पादन को ऊंची प्राथमिकता दी गई है। बिजली के विकास का कार्यक्रम—सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्र मिलाकर—कुल 1,089 करोड़ रु० का है। तीसरी योजना के अन्त तक बिजली की उत्पादन-क्षमता—उन योजनाओं-सहित, जो पहले से चालू हैं, जिनका निर्माण हो रहा है और जिनकी जांच की जा रही है—134 लाख किलोवाट तक बढ़ जाने की आशा है। इसमें से 127 लाख किलोवाट बिजली व्यावसायिक उपयोग में आएगी, जबकि दूसरी योजना के अन्त में कुल 57 लाख किलोवाट बिजली इस काम में आती थी। अनुमान है कि 4,500 करोड़ किलोवाट-घंटा बिजली सन् 1965-66 में पैदा होने लगेगी, जबकि सन् 1960-61 में 1,985 करोड़ किलोवाट-घंटा बिजली तैयार होती थी। संचरण-पथ का विस्तार सन् 1960-61 के 84,000 सर्किट-मील से बढ़ा कर सन् 1965-66 में 1,50,000 सर्किट-मील में किया जाएगा। बिजलीवाले कस्बों और गांवों की संख्या सन् 1960-61 के 23,000 से बढ़ा कर सन् 1965-66 में 43,000 की जाएगी। आशा की जाती है कि अमली तौर पर 5,000 या इससे अधिक आबादीवाले सभी कस्बों और गांवों तथा 2,000 से 5,000 के बीच की आबादीवाले आधे कस्बों और गांवों को बिजली प्राप्त हो जाएगी। 3 लाख किलोवाट क्षमता का एक न्यूक्लियर शक्ति-केन्द्र भी स्थापित किया जाएगा, जो तीसरी योजना की अवधि में 1.5 लाख किलोवाट बिजली और शेष चौथी योजना के पहले वर्ष में उपलब्ध करेगा। परन्तु स्थापित उत्पादन-क्षमता का एक बड़ा हिस्सा 74 लाख किलोवाट तापीय संयन्त्रों से प्राप्त होगा और 51 लाख किलोवाट पनबिजली-संयन्त्रों से।

परिवहन और संचार-साधन

29. पिछले कुछ वर्षों के अनुभव ने यह अच्छी तरह बता दिया है कि आर्थिक विकास में परिवहन और संचार-साधनों का कितना अधिक महत्व है। इस शीर्षक के अन्तर्गत जो कार्यक्रम हैं, उनकी कुल लागत 1,655 करोड़ रु० आएगी, जबकि फिलहाल वित्तीय व्यवस्था 1,486 करोड़ रु० की ही है। यद्यपि पहली दो योजनाओं में इस क्षेत्र में बहुत-सारा पूंजी-विनियोग किया गया था, तथापि तीसरी योजना में इसके भावी विकास के लिए एक ठोस कार्यक्रम रखा गया है। रेलवे के विकास का कार्यक्रम सन् 1960-61 में माल-यातायात के परिमाण, 1,540 लाख टन, के सन् 1965-66 में बढ़कर 2,450 लाख टन हो जाने के अनुमान पर आधारित है। माल-यातायात में इस अतिरिक्त वृद्धि के लगभग 90 प्रतिशत भाग का श्रेय लोहा और इस्पात, खनिज पदार्थों, कोयला, सीमेंट और

रेलवे-सामग्रियों के यातायात को प्राप्त होने की आशा है। 1,200 मील लम्बी नई रेल-लाइने बिछाने, 1,600 मील लम्बी इकहरी लाइनों को दोहरा करने, डीज़ल और बिजली के इंजिन तैयार करने और कुछ अन्य वस्तुओं के लिए, जिनका अभी तक आयात हो रहा है, योजना में व्यवस्था की गई है। सड़क के कार्यक्रम में 25,000 मील लम्बी पक्की सड़कें बनाने की व्यवस्था की गई है। साथ ही, मौजूदा सड़कों का सुधार करने, जैसे पुल बनाना, टूटे हुए हिस्सों को जोड़ना और सड़कों की दशा सुधारना, के लिए भी व्यवस्था की गई है। सड़क-परिवहन का काम, अधिकांशतः निजी क्षेत्र में होगा। आशा है कि व्यावसायिक गाड़ियों की संख्या सन् 1960-61 के 2.1 लाख से बढ़ कर सन् 1965-66 में 3.65 लाख हो जाएगी। सड़क-द्वारा माल-यातायात की मात्रा में अगले पांच वर्षों में 120 प्रतिशत वृद्धि होने की आशा है। योजना में बड़े और छोटे बन्दरगाहों के विकास और जहाज़रानी, अन्तर्देशीय जल-परिवहन, असैनिक हवाई परिवहन, डाक और तार तथा प्रसारण-सेवाओं के विस्तार के कार्यक्रम भी शामिल किए गए हैं। परिवहन और संचार-साधनों के क्षेत्र में, तीसरी योजना के अन्तर्गत, जो महत्वपूर्ण लक्ष्य स्थिर किए गए हैं, उनकी एक झांकी निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत है :

तालिका-संख्या 8

परिवहन और संचार-साधन

मद	इकाई	1960-61	1965-66
रेलवे :			
नई लाइनें	मील	800*	1,200*
नई दोहरी लाइनें	मील	1,300*	1,600*
माल ले जाया गया	लाख टन	1,540	2,450
सड़कें और सड़क-परिवहन :			
राष्ट्रीय राजपथ-सहित पक्की सड़कें	हज़ार मील	144	169
चालू गाड़ियां :			
व्यावसायिक गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	210	365
यात्री गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	50	80
माल ढोनेवाली गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	160	285
जहाज़रानी :			
टन-भार	लाख ग्रौस रजिस्टर्ड टन	9	10.9
बन्दरगाह :			
बड़े बन्दरगाह—क्षमता	लाख टन	370	490
संचार-साधन :			
डाकघर	हज़ार (संख्या)	77	94
तारघर	हज़ार (संख्या)	6.5	8.5
टेलीफोन	हज़ार (संख्या)	460	660

***उल्लिखित वर्ष म समाप्त होनेवाली पांच वर्ष की अवधि से सम्बद्ध**

सामाजिक सेवाएं

30. **वैज्ञानिक अनुसन्धान** : वैज्ञानिक अनुसन्धान को, विशेषतः उद्योगों और कृषि के विकास पर गहरा प्रभाव डालनेवाले वैज्ञानिक अनुसन्धान को, सबल किया जाएगा। पेट्रोलियम-टेक्नोलाजी-जैसे क्षेत्रों में अनुसन्धान करने और वैज्ञानिक उपकरणों का विकास तथा उत्पादन करने के लिए नई संस्थाएं स्थापित की जाएंगी। तीसरी योजना की अवधि में उद्योगों और कृषि की बेकार जानेवाली चीजों के उपयोग और उन्हें ठिकाने लगाने की समस्याओं पर अधिक ध्यान दिया जाएगा। विश्वविद्यालयों और तकनीकी संस्थानों में बुनियादी अनुसन्धान की सुविधाएं बढ़ाने की भी व्यवस्था की जाएगी। बिजली-उत्पादन के लिए न्यैष्टिक शक्ति के उपयोग और कृषि, जीव-विज्ञान, उद्योग तथा चिकित्सा-विज्ञान के क्षेत्र में आइसोटोपों के उपयोग की दिशा में जो अमूल्य काम किया गया है, उसे और भी विस्तृत तथा सुदृढ़ किया जाएगा। आशा की जाती है कि परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान के इले-क्ट्रोनिक्स-विभाग का उत्पादन-अनुभाग तीसरी योजना की अवधि में 8 करोड़ रु० मूल्य के उपकरण तैयार करेगा। भारतीय परिस्थितियों और यहां उपलब्ध सामग्रियों के अनुकूल प्रोटोटाइप न्यैष्टिक शक्ति-केन्द्रों का डिज़ाइन तैयार करने और उनका विकास करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा, ताकि चौथी योजना की अवधि में देश को न्यैष्टिक शक्ति-केन्द्रों के डिज़ाइन तैयार करने और उनके निर्माण के मामले में विदेशों से परामर्श लेने की बिल्कुल ही ज़रूरत न पड़े। चूंकि उच्च किस्म के थोरियम का संसार का सबसे बड़ा भांडार भारत में है, इसलिए अनुसन्धान और विकास का काम इस दीर्घावधि-उद्देश्य को ध्यान में रख कर किया जाना चाहिए कि बिजली के रूप में प्रयुक्त होने-योग्य विकास थोरियम का करना है।

31. **तकनीकी शिक्षा और प्रशिक्षण** : तकनीकी शिक्षा का देश के औद्योगिक और कृषि-विकास के कार्यक्रम से बहुत गहरा सम्बन्ध है। यह अनुमान लगाया गया है कि तीसरी योजना के लिए कुल 1,51,000 और चौथी योजना के लिए 2,00,000 प्रशिक्षित इंजी-नियरों की आवश्यकता होगी। तीसरी योजना में इंजीनियरी से सम्बद्ध धन्धों के लिए करीब 8,10,000 कुशल कर्मचारियों की और गैर-इंजीनियरी धन्धों के लिए करीब 4,60,000 कुशल कर्मचारियों की ज़रूरत होगी। चौथी योजना की अवधि में यह ज़रूरत बहुत ज्यादा होगी। इस मांग को पूरा करने के ख्याल से इंजीनियरी कालेजों की प्रवेश-क्षमता को 13,860 से बढ़ा कर 19,140 किया जाएगा और पालिटेक्निकों की संख्या 25,570 से बढ़ा कर 37,390 की जाएगी। इंजीनियरी और टेक्नोलाजी की अंशकालीन और पत्र-व्यवहार-द्वारा पढ़ाई भी शुरू की जाएगी। शिल्पियों के लिए प्रशिक्षण-संस्थाओं की संख्या भी सन् 1965-66 तक बढ़ा कर 318 कर दी जाएगी और रोजगार में लगे औद्योगिक कर्मचारियों के लिए कारखाना के भीतर और सायंकालीन कक्षाएं चलाई जाएंगी। कुशल कर्मचारियों और शिल्पियों के लिए पर्याप्त संख्या में शिक्षकों का प्रबन्ध करने के लिए तीन मौजूदा केन्द्रीय प्रशिक्षण-संस्थाओं की शक्ति दुगुनी कर दी जाएगी और तीन नई संस्थाएं कायम की जाएंगी। इन संस्थाओं से प्रशिक्षण लेकर निकलनेवाले शिक्षकों की संख्या करीब 8,000 तक हो जाने की आशा है। कृषि-कालेजों की प्रवेश-क्षमता 4,600 से बढ़ा कर 6,200 और पशु-चिकित्सा-कालेजों की प्रवेश-क्षमता 1,300 से बढ़ा कर 1,460 की जाएगी।

ऊपर उल्लिखित इंजीनियरी और तकनीकी कर्मचारियों के अतिरिक्त जिन **अन्य** श्रेणियों के कर्मचारियों की बड़ी संख्या में आवश्यकता है, उनमें शामिल हैं: वैज्ञानिक, शिक्षक, संख्या-शास्त्री, प्रशासक, प्रबन्धक और सामुदायिक विकास एवं सहकारिता के लिए तथा सामाजिक कल्याण और पिछड़े वर्गों के कार्यक्रमों के लिए कर्मचारी-मण्डल। सभी वर्गों के शिक्षकों के लिए, विशेषत: विज्ञान के शिक्षकों के लिए, दूसरी योजना की अवधि में जहां कमी अनुभव की गई थी, वहां अब अधिक प्रशिक्षण-सुविधाएं रखी गई हैं। तीसरी योजना में करीब 59,000 अतिरिक्त कर्मचारियों को खण्ड-विकास-अधिकारी; कृषि, पशुपालन, उद्योग, सहकारिता और पंचायतों के विस्तार-अधिकारी; ओवरसियर, सामाजिक शिक्षा-संगठनकर्ता, ग्राम-सेवक और ग्राम-सेविका के रूप में प्रशिक्षित किया जाएगा। सहकारिता के क्षेत्र में वरिष्ठ, मध्यम और कनिष्ठ श्रेणियों के कर्मचारियों की अतिरिक्त आवश्यकता 14,000 के आस-पास होगी। महिलाओं, बच्चों और अपंग व्यक्तियों के लिए विविध कल्याण-कार्यक्रमों को अंजाम देने के हेतु करीब 3,000 कार्यकर्ताओं और निरीक्षकों की आवश्यकता होगी। सामाजिक कल्याण के क्षेत्र में काम करनेवाली स्वैच्छिक संस्थाओं को करीब 5,000 प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता होगी। पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए खण्ड-विकास-अधिकारियों, विस्तार-अधिकारियों, ग्राम-सेवकों, चिकित्सा-कर्मचारियों और अन्य कार्यकर्ताओं की 14,000 से भी अधिक संख्या में आवश्यकता होगी। तीसरी और चौथी योजनाओं में संख्या-शास्त्रियों की बड़ी संख्या में आवश्यकता होगी और उन्हें विश्वविद्यालयों तथा अन्य विशिष्ट संस्थाओं—जैसे, भारतीय अंक-संकलन-संस्थान और कृषि-अनुसन्धान एवं अंक-संकलन-संस्थान—में प्रशिक्षित किया जाएगा। औद्योगिक संस्थाओं के लिए भी प्रशासकीय और प्रबन्धीय कर्मचारियों की बड़ी संख्या में आवश्यकता होगी तथा उनके लिए प्रशिक्षण की सुविधाएं दूसरी योजना की अवधि में स्थापित संस्थाओं, कलकत्ता एवं अहमदाबाद में स्थापित होनेवाली नई संस्थाओं और बम्बई के औद्योगिक इंजीनियरी-प्रशिक्षण-संस्थान में उपलब्ध की जाएंगी।

32. **सामान्य शिक्षा** : तीसरी योजना में यों तो सभी स्तरों पर शिक्षा-सुविधाओं के विस्तार की बात सोची गई है, पर इसकी एक विशिष्ट बात है, 6 से 11 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए सारे देश में मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था। कुछ पिछड़े हुए इलाकों में लड़कियों की शिक्षा की मन्द गति को स्वीकार करते हुए, यह अनुमान लगाया गया है कि इस अवधि में शिक्षा प्राप्त करनेवाले बच्चों की संख्या में इस प्रकार वृद्धि होगी—6–11 वय-वर्ग: 61.1 प्रतिशत से बढ़कर 76.4 प्रतिशत; 11–14 वय-वर्ग: 22.8 प्रतिशत से बढ़ कर 28.6 प्रतिशत; और 14–17 वय-वर्ग: 11.5 प्रतिशत से बढ़ कर 15.6 प्रतिशत। विद्यालयों में पढ़ रहे छात्रों की कुल संख्या सन् 1960-61 के 4.35 करोड़ से बढ़कर सन् 1965-66 में 6.39 करोड़ हो जाएगी। तीसरी योजना में अनमानतः 5.51 लाख शिक्षकों की आवश्यकता होगी। इसलिए शिक्षकों को प्रशिक्षण देने की सुविधाओं का काफी विस्तार किया जाएगा। विश्वविद्यालयों में छात्रों की संख्या सन् 1960-61 के 9 लाख से बढ कर सन् 1965-66 में 13 लाख हो जाने की आशा है। तीसरी योजना में एक बडा काम वैज्ञानिक शिक्षा की सुविधाओं का विस्तार करने का है जिसका लक्ष्य यह होगा कि समस्त छात्रों मे विज्ञान के छात्रों का अनुपात करीब 43 प्रतिशत हो जाए। विभिन्न क्षेत्रों में विज्ञान-शिक्षित लोगों की

मांग निरन्तर बढ़ रही है; उदाहरण के लिए, विद्यालयों में विज्ञान के शिक्षक चाहिए; इंजीनियरी और अन्य तकनीकी संस्थाओं के लिए विज्ञान के शिक्षा-प्राप्त छात्र चाहिए; और उद्योगों में वैज्ञानिक कर्मचारी चाहिए। अतः विज्ञान की शिक्षा का प्रसार आवश्यक है।

33. तीसरी योजना की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता होगी—बड़ी संख्या में छात्र-वृत्तियों की व्यवस्था, जिससे प्रतिभाशाली युवा छात्र उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों और कालेजों में अपनी शिक्षा पूरी कर सकें। इस मद के अन्तर्गत अभी छात्रवृत्तियों के लिए जितने धन की व्यवस्था है, तीसरी योजना में उसमें 10 करोड़ रु० की वृद्धि करने का प्रस्ताव है।

34. **स्वास्थ्य और परिवार-आयोजन** : स्वास्थ्य-सेवाओं के क्षेत्र में, तीसरी योजना का उद्देश्य वर्तमान कार्यक्रमों का विस्तार करना है। इन कार्यक्रमों का सम्बन्ध आवासीय क्षेत्रों के आस-पास की सफाई, छूत की बीमारियों का नियन्त्रण, सार्वजनिक स्वास्थ्य-सेवाओं (प्रसूति-शिशु-कल्याण, स्वास्थ्य-शिक्षा और पुष्टिकर भोजन-सहित) की व्यवस्था, परिवार-आयोजन, और चिकित्सा तथा स्वास्थ्य-कर्मचारियों के प्रशिक्षण से है। मलेरिया-उन्मूलन का कार्यक्रम पूरा कर दिया जाएगा और चेचक तथा क्षय-रोग पर नियन्त्रण पाने के लिए राष्ट्रव्यापी आन्दोलन शुरू किया जाएगा। विशेष रोगाक्रान्त क्षेत्रों में हैज़े के नियन्त्रण के लिए विशेष उपाय किए जाएंगे। तीसरी योजना की अवधि में प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों की संख्या 2,800 से बढ़ कर 5,000 और अस्पतालों में शय्याओं की संख्या 1,85,600 से बढ़ा कर 2,40,100 की जाएगी। प्रैक्टिस कर रहे डाक्टरों की संख्या 70,000 से बढ़ कर 81,000 और नर्सों की संख्या 27,000 से बढ़ कर 45,000 हो जाने की आशा है। इस योजना में शामिल अन्य महत्वपूर्ण योजनाओं का सम्बन्ध देशी चिकित्सा-पद्धतियों के विकास, स्वास्थ्य-शिक्षा, स्वास्थ्य-बीमा, विद्यालय-स्वास्थ्य-सेवा, प्रसूति एवं शिशु-कल्याण तथा पौष्टिक भोजन से है।

35. आबादी में तीव्र गति से वृद्धि होने के कारण, तीसरी योजना में परिवार-आयोजन-कार्यक्रमों को उच्च प्राथमिकता दी गई है। इन कार्यक्रमों में इन बातों की व्यवस्था की गई है: (क) परिवार-आयोजन के लिए शिक्षा और प्रेरणा, (ख) सेवाओं की व्यवस्था, (ग) प्रशिक्षण, (घ) आपूर्ति, और (ङ) अनुसन्धान। यह निश्चय किया गया है कि इस विषय का ठीक प्रकार से ज्ञान फैलाने और परिवार-आयोजन को सफल बनाने में गैर-सरकारी संस्थाओं का पूरा-पूरा सहयोग लिया जाए। परिवार-आयोजन-विषयक गतिविधियों को सामान्य स्वास्थ्य-सेवाओं के साथ सम्बद्ध कर दिया जाएगा और परिवार-आयोजन-सेवाओं की—जिनमें वन्ध्याकरण की सुविधाएं भी शामिल हैं—चिकित्सा और स्वास्थ्य-केन्द्रों के द्वारा व्यवस्था की जाएगी। परिवार-आयोजन-केन्द्रों की संख्या 1,649 से बढ़ कर 8,200 हो जाएगी।

36. **ग्रामीण जल-आपूर्ति और स्थानीय विकास-कार्य** : तीसरी योजना की प्रारम्भिक रूपरेखा में कहा गया था कि स्थानीय विकास के कार्यक्रमों में ग्रामीण क्षेत्रों के लिए ये तीन मुख्य सुविधाएं दिए जाने की व्यवस्था होनी चाहिए : (क) पीने के पानी की व्यवस्था, (ख) प्रत्येक गांव को सबसे निकटस्थ मुख्य सड़क अथवा रेलवे-स्टेशन से जोड़नेवाली सड़कों का निर्माण, और (ग) ग्रामीण विद्यालय-भवनों की व्यवस्था, जो सामुदायिक केन्द्र और ग्राम-पुस्तकालय का भी काम दे सके। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि गांवों

में पीने के पानी की सन्तोषजनक व्यवस्था करना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, यह विचार किया गया है कि ग्रामीण जल-आपूर्ति-के कार्यक्रम पर समस्त प्रयत्नों को केन्द्रित किया जाए। अन्य ग्रामीण सुविधाओं की व्यवस्था सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों और जन-शक्ति के पूर्णतर उपयोग के लिए शुरू किए जानेवाले ग्रामीण कार्यक्रमों-द्वारा की जाए।

तीसरी योजना का यह एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है कि जहां तक सम्भव हो सके, इस योजना के अन्त तक अच्छे पीने के पानी की व्यवस्था अधिकांश ग्रामों में हो जाए। यह बात ज्ञात है कि इस लक्ष्य को पूरा करना आसान नहीं है और इसके लिए इस कार्यक्रम को पूरा करने में संलग्न सभी संस्थाओं को सघन प्रयत्न करना होगा तथा उनके बीच प्रभावशाली समन्वय स्थापित करना होगा। ग्रामीण जल-आपूर्ति की समस्या का सर्वेक्षण कई राज्यों में किया जा रहा है। इन सर्वेक्षणों के आधार पर और विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त अवस्थाओं का उचित ध्यान रखते हुए, ग्राम जल-आपूर्ति के कार्यक्रम के लिए जो साधन रखे गए हैं, उनका इस्तेमाल (क) पिछड़े हुए इलाकों में, (ख) सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत न आनेवाले क्षेत्रों में, (ग) पूर्व-विस्तार-खण्डों में, और (घ) उन खण्डों में करने का इरादा है, जो सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के पहले और दूसरे सोपान को पार कर चुके हैं।

37. तीसरी योजना में द्रुत गति से बढ़नेवाली शहरी आबादी के लिए भी पर्याप्त जल-आपूर्ति का कार्यक्रम रखा गया है। दूसरी योजना में अनुमानतः 112 करोड़ रु० की लागत की लगभग 664 जल-आपूर्ति एवं जल-निकासी से सम्बन्धित योजनाओं को हाथ में लिया गया था। इनमें से जो योजनाएं अभी तक पूरी नहीं हुई हैं, वे पूरी की जाएंगी और आगामी पांच वर्षों में कुछ नई शहरी योजनाएं शुरू की जाएंगी।

38. **आवास :** आबादी के बढ़ने और शहरों की ओर लोगों का झुकाव होने के कारण आवास की समस्या पहले से ही बड़ी गम्भीर है तथा भविष्य में इसके और भी गम्भीर होने की आशंका है। स्पष्टतः इस समस्या का हल केवल सरकारी पूंजी-विनियोग से सम्भव नहीं है, यद्यपि कुछ सीमा तक सरकारी पूंजी-विनियोग की इसमें महत्वपूर्ण भूमिका होगी। तीसरी योजना में उन उपायों का काफी विस्तार किया जाएगा, जिन्हें पहली दोनों योजनाओं के काल में अपनाया गया था। इसके साथ ही, यह योजना सरकार-द्वारा इस मद में किए गए पूंजी-विनियोग की उद्योगों के लिए स्थान चुनने और उन्हें फैला कर कायम करने के बारे में उचित नीतियों का अवलम्बन करके, महत्वपूर्ण शहरी क्षेत्रों की 'मास्टर योजना' तैयार करके और सरकारी तथा निजी, दोनों प्रकार के विभिन्न संस्थानों-द्वारा किए जा रहे प्रयत्नों का अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से समन्वय करके अनुपूर्ति करेगी। इसमें यह प्रस्ताव भी शामिल है कि केन्द्र में और राज्यों में आवास-मण्डल कायम किए जाएं, ताकि कम और मध्यम आय के अधिकांश लोग स्वयं अपने मकान बनवाने में समर्थ हो सकें। औद्योगिक श्रमिकों और कम आयवालों के आवास, गन्दी बस्तियों की सफाई और उनका सुधार तथा भूमि प्राप्त करके उसका विकास करने के लिए दी जानेवाली वित्तीय सहायता बढ़ा दी जाएगी। कई शहरों में नगर-आयोजन और नगर-विकास के तरीकों को हाथ में लिया जाएगा। कलकत्ता की कुछ अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, जिनके कारण देश के पूर्वी क्षेत्र में एक विशेष समस्या उत्पन्न हो गई है, केन्द्रीय योजना में तो 10 करोड़ रु० की व्यवस्था की ही गई

है, पश्चिम-बंगाल की योजना में भी 10 करोड़ रु० रखे गए हैं । दूसरी योजना में ग्रामीण आवास का जो कार्यक्रम शुरु किया गया था, उसका सम्बन्ध सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के साथ और भी गहरा कर दिया जाएगा और ईंटों के भट्ठे लगाने, इमारती सामान बनाने, नए मकान बनाने के लिए क्षेत्रों का विस्तार करने और भूमिहीन श्रमिकों की आवास-अवस्थाओं में सुधार करने की ओर अधिक ध्यान दिया जाएगा ।

39. **सामाजिक कल्याण :** सामाजिक कल्याण के क्षेत्र में जो विविध कार्यक्रम तैयार किए गए हैं, उनमें सबसे ऊंची प्राथमिकता शिशु-कल्याण-सेवाओं को दी गई है । यह निश्चय किया गया है कि समस्त कल्याण-कार्यक्रमों का स्पष्ट झुकाव शिशु-कल्याण की ओर होना चाहिए । इन कार्यक्रमों की एक विशिष्ट बात यह है कि रोगों का इलाज करने की अपेक्षा उनके निरोध पर अधिक बल देने का प्रस्ताव रखा गया है और तदनुसार न केवल अपंग बच्चों के मामले में ही, बल्कि सभी बच्चों के लिए शिशु-स्वास्थ्य-सेवा का संगठन किया जाएगा । क्षेत्रीय स्तर पर, बिखरी हुई सेवाओं को संगठित किया जाएगा । बच्चों में अपराध-वृत्तियों को रोकने के लिए राज्य-सरकारों को संस्थाएं स्थापित करने में सहायता दी जाएगी । बच्चों का भिक्षावृत्ति के लिए उपयोग करने के रिवाज का कठोरता से मुकाबला किया जाएगा । भिक्षावृत्ति रोकने के कार्यक्रम में सबसे अधिक ज़ोर बच्चों-द्वारा भीख मंगवाना रोकने पर दिया जाएगा । आरम्भ में यह कार्यक्रम बड़े शहरों, तीर्थस्थानों और पर्यटन-केन्द्रों में कार्यान्वित किया जाएगा । महिलाओं के लाभ के लिए बनाए गए कार्यक्रमों में महिला-मण्डलों (स्थानीय स्वैच्छिक महिला-संस्थाओं) को पुष्ट करने पर विशेष ज़ोर दिया जाएगा । पिछड़े हुए वर्गों के लिए दूसरी योजना में जो उपाय हाथ में लिए गए थे, उन्हें आगे बढ़ाया जाएगा । लगभग 300 विशेष विकास-खण्ड परिगणित जातियों के लिए बनाए जाएंगे और वन-सहकारिता-संस्थाओं के कार्यक्रम का विस्तार किया जाएगा । पाकिस्तान से आए विस्थापित व्यक्तियों के पुनर्वास पर, विशेषत: उन्हें आबाद करने के लिए दण्डकारण्य के विकास पर, पूरा-पूरा ध्यान दिया जाएगा ।

40. वैज्ञानिक अनुसन्धान, शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, सामाजिक कल्याण, इत्यादि कार्यक्रमों के लिए सामान्य शीर्षक 'सामाजिक सेवाएं और विविध' के अन्तर्गत कुल 1,526 करोड़ रु० की आवश्यकता होगी । इसके मुकाबले में, अभी वित्तीय व्यवस्था केवल 1,300 करोड़ रु० की हो सकी है । योजना को कार्यान्वित करते समय इस कमी को पूरा करने की हर कोशिश की जाएगी ।

रोज़गार

41. तीसरी योजना में जो कार्यक्रम शामिल किए गए हैं, उनसे 140 लाख लोगों को रोज़गार के अवसर मिलने की आशा है । इस बात को ध्यान में रखते हुए कि आबादी में तीव्र वृद्धि होने के कारण तीसरी योजना के अन्तर्गत श्रमिक-वर्ग में नए-नए प्रवेश करनेवालों की संख्या 170 लाख तक होगी, यह बात खास ज़रूरी है कि रोज़गार के अवसर बढ़ाए जाएं । यह काम कुछ अंश तक, ग्राम और लघु उद्योगों तथा कृषि के विस्तार से पूरा हो सकेगा । इसके अतिरिक्त, प्रस्ताव किया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर विशेष कार्य-परियोजनाएं संगठित की जाएं । अपने वर्तमान प्रारम्भिक स्वरूप के अनुसार यह कार्यक्रम तीसरी योजना के पहले वर्ष में औसतन एक लाख लोगों को एक वर्ष में 100 दिन का काम दे सकेगा । आगे चल कर, योजना के अन्तिम वर्ष में, इस कार्यक्रम

से 25 लाख लोगों को काम मिल सकेगा। पांच वर्ष की अवधि में इस कार्यक्रम पर कुल खर्च करीब 150 करोड़ रु० का बैठेगा।

42. योजना के विभिन्न कार्यक्रमों में जनता का सक्रिय सहयोग प्राप्त करने के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं के ज़रिए विशेष प्रयत्न किया जाएगा। इन संस्थाओं को इस बात के लिए उत्साहित करना होगा कि वे केवल सामाजिक कल्याण पर ज़ोर देने के स्थान पर निर्माण-कार्य-जैसी सामाजिक-आर्थिक गतिविधियों पर ज़ोर दें। लोककार्य-क्षेत्र-कार्यक्रम के ज़रिए इन संस्थाओं को इस बात के लिए सुविधाएं दी जाएंगी कि वे ग्रामीण क्षेत्रों में कल्याणमूलक और उत्पादनमूलक, दोनों प्रकार के कार्यक्रमों में प्रभावशाली ढंग से हिस्सा ले सकें।

43. देश की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए, तीसरी योजना में शामिल किए गए लक्ष्य किसी भी प्रकार ऊंचे नहीं हैं, बल्कि निश्चित रूप से अपर्याप्त हैं। इसलिए इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि उपलब्ध साधनों का मितव्ययितापूर्वक उपयोग करके, अतिरिक्त साधनों की खोज करके और कार्यकुशलता बढ़ा कर इन लक्ष्यों को प्राप्त किया जाए। तीसरी योजना को कार्यान्वित करते समय केन्द्रीय सरकार और राज्य-सरकारें इस दिशा में निरन्तर प्रयत्नशील रहेंगी और इस क्रम में परियोजनाओं के विशुद्ध सन्तुलन-और सोपानीकरण तथा खर्च पर पूरा-पूरा ध्यान देने की ज़रूरत होगी। यह सम्भव है कि पूरे प्रयत्न के बावजूद कुछ परियोजनाएं चौथी योजना में चली जाएं, पर इस बात का पूरा ध्यान रखना होगा कि ऐसी परियोजनाएं, जो राष्ट्रीय आय के निश्चित लक्ष्य तक पहुंचने के लिए आवश्यक हैं और अर्थव्यवस्था के उन क्षेत्रों के लिए आवश्यक हैं, जिन्हें सुदृढ़ करने से अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर और आत्मचालित होगी, उन्हें अवश्य ही समय पर पूरा कर दिया जाए।

राष्ट्रीय आय

44. यह अनुमान लगाया गया है कि योजना में शामिल किए गए सभी कार्यक्रम यदि समय पर पूरे हो जाएं, तो राष्ट्रीय आय में (सन् 1960-61 की कीमतों के आधार पर) करीब 34 प्रतिशत की वृद्धि होगी। कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों का विशुद्ध उत्पादन करीब 25 प्रतिशत बढ़ जाएगा, खानों और कारखानों का उत्पादन करीब 82 प्रतिशत बढ़ेगा और अन्य क्षेत्रों का उत्पादन करीब 32 प्रतिशत बढ़ेगा। कृषि, खानों और कारखानों-सम्बन्धी ये अनुमान अधिकतर योजना में मिश्रित उत्पादन के लक्ष्यों पर आधारित हैं। परन्तु अन्य क्षेत्रों के मामले में अप्रत्यक्ष अनुमान लगा सकना ही सम्भव है और कई मामलों में मूलभूत तथ्य सर्वथा अपर्याप्त हैं। राष्ट्रीय आय में अनुमानित 34 प्रतिशत की वृद्धि प्राप्त करने के लिए, जैसा कि ऊपर कहा गया है, कई कठोर शर्तें पूरी करनी होंगी। इनमें से एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण शर्त का सम्बन्ध इस अवधि में किए जानेवाले कुल पूंजी-विनियोग से है। जैसा कि इस अध्याय के अनुबन्ध 2 में संकेत किया गया है, तीसरी योजना में जो भौतिक कार्यक्रम शामिल किए गए हैं—विशेषतः उद्योग और परिवहन के अन्तर्गत—उनके लिए योजना में अभी जितने वित्त और साधनों की व्यवस्था की गई है, उससे कहीं अधिक पूंजी-विनियोग की ज़रूरत पड़ेगी। साधनों के संग्रह में ज़्यादा प्रयत्न करने से, जैसा कि निश्चित किया गया है, यह आशा की जाती है कि यह अभाव की खाई कम हो जाएगी और सम्भव है कि पूरी तरह पट भी जाए। फिर भी, मौजूदा अनुमान पर और पहले कही गई बातों

को दृष्टि में रखते हुए, यह समझा जाता है कि तीसरी योजना की अवधि में राष्ट्रीय आय कम-से-कम 30 प्रतिशत बढ़ेगी। यह राशि जो दूसरी योजना के अन्त में (सन् 1960-61 की कीमतों के आधार पर) 14,500 करोड़ रु० थी, तीसरी योजना के अन्त तक करीब 19,000 करोड़ रु० हो जाएगी। आबादी के वर्तमान अनुमानों के आधार पर, प्रति व्यक्ति आय सन् 1960-61 के 330 रु० से बढ़ कर तीसरी योजना के अन्त में करीब 385 रु० हो जाएगी।

अनुबन्ध 1

उत्पादन और विकास—प्रगति और लक्ष्य

शीर्षक	इकाई	1950-51	1955-56	1960-61 (अनुमानित)	1965-66 (लक्ष्य)	1950-51 की अपेक्षा 1960-61 में हुई प्रतिशत वृद्धि	1960-61 की अपेक्षा 1965-66 में होने-वाली प्रतिशत वृद्धि
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
1. कृषि और सामुदायिक विकास							
1.1 कृषि-उत्पादन							
खाद्यान्न	लाख टन	522(क)	658 (क)	760	1,000	46	32
कपास	लाख गांठें	29	40	51	70	76	37
गन्ना-गुड़	लाख टन	56	60	80	100	·43	25
तेलहन	लाख टन	51	56	71	98	39	38
पटसन	लाख गांठें	33	42	40	62(ख)	21	55

(क) उत्पादन के अनुमानों में सन् 1956-57 तक एकत्र नए आंकड़ों और आंकड़े एकत्र करने की विधि में परिवर्तन के अनुसार संशोधन कर दिया गया है ।

(ख) इसमें मेस्टा शामिल नहीं है, जिससे तीसरी योजना की अवधि में 13 लाख अतिरिक्त गांठें मिल सकती हैं ।

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
चाय	लाख पौंड	6,130	6,780	7,250	9,000	18	24
तम्बाकू	हज़ार टन	257	298	300	325	17	8
मछली	लाख टन	7	10	14	18	100	29
दूध	लाख टन	171	193	220	253	29	15
ऊन	लाख पौंड	600	650	720	900	20	25
1.2 कृषि-सेवाएं							
सिंचित क्षेत्र विशुद्ध योग	लाख एकड़	515	562	700	900	36	29
भूमि का उद्धार (अतिरिक्त क्षेत्र) (ग)	लाख एकड़	—	27	12	36	—	200
भूमि-संरक्षण (लाभान्वित अतिरिक्त भूमि) (ग)	लाख एकड़	—	7	20	110	—	450
नत्रजनयुक्त उर्वरकों की खपत	हज़ार टन नत्रजन	55	105	230	1,000	318	335
फास्फेटयुक्त उर्वरकों की खपत	हज़ार टन पी$_2$ ओ$_5$	7	13	70	400	900	471
बीजों के फार्म (ग)	संख्या	—	—	4,000	4,800	—	20
1.3 सामुदायिक विकास							
खंड	संख्या	—	1,069	3,110	5,223	—	68
सेवित गांव	हज़ार (संख्या)	—	106	368	550	—	49
सेवित जनता	लाख (संख्या)	—	690	2,040	3,590	—	76
1.4 सहकारिता							
प्राथमिक कृषि-ऋण-समितियां	हज़ार (संख्या)	105	160	210	230	100	10

दिए गए अल्प और मध्यमकालीन ऋण	करोड़ रु०	22.9	49.6	200	530	773	165
2. बिजली							
2.1 बिजली							
स्थापित क्षमता	लाख किलो-वाट	23 (घ)	34 (घ)	57	127	148	123
उत्पादित बिजली	करोड़ किलो-वाट घंटे	657.5 (घ)	1,077.7 (घ)	1,985	4,500	202	127
2.2 बिजलीवाले गांव और कस्बे	हज़ार (संख्या)	3.7	7.4	23	43	523	87
3. खनिज पदार्थ							
खनिज लोहा	लाख टन	32	43	107	300	234	180
कोयला	लाख टन	323	384	546	970	69	76
4. बड़े उद्योग							
4.1 धातु-शोधन-उद्योग							
इस्पात की सिल्लियां	लाख टन	14	17	35	92	150	163
तैयार इस्पात	लाख टन	10	13	22	68	120	209
कच्चा लोहा (बिक्री के लिए)	लाख टन	3.5	3.8	9	15	157	67
मिश्र धातु, औजार और विशेष इस्पात (तैयार)	हज़ार टन	—	—	40	200	—	400

(ग) पांच वर्ष की अवधि से सम्बद्ध

(घ) कैलेंडर-वर्ष से सम्बद्ध

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
अल्युमीनियम	हज़ार टन	3.7	7.3	18.5	80	400	332
तांबा (अग्नि-शोधित और बिजली में प्रयुक्त)	हज़ार टन	6.6	7.5	8.9	20	35	125
4.2 मैकैनिकल और इलेक्ट्रिकल इंजीनियरी उद्योग							
सीमेंट की मशीनें	मूल्य लाख रु० में	—	34 (घ)	60	450	—	650
चीनी की मशीनें	मूल्य लाख रु० में	—	19	330	1,000	—	203
औद्योगिक बायलर	मूल्य लाख रु० में	—	—	40	2,500	—	6,150
मशीनी औज़ार (वर्गीकृत)	मूल्य लाख रु० में	34	78	550	3,000	1,518	445
बाल और रोलर बियरिंग	लाख (संख्या)	1	9	29	140 (ङ)	2,800	383
डीज़ल इंजिन (स्थिर)	हज़ार (संख्या)	5.5	10	40	66	627	65
ट्रैक्टर	संख्या	—	—	2,000	10,000	—	400
बिजली की मोटरें (200 अश्व-शक्ति और नीचे)	हज़ार अश्व-शक्ति	100	272	700	2,500 (च)	600	257

बिजली के ट्रांसफार्मर (33 किलोवाट और नीचे)	हज़ार किलोवाट	179	625	1,200	3,500	570	192
बिजली के तार (ए० सी० एस० आर०) कंडक्टर	हज़ार टन	1.7	8.7	22	44	1,194	100
4.3 रेलवे-इंजिन							
वाष्पचालित	संख्या	7	179	295	1,175 (ग)	3,214	—
डीज़लचालित	संख्या	—	—	—	434 (ग)	—	—
बिजलीचालित	संख्या	—	—	—	232 (ग)	—	—
4.4 रबर-उत्पादन							
मोटरगाड़ियों के टायर	लाख (संख्या)	—	9	13.5	30	—	122
बाइसिकिलों के टायर	लाख (संख्या)	—	58	110	310	—	182

(ग) पांच वर्ष की अवधि से सम्बद्ध

(घ) कैलेंडर-वर्ष से सम्बद्ध

(ङ) तीन पालियों में पूरा काम करने से सम्बद्ध

(च) 300 अश्व-शक्ति और नीचे

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
4.5 रसायन							
नत्रजनयुक्त उर्वरक	हज़ार टन नत्रजन	9	79	110	800	1,122	627
फास्फेटयुक्त उर्वरक	हज़ार टन पी$_2$ ओ$_5$	9	12	55	400	511	627
गन्धक-अम्ल	हज़ार टन	99	164	363	1,500	267	313
सोडा ऐश	हज़ार टन	45	81	145	450	222	210
कास्टिक सोडा	हज़ार टन	11	35	100	340	809	240
सल्फा-औषध	टन	—	83 (घ)	150	1,000	—	567
डी० डी० टी०	टन	—	284	2,800	2,800	—	—
रंजक	लाख पौंड	—	40	115	180	—	57
4.6 अन्य उद्योग							
सिलाई की मशीनें (केवल संगठित क्षेत्र)	हज़ार (संख्या)	33	111	297	700	800	136
बाइसिकिलें (केवल संगठित क्षेत्र)	हज़ार (संख्या)	101	513	1,050	2,000	940	90
मोटर-साइकिल और स्कूटर	हज़ार (संख्या)	—	1.5	18	50	—	178
मोटरगाड़ियां	हज़ार (संख्या)	16.5	25.3	53.5	100	224	67

जहाज़निर्माण	हज़ार ग्रौस रजिस्टर्ड टन	—	50 (ग)	20	50–60	—	150–200
सूती वस्त्र (मिल के बने)	करोड़ गज़	372	510.2	512.7	580	38	13
रेयन फिलामेंट	लाख पौंड	4	160	470	1,400	11,650	198
चीनी (छ)	लाख टन	11.2	18.6	30	35	168	17
इस्पात का इमारती सामान	हज़ार टन	—	90	150	1,000	—	567
सीमेंट	लाख टन	27	46	85	130	215	53
पेट्रोलियम के उत्पादन	लाख टन	—	36	57	99	—	74
कागज़ ग्रौर गत्ता	हज़ार टन	114	187	350	700	207	100
प्लास्टिक	हज़ार टन	—	0.7	10	74	—	640
शीशा ग्रौर शीशे का सामान	हज़ार टन	92	125	225	440	145	96
ग्रौद्योगिक गैसें-ग्राक्सीजन	लाख सी० एफ० टी०	—	—	7,000	16,500	—	136
5. ग्राम ग्रौर लघु उद्योग							
खादी परम्परागत	लाख गज़	73	289	480	35,000	558	49
ग्रम्बर	लाख गज़	—	—	260		—	
हथकरघा	लाख गज़	7,420	14,710	19,000		1,560	
बिजली का करघा	लाख गज़	1,480 (घ)	2,730 (घ)	3,750		1,530	
रेशम	लाख पौंड	25 (ज)	32 (घ)	36 (घ)	50	44	43

(ग) पांच वर्ष की ग्रवधि से सम्बद्ध
(घ) कैलेंडर-वर्ष से सम्बद्ध
(छ) फसल-वर्ष, नवम्बर-ग्रक्तूबर, से सम्बद्ध
(ज) कैलेंडर-वर्ष 1951 से सम्बद्ध

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
6. परिवहन और संचार-साधन							
6.1 परिवहन-सेवाएं							
रेलवे : माल ढोया गया	लाख टन	915	1,140	1,540	2,450	68	59
पक्की सड़कें: राष्ट्रीय राजपथ-सहित	हज़ार मील	97.5	122	144	169	48	17
सड़क-परिवहन : चालू व्यावसायिक गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	116	166	210	365	81	74
जहाज़रानी	लाख ग्रौस रजिस्टर्ड टन	3.9	4.8	9	10.9	130	21
प्रमुख बन्दरगाह : माल चढ़ाने-उतारने की क्षमता	लाख टन	200	250	370	490	85	32
6.2 संचार-साधन							
डाकघर	हज़ार (संख्या)	36	55	77	94	114	22
तारघर	हज़ार (संख्या)	3.6	5.1	6.5	8.5	81	31
टेलीफोन	हज़ार (संख्या)	168	280	460	660	174	43
7. शिक्षा							
7.1 सामान्य शिक्षा विद्यालयों में छात्र	लाख (संख्या)	235	313	435	639	85	47

विद्यालय जानेवाले छात्रों का प्रतिशत : विभिन्न वय-वर्गों में							
प्राथमिक-स्तर	6–11 वर्ष	42.6	52.9	61.1	76.4	79 (झ)	45(झ)
माध्यमिक-स्तर	11–14 वर्ष	12.7	16.5	22.8	28.6	102 (झ)	55(झ)
उच्चतर माध्यमिक-स्तर	14–17 वर्ष	5.3	7.8	11.5	15.6	139 (झ)	57(झ)
शिक्षण-संस्थाएं							
प्राथमिक/जूनियर बुनियादी विद्यालय	हज़ार (संख्या)	209.7	278.1	342	415	63	21
माध्यमिक/सीनियर बुनियादी विद्यालय	हजार (संख्या)	13.6	21.7	39.6	57.7	191	46
उच्च/उच्चतर माध्यमिक विद्यालय	हजार (संख्या)	7.3	10.8	16.6	21.8	128	31
बहूद्देश्यीय विद्यालय	हज़ार (संख्या)	—	0.3	2.1	2.4	—	14
7.2 तकनीकी शिक्षा							
इंजीनियरी और टेक्नोलाजी							
डिग्री-स्तर (प्रवेश)	संख्या	4,120	5,890	13,858	19,137	236	38
डिप्लोमा-स्तर (प्रवेश)	संख्या	5,900	10,480	25,570	37,390	333	64
कृषि-कालेज (प्रवेश)	संख्या	1,060(ञ)	1,989	4,600	6,200	334	35
पशु-चिकित्सा-कालेज (प्रवेश)	संख्या	434	1,269	1,300	1,460	200	12

(झ) रजिस्टर में दर्ज संख्याओं के आधार पर

(ञ) सन् 1951-52 से सम्बद्ध

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
8. स्वास्थ्य							
8.1. संस्थाएं							
अस्पताल और औषधालय	हज़ार (संख्या)	8.6	10	12.6	14.6	47	16
अस्पताल—शय्याएं	हज़ार (संख्या)	113	125	186	240	65	29
प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयां	संख्या	—	725	2,800	5,000	—	79
परिवार-आयोजन-केन्द्र	संख्या	—	147	1,649	8,200	—	397
8.2 कर्मचारीगण							
मेडिकल कालेज (प्रवेश)	संख्या	2,500	3,500	5,800	8,000	132	38
डाक्टर	हज़ार (संख्या)	56	65	70	81	25	16
नर्सें (ट)	हज़ार (संख्या)	15	18.5	27	45	80	67
सहायक नर्स-मिडवाइफें और मिड-वाइफें (ट)	हज़ार (संख्या)	8	12.8	19.9	48.5	149	144
नर्स-दाइयां और दाइयां (ट)	हज़ार (संख्या)	1.8	6.4	11.5	40	539	248
स्वास्थ्य-सहायक और सफाई-निरीक्षक	हज़ार (संख्या)	3.5	4	6	19.2	71	220

(ट) प्रैक्टिस करते हुए अथवा सेवा करते हुए

अनुबन्ध 2

दूसरी योजना का व्यय और तीसरी योजना के भौतिक कार्यक्रमों की लागत—शीर्षकवार अनुमान

(लाख रु०)

विकास का शीर्षक	दूसरी योजना का अनुमानित व्यय					तीसरी योजना के कार्यक्रमों की अनुमानित लागत				
	राज्य	संघीय क्षेत्र	राज्य और संघीय क्षेत्र	केन्द्र	योग	राज्य	संघीय क्षेत्र	राज्य और संघीय क्षेत्र	केन्द्र	योग
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)
कृषि-उत्पादन	8,367	268	8,635	1,075	9,810	18,351	598	18,949	3,658	22,607
छोटी सिचाई	9,166	98	9,264	230	9,494	17,269	177	17,446	230	17,676
भूमि-संरक्षण	1,553	8	1,561	200	1,761	5,732	246	5,978	1,295	7,273
पशुपालन	1,869	73	1,942	200	2,142	4,592	172	4,764	680	5,444
दूध-व्यवसाय और दूध-आपूर्ति	958	3	961	244	1,205	3,086	24	3,110	498	3,608
जंगल	1,656	122	1,778	150	1,928	4,204	268	4,472	667	5,139
मछलीपालन	710	26	736	170	906	2,090	102	2,192	672	2,864
गोदाम, क्रय-विक्रय और भांडारण	310	18	328	170	498	843	10	853	3,300	4,153
(1) **कृषि-सम्बन्धी कार्यक्रम**	24,589	616	25,205	2,439	27,644	56,167	1,597	57,764	11,000	68,764
सहकारिता	3,278	55	3,333	50	3,383	6,959	151	7,110	900	8,010
सामुदायिक विकास	18,744	463	19,207	200	19,407	28,189	578	28,767	600	29,367

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)
पंचायतें	460	30	490	1,976 (क)	2,466	2,824	56	2,880	—	2,880
(2) सामुदायिक विकास और सहकारिता	22,482	548	23,030	2,226	25,256	37,972	785	38,757	1,500	40,257
सिंचाई	34,479	21	34,500	2,717	37,217	58,121	10	58,131	1,803	59,934
बाढ़-नियन्त्रण	(ख)	(ख)	(ख)	4,800	4,800	5,995	137	6,132	—	6,132
बिजली	41,882	914	42,796	1,753	44,549	88,315	2,345	90,660	11,312	1,01,972 (ग)
(3) सिंचाई और बिजली	76,361	935	77,296	9,270	86,566	1,52,431	2,492	1,54,923	13,115	1,68,038
उद्योग और खनिज पदार्थ	2,859	2	2,861	87,128	89,989	7,958	32	7,990	1,80,240	1,88,230
ग्राम और लघु उद्योग	6,949	294	7,243	10,323	17,566	13,703	425	14,128	12,300	26,428
(4) उद्योग और खनिज पदार्थ	9,808	296	10,104	97,451	1,07,555	21,661	457	22,118	1,92,540	2,14,658
रेलवे	—	—	—	86,011	86,011	—	—	—	94,000	94,000
सड़कें	14,326	1,598	15,924	6,440	22,364	21,830	2,575	24,405	8,000	32,405
सड़क परिवहन	1,502	91	1,593	225	1,818	2,044	559	2,603	—	2,603
पर्यटन	144	13	157	60	217	394	22	416	350	766
बन्दरगाह	314	45	359	2,980	3,339	490	18	508	12,500	13,008

जहाज़रानी	—	—	—	5,268	5,268	—	263(घ)	263	5,500	5,7[illegible]
डाक और तार	—	—	—	5,059	5,059	—	—	—	7,900	7,900
असैनिक विमान-सेवा	—	—	—	4,900	4,900	—	—	—	5,500	5,500
प्रसारण	—	—	—	468	468	—	—	—	1,100	1,100
अन्य परिवहन	52	99	151	53	204	273	25	298	1,200	1,498
अन्य संचार-साधन	—	—	—	327	327	—	—	—	930	930
(5) परिवहन और संचार-साधन	16,338	1,846	18,184	1,11,791	1,29,975	25,031	3,462	28,493	1,36,980	1,65,473
सामान्य शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रम	16,011	721	16,732	4,072	20,804	31,906	2,104	34,010	7,800	41,810
तकनीकी शिक्षा	2,141	31	2,172	2,600	4,772	6,986	173	7,159	7,000	14,159
वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान	—	—	—	—	—	—	—	—	7,000	7,000
स्वास्थ्य	13,021	566	13,587	8,047	21,634	27,114	2,566	29,680	4,500	34,180
आवास	6,411	266	6,677	1,356	8,033	9,620	2,076	11,696	2,500	14,196
पिछड़े वर्गों का कल्याण	5,080	214	5,294	2,647	7,941	7,498	389	7,887	3,500	11,387

(क) स्थानीय विकास-कार्यों का खर्च शामिल है।

(ख) दूसरी योजना में बाढ़-नियन्त्रण का व्यय केन्द्र के अन्तर्गत दिखाया गया है।

(ग) इसमें दामोदर-घाटी-निगम के बिजली-कार्यक्रम और बण्डील तापीय केन्द्र की आंशिक व्यवस्था शामिल है।

(घ) अंडमान और निकोबार-द्वीपसमूह के लिए

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)
सामाजिक कल्याण	327	10	337	1,181	1,518	1,048	114	1,162	1,600	2,762
श्रमिक और श्रमिक-कल्याण	769	12	781	1,200	1,981	2,519	189	2,708	4,400	7,108
पुनर्वास	—	—	—	6,341	6,341	—	—	—	4,000	4,000
जन-सहयोग और स्थानीय कार्य	—	—	—	—	—	34 (ङ)	—	34	5,000	5,034
(6) **सामाजिक सेवाएं**	43,760	1,820	45,580	27,444	73,024	86,725	7,611	94,336	47,300	1,41,636
सांख्यिकी और अनुसन्धान	403	7	410			322	27	349	500	849
सूचना और प्रचार	276	21	297			562	58	620	600	1,220
स्थानीय संस्थाएं	415	44	459	5,086(च)	9,980	310	65	375	—	375
राज्यों की राजधानी-सम्बन्धी परियोजनाएं	3,196	—	3,196			2,475	—	2,475	—	2,475
अन्य	507	25	532			1,075	933	2,008	4,100	6,108

और दूसरी योजना में आगे बढ़ी। अब इसे द्रुत गति से आगे बढ़ाना होगा। आबादी-सम्बन्धी नवीनतम प्रवृत्ति, जो कि जनगणना-द्वारा व्यक्त हुई, अगले 10 या 15 वर्षों के लिए हमारे काम को और अधिक कठिन बना रही है। इस स्थिति को देखते हुए समाज को अधिकतम प्रयत्न और त्याग करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

58. सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रमों के लिए स्वीकृति 7,500 करोड़ रु० की वित्त-व्यवस्था का यह मतलब नहीं है कि वह इस क्षेत्र की सम्भावनाओं की सीमा की द्योतक है। जैसा कि पहले कहा गया है, तीसरी योजना में जिन तरीकों से बचतों का क्रमशः विस्तार किया जा सकता है, उनका गहन और निरन्तर अध्ययन आवश्यक है। योजना से बाहर के खर्चों की कड़ाई से जांच होनी चाहिए; योजना के भीतरी और उससे बाहर के मद्दों के खर्च में मितव्ययिता अपनाने से विकास के लिए कुछ वित्तीय साधन सुलभ हो जाएंगे। दूसरी योजना के अनुभव ने यह बता दिया है कि कराधान के साधन वस्तुतः उससे अधिक विस्तृत हैं, जिसकी इस समय कल्पना की जाती है। प्राविडेंट फंड, जीवन-बीमा का विस्तार तथा बचत को बढ़ावा देनेवाली इसी प्रकार की अन्य सामाजिक सुरक्षा-योजनाएं साधनों की वृद्धि करनेवाले समर्थ उपाय हैं। आवश्यकता इस बात की है कि देशव्यापी बचत-अभियान चलाया जाए, विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों में। राज्यों में ऐसे कदम उठाए जा रहे हैं, जिससे स्थानीय स्वायत्त-शासन-संस्थाओं पर अधिक ज़िम्मेदारी आए। अगर इन संस्थाओं के द्वारा समाज को स्थानीय विकास के कार्यक्रमों में अधिक दिलचस्पी और हिस्सा लेने के लिए प्रेरित किया जाए, तो विकास के लिए अधिक साधनों का संग्रह किया जा सकता है।

59. वित्तीय साधनों की सीमा कभी पूर्ण नहीं होती; यह प्रयत्नों के उस स्तर पर निर्भर करती है, जो परियोजनाओं के कार्यान्वयन, बचतों के संग्रह और उपभोग या प्राथमिकताविहीन पूंजी-विनियोग में साधनों की खपत को रोकने के लिए वित्तीय एवं अन्य उपायों के लिए किए जाते हैं। सरकारी क्षेत्र में पिछले 10 वर्षों में पर्याप्त पूंजी-विनियोग हुआ है और इस बात के लिए पूरी कोशिश होनी चाहिए कि उनसे पर्याप्त बचत प्राप्त हो, जिसके आधार पर अधिक प्रगति की योजना बन सके। यथोचित समय पर विकास को अपने लिए वित्तीय व्यवस्था स्वयं करनी चाहिए; पिछले पूंजी-विनियोग की बचत को आगे के विकास का एक साधन बनना चाहिए। यह बात ज़रूरी है कि कार्यान्विति के लिए अपनी परियोजनाओं को चुनते समय केन्द्रीय और राज्य-सरकारें हमेशा यह बात ध्यान में रखें कि इन पूंजी-विनियोगों से यथाशीघ्र फल-प्राप्ति हो। एक परियोजना को पूरा करने और उसे उत्पादन-योग्य बनाने में अगर अपेक्षाकृत थोड़ी देर भी हो जाए, तो पूंजी-विनियोग के लिए जो साधन प्राप्त हैं, उनमें उल्लेखनीय परिवर्तन आ जाता है। असली बात यह है कि जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था विकसित होती है, वैसे-वैसे आयोजन और उसकी कार्यान्विति के विभिन्न मद्दों में हुआ थोड़ा-बहुत सुधार भी संयुक्त रूप में बड़े परिणाम पैदा कर देता है। समस्या के इन पहलुओं पर पर्याप्त ध्यान देने से साधनों की वृद्धि, उस सीमा से आगे तक हो सकती है, जिनका इस समय निर्देश किया गया है।

60. इस प्रकार, साधनों की समस्या प्रशासकीय और संगठन-सम्बन्धी दक्षता के साथ सम्बद्ध है। अतिरिक्त साधनों की खोज, अनिवार्य रूप से, निरन्तर और विस्तृत धरातल पर होती रहनी चाहिए। तीसरी योजना की महत्वपूर्ण कसौटियां दो हैं : (क) खाद्य और कच्चे माल का उत्पादन किस सीमा तक बढ़ सकता है—आवश्यकता इस बात की

है कि प्रगति विभिन्नतापूर्ण के बजाय एक ओर तथा प्रभावपूर्ण हो; और (ख) निर्यात की आय में आवश्यक वृद्धि प्राप्त करने के लिए कितनी शक्ति और उत्साह का उपयोग होता है। इन क्षेत्रों में सफलता प्राप्त करके वित्त की वर्तमान सीमाओं को पार किया जा सकता है।

अनुबन्ध 1

तीसरी योजना के लिए राज्यों के साधन

(अगस्त-नवम्बर 1960 में हुए विचार-विमर्श के आधार पर)

(करोड़ रु०)

	आन्ध्र-प्रदेश	असम	बिहार	गुजरात	जम्मू-कश्मीर	केरल	मध्यप्रदेश	मद्रास	महाराष्ट्र	मैसूर	उड़ीसा	पंजाब	राजस्थान	उत्तर-प्रदेश	पश्चिम-बंगाल	सब राज्यों का योग
1. चालू राजस्व से बची हुई राशि, 1960-61 के कराधान की दर से	14.8	7	19.8	10.2	8	10.6	−7.7	−30.2	30.6	9.8	−21.1	14	0.5	−43.5	11.3	34.1
2. जनता से ऋण (शुद्ध)	40	9	23	30	—	23	25	52.9	36.9	14.7	21	16	20	35	27.6	374.17
3. छोटी बचतों का हिस्सा	17.5	12	42.5	39.2	2.3	8	17	20	66.8	10	8.5	35	10	50	38.5	377.3
4. अकोशित ऋण (शुद्ध)	3.2	2.8	8	4	1.7	3	2.3	5.9	9	5.5	1.5	3.9	5.5	17.3	5.5	79.1
5. योजना-भिन्न खर्चों के उपरान्त विविध पूंजीगत प्राप्तियों का शेष	−29.7	−17.2	−36.6	−6.4	−8.2	−19.2	−1.4	−33.7	15.3	—	−6.7	−28.3	10	−30.6	−40.6	−233.3
6. उद्योग-व्यवसायों का अंशदान	6.2	3.4	12.3	11	1.2	9.6	9.8	35.1	9.4	13	1.8	16.4	2	9.8	7.7	148.7
7. नकदी तथा अन्य सुरक्षित कोशों से निकासी	—	—	—	5	—	—	—	6	—	15	—	—	—	—	—	26
8. साधन, अतिरिक्त कराधान को छोड़ कर	52	17	69	93	5	35	45	56	168	68	5	57	48	38	50	806
9. अतिरिक्त कराधान	53	16	50	29	8	23	48	45	52	42	23	40	32	109	40	610
10. कुल साधन, अतिरिक्त कराधान को जोड़ कर	105	33	119	122	13	58	93	101	220	110	28	97	80	147	90*	1,416

*राज्य-सरकार ने इस राशि को सुधार कर 133 करोड़ रु० कर देने का सुझाव दिया है।

अध्याय 7

तीसरी योजना के लिए मूल्य-नीति

किसी विकासशील अर्थव्यवस्था में मूल्य-नीति को दो मुख्य उद्देश्यों पर ध्यान केन्द्रित करना होता है : (क) इस बात का निश्चय कि सापेक्षिक मूल्यों की गतिविधि उन प्राथमिकताओं और लक्ष्यों के साथ मेल खाती हैं, जिन्हें योजना में स्थान दिया गया है; और (ख) उन आवश्यक सामानों के मूल्य में ज्यादा वृद्धि न हो, जो कम आमदनीवाले वर्गों के उपभोग-क्षेत्र में आते हैं। इन दोनों ही बातों पर पहली और दूसरी योजनाओं में जोर दिया गया था तथा इन योजनाओं की अवधि में अवांछनीय प्रवृत्तियों को सुधारने अथवा मध्यम मार्ग पर रखने के लिए विभिन्न प्रकार के उपाय किए गए थे। फिर भी, पहली योजना की अवधि में मूल्य विस्तृत रूप से डांवाडोल हुए और दूसरी योजना की अवधि में उनकी प्रवृत्ति ऊपर उठने की रही। तीसरी योजना के प्रारम्भ में, थोक मूल्यों के स्तर और जीवन-यापन का व्यय दोनों पहले से ही काफी ऊंचे हैं और यह अत्यन्त आवश्यक है कि तीसरी योजना में मुद्रा स्फीति-विषयक दबाव न बढ़ें; साथ ही, समाज के विशेष निर्बल वर्गों का जीवन-स्तर सुरक्षित रहे।

पहली योजना में मूल्य

2. अगले पृष्ठ की तालिका (संख्या 1) में पहली योजना की अवधि में मूल्यों की प्रवृत्तियां दिखाई गई हैं। योजना के अन्त में थोक मूल्यों का सूचनांक मार्च 1951 की अपेक्षा करीब 22 प्रतिशत कम था। परन्तु यह ध्यान में रखना होगा कि यह तुलना बहुत-कुछ भ्रमपूर्ण है, क्योंकि मुद्रा-स्फीति के दबाव सन् 1951 में कोरिया की लड़ाई के कारण बहुत ही अधिक थे। सन् 1950 के मुकाबले में, मूल्यों के सामान्य सूचनांक में गिरावट कम थी—करीब 8 प्रतिशत; खाद्य-सामग्रियों के मूल्यों में करीब 14 प्रतिशत गिरावट आई थी, कुछ अन्य वर्गों—जैसे, ईंधन, बिजली, प्रकाश और स्निग्ध पदार्थों तथा उत्पादन-सामग्रियों—के मूल्य में वृद्धि परिलक्षित हुई। कोरिया की लड़ाई खत्म होने और सन् 1951 में सरकार-द्वारा की गई मुद्रा-स्फीति-विरोधी वित्तीय एवं मुद्रा-विषयक कार्रवाइयों के कारण मूल्यों में उल्लेखनीय गिरावट आई—सूचनांक मार्च 1951 के 125.2 से गिर कर मार्च 1952 में 99.9 पर आ गया। अगले दो वर्षों तक सूचनांक कमोबेश इसी स्तर पर रहा। सन् 1953-54 में बढ़िया फसल होने के कारण मूल्यों में तेजी से गिरावट आई—खास तौर पर खाद्यान्नों के मूल्यों में; खाद्यान्नों के मूल्यों का सूचनांक मार्च 1953 के 102.2 से गिर कर एक साल बाद 98.6 हो गया और मार्च 1955 में 82.9। इस परिस्थिति को देख कर ही योजना के व्यय की सीमा में वृद्धि की गई और सरकारी खाते में खाद्यान्नों की कुछ खरीद हुई। जुलाई 1955 तक मूल्यों में ऊपर उठने की प्रवृत्ति साफ दिखाई पड़ी। योजना के बाकी समय में यही प्रवृत्ति जारी रही। मार्च 1956 में थोक मूल्यों का सूचनांक 98.1, अर्थात् सन् 1952-53 के स्तर से कुछ ही नीचा था।

3. श्रमिकों के अखिल भारतीय जीवन-यापन-व्यय का सूचनांक (1949=100) मार्च 1951 में 103 था। वर्ष-प्रति-वर्ष इसमें काफी परिवर्तन होते रहे और मार्च 1955

तालिका-संख्या 1
थोक मूल्यों का सूचनांक : 1950-56
(आधार : 1952-53=100)

(मार्चः सप्ताहों का औसत)

वस्तुएं	1950	1951	1952	1953	1954	1955	1956	1950 की तुलना में 1956 में प्रतिशत परिवर्तन	1951 की तुलना में 1956 में प्रतिशत परिवर्तन
1. खाद्य पदार्थ	108.3	122.4	93.7	102.2	98.6	82.9	92.8	−14.3	−24.2
अनाज	92	100	95	100	88	70	86	−6.5	−14.2
दालें	80	102	85	98	71	49	77	−3.8	−24.5
2. शराब और तम्बाकू	91.6	112.9	121.6	92.8	96	86	78.7	−14.1	−30.3
3. ईंधन, बिजली, प्रकाश और स्निग्ध पदार्थ	91.1	97.5	98	98	95.7	96.7	96.8	+6.3	−0.7
4. औद्योगिक कच्ची सामग्रियां	119.1	153.7	103.2	101.5	106.2	97.2	109.4	−8.1	−28.8
कच्ची कपास	93	144	109	96	108	92	107	+15	−25.7
तेलहन	132	149	85	115	109	71	106	−19.7	−28.9
5. उत्पादक सामान	98.9	118.7	107.6	98.9	100.6	101.1	102.9	+4	−13.3
मध्यवर्ती उत्पादन	102.1	132.6	108.4	99	98.5	97.4	110.5	+8.2	−16.7
तैयार उत्पादन	98.3	116.5	107.5	98.8	101.2	101.7	101.5	+3.4	+12.8
सब वस्तुएं	106.4	125.2	99.9	100.8	100.3	90.8	98.1	−7.8	−21.7

में यह गिर कर 94 तक पहुंच गया, पर योजनाकाल के अन्त तक यह फिर बढ़ कर 100 हो गया। पांच वर्षों की अवधि में सूचनांक में 3 प्रतिशत की गिरावट आई, पर पहली योजना के समाप्त होने से पहले ही ऊपर उठने की प्रवृत्ति आरम्भ हो चुकी थी। मार्च 1951 के अन्त तक समाप्त होनेवाले 12 महीनों में सूचनांक में 6 प्रतिशत से कुछ अधिक वृद्धि हुई।

4. यह सही है कि पहली योजना के आरम्भ-काल में मूल्यों का स्तर अनावश्यक रूप से ऊंचा था और उसमें सुधार करनेवाली गिरावट जरूरी थी, पर इसमें कम सन्देह की गुंजायश है कि योजना के मध्य-काल में अनाजों के मूल्य में जो गिरावट आई, वह आवश्यकता से अधिक और हानिकारक थी। इस गिरावट की प्रवृत्ति को ठीक समय पर रोका नहीं जा सका, क्योंकि बहुत समय तक इस बात में सन्देह रहा कि वह उचित स्तर कौन-सा होगा, जहां सरकार को खरीदारी करनी चाहिए।

दूसरी योजना में मूल्य

5. दूसरी योजना की अवधि को मूल्यों में वृद्धि की अवधि माना जाता है, हालांकि इस मूल्य-वृद्धि का कुछ अंश पहले की गिरावट के सुधार के रूप में था। पांच वर्षों की अवधि में, थोक मूल्यों के सामान्य सूचनांक में करीब 30 प्रतिशत की वृद्धि हुई; सामूहिक रूप से खाद्यान्नों के मूल्य में करीब 27 प्रतिशत की, औद्योगिक कच्ची सामग्रियों के मूल्य में 45 प्रतिशत की और उत्पादक सामान के मूल्य में 25 प्रतिशत से कुछ अधिक की वृद्धि हुई। अगली तालिका-संख्या 2 में इसकी एक झांकी प्रस्तुत की गई है।

6. स्पष्ट है कि अनाजों का सूचनांक, जो मार्च 1956 में 100 से नीचे था, अगले तीन वर्षों में तेज़ी से ऊपर उठा। दालों की भी यही प्रवृत्ति रही। 1961 में अनाजों का सूचनांक वापस 100 पर आ गया और दालों का 93 पर। 'खाद्य पदार्थों' के अन्य अंगों के मूल्यों में जो वृद्धि हुई, वही इस वर्ग की चीज़ों के मूल्यों की निरन्तर ऊपर उठने की प्रवृत्ति के लिए ज़िम्मेदार है। खाद्यान्नों की सापेक्षिक कमी दूसरी योजना के प्रारम्भिक काल में मूल्य-वृद्धि का प्रधान कारण थी। योजनाकाल के उत्तरार्द्ध में, मूल्य-वृद्धि की प्रवृत्ति का मुख्य कारण कृषि-सम्बन्धी कच्चे माल की कमी था। मार्च 1959 के बाद थोक मूल्यों के सूचनांक में जो 14 प्रतिशत की वृद्धि हुई, उसके दो-पंचमांश का श्रेय कच्चे सामान के मूल्यों में वृद्धि को और बाकी दो-पंचमांश का श्रेय उत्पादक सामान के मूल्यों में वृद्धि को था—आंशिक रूप से यह कच्चे सामान के मूल्यों में वृद्धि का परिणाम था।

7. दूसरी योजना की अवधि में थोक मूल्यों की निरन्तर ऊपर उठने की प्रवृत्ति का मुख्य कारण, निस्सन्देह, आबादी और मुद्राजन्य आय में वृद्धि के फलस्वरूप मांग का बढ़ता हुआ दबाव था। आपूर्ति-विषयक तत्वों ने भी समय-समय पर अपना हिस्सा अदा किया। सन् 1957-58 में गत वर्ष की अपेक्षा खाद्यान्नों का उत्पादन 60 लाख टन कम हुआ। फिर, 1959-60 में भी गत वर्ष की अपेक्षा 40 लाख टन कम खाद्यान्न-उत्पादन हुआ। उस वर्ष पिछले वर्ष की तुलना में कपास का उत्पादन 18 प्रतिशत कम, पटसन का उत्पादन 12 प्रतिशत कम और तेलहन का उत्पादन करीब 8 प्रतिशत कम हुआ। कृषि-उत्पादन की इन कमियों और अस्थिरताओं ने सम्पूर्ण रूप में मूल्य-स्तर पर प्रतिकूल प्रभाव डाला। दूसरी योजना के अन्त में खाद्यान्न-मूल्यों का स्तर बहुत ऊंचा तो नहीं कहा जा सकता, पर यह मानना पड़ेगा कि दूसरी योजना की अवधि में इन मूल्यों में कई बड़े उलट-फेर हुए।

दरअसल, अगर सन् 1960-61 के खाद्यान्न-मूल्यों के औसत स्तर की तुलना सन् 1955-56 के औसत स्तर से की जाए, तो वृद्धि 37 प्रतिशत तक ठहरती है। बाद में खाद्यान्नों के मूल्यों में जो अपेक्षाकृत स्थिरता आई, वह बहुत-कुछ पी० एल० 480 के आयातों के कारण थी।

8. थोक मूल्यों की तरह ही, श्रमिक-वर्ग के जीवन-यापन-व्यय का सूचनांक भी दूसरी योजना की सम्पूर्ण अवधि में ऊपर उठने की प्रवृत्ति दिखाता रहा। यह सूचनांक (1949=100), जो दूसरी योजना के प्रारम्भ में 100 था, योजना के अन्त में 124 पर आ पहुंचा। योजनाकाल के पूर्वार्द्ध में सूचनांक में वृद्धि मुख्यतः खाद्य पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि के कारण हुई। परन्तु अन्तिम दो वर्षों में खाद्यान्नों के मूल्यों में जो अपेक्षाकृत स्थिरता आई, वह जीवन-यापन-व्यय को ऊपर चढ़ने से न रोक सकी। इसका कारण यह है कि खाद्य-वर्ग में खाद्यान्नों के अतिरिक्त कुछ पदार्थों और जीवन-यापन-व्यय के कई अन्य तत्वों के मूल्य में वृद्धि होती रही।

9. दूसरी योजना का अनुभव इस बात को पुष्ट करता है कि अगर ठोस पूंजी-विनियोग का कार्यक्रम हो, तो मूल्यों को अपेक्षाकृत स्थिर रखने की सम्भावनाएं इस बात पर निर्भर करती हैं कि कृषि-उत्पादन, अर्थात् खाद्य-पदार्थों और कच्चे माल का उत्पादन, किस हद तक बढ़ाया जा सकता है। अगर अर्थव्यवस्था के विकास की गति को तीव्र करना है, तो उद्योग, खनन और परिवहन को शीघ्रता से विकसित करना होगा। पर इस समस्त विकास का आधार निश्चय ही एक अधिक दक्षतापूर्ण एवं प्रगतिशील कृषि होना चाहिए। इससे यह परिणाम निकलता है कि चूंकि कृषि-उत्पादन अनिश्चयपूर्ण वर्षा पर निर्भर करता है, इसलिए द्रुत उद्योगीकरण का कार्यक्रम आर्थिक अस्थिरता पैदा किए बिना तभी पूरा किया जा सकता है, जब सरकार के पास समय-समय पर होनेवाली कमियों को पूरा करने के लिए पर्याप्त स्टाक हो। इसके अलावा कृषि-उत्पादनों के मूल्यों पर ऋतु और प्रदेश-विषयक गम्भीर विभिन्नताओं का प्रभाव पड़ता है, जो कि अक्सर सट्टेबाज़ी से सम्बद्ध संचय के कारण और भी उभड़ती हैं। सरकार न्यायपूर्ण क्रय और विक्रय के द्वारा इन विभिन्नताओं को कम कर सकती है।

तीसरी योजना के लिए दृष्टिकोण

10. अब प्रश्न यह है कि तीसरी योजना के लिए मूल्यों के बारे में दृष्टिकोण क्या हो? स्पष्टतः एक विकासशील अर्थव्यवस्था में मांग-विषयक तत्वों का रुख ऊपर की ओर होना चाहिए। योजना में यह कल्पना की गई है कि पूंजी-विनियोग के वर्तमान स्तर 11 प्रतिशत को बढ़ा कर पांच वर्ष की अवधि के अन्त तक लगभग 14 प्रतिशत कर दिया जाए। इससे मुद्रा की आमदनी बढ़ेगी और इसके मुकाबले में सामान की अतिरिक्त आपूर्ति करनी होगी। पूंजी-विनियोग की परिवर्द्धित राशि के लिए वित्तीय उपायों से वित्त की व्यवस्था करनी होगी जिसके फलस्वरूप कुछ चुने हुए क्षेत्रों में मूल्य-वृद्धि होगी। योजना के फलस्वरूप बचत में अधिक वृद्धि होगी। एक बड़ी मात्रा में विदेशी सहायता की कल्पना तो की ही गई है, पर यह ज़रूरी होगा कि स्वदेशी बचतों के वर्तमान स्तर 8.5 प्रतिशत को बढ़ा कर आगामी पांच वर्षों में करीब 11.5 प्रतिशत तक ले जाया जाए। परन्तु यदि सब प्रकार की उपभोक्ता-सामग्रियों की मांग पूरी करनी पड़े, तो यह लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सकता; कम ज़रूरी उपभोक्ता-सामग्रियों के उपभोग पर बन्धन लगाना ही होगा, ताकि योजना के पूंजी-विनियोग

तालिका-संख्या 2

थोक मूल्यों का सूचनांक : 1956-61

(आधार : 1952-53=100)

(मार्च: सप्ताहों का औसत)

वस्तुएं	1956	1957	1958	1959	1960	1961	1956 की तुलना में 1961 में प्रतिशत वृद्धि
1. खाद्य पदार्थ	92.8	102.3	102.3	113.8	117	117.6	(+)26.7
अनाज	86	99	95	102	103	100	(+)16.3
दालें	77	84	78	113	90	93	(+)20.8
2. शराब और तम्बाकू	78.7	87.2	94.9	100.3	96.4	114.2	(+)45.1
3. ईंधन, बिजली, प्रकाश और स्निग्ध पदार्थ	96.8	106.5	114.5	115.6	117.8	121.3	(+)25.3
4. औद्योगिक कच्ची सामग्रियां	109.4	117.3	113.3	116.2	131.9	159.1	(+)45.4
कच्ची कपास	107	113	103	102	113	111	(+) 3.8
तेलहन	106	119	113	128	141	150	(+)50.9
5. उत्पादक सामान	102.9	106.2	107.6	108.2	116.9	129.4	(+)25.7
मध्यवर्ती उत्पादन	110.5	108.9	106.8	109.4	121.3	137.2	(+)24.1
तैयार उत्पादन	101.6	105.7	107.7	108	116.1	128.1	(+)26.1
सब वस्तुएं	98.1	105.6	105.4	112.3	118.9	127.5	(+)30

के कार्यक्रमों के लिए साधन मिल सकें। इसके अतिरिक्त, इस समय विदेशी मुद्रा-सुरक्षित कोश के सम्बन्ध में स्थिति दूसरी योजना की अपेक्षा अधिक पेचीदा है। दूसरी योजना में पूंजी-विनियोग में वृद्धि के कारण मुद्रा-स्फीति-विषयक जो दबाव बढ़ा था, उसके एक अंश को विदेशी मुद्रा-सुरक्षित कोश से धन निकाल कर प्रभावहीन कर दिया गया था। तीसरी योजना में धीमापन लानेवाला यह तत्व उपलब्ध नहीं है। दरअसल, तीसरी योजना की यह मांग है कि निर्यात बढ़ाने के लिए पूर्णतम प्रयत्न किए जाएं। इससे निर्यात होने-योग्य वस्तुओं के मूल्यों में वृद्धि की प्रवृत्ति आएगी और अपने देश में उनकी खपत कम हो जाएगी।

11. जहां तक आपूर्ति का सम्बन्ध है, बुनियादी तौर पर आवश्यक उपभोक्ता-वस्तुओं और कच्ची सामग्रियों के उत्पादन के बारे में योजना के लक्ष्य स्वदेशी उपभोक्ता और निर्यात की सम्भावित ज़रूरतों की सावधानीपूर्वक जाच करने के बाद निश्चित किए गए हैं। खाद्यान्न के उत्पादन में 30 प्रतिशत की वृद्धि करनी है, ताकि न केवल आबादी और आय के बढ़ने से पैदा हुई मांग को पूरा किया जा सके, बल्कि खाद्यान्नों-सम्बन्धी वर्तमान कमी भी पूरी हो, जिसकी पूर्ति अभी आयात-द्वारा की जाती है। चावल और गेहूं के उत्पादन में बड़े पैमाने पर वृद्धि की व्यवस्था इस प्रवृत्ति को ध्यान में रख कर की गई है कि आय-वृद्धि के साथ-साथ लोग घटिया अनाजों के स्थान पर बढ़िया अनाज लेना पसन्द करते हैं। कपास के उत्पादन में 37 प्रतिशत, तेलहन मे 38 प्रतिशत और चीनी में 25 प्रतिशत वृद्धि की बात सोची गई है। प्रति व्यक्ति कपड़े के उपभोग में वृद्धि की व्यवस्था इस प्रकार की गई है कि उसकी मात्रा सन् 1960-61 के 15.5 गज़ से बढ़ कर सन् 1965-66 में 17.2 गज तक पहुंच जाए। कारखानों, बिजली के करघों और हथकरघों के कपड़े का उत्पादन 25 प्रतिशत बढ़ाने का विचार है। योजनाकाल में राष्ट्रीय आय में वृद्धि का जो स्वरूप रखा गया है, उसमें पूंजी-विनियोग में बड़ी वृद्धि होने के बावजूद प्रति व्यक्ति उपभोग में थोड़ी-बहुत वृद्धि होगी ही। इस तथ्य से कि तीसरी योजना के शुरू में सरकार के पास करीब 28 लाख टन खाद्यान्न और आगामी कुछ वर्षों में पी० एल० 480 के अन्तर्गत 1.44 करोड़ (मीट्रिक) टन गेहूं आएगा, यह आशा बंधती है कि गेहूं का भाव—और कुछ सीमा तक, एक वर्ग के रूप में खाद्यान्नों का भाव—अगले कुछ वर्षों में विशेष नही चढ़ेगा, बशर्ते कि वर्षा की स्थिति बहुत ही बिगड न जाए।

12. पिछले कुछ वर्षों में देश की उत्पादन-क्षमता कृषि और उद्योग, दोनों ही क्षेत्रों में काफी बढ़ी है। तीसरी योजना में उर्वरकों की उपलब्धता में पर्याप्त वृद्धि की आशा की गई है। सिचाई की सुविधाओ के उपयोग में देर न होने की व्यवस्था की जा रही है। औद्योगिक उत्पादन पिछले कुछ वर्षों में प्रभावपूर्ण ढंग से बढ़ा है और यद्यपि आयातित कच्ची सामग्रियों और उपकरणों के मामले में कठिनाइयां बनी रहेंगी, फिर भी कुल मिला कर योजनाकाल के लिए स्थिति आशाजनक है। योजना के लिए आवश्यक वित्तीय साधनों का सग्रह करने की योजना एक सीमित क्षेत्र में घाटे की अर्थव्यवस्था आवश्यक कर देती है; इस बात की पूरी कोशिश की जाएगी कि सरकारी और निजी क्षेत्रों में मुद्रा-उपलब्धि में वृद्धि उत्पादन की वास्तविक आवश्यकताओं तक सीमित रहे। इस प्रकार, योजना मुद्रा-स्फीति के दबावों को कम करने, और आवश्यक मांगों की वृद्धि तथा उनके अनुकूल आपूर्तियों की उपलब्धता के बीच सन्तुलन कायम करने की आवश्यकता को ध्यान में रखकर तैयार की गई है।

13. इस प्रकार के सन्तुलन और बचावों के बावजूद उल्लेखनीय—और गड़बड़ी पैदा करनेवाली भी—मूल्य-वृद्धि की सम्भावनाओं को पूर्णतः समाप्त नहीं किया जा सकता। पहली बात तो यह, कि वर्षा-सम्बन्धी अनिश्चितता पूर्ववत् विद्यमान् है। किसी वर्ष कृषि-उत्पादन में यदि 5 प्रतिशत भी कमी आ जाए, तो बिक्री-योग्य अतिरिक्त सामग्रियों में काफी कमी आ जाएगी और अनुपात से कहीं अधिक मूल्य बढ़ जाएंगे। दूसरी बात यह, कि योजना में उपभोग पर जो विभिन्न बन्दिशें लगाई गई हैं, उनका सदा पूरा-पूरा पालन नहीं भी हो सकता है; परिणामस्वरूप, योजना-अवधि के एक अंश में जरूरत से ज्यादा मांगें बनी रह सकती हैं। तीसरी बात यह, कि यद्यपि योजना का लक्ष्य विभिन्न क्षेत्रों में विकास की गति में सन्तुलन स्थापित करना है, तथापि कभी-कभी असन्तुलन पैदा होना लगभग निश्चित है; विभिन्न क्षेत्रों में पूंजी-विनियोग और उत्पादन का निश्चय वस्तुतः ठीक-ठीक नहीं किया जा सकता। फिर विभिन्न स्तरों पर त्रुटियां रह जाने की भी पूरी सम्भावना है।

14. इस प्रकार, इसमें कोई सन्देह नहीं है कि तीसरी योजना की अवधि में मूल्यों पर कड़ी नजर रखनी होगी—खास तौर पर, आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों पर, और एक सुव्यवस्थित नीति पहले से ही तैयार रखनी पड़ेगी, ताकि कठिनाइयों के वस्तुतः उग्र होने से पूर्व ही उनका इलाज किया जा सके। जिस चीज़ के बारे में विशेष रूप से सावधान रहना पड़ेगा, वह है मुद्रा-स्फीति के दबावों में वृद्धि, हालांकि कुछ वस्तुओं की सापेक्षिक बहुलता और मूल्यों में गिरावट की स्थिति समय-समय पर उपस्थित होती रह सकती है। इन दोनों प्रकार की प्रवृत्तियों की रोकथाम करने के लिए हमें तैयार रहना चाहिए। मूल्य में निरन्तर वृद्धियों और गिरावटों की बात छोड़ भी दें, तो ऋतु-सम्बन्धी उतार-चढ़ावों और मूल्य-सम्बन्धी विषमताओं के चलते सुधारमूलक कार्रवाइयां करनी ही पड़ेंगी। किसानों को अपने उत्पादनों के लिए स्थिर और उचित मूल्य का निश्चय होने से अधिक प्रोत्साहन मिलेगा, अपेक्षा इसके कि मूल्य ऊंचे तो हों, पर अक्सर उतार-चढ़ाव आने के कारण अनिश्चित रहें।

मूल्य-नीति का क्षेत्र और सीमाएं

15. यह बात उल्लेखनीय है कि मूल्य-नीति को सम्पूर्ण आर्थिक-नीति का एक अंग समझा जाना चाहिए; प्रश्न केवल यह नहीं है कि कुछ खास-खास मूल्यों के बारे में क्या किया जा सकता है अथवा क्या किया जाना चाहिए। मूल्यों के स्तर और स्वरूप सरकार-द्वारा किए जानेवाले कुछ बुनियादी आर्थिक निर्णयों से सम्बद्ध होते हैं, परन्तु बाकी निर्णय उत्पादकों, उपभोक्ताओं और पूंजी-विनियोगकर्ताओं पर निर्भर करते हैं जो विस्तार से फैले हुए होते हैं और जो अपने आर्थिक लाभ की दृष्टि से काम करते हैं। योजना का प्रयत्न यह होता है कि इन सम्बद्ध निर्णयों को एक धरातल पर लाया जाए, पर अल्प-काल में मूल्यों में कहां तक परिवर्तन लाए जा सकते हैं, इसकी भी सीमाएं हैं। नीति-सम्बन्धी सभी प्रमुख निर्णय—जैसे, कितना पूंजी-विनियोग किया जाए; अल्पकालीन शीघ्र परिपक्व होनेवाले पूंजी-विनियोगों को कितनी प्राथमिकता दी जाए; आवश्यक साधन जुटाने के वैकल्पिक तरीकों के बीच चुनाव; निर्यात की मात्रा में वृद्धि या कमी—मूल्यों की गतिविधियों से सम्बद्ध कुछ निर्णयों के आधार पर किए जाते हैं।

इन सब निर्णयों को ध्यान में रखते हुए यह अवश्य ही स्वीकार किया जाना चाहिए कि मूल्यों के स्वरूप को बदलने का क्षेत्र किसी भी प्रकार सीमाहीन नहीं है।

16. विकास के कारण मूल्यों में कुछ चढ़ाव आते ही हैं और उन्हें स्वीकार किया जाना चाहिए। पूंजी-विनियोग बढ़ाने की प्रक्रिया में वस्तुओं और सेवाओं की उपलब्धि के मुकाबले मुद्राजन्य आय ज्यादा बढ़ती है। पूंजी-विनियोग कुछ समय के बाद ही वास्तविक राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि करता है और कुछ पूंजी-विनियोग अन्य पूंजी-विनियोगों की अपेक्षा परिपक्व होने में अधिक समय लेते हैं। जितना अधिक पूंजी-विनियोग-सम्बन्धी प्रयत्न होता है, उतना ही अधिक मूल्यों में चढ़ाव आता है। इसी प्रकार, जितनी अधिक देर में परिपक्व होनेवाली हाथ में ली जाएंगी, उतना ही अधिक अर्थव्यवस्था पर भार पड़ेगा। जन-शक्ति तथा अन्य साधनों का नए कामों में उपयोग करने से पारिश्रमिक के रूप में अधिक मुद्रा खर्च करनी पड़ती है। यह भी मुद्रा-स्फीति बढ़ानेवाला एक उल्लेखनीय तत्व है।

17. दूसरी ओर, कुछ ऐसे तत्व भी हैं, जो मूल्य-वृद्धि-सम्बन्धी दबावों को कम कर देते हैं। जिस सीमा तक अप्रयुक्त साधन उपलब्ध होंगे और कृषि-जैसे कुछ क्षेत्रों में अपेक्षाकृत कम पूंजी-विनियोग करके शीघ्र उत्पादन-वृद्धि की गुंजायश होगी, उस सीमा तक ऊपर उल्लिखित विस्तारात्मक दबावों को कम किया जा सकता है। फिर, पहले किए गए कुछ पूंजी-विनियोग चालू उत्पादन में वृद्धि करते है, और ज्यों-ज्यों टेक्नोलाजी-विषयक तथा संगठनात्मक क्षमता सुधरेगी, त्यों-त्यों लागत में सापेक्ष वृद्धि हुए बिना ही उत्पादन में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि होगी। ये कुछ ऐसे तत्व हैं, जिन्होंने अनुकूल परिस्थितियों में, कुछ देशों के लिए मूल्यों में पर्याप्त स्थिरता रखते हुए विकास के ऊंचे स्तर प्राप्त करना सम्भव किया। उचित मूल्य-नीति से पुष्ट उत्पादन और बचत-सम्बन्धी आवश्यक प्रयत्नों से उन विस्तारात्मक दबावों पर सफलतापूर्वक नियन्त्रण प्राप्त किया जा सकता है, जो विकास-कार्यों के कारण सामने आते है।

18. परन्तु ऊपर उल्लिखित विस्तारात्मक और न्यूनताकारी तत्वों के सन्तुलन की प्रवृत्ति अस्थिरतापूर्ण तथा अनिश्चयात्मक होती है। एक अर्द्धविकसित अर्थव्यवस्था को लगातार कई वर्ष तक पूजी-विनियोग में वृद्धि करनी होती है और अकुशल ग्रामीण श्रमिकों की एक बड़ी संख्या को कुशल कर्मचारी और टेक्नीशियन में परिणत करना होता है। अनुकूलता ग्रहण करने की इस प्रक्रिया में कई कठिनाइयां सामने आती हैं। चूंकि आवश्यक वास्तविक साधनों की व्यस्वस्था मुद्रा-विषयक प्रोत्साहन देकर और अर्थव्यवस्था के तीव्रतापूर्वक विस्तारवाले क्षेत्रों में काफी मुनाफे की गुंजायश बना कर की जाती है, इसलिए यह जरूरी है कि मूल्य-स्तर में सामान्य चढ़ाव के लिए तैयार रहा जाए, परन्तु साथ ही आवश्यक वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि रोकने के लिए हर सम्भव प्रयत्न किया जाना चाहिए।

19. फिर भी, निरन्तर अथवा अत्यधिक मूल्य-वृद्धि के खतरे स्पष्ट हैं। अगर योजना के वित्तीय व्ययों की व्यवस्था उच्चतर मूल्यों-द्वारा ही होती है, तो योजना का यथार्थ तत्व उसी अनुपात में कम हो जाता है। मुद्रा-स्फीति की स्थिति साधनों के सर्वाधिक सुन्दर उपयोग की दृष्टि से हितकारी नहीं है। यह सापेक्ष मूल्यों में गड़बड़ी पैदा करती है और साधनों को उन उपयोगों से दूर ले जाने की चेष्टा करती है, जिनका

सामाजिक दृष्टि से बड़ा महत्व है। स्थिर आय प्राप्त करनेवाले लोगों से, जिनमें समाज के अत्यन्त निर्बल वर्गों के लोग भी होते हैं, यह आशा नहीं की जा सकती कि वे अपने वास्तविक जीवन-स्तर को बहुत समय तक त्यागे रहेंगे, और फिर, अगर मुद्रा-विषयक आय एक विस्तृत क्षेत्र में बढ़ जाए, तो उसका परिणाम यही होगा कि मुद्रा-स्फीति के चक्कर में एक और घुमाव आ जाएगा। इसलिए, समस्या बहुत अधिक और बहुत कम हस्तक्षेप के बीच सही सीमा-रेखा खींचने की और अर्थव्यवस्था के कतिपय महत्वपूर्ण स्थलों पर नियन्त्रण तथा नियमन की समुचित तकनीकें निकालने की है।

मूल्य-नीति के अंग

20. इस स्थिति में मूल्य-नीति का एक महत्वपूर्ण अंग वित्तीय और मुद्रा-विषयक अनुशासन है। वित्त-नीति का संचालन इस प्रकार करना होगा कि अतिरिक्त क्रय-शक्ति विनष्ट हो जाए, क्योंकि यह उपलब्ध वस्तुओं की तुलना में उनकी मांग को बढ़ाती है। दूसरे शब्दों में, कराधान की मात्रा उपभोग को योजना में निर्धारित सीमाओं के भीतर रखने-योग्य होनी चाहिए। सरकारी क्षेत्र के पूंजी-विनियोग-कार्यक्रम की आवश्यकताओं की पूर्ति जनता से वास्तविक साधन प्राप्त करके होनी चाहिए, न कि ताज़ा क्रय-शक्ति को जन्म देकर। दूसरे शब्दों में, वित्त-नीति के हर पहलू का लक्ष्य उपभोग पर बन्धन लगाना और अधिक प्रभावशाली ढंग से बचत को प्रोत्साहन देना होना चाहिए।

21. इस सन्दर्भ में दो बातें सरकारी उद्योग-व्यवसायों की मूल्य-नीति के बारे में भी कही जा सकती हैं। सार्वजनिक बचत को बढ़ाने में इन उद्योग-व्यवसायों का बड़ा महत्व है। इसलिए यह ज़रूरी है कि ये मुनाफे में चलें और इस काम के लिए आवश्यक दक्षता का ऊंचा स्तर बनाए रखें। उनकी मूल्य-नीति ऐसी होनी चाहिए कि सार्वजनिक कोश से लगाई गई पूंजी का पूरा-पूरा मुनाफा मिले।

22. मुद्रा-नीति को भी वित्त-नीति के अनुकूल होना चाहिए। जिस प्रकार वित्त-नीति को सरकारी कार्रवाइयों-द्वारा अतिरिक्त क्रय-शक्ति का निर्माण रोकना चाहिए, उसी प्रकार मुद्रा-नीति को बैंकों-द्वारा दिए जानेवाले ऋणों का नियमन करना चाहिए। एक विकासशील अर्थव्यवस्था की ऋण की आवश्यकताएं लगातार बढ़ती जाती हैं और उनकी व्यवस्था भी करनी होती है। पर इस बात का ध्यान रखना होगा कि निजी क्षेत्र में विकास की मात्रा और गति ऐसी न हो कि योजना में बताई गई सीमाओं को लांघ जाए और पूंजी-विनियोग के लिए उपलब्ध सीमित साधनों पर अनुचित दबाव पड़े। वस्तुओं को मुनाफाखोरी के लिए दबा लेने और माल जमा करने की प्रवृत्ति को खास तौर पर निरुत्साहित किया जाना चाहिए। रिज़र्व बैंक ने अभी तक जिस विशिष्ट ऋण-नियन्त्रण की नीति का अवलम्बन किया है, उसे बाद में बैंकों ने सार्वभौतिक ऋण-निर्माण पर रोक लगाने-विषयक कार्रवाइयों-द्वारा पुष्ट किया है। सूद की दरें चढ़ गई हैं और यद्यपि बैंक-दर बढ़ाई नहीं गई है, तथापि रिज़र्व बैंक-द्वारा एक नई पद्धति चलाई गई है, जिसके अनुसार बैंकों-द्वारा निर्धारित सीमा से अधिक उधार लिए जाने पर दण्ड लगाया जाता है। मुद्रा-नीति की व्यवस्था-सम्बन्धी विवरण को छोड़ भी दें, तो इस तथ्य को मानना पड़ेगा कि भारत में मांग के मुकाबले में पूंजी की कमी है और अर्थव्यवस्था के

दूरगामी हित को दृष्टि में रखते हुए इसके लिए दिया जानेवाला मूल्य खास मामलों को छोड़ कर, वास्तविक लागत को अभिव्यक्त करता है। यह बात योजना की विभिन्न परियोजनाओं को प्राथमिकता देने, और इन परियोजनाओं से मिलनेवाले उत्पादनों अथवा सेवाओं के मूल्यों का निर्धारण करने, दोनों ही दृष्टियों से महत्वपूर्ण है।

23. देश में वस्तुओं की कमी को दूर करने के लिए कुछ हद तक वाणिज्य-नीति का भी उपयोग हो सकता है, पर चूंकि आगामी अनेक वर्षो तक आयात कम करने और निर्यात बढ़ाने की जरूरत है, इसलिए देश मे वस्तुओं के मूल्य मे लगातार वृद्धि की प्रवृत्ति रहेगी। वस्तुतः विदेशी मुद्रा-अर्जन की आवश्यकता को देखते हुए, देश के उत्पादन मे से बचत करनी होगी, भले ही इससे देश मे मूल्य-वृद्धि हो जाए। अभी देश विदेशी मुद्रा-विषयक जिस स्थिति का सामना कर रहा है, उसमें अगर विदेशी मुद्रा-अर्जन के विस्तार और देश के उपभोक्ताओं-द्वारा अधिक मूल्य चुकाए जाने के बीच से किसी एक को चुनना हो, तो निश्चय ही पहली बात को प्रमुखता मिलनी चाहिए।

24. वित्तीय और द्रव्य-विषयक पर्याप्त अनुशासन के अभाव मे नियमन-विषयक अन्य उपायों का वाछित फल नही निकल सकता। पर वित्त-नीति और द्रव्य-नीति भी अपने-आप में इतनी समर्थ नहीं है कि विभिन्न मूल्यों के बीच उचित सम्बन्ध बनाए रख सकें अथवा थोड़ी और स्थिर आमदनीवाले वर्गो को अनुचित कठिनाइयों से बचा सकें। इसलिए यह जरूरी हो सकता है कि कुछ क्षेत्रो मे भौतिक आवंटन और प्रत्यक्ष नियन्त्रण रहे। उदाहरण के लिए, इस बात से कोई असहमत न होगा कि जब तक इस्पात की कमी है, तब तक स्वीकृत प्राथमिकताओ के आधार पर विभिन्न उपयोगों के लिए इसका वितरण हो। निस्सन्देह, यह जरूरी हो सकता है कि जिस वस्तु की कमी हो, उसके दाम बढ़ा दिए जाएं परन्तु व्यापक दृष्टि से यह वाछनीय नही होगा कि सबसे ऊंची बोली बोलने-वाला उपलब्ध सामान के एक बडे भाग को उठा ले जाए और शेष को अपना रास्ता खुद निकालने के लिए छोड़ दे। इसी प्रकार, यदि किसी आवश्यक औषध की कमी है, तो उसके मूल्य का नियन्त्रण और सचमुच ज़रूरतमन्द लोगों को उचित मूल्य पर उसके दिए जाने का प्रबन्ध करना ही सबसे सही मार्ग होगा। यही दलील जीवन की अन्य आवश्यक वस्तुओ—जैसे, खाद्य और कपडा—पर भी लागू होती है। बुनियादी तौर पर आवश्यक कही जा सकनेवाली वस्तुओ का मूल्य बहुत-कुछ स्थिर रखना होगा; जो वस्तुएं 'कम आवश्यक' है, अथवा जिन्हे विशेष आरामवाली, चीजे कहा जा सकता है, उनके मूल्यों मे वृद्धि सहन करनी पड सकती है। वस्तुतः आरामदेह और शौकिया वस्तुओं के बारे में नीति का एक आवश्यक अंग यह है कि साधनों को बढ़ाया जाए; उनके मूल्य में वृद्धि का एक सामान्य मनुष्य पर प्रभाव नही पडता। मूल्य-नियमन की तकनीकें वस्तु-वस्तु के अनुसार भिन्न हो सकती है; कुछ मामलों में उत्पादन-वृद्धि ही मूल्यों के उचित स्तर प्राप्त करने का एकमात्र उपाय हो सकता है। अन्य मामलों में, वस्तुओं का संकट-काल के लिए संग्रह, वितरण की व्यवस्था का पुनस्संगठन और कुछ प्रत्यक्ष नियन्त्रण जरूरी हो सकते है।

नियन्त्रणों का क्षेत्र

25. सरकार को कुछ वस्तुओं के मूल्यों का नियन्त्रण करने और उनका आवंटन करने का अधिकार प्राप्त है। इस्पात, सीमेंट, कच्ची कपास, चीनी और कोयला

इसी वर्ग में आते हैं। उर्वरकों के मूल्य केन्द्रीय उर्वरक-समुच्चय-द्वारा नियमित होते हैं। निर्माताओं-द्वारा नियमित खरीदारी के माध्यम से कच्चे पटसन के मूल्य स्थिर करने की बात भी सोची गई है। आवश्यक वस्तु-अधिनियम और औद्योगिक विकास तथा नियमन-अधिनियम के अन्तर्गत कई वस्तुओं के मूल्यों और आवंटन पर नियन्त्रण रखने की व्यवस्था है। उत्पाद-शुल्क लगने-योग्य सभी वस्तुओं के उत्पाद-शुल्क की दरों में भी सरकार समय-समय पर परिवर्तन कर सकती है, ताकि विशेष वस्तुओं के मूल्यों के परस्पर-सम्बन्ध समुचित रूप से बदल सकें। अभी ये परिवर्तन केवल बजट पेश करते समय ही किए जा सकते हैं। इस बात की जांच करना वांछनीय होगा कि लचीलेपन की दृष्टि से क्या सरकार को ऐसे अधिकार हाथ में लेने चाहिएं कि वह बीच में भी निश्चित सीमाओं के भीतर उत्पाद-शुल्क में उचित परिवर्तन कर सके।

26. इस प्रकार चीज़ों पर नियन्त्रण के क्षेत्र और मूल्यों के चढ़ाव-उतार की सीमा का निश्चय उत्पादन और मांग की समय-समय पर उपस्थित होनेवाली प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर करना होगा। चीनी के मामले में, इस समय समस्या फालतू चीनी से सम्बद्ध है। इस चीनी के कुछ भाग का निर्यात करना सम्भव हो सकता है। पर चूंकि स्वदेशी चीनी की उत्पादन-लागत शेष विश्व में चीनी के मूल्यों से अधिक है, इसलिए विदेशों में इसकी बिक्री के लिए सहायता देना ज़रूरी होगा। कुछ समय तक स्वदेश में चीनी की मांग धीमे-धीमे बढ़ेगी और नीति का लक्ष्य यह होना चाहिए कि उत्पादन में सुधार किया जाए, बजाय इसके कि अन्य फसलों को क्षति पहुंचा कर गन्ने की फसल का क्षेत्र बढ़ाया जाए। कपास के मामले में, उपभोक्ता की दृष्टि से कपड़े के मूल्य में कमी वांछनीय होगी, पर इस बात को ध्यान में रखना होगा कि कच्ची कपास की कमी को आयात से पूरा करना पड़ेगा और इस पर विदेशी मुद्रा खर्च होगी। इस प्रकार की स्थिति में, अधिक उत्पादन की प्रेरणा देने के लिए मूल्य में वृद्धि करना उपयोगी होगा। तेलहन के मामले में, अधिक निर्यात करने की ज़रूरत है, बावजूद इस बात के कि देश में तेल की मांग तेज़ी से बढ़ रही है। यहां आवश्यकता इस बात की है कि मूल्यों को मुख्यत: निर्यात की दृष्टि से नियमित किया जाए। व्यावसायिक फसलों के मूल्यों का नियमन इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए करने की आवश्यकता होगी।

27. उचित मूल्यों की समानता का प्रश्न इस प्रश्न के साथ संयुक्त है कि उपभोक्ता जो मूल्य देता है, क्या उसका लाभ सदा उत्पादनकर्ता को मिलता है, या कि उसके लाभ को बिचौलिए हथिया लेते हैं। इन मूल्यों के बीच चाहे जो भी सामान्य सम्बन्ध हो, इसमें कोई सन्देह नहीं कि अभाव की अवस्था में उत्पादक के मूल्य और उपभोक्ता के मूल्य के बीच की दूरी बढ़ने की ओर प्रवृत्त होती है। यही बात आयातित वस्तुओं के बारे में भी लागू होती है, जिनकी मांग उपलब्धता के मुकाबले में अधिक होती है। राज्य-व्यापार-निगम ने बड़ी मात्रा में वस्तुओं का आयात करके और उन्हें वास्तविक उपभोक्ताओं में बांट कर दोनों मूल्यों के बीच की दूरी को कम करने का प्रयत्न किया है। जहां तक सम्भव हो, बिचौलियों का मुनाफा आयातित वस्तुओं और देश में पैदा होनेवाली वस्तुओं, दोनों ही क्षेत्रों में सरकारी अथवा सहकारी अभिकरणों-द्वारा व्यापार के ज़रिए कम किया जाना चाहिए।

खाद्यान्नों और खुले बाजार की गतिविधियां

28. हमारे यहां-जैसी अर्थव्यवस्था में, जहां कम आयवाले परिवारों के खर्च का एक बड़ा भाग खाद्यान्नों से सम्बद्ध होता है, खाद्यान्नों के मूल्यों की समुचित स्थिरता बड़े महत्व की चीज है । पिछले दस वर्ष से भी अधिक समय में इस क्षेत्र में जो अनुभव प्राप्त हुआ है, उसने स्पष्ट कर दिया है कि यह एक ऐसा क्षेत्र है, जहां न तो पूरा नियन्त्रण ही सम्भव है और न पूरा अनियन्त्रण ही । सरकार को सदा ऐसी स्थिति में होना चाहिए कि खाद्यान्नों के मूल्यों का प्रभावशाली ढंग से नियमन कर सके । गेहूं के क्षेत्र में, इस समय जितना गेहूं उपलब्ध है और अगले तीन वर्षों में जितने आयात की आशा है, उससे मूल्य की स्थिरता का पूरा भरोसा होता है—हां, यदि फसल बुरी तरह नष्ट हो जाए, तो बात दूसरी है । चावल के सम्बन्ध में स्थिति अवश्य जटिल है, क्योंकि अभाव की अवस्था में उपलब्ध विदेशी मुद्रा-विषयक साधनों से चावल का पर्याप्त मात्रा में आयात कर सकना सम्भव नहीं होगा । अन्य अनाजों और दालों के बारे में स्थिति बहुत ही भिन्नता-पूर्ण है ।

29. खाद्यान्नों के उत्पादक को निश्चय ही युक्तिसंगत लाभ प्राप्त होना चाहिए । दूसरे शब्दों में, किसान को यह विश्वास दिलाया जाना चाहिए कि खाद्यान्नों तथा अन्य वस्तुओं के, जिनका वह उत्पादन करता है, मूल्य एक युक्तियुक्त न्यूनतम स्तर से नीच नहीं गिरने दिए जाएंगे । तीसरी योजना में किसान-द्वारा उर्वरकों के विस्तृत उपयोग और सुधरे हुए तरीके अपनाए जाने की बात कही गई है । किसान को इस प्रकार पूंजी लगाने तथा अधिक श्रम करने के लिए प्रेरणा मिलनी चाहिए । अधिक उत्पादन करने की दृष्टि से मूल्यों में तेज उतार-चढ़ाव रोकने तथा एक निम्नतम स्तर का भरोसा देनेवाली नीति अपनाना आवश्यक है । यह बात भी कम महत्वपूर्ण नहीं है कि उचित उपायों या नीतियों की घोषणा और कार्यान्विति समय रहते हो, ताकि किसानों को अपने लाभ का भरोसा हो जाए । इसके साथ ही यह दूसरा उद्देश्य भी कम महत्वपूर्ण नहीं है कि उपभोक्ता के हितों की रक्षा हो और जैसा कि पहले के पैराग्राफों में कहा गया है, यह खास तौर पर जरूरी है कि खाद्यान्नों-जैसी आवश्यक वस्तुओं के मूल्य बहुत अधिक न बढ़ें । ये बातें केवल मोटे तौर पर नीति के स्वरूप को प्रकट करती हैं । मूल्य-स्थिरता की कुंजी यह तथ्य है कि भारी मात्रा में खाद्यान्न जमा किए जाएं और एक बड़े पैमाने पर निरन्तर खरीद और बिक्री का काम जारी रखा जाए । चूंकि देश के विभिन्न भागों में मूल्यों में काफी विभिन्नता है, इसलिए कुछ भागों में खरीद का और कुछ भागों में बिक्री की व्यवस्था की जा सकती है । पिछले दिनों एक बड़ी कठिनाई यह थी कि सरकार के पास भाण्डार करने की पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी। दीर्घकालीन खाद्य-नीति के एक अंग के रूप में जरूरी है कि सरकारी नियन्त्रण के अधीन भाण्डार और गोदाम की सुविधाएं शीघ्रता के साथ विस्तृत की जाएं । यह बात समझ लेनी चाहिए कि समूचे योजनाकाल में अगर खाद्यान्नों के दाम गिरने लगेंगे, तो सरकार खरीद करेगी और अगर चढ़ने लगेंगे, तो वह बेचेगी । जहां सरकार को भाण्डारण के काम में आयात से सहायता मिली है और अभी कुछ समय तक मिलेगी, वहीं यह भी आवश्यक है कि ज्यों-ज्यों उत्पादन बढ़े, त्यों-त्यों देश में की गई खरीद से सरकारी भाण्डार की वृद्धि की जाए । इसी प्रकार, देश में जब कभी और जहां भी खाद्यान्नों के भाव चढ़ने लगें, सरकार अपने भाण्डार से पर्याप्त मात्रा में खाद्यान्न बेचने के लिए तैयार रहे । खुले बाजार की ये कार्रवाइयां लचीलेपन के साथ और

अनेक स्थानों पर की जानी चाहिए, ताकि इनका प्रभाव ठीक उन स्थलों पर पड़े, जहां उनकी जरूरत है।

30. कहां और किस हद तक क्षेत्रीय प्रबन्ध करना आवश्यक होगा, इसका निर्णय व्यावहारिक आधार पर किया जाना चाहिए। इसी प्रकार, खरीद और बिक्री की कार्रवाई सीधे केन्द्रीय सरकार-द्वारा की जाए अथवा राज्य-सरकारों-द्वारा, इसका निर्णय स्थिति की अनुकूलता के आधार पर करना होगा। जिस बात का पूरा निश्चय होने की आवश्यकता है, वह यह है कि मूल्यों के प्रवाह को प्रभावित करने की सरकार की सामर्थ्य दृढ़ता से बढ़े और इसके लिए खरीद तथा बिक्री के द्वारा विस्तृत पैमाने पर निरन्तर कार्रवाई की जाने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से सरकार के पास संचित भाण्डार करीब 50 लाख टन होना चाहिए। मूल्यों को स्थिर रखने और ऋतु-विषयक तथा प्रादेशिक विभिन्नताओं में सुधार लाने के लिए अपनाई जानेवाली खरीद एवं बिक्री-सम्बन्धी कार्रवाइयों की सफलता के लिए किसानों से निकट सम्पर्क रखनेवाले सहकारी और सरकारी अभिकरणों की बड़ी संख्या में व्यवस्था होनी चाहिए; थोक व्यापार में लाइसेंस और नियमन की पद्धति शुरू की जानी चाहिए; उपयुक्त दिशाओं में राज्य-व्यापार का विस्तार होना चाहिए; और खुदरा-स्तर पर वितरण की व्यवस्था सहकारी संस्थाओं-द्वारा होनी चाहिए। मूल्यों का नियमन और नियन्त्रण इस दृष्टिकोण से संस्थागत परिवर्तनों की समस्या है, अर्थात् निजी संस्थाओं के मुकाबले में सरकारी और सहकारी संस्थाओं को पुष्ट करने का प्रश्न है, जो कि विकासमूलक आयोजन के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

31. अन्त में, आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन के लिए योजना में पर्याप्त वृद्धि की व्यवस्था की गई है, ताकि आवश्यक वस्तुओं के उपभोग में युक्तिसंगत वृद्धि हो। मुख्य काम यह है कि इन लक्ष्यों को प्राप्त किया जाए। इस सम्बन्ध में जो कमियां हैं, उन पर मुश्किल से काबू पाया जा सकता है। वित्त-नीति और द्रव्य-नीति का बराबर यह लक्ष्य होना चाहिए कि उपभोग में संयम आए और बचत में अधिक-से-अधिक वृद्धि हो। प्रत्यक्ष नियमन और नियन्त्रणों का काम अनिवार्यतः यही है कि प्रमुख क्षेत्रों में असन्तुलन समाप्त हो और इस काम के लिए बड़ी मात्रा में खाद्यान्न-संचय तथा खुले बाजार की कार्रवाइयां महत्वपूर्ण हैं। इन कार्रवाइयों को खाद्यान्नों तथा अन्य बुनियादी तौर पर आवश्यक वस्तुओं के क्षेत्र में इस दृष्टि से आगे बढ़ाना होगा कि मूल्यों में अस्थिरता निर्धारित अधिकतम और न्यूनतम सीमाओं के अन्तर्गत रहे। मूल्य-विषयक कट्टरता विकास के साथ मेल नहीं खाती और कुछ मूल्यों को चढ़ने से रोका नहीं जा सकता। उद्देश्य अवश्य ही यह होना चाहिए कि मूलभूत आवश्यक वस्तुओं के मूल्य निश्चित सीमाओं के अन्दर रहें। मूल्य-नियमन के लिए कई स्थलों पर कार्य किए जाने की ज़रूरत होती है। अधिक उत्पादन के लिए आवश्यक प्रोत्साहन की व्यवस्था रखनी ही होगी। इसलिए यह कल्पना की गई है कि सरकार उपयुक्त स्तरों पर खाद्यान्नों का क्रय-विक्रय करने के लिए आवश्यक सहकारी और सरकारी अभिकरण स्थापित करेगी तथा उन्हें बढ़ावा देगी, ताकि मूल्यों की गतिविधि को प्रभावित करने और जमाखोरी तथा मुनाफाखोरी-जैसी समाज-विरोधी प्रवृत्तियों को सिर उठाने से रोकने-विषयक उसके अधिकार सदृढ़ हों और वह उपयुक्त स्थिति में रह कर उचित कार्रवाई कर सके।

अध्याय 8

विदेशी व्यापार का विकास

आयात की समीक्षा

पिछले दशक में, आर्थिक विकास की योजनाओं ने हमारे देश के विदेशी व्यापार पर अधिकाधिक प्रभाव डाला है—खास तौर से आयात पर। औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने तथा कुल मिला कर अर्थव्यवस्था का विकास होने के साथ-साथ पिछले दस वर्षों में आयात का स्तर काफी ऊंचा हो गया है। पहली योजना के दौरान कुल मिलाकर 3,620 करोड़ रु० के सामान का आयात हुआ—यानी औसतन 724 करोड़ रु० का सामान प्रति वर्ष विदेशों से मंगाया गया। दूसरी योजना में पूंजीगत सामान, कच्ची सामग्रियां, मध्यवर्ती सामान तथा पुर्ज़ों, आदि की बढ़ी हुई जरूरतों के कारण आयात का स्तर काफी ऊपर उठ गया। योजना के पहले दो वर्षों में आयात बड़ी तेजी से बढ़ा—सन् 1955-56 के 746 करोड़ रु० की तुलना में सन् 1956-57 में 1,099 करोड़ रु० मूल्य के और सन् 1957-58 में 1,233 करोड़ रु० मूल्य के सामान का आयात हुआ। बाद के दो वर्षों में कुल आयात की मात्रा घटी। सन् 1959-60 में आयात का स्तर घटकर 920 करोड़ रु० हो गया। आयात की मात्रा घटने का कारण यह था कि सरकार ने विदेशी मुद्रा की कठिनाइयों के कारण आयात-लाइसेंस देने में कड़ाई की नीति बरती। दूसरी योजना के अन्तिम वर्ष में लगभग 1,080 करोड़ रु० मूल्य के आयात का अनुमान है। दूसरी योजना में कुल मिलाकर 5,360 करोड़ रु० मूल्य के आयात का अनुमान है। इस हिसाब से वार्षिक औसत 1,072 करोड़ रु० का पड़ा और यह पहली योजना के औसत स्तर से लगभग 50 प्रतिशत अधिक है। नीचे की तालिका में पहली और दूसरी योजनाओं के अन्तर्गत सामान की तीन मुख्य श्रेणियों के आयात का वार्षिक औसत दिया गया है :

तालिका-संख्या 1

आयात 1951-61

(करोड़ रु०)

श्रेणी	1951-56 वार्षिक औसत	1956-61 वार्षिक औसत
उपभोक्ता-सामान	235	247
कच्ची सामग्रियां और मध्यवर्ती सामान	364	502
पूंजीगत सामान	125	323
योग	724	1,072

2. चूंकि तीसरी योजना में पूंजी-विनियोग का कार्यक्रम और भी विशाल है तथा उसमें बुनियादी और भारी पूंजीगत सामान-उद्योगों के विकास को पुनः प्राथमिकता दी गई है, इसलिए उसमें आयात की आवश्यकताएं दूसरी योजना से भी अधिक होंगी।

तीसरी योजना के अन्तर्गत विभिन्न परियोजनाओं के लिए मशीनों और उपकरणों के आयात पर लगभग 1,900 करोड़ रु० का खर्च बैठेगा। इसके अतिरिक्त, पूंजीगत सामान और उपकरणों का देशीय उत्पादन बढ़ाने के लिए कम-से-कम 200 करोड़ रु० मूल्य के पुर्जों, सन्तुलन-उपकरणों आदि के आयात की भी व्यवस्था करनी होगी। अर्थव्यवस्था के समुचित संचालन के लिए 3,650 करोड़ रु० मूल्य की कच्ची सामग्रियों, मध्यवर्ती उत्पादनों, बदले जाने के लिए पूंजीगत सामान, आवश्यक उपभोक्ता-सामान, आदि के आयात का प्रबन्ध किया जा रहा है, हालांकि यह अनुभव किया जा रहा है कि औद्योगिक क्षमता का समुचित उपयोग करने के लिए इस प्रकार के आयात की आवश्यकताएं कहीं अधिक हैं। इस प्रकार, अनुमान है कि तीसरी योजना के दौरान कुल मिलाकर 5,750 करोड़ रु० मूल्य की सामग्रियों का आयात होगा— इसमें पी० एल० 480 के अन्तर्गत होनेवाला 600 करोड़ रु० मूल्य का आयात शामिल नहीं है। अगर पी० एल० 480 के अधीन होनेवाला आयात भी शामिल कर लें, तो तीसरी योजना की अवधि में आयात का औसत स्तर करीब 1,270 करोड़ रु० हो जाता है, जबकि दूसरी योजना का औसत स्तर 1,072 करोड़ रु० ही था।

3. अर्थव्यवस्था के समुचित संचालन के लिए आयात की जरूरतों का अनुमान लगाते वक्त उन परियोजनाओं के, जो चालू हो गई हैं या जिनके तीसरी योजना की अवधि में चालू हो जाने की आशा है, बढ़े हुए उत्पादन के कारण आयात में होनेवाली बचतों का भी हिसाब लगा लिया गया है। इन बचतों में योजना की अवधि में कृषि-वस्तुओं के उत्पादन में होनेवाली वृद्धि का भी आभास मिलता है। मुख्यतः इन-जैसी वस्तुओं में बचत होने की आशा है—कच्ची कपास, नर्म इस्पात, अल्युमीनियम, विभिन्न प्रकार की मशीनें तथा परिवहन उपकरण, दवाएं और रसायन, कागज़ और गत्ता आदि। लेकिन इसके साथ ही कुछ और प्रकार की वस्तुओं के अधिक आयात की ज़रूरत पड़ेगी और इस तरह कुछ हद तक इन बचतों का लाभ जाता रहेगा। इस प्रकार की वस्तुओं में ये उल्लेखनीय हैं : विशिष्ट इस्पात, अल्युमीनियम के अलावा अलौह धातुएं, पेट्रोलियम के उत्पादन, उर्वरक, आदि।

तीसरी योजना की अवधि में भुगतान-सन्तुलन की कठिन स्थिति को ध्यान में रखते हुए विदेशी मुद्रा के व्यय से सम्बन्धित तथा आयात-लाइसेंस देने की वर्तमान प्रणाली जारी रखी जाएगी तथा उसे और भी सुधारा जाएगा।

निर्यात की समीक्षा

4. पिछले दशक में कुल मिलाकर निर्यात में कोई प्रगति नहीं हो सकी। कोरिया में युद्ध छिड़ जाने से अगर सन् 1951-52 में बहुत ही अधिक निर्यात न हुआ होता, तो पहली योजना में जो 609 करोड़ रु० का वार्षिक औसत रहा, वह और भी कम होता तथा सन् 1958 में अमेरिका और ब्रिटेन में जो मन्दी आ गई, वह अगर न आई होती, तो दूसरी योजना में 614 करोड़ रु० वार्षिक का जो औसत रहा, वह और अधिक होता। जहां तक परिमाण का सवाल है, दूसरी योजना में 9 प्रतिशत अधिक निर्यात हुआ, परन्तु वस्तुओं के मूल्यों में गिरावट आ जाने के कारण निर्यात से होनेवाली आय में इस अनुपात से वृद्धि नहीं हुई। सन् 1951-52 से 1960-61 तक की अवधि में जो प्रवृत्तियां रहीं, वे अगले पृष्ठ की तालिका से स्पष्ट हो जाती हैं।

तालिका-संख्या 2

निर्यात 1951-61

(आधार : 1950-51 = 100)

(मूल्य, करोड़ रु० में)

वर्ष	मूल्य	परिमाण-सूचनांक	इकाई मूल्य-सूचनांक	वर्ष	मूल्य	परिमाण-सूचनांक	इकाई मूल्य-सूचनांक
1951-52	733	80	148	1956-57	620	101	98
1952-53	577	89	104	1957-58*	591	96	98
1953-54	531	89	96	1958-59	559	94	97
1954-55	593	94	102	1959-60	644	105	98
1955-56	609	103	94	1960-61	645	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध
योग	3,043	—	—	योग	3,069	—	—
औसत	609	91	109	औसत	614	99†	98†

5. देश में आर्थिक विकास होने से घरेलू मांगें बढ़ गईं और जो अतिरिक्त माल निर्यात के लिए मिल जाता था, उसमें कमी आ गई। इस प्रकार हालांकि इन दस वर्षों में कुल मिलाकर समग्र विश्व-निर्यात-व्यापार दुगुना हो गया, पर इसमें भारत का हिस्सा सन 1950 के 2.1 प्रतिशत से घटकर सन् 1960 में 1.1 प्रतिशत रह गया।

6. पिछले दशक में निर्यात-व्यापार का जो स्वरूप रहा, उसमें दो मुख्य प्रवृत्तियां देखी जा सकती हैं। एक तो यह, कि उन चीज़ों के निर्यात में कुल मिलाकर कोई खास उन्नति नहीं हुई, जो सीधे या अधिकांश कृषि-उत्पादन पर निर्भर करती हैं (और भारत के निर्यात का एक बड़ा हिस्सा अब भी इन्हीं चीज़ों का होता है) —जैसे, चाय, सूती वस्त्र, पटसन की चीज़ें, खालें और चमड़ा, मसाले और तम्बाकू। पर अब जो नई-नई चीज़ें तैयार होने लगी हैं, उनके और खनिज लोहे-जैसे चीज़ों के निर्यात में काफी वृद्धि हुई, परन्तु परम्परागत चीज़ों के निर्यात में जो कमी हुई, उसकी कसर इससे पूरी नहीं हो सकी। ये प्रवृत्तियां अगली तालिका से स्पष्ट हो जाती हैं।

*चांदी-निर्यात का शुद्ध अंक

†चार साल का औसत

टिप्पणी : इस अध्याय की तालिकाएं (संख्या 2, 3 और 4) वाणिज्य-सूचना और सांख्यिकी-महानिदेशक-द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के आधार पर तैयार की गई हैं।

तालिका-संख्या 3

निर्यात का स्वरूप 1951-60

(करोड़ रु०)

	1950-51	1955-56	1958-59	1959-60
1. कृषिगत वस्तुएं और सम्बद्ध उत्पादन	496.5	489.3	453.5	473.6
कपास और पटसन के उत्पादन (मद-संख्या 1 में सम्मिलित)	250.5	181.7	153.4	180.5
2. दूसरे उत्पादन	58.4	61	53.3	105
नया-नया उत्पादन (मद-संख्या 2 में सम्मिलित)	8.9	8.6	12.5	25
3. खनिज पदार्थ	23.4	34.4	46.2	53
योग	578.3	584.7	553	631.6

7. इधर कुछ वर्षों में, खास तौर से दूसरी योजना के मध्य-काल से, निर्यात बढ़ाने के लिए कई तरह की कार्रवाइयां शुरू की गई हैं। सम्भव है कि अगर ये कदम न उठाए जाते, तो पिछले कुछ वर्षों में निर्यात और भी कम होता। ये जो कार्रवाइयां की गईं, उनका भावन काफी व्यापक धरातल पर किया गया था। इनमें ये बातें भी शामिल थीं—संगठन-सम्बन्धी परिवर्तन, अधिक सहूलियतें और प्रोत्साहन तथा व्यापार में विविधता। पहले वर्ग में ये चीज़ें आती हैं—निर्यात-संवर्द्धन-परिषदें, जिनकी स्थापना सूती वस्त्रों, रेशम और रेयन, इंजीनियरी के सामान, रासायनिक पदार्थों, तम्बाकू, मसालों, काजू, चमड़ा, प्लास्टिक के सामान, खेल के सामान और अभ्रक के लिए की गई है; निर्यात-जोखिम-बीमा-निगम की स्थापना; निर्यात-संवर्द्धन-परिषदों का काम चाय, काफी और नारियल-जटा-मंडलों को सौंपना; तथा प्रचार, मेलों, प्रदर्शनियों की अधिक सहूलियतें। दूसरे वर्ग की कार्रवाइयों में इनका उल्लेख किया जा सकता है: निर्यात-नियन्त्रण और कोटा-प्रतिबन्ध का अन्त, अधिकतर निर्यात-शुल्कों की समाप्ति, उत्पाद-शुल्कों की वापसी, निर्यात के लिए कच्चे माल के लिए विशेष आयात-लाइसेंस दिए जाने का आरम्भ तथा परिवहन-सुविधाओं के लिए प्राथमिकताएं। तीसरी बात राज्य-व्यापार-निगम के काम के ज़रिए तथा सोवियत रूस और पूर्व-यूरोपीय व्यापार-निगम के काम के ज़रिए तथा सोवियत रूस और पूर्व-यूरोपीय देशों के साथ व्यापार-सम्बन्ध बढ़ने से भारत के विदेशी व्यापार में विविधता लाने के क्षेत्र में प्रगति हुई है।

व्यापार की दिशा

8. अगले पृष्ठ की तालिका से यह स्पष्ट हो जाता है कि पहली और दूसरी योजनाओं की अवधि में भारत के विदेशी व्यापार की दिशा में क्या परिवर्तन आए।

तालिका-संख्या 4

भारत के विदेशी व्यापार की दिशा

(प्रतिशत हिस्से)

देश/क्षेत्र	निर्यात			आयात		
	1952	1956	1960	1952	1956	1960
1. एशिया और सुदूरपूर्व-आर्थिक आयोग से सम्बद्ध देश	25.7	16.3	17	13.6	12.4	13.1
जापान	4.1	4.9	5.5	2.4	5.2	5.4
2. पश्चिम-एशिया	5.7	5.8	6.5	7.7	10.8	7.5
3. अफ्रीका	3.6	3.9	2.5	3.8	4	4.4
4. पश्चिम-यूरोप	29.6	39.8	38.5	30.1	50.1	40.4
ब्रिटेन	20.5	29.8	27.5	18.5	25	20
यूरोपीय आर्थिक समुदाय	7.5	8.3	8	8.8	20	18
5. पूर्व-यूरोप और चीन	1.3	3.5	8	2.2	4.2	3.7
6. उत्तरी अमेरिका	21.1	17	18.7	37.3	12.4	25.2
संयुक्त राज्य-अमेरिका	19	14.7	16	33.6	11.3	23.7
7. लैटिन अमेरिका	1.4	1	2.5	—	0.1	0.1
8. आसेनिया	4.3	4.4	3.1	2	1.7	2.3
9. अन्य	7.3	8.3	3.2	3.3	4.3	3.3
योग	100	100	100	100	100	100

इस समय भारत का लगभग 39 प्रतिशत विदेशी व्यापार पश्चिम-यूरोप के साथ होता है; निर्यात का 28 प्रतिशत भाग ब्रिटेन को जाता है। कई वर्षों से ब्रिटेन का हिस्सा लगभग इतना ही चला आ रहा है। उत्तर-अमेरिका का हिस्सा सन् 1952 में 21 प्रतिशत था, जो सन् 1956 में घटकर 17 प्रतिशत हो गया, परन्तु सन् 1960 में पुनः बढ़ा और कुल निर्यात का 19 प्रतिशत हो गया। एशिया और सुदूरपूर्व-आर्थिक आयोग के देशों के लिए निर्यात इधर कुछ वर्षों से लगभग एक ही स्तर पर जमा हुआ है। जापान के लिए निर्यात में जो वृद्धि हुई है, उसका अधिकांश श्रेय खनिज लोहे के निर्यात को है।

पिछले दस वर्षों में यूरोपीय आर्थिक समुदाय का हिस्सा 6.3 और 9.5 प्रतिशत के बीच घटता-बढ़ता रहा है। सोवियत रूस तथा पूर्व-यूरोपीय देशों का हिस्सा पहली योजना के पूर्वार्द्ध में 1 प्रतिशत था, पर दूसरी योजना के अन्त तक यह बढ़कर 8 प्रतिशत से भी अधिक हो गया।

9. पहली योजना की अवधि में पश्चिम-यूरोप से होनेवाला आयात 30 प्रतिशत से बढ़कर 50 प्रतिशत हो गया। दूसरी योजना के अन्त में भारत के कुल आयात का लगभग 40 प्रतिशत भाग इसी क्षेत्र से हुआ था। पूर्व-यूरोप से सन् 1952 में 2.2 प्रतिशत आयात हो रहा था, जो सन् 1956 में बढ़कर 4.6 प्रतिशत हो गया। परन्तु सन् 1960 में यह पुनः घटकर 3.7 प्रतिशत हो गया। उत्तर-अमेरिका से सन् 1952 में कुल आयात का 37 प्रतिशत हिस्सा आया; सन् 1956 में यह हिस्सा घटकर 12.4 प्रतिशत रह गया, लेकिन सन् 1960 में फिर बढ़कर 25.7 प्रतिशत हो गया। यह घट-बढ़ केवल खाद्य के आयात के कारण हुई। इस अरसे में एशिया और सुदूरपूर्व-आर्थिक आयोग के देशों से आयात 12 से 14 प्रतिशत के बीच घटता-बढ़ता रहा है।

तीसरी योजना में निर्यात के उद्देश्य

10. अब तक निर्यात बढ़ाने के लिए जो कदम उठाए गए हैं, उन्हें अगर निर्यात की वर्जना करनेवाले मूलभूत कारणों के सम्मुख रखकर देखा जाए, तो वे पर्याप्त नहीं कहे जा सकते। अब तक की एक मुख्य कमी यह रही है कि निर्यात-कार्यक्रम को पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत देश के विकास-प्रयत्नों के अभिन्न अंग के रूप में नहीं देखा गया। अगर निर्यात में काफी वृद्धि करनी है, तो कई दिशाओं में एक साथ कदम उठाने पड़ेंगे, खास तौर से इन दिशाओं में :

(क) घरेलू खपत को मुनासिब सीमाओं में बांध कर रखना पड़ेगा, ताकि निर्यात के लिए चीजें बचाई जा सकें;

(ख) जब कोई अर्थव्यवस्था विकसित होने लगती है, तो घरेलू मंडियों में अधिकाधिक मुनाफा कमाया जा सकता है, अतः निर्यात की सापेक्षिक लाभकारिता बढ़ाने के लिए कदम उठाने ज़रूरी हैं;

(ग) मुख्य उद्योगों को—खास तौर से निर्यात-उद्योगों को—लागत के स्वरूप तथा उत्पादकता की दृष्टि से जल्दी-से-जल्दी प्रतियोगात्मक स्तर पर आ जाना चाहिए और इस काम के लिए हर एक उद्योग में व्यवस्थित कार्यक्रम अपनाने की जरूरत है। निर्यात में विविधता लाने और निर्यात-व्यापार में धीरे-धीरे पर निश्चित रूप से नई तैयार चीज़ों का और खनिज पदार्थों का हिस्सा बढ़ाने के लिए यह निहायत ज़रूरी है। औद्योगिक लाइसेंस-नीतियों को भी इस तरह से बदला जाना चाहिए कि निर्यात की उन्नति हो; और

(घ) निर्यात बढ़ाने के पक्ष में और उसमें निहित बोझ स्वीकार करने के पक्ष में जनमत तैयार करने के लिए, इस राष्ट्रीय प्रयत्न में व्यापार और उद्योग का सहयोग प्राप्त करने के लिए, मंडियों के विषय में सूचना और अनुसन्धान से सम्बन्धित सरकारी संगठन सुधारने के लिए तथा विदेशों में वाणिज्य-प्रतिनिधित्व के उन्नयन के लिए तथा उधार, बीमा आदि की अधिक सुविधाएं उपलब्ध करने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए।

11. वित्तीय साधनों से सम्बन्धित अध्याय में तीसरी योजना की विदेशी मुद्रा-विषयक आवश्यकताओं का विश्लेषण किया गया है। जैसा कि प्रारम्भिक रूपरेखा में संकेत दिया गया है, यह बात स्पष्ट है कि अगर तीसरी योजना की अवधि में निर्यात 3,450 करोड़

रु० से काफी ऊपर न गया, तो जितनी विदेशी सहायता पाने की अपेक्षा करके हम चले है, वह सब मिल जाने पर भी योजना में भारी अभाव रह जाएगा। अतः वस्तुओं के विषय में तथा अन्य प्रकार के जो अध्ययन किए गए है, उनके आधार पर और यह मान कर कि निर्यात बढ़ाने के प्रयत्न बड़े पैमाने पर किए जाएंगे तथा विदेशों मे मांग की उचित परिस्थितियां रहेंगी, तीसरी योजना की अवधि में 3,700 करोड़ रु० का निर्यात-लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसमें शक नहीं कि प्रयत्न और आयोजन स्पष्ट ही काफी बड़े पैमाने पर करना होगा। आवश्यक कार्रवाइयों पर ज़ोर देने और तीसरी योजना में निर्यात बढ़ाने के विशेष प्रयत्नों की आवश्यकता का एक महत्वपूर्ण कारण है और वह यह कि यही वक्त है, जब निर्यात बढ़ाया जा सकता है, ताकि चौथी योजना की प्रत्याशित आवश्यकताओं को—जो अब से कहीं ज्यादा होंगी—पूरा किया जा सके। रकमों के वापसी भुगतान की ज़िम्मेदारियों के कारण तथा संचालन और विकास-सम्बन्धी आयातों के कारण जो आवश्यकता होगी, उन्हें ध्यान में रखते हुए, यह अनुमान किया गया है कि चौथी योजना के अन्त तक निर्यात का वार्षिक स्तर 1,300 से 1,400 करोड़ रु० के बीच ज़रूर हो जाएगा, यानी वर्तमान स्तर से लगभग दुगुना हो जाएगा। यह एक बड़ी ज़रूरी शर्त है, जिसके पूरा होने पर ही यह आश्वासन मिल सकता है कि पाचवी योजना के अन्त तक भारत की अर्थव्यवस्था अपने पैरों पर खड़ी हो सकेगी और जीवित रह सकेगी।

12. इन सब बातों को पृष्ठभूमि में रख कर ही तीसरी योजना में निर्यात से कम-से-कम 3,700–3,800 करोड़ रु० की आय का लक्ष्य सामने रखा गया है। अगर निर्यात उस हद तक बढ़ सका, जितना कि सोचा जा रहा है, तो तीसरी योजना की अवधि मे निर्यात के वार्षिक स्तर में लगभग 200 करोड़ रु० की वृद्धि हो जाएगी और तीसरी योजना में औसत वार्षिक निर्यात दूसरी योजना की अवधि की अपेक्षा लगभग 150 करोड़ रु० अधिक होगा।

निर्यात बढ़ाने के लिए कार्रवाइयां

13. निर्यात में अच्छी-खासी वृद्धि करने के लिए जो कार्रवाइयां की जा सकती है, उनके मुख्यतः दो वर्ग हैं—एक वर्ग तो सामान्य नीतियों का है, और दूसरा विशेष वस्तुओं से सम्बन्धित कार्रवाइयों का। इनमें से कई कार्रवाइयां ऐसी हैं, जिनसे दो-तीन वर्ष के मामूली अरसे में ही कुछ नतीजे निकलने की आशा की जाती है। इसके साथ ही कार्य-कुशलता बढ़ाने और लागत घटाने-विषयक जो अन्य कार्रवाइयां है, उनकी परिधि अधिक-से-अधिक होनी चाहिए। निर्यात-कार्यक्रम को सहारा देने के लिए जिन आम नीतियों की बात सोची गई है, उनका मुख्य उद्देश्य यह है कि निर्यात-प्रयत्नों के लिए देश में अनुकूल वातावरण पैदा हो, घरेलू मांगों को सीमित किया जाए, निर्यात के लिए उपलब्ध होनेवाले अतिरिक्त माल की मात्रा बढ़े और उत्पादन की लागतें घटें। यह महसूस किया जा रहा है कि एक हद के आगे निर्यात बढ़ाने की कार्रवाइयों का असर अनिवार्यतः देशीय अर्थव्यवस्था पर या विकास के दूसरे क्षेत्रों पर पड़ेगा। ज़ाहिर है कि दोनों में से किसी एक का चुनाव करना बड़ा कठिन काम है, लेकिन समग्र राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखते हुए निर्यात को ही सर्वाधिक प्राथमिकता देनी होगी और अगले 10-15 वर्षो तक देशीय अर्थव्यवस्था पर अधिकाधिक भार वहन करना होगा। तेज़ी से आर्थिक विकास करने के लिए यह कीमत तो चुकानी ही होगी।

14. निर्यात का कार्यक्रम पूरा करने की सबसे महत्वपूर्ण शर्त स्पष्टतः यह है कि तीसरी योजना के कृषि और उद्योग-विषयक लक्ष्य प्राप्त कर लिए जाएं। अगर ये लक्ष्य पूरे न हुए, तो जो उपाय वैसे कारगर हो सकते हैं, वे भी कम कारगर रह जाएंगे।

15. निर्यात-आन्दोलन को सफल बनाने की एक अनिवार्य शर्त यह है कि घरेलू खपत की वृद्धि पर रोक लगाई जाए। जब चीज़ें देशी और विदेशी मांगें पूरी करने के लिए काफी न हों, तब इस तरह के नियन्त्रणों से काम लेना ही पड़ता है। जब अधिक पूंजी लगा कर आपूर्ति बढ़ाई जा सके, तब भी इन नियन्त्रणों का सहारा लेना पड़ता है, ताकि घरेलू साधनों और विदेशी मुद्रा, दोनों की दृष्टि से बचत हो। खपत पर नियन्त्रण लगाने से अतिरिक्त निर्यात की जो सुविधा मिलेगी, उसकी वजह से अर्थव्यवस्था के विकास की गति अनुपात से कहीं अधिक बढ़ेगी। नियमतः ज़रूरत इस बात की नहीं होती कि कुल खपत या प्रति व्यक्ति खपत में पूर्णतः कमी हो—ज़रूरत सिर्फ इस बात की होती है कि जिस गति से खपत बढ़ती है, उसमें कुछ कमी आए। यह तथा और दूसरी कार्रवाइयां करने में एक बात बेहद ज़रूरी है कि जनता निर्यात बढ़ाने की ज़रूरत को ज्यादा अच्छी तरह समझे और इस बात को जान ले कि यह लक्ष्य बिना सबकी ओर से थोड़ा-बहुत त्याग किए पूरा नहीं हो सकता।

16. निर्यात के लक्ष्य पूरे करने के लिए इतना ही ज़रूरी नहीं है कि निर्यात के लिए अतिरिक्त सामान उपलब्ध हो जाए, बल्कि यह भी ज़रूरी है कि वह इतने कम भाव पर प्राप्त हो कि विदेशी मंडियों के अन्य आपूर्तिकर्ताओं से होड़ ले सके। कम भावों पर निर्यात की क्षमता अधिकांशतः देशी भावों पर निर्भर करती है। इस दृष्टि से यह आवश्यक है कि विकास के साथ मुद्रा-स्फीति के जो दबाव जुड़े रहते हैं, उन पर नियन्त्रण रखा जाए।

17. निर्यात-प्रयत्नों के विकास के लिए यह आवश्यक है कि भारतीय उद्योग का एक काफी बड़ा हिस्सा अब की अपेक्षा अधिक प्रतियोगात्मक हो जाए। इसमें शक नहीं कि काफी चीज़ें ऐसी हैं, जिनमें भारतीय उद्योग विदेशी मंडियों के साथ प्रतियोगिता कर सकता है, कम-से-कम प्रतियोगी तो बन ही सकता है। फिर भी, इन उद्योगों का क्षेत्र अभी काफी विस्तृत नहीं है। कुछ चुने हुए उद्योगों में—जैसे, सीमेंट, पटसन, बाइसिकिल, बिजली के मोटर और ट्रांसफार्मर तथा रेयन में लागत कम करने के तरीके सोचने के लिए हाल में अध्ययन-दल नियुक्त किए गए हैं। हाल के वर्षों में विभिन्न उद्योगों में लागत-सम्बन्धी जो अधिक महत्वपूर्ण अध्ययन किए गए हैं, उनकी समीक्षा करने का विचार किया जा रहा है, ताकि लागत कम करने के कार्यक्रम व्यवस्थित रूप से उद्योगवार लागू करने की पद्धति निर्धारित की जा सके। यह सोचा गया है कि निर्यात का विकास करने के लिए जो उद्योग महत्वपूर्ण हैं, उनके लिए लाइसेंस देने की नीतियों में यह बात भी ध्यान में रखी जाए कि किस पैमाने पर काम करने से किफ़ायत हो सकती है। कौन-सा कारख़ाना कहां होना चाहिए, यह तय करते वक्त भी इस बात का ख्याल रखा जाना चाहिए। इन उद्योगों में लागत के स्तर का महत्व सबसे अधिक होता है और राष्ट्रीय हित की दृष्टि से यह ज़रूरी है कि कुछ और बातों की तुलना में, जिनका सुयोजित विकास की किसी भी योजना में सामान्यतः ध्यान रखना पड़ता है इस बात को विशेष प्राथमिकता दी जाए।

18. जब घरेलू मांग तेज़ी से बढ़ती है, तो उसका असर यह होता है कि विदेशी मंडियों की अपेक्षा देशी मंडियों में बिक्री करने से मुनाफा ज़्यादा होता है। कुछ समय के लिए और

एक सीमा में रहते हुए कुछ ऐसी वित्तीय कार्रवाइयां करनी पड़ सकती हैं, जिनमें चलते यह प्रवृत्ति सुधर जाए। यह तो स्वाभाविक है कि इन उपायों के विवरण के बारे में विभिन्न उद्योगों की वास्तविक स्थिति के प्रकाश में समय-समय पर विचार किया जाता रहे।

19. विदेशी मुद्रा की कमी के कारण यह ज़रूरी हो गया है कि प्राथमिकता निर्धारित करते समय उन उद्योगों को तरजीह दी जाए, तो निर्यात की चीज़ें तैयार करते है या जिनमें निर्यात के लायक काफी अतिरिक्त माल का उत्पादन होता है। जहां भी सम्भव होगा, हर उद्योग के साथ विचार-विमर्श करके यह तय किया जाएगा कि उसे निर्यात के लिए कितना माल देना चाहिए। कुछ हालतों में, जहां किसी उद्योग के तैयार किए हुए माल का निर्यात अनिवार्य हो, शायद यह भी करना पड़े कि हर कारखाने के लिए एक मात्रा निर्धारित कर दी जाए कि वह देश के भीतर उतने से अधिक माल की बिक्री नहीं कर सकता, ताकि उसके उत्पादन का शेष भाग निर्यात के लिए मिल सके। सरकारी क्षेत्र के उद्यमों को भी अपने उत्पादन का एक हिस्सा निर्यात के लिए नियत करके निर्यात-प्रयत्नों की दिशा में पहल करनी चाहिए और विदेशों में बिक्री के लिए भी उचित कार्रवाई करनी चाहिए।

20. निर्यात-संवर्द्धन-परिषदों को विदेशी मंडियों का अध्ययन करने तथा नई-से-नई सूचनाएं प्राप्त करने में प्रमुख भाग लेना चाहिए, ताकि विदेशों में भारत के वाणिज्य-प्रतिनिधियों का विदेशी मंडियों के विषय में समुचित सूचनाएं भेजने का मौजूदा इन्तज़ाम और मज़बूत हो और भारतीय उद्योग तथा व्यापार को सारी सूचनाएं प्राप्त हो सकें और आम तौर से भारत के विदेश-व्यापार की उन्नति हो।

21. हाल के वर्षों में राज्य-व्यापार के अनुभव से पता चलता है कि राज्य-व्यापार-संगठन निर्यात के विकास में महत्वपूर्ण योग दे सकते हैं। सहकारी संगठनों के माध्यम से भी निर्यात को बढ़ावा दिया जा सकता है। निजी निर्यात-संस्थाओं के प्रयत्नों को भी सहारा देने का विचार है।

22. ऊपर कुछ ऐसी मोटी-मोटी बातें बताई गई हैं, जिनके अनुसार तीसरी योजना के विभिन्न निर्यात-प्रयत्नों का विकास करने का विचार है। स्वभावतः इन सबके लिए बड़े व्यापक क्षेत्र में कार्रवाई करनी होगी। खास-खास वस्तुओं के बारे में समय-समय पर फ़ैसले करने होंगे। इनमें से कुछ के अधीन उत्पाद-शुल्क लगाने पड़ेंगे; औरों के मामले में, तीसरी योजना के दौरान विकास के लिए अधिक साधनों का पक्का प्रबन्ध करना ज़रूरी हो सकता है। अदृश्य आय बढ़ाने की कोशिश करना भी ज़रूरी होगा—खास तौर से पर्यटकों और जहाज़रानी-द्वारा।

23. निर्यात में विविधता लाने तथा नई निर्यात-मंडियां पैदा करने का काम देश का विदेश-व्यापार बढ़ाने तथा विदेशों के साथ वाणिज्य-विषयक और आर्थिक सम्बन्ध बढ़ाने के व्यापक प्रयत्न का ही एक हिस्सा समझा जाना चाहिए। आनेवाले वर्षों में अन्य विकासशील प्रदेशों के साथ—विशेषतः दक्षिण और दक्षिणपूर्व-एशिया, पश्चिम-एशिया, अफ्रीका, दक्षिण-अमेरिका और वेस्ट इंडीज़ के साथ—निकट आर्थिक सम्पर्क स्थापित करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इन देशों को अपने आर्थिक विकास के लिए पूंजीगत सामान और पुर्ज़ों तथा कच्चे माल की ज़रूरत पड़ेगी और इनके साथ व्यापार बढ़ाने की पारस्परिक सम्भावनाओं की जांच पूरी तत्परता से की जानी चाहिए। यूरोपीय सामान्य मंडी के देशों की

ओर भी खास ध्यान देने की ज़रूरत है, क्योंकि भारत के विदेशी व्यापार में जो घाटा है, उसका एक बहुत बड़ा हिस्सा इन देशों के साथ व्यापार में है। ब्रिटेन के साथ भारत का पुराना व्यापारिक सम्बन्ध है, जिसे भारत की वृद्धिशील उत्पादन-क्षमता एवं परिवर्तनरत आर्थिक स्वरूप को ध्यान में रख कर और भी गहरा किया जाना चाहिए। सोवियत रूस और पूर्व-यूरोप के देशों के साथ भारत का व्यापार सन्तुलित स्तर पर है और अगले कुछ वर्षों में इन देशों के साथ व्यापार काफी बढ़ना चाहिए। यूगोस्लाविया के साथ व्यापार पहले ही काफी विस्तार पा चुका है और उसके साथ आर्थिक सम्बन्ध बढ़ाने के अच्छे अवसर उपलब्ध हैं। देश के आयात का एक-चौथाई हिस्सा उत्तर-अमेरिका—खास तौर से संयुक्त राज्य-अमेरिका—से आता है। इन देशों की विकासशील अर्थव्यवस्था और रहन-सहन के ऊंचे स्तर के कारण इनके साथ व्यापार बढ़ाने की—खास तौर से निर्यात बढ़ाने की—बड़ी गुंजायश है। इस प्रकार, जैसे-जैसे भारत की आर्थिक प्रगति होगी और वह अधिक देने तथा पाने की स्थिति में आएगा, वैसे-वैसे एक विस्तारशील विश्व-अर्थव्यवस्था का वह एक अंग बनेगा, जिसमें वृद्धिशील सांस्कृतिक और आर्थिक सम्बन्ध जीवन को खुशहाली प्रदान करते हैं तथा सभी देशों की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करते हैं।

अध्याय 9

सन्तुलित प्रादेशिक विकास

(1)

सामान्य दृष्टिकोण

देश के विभिन्न भागों का सन्तुलित विकास करना, आर्थिक प्रगति के लाभों का कम विकसित क्षेत्रों में विस्तार करना और उद्योगों को दूर-दूर तक फैलाना—ये योजनाबद्ध विकास के प्रमुख उद्देश्यों में स्थान रखते हैं। एक के बाद एक पंचवर्षीय योजनाओं में इन उद्देश्यों को अधिकाधिक प्राप्त करने का प्रयत्न किया जा रहा है। अर्थव्यवस्था के विस्तार और तीव्रतर विकास से राष्ट्रीय और प्रादेशिक विकास के बीच सन्तुलन कायम करने की क्षमता उत्तरोत्तर बढ़ती है। इस प्रकार के सन्तुलन के लिए कोशिश करते समय कुछ कठिनाइयों का अनिवार्यतः सामना करना ही पड़ता है, खास कर आर्थिक विकास के प्रारम्भिक सोपानों में। चूंकि साधन सीमित हैं, इसलिए अर्थव्यवस्था में ऐसे स्थानों पर उन्हें केन्द्रित करने से आम तौर से फायदा होता है, जहां प्रतिफल अच्छा मिलने की आशा हो। ज्यों-ज्यों विकास होता जाता है, त्यों-त्यों अधिकाधिक क्षेत्रों में पूंजी लगाई जाती है और बहुत-से स्थलों पर साधनों का प्रयोग किया जाता है। परिणामस्वरूप, लाभ का क्षेत्र और अधिक व्यापक हो जाता है। स्वयं विकास के हित की दृष्टि से राष्ट्रीय आय को ज्यादा-से-ज्यादा बढ़ाना चाहिए और आगे के पूंजी-विनियोग के लिए साधन जुटाने चाहिएं। यह एक समग्रतामूलक प्रक्रिया है, जिसमें प्रत्येक चरण अपने से बाद के चरण का आकार निर्धारित करता है। कुछ क्षेत्रों में, जैसे उद्योग में, सघन और स्थानीय विकास अनिवार्य हो सकता है। इसके साथ ही, अन्य क्षेत्रों में उद्देश्य यह होना चाहिए कि कृषि, लघु उद्योग, बिजली, संचार-साधन और सामाजिक सेवाओं-जैसे क्षेत्रों में अधिक-से-अधिक जगहों पर विकास हो। उद्योग की तरह ही अन्य आर्थिक और सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति में पूंजी लगाने से भी विकास के बहुत-से लाभकारी केन्द्र तैयार होते हैं। कुल मिलाकर अर्थव्यवस्था की प्रगति पर बिना कोई बुरा असर डाले अगर विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्रीय आय और विकास के धरातल पर निश्चित निम्नतम लक्ष्य पूरा किया जा सके, तो कम विकसित क्षेत्रों में अनेक दिशाओं में बड़े पैमाने पर विकास की व्यवस्था करना सम्भव हो जाता है। व्यापक प्राकृतिक साधनों से युक्त किसी विशाल देश के पास—जो अपने विकास के हर सोपान को एक दीर्घ-कालीन योजना के परिप्रेक्षण में देखता हो—तीव्र और स्थायी गति से विकास करने के साधन तो होते ही हैं, वह अपने कम विकसित क्षेत्रों को भी विकसित कर सकता है, ताकि वे अन्य क्षेत्रों के बराबर हो जाएं।

2. इस प्रकार, राष्ट्रीय आय में वृद्धि और देश के विभिन्न भागों का सन्तुलित विकास, ये दोनों उद्देश्य एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं और धीरे-धीरे ऐसी परिस्थितियां पैदा करना सम्भव हो जाता है, जिनमें प्रत्येक क्षेत्र की प्राकृतिक सम्पत्ति, धन और कौशल, आदि साधनों का पूरा-पूरा फायदा उठाया जा सकता है। कभी-कभी हो सकता है कि विकास के क्षेत्र में पिछड़ जाने की भावना किसी क्षेत्र के समग्र विकास की धीमी गति के कारण उतनी न हो, जितनी खेती, सिंचाई, बिजली, उद्योग, या रोजगार आदि के विशेष क्षेत्रों में अपर्याप्त या धीमे विकास

के कारण। प्रत्येक क्षेत्र में सावधानी से इस बात का अध्ययन करना चाहिए कि वहां की समस्याएं क्या हैं तथा वहां विशिष्ट क्षेत्रों में तेज़ी से विकास करने में क्या-क्या रुकावटें आती हैं और तीव्रतर विकास के उचित उपाय करने चाहिएं। मूल उद्देश्य यह होना चाहिए कि हर क्षेत्र के साधन का पूरा-पूरा उपयोग किया जाए, ताकि वह राष्ट्रीय समुच्चय में अधिक-से अधिक योगदान को और राष्ट्रीय विकास से जो लाभ हों, उनमें अपना उचित हिस्सा ग्रहण करे।

3. प्रत्येक क्षेत्र की विकास-क्षमता को अधिक-से-अधिक बढ़ाना चाहिए, किन्तु इस लक्ष्य को प्राप्त करने के तरीके और विकास के सोपान सब जगह पूरी तरह एक-से नहीं होंगे। किसी प्रदेश की भौतिक विशेषताओं और भौगोलिक स्थिति से सम्बद्ध कारणों को तो आसानी से नहीं बदला जा सकता लेकिन शिक्षा और योग्यता का स्तर ऊंचा करके, बिजली का विकास करके और आम तौर से विज्ञान तथा टेक्नोलोजी का बड़े पैमाने पर उपयोग करके प्रदेश की अन्य बातों में परिवर्तन लाया जा सकता है। सघन और व्यापक विकास में आम तौर में सबसे पहले बड़े पैमाने के उद्योगों पर ध्यान दिया जाता है—विशेष कर बुनियादी और भारी उद्योगों पर। फिर भी, औद्योगिक विकास के लिए सभी क्षेत्रों में एक-सी अनुकूल परिस्थितियां नहीं हो सकतीं। यह भी सम्भव है कि किसी क्षेत्र की अधिकांश जनता के रहन-सहन के सन्दर्भ में बड़े कारखानों की स्थापना के स्थानों को जरूरत से ज्यादा महत्व दे दिया जाए। बहुत-से देश और विभिन्न देशों के अन्तर्गत बहुत-से क्षेत्र इस बात के उदाहरण हैं कि औद्योगिक विकास सीमित होने पर भी स्थानीय प्राकृतिक और मानवीय साधनों का पूरा-पूरा उपयोग करने से जीवन-स्तर काफी ऊंचा उठ सकता है। ऐसे भी उदाहरण हैं, जहां बड़ी-बड़ी परियोजनाओं के आस-पास के क्षेत्रों में लोगों के रहन-सहन के स्तर पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। बुनियादी उद्योगों, पूंजीगत सामान-उद्योगों तथा अन्य बड़े-बड़े उद्योगों के अलावा ऐसे भी उद्योग हैं, जिनकी सम्भावनाओं की अच्छी तरह जांच करनी चाहिए––जैसे, अधिक श्रम की अपेक्षा रखनेवाले परम्परागत उद्योग, आधुनिक तरीके के लघु उद्योग, कृषि-विधायन-उद्योग, वन-उद्योग, पुर्ज़े मिलाकर चीज़ें तैयार करने और मनोरंजन की चीज़ें बनानेवाले उद्योग। प्रत्येक क्षेत्र को ऐसे उद्योगों की योजना बनानी चाहिए और उनकी उन्नति करनी चाहिए, जो वहां की परिस्थितियों के विशेष अनुकूल हों तथा जिनके लिए वे अपेक्षाकृत ज्यादा सुविधाएं जुटा सकते हों।

(2)

प्रादेशिक विकास की नीतियां

ऊपर जो सामान्य दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है, वह दूसरी पंचवर्षीय योजना में शामिल किए गए कार्यक्रमों और नीतियों के द्वारा व्यक्त किया गया था। इसमें से सर्वाधिक महत्वपूर्ण ये हैं

(1) कृषि, सामुदायिक विकास, सिंचाई (विशेषकर छोटी सिंचाई), स्थानीय विकास-कार्य आदि के कार्यक्रमों को प्राथमिकता, जो कम-से-कम समय में सम्पूर्ण क्षेत्र में फैल जाएं ;

(2) ऐसे क्षेत्रों में, जो औद्योगिक दृष्टि से पीछे हैं या जहां रोज़गार के अवसर देने की ज्यादा आवश्यकता है, बिजली, पानी, परिवहन और संचार-साधनों, प्रशिक्षण-संस्थाओं, आदि की सुविधाओं की व्यवस्था ;

(3) लघु और ग्रामोद्योगों के विस्तार के कार्यक्रम; और

(4) सरकारी तथा निजी, दोनों प्रकार के नए उद्योगों के लिए स्थान चुनते समय देश के विभिन्न भागों में सन्तुलित अर्थव्यवस्था विकसित करने की आवश्यकता पर ध्यान देना। इस पहलू पर उन हालतों में ज्यादा ध्यान दिया जाना चाहिए, जहां किसी उद्योग की जगह निश्चित करते समय इस एक बात का ही सर्वाधिक विचार न किया जाता हो कि वहां कच्चा माल और दूसरे प्राकृतिक साधन उपलब्ध हैं या नहीं।

इन उपायों के अतिरिक्त दूसरी पंचवर्षीय योजना में इस बात का भी ध्यान रखा गया कि श्रमिक देश के एक स्थान से दूसरे स्थान पर अधिक संख्या में और अधिक आसानी से आ-जा सकें तथा उन्हें ज्यादा घनी आबादीवाले इलाकों से कम घनी आबादीवाले इलाकों में ले जाने और बसाने की योजनाएं तैयार की जा सकें। दूसरी पंचवर्षीय योजना में इस बात का भी सुझाव रखा गया कि प्रादेशिक असमानता की समस्या का बराबर अध्ययन किया जाता रहे और कुछ ऐसे उचित आधार निकाले जाएं, जिनसे प्रादेशिक विकास का पता चल सके।

5. दूसरी पंचवर्षीय योजना की तैयारी और उसके कार्यान्वयन के समय विकास के प्रादेशिक पहलुओं पर तीन भिन्न तरीकों से विचार किया गया। एक तो, राज्यों की योजनाओं के माध्यम से ऐसे कार्यक्रमों पर ज़ोर दिया गया, जिनका देश के विभिन्न भागों के लोगों की खुशहाली से सीधा सम्बन्ध था। दूसरे, कुछ क्षेत्रों में विशेष कार्यक्रम शुरू किए गए, जहां विकास में या तो अस्थायी गतिरोध आ गया था या जहां कुछ बुनियादी कमियों के कारण विकास रुक गया था। तीसरे, उद्योगों के और विकेन्द्रित विकास के लिए कदम उठाए गए, जिससे कई सम्बद्ध क्षेत्रों में विकास की परिस्थितियां पैदा होती है।

6. कृषि, सामुदायिक विकास, ग्रामोद्योग और लघु उद्योग, सिंचाई और बिजली, संचार-साधन तथा सामाजिक सेवाओं के कार्यक्रमों का बहुत अधिक लोगों से सम्बन्ध होता है और इनका उद्देश्य हर क्षेत्र के लोगों के लिए बुनियादी सहूलियतों और सेवाओं की व्यवस्था करना होता है। चूंकि ये कार्यक्रम राज्यों की योजनाओं में सम्मिलित हैं, इसलिए देश के प्रत्येक भाग को विकास से लाभ पहुंचाने की बात अधिकांशतः इस पर निर्भर करती है कि राज्यों की योजनाओं को क्या रूप दिया गया है और योजना की अवधि में उनमें क्या-क्या परिवर्तन होते हैं। कई राज्यों की योजनाओं में नदी-घाटी-परियोजनाओं को बहुत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ और हीराकुड, कोसी, चम्बल, रिहन्द, दामोदर-घाटी-निगम, भाखड़ा-नंगल, कोयना और नागार्जुनसागर-जैसी बहूद्देश्यीय परियोजनाओं पर बहुत पूंजी लगाई गई। ये तथा अन्य परियोजनाएं देश के विशाल भागों के विकास के लिए आवश्यक थीं, इनमें से कुछ भाग अभाव और बेरोज़गारी से ग्रस्त थे या अन्य कारणों से बहुत ही कम विकसित थे। कृषि-उत्पादन और सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों तथा शिक्षा एवं स्वास्थ्य-योजनाओं के लागू होने से भी विकास का फल सुदूरवर्ती इलाकों तक पहुंचा।

7. विकास के सामान्य या समग्र कार्यक्रमों के अतिरिक्त, पहली और दूसरी योजनाओं में ऐसे खास-खास क्षेत्रों के लिए विशेष कार्यक्रम तैयार किए गए, जिन्हें कठिन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। इस प्रकार, सन् 1953-54 में 40 करोड़ रु० की लागत से बहुत-से राज्यों के अभावग्रस्त क्षेत्रों में स्थायी सुधार लाने का एक कार्यक्रम शुरू किया गया। इस कार्यक्रम में मध्यम और छोटी सिंचाई-योजनाएं, बाढ़ से रक्षा के के लिए बांधों का निर्माण तथा बंजर भूमि को खेती-योग्य बनाने और कण्टूर बांध बांधने की योजनाएं भी शामिल थीं। सन् 1957 में जब कुछ राज्यों में फिर अभाव की परिस्थितियां पैदा हुई, तो समस्या का अध्ययन किया गया और अतिरिक्त विकास-कार्यक्रम शुरू किए गए। विभिन्न राज्यों में स्थित कम उन्नत क्षेत्रों के लिए—जैसे, विदर्भ और मराठवाडा, उत्तरप्रदेश के पूर्वी जिले तथा अन्य पिछड़े हुए क्षेत्र और पंजाब तथा उत्तरप्रदेश के पर्वतीय क्षेत्र—सम्बन्धित राज्यों ने प्रायः अपनी योजनाओं में विशेष व्यय की व्यवस्था की है और इस बात का विशेष प्रबन्ध किया है कि अपनी योजनाएं बनाने में इन क्षेत्रों के प्रतिनिधि भी सम्मिलित हों। मध्यप्रदेश, उड़ीसा, असम, आदि राज्यों में उन इलाकों में विकास-कार्यक्रम शुरू किए गए हैं, जहां पिछड़े वर्ग के लोग रहते हैं। इन कार्यक्रमों में सड़क और संचार-साधन, बहूद्देश्यीय विकास-खण्ड, वन-सहकारी समितियां और बदल-बदल कर खेती करने के वर्तमान तरीके में सुधार करने के उपाय भी शामिल हैं। विभिन्न राज्यों के अगम्य स्थलों की समस्याओं का अध्ययन करने का काम भी खाद्य तथा कृषि-मन्त्रालय ने शुरू किया है।

8. उद्योगों को फैला कर स्थापित करने के प्रश्न को लें, तो जहां तक अपेक्षाकृत बड़े उद्योगों का सवाल है, इनमें आर्थिक और तकनीकी पहलुओं का हमेशा महत्व होता है और व्यवहार में इनसे थोड़ा-बहुत ही इधर-उधर होना सम्भव होता है। किसी खास क्षेत्र में बड़ी परियोजनाओं की स्थापना में असुविधाएं हो सकती हैं, परन्तु वे सदा बुनियादी किस्म की या ऐसी नहीं होतीं, जो दूर न की जा सकें, क्योंकि कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि वहां केवल बुनियादी सुविधाओं और सेवाओं की ही कमी हो, अन्य किसी चीज़ की नहीं। सरकारी क्षेत्र की परियोजनाओं की स्थापना में अनिवार्य तकनीकी और आर्थिक कसौटियों की उपेक्षा किए बिना जहां तक सम्भव हो सका, अपेक्षाकृत पिछड़े क्षेत्रों के दावों का ख्याल रखा गया है। इस्पात-कारखानों-जैसी बहुत-सी महत्वपूर्ण परियोजनाओं के स्थान विशेषज्ञों के अध्ययन और आर्थिक तथ्यों को ध्यान में रखकर तय किए गए हैं। लेकिन चूंकि ये ऐसे स्थानों पर स्थापित किए गए हैं, जो अब तक औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े थे, इसलिए इन क्षेत्रों को फायदा होगा। इसी प्रकार, कुछ प्राकृतिक साधनों के विकास की योजनाओं से ऐसे क्षेत्रों को फायदा पहुंचेगा, जिनका अपेक्षाकृत कम विकास हुआ है—जैसे, आर्काट की लिग्नाइट की खानें, उड़ीसा में खनिज, लोहा, सलेम में बाक्साइट की खानें और राजस्थान में सीसे और जस्ते की खानें।

9. बुनियादी पूंजीगत और उत्पादक सामान-उद्योगों की स्थापना के लिए स्थान चुनते समय तो कच्चे माल की सुलभता और दूसरी आर्थिक बातें स्वभावतः महत्वपूर्ण रही हैं, पर साथ ही यह भी महसूस किया गया कि बहुत-सारे उपभोक्ता-सामान और विधायन-उद्योगों में विकास के प्रादेशिक ढंगों को प्रोत्साहित किया जा सकता है। इनमें सूती वस्त्र, चीनी, हल्के इंजीनियरी उद्योग—जैसे, साइकिलें, सिलाई की मशीनें, बिजली

के मोटर, रेडियोसेट, पिंडक और कतरन से इस्पात तथा अलौह धातुओं की ढलाई, ढली हुई प्लास्टिक-वस्तुएं, और उपांत उत्पादनों से बड़े पैमाने पर दवाएं तैयार करना तथा उनका विधायन भी शामिल है। इनके खास उदाहरण हैं—राजस्थान, उड़ीसा, असम और पंजाब में वस्त्र-मिलों की स्थापना; आन्ध्रप्रदेश, मद्रास, मैसूर तथा महाराष्ट्र में चीनी-कारखाने तथा आसवशालाएं, असम, मध्यप्रदेश, केरल तथा उत्तर-बिहार में इस्पात की फिर से ढलाई की मिलें, और केरल में टायर तथा ट्यूब एवं बिजली के लैम्प बनाने के कारखाने। दूसरी पंचवर्षीय योजना में सभी रेल-केन्द्रों में एक कीमत पर इस्पात बेचने का जो निश्चय किया गया है, वह हल्के इंजीनियरी उद्योग को दूर-दूर तक फैलाने के ख्याल से एक महत्वपूर्ण कदम है। चीनी-उद्योग में नए कारखानों को लाइसेंस देने-विषयक जिस नीति का अनुसरण किया गया, उससे देश के विकास में सहायता मिली है। इसी तरह, ऐसे स्थानों पर नई सूती वस्त्र-मिलें खोलने को बढ़ावा दिया गया है, जहां यह उद्योग अभी विकसित नहीं हुआ।

10. कुछ हद तक नए तरीकों से विकास और कच्ची सामग्रियों के नए-नए उपयोगों से भी उद्योग के फैलाव में सहायता मिली है। उदाहरण के लिए कागज़ तैयार करने में गन्ने के फोक का कच्ची सामग्री के रूप में उपयोग शुरू किया गया और गन्ना पैदा करने-वाले इलाकों में कागज़ के कई कारखाने खोलने की स्वीकृति दी गई है, जहां गन्ने के फोक से कागज़ तैयार किया जाएगा। उत्तरप्रदेश में अलकोहल से नकली रबड़ बनाने का एक कारखाना स्थापित किया जा रहा है। पहले अलकोहल का प्रयोग मुख्य रूप से पेट्रोल के साथ मिलाने में किया जाता था। ऐसी जगहों पर, जहां धातु-शोधन के काम न आनेवाला कोयला प्राप्त होता हो और आवश्यकता पड़ने पर धातु-शोधन के काम आने-वाले कोयले से तैयार किए गए कोक के साथ मिलाकर उसे काम में लाया जा सकता हो, वहां कच्चे लोहे के कारखाने खोलने की अनुमति देने का फैसला किया जा चुका है। इसमें से प्रत्येक कारखाने की क्षमता लगभग एक लाख टन होगी। इससे कच्चे लोहे का उत्पादन तो बढ़ेगा ही, इस उद्योग का फैलाव भी होगा। ऐसे विकास को बढ़ावा देने में इस बात का ध्यान अवश्य रखना पड़ेगा कि उत्पादन में किफ़ायतशुआरी और प्रादेशिक वितरण के बीच सन्तुलन बना रहे।

11. लघु और ग्रामोद्योग देश-भर में फैले हुए हैं और जिस क्षेत्र में जैसा कार्य-क्रम शुरू किया गया है, उसके अनुसार केन्द्रीय और राज्य-सरकारों ने तरह-तरह की सहायताएं प्रदान की हैं। सभी राज्यों में औद्योगिक बस्तियां बसाई गई हैं और आगे यह कोशिश की जाएगी कि ऐसी बस्तियां अधिक-से-अधिक छोटे-छोटे कस्बों और देहाती क्षेत्रों में बसें।

(3)

तीसरी योजना में प्रादेशिक सम्भावनाएं

12. पिछले वर्षों में जिस स्तर पर विकास-कार्य हुआ है, तीसरी योजना में उससे कहीं बड़े पैमाने पर और व्यापक रूप में विकास-कार्य किया जाएगा तथा देश के विभिन्न भागों को विकास के भी व्यापक अवसर प्रदान किए जाएंगे। इस योजना के कई महत्व-पूर्ण कार्यक्रम अनिवार्यतः राज्यों की योजनाओं के अन्तर्गत आते हैं। इन्हें तैयार करते समय मोटे तौर पर ये उद्देश्य रहे हैं—कृषि-उत्पादन बढ़ाने में हर राज्य अधिक-से-अधिक

योग दे; आय और रोज़गार ज्यादा-से-ज्यादा बढ़ाने की कोशिश की जाए; ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक सेवाओं का, विशेषकर प्रारम्भिक शिक्षा, पानी की आपूर्ति तथा सफाई-व्यवस्था, और स्वास्थ्य-सेवाओं का विकास हो; तथा कम विकसित इलाकों में रहन-सहन का स्तर ऊंचा उठे। इस प्रकार, राज्य की योजनाएं इस ढंग से तैयार करने का इरादा रखा गया है कि उत्पादन और रोज़गारी बढ़े तथा जनता के अपेक्षाकृत कमज़ोर वर्ग खुशहाल हों। विभिन्न राज्यों के लिए व्यय की जानेवाली राशि का निश्चय उनकी आवश्यकताओं और समस्याओं तथा उनके विकास—विशेषतः सामाजिक सेवाओं, संचार-साधनों तथा बिजली के क्षेत्र में—की सफलताओं और अड़चनों, बड़े राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति में उनके सम्भावित योगदान, विकास-विषयक उनकी क्षमता तथा अपनी योजनाओं के लिए पूंजी-व्यवस्था के क्षेत्र में उनके द्वारा उपलब्ध किए जा सकनेवाले साधनों को ध्यान में रख कर किया गया है। विभिन्न राज्यों की समस्याओं और आवश्यकताओं को आंकने में इन सब बातों का ध्यान रखा गया है—आबादी, क्षेत्रफल, खेती पर निर्भर करनेवाले लोगों की संख्या, दूसरी योजना की अवशिष्ट तथा बड़ी-बड़ी परियोजनाओं से पैदा होनेवाली ज़िम्मेदारियां और तकनीकी तथा प्रशासकीय सेवाओं की अवस्था। इस प्रकार, जहां तक सम्भव हो सका है, केन्द्र तथा राज्य, दोनों की प्राथमिकताओं को ध्यान में रखने की कोशिश की गई है। कुल मिलाकर तीसरी योजना के अन्तर्गत राज्यों में कितना और किस ढंग से खर्च हो, यह तय करते समय लक्ष्य यह रखा गया है कि विभिन्न राज्यों के बीच विकास-विषयक विषमता घटे, हालांकि यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें समय लगता ही है।

13. राज्यों की योजनाओं में जो व्यवस्था की गई है, उसके इलावा तीसरी योजना में ऐसी कई अन्य बातें हैं, जिनसे उन क्षेत्रों के विकास की सम्भावनाएं बढ़ेंगी, जो अभी तक अपेक्षाकृत पिछड़े रहे हैं। उदाहरण के लिए, खेती के सघन विकास, सिंचाई-साधनों के विस्तार, लघु और ग्रामोद्योगों के विकास, बड़े पैमाने पर बिजली के प्रसार, सड़कों तथा सड़क-परिवहन के विकास, सारे देश में 6 से 11 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था तथा उच्चतर माध्यमिक, तकनीकी और व्यवसायिक शिक्षा के अधिक अवसर, रहन-सहन के तथा जल-आपूर्ति-व्यवस्था में सुधार, और अनुसूचित जातियों और आदिम जातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों की खुशहाली के कार्यक्रमों से देश-भर में द्रुत आर्थिक विकास की नींव मज़बूत होगी। गरीबी और अर्द्धरोज़गारी उन क्षेत्रों में विशेष रूप से अधिक है, जहां आबादी बहुत ज्यादा है और जहां प्राकृतिक साधनों का बहुत ही कम विकास हुआ है। तीसरी योजना में गांवों के विकास का जो विशाल कार्यक्रम शुरू करने का विचार है, उससे इन क्षेत्रों के इलावा अन्य क्षेत्रों में भी काम के ज्यादा अवसर मिल सकेंगे। देश के कुछ भागों में बागान-उद्योग का काफी विकास होगा, विशेष कर चाय, काफी और रबड़ के बागानों की बड़ी-बड़ी औद्योगिक परियोजनाएं, नदी-घाटी-परियोजनाएं तथा अन्य परियोजनाएं, जिनका बाद में उल्लेख किया जाएगा, भावी विकास के लिए महत्वपूर्ण केन्द्रों का काम करेंगी।

14. **उद्योगों का स्थान और विकास क्षेत्र :** जैसा कि पहले बताया जा चुका है, उद्योगों के स्थान चुनने में आम तौर से तो तकनीकी और आर्थिक बातों का ध्यान रखना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, ऐसे उद्योगों में, जो अपने उत्पादन का काफी भाग निर्यात कर

सकते हों, नए कारखाने स्थापित करते समय राष्ट्रहित की दृष्टि से इस बात का ख्याल रखा जाता है कि वे जिस पैमाने पर उत्पादन करें, उसमें किफायत हो और विदेशी मंडियों में प्रतियोगिता की हमारी क्षमता बढ़े। लेकिन इन मोटी-मोटी बातों के साथ सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों में औद्योगिक परियोजनाओं के स्थान तय करते समय उन इलाकों की ज़रूरतों को भी ध्यान में रखना चाहिए, जिनमें औद्योगिक विकास की आवश्यक क्षमता हो। आम तौर पर दृष्टिकोण यह होना चाहिए कि ऐसे क्षेत्रों में, जहां पहले ही काफी विकास हो चुका है या उसकी योजना बन चुकी हो, वहां और उद्योग स्थापित न किए जाएं, लेकिन ऐसे स्थानों में अगर वर्तमान उद्योगों के विस्तार से उत्पादन में ज्यादा किफायत होती हो तो वैसा करना ही पड़ेगा। इसी तरह, जहां तक सम्भव हो, इस बात का भी ख्याल रखा जाना चाहिए कि नए उद्योग और साधन बड़े तथा घनी आबादीवाले नगरों से दूर स्थापित किए जाएं।

15. सरकारी क्षेत्र में परियोजनाओं के स्थानों के बारे में अब तक जो निश्चय किए गए हैं, उनसे यह साफ ज़ाहिर है कि वे काफी दूर-दूर तक फैले हुए होंगे और विभिन्न प्रदेश औद्योगिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान करेंगे, उदाहरण के लिए : उड़ीसा में राउरकेला-इस्पात-कारखाने और उर्वरक-कारखाने का विस्तार; असम में नूनमती-तेल-शोधन-कारखाना, उर्वरक-कारखाना और प्राकृतिक गैस का उपयोग तथा वितरण, केरल में फाइटो-रासायनिक कारखाना, उर्वरक की क्षमता में विस्तार तथा एक जहाज़ी यार्ड का निर्माण, आन्ध्रप्रदेश में रासायनिक औषध-कारखाना, विशाखापटनम की सूखी गोदी, हिन्दुस्तान शिपयार्ड का विस्तार, प्राग-टूल्स और आन्ध्र-पेपर-मिल्स का विस्तार; मध्य-प्रदेश में नोट के कागज़ का कारखाना, बुनियादी ऊष्मसह कारखाना-परियोजना, नेपा-मिल्स का विस्तार, भिलाई-इस्पात-कारखाना और बिजली के भारी सामान की परियोजना; उत्तरप्रदेश में कीटाणुनाशक दवाओं का कारखाना, उर्वरक-कारखाना, ऊष्मसह कारखाना, तथा बारीक औज़ारों के कारखाने का विस्तार, राजस्थान में तांबे की खानों का विकास; पंजाब में एक मशीनी औज़ार का कारखाना, मद्रास में शल्य उपकरणों का कारखाना, कच्ची फिल्म का कारखाना, लोहे और इस्पात का मार्ग-दर्शक-कारखाना, नइवेली लिग्नाइट उच्च ताप कार्बनीकरण-कारखाना, टेलीप्रिंटर-कारखाना और एक इस्पात-ढलाई-कारखाना; गुजरात में तेल-शोधन-कारखाना और जम्मू-कश्मीर में एक सीमेंट-कारखाना।

16. निजी क्षेत्र में भी औद्योगिक परियोजनाओं को लाइसेंस देते समय अर्द्धविकसित क्षेत्रों के दावों का ध्यान रखा जाता है और जो लोग कारखाने खोलना चाहते हैं, उन्हें उपयुक्त स्थानों के बारे में सुझाव दिया जाता है। उद्योगों की क्षमता क्षेत्रीय आधार पर बढ़ाई जा सके, इस ख्याल से समय-समय पर निजी क्षेत्र के अनेक उद्योगों की प्रगति, कार्यक्रम और उत्पादन-लक्ष्यों की जांच की जाती है। यह बात मान ली गई है कि भविष्य में इन दिशाओं में और भी ज़्यादा ज़ोर दिया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, यह निश्चय किया गया है कि तीसरी योजना के दौरान जो नई वस्त्र-मिलें स्थापित की जाएंगी, वे मोटे तौर पर ऐसे प्रदेशों में होंगी, जहां इस समय वस्त्र बिल्कुल तैयार नहीं होता। कुछ हल्के इंजीनियरी-उद्योगों के विषय में भी ऐसे अध्ययन किए गए हैं; तीसरी योजना की अवधि में निजी क्षेत्र के अन्तर्गत कम विकसित प्रदेशों में, जिनमें महत्वपूर्ण परियोजनाएं शुरू होने की आशा है, से मिसाल के तौर पर इनका उल्लेख किया जा सकता है : उत्तरप्रदेश में एक अल्युमीनियम-कारखाना तथा सेलुलोज़ एसिटेट-कारखाना; राजस्थान में एक उर्वरक-कारखाना,

नाइलोन-कारखाना, कास्टिक सोडा-पी०वी०सी०-कारखाना और जस्ता गलाने की भट्ठी; असम में नकली रबड़, पोलिथिलीन तथा कार्बन-ब्लैक की परियोजनाएं और कागज़ की लुगदी तैयार करने का कारखाना; तथा केरल में मोटरों के रबड़-टायर तैयार करने का कारखाना और कई विद्यमान कारखानों का विस्तार।

17. औद्योगिक नीति-विषयक प्रस्ताव में यह बात निहित है कि जो क्षेत्र इस समय औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं या जहां रोज़गार के अवसर देने की ज़्यादा ज़रूरत है, वहां बिजली, जल-आपूर्ति तथा परिवहन की सुविधाएं दी जानी चाहिए, ताकि इन क्षेत्रों में उचित उद्योग स्थापित किए जा सकें। इस सुझाव को कार्यरूप देने के लिए तीसरी योजना में पिछड़े हुए प्रदेशों में 'औद्योगिक विकास-क्षेत्र' स्थापित करने का प्रस्ताव है। ऐसे प्रदेशों में चुने हुए क्षेत्रों में बिजली, पानी तथा संचार-साधन आदि की बुनियादी सुविधाएं प्रदान की जाएंगी, कारखाने खोलने के स्थानों का विकास किया जाएगा और उन्हें नए उद्योगपतियों को बेचा जाएगा या लम्बे पट्टे पर दिया जाएगा। यह योजना प्रमुख रूप से मझोले उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए बनाई गई है, लेकिन आशा है कि इनके साथ छोटे पैमाने के उद्योगों की स्थापना की भी गुंजायश बढ़ेगी, विशेष रूप से सहायक उद्योगों की। प्रस्तावित औद्योगिक विकास-क्षेत्रों के भीतर या उनके आस-पास औद्योगिक बस्तियां स्थापित करना भी सम्भव होना चाहिए। राज्यों ने मोटे तौर पर इस योजना को स्वीकार कर लिया है और अब विस्तृत प्रस्ताव तैयार किए जा रहे हैं।

18. **प्रादेशिक विकास के आधार-रूप में बड़ी परियोजनाएं :** अगर किसी बड़ी परियोजना से सम्बद्ध या पूरक कार्यक्रम और योजनाएं शुरू कर दी जाएं, तो उनके लाभ जिस क्षेत्र में वह स्थित हैं, उसके लोगों को औरों के मुकाबले कहीं अधिक मिलते हैं। इसलिए आयोजन की एक आवश्यक बात यह होनी चाहिए कि हर बड़ी परियोजना को उस सारे प्रदेश के समन्वित विकास का आधार माना जाए। उदाहरण के लिए, नई सिंचाई-परियोजनाओं के आस-पास कई छोटी-मोटी योजनाएं शुरू की जानी चाहिए, जिनका उद्देश्य उन्नत कृषि, बागवानी, बिक्री-केन्द्रों, तथा विधायन एवं अन्य उद्योगों का विकास करना हो। इसी प्रकार, इस्पात-कारखाने और अन्य बड़ी औद्योगिक परियोजनाएं छोटे और मझोले उद्योगों के विकास तथा शिक्षा, प्रशिक्षण एवं अन्य गतिविधियों के लिए आधार का काम करती हैं। विकास की ऐसी सम्भावनाएं उन सभी बड़े प्रदेशों में हैं, जहां तीसरी योजना के दौरान नए-नए साधनों का विकास किया जाएगा—जैसे, दण्डकारण्य, राजस्थान-नहर-क्षेत्र तथा तुंगभद्रा, नागार्जुनसागर, कोयना, चम्बल एवं कई अन्य परियोजना-सेवित क्षेत्र। राष्ट्रीय महत्व के नगरों एवं अन्य बड़े-बड़े नगरों के बढ़ते जाने से कुछ नई तरह की समस्याएं सामने आई हैं। कलकत्ता, दिल्ली, बम्बई और राष्ट्रीय महत्व के अन्य नगरों में यह आवश्यक है कि सन्तुलित प्रादेशिक विकास-कार्यक्रमों की एक शृंखला शुरू की जाए, जिनमें उचित भूमि और आवास-नीतियों, नए कस्बों की स्थापना तथा उद्योगों के स्थानों के बारे में निश्चय भी शामिल हो। विभिन्न प्रकार के प्रदेशों में प्रादेशिक या क्षेत्र-विकास-योजनाओं की तैयारी तीसरी योजना के शुरू में ही आरम्भ कर देनी चाहिए। इस तरह, नए और महत्वपूर्ण केन्द्रों की स्थापना से या सम्पत्ति के नए साधन पैदा होने से जो लाभ होना है, वह बहुत बढ़ जाएगा और कहीं अधिक क्षत्रों को प्राप्त होने लगेगा।

19. **टेक्नोलाजी-सम्बन्धी विकास का महत्व :** विभिन्न क्षेत्रों की विकास-क्षमता का अध्ययन टेक्नोलाजी और विज्ञान की प्रगति से पैदा होनेवाली सम्भावनाओं के सन्दर्भ में किया

जाना चाहिए । उदाहरण के लिए, असम, गुजरात और राजस्थान-जैसे क्षेत्रों म कोयले की खानें न होने के कारण विकास-सम्बन्धी जो बाधा उपस्थित है, वह पनबिजली, तेल और परमाणु-शक्ति उपलब्ध हो जाने से बहुत-कुछ दूर हो जाएगी । दीर्घकालीन दृष्टि से यह बात प्रादेशिक विकास के लिए बड़े महत्व की है । इसी प्रकार परिवहन और संचार-व्यवस्था के उन्नत होने से दूर-दूर के क्षेत्र एक-दूसरे के निकट आते जा रहे हैं—जैसे, असम, जम्मू-कश्मीर, और उड़ीसा, मध्यप्रदेश तथा राजस्थान के कुछ क्षेत्रों के लिए संचार और परिवहन के साधन उन्नत हो जाने से देश की सामान्य आर्थिक प्रगति में पूरा-पूरा हिस्सा ले सकना सम्भव हो गया है । प्रादेशिक विकास की नई-नई सम्भावनाएं पैदा करने में बिजली की आपूर्ति में वृद्धि और गांवों में बिजली पहुंचने का बहुत महत्व है । तीसरी योजना के दौरान देश के कई अल्प-विकसित क्षेत्र इन दिशाओं में काफी प्रगति करेंगे ।

20. **शिक्षा और प्रशिक्षण :** कम विकसित क्षेत्रों की द्रुत आर्थिक प्रगति में एक बहुत बड़ी बाधा वहां शिक्षा की कमी है । आशा है, निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के कार्यक्रमों-द्वारा शिक्षा के सामान्य आधार का विस्तार करने और तकनीकी प्रशिक्षण की सुविधाओं की व्यवस्था से कम विकसित क्षेत्रों की उन्नति में धीरे-धीरे अधिकाधिक सहायता मिलेगी । राज्यों की योजनाओं में इन कार्यक्रमों के लिए वित्तीय व्यवस्था कर दी गई है, पर इस ओर से आश्वस्त हो जाना जरूरी है कि लड़कियों की शिक्षा के लिए तथा कम विकसित क्षेत्रों में प्रारम्भिक शिक्षा के विकास के लिए जिन सुविधाओं की व्यवस्था की गई है, उनका उपयोग प्रभावपूर्ण तरीके से किया जाएगा । इंजीनियरों, डाक्टरों, कृषि-विशेषज्ञों, शिल्पकारों और अन्य लोगों के प्रशिक्षण की सुविधाओं को पहले ही देश-भर में फैलाया जा रहा है । तकनीकी, व्यावसायिक और माध्यमिक शिक्षा के कार्यक्रमों को लागू करते समय ऐसे कम विकसित क्षेत्रों की जनता की आवश्यकताओं का विशेष ध्यान रखना चाहिए, जहां नई औद्योगिक परियोजनाएं आरम्भ की जा सकती हों ।

21. **श्रमिकों का भेज-भिजाव :** देश के कुछ हिस्सों में श्रमिकों का बहुत समय स भेज-भिजाव होता रहा है । उदाहरणार्थ, बिहार के मज़दूर असम के चाय-बागानों में काम करते हैं और राजस्थान के मज़दूर पंजाव तथा अन्य स्थानों में सड़कों एवं सिंचाई की परि-योजनाओं में काम करते हैं । केन्द्र और राज्यों में विभिन्न क्षेत्रों के लिए मज़दूरों को फिर से काम पर लगाने की व्यवस्था कर दी गई है और इससे कुशल श्रमिकों को नई परियोजनाओं पर ले जाने में सहायता मिलेगी । परन्तु श्रमिकों के प्रवासन और एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने का सवाल कहीं अधिक व्यापक है । देश के घनी आबादीवाले इलाकों से बड़ी संख्या में अकुशल श्रमिकों को कम आबादीवाले इलाकों में ले जाने की गुंजायश फिलहाल कम ही है । पर यह स्पष्ट है कि कुशल और अर्द्धकुशल श्रमिक एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में अपेक्षाकृत कम कठि-नाई से जा सकते हैं और जहां भी स्थानीय अर्थव्यवस्था तेज़ी के साथ विकास कर रही है, वहा वे आसानी से खप जाते हैं । अतः यह आवश्यक है कि घनी आबादीवाले क्षेत्रों में उनके अपने गहन विकास की व्यवस्था के साथ-साथ, तकनीकी प्रशिक्षण-कार्यक्रमों का काफी विस्तार किया जाना चाहिए, ताकि और जगहों पर काम करने के लिए भी प्रशिक्षित मज़दूर मिल सकें ।

22. **विकास-कर्मचारी :** विकास का स्तर काफी हद तक सुचारु प्रशासन और तक-नीकी कर्मचारियों की उपलब्धि पर निर्भर करता है । इसके साथ ही यह भी महत्वपूर्ण है कि

छोटे और मझोले उद्योगपतियों का एक ऐसा वर्ग किस हद तक पनपता है, जो नए क्षेत्रों में कदम उठाने का साहस कर सके और जोखिम उठा सके। इससे भी अधिक यह इस बात पर निर्भर करता है कि स्थानीय लोगों में पहल करने की कितनी शक्ति है और उनमें नेतृत्व का किस हद तक विकास हुआ है। विकास के इन पहलुओं पर ध्यान दिया जाना चाहिए, क्योंकि इनका संकेत ऐसी बाधाओं की ओर है, जो अर्द्धविकसित प्रदेश के लिए साधनों की व्यवस्था कर देने-मात्र से दूर नहीं की जा सकतीं।

प्रादेशिक विकास का अध्ययन

23. अधिक सन्तुलित प्रादेशिक विकास के कार्यक्रम निर्धारित करने के लिए यह बात उपयोगी होगी कि विभिन्न क्षेत्रों में आर्थिक प्रवृत्तियों और विकास की गति का तथा कम विकसित प्रदेशों से सम्बन्धित कार्यक्रमों का बराबर अध्ययन किया जाए। जिन अर्द्धविकसित क्षेत्रों की ओर विशेष ध्यान देने की ज़रूरत है, उन्हें और निकट से जानना होगा, उनके साधनों का सर्वेक्षण करना होगा तथा उनके विकास को प्रभावित करनेवाले कारणों की जांच करनी होगी। 'प्रदेश' का ठीक-ठीक मतलब क्या है—इसकी भी स्पष्ट परिभाषा कर देना ज़रूरी है। किसी राज्य में कई 'प्रदेश' हो सकते हैं और कोई 'प्रदेश' राज्य से बड़ा भी हो सकता है—अपने प्रयोजन के अनुसार प्रदेश की अलग-अलग आख्याएं स्वीकार की जा सकती हैं। हर राज्य में कुछ क्षेत्र ऐसे होते हैं, जो दूसरों की अपेक्षा कम उन्नत होते हैं। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, कई और सन्दर्भों में भी प्रादेशिक विकास की समस्याएं सामने आती हैं—उदाहरणार्थ, बड़ी-बड़ी परियोजनाओं के चारों ओर के क्षेत्रों के; जिन क्षेत्रों में नए साधनों का विकास किया जा रहा है, उनके; और राजधानियों के आस-पास के प्रदेशों के सन्दर्भ में। विभिन्न प्रदेशों में विकास के स्तर निर्धारित करने के लिए कृषि-उत्पादन, औद्योगिक उत्पादन, पूंजी-विनियोग, बेरोज़गारी, बिजली की खपत, सिंचित क्षेत्र, वस्तु-उत्पादक क्षेत्रों की उपज का मूल्य, उपभोग-व्यय का स्तर, सड़कों की लम्बाई, प्राथमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा तथा वहां के निवासियों के पेशे, आदि से सम्बद्ध तथ्य उपयोगी होते हैं, पर यह अध्ययन ठीक-ठीक आंकड़ों के आधार पर ही किया जाना चाहिए और इस तरह किया जाना चाहिए कि विभिन्न राज्यों और प्रदेशों की सही-सही तुलना की जा सके। दूसरी योजना की अवधि में इन समस्याओं के बारे में कुछ काम हुआ था और एक विशेष अध्ययन-दल की सहायता के रूप में इस काम को जारी रखने का विचार है। केन्द्रीय सांख्यिकी-संगठन, राज्य-सांख्यिकी-ब्यूरो तथा भारतीय सांख्यिकी-संस्थान का इस दल के काम में सहयोग रहेगा।

24. विभिन्न राज्यों और प्रदेशों के विकास-अध्ययनों में, आर्थिक प्रगति के व्यापक सूचक के रूप में, 'राज्य-आय' के अनुमानों का काफी महत्व होता है। 'राज्य' और 'प्रदेश' की आय के अनुमान के सिद्धान्तों, परिभाषाओं और तकनीकों से सम्बन्धित कई जटिल सवाल हैं, जिनका विभिन्न अनुमानों के व्यावहारिक मूल्य पर असर पड़ता है। 'राज्य-आय' या तो वह आमदनी मानी जा सकती है, जो किसी राज्य की सीमाओं में हो या वह आमदनी, जो उसके निवासियों को होती हो। पहला सिद्धान्त सम्पूर्ण देश के 'आन्तरिक उत्पादन' से सम्बद्ध है और दूसरा सिद्धान्त 'राष्ट्रीय आय' से। राज्यों या प्रदेशों के औद्योगिक तथा आर्थिक विकास के स्तर के तुलनात्मक अध्ययन के लिए किसी 'राज्य' या 'प्रदेश' के भीतर

होनेवाली आय का अनुमान ही काफी है। दूसरी ओर, किसी राज्य की होनेवाली आय का अनुमान समग्र राज्य के निवासियों की आर्थिक खुशहाली का एक मोटा पैमाना हो सकता है। भावी योजनाओं में राज्य-आय के अनुमानों के महत्व को देखते हुए यह तय किया गया है कि राज्य-सांख्यिकी-ब्यूरो के सहयोग से केन्द्रीय सांख्यिकी-संगठन तुलनात्मक वार्षिक आधार पर राज्य-आय के अनुमान तैयार करने का काम करे। ये अनुमान वस्तु-उत्पादन तथा राज्य में होनेवाली आय के आधार पर तैयार किए जाएंगे। पहले-पहल कुछ खास वस्तु-क्षेत्रों—जैसे, खेती, उद्योग, आदि—में तुलनात्मक आधार पर आय के अनुमान तैयार किए जा सकते हैं।

25. यह ठीक है कि राज्य और प्रदेश के आय के अनुमान तथा कुछ खास चीज़ों के बारे में आंकड़े जुटाने की अपनी उपयोगिता है, पर इससे भी ज़्यादा महत्व की बात यह है कि विभिन्न प्रदेशों की समस्याओं को जानने-समझने तथा उनकी आवश्यकताओं-सम्भावनाओं को जांचने-परखने के लिए व्यवस्थित सर्वेक्षण किए जाएं। भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्थान, खान-संस्थान, तेल तथा प्राकृतिक गैस-आयोग, केन्द्रीय जल तथा बिजली-आयोग, भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद्, वैज्ञानिक एवं औद्योगिक परिषद्, आदि संस्थाएं विभिन्न क्षेत्रों में वैज्ञानिक तथा तकनीकी सर्वेक्षण किया करती हैं। राष्ट्रीय प्रयोगात्मक आर्थिक अनुसन्धान-परिषद् ने कई राज्यों और संघीय क्षेत्रों के तकनीकी-आर्थिक सर्वेक्षण का काम शुरू किया है। खड़गपुर के टेक्नोलाजी-संस्थान तथा कलकत्ता एवं पटना-विश्वविद्यालयों की ओर से दामोदर-घाटी-प्रदेश के सर्वेक्षण का काम काफी आगे बढ़ चुका है। भारतीय सांख्यिकी-संस्थान ने प्रादेशिक आयोजन की समस्याओं के अध्ययन की अपनी योजना के अन्तर्गत मैसूर और केरल में प्रादेशिक सर्वेक्षण शुरू किए हैं। बेंचमार्क-सर्वेक्षणों तथा कार्यक्रम-मूल्यांकन-संगठन के अन्य अध्ययनों से विकास की विभिन्न अवस्थाओं में से गुज़रते हुए ग्रामीण क्षेत्रों की समस्याओं के बारे में जानकारी हासिल हो रही है। अनुसन्धान-कार्यक्रम-समिति की ओर से जो शहर-सर्वेक्षण तथा अन्य अध्ययन किए गए हैं, उन सभी शहरी और प्रादेशिक विकास की समस्याओं के बारे में बहुत-से आंकड़े प्राप्त हुए हैं। राष्ट्रीय महत्व के नगरों—जैसे, दिल्ली और बम्बई—के सर्वेक्षणों का तथा कलकत्ता के प्रस्तावित सर्वेक्षण का भी आयोजना के क्षेत्र में काफी महत्व है। इस प्रकार, इधर के वर्षों में जो कई कदम उठाए गए हैं, उनके फलस्वरूप प्रादेशिक विकास की समस्याओं और सम्भावनाओं के बारे में बहुत-सारी तकनीकी, आर्थिक तथा सामाजिक जानकारी एकत्रित हो गई है तथा भावी आयोजन में उससे बड़ी सहायता मिलेगी।

26. प्रदेशों के विकास और समग्र राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास को एक ही प्रक्रिया के दो अंग समझा जाना चाहिए। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की प्रगति विभिन्न प्रदेशों के विकास की गति में झलकेगी और विभिन्न प्रदेशों में साधनों का जितना अधिक विकास होगा, उतनी ही तेज़ी से सारा देश उन्नति करेगा। किसी खास प्रदेश की समस्याओं पर अत्यधिक ज़ोर देने और उनकी ज़रूरतों को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं की सापेक्षता में न रखकर उनके विकास का प्रयत्न करने की प्रवृत्ति गलत है और हमें उससे बचना चाहिए, क्योंकि अन्ततः विभिन्न प्रदेश देश के अभिन्न अंगों के रूप में ही अपने विकास की पूर्ण सम्भावनाओं को साकार कर सकते हैं। परस्पर-सम्बद्ध प्रयत्नों की एक कड़ी जब पूरी हो जाती है, तभी सन्तुलित प्रादेशिक विकास का फल प्राप्त होता है। इनमें से अनेक प्रयत्न दीर्घकाल-व्यापी होते हैं। थोड़ी अवधि को आधार बना कर देखें, तो लक्ष्य की ओर प्रगति मामूली और

अधूरी दीखेगी । यह बात अलग-अलग प्रदेशों के बारे में भी सच है और समूची राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के बारे में भी। इस वक्त की कमियां चाहे कुछ भी हों, पर लक्ष्य यह होना चाहिए कि एक मुनासिब अरसे में देश के सभी प्रदेश आर्थिक विकास की अपनी सम्भावनाओं को सिद्ध कर लें और रहन-सहन के ऐसे स्तर को हासिल कर लें, जो सम्पूर्ण राष्ट्र के स्तर से बहुत ऊपर-नीचे न हो। अतः ज़रूरत इस बात की है कि विभिन्न प्रदेशों की प्रगति पर सावधानी से नज़र रखी जाए और जो क्षेत्र काफी पीछे दिखाई पड़ें, उनके विकास की गति बढ़ाने के लिए खास उपाय किए जाएं। दीर्घकालीन विकास के परिप्रेक्षण में, जब अर्थव्यवस्था तेज़ी से उस धरातल की ओर बढ़ रही हो, जहां से वह अपनी भीतरी शक्ति के बल पर विकसित होती रहे तथा जब लोगों के रहन-सहन का स्तर बराबर ऊपर उठ रहा हो, तब प्रादेशिक और राष्ट्रीय विकास अनिवार्यतः एक समान उद्देश्य के दो अलग-अलग पहलू हुआ करते हैं।

अध्याय 10

रोज़गार और जनशक्ति

(1)

समस्या का विश्लेषण

सबको रोज़गार देना भारत में आयोजन का एक मुख्य उद्देश्य है; पहली दोनों योजनाओं में भी इस पर बल दिया गया था और तीसरी योजना में भी इसे विशेष महत्व दिया गया है। जनशक्ति के उपलब्ध साधनों का पूरा उपयोग एक लम्बे समय तक विकास-कार्य चलते रहने के बाद ही सम्भव है। फिर भी तीसरी योजना का एक मुख्य लक्ष्य यह है कि योजनाकाल में श्रमिकों की बढ़नेवाली संख्या के अनुपात में ही रोज़गार देने के अवसर भी बढ़ाए जा सकें। श्रमिकों की बढ़ती हुई संख्या को देखते हुए ऐसा मालूम होता है कि रोज़गार के पर्याप्त अवसर प्रदान करना अगले पांच वर्षों में किए जानेवाले सबसे अधिक कठिन कार्यों में से एक है।

2. ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोज़गारी और अर्द्धरोज़गारी की समस्याएं साथ-साथ विद्यमान ह; वैसे, दोनों के बीच भेद करना भी सरल नहीं है। गांवों में बेरोज़गारी सामान्यतः अर्द्ध-रोज़गारी का स्वरूप ग्रहण कर लेती है। देश के कई भागों में, खेती के मौसम में, श्रमिकों की कमी अक्सर महसूस की जाती है, परन्तु वर्ष के एक बड़े भाग में खेतिहर श्रमिकों और सम्बद्ध क्षेत्रों में काम करनेवालों को लगातार काम नहीं मिलता। फलस्वरूप, श्रमिक गांवों से शहरों की ओर जाने लगते हैं; और इसका अर्थ यह होता है कि समस्या गांवों के बजाय शहरों में पहुंच गई है। हालांकि हाल के सर्वेक्षणों से यह प्रकट हुआ है कि शहरों में बेरोज़गारी अधिक है, पर यह अपने आप में इस बात का द्योतक है कि ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार के अवसर बहुत कम हैं। वास्तव में, शहरों और गांवों में बेरोज़गारी की समस्या एक-सी ही है।

शहरी क्षेत्रों में रोज़गार का सम्बन्ध व्यापार, परिवहन और उद्योगों की अवस्था में होनेवाले परिवर्तनों से जुड़ा हुआ है। इनकी स्थिति में ज़रा-सा परिवर्तन होते ही बेरोज़गारी के आंकड़े भी घटने-बढ़ने लगते हैं। यह स्थिति सभी जगह है तथा छोटे और बड़े शहरों एवं गांवों को अर्द्ध-बेरोज़गारी के संकट का लगभग समान रूप से सामना करना पड़ता है।

3. सारे देश में और विभिन्न प्रदेशों, शहरों और ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार की स्थिति का सही चित्र तैयार करने के लिए वर्तमान आंकड़े काफी नहीं हैं। आंकड़ों को एक ओर रख देने पर भी यह आम धारणा है, जो कि रोज़गार-दफ्तरों के ज़रिए मिलनेवाले अवसरों की सीमित संख्या तथा वहां काम पाने की इच्छा से नाम दर्ज करानेवालों की बड़ी संख्या को देखकर और भी पुष्ट होती है, कि बेरोजगारी की दृष्टि से पिछले पांच वर्षों में अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय ह्रास हुआ है। सन् 1961 की जनगणना के अब तक प्राप्त आंकड़ों के अनुसार, देश की तेज़ी से बढ़ती हुई जनसंख्या इस बात का प्रमाण है कि बेरोज़-गारी की समस्या जटिलतर होती जा रही है। दूसरी खेतिहर श्रमिक-जांच और राष्ट्रीय नमूना-सर्वेक्षण की रिपोर्टों एवं कार्यक्रम-मूल्यांकन-संगठन के अध्ययनों से इस तथ्य की

मोटे तौर पर पुष्टि हुई है। परन्तु यही पूरी स्थिति का चित्र नहीं है। विकास-कार्यक्रमों के अन्तर्गत रोज़गार के अतिरिक्त अवसर काफी बड़ी संख्या में मुहय्या किए गए हैं ; परन्तु श्रमिकों की संख्या में जिस तीव्रता से वृद्धि हो रही है, उसे देखते हुए ये अवसर पर्याप्त नहीं हैं। यदि रोज़गार की स्थिति को बिगड़ने से बचाना है तो योजना का लक्ष्य पांच वर्ष की अवधि में श्रमिक-वर्ग में नए आनेवालों की संख्या के बराबर लोगों को लाभकारी रोज़गार में खपाना होना चाहिए।

4. एक अर्द्धविकसित देश में बेरोज़गारी का सही-सही अन्दाज़ लगा सकना सरल नहीं होता। सामान्य तौर पर लोगों में, खास कर अपने निजी रोज़गार में लगे लोगों में, परिवार या एक वर्ग के सदस्यों के बीच काम बांट देने की प्रवृत्ति होती है। जहां काम-काज के अवसर इतने अधिक लोगों में बंटे होते हैं कि जीवन-निर्वाह के योग्य साधन भी मुश्किल से जुट पाते हैं, वहां की जनसंख्या का एक भाग सवेतन रोज़गार की खोज में चला जाता है। जनसंख्या के इसी अंश को सही तौर पर बेरोज़गार कहा जा सकता है। शेष के लिए यही कहा जा सकता है कि वे कुछ समय तक अर्द्धरोज़गारी की अवस्था में रहते हैं। काम-धन्धे के वर्तमान ढांचे में अधिक-से-अधिक लोगों को रोज़गार देने के लिए योजना बनाते समय एक मुख्य बात यह सामने आती है कि रोज़गार के अवसरों की कमी के कारण अपने निजी रोज़गार में लगे हुए लोग अपनी सामर्थ्य और इच्छा से कम काम करने को बाध्य हैं। अर्द्ध-रोज़गार के सम्बन्ध में आंकड़े बहुत-कुछ इस बात पर निर्भर हैं कि इस शब्द की व्याख्या किस रूप में की जाती है। विकास की वर्तमान अवस्था में काम के निश्चित घंटे के आधार पर या इसी प्रकार के किसी तरीके से अर्द्धरोज़गारों की संख्या तय करना कठिन है। इसे इस आधार पर निश्चित करना अधिक अर्थपूर्ण होगा कि लोग कितना अतिरिक्त काम करने के इच्छुक हैं। नमूने के तौर पर किए गए राष्ट्रीय सर्वेक्षणों में यही सिद्धान्त अपनाया गया है।

5. फिलहाल सीमित परिमाण में जो आंकड़े उपलब्ध हैं, उन पर रोज़गार की समस्या के निम्नलिखित पहलुओं के सन्दर्भ में विचार किया जा सकता है : (क) दूसरी योजना के अन्त में बेरोज़गार लोगों की संख्या, (ख) तीसरी योजना की अवधि में श्रमिकों की संख्या में वृद्धि, और (ग) योजना के कार्यान्वियन के फलस्वरूप प्राप्त होनेवाले रोज़गार के अतिरिक्त साधनों का अनुमान। ऐसे तरीकों पर ध्यान देना आवश्यक है, जिनसे अधिक मजदूरों का उपयोग करनेवाली विकास-योजनाओं का रोज़गार-सम्बन्धी लाभ बढ़ाने में सहायता मिल सके। ऐसी योजनाओं के रूप में निर्माण-कार्यों और लघु उद्योगों का नाम लिया जा सकता है। यदि योजना की पूरी रोज़गार-क्षमता का उपयोग किया जाए, तो भी अवशिष्ट बेरोज़गारी को खत्म करने के लिए विशेष रोज़गार-कार्यक्रमों की बात सोचना आवश्यक होगा।

6. दूसरी योजना में 80 लाख व्यक्तियों के लिए रोज़गार के साधन उपलब्ध किए गए थे। इनमें से 65 लाख लोगों के लिए कृषि-भिन्न क्षेत्रों में व्यवस्था थी। दूसरी योजना के अन्त में 90 लाख लोग बेरोज़गार थे। यह निस्सन्देह एक कच्चा अनुमान है। इसमें दूसरी योजना के शुरू में लगाया गया बेरोज़गारी का अनुमान (53 लाख), दूसरी योजना की अवधि में श्रमिक-वर्ग में होनेवाली वृद्धि के अनुमान (17 लाख) का अतिक्रमण और दूसरी योजना में उपलब्ध किए जा सकनेवाले रोज़गार के लक्ष्य (20 लाख) की पूर्ति में

कमी भी शामिल है। इसके अतिरिक्त, उन अर्द्धरोज़गारवाले लोगों की संख्या का सही अनुमान तो नहीं लगाया जा सकता, जिनके पास थोड़ा काम है, पर और अधिक काम करना चाहते है, फिर भी अनुमान है कि इनकी संख्या 150 लाख से 180 लाख के बीच होगी।

7. एक निश्चित अवधि में श्रमिक-वर्ग में वृद्धि का अनुमान इससे लगाया जाता है कि 15 से 59 वर्ष तक की अवस्था के कितने व्यक्ति रोज़गार से लगे हुए हैं या रोज़गार प्राप्त करने के प्रयत्न में है। तीसरी योजना की प्रारम्भिक रूपरेखा में श्रमिकों की संख्या में 1 करोड़ 50 लाख की वृद्धि का अनुमान लगाया गया है और यह स्पष्ट किया गया है कि यदि रोज़गार की स्थिति को बिगड़ने से बचाना है, तो तीसरी योजना में प्रायः इतने ही व्यक्तियों के लिए रोज़गार के अतिरिक्त अवसर मुहय्या करने पड़ेंगे। सन् 1961 की जनगणना के प्रकाश में इसकी पूरी जानकारी नहीं मिल सकी है कि किस वय के कितने व्यक्ति हैं और श्रमिक-वर्ग में स्त्रियों और पुरुषों के शामिल होने के अनुपात में क्या परिवर्तन आए हैं। इस अवस्था में नमूने के तौर पर हुए राष्ट्रीय सर्वेक्षणों की ताज़ा रिपोर्ट के आधार पर ही कुछ आम मान्यताएं बनानी पड़ेंगी। फिलहाल प्राप्त अनुमानों को देखते हुए मालूम पड़ता है कि तीसरी योजना में श्रमिक-वर्ग में नए आनेवालों की संख्या 1 करोड़ 70 लाख होगी; इसमें से एक-तिहाई वृद्धि शहरी क्षेत्र में होगी। पूरी जानकारी मिलने पर विभिन्न राज्यों में होनेवाली इस वृद्धि का अनुमान लगाना आवश्यक होगा, ताकि हर राज्य योजना के कार्यक्रमों और परियोजनाओं की रोज़गार-विषयक क्षमता को पूरा करने का प्रयत्न करे; साथ ही वह इस बात की भी जांच करे कि अन्य साधनों से इस क्षमता में कितनी वृद्धि की जा सकती है। एक विकासशील अर्थव्यवस्था में श्रमिकों का, विशेष रूप से कुशल श्रमिकों का, एक स्थान से दूसरे पर जाना बहुत महत्व रखता है। अतः इसे प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, साथ ही सुविधाएं भी। फिर भी, इनकी संख्या को देखते हुए अगले कुछ वर्षों में कुशल श्रमिकों के इधर-उधर जाने से होनेवाला लाभ सीमित ही रहेगा और हर राज्य या प्रदेश में इस दिशा में किए जानेवाले कामों की कुल मात्रा पर कोई असर नहीं पड़ेगा।

8. तीसरी योजना में रोज़गार देने-सम्बन्धी लक्ष्य पर एक लम्बी अवधि को ध्यान में रख कर ही विचार करना होगा। अगले 15 वर्षों में श्रमिकों की संख्या में 7 करोड़ की वृद्धि का अनुमान है। इसमें से तीसरी योजना की अवधि में 1 करोड़ 70 लाख, चौथी योजना में 2 करोड़ 30 लाख और पांचवीं योजना में 3 करोड़ की वृद्धि होगी। पहली दो योजनाओं के अनुभव से प्रकट हुआ है कि योजना की अवधि में रोज़गार के जो भी अवसर निकले हैं, उनका अधिक भाग कृषि के अलावा दूसरे क्षेत्रों को मिला है। यह मान कर कि यही प्रवृत्ति भविष्य में भी जारी रहेगी और अगले 15 वर्षों में बढ़नेवाली श्रमिकों की संख्या का दो-तिहाई हिस्सा कृषि-भिन्न क्षेत्रों में खपाया जाएगा। सन् 1976 तक कृषि पर निर्भर करनेवालों की संख्या घटा कर 60 प्रतिशत करना सम्भव होना चाहिए।

(2)
तीसरी योजना में अतिरिक्त रोज़गार

9. पांच वर्ष की लम्बी अवधि में फैली हुई एक विकास-योजना की अनेकानेक परियोजनाओं और कार्यक्रमों की रोज़गार देने की क्षमता का अनुमान लगाने में बहुत-सी कठिनाइयों का उपस्थित होना स्वाभाविक ही है। योजना के प्रत्येक क्षेत्र के सम्बन्ध में दो

बातों को ध्यान में रखना होगा; पहली यह, कि समुचित आर्थिक और अन्य नीतियों के द्वारा उत्पादन और रोज़गार को वर्तमान स्तर से नीचे नहीं गिरने दिया जाएगा, और दूसरी योजना में निहित विभिन्न विकास-कार्यक्रमों पर पूरी कार्यकुशलता और कमखर्ची के साथ अमल होगा तथा उत्पादन का सिलसिला टूटने नहीं दिया जाएगा। कृषि और व्यापार-जैसे कुछ क्षेत्रों में अतिरिक्त रोज़गार के सम्बन्ध में अनुमान लगाना विशेष रूप से कठिन है। कृषि के उत्पादन में वृद्धि से, जिसके लिए योजना के आर्थिक साधनों का अच्छा-खासा भाग उपलब्ध किया गया है, मुख्य रूप से अर्द्धरोज़गारी में कमी आएगी, हालांकि रोज़गार के अवसरों में भी वृद्धि होगी। कम विकसित देशों में व्यापार में लगे हुए लोगों की संख्या उनके काम के अनुपात से अधिक होती है, इसलिए व्यापार-क्षेत्र के विस्तार के फलस्वरूप नए आनेवालों को काम का अवसर मिलने के बजाय अर्द्धरोज़गारी में ही कमी होती है।

10. उद्योगों में पूंजी-विनियोग और कार्य-क्षमता बढ़ने से रोज़गार चाहनेवालों को काम देने की क्षमता उसी अनुपात से नहीं बढ़ती, क्योंकि नए-नए तरीके विशेष रूप से बड़े पैमाने पर चलनेवाले कारखानों में अधिक उत्पादन की तकनीकों पर ही आधारित होते हैं। इस प्रकार, तकनीकों का चुनाव रोज़गार-नीति के लिए अत्यधिक महत्व रखता है। उद्योग के कुछ क्षेत्रों में उत्पादन के ऐसे तरीके और परिमाण अपनाना आवश्यक है, जिनमें सबसे अधिक बचत हो। इसके सन्तुलन के लिए अन्य क्षेत्रों में प्रयत्नपूर्वक ऐसे तरीके अपनाने होंगे, जिनमें अधिक लोगों को खपाया जा सके और पूंजीगत साधनों की बचत हो, विशेष रूप से विदेशी मुद्रा की। निर्माण-कार्यों में श्रमिकों की सबसे अधिक खपत हो सकती है, जहां उचित संगठन और समय रहते आयोजन करके जनशक्ति का उससे कहीं अधिक उपयोग किया जा सकता है, जितना आज हो रहा है। कौन-कौन-सी तकनीकें अपनाई जानी चाहिए, इसका निर्णय केवल काम के स्वरूप के अनुसार ही नहीं किया जा सकता—जिस प्रदेश में वह काम होनेवाला है, उसकी आर्थिक और सामाजिक विशेषताओं का भी ध्यान रखना आवश्यक है। अधिक जनसंख्यावाले क्षेत्रों में ऐसे उपाय अपनाने पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए, जो समग्र लक्ष्य के अनुकूल होने के साथ-साथ उपलब्ध जनशक्ति-विषयक साधनों का अधिकतम उपयोग कर सकते हों।

11. योजना के रोज़गार-सम्बन्धी परिणामों और लाभ का अनुमान लगाते समय आम तौर पर रोज़गार के दोनों पहलुओं को पृथक् कर दिया जाता है—निर्माण-कार्य और निरन्तर चलनेवाले काम-धन्धे। निर्माण-कार्यों में रोज़गार यद्यपि अस्थायी होता है, तथापि एक निश्चित स्तर बनाए रखने के लिए एक निश्चित स्तर तक पूंजी लगाने की व्यवस्था होती है। इस क्षेत्र में रोज़गार का अनुमान पिछली योजनावधि के मुकाबले पूंजी-विनियोग में इस बार हुई वृद्धि को देख कर लगाया जा सकता है। चूंकि निर्माण-कार्यों का पूंजी-विनियोग एक ओर श्रमिकों और दूसरी ओर मशीनों, सामग्रियों तथा सेवाओं में बंट जाता है, इसलिए अतिरिक्त रोज़गार का ठीक अनुमान लगाने के लिए श्रमिक-संख्या का सही हिसाब रखना ज़रूरी है।

12. कृषि, सिंचाई, उद्योग, परिवहन, सामाजिक सेवाएं, व्यापार, आदि निरन्तर चलनेवाले धन्धों में रोज़गार का अनुमान लगाने के लिए अनेक मापदंडों का आश्रय लेना पड़ता है। उदाहरण के लिए, कृषि, वन-रोपण और सिंचाई-साधनों के विकास से कुछ अंशों में अर्द्धरोज़गारी कम होती है और कुछ अंशों में नए आनेवाले लोगों को पूरे समय का काम

मिलता है। अर्द्धरोज़गार-प्राप्त लोगों तथा नए आनेवाले श्रमिकों को इससे किस अनुपात में लाभ मिलता है, इसका अनुमान लगाना सरल नहीं है। भूमि-संरक्षण, वन-रोपण, भूमि-पुनरुद्धार, बाढ़-नियन्त्रण, नई ज़मीनों को बसाना, सिंचाई-सुविधाओं का उपयोग, आदि कुछ ऐसे विकास-कार्यक्रम हैं, जिनसे श्रमिकों के वर्ग में नए आनेवालों को रोज़गार मिलेगा; पहले से काम करनेवालों को अधिक रोज़गार तो मिलेगा ही। पिछले दस वर्षों में प्राप्त हुए अनुभव के आधार पर इस कार्य के लिए अब कुछ निश्चित पैमाने अपना लिए गए हैं।

13. उद्योगों में, उनके स्वरूप के अनुसार, अतिरिक्त रोज़गार का अनुमान लगाते समय रोज़गार को पूंजी-विनियोग अथवा उत्पादन-वृद्धि के प्रकाश में देखना होगा। कुछ मामलों में उत्पादकता में वृद्धि के लिए छूट देनी होगी और शेष में परियोजनाओं की रिपोर्टों तथा लाइसेंस-समिति को दी गई जानकारी को आधार बनाना होगा। सड़क-परिवहन के मामले में, यात्रियों की संख्या और माल-ढुलाई की मात्रा में वृद्धि के विभिन्न संकेतों को आधार माना जा सकता है। सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र में अनेक प्रकार के परीक्षण करने होंगे; यह इस बात पर निर्भर होगा कि योजना में समाज को किस स्तर तक की सुविधाएं देने की व्यवस्था है। उदाहरण के लिए, स्वास्थ्य सेवाओं में, विभिन्न कर्मचारियों की आवश्यकताओं का अनुमान उनके द्वारा सेवित क्षेत्र की आबादी को देख कर लगाया गया। इसी तरह, शिक्षा के क्षेत्र में छात्रों और शिक्षकों का अनुपात ध्यान मे रखा गया।

14. विकास-कार्यक्रमों से मिलनेवाले रोज़गार के प्रत्यक्ष अवसरों के अतिरिक्त व्यापार, वाणिज्य और परिवहन में मिलनेवाले अप्रत्यक्ष रोज़गार का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। दूसरी योजना में अप्रत्यक्ष रोजगार का अनुमान निजी और सरकारी क्षेत्रों में योजना के अन्तर्गत चलनेवाले विकास-कार्यक्रमों से प्राप्त अतिरिक्त रोजगार का 52 प्रतिशत था। नवीन अध्ययनों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि तीसरी योजना के विकास-कार्यक्रमों से उपलब्ध होनेवाले अतिरिक्त रोजगार का 56 प्रतिशत भाग अप्रत्यक्ष रोज़गार से प्राप्त होगा। अन्ततः, विभिन्न क्षेत्रों के लिए अनुमानित अतिरिक्त रोज़गार की अनेक प्रकार से जांच करनी होगी। स्थिति का व्यापक अनुमान लगाने के लिए धीरे-धीरे अधिक तथ्य प्राप्त हो रहे हैं। इनमें विशेष सर्वेक्षणों और जांचों के परिणाम, परियोजनाओं के अध्ययन, राष्ट्रीय रोज़गार-सेवा-द्वारा संगृहीत रोज़गार-सम्बन्धी सूचनाएं, और औद्योगिक लाइसेंस प्राप्त करने के प्रार्थनापत्रों में दी गई सभी सूचनाएं शामिल हैं। किसी भी विकास-योजना के रोज़गार-सम्बन्धी अनुमानों के लिए अनेक मान्यताएं बनाकर चलना पड़ता है, परन्तु उनकी निरन्तर जांच एवं परीक्षा होती रहती है। ऐसी स्थिति में विकास योजनाओं के रोज़गार-सम्बन्धी अनुमान पूर्णतः सही और अन्तिम नहीं हो सकते। पिछले 10 वर्ष का अनुभव यह बताता है कि अनुमानों के तरीकों की जांच और उनमें बराबर सुधार करने की ज़रूरत तथा रोज़गार एवं पूंजी-विनियोग सम्बन्धी प्रारम्भिक अनुमानों के साथ-साथ वास्तविक परिणाम की भी सही जानकारी ज़रूरी है। इसे सरल बनाने के लिए उन मान्यताओं का विस्तृत विवरण, जो तीसरी योजना के अन्तर्गत अतिरिक्त रोजगार-क्षमता आंकने के लिए काम में लाई गई है, परिशिष्ट 'ग' में दिया गया है।

15. ऊपर बताए गए अनुमानों के तरीकों के अनुसार यह विश्वास किया जाता है कि तीसरी योजना में कृषि-भिन्न रोज़गार 1 करोड़ 5 लाख लोगों के लिए तथा कृषि-विषयक

रोज़गार 35 लाख लोगों के लिए उपलब्ध हो सकेगा। कृषि-भिन्न अतिरिक्त रोज़गार को मोटे तौर पर इस प्रकार बांटा जा सकता है :

तालिका-संख्या 1

कृषि-भिन्न अतिरिक्त रोज़गार

(लाख में)

क्षेत्र	तीसरी योजना में अतिरिक्त रोज़गार
1. निर्माण-कार्य*	23
2. सिंचाई और बिजली	1
3. रेलवे	1.4
4. अन्य परिवहन एवं संचार-साधन	8.8
5. उद्योग एवं खनिज पदार्थ	7.5
6. लघु उद्योग	9
7. वन-उद्योग, मछली-उद्योग और सम्बद्ध सेवाएं	7.2
8. शिक्षा	5.9
9. स्वास्थ्य	1.4
10. अन्य सामाजिक सेवाएं	0.8
11. सरकारी सेवाएं	1.5
योग 1 से 11 तक	67.5
12. 'अन्य' (व्यापार एवं वाणिज्य सहित, 1 से 11 तक का 56 प्रतिशत)	37.8
सर्व योग	105.3

16. ऊपर वर्णित कृषि और कृषि-भिन्न क्षेत्रों में अतिरिक्त रोज़गार की व्यवस्था होने के अलावा अर्द्धरोज़गारी की समस्या भी काफी हद तक हल होगी, परन्तु उसका परिमाण बता सकना कठिन होगा। कृषि में अतिरिक्त रोज़गार का अनुमान लगाते समय नई रोज़गार-क्षमता के एक-चौथाई भाग का ही ध्यान रखा गया है, शेष अर्द्ध-रोज़गारवालों को राहत देने के लिए छोड़ दिया गया है। ग्राम और लघु उद्योगों के मामले में ऊपर की तालिका बनाते समय केवल पूरे समय के रोज़गार को ही लिया गया है। हालांकि अर्थव्यवस्था कृषि-भिन्न धन्धों में अधिक-से-अधिक लोगों को खपाने का विचार

***चूंकि निर्माण-कार्यों में एक बड़ा भाग ऐसे रोज़गार का होता है, जिसे सरलता से पाया जा सकता है, इसलिए विभिन्न विकास-क्षेत्रों में उनका विभाजन सम्भवतः उपयोगी होगा :**

1. कृषि और सामुदायिक विकास	**6.1**
2. सिंचाई और बिजली	**4.9**
3. उद्योग और खनिज पदार्थ (कुटीर और लघु उद्योग सहित)	**4.6**
4. परिवहन और संचार-साधन (रेलवे सहित)	**3.4**
5. सामाजिक सेवाएं	**3.5**
6 विविध	**0.5**
योग	**23**

रखती है, फिर भी आशा की जाती है कि तीसरी योजना की अवधि में कृषि के काम में लगे लोगों की संख्या में काफी वृद्धि होगी। श्रमिकों के वर्ग में अधिक वृद्धि उन परिवारों में होगी, जो इस समय कृषि पर निर्भर करते हैं। कृषि-भिन्न क्षेत्रों में यदि रोज़गार के अवसर पर्याप्त रूप से नहीं बढ़े, तो कृषि में अर्द्धरोज़गारी और भी बढ़ेगी, जिसके परिणामस्वरूप समाज के इस वर्ग का जीवन-स्तर और भी गिर जाएगा। इस वर्ग पर जनसंख्या में वृद्धि के कारण पहले ही बहुत अधिक भार पड़ चुका है। यहां यह उल्लेखनीय है कि परिस्थितियों को देखते हुए योजना के कारण उपलब्ध होनेवाले अतिरिक्त रोज़गार के अनुमान काफी हद तक अनिश्चित है। बाद के अनुभवों से यदि कुछ वर्तमान मान्यताओं को बल नहीं मिला, या विभिन्न कार्यक्रम और परियोजनाएं पर्याप्त कुशलता एवं तेज़ी से क्रियान्वित नहीं की गई, तो ऊपर दिए गए अतिरिक्त रोज़गार के अनुमान पूर्णतः सही नहीं भी उतर सकते हैं।

17. योजना के कार्यक्रमों के फलस्वरूप यदि 1 करोड़ 40 लाख व्यक्तियों के लिए रोज़गार के अवसर उपलब्ध हो जाएं, तो पहले से बेरोज़गार लोगों की बात छोड़ देने पर भी नए आनेवाले श्रमिकों को रोज़गार देने के लिए 30 लाख अतिरिक्त अवसर निकालने पड़ेंगे। तीसरी योजना का यह एक मुख्य उद्देश्य है।

यहां यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि परिमाण-विषयक अनुमानों का औचित्य रोज़गार-विषयक आंकड़ों की जटिलता और अपर्याप्तता, दोनों से ही प्रभावित होता है। पहली और दूसरी योजनाओं का अनुभव बतलाता है कि योजना के विभिन्न क्षेत्रों में काम लक्ष्य के अनुसार पूरा न होने के कारण रोज़गार-सम्बन्धी लक्ष्य भी पूरे न हो सके। ऐसी स्थिति पुनः उत्पन्न न हो, इसके लिए हर प्रकार के प्रयत्न करना आवश्यक है।

सोचा गया है कि इस समस्या के समाधान के प्रयत्न तीन मुख्य दिशाओं में किए जाएंगे। प्रथमतः, योजना की सीमाओं के अन्दर ही ऐसा प्रयत्न किया जाए कि पहले के मुकाबले इस बार रोज़गार का लाभ अधिक लोगों को और अधिक समान रूप से मिले। दूसरी बात, गांवों के उद्योगीकरण का काफी बड़ा कार्यक्रम चलाया जाए, जिसमें बिजली पहुंचाने, औद्योगिक बस्तियों की स्थापना, ग्रामोद्योगों की उन्नति और जनशक्ति के ठोस उपयोग पर विशेष बल दिया जाए। सम्भव है, उत्पादन के नए तरीकों के शुरू में रोज़गार में लगे व्यक्तियों की संख्या में कमी आ जाए, परन्तु आशा है कि उन तरीकों से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को चेतना प्रदान करने के दूरगामी लाभ अधिक महत्वपूर्ण होंगे। तीसरी बात, लघु उद्योगों के ज़रिए रोज़गार प्रदान करने के अन्य उपायों के अतिरिक्त गांवों में निर्माण-कार्यक्रम चलाने का भी विचार है, जो 25 लाख व्यक्तियों को वर्ष में औसत 100 दिन काम दे सकेगा। यह संख्या बढ़ भी सकती है। ये सब कार्यक्रम, विशेष रूप से गांवों में निर्माण-कार्य का सुझाव, ग्राम जनता के लिए सहायक सिद्ध होंगे और शिक्षित बेरोजगारों को अधिक अवसर प्रदान करेंगे। शिक्षित बेरोज़गारों की अपनी विशेष समस्याएं भी हैं, जिन पर इसी अध्याय में आगे चल कर संक्षेप में विचार किया गया है।

(3)
रोज़गार और योजना की कार्यान्विति

18. अध्ययनों के परिणामस्वरूप यह विश्वास करने का कारण है कि विकास-कार्यक्रमों से रोज़गार के अधिक अवसर उपलब्ध करने के अनेक उपाय हैं, जिनसे पिछले

वर्षों की अपेक्षा अधिक लाभ प्राप्त हो सकते हैं। सामान्यतः बेरोज़गारी की समस्या का विश्लेषण या तो सारे देश को ध्यान में रख कर किया जाता है, या राज्यों-जैसे बड़े प्रदेशों के सन्दर्भ में। ज़िला और खण्ड-स्तर पर बेरोज़गारी की समस्या हल करने की सम्भावनाओं पर अभी तक अधिक ध्यान नहीं दिया गया। हर ज़िले में कृषि, सिंचाई, बिजली, ग्रामोद्योग और लघु उद्योग, संचार-साधन एवं सामाजिक सेवाओं के सम्बन्ध में विकास-कार्यक्रम हैं। इन कार्यक्रमों का लक्ष्य उस ज़िले की आर्थिक गतिविधियों को बढ़ाना और सामान्यतः उत्पादन में वृद्धि करना है। प्रत्यक्ष रोज़गार देने के साथ-साथ ये कार्यक्रम किसानों, कारीगरों, छोटे उद्योगपतियों और सहकारी संस्थाओं को उनकी गतिविधियां बढ़ाने के लिए प्रेरणा देते हैं और इस प्रकार अतिरिक्त रोज़गार उपलब्ध करते हैं। यदि इन कार्यक्रमों का पूरा लाभ उठाया जाए और उन्हें स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप बना दिया जाए, तो उनसे ज़िला और स्थानीय स्तर पर अधिक रोज़गार प्राप्त किए जा सकते हैं। उचित यह है कि हर राज्य की बेरोज़गारी की समस्या को ज़िलेवार बांट लिया जाए और ग्राम, खण्ड या ज़िला-स्तर पर उसको हल करने का यथासम्भव प्रयत्न किया जाए। स्थानीय रोज़गार-समस्याओं के रूप में इसका विश्लेषण करने से अधिकारीगण रोज़गार के विशिष्ट पहलुओं पर ध्यान दे सकेंगे और उनके लिए आवश्यक साधन जुटा सकेंगे। ये विशिष्ट पहलू बेरोज़गार कारीगरों, खेतिहर श्रमिकों, शिक्षित बेरोज़गारों आदि से सम्बन्धित हैं। विभिन्न क्षेत्रों में समस्याएं भी भिन्न हैं, इसलिए स्थानीय या प्रादेशिक स्तर पर रोज़गार की समस्या हल करने के तरीके भी ऐसे लचीले बनाने होंगे, जो स्थानीय परिस्थितियों और साधनों के अनुरूप बन सकें।

19. रोज़गार-सम्बन्धी समस्या की गम्भीरता को देखते हुए यह आवश्यक है कि मानवीय श्रम का अधिक-से-अधिक उपयोग करने के लिए निर्माण-कार्यों में कितनी सम्भावनाएं हैं, इस पर विचार किया जाए। सामान्यतः उन निर्माण-कार्यों में मशीन का उपयोग किया जाता है, जहां मशीनीकरण से लागत में कमी और काम जल्दी पूरा होने की सम्भावना होती है। सभी परियोजना-अधिकारियों को यह ध्यान रखना चाहिए कि जहां मशीनीकरण से कोई खास बचत की सम्भावना न हो, वहां निर्माण-कार्यों में जनशक्ति का अधिक उपयोग करना उचित है। परियोजनाओं की रिपोर्ट तैयार करते समय यह प्रश्न मुख्य रूप से सामने रखना चाहिए और जहां भी मनुष्य के मुकाबले, मशीन के उपयोग को तरजीह दी जाए, वहां इसके लिए युक्तिसंगत कारण प्रस्तुत करने चाहिए। रोज़गार के दृष्टिकोण से इस प्रकार के सभी निर्णयों पर विचार करने के लिए वरिष्ठ अधिकारियों की एक स्थायी समिति बनाई जानी चाहिए।

20. अधिक आबादीवाले क्षेत्रों में किसी बड़े विकास-कार्यक्रम के कार्यान्वयन के बाद भी यदि बेरोज़गार लोग बच रहते हैं, तो उनकी एक बड़ी संख्या को काम सिखा कर उन इलाकों में भेजना चाहिए, जहां ऐसे प्रशिक्षित कारीगर पर्याप्त संख्या में उपलब्ध नहीं हैं। इसके लिए आवश्यक तकनीकों और संगठन की व्यवस्था करने के ख्याल से कुछ मार्गदर्शक योजनाएं शुरू की जानी चाहिए।

21. यद्यपि पिछले वर्षों में ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों की उन्नति के लिए बहुत कुछ किया गया है, तथापि इस क्षेत्र में रोज़गार देने की जितनी गुंजायश है, उसका पूरा-पूरा लाभ उठाया जाना अभी बाकी है। ग्राम और लघु उद्योगों में, रोज़गार-विषयक

लाभों का सम्बन्ध नए विकास-कार्यक्रमों से जोड़ना ठीक नहीं। अभी जो छोटे-मोटे उद्योग चालू हैं, उन्हीं के ज़रिए रोज़गार देने की क्षमता का पूरा-पूरा उपयोग किया जाना चाहिए। आधुनिक ढंग की छोटी औद्योगिक इकाइयों में मांग की कमी नहीं, बल्कि आवश्यक मात्रा में माल तैयार करने में उनकी असमर्थता ही रोज़गार देने में बाधक बनती है। लोहा और इस्पात, अलौह धातु, रसायन, रंग, आदि उद्योगों में, जहां कच्चे माल की बहुत ज़रूरत होती है, यह बात विशेष रूप से सही है। कुछ मामलों में विधायन और अन्य सुविधाओं की कमी भी बाधा बन सकती है। प्राय: सभी जगह कारीगर और छोटे उद्योगपति ऋण की सुविधाओं से वंचित हैं और उन्हें अपना माल बेचने के लिए भी ऐसी सुविधाएं प्राप्त नहीं, जिन पर वे निर्भर रह सकें। इस दिशा में विशेष प्रयत्न किए जाने चाहिए, ताकि छोटी औद्योगिक इकाइयों को (चाहे वे कारीगरों की सहकारी समितियों-द्वारा संचालित होती हैं, अथवा छोटे उद्योगपतियों-द्वारा) अपनी अधिकतम उत्पादन-क्षमता पर पहुंचने का अवसर मिल सके।

22. ग्राम-उद्योगीकरण और ग्राम-बिजलीकरण वस्तुत: परस्पर-सम्बद्ध कार्यक्रम हैं और ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार के स्थायी अवसर बढ़ाने में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। हर क्षेत्र में औद्योगिक विकास का एक-एक केन्द्र रहना चाहिए और इन्हें परिवहन और अन्य समुचित सुविधाओं के ज़रिए एक कड़ी में जोड़ देना चाहिए। ऐसे केन्द्र शहरों या ऐसे महत्वपूर्ण गांवों में होने चाहिए, जो कुशल कारीगरों और उद्योगपतियों को खींच सकें और जिन्हें बिजली की एवं अन्य सुविधाएं आसानी से दी जा सकें। तीसरी योजना में ग्राम-बिजलीकरण का एक विशाल कार्यक्रम है। अधिक-से-अधिक उत्पादन और अधिक रोज़गार देने में ग्राम-बिजलीकरण का बहुत अधिक महत्व है और इसे सम्भव करने के लिए हर ज़िले में बिजली की आपूर्ति और उसके उपयोग की दूरदर्शितापूर्ण योजनाएं बनाई जानी चाहिए। बिजली की आपूर्ति के साथ कृषि और उद्योगों के विकास-कार्यक्रमों का समन्वय आवश्यक है। कुछ निश्चित स्थानों पर अधिक काम-काज केन्द्रित होने से बिजली-आपूर्ति के सन्तुलन में भी उचित सुधार हो सकेगा।

(4)

ग्रामीण जनशक्ति का उपयोग

23. तीसरी योजना में ग्रामीण विकास-कार्यों के एक विस्तृत कार्यक्रम का सुझाव, जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है, बहुत महत्वपूर्ण है—ऐसा न केवल इसलिए कि इसके ज़रिए रोज़गार के अतिरिक्त अवसर पैदा किए जा सकेंगे, बल्कि इसलिए भी कि यह देश के तीव्र आर्थिक विकास के लिए ग्रामीण जनशक्ति के उपयोग का एक प्रमुख साधन है। तीसरी योजना में कृषि का उत्पादन पिछले 10 वर्षों के मुकाबले दुगुनी तेज़ी से बढ़ाना होगा। इसके लिए सघन और केन्द्रीभूत प्रयत्नों की आवश्यकता है। इन प्रयत्नों में कृषि-विकास के कार्यक्रमों में लाखों परिवारों का योगदान भी सम्मिलित है। अनेक वर्षों तक ग्रामीण क्षेत्रों की जनशक्ति का सबसे बड़ा उपयोग कृषि-विकास, सड़क-निर्माण-परियोजनाओं, ग्रामीण आवास और ग्रामीण सुविधाएं उपलब्ध करने के कार्यक्रमों में होता रहेगा। अर्द्धरोज़गारी की समस्या के स्थायी हल के लिए वैज्ञानिक कृषि को व्यापक रूप से अपनाना ही ज़रूरी नहीं है, बल्कि गांवों के आर्थिक ढांचे को मज़बूत करने

और उसे बहुमुखी बनाने की आवश्यकता है। ग्राम और लघु उद्योगों के विकास के कार्यक्रम में ग्रामीण अर्थव्यवस्था की वृद्धिशील शहरी केन्द्रों से सम्बन्ध-स्थापना, सहकारिता के आधार पर विधायन-उद्योगों की स्थापना तथा गांवों में नए-नए उद्योग शुरू करना—ये सब तीसरी योजना के अंग हैं तथा इनका विकास करना आवश्यक है। ग्राम-बिजलीकरण के विस्तार से इन कार्यक्रमों को सहायता मिलेगी। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को इस प्रकार मजबूत करते हुए सभी ग्रामीण क्षेत्रों में बहुमुखी विकास-कार्यक्रमों की आवश्यकता है, विशेषकर उन क्षेत्रों में, जहां बहुत-सारे लोग कृषि पर निर्भर करते हैं और जहां बेरोज़गारी तथा अर्द्धरोज़गारी की समस्या भी काफी बड़ी है।

24. ग्रामीण क्षेत्रों के लिए जिन निर्माण-कार्यों की बात सोची गई है, उन्हें पांच वर्गों में बांटा जा सकता है :

(1) राज्यों और स्थानीय निकायों की योजनाओं में शामिल ऐसी परियोजनाएं जिन्हें कुशल या अर्द्धकुशल श्रमिकों की आवश्यकता पड़ेगी;

(2) ग्राम-समाज या उनसे लाभ उठानेवालों-द्वारा कानूनी व्यवस्थाओं के कारण किए जानेवाले काम ;

(3) विकास के ऐसे काम, जिनके लिए स्थानीय जनता से श्रम और सरकार से कुछ सीमा तक सहायता मिल सके;

(4) ऐसे काम जिनसे गांववाले लाभदायक सम्पत्ति बना सकें; और

(5) अधिक बेरोज़गारीवाले इलाकों में लोगों को काम देने के लिए शुरू किए जानेवाले पूरक काम।

वर्ग 2, 3 और 4 में बताई गई योजनाएं ग्रामीण क्षेत्रों में विकास के लिए तैयार की गई सामान्य योजनाओं के मुख्य अंग के रूप में शुरू की जाएंगी। इनका उद्देश्य जनशक्ति का पूरा उपयोग है; इनसे सीमित मात्रा में ही सही, मजदूरी पर रोज़गार दिया जा सकेगा। पहले और पांचवें वर्ग के कामों में मजदूरी पर काम देने की बहुत अधिक गुंजाइश है। इन दोनों वर्गों के काम एक समान हैं; केवल पांचवें वर्ग में पहले वर्ग के मुकाबले अधिक पूरक योजनाएं हैं। इस प्रकार, तीसरी योजना में ग्रामीण निर्माण-कार्यों के अतिरिक्त कार्यक्रम में कुशल और अर्द्धकुशल श्रमिकों के बड़े पैमाने पर उपयोग की योजनाओं के दो मुख्य वर्गों से काम शुरू किया जा सकता है : (क) खंड और ग्राम-स्तर पर स्थानीय निर्माण-कार्य; और (ख) बड़े काम, जिनमें विभागों-द्वारा आयोजन और तकनीकी देखभाल की ज़रूरत पड़ेगी।

25. स्थानीय कामों और अपेक्षाकृत बड़ी योजनाओं के लिए यह आवश्यक है कि हर विकास-खंड में पूरे किए जानेवाले कार्यक्रमों को पूरी तरह सोच-विचार कर तैयार किया जाए। खंड-योजना में वे सभी काम शामिल होंगे, जो खंड-संगठन के ज़रिए विभिन्न संस्थाएं करेंगी—जैसे, सामुदायिक विकास-योजनाओं के बजट में शामिल कार्यक्रम और राज्यों की योजनाओं के कृषि, पशुपालन और सहकारिता-सम्बन्धी कार्यक्रम, बड़ी और मध्यम सिंचाई-परियोजनाओं के काम, सड़कों का निर्माण, आदि। विकास-खंडों की ये योजनाएं ग्राम-योजनाओं में विभक्त कर दी जाएंगी और इस प्रकार उस क्षेत्र में बसे हुए लोगों को इनकी पूरी तरह से जानकारी करा दी जाएगी। सिंचाई, भूमि-संरक्षण, सड़क-निर्माण, आदि परियोजनाओं से हर क्षेत्र में लोगों को अधिकाधिक रोज़गार दिलाने के लिए आवश्यक है कि इनका कार्यान्वियन स्थानीय खंड-संगठन के घनिष्ठ सहयोग

से हो। कृषि की दृष्टि से मन्दी के समय में ही ये निर्माण-कार्य कराए जाने चाहिए, क्योंकि उन्हीं दिनों बेरोज़गारी और अर्द्धरोज़गारी अधिक रहती है। जो काम गांव में कराए जाएं, उनकी मज़दूरी भी गांव की दर से ही दी जानी चाहिए।

26. ऊपर दी गई रूपरेखा के अनुसार चलने का प्रयत्न करते हुए ग्रामीण-जनशक्ति के उपयोग के लिए कुछ मार्गदर्शक परियोजनाएं हाल में ही शुरू की गई हैं। अभी तक ऐसी मार्गदर्शक परियोजनाओं की संख्या 34 है। इनके अनुसार कृषि-सिंचाई, सड़क-विस्तार और राज्यों तथा सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों में शामिल अन्य कार्यक्रमों के अतिरिक्त कुछ पूरक निर्माण-कार्यों की भी व्यवस्था है। मोटे हिसाब के अनुसार मार्च 1962 तक समाप्त होनेवाली अवधि में हर ऐसी परियोजना के लिए 2 लाख रु० की व्यवस्था की गई थी। अभी शुरू हो चुकी मार्गदर्शक परियोजनाओं में सिंचाई, वन-रोपण, भूमि-संरक्षण, नाली-निर्माण, भूमि-पुनरुद्धार और संचार-साधनों का विकास शामिल है। मार्गदर्शक परियोजनाओं की इस शृंखला का उद्देश्य निर्माण-कार्यों का कार्यक्रम बनाने का अनुभव प्राप्त करना है, क्योंकि इन्हीं निर्माण-कार्यों से बेरोज़गारी और अर्द्धरोज़गारी की समस्याओं के हल पर असर पड़ सकेगा।

27. परीक्षण-परियोजनाओं से प्राप्त प्रारम्भिक अनुभवों के आधार पर इन कार्यक्रमों को बड़े पैमाने पर अन्य क्षेत्रों में भी, विशेष रूप से अधिक आबादी और लम्बे समय से अर्द्धरोज़गारी की समस्या से त्रस्त क्षेत्रों में, फैलाया जाएगा। फिलहाल आशा है कि निर्माण-कार्यक्रमों के ज़रिए पहले वर्ष में एक लाख व्यक्तियों को काम दिया जा सकेगा; यह संख्या दूसरे वर्ष में 4 से 5 लाख तक, तीसरे वर्ष में 10 लाख तक और योजना के अन्तिम वर्ष में 25 लाख तक पहुंच जाएगी। तीसरी योजना में कार्यक्रम के शुरू के भागों के लिए धन की एक सीमित व्यवस्था कर दी गई है। ख्याल है कि सारी योजना की अवधि में इस सम्पूर्ण कार्यक्रम पर 150 करोड़ रु० का खर्च आएगा। कार्यक्रम आगे बढ़ने पर मज़दूरी का एक भाग अनाज के रूप में देने पर भी विचार किया जा सकेगा। यह सोचा गया है कि निर्माण-कार्यों के लिए आवश्यक संगठन और श्रमिकों की सहकारी समितियों की रचना खंड-स्तर पर की जाए। इन संगठनों के पास औज़ारों का संग्रह रह सकता है, ये ठेके ले सकते हैं, आवश्यक तकनीकी और प्रशासन-सम्बन्धी सहायता प्राप्त कर सकते हैं, प्रशिक्षित तथा कुशल कारीगरों का एक वर्ग तैयार कर सकते हैं और ज़िला अधिकारियों, पंचायत-समितियों एवं अन्यों के साथ घनिष्ठ सहयोग से काम कर सकते हैं। स्वैच्छिक संगठन भी इस कार्य में स्थानीय कार्यकर्त्ता एवं काम चलानेवाले अन्य व्यक्तियों को सहयोग दे सकते हैं तथा शिक्षा-सम्बन्धी और सांस्कृतिक कार्य कर सकते हैं। ऊपर सुझाए गए पैमाने पर ग्रामीण निर्माण-कार्यों के लिए राज्यों में और आवश्यकतानुसार केन्द्र में भी, पर्याप्त संगठन बनाए जाने चाहिए।

(5)

शिक्षित बेरोज़गार

28. पिछले दशक में तीव्र गति से उद्योगीकरण के साथ-साथ औद्योगिक रोज़गार के ढांचे में भी विशेष परिवर्तन आया है। उद्योग में अब वे लोग भी खपने लगे हैं, जो पहले केवल दफ्तरों में बाबूगीरी कर सकते थे। लोहा और इस्पात, रसायन, पेट्रोल-शोधन, सामान्य

और बिजली इंजीनियरी, रबर-टायर, अल्यूमीनियम आदि-जैसे उद्योगों में सूती वस्त्र, पटसन और चाय-जैसे पुराने उद्योगों के मुकाबले अधिक तेज़ी से प्रगति हो रही है। पुराने उद्योगों ने भी, अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ारों में मुकाबला करने के ख्याल से वैज्ञानिकन की योजनाएं शुरू कर दी हैं। लोहा और इस्पात, रसायन, आदि उद्योगों के विस्तार-कार्यक्रमों में उत्पादन के आधुनिकतम और कुशलतम तरीके अपनाए जा रहे हैं, जिनके लिए अधिक-से-अधिक तकनीकी शिक्षा-प्राप्त कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ती है। कोयला-खानों में अधिकाधिक मशीनीकरण के बाद अब आवश्यक हो गया है कि अधिक योग्यतावाले कर्मचारी रखे जाएं; पहले-जैसे कर्मचारियों से अब काम नहीं चल सकता। इन परिवर्तनों से शिक्षित व्यक्तियों को रोज़गार मिलने के अवसर बढ़ने की सम्भावना हो सकती है। शिक्षितों के के लिए भावी सम्भावनाओं पर विचार करते समय उद्योग-जगत् में होनेवाले परिवर्तनों पर नज़र रखनी पड़ेगी। साथ ही, यह भी ध्यान में रखना होगा कि शारीरिक श्रम के प्रति पुराना दृष्टिकोण अब विशेष रूप से बदल रहा है। शिक्षा-पद्धति को इस प्रकार व्यवस्थित करना होगा कि कर्मचारियों की आवश्यकताओं के बदलते हुए ढांचे से उसका मेल बैठ सके। कुछ चुने हुए क्षेत्रों में जनशक्ति-सम्बन्धी अध्ययनों का आयोजन और तकनीकी शिक्षा की सुविधाओं का विस्तार करना होगा—जहां आवश्यक हो, वहां नए संस्थान भी आरम्भ करने पड़ेंगे। आशा की जाती है कि शिष्यता-सम्बन्धी कानून बन जाने से, जो अभी विचाराधीन है, कारखानों के अन्दर व्यावहारिक प्रशिक्षण की पर्याप्त सुविधाएं मिल सकेंगी। राष्ट्रीय रोजगार-सेवा के अंग के रूप में पिछले पांच वर्षों में रोज़गार-धन्धों-सम्बन्धी परामर्श-कार्यक्रमों का विस्तार किया गया है।

29. उच्चतर माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के विस्तार के साथ-साथ शिक्षितों को लाभकारी कामों में खपाने पर भी अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। शिक्षित बेरोज़गारों की समस्या को दो भागों में लिया जा सकता है—जो पहले से बेरोज़गार हैं और जो सीख-पढ़ कर बेरोज़गारों के वर्ग में शामिल होते जा रहे हैं। पहले के बकाया ऐसे बेरोज़गारों की संख्या का सही अनुमान लगा सकना कठिन है, परन्तु यह मान कर कि बहुत-सारे पढ़े-लिखे बेरोज़गार लोग रोज़गार दिलाने के दफ्तरों में नाम रजिस्टर करा देते हैं, अनुमान किया जाता है कि ऐसे लोगों की संख्या लगभग 10 लाख होगी। नए शिक्षित बेरोज़गार लगभग 30 लाख होंगे, जो विद्यालय की अन्तिम परीक्षा के स्तर तक या उससे अधिक शिक्षा पा चुके हैं। कृषि, उद्योग और परिवहन के विकास से काम सीखे हुए, तकनीकी अथवा अन्य धन्धों के शिक्षा-प्राप्त लोगों की भी मांग बढ़ती जाएगी। इसलिए शिक्षा-पद्धति में सुधार करना तथा तकनीकी और काम-धन्धों की शिक्षा की सुविधाएं देना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हाल के कुछ वर्षों में शिक्षित व्यक्तियों का शारीरिक श्रम-सम्बन्धी दृष्टिकोण बदला है, इसलिए उन्हें इस विकासशील अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने के कार्यक्रम पहले की अपेक्षा अधिक बड़े पैमाने पर चलाए जा सकते हैं। दूसरी योजना में अनेक प्रशिक्षण-केन्द्रों के ज़रिए इस दिशा में कार्य आरम्भ कर दिया गया था। तीसरी योजना में इस कार्यक्रम का और अधिक विस्तार करने का विचार है।

30. बेरोज़गारों के रूप में दर्ज अधिकांश शिक्षित लोग वे हैं, जो विद्यालय के माध्यमिक स्तर से लेकर कालेज के प्रथम या द्वितीय वर्ष तक शिक्षा पा चुके हैं। इस वर्ग के युवकों को शहरी क्षेत्रों में बिना कोई तकनीकी शिक्षा प्राप्त किए उचित रोज़गार नहीं मिल

पाता, या फिर उन्हें एक सीमा तक कम वेतनवाले पेशों में ही खपाया जा सकता है। निकट भविष्य में ऐसे शिक्षित बेरोज़गारों के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण कार्यक्रमों के द्वारा रोज़गार की विशेष सम्भावनाएं हो सकती हैं। स्वयं ग्रामीण निर्माण-कार्यक्रमों में ही शिक्षित व्यक्तियों की बड़ी आवश्यकता होगी। प्रारम्भिक कदम के रूप में इरादा किया गया है कि कुछ शिक्षित व्यक्तियों को चुन कर विशेष प्रकार के कामों की अल्पकालीन शिक्षा दी जाए। ऋण, क्रय-विक्रय और कृषि की सहकारी समितियों तथा खेती में वैज्ञानिक विधियों के विस्तार एवं ज़िला, खण्ड तथा ग्राम-स्तर पर लोकतान्त्रिक संस्थाओं की स्थापना से ग्रामीण अर्थव्यवस्था में ही इन लोगों के लिए नियमित और स्थायी रोज़गार मिलने की गुंजायश हो सकती है। शिक्षित युवकों की एक काफी बड़ी संख्या को सहायता देकर ऐसे गांवों में लघु उद्योग आरम्भ कराए जा सकते हैं, जहां बिजली उपलब्ध हो सके। इन उद्योगों को यथासम्भव सहकारिता के आधार पर ही चलाया जाना चाहिए, जिससे आवश्यकतानुसार तकनीकी एवं वित्तीय सहायता दी जा सके और उनके उत्पादन की बिक्री की भी व्यवस्था हो सके। ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास और उसमें सहकारिता के क्षेत्र के विस्तार से गांवों में भी शहरों के बराबर आमदनीवाले रोज़गार देने के अवसर बढ़ते जाएंगे। इस दिशा में आगे बढ़ने का एक लाभ यह भी होगा कि गांवों के शिक्षित युवक गांवों में ही रह कर वहां के लोगों की सेवा और नेतृत्व अबसे कहीं अधिक कर सकेंगे।

31. यहां इस बात का भी संक्षेप में उल्लेख किया जाना चाहिए कि पूरी हो चुकनेवाली या लगभग पूरी हो गई परियोजनाओं के कारण बेकार हुए कुशल कर्मचारियों को नई-नई आरम्भ होनेवाली परियोजनाओं में रोज़गार देने की आवश्यकता है। ऐसा देखा गया है कि सिंचाई और बिजली-परियोजनाओं तथा औद्योगिक परियोजनाओं में भी अनेक बार निर्माण-कार्य समाप्त हो जाने पर अनुभवी श्रमिकों की छंटनी करनी पड़ी है, क्योंकि निर्माण-कार्यक्रम इस सावधानी से नहीं बनाए गए, जिससे एक परियोजना का काम समाप्त होने पर श्रमिकों को दूसरी परियोजना में खपाया जा सके। दूसरी योजना में इस प्रयोजन के लिए आवश्यक संगठन बना दिया गया, जो सन्तोषजनक कार्य कर रहा है। यदि ऐसी परियोजनाओं को ठीक तरह से बना लिया जाए और काफी आगे तक सोच कर योजनाएं तैयार की जाएं, तो समस्या घट कर इतनी बड़ी रह जाएगी कि उसका हल कम कठिन होगा।

अध्याय 11

कर्मचारियों की आवश्यकता और प्रशिक्षण-कार्यक्रम

(1)
जनशक्ति का आयोजन

विकास के सभी साधनों में इस समय सम्भवतः सर्वाधिक आधारभूत स्थान प्रशिक्षित जनशक्ति का है। विज्ञान और टेक्नोलाजी की द्रुत प्रगति तथा औद्योगिक और आर्थिक संगठनों की बढ़ती हुई जटिलता के कारण बड़ी संख्या में विभिन्न प्रशिक्षण-शाखाओं के ऐसे अत्यधिक कुशल और प्रशिक्षित कर्मचारियों की मांग बढ़ रही है, जो व्यक्तिगत रूप से काम करने के बजाय सामान्यतः सुसम्बद्ध दलों के रूप में कार्य कर सकें। आर्थिक विकास के साथ-साथ जहां अधिक उच्च और विशेष प्रशिक्षण-प्राप्त व्यक्तियों की तथा वैज्ञानिक ढंग से प्रशिक्षित कर्मचारियों की मांग बढ़ती है, वहां निचले स्तर के कुशल, अर्द्धकुशल और अकुशल व्यक्तियों की मांग निरन्तर कम होती जाती है। इंजीनियर या डाक्टर को आवश्यक बुनियादी प्रशिक्षण देने में लगभग 5 वर्ष का समय लगता है, परन्तु अधिक उत्तरदायित्व के पदों पर नियुक्ति के हेतु आवश्यक अनुसन्धान और व्यावहारिक अनुभवों के लिए और अधिक समय की आवश्यकता होती है। आवश्यकता-भर वैज्ञानिक और तकनीकी कर्मचारियों की उपलब्धि के लिए तथा वैज्ञानिक अनुसन्धान को दृढ़ आधार प्रदान करने के लिए एक पीढ़ी का भी समय लग सकता है।

2. किसी देश के दीर्घकालीन आर्थिक विकास के सम्बन्ध में, विभिन्न क्षेत्रों में कितनी प्रगति हो सकती है, इसकी मुख्य निर्णायक बात यह है कि किस सीमा तक प्रशिक्षित जनशक्ति और प्रशिक्षण की सुविधाएं उपलब्ध हैं। आर्थिक प्रगति के साथ न केवल संख्या पर, अपितु योग्यता और अनुभव पर भी बल दिया जाना चाहिए। आवश्यक जनशक्ति के निर्माण की समस्याओं पर व्यापक सन्दर्भ में विचार किया जाना चाहिए। एक ओर, इन समस्याओं का प्रभाव जहां विद्यालय और कालेज के प्रत्येक स्तर पर दी जानेवाली शिक्षा के स्वरूप पर पड़ता है, वहीं दूसरी ओर, उद्योग और इसी प्रकार के अन्य संस्थानों का प्रबन्ध एवं संगठन-सम्बन्धी सम्पूर्ण व्यवस्था-क्रम तथा जिस पद्धति से अनुसन्धान किए जाते हैं और उनके परिणामों को लागू किया जाता है, वह इनकी परिधि में आ जाती है।

3. जनशक्ति को प्रशिक्षण देने के कार्यक्रमों के सन्दर्भ में द्रुत आर्थिक विकास की मांगें राष्ट्रीय संकट-काल की मांगों के समान हैं। इनका यह तकाज़ा है कि वर्तमान संस्थाओं का पुनर्गठन और विस्तार किया जाए, अनेक नई संस्थाओं का विकास किया जाए, अध्यापकों और प्रशिक्षकों की प्राप्ति और प्रशिक्षण के लिए विशेष कदम उठाए जाएं, प्रशिक्षण को अधिक ज़ोरदार और इसके लिए आवश्यक समय को कम करने के लिए नई तकनीक अपनाई जाए, व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए सुविधाओं का विस्तार किया जाए और अत्यल्प प्रमुख साधन के रूप में प्रशिक्षित व्यक्तियों के उपयोग के लिए नए तरीकों को विकसित किया जाए। अनुभवों और अर्थव्यवस्था की बढ़ती हुई आवश्यकताओं के आकलन के प्रकाशन में प्रशिक्षण के क्षेत्र में प्रचलित विचारों और व्यवहार

की सदा समीक्षा होती रहनी चाहिए । जनशक्ति के आयोजन में अर्थव्यवस्था को समग्र रूप में देखा जाना चाहिए । सभी औद्योगिक संस्थानों में, चाहे वे सरकारी क्षेत्र के हों या निजी क्षेत्र के, समस्त उपलब्ध सुविधाओं और सम्भावनाओं को सारे समाज की सेवा के लिए समझना चाहिए । प्रत्येक संगठन और प्रशिक्षण-संस्था को परीक्षणों और नए आविष्कारों के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और एकदम नए तथा सृजनात्मक क्रिया-कलापों के लिए निरन्तर अधिकाधिक अवसर प्रदान किए जाने चाहिए ।

4. जनशक्ति के आयोजन के सम्बन्ध में पिछली दो योजनाओं में अनेक क्षेत्रों में बड़े महत्वपूर्ण अनुभव प्राप्त हुए हैं । वैज्ञानिकों, इंजीनियरों और टेक्नोलाजिस्टों तथा कृषि, पशु-चिकित्सा, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा-सम्बन्धी कर्मचारियों और दक्ष कारीगरों के लिए प्रशिक्षण-सुविधाओं में पर्याप्त विस्तार हुआ है । इस्पात-संयन्त्रों एवं अन्य बड़ी औद्योगिक परियोजनाओं के कारण यह आवश्यक हो गया है कि देश में और विदेशों में, दोनों जगह बड़े पैमाने पर प्रशिक्षण प्राप्त किया जाए । इस सम्बन्ध में अन्य देशों ने अपने अनुभवों और सुविधाओं को बड़ी उदारतापूर्वक हमारे लिए उपलब्ध किया है । बड़ी संख्या में प्रशिक्षित व्यक्तियों की न केवल उद्योग, परिवहन और बिजली के विकास के लिए ही, अपितु अन्य क्षेत्रों में भी आवश्यकता है । सामुदायिक विकास तथा अन्य क्षेत्रों में ग्रामीण विकास के जो कार्यक्रम कार्यान्वित किए जा रहे हैं, उनमें पहले ही प्रशिक्षण के लिए व्यापक प्रशिक्षण-कार्यक्रमों का समावेश है । चूंकि जिला, खंड और ग्राम-स्तर पर लोकतान्त्रिक सस्थाओं, सहकारी आन्दोलन, नगरपालिका-निकायों और स्वैच्छिक संगठनों का कार्य सारे समाज के कल्याण से सम्बद्ध क्षेत्रों में अत्यधिक निर्णायक हो गया है, अतः उनकी प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता और भी अधिक उल्लेखनीय होगी तथा उन्हें बहुत बड़ी संख्या में प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता होगी । तीसरी और परवर्ती योजनाओं की परिकल्पना के अनुसार शिक्षा, स्वास्थ्य-सेवाओं, परिवार-आयोजन और कल्याण-कार्यक्रमों की प्रगति अध्यापकों और अन्य प्रशिक्षित कर्मचारियों की पर्याप्त उपलब्धि पर भी कुछ कम निर्भर नहीं करती ।

5. प्रत्येक क्षेत्र में आवश्यक कर्मचारियों की संख्या का अनुमान बहुत सावधानी से और पर्याप्त लम्बी अवधि को ध्यान में रख कर लगाया जाना चाहिए । इसके लिए सुधरी हुई संख्या-सम्बन्धी सूचनाओं की और जनशक्ति के आकलन के लिए विकसित तकनीक की आवश्यकता है, जिससे आवश्यक आकलन औचित्यपूर्ण शुद्धता के साथ किया जा सके और सारी अर्थव्यवस्था का एक व्यापक चित्र निर्मित हो । बदलती हुई आवश्यकताओं और अनुभवों के प्रकाश में समय-समय पर अनिवार्य रूप से कर्मचारियों की आवश्यकता के आकलन की समीक्षा करते रहना चाहिए । इस प्रकार, जनशक्ति का आयोजन केन्द्रीय सरकार, राज्य-सरकारों और उनके अभिकरणों, अपने विशिष्ट क्षेत्र में विभिन्न क्रिया-कलापों एवं हितों का प्रतिनिधित्व करनेवाले उद्योग-संघों और संगठनों तथा सरकारी एवं निजी क्षेत्र के व्यक्तिगत संस्थानों और संस्थाओं-द्वारा निर्मित आर्थिक योजनाओं का अभिन्न अंग है । इसका यह तकाज़ा है कि निरन्तर ज्ञान और अनुभवों का परस्पर-आदान-प्रदान किया जाए और विशेष जांच-पड़ताल होती रहे । विचारणीय विषयों की विविधता और देश के भावी विकास के लिए जनशक्ति के आयोजन को महत्ता को देखते हुए यह प्रस्ताव किया गया है कि शीघ्र ही प्रायोगिक जनशक्ति-अनुसन्धान-संस्थान की

स्थापना की जाए, जो केन्द्रीय सरकार, राज्य-सरकारों और औद्योगिक तथा अन्य संगठनों के साथ तालमेल और सहयोग से काम करेगी। संस्थान के मुख्य उद्देश्यों में विभिन्न क्षेत्रों के आर्थिक विकास के लिए प्रशिक्षित जनशक्ति की आवश्यकताओं के बारे में एक व्यापक दृष्टि प्रदान करना, जनशक्ति के आयोजन के लिए उच्च प्रशिक्षण-सम्बन्धी सुविधाओं की व्यवस्था करना, अभी कार्य-संलग्न व्यक्तियों को प्रशिक्षण देने और तैयार करने के तरीकों को विकसित करना, प्रतिभाशाली व्यक्तियों को खोजने तथा उनकी प्रतिभा को और अधिक बढ़ाने के लिए तरीकों का आविष्कार करना तथा सामान्यतः देश के मानव-साधनों के अत्यधिक प्रभावशाली ढंग से उपयोग की व्यवस्था करना है।

6. पहली योजना की तुलना में दूसरी योजना की अवधि में जनशक्ति के आयोजन की समस्याएं अधिक बड़े रूप में सामने आई। बहुत हद तक दूसरी योजना में उपलब्ध शिक्षा का लाभ उठाते हुए तीसरी योजना में प्रशिक्षित व्यक्तियों की प्राप्ति के लिए बहुत पहले से ही पर्याप्त कदम उठाए गए। सबमें तो नहीं, किन्तु अनेक क्षेत्रों में तीसरी योजना के अंगभूत प्रशिक्षण-कार्यक्रमों को इस प्रकार से बनाया गया है कि चौथी और उसके बाद की योजनाओं में भी परिलक्षित सघन विकास के लिए प्रशिक्षित कर्मचारी तैयार किए जा सकें। अब भी ऐसे विशाल क्षेत्र हैं, जिनमें उपयुक्त अनुभववाले व्यक्ति पर्याप्त संख्या में उपलब्ध नहीं होंगे और परिणामतः कुछ थोड़े-से ही प्रशिक्षित और अनुभवी व्यक्तियों को कार्य का अत्यधिक भार उठाना पड़ेगा। इन क्षेत्रों में जहां उपलब्ध स्थानीय कर्मचारियों का अधिकतम उपयोग करने का प्रयत्न होना चाहिए, वहीं तकनीकी सहायता-कार्यक्रमों और अन्य स्रोतों से आवश्यक उच्च प्रशिक्षित व्यक्तियों की उपलब्धि का लाभ उठाने में भी संकोच नहीं करना चाहिए। सामान्यतः मुख्य रूप से कर्मचारियों की आवश्यकता का अनुमान अतीत और वर्तमान के अनुभवों पर आधारित मान्यताओं और सम्भावनाओं के अनुसार लगाया जाता है। परन्तु देश में और विदेशों में भी तेज़ी से होनेवाले तकनीकी परिवर्तनों और अर्थव्यवस्था की बढ़ती हुई आवश्यकताओं के कारण अप्रत्याशित मांगें जारी रहेंगी और वर्तमान अनुमानों में वृद्धि की ओर संशोधन की आवश्यकता हो सकती है। यह बात महत्वपूर्ण है कि तीसरी योजना की अवधि में समय-समय पर विभिन्न क्षेत्रों की आवश्यकताओं का पुनः आकलन करना चाहिए। इन आवश्यकताओं पर न केवल चौथी, अपितु पांचवीं योज़ना को भी ध्यान में रख कर विचार किया जाना चाहिए। इस अध्याय में संक्षेप में कर्मचारियों की आवश्यकता के वर्तमान अनुमानों को और तीसरी योजना में उपबन्धित इंजीनियरी, टेक्नोलाजी और विज्ञान, कृषि और ग्राम-विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य और समाज-कल्याण, एवं सांख्यिकी तथा प्रशासन-सम्बन्धी प्रशिक्षण-कार्यक्रमों को संक्षेप में बताया गया है।

(2)
इंजीनियरी, टेक्नोलाजी और विज्ञान

7. इंजीनियरों और टेक्नीशियनों की आवश्यकता को तीन मुख्य स्तरों—स्नातकों, डिप्लोमाधारियों और कुशल शिल्पियों—पर विचारा जा सकता है। प्रत्येक योजना में इनमें से प्रत्येक वर्ग के व्यक्तियों की अतिरिक्त आवश्यकताओं में बड़ी तेज़ी से वृद्धि हुई है। वर्तमान अनुमान के अनुसार तीसरी योजना के लिए 51,000 अतिरिक्त स्नातक

इंजीनियरों की आवश्यकता होगी, दूसरी योजना में यह संख्या लगभग 29,000 थी। चौथी योजना की आवश्यकता का अनुमान लगभग 80,000 है। इंजीनियरी की विभिन्न शाखाओं की आवश्यकता का अनुमान नीचे की तालिका में दिया गया है :

तालिका-संख्या 1

इंजीनियरी और टेक्नोलाजी के स्नातकों की अतिरिक्त आवश्यकता का अनुमान

इंजीनियरी की शाखाएं	दूसरी योजना	तीसरी योजना	चौथी योजना
सिविल	12,400	13,000	20,000
यान्त्रिक	5,300	15,300	24,000
बिजली	5,600	10,500	17,000
दूर-संचारण	1,600	2,500	4,000
रासायनिक	2,300	3,500	7,000
धातुकर्म	700	1,100	1,600
खनन	500	1,600	2,400
अन्य*	1,000	3,500	4,000
योग	29,400	51,000	80,000

8. तीसरी योजना में इंजीनियरी और टेक्नोलाजी में डिप्लोमाधारियों की अतिरिक्त आवश्यक संख्या का अनुमान लगभग 1,00,000 है। दूसरी योजना में यह संख्या लगभग 56,000 थी। चौथी योजना के लिए वर्तमान अनुमान लगभग 1,25,000 है। इंजीनियरी की विभिन्न शाखाओं में अतिरिक्त आवश्यक डिप्लोमाधारियों का अनुमान नीचे की तालिका में दिया गया है :

तालिका-संख्या 2

इंजीनियरी और टेक्नोलाजी के डिप्लोमाधारियों की अतिरिक्त आवश्यकता का अनुमान

इंजीनियरी की शाखाएं	दूसरी योजना	तीसरी योजना	चौथी योजना
सिविल	29,000	39,000	48,000
यान्त्रिक	12,200	26,000	33,500
बिजली	10,400	18,000	22,500
दूर-संचारण	600	600	800

*** इसमें चीनी, जूट और चमड़ा-टेक्नोलाजिस्ट; वास्तुशिल्पी और नगर-आयोजक; मोटर, विमान, नौकानयन, सार्वजनिक स्वास्थ्य और सफाई तथा कृषि-इंजीनियरी से सम्बद्ध कर्मचारी भी सम्मिलित हैं।**

तालिका-संख्या 2—जारी

इंजीनियरी की शाखाएं	दूसरी योजना	तीसरी योजना	चौथी योजना
रासायनिक*	800	3,500	5,000
धातुकर्म	200	1,100	1,300
खनन	600	4,000	5,000
अन्य†	2,000	7,800	8,900
योग	55,800	1,00,000	1,25,000

9. तीसरी योजना में औद्योगिक विकास की प्रगति और चौथी योजना में परिकल्पित विकास के कारण यान्त्रिक, बिजली और रासायनिक इंजीनियरों की आवश्यकता में वृद्धि सिविल इंजीनियरों की तुलना में अधिक तेज़ी से होगी। इसके साथ ही, खनन, धातुकर्म और टेक्नोलाजी-सम्बन्धी शाखाओं में भी विशेष प्रशिक्षण की अत्यधिक आवश्यकता होगी। इंजीनियरी की शिक्षा के लिए इस समय जो सुविधाएं दी जा रही हैं, उनके वितरण का निश्चय करने के लिए इन परिवर्तनशील प्रवृत्तियों को भी ध्यान में रखा जाएगा। दूसरी योजना के अन्त में इंजीनियरी कालेजों की प्रवेश-क्षमता 13,860 थी, जो तीसरी योजना में बढ़ कर 19,140 हो जाएगी। तदनुसार ही, पालिटेक्नीकों की भी प्रवेश-क्षमता 25,570 से बढ़ कर 37,390 हो जाएगी। इंजीनियरी और टेक्नोलाजी में अंशकालिक और पत्र-व्यवहार-द्वारा अध्यापन की भी व्यवस्था की जा रही है। तीसरी और चौथी योजनाओं में इंजीनियरी कर्मचारियों की निकासी और उनकी आवश्यकता का अनुमान नीचे की तालिका में दिया गया है :

तालिका-संख्या 3

इंजीनियरी-कर्मचारियों की आवश्यकताओं और निकासी का अनुमान

	दूसरी योजना		तीसरी योजना		चौथी योजना	
	आवश्यकता	निकासी	आवश्यकता	निकासी	आवश्यकता	निकासी
स्नातक	29,000	26,000	51,000	51,000	80,000	80,000
डिप्लोमाधारी	56,000	32,000	1,00,000	82,000	1,25,000	1,27000

डिप्लोमाधारियों की कमी, जो कि दूसरी योजना में काफी थी, तीसरी योजना में भी पूर्णतः पूरी नहीं की जा सकेगी। इस दृष्टि से और बड़े औद्योगिक कार्यक्रमों के लिए कर्मचारियों की आवश्यकता-सम्बन्धी विस्तृत सूचनाओं के आधार पर, जिनके कार्यक्रमों के तैयार होने तक उपलब्ध होने की आशा है, वर्तमान योजनाओं पर पुनर्विचार किया जाना चाहिए। चौथी योजना के लिए अनुमान अस्थायी हैं, और इन पर दूसरे अध्याय में निर्दिष्ट

***रासायनिक आपरेटरों के प्रशिक्षण-केन्द्रों में मध्यवर्ती पाठ्यक्रम के रूप में डिप्लोमा-स्तर का प्रशिक्षण दिया जाता है।**

†इसमें चीनी, जूट और चमड़ा-टेक्नोलाजिस्ट; वास्तुशिल्पी और नगर-आयोजक; मोटर, विमान, नौकानयन, सार्वजनिक स्वास्थ्य और सफाई तथा कृषि-इंजीनियरी से सम्बद्ध कर्मचारी भी सम्मिलित हैं।

दीर्घकालीन आर्थिक विकास की सम्भावनाओं के सन्दर्भ में अधिक विस्तार से विचार किया जाएगा।

10. **शिल्पी :** तीसरी योजना की अवधि में 13 लाख शिल्पियों की आवश्यकता का अनुमान है। इनमें से 8,10,000 की आवश्यकता इंजीनियरी से सम्बद्ध व्यवसायों में और शेष की इंजीनियरी से भिन्न व्यवसायों में होगी। अनेक उद्योगों तथा रेलवे, डाक-तार, प्रतिरक्षा, आदि मन्त्रालयों के अधीन स्थापित उद्योगों के अपने प्रशिक्षण-कार्यक्रम हैं। एक बड़ी संख्या में कुशल और अर्द्धकुशल कर्मचारियों का प्रशिक्षण पिता से पुत्र को विरासत के रूप में प्राप्त होता चला आ रहा है। इस प्रकार, केन्द्रीय श्रम और नियोजन-मन्त्रालय के सहयोग से राज्य-सरकारों-द्वारा संचालित केन्द्रों में संस्थागत प्रशिक्षण की सुविधाएं बहुत कम लोगों के लिए आवश्यक हैं। औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थाओं और केन्द्रों की संख्या, जो सन् 1955-56 में केवल 59 थी, सन् 1960-61 में बढ़ कर 167 हो गई; तीसरी योजना में ऐसे 151 नए केन्द्र खोलने की व्यवस्था है। इनमें सन् 1955-56 में 10,500 व्यक्तियों को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था थी। दूसरी योजना के अन्त में यह संख्या बढ़ कर 42,000 हो गई। तीसरी योजना में इस क्षमता को 1,00,000 तक बढ़ाने का विचार है। सरकार के आंशिक सहयोग से उद्योगों को स्वैच्छिक आधार पर शिष्यता-प्रशिक्षण की जिस योजना पर अमल करना था, उसमें दूसरी योजना की अवधि में कोई विशेष प्रगति नहीं हो सकी। शिष्यता से प्रशिक्षण को अनिवार्य बनाने के लिए शीघ्र ही एक कानून बनाया जाएगा। श्रमिकों के लिए सायंकालीन वर्गों के कार्यक्रम को भी शुरू किया जाएगा।

11. **सेवाधीन व्यक्तियों का प्रशिक्षण-कार्यक्रम :** दूसरी योजना की अवधि में सरकारी और निजी, दोनों ही प्रकार के संगठनों-द्वारा अपने सेवारत कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के कार्यक्रमों को लागू किया गया। इन्हें और अधिक बढ़ाया जाएगा। इस प्रकार बड़े औद्योगिक संगठनों ने अपने ही प्रशिक्षण-विद्यालय स्थापित कर दिए हैं। कुछ ने तो शिष्यता-प्रशिक्षण की भी सुविधाएं प्रदान की हैं। उच्च स्तर के कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, परमाणु-शक्ति-आयोग, सिंचाई और बिजली-मन्त्रालय, मौसम-विभाग तथा कुछ अन्य विभागों ने विशेष सुविधाओं की व्यवस्था की है।

12. **वैज्ञानिक कर्मचारी :** वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् के वैज्ञानिक और तकनीकी कर्मचारियों के राष्ट्रीय रजिस्टर में 1,06,000 व्यक्तियों के नाम दर्ज हैं, जिनमें विदेश-स्थित 5,000 भारतीयों के नाम शामिल हैं। परिषद् में दर्ज इन नामों में से 33,000 विज्ञान के विषयों में स्नातकोत्तर डिग्रीधारी या कृषि में स्नातक हैं, और 66,000 डिग्री और डिप्लोमा-स्तर के इंजीनियर या टेक्नोलाजिस्ट हैं। शेष ने चिकित्सा-व्यवसाय में विशेषता प्राप्त की है। अनुमान है कि देश में कुल जितने वैज्ञानिक हैं, उनमें से केवल 80 प्रतिशत के ही नाम राष्ट्रीय रजिस्टर में दर्ज हैं। वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद्-द्वारा अत्यधिक योग्यता-प्राप्त वैज्ञानिकों और दूसरों को—विशेषत: ऐसे व्यक्तियों को, जो विदेशों से लौटते हैं—अस्थायी तौर पर नियुक्त करने के लिए गत तीन वर्षों से जो 'वैज्ञानिक-समुच्चय' स्थापित किया है, उससे अब तक 653 वैज्ञानिकों और टेक्नोलाजिस्टों के चुनाव में सहायता मिली है। अगले पृष्ठ की तालिका में भारत में स्नातकोत्तर डिग्रीधारी वैज्ञानिकों का विवरण दिया गया है।

तालिका-संख्या 4

अनुमानित अतिरिक्त वैज्ञानिक कर्मचारी

	सन् 1955 में काम में लगे लोगों की कुल संख्या	दूसरी योजना में अतिरिक्त कर्मचारी
गणित और अंक-संकलन	5,700	6,300
भौतिकशास्त्र	4,600	2,200
रसायनशास्त्र	7,300	1,700
वनस्पतिशास्त्र	2,100	1,400
प्राणिशास्त्र	2,300	1,400
भूगर्भशास्त्र	1,300	1,200
योग	23,300	14,200

13. उच्चतर माध्यमिक विद्यालय और विश्वविद्यालय-स्तर पर वैज्ञानिक शिक्षा की व्यापक सुविधाएं प्रदान करके ही वैज्ञानिक शिक्षा के विस्तार के लिए चिरस्थायी आधार तैयार किए जा सकते हैं। वैज्ञानिकों की मांग विभिन्न क्षेत्रों से होती है—जैसे, विज्ञान के अध्यापक, संरक्षण-इंजीनियर, अनुसन्धानकर्त्ता, वैज्ञानिक, आदि। तीसरी योजना की अवधि में कालेजों में जिन 27,000 अध्यापकों की आवश्यकता होगी, उनमें से 17,000 वैज्ञानिक होंगे। विश्वविद्यालयों में वैज्ञानिक शिक्षा की सुविधाओं में कितनी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, इसकी एक झांकी नीचे की तालिका में मिलेगी :

तालिका-संख्या 5

विज्ञान की शिक्षा के लिए सुविधाएं : प्रविष्ट छात्रों की संख्या

डिग्री	1950-51	1955-56	1960-61
बी० एस-सी०	32,600	52,300	84,000
एम० एस-सी०	3,800	6,500	11,300
विज्ञान के पी-एच० डी०	630	1,120	2,000
योग	37,030	59,920	97,300

तीसरी योजना के अन्त तक कुल 21,800 उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में से 9,500 में ऐच्छिक विषय के रूप में विज्ञान के विषय की सुविधा हो जाएगी और विश्वविद्यालय-स्तर पर कुल 4,00,000 छात्रों में से 2,30,000 को विज्ञान की श्रेणियों में अतिरिक्त भर्ती की सुविधा प्रदान की जा सकेगी।

तीसरी योजना की अवधि में आधारभूत और प्रायोगिक अनुसन्धान के लिए वैज्ञानिकों की आवश्यकताओं और अन्य क्षेत्रों में उनकी नियुक्ति के बारे में निरन्तर विचार होते रहना चाहिए तथा इस प्रकार के अनुमानों के प्रकाश में सुविधाओं में वृद्धि की जानी चाहिए।

(3)

कृषि और ग्रामीण विकास

14. तीसरी योजना में कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों के विकास-कार्यक्रमों का यह तकाज़ा है कि कर्मचारियों की संख्या में बहुत अधिक वृद्धि होनी चाहिए। दूसरी योजना में आवश्यक प्रशिक्षण-सुविधाओं को एक पर्याप्त सीमा तक बढ़ाया गया था, ताकि अधिकांश क्षेत्रों में इस समय जो सम्भावित मांग है, उसे वर्तमान उपलब्ध सुविधाओं में थोड़ी-सी वृद्धि करके ही पूरा किया जा सके। फिर भी, योजना के आगे बढ़ने के साथ-साथ विभिन्न क्षेत्रों की कुल मांग में वृद्धि होने की सम्भावनाओं को भी ध्यान में रखना चाहिए। नीचे दी गई तालिका-संख्या 6 और 7 में यह दिखाया गया है कि वर्तमान अनुमान के अनुसार तीसरी और चौथी योजना की अवधि में कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रों में कितने अतिरिक्त कर्मचारियों की आवश्यकता होगी तथा तीसरी योजना की अवधि में प्रशिक्षण-सुविधाओं के विस्तार का क्या कार्यक्रम है :

तालिका-संख्या 6

कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों में कर्मचारियों की अतिरिक्त आवश्यकताएं

	सन् 1960-61 में काम में लगे लोगों की कुल संख्या	तीसरी योजना में अतिरिक्त आवश्यकताएं	चौथी योजना में अतिरिक्त आवश्यकताएं
कृषि-विज्ञान के स्नातक	14,000	20,000	30,000
पशुचिकित्सा-विज्ञान के स्नातक ...	5,000	6,800	7,000
दूध-टेक्नोलाजिस्ट :			
डिग्री	52	625	1,150
डिप्लोमा	308	975	1,150
वन-विज्ञान :			
वन-अधिकारी	1,100	480	600
वन-रक्षक (रेंजर)	3,000	1,520	1,900
मछली-उद्योग :			
प्रशासनिक और सांख्यिकी-कर्मचारी ...	460	1,475	2,410
इंजीनियर	150	240	
मछली पकड़ने की नौकाओं के कर्मचारी ...	120	250	
तटवर्ती तकनीकी कर्मचारी	50	170	

तालिका-संख्या 7

तीसरी योजना में अतिरिक्त प्रशिक्षण-सुविधाएं

	सन् 1960-61			सन् 1965-66		
	संस्थाएं	भर्ती	निकासी	संस्थाएं	भर्ती	निकासी
कृषि-कालेज	53	4,600	2,300	57	6,200	4,500
पशुचिकित्सा-कालेज ...	17	1,300	1,200	19	1,460	1,350
दूध-टेक्नोलाजी-संस्थाएं ...	5	110	100	7	170	154
मत्स्योद्योग-संस्थाएं ...	2	50	50	3	80	75

15. **कृषि** : तीसरी योजना में 4 नए कृषि-कालेजों की स्थापना के अतिरिक्त 5 वर्तमान कालेजों में भी कृषि के स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम प्रारम्भ किए जाएंगे। महाराष्ट्र के मंजरी नामक स्थान में स्थापित कृषि-व्यवसाय-विद्यालय के ढंग पर किसानों के लड़कों को प्रशिक्षण देने के लिए 50 नई संस्थाएं खोली जाएंगी। दूसरी योजना की अवधि में उत्तरप्रदेश में एक कृषि-विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। अन्य नए कृषि-विश्व-विद्यालय स्थापित करने के प्रस्तावों पर विचार किया जा रहा है। कृषि-विश्वविद्यालयों का लक्ष्य सम्बद्ध विभिन्न क्षेत्रों—यथा, कृषि, पशुपालन, पशुचिकित्सा-विज्ञान, दूध-उद्योग, आधारभूत विज्ञान और मानव-समाज-शास्त्र—के अध्ययन तथा अनुसन्धान और विस्तार-कार्य-सहित समन्वित अध्यापन को परस्पर-सम्बद्ध करना है। कृषि-कालेजों के लिए बड़ी संख्या में योग्य अध्यापकों की उपलब्धि के लिए कुछ चुनी हुई संस्थाओं में प्रशिक्षण-विभाग खोलने का प्रस्ताव है। वरिष्ठ और मध्यम वर्ग के कृषि-कर्मचारियों के लिए भी एक कर्मचारी-कालेज स्थापित किया जाएगा। तीसरी योजना की अवधि में स्नातकोत्तर फेलोशिप का भी विस्तार किया जाएगा।

16. **पशुपालन और पशुचिकित्सा-विज्ञान** : इज्जतनगर में पशुचिकित्सा-विज्ञान के स्नातकोत्तर प्रशिक्षण की सुविधाएं बढ़ाई जाएंगी। पशुपालन में विस्तार-पद्धतियों का प्रशिक्षण देने के लिए सभी पशुचिकित्सा-कालेजों के साथ विस्तार-विभाग सम्बद्ध किए जाएंगे, जिनमें पशु-प्रदर्शन-फार्मों के सम्बन्ध में व्यावहारिक प्रशिक्षण देने की भी व्यवस्था होगी।

17. **दूध-उद्योग** : दूध-उद्योग एक अपेक्षाकृत नया क्षेत्र है, जिसमें इस समय बहुत कम संख्या में प्रशिक्षित व्यक्ति उपलब्ध हैं। डिप्लोमा-स्तर की प्रशिक्षण-सुविधाएं आनन्द बंगलोर, बम्बई, करनाल और नैनी में उपलब्ध हैं। इन सुविधाओं को पश्चिम-बंगाल के हरिणघाट नामक स्थान में भी उपलब्ध किया जाएगा। आनन्द-स्थित कृषि-अनुसन्धान-संस्था को पूर्ण डिग्री-कालेज का रूप दिया जाएगा। करनाल-स्थित केन्द्रीय दूध-कालेज में दूध-टेक्नोलाजिस्टों को प्रशिक्षित किया जा रहा है। राष्ट्रीय दूध-अनुसन्धानशाला में सेवाधीन कर्मचारियों के लिए अल्पकालीन प्रशिक्षण-कार्यक्रम, दूध-विज्ञान में एम० एस-सी०-डिग्री तथा विशेष प्रत्यास्मरण-पाठ्यक्रमों की भी व्यवस्था की जाएगी।

18. **वन-विज्ञान** : हाल के वर्षों में देहरादून में वन-अधिकारियों और देहरादून तथा कोयमुत्तूर में वन-रक्षकों (रेंजरों) को प्रशिक्षण देने की सुविधाओं में पर्याप्त वृद्धि हुई है। तीसरी योजना के कार्यक्रमों के कारण बढ़ी हुई मांग को पूरा करने की दृष्टि से वर्तमान संस्थाओं में प्रशिक्षण की सुविधाओं को बढ़ाया जाएगा।

19. **मछली-उद्योग** : तीसरी योजना की अवधि में मछली-उद्योग के विभिन्न पहलुओं का, जिनमें विस्तार, अंक-संकलन और हाट-व्यवस्था भी सम्मिलित है, प्रशिक्षण देने के लिए बम्बई में एक केन्द्रीय मछली-विज्ञान-शिक्षण-संस्था की स्थापना की जाएगी। कोचीन में एक मत्स्योद्योग-संचालन-संस्था की भी स्थापना की जाएगी। कलकत्ता-स्थित केन्द्रीय स्थलीय मत्स्योद्योग-संस्था तथा मंडपम्-स्थित समुद्री मत्स्योद्योग-संस्थाओं को विकसित किया जाएगा।

20. **भू-संरक्षण** : तीसरी योजना में भू-संरक्षण के लिए जो विशाल कार्यक्रम निर्धारित किए गए हैं, उनको देखते हुए वर्तमान प्रशिक्षण-सुविधाओं को विशेष रूप से विस्तार-

कर्मचारियों और क्षेत्रीय कार्यकर्त्ताओं के लिए पर्याप्त सुदृढ़ करना होगा। योजना में इस समय देहरादून के प्रशिक्षण-केन्द्र की भर्ती की क्षमता को दुगुना कर 30 से 60 तथा कोटा, हज़ारीबाग, उदकमंडलम और बरेली के अनुसन्धान-प्रशिक्षण-केन्द्रों की भर्ती-क्षमता को 240 से बढ़ा कर 400 तक करने की व्यवस्था है। कुछ कृषि-कालेजों में भी भू-संरक्षण में प्रशिक्षण देने की योजना है।

21. **सामुदायिक विकास** : अक्तूबर 1963 तक सामुदायिक विकास-कार्यक्रम सारे देश में लागू हो जाएगा। कुल 5,000 विकास-खंडों में से इस समय कार्यक्रम के अधीन सेवित विकास-खंडों की संख्या 3,100 है। दूसरी योजना में विभिन्न श्रेणियों के कर्मचारियों की संख्या में कमी को देखते हुए, तीसरी योजना के लिए कर्मचारियों की आवश्यकताओं का अनुमान इस प्रकार है :

तालिका-संख्या 8

सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों के लिए कर्मचारियों की अनुमित अतिरिक्त आवश्यकताएं*

	संख्या
ग्रामसेवक	21,689
ग्रामसेविका	7,869
विस्तार-अधिकारी :	
कृषि	2,081
सहकारिता	2,648
पशुपालन	3,494
ग्रामोद्योग	3 712
पंचायत	3,677
ओवरसियर	2,915
समाज-शिक्षा-संगठनकर्ता :	
पुरुष	1,368
महिलाएं	3,741

पंचायती राज लागू होने के कारण प्रशिक्षण-संस्थाओं, प्रशिक्षण-शिविरों, गोष्ठियों, आदि में गैर-अधिकारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्थाओं को विस्तृत किया जा रहा है।

22. **सहकारिता** : दूसरी योजना की अवधि में सहकारिता में प्रशिक्षण-विषयक सुविधाओं में व्यापक स्तर पर वृद्धि हुई है। सन् 1960 में सहकारिता के कनिष्ठ कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए 62 और मध्यम वर्ग के कर्मचारियों के लिए 13 संस्थाएं थीं। साथ ही वरिष्ठ कर्मचारियों के लिए पूना में एक कालेज था। सहकारिता-आन्दोलन में गैर-अधिकारियों को, जिनमें पदाधिकारी और सहकारी समितियों के सदस्य भी हैं, प्रशिक्षण देने के लिए अखिल भारतीय सहकारी संघ ने 368 प्रशिक्षण-इकाइयां स्थापित कीं। तीसरी योजना के लिए प्रशिक्षण-कार्यक्रमों पर सहकारिता के अध्याय में प्रकाश डाला गया है।

* **खंड-विकास-अधिकारियों और स्वास्थ्य-कर्मचारियों के अलावा**

(4)

शिक्षा, स्वास्थ्य और समाज-कल्याण

23. **शिक्षा** : तीसरी योजना के शिक्षा-सम्बन्धी कार्यक्रम में प्राथमिक विद्यालयों के प्रशिक्षित अध्यापकों की संख्या में 61 प्रतिशत की, माध्यमिक विद्यालयों में 81 प्रतिशत की और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में 40 प्रतिशत की वृद्धि सम्भावित है। इस कार्यक्रम के पूरा होने पर इनमें से प्रत्येक वर्ग के प्रशिक्षित अध्यापकों का अनुपात 75 प्रतिशत बढ़ जाएगा। इसीलिए औपचारिक प्रशिक्षण की सुविधाओं को प्रत्यास्मरण-पाठ्यक्रमों और सेवा में रहते हुए प्रशिक्षण की व्यवस्था-द्वारा बढ़ाया जा रहा है।

24. दूसरी योजना की सम्पूर्ण अवधि में विज्ञान और शिल्प के अध्यापकों की काफी कमी रही। तीसरी योजना में विज्ञान एवं अन्य विशिष्ट विषयों में अध्यापकों को प्रशिक्षित करने के विशेष उद्देश्य से चार प्रादेशिक कालेज स्थापित किए जाएंगे। विश्वविद्यालयों और कालेजों में भी विज्ञान के अध्यापकों की काफी मांग रहेगी। यह अनुमान लगाया गया है कि तीसरी योजना की अवधि में आवश्यक अतिरिक्त 27,000 अध्यापकों में से 17,000 विज्ञान के होंगे। इसी प्रकार, तीसरी योजना में तकनीकी शिक्षा के प्रसार के लिए भी इंजीनियरी-कालेजों और पोलिटेक्निकल स्कूलों के लिए 9,000 अतिरिक्त अध्यापकों की आवश्यकता होगी। जब तक सामान्य प्रक्रिया में पर्याप्त संख्या में अध्यापक उपलब्ध नहीं होते, तब तक के लिए अध्यापकों की कमी को पूरा करने के हेतु अनेक आपातकालीन और अल्पकालीन कदम उठाए गए हैं। फिर भी, तीसरी योजना में इस दिशा में कठिनाई बनी हुई है और कुछ क्षेत्रों में अंशकालीन और अन्य पेशों के कर्मचारियों का अधिक उपयोग किया जा सकता है।

25. दूसरी योजना में औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थाओं और केन्द्रों के लिए शिल्प के शिक्षकों को प्रशिक्षण देने की सुविधाओं में पर्याप्त विस्तार हुआ है। इस समय 4 केन्द्रीय प्रशिक्षण-संस्थाएं हैं, जिनमें 550 व्यक्तियों को प्रशिक्षण दिया जा सकता है। इन संस्थाओं की भर्ती की क्षमता 1,000 तक बढ़ाई जाएगी तथा उसके साथ ही तीन नई संस्थाएं भी खोली जाएंगी, जिससे कुल क्षमता बढ़ कर 1,800 हो जाएगी। योजना की अवधि में इन संस्थाओं से लगभग 8,000 लोग प्रशिक्षित होकर निकलेंगे।

26. **स्वास्थ्य और चिकित्सा-कर्मचारी** : तीसरी योजना के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने में स्वास्थ्य और चिकित्सा-कर्मचारियों—विशेषतः सहायक वर्ग के, तथा नर्सों, मिडवाइफों, स्वास्थ्य-निरीक्षकों—की आवश्यकता के अनुपात में कमी रहेगी। नीचे दी गई तालिका-संख्या 9 में तीसरी योजना में प्रशिक्षण-सुविधाओं में वृद्धि के प्रस्तावों तथा दूसरी योजना के अन्त की यथार्थ स्थिति को प्रस्तुत किया गया है :

तालिका-संख्या 9

स्वास्थ्य और चिकित्सा-कर्मचारियों के लिए अतिरिक्त प्रशिक्षण सुविधाएं

	सन् 1960-61			सन् 1965-66		
	संस्थाएं	भर्ती	निकासी	संस्थाएं	भर्ती	निकासी
डाक्टर	57	5,800	3,200	75	8,000	4,830
नर्सें	250	4,000	2,800	350	6,200	4,500

तालिका-संख्या 9—जारी

		सन् 1960-61			सन् 1965-66		
		संस्थाएं	भर्ती	निकासी	संस्थाएं	भर्ती	निकासी
सहायक नर्स-मिडवाइफें/ मिडवाइफें	..	420	5,200	4,000	550	9,100	7,000
स्वास्थ्य-निरीक्षक	..	30	650	375	50	850	500
सफाई-निरीक्षक	..	28	2,250	2,250	38	2,850	2,850
औषधि-निर्माणविज्ञ	..	10	550	480	15	1,450	1,270

ऊपर बताए गए कार्यक्रमों के अतिरिक्त योजना में दन्त-चिकित्सा-कालेजों में छात्रों की भर्ती की क्षमता प्रति वर्ष 280 से बढ़ा कर 400 करने की व्यवस्था की गई है। चार नए दन्त-चिकित्सा-कालेज खोले जाएंगे और जो 10 संस्थाएं विद्यमान हैं, उनका विस्तार किया जाएगा। चिकित्सा-कालजों में अध्यापकों की कमी की समस्या का यह तकाजा है कि स्नातकोत्तर शिक्षा का गति से विकास किया जाए और विभिन्न अल्पकालीन कदम उठाए जाएं। इस समय 2,000 अध्यापकों की कमी का अनुमान है, जिसके और भी बढ़ने की सम्भावना है।

27. **परिवार-आयोजन :** एक अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र, जिसके लिए अविलम्ब अतिरिक्त कार्यकर्त्ताओं की आवश्यकता है, परिवार-आयोजन का है। परिवार-आयोजन-सम्बन्धी विद्यमान सेवाओं को और अधिक व्यापक क्षेत्र में उपलब्ध कराने के लिए यह आवश्यक है कि प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों में ज़रूरी परिवार-आयोजन-सेवाओं की व्यवस्था की जाए। इसके लिए बड़ी संख्या में महिला कार्यकर्त्ताओं की भर्ती कर उन्हें प्रशिक्षित करना होगा। इसके लिए जो कार्यक्रम बनाए जा रहे है, वे सम्भवतः अपर्याप्त होंगे, अतः इस सम्बन्ध में और अधिक विचार होना चाहिए।

28. **समाज-कल्याण :** सामुदायिक विकास-खंडों, आदिमजाति-विकास-खंडों और कल्याण-विस्तार-परियोजनाओं के अधीन कार्यान्वित किए जा रहे कल्याण-कार्यक्रमों में प्रायः प्रशिक्षित महिलाओं की कमी रही है। महिलाओं और बच्चों में, विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों में, समाज-कल्याण-कार्य कुछ कठिनाइयों के बीच करना होगा तथा कार्यकर्त्ताओं को विशेष रूप से चुनना और प्रशिक्षण देना होगा। ग्रामसेविका, नर्स, स्वास्थ्य-निरीक्षक, अध्यापक और बाल-सेविका के धन्धों के लिए बड़ी संख्या में महिलाओं को आकृष्ट करने के लिए उनकी काम की स्थिति, निवास की व्यवस्था, परिवहन की सुविधा और महिला-मंडल- जैसे स्वैच्छिक संगठनों के साथ काम करने के अवसर, आदि के बारे में विशेष ध्यान देना चाहिए।

(5)
प्रशासन, अंक-संकलन और तकनीकी सहायता

29. **प्रशासनिक सेवाएं :** पिछले वर्षों में प्रशासन-सम्बन्धी कर्मचारियों की आवश्यकता में निरन्तर वृद्धि हुई है। अनिवार्य रूप से प्रत्येक योजना के कारण न केवल आवश्यक लोगों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि होनी चाहिए, बल्कि प्रशासनिक तथा तकनीकी सेवाओं पर

भी भार और उत्तरदायित्व बढ़ना चाहिए। गत दशाब्दी में भारतीय प्रशासनिक सेवा की अधिकृत संख्या 1,200 से बढ़ कर 2,000 हो गई है। तीसरी योजना में भारतीय प्रशासनिक सेवा में कुल अतिरिक्त आवश्यकता का अनुमान 400 है। राज्यों की प्रशासनिक सेवाओं में काफी वृद्धि होने की आशा है। इनका उत्तरदायित्व पहले ही बढ़ गया है तथा पंचायती राज-संस्थाओं के विकास के साथ इसमें और अधिक वृद्धि होगी। इस समय राज्यों के विभिन्न स्तरों पर प्रशासनिक कर्मचारियों की कितनी आवश्यकता है, इसका अध्ययन किया जा रहा है। इसके साथ ही प्रशिक्षण और अधीक्षण की वर्तमान व्यवस्थाओं की और उन अन्य पहलुओं की समीक्षा की जा रही है, जिन पर बहुत हद तक प्रशासनिक कर्मचारियों की योग्यता निर्भर करती है।

30. मसूरी की राष्ट्रीय प्रशासन-अकादेमी, हैदराबाद के प्रशासनिक कर्मचारी-कालज और दिल्ली के भारतीय सार्वजनिक सेवा-संस्थान म प्रशासकों के प्रशिक्षण की सुविधाओं का विस्तार किया गया है। कुछ राज्य-सरकारों ने भी प्रशासनिक और कार्यपालन-सेवाओं के प्रशिक्षण के लिए अपनी संस्थाएं स्थापित की हैं। राज्यों में विकास-कार्यों में लगे कर्मचारियों को सहायता देने के लिए प्रस्ताव है कि आर्थिक और सामाजिक आयोजन में प्रशिक्षण देने के लिए एक कार्यक्रम बनाया जाए। यह भी प्रस्ताव है कि सरकारी और निजी, दोनों ही क्षेत्रों के औद्योगिक संस्थानों के लिए आवश्यक उच्च प्रबन्ध-सम्बन्धी कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए दो अखिल भारतीय प्रबन्ध-संस्थान स्थापित किए जाएं।

31. **सांख्यिकी-कर्मचारी :** अंक-संकलन-सम्बन्धी प्रशिक्षण-प्राप्त कर्मचारियों की मांग में पर्याप्त वृद्धि हुई है। दूसरी योजना की अवधि में अंक-संकलन-सम्बन्धी प्रशिक्षण-प्राप्त या उसका अनुभव रखनेवाले केन्द्र या राज्य-सरकारों के अधीन काम करनेवाले कर्मचारियों की संख्या 4,000 से बढ़ कर 10,000 हो गई है। तीसरी योजना के लिए अतिरिक्त कर्मचारियों की आवश्यकता का अनुमान 6,000 है। निजी उद्योग और वाणिज्य के क्षेत्र में भी इनकी मांग में वृद्धि होगी। कलकत्ता-स्थित भारतीय अंक-संकलन-संस्थान ने, जो संसद्-द्वारा सन् 1959 में पारित एक अधिनियम के अधीन राष्ट्रीय महत्व की संस्था है, अंक-संकलन में बी० एस-सी० की डिग्री के लिए 4 वर्ष का और एम० एस०-सी० की डिग्री के लिए 2 वर्ष का पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया है। संस्था में इस पेशे से सम्बद्ध विशिष्ट पाठ्यक्रम और स्नातकोत्तर अनुसन्धान-डिग्री के लिए भी व्यवस्था है। केन्द्रीय अंक-संकलन-संगठन छात्रों को सरकारी अंक-संकलन-सम्बन्धी प्रशिक्षण देने के अतिरिक्त केन्द्रीय मन्त्रालयों और राज्य-सरकारों में वरिष्ठ और मध्यवर्ती स्तरों पर काम करनेवाले सांख्यिकी-अधिकारियों को तथा कनिष्ठ सरकारी कर्मचारियों को भी प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करता है। अपने-अपने विशिष्ट क्षेत्रों में कृषि-अंक-संकलन-संस्थान, अखिल भारतीय स्वास्थ्य-विज्ञान और सार्वजनिक स्वास्थ्य-संस्थान, स्वास्थ्य-मन्त्रालय और देहरादून का वन-अनुसन्धान-संस्थान प्रशिक्षण-पाठ्यक्रमों का आयोजन करते हैं। राज्यों के अंक-संकलन-कार्यालय मध्यवर्ती और निम्न स्तरों के राज्यीय सांख्यिकी-अधिकारियों को—यथा, ज़िलों के सांख्यिकी-अधिकारियों, सामुदायिक विकास-खंडों के प्रगति सहायकों एवं अन्य क्षेत्रीय कर्मचारियों को—सेवा में रहते हुए प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करते हैं।

32. **तकनीकी सहायता :** संयुक्त राष्ट्र-संघ, कोलम्बो-योजना, अमेरिका से हुए तकनीकी-सहयोग-समझौते तथा रूस, फ्रांस, नीदरलैंड आदि देशों, विदेशी विश्वविद्यालयों

और प्रतिष्ठानों के साथ हुई प्रशिक्षण-विषयक व्यवस्थाओं से विविध प्रकार के विशिष्ट और उच्च अध्ययन के क्षेत्रों में प्रशिक्षण के बहुमूल्य अवसर उपलब्ध हुए हैं और हज़ारों भारतीयों ने इससे लाभ उठाया है। इसके प्रतिफल में भारत ने भी यथा-सम्भव अपनी प्रशिक्षण-सुविधाओं को अन्य देशों तक पहुंचाने का प्रयत्न किया है। भारत ने अपने पास अन्य देशों से प्रशिक्षित व्यक्ति भेजने की आई मांगों को भी पूरा करने का प्रयत्न किया है। विभिन्न सहायता-कार्यक्रमों के अधीन भारत को जो सुविधाएं उपलब्ध हैं, उनका अधिकतम लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक है कि इस समय कर्मचारियों की जो सम्भावित कमी है, उसको बारीकी से समझा जाए, और प्रशिक्षार्थियों के चुनाव तथा प्रशिक्षण के क्षेत्र का निश्चय तीसरी और चौथी योजनाओं की आवश्यकताओं के सावधानीपूर्ण अध्ययन के आधार पर किया जाए। इसके बदले में अपनी प्रशिक्षण-सुविधाओं को बढ़ाने में और प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के सेवा-वर्ग के निर्माण में अन्य देशों की मांगों का भी पूरा ध्यान रखना चाहिए, जिन्हें आगामी वर्षों में विभिन्न क्षेत्रों में भारत से पूरा करने के लिए कहा जा सकता है।

अध्याय 12

प्राकृतिक साधन

(1)
प्रस्तावना

योजना-आयोग की विचारणीय सूची में निम्नलिखित विषय शामिल किए गए थे :

(1) देश के भौतिक, पूंजी-सम्बन्धी और मानवीय साधनों—जिनमें तकनीकी कर्मचारी भी शामिल हैं—का अनुमान लगाना और यह देखना कि देश की ज़रूरतों के मुकाबले इनमें से जिस किसी की कमी हो, उसे बढ़ाने की क्या सम्भावनाएं हो सकती हैं; तथा

(2) देश के साधनों के सबसे अधिक ठोस और सन्तुलित उपयोग के लिए योजना तैयार करना।

इसके अनुसार ही पहली पंचवर्षीय योजना में, उस समय प्राप्त सूचनाओं के आधार पर देश के भूमि, पानी, खनिज और बिजली-सम्बन्धी साधनों का लेखा पेश किया गया। उसमें हर क्षेत्र की मुख्य समस्याओं की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया और भविष्य के लिए सर्वेक्षण एवं जांच के कार्यक्रम निश्चित किए गए। उसमें इस तरह का सर्वेक्षण करानेवाले संगठनों को सुदृढ़ करने, उन्हें कर्मचारी और साज़-सामान देने तथा प्रशिक्षण के कार्यक्रमों का विस्तार करने के बारे में भी सुझाव दिए गए थे।

विगत कुछ वर्षों में प्राकृतिक साधनों के सर्वेक्षण और उपयोग-सम्बन्धी कार्य करने-वाले संगठनों—जैसे, भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद्, केन्द्रीय सिंचाई और बिजली-मंडल, भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था, तेल और प्राकृतिक गैस-आयोग, भारतीय खान-संस्था, भारतीय सर्वेक्षण-संस्था, वन-अनुसन्धान-संस्था, परमाणु-शक्ति-आयोग, वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् एवं उसकी राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं—का प्रचुर विस्तार किया गया है और उन्होंने नए-नए सर्वेक्षण तथा जांच के कार्य आरम्भ किए हैं। इन सर्वेक्षणों के परिणामस्वरूप देश के प्राकृतिक साधनों का पहले से अधिक ठोस मूल्यांकन हो सका है तथा पिछली जानकारी में रह गई कमियों एवं देश की आवश्यकताओं को देखते हुए इनमें से किस वस्तु की कितनी कमी है, इसकी जानकारी मिली है।

2. आयोजन का उद्देश्य सम्पूर्ण जनता का जीवन-स्तर ऊंचा उठाना है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए देश के प्राकृतिक और मानवीय साधनों का वैज्ञानिक विधियों से विकास आवश्यक है। प्राकृतिक साधनों और सामग्री की बढ़ती हुई मांग के कारण प्रौद्योगिक तरीके काम में लाए गए, जिनसे अनेक कमियां दूर हुईं और प्राकृतिक साधन अधिक मात्रा में उपलब्ध होने लगे। प्राकृतिक साधनों की मांग और उपलब्धि में परिवर्तन लानेवाली इन गतिशील प्रवृत्तियों के कारण आवश्यक हो गया है कि इन साधनों की निरन्तर जांच-पड़ताल होती रहे तथा इनके सम्बन्ध में नीति निश्चित की जाए।

प्राकृतिक साधनों के सम्बन्ध में एक समन्वित रीति से काम किया जाना चाहिए और लम्बे समय तक उनकी आवश्यकता को देखते हुए उनकी जांच-पड़ताल एवं उपयोग की योजनाएं बनानी चाहिए। अर्थव्यवस्था के विकास की गति निश्चित करने में इस तथ्य का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान होता है कि आवश्यकता से पहले प्राकृतिक साधनों की कितनी जांच-पड़ताल हुई है तथा उनकी प्राप्ति की सम्भावनाएं कहां तक निश्चित हैं।

3. तीसरी पंचवर्षीय योजना के निर्माण के साथ वह स्थिति आ गई है, जब सुविचारित दीर्घकालीन योजनाओं की एक आवश्यक शर्त के रूप में इस बात पर विचार किया जाना चाहिए कि देश के मुख्य प्राकृतिक साधनों की जानकारी हमें कहां तक और किस रूप में प्राप्त है। यह देखना आवश्यक है कि कहां-कहां बड़ी कमियां हैं, इस दिशा में सर्वेक्षण की कहां-कहां ज़रूरत है तथा सिंचाई, बिजली, इस्पात, कोयला, तेल और खनिज पदार्थ, भूमि-उपयोग तथा वन-साधन बढ़ाने के दीर्घव्यापी उद्देश्यों के सम्बन्ध में आगे क्या-क्या कदम उठाए जा सकते हैं। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, अगले 15 वर्षों में आबादी में 18 करोड़ 70 लाख की वृद्धि की सम्भावना है। श्रमिक-वर्ग में वृद्धि का अनुमान 7 करोड़ है, जिसमें से दो-तिहाई को कृषि-भिन्न क्षेत्रों में खपाना पड़ेगा। इसलिए यह आवश्यक है कि इस अवधि में आर्थिक विकास की गति तेज़ की जाए और उसे कायम रखा जाए। प्राकृतिक साधनों के कारण भारत की कृषि-सम्बन्धी और औद्योगिक उत्पादन की क्षमता बहुत है और अगली दो या तीन योजनाओं की अवधि में ऐसी आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था की स्थापना करने के लिए, जो आम जनता का जीवन-स्तर ऊंचा कर सके और लाभप्रद रोज़गार के अवसर भी बराबर देती रहे, प्राकृतिक साधनों का तेज़ी से विकास ज़रूरी है। समय पर राष्ट्रीय और प्रति व्यक्ति-आय के लक्ष्य पूरे करने के लिए; कृषि, सिंचाई और बिजली का विस्तार करने के लिए; तथा इस्पात, अल्युमीनियम, कोयला, तेल-शोधन, उर्वरक, सीमेंट एवं अन्य वस्तुओं-सदृश उद्योग के लिए निश्चित अस्थायी लक्ष्य पूरे करने के लिए यह आवश्यक है कि काफी पहले देश के प्राकृतिक साधनों की किस्मों और मात्रा तथा उनके विकास के लिए ज़रूरी बातों पर भली प्रकार विचार किया जाए एवं आवश्यक कदम उठाए जाएं। सन्तुलित विकास के लिए देश के हर मुख्य प्रदेश में इनकी उपलब्धि, ज़रूरतों और सम्भावनाओं का अनुमान लगाना आवश्यक है।

4. सिंचाई, बिजली, वन, उद्योग, खनिज पदार्थ एवं अन्य वस्तुओं-सम्बन्धी अध्यायों में उन दिशाओं की ओर ध्यान दिलाने का प्रयत्न किया गया है, जिनमें देश के इन साधनों का पूरा पता लगाने और उनके अधिक तेज़ विकास के प्रयत्न करने की आवश्यकता है। इस अध्याय का उद्देश्य तीसरी और आगे आनेवाली योजनाओं के सन्दर्भ में प्राकृतिक साधनों का मूल्यांकन करना और आबादी में वृद्धि तथा सघन एवं बड़े पैमाने पर उद्योगीकरण के साथ उनके सम्बन्धों का संक्षेप में विवेचन करना है।

अभी हाल में योजना-आयोग में प्राकृतिक साधनों के लिए एक अलग इकाई बनाई गई है, जो प्राकृतिक साधनों के मूल्यांकन एवं विकास की समस्याओं का अध्ययन करेगी, तेज़ी से बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था की अवश्यकताओं के अनुसार सर्वेक्षण एवं जांच के कार्य में संलग्न विभिन्न संस्थाओं के कार्यों में समन्वय स्थापित करेगी तथा आम तौर पर, विभिन्न सम्बद्ध क्षेत्रों में एक समान नीति निर्धारित करने में सहायता देगी। काम बढ़ने के साथ-साथ इस इकाई का भी विस्तार किया जाएगा। अन्य संस्थाओं के सहयोग से आशा की जाती है

कि प्राकृतिक साधनों के निरन्तर अध्ययन का समन्वित कार्य शुरू हो सकेगा, विशेष रूप से दीर्घकालीन विकास के दृष्टिकोण से, और इस अध्ययन के परिणामों को अमल में लाने के लिए उचित नीति तथा तरीके बताए जा सकेंगे। इन बातों को ध्यान में रखते हुए हाल के कार्यों की संक्षिप्त समीक्षा की जा सकती है और भूमि, पानी, खनिज पदार्थ, बिजली एवं अन्य साधनों के विकास के सम्बन्ध में आगे आनेवाली समस्याओं पर विचार किया जा सकता है।

(2)

भूमि-साधन

5. भूमि ही देश की सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक सम्पत्ति है—यही कृषि-उत्पादन का आधार है। आबादी बढ़ती है, परन्तु भूमि का क्षेत्र तो निश्चित है, फिर उसमें से कभी केवल एक भाग ही कृषि के लिए उपलब्ध है। वस्तुतः इस समस्या के अनेक पहलुओं पर विचार करना होगा। सिंचाई और कृषि-विस्तार के अन्य तरीकों से भूमि की उत्पादन-शक्ति को काफी बढ़ाया जा सकता है। यह अनुमान लगाना आवश्यक है कि आज बेकार पड़ी हुई कितनी भूमि कृषि के काम में लाई जा सकती है। आबादी बढ़ने के साथ-साथ यह भी ज़रूरी हो जाता है कि कृषि की कुछ ज़मीन लेकर उस पर रहने के लिए मकान बनवाए जाएं। रेडियो, रेलवे, हवाई सेवाएं, आदि-जैसे संचार-साधनों के विकास में भी उर्वर भूमि का उपयोग करना पड़ता है। गांव तेज़ी से शहरों में बदलते जा रहे हैं और बड़े शहर बढ़ते जा रहे हैं—इस कारण भी उद्यानों और खुले मैदानों के लिए ज़मीन की ज़रूरत पड़ती है। सिंचाई के लिए बननेवाले बांध भी उर्वर भूमि से होकर गुज़र सकते हैं। औद्योगिक कारखानों तथा अन्य संस्थाओं को भी ज़मीन की काफी ज़रूरत पड़ती है। इन सभी विकास-कार्यों में, जहां कहीं सम्भव हो, उपजाऊ भूमि को बचाने के प्रयत्न होने चाहिए। इसके लिए भूमि की पूरी जानकारी देनेवाली एक सूची बना लेनी चाहिए और भूमि के वर्गीकरण में सावधानी रखनी चाहिए। उसके उपयोग पर भी बराबर ध्यान देना चाहिए।

6. **भूमि का उपयोग :** देश का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल लगभग 80 करोड़ 60 लाख एकड़ है, जिसमें से काम-योग्य क्षेत्र 72 करोड़ 10 लाख एकड़ तथा खेती-वाला क्षेत्र 31 करोड़ 80 लाख एकड़ है। नीचे की तालिका में भूमि-उपयोग का वर्तमान स्वरूप तथा तीसरी योजना के अन्त के लिए परिकल्पित स्वरूप की मुख्य बातें प्रस्तुत की गई हैं :

तालिका-संख्या 1

सन् 1965-66 में भूमि का उपयोग

(क्षेत्रफल लाख एकड़ में)

	1955-56	1960-61	1965-66
कुल काम-योग्य क्षेत्र	7,200	7,210	7,210
वन	1,256	1,310	1,320
विभिन्न वृक्षों और झाड़ियों का क्षेत्र... ...	139	140	150
स्थायी चरागाह और घास के अन्य क्षेत्र ...	284	320	320

तालिका-संख्या 1—जारी

	1955-56	1960-61	1965-66
सुधार-योग्य बेकार भूमि	548	470	400
बंजर तथा कृषि-भिन्न कार्यों में प्रयुक्त होनेवाली भूमि	1,187	1,140	1,140
बेकार भूमि (चालू बेकार भूमि के अलावा) ...	309	280	260
चालू बेकार भूमि	295	280	255
खेतीवाला क्षेत्र (शुद्ध)	3,182	3,270	3,350
एक से अधिक बार बुवाई का क्षेत्र	444	515	670
कुल खेतीवाला क्षेत्र	3,626	3,785	4,020

भारत में प्रति व्यक्ति-खेती-योग्य भूमि की उपलब्धता 0.82 एकड़ है, जब कि ब्रिटेन में 0.42, जर्मनी में 0.48, जापान में 0.17, चीन में 0.50, अमेरिका में 2.68 तथा रूस में 2.59 एकड़ है ।

7. **मिट्टी का सर्वेक्षण :** अभी हाल तक देश के विभिन्न भागों में पाई जानेवाली मिट्टी के बारे में समुचित जानकारी प्राप्त नहीं थी; साथ ही, सर्वेक्षण के लिए आवश्यक संगठन भी स्थापित नहीं किए गए थे । मिट्टी-विषयक साधनों की जानकारी से ही, जिसमें मिट्टी का सर्वेक्षण तथा वर्गीकरण भी सम्मिलित है, उनकी क्षमता के निश्चय तथा उनके सुधार और भूमि-उपयोग की सीमाओं के आकलन के लिए उचित आधार मिल सकता है। मिट्टी के सर्वेक्षण का मुख्य उद्देश्य भिन्न-भिन्न प्रकार की मिट्टी का वर्गीकरण करना, उनके भेद जानना तथा उनकी बनावट, आदि के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करना एवं मानदंड स्थिर करने के लिए उस जानकारी का समन्वय करना है। इन सर्वेक्षणों की सहायता से भूमि के बेहतर उपयोग की योजनाएं तैयार हो सकती हैं तथा भूमि-संरक्षण, सिंचाई और नाले बनाने के कार्य का भी समुचित रूप से आयोजन किया जा सकता है। सन् 1955 में भारतीय कृषि-अनुसन्धान-संस्था में अखिल भारतीय मिट्टी-सर्वेक्षण-योजना आरम्भ की गई थी, जिसका उद्देश्य मिट्टी की प्रारम्भिक जांच-पड़ताल कर देश के अन्य भागों में पाई जानेवाली मिट्टी से उसका परस्पर तालमेल बैठाना था । मिट्टी का तालमेल बैठाने के काम में मिट्टी के एक समान वर्गीकरण तथा बनावट के नियमादि तय करने पड़ते हैं और मिट्टी-सम्बन्धी नक्शे एवं सर्वेक्षण की रिपोर्टें तैयार करनी पड़ती हैं । मिट्टी-सर्वेक्षण के क्षेत्र में राज्य-सरकारों को कृषि, वन, सिंचाई, नाला-निर्माण, मिट्टी की रक्षा, आदि सम्बद्ध पहलुओं पर ध्यान देना पड़ता है। चूंकि सभी राज्यों की मिट्टी सम्बन्धी समस्याएं समान हैं और अनेक राज्यों में सर्वेक्षण-सम्बन्धी संगठन नहीं हैं, इसलिए मिट्टी-सम्बन्धी कार्य का समन्वय करने के लिए यह आवश्यक समझा गया कि चार मुख्य मिट्टी-वर्गों के लिए प्रादेशिक स्तर पर प्रयोगशालाओं की स्थापना की जाए। ये वर्ग इस प्रकार हैं : (1) नदियों के पानी में बह कर आनेवाली मिट्टी—दिल्ली; (2) काली मिट्टी—पूना (अब नागपुर); (3) लाल तथा लेटराइट मिट्टी-प्रदेश 1—खड़गपुर (अब कलकत्ता); और (4) लाल तथा लेटराइट मिट्टी-प्रदेश 2—बंगलोर। तीन वर्ष बाद यह योजना केन्द्रीय भूमि-संरक्षण-मंडल की मिट्टी एवं भूमि-उपयोग-योजना के साथ मिला दी गई। मंडल की योजना 6 मुख्य नदी-

घाटी-योजनाओं—मचकुंड, हीराकुड, चम्बल, भाखड़ा-नंगल, कोसी और दामोदर—के ग्राहक क्षेत्र में मिट्टी तथा भूमि-उपयोग-सर्वेक्षण के लिए बनाई गई थी, जिसका कार्यक्षेत्र कुल 78 हज़ार वर्गमील में था। ग्राहक क्षेत्रों में सर्वेक्षण का उद्देश्य भूमि को गुणों की दृष्टि से वर्गों में बांटना है, ताकि भू-क्षरण कम करने, उत्तम किस्म की मिट्टीवाली ज़मीन को खेती के लिए निश्चित करने, नीचे बैठ जानेवाली मिट्टी को जलाशयों में बह जाने से रोक कर जलाशयों की आयु बढ़ाने आदि के लिए भूमि-संरक्षण के उपाय अपनाए जा सकें। ग्राहक क्षेत्रों में मिट्टी-संरक्षण-कार्य के लिए कृषि-भूमि-सम्बन्धी विस्तृत सर्वेक्षण तथा अन्य क्षेत्रों में प्रारम्भिक सर्वेक्षण करना आवश्यक है। कुल सर्वेक्षण-योग्य क्षेत्र 5 लाख वर्गमील है। सन् 1961 के आरम्भ तक इस अखिल भारतीय योजना के अन्तर्गत 18 हज़ार वर्गमील-क्षेत्र में विस्तृत और प्रारम्भिक सर्वेक्षण किए जा चुके थे। इस क्षेत्र में से 3 हज़ार वर्गमील-क्षेत्र नदी-घाटी-योजनाओं के ग्राहक क्षेत्र में आता है। राज्यों के भूमि-सर्वेक्षण-संगठनों ने 50 हज़ार वर्गमील-क्षेत्र में कार्य किया है। अखिल भारतीय कार्यक्रम के अन्तर्गत तीसरी योजना की अवधि में 23 हज़ार वर्गमील-क्षेत्र के सर्वेक्षण की व्यवस्था है।

8. **बेकार पड़ी भूमि का सर्वेक्षण** : बेकार पड़ी भूमि को खेती के काम में लाकर, एक फसलवाली ज़मीन पर दोहरी फसल उगा कर और सघन खेती के अन्य उपाय अपना कर कृषि-उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। दोहरी फसल के कुल क्षेत्र में काफी वृद्धि की गुंजायश है। आशा है कि दोहरी फसल का क्षेत्र, जो सन् 1960-61 में 5 करोड़ 20 लाख एकड़ था, सन् 1965-66 तक बढ़ कर 6 करोड़ 70 लाख एकड़ हो जाएगा। सन् 1955-56 के भूमि-उपयोग-विषयक आंकड़ों के अनुसार, खेती की जा सकने-योग्य परन्तु बेकार पड़ी ज़मीन 5 करोड़ 50 लाख एकड़ थी। जून 1959 में भारत-सरकार ने एक समिति बनाई जिसे 'बेकार भूमि के अतिरिक्त खेती के काम न आनेवाली भूमि' तथा 'चालू बेकार भूमि के अतिरिक्त बेकार भूमि' का सर्वेक्षण करने तथा उन प्रदेशों का पता लगाने का काम सौंपा गया, जहां भूमि के बड़े-बड़े टुकड़े खेती-योग्य बनाने तथा बसाने के काम में लाए जा सकते हैं। समिति ने 7 राज्यों में सर्वेक्षण का काम पूरा कर लिया है। इन राज्यों में खेती-योग्य बेकार भूमि—कम-से-कम 250 एकड़ के टुकड़े—लगभग दस लाख एकड़ है। बेकार भूमि के सम्बन्ध में समिति को जो जानकारी मिली है, वह बहुत महत्वपूर्ण है। फिर भी, कुल मिला कर वर्तमान जानकारी पूर्णतः निर्भर करने-योग्य नहीं है, क्योंकि खेती-योग्य बेकार भूमि खेती के काम में आ जाने के बहुत बाद तक राजस्व-खातों में उसी रूप में दिखाई गई है। समिति की राय में 'खेती-योग्य बेकार' शीर्षक से भूमि की जानकारी प्राप्त कर लेना ही काफी नहीं है; आवश्यकता इस बात की है कि हर राज्य में बेकार भूमि की किस्म, उसके स्वामित्व, बड़े टुकड़ों में उसकी उपलब्धता तथा उसे खेती-योग्य बनाने के खर्च, आदि की पूरी जानकारी प्राप्त की जाए। समिति ने सिफारिश की है कि इस काम के लिए प्रारम्भिक सर्वेक्षण तेज़ी से किए जाएं।

9. सारांश यह कि भूमि-साधनों के बारे में उपलब्ध जानकारी अभी अधूरी है। तेज़ी से काम पूरा करने के लिए हवाई चित्रों की सहायता लेना आवश्यक है तथा भावी योजनाएं बनाने के लिए भूमि के उपयोग; भूमि-सुधार; जलमग्न, नमक एवं क्षार-वाली भूमि को खेती-योग्य बनाने तथा उत्पादक शक्ति के सम्बन्ध में पूरी जानकारी व्यवस्थित रीति से एकत्र की जानी चाहिए।

(3)
वन-साधन

10. कुल भौगोलिक क्षेत्रफल (12.6 लाख वर्गमील) में से 2.74 लाख वर्गमील अथवा लगभग 21.8 प्रतिशत क्षेत्र में वन है। जलवायु, ऊंचाई, आदि में अन्तर होने के कारण भारत के वनों में गर्म से लेकर समशीतोष्ण क्षेत्रों तक में पाई जानेवाली विभिन्न प्रकार की वनस्पतियां उपलब्ध हैं। वनों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है :

तालिका-संख्या 2

वनों का वर्गीकरण

			प्रतिशत
समशीतोष्ण क्षेत्र के वन			
जंगली फलवाले	..	..	3
चौड़े पत्तोंवाले	..	..	4
गर्म क्षेत्र के वन			
मौसमी	..	..	80
सदाबहार	..	..	12
अन्य	..	..	1

11. देश के वनों की उत्पादकता काफी हद तक बढ़ाई जा सकती है। वन प्रकृति की ऐसी देन हैं, जिसका नवीकरण बराबर किया जा सकता है और यदि समुचित देखभाल की जाए, तो चिरकाल तक उत्पादन जारी रखा जा सकता है। देश में इमारती लकड़ी, जलाने की लकड़ी, दवाओं के लिए जड़ी-बूटियों, पशुओं के चारे तथा कागज़-उद्योग के लिए कच्चे माल की बहुत कमी है।

12. औद्योगिक विकास के लिए लकड़ी और वनों की अन्य वस्तुएं एक आवश्यक कच्चा माल हैं। विगत वर्षों में देश के वन-साधनों का कभी भी समुचित अनुमान नहीं लगाया गया और कागज़ या लुगदी, प्लाईवुड, अन्य वनस्पतिजन्य पदार्थ आदि प्रचुर मात्रा में आयात किए जाते रहे। देश में ऐसे उद्योगों का विकास करने के लिए इस तरह की कच्ची सामग्रियों के बारे में जांच-पड़ताल करना बहुत महत्वपूर्ण है। देश में उद्योगों के काम आनेवाली लकड़ी की खपत प्रति व्यक्ति 0.6 घनफुट वार्षिक है, जब कि फ्रांस में यह परिमाण 16 घनफुट और जापान में 13.4 घनफुट है। भारत को इस समय 45 लाख टन औद्योगिक लकड़ी की ज़रूरत है। अनुमान है कि यह मात्रा सन् 1975 तक 90 लाख टन हो जाएगी। जलानेवाली लकड़ी की मांग सन् 1975 तक 10 करोड़ टन होने का अनुमान है।

13. यह आवश्यक है कि सघन विकास-योजनाओं के द्वारा, जिनमें अधिक उत्पादक क्षेत्रों का चुनाव, तेज़ी से बढ़नेवाले पौधों का रोपण, लकड़ी के काम के सुधरे हुए तरीकों का प्रयोग तथा संचार-साधनों का विकास शामिल है, एवं आम तौर पर वनों के विकास को आगामी वर्षों में हाथ में ली जानेवाली विशिष्ट औद्योगिक विकास-योजनाओं से जोड़ कर वर्ष-प्रति-वर्ष उत्पादन में निरन्तर वृद्धि की जाए। औद्योगिक लकड़ी की मांग और आपूर्ति अभी लगभग सन्तुलित होने पर भी, यदि इस ओर विशेष कदम नहीं उठाए गए, तो आगामी

10-15 वर्षों में इसकी भारी कमी पड़ जाएगी। इसके लिए आवश्यक है कि उत्पादन बढ़ाया जाए, पहाड़ी प्रदेशों में वनों का विस्तार किया जाए, नीची किस्म की लकड़ी का उचित उपयोग हो, जलानेवाली लकड़ी के प्रयोग में कमी की जाए और विशेष उद्योगों को ध्यान में रखते हुए वन-साधनों का व्यवस्थित सर्वेक्षण किया जाए। वनों की भूमि के सर्वेक्षण की भी आवश्यकता है, ताकि अत्यधिक कटाववाली भूमि का पता लग सके और यह मालूम पड़ सके कि स्वयं ही सुधर जानेवाली ज़मीन कितनी है और कितनी भूमि ऐसी है, जहां वन-रोपण करना ज़रूरी है। मध्य और दक्षिण-भारत के कुछ क्षेत्रों में विशेष रूप से ऐसे प्राकृतिक वन हैं, जहां के वृक्षों की लकड़ी केवल जलाने के ही काम आ सकती है। इन क्षेत्रों में मूल्यवान वन लगाए जा सकते हैं। दुर्गम इलाकों के वन-साधनों के बारे में भी जानकारी प्राप्त करना ज़रूरी है।

(4)

जल-साधन

14. जल-साधनों को दो भागों में बांटा जा सकता है: भू-स्तरीय जल और भूगर्भ-जल। सिंचाई, बाढ़-नियन्त्रण, नाला-निर्माण और अन्य उपायों से उत्पादकता बढ़ाने तथा घरेलू और औद्योगिक आवश्यकताओं की पृष्ठभूमि में ही इनके विकास पर विचार किया जाना चाहिए।

15. **भू-स्तरीय जल :** देश में वार्षिक वर्षा लगभग 300 करोड़ एकड़-फुट होती है। इसमें से लगभग 100 करोड़ एकड़-फुट पानी तो फौरन भाप बन कर उड़ जाता है और अनुमानतः 65 करोड़ एकड़-फुट पानी ज़मीन के अन्दर चला जाता है। इस प्रकार, शेष 135 करोड़ एकड़-फुट पानी ही नदियों के रास्ते बहता है। ज़मीन पर बहनेवाले इस जल का भी पूरा-पूरा उपयोग ज़मीन की बनावट, पानी के बहाव, जलवायु और मिट्टी की बनावट के कारण नहीं हो पाता। अनुमान लगाया गया है कि केवल 45 करोड़ एकड़-फुट पानी का ही उपयोग सिंचाई के लिए हो सकता है। वास्तविक उपयोग की प्रगति नीचे की तालिका में दिखाई गई है :

तालिका-संख्या 3

सिंचाई के लिए भू-स्तरीय जल का उपयोग

	लाख एकड़-फुट	उपयोग-योग्य जल का प्रतिशत	कुल बहने-वाले जल का प्रतिशत
1951 तक	760	17	6
1960-61 तक	1,200	27	9
1965-66 तक (अनुमानित)	1,600	36	12

16. **भूगर्भ-जल :** प्रतिवर्ष ज़मीन के अन्दर चले जानेवाले 65 करोड़ एकड़-फुट पानी में से 35 करोड़ एकड़-फुट ज़मीन की पहली सतह पर ही रह जाता है। इससे मिट्टी में नमी आती है, जो वनस्पति की उपज के लिए ज़रूरी है। शेष 30 करोड़ एकड़-फुट पानी ज़मीन के नीचे चला जाता है और भूगर्भ-जल की मात्रा में वृद्धि करता है। भूगर्भ

में जमा जल की मात्रा कभी भी इससे कई गुना अधिक होती है, परन्तु देशव्यापी जांच-पड़ताल के बिना इसका सही अनुमान लगाना सम्भव नहीं है। भूगर्भ-जल का वर्तमान उपयोग उसमें होनेवाली वार्षिक वृद्धि के 20 प्रतिशत से भी कम ही है। पिछले 8 वर्षों में भूमि-जल-परीक्षण-परियोजनाओं के अन्तर्गत नलकूप लगाने-योग्य क्षेत्रों का पता लगाने के प्रयत्न किए गए हैं। तीसरी योजना में 500 नलकूपों की एक परियोजना शामिल की गई है। परीक्षण-कार्य को सुविधाजनक बनाने और बड़े पैमाने पर नल धंसाने की ज़रूरत न पड़ने देने के लिए भूगर्भ की जांच-पड़ताल करने का सुझाव दिया गया है। ऐसी जांच और खोज से भूगर्भ के निचले तल का पता आसानी से चल जाएगा और भूगर्भ-स्थित जल का भी ज्ञान हो सकेगा। आन्ध्रप्रदेश में भी भूगर्भ-जल के क्षेत्रों का पता लगाने का सर्वेक्षण-कार्यक्रम चालू है, जिससे पानी निकालने तथा साफ करने के यन्त्र ज़मीन में धंसाए जा सकें।

17. **उपयोग :** पानी का मुख्य उपयोग सिंचाई और बिजली पैदा करने में होता है। इसके साथ ही जनता के सामान्य कामों तथा औद्योगिक और नौकानयन (जहाज़रानी) के लिए भी जल-साधनों का उपयोग होता है। सिंचाई के लिए जल नदी, तालाबों, आदि तथा भूगर्भ, दोनों ही साधनों से प्राप्त किया जाता है।

18. केन्द्रीय जल तथा बिजली-आयोग ने सन् 1954 में देश की विभिन्न नदी-घाटियों का अध्ययन आरम्भ किया था, ताकि बड़ी और मध्यम सिंचाई-परियोजनाओं की क्षमता का पता चल सके। इसके लिए देश को पांच भागों में बांट दिया गया था—हर क्षेत्र में कुछ नदी-घाटी-समूहों को रखा गया था। हर नदी-घाटी के लिए भौगोलिक स्थिति, वर्षा, खेती की सघनता, जलाशय बनने-योग्य स्थान, सिंचाई-योग्य क्षेत्र, जलाशय-क्षमता और अन्य सम्बद्ध विषयों का अध्ययन किया गया था। चार क्षेत्रों में तो अध्ययन प्रायः पूरा हो चुका है; पांचवें में अभी काम शुरू करना बाकी है। प्रारम्भिक अनुमान के अनुसार बड़ी और मध्यम परियोजनाओं की सिंचाई-क्षमता 10 करोड़ एकड़ (कुल) आंकी गई है, जिसका विवरण इस प्रकार है :

तालिका-संख्या 4

बड़ी और मध्यम परियोजनाओं की सिंचाई-क्षमता

(लाख एकड़)

क्षेत्र 1.	पश्चिम की ओर बहनेवाली नदियां (केरल, मैसूर और महाराष्ट्र-राज्यों की नदी-घाटियां तथा ताप्ती, नर्मदा आदि नादियों की घाटियां)	10
क्षेत्र 2.	पूर्व की ओर बहनेवाली नदियां (ताम्रपर्णी, वैगेई, कावेरी, महानदी, गोदावरी, कृष्णा, पेन्नार एवं अन्य नदियों की घाटियां)	33
क्षेत्र 3.	सिन्धु घाटी	13
क्षेत्र 4.	गंगा-घाटी (चम्बल, यमुना, रामगंगा, टोंस, गोमती, सोन, गंगा, और उसकी सहायक नदियों की घाटियां) ...	41
क्षेत्र 5.	ब्रह्मपुत्र-घाटी	3
	योग	100

दूसरी योजना के अन्त में बड़ी और मध्यम सिंचाई-परियोजनाओं-द्वारा सिंचित शुद्ध क्षेत्र 3 करोड़ 10 लाख एकड़ था।

19. खाद्य और कृषि-मन्त्रालय ने सन् 1955 में छोटी सिंचाई-समिति की स्थापना पर छोटी सिंचाई-परियोजनाओं की क्षमता का पता लगाने की दिशा में पहला व्यापक प्रयत्न किया। परियोजनाओं की जांच के लिए नियुक्ति समिति के छोटी सिंचाई-दल ने भी बाद में ऐसे ही अध्ययन-कार्यक्रम अपनाए। छोटी सिंचाई-परियोजनाओं के सम्बन्ध में कुछ राज्यों ने भी सर्वेक्षण कराए। इन सर्वेक्षणों से प्राप्त प्रारम्भिक आंकड़ों से अनुमान लगाया गया है कि छोटी-सिंचाई-परियोजनाओं की सिंचाई-क्षमता 7 करोड़ 50 लाख एकड़ (कुल) है।

20. यह स्पष्ट है कि खेती के कुल क्षेत्र की तुलना में सिंचित क्षेत्र का अनुपात बढ़ाने की बहुत गुंजायश है। अगले 20-25 वर्षों में (जब तक कुल कृषि-क्षेत्र बढ़कर 35 करोड़ एकड़ हो जाएगा) 17 करोड़ 50 लाख एकड़ (कुल) की सम्पूर्ण सिंचाई-क्षमता का उपयोग करने के बाद सिंचित क्षेत्र का अनुपात बढ़ कर 50 प्रतिशत हो जाएगा। साथ ही, पानी के कुल उपयोग की मात्रा बढ़ कर 35-40 करोड़ एकड़-फुट हो जाएगी, जो कि भू-स्तरीय और भूगर्भीय जल-साधनों से वर्ष-भर में मिलनेवाले पानी का 60 प्रतिशत भाग होगी। इसके बाद जनता की तथा औद्योगिक ज़रूरतों की पूर्ति और तापीय बिजली पैदा करने के लिए आवश्यक पानी भी काफी मात्रा में बच जाएगा। बिजली पैदा करने के लिए पानी की आवश्यकता भविष्य में बहुत अधिक बढ़ने की सम्भावना है।

21. **औद्योगिक उपयोग :** उद्योगों में पानी का उपयोग मुख्यतः मशीनों आदि को ठंडा करने, विधायन तथा बायलरों के लिए होता है। उद्योगों में पानी की आवश्यकता तेज़ी से बढ़ती जाती है। इसे देखते हुए उद्योगों में पानी-संग्रह करने तथा एक से अधिक बार उसी पानी का उपयोग करने के तरीके निकालने पर अधिक ध्यान देना ज़रूरी है। उद्योगों में प्रयुक्त पानी उचित प्रबन्ध करके दोबारा उपयोग में लाया जा सकता है।

22. उद्योगीकरण और शहरीकरण के साथ पानी के गन्दा हो जाने की महत्वपूर्ण समस्या भी सामने आ जाती है। उद्योगों में बेकार जानेवाली चीज़ों तथा अन्य गन्दगी के कारण पानी खराब हो जाता है—विशेष रूप से नदियों का पानी। इसके परिणामस्वरूप, मछलियां मरने लगती हैं और पीने का पानी गन्दा कीटाणुयुक्त हो जाता है। इस गन्दगी को समुचित रूप से नष्ट करना कठिन और खर्चीला काम है। इस समस्या की ओर अखिल भारतीय स्वच्छता और जन-स्वास्थ्य-संस्थान, भारतीय चिकित्सा-अनुसन्धान-परिषद् और जन-स्वास्थ्य-इंजीनियरी-अनुसन्धान-संस्थान समुचित ध्यान दे रहे हैं। इस दिशा में परीक्षणों तथा समन्वित कार्यों की आवश्यकता है। कल-कारखानों से निकलनेवाली गन्दगी का विश्लेषण, उससे होनेवाली पानी की गन्दगी का अनुमान, उसकी सफाई के तरीकों की खोज तथा उसके लिए मानदंड निश्चित करने की आवश्यकता है, जिससे नदियों में फेंकने से पूर्व उसके सम्बन्ध में पूरी सावधानी से जांच हो सके।

(5)
मछली-उद्योग

23. **अन्तर्देशीय मछली-उद्योग :** नदियां और उनकी सहायक छोटी नदियां, नहरें, झीलें, तालाब, जलाशय, पोखरे, आदि, जहां वर्ष-भर पानी रहता है, अन्तर्देशीय मछली-उद्योग

के लिए महत्वपूर्ण साधन हैं। प्रति वर्ष प्राप्त होनेवाली 14 लाख टन मछली में से 3 लाख टन अन्तर्देशीय जल-साधनों से प्राप्त होती है। पहली योजना में 10 लाख एकड़ से भी अधिक अन्तर्देशीय जल-क्षेत्र का सर्वेक्षण किया गया था और 68,000 एकड़ को अतिरिक्त इस्तेमाल के योग्य बना दिया गया था। दूसरी योजना में 3 लाख 40 हज़ार एकड़ जल-क्षेत्र का सर्वेक्षण हो चुका है और कुल 7 लाख 20 हज़ार एकड़ में मछलियां पाली गई हैं। तीसरी योजना में 50 हज़ार एकड़ जल-क्षेत्र में प्रदर्शन के लिए मछली-क्षेत्र बनाने, 1,500 एकड़ में मछलियों की नस्लों पर प्रयोग करने तथा 1,500–2,000 एकड़ दलदली क्षेत्र को मछलीपालन के लिए उन्नत करने की व्यवस्था है। इसके लिए गर्मियों में न सूखनेवाले जल-क्षेत्रों का पूरा सर्वेक्षण करने की आवश्यकता है, जहां मछलियां पाली जा सकें। जल-क्षेत्रों की पूरी सूची भी तैयार करना आवश्यक है, जिसमें विभिन्न किस्मों के जल-क्षेत्रों—तालाब, पोखरे, झील, नदी, आदि—का विवरण तथा उनका अलग-अलग क्षेत्रफल दिया गया हो। इसके बाद भौतिक, रासायनिक एवं जीव-विज्ञान-सम्बन्धी विशेषताओं का विस्तृत विवरण तैयार किया जाना चाहिए। इस काम के पूरा होने के बाद ही अन्तर्देशीय मछली-उद्योग के विकास के लिए ठोस आधार प्राप्त हो सकेगा।

24. **समुद्री मछली-उद्योग :** भारत में वर्ष-भर में प्राप्त होनेवाली 14 लाख टन मछली में से 11 लाख टन समुद्री मछली होती है। समुद्री मछलियों में मैकरेल, सारडाइन और प्रान सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। भारत की मछली-सम्बन्धी आवश्यकता का अनुमान लगभग 40 लाख टन है, परन्तु उत्पादन इसका लगभग चौथाई ही है। आम तौर पर समुद्री मछली-क्षेत्र तट से 6 से 10 मील दूर तक ही हैं।

भारत के समुद्री मछली-साधनों का पूरा और समुचित अनुमान भी नहीं लगाया है। इस दिशा में व्यापक सर्वेक्षण की आवश्यकता है। इसका महत्व खास कर इसलिए है कि समुद्री साधनों से मिलनेवाली मछली अन्तर्देशीय साधनों की कमी काफी हद तक पूरी कर सकती है।

(6)
खनिज साधन

25. आज की औद्योगिक अर्थव्यवस्था में खनिज साधनों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इनमें से कोयला और खनिज तेल शक्ति प्राप्त करने के स्रोत हैं तथा अन्य उद्योगों में कच्ची सामग्रियों के रूप में काम आते हैं। कुछ अन्य खनिज पदार्थों का उपयोग रबड़, लकड़ी, कपास और अन्य प्राकृतिक चीज़ों का कृत्रिम स्वरूप तैयार करने में होता है।

देश में कोयला, खनिज लोहा और अभ्रक का भांडार बहुत बड़ा है। मैंगनीज़, टाइटेनियम और अल्युमीनियम भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। चूने का पत्थर तथा रिफ्रैक्टरियों के लिए कच्ची सामग्रियां भी उपलब्ध हैं। परन्तु ताम्बा, जस्ता और सीसा कम पाया जाता है। टीन, निकेल, मोलीबदेनम और ठोस गन्धक के भी भांडार बहुत कम हैं। अभी हाल तक डिबोई (असम) के अतिरिक्त खनिज तेल का कोई और स्रोत देश के किसी भी क्षेत्र में उपलब्ध नहीं था।

26. **कोयला :** कोयला भारत की सबसे महत्वपूर्ण खनिज सम्पत्ति है और व्यापार-उद्योग में काम आनेवाली शक्ति का यही मुख्य स्रोत है। चार फुट से अधिक मोटाईवाले कोयला-भांडार की कुल मात्रा लगभग 5,000 करोड़ टन है, जिसमें से कोकिंग कोयले का परिमाण 5.6 प्रतिशत या 280 करोड़ टन है। छुटपुट भांडारों की मात्रा का अनुमान

करीब 8,000 करोड़ टन है। इसके अतिरिक्त, 207.3 करोड़ टन लिग्नाइट (भूरा कोयला) के भी मौजूद होने का अनुमान है।

कोकिंग कोयले का भांडार भविष्य की दृष्टि से चिन्तनीय है। इस्पात के प्रत्येक टन के लिए 2.2 टन कोयले की ज़रूरत पड़ती है। अगले 15 वर्षों में इस्पात के उत्पादन में तेज़ी से होनेवाली वृद्धि को देखते हुए कोयले की मांग भी निश्चय ही बहुत बढ़ेगी। इसलिए कोकिंग कोयले का सीमित भांडार सावधानी से सुरक्षित रखने की ज़रूरत है। गैर-कोकिंग कोयले की स्थिति असन्तोषजनक नहीं है, परन्तु चूंकि अधिकतर कोयला घटिया किस्म का है, अतः बढ़िया किस्म का कोयला खर्च करने में किफायत की जानी चाहिए।

कोयले का कुल भांडार मानों एक ही स्थान पर केन्द्रित हो गया है। अभी 80 प्रतिशत कोयला बिहार और पश्चिम-बंगाल के 200 मील क्षेत्र में स्थित खानों में पाया जाता है। फलतः दक्षिण और पश्चिम-भारत में उपयोग के लिए यहां से 400 से 1,400 मील दूर तक कोयला ले जाना पड़ता है। बिहार और बंगाल के बाहर की कोयला-खानों में उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं—उनका उत्पादन सन् 1951 में 57 लाख टन (कुल उत्पादन का 16 प्रतिशत) था, जो सन् 1960 में बढ़ कर 1 करोड़ 2 लाख टन (कुल का 20 प्रतिशत) हो गया। तीसरी योजना के अन्त तक बिहार और बंगाल से बाहर की कोयला-खानों का उत्पादन बढ़ कर 2 करोड़ 80 लाख टन (कुल उत्पादन का 29 प्रतिशत) हो जाने की आशा है।

27. **खनिज तेल और प्राकृतिक गैस :** कोयले के बाद व्यावसायिक शक्ति का सबसे बड़ा स्रोत खनिज तेल और प्राकृतिक गैस है। अभी तक भारत में पेट्रोल का उत्पादन काफी नहीं होता। तेल की खोज के लिए प्रयत्न जारी हैं। असम में नए तेल-कूपों से प्रारम्भिक चरणों में प्रतिवर्ष 27 लाख 50 हज़ार टन तेल मिलने की सम्भावना है। तीसरी योजना के अन्त तक इसमें भी वृद्धि होने की सम्भावना है। असम में पेट्रोल से सम्बद्ध प्राकृतिक गैस उल्लेखनीय परिमाण में उपलब्ध है; इसके अतिरिक्त असम्बद्ध प्राकृतिक गैस भी मिली है। सम्बद्ध प्राकृतिक गैस के उद्योग के लिए योजनाएं बनाई गई हैं। खम्भात और अंकलेश्वर-क्षेत्रों में कुएं खोदने के उत्साहवर्द्धक परिणाम निकले हैं और इन क्षेत्रों में सन् 1965-66 तक 20 लाख टन तेल का उत्पादन होने की सम्भावना है।

पिछले दशक में पेट्रोलजन्य उत्पादनों की खपत में वार्षिक वृद्धि 4.5 प्रतिशत थी। चालू दशक में इसके बढ़ कर 10-11 प्रतिशत होने की सम्भावना है। सन् 1960 में कुल खपत 75 लाख टन थी, जिसके सन् 1965-66 में बढ़ कर 1 करोड़ 10 लाख टन हो जाने की सम्भावना है। इसका अर्थ है कि 50 लाख टन की कमी को पूरा करने के लिए विदेशों से आयात करना पड़ेगा और इस पर 50 करोड़ रु० के बराबर विदेशी मुद्रा खर्च होगी। घरेलू आवश्यकताएं (मुख्यतः जलाने के लिए मिट्टी का तेल) कुल खपत का 25 प्रतिशत हैं। परिवहन-क्षेत्र में (डीज़ल तेल एवं गैसोलीन) खपत 30 प्रतिशत से अधिक है। उद्योग की मांग 20 प्रतिशत है, जो मुख्यतः भट्ठियों में जलनेवाले तेल की है। मिट्टी के तेल और डीज़ल की खपत में इधर कुछ वर्षों में काफी वृद्धि हुई है।

28. **अन्य खनिज पदार्थ :** यद्यपि मुख्य खनिज क्षेत्रों का विवरण प्राप्त किया जा चुका है और देश की खनिज सम्पत्ति के सम्बन्ध में मोटे तौर पर अनुमान भी लगाया जा चुका है, तथापि इधर कुछ वर्ष पहले तक देश के खनिज साधनों की मात्रा और किस्म-बन्धी विस्तृत अनुमान लगाने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया था। देश का योजनाबद्ध

विकास आरम्भ होने के साथ-साथ इस दिशा में भी व्यवस्थित और विस्तृत सर्वेक्षणों पर भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था, भारतीय खान-संस्था, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं तथा परमाणु-शक्ति-आयोग ने ध्यान दिया, ताकि अधिक महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों की किस्म एवं मात्रा का आकलन हो सके, उनका उचित इस्तेमाल हो, तथा एक ऐसी नीति अपनाई जा सके, जिससे खनिज पदार्थों का व्यवस्थित ढंग से पता लग सके और उनके संरक्षण की भी उचित व्यवस्था हो। गत 10 वर्षों में किए गए सर्वेक्षणों के परिणामस्वरूप खनिज साधनों की मात्रा और किस्म के बारे में अब अधिक जानकारी प्राप्त हुई है। खनिज मैंगनीज़ का अनुमानित भांडार 2 करोड़ टन से बढ़ कर 18 करोड़ टन हो गया है। अमजोर (बिहार) क्षेत्र में गन्धक-मिश्रित पाइराइट्स का पता चलने से स्वदेशी उत्पादन से ही गन्धक की मांग पूरी हो जाने की सम्भावना है। खनिज ताम्बा, खनिज लोहा, क्रोमाइट, बाक्साइट, मैग्नेसाइट, जिप्सम, चूने का पत्थर, सीसा और जस्ते के बारे में भी निश्चित अनुमान लगाए जा चुके हैं और मांग तथा आपूर्ति का अन्तर भी निश्चत किया जा चुका है।

राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं ने खनिज पदार्थों की किस्म सुधारने, उन्हें उपयोग-योग्य बनाने (कोयला, खनिज मैंगनीज़, ताम्बा, आदि धोने से सम्बन्धित जांच-द्वारा), बेकार चले जानेवाले पदार्थों (बेकार बच जानेवाले अभ्रक, आदि) के उपयोग की विधियां खोजने और दुर्लभ धातुओं के स्थान पर देश में सुलभ धातुओं का उपयोग करने (जैसे, निकेल-रहित स्टेनलेस स्टील और सिक्कों के काम आनेवाली मिश्रधातु तथा अल्युमीनियम-मिश्रित इस्पात के तार) के लिए जांच तथा परीक्षण किए हैं।

29. खान और खनिज पदार्थ (नियमन और विकास) अधिनियम 1948, सन्-1957 में संशोधित तथा परिवर्द्धित किया गया, और उसके अन्तर्गत बनाए गए नियमों से देश की खनिज सम्पत्ति के व्यवस्थित विकास तथा उसे पट्टे पर देने के काम में एकरूपता आ गई है। कोयला-खान-संरक्षण एवं सुरक्षा अधिनियम 1952 के अन्तर्गत कोयले के संरक्षण के तरीके अपनाने तथा उन्हें लागू करने की भी व्यवस्था की गई है।

30. हालांकि पिछले कुछ वर्षों में खनिज साधनों के अध्ययन तथा विशिष्ट क्षेत्रों में मात्रा तथा किस्म के अनुसार उनके भांडार का आकलन करने की दिशा में काफी काम हुआ है, फिर भी देश के तेज़ औद्योगिक विकास और फलस्वरूप कच्चे खनिज माल की मांग में वृद्धि को देखते हुए खनिज पदार्थों के सम्बन्ध में पूरी-पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिए खोज और जांच-पड़ताल के प्रयत्न अधिक ज़ोर-शोर के साथ किए जाने चाहिए। नीचे की तालिका में प्रमुख खनिज पदार्थों के ज्ञात भांडार, वर्तमान उत्पादन और वर्तमान खपत के आकड़ों को देख कर उपर्युक्त जांच-कार्यक्रम का महत्व अपने-आप स्पष्ट हो जाएगा :

तालिका-संख्या 5

खनिज पदार्थों का उत्पादन और उनकी मांग

खनिज पदार्थ	इकाई	अनुमित भांडार	वर्तमान उत्पादन	वर्तमान उपयोग
कोयला (गैर-कोकिंग)	लाख टन	5,00,000	307 }	518
कोयला (कोकिंग)	लाख टन	28;000	148 }	
लिग्नाइट	लाख टन	20,730	नगण्य	नगण्य

तालिका-संख्या 5—जारी

खनिज पदार्थ	इकाई	अनुमित भंडार	वर्तमान उत्पादन	वर्तमान उपयोग
खनिज तेल	लाख टन	अनुमान नहीं	2†	60†, 13‡
खनिज मैंगनीज़	लाख टन	1,800	12	3
खनिज लोहा	लाख टन	2,18,700	105	80
क्रोमाइट	लाख टन	23	1	0.2
खनिज वेनाडियम	लाख टन	267	—	—
टंग्सटन (धातु)	टन	अनुमान नहीं	3	3
निकेल (धातु)	टन	नगण्य	—	1,020
इल्मेनाइट (खनिज टाइ-टेनियम)	लाख टन	3,500	2.5	0.1
ताम्बा (खनिज)	लाख टन	329	4.4***	0.7 (धातु)
खनिज सीसा	लाख टन	107@	3,670 (धातु)	0.3 (धातु)
बाक्साइट (खनिज अॅल्यु-मीनियम)	लाख टन	2,600	3.8	1*
खनिज जस्ता	लाख टन	—	0.1**	0.6**
जिप्सम	लाख टन	11,170	9.8	9.8
मैग्नेसाइट	लाख टन	1,000	1.5	1.4
चूने का पत्थर	लाख टन	1,57,400	125	125
फास्फेटिक नोडुल्स	लाख टन	20	—	—
एपेटाइट	लाख टन	8.7	0.14	2.2
टीन (धातु)	टन	नगण्य	—	4,550
ग्रेफाइट	टन	अनुमान नहीं	1,500	2,500
गन्धक (तत्व)	लाख टन	नगण्य	—	1.8
पाइराइट्स—40% गन्धक	लाख टन	3,840	—	—
ऐस्बेस्टस	टन	5,80,000	1,683	30,000

31. खनिज पदार्थों की विशेष सघन खोज की नितान्त आवश्यकता के अतिरिक्त उनके संरक्षण के तरीकों को लागू करना भी ज़रूरी है। उनके संरक्षण का मुख्य अर्थ खान के काम में दुरुपयोग रोकना तथा दुर्लभ वस्तुओं के स्थान पर देश में ही सुलभ पदार्थों का उपयोग करना है। खानों में से पदार्थ निकालते समय दुरुपयोग रोकने का अभिप्राय चुन-चुन कर काम नहीं करना है, यानी बढ़िया और घटिया दोनों किस्म के पदार्थ निकाले जाएं और फिर उन्हें मिला कर बिक्री-योग्य किस्म का खनिज पदार्थ बना लिया जाए।

*** सन् 1959 के अंक**
**** केन्द्रित**
***** 8,767 टन धातु के बराबर**
@ खनिज जस्ता भी शामिल है
† कच्चा
‡ उत्पादन

घटिया किस्म के खनिज पदार्थों का सुधार (मैंगनीज़, कोयला, ताम्बा, आदि खनिज पदार्थों का सुधार) और खान में से पदार्थ निकालने तथा उनकी सफाई आदि के काम में प्राप्त उपोत्पादन का उपयोग भी संरक्षण के तरीकों में शामिल है।

(7)
बिजली

32. उद्योगीकरण, परिवहन सुविधाओं में वृद्धि और जीवन-स्तर ऊंचा होने के कारण देश में बिजली की मांग तेज़ी से बढ़ती जा रही है। परन्तु भारत में बिजली की खपत भी विश्व में शायद सबसे कम है।

33. **उत्पादन और उपभोग के प्रकार** : सन् 1960-61 में भारत में बिजली का उत्पादन प्रायः 16 करोड़ 50 लाख टन कोयले की शक्ति के बराबर था। शक्ति के मुख्य व्यापारिक साधन कोयला, पेट्रोल, और ऊंचाई से गिरनेवाला जल है। वायु, सौर, तरंग, भूविद्युत्, आदि साधनों से भी शक्ति प्राप्त की जा सकती है, परन्तु इसके लिए प्रौद्योगिक विकास की ज़रूरत है। फिलहाल शक्ति का 61 प्रतिशत भाग अव्यावसायिक साधनों से उपलब्ध होता है—जैसे, पशुओं का गोबर, लकड़ी, जलानेवाला कोयला, खेती की बेकार चीज़ें, आदि। नीचे की तालिका से यह स्पष्ट हो जाएगा। अव्यावसायिक साधनों से प्राप्त शक्ति के विवरण में मानवीय प्रयत्नों या चेतन स्रोतों को शामिल नहीं किया गया है। इन स्रोतों से वर्ष-भर में प्राप्त शक्ति का अनुमान 760 लाख टन कोयले के बराबर होता है।

तालिका-संख्या 6

सन् 1960-61 में शक्ति का उपयोग

स्रोत	उपभुक्त शक्ति (लाख टन कोयले के बराबर)	व्यावसायिक शक्ति का प्रतिशत	कुल शक्ति का प्रतिशत
कोयला	546	84	33
तेल	95	14.6	5.8
जल	9	1.4	0.6
योग—व्यावसायिक	650	100	39.4
गोबर	460		27.9
जलावन की लकड़ी	350		21.2
खेती से बेकार हुई वस्तुएं	190		11.5
योग—अव्यावसायिक	1,000		60.6
योग—सब साधनों से	1,650		100

34. **शक्ति के अव्यावसायिक स्रोत** : तमाम ग्रामीण क्षेत्रों और कुछ शहरी क्षेत्रों में भी पकाने और गर्मी प्राप्त करने के मुख्य साधन मवेशियों का सुखाया हुआ गोबर है। अनुमान लगाया गया है कि प्रति वर्ष 120 करोड़ टन (गीला वज़न) गोबर उपलब्ध होता है, जिसमें से 40 करोड़ टन ईंधन के रूप में और 21.5 करोड़ टन खाद के रूप में प्रयुक्त होता है, शेष नष्ट हो जाता है। शक्ति-तत्व के आधार पर देखा जाए, तो 40 करोड़ टन गोबर 4.6 करोड़ टन कोयले के बराबर है। लकड़ी का ईंधन के रूप में घरेलू उपयोग भी होता है

और कुछ उद्योगों में लकड़ी या लकड़ी के कोयले के रूप में ईंधन की लकड़ी की खपत का अनुमान 6 करोड़ टन है, जो 3.5 करोड़ टन कोयले के बराबर शक्ति देती है।

35. **शक्ति के व्यावसायिक स्रोत :** इनमें कोयला, खनिज तेल और प्राकृतिक गैस, जिन पर पिछले खंड में विचार किया जा चुका है, और बिजली, जिस पर नीचे प्रकाश डाला गया है, आते हैं।

बिजली-शक्ति : कोयला-खानों और कोयला धोने के कारखानों में घटिया तथा मध्यवर्ती किस्म का कोयला मिलेगा, जिनका उपयोग बिजली पैदा करने के लिए किया जा सकता है। कोयले से चलनेवाले बिजलीघरों के लिए ऐसी जगहें बहुत उपयुक्त होती हैं। पनबिजली-घरों की स्थापना में बहुत समय लगता है, खर्च भी अपेक्षाकृत अधिक होता है और स्वभावतः दूरस्थ स्थानों पर बनाए जाने के कारण उनकी बिजली के लिए दूर-दूर तक वितरण-व्यवस्था करनी पड़ती है। परन्तु शक्ति प्राप्त करने के ये सबसे सस्ते साधन हैं। विभिन्न प्रकार के कारखानों में उत्पादन-क्षमता का विवरण इस प्रकार है :

तालिका-संख्या 7

विभिन्न स्रोतों की उत्पादन-क्षमता

(लाख किलोवाट)

	1951	1956	1961	1966
पनबिजली	5.6	9.4	19.3	51
कोयला	15.9	22.7	34.6	70.8
तेल	1.5	2.1	3.1	3.6
न्यूक्लियर	—	—	—	1.5
योग	23	34.2	57	126.9

फिलहाल भारत में बिजली की खपत 45 किलोवाट-घंटे प्रति व्यक्ति है। सन् 1950 में यह मात्रा 14 और सन् 1958 में 35 थी। सन् 1965-66 तक प्रति व्यक्ति-खपत बढ़ कर 95 किलोवाट-घंटे हो जाएगी। वृद्धि की यह दर एक लम्बे समय तक बनाए रखनी पड़ेगी। अन्य देशों की तुलना में भारत में बिजली की खपत बहुत कम है। जापान में प्रति व्यक्ति-खपत सन् 1947 में 455 किलोवाट-घंटे थी, जो सन् 1958 में बढ़ कर 930 हो गई। इसी अवधि में इटली में बिजली की खपत की मात्रा 454 से बढ़ कर 928 किलोवाट-घंटे हो गई।

जल-शक्ति : जल-शक्ति की क्षमता का अनुमान 4 करोड़ 10 लाख किलोवाट आंका गया है, जिसका विवरण इस प्रकार है:

तालिका-संख्या 8

जल-शक्ति की क्षमता

(लाख किलोवाट)

पश्चिम की ओर बहनेवाली दक्षिण-भारत की नदियां	43.5
पूर्व की ओर बहनेवाली दक्षिण-भारत की नदियां	86.3
मध्य-भारत की नदियां	42.9
गंगा-घाटी की नदियां	48.3

तालिका-संख्या 8—जारी

सिन्धु-घाटी की नदियां	..	..	..	..	65.8
ब्रह्मपुत्र और अन्य	..	..	..	..	124.9
योग ..	..	..	..	..	411.7

कंटूर बांध, जलाशय-क्षेत्र, बहाव की विशेषताएं, स्थानीय निर्माण-सामग्रियों की उपलब्धता, आदि को ध्यान में रख कर प्रत्येक परियोजना-स्थल का विस्तृत सर्वेक्षण करने की आवश्यकता है। तभी इस क्षमता का पूरा अनुमान लग सकेगा और उपयोग किया जा सकेगा। तीसरी योजना में 64 विशिष्ट परियोजनाओं के स्थल के बारे में जांच-पड़ताल की व्यवस्था है।

न्यैष्टिक शक्ति : एक आत्मनिर्भर परमाणु-शक्ति-कार्यक्रम के लिए इंधन-सामग्री की पर्याप्त आपूर्ति एक आवश्यक शर्त है। अनेक दशकों से यह बात ज्ञात है कि केरल और मद्रास के समुद्र-तट की मोनाज़ाइट रेत में छिपा हुआ थोरियम का भांडार विश्व के सबसे बड़े भांडारों में से एक है। 9 प्रतिशत से अधिक घनत्ववाले इस थोरियम की कुल मात्रा का अनुमान 2 लाख टन है। परमाणविक खनिज-विभाग के काम के परिणामस्वरूप दूसरी योजना की अवधि में बिहार में मोनाज़ाइट का इससे भी बड़ा क्षेत्र प्रकाश में आया है, जिसमें 10 प्रतिशत से अधिक घनत्ववाला लगभग 3 लाख टन थोरियम मौजूद है। इस प्रकार, भारत के पास थोरियम का सबसे बड़ा भांडार है। यह भांडार विश्व के कुल यूरेनियम-भांडार के बराबर है। देश के विभिन्न भागों में यूरेनियम के भी भांडार मिलने का पता चला है। खुदाई, आदि के ज़रिए अभी इसकी पूरी जानकारी प्राप्त करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। बिहार में हज़ारों टन यूरेनियम का भांडार निश्चित रूप से प्रकाश में आ गया है और एक ऐसी खान में काम आरम्भ करने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं, जहां प्रति दिन 1,000 टन खनिज यूरेनियम का उत्पादन हो सकेगा। शक्ति की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने में न्यैष्टिक शक्ति-संयन्त्रों का योग क्रमशः बढ़ने की सम्भावना है।

36. **शक्ति के अपरम्परागत स्रोत** : सौर-विकिरण, वायु-गति, तरंग-शक्ति, समुद्रों और पृथ्वी की गर्मी, आदि से शक्ति प्राप्त करने के प्रयत्न विश्व के अनेक देशों में हो रहे हैं। अभी तक अनेक उपकरण खोजे और बनाए जा चुके हैं, जिनमें से सौर-शक्ति से मकान गर्म रखने, बैटरियां चलाने और वायु-शक्ति से बिजली-उत्पादन-यन्त्र चलाने के प्रयोग विशेष सफल रहे हैं। कुछ देशों में तरंगों की गति का भी उपयोग किया गया है।

भारत में सूर्य-चूल्हा, सूर्य-शक्ति से भाप बनानेवाला उपकरण और प्रोटोटाइप पवनचक्की के विकास पर काफी काम हो चुका है। सूर्य, वायु या तरंगों पर कुशलतापूर्वक एवं मितव्ययिता से नियन्त्रण करने के लिए हर उपकरण के विकास पर वर्षों के परीक्षण और अनुसन्धान की आवश्यकता पड़ती है। अपरम्परागत शक्ति-स्रोतों का इस्तेमाल करने के लिए अनुसन्धान-योजनाओं को बढ़ाया जाना चाहिए।

(8)
समुद्री साधन

37. भारत का 3,530 मील लम्बा समुद्र-तट है, उसके पार 10 हज़ार वर्गमील का विशाल महासागर है तथा तट के साथ संलग्न खाड़ियां हैं। इससे समुद्री साधनों—

समुद्री घास, मछली, अन्य भोज्य व तेलप्रदाता जीव-जन्तु तथा खनिज पदार्थों—की प्रचुरता पर प्रकाश पड़ता है। समुद्र जीव-जन्तुओं तथा वनस्पतियों का भी एक बड़ा भांडार है और वहां कलम लगाने का परिणाम वनों और घास के मैदानों से अधिक तेज़ी से प्रकट होता है। समुद्री मछली के महत्व पर पहले ही प्रकाश डाला जा चुका है। समुद्री घास (काई) एक अच्छा खाद्य-स्रोत है, जिसकी ओर भारत में अभी ध्यान नहीं दिया गया है। समुद्री काई से ही एगर-एगर, एलिगेनेट, म्युसिलेज, गोंद और आयोडिन प्राप्त होता है। इनमें से कुछ का इस्तेमाल मुरब्बे, मीठी चटनी, आदि बनाने में किया जा सकता है। अन्य देशों में समुद्री काई को पशुओं के चारे में मिला देने से बहुत लाभ हुआ है, क्योंकि उसमें वे तत्व काफी बड़ी मात्रा में रहते हैं, जिनकी सामान्यतः पशुओं के चारे में कमी होती है। इसी प्रकार, समुद्री काई और गोबर के मिश्रण से बनी खाद केवल गोबर की खाद से कहीं अधिक लाभदायक सिद्ध हुई है। केन्द्रीय समुद्री मछली-अनुसन्धान-केन्द्र, मंडपम के एक प्रारम्भिक सर्वेक्षण से संकेत मिलता है कि समुद्री काई का व्यवस्थित उपयोग लाभदायक है। भारत के समुद्री तट पर पाई जानेवाली इस काई की उपलब्धि और उसके उपयोग के सम्बन्ध में बहुमुखी सर्वेक्षण की आवश्यकता है।

38. समुद्र से खनिज पदार्थों की प्राप्ति की बहुत सम्भावना है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण खाने का नमक है। सन् 1958 में समुद्री नमक का उत्पादन 42 लाख टन था, जिसकी कीमत प्रायः 8 करोड़ 50 लाख रु० है। अभी इस नमक का बहुत कम उपयोग किया जा रहा है। यह मैगनेशियम-क्लोराइड, पोटेशियम-क्लोराइड और ब्रोमाइन का स्रोत है। इससे 10 लाख टन की सम्भावना के मुकाबले फिलहाल केवल 8,000 टन मैगनेशियम-नमक निकाला जाता है। इसी प्रकार, पोटेशियम-क्लोराइड भी कुछ सौ टन ही निकाला जाता है, जब कि मिल 90,000 टन सकता है। ब्रोमाइन भी केवल 25–30 टन प्राप्त होता है, जब कि कई हज़ार टन पैदा किया जा सकता है। समुद्र ही सोडियम, पोटाशियम, मैगनेशियम, ब्रोमाइन और क्लोरीन का सबसे बड़ा स्रोत बन सकता है। गहरे समुद्र-तल से मैंगनीज़, कोबाल्ट, निकेल, ताम्बा और थोरियम प्राप्त करने की सम्भावना हाल ही में सामने आई है। समुद्र-तल के खनिज साधनों का अनुमान लगाने के लिए अभी तक कोई सर्वेक्षण नहीं किया गया है।

(9)
सर्वेक्षण और कार्यक्रम

39. भारतीय सर्वेक्षण-संस्था, वनस्पति-सर्वेक्षण-संस्थान और प्राणि-सर्वेक्षण-संस्था को पहली दो योजनाओं में काफी सशक्त बना दिया गया था। इन संस्थाओं ने अपने-अपने क्षेत्र में काफी काम भी किया है। भारतीय सर्वेक्षण-संस्था ने बहूद्देश्यीय नदी-घाटी-परियोजनाओं, तेल-शोधनालयों, कोयला-क्षेत्रों तथा राजस्थान में सीसे के क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया है। भारतीय वनस्पति-सर्वेक्षण संस्था ने देश के पौध-साधनों की खोज आदि का काम सम्भाल रखा है। प्राणि-सर्वेक्षण-संस्था पशुओं, मछलियों, पक्षियों, कीट-पतंगों, आदि के बारे में वैज्ञानिक जानकारी के संग्रह में जुटी हुई है। इसकी खोज जन-स्वास्थ्य, कृषि और बन-उद्योग के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

40. वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् तथा राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं ने अनेक महत्वपूर्ण सर्वेक्षण किए हैं। इनमें से वायु, गति, आयातित के स्थान पर प्रयोग

के लिए खाल की सामग्रियों की खोज, सड़क बनाने के काम ग्रानेवाली सामग्रियों, ग्रौषधियों के पौधों, शीशे ग्रौर चीनी मिट्टी के लिए कच्ची सामग्रियों, रिफ्रैक्टरियों, कागज़ ग्रौर लुगदी तथा खाद्य पदार्थों एवं खेती में बेकार चली जानेवाली सामग्रियों तथा उनके उपयोग के सम्बन्ध में किए गए सर्वेक्षण उल्लेखनीय हैं।

41. पिछले कुछ वर्षों में प्रादेशिक स्तर पर ग्रनेक सर्वेक्षण किए गए हैं ग्रौर इस समय भी चल रहे हैं। योजना-ग्रायोग के तत्वावधान में भारतीय ग्रंक-संकलन-संस्थान ने मैसूर का मार्गदर्शक प्रादेशिक सर्वेक्षण किया तथा केरल-राज्य का कुछ कम विस्तृत सर्वेक्षण किया है। दामोदर-क्षेत्र का एक निदानात्मक सर्वेक्षण खड़गपुर-स्थित इंस्टीट्यूट ग्राफ टेक्नोलाजी ग्रौर कलकत्ता एवं पटना-विश्वविद्यालय मिलजुल कर कर रहे हैं। दामोदर-घाटी-क्षेत्र के लिए ग्रायोजन करने ग्रौर उसके विकास के लिए यह सर्वेक्षण बहुत महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय प्रायोगिक ग्रर्थशास्त्र-ग्रनुसन्धान-परिषद् ने सम्बद्ध राज्य-सरकारों की प्रेरणा से ग्रान्ध्रप्रदेश, ग्रसम, बिहार, केरल, मध्यप्रदेश, मद्रास, मैसूर, उड़ीसा, पंजाब ग्रौर राजस्थान तथा केन्द्रीय सरकार के ग्रनुरोध पर केन्द्रशासित प्रदेशों—हिमाचलप्रदेश, मणिपुर ग्रौर त्रिपुरा—का प्रौद्योगिक-ग्रार्थिक सर्वेक्षण किया है। इन सर्वेक्षणों से प्राप्त मूल्यवान जानकारी का उपयोग बाद के ग्रध्ययनों के लिए बहुत महत्वपूर्ण होगा। इनसे विकास की सम्भावनाग्रों का भी संकेत मिलता है, जिन पर विस्तृत विचार ग्रौर ग्रध्ययन ग्रावश्यक मालूम पड़ता है। दिल्ली के शहरी क्षेत्र में ग्रभी हाल ही में हुए सर्वेक्षण का महत्व केवल दिल्ली के विकास की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि ग्रन्य शहरों के हितार्थ होनेवाले ग्रग्रिम प्रयत्नों के ख्याल से भी बहुत महत्वपूर्ण हैं। कलकत्ता में भी एक ऐसा ही सर्वेक्षण करने का इरादा है।

42. प्राकृतिक साधनों का क्षेत्र बहुत विस्तृत है ग्रौर एक छोटे ग्रध्याय की सीमाग्रों में रह कर इस विषय की कुछ मोटी-मोटी बातों की चर्चा से ग्रधिक ग्रौर कुछ सम्भव नहीं। पिछले दस वर्ष में देश के प्राकृतिक साधनों के बारे में काफी नई जानकारी उपलब्ध हुई है। साधनों का सर्वेक्षण करनेवाले प्रमुख संस्थान ग्रब कार्यकर्ताग्रों तथा विशेषज्ञों से पूरी तरह सज्जित हैं, जिससे ग्रब वे पिछले की तुलना में ग्रधिक तेज़ी से काम कर सकते हैं। राज्य-सरकारें भी ग्रपने-ग्रपने साधनों के विस्तार ग्रौर विकास के कार्य में स्वयं ही पूरी तरह व्यस्त हैं। साधन-सम्बन्धी ग्रध्ययनों में उच्च प्रशिक्षित वैज्ञानिकों ग्रौर टेक्नोलाजिस्टों की बड़ी संख्या जुटी हुई है। सभी क्षेत्रों में प्राकृतिक साधनों के संरक्षण की बढ़ती हुई ग्रावश्यकता का महत्व समझा जा रहा है। परन्तु इस दिशा में ग्रभी बहुत-कुछ करना शेष है। राष्ट्रीय प्रयोगशालाग्रों, विश्वविद्यालयों ग्रौर ग्रन्य ग्रनुसन्धान-संस्थाग्रों में साधनों की खोज ग्रौर उनके उपयोग-सम्बन्धी मूल्यवान वैज्ञानिक ग्रनुसन्धान हो रहे हैं। ग्रौद्योगिक परिवर्तन देश के ग्रार्थिक जीवन को बदलते जा रहे हैं। ग्रार्थिक विकास के साथ-साथ टेक्नोलाजी-सम्बन्धी उन्नति भी ग्रधिकाधिक होती जाएगी ग्रौर नई-नई सम्भावनाएं पैदा होती रहेंगी। 15 ग्रौर उससे भी ग्रधिक वर्षों में फैले हुए दीर्घकालीन ग्रार्थिक विकास-कार्यक्रम का निर्माण देश के साधनों के बढ़ते हुए ज्ञान तथा वैज्ञानिक ग्रनुसन्धान के परिणामों के बीच कड़ी का काम कर सकता है। इससे कमियां भी सामने ग्रा सकेंगी ग्रौर ग्रध्ययन के लिए नए-नए विषय भी मिल सकेंगे। भावी कार्य काफी कठिन हैं ग्रौर इसके लिए योजना-ग्रायोग, केन्द्रीय सरकार की विभिन्न ग्रनुसन्धान-संस्थाग्रों,

राज्यों के विभागों, वैज्ञानिक एवं आर्थिक अनुसन्धान करनेवाली प्रमुख संस्थाओं तथा विश्वविद्यालयों के निरन्तर सहयोग की आवश्यकता है। भारत के प्राकृतिक साधनों के विकास की गुंजायश बहुत अधिक है। व्यवस्थित अध्ययन, इन साधनों की खोज तथा इनके मूल्यांकन एवं उपयोग में विज्ञान और टेक्नोलाजी के इस्तेमाल से आर्थिक विकास की सम्भावनाएं वर्तमान आशा से कहीं अधिक बढ़ सकती हैं।

अध्याय 13

सहकारिता

सहकारिता और योजनाबद्ध विकास

एक योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था में, जो समाजवाद और प्रजातन्त्र के प्रति कृतसंकल्प है, आर्थिक जीवन की विभिन्न शाखाओं—विशेषतः कृषि और छोटी सिंचाई, लघु उद्योग और विधायन, हाट-व्यवस्था, वितरण, आपूर्ति, ग्रामों का बिजलीकरण, आवास, और निर्माण-कार्य तथा स्थानीय जन-समुदाय के लिए आवश्यक सुविधाओं की व्यवस्था—में सहकारिता को, क्रमशः संगठन का मुख्य आधार बनना चाहिए। यहां तक कि मझोले एवं बड़े उद्योगों तथा परिवहन में भी अनेक कार्रवाइयां सहकारिता के आधार पर की जा सकती हैं। समाजवादी ढंग के समाज का तकाज़ा है कि कृषि, उद्योग और सेवाओं में बड़ी संख्या में विकेन्द्रित इकाइयों का निर्माण हो। सहकारिता में गरीब लोगों की स्वतन्त्रता तथा अवसरों को व्यापक स्तर के प्रबन्ध और संगठन के लाभों एवं समाज की सद्भावना और सहयोग के साथ जोड़ने की सामर्थ्य है। इस प्रकार एक द्रुत गति से विकासशील सहकारी क्षेत्र, जिसमें किसान, श्रमिक और उपभोक्ता की आवश्यकताओं पर विशेष बल दिया गया हो, सामाजिक स्थिरता, नियोजन के अवसरों के विस्तार और तेज़ आर्थिक विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सरकारी क्षेत्र और सम्पूर्ण समाज के प्रति दायित्व निभाने-वाले निजी क्षेत्र के विकास के साथ ही सहकारिता का प्रभाव सहकारी आधार पर संगठित कुछ विशिष्ट गतिविधियों से कहीं आगे बढ़ता है तथा सामाजिक ढांचे और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को सन्तुलन, निदेशन और मूल्य-ज्ञान प्रदान करता है।

2. भारत के सामाजिक और आर्थिक ढांचे के पुनर्निर्माण में आर्थिक विकास और सामाजिक परिवर्तन भी समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। अर्थव्यवस्था में बुनियादी ढंग का परिवर्तन लाने का सहकारिता एक मुख्य साधन है। जैसा कि दूसरी पंचवर्षीय योजना में कहा गया था, एक ऐसे देश में, जिसके आर्थिक ढांचे की नींव गांवों में है, सहकारिता सहकारी आधार पर संगठित कुछ गतिविधियों तक ही सीमित नहीं है; बुनियादी तौर पर इसका उद्देश्य सहकारी समुदाय-संगठन की एक ऐसी योजना तैयार करना है, जो जीवन के प्रत्येक पहलू से सम्बद्ध हो। विशेष रूप से ग्रामीण अर्थव्यवस्था में उत्पादकता के स्तर को ऊंचा उठाने, टेक्नोलाजी में सुधार करने और नियोजन के अवसर बढ़ाने के लिए, जिससे समाज के प्रत्येक सदस्य की आधारभूत आवश्यकताएं पूरी हों, सहकारिता मुख्य साधन है।

3. ग्राम-स्तर पर, सहकारिता का अभिप्रायः यह है कि सारे गांव के सामान्य हित में भूमि एवं अन्य साधनों तथा सामाजिक सेवाओं का विकास हो और ग्राम-समाज के प्रत्येक सदस्य में एक-दूसरे के प्रति दायित्व की भावना का विकास किया जाए। इसलिए इस बात की परिकल्पना की गई है कि व्यापक सहकारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था के एक अंग के रूप में नीति का उदार लक्ष्य यह होना चाहिए कि कृषि तथा अन्य अनेक आर्थिक

और सामाजिक गतिविधियों में, जिनका ग्रामीण जनता के कल्याण से गहरा सम्बन्ध है, संगठन की प्राथमिक इकाई के रूप में गांव को विकसित किया जाए। इसके साथ ही कारीगर और अन्य लोग अपने समाज के हितों के अनुरूप ऐसे सहकारी संगठनों के सदस्य बन सकेंगे, जो उनकी विशेष आवश्यकताओं को पूरा करते हों। भमि-सुधार तथा ग्राम और लघु उद्योगों के कार्यक्रम, पंचायतों का विकास और सामुदायिक विकास में समाज के दायित्वों और कर्तव्यों पर बल, आदि बातें इसी दिशा की ओर संकेत करती हैं। आगे चल कर जब कृषि-आधार सुदृढ़ हो जाएगा और ग्रामीण क्षेत्रों में पेशे-सम्बन्धी ढांचे में विविधता लाने के प्रयत्न अधिक सघन हो जाएंगे, तब एक बड़े क्षेत्र के लिए बहुत अधिक संख्या में सहकारी गतिविधियों के संगठन की आवश्यकता पड़ेगी। एक बार जब सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया गतिशील हो जाएगी तथा ग्राम समुदाय दक्षता और उत्पादकता के उच्च स्तर को प्राप्त कर लेगा, तब सहकारिता को बड़ी और अधिक जटिल मांगों की पूर्ति करनी पड़ेगी। सहकारी संगठनों के विभिन्न रूप नई आवश्यकताओं और सम्भावनाओं के अनुरूप बढ़ते ही रहेंगे।

4. गत वर्ष सहकारिता-सम्बन्धी नीतियों पर तीसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रमों के सन्दर्भ में सावधानीपूर्वक पुनर्विचार किया गया। सहकारी ऋण-समितियों और सहकारी कृषि-समितियों की संगठन-पद्धति से सम्बद्ध निर्णय तीसरी योजना के कार्यक्रमों का आधार हैं। तीसरी योजना में सहकारी ऋण और आपूर्ति; हाट-व्यवस्था और विधायन, उपभोक्ता, औद्योगिक और अन्य सहकारी समितियों के लिए विशिष्ट कार्यक्रमों की व्यवस्था की गई है। ये गतिविधि की विभिन्न दिशाएं हैं और इनमें से प्रत्येक अपने आप में महत्वपूर्ण है। फिर भी, ये भारत की अर्थव्यवस्था में एक बढ़ते हुए सहकारी क्षेत्र के विकास के लिए किए जा रहे व्यापक प्रयत्नों के अविभाज्य अंग हैं।

5. सहकारिता के विकास के लिए तीसरी योजना में 80 करोड़ रु० रखे गए हैं, जब कि दूसरी योजना में यह राशि 34 करोड़ रु० की थी।

सहकारी ऋण

6. राष्ट्रीय विकास-परिषद् ने नवम्बर 1958 में सहकारिता-नीति-विषयक एक प्रस्ताव में यह स्वीकार किया कि सहकारी समितियों का गठन ग्राम-समुदाय को प्राथमिक इकाई मान कर किया जाए तथा ग्राम-स्तर पर सामाजिक और आर्थिक विकास की पहल और ज़िम्मेदारी पूर्णतः ग्राम-सहकारी समितियों और ग्राम-पंचायतों की होनी चाहिए। सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों को, जिनका लक्ष्य जनता के ही प्रयत्नों से ग्रामीण जीवन के सभी क्षेत्रों में सुधार करना है, पूरा करने के लिए सहकारी समितियों और पंचायतों को प्राथमिक अभिकरण समझा जाना चाहिए। ग्रामीण कृषि-योजना को सहकारी विकास-कार्यक्रम की बुनियाद समझना चाहिए तथा उसे उच्च प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

7. चूंकि ये निर्णय किए जा चुके थे, सहकारी ऋण-समिति ने तीसरी योजना की विशाल आवश्यकताओं की पृष्ठभूमि में सहकारी ऋण के विकास से सम्बद्ध समस्याओं पर विचार किया। सितम्बर 1960 में राष्ट्रीय विकास-परिषद् ने इस समिति की रिपोर्ट के आधार पर प्रस्तुत एक प्रस्ताव पर विचार किया तथा यह स्वीकार किया कि सामान्यतः

ग्राम-समुदाय को प्राथमिक इकाई मान कर सहकारी समितियों का गठन किया जाना चाहिए, परन्तु जहां गांव बहुत छोटे हों, वहां एक सहकारी समिति-द्वारा सेवित गांवों की संख्या सुदृढ़ता की दृष्टि से बढ़ाई जा सकती है। लक्ष्य यह होना चाहिए कि कम से-कम गांव किसी सहकारी समिति में हों, ताकि वह सुदृढ़ हो सके और सहकारिता के मूल तत्व—यथा, स्वैच्छिक आधार, निकट सम्पर्क, सामाजिक एकता और परस्पर-दायित्व की भावना—उसमें प्रबल बन सकें। फिर भी गांवों की संख्या का विस्तार एक निश्चित सीमा के अन्दर ही होना चाहिए—जैसे, इनकी जनसंख्या 3,000 (यानी 600 परिवार या 500 कृषक-परिवार) तक हो और मुख्यालयवाले गांव से इनकी दूरी 3 या 4 मील से अधिक हो।

सहकारी समितियों की सुदृढ़ता अथवा टिकाऊपन की एक सामान्य कसौटी यह है कि वे एक निश्चित अवधि के बाद सरकारी वित्तीय सहायता के बिना ही अपने आवश्यक खर्चों को पूरा कर लेती हैं या नहीं। फिर, सुदृढ़ता का आकलन कुछ आवश्यक शर्तों की पूर्ति-सम्बन्धी कार्यक्रम के आधार पर होना चाहिए। इनमें से कुछ कार्यक्रम ये हैं—गांव के सभी परिवारों को सहकारिता की परिधि में लाना, गांव की कृषि-उत्पादन-योजना को प्रभावशाली ढंग से पूरा करना, ऋण को उत्पादन और हाट-व्यवस्था के साथ सम्बद्ध करना, ऋणों के उपयोग का निरीक्षण करना, वितरण और आपूर्ति के कार्यों को हाथ में लेना और स्थानीय बचत को अधिक-से-अधिक हिस्सा-पूंजी खरीदने और डिपाज़िट में लगाना। सामान्य रूप से प्राथमिक ग्राम-समिति के लिए 3,000 की जनसंख्या बहुत अधिक हो सकती है; अतः यह वांछनीय समझा गया कि संगठन और सहकारी समितियों के आकार के सम्बन्ध में अनुचित रूप से कोई कठोर नियम निश्चित न किए जाएं। इस व्यापक ढांचे में सहकारी समितियों को अपना विकास स्वतः करने के लिए छोड़ देना चाहिए। इस बात का विशेष आश्वासन दिया जाना चाहिए कि वर्तमान समितियों में केवल इसलिए हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा कि उनका संगठन अब निश्चित किए गए स्वरूप से पूर्णतः मेल नहीं खाता। लक्ष्य यह होना चाहिए कि इन्हें भी क्रमशः नई व्यवस्था में खपा लिया जाए।

8. संगठन का जो स्वरूप ऊपर प्रस्तुत किया गया है, उसे उचित शर्तों के आधार पर सरकारी या साझीदारी के द्वारा भी समर्थन मिलना चाहिए। प्राथमिक समिति की हिस्सा-पूंजी सरकार तभी खरीद सकती है, जब उसके 60 प्रतिशत सदस्य इस बात की इच्छा प्रकट करें, तथा इस प्रस्ताव को सम्बद्ध केन्द्रीय बैंक का भी समर्थन प्राप्त हो। इसमें सरकार के योगदान के बराबर ही समिति के सदस्यों का भी योगदान होना चाहिए। सरकार का अधिकतम योगदान सामान्यतः 5,000 रु० और विशेष अवस्थाओं में 10,000 रु० तक हो सकता है। सरकार द्वारा दी जानेवाली राशि 5 से 8 वर्ष तक रखी जा सकती है तथा उसके बाद वापस ली जा सकती है। सामान्यतः प्राथमिक समितियों में सरकारी योगदान परोक्ष ढंग का, अर्थात् शीर्षस्थ अथवा केन्द्रीय सहकारी बैंकों के ज़रिए होना चाहिए। जहां किसी विशेष कारणवश हिस्सा-पूंजी में सरकारी योगदान प्रत्यक्ष ढंग का हो, वहां प्राथमिक समितियों की व्यवस्था-समितियों के निदेशकों की नामज़दगी से बचा जाना चाहिए। अगर इस तरह की नामज़दगी आवश्यक समझी जाए, तो निदेशकों को नामज़द करने का अधिकार केन्द्रीय सहकारी बैंकों को दे दिया जाना चाहिए।

सहकारी समितियां सभी वर्ग के किसानों को—मामूली और नाममात्र के किसानों तथा भूमिहीन किसानों को भी—अपना सदस्य बनाने में समर्थ हो सकें, इसके लिए और उनके उत्पादन की आवश्यकता तथा रुपये लौटाने की क्षमता के आधार पर पर्याप्त ऋण देने के लिए यह भी मान लिया गया कि राज्य-सरकारें प्रत्येक समिति को विगत वर्ष में दिए गए ऋणों के बाद चालू वर्ष में अतिरिक्त दिए गए ऋणों का 3 प्रतिशत सीधा दे सकती हैं। केन्द्रीय सहकारी बैंक को उसके द्वारा दी गई अतिरिक्त वित्तीय सहायता के लिए बट्टा-खाते के कोश में 1 प्रतिशत का सीधा योगदान दिया जा सकता है। सघन कृषि-वाले ज़िलों में, जहां उत्पादन की आवश्यकताओं को पूरे पैमाने पर ऋण दिया जाता है, सीधा अनुदान का स्तर कुछ ऊंचा है—प्राथमिक समिति के लिए 4 प्रतिशत और केन्द्रीय बैंकों के लिए 2 प्रतिशत। इन सीधे अनुदानों को इसी शर्त पर जारी रखा जा सकता है कि समाज के निर्बल वर्ग को, जो अब तक पर्याप्त ऋण प्राप्त करने में असमर्थ था, अब आवश्यक सहायता मिल सके। प्राथमिक समितियों और केन्द्रीय बैंकों-द्वारा प्राप्त किए गए इन सीधे अनुदानों को विशेष बट्टा-खाता-कोश में जमा करा देना चाहिए। लाभ से निर्मित सामान्य बट्टा-खाता-कोश से यह कोश अलग होगा। यह आशा की गई है कि उचित समय पर पूरी सावधानी से यह अनुमान लगाया जाएगा कि किस सीमा तक प्रत्यक्ष अनुदानों से ऋण-सुविधाओं के विस्तार में सहायता मिली है।

9. हिस्सा-पूंजी में सरकारी साझेदारी तथा विशेष बट्टा-खाता-कोश में सीधे अनुदान के अतिरिक्त, नई सेवा-सहकारी समितियों और उन विद्यमान सहकारी समितियों को, जो संगठन और पुनः शक्ति-संचय, सदस्यता में वृद्धि, हिस्सा-पूंजी, हाट-व्यवस्था को ऋण से सम्बद्ध करना, आदि स्वीकृत कार्यक्रमों को हाथ में लेती हैं, प्रबन्ध-अनुदान के रूप में 3 से 5 वर्ष तक की अवधि में अधिक-से-अधिक 900 रु० दिए जाते हैं। प्रबन्ध-अनुदान केवल उन्हीं समितियों को देने के लिए है, जो वस्तुतः विभिन्न सेवा-कार्यों —मुख्यतः ऋण का वितरण, उत्पादन की आवश्यकताओं की आपूर्ति और कृषि-उत्पादन के लिए हाट-व्यवस्था—को अपने हाथ में लेती हैं।

10. प्रथम दो योजनाओं की अवधि में प्राथमिक कृषि-ऋण-समितियों की संख्या 1,05,000 से बढ़ कर 2,10,000 तथा उनके सदस्यों की संख्या 44 लाख से बढ़कर 1 करोड़ 70 लाख हो गई। इसी अवधि में प्राथमिक कृषि-समितियों-द्वारा दिए गए कुल ऋणों की राशि 23 करोड़ रु० से बढ़कर 200 करोड़ रु० हो गई। जैसा कि नीचे की तालिका से स्पष्ट है, पहली योजना की तुलना में दूसरी योजना की अवधि में इस दिशा में कहीं अधिक प्रगति हुई :

तालिका-संख्या 1

प्राथमिक कृषि-ऋण-समितियों की प्रगति : पहली और दूसरी योजना

अवधि	समितियों की संख्या	सदस्य-संख्या (लाख)	(अल्प और मध्यम-कालीन ऋण की राशि (करोड़ रु०)
पहली योजना			
1950-51	1,04,998	44	22.9
1955-56	1,59,939	78	49.6

तालिका-संख्या 1—जारी

अवधि	समितियों की संख्या	सदस्य-संख्या (लाख)	(अल्प और मध्यम-कालीन ऋण की राशि (करोड़ रु०)
दूसरी योजना			
1956-57	1,61,510	91	67.3
1957-58	1,66,543	102	96.1
1958-59	1,82,905	119	125.5
1959-60	2,03,172	144	169.1
1960-61 (अनुमान)	2,10,000	170	200

दूसरी योजना की अवधि में, जहां तक दीर्घकालीन उधार का सम्बन्ध है, अवशिष्ट ऋणों की राशि 13 करोड़ रु० से बढ़ कर लगभग 34 करोड़ रु० हो गई।

11. तीसरी योजना में सहकारी ऋण के विस्तार-कार्यक्रमों को तैयार करते समय यह बात मुख्यतः ध्यान में रखी गई कि योजना में निर्धारित विशाल कृषि-लक्ष्यों की पूर्ति के लिए होनेवाले, प्रयत्नों को पर्याप्त समर्थन प्राप्त हो। योजना में यह आशा की गई है कि प्राथमिक सहकारी समितियों की सदस्य-संख्या बढ़ कर 3 करोड़ 70 लाख हो जाएगी और उनकी परिधि में लगभग 60 प्रतिशत कृषक जनता आ जाएगी। आशा की जाती है कि इन समितियों की संख्या बढ़ कर 2,30,000 हो जाएगी तथा देश के प्रत्येक गांव को इनकी सेवा प्राप्त होने लगेगी। अनुमान है कि अल्प और मध्यम-कालीन ऋणों की कुल राशि बढ़ कर 530 करोड़ रु० तथा दीर्घकालीन (अवशिष्ट) ऋणों की राशि लगभग 150 करोड़ रु० हो जाएगी। अनुबन्ध के विवरण 1 और 2 में अल्प और मध्यकालीन ऋणों की वर्तमान स्थिति तथा दूसरी और तीसरी योजना के अन्त में विभिन्न राज्यों में दीर्घकालीन ऋणों की स्थिति स्पष्ट की गई है।

12. तीसरी योजना के कृषि-कार्यक्रम सहकारिता-आन्दोलन को सशक्त बनाने की योजनाओं की सफलता पर अत्यधिक निर्भर करते है। पहली योजना के अन्त में जो 1,60,000 प्राथमिक समितियां थी, उनमें से अधिकांश या तो निष्क्रिय थीं या अत्यधिक बुरी हालत में थीं। दूसरी योजना की अवधि में 42,000 समितियों में पुनः जीवन फूंकने का कार्य हाथ में लिया गया। तीसरी योजना के कार्यक्रम में 52,000 प्राथमिक समितियों को पुनर्जीवित करने की व्यवस्था है। पुरानी समितियों को, जो अत्यधिक असन्तोषजनक ढंग से काम कर रही थीं, पुनर्जीवित करना तथा सहकारिता-आन्दोलन का विस्तार मुख्यतः इस बात पर निर्भर करेगा कि प्राथमिक ऋण-समितियां किस सीमा तक अपनी सदस्य-संख्या बढ़ाने, स्थानीय बचत को गतिशील बनाने, प्रबन्ध को सुधारने और ऋण को हाट-व्यवस्था तथा उत्पादन के साथ जोड़ने में सफलता प्राप्त करती हैं। प्राथमिक और उच्चतर स्तरों पर ऋण-संगठनों के आन्तरिक स्रोतों को सुदृढ़ बनाने के लिए ये कदम उठाना आवश्यक है। उन राज्यों में, जहां सहकारिता-आन्दोलन निर्बलावस्था में है, तीसरी योजना के कार्यक्रमों को मूर्त रूप देने के लिए प्रथम कदम के रूप में सहकारिता को संगठित एवं पुनर्जीवित करना महत्वपूर्ण है।

13. योजना में आशा की गई है कि विभिन्न स्तरों पर सहकारिता-आन्दोलन के आन्तरिक साधनों में बड़े पैमाने पर वृद्धि होगी। इस प्रकार, प्राथमिक सहकारी समितियों की हिस्सा-पूंजी (सरकारी हिस्सों से अलग) सन् 1959-60 के 42 करोड़

रु० से बढ़ कर सन् 1965-66 में 85 करोड़ रु०, केन्द्रीय सहकारी बैंकों की हिस्सा-पूंजी 23 करोड़ रु० से बढ़ कर 62 करोड़ रु० और शीर्षस्थ बैंकों की हिस्सा-पूंजी 9 करोड़ रु० से बढ़ कर लगभग 33 करोड़ रु० हो जाएगी। यह भी अनुमान लगाया गया है कि सन् 1959-60 और 1965-66 के बीच प्राथमिक सहकारी समितियों की जमा-राशि लगभग 12 करोड़ रु० से बढ़ कर लगभग 42 करोड़ रु०, केन्द्रीय बैंकों की जमा-राशि लगभग 95 करोड़ रु० से बढ़ कर लगभग 212 करोड़ रु० और शीर्षस्थ बैंकों की जमा-राशि 60 करोड़ रु० से बढ़ कर 142 करोड़ रु० हो जाएगी।

14. उत्पादन की वर्तमान आवश्यकताएं सेवा-सहकारी समितियों-द्वारा दिए गए अल्प और मध्यमकालीन ऋणों से पूरी होती हैं। भूमि की उत्पादन-क्षमता बढ़ाने के लिए दीर्घकालीन और मध्यमकालीन ऋण भी उतने ही आवश्यक हैं। ये आवश्यकताएं मुख्यतः सहकारी भूमि-बन्धक बैंकों-द्वारा पूरी की जानी चाहिए। दूसरी योजना के अन्त में लगभग सभी राज्यों में केन्द्रीय भूमि-बन्धक बैंक या शीर्षस्थ सहकारी बैंकों से सम्बद्ध विशेष भूमि-बन्धक बैंकिंग-विभाग स्थापित हो गए थे। सन् 1959-60 में 407 प्राथमिक भूमि-बन्धक बैंक थे। तीसरी योजना में 265 नए प्राथमिक भूमि-बन्धक बैंक खोलने का प्रस्ताव है। केन्द्रीय भूमि-बन्धक बैंक सीधे या अपने से सम्बद्ध प्राथमिक बैंकों-द्वारा जो ऋण देते हैं, उनके कोश का मुख्य स्रोत ऋणपत्र (डिबेंचर) हैं। दीर्घकालीन ऋण (अवशिष्ट ऋण) के 150 करोड़ रु० के लक्ष्य की पूर्ति बहुत-कुछ भूमि-बन्धक बैंकों को पूंजी-विनियोग करनेवाली संस्थाओं-द्वारा मिलनेवाले समर्थन पर निर्भर करती है। यह एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें रिज़र्व बैंक आफ इण्डिया, स्टेट बैंक आफ इण्डिया और जीवन-बीमा-निगम-जैसी सरकारी संस्थाओं से ही सर्वाधिक सहायता प्राप्त होगी।

15. दीर्घकालीन ऋणों के लिए उपलब्ध साधनों को बढ़ाने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक आफ इण्डिया केन्द्रीय सरकार से परामर्श कर कृषि-विकास-वित्त-निगम की स्थापना के प्रश्न पर विचार कर रहा है। यह निगम केन्द्रीय भूमि-बन्धक बैंकों-द्वारा सामान्य अवस्था में जारी किए गए ऋणपत्र खरीदेगा और कृषि-उत्पादन बढ़ानेवाली उन योजनाओं के लिए धन की व्यवस्था करेगा, जो फलदायक ढंग की तो हैं, पर जिनमें काफी पूंजी लगाने की ज़रूरत है या जिनकी फल-प्राप्ति में बहुत समय लगनेवाला है—जैसे, रबड़, कहवा, काजू और सुपारी के बागान; सिंचाई, कंटूर बांध और भूमि-संरक्षण; तथा फलों के बाग और उद्यान लगाना एवं उनका विकास करना। निगम-द्वारा दिए गए ऋण केन्द्रीय भूमि-बन्धक बैंकों के माध्यम से प्राप्त होंगे।

16. रिज़र्व बैंक आफ इण्डिया ने प्रथम दो योजनाओं की अवधि में सहकारिता-आन्दोलन के सुसंगठन में वित्तीय संस्थाओं के निरीक्षण, प्रशिक्षण की व्यवस्था, सहकारी समितियों में हिस्सा-पूंजी लगाने के लिए राज्य-सरकारों को ऋण-दान और सहकारी बैंकों के लिए उधार की व्यवस्था-द्वारा एक निर्णायक भूमिका अदा की है। इसकी अवशिष्ट ऋण-राशि सन् 1955-56 के 14 करोड़ रु० से बढ़ कर सन् 1959-60 में लगभग 85 करोड़ रु० हो गई। अर्थव्यवस्था की वृद्धिशील आवश्यकताओं और तीसरी योजना के कृषि-विषयक लक्ष्यों तथा उधार-सम्बन्धी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए रिज़र्व बैंक से पहले की अपेक्षा कहीं बड़ी भूमिका अदा करने के लिए कहा जाएगा।

बैंक को अनिवार्यतः उधार लेनेवाली संस्थाओं की वित्तीय स्थिति सुदृढ़ बनाने और प्रशासनिक योग्यता बढ़ाने की दृष्टि से अग्रिम धन देना होगा, इसके साथ ही, उसे उधार राशि के उपयोग के निरीक्षण एवं अतीत में ऋणों की अदायगी से सम्बद्ध बातों पर भी ध्यान देना होगा। रिज़र्व बैंक को इस बात का भी ख्याल रखना होगा कि प्रत्येक राज्य का सहकारिता का ढांचा किस सीमा तक जमा-पूंजी को गतिशील बनाने और अपने साधन-स्रोतों के निर्माण में सफलता प्राप्त करता है। रिज़र्व बैंक सहकारिता-आन्दोलन के वित्तीय ढांचे के पुनर्गठन के लिए उन राज्यों की सरकारों को सहायता देने का विशेष प्रयत्न कर रहा है, जहां प्रथम दो योजनाओं की अवधि में इस दिशा में पर्याप्त प्रगति नहीं हुई है।

17. स्टेट बैंक आफ इण्डिया ने भी सहकारिता-आन्दोलन को पर्याप्त सहायता प्रदान की है। सहकारी सस्थाओं की—विशेष रूप से उनकी, जो हाट-व्यवस्था और विधायन के कार्यों में लगी हैं—वित्तीय आवश्यकताओं के प्रति सहानुभूति की नीति अपनाते हुए स्टेट बैंक ने रुपये भेजने की निःशुल्क सुविधाएं प्रदान कीं और आसान शर्तों पर ऋण दिए। इसने भूमि-बन्धक बैंकों के कार्यों को भी उनके द्वारा समय-समय पर जारी किए गए ऋणपत्र खरीद कर और ऋणपत्रों के जारी होने तक की अल्पकालीन अवधि में अन्तरिम सहायता देकर प्रोत्साहित किया है। एक ओर हाट-व्यवस्था और विधायन-समितियों का काम बढ़ने तथा दूसरी ओर स्टेट बैंक और उसके सहायक कार्यालयों का विस्तृत जाल बिछ जाने के कारण जिन नीतियों और प्रक्रियाओं को जन्म दिया गया है, उनके चलते बैंक को इस स्थिति में आ जाना चाहिए कि वह तीसरी योजना में और बड़े पैमाने पर सहकारी समितियों के लिए अपनी सहायता का विस्तार कर सके।

सहकारी हाट-व्यवस्था

18. ग्रामीण ऋण-सर्वेक्षण में सम्बद्ध ग्रामीण ऋण-योजना की जो सिफारिश की गई है, उसमें सहकारी हाट-व्यवस्था के विकास को विशेष महत्व का स्थान दिया गया है। प्राथमिक हाट-व्यवस्था-समितियों को मुख्य बाज़ारों या अन्य उपयुक्त स्थानों पर स्थापित किया जाना था, और इनके साथ प्राथमिक कृषि-ऋण-समितियां सम्बद्ध की जानी थीं। हाट-व्यवस्था-समितियों को कर्मचारियों के रूप में सहायता दी जानी थी और उनकी हिस्सा-पूंजी में राज्य-सरकारों को भी हिस्सा लेना था। मुख्यतः इसी आधार पर दूसरी योजना की अवधि में 1,869 प्राथमिक हाट-व्यवस्था-समितियों को राष्ट्रीय सहकारिता-विकास और भांडारण-मंडल के द्वारा सहायता मिली। तीसरी योजना में प्रस्तावित 600 अतिरिक्त हाट-व्यवस्था-समितियों की स्थापना हो जाने के बाद देश की 2,500 मंडियों में से प्रत्येक में या उनके निकट एक हाट-व्यवस्था-समिति स्थापित हो जाएगी। इन हाट-व्यवस्था-समितियों के अतिरिक्त गन्ना-आपूर्ति-समितियों का, जो बिहार और उत्तरप्रदेश में बड़ी संख्या में हैं; कपास ओटने और उनकी गांठें बांधने की समितियों का, जो गुजरात और महाराष्ट्र में सफलतापूर्वक काम कर रही हैं; अनेक राज्यों में हाल में स्थापित दूध-आपूर्ति-संघों का भी उल्लेख किया जा सकता है।

19. उत्पादक के लिए अनुकूल शर्तों पर कृषि-उत्पादनों को बेचने के अपने काम के अलावा हाट-व्यवस्था-समितियों से यह भी आशा की जाती है कि वे कृषि-उत्पादन के लिए

किसानों-द्वारा वांछित सामान के वितरक का भी काम करेंगी। ये कृषि- ऋण-अनुदानों और हाट-व्यवस्था के बीच सम्बन्ध-स्थापना के लिए भी आवश्यक हैं। हाट-व्यवस्था-समितियों की कार्रवाइयों के बारे में उपलब्ध आंकड़े अनेक दृष्टि से अपूर्ण हैं। फिर भी, अनुमान है कि इस समय हाट-व्यवस्था-समितियां कृषि-उत्पादन का जो व्यापार कर रही हैं, वह लगभग 200 करोड़ रु० का है। इस राशि के बढ़ कर 400 करोड़ रु० हो जाने की आशा की जाती है। खाद्यान्नों और व्यावसायिक फसलों के बचे हुए फालतू परिमाण के अधिकांश के व्यापार की व्यवस्था सहकारी समितियों-द्वारा किए जाने की चेष्टा की जाएगी। निर्यात-व्यापार में भी सहकारी समितियों को हिस्सा लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। हाट-व्यवस्था-समितियां सहकारी वित्त-अभिकरणों से और बहुत-कुछ स्टेट बैंक आफ इण्डिया से भी धन प्राप्त करती हैं। इनकी मुख्य समस्याएं चालू लेन-देन के लिए पर्याप्त धन जुटाना, प्रबन्ध में सुधार करना और अपने सदस्यों से अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करना हैं। मूल्यों को स्थिर करने की नीतियों से सहकारी हाट-व्यवस्था के विकास और उधार के विस्तार में बड़ी सुविधा हो जाएगी। राष्ट्रीय सहकारिता-विकास और भांडारण-मंडल के सुझाव पर पश्चिम-बंगाल में पटसन, राजस्थान में गेहूं और आन्ध्रप्रदेश में धान की सहकारी हाट-व्यवस्था के सम्बन्ध में विशिष्ट समस्याओं की जांच की जा रही है।

मंडियों और गांवों में गोदामों के निर्माण का कार्यक्रम हाट-व्यवस्था के कार्यक्रम से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। दूसरी योजना की अवधि में लगभग 1,670 गोदाम बनाए गए। तीसरी योजना की अवधि में लगभग 980 अतिरिक्त गोदामों की स्थापना की आशा है। दूसरी योजना के अन्त तक 4,100 ग्रामीण गोदाम बनाए जा चुके थे। तीसरी योजना की अवधि में इनकी संख्या बढ़ कर 9,200 हो जाने की आशा की जाती है।

सहकारी विधायन

20. सहकारी विधायन का विकास न केवल ग्रामीण आय को बढ़ाने और उत्पादन के लिए ऋण-सुविधाएं प्राप्त करने के लिए, अपितु सहकारिता के आधार पर ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के निर्माण के लिए भी आवश्यक है। जहां सहकारी विधायन-इकाइयां सफलतापूर्वक स्थापित की जा चुकी हैं, वहां वे अनेक सम्बद्ध क्षेत्रों के विकास में बहुत मूल्यवान सिद्ध हुई हैं। सहकारी विधायन एक अपेक्षाकृत नई शुरुआत है। तुलनात्मक दृष्टि से अन्य विधायन-उद्योगों की अपेक्षा चीनी और कपास को ओटने और उसकी गांठें बांधने के काम में अधिक प्रगति हुई है। सन् 1960-61 में कुल 41 में से 30 चीनी के सहकारी कारखाने उत्पादन में संलग्न थे। तीसरी योजना की अवधि में चीनी उद्योग की प्रगति के तथ्यों पर निर्भर करते हुए 25 नए सहकारी चीनी-कारखानों के स्थापित होने की आशा है। सहकारी चीनी-उद्योग के विकास में औद्योगिक वित्त-निगम ने काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। तीसरी योजना में सहकारी चीनी-कारखानों को सहायता जारी रखने के अलावा, निगम अन्य क्षेत्रों में सहकारी विधायन के विकास को बढ़ावा देने में समर्थ हो सकेगा। हाल में इस दिशा में जो एक महत्वपूर्ण बात हुई है, वह है सहकारी चीनी-कारखानों के राष्ट्रीय संघ की

स्थापना। इसका उद्देश्य वर्तमान कारखानों की कार्यदक्षता बढ़ाना और नई इकाइयों का उन्नति-साधन करना है।

दूसरी योजना की अवधि में चीनी-कारखानों के अलावा 378 सहकारी विधायन-इकाइयों को सहायता दी गई। इनमें 84 कपास ओटने और उनकी गांठें बांधने की इकाइयां, 109 चावल की मिलें, 20 तेल-मिलें, 17 पटसन की गांठें बांधने के संयन्त्र, 26 मूंगफली का छिलका उतारने के संयन्त्र और 122 अन्य इकाइयां सम्मिलित थीं। तीसरी योजना के कार्यक्रम में 783 सहकारी विधायन-इकाइयों की स्थापना की व्यवस्था है। इनमें 48 कपास ओटने, और उसकी गांठें बनाने के संयन्त्र, 36 चावल-मिलें, 29 पटसन की गांठें बांधने के संयन्त्र, 33 तेल-मिलें, 63 मूंगफली के छिलके उतारने के सम्बन्ध में संयन्त्र, 77 फलों को डिब्बों में बन्द करने की इकाइयां, 411 धान कूटने की इकाइयां तथा 86 अन्य इकाइयां होंगी।

21. हाल के वर्षों में सहकारी चीनी-उद्योग ने जो द्रुत प्रगति की है, उससे अन्य क्षेत्रों में भी सहकारी विधायन-इकाइयों के संगठन के बारे में द्विविध सुझाव सामने आया है। पहली बात यह कि कृषिगत कच्ची सामग्रियों के उत्पादन और अन्तिम उत्पादन के उपभोग में प्रत्याशित वृद्धि की दृष्टि से आवश्यक उद्योग की हर शाखा में नई इकाइयों की संख्या के सम्बन्ध में सम्पूर्ण कार्यक्रम बनाए जाएं। इस योजना के अधीन, सहकारी क्षेत्र का कितना विस्तार अपेक्षित है, इसका निश्चय व्यापक ढंग से विचार के बाद किया जाना चाहिए। विशिष्ट प्रस्ताव के निर्माण को सुगम बनाने के लिए संयन्त्र के डिज़ाइन, पूंजी-विनियोग और निर्माण-व्यय के अनुमान तथा अन्य तकनीकी आंकड़े आसानी से उपलब्ध होने चाहिए। साथ ही, सहकारी चीनी-कारखानों की तरह अन्य प्रकार की विधायन-इकाइयों के लिए वित्तीय व्यवस्था का संकेत दिया जाना चाहिए और उत्पादकों, राज्य-सरकारों तथा उपयुक्त वित्तीय संस्थाओं के सम्भावित योगदान को पहले ही निश्चित रूप से बता दिया जाना चाहिए। निकट भविष्य में केन्द्र और राज्य-सरकारों-द्वारा राष्ट्रीय सहकारिता-विकास और भांडारण-मंडल के परामर्श से इन आधारों पर व्यवस्था की जानी चाहिए। इस पृष्ठभूमि में स्थानीय आयोजन के एक पहलू के रूप में और प्रत्येक ज़िले में सहकारिता की दृष्टि से ग्रामीण अर्थव्यवस्था के ढांचे को सुदृढ़ करने के लिए ठोस प्रस्ताव आमन्त्रित किए जाने चाहिए। यदि आवश्यक परिस्थितियां प्रदान की जाएं, तो सहकारी विधायन के विकास के लिए व्यापक क्षेत्र उपलब्ध है। यह बात न केवल नई इकाइयों के बारे में लागू होती है, अपितु क्रमशः ऐसी इकाइयों के सहकारिता के आधार पर पुनर्गठन के लिए भी लागू होती है, जो इस समय निजी स्वामित्व में चल रही हैं। यह दूसरा पहलू व्यापक दृष्टि से देखने पर काफी महत्वपूर्ण सिद्ध होता है, क्योंकि प्रथमतः सार्वजनिक नीति का यह लक्ष्य है कि विधायन-उद्योगों का पुर्नगठन निजी स्वामित्व के स्थान पर सहकारिता के आधार पर किया जाए और दूसरे, ऐसे अनेक उद्योगों में या तो क्षमता आवश्यकता से अधिक है या उनकी वर्तमान क्षमता को अधिक बढ़ाया नहीं जा सकता। यह आवश्यक है कि विधायन-उद्योगों के विस्तार के प्रस्ताव सम्बद्ध ग्रामोद्योगों के कार्यक्रमों से तालमेल रखनेवाले हों। विधायन और अन्य प्रयोजनों के लिए बड़े सहकारी उद्योगों के संगठन में श्रमिकों और कर्मचारियों की स्थिति पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। उन्हें इस बात का अवसर मिलना चाहिए कि जिस सहकारी उद्योग में वे काम करते हैं, उसकी व्यवस्था में हिस्सा ले सकें।

सहकारी कृषि

22. पहली और दूसरी, दोनों ही योजनाओं में ग्रामीण अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण में सहकारी कृषि की भूमिका पर बल दिया गया था। दूसरी योजना में इस बारे में निर्धारित लक्ष्य में कहा गया था कि ऐसे आवश्यक कदम उठाए जाने चाहिए, जिनसे सहकारी कृषि के लिए एक सुदृढ़ आधार तैयार हो सके और लगभग 10 वर्षों में कृषि-भूमि के एक बड़े हिस्से में सहकारी आधार पर खेती शुरू हो जाए। जनसंख्या में वृद्धि और कृषि-उत्पादन तथा ग्रामीण रोज़गार तेज़ी से बढ़ाने की आवश्यकता के कारण यह अनिवार्य हो गया है कि सहकारी कृषि के विकास-सम्बन्धी प्रयत्नों को ज़ोरदार बनाया जाए और जितनी जल्दी हो सके, दूसरी योजना में निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त किया जाए। मुख्यत: सहकारी कृषि की उन्नति सामुदायिक विकास-आन्दोलन के सामान्य कृषि-सम्बन्धी प्रयत्नों की सफलता; ऋण, हाट-व्यवस्था, वितरण एवं विधायन में सहकारिता की प्रगति; ग्रामोद्योगों के विकास और भूमि-सुधार के लक्ष्यों की पूर्ति पर निर्भर करती है। ग्रामीण प्रगति में सहकारी कृषि का योगदान उसी हद तक महत्वपूर्ण होगा, जिस हद तक यह वास्तविक स्थानीय नेतृत्व में एक स्वैच्छिक सामहिक आन्दोलन का रूप धारण करेगी और ग्राम स्तर पर सामुदायिक विकास तथा सहकारिता की तर्कसंगत परिणति सिद्ध होगी। सामुदायिक विकास की दृष्टि और ग्राम-समुदाय-द्वारा अपने प्रत्येक सदस्य के कल्याण की ज़िम्मेदारी स्वीकार किए जाने के बाद सहकारी कृषि की मुख्य समस्याएं संगठनात्मक, तकनीकी और शिक्षा-सम्बन्धी हैं। आन्तरिक प्रबन्ध की समस्याओं पर, जो अनेक सहकारी कृषि-समितियों के सामने उपस्थित हैं, सिलसिलेवार ढंग से विचार करने और उनके विभिन्न क्षेत्रों के लिए व्यावहारिक हल ढूंढ़ने की आवश्यकता है।

23. सहकारी कृषि से सम्बद्ध कार्यकारी दल ने अनेक विद्यमान सहकारी कृषि-समितियों का सर्वेक्षण करने के उपरान्त इन समस्याओं पर सामान्य रूप से विचार किया है। इस दल ने संगठन और सहायता के स्वरूप के सम्बन्ध में तो अपनी सिफारिशें पेश की ही हैं, मार्गदर्शक परियोजनाओं की एक योजना का भी सुझाव दिया है, जिसका उद्देश्य सहकारी कृषि के द्रुत विस्तार का मार्ग प्रशस्त करना है। कार्यकारी दल की सिफारिशों के आधार पर तैयार किए गए प्रस्तावों पर राष्ट्रीय विकास-परिषद् ने सितम्बर 1960 में विचार किया। परिषद् ने सहकारी कृषि-समितियों के संगठन और उन्हें दी जानेवाली सहायता के बारे में कुछ व्यापक निदेशक सिद्धान्त निश्चित किए।

सहकारी कृषि के कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए सामुदायिक विकास और सहकारिता-मन्त्रालय ने राष्ट्रीय सहकारी कृषि-परामर्शदाता-मंडल की स्थापना की है। कुछ राज्यों में भी इसी प्रकार के मंडल बनाए गए हैं। सहकारी कृषि से सम्बद्ध कार्यकारी दल ने मार्गदर्शक परियोजनाओं के रूप में 3,200 सहकारी कृषि-समितियां—प्रत्येक ज़िले में मोटे तौर पर दस समितियां—स्थापित करने का सुझाव दिया था। सहकारी कृषि के विकास-कार्यक्रम के ये प्रथम चरण-स्वरूप हैं। तीसरी योजना के प्रथम वर्ष में इस कार्यक्रम को लागू करने के लिए हाल में ही 65 मार्गदर्शक ज़िलों का चुनाव किया गया है। सरकारी और गैर-सरकारी कर्मचारियों को इस सम्बन्ध में आवश्यक ज्ञान उपलब्ध कराने के लिए एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया जा रहा है। मार्गदर्शक परियोजनाओं

के अतिरिक्त, राज्य-सरकारें उन सहकारी कृषि-समितियों को, जो स्वेच्छा से बनाई गई हैं, सहायता प्रदान करती रहेंगी।

24. सहकारी कृषि के विकास के लिए संगठन का जो सामान्य स्वरूप प्रस्तुत किया गया है, उसमें इस सिद्धान्त पर बल दिया गया है कि सहकारी कृषि एक स्वैच्छिक आन्दोलन है और सहकारी कृषि-समिति का सदस्य बनने के लिए किसी किसान पर दबाव डालने का कोई प्रश्न नहीं उठना चाहिए। सहकारी कृषि-समितियों की सदस्यता केवल उन्हीं लोगों तक सीमित रहनी चाहिए, जो खेत में काम करने या उससे सम्बद्ध कार्यों में भाग लेने को तैयार हों। सामान्यत: स्वयं कृषि-कार्य न करनेवाले भू-स्वामियों को इसका सदस्य नहीं बनाना चाहिए। ऐसे व्यक्तियों को, जो विकलांगता, सरकारी नौकरी, उम्र, स्त्री होने या एक से अधिक गांवों में भूमि होने के कारण खेती के काम में भाग नहीं ले सकते, खेती के काम में हिस्सा न लेने पर भी सदस्य बनाया जा सकता है, परन्तु ऐसे व्यक्तियों की संख्या कुल सदस्य-संख्या के एक-चौथाई भाग से अधिक नहीं होनी चाहिए।

सहकारी खेतों के आकार के प्रश्न पर दो दृष्टियों से विचार किया जाना चाहिए। प्रथमत:, खेत का आकार इतना बड़ा हो कि उसमें काम करना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक सिद्ध हो, और दूसरी बात, सहकारी कृषि को किस ढंग से विकसित किया जाए कि पंचवर्षीय योजनाओं में प्रस्तुत आधार पर गांव की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का विकास हो। यद्यपि सहकारी खेतों के आकार के सम्बन्ध में कोई अधिकतम सीमा निश्चित नहीं की गई है, तथापि राज्य-सरकारें विशेष सरकारी सहायता के प्रयोजन से सदस्यता और क्षेत्र के सम्बन्ध में कुछ न्यूनतम उपयुक्त शर्तें निश्चित कर सकती हैं।

सहकारी कृषि-समिति के सदस्यों से यह आशा की जाती है कि वे अपनी भूमि कम-से-कम 5 वर्ष के लिए अन्य लोगों की भूमि के साथ संयुक्त रखेंगे। इस अवधि में विशेष परिस्थितियों में ही किसी को अपनी भूमि वापस लेने की अनुमति मिल सकती है। सहकारी कृषि-समितियों से यह आशा की जाती है कि वे सदस्यों को उनके द्वारा दी गई भूमि के लिए भी उचित मुनाफा प्रदान करेंगे—उनके काम के एवज़ में तो उन्हें मुनाफा मिलेगा ही। यद्यपि सहकारी कृषि के लिए खेतों की चकबन्दी आवश्यक नहीं मानी गई है, तथापि यह सुझाव रखा गया है कि सहकारी कृषि को प्रोत्साहित करने के लिए चकबन्दी की व्यवस्था का लाभ उठाया जाए। छोटे खेतों के मालिकों को सहकारी कृषि में शामिल होने के लिए विशेष सहायता दी जानी चाहिए।

25. मार्गदर्शक परियोजनाओं तथा सहायता के लिए चुनी गई अन्य सहकारी कृषि-समितियों के लिए यह व्यवस्था की गई है कि उन्हें 4,000 रु० तक के मध्यम और दीर्घकालीन ऋण; गोदाम और जानवरों के निवास के लिए ऋण और अनुदान के रूप में 5,000 रु० तथा 3 से 5 वर्ष की अवधि में 1,200 रु० के विस्तृत प्रबन्ध-अनुदान दिए जाएंगे। मार्गदर्शक परियोजनाओं में विशेषत: ऐसी सहकारी कृषि-समितियों में, जिनके अधिकांश सदस्य भूमिहीन श्रमिक और छोटे या नाममात्र के किसान हैं; हिस्सा-पूजी में सरकारी योगदान की व्यवस्था है। सरकारी योगदान की अधिकतम सीमा 2,000 रु० होगी। सरकारी योगदान की राशि निश्चित रूप से सदस्यों-द्वारा जमा की गई राशि से अधिक नहीं होगी। सरकारी रकम को 10 वर्ष की अवधि में वापस कर देना होगा। सामुदायिक विकास-खण्डों तथा कृषि-कार्यक्रमों से उपलब्ध

होनेवाली वित्तीय सहायता के लिए सहकारी कृषि-समितियों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। सहकारी कृषि की मार्गदर्शक परियोजनाओं के लिए राज्यों की योजनाओं में रखी गई 6 करोड़ रु० की राशि के अतिरिक्त केन्द्र ने भी अन्य सहकारी कृषि-समितियों के विकास में सहायता देने के लिए 6 करोड़ रु० नियत कर दिए हैं। सहकारी कृषि के विकास के क्षेत्र में ज्यों-ज्यों प्रगति होगी, त्यों-त्यों इन प्रयत्नों का समर्थन करने के लिए आवश्यक अतिरिक्त साधनों को जुटाने में कठिनाइयां कम होती जाएंगी। जैसे-जैसे योजना आगे बढ़ेगी, वैसे-वैसे मार्गदर्शक परियोजनाओं में तथा अन्यत्र जो व्यावहारिक अनुभव प्राप्त होंगे, उनके आलोक में सहकारी कृषि के विकास के लिए और अधिक व्यापक कार्यक्रम तैयार किए जा सकेंगे।

उपभोक्ता-सहकारी समितियां

26. दूसरे विश्व-युद्ध की अवधि में और उसके बाद नियन्त्रित वस्तुओं के वितरण के लिए बड़ी संख्या में उपभोक्ता-दुकानों की स्थापना हुई। सन् 1951-52 में ऐसी प्राथमिक दुकानों की संख्या 9,757, उनके सदस्यों की संख्या 18 लाख 50 हजार और उनके द्वारा किया गया व्यापार 82 करोड़ रु० से भी अधिक का था। बाद के वर्षों में इनमें से अनेक दुकानें बन्द हो गईं। सन् 1959-60 में प्राथमिक दुकानों की संख्या 7,168, उनके सदस्यों की संख्या लगभग 14 लाख और उनकी कुल चुकता पूंजी 2 करोड़ 40 लाख रु० थी। इन दुकानों में से एक-तिहाई से भी कम दुकानें लाभ में चल रही थीं। तीसरी योजना के कार्यक्रमों में अस्थायी तौर पर 50 थोक दुकानों और 2,200 प्राथमिक उपभोक्ता-दुकानों को सहायता देने की व्यवस्था है। इन लक्ष्यों पर राष्ट्रीय सहकारिता-विकास और भांडारण-मंडल-द्वारा उपभोक्ता-सहकारी समितियों के सम्बन्ध में नियुक्त समिति की हाल की रिपोर्ट के प्रकाश में और विचार किए जाने की जरूरत होगी। इस समिति ने यह सुझाव दिया है कि प्रत्येक राज्य में एक शीर्षस्थ थोक दुकान हो, जो विशेषतः शहरी क्षेत्रों की प्राथमिक दुकानों से सम्बद्ध हो। समिति का यह भी विचार है कि अभी राज्य से छोटे क्षेत्र में थोक दुकान खोलना उपयोगी नहीं होगा, क्योंकि सम्भवतः उसके लिए व्यापार पर्याप्त मात्रा में नहीं उपलब्ध हो सकेगा। समिति ने शीर्षस्थ थोक दुकानों और प्राथमिक दुकानों की हिस्सा-पूंजी में राज्य के भाग लेने का भी सुझाव दिया है। एक सफल उपभोक्ता-सहकारी आन्दोलन विकास के लिए, विशेषतः शहरी क्षेत्रों में, जरूरत और अवसर, दोनों ही विद्यमान हैं, परन्तु अब तक इस दिशा में बड़ा सीमित प्रयत्न किया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों के लिए उपभोक्ता-सामग्रियों के वितरण का कार्य सेवा-सहकारी समितियों के क्षेत्र में आएगा तथा माल उपलब्ध करने का प्रबन्ध सामान्यतः हाट-व्यवस्था-समितियों के माध्यम से होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में अच्छी किस्म के तैयार उपभोक्ता-माल की, जिनकी आम तौर पर मांग है, पूर्ति का कार्य प्राथमिक हाट-व्यवस्था-समितियों या इसी प्रकार के अन्य अभिकरणों को, जो पहले से ही ऐसा काम कर रहे हैं, सौंपा जा सकता है। तीसरी योजना में उपभोक्ता-सहकारी समितियों के विकास के लिए सामान्यतः अनुकूल परिस्थितियां हैं और यदि विशेष प्रयत्न किए जाएं, तो प्रगति बहुत तेज़ हो सकती है। उनसे न केवल खुदरा मूल्यों को स्थिर रखने में सहायता मिलेगी, अपितु खाद्यान्नों में मिलावट करने की बुराई भी रुक सकेगी।

औद्योगिक सहकारी समितियां

27. हथकरघा, नारियल-जटा और कुछ अन्य उद्योगों में औद्योगिक सहकारी समितियों को बहुत सफलता मिली है। फिर भी, एक आम आन्दोलन के रूप में, अनेक व्यावहारिक बाधाओं के कारण, उसकी प्रगति में रुकावटें आती रही हैं। नवम्बर 1959 में भारत-सरकार-द्वारा औद्योगिक सहकारी समितियों के बारे में प्रस्ताव स्वीकृत किए जाने के बाद ऐसे अनेक निश्चय किए गए, जिन्हें यदि उचित वातावरण और नेतृत्व मिला, तो तीसरी योजना में औद्योगिक सहकारी समितियों के विकास में बड़ी सहायता मिलेगी। इस समय औद्योगिक सहकारी समितियां तीन व्यापक ढांचों पर चल रही है। कुछ में इनके सदस्य उत्पादन-कार्य निजी तौर पर अलग-अलग करते है, परन्तु कुछ सेवाओं —जैसे, कच्चे माल की प्राप्ति—के लिए आपस में सहयोग करते हैं। फिर, कुछ अन्य समितियों के सदस्य उत्पादन, हाट-व्यवस्था और अन्य सम्बद्ध कार्रवाइयां संयुक्त रूप से करते हैं। तीसरा प्रकार उन समितियों का है, जिनके सदस्य काम तो अलग-अलग करते है, किन्तु कुछ विशिष्ट सेवाओं के लिए सहकारी कर्मशालाएं स्थापित करते हैं। हथकरघा और ग्रामोद्योगों में तथा अन्य अनेक लघु उद्योगों में श्रमिकों की सहकारी समितियां बनाने के अच्छे अवसर है। लघु उद्योगों के एक बड़े क्षेत्र में सामान्य सुविधाएं प्रदान करने, कच्चे माल के प्रारम्भिक विधायन, विशिष्ट विधायन, संयुक्त रूप से सामान की आपूर्ति करने और हाट-व्यवस्था के लिए सहकारी समितियां संगठित करने के अवसर और भी अधिक हैं।

28. यद्यपि राज्यों की योजनाओं में औद्योगिक सहकारी समितियों को प्रोत्साहन देने और श्रमिकों को सहायता प्रदान करने के कार्यक्रम हैं, तथापि तीसरी योजना में इस दिशा में तीव्रतर प्रयत्न किए जाने की आवश्यकता है। विकास के वर्तमान स्तर पर महत्वपूर्ण बात यह है कि औद्योगिक सहकारी समितियों के निर्माण के लिए जो सुविधाएं और छूटें मिली हैं, उनका कारगर तौर पर इस्तेमाल किया जाए। अब इन समितियों के स्वरूप को भी ऐसा बना दिया गया है कि वर्तमान सहकारी समितियों की शक्ति बढ़े, नई समितियों को दृढ़ आधार पर संगठित होने का प्रोत्साहन मिले और वित्तीय और हाट-व्यवस्था-सम्बन्धी व्यावहारिक समस्याओं के हल पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जा सके। संगठन के सामान्य ढांचे के रूप में औद्योगिक सहकारी समितियों के विकास को प्रोत्साहन देने के लिए जो निश्चय किए गए हैं, उनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं :

(1) सरकार और केन्द्रीय सहकारी अभिकरणों-द्वारा कार्यकारी पूंजी के लिए सूद की रिआयती दर पर ऋणों की व्यवस्था;

(2) औद्योगिक सहकारी समितियों के सदस्यों को हिस्सा-पूंजी खरीदने के लिए ऋण देने की व्यवस्था;

(3) प्रबन्ध-कर्मचारियों, सुधरे हुए औज़ारों और उपकरणों के लिए अनुदानों की व्यवस्था;

(4) सहकारी बैंकों के विशिष्ट प्रबन्धकीय एवं निरीक्षक कर्मचारियों के लिए एक सीमित अवधि तक सहायता की व्यवस्था;

(5) औद्योगिक सहकारी समितियों के विकास की देखभाल करने के लिए नियुक्त अतिरिक्त कर्मचारियों के लिए व्यय में सरकार-द्वारा हिस्सा बंटाना; और

(6) सीमित समय के लिए स्वीकृत सहकारी वित्त-अभिकरणों-द्वारा औद्योगिक सहकारी समितियों के लिए स्वीकृत अग्रिम धन की गारंटी की व्यवस्था ।

वर्तमान संकेतों के अनुसार तीसरी योजना में औद्योगिक सहकारी समितियों की संख्या 30,000 से बढ़ कर 40,000, उनके सदस्यों की संख्या 20 लाख से बढ़कर 30 लाख तथा उनकी हिस्सा-पूंजी 10 करोड़ रु० से बढ़ कर 20 करोड़ रु० हो जाएगी । यह वांछनीय है कि हाल में किए गए निर्णयों के आलोक में केन्द्र और राज्य-सरकारों को औद्योगिक सहकारी समितियों के विकास के लिए परवर्ती एवं विशिष्ट प्रस्ताव तैयार करने के हेतु कदम उठाने चाहिए और इस बात की गारंटी देनी चाहिए कि समितियों को अपनी गतिविधियों के प्रसार के लिए सरकारी अभिकरणों, अखिल भारतीय मंडलों तथा विभिन्न वित्तीय संस्थानों से आवश्यक समर्थन मिलेगा ।

श्रमिक और निर्माण-सहकारी समितियां

29. पहली योजना के समय से ही ग्रामीण क्षेत्रों में सिंचाई एवं अन्य परियोजनाओं को पूरा करने के लिए श्रमिक-सहकारी समितियां संगठित करने के महत्व पर बल दिया जा रहा है । अनेक राज्यों में——मुख्यतः पंजाब, बम्बई, आन्ध्रप्रदेश और राजस्थान में——श्रमिक-सहकारी समितियां, श्रमिक-ठेका-समितियां, आदि की स्थापना के लिए प्रयत्न किए गए हैं । इन समितियों से ऐसे काम हाथ में लेने की अपेक्षा की जाती है, जिनमें कुशल अथवा अर्द्धकुशल श्रमिकों की आवश्यकता हो । ध्येय यह है कि इनके कारण क्रमशः ठेकेदारी-प्रथा समाप्त हो जाए । ग्रामीण जनशक्ति के उपयोग के लिए तीसरी योजना में कार्यान्वित किए जानेवाले निर्माण-कार्यक्रमों में भी श्रमिक-सहकारी समितियों को महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी है । यद्यपि यह नीति स्वीकार कर ली गई है कि यथा-सम्भव निर्माण-कार्य-सहकारी समितियों को (जहां स्वैच्छिक संगठन हों, वहां उनको) सौंपे जाएं, तथापि इसे कार्यान्वित करने के लिए प्रशासनिक कार्रवाइयों की विस्तृत व्यवस्था करना आवश्यक है ।

30. श्रमिक और निर्माण-सहकारी समितियों तथा स्वैच्छिक संगठनों को इन वर्गों के निर्माण-कार्य लाभ के साथ सौंपे जा सकते हैं :

(1) सभी प्रकार के खुदाई के काम तथा बहूद्देश्यीय, बड़े और मध्यम सिंचाई-कार्यों, बाढ़-नियन्त्रण-योजनाओं, छोटे सिंचाई-कार्यों और सड़क-निर्माण से सम्बद्ध साधारण राजगीरी का काम;

(2) साधारण सरकारी भवन——यथा, होस्टल, प्रशासनिक कार्यालय, कर्म-शालाएं, रिहायशी मकान, विद्यालय भवन——और ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य स्थानीय विकास-कार्य; तथा

(3) पत्थर, पत्थर के टुकड़े, रोड़ियों और रेत, आदि भवन-निर्माण के काम आनेवाले सामान बड़ी मात्रा में उपलब्ध करना ।

वास्तविक श्रमिक-सहकारी समितियां और स्वैच्छिक संगठन इन कामों को हाथ-में ले सकें, इसके लिए कुछ प्रशासनिक शर्तों को पूरा करना होगा, जिनमें से कुछ प्रमुख निम्नलिखित. है :

(1) उपलब्ध निर्माण-कार्यों के एक हिस्से को सहकारी समितियों और स्वैच्छिक संगठनों के लिए निश्चित कर देना। इस मात्रा को इन संगठनों की क्षमता में होनेवाले विकास के अनुसार बढ़ाया जाना चाहिए ;

(2) काम बराबर मिलते रहने का आश्वासन । इन कामों की विशालता, स्वरूप तथा विशिष्ट कामों की सूचना काफी पहले दी जानी चाहिए ;

(3) निजी ठेकेदारों के मुकाबले सहकारी समितियों और स्वैच्छिक संगठनों को प्राथमिकता देना तथा जहां सम्भव हो, बातचीत के आधार पर काम वितरित करना;

(4) निश्चित दरों के अनुसार उचित दरों पर काम देना। इसमें सक्षम अधिकारी कुछ प्रतिशत के हिसाब से वृद्धि या कमी भी कर सकता है। यथासम्भव क्रम से काम का वितरण किया जाना चाहिए ;

(5) अदायगियों में विलम्ब से बचना और जितना काम हो गया है, उसके खाते अदायगी का अधिकार;

(6) सहकारी समितियों और स्वैच्छिक संगठनों के काम के लिए तकनीकी कर्मचारी उपलब्ध करना; तथा

(7) कार्य-संचालन-पूंजी और उपकरणों की खरीद के लिए ऋण देकर सहायता करना।

श्रमिक-सहकारी समितियों के कार्यों के बारे में विभिन्न राज्यों में जो अनुभव प्राप्त हुए है, उनके आधार पर उपयुक्त संगठनात्मक स्वरूप तैयार किए जाने चाहिए।

लक्ष्य यह होना चाहिए कि श्रमिक-सहकारी संगठनों और स्वैच्छिक संगठनों का निर्माण एक ऐसे महत्वपूर्ण साधन के रूप में हो, जो सरकारी विभागों, पंचायत-समितियों और पंचायतों की ओर से किए जा रहे कार्यों के माध्यम से रोज़गार प्रदान कर सके और विकास-कार्यों को हाथ में ले सके। एक बार जब इस प्रकार के संगठन स्थापित हो जाएंगे, तब उनके और विस्तृत होने की सम्भावनाएं और अनेक क्षेत्रों में समाज को मिलनेवाले उनके लाभों के विस्तार की स्थितियां स्वयं ही निर्मित हो जाएंगी।

आवास सहकारी समितियां

31. सन् 1959-60 में 5,564 आवास-सहकारी समितियां थी, जिनके सदस्यों की संख्या 3,22,000 थी। आवास-सहकारी समितियों ने सन् 1959-60 में 45,000 मकान बनवाए, जब कि सन् 1958-59 में यह संख्या 44,000 और सन् 1957-58 में 36,000 थी। विभिन्न आवास-कार्यक्रमों के अधीन, जिन पर इस समय काम हो रहा है, आवास-सहकारी समितियों के निर्माण की सुविधाएं प्रदान की गई है। उदाहरण

के लिए, सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास-योजना में औद्योगिक श्रमिकों की सहकारी समितियों के कुल खर्च के 25 प्रतिशत तक आर्थिक सहायता के रूप में दिया जाता है। अल्प आय-वर्ग की आवास-योजना एवं अन्य योजनाओं के अधीन, जो कई विकासशील नगरों में कार्यान्वित की जा रही हैं, सहकारी समितियों को या तो अनुकूल शर्तों पर भूमि दी जाती है अथवा निजी भूमि का अधिग्रहण करने में सहायता दी जाती है। ग्राम-आवास-योजना में भी कुछ चुने हुए गांवों में ईंटों, दरवाजों, खिड़कियों तथा अन्य सामान की तैयारी के लिए आवास-सहकारी समितियों के निर्माण की व्यवस्था की गई है। इन विभिन्न व्यवस्थाओं का समुचित रूप से और एक निश्चित नीति के अंग-रूप में उपयोग होना चाहिए, ताकि गांवों और शहरों में समान रूप से आवास और जीवन की स्थिति में सुधार आए। तीसरी योजना के इस प्रस्ताव से कि एक केन्द्रीय आवास-मंडल की स्थापना की जाए और राज्यों में भी आवास-मंडलों का निर्माण किया जाए, आवास-सहकारी समितियों को अधिक धन मिल सकेगा। अनेक बड़े शहरों के लिए अन्तरिम ग्राम योजनाओं और मास्टर प्लान तथा कुछ चुने हुए गांवों की रूपरेखा के निर्माण से, जिन पर आवास-सम्बन्धी अध्याय में प्रकाश डाला गया है, तीसरी योजना की अवधि में आवास-सहकारी समितियों को विकसित करने और उनको समर्थन प्रदान करने की नीतियों को बड़े पैमाने पर मूर्त रूप देना सरल हो जाएगा।

अन्य ऋणेतर सहकारी समितियां

32. ऊपर जिन विभिन्न प्रकार की सहकारी समितियों पर विचार किया गया है, उनके अतिरिक्त गन्ना और दूध उपलब्ध करनेवाली, मत्स्योद्योग और दूध-उद्योग का विकास करनेवाली तथा कोल्ड स्टोरेज की व्यवस्था करनेवाली सहकारी समितियां भी हैं। गन्ना उपलब्ध करनेवाली समितियों की सदस्य-संख्या 23 लाख 40 हजार, दूध वितरण करनेवाली समितियों की सदस्य-संख्या 2,33,000 और मत्स्योद्योग-समितियों की सदस्य-संख्या 2,20,000 है। दूसरी योजना के अन्त तक 16 कोल्ड स्टोरेज स्थापित किए गए थे। तीसरी योजना में 33 और कोल्ड स्टोरेज स्थापित किए जाएंगे। तीसरी योजना में बड़े पैमाने पर मत्स्योद्योग के विकास तथा दूध-उद्योग के विस्तार के कार्यक्रम हैं। ये सब क्षेत्र सहकारी समितियों के विकास के लिए बड़े आशापूर्ण हैं। परिवहन-सहकारी समितियों को भी शिक्षित बेकार व्यक्तियों को नए अवसर प्रदान करने के एक साधन के रूप में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। सहकारिता का सिद्धान्त उद्योग और सेवाओं के अनेक नए क्षेत्रों में—जैसे, उपकरणों का निर्माण, छपाई, कच्ची सामग्रियों की आपूर्ति, सामान्य सुविधाओं की व्यवस्था, आदि—लागू किया जा सकता है। आदिवासी-विकास-खंडों और उन क्षेत्रों में, जहां मुख्यतः अनुसूचित आदिमजातियां निवास करती हैं। सहकारी समितियों के निर्माण और परम्परागत हस्तशिल्प के विकास के लिए व्यापक अवसर हैं, विशेषतः वन्य क्षेत्रों में। केन्द्रीय सरकार ने हाल में एक समिति नियुक्त की है, जो आदिमजाति-क्षेत्रों की विशेष स्थिति और आवश्यकताओं को देखते हुए यह विचार करेगी कि वहां सहकारिता के लिए किस तरह की प्रक्रिया या कानून को अपनाया जाए।

सहकारिता का प्रशिक्षण और प्रशासन

33. ग्रामीण ऋण-सर्वेक्षण में सहकारिता के कार्यक्रमों को योग्यतापूर्वक चलाने के लिए प्रशिक्षित व्यक्तियों के महत्व पर बहुत बल दिया गया है और विगत कुछ वर्षों में सहकारिता के कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने की दिशा में बहुत काम हुआ है। दूसरी योजना के अन्त में पूना-स्थित सहकारिता-प्रशिक्षण-कालेज के अतिरिक्त, जिसमें सहकारिता-विभाग के उच्च अधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है, 13 प्रादेशिक केन्द्र मध्यवर्ती और विकास-खण्ड-स्तर की सहकारी समितियों के अधिकारियों को और 62 सहकारिता-प्रशिक्षण-केन्द्र कनिष्ठ कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के लिए है। मध्यवर्ती प्रशिक्षण-केन्द्रों में भूमि-बन्धक-बैंक-प्रणाली और हाट-व्यवस्था के बारे में विशेष पाठ्यक्रम चालू किए गए हैं। दूसरी योजना के अन्त में प्रशिक्षित व्यक्तियों में 543 वरिष्ठ अधिकारी, 3,417 खंड-स्तरीय और मध्यवर्ती अधिकारी और 34,000 कनिष्ठ कर्मचारी थे। 382 लोगों ने भूमि-बन्धक-बैंक-प्रणाली का और 1,253 ने सहकारी हाट-व्यवस्था का पाठ्यक्रम पूरा किया। अखिल भारतीय सहकारी संघ और राज्यों के सहकारी संघों ने पदाधिकारियों, प्रबन्ध-समितियों के सदस्यों और प्राथमिक सहकारी समितियों के सदस्यों को प्रशिक्षित करने के लिए 368 भ्रमण-दल संगठित किए। दूसरी योजना के अन्त तक इन वर्गों के क्रमशः 28,500; 12,000 और 7,26,000 व्यक्तियों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया।

34. तीसरी योजना के लिए राज्यों ने जो कार्यक्रम बनाए है, उनमे अनेक कदमों के अतिरिक्त सहकारी समितियों के कनिष्ठ कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए 13 विद्यालय खोलने तथा सहकारी समितियों के सदस्यों को भ्रमण-दलों-द्वारा शिक्षित करने के कार्यक्रम को जारी रखने पर बल दिया गया है। सामुदायिक विकास और सहकारिता-मन्त्रालय ने सहकारिता-प्रशिक्षण के बारे में जिस अध्ययन-दल को नियुक्त किया था, उसने हाल ही में अपने प्रस्ताव प्रस्तुत किए हैं। । इसमें मध्यवर्ती कर्मचारियों के प्रशिक्षिण-केन्द्रों की संख्या बढ़ा कर 15 और कनिष्ठ कर्मचारियों के सहकारी प्रशिक्षण-केन्द्रों की संख्या 120 करने का सुझाव दिया गया है। इस दल की उक्त तथा अन्य सिफारिशें अभी विचाराधीन है।

35. दूसरी योजना की अवधि में राज्य-सहकारिता-विभागों को, विशेष रूप से लेखा-परीक्षण, अधीक्षण और निरीक्षण, आदि कार्यों में संगठित करने के लिए कदम उठाए गए हैं। तीसरी योजना में सहकारिता-विभाग के विभिन्न स्तर के कर्मचारियों को अपने विषय का पूरा ज्ञान कराने के लिए लगभग 5 करोड़ रु० रखे गए है।

36. ग्रामीण क्षेत्रों में सघन विकास के आयोजन और कार्यान्वियन मे पंचायती राज-संस्थानों और सहकारी संगठनों की एक अनुपूरक भूमिका है तथा उन्में हर स्तर पर निकट सहयोग होना चाहिए। ज़िला-परिषदों, पंचायत-समितियों और ग्राम-पंचाययतों को सहकारी समितियों के विकास के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए और सामुदायिक प्रयास तथा सामाजिक दायित्व का एक ऐसा वातावरण पैदा करना चाहिए, जो हर स्तर पर सहकारी समितियों के सफल कार्य-संचालन के लिए आवश्यक है। सहकारी संगठनों के सम्बन्ध में नियमन-विषयक अधिकार सरकार के हाथ में बने रह सकते है, परन्तु उनमें से कुछ संघीय सहकारी संगठनों को क्रमशः हस्तान्तरित किए जाने चाहिए।

इससे आन्दोलन को आत्मनियमित स्वरूप प्राप्त करने और स्थानीय नेतृत्व के विकास में मदद मिलेगी।

37. सहकारिता जनता का आन्दोलन है और सहकारी विकास की पहल तथा आन्दोलन की गतिविधियों के नियमन की ज़िम्मेदारी क्रमशः सहकारी संस्थानों और उनके उच्चतर संघीय संगठनों पर आनी चाहिए। इस सन्दर्भ में सहकारी गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में सुदक्ष संघीय संगठनों का निर्माण विशेष महत्व रखता है। जैसे-जैसे इन संगठनों की शक्ति बढ़े, वैसे-वैसे इन्हें अधिक अधिकार दिए जा सकते हैं तथा विभागीय कार्रवाइयां पंजीकरण, लेखा-परीक्षण, पंच-निर्णय एवं निरीक्षण तक सीमित की जा सकती हैं। सहकारिता, सहकारी प्रशिक्षण, शिक्षा और प्रचार की उन्नति-सम्बन्धी कार्य सहकारी संघों के विशिष्ट क्षेत्र में पड़ते हैं। राज्य और ज़िला-स्तर पर सहकारी संघों को इस तरह संगठित किया जाना चाहिए कि वे इन ज़िम्मेदारियों को ग्रहण कर सकें, और नीचे से ही एक सुदृढ़ संघीय ढांचे का निर्माण हो सके।

अनुबन्ध

विवरण 1—प्राथमिक कृषि-ऋण-समितियां

राज्य	30 जून, 1960 को समितियों की कुल संख्या	घाटे में चलनेवाली समितियों का अनुपात (1959-60)	30 जून, 1960 को बकाया राशि का अनुपात	समितियों का पुनरुद्धार: दूसरी योजना (अनुमित)	समितियों का पुनरुद्धार: तीसरी योजना (कार्यक्रम)	अल्प और मध्यमकालीन ऋण: 1959-60 (दिए गए)	अल्प और मध्यमकालीन ऋण: 1960-61 (अनुमित) (लाख रु०)	अल्प और मध्यमकालीन ऋण: 1965-66 (कार्यक्रम)	सदस्यों की संख्या (हजार): 1959-60 (अनुमित)	सदस्यों की संख्या (हजार): 1960-61 (अनुमित)	सदस्यों की संख्या (हजार): 1965-66 (कार्यक्रम)
आन्ध्रप्रदेश	12,527	27	14	4,000	4,000	1,750	2,000	6,000	1,262	1,500	4,00
असम	3,070	34	55	2,500	—	137	250	800	159	250	800
बिहार	16,222	37	55	1,580	8,000	129	180	1,150	706	1,000	2,000
गुजरात	7,053	33	25	5,600	1,000	2,126	2,700	5,000	750	900	1,500
महाराष्ट्र	17,816	21	27	—	3,000	2,937	3,700	10,000	1,531	1,800	4,000
जम्मू-कश्मीर	1,294	9	26	425	—	65	100	500	233	300	600
केरल	2,289	34	20	600	1,000	409	500	1,600	756	850	1,500
मध्यप्रदेश	20,629	16	21	3,500	6,000	1,301	1,500	4,000	789	900	2,000
मद्रास	9,589	24	11	1,000	2,000	1,737	2,000	4,700	1,584	2,000	3,900
मैसूर	8,017	25	33	3,780	2,000	1,203	1,500	3,750	1,054	1,200	2,100
उड़ीसा	6,520	35	20	472	2,000	235	275	1,800	369	500	1,800
पंजाब	17,107	18	26	2,750	2,500	1,129	1,300	3,000	1,126	1,340	2,100
राजस्थान	9,281	13	19	3,000	1,000	539	650	1,800	573	700	2,000
उत्तरप्रदेश	57,136	10	6	9,500	15,000	2,922	3,400	7,000	2,883	3,300	6,500
पश्चिम-बंगाल	13,076	27	43	2,700	4,500	227	300	1,500	571	700	2,000
संघीय क्षेत्र	1,546	19	18	645	180	64	100	317	137	250	429
योग	2,03,172	21	21	42,052	52,180	16,910	20,455	52,917	14,483	17,490	37,229

विवरण 2—दीर्घकालीन ऋण

राज्य	30 जून, 1960 को केन्द्रीय भूमि-बन्धक बैंक	बैंकों की संख्या प्राथमिक भूमि-बन्धक बैंक	बकाया दीर्घकालीन ऋण (करोड़ रु०) 1959-60	1960-61 (अनुमित)	1965-66 (कार्यक्रम)
आन्ध्रप्रदेश	2	93	5.89	6.9	23.31
असम	1	3	0.14	0.17	1.6
बिहार	1	—	0.02	0.1	3.5
गुजरात	1	5	8.3	9	20
महाराष्ट्र	1	27	3.55	5	50
जम्मू-कश्मीर	—	—	—	—	—
केरल	1	7	1.43	1.5	3
मध्यप्रदेश	1	20	0.34	0.5	5
मद्रास	1	85	5.16	6	14.48
मैसूर	1	108	3.12	3.8	10
उड़ीसा	1	—	0.57	0.6	2
पंजाब	1	—	0.37	0.6	2.9
राजस्थान	2	41	0.02	0.15	8.05
उत्तरप्रदेश	1	6	0.01	0.08	5
पश्चिम-बंगाल	1	12	0.24	0.25	1.5
संघीय क्षेत्र	1	—	0.01	0.01	0.2
योग	17†	407	29.17	34.66	150 54

† इसमें मध्यप्रदेश के शीर्षस्थ सहकारी बैंक का भूमि-बन्धक बैंक-विभाग सम्मिलित है।

अध्याय 14

भूमि-सुधार

तीसरी योजना के उद्देश्य

भूमि-सुधार-कार्यक्रमों के—जिन्हें पहली और दूसरी, दोनों योजनाओं में विशेष महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था—दो विशिष्ट उद्देश्य हैं। पहला उद्देश्य तो यह है कि पहले से चले आ रहे कृषि-विषयक ढांचे के कारण खेती की पैदावार बढ़ाने में जो रोड़े अटक रहे हैं, उन्हें दूर किया जाए। इससे ऐसी परिस्थितियां पैदा करने में सहायता मिलेगी, जिनमें जल्दी-से-जल्दी कार्यकुशलता और उत्पादकता के उच्च स्तर से युक्त कृषि-अर्थव्यवस्था विकसित हो सके। दूसरे उद्देश्य का भी इस पहले उद्देश्य से घनिष्ठ सम्बन्ध है। दूसरा उद्देश्य यह है कि हमारी कृषि-प्रणाली में शोषण और सामाजिक अन्याय के जो तत्व हैं, वे खत्म हो जाएं, ज़मीन जोतनेवाले को सुरक्षा मिले और गांवों के सभी वर्ग के लोगों को बराबर का दर्जा और बराबर के अवसर प्राप्त हों।

2. इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जो उपाय किए गए, उनमें मुख्य ये थे : बिचौलियों के अथवा लगान उगाहनेवालों के पट्टे खत्म कर दिए गए, और काश्त-व्यवस्था में सुधार किए गए। इसमें लगान का नियमन तथा उसमें कमी और काश्त की सुरक्षा भी शामिल है। काश्त-व्यवस्था में सुधार के क्रम में एक कदम यह भी उठाया गया कि काश्तकार को स्वामित्व-अधिकार दे दिए गए।

3. विशेष रूप से दूसरे उद्देश्य को पूरा करने के लिए यह विचार किया गया कि भूमि के स्वामित्व को लेकर जो विषमताएं उपस्थित हैं, उन्हें कम करने के लिए भी कार्रवाई की जानी चाहिए। यह नीति उन देशों के आर्थिक विकास के लिए व्यापक रूप से अनिवार्य मानी जाती है, जिनमें ज़मीन का परिमाण तो सीमित हो, पर उस पर निर्भर रहनेवाले लोगों की संख्या बहुत हो। यह अनुभव किया गया कि खेती की ज़मीनों के वितरण के मौजूदा तरीके और छोटे फार्मों की बहुतायत को देखते हुए अगर एक निश्चित सीमा के ऊपर की सब ज़मीनों को लेकर उनका फिर से वितरण करने का फैसला कर भी लिया जाए, तो ऐसी फाज़िल ज़मीन बहुत नहीं मिल सकेगी और इसका कोई बहुत बड़ा परिणाम नहीं निकल सकेगा। फिर भी, यह विचार किया गया कि प्रगतिशील सहकारी ग्राम-अर्थव्यवस्था के विकास के लिए विषमताओं का कम होना एक ज़रूरी शर्त है। इसके साथ ही, जितनी भूमि का पुनर्वितरण सम्भव हो सकेगा, उससे, और उन दूसरे उपायों से, जो बंजर ज़मीनों पर लोगों को फिर से बसाने के लिए किए गए हैं, भूमिहीन लोगों को थोड़ा-बहुत अवसर मिलेगा ही। इन भूमिहीन लोगों की समस्याओं की ओर पहली और दूसरी, दोनों योजनाओं में विशेष रूप से ध्यान आकर्षित किया जा चुका है। इस बात को अच्छी तरह समझ लेने की ज़रूरत है कि भूमि-सुधार की योजना जिन सिद्धान्तों पर निर्भर है, उनमें सिर्फ यही निहित नहीं है कि भूमि पर आश्रित लोगों के विभिन्न वर्गों के हितों में समन्वय स्थापित कर दिया जाए, बल्कि यह भी है कि वे एक व्यापक सामाजिक और आर्थिक दृष्टिकोण के अंग हैं और अर्थव्यवस्था के हर क्षेत्र में कुछ हद तक उनका प्रयोग करना आवश्यक है।

4. स्पष्ट है कि उपर्युक्त विवेचन के अनुसार भूमि-सुधार-कार्यक्रम पर अमल करने का नतीजा यह होगा कि भारत में अधिकांश काश्तकार भूस्वामी-किसान बन जाएंगे। अब ज़रूरत इस बात की है कि ऋण, हाट-व्यवस्था, विधायन और वितरण के लिए — क्रमश: उत्पादन के लिए भी—स्वेच्छा से सहकारी समितियां गठित करने के लिए उन्हें प्रोत्साहन और सहायता दी जाए। जिस हद तक पुनस्संगठन का यह काम ग्राम-स्तर पर किया जाएगा, उस हद तक छोटी और खर्चीली जोतों से पैदा होनेवाली कुछ कठिनाइयों को कम किया जा सकेगा तथा हर समुदाय में आर्थिक दृष्टि से हीन लोगों को अपना स्तर ऊंचा उठाने में मदद दी जा सकेगी। इस बात पर हमेशा ज़ोर दिया गया है कि जैसे-जैसे भूमि-सुधार की एक-एक मंज़िल पूरी होती जाएगी, वैसे-वैसे खेती की पैदावार बढ़ाने और ग्राम-अर्थव्यवस्था को विविधता प्रदान करने में किसानों को अधिकाधिक सहायता देना सम्भव हो सकेगा। जब किसानों में आपस में अधिक समझदारी होगी और ग्राम-समाज अधिक सबल होगा, तब स्थानीय प्रयत्न भी बढ़ेंगे और आर्थिक तथा सामाजिक प्रगति अधिक तेज़ी से होगी।

5. जैसे-जैसे एक के बाद दूसरे राज्य में विधान बनाए गए हैं, वैसे-वैसे भूमि-सुधार की ज़रूरतों को अधिकाधिक समझा जाने लगा है; यह भी स्पष्ट हुआ है कि उसके उद्देश्य क्या हैं। भूदान और ग्रामदान-आन्दोलनों से एक ऐसे वातावरण के निर्माण में मदद मिली है, जिसमें भूमि-सुधार के प्रगतिशील उपायों को कार्यान्वित करना सरल होगा। लेकिन भूमि-सुधार का कुल असर उतना नहीं पड़ा है जितने की आशा की गई थी। इसके कई कारण हैं। पहली बात तो यह है कि विकास के विध्यात्मक कार्यक्रम के रूप में भूमि-सुधार को बहुत ही कम मान्यता मिली है और अक्सर यही समझा गया है कि सामुदायिक विकास की योजना तथा खेती की पैदावार बढ़ाने के प्रयत्न से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। दूसरी बात, भूमि-सुधार के प्रशासकीय पहलुओं की ओर काफी ध्यान नहीं दिया गया। अक्सर प्रशासन के निचले स्तरों पर छल-कपट और कानूनी व्यवस्था से बच निकलने की रोकथाम नहीं हो सकी। कानूनी व्यवस्थाओं को कारगर तरीकों से लागू करने के पक्ष में ग्राम-समाज का समर्थन और सहयोग भी नहीं जुटाया जा सका। तीसरी बात, इस तथ्य को काफी अच्छी तरह महसूस नहीं किया गया कि भूमि के पट्टों में सुधार और जोत की अधिकतम सीमा का निर्धारण सहकारी ग्राम-अर्थव्यवस्था के निर्माण के लिए आधार-स्वरूप हैं। यह तो आवश्यक है ही कि विधान में या नियमों में जो कमियां दिखाई पड़ें, उन्हें दूर किया जाए, साथ ही यह भी निहायत ज़रूरी है कि भूमि-सुधार-कार्यक्रम कम-से-कम वक्त में पूरा हो जाए, ताकि कार्यान्विति में देरी के कारण किसी तरह की अनिश्चय की भावना पैदा न हो। तीसरी योजना के प्रस्तावों के अध्ययन में मदद करने के लिए योजना-आयोग ने जो भूमि-सुधार-समिति बनाई, उसने इस पहलू पर खास तौर पर ज़ोर दिया है।

बिचौलियों के पट्टों की समाप्ति

6. ज़मीन्दारी, जागीरदारी और इनाम—जैसे बिचौलियों के पट्टे खत्म करने का काम लगभग पूरा हो गया है। इनकी परिधि में देश का लगभग ४० प्रतिशत भाग आता था। केवल कुछ मामूली पट्टे अभी शेष हैं—जैसे, धार्मिक और दातव्य संस्थाओं के पट्टे और सैनिकों को उनकी सेवा के लिए दिए गए इनाम। इन सुधारों के फलस्वरूप दो करोड़ से भी अधिक

काश्तकारों का राज्य से सीधा सम्बन्ध स्थापित हो गया है और उनकी सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति सुधरी है। बिचौलियों के पट्टे खत्म हो जाने से खेती-योग्य बंजर भूमि के काफी बड़े इलाके और निजी वन सरकारी प्रबन्ध में आ गए हैं।

7. बिचौलियों के पट्टेवाले कई राज्यों में आवश्यक राजस्व-प्रशासन नहीं था। पिछले कुछ वर्षों में उन्होंने अपनी राजस्व-संस्थाओं को मज़बूत बनाने की दिशा में काफी काम किया है। पर अभी और सुधार की ज़रूरत है—खास तौर से गांव के स्तर पर। ज़मीन मापने और उसका बन्दोबस्त करने तथा मिल्कियत के रिकार्ड तैयार करने में भी काफी प्रगति हुई है, मगर अभी बहुत-कुछ करना बाकी है। राजस्व-प्रशासन पर जो भारी बोझ आ गया है, मुख्यतः उसी के कारण बिचौलियों का मुआवज़ा निर्धारित करने और उसकी अदायगी में कुछ देर हो गई है। कुल 670 करोड़ रु० में से (जिसमें 520 करोड़ मुआवज़े के हैं और 150 करोड़ रु० ब्याज के) अब तक सिर्फ 164 करोड़ रु० की अदायगी मुआवज़े के रूप में की गई है और वह भी मुख्यतः बौंडों के रूप में है। यह ज़रूरी है कि तीसरी योजना के दौरान सारे राज्य मुआवज़े के वे बौंड जारी कर दें, जो अब तक नहीं किए गए हैं, मिल्कियत के रिकार्ड पूरे कर लें, तथा बिचौलियों की प्रथा खत्म करने से पैदा होनेवाले अन्य प्रशासकीय कार्य भी पूरे कर लें।

लगान में कमी

8. दस साल पहले देश के अधिकांश भाग में खुदमर्ज़ी काश्तकार, गैर-दखलकारी काश्तकार तथा बंटाईदार लगान के रूप में आम तौर से उपज का आधा हिस्सा या उससे भी ज्यादा दिया करता था। लगान के अलावा, उसे अक्सर कुछ और भी भुगतान करने होते थे, जिससे काश्तकारों का बोझ बढ़ जाया करता था। पहली पंचवर्षीय योजना में स्थिति पर विस्तार से विचार किया गया और उसमें यह सुझाव दिया गया कि अगर उपज के चौथे या पांचवें हिस्से से ज्यादा दर से लगान लिया जाए, तो उसे उचित ठहराने के लिए विशेष कारण बताने की आवश्यकता होगी। पिछले कुछ वर्षों में सभी राज्यों में ज़मीन्दारों को मिलनेवाले लगान के नियमन के लिए विधान बनाए जा चुके हैं। कुछ राज्यों में—जैसे, गुजरात, महाराष्ट्र और राजस्थान में—अब अधिक-से-अधिक लगान, फसल का छठा हिस्सा हो सकता है। असम, केरल, उड़ीसा तथा संघीय क्षेत्रों में उपज का चौथाई हिस्सा या उससे भी कम लगान के रूप में देना होता है। कई राज्यों में अब भी लगान का सामान्य स्तर उपज का एक-तिहाई हिस्सा है। आशा की जाती है कि इन राज्यों में लगान कम करके उसी स्तर पर ले आया जाएगा, जिसका विचार पहली दोनों योजनाओं में किया गया था, ताकि काश्तकारों की आर्थिक स्थिति तेज़ी से सुधारने में सुविधा हो।

9. काश्तकारी विधान के शुरू के वर्षों में यह देखा गया कि लगान की घटी हुई दरें—और काश्त की दूसरी शर्तें—जिनकी व्यवस्था विधान में की गई थी, अच्छी तरह लागू नहीं की गईं और अधिकतर लगान की वही दरें प्रचलित रहीं जो पहले से चली आ रही थीं। जहां भूमि के पट्टे-सम्बन्धी व्यवस्था किन्हीं दो पक्षों के बीच हो जाए, वहां कई कारणों से विधान-द्वारा निर्दिष्ट मानदंडों में परिवर्तन किया जा सकता है—जैसे, मालिक-द्वारा बीज देने, बैलों का इन्तज़ाम करने अथवा सिंचाई का खर्च देने-सम्बन्धी निश्चय। शुरू में काश्तकार लोग विधान में दिए गए अपने अधिकारों के प्रति भी अनजान रहे। जहां

ज़मीन पर दबाव अधिक है और गांव के काश्तकारों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति कमज़ोर है, वहां कानून की शरण लेना उनके लिए मुश्किल हो जाता है। इसके अलावा, कानूनी कार्रवाई करने में खर्च अधिक होता है और आम तौर से उतना खर्च उठाना काश्तकारों की शक्ति के बाहर होता है। अतः विधान बन जाने के बाद भी कई तरह से विद्यमान शर्तों और परिस्थितियों का ही पलड़ा भारी ठहरता है। इसलिए काश्तकारी-विधान की सफल क्रियान्विति इस बात पर निर्भर करती है कि सरकारी संस्थाएं उत्साह के साथ और जम कर इस दिशा में विशेष प्रयत्न करें। ज़रूरत सिर्फ इसी बात की नहीं कि काश्तकार को उसके अधिकारों से परिचित कराने के लिए विशेष प्रयत्न किए जाएं, बल्कि इस बात की भी आवश्यकता है कि हर क्षेत्र के लोगों को यह अधिक अच्छी तरह समझा दिया जाए कि भूमि-सुधार के उद्देश्य क्या हैं। साथ ही, उन्हें जल्दी-से-जल्दी पूरा किया जाना चाहिए।

10. यद्यपि अतीत में आम तौर से लगान की अदायगी कुल उपज के किसी खास हिस्से के रूप में की जाती रही है, तथापि ग्राम-अर्थव्यवस्था के विकास और विनिमय के माध्यम के रूप में रुपये के अधिकाधिक प्रयोग के कारण अब नीति के तौर पर यह वांछनीय होगा कि लगान की अदायगी उपज के अंश के बजाय नकदी के रूप में की जाए। किसानों को अपनी आवश्यकताओं का जो भाग—जैसे उर्वरक, औज़ार, आदि—नकद रुपये देकर खरीदना पड़ता है, उसका अनुपात उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है, इसलिए अगर वे अपना लगान नकद अदा करने लगेंगे, तो इससे न सिर्फ काश्तकारों का बोझ कम होगा, बल्कि खेती में पूंजी-विनियोग भी बढ़ेगा। जैसा कि दूसरी योजना म सुझाव दिया गया था, लगान को उपज के अंश के बजाय नकद भुगतान में बदलने का काम इस तरह आसान हो सकता है कि हर क्षेत्र की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए लगान भू-राजस्व के मौजूदा निर्धारण के एक अंश के रूप में तय कर दिए जाएं। जहां यह सम्भव न हो, दूसरे तथ्यों के आधार पर उचित मानदंड तय किए जा सकते हैं। अगर राज्य-सरकारें यह ज़रूरी कर दें कि भूस्वामी लगान-वसूली की रसीदें दें और अगर—जैसा कि कुछ राज्यों में रिवाज़ है—यह व्यवस्था हो जाए कि काश्तकार उपयुक्त राजस्व-अधिकारी के यहां लगान जमा करके इस बात की सूचना भूस्वामी को दे दे, तो विधान-द्वारा लागू किए गए लगानों को प्रचलित करने में बड़ी सहायता मिल सकती है।

काश्त की सुरक्षा

11. काश्त की सुरक्षा के विधान ग्यारह राज्यों और सभी संघीय क्षेत्रों में लागू किए जा चुके हैं। चार राज्यों में विधेयक विधान-मंडल के समक्ष पेश हैं और निकट भविष्य में ही उन्हें कानून का रूप मिल जाएगा। जब तक विधान बने, तब तक के लिए काश्तकारों की बेदखली की रोकथाम कर दी गई है। काश्त की सुरक्षा-विषयक विधान के तीन मूल उद्देश्य हैं—एक तो यह, कि कानून की व्यवस्थाओं के अनुरूप होने पर ही बेदखली हो; दूसरे, भूस्वामी को अगर ज़मीन वापस मिले भी, तो सिर्फ 'खुदकाश्त' करने के लिए; और तीसरे, अगर भूस्वामी ज़मीन को वापस ले, तो भी काश्तकार को एक नियत न्यूनतम क्षेत्र का भरोसा रहे।

12. काश्त-सम्बन्धी विधान के पहले दौर में शायद यह अनिवार्य था कि भूस्वामियों और काश्तकारों के अधिकारों को नियमित करनेवाली व्यवस्थाएं कुछ विस्तृत और विशद

हों। इस तरह की जटिलता विधान को कारगर बनाने के रास्ते में रोड़ा बन जाती है। अब तक जो अनुभव प्राप्त हुए हैं, उनकी रोशनी में यह सुझाव दिया गया है कि जहां भी सम्भव हो, मौजूदा विधान को सरल बनाने के उपाय किए जाएं और जिन व्यवस्थाओं को लाग करना व्यवहार में कठिन हो, उन्हें और मज़बूत बनाया जाए या उनका संशोधन किया जाए ।

13. जैसा कि पहले कहा जा चुका है, काश्त-सम्बन्धी विधान का काश्तकार की खुशहाली की दृष्टि से उतना फल नहीं निकला, जितने की आशा की गई थी । इसका एक मुख्य कारण यह है कि क़ई राज्यों में 'स्वैच्छिक समर्पण' के नाम पर खासे बड़े पैमाने पर काश्तकारों की बेदखली हुई । दूसरी योजना में इस सम्बन्ध में दो मुख्य सिफारिशें की गई थीं। एक तो यह, कि ज़मीन की काश्त करनेवालों के स्वैच्छिक समर्पण को तब तक वैध न माना जाए, जब तक कि राजस्व-अधिकारियों-द्वारा उनकी उचित रूप से रजिस्ट्री न कर ली जाए। दूसरे, काश्तकार के अपना हक छोड़ देने पर भी भूस्वामी ज़मीन के उतने ही हिस्से पर अधिकार कर सके, जितने की अनुमति उसे कानून के अधीन प्राप्त हो। कुल मिला कर, विधान और प्रशासनिक कार्रवाई, दोनों ही क्षेत्रों में इन सिफारिशों का पूरा-पूरा पालन नहीं हो सका । कुछ राज्यों में यह व्यवस्था ज़रूर की गई है कि काश्तकार अगर ज़मीन छोड़े, तो उसकी रजिस्ट्री की जाए । काश्तकार के भूमि-समर्पण की रजिस्ट्री बहुत ज़रूरी है और काश्त-विषयक विधान में इस तरह की कुछ व्यवस्था होनी चाहिए । मौजूदा विधान में दूसरी खामी भूमि-समर्पण पर लागू होनेवाली शर्तों के बारे में है । दो राज्यों ने दूसरी योजना की इस सिफारिश को लागू कर दिया है कि खुदकाश्त को दुबारा शुरू करने की जो शर्तें हैं, वैसी ही शर्तों के अनुसार काश्तकार के स्वैच्छिक समर्पण के बाद ज़मीन दुबारा हासिल की जा सकती है । महाराष्ट्र और गुजरात में दुबारा ज़मीन हासिल करने की जो कुल सीमा है, वह भूमि-समर्पण के बारे में भी लागू होती है । लेकिन भूमि-समर्पण से सम्बन्धित अन्य शर्तें भिन्न हैं। जैसा कि दूसरी योजना में कहा गया था, काश्तकारी के स्वैच्छिक समर्पण के जितने मामले होते हैं, वे सब ठीक ही होते हैं, सो बात नहीं—अधिकतर मामलों पर शक किया जा सकता है । इस सिलसिले में जो जांच और तफतीश की गई है, उससे यह बात पक्का हो चुकी है । इसलिए यह ज़रूरी है कि 'स्वैच्छिक समर्पण' की रजिस्ट्री और उसके कारण खाली होनेवाली ज़मीनों को फिर से हासिल करने के मामले में जितनी प्रशासनिक और कानूनी खामियां हैं, उन्हें दूर करने के लिए तुरन्त कदम उठाए जाएं।

14. अधिकतर राज्यों में विधान के अन्तर्गत 'खुदकाश्त' की, जो नियमतः काश्तकारों से फिर जमीन हासिल करने की आवश्यक शर्त है, व्याख्या की गई है । 'खुदकाश्त' में तीन बातें हैं—काश्त की जोखिम, श्रम और निजी देख-रेख । काश्त की सारी जोखिम भूस्वामी-द्वारा बर्दाश्त किए जाने में यह तथ्य निहित है कि पारिश्रमिक नकद या वस्तु के रूप में दिया जाएगा, पर फसल के हिस्से के रूप में नहीं । 'श्रम' की परिभाषा आम तौर पर यह दी जाती है कि भूस्वामी स्वयं या उसके परिवार का कोई सदस्य खेत में श्रम करेगा, परन्तु खुदकाश्त में इसका अनिवार्य स्थान नहीं है । दूसरी योजना में यह सुझाव रखा गया था कि जहां 'खुदकाश्त' के आधार पर ज़मीन को फिर से हासिल किया जाए, वहां व्यक्तिगत श्रम की आवश्यकता मानना वांछनीय होगा और अगर ऐसा न हो, तो बेदखल काश्तकार को ज़मीन वापस पाने का अधिकार होना चाहिए । राज्यों ने जो विधान बनाए हैं, उनमें अभी

तक इस सुझाव को शामिल नहीं किया गया है। इस तरह की व्यवस्था वांछनीय है और इससे विधान को अधिक कारगर बनाने में सहायता मिलेगी। 'देख-रेख' के अनिवार्य तत्व के रूप में दूसरी योजना में यह माना गया था कि फसल के मौसम के अधिकांश समय में जिस गांव में ज़मीन हो उसमें या नियत दूरी के भीतर बसे हुए किसी पड़ोस के गांव में भूस्वामी या उसके परिवार का कोई सदस्य रहे। भूमि-सुधार-समिति ने सुझाव दिया है कि यहां भूस्वामी या उसके परिवार के किसी सदस्य के रहने की शर्त उसी अरसे में लागू रहनी चाहिए, जब खेती के मुख्य कार्य किए जा रहे हों। राज्य-सरकारों को इस सुझाव पर विचार करना चाहिए और जिस हद तक ज़रूरी हो, 'निजी देख-रेख' की वर्तमान परिभाषाओं में संशोधन करना चाहिए।

काश्त के अधिकार की पुनः प्राप्ति

15. दूसरी योजना में खुदकाश्त के आधार पर काश्तकारी की पुनःप्राप्ति के नियमन के बारे में मुख्य सिफारिशें ये थीं——

(1) जो क्षेत्र फिर से प्राप्त किया जाना है, उसकी घोषणा एक खास अरसे में कर दी जानी चाहिए और उसका पहले से सीमांकन कर दिया जाना चाहिए।

(2) जिन भूस्वामियों के पास बहुत छोटे चक हों——जैसे जिनके पास परिवार के पूरे चक का एक-तिहाई या उससे भी कम हो——उन्हें खुदकाश्त के लिए अपनी सारी ज़मीन पाने की छूट होनी चाहिए। जिनके पास उस स्तर से बड़े चक हों, वे खुदकाश्त के लिए अपनी ज़मीन पा तो सकते हैं, परन्तु उसमें से कुछ न्यूनतम क्षेत्र उन्हें काश्तकार के पास छोड़ना पड़ेगा।

(3) फिर से ज़मीन पाने के अधिकार का उपयोग 5 साल के भीतर किया जा सकता है।

(4) जो लोग सेना में काम कर रहे हों या जो किसी तरह से अक्षम हों——जैसे, विधवाएं, नाबालिग बच्चे अथवा शारीरिक या मानसिक अशक्तता से पीड़ित लोग——उन्हें पट्टे पर ज़मीनें देने की अनुमति होनी चाहिए और जब उनकी अक्षमता दूर हो जाए, तब खुदकाश्त के लिए फिर से ज़मीन पाने का उन्हें अधिकार होना चाहिए।

16. जिस तरह से विधान बनाए गए हैं अथवा विचाराधीन हैं, उनके आधार पर राज्यों की मोटे तौर पर चार श्रेणियां की जा सकती हैं——

(अ) वे राज्य जिनमें भूस्वामियों को फिर से ज़मीन पाने की अनुमति नहीं दी जाती ——जैसे, उत्तरप्रदेश, दिल्ली और शिकमी रैयतों के मामले में पश्चिम-बंगाल;

(आ) वे राज्य, जिनमें खुदकाश्त के लिए एक सीमित क्षेत्र फिर से पाने का अधिकार दिया जाता है, पर यह शर्त होती है कि एक न्यूनतम क्षेत्र या जोत का एक हिस्सा काश्तकार के पास रहे——जैसे, बिहार, गुजरात, केरल, मध्य-प्रदेश, महाराष्ट्र, मैसूर, उड़ीसा, राजस्थान, हिमाचलप्रदेश और मणिपुर;

(इ) वे राज्य, जिनमें इस शर्त पर ज़मीन फिर से हासिल करने का अधिकार होता है कि काश्तकार को खेती के लिए कहीं और नियत सीमा तक की ज़मीन दी जाए और यह ज़मीन उपलब्ध करना राज्य का काम हो——जैसे, पंजाब और असम; तथा

(ई) वे राज्य, जिनमें नियत अधिकतम सीमा तक की ज़मीन फिर से पाने का अधिकार है और साथ ही, जिनमें काश्तकार के लिए न्यूनतम क्षेत्र की व्यवस्था नहीं करनी पड़ती––जैसे, आन्ध्रप्रदेश और मद्रास। पश्चिम-बंगाल में बरगादारों को––जो फसल के बंटाईदार होते हैं––काश्तकार नहीं समझा जाता। शिकमी रैयत को जो अधिकार प्राप्त है, वे उन्हें प्राप्त नहीं होते, हालांकि अगर बारीकी से देखें, तो वे 'काश्तकार' की ही परिभाषा में आते हैं।

17. खुदकाश्त के आधार पर ज़मीन फिर से हासिल करने के विधान पर अमल किए जाने के फलस्वरूप जो अनुभव प्राप्त हुए हैं, उनसे कुछ प्रमुख निष्कर्ष निकलते हैं। पहली बात तो यह, कि शर्तें चाहे कुछ हों, ज़मीन फिर से पाने का अधिकार अनिश्चय पैदा करता है और विधान के द्वारा जो सुरक्षा काश्तकार को दी जाती है, उसे घटाता है। पहली और दूसरी, दोनों योजनाओं में यह तय किया गया था कि पांच वर्ष के बाद ज़मीन फिर से हासिल करने की अनुमति देना ज़रूरी नहीं होगा। ख्याल यह है कि जितना अरसा निकल चुका है, उसे ध्यान में रखते हुए जिन भूस्वामियों के पास परिवार की जोत के बराबर या उससे कम ज़मीन है, उनको छोड़ कर और किसी को ज़मीन फिर से हासिल करने का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए। काश्तकार के लिए अब और अनिश्चय की स्थिति कृषि-विकास के लिए अहितकर सिद्ध होगी। दूसरी बात यह है कि छोटे-छोटे ज़मीन्दारों का––जिनके पास पारिवारिक जोत के बराबर या उससे भी कम ज़मीन है––खास ख्याल रखा जाना चाहिए। जैसा कि दूसरी योजना में सुझाव दिया गया है, जिनके पास बुनियादी जोत से भी कम ज़मीन (यानी पारिवारिक जोत के एक-तिहाई से भी कम ज़मीन) है, उन्हें खुदकाश्त या पट्टे पर देने के लिए अपनी सारी ज़मीन पाने का अधिकार होना चाहिए। जहां तक ऐसे ज़मीन्दारों का सवाल है, जिनकी ज़मीन का क्षेत्र पारिवारिक जोत और बुनियादी जोत के बीच में है, उन्हें नियत अवधि के भीतर काश्तकार के पास जितनी ज़मीन हो, उसका आधा हिस्सा खुदकाश्त के लिए पाने का अधिकार होना चाहिए, परन्तु यह आधा हिस्सा बुनियादी जोत से किसी भी तरह कम नहीं होना चाहिए। अगर काश्तकार के पास ज़मीन न रहे, या जितना उसके पास बच रहे, वह बुनियादी जोत से कम हो, तो सरकार को उसके खेती करने के लिए ज़मीन उपलब्ध करने की कोशिश करनी चाहिए। आम तौर से उद्देश्य यह होना चाहिए कि छोटे भूस्वामियों को––उनमें भी खास तौर से उन लोगों को, जिनके पास बहुत छोटे-छोटे जोत हों––सहकारी कृषि-समितियों में शामिल होने का प्रोत्साहन मिले। सहकारी कृषि-समिति के सदस्य बन जाने पर वे इस स्थिति में होंगे कि इच्छा करने पर दूसरा काम शुरू कर सकें। इन भूस्वामियों के लिए कोई ऐसी अवधि नियत करना ज़रूरी नहीं होगा, जिसके बाद खुदकाश्त के लिए उन्हें ज़मीन फिर से हासिल करने की अनुमति न हो।

18. अगर मझोले भूस्वामी बदनीयत हो जाएं और अपनी ज़मीन रिश्तेदारों या अन्य लोगों के नाम करके छोटे भूस्वामियों की परिभाषा के अन्तर्गत आ जाएं, तो इस तरह खुदकाश्त के लिए ज़मीन फिर से हासिल करने की व्यवस्था का दुरुप्रयोग किया जा सकता है। इस ख्याल से, कि ज़मीन फिर से प्राप्त करने की व्यवस्थाओं का पालन हो, गुजरात और महाराष्ट्र में सन् 1957 में उक्त विधान का संशोधन किया गया, ताकि सिर्फ वही ज़मीन

वापस पाने का अधिकार भूस्वामी को रहे, जो पहली जनवरी 1952 को मिल्कियत दर्ज करने के सरकारी कागज़-पत्रों में उसके या उसके किसी पूर्वज के नाम में लिखी थी। केरल के विधान में—जिसमें छोटे भूस्वामियों के लिए विशेष व्यवस्थाएं की गई हैं—कहा गया है कि 18 दिसम्बर, 1957 के बाद अगर ज़मीन का कोई बंटवारा या बदली की गई होगी, तो उससे भूस्वामी को या जिसके नाम ज़मीन की गई होगी, उसको छोटे भूस्वामियों से सम्बन्धित व्यवस्थाओं का लाभ उठाने का अधिकार नहीं होगा। सामान्यतः इसी तरह की कोई शर्त रहना वांछनीय है।

काश्तकार के लिए स्वामित्व-अधिकार

19. काश्त की सुरक्षा और लगान में कमी काश्तकारी-सम्बन्धी सुधार के प्रथम सोपान हैं। उद्देश्य यह है कि अधिक-से-अधिक काश्तकारों को स्वामित्व के अधिकार प्राप्त हो जाएं। दूसरी योजना में सुझाव दिया गया था कि हर राज्य को एक कार्यक्रम बनाना चाहिए, जिससे ऐसी ज़मीनों के काश्तकार, जो दुबारा मालिकों को हासिल नहीं हो सकतीं, उनके मालिक बन जाएं और भूस्वामी-रैयत-प्रथा के अवशेष हमेशा के लिए मिट जाएं। इस बात पर ज़ोर दिया गया था कि काश्तकारों को, जिन ज़मीनों में वे काश्त कर रहे हैं, उन्हें खरीदने का वैकल्पिक अधिकार देने के बजाय, उन सभी क्षेत्रों के काश्तकारों का, जिन पर दुबारा भूस्वामियों का कब्ज़ा नहीं हो सकता, राज्य के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित किया जाए। जिन भूस्वामियों के पास पारिवारिक जोत के बराबर या उससे ज़्यादा ज़मीनें हैं, उनके बारे में कहा गया था कि उन्हें फिर से हासिल करने के अधिकार का प्रयोग केवल पांच साल की अवधि तक किया जा सकता है, और यह सुझाव दिया गया था कि यह अवधि पूरी होते ही स्वामित्व-अधिकार काश्तकारों को दिए जा सकते हैं। अन्त में, चूंकि स्वामित्व-अधिकार काश्तकारों को हस्तान्तरित करने की प्रगति के सम्बन्ध में ठीक-ठीक सूचना प्राप्त करना कठिन था, इसलिए यह भी सिफारिश की गई थी कि राज्य नियमित रूप से वार्षिक विवरण तैयार कराने का भी प्रबन्ध करें।

20. दूसरी योजना के दौरान काश्तकारों को स्वामित्व-अधिकार सौंपने की दिशा में कुछ प्रगति हुई है। पंजाब की तरह कुछ राज्यों में काश्तकारों को ज़मीन खरीदने का केवल वैकल्पिक अधिकार दिया गया है। यह तरीका सन्तोषजनक नहीं है, क्योंकि जहां खरीदने का अधिकार वैकल्पिक होता है, वहां उसका उपयोग शायद ही कभी होता है—यह बात दूसरी योजना की अवधि में देखी जा चुकी है। कई राज्यों के विधान में यह व्यवस्था है कि उन ज़मीनों के काश्तकारों का, जिन्हें भूस्वामी दुबारा हासिल नहीं कर सकता, सरकार के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित हो। इसके लिए इन तीनों में से कोई एक उपाय काम में लाना होगा :

(1) काश्तकारों को ज़मीन का मालिक घोषित करके उनके द्वारा भूस्वामियों को उचित किस्तों में मुआवज़ा दिलवाने की व्यवस्था की जाए। यदि किस्तों का भुगतान न हो, तो उन्हें लगान के बकाया के तौर पर वसूल करने की ज़िम्मेदारी सरकार उठाए;

(2) सरकार मुआवज़ा देकर पहले खुद स्वामित्व-अधिकार प्राप्त कर ले और फिर उसे काश्तकारों को सौंप दे और उनसे उचित किस्तों में मुआवज़ा वसूल कर ले; तथा

(3) सरकार भूस्वामी के अधिकार प्राप्त कर ले और काश्तकार का राज्य के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित करे। यह बात काश्तकार की मर्जी पर छोड़ दी जाए कि अगर वह चाहे, तो सरकार को मुनासिब लगान देता रहे और अपनी इसी हैसियत को कायम रखे अथवा यदि चाहे, तो नियत मुआवज़ा अदा करके स्वामित्व के पूरे अधिकार प्राप्त कर ले।

21. इनमें से पहले तरीके पर गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश और राजस्थान में; दूसरे पर दिल्ली में तथा शिकमी रैयतों के लिए (बिना मुआवज़ा अदा किए) पश्चिम-बंगाल में; तथा तीसरे पर केरल और उत्तरप्रदेश में अमल किया गया है। मद्रास में काश्तकारों को स्वामित्व-अधिकार दिलाने के बारे में अभी कार्रवाई शुरू नहीं की गई है। असम और बिहार में सिर्फ उन भूस्वामियों के काश्तकारों को स्वामित्व-अधिकार मिल सकते हैं, जिनके कब्ज़े में अधिकतम नियत सीमा से ज़्यादा क्षेत्र हैं। चूंकि विधान अभी हाल ही में बनाया गया है, इसलिए इस बारे में ठीक-ठीक सूचना प्राप्त नहीं हो सकी है कि काश्तकारों को किस हद तक स्वामित्व-अधिकार प्राप्त हो गए हैं। पता चला है कि संयुक्त बम्बई-राज्य में जो विधान बनाया गया था, उसके अधीन गुजरात और महाराष्ट्र-राज्यों में 13 लाख काश्तकारों को 24 लाख एकड़ भूमि पर स्वामित्व-अधिकार प्राप्त हो जाएंगे। उत्तरप्रदेश में लगभग 15 लाख शिकमी काश्तकारों तथा निवास-फार्म की ज़मीनों के काश्तकारों का राज्य के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित किया गया। इनके पास लगभग 20 लाख एकड़ ज़मीन है। संघीय क्षेत्र दिल्ली में लगभग 25,000 एकड़ ज़मीन का स्वामित्व करीब 18,000 काश्तकारों और शिकमी काश्तकारों को सौंप दिया गया।

22. यह सिफारिश की गई है कि तीसरी योजना के दौरान जिन ज़मीनों को भूस्वामी दुबारा हासिल नहीं कर सकते, उन पर काश्त करनेवालों को स्वामित्व-अधिकार सौंपने का कार्यक्रम पूरा करने के लिए कदम उठाए जाएं। खेती की ज़मीन की अधिकतम सीमा का कानून लागू होने पर उस सीमा से अधिक ज़मीन के काश्तकार उनके स्वामी बन जाएंगे। यह सुझाव पहले ही दिया जा चुका है कि विभिन्न राज्यों में नियत की गई पारिवारिक जोत से अधिक क्षेत्र के स्वामियों को फिर से ज़मीनें प्राप्त करने का कोई अधिकार नहीं होना चाहिए। ऐसे भूस्वामियों के काश्तकारों को इन ज़मीनों का मालिक बन जाना चाहिए। यह उद्देश्य पूरा करने के लिए, अपने विधान और अन्य परिस्थितियों के अनुसार, राज्य या तो खुद ही स्वामित्व-अधिकार प्राप्त करके काश्तकारों को सौंप सकता है या काश्तकारों को मालिक घोषित करके उन अधिकारों के बदले अपने विधान की शर्तों के अनुसार उनसे किस्तों में मुआवज़ा देने को कह सकता है। कुल मिला कर अच्छा यही है कि काश्तकार स्वामित्व-अधिकार पाने के लिए भूस्वामी के बजाय सीधा सरकार को भुगतान करे। इससे विधान अधिक अच्छी तरह लागू हो सकेगा तथा भूस्वामी-किसान का बन्धन भी टूट जाएगा।

23. अब सवाल यह उठता है कि छोटे भूस्वामियों के काश्तकारों को भी स्वामित्व-अधिकार दिए जाने चाहिए या नहीं। इन काश्तकारों के पास जो ऐसी ज़मीनें हों, जिन्हें मालिक दुबारा हासिल नहीं कर सकते, वहां तक यह बात सिद्धान्त रूप में वांछनीय है। लेकिन चूंकि इसकी लपेट में बहुत-से अत्यन्त छोटे भूस्वामी आते हैं, इसलिए सबके बारे में एक-सी कार्रवाई करना सम्भव नहीं है। राज्यों को चाहिए कि अपनी परिस्थियों को देखते हुए और इस दिशा में क्या कार्रवाई ज़रूरी है, यह तय करने के ख्याल से इस समस्या का अध्ययन करें।

जोत की अधिकतम सीमा

24. दूसरी योजना के दौरान आन्ध्रप्रदेश, असम, गुजरात, केरल, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब के पेप्सू-क्षेत्र, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, पश्चिम-बंगाल और संघीय क्षेत्रों में जोत की अधिकतम सीमा निर्धारित करने के बारे में विधान बनाए गए हैं। बिहार, मद्रास और मैसूर के विधान-मंडलों में जोत की अधिकतम सीमा तय करने-सम्बन्धी विधेयक पेश हैं। विगत पेप्सू-क्षेत्र को छोड़ कर पंजाब के बाकी इलाके में मौजूदा विधान इस बात की इजाज़त देता है कि अगर किसी के पास स्वीकृत सीमा से ज़्यादा ज़मीन है, तो उसका उपयोग सरकार उन काश्तकारों को फिर से बसाने के लिए कर सकती है, जो बेदखल कर दिए गए हैं या किए जा सकते हैं। विभिन्न राज्यों में अधिकतम जोत की जो सीमाएं निर्धारित या प्रस्तावित की गई हैं, उनके बारे में इस अध्याय के अनुबन्ध में संक्षिप्त रूप में विवरण प्रस्तुत किया गया है। विधान बन जाने पर ज़रूरी काम यह है कि उस पर तेज़ी से और कारगर तरीके से अमल कराने का प्रबन्ध किया जाए।

25. दूसरी योजना में इस सवाल पर विचार किया गया था कि अधिकतम सीमा की व्यवस्था किसी एक व्यक्ति की जोत पर लागू होनी चाहिए या किसी परिवार के सब सदस्यों के पास कुल जितनी ज़मीन हो, उस पर। जैसी कि आशा की जा सकती है, इस बारे में अलग-अलग तरीके अख्तियार किए गए हैं। कुछ राज्यों में—जैसे, आन्ध्रप्रदेश, जम्मू-कश्मीर, उड़ीसा, पंजाब, उत्तरप्रदेश और पश्चिम-बंगाल में—अधिकतम सीमा की व्यवस्था व्यक्ति पर लागू होती है, सम्मिलित हिन्दू-परिवारों के लिए कोई विशेष व्यवस्था नहीं की गई है। मध्यप्रदेश में अधिकतम जोत की व्यवस्था व्यक्ति पर लागू होती है, परन्तु जहां तक सम्मिलित हिन्दू-परिवार का प्रश्न है, हर सदस्य को अलग-अलग अधिकतम सीमा तक के क्षेत्र का अधिकार है। असम, गुजरात, केरल और राजस्थान में परिवार के अधीन कुल क्षेत्र पर अधिकतम सीमा की व्यवस्था लागू होती है और विधान में 'परिवार' शब्द की परिभाषा भी दे दी गई है। मद्रास और मैसूर में अभी जो विधान विचाराधीन हैं, उनमें भी इसी दृष्टिकोण से काम लिया गया है। इस प्रकार, अलग-अलग राज्यों ने अधिकतम सीमा की व्यवस्था, अपनी परिस्थितियों के अनुसार, व्यक्ति या परिवार पर लागू की है।

26. एक बार जब विधान बन जाए, तब उसमें जो संशोधन हों, उनका उद्देश्य मूलतः खामियां दूर करना और उसके अमल में सहूलियतें पैदा करना होना चाहिए—विधान के निहित सिद्धान्तों में मूल परिवर्तन लाना नहीं। इस प्रसंग में, सबसे महत्वपूर्ण विचारणीय विषय यह है कि अधिकतम सीमा को देखते हुए भूस्वामियों ने अपनी ज़मीनों के बारे में जो हेर-फेर किए हैं, उनके बारे में क्या रुख अख्तियार किया जाना चाहिए। कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि हाल के वर्षों में ज़मीनों के जो हस्तान्तरण हुए हैं, उनकी प्रवृत्ति अधिकतम सीमा के सम्बन्ध में विधान के उद्देश्यों को निष्फल करने की और ग्राम-अर्थव्यवस्था पर उसके प्रभाव को कम करने की रही है। हर राज्य में इस सवाल पर भरपूर विचार हुआ है कि इन हस्तान्तरणों को माना जाए या नहीं, और अगर न माना जाए, तो किस तारीख से। अधिकतर राज्यों में विधान लागू होने से पहले की किसी तारीख का निर्देश किया गया है। यह तारीख अधिकतम सीमा का विधेयक पेश किए जाने की तारीख हो सकती है या उसके प्रकाशन की या कोई और नियत तारीख। कुछ राज्यों ने—जैसे, असम, गुजरात, केरल, मद्रास, महाराष्ट्र, राजस्थान, उत्तरप्रदेश और पश्चिम-बंगाल ने तय किया है कि इस

नियत तारीख के बाद जो हस्तान्तरण हुए हों, उन्हें न माना जाए। कुछ राज्यों में—जैसे, आन्ध्रप्रदेश में—इस तरह की कोई व्यवस्था नहीं है। मध्यप्रदेश और उड़ीसा में विधान के अनुसार फालतू ज़मीनों के मालिक उन ज़मीनों को कुछ नियत वर्गों के लोगों के हाथ बेच सकते हैं।

27. चूंकि अनेक हस्तान्तरण अनिवार्यतः परिवार के सदस्यों के ही बीच होंगे, इसलिए यह सुझाव दिया गया है कि अधिकतम सीमा की शर्त हमेशा व्यक्ति के बजाय परिवार के कुल क्षेत्र पर लागू होनी चाहिए। परन्तु इस बात को ध्यान में रखते हुए कि कई राज्यों में अधिकतम सीमा की शर्त व्यक्ति की जोत पर लागू की गई है और बाकी राज्यों में परिवार के अधीन कुल क्षेत्र पर, कमज़ोरियां या खामियां दूर करने के लिए जो भी प्रयत्न किए जाएं, वे ऐसे हों कि विद्यमान विधान के ढांचे में ठीक बैठें। हस्तान्तरण के सवाल को शायद निम्नलिखित तरीके से हल किया जा सकता है—

(1) जहां विधान में हस्तान्तरण को अस्वीकार करने की कोई व्यवस्था इसलिए नहीं की गई है कि वे बहुत बड़े पैमाने पर हुए हैं, वहां एक ऐसी मुनासिब तारीख तय कर दी जानी चाहिए, जिसके बाद के सब हस्तान्तरणों को नामंजूर कर दिया जाए और अगर ज़रूरत हो, तो इसके संशोधक विधान का सहारा लिया जाए। यह तारीख वह हो सकती है, जिस दिन अधिकतम सीमा-सम्बन्धी प्रस्ताव प्रकाशित किए गए या उससे पहले की कोई तारीख, जो स्थानीय स्थितियों को ध्यान में रखते हुए नियत कर दी जाए।

(2) नियत तारीख के बाद किए गए हस्तान्तरणों में एक-दूसरे से इस प्रकार भेद किया जा सकता है: (अ) जो हस्तान्तरण परिवार के सदस्यों के बीच हुए हों; (आ) बेनामी और अन्य हस्तान्तरण, जो न तो पैसे के लिए और न रजिस्टर्ड दस्तावेज़ के द्वारा किए गए हों; और (इ) जो पैसे के लिए और रजिस्टर्ड दस्तावेज़ के द्वारा किए गए हों। (अ) और (आ) श्रेणियों के अधीन आनेवाले हस्तान्तरणों को अस्वीकार किया जा सकता है, पर (इ) श्रेणी के अन्तर्गत आनेवाले हस्तान्तरणों के प्रति यह रुख नहीं अपनाया जा सकता, क्योंकि हो सकता है कि जिन्हें भूमि हस्तान्तरित की गई है, वे छोटे भूस्वामी या भूमिहीन लोग हों और उन्होंने ज़मीन खरीदी हो। ऐसे लोगों की तो किसी-न-किसी तरह एक नियत सीमा तक—जैसे पारिवारिक जोत की सीमा तक—रक्षा करनी ही होगी।

(3) ऊपर बताए हुए ढंग पर सब हस्तान्तरणों की किसी उपयुक्त अधिकारी-द्वारा जांच किए जाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

अधिकतम सीमा से छूट

28. दूसरी योजना में यह कहा गया था कि निम्नलिखित श्रेणियों के फार्मों को अधिकतम सीमा की व्यवस्था से छूट दी जानी चाहिए—

(1) चाय, काफी और रबड़ के बागान;
(2) फल के बगीचे, जहां वे काफी सघन क्षेत्र के रूप में स्थित हों;
(3) पशुओं की नस्ल सुधारने, दूध-उद्योग, ऊन तैयार करने आदि के काम में लगे हुए विशेष फार्म;
(4) ईख के फार्म, जो चीनी-कारखानों-द्वारा चलाए जा रहे हों; और

(5) कुशलता से चलाए जानेवाले ऐसे फार्म, जो एक-दूसरे से सटे हुए ब्लाकों से मिल कर बने हों, जिनमें बहुत पूंजी लगाई जा चुकी हो या जिनमें स्थायी किस्म का निर्माण-कार्य कराया गया हो और जिनके खंडित होने से उत्पादन में कमी का डर हो ।

यह सिफारिश तीन मुख्य बातों को ध्यान में रख कर की गई थी । प्रथमतः, बागानों एवं औद्योगिक तथा कृषि-विषयक प्रतिष्ठानों में काम बहुत समन्वित रूप में करना जरूरी होता है । दूसरी बात, कृषि की कुछ विशेष शाखाओं में—जैसे, बागवानी, पशु-प्रजनन, दूध-उद्योग, आदि में—दीर्घकालीन आधार पर पूंजी लगानी पड़ती है और कई वर्ष निकल जाने पर ही कुछ फल मिल पाता है । तीसरी बात, यह सोचा गया था कि ऐसे कुशलतापूर्वक परिचालित फार्मों की रक्षा करने से, जो परस्पर सटे हुए ब्लाकों को मिला कर बनाए गए हों, जिनमें बहुत पूंजी लगाई जा चुकी है और स्थायी निर्माण-कार्य किया जा चुका हो, उत्पादन घटने की जोखिम से बचा जा सकेगा ।

29. राज्यों में जो विधान बनाए गए हैं, उनमें बागानों को सभी जगह अधिकतम सीमा की व्यवस्था से छूट दी गई है । विशेष फार्मों के पक्ष में भी व्यवस्थाएं की गई हैं । चीनी-कारखानों-द्वारा परिचालित ईख-फार्मों और कुशलतापूर्वक चलाए जानेवाले फार्मों के प्रति विभिन्न राज्यों का रुख कुछ अलग-अलग रहा है । कुछ राज्यों (आन्ध्रप्रदेश, असम, गुजरात, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, पंजाब और राजस्थान) के विधान में तथा कुछ अन्य राज्यों (बिहार और मैसूर) के विचाराधीन प्रस्तावों में कुशलतापूर्वक परिचालित फार्मों को अधिकतम सीमा की व्यवस्था से छूट दी गई है । जहां यह छूट मिली हुई है, वहां भी साधारणतः इस पर अमल होना बाकी है । केरल, मद्रास, महाराष्ट्र और उत्तरप्रदेश में कुशलतापूर्वक परिचालित फार्मों की अधिकतम सीमा की व्यवस्था से छूट देने की बात नहीं सोची गई । उत्तरप्रदेश की सरकार ने यह अधिकार प्राप्त कर लिया है कि जिन फार्मों में यन्त्रों-द्वारा खेती होती है, उनकी फालतू ज़मीनें लेकर उन पर राजकीय फार्म चलाए जाएं तथा तयशुदा शर्तों और उपबन्धों के अधीन उपयुक्त व्यक्तियों को प्रबन्धकों के रूप में नियुक्त किया जाए और यदि फार्मों के वर्तमान मालिक और सब तरह से योग्य हों, तो इस बारे में उन्हें तरजीह दी जाए ।

30. जहां तक चीनी-कारखानों-द्वारा परिचालित ईख-फार्मों का सवाल है, कई राज्यों—जैसे आन्ध्रप्रदेश, असम, मध्यप्रदेश, गुजरात, उड़ीसा, राजस्थान तथा पंजाब के पेप्सू-क्षेत्र—के विधान में अधिकतम सीमा की व्यवस्था उन पर लागू नहीं होती तथा बिहार और मैसूर में जो विधेयक विचाराधीन हैं, उनमें भी यही व्यवस्था है । परन्तु तीन राज्यों में इससे भिन्न रवैया अपनाया गया है । मद्रास के विधान में यह व्यवस्था है कि इस बात की जांच करने के लिए कि अलग-अलग कारखानों को अधिकतम सीमा की शर्त से छूट दी जानी चाहिए या नहीं, एक चीनी-कारखाना-मंडल बनाया जाए । पक्के फैसले करने से पहले चीनी-कारखाने की ज़रूरतों और उसके आर्थिक ढांचे, आदि बातों को भी ध्यान में रखना होगा । उत्तरप्रदेश में अधिकतम सीमा की शर्त से तो छूट नहीं दी गई है, पर यन्त्रीकृत फार्मों के सम्बन्ध में जिन व्यवस्थाओं का ऊपर उल्लेख किया गया है, वे चीनी-कारखानों-द्वारा परिचालित ईख-फार्मों पर भी लागू होंगी । महाराष्ट्र में चीनी-कारखानों के ईख-फार्मों को अधिकतम सीमा की शर्त से छूट नहीं मिली है, परन्तु एक या दो सटे हुए ब्लाकों के रूप में फार्मों की अखंडता बनाए रखने की व्यवस्था की गई है, ताकि चीनी-कारखानों को मुनासिब

दाम पर कच्चा माल पूरी मात्रा में और बराबर मिलता रहे; साथ ही, संयुक्त कृषि-समितियों को फालतू जमीन देने की भी व्यवस्था है। इन समितियों में यथासम्भव वे लोग होने चाहिए, जिन्होंने पहले अपनी ज़मीन का पट्टा चीनी-कारखाने के नाम किया हो; या फार्म पर काम करनेवाले खेतिहर श्रमिक; या फार्म पर काम करने के लिए कारखाने-द्वारा रखे गए तकनीकी और दूसरे कर्मचारी; अथवा पड़ोसी भूस्वामी, जो या तो छोटे भूस्वामी हों, या भूमिहीन श्रमिक।

31. दूसरी योजना में जिन बातों पर ज़ोर दिया गया है और कुशलतापूर्वक परिचालित फार्मों को तथा चीनी-कारखानों-द्वारा चलाए जानेवाले ईख-फार्मों को अधिकतम सीमा की शर्त से छूट देने के बारे मे जो सिफारिशें की गई है, वे आम तौर से तीसरी योजना के लिए भी कारगर हैं और प्रस्तावित मार्ग पर चलना लाभदायक है। दूसरी ओर, अगर कोई राज्य कुछ व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण या किसी और कारण से दूसरा रास्ता अपनाना चाहे, तो कुछ बातों के बारे में ज़रूर आश्वस्त हो जाना चाहिए। एक बात तो यह है, कि फार्मों की अखंडता बनी रहे और कार्य-कुशलता का स्तर गिरने न पाए, और दूसरी बात, चीनी-कारखानों के फार्मों का जहां तक सम्बन्ध है, यह पक्का भरोसा हो जाना चाहिए कि सम्बद्ध कारखानों को बराबर और सन्तोषजनक रूप से कच्चा माल मिलता रहे।

पुनर्व्यवस्था की योजनाएं

32. कृषि-जोत की अधिकतम सीमा निर्धारित करने के प्रस्तावों के दो उद्देश्य थे—एक तो यह, कि विषमता घटे तथा एक प्रगतिशील सहकारी ग्राम-अर्थव्यवस्था के विकास का रास्ता तैयार हो; और दूसरे यह, कि गांवों की जनता के भूमिहीन वर्गों में फिर से बांटने के लिए ज़मीन हासिल हो। ऐसे विधान बनाए गए हैं, जिनका दूरव्यापी असर होगा और यद्यपि ठीक-ठीक अनुमान लगा सकना अभी कठिन है, तथापि ऐसा लगता है कि भूमिहीनों में बांटने के लिए कुल जितनी फालतू जमीन उपलब्ध होगी, वह एक वक्त जितनी उम्मीद की जाती थी, उससे काफी कम होगी। भूमि-सुधार के वर्तमान स्तर पर सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अधिकतम सीमा-सम्बन्धी विधान लागू होने से हर राज्य में जो जमीनें हासिल होंगी, उनका जल्दी-से-जल्दी आवंटन कर दिया जाए। इन जमीनों के साथ-साथ बंजर भूमि तथा, जहां सम्भव हो, भूदान-आन्दोलन के द्वारा प्राप्त होनेवाली जमीनों को जमा किया जाए और पुनर्व्यवस्था की क्रमबद्ध योजनाओं पर जल्दी-से-जल्दी अमल किया जाए। भूमि देने के साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि ज़मीनों पर जिन्हें बसाया जाए, उनके लिए आवश्यक उधार रकम और दूसरी सुविधाओं की भी व्यवस्था की जाए, ताकि वे काश्तकारी के ऊंचे स्तर कायम कर सकें। दूसरी योजना में यह तय किया गया था कि अधिकतम सीमा का विधान लागू करने के फलस्वरूप जो ज़मीनें मिलेंगी, उनका बन्दोबस्त करने में भूस्वामियों-द्वारा खुदकाश्त के लिए ज़मीनों की पुन.प्राप्ति के कारण विस्थापित काश्तकारों, उन किसानों, जिनकी जोत फायदेमन्द न हो, तथा भूमिहीन श्रमिकों को तरजीह दी जाएगी। यह भी कहा गया था कि यथासम्भव इन ज़मीनों का बन्दोबस्त सहकारिता के आधार पर किया जाए। जो विधान बनाया गया है, उसमें आम तौर से इन सिफारिशों को माना गया है। यह भी सुझाव था कि जिन किसानों के पास ऐसी जोत है, जिसमें कुछ फायदा नही होता, उन्हें फालतू ज़मीनों के आधार पर बनाई गई सहकारी संस्थाओं में शामिल कर लिया जाना चाहिए,

बशर्ते कि वे अपनी ज़मीन भी उसमें शामिल करने को तैयार हों। इस दिशा में कदम उठाने के साथ ही आवश्यक आर्थिक और तकनीकी सहायता की व्यवस्था की जानी चाहिए। तीसरी योजना के लिए प्रस्तावित सहकारी खेती के विकास-कार्यक्रम में इसकी अपेक्षा की गई है।

चकबन्दी

33. पंजाब, उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात और मध्यप्रदेश में चकबन्दी के काम में प्रगति हुई है: अन्य राज्यों में, दूसरी योजना के दौरान, अपेक्षाकृत कम प्रगति हुई। सन् 1959-60 अन्त तक कोई 2 करोड़ 30 लाख एकड़ क्षेत्र की चकबन्दी की जा चुकी थी और 1 करोड़ 30 लाख एकड़ और भूमि में काम हो रहा था। राज्यों से जो सूचनाएं मिली हैं, उनके अनुसार तीसरी योजना में कुल मिला कर लगभग 3 करोड़ एकड़ की चकबन्दी का काम किया जाएगा। चकबन्दी के बारे में सभी राज्यों को कुछ अनुभव प्राप्त हो सके, इस ख्याल से चार साल पहले योजना-आयोग की ओर से दो विशेष अध्ययन कराए गए थे। इनमें से एक अध्ययन में तो यह बताया गया था कि देश के अलग-अलग भागों में इस बारे में क्या-क्या तरीके निकाले गए हैं और क्या-क्या समस्याएं सामने आई हैं। दूसरे अध्ययन में चकबन्दी-कार्यक्रम को तेज़ी से क्रियान्वित करने के सुझाव दिए गए थे। हालांकि चकबन्दी को कृषि-उत्पादन-कार्यक्रम का अभिन्न अंग माना गया है, पर व्यवहार में दोनों कार्यक्रमों में हमेशा कोई समन्वय नहीं रखा जाता। जहां चकबन्दी का काम बड़े पैमाने पर किया जा रहा हो, वहां की बात तो और है, पर साधारणत: प्रशिक्षित कर्मचारियों की कमी को देखते हुए यह वांछनीय मालूम होता है कि चकबन्दी का काम उन क्षेत्रों में केन्द्रित किया जाए, जिनमें सिंचाई की व्यवस्था है या होनेवाली है। योजना-आयोग इस बात का और बारीकी से अध्ययन करने का विचार कर रहा है कि देश के दक्षिणी और पूर्वी भागों में चकबन्दी-कार्यक्रम के विस्तार के रास्ते में जो बाधाएं, हैं, उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है और इन क्षेत्रों में चकबन्दी के तरीकों और पद्धति में क्या-क्या परिवर्तन और संशोधन ज़रूरी हैं।

भूमि-प्रबन्ध-सम्बन्धी विधान

34. पहली दोनों योजनाओं के दौरान जो-कुछ प्रगति हुई है, उसके प्रकाश में इस बात पर विचार किए जाने की ज़रूरत है कि भूमि-प्रबन्ध-विधान का क्या स्थान है और उसे किस तरीके से लागू किया जाना चाहिए। पहली योजना में मंशा यह थी कि भूमि-प्रबन्ध-विधान का क्षेत्र सामान्य हो, पर उसके विशेष प्रयोग बड़े भूस्वामियों के फार्मों को लेकर होने थे। दूसरी योजना के प्रस्तावों में उद्देश्य यह था कि भूमि-प्रबन्ध-विधान कुशल काश्तकारी और ऐसे प्रबन्ध के स्तर निर्धारित करे जिनके द्वारा वस्तुपरक और गुणात्मक निर्णय सम्भव हो सकें। यदि फार्मों को कुछ खास श्रेणियों में बांटा जा सकता हो तो जो औसत से ऊपर होते, उन्हें उचित प्रोत्साहन दिया जाता और जो औसत से नीचे गिर रहे होते, उन्हें ऊंचे स्तर तक उठने में मदद दी जाती। भूमि-प्रबन्ध के सम्बन्ध में विधान सिर्फ दो राज्यों और एक संघीय क्षेत्र में बनाए गए हैं और वहां भी दरअसल उन पर अमल नहीं हुआ। राज्यों में कुछ विशेष कृषि-प्रयोजनों के लिए—जैसे, बंजर भूमि के उपयोग के लिए, सुधरे किस्म के बीजों के इस्तेमाल के लिए और हानिकर कीटों तथा रोगों की रोकथाम के लिए—बहुत-सारे क़ानून हैं। इस विधान में बहुत-सी बातें पुरानी पड़ गई हैं और अब कृषि-

विकास के जो कार्यक्रम चल रहे है, तथा सामुदायिक विकास-खंडों मे जो विस्तार-सेवाएं आरम्भ की गई है, उन्हे देखते हुए इन पुरानी बातों को बदलने की ज़रूरत है। इसमे शक नही कि भूमि-प्रबन्ध के बारे मे जो सर्वश्रेष्ठ व्यावहारिक अनुभव हों, उन्हे किसानों, सहकारी संस्थाओं और पंचायतों के फायदे के लिए एकत्र करने का अपना महत्व है, परन्तु वैधानिक व्यवस्थाएं लागू करने के सवाल का और पचायतों तथा पचायत-समितियों के काम का अध्ययन राज्यों के परामर्श से तथा वर्तमान कानूनों के परिपालन मे उन्हे जो अनुभव प्राप्त हुए हों, उनके प्रकाश मे करना आवश्यक है।

कार्यान्विति की समस्याएं

35. राज्यों मे जो भूमि-सुधार-विधान बनाए गए है, उनकी कार्यान्विति मे पैदा होने-वाले समस्याओं का अध्ययन भूमि-सुधार-समिति ने किया है और बिचौलियों की समाप्ति, काश्तकारी-सम्बन्धी सुधार तथा जोत की अधिकतम सीमा के बारे में अलग-अलग जल्दी से जल्दी जो कार्रवाइयां की जानी है, उनकी सूची बना दी है। इस समिति ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि स्वामित्व के बारे मे ठीक-ठीक और नई-से-नई सूचना के आधार पर रिकार्ड तैयार किए जाने चाहिए और राजस्व-व्यवस्था को मजबूत बनाया जाना चाहिए। कुछ क्षेत्रों में स्वामित्व-सम्बन्धी रिकार्ड में नई-नई सूचनाएं शामिल कर ली गई हैं, पर कुछ में और तेजी से काम करने की ज़रूरत है। कुछ राज्यों मे स्वामित्व के रिकार्डों में काश्तकारों, शिकमी काश्तकारों और बंटाईदारों के बारे मे कोई सूचना नही दी गई, जिसके फलस्वरूप विधान के परिपालन में बाधा पड़ती है। स्वामित्व के अधिकारों से सम्बन्धित कागज़-पत्रों की जाच पर तथा उन्हे ठीक करने और उनका रिकार्ड तैयार करने पर जो खर्च होगा, उसे कुछ राज्यों ने अपनी योजनाओं मे शामिल कर लिया है और उसके लिए केन्द्रीय सहायता मिल सकती है। इनके लिए जो व्यवस्था की जाएगी, वह काम बढ़ने के साथ-साथ बढ़ानी पड़ेगी।

36. योजना-आयोग की अनुसन्धान-कार्यक्रम-समिति की मार्फत देश के विभिन्न भागों मे भूमि-सुधार के कई सर्वेक्षण शुरू किए गए है। उनसे यह पता चलता है कि विधान के परिपालन के रास्ते में क्या-क्या समस्याएं आती है। जो विधान बनाया गया, है, उसका क्षेत्र बड़ा व्यापक है और परिस्थितियों मे भी भेद है। इसलिए यह वांछनीय है कि इन अध्ययनों को व्यवस्थित आधार पर विस्तार दिया जाए। इस काम के लिए विश्वविद्यालयों और प्रमुख अनुसन्धान-केन्द्रों से भरपूर सहायता ली जानी चाहिए। उद्देश्य यह होना चाहिए कि सामान्य योजना के अनुरूप विभिन्न क्षेत्र उनकी परिधि में आ जाएं। इसके अलावा संक्रान्तिकाल मे भी तथा दीर्घकालीन आर्थिक और सामाजिक प्रभावों की दृष्टि से भी भूमि-सुधारों के मूल्यांकन की व्यवस्था होनी चाहिए।

37. योजना-आयोग में भूमि-सुधार की प्रगति के सम्बन्ध में एक रिपोर्ट तैयार की जा रही है। इससे विभिन्न राज्यों में जो विधान बनाए गए है, उनकी मूल बाते सामने आ जाएंगी। इस अध्ययन में जोत और काश्त के बारे में वे सब आंकड़े भी दिए जाएंगे, जो सन् 1954-55 की गणना के समय इकट्ठे किए गए थे। इस अध्याय के अनुबन्ध 2 मे इनका संक्षेप मे उल्लेख किया गया है।

अनुबन्ध 1

वर्तमान जोतों की अधिकतम सीमा — अधिकतम सीमा का स्तर

राज्य	अधिकतम सीमा का स्तर	विशेष
(1)	(2)	(3)
आन्ध्रप्रदेश	पारिवारिक जोत का साढ़े चार-गुना, यानी 27 से 324 एकड़ तक (पारिवारिक जोत कम-से-कम 6 एकड़ सिंचित भूमि से लेकर 72 एकड़ सूखी भूमि तक होती है। पहली किस्म की ज़मीन पर बन्दोबस्त तरम संख्या 1 होता है या उसे 15 आने के बन्दोबस्त वर्गीकरण में रखा जाता है; दूसरी किस्म पर 5 से ऊपर का तरम होता है और उसमें चलका मिट्टी होती है, जिसका मूल्य 8 आने से नीचे आंका जाता है।)	परिवार का आकार बड़ा है, इसका ख्याल रखा गया है। परिवार की सदस्य-संख्या पांच से अधिक होने पर प्रत्येक सदस्य के लिए एक पारिवारिक जोत की व्यवस्था है। इस संख्या की कोई सीमा नहीं रखी गई।
असम	50 एकड़	इसका कोई ख्याल नहीं रखा गया है कि परिवार कितना बड़ा है।
बिहार (प्रवर-समिति-द्वारा विधेयक जिस रूप में भेजा गया है)	(अ) जिस भूमि की सिंचाई सरकार-द्वारा निर्मित एवं संरक्षित सिंचाई-साधनों से होती है—24 एकड़ (आ) जिस भूमि की सिंचाई सरकार-द्वारा निर्मित एवं संरक्षित उद्वहन सिंचाई-साधनों अथवा नलकूपों से होती हो—36 एकड़ (इ) बगीचोंवाली भूमि तथा दूसरी भूमि, जिसे किसी और श्रेणी में शामिल नहीं किया गया हो—48 एकड़ (ई) दिआरा ज़मीन —60 एकड़ (उ) पहाड़ी, रेतीली या दूसरी तरह की भूमि, जिसमें धान, रबी या नकदी फसलों की उपज न हो —72 एकड़	परिवार बड़ा होने पर छूट दी गई है, पर यह छूट अधिकतम सीमा की दुगुनी से अधिक नहीं हो सकती।
गुजरात	(अ) फसलवाली सूखी ज़मीन (इसमें गैर-सरकारी साधनों-द्वारा	इसका कोई ख्याल नहीं रखा गया है कि परिवार कितना

(1)	(2)	(3)
	सिंचित भूमि भी शामिल है) —56 से 132 एकड़ (आ) धान की भूमि और मौसमी सिंचाईवाली भूमि—38 से 88 एकड़ (इ) स्थायी रूप से सिंचित भूमि — 19 से 44 एकड़ (विभिन्न स्थानीय क्षेत्रों में अधिकतम सीमा अलग-अलग है, जिसका अधिनियम में विवरण दिया गया है।)	बड़ा है।
जम्मू-कश्मीर	$22\frac{3}{4}$ एकड़	इसका कोई ख्याल नहीं रखा गया है कि परिवार कितना बड़ा है।
केरल	दोहरी फसलवाली धान की 15 एकड़ ज़मीन या उसके बराबर क्षेत्र (इसके बराबर क्षेत्र 15 एकड़ से $37\frac{1}{2}$ एकड़ तक हो सकते हैं)	परिवार कितना बड़ा है, इसका ख्याल रखा गया है, पर अन्तिम हद है दोहरी फसलवाली 25 एकड़ धान की ज़मीन या इसके बराबर क्षेत्र। अविवाहित वयस्क व्यक्ति के लिए अधिकतम क्षेत्र के आधे को ही सीमा माना जाएगा।
मध्यप्रदेश	28 स्टैंडर्ड एकड़ (एक स्टैंडर्ड एकड़ का मतलब है, एक एकड़ बारहमासी सिंचाईवाली ज़मीन या 2 एकड़ मौसमी सिंचाईवाली ज़मीन या 3 एकड़ सूखी फसलवाली ज़मीन)। अधिकतम सीमा घटा कर 25 एकड़ करने और एक बड़े परिवार के लिए बाहरी सीमा 50 स्टैंडर्ड एकड़ निश्चित करनेवाला एक विधेयक स्वीकार किया जा चुका है।	परिवार कितना बड़ा है, इसका ख्याल रखा गया है, पर अन्तिम हद 53 स्टैंडर्ड एकड़ है।
मद्रास (विधेयक)	30 स्टैंडर्ड एकड़ (निर्धारण की दर और भूमि की कोटि के हिसाब से एक से चार एकड़ तक स्टैंडर्ड एकड़ माना गया है।)	परिवार कितना बड़ा है, इसका ख्याल रखा गया है। पांच से अधिक सदस्य हों, तो प्रति सदस्य 5 स्टैंडर्ड एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र दिया जा सकता है, किन्तु 60 स्टैंडर्ड एकड़ से ज्यादा क्षेत्र किसी भी हालत में नहीं दिया जाएगा।

(1)	(2)	(3)
महाराष्ट्र	(अ) नहर से बारहमासी सिंचाईवाली ज़मीन—18 एकड़	परिवार कितना बड़ा है, इसका ख्याल रखा गया है, परन्तु अधिकतम सीमा से दुगुनी से ज़्यादा ज़मीन किसी भी हालत में नहीं दी जाएगी।
	(आ) नहर से मौसमी सिंचाईवाली ज़मीन (1) दो मौसमी सिंचाईवाली —27 एकड़ (2) एक मौसम में सिंचाईवाली —48 एकड़	
	(इ) सूखी ज़मीनें (इनमें गैर-सरकारी साधनों से सींची जानेवाली ज़मीनें भी शामिल हैं)—विभिन्न स्थानीय क्षेत्रों में 66 से 126 एकड़	
मैसूर (विधेयक जिस रूप में प्रवर-समिति-द्वारा भेजा गया है।)	27 स्टैंडर्ड एकड़ (स्टैंडर्ड एकड़ का हिसाब अलग-अलग है। यह एक एकड़ ऐसी गीली ज़मीन से लेकर जिसमें सिंचाई का पूरा-पूरा भरोसा हो और धान की दो फसलें उगाई जा सकें, 8 एकड़ तक ऐसी सूखी या बागानवाली ज़मीन तक के बराबर माना जा सकता है, जिसमें सालभर में 25 इंच से कम वर्षा होती है।)	परिवार कितना बड़ा है, इसका ख्याल रखा गया है, परन्तु अधिकतम सीमा से दुगुनी से ज़्यादा ज़मीन किसी भी हालत में नहीं दी जाएगी।
उड़ीसा	25 स्टैंडर्ड एकड़ (स्टैंडर्ड एकड़ में बारहमासी सिंचाईवाली 1 एकड़ ऐसी ज़मीन से, जिसके लिए साल में कम-से-कम तीन फसलों में पानी मिलते रहने का पूरा-पूरा भरोसा हो, 4 एकड़ सूखी ज़मीन तक मानी जा सकती है।)	परिवार कितना बड़ा है, इसका ख्याल रखा गया है, परन्तु अधिकतम सीमा से दुगुनी से ज़्यादा ज़मीन किसी भी हालत में नहीं दी जाएगी।
पंजाब पंजाब-क्षेत्र :	30 स्टैंडर्ड एकड़, जो 60 साधारण एकड़ से ज़्यादा किसी भी तरह नहीं होंगे। विस्थापितों के लिए अधिकतम सीमा 50 स्टैंडर्ड एकड़ है, जो 100 साधारण एकड़ से किसी भी तरह ज़्यादा नहीं होगी।	परिवार कितना बड़ा है, इसका कोई ख्याल नहीं रखा गया है।

(1)	(2)	(3)
पेप्सू-क्षेत्र :	30 स्टैंडर्ड एकड़, जो 80 साधारण एकड़ से ज्यादा किसी भी तरह नहीं होंगे। विस्थापितों के लिए अधिकतम सीमा 40 स्टैंडर्ड एकड़ है, जो 100 साधारण एकड़ से किसी तरह ज्यादा न होगी।	परिवार कितना बड़ा है, इसका कोई ख्याल नहीं रखा गया है।
राजस्थान	30 स्टैंडर्ड एकड़ (स्टैंडर्ड एकड़ का मतलब उतनी ज़मीन से है, जिसमें 10 मन गेहूं या उतनी कीमत की कोई और फसल पैदा हो।)	परिवार कितना बड़ा है, इसका ख्याल रखा गया है, पर 60 एकड़ से ज्यादा ज़मीन किसी भी हालत में नहीं दी जाएगी।
उत्तरप्रदेश	40 एकड़ 'अच्छी किस्म' की ज़मीन (अच्छी किस्म की 1 एकड़ ज़मीन का मतलब है, 1 एकड़ ऐसी ज़मीन, जिसके लगान की पुश्तैनी दर 6 रु० से अधिक हो; 1½ एकड़ ऐसी जमीन, जिसकी दर 4 से 6 रु० प्रति एकड़ तक हो और 2 एकड़ ऐसी ज़मीन, जिसकी दर 4 रु० प्रति एकड़ या इससे कम हो।)	परिवार के आधार पर यह रिआयत दी गई है कि अगर पांच से ज्यादा सदस्य हों, तो उन्हें प्रति सदस्य 8 एकड़ 'अच्छी किस्म' की जमीन मिलेगी, परन्तु यह मात्रा 64 एकड़ से ज्यादा किसी भी हालत में नहीं होगी।
पश्चिम-बंगाल	25 एकड़	परिवार कितना बड़ा है, इसका कोई ख्याल नहीं रखा गया है।
दिल्ली	30 स्टैंडर्ड एकड़ (स्टैंडर्ड एकड़ में सिचाईवाली $\frac{4}{5}$ एकड़ भूमि से लेकर 2 एकड़ बारानी भूमि तक मानी गई है।)	परिवार कितना बड़ा है, इस आधार पर रिआयत दी गई है, पर 60 एकड़ से ज्यादा ज़मीन किसी भी तरह नहीं दी जाएगी।
हिमाचलप्रदेश	चम्बा ज़िले में 30 एकड़ और दूसरे ज़िलों में उतनी ज़मीन, जिसका निर्धारण 125 रु० तक किया गया हो।	परिवार कितना बड़ा है, इसका कोई ख्याल नहीं रखा गया है।
मणिपुर	25 एकड़	परिवार कितना बड़ा है, इसके आधार पर रिआयत दी गई है, पर 50 एकड़ से ज्यादा ज़मीन किसी भी हालत में नहीं दी जाएगी।
त्रिपुरा	25 स्टैंडर्ड एकड़ (स्टैंडर्ड एकड़ 1 एकड़ नाल या लुंगा भूमि से लेकर 3 एकड़ टिल्ला भूमि तक के बराबर माना गया है।)	परिवार कितना बड़ा है, इसके आधार पर रिआयत दी गई है, पर 50 एकड़ से ज्यादा जमीन किसी भी हालत में नहीं दी जाएगी।

अनुबन्ध 2

जोत और काश्तकारी के सम्बन्ध में गणना

व्याख्यात्मक टिप्पणी

पहली योजना की सिफारिश के अनुसार, असम, पश्चिम-बंगाल, जम्मू-कश्मीर तथा मणिपुर और त्रिपुरा के संघीय क्षेत्रों को छोड़ कर बाकी सभी राज्यों में सन् 1954-55 में जोत और काश्तकारी के सम्बन्ध में गणना की गई थी। असम और पश्चिम-बंगाल में राज्य-सरकारों ने जोतों के बारे में पहले से ही कुछ आंकड़े इकट्ठे कर रखे थे। पश्चिम-बंगाल में अधिकतम सीमा के बारे में विधान बनाया जा चुका था, असम में एक विधेयक स्वीकृत किया जा चुका था तथा जम्मू-कश्मीर में अधिकतम सीमा की व्यवस्था पहले ही लागू की जा चुकी थी। इन राज्यों में फिर से गणना करना ज़रूरी नहीं समझा गया। मणिपुर और त्रिपुरा में प्रशिक्षित कर्मचारियों के अभाव और ज़मीन के ऊबड़-खाबड़ होने-सम्बन्धी कठिनाइयों के कारण गणना का प्रस्ताव छोड़ दिया गया था।

2. गणना के काम में भूतपूर्व राज्यों, आन्ध्र, बम्बई, मध्यप्रदेश, मद्रास, हैदराबाद, मध्यभारत, सौराष्ट्र, अजमेर, भोपाल और कच्छ में जोतों की पूरी-पूरी गिनती की गई। पंजाब में और मैसूर, कुर्ग, दिल्ली, हिमाचलप्रदेश तथा विन्ध्यप्रदेश के भूतपूर्व राज्यों में गणना के कार्य में जल्दी करने के ख्याल से सिर्फ 10 एकड़ या उससे अधिक की जोतों की गणना की गई। फिर भी 10 एकड़ से कम के जोतों के भी अनुमान लगाए गए। बिहार, उड़ीसा, राजस्थान, उत्तरप्रदेश तथा तिरुवांकुर-कोचीन के भूतपूर्व राज्य में नमूने के तौर पर जांच की गई।

3. ये आंकड़े आम तौर से सन् 1953-54 के बारे में हैं। गणना में जो खास बातें सामने रखी गईं, वे मुख्य रूप से ये हैं—

(1) गणना भूस्वामियों की जोत में आनेवाली खेती की भूमि के बारे में थी। खेती की भूमि की परिभाषा इस तरह की जाती है कि वह किसी जोत में आनेवाली कृष्य भूमि है। इसमें चरागाहें और बगियां भी शामिल हैं। गैर-दखलकारी क्षेत्र—जैसे, जंगली भूमि तथा दूसरी अकृष्य भूमि—को शामिल नहीं करना था। शहरी इलाकों में जो ज़मीन थी, वह भी गणना के क्षेत्र से बाहर थी।

(2) 'स्वामित्ववाला क्षेत्र'—इस पद की व्याख्या इस प्रकार की गई कि उसमें भूस्वामियों-द्वारा अधिकृत ज़मीनों के साथ-साथ वे ज़मीनें भी आ जाएं, जो स्थायी और मौरूसी दखलकारी हकों के अधीन किसी के कब्ज़े में हों। यानी, मान लीजिए, किसी व्यक्ति 'क' की ज़मीन है और दखलकारी हकों के अधीन वह किसी दूसरे व्यक्ति 'ख' के कब्ज़े में है, तो वह 'ख' की जोत में गिनी गई और 'क' की जोत में शामिल नहीं की गई। यह बात भी मानी गई कि जिन लोगों को कानूनन स्थायी और मौरूसी हक प्राप्त नहीं हैं, पर जिन्हें व्यवहार में वे हक मिले हुए हैं, उन्हें भी भूस्वामी माना जाए।

(3) पूरे राज्य में खेती की पूरी ज़मीन, जो किसी एक व्यक्ति के कब्ज़े में हो, एक ही जोत मानी जाएगी। जहां तक संयुक्त जोत का सवाल है, हर साझीदार का हिस्सा अलग-अलग जोत माना जाएगा।

(4) 'खुदकाश्त' के क्षेत्र की व्याख्या इस तरह की गई कि वह 'स्वामित्ववाले क्षेत्र' और 'पट्टे पर दिए गए क्षेत्र' का अन्तर है। 'पट्टे पर दिया गया क्षेत्र' वह जमीन है जो किसी को किराए पर दे दी गई हो, जिस पर उसे स्थायी और मौरूसी हक हासिल न हुआ हो।

4. दूसरी पंचवर्षीय योजना के समय ज़मीन-सम्बन्धी गणना के जो भी आंकड़े मिल सके थे, वे उसमें संक्षेप में दे दिए गए थे। फिर, सन् 1956 में राज्यों का फिर से जो संगठन हुआ, उसके कारण उनके लिए उन आंकड़ों को फिर से तालिकाबद्ध किया गया। यहां आगे की तालिकाओं में उन्हें उसी रूप में प्रस्तुत किया गया है, परन्तु इनमें बिहार और उड़ीसा के आंकड़े नहीं हैं। बिहार-सरकार का ख्याल है कि नमूने के लिए किए गए सर्वेक्षण से जो आंकड़े जमा किए गए हैं, उनसे स्वामित्व और काश्तकारी की सही तसवीर बिल्कुल ही सामने नहीं आती। उड़ीसा से मिले हुए आंकड़े अधूरे थे।

जोतों का वितरण और आकार

(अ) जिन राज्यों में हर आकार-वर्ग की जोतों की पूरी-पूरी गणना की गई

(हज़ार में)

		जोतों की कोटियां (एकड़ में)									
		2.5 तक	2.5 से 5 तक	5 से 10 तक	10 से 20 तक	20 से 30 तक	30 से 40 तक	40 से 60 तक	60 से 100 तक	100 से ऊपर	सब कोटियां
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
		1. आन्ध्रप्रदेश—(क) भूतपूर्व आन्ध्र-क्षेत्र									
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	1,253	514	423	272	87	39	31	17	9	2,645
	प्रतिशत	(47.4)	(19.4)	(16)	(10.2)	(3.3)	(1.5)	(1.2)	(0.6)	(0.4)	(100)
	क्षेत्र	1,417	1,853	2,976	3,790	2,115	1,318	1,491	1,258	1,816	1,9034
	प्रतिशत	(7.9)	(10.3)	(16.5)	(21)	(11.7)	(7.3)	(8.2)	(7)	(10.1)	(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र*	जोतों की संख्या	1,188	486	396	253	80	35	27	14	7	2,486
	प्रतिशत	(47.8)	(19.6)	(15.9)	(10.2)	(3.2)	(1.4)	(1.1)	(0.6)	(0.2)	(100)
	क्षेत्र	1,303	1,713	2,739	3,478	1,900	1,174	1,295	1,048	1,151	15,801
	प्रतिशत	(8.3)	(10.8)	(17.3)	(22)	(12.1)	(7.4)	(8.2)	(6.6)	(7.3)	(100)
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	96	122	192	247	150	100	133	137	371	1,548
	प्रतिशत	(6.2)	(7.9)	(12.4)	(15.9)	(9.7)	(6.5)	(8.6)	(8.9)	(23.9)	(100)
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	6.7	6.6	6.5	6.5	7.1	7.6	8.9	10.8	20.5	8.6

(ख) तेलंगाना-क्षेत्र‡

(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	388	263	331	311	126	64	59	37	28	1,607
	प्रतिशत	(24.2)	(16.4)	(20.6)	(19.4)	(7.8)	(4)	(3.6)	(2.3)	(1.7)	(100)
	क्षेत्र	447	968	2,416	4,413	3,101	2,196	2,853	2,863	5.776	25,033
	प्रतिशत	(1.8)	(3.9)	(9.6)	(17.6)	(12.4)	(8.8)	(11.4)	(11 4)	(23.1)	(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र	जोतों की संख्या	379	249	308	287	118	58	53	34	21	1,507
	प्रतिशत	(25.1)	(16.5)	(20.5)	(19)	(7.8)	(3.9)	(3.5)	(2.2)	(1.5)	(100)
	क्षेत्र	441	945	2,255	4,086	2,870	2,013	2,566	2,535	3,936	21,647
	प्रतिशत	(2)	(4.4)	(10.4)	(18.8)	(13.3)	(9.3)	(11.9)	(11.7)	(18.2)	(100)
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	32	81	203	397	277	219	302	319	1,556	3,386
	प्रतिशत	(0.9)	(2.4)	(6)	(11.8)	(8.1)	(6.4)	(9)	(9.4)	(46)	(100)
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	7.2	8.4	8.4	9	8.9	9.9	10.6	11.2	26.9	13.5

2. गुजरात और महाराष्ट्र†

(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	1,928	1,115	1,286	1,127	473	242	201	99	42	6,513
	प्रतिशत	(29.6)	(17.1)	(19.7)	(17.3)	(7.3)	(3.7)	(3.1)	(1.5)	(0.7)	(100)
	क्षेत्र	2,309	4,129	9,320	16,097	11,626	8,368	9,676	7,355	8,160	77,040
	प्रतिशत	(3)	(5.3)	(12.1)	(20.9)	(15.1)	(10.9)	(12.6)	(9.5)	(10.6)	(100)

*इसमें खेती-योग्य वह जमीन शामिल नहीं है, जो एक साल से अधिक समय से परती पड़ी है।

‡ 'सूखे एकड़ों' में क्षेत्र की गणना। औसत रूप से एकड़ सिंचाईवाले क्षेत्र को 6 एकड़ सूखे क्षेत्र के बराबर मान कर साधारण एकड़ों को 'सूखे एकड़ों' में परिवर्तित कर दिया गया है।

† गुजरात और महाराष्ट्र के आंकड़े अलग-अलग उपलब्ध नहीं हैं। मराठवाडा में जोतों का क्षेत्र 'सूखे एकड़ों' में दिखाया गया है। औसत रूप से एक साधारण एकड़ 1·002 सूखे एकड़ के बराबर है। चूंकि यह अन्तर बहुत ही छोटा है, इसलिए सम्पूर्ण राज्य के लिए जोतों का विभाजन करते समय एक सूखे एकड़ को एक साधारण एकड़ के बराबर मान लिया गया है।

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र*	जोतों की संख्या	1,723	999	1,137	1,005	424	216	179	85	30	5,798
	प्रतिशत	(29.7)	(17.2)	(19.6)	(17.3)	(7.3)	(3.8)	(3.1)	(1.5)	(0.5)	(100)
	क्षेत्र	1,996	3,662	8,084	14,139	10,293	7,411	8,501	6,201	5,044	65,330
	प्रतिशत	(3.1)	(5.6)	(12.4)	(21.6)	(15.8)	(11.3)	(13)	(9.5)	(7.7)	(100)
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	360	658	1,357	2,114	1,401	960	1,123	1,029	2,516	11,518
	प्रतिशत	(3.1)	(5.7)	(11.8)	(18.4)	(12.2)	(8.3)	(9.7)	(8.9)	(21.9)	(100)
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	15.6	15.9	14.6	13.1	12.1	11.5	11.6	14	30.8	15
3. मध्यप्रदेश‡											
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या		4,324		754	260	111	85	43	22	5,599
	प्रतिशत		(77.2)		(13.5)	(4.6)	(2)	(1.5)	(0.8)	(0.4)	(100)
	क्षेत्र		14,250		10,587	6,312	3,827	4,108	3,232	4,119	46,435
	प्रतिशत		(30.7)		(22.8)	(13.6)	(8.2)	(8.8)	(7)	(8.9)	(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र†	जोतों की संख्या	1,643	839	866	640	214	90	67	33	16	4,408
	प्रतिशत	(37.3)	(19)	(19.6)	(14.5)	(4.9)	(2)	(1.5)	(0.8)	(0.4)	(100)
	क्षेत्र	1,650	3,047	6,180	8,932	5,185	3,072	3,216	2,461	2,872	36,615
	प्रतिशत	(4.5)	(8.3)	(16.9)	(24.4)	(14.2)	(8.4)	(8.8)	(6.7)	(7.8)	(100)
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र†	101	178	370	555	338	219	264	245	528	2,798
	प्रतिशत	(3.6)	(6.4)	(13.2)	(19.7)	(12.1)	(7.9)	(9.4)	(8.8)	(18.9)	(100)
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	—	—	—	5.2	5.4	5.7	6.4	7.5	12.8	—

4. मद्रास @

(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	1,852	934	739	391	104	42	32	18	12	1,124
	प्रतिशत	(44.9)	(22.6)	(17.9)	(9.5)	(2.5)	(1.1)	(0.8)	(0.4)	(0.3)	(100)
	क्षेत्र	2,231	3,360	5,136	5,389	2,525	1,424	1,546	1,357	2,799	25,768
	प्रतिशत	(8.7)	(13)	(19.9)	(21)	(9.8)	(5.5)	(6)	(5.3)	(10.8)	(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र ×	जोतों की संख्या	1,786	848	691	362	93	37	28	15	9	3,905
	प्रतिशत	(45.7)	(22·6)	(17.7)	(9.3)	(2.4)	(0.9)	(0.8)	(0.4)	(0.2)	(100)
	क्षेत्र	2,167	3,170	4,808	4,962	2,237	1,315	1,318	1,113	1,949	23,038
	प्रतिशत	(9.4)	(13.8)	(20.8)	(21.5)	(9.7)	(5.7)	(5.8)	(4.8)	(8.5)	(100)
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	114	175	286	362	200	138	188	208	817	2,487
	प्रतिशत	(4.6)	(7)	(11.5)	(14.6)	(8)	(5.5)	(7.6)	(8.4)	(32.8)	(100)
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	5.1	5.2	5.6	6.7	7.9	9.7	12.1	15.3	29.2	9.7

* कच्छ-क्षेत्र में खेती-योग्य बंजर भूमि को, जिनके स्वामी हैं, 'स्वामित्ववाला क्षेत्र' में तो दर्शाया गया है, पर 'खुदकाश्त क्षेत्र' के अन्तर्गत नहीं ।

‡ इसमें भूतपूर्व राजस्थान से अलग किया गया सिरोंज-सब-डिवीजन शामिल नहीं है, क्योंकि वहां पर गणना नहीं हुई थी ।

† इसमें विन्ध्यप्रदेश का क्षेत्र शामिल नहीं है ।

@ इन आंकड़ों में मद्रास में शामिल हुए भूतपूर्व तिरुवांकुर-कोचीन-रियासत का क्षेत्र शामिल नहीं है, क्योंकि वहां के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। इसके अतिरिक्त, जोतों का क्षेत्र 'सूखे एकड़ों' के रूप में दर्शाया गया है । एक सिंचित एकड़ तीन सूखे एकड़ के बराबर माना गया है ।

× स्वामियों की लापरवाही से बेकार पड़ी जमीनों और 'मामल' जमीनों को 'स्वामित्ववाला क्षेत्र' में तो दर्शाया गया है, पर 'खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र' में नहीं ।

(आ) जिन राज्यों में गणना 10 एकड़ या उससे अधिक तक सीमित रही

(हज़ार में)

		जोतों की कोटियां (एकड़ में)							
		10 तक	10 से 20 तक	20 से 30 तक	30 से 40 तक	40 से 60 तक	60 से 100 तक	100 से ऊपर	सब कोटियां
1. मैसूर									
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	1,790	430	160	74	59	30	14	2,557
	प्रतिशत	(70)	(16.8)	(6.3)	(2.9)	(2.3)	(1.2)	(0.5)	(100)
	क्षेत्र	7,004	6,139	3,914	2,531	2,840	2,240	2,780	27,448
	प्रतिशत	(25.5)	(22.4)	(14.3)	(9.2)	(10.3)	(8.2)	(10.1)	(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र	जोतों की संख्या	—	373	133	61	47	22	17	653*
	क्षेत्र	—	3,781	3,266	2,070	1,493	1,660	1,589	13,859*
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	—	958	680	454	542	505	1,061	4,200*
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	—	(15.6)	(17.4)	(17.9)	(19.1)	(22.5)	(38.2)	(20.5)
2. पंजाब									
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	2,505	284	96	42	32	17	8	2,984
	प्रतिशत	(83.9)	(9.5)	(3.2)	(1.4)	(1.1)	(0.6)	(0.3)	(100)
	क्षेत्र	6,963	4,040	2,329	1,446	1,564	1,278	1,638	19,258
	प्रतिशत	(36.1)	(21)	(12.1)	(7.5)	(8.1)	(6.7)	(8.5)	(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र	जोतों की संख्या	—	233	76	32	23	10	4	378*
	क्षेत्र	—	3,313	1,831	1,070	1,076	732	620	8,642*

(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	—	751	495	342	437	439	858	3,322*
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	—	(18.6)	(21.3)	(23.7)	(27.9)	(34.4)	(52.4)	(27)*
3. दिल्ली									
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	87	4	1	(‡)	(‡)	(‡)	(‡)	92
	प्रतिशत	(94.6)	(4.1)	(0.9)	(0.2)	(0.1)	(0.1)	(‡)	(100)
	क्षेत्र	152	51	19	8	5	3	3	241
	प्रतिशत	(62.9)	(21.2)	(7.9)	(3.5)	(2)	(1.2)	(1.3)	(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र	जोतों की संख्या	—	4	1	(‡)	(‡)	(‡)	(‡)	5*
	क्षेत्र	—	51	19	8	4	3	2	87*
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	—	1	1	(‡)	(‡)	(‡)	(‡)	2*
	स्वामित्व वाले क्षेत्र का प्रतिशत	—	(1.6)	(2.5)	(3.5)	(5)	(5)	(10.1)	(2.6)*
4. हिमाचलप्रदेश									
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	621	8	1	(‡)	(‡)	(‡)	(‡)	630
	प्रतिशत	(98.5)	(1.2)	(0.2)	(0.1)	(‡)	(‡)	(‡)	(100)

टिप्पणी : (1) मैसूर और कुर्ग-क्षेत्रों में, 10 एकड़ या इससे अधिक की जोतों की गणना की गई थी, किन्तु जो क्षेत्र बम्बई, हैदराबाद और मद्रास से हस्तान्तरित कर दिए गए हैं, उनमें सभी आकार-वर्गों की जोतों की गणना की गई।

(2) कर्नाटक में, जोतों के क्षेत्रों को 'सूखे एकड़ों' में बताया गया है। एक साधारण एकड़ औसत रूप से 1.01 सूखे एकड़ के बराबर होता है। चूंकि दोनों में फ़र्क बहुत मामूली है, इसलिए पूरे राज्य में जोतों के वितरण का ब्यौरा तैयार करने के लिए सूखे एकड़ और साधारण एकड़, दोनों को बराबर मान लिया गया है।

*यह आंकड़ा दस एकड़ या उससे अधिक की जोतों के बारे में है।

(‡) का मतलब है, 500 यानी 0.05 प्रतिशत से कम।

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
	क्षेत्र	539	101	31	11	8	7	10	707
	प्रतिशत	(76.2)	(14.3)	(4.4)	(1.6)	(1.1)	(0.9)	(1.5)	(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र	जोतों की संख्या	—	7	1	1	(‡)	(‡)	(‡)	9*
	क्षेत्र	—	97	30	10	7	6	10	160
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	—	4	1	1	(‡)	(‡)	(†)	8*
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	—	(3.9)	(4.1)	(7.7)	(6.7)	(7)	(9)	(4.7)*

* यह आंकड़ा दस एकड़ या उससे अधिक की जोतों के बारे में है ।

(‡) का मतलब है, 500 यानी 0.05 प्रतिशत से कम ।

(†) चम्बा ज़िले में भट्टियाट तहसील में गणना की गई । चम्बा तहसील के 58 गांवों तथा चूड़ा तहसील के 36 गांवों का चुनाव यथेच्छ कर लिया गया था ।

(इ) जिन राज्यों में जोतों की गणना नमूने के आधार पर की गई

(हज़ार में)

		जोतों की कोटियां (एकड़ में)									
		2.5 तक	2.5 से 5 तक	5 से 10 तक	10 से 20 तक	20 से 30 तक	30 से 40 तक	40 से 60 तक	60 से 100 तक	100 से ऊपर	सब कोटियां
				1. केरल—(क) तिरुवांकुर-कोचीन							
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	1,974	191	80	26	6	2		4		2,283
	प्रतिशत	(86.5)	(8.4)	(3.5)	(1.1)	(0.3)	(0.1)		(0.1)		(100)
	क्षेत्र	1,229	668	541	340	146	72		327		3,323
	प्रतिशत	(37)	(20.1)	(16.3)	(10.2)	(4.4)	(2.2)		(9.8)		(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र	जोतों की संख्या	1,958	176	67	20	4	1		2		2,228
	प्रतिशत	(87.9)	(7.9)	(3)	(0.9)	(0.1)	(0.1)		(0.1)		(100)
	क्षेत्र	1,346	621	456	262	86	42		144		2,957
	प्रतिशत	(45.5)	(21)	(15.5)	(8.8)	(2.9)	(1.4)		(4.9)		(100)
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	38	31	51	40	29	19		158		366
	प्रतिशत	(10.5)	(8.5)	(14.1)	(10.9)	(7.9)	(5.1)		(43)		(100)
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	3.1	4.7	9.5	11.7	19.9	25.8		48.2		11

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
					(ख) मलाबार*						
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	374	130	103	73	20	9	8	5	3	725
	प्रतिशत	(51.5)	(18)	(14.2)	(10)	(2.8)	(1.3)	(1.1)	(0.6)	(0.5)	(100)
	क्षेत्र	416	480	740	1,022	488	334	380	351	1,043	5,254
	प्रतिशत	(7.9)	(9.1)	(14.1)	(19.4)	(9.3)	(6.4)	(7.3)	(6.7)	(19.8)	(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र†	जोतों की संख्या	372	129	102	72	20	9	8	4	3	718
	प्रतिशत	(51.7)	(17.9)	(14.2)	(10)	(2.8)	(1.3)	(1.1)	(0.6)	(0.4)	(100)
	क्षेत्र	416	476	728	1,010	477	262	368	334	847	4,918
	प्रतिशत	(8.5)	(9.7)	(14.8)	(20.6)	(9.7)	(5.3)	(7.4)	(6.8)	(17.2)	(100)
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	4	4	7	15	14	12	13	17	89	175
	प्रतिशत	(2.4)	(2.3)	(3.8)	(8.3)	(7.9)	(6.6)	(7.7)	(9.7)	(51.3)	(100)
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	1	0.8	0.9	1.3	2.9	3.6	3.5	4.8	8.6	3.3
					2. राजस्थान—(क) भूतपूर्व राजस्थान‡						
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	53	31	34	26	9	4	3	2	1	163
	प्रतिशत	(32.2)	(19.2)	(21)	(15.8)	(5.6)	(2.7)	(2)	(1)	(0.5)	(100)
	क्षेत्र	58	114	244	361	220	147	157	126	136	1,563
	प्रतिशत	(3.7)	(7.3)	(15.6)	(23.1)	(14.1)	(9.4)	(10.1)	(8)	(8.7)	(100)

(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र	जोतों की संख्या	48	29	32	23	8	3	3	1	**	147
	प्रतिशत	(32.5)	(20)	(21.5)	(15.6)	(5.3)	(2.3)	(1.8)	(0.8)	(0.2)	(100)
	क्षेत्र	55	108	228	324	189	116	122	83	59	1,284
	प्रतिशत	(4.3)	(8.4)	(17.8)	(25.2)	(14.7)	(9)	(9.5)	(6.4)	(4.7)	(100)
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	6	11	22	40	28	26	34	45	66	278
	प्रतिशत	(2.2)	(4)	(7.9)	(14.4)	(10.1)	(9.3)	(12.2)	(16.2)	(23.7)	(100)
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का अनुपात	10.4	9.6	9.1	11.1	12.6	17.7	21.6	35.6	49	17.8
(ख) अजमेर-क्षेत्र											
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	57	21	18	10	3	1	1	**	**	111
	प्रतिशत	(51.6)	(19.1)	(16.3)	(9.2)	(2.3)	(0.8)	(0.5)	(0.2)	**	(100)
	क्षेत्र	56	76	128	143	·63	30	24	13	18	551
	प्रतिशत	(10.2)	(13.7)	(23.2)	(26)	(11.5)	(5.4)	(4.4)	(2.4)	(3.2)	(100)

* गणना के अन्तर्गत हर आकार-वर्ग की जोतों की पूरी-पूरी शुमार की गई। क्षेत्र का उल्लेख 'सूखे एकड़' में किया गया है।

† स्वामियों की लापरवाही से बेकार पड़ी जमीनों और 'मामूल' जमीनों को स्वामित्ववाला क्षेत्र में तो दर्शाया गया है, पर 'खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र' में नहीं।

‡ आंकड़े चुनी हुई 22 तहसीलों के बारे में हैं।

** का मतलब है, 500 यानी 0.05 प्रतिशत से कम।

@ य आंकड़े हर आकार-वर्ग की जोतों की पूरी-पूरी गिनती के आधार पर दिए गए हैं।

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र	क्षेत्र	57	21	18	10	2	1	1	**	**	110
	प्रतिशत	(51.9)	(19.1)	(16.1)	(9.2)	(2.3)	(0.8)	(0.4)	(0.2)	**	(100)
	क्षेत्र	55	75	125	142	62	29	24	13	17	542
	प्रतिशत	(10.2)	(13.8)	(23.1)	(26.2)	(11.4)	(5.4)	(4.3)	(2.4)	(3.2)	(100)
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	क्षेत्र	1	1	2	2	1	1	1	**	**	9
	प्रतिशत	(10.5)	(10.2)	(18)	(25.7)	(14.4)	(6.6)	(8.1)	(1.8)	(4.7)	(100)
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	1.7	1.2	1.3	1.7	2.1	2.1	3.1	1.3	2.4	1.7
				3. उत्तरप्रदेश*							
(अ) स्वामित्ववाला क्षेत्र	जोतों की संख्या	33	8	4	2	**	**	**	**	**	48
	प्रतिशत	(68.6)	(16.8)	(9.7)	(3.7)	(0.7)	(0.2)	(0.2)	**	(0.1)	(100)
	क्षेत्र	29	29	32	24	8	4	3	2	3	134
	प्रतिशत	(22)	(21.4)	(24)	(17.8)	(6)	(2.7)	(2.3)	(1.7)	(2.1)	(100)
(आ) खुदकाश्त के अन्तर्गत क्षेत्र	जोतों की संख्या	32	8	4	2	1	**	**	**	**	47
	प्रतिशत	(68.6)	(16.8)	(9.7)	(3.8)	(0.7)	(0.2)	(0.1)	(0.1)	**	100
	क्षेत्र	29	28	32	24	8	4	3	2	3	133
	प्रतिशत	(22)	(21.4)	(24.1)	(17.9)	(6)	(2.8)	(2.3)	(1.6)	(1.9)	(100)
(इ) पट्टे पर दिया गया क्षेत्र	प्रतिशत	(25.7)	(18.4)	(15)	(5.5)	(5.8)	(0.9)	(3.4)	(13.6)	(11.7)	(100)
	स्वामित्ववाले क्षेत्र का प्रतिशत	(1.2)	(0.9)	(0.7)	(0.3)	(1)	(0.4)	(1.5)	(8)	(6)	(1.1)

** का मतलब है, 500 यानी 0.05 प्रतिशत से कम ।

* नमूने के 204 गांवों को लेकर ये आंकड़े तैयार किए गए हैं । पूरे राज्य को लेकर अनुमान तैयार नहीं किए गए ।

अध्याय 15

श्रम-नीति

भारत मे श्रम-नीति का विकास उद्योगों और श्रमिक-वर्ग से सम्बद्ध परिस्थितियों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप ही हुआ है तथा इसे योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं से मेल रखना पड़ता है। विभिन्न स्तरों पर सरकार, श्रमिक-वर्ग और उद्योगपतियों के प्रतिनिधियों के संयुक्त विचार-विमर्श के फलस्वरूप कुछ सिद्धान्त और आचरण निश्चित हो गए हैं। इस दिशा में सरकार ने जो कानून बनाए तथा अन्य उपाय अपनाए, वे सब सम्बद्ध पक्षों की सम्मति के सार-रूप हैं। इस तरह उन कानूनों और उपायों को एक राष्ट्रीय नीति का स्वरूप और बल प्राप्त है, जो स्वैच्छिक आधार पर प्रचलित हैं। नीतियां बनाने और उन पर अमल करने के लिए संयुक्त समितियां बनाई गई हैं। इस त्रिपक्षीय व्यवस्था के ऊपर भारतीय श्रम-सम्मेलन का स्थान है।

नए परिवर्तन

2. औद्योगिक सम्बन्धों का ढांचा इस प्रकार बनाने का प्रयत्न किया गया है कि उद्योगों में शान्ति स्थापित रहे और श्रमिक-वर्ग के साथ उचित व्यवहार हो। औद्योगिक विवाद प्रेमपूर्वक तय करने में दोनों पक्षों के असफल रहने पर हस्तक्षेप करने का अधिकार सरकार ने अपने पास रखा है। विवादों को समझा-बुझाकर हल करने की भी व्यवस्था की गई है। ऐसा सम्भव होने पर निबटारे के लिए उन्हें राज्य-द्वारा न्यायाधिकरण को सौंपने की भी व्यवस्था है। मामला निबटारे के लिए सौंपे जाने के बाद काम बन्द करना तथा समझौता या फैसला होने पर उस पर अमल न करना गैर-कानूनी करार दिया गया है। इस व्यवस्था ने औद्योगिक अशान्ति रोकने में बहुत योग दिया है तथा इससे श्रमिक-वर्ग को उन्नति तथा सुरक्षा की सांस लेने का अवसर दिया है, जो अन्यथा सम्भव नहीं था। परन्तु इसके साथ ही मुकदमेबाजी की प्रवृत्ति भी बढ़ी और कानूनी प्रक्रियाओं में होने-वाले विलम्ब से व्यापक असन्तोष फैला। इसलिए दूसरी पंचवर्षीय योजना में इस अस्वास्थ्यकर प्रवृत्ति को दूर करने के लिए तथा कानूनी के बजाय नैतिक आधार पर औद्योगिक सम्बन्धों में ठोस परिवर्तन लाने के लिए एक बिलकुल नई दिशा अपनाई गई। अब उचित समय पर कार्रवाई करके अशान्ति पैदा न होने देने तथा विवाद के मूल कारणों का अन्त करने की ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। इसके लिए विभिन्न पक्षों के दृष्टिकोण में बुनियादी परिवर्तन तथा उनके आपसी सम्बन्धों में नए आधारों की स्थापना जरूरी है।

3. उद्योगपतियों और श्रमिकों के सभी केन्द्रीय संगठनों ने सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों के उद्योगों के लिए स्वेच्छा से एक अनुशासन-संहिता स्वीकार कर ली है, जिस पर सन् 1958 के मध्य से अमल भी हो रहा है। इस संहिता में मालिकों और श्रमिकों, दोनों पर कुछ खास जिम्मेदारियां डाल दी गई है, जिनका उद्देश्य यह है कि दोनों के प्रति-निधियों में सब स्तरों पर रचनात्मक सहयोग होता रहे—न तो काम रुके और न मुकदमेबाजी हो; झगड़ों और शिकायतों का निबटारा आपसी बातचीत, सुलह-समझौते तथा स्वेच्छया नियुक्त पंचों के द्वारा हो, श्रमिक-संगठनों का विकास स्वतन्त्रतापूर्वक होने

की सुविधाएं मिलें और औद्योगिक सम्बन्धों में सब प्रकार की ज़ोर-ज़बर्दस्ती और दबावों का अन्त हो जाए ।

4. संहिता में व्यवस्था है कि सभी संस्थाओं में शिकायतें पेश करने का एक नियमित तरीका निकाला जाए और उन पर फ़ौरन ध्यान दिया जाए। शिकायतें दूर करने के कानूनी तरीकों और अन्य सामान्य उपायों का पूरा उपयोग किया जाए तथा किसी भी पक्ष की ओर से सीधी, मनमानीपूर्ण या एकतरफ़ा कार्रवाई न की जाए। संहिता के अनुसार, मालिकों और श्रमिकों ने मुकदमेबाज़ी, तालाबन्दी, 'बैठे रहो' या 'अन्दर रहो' हड़ताल का सहारा न लेना स्वीकार कर लिया है। किसी को धमकाने और सताने की घटनाएं न होने देने तथा 'धीरे काम करो' नीति न अपनाने का भी फ़ैसला कर लिया गया है। श्रमिक-संगठनों ने ताकत से दबाव न डालना स्वीकार कर लिया है तथा श्रमिकों में लापरवाही से काम करने, कर्तव्य की उपेक्षा करने, सम्पत्ति को नुकसान पहुंचाने, सामान्य काम-काज में हस्तक्षेप करने या बाधा पहुंचाने तथा अवज्ञा करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन न देना भी स्वीकार कर लिया गया है। मालिकों को भी श्रमिक-संगठनों के निर्माण में पूरी स्वतन्त्रता देने और कौन-सी श्रमिक-संस्था मान्यता की अधिकारिणी है, इसके लिए निश्चित सिद्धान्त का पालन करने के लिए राज़ी कर लिया गया है। अनुशासन-संहिता भंग करने की दोषी श्रमिक-संस्था की मान्यता छीनी जा सकेगी। दोनों पक्षों को फ़ैसलों, समझौतों, निर्णयों, पंचाटों आदि को तुरन्त अमल में लाने के लिए वचनबद्ध कर लिया गया है। संहिता के शब्दों और भावना का उल्लंघन करनेवाले अधिकारियों, कार्यालय-कर्मचारियों और श्रमिकों की निन्दा करने या उनके विरुद्ध समुचित कार्रवाई करने के लिए मालिकों और श्रमिकों के संगठन वचनबद्ध हैं।

5. स्पष्ट है कि एक कठिन क्षेत्र में ऐसे दूरगामी उद्देश्यों से प्रेरित एक पूर्णत: नवीन विचार को पूरी तरह व्यवहार में लाने के लिए काफ़ी समय तक निष्ठापूर्वक प्रयत्न करने की आवश्यकता है। अभी तक के परिणाम उत्साहवर्द्धक हैं—काम बन्द होने से नष्ट होनेवाले श्रमिक-दिनों में कमी आने और औद्योगिक सम्बन्धों में सुधार होने, इन दोनों ही दृष्टियों से श्रमिक-दिन नष्ट होने की संख्या काफ़ी घटी है। जनवरी-जून 1958 में—संहिता लागू होने से पहले के छ: महीनों में—यह संख्या 47 लाख थी, जब कि जुलाई-दिसम्बर 1960 में मात्र 19 लाख रह गई। संहिता ने मालिकों और श्रमिकों को एक-दूसरे के प्रति अपने कर्तव्यों का ज्ञान कराने में भी सफलता प्राप्त की है। साथ ही, मुकदमेबाज़ी और शक्ति-परीक्षा के व्यर्थ तरीकों का सहारा लिए बिना, आपसी तौर पर ही, विवादों को हल करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है।

6. श्रमिक-संगठनों में आपसी विरोध के उद्योग एवं श्रमिकों, दोनों के लिए शोचनीय दुष्परिणाम सर्वज्ञात हैं। तीन वर्ष-पूर्व श्रमिक-संगठनों के प्रतिनिधियों-द्वारा तैयार और स्वीकार की गई आचार-संहिता के अनुसार, प्रत्येक श्रमिक को अपनी पसन्द के संगठन में शामिल होने का अधिकार तथा स्वतन्त्रता होगी। कोई संगठन किसी भी श्रमिक के अज्ञान और पिछड़ेपन का लाभ नहीं उठाएगा। सभी संगठन जात-पांत, साम्प्रदायिकता और प्रान्तीयता से दूर रहेंगे तथा श्रमिक-यूनियनों के आपसी व्यवहार में हिंसा, ज़ोर-जबर्दस्ती, डराने-धमकाने और व्यक्तिगत निन्दा का सहारा नहीं लिया जाएगा। श्रमिक-संगठनों को लोकतान्त्रिक ढंग से काम करने देने की पूरी स्वतन्त्रता का सिद्धान्त पूर्ण रूप से स्वीकार

किया जाएगा तथा सभी केन्द्रीय श्रमिक-संगठन कम्पनियों-द्वारा यूनियनें बनाने और चलाने की प्रवृत्ति का विरोध करेंगे ।

7. दोनों पक्षों की आम शिकायत रही है कि पंच-निर्णयों और समझौतों का पालन नहीं किया जाता । यदि ये शिकायतें आगे भी जारी रहीं तो दोनों संहिताएं सर्वथा निरर्थक और निष्प्रयोजन हो जाएंगी । इसलिए केन्द्र और राज्यों में संगठन बना दिए गए हैं, जो इन संहिताओं, कानूनों और समझौतों के कारण दोनों पक्षों पर आई जिम्मेदारियों का पालन कराएंगे और इस बात का ध्यान रखेंगे कि उनसे कितना लाभ या नुकसान हुआ है ।

8. दूसरी योजना की अवधि में दो क्षेत्रों में विशेष प्रगति हुई है । इनका विशेष रूप से उल्लेख इसलिए आवश्यक है कि ये श्रम-नीति के महत्वपूर्ण अंग हैं और भविष्य में इनसे बहुत-से सुपरिणाम निकलने की आशा है । पहली बात, श्रमिकों में अपने संस्थान के प्रति आत्मीयता का भाव जगाने और अधिक उत्पादकता में उनकी दिलचस्पी पैदा करने के लिए दूसरी योजना में, प्रबन्ध में श्रमिकों को हिस्सा देने-विषयक एक स्वरूप तय किया गया । परीक्षण के तौर पर इस दिशा में एक छोटे पैमाने पर शुरुआत की गई और अब तक 23 संस्थानों में संयुक्त प्रबन्ध-परिषदें बनाई जा चुकी हैं । परिषद् को संस्थान के संचालन की पूरी जानकारी प्राप्त करने का अधिकार है तथा श्रमिकों के कल्याण, प्रशिक्षण एवं सम्बद्ध मामलों की सीधी प्रशासनिक जिम्मेदारी उसी पर है । इसका मुख्य कार्य औद्योगिक सम्बन्धों पर प्रभाव डालनेवाले अनेक महत्वपूर्ण प्रश्नों पर मालिकों और श्रमिकों की आपसी बातचीत की व्यवस्था करना है । मार्च 1960 में हुई एक गोष्ठी में मालिकों, श्रमिकों, राज्य-सरकारों के प्रतिनिधियों और अन्य लोगों ने इन संयुक्त परिषदों के काम के बारे में अपने अनुभव बताए और विशेष समस्याओं के लिए अपनी ओर से हल भी पेश किए । परीक्षण की छोटी अवधि को देखते हुए इसके परिणाम सन्तोषजनक और उत्साहवर्द्धक हैं । दूसरी बात यह कि प्रारम्भिक स्तर से आगे बढ़ने के बाद श्रमिकों को शिक्षित करने की योजना ने काफ़ी प्रगति की है और उसे सर्वत्र पसन्द किया जा रहा है । योजना में शिक्षक-प्रकाशकों और श्रमिक-शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था है । श्रमिक-शिक्षक प्रशिक्षण समाप्त करके लौटने के बाद अपने-अपने संस्थान में श्रमिकों के इकाई-स्तर पर वर्ग आरम्भ करते हैं । इस योजना की प्रगति का स्वतन्त्र रूप से मूल्यांकन करने से मालूम हुआ है कि इन पाठ्यक्रमों से श्रमिकों का आत्मविश्वास बढ़ने में सहायता मिली है, सुरक्षा देनेवाले श्रम-कानूनों का लाभ उठाने की उनकी योग्यता बढ़ी है, गैर-श्रमिक अन्य लोगों पर निर्भर रहने की मात्रा में कमी आई है और उनमें आर्थिक तथा भौतिक कल्याण की इच्छा जागी है । सरकार की सहायता से स्वतन्त्र अनुसन्धान-संस्थानों के ज़रिए श्रमिक-समस्याओं के अध्ययन की शुरुआत की गई है ।

मार्ग और दृष्टिकोण

9. दूसरी योजना की अवधि में जिन विचारों को परखा और फ़ायदेमन्द पाया गया है, आनेवाले वर्षों में उनका पूरा प्रभाव दिखाई दे सकेगा । श्रम-नीति निश्चित करने और उसके बुनियादी उद्देश्यों को प्राप्त करने में तीसरी पंचवर्षीय योजना को अपना योगदान करना है । यह बात सदैव ध्यान में रखनी है कि आज जो तरीके अपनाए जा रहे हैं, वे योजनाबद्ध आर्थिक विकास की तात्कालिक और दीर्घकालीन, दोनों आवश्यकताओं को

अच्छी तरह पूरा करें। जनता को पूर्ण रोज़गार देने और जीवन-स्तर ऊंचा करने का क्रम जारी रखने के लिए तीव्र आर्थिक प्रगति आवश्यक है। प्रगति के परिणामों का लाभ समान रूप से बंटना चाहिए और जो भी आर्थिक तथा सामाजिक संगठन बनाया जा रहा है, वह समाजवादी समाज के सिद्धान्त के अनुरूप हो। इन लक्ष्यों की पूर्ति में श्रमिक-वर्ग की भूमिका महत्वपूर्ण है, उस पर बड़ी ज़िम्मेदारी है, जो उद्योगीकरण बढ़ने के साथ और गम्भीर होती जाएगी। सरकारी उद्योग-क्षेत्र के विस्तार से, जो कि हो रहा है और जिसकी परिकल्पना की गई है, श्रम-आन्दोलन की समस्याओं में गुणात्मक परिवर्तन आएगा तथा सामाजिक ढांचा समाजवादी प्रणाली के अनुकूल बदल डालने में सहायता मिलेगी। इस दृष्टिकोण के बहुत से फलितार्थ हैं। आर्थिक प्रगति को केवल उत्पादन और लाभ की दृष्टि से नहीं मापा जाना चाहिए, इसकी सबसे बड़ी परीक्षा तो यह होगी कि इस काम में जो लोग लगे हुए हैं, उनका कितना भला होता है, मानव की व्यक्तिगत रूप से कितनी उन्नति होती है तथा सारा समाज कितना खुशहाल होता है। आर्थिक गतिविधियों के फलस्वरूप जो अतिरिक्त सामाजिक परिवर्तन सामने आते हैं, उन पर न तो केवल मालिकों का दावा हो सकता है और न श्रमिक-वर्ग का; उनका वितरण केवल प्रत्येक के योगदान के अनुसार होना चाहिए––हां, पहले सभी सदस्यों की बुनियादी ज़रूरतें पूरी होनी चाहिएं तथा भावी विकास एवं समाज के सब वर्गों के हितों की व्यवस्था होनी चाहिए। काम और पेशे, चाहे कुछ भी हों, सब लोग भिन्न-भिन्न वर्ग के श्रमिक ही हैं। सब से निचले वर्ग के लोगों और उनके बच्चों को यह पक्का विश्वास दिला देना होगा कि उन्हें ऊंचे-से-ऊंचा पद प्राप्त करने की पूरी स्वतन्त्रता और अवसर है तथा मालिकों और श्रमिकों की साझीदारी सभी के लाभ के उद्देश्य से प्रेरित है। इस प्रकार एक नए समाज की स्थापना हो रही है, जिसमें व्यक्ति और वर्ग एक-दूसरे के लिए कर्तव्य-पालन की भावना से चलते हैं, न कि दूसरों के हितों को क्षति पहुंचा कर अपना स्वार्थ साधने के उद्देश्य से।

औद्योगिक सम्बन्ध

10. तीसरी योजना में औद्योगिक सम्बन्धों का विकास अनुशासन-संहिता-द्वारा तीन वर्षों के कठोर परीक्षणों के बाद तैयार हुए आधार पर निर्भर करता है। अनुशासन-संहिता के फलस्वरूप सामने आई ज़िम्मेदारियों का एहसास मालिकों और श्रमिकों के केन्द्रीय संगठनों के हर सम्बद्ध घटक को कराना पड़ेगा और औद्योगिक सम्बन्धों के दैनिक व्यवहार में उसे जीवित शक्ति, एक चेतना, का रूप धारण करना पड़ेगा। संहिता के लिए स्वीकृत आधारों को भी मज़बूत करना पड़ेगा और इसके लिए सम्बद्ध पक्षों की सहमति प्राप्त करनी होगी।

11. श्रमिकों और मालिकों के मतभेद दूर करने के लिए स्वेच्छया पंच-फ़ैसले का सिद्धान्त अधिक-से-अधिक अवसरों पर लागू करने के तरीके निकाले जाएंगे। स्वेच्छया पंच-फ़ैसले का पूरा सहारा लेने के मार्ग की बाधाए दूर करने के लिए कदम उठाए जाएंगे। अनिवार्य न्यायिक कार्रवाई को आज जैसा संरक्षण प्राप्त है, वैसा ही संरक्षण इन कार्रवाइयों को भी प्राप्त होना चाहिए। सरकार को उद्योगवार और प्रदेशवार पंच-मंडल की स्थापना में पहल करनी चाहिए। उद्योगपतियों को अपने झगड़े पंच-फ़ैसले के लिए सौंपने को अब पहले की अपेक्षा अधिक उद्यत रहना चाहिए। संहिता के अन्तर्गत दोनों पक्षों ने अपने ऊपर

जो ज़िम्मेदारियां ली है, उनके अनुसार पंच-फ़ैसले के तरीके को आम तौर पर अदालती कार्रवाई के मुकाबले पर तरजीह दी जानी चाहिए ।

12. कानून में हर कारखाने में कर्म-समितियों की स्थापना की व्यवस्था है, ताकि मालिकों और श्रमिकों में अच्छे शान्तिमय सम्बन्ध बने रहें । हाल में ही की गई एक जांच से मालूम पड़ा कि दोनों पक्षों के मतभेद दूर करने में यह प्रणाली बहुत सहायक सिद्ध हुई है, यद्यपि निष्ठापूर्ण प्रयत्नों के अभाव में कुछ संस्थानों में ये समितियां सुचारु रूप से काम नहीं कर रही हैं । श्रमिक-संगठनों के कार्य से भिन्न कर्म-समितियों के कार्य की परिभाषा स्पष्ट कर देने के निश्चय के फलस्वरूप समितियों के सफल कार्य-संचालन के मार्ग की एक बाधा दूर हो जाएगी । इसलिए यह आवश्यक है कि कर्म-समितियों को मज़बूत किया जाए और उन्हें श्रम-सम्बन्धी मामलों के लोकतान्त्रिक ढंग से संचालन का एक सक्रिय माध्यम बनाया जाए ।

13. **संयुक्त प्रबन्ध-परिषदें :** तीसरी पंचवर्षीय योजना का एक मुख्य कार्यक्रम नए उद्योगों और संस्थानों में सयुंक्त प्रबन्ध-परिषदों की योजना धीरे-धीरे लागू कर देना है, ताकि कुछ वर्षों में ये परिषदें औद्योगिक ढांचे का एक स्वाभाविक अंग बन जाएं । इसके विकास के साथ, प्रबन्ध में श्रमिकों का हिस्सा निजी उद्योग-क्षेत्र-द्वारा समाजवादी व्यवस्था में अपने को ढालने के प्रयत्न में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध होगा । इससे प्रबन्धकों और श्रमिक-वर्ग के बीच की खाई पट सकेगी, आपसी सम्बन्ध सुधरने में सहायता मिलेगी तथा दोनों पक्षों-द्वारा उद्योग तथा श्रमिकों की समस्याओं के प्रति निष्पक्ष दृष्टिकोण अपनाया जा सकेगा । किसी संस्थान की सफलता या विफलता से केवल प्रबन्धकों का ही वास्ता नहीं रहता । आर्थिक व्यवस्था को लोकतान्त्रिक आधार पर शान्तिपूर्ण रीति से विकसित करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रबन्ध में कर्मचारियों का हिस्सा एक अनिवार्य आवश्यकता तथा मूल सिद्धान्त के रूप में स्वीकार कर लिया जाए । कालान्तर में श्रमिक-वर्ग से ही प्रबन्धक-वर्ग के कार्यकर्ता तैयार हो सकेंगे । इससे सामाजिक गतिशीलता बढ़ेगी, जो कि समाजवादी व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग है ।

14. संयुक्त प्रबन्ध-परिषदों की स्थापना सरकारी और गैर-सरकारी क्षेत्र के उन सभी संस्थानों में की जानी चाहिए, जहां इस योजना की सफलता के लिए अनुकूल परिस्थितियां हों । अनुकूलता की पहली शर्त यह है कि दोनों पक्षों में सद्भाव हो । जहां भी एक प्रतिनिधि श्रमिक-यूनियन है, वहां स्वाभाविक रूप से ऐसी परिषद् की स्थापना हो जानी चाहिए । जिन संस्थानों में परिषदें बनी हुई हैं, उनमें श्रमिकों की शिक्षा का एक सघन कार्यक्रम चलाया जाएगा ।

15. **श्रमिकों की शिक्षा :** सरकार ने एक अर्द्ध-स्वशासी मंडल की मार्फत श्रमिकों को शिक्षा देने का जो कार्यक्रम बनाया है, वह मालिकों और श्रमिकों के सभी संगठनों के सहयोग से चल रहा है । तीसरी योजना की अवधि में इस योजना का बड़े पैमाने पर विस्तार करने का ख्याल है । कार्यक्रम को बहुमुखी बनाने तथा श्रमिकों के प्रतिनिधियों और उनके संगठनों से और अधिक सहयोग लेने का इरादा है । इस कार्यक्रम के इस पहलू पर भी विचार किया जा रहा है कि प्रबन्धकों को श्रम-सम्बन्धी कार्यों का प्रशिक्षण दिया जाए ।

16. श्रमिक-वर्ग में साक्षरता का विस्तार विभिन्न कार्यक्रमों की सफलता की पहली और अनिवार्य शर्त है । अगले कुछ वर्षों में अधिक-से-अधिक श्रमिकों को, विशेष रूप से 40 वर्ष से कम अवस्था के लोगों को, साक्षरता का लाभ पहुंचाना जरूरी है ।

17. **श्रमिक-यूनियन** : आज की और आगे आनेवाली परिस्थितियों में श्रमिक-संगठनों, उनके कार्यों तथा गतिविधियों के प्रति दृष्टिकोण बदलना आवश्यक है। उन्हें देश के औद्योगिक और आर्थिक प्रशासन का आवश्यक अंग स्वीकार करना ही होगा; साथ ही, उन्हें इस स्थिति के साथ आनेवाली ज़िम्मेदारियां निभाने के योग्य बनाना होगा। श्रमिक-यूनियनों के नेता भी श्रमिक-वर्ग से ही आने चाहिएं; श्रमिकों की शिक्षा का कार्यक्रम आगे बढ़ने से इस प्रक्रिया को भी गति मिलेगी। आज प्रायः सभी श्रमिक-यूनियनों को साधनों की कमी का सामना करना पड़ रहा है और उन्हें वह समस्त सहायता तथा मार्गदर्शन नहीं मिल रहा है, जिसकी उन्हें आवश्यकता है।

18. अनुशासन-संहिता के अंग-रूप में स्वीकार किया गया श्रमिक-यूनियनों की मान्यता का आधार देश में स्वस्थ और सबल श्रमिक-यूनियनों के विकास का मार्ग प्रशस्त करेगा। उसी यूनियन को मान्यता मिल सकती है, जिसमें किसी संस्थान के कम-से-कम 15 प्रतिशत कर्मचारी 6 महीने से निरन्तर सदस्य हों; उसे किसी उद्योग या स्थानीय क्षेत्र के प्रतिनिधि-यूनियन के रूप में मान्यता प्राप्त करने का अधिकार तभी होगा, जब उसे कम-से-कम उस क्षेत्र या उद्योग के 25 प्रतिशत कर्मचारियों की सदस्यता प्राप्त हो। किसी उद्योग या संस्थान में एक से अधिक यूनियन होने पर उसी यूनियन को मान्यता मिलेगी, जिसकी सदस्य-संख्या सबसे अधिक होगी। एक बार मान्यता मिल जाने पर किसी संगठन की स्थिति में दो वर्ष तक अन्तर नहीं आना चाहिए, बशर्तेकि वह अनुशासन-संहिता का पालन करता हो।

19. औद्योगिक सम्बन्ध-व्यवस्था के कर्मचारियों को नियुक्त करते समय उचित चुनाव तथा प्रशिक्षण, दोनों पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। यह भी ध्यान रखना ज़रूरी है कि कार्य की जटिलता को देखते हुए समझौता-अधिकारियों और न्यायाधिकरणों की योग्यता तथा क्षमता पर्याप्त है या नहीं। इस कार्य के लिए एक उपयुक्त प्रशिक्षण-कार्यक्रम चलाने का विचार है।

पारिश्रमिक और सामाजिक सुरक्षा

20. सरकार ने आर्थिक दृष्टि से कमज़ोर और सहायता की अपेक्षा रखनेवाले श्रमिकों के लिए उद्योगों और कृषि, दोनों ही क्षेत्रों में, पारिश्रमिक की न्यूनतम दर नियत करने की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है। इस उद्देश्य से बनाए गए न्यूनतम पारिश्रमिक-कानून में उद्योगों और कृषि के श्रमिकों के लिए पारिश्रमिक की दर निश्चित करने और उसमें परिवर्तन की व्यवस्था की गई है। कई मामलों में यह व्यवस्था कारगर सिद्ध नहीं हुई है। कानून को पूरी तरह अमल में लाने के लिए निरीक्षण-व्यवस्था को मज़बूत करना ज़रूरी है। मुख्य उद्योगों में पारिश्रमिक तय करने का प्रश्न सामूहिक बातचीत, समझौतों, पंच-फैसलों और अदालती निर्णयों पर छोड़ दिया गया है। दूसरी योजना में सिफारिश की गई थी कि बड़े-बड़े उद्योग-क्षेत्रों में पारिश्रमिक तय करने का सबसे उपयुक्त तरीका वेतन-मंडल कायम कर देना होगा। अब तक इस पर सूती वस्त्र, सीमेंट और चीनी-उद्योगों में अमल किया गया है; परिस्थितियों के अनुसार इसे अन्य उद्योगों पर भी लागू किया जाएगा। लोहा तथा इस्पात-उद्योग के लिए भी शीघ्र ही एक वेतन-मंडल कायम करने का निश्चय किया गया है। मालिकों और श्रमिकों के प्रतिनिधियों ने स्वीकार कर लिया है कि

वेतनमंडलों की सर्वसम्मत सिफारिशों पर पूरी तरह अमल किया जाना चाहिए। कोयला-खान-उद्योग में एक उत्साहजनक प्रवृत्ति दिखाई दी है; जहां मालिकों और श्रमिकों ने दो-पक्षीय समिति बना कर उद्योग में पारिश्रमिक के ढांचे पर पूरी तरह विचार करना स्वीकार कर लिया है। यदि यह दो-पक्षीय समिति किसी निर्णय पर पहुंचने में असफल हो जाए, तभी पारिश्रमिक तय करने की किसी और व्यवस्था की बात सोची जाएगी।

21. उचित पारिश्रमिक-समिति की रिपोर्ट में पारिश्रमिक तय करने के सम्बन्ध में कुछ मोटे सिद्धान्त निश्चित कर दिए गए हैं। भारतीय श्रमिक-सम्मेलन ने सम्बद्ध पक्षों में समझौते के आधार पर यह तय कर दिया था कि पारिश्रमिक-विषयक विवाद सुलझाने के लिए आवश्यकताओं के अनुसार न्यूनतम पारिश्रमिक निश्चित करने के लिए क्या-कुछ करना चाहिए। इस पर पुनर्विचार करने के बाद यह निश्चय किया गया कि श्रमिक-परिवारों की पौष्टिक भोजन की आवश्यकताओं पर इस विषय की अत्यन्त अधिकारपूर्ण वैज्ञानिक जानकारी के आधार पर फिर से विचार किया जाए। न्यूनतम पारिश्रमिक के अलावा विभिन्न वर्गों के श्रमिकों के लिए उचित पारिश्रमिक तय करने का भी ध्यान रखा जाए; साथ ही, यह भी व्यवस्था की जाए कि हुनर सीखने और उसमें विस्तार करने के लिए पर्याप्त प्रोत्साहन मिले तथा उत्पादन बढ़ाने और किस्म सुधारने का उत्साह पैदा हो। फिर भी, अभी श्रमिक-वर्ग और उच्च प्रबन्धकों के स्तर पर पारिश्रमिक में बहुत बड़ा अन्तर है।

22. अपनी अनिश्चयात्मकता के कारण बोनस का प्रश्न संघर्ष और विवाद की जड़ बना हुआ है। यह निश्चय किया गया है कि दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों को लेकर एक आयोग की स्थापना की जाए, जो बोनस-सम्बन्धी दावों का अध्ययन करे तथा इस सम्बन्ध में मार्ग-दर्शक सिद्धान्तों और पैमानों का निश्चय कर दे।

23. **सामाजिक सुरक्षा :** कर्मचारी-राज्य-बीमा-योजना अब 100 से अधिक केन्द्रों में लागू है और लगभग 17 लाख औद्योगिक कर्मचारी उससे लाभ उठा रहे हैं। तीसरी योजना की अवधि में यह योजना 500 या उससे अधिक औद्योगिक कर्मचारियोंवाले प्रत्येक स्थान पर लागू कर दी जाएगी और इस प्रकार इससे लगभग 30 लाख श्रमिकों को लाभ पहुंचने लगेगा। इन सभी केन्द्रों में बीमाशुदा लोगों के परिवारों के लिए अस्पताल, चिकित्सा-सम्बन्धी देखभाल और इलाज की व्यवस्था की जाएगी—इसमें अस्पताल में रहने तथा प्रसूति-कार्य-सम्बन्धी सुविधाएं भी शामिल हैं। रोगों की रोकथाम की ओर भी खास तौर पर ध्यान दिया जाएगा। बीमाशुदा कर्मचारियों के लिए अलग अस्पतालों की व्यवस्था करने की दिशा में अभी बहुत कुछ करना बाकी है। नए अस्पतालों और दवाखानों के निर्माण का काम तेज़ी से बढ़ाया जाएगा, ताकि तीसरी योजना की अवधि में 6,000 अतिरिक्त रोगीशय्याओं की व्यवस्था हो जाए।

24. **कर्मचारी-प्राविडेंट फंड-योजना :** यह फ़िलहाल 58 उद्योगों/संस्थानों में लागू है। इसे अन्य उद्योगों में भी लागू किया जाएगा। पहले शर्त थी कि 50 कर्मचारीवाले संस्थानों में ही यह योजना लागू की जा सकती है, परन्तु अब यह संख्या घटा कर 20 कर दी गई है। प्राविडेंट फ़ंड-संगठन ने अन्य उद्योगों का सर्वेक्षण पूरा कर लिया है और तीसरी योजना में इसे उन उद्योगों में लागू कर दिया जाएगा जो इसका आर्थिक बोझ उठा सकने में समर्थ होंगे। प्राविडेंट फ़ंड के अंशदान की दर $6\frac{1}{4}$ से बढ़ाकर $8\frac{1}{3}$ प्रतिशत करने का सरकार सिद्धान्ततः स्वीकार कर चुकी है, परन्तु विभिन्न उद्योगों की आर्थिक क्षमता भिन्न

होने के कारण एक तकनीकी समिति नियुक्त की गई है, जो यह जांच करेगी कि कौन-कौन उद्योग यह अतिरिक्त बोझ नहीं संभाल सकेंगे। व्यावसायिक संस्थानों के कर्मचारियों को भी इस योजना के अन्तर्गत लाने का प्रस्ताव उपस्थित किया गया है।

25. सामाजिक सुरक्षा-सम्बन्धी एक अध्ययन-दल ने सिफारिश की है कि सामाजिक सुरक्षा की सभी योजनाएं मिला कर एक कर दी जाएं और प्राविडेंट फ़ंड-सम्बन्धी विभिन्न योजनाओं को बुढ़ापा, अंगहीनता और जीवित रहने पर मिलनेवाली पेंशन अथवा सेवा-पुरस्कार (ग्रेच्युटी) के रूप में बदल दिया जाए। इस एकीकरण-सम्बन्धी प्रश्न के सभी पहलुओं पर तुरन्त विचार कर लेना ज़रूरी है, ताकि सारी योजना शीघ्रातिशीघ्र अमल में आ जाए।

26. सामाजिक सुरक्षा का सिद्धान्त अभी तक मुख्यतः संगठित उद्योगों के वेतन-भोगी कर्मचारियों पर ही लागू हुआ है। परन्तु कुछ समूह ऐसे भी हैं, जिनकी स्थिति पर समाज को बारीकी से ध्यान देना चाहिए। अतीत में छोटे समुदाय और संयुक्त परिवारों से सम्बद्ध परम्परागत मूल्यों के कारण, उन लोगों को भी सुविधा-सहायता मिल जाती थी, जो अपने पैरों पर खड़े नहीं हो सकते थे। अब भी काफ़ी समय तक समुदाय, समूह और परिवार को किसी-न-किसी रूप में सहायता का मुख्य साधन बने रहना पड़ेगा। बाद में, धीरे-धीरे शहरी और ग्रामीण, दोनों क्षेत्रों में राज्य-सरकारों और स्थानीय निकायों को सामाजिक सुरक्षा और सहायता की योजनाओं में भाग लेना पड़ेगा। आज की स्थिति में भी इन तीन समूहों के व्यक्तियों के सम्बन्ध में एक छोटे पैमाने पर शुरुआत की जानी चाहिए—अपंग; वृद्ध जो कोई काम नहीं कर सकते; तथा स्त्रियां और बच्चे, जिनके पास जीविका का कोई साधन एवं किसी प्रकार का सहारा नहीं है। इनके लिए सहायता स्वेच्छया तथा दातव्य संगठनों, नगरपालिकाओं, पंचायत-समितियों और पंचायतों की ओर से दी जानी चाहिए। स्थानीय जनता की सहायता से ये संगठन अपना कार्य-क्षेत्र बढ़ा सकें तथा सबल बन सकें, इसके लिए एक छोटा-सा सहायता-कोश स्थापित करना भी उपयोगी होगा। इस प्रस्ताव के विस्तृत विवरण पर राज्यों और स्वैच्छिक संगठनों के सहयोग से आगे विचार किया जा सकता है।

काम की स्थिति, सुरक्षा और कल्याण

27. विभिन्न कानूनों के अन्तर्गत, कर्मचारियों के लिए काम की सन्तोषजनक स्थिति, शारीरिक सुरक्षा तथा उनके कल्याण के सम्बन्ध में विभिन्न सुविधाओं की व्यवस्था करने के लिए एक विस्तृत संहिता तैयार की जा चुकी है। परन्तु कानूनी व्यवस्था को भली भांति अमल में लाने के लिए उचित कदम उठाने पड़ेंगे। काम की स्थिति सुधारने से कर्मचारियों की उत्पादन-विषयक दक्षता बढ़ सकती है। उद्योग में मानव से सम्बद्ध विविध पहलुओं के क्षेत्र में आधुनिक गतिविधियों का लाभ उठाया जाना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए केन्द्रीय श्रम-संस्थान और तीनों प्रादेशिक श्रम-संस्थानों के काम को इतना आगे बढ़ाया जाना चाहिए कि प्रशिक्षण, शिक्षा और अनुसन्धान के ज़रिए उद्योग की विस्तृत रूप से सेवा हो सके। सुरक्षा की समस्या पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। एक स्थायी सलाहकार-समिति की स्थापना की जाएगी, जो कारखानों में दुर्घटनाएं रोकने और उन्हें कम करने के सम्बन्ध में उपाय सुझाएगी। कारखाना-कानूनों के परिपालन के बारे में नियुक्त निरीक्षणालयों

को मज़बूत करने का काम राज्य-सरकारों को करना चाहिए। कारखानों और खानों में सुरक्षा-समितियां बना कर तथा कर्मचारियों को अपनी सुरक्षा के प्रति अधिक जागरूक रहने की शिक्षा देकर दुर्घटनाओं में कमी करने की बहुत गुंजायश है। खान-सुरक्षा-सम्मेलन और उसकी विभिन्न समितियों की सिफारिशों के अनुसार कदम उठाए जा रहे हैं और खानों में सुरक्षा की समस्या से सम्बद्ध विभिन्न पहलुओं का सघन अध्ययन हो रहा है। खान-उद्योग में सुरक्षा-सम्बन्धी शिक्षा और प्रचार के लिए एक राष्ट्रीय खान-सुरक्षा-परिषद् कायम करने का विचार है। खानों के उत्पादन में तीव्र वृद्धि तथा उसके फलस्वरूप होनेवाली अधिक गहरी खुदाई और मशीनों के अधिक उपयोग को देखते हुए यह ज़रूरी हो गया है कि अधिक सावधानी बरती जाए तथा नियम-उपनियमों का कड़ाई से पालन करने की व्यवस्था की जाए। भवन और अन्य निर्माण-उद्योग भी एक ऐसा क्षेत्र है, जहां तेज़ी से विस्तार के कार्यक्रमों के कारण सुरक्षा के नियमों पर अधिक ध्यान देना ज़रूरी हो गया है। यद्यपि केन्द्रीय और राज्यीय निर्माण-कार्य-विभाग इस क्षेत्र में रोज़गार देनेवाली मुख्य संस्थाएं हैं, तथापि भवन-निर्माण और अन्य निर्माण-कार्य का एक बड़ा भाग गैर-सरकारी लोगों के हाथ में है। निर्माण-स्थलों पर काम की स्थिति कारखानों की तुलना में बहुत भिन्न है। इसका मुख्य कारण यह है कि निर्माण-कार्यों में पूर्णतः अस्थायी आधार पर काम मिलता है। भवन-निर्माण और दूसरे निर्माण-कार्यों में सुरक्षा के सम्बन्ध में अलग से कानून के बारे में विचार किया जा रहा है। औद्योगिक स्वास्थ्य तथा स्वच्छता-सम्बन्धी सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि पेशागत रोगों से पीड़ित होनेवालों की संख्या बराबर बढ़ रही है। अन्य उद्योगों में भी ऐसे ही सर्वेक्षण होने चाहिएं और हर मामले में तुरन्त उचित कार्रवाई की जानी चाहिए। कोयला और अभ्रक-खान-उद्योगों में श्रमिकों की कल्याण-योजनाओं के लिए विशेष कल्याण-कोश कायम किए गए हैं। इनसे वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति हो रही है। मैंगनीज़ और खनिज लोहा, आदि की खानों के कर्मचारियों के लिए भी ऐसे ही कोश कायम करने का सुझाव है।

28. **श्रमिकों की सहकारी समितियां :** कोयला-खान कल्याण-कोश-संगठन की सहायता से खनिकों की सहकारी समितियां बनाने के काम में कुछ प्रगति हुई है। कुछ औद्योगिक केन्द्रों में श्रमिकों की सहकारी-आवास समितियां भी हैं। कुल मिलाकर, अभी श्रमिक-वर्ग में सहकारी समितियों का विचार अधिक बल नहीं पा सका है। सहकारी कार्यों के विस्तार से श्रमिकों को विभिन्न रूपों में बहुत लाभ मिलेगा। सहकारी ऋण-समितियां तथा सहकारी उपभोक्ता-भांडार बनाने के लिए प्रचार किया जाना चाहिए। आशा है कि श्रमिक-यूनियन और स्वैच्छिक संस्थाएं ऐसी सहकारी समितियों के संचालन में पहले से अधिक दिलचस्पी लेंगी और आगे बढ़ेंगी।

29. **औद्योगिक आवास :** यद्यपि सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास-योजना पिछले कुछ वर्षों से चल रही है, तथापि औद्योगिक कर्मचारियों की आवास-सम्बन्धी स्थिति नहीं सुधरी है; कुछ केन्द्रों में तो स्थिति और बिगड़ गई है। समस्या का हल करने का वर्तमान तरीका पूर्णतः अपर्याप्त पाया गया है। और तत्काल ही इस सम्बन्ध में नए उपाय खोजने पड़ेंगे, ताकि स्वास्थ्य और कार्य-कुशलता की दृष्टि से उन्हें रहन-सहन के एक निम्नतम स्तर का आश्वासन मिल सके। इसी उद्देश्य से सभी वर्गों के श्रमिकों के लिए खेल-कूद और मनोरंजन की सुविधाएं भी उपलब्ध करनी होंगी।

30. **अन्य समस्याएं :** ठेके पर काम करनेवाले श्रमिकों के सम्बन्ध में चल रहे अध्ययन की सहायता से ऐसे धन्धों का चुनाव हो सकेगा, जहां ठेके पर मज़दूरी कराना बन्द कर दिया जाएगा। जहां इसे बन्द करना व्यावहारिक नहीं होगा, वहां ठेके के श्रमिकों के हितों की रक्षा करने के पूरे उपाय किए जाएंगे। यद्यपि सरकारी तथा श्रमिक-यूनियनों के कामों के फलस्वरूप बड़े और संगठित उद्योगों के कर्मचारियों की काम की स्थिति और जीवन-स्तर में उल्लेखनीय सुधार हुआ है, तथापि कृषि और अन्य संगठित उद्योगों में काम करनेवाले श्रमिकों की दशा सुधारने के लिए बहुत काम करना शेष है। सरकार और श्रमिक-संगठनों, दोनों को इनकी दशा पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

रोज़गार तथा प्रशिक्षण-योजनाएं

31. तीसरी योजना की अवधि में शिल्पियों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करना होगा। दूसरी योजना की अवधि समाप्त होने तक देश में 166 औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थान थे, जिनमें 42,000 प्रशिक्षणार्थियों के लिए स्थान था। तीसरी योजना में 58,000 अतिरिक्त छात्रों के लिए व्यवस्था करने के उद्देश्य से इन संस्थानों की संख्या बढ़ा कर 318 कर देने का विचार है। फलतः 1 लाख शिल्पियों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था हो जाएगी और योजना की अवधि में 2 लाख शिल्पी तैयार हो सकेंगे। कारखानों के अन्दर भी प्रशिक्षण की सुविधाएं दी जाएंगी। शिक्षित युवकों को प्रबन्ध की तकनीकों का प्रशिक्षण देने के लिए विशेष सुविधाओं की व्यवस्था की गई है, ताकि जो लोग स्वयं अथवा सहकारी समितियों के माध्यम से व्यवसाय-विषयक उत्तरदायित्व ग्रहण करने की रुचि तथा इच्छा रखते हों, उन्हें रोज़गार के अधिक अवसर उपलब्ध हो सकें।

32. तीसरी योजना की अवधि में शिल्प-शिक्षकों को प्रशिक्षित करनेवाले 3 वर्तमान केन्द्रीय संस्थानों की क्षमता 512 छात्रों से बढ़ा कर 976 कर दी जाएगी तथा 3 अन्य केन्द्रीय संस्थान स्थापित किए जाएंगे। दूसरी योजना की अवधि में 2,000 शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया गया था, जब कि तीसरी योजना का लक्ष्य 7,800 शिक्षकों को प्रशिक्षित करने का है। महिला शिल्प-शिक्षकों को तैयार करने की व्यवस्था अलग से की जा रही है।

33. दूसरी योजना में शिष्य-प्रशिक्षण-योजना के अन्तर्गत प्रगति अधिक नहीं हुई, क्योंकि इसे अब तक प्रायः स्वैच्छिक आधार पर ही चलाया गया है। अब इस योजना को अनिवार्य बनाने का निश्चय किया गया है और इस विषय में एक विधेयक संसद् में पेश किया जाएगा। शिष्य-प्रशिक्षण-कार्यक्रम में 14,000 स्थानों का लक्ष्य सामने रखा गया है। औद्योगिक श्रमिकों के लिए सन्ध्याकालीन वर्ग-कार्यक्रम का लक्ष्य तीसरी योजना की अवधि में छात्र-प्रवेश-विषयक क्षमता को 3,000 से बढ़ाकर 15,000 करना है।

34. तीसरी योजना में रोज़गार दिलाने के 100 नए केन्द्र खोले जाएंगे। ख्याल यह है कि हर ज़िले में कम-से-कम एक ऐसा केन्द्र हो। ग्रामीण रोज़गार-केन्द्रों की संख्या बढ़ाने तथा राज्य-रोज़गार-निदेशालयों के संगठन को मज़बूत करने का इरादा है। रोज़गार-बाज़ार-सूचना-कार्यक्रम के लिए इस दिशा में एक ठोस शुरुआत कर दी गई है; यह योजना सभी सरकारी प्रतिष्ठानों और 150 क्षेत्रों में निजी प्रतिष्ठानों में लागू है। रोज़गार-केन्द्र-वाले सभी क्षेत्रों में इस योजना का विस्तार किया जाएगा। युवक-रोज़गार-सेवा, युवक-

मार्गदर्शन तथा रोज़गार-केन्द्रों में पेशों के सम्बन्ध में सूचनाएं संग्रह करने और उनका विश्लेषण करने का कार्यक्रम भी बढ़ाने की व्यवस्था की गई है।

35. पिछले कुछ वर्षों में कतिपय उद्योगों में कम-बेशी संख्या में प्रतिष्ठानों के बन्द होने की घटनाएं सामने आई हैं। बाज़ार में प्रतिकूल परिस्थितियां पैदा होने पर नफ़े-नुकसान की सीमा पर चल रहे संस्थानों पर बुरा प्रभाव पड़ता है, बशर्तेकि उनकी स्थिति की रक्षा करने के लिए पहले से ही कदम न उठाए जाएं। अनेक मामलों में ऐसा हुआ है कि लम्बे समय तक उपेक्षा और कुप्रबन्ध का शिकार रहने के बाद वे संस्थान खत्म हो गए। इसके फलस्वरूप बेरोज़गार होनेवाले श्रमिकों को उसी उद्योग के अन्य संस्थानों में काम मिलना प्रायः असम्भव हो जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि इन श्रमिकों को अपना रोज़गार खोने के साथ-साथ अपने बकाया वेतन से भी हाथ धोना पड़ता है। इतना ही नहीं, मालिकों से प्राविडेंट फ़ंड और कर्मचारी-राज्य-बीमा का धन भी वसूल करना मुश्किल हो जाता है। परिणामतः श्रमिकों को बहुत कष्ट उठाना पड़ता है।

36. स्पष्ट है कि मानवीय पहलू को देखते हुए तथा अन्य श्रमिकों में निराशा न आने देने के लिए छंटनी के कारण असहाय बन गए श्रमिकों की सहायता के लिए कुछ कदम उठाने आवश्यक हैं। अपनी पूर्ण विकसित स्थिति में इस योजना को अंशदायी आधार पर सरकारी सहायता से चलाना होगा और छंटनी किए हुए श्रमिकों को सहायता तथा राहत देने के अतिरिक्त इसमें निम्नलिखित बातें और शामिल की जा सकती हैं :

(1) उन औद्योगिक संस्थानों को फिर से सहायता देकर खड़ा किया जाए, जो कुछ काल के लिए आर्थिक कठिनाइयों में फंस गए हैं, परन्तु वैसे सुप्रबन्ध और कार्यकुशलता के लिए समादृत हैं;

(2) कुछ समय के लिए संस्थानों को अपने प्रबन्ध में ले लिया जाए; और

(3) उचित मामलों में उन श्रमिकों को सहकारी प्रयत्नों के लिए धन की सहायता दी जाए, जिनके संस्थानों के बन्द होने का ख़तरा पैदा हो गया हो।

इस सम्बन्ध में अविलम्ब शुरुआत करनी होगी। इसके लिए एक सीमित क्षेत्र-वाली योजना तैयार करने का निश्चय किया गया है, जिसके अन्तर्गत वर्तमान परिस्थितियों में जितना व्यावहारिक होगा, उतनी सहायता की जाएगी। यह सहायता ऋण के रूप में होगी, जिससे तात्कालिक कठिनाइयों का सामना किया जा सके, अन्य पेशों के लिए कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया जा सके और उन स्थानों पर उनकी बदली की जा सके, जहां काम सुलभ हो। इस प्रयोजन से योजना में कुछ धन की व्यवस्था की गई है।

उत्पादकता

37. उद्योग के सामने अब श्रमिकों की निर्वाह-योग्य पारिश्रमिक रहने और काम करने की बेहतर स्थिति, रोज़गार के अधिकाधिक अवसर तथा पूर्ण सामाजिक सुरक्षा-सम्बन्धी आवश्यकताएं पूरी करने की समस्या है। परन्तु उद्योग में लगी पूंजी पर उचित मुनाफा मिलना तथा पर्याप्त मात्रा में पूंजी जमा होना भी आवश्यक है। श्रमिकों की आकांक्षाएं पूरी करने में औद्योगिक विवादों में उनकी संगठित शक्ति का प्रयोग, सरकारी कानून और सरकारी हस्तक्षेप अधिक सहायता नहीं कर सकते। उस अर्थव्यवस्था

की मज़बूती और गतिशीलता पर ही उनका लाभ निर्भर है; परन्तु इसका भी आधार उत्पादकता के स्तर में बराबर वृद्धि है। उत्पादकता में सुधार की बजाय माल की चालू कमी के फलस्वरूप भावों में होनेवाले तेज़ी अथवा विकास के दबाव के कारण मुनाफ़ा बढ़ना समृद्धि का प्रमाण नहीं है। उत्पादकता के अनेक पहलू हैं और अक्सर मालिकों और मज़दूरों-द्वारा अपनाई गई एकतरफ़ा तथा कट्टर नीति के कारण उस पर बुरा प्रभाव पड़ता है। हर दिशा में वैज्ञानिक आधार पर प्रयत्न किए जाने चाहिएं, क्योंकि यही उत्पादकता का असली आधार है। वैज्ञानिकन शब्द का अक्सर गलत अर्थ लगा कर यह समझा जाता है कि इससे काम का बोझ बढ़ता है और निजी मुनाफ़ा बढ़ाने के लिए श्रमिकों पर अतिरिक्त भार डाल दिया जाता है। अनेक स्थानों पर श्रमिकों के स्वास्थ्य पर बुरा असर डाले बिना और अधिक पूंजी लगाए बिना भी उत्पादकता में बहुत वृद्धि की जा सकती है और संस्थान का खर्च काफ़ी कम किया जा सकता है। इस काम की अधिक ज़िम्मेदारी प्रबन्धकों पर है; उन्हें श्रमिक-वर्ग को बढ़िया-से-बढ़िया साज़-सामान देना चाहिए, काम की स्थिति और तरीके सही रखने चाहिएं, पर्याप्त प्रशिक्षण देना चाहिए और समुचित मनोवैज्ञानिक और वेतन-वृद्धि आदि की सुविधाएं देकर उनका उत्साह बढ़ाना चाहिए। अनेक प्रयोजनों से, हमें एक श्रमिक के बजाय एक-सा काम करनेवाले श्रमिकों के समूह को इकाई मान कर चलने में सुविधा रहेगी और प्रोत्साहन-योजना अलग-अलग श्रमिकों के लिए लागू करने के साथ-साथ पूरे समूह के लिए लागू करना भी अधिक आवश्यक है। उद्योग, श्रमिक-यूनियनों और सरकार का कर्तव्य है कि वे यह देखें कि पहले से काम कर रहे या नए भर्ती हुए श्रमिक पर्याप्त प्रशिक्षण पाएं और कुशल कारीगर बन सकें। समुचित संगठन से बिना अधिक खर्च बढ़ाए और उद्योग पर अनुचित बोझ डाले श्रमिक-वर्ग की अनिवार्य आवश्यकताएं पूरी की जा सकती हैं। प्रबन्धकों को इस दिशा में अपने क्षेत्र में अधिकतम वैज्ञानिकन के ज़रिए मार्गदर्शन करना चाहिए और ऐसी सभी अनुचित प्रवृत्तियां दूर करनी चाहिएं, जिनके कारण श्रमिकों की योग्यता का पूरा लाभ नहीं उठाया जाता। गरीबी, बेरोज़गारी और कम उत्पादन का यह सिलसिला तोड़ना ही होगा; परन्तु यह तभी होगा, जब उत्पादन की प्रक्रिया में भाग लेनेवाले सभी पक्ष अधिक-से-अधिक ज़िम्मेदारी लेने को तैयार हों। उत्पादकता में बराबर वृद्धि के बिना श्रमिकों का जीवन-स्तर ऊंचा करने के काम में वास्तविक प्रगति नहीं हो सकेगी, क्योंकि एक संकुचित सीमा से बाहर श्रमिकों के वेतन में होनेवाली आम वृद्धि चीज़ों के मूल्य में होनेवाली महंगाई के कारण बेकार हो जाएगी। अतः श्रमिकों को अपने और देश के व्यापक हित के लिए वैज्ञानिकन की प्रगति का विरोध नहीं करना चाहिए, बल्कि उसके लिए आग्रह करना चाहिए।

38. विकास की हमारी गति और अधिक रोज़गार देने की हमारी क्षमता इस बात पर निर्भर करती है कि बढ़ती हुई प्रतियोगिता के बावजूद हम कितना निर्यात करने में समर्थ हैं। यह अधिक-से-अधिक उत्पादन करने तथा मालिक, श्रमिक और समुदाय के अन्य लोगों-द्वारा कुछ त्याग करने से ही सम्भव है।

39. श्रमिक-वर्ग की सद्भावना और सहयोग के बिना महत्वपूर्ण सुधार नहीं हो सकते। समुचित सौहार्द और श्रमिकों के हित में आवश्यक संरक्षण की व्यवस्था से ही यह कार्य किया जा सकता है। श्रमिकों की सबसे बड़ी चिन्ता रोज़गार के स्थायित्व को लेकर है। राष्ट्रीय स्तर पर वैज्ञानिकन के विषय में हुआ समझौता श्रमिकों को उनके वर्तमान

काम में स्थायित्व की गारंटी देता है। यदि श्रमिकों को दूसरे कामों का प्रशिक्षण देने तथा उनकी सहमति से उन्हें दूसरे कामों में डालने का ठोस प्रबन्ध किया जा सके, तो वैज्ञानिकन का क्षेत्र और भी बढ़ाया जा सकता है। श्रमिकों से इस योजना में प्रसन्नता से सहयोग देने की आशा की जा सकती है। इसके लिए अनुकूल परिस्थितियां बनानी होंगी। राष्ट्रीय उत्पादकता-परिषद्-द्वारा आयोजित गोष्ठी में हुए निर्णयों और समझौतों से इस प्रक्रिया को बल मिलेगा। समझौतों में अधिक उत्पादकता के लिए सहयोग का प्राथमिक आधार तैयार किया गया है। कार्यकुशलता और कल्याण-संहिता तैयार करने का काम अब भारतीय श्रम-सम्मेलन अपने ऊपर ले रहा है। प्रबन्धकों को मालिक-कर्मचारी-सम्बन्धों के महत्वपूर्ण पहलुओं के बारे में विभिन्न स्तरों पर प्रशिक्षण देने की ओर भी पूरा ध्यान देना होगा। व्यक्तिगत पारिश्रमिक-निर्धारण और पारिश्रमिक-उत्पादकता-सम्बन्ध के निश्चय के बारे में भी व्यवस्थित अध्ययन करना होगा। इस सम्बन्ध में, उद्योगान्तर्गत प्रशिक्षण-केन्द्र-द्वारा उद्योग के अन्तर्गत प्रशिक्षण की योजना तथा प्रबन्धकीय एवं अधीक्षणीय कुशलता-सम्बन्धी अन्य तकनीकों के प्रस्तुत किए जाने, और उत्पादकता-केन्द्र-द्वारा उच्चतर उत्पादकता-विषयक तकनीकों के प्रशिक्षण तथा कार्य-मूल्यांकन एवं कार्य-भार-सम्बन्धी क्षेत्रीय जांच के फलस्वरूप प्रबन्धकों एवं कर्मचारियों, दोनों की दिलचस्पी इस दिशा में बढ़ी है। इस क्षेत्र में होनेवाले परवर्ती कार्यों से उपयुक्त पारिश्रमिक-नीतियां तैयार करने में मदद मिलेगी।

अनुसन्धान

40. सरकार ने निम्नलिखित प्रश्नों के अध्ययन और सर्वेक्षण के लिए विशेष कार्य-क्रम अपनाए हैं। काम करने और रहन-सहन की स्थिति, पारिवारिक आय-व्यय, पारिश्रमिक-जांच, आय-सूचना, अनुपस्थितियों के स्वरूप, उत्पादकता, आदि। तीसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में इस कार्य का और भी विस्तार होगा।

41. सितम्बर 1960 में हुए श्रम-अनुसन्धान-सम्मेलन में श्रम-सम्बन्धी मामलों की निर्भर-योग्य जानकारी की कमी तथा व्यवस्थित रूप से सतत और निष्पक्ष अनुसन्धान की आवश्यकता पर विचार किया गया था। यह तय किया गया था कि शुरू में श्रमिकों-सम्बन्धी अनुसन्धान का समन्वय करने के लिए एक केन्द्रीय समिति बनाई जाए, जिसमें सरकार, मालिकों और श्रमिकों के संगठनों, विश्वविद्यालयों तथा इस कार्य में दिलचस्पी रखनेवाले अन्य संस्थाओं के प्रतिनिधि हों। इस समिति का काम इस क्षेत्र में कार्य करने-वाली संस्थाओं और उनके साधनों की जांच करना, उनकी कमियों का पता लगाना और उन्हें दूर करने के तरीकों की खोज करना, तरजीह देने का क्रम तय करना, तथा किस संस्था को अनुसन्धान की कौन-सी योजना दी जाए, इसका निश्चय करना है, ताकि दो संस्थाएं एक ही काम में न लग जाएं। श्रमिक-क्षेत्र में अनुसन्धान-कार्य को प्रोत्साहन देना और ऐसे अनुसन्धानों के परिणामों के उपयोग के तरीके सुझाना भी इस समिति का काम है। सरकारी क्षेत्र से बाहर श्रम-सम्बन्धी मामलों पर अनुसन्धान के लिए कुछ नई संस्थामूलक सुविधाएं उपलब्ध करने का इरादा है। इसे कर्मचारियों, मालिकों और अन्य लोगों के संगठनों का सहयोग तथा सहायता प्राप्त होगी।

अध्याय 16

सरकारी उद्योगों का संगठन

अप्रैल 1956 के औद्योगिक नीति-सम्बन्धी प्रस्ताव में, जिसमें अर्थव्यवस्था की प्रगति को तीव्र करने के लिए द्रुत उद्योगीकरण की आवश्यकता को स्वीकार किया गया है, नए उद्योगों की स्थापना में सरकारी क्षेत्र के मुख्य कार्य के महत्व को इन शब्दों में प्रकट किया गया है :

> "समाजवादी ढंग के समाज की स्थापना को राष्ट्रीय लक्ष्य के रूप में स्वीकार करने तथा योजनाबद्ध और द्रुत विकास की आवश्यकता के कारण यह आवश्यक है कि बुनियादी और नीतिमूलक महत्व के सभी उद्योग अथवा ऐसे उद्योग, जो सार्वजनिक उपयोगी सेवाओं के ढंग के हैं, सरकारी क्षेत्र में होने चाहिएं। ऐसे अन्य उद्योग भी, जो अनिवार्य हैं तथा जिनमें इतने बड़े पैमाने पर पूंजी-विनियोग की आवश्यकता है, जिसे वर्तमान समय में केवल राज्य प्रदान कर सकता है, सरकारी क्षेत्र में ही होने चाहिएं।"

2. ऐसे अनेक बुनियादी उद्योगों को, जिनके लिए बड़े पैमाने पर पूंजी-विनियोग की तथा विदेशी फ़र्मों या विदेशी सरकारों से व्यापक सहयोग की आवश्यकता है तथा जिन्हें निकट भविष्य में कोई लाभ न दिखाई देने पर भी केवल भावी सम्भावनाओं के आधार पर ही स्थापित किया जा सकता है, सामान्यत: पूरी तरह निजी उद्योगों पर ही निर्भर रह कर प्रारम्भ नहीं किया जा सकता। चूंकि ऐसे उद्योगों की स्थापना की अनिवार्य आवश्यकता है तथा ये देश के वर्तमान विकास की स्थिति के अनुरूप हैं, अत: यह आवश्यक है कि सरकारी क्षेत्र का कार्य-क्षेत्र बड़ा हो। इसके साथ ही, ऐसे उद्योगों को, जहां तकनीकी कारणों से यन्त्रों के विशाल होने तथा बड़ी मात्रा में पूंजी के विनियोग की आवश्यकता है, सरकारी क्षेत्र में ही स्थापित एवं संगठित करने से, आर्थिक और औद्योगिक शक्ति को अनुचित रूप से निजी हाथों में एकत्र होने से भी रोका जा सकेगा।

3. सरकारी क्षेत्र के द्रुत विकास से जनता के बचत-विनियोग को बढ़ाने में ठोस रूप से योग मिलेगा और परिणामत: विकास की गति भी बढ़ेगी। इस दृष्टिकोण से सरकारी क्षेत्र के विस्तार का मुख्य लाभ यह है कि बहुत हद तक कुशलता और आय के वितरण में होनेवाला सम्भावित संघर्ष समाप्त हो जाएगा। बढ़े हुए लाभ, जो निजी क्षेत्र में असमानता पैदा करते हैं (और सम्भवत: जिनका प्रत्यक्षत: दुरुपयोग होता है), सरकारी क्षेत्र में सीधे पूंजी जुटाने में प्रयुक्त किए जा सकते हैं। उद्योगों के कुशल संचालन से और अपने उत्पादनों तथा सेवाओं के लिए तर्कसंगत और आर्थिक दृष्टिकोण से दृढ़ मूल्य-नीति के अनुसरण के द्वारा सरकारी क्षेत्र के उद्योगों को विनियुक्त पूंजी का पर्याप्त लाभ प्राप्त होना चाहिए तथा विनियोग के लिए निश्चित साधनों को बढ़ाने के लिए अपने लाभ का पूरा हिस्सा देना चाहिए।

4. समाजवादी ढंग के समाज की स्थापना के उद्देश्य के लिए किए गए प्रयत्नों के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप सरकारी क्षेत्र के विविध क्रियाकलापों का व्यापक विस्तार होगा, जिसकी परिधि में खदान और निर्माण, बिजली का उत्पादन और वितरण, निर्माण,

परिवहन और संचार, सिंचाई, बैंक और बीमा, व्यापार, सामाजिक सेवा, आदि विभिन्न कार्य आ जाएंगे। इन सब क्षेत्रों में विस्तृत कार्रवाई का यह तकाज़ा है कि उचित संगठनों का विकास हो तथा अपने कार्य में इन्हें जो अनुभव प्राप्त हो, उससे वे क्रमशः और अधिक कुशल और कारगर हो सकें। इस अध्याय में यद्यपि आलोच्य विषय औद्योगिक संस्थान है, फिर भी अधिकांश विचार व्यापक क्षेत्र पर भी लागू होते हैं।

5. पिछले कुछ वर्षों में सरकारी क्षेत्र में कई बड़े औद्योगिक संस्थान स्थापित किए गए हैं। तीसरी योजना की अवधि में कुछ और नए उद्योग स्थापित किए जाएंगे। वस्तुतः प्रत्येक उत्तरवर्ती योजना में अधिकाधिक संख्या में उद्योग स्थापित होंगे। पहले नए उद्योगों को प्रारम्भ करते समय मुख्य विचार उनके लिए वित्तीय साधन जुटाने का पैदा होता था। ऐसे काम प्रारम्भ करने की बात होती थी, जो महत्व रखते थे। परन्तु अब इस प्रश्न पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है कि इन उद्योगों का प्रबन्ध किस प्रकार योग्य ढंग से किया जाए, जिससे वे और अधिक अच्छे उत्पादक बन सकें; इतना पर्याप्त फालतू माल तैयार कर सकें, जिसका प्रयोग भावी विस्तार के लिए किया जा सके; तथा सावधानीपूर्ण आयोजन, सुप्रबन्ध और मालिकों तथा श्रमिकों के अच्छे सम्बन्धों के बारे में आदर्श बन सकें।

6. नई परियोजना की स्थापना के साथ ही, और वास्तव में इससे बहुत पहले ही, यह अत्यधिक आवश्यक है कि प्रभावी प्रबन्ध की ओर उचित ध्यान दिया जाए। चाहे परियोजना को कितना ही सोच-विचार कर और कितनी ही अच्छी तरह प्रारम्भ किया गया हो, अन्ततः उद्योग की सफलता या असफलता प्रबन्ध-विभाग की क्षमता पर निर्भर करती है। इससे पूर्व कि प्रबन्ध की कुछ त्रुटियों का विश्लेषण किया जाए और ऐसे क्षेत्रों को बताने का प्रयत्न किया जाए, जिनमें सुधार की आवश्यकता है, यहां संक्षेप में निर्माण के क्षेत्र में सरकारी उद्योगों की वर्तमान स्थिति का उल्लेख किया जाता है।

7. निर्माण के क्षेत्र में सरकारी उद्योग तीन प्रकार से संगठित किए गए हैं। इनमें से कुछ चित्तरंजन-इंजिन-कारखाने की तरह हैं, जिनका संचालन विभागीय रूप से होता है। कुछ को कानूनी रूप देकर निगम बनाया गया है। परन्तु अधिकांश उद्योग कम्पनी-अधिनियम के अधीन स्थापित ज्वाइंट स्टाक कम्पनियां हैं, यद्यपि कभी-कभी ऐसी कम्पनियों को भी निगम का रूप दे दिया गया है। केन्द्रीय सरकार के महत्वपूर्ण उद्योगों की सूची अनुबन्ध में दी गई है, जिसमें प्रत्येक उद्योग किस मन्त्रालय के अधीन है, उसका नाम क्या है, उसकी कब स्थापना हुई तथा उसकी कानूनी स्थिति क्या है, बताया गया है।

8. कुछ समय पूर्व तक यह आम रिवाज था कि प्रत्येक निर्माता-इकाई को एक स्वतन्त्र कम्पनी के रूप में स्थापित किया जाए। जहां यह अनुभव किया गया कि कुछ उद्योगों में एक ही क्षेत्र में काम करने के कारण या विशेष व्यावसायिक और तकनीकी सम्बन्ध के कारण परस्पर-सहयोग और समन्वय आवश्यक है, वहां कुछ व्यक्तियों को दोनों ही कम्पनियों का डायरेक्टर बनाने का प्रयत्न किया गया। ऐसे उद्योगों में, जो एक ही मन्त्रालय के अधीन हैं, तालमेल बिठाने में कोई कठिनाई नहीं आती, क्योंकि बोर्ड के अध्यक्ष तथा अनेक डायरेक्टर वही होते हैं। इसका कारण यह है कि अनेक मामलों में डायरेक्टरशिप कुछ पदेन अधिकारियों की होती है।

9. अब इस बात को स्वीकार कर लिया गया है कि विशेष संगठनों की संख्या और विविधता में इतनी वृद्धि रोकी जानी चाहिए कि उनका प्रबन्ध ही न हो सके, तथा इन संगठनों को इकट्ठा करने के लिए एक निश्चित नीति होनी चाहिए, जिससे प्रत्यक्षतः एक ही क्षेत्र में काम करनेवाले उद्योगों को निकट लाया जा सके। इससे प्रत्येक घटक इकाई को वे सामान्य सुविधाएं भी उपलब्ध हो सकेंगी, जो उन्हें अपने सीमित साधनों से उपलब्ध नहीं हो सकती थीं, तथा सब मिला कर इससे मितव्ययिता और कुशलता भी बढ़ेगी। उदाहरण के लिए, एक ही क्षेत्र में काम करनेवाले कुछ उद्योगों को एकत्र करने से तथा उनके साधन-स्रोतों को भी एक साथ मिला देने से एक पर्याप्त बड़े आकार का संगठन क्रय और विक्रय, दोनों ही दृष्टियों से बड़े पैमाने पर, शाखा-कार्यालयों के साथ, स्थापित किया जा सकता है, जो वैज्ञानिक और तकनीकी अनुसन्धान की सुविधाएं प्रदान कर सकता है, डिज़ाइन और विकास के लिए संगठन स्थापित कर सकता है, तकनीकी प्रशिक्षण-कार्यक्रम हाथ में ले सकता है और सामान्य आधार पर व्यक्तियों के चुनाव और भर्ती की उचित व्यवस्था कर सकता है। इसके साथ इस उद्योग-समूह के प्रत्येक उद्योग के सामने एक ही प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होने के कारण उनके समाधान के लिए अनुभवों का परस्पर आदान-प्रदान भी बड़ा उपयोगी होगा। परन्तु एक ही कम्पनी के अधीन अनेक निर्माण-इकाइयों को इस प्रकार नहीं लाना चाहिए कि डायरेक्टरों के बोर्ड की ओर से अत्यधिक केन्द्रीकरण की स्थिति पैदा हो जाए या घटक उत्पादक इकाइयों के दिन-प्रति-दिन के कार्य में हस्तक्षेप होने लगे, अन्यथा संस्थान का जनरल मैनेजर इस स्थिति में नहीं आ सकेगा कि उद्योग के सुचारु और कुशल संचालन की गारंटी दे सके।

10. इन सम्भावनाओं के प्रति जागरूकता का आभास हाल ही में स्थापित कुछ बड़ी कम्पनियों—यथा, हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड, हेवी इंजीनियरिंग-कारपोरेशन, हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड, हिन्दुस्तान इन्सेक्टीसाइड्स लि०, उर्वरक-निगम, राष्ट्रीय कोयला-विकास-निगम आदि की स्थापना से मिलता है। इनमें से प्रत्येक कम्पनी इस्पात, मशीन-निर्माण, रसायन, उर्वरक, कोयला-खनन, आदि से सम्बद्ध विभिन्न संस्थानों का नियन्त्रण करती है या कर सकेगी।

11. प्रारम्भिक अवस्था में कुछ वर्ष पूर्व तक परियोजनाओं का संचालन विभागीय रूप से होता था। बाद में यह निश्चय किया गया कि व्यावसायिक ढंग के सरकारी उद्योगों को कम्पनियों के रूप में संगठित किया जाना चाहिए। इस समय अधिकांश नई परियोजनाओं के लिए—यथा रांची-स्थित भारी मशीन-परियोजना—प्रारम्भ से ही परियोजना के काम को देखने के हेतु, जिसमें निर्माण-कार्य को देखना भी शामिल है, एकक कम्पनी बना दी जाती है। इसके साथ ही वर्तमान कम्पनियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है कि वे अपने क्षेत्र में नए उद्योग स्थापित करें, जैसा कि हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड को दुर्गापुर में मिश्रधातु और औज़ारी इस्पात-संयन्त्र की और बोकारो में नए इस्पात-कारखाने की ज़िम्मेदारी सौंपी गई तथा हिन्दुस्तान मशीन-टूल्ज़ कम्पनी को एक या दो मशीनी औज़ार-कारखाने खोलने का काम सौंपा गया।

12. अब यह आवश्यक हो गया है कि डिज़ाइन बनाने और निर्माण के लिए विशेष दक्षता-प्राप्त अभिकरणों की स्थापना के प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाए। ये अभिकरण औद्योगिक विकास के सम्बन्ध में बड़ी इकाइयों को हाथ में ले सकेंगे तथा

इन्हें वास्तविक निर्माण में जो बहुमूल्य अनुभव प्राप्त होगा, उसका उपयोग उत्तरवर्ती परियोजनाओं के निर्माण में किया जा सकेगा। इस दिशा में हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड और सिन्द्री फ़र्टिलाइज़र्स लिमिटेड में डिज़ाइन और निर्माण-संगठन स्थापित करके शुरुआत कर दी गई है।

13. बड़े उद्योगों का सफलतापूर्वक संचालन एक नई चुनौती है। औद्योगिक और व्यावसायिक संस्थाओं के कुशल संचालन के लिए यह आवश्यक है कि कार्य-सम्बन्धी निर्णय शीघ्र लिए जाएं। यह आवश्यक नहीं कि ये निर्णय सदा ठीक ही हों, क्योंकि इस प्रकार के अधिकांश निर्णय वापस लिए जा सकते हैं तथा बाद में उन्हें सुधारा भी जा सकता है। उद्योग के प्रबन्ध-विभाग को उत्पादन-परिणाम दिखाने के लिए अधिक अधिकार देना और संचालन में लचीलापन होना आवश्यक है। यदि किसी उद्योग में वास्तविक स्वायत्त-शासन नहीं है, तो उसका कारगर होना सम्भव नहीं है।

14. उद्योगों में व्यक्ति को अधिकार न देना भी एक सामान्य त्रुटि है। जिस प्रकार जनरल मैनेजर को कारगर रूप से प्रबन्ध करने के लिए पर्याप्त अधिकार प्राप्त नहीं होते हैं, उसी प्रकार वह तथा दूसरे प्रबन्ध-अधिकारी भी प्रायः यह त्रुटि करते हैं कि वे प्रबन्ध-विभाग के अपने से नीचे के उन अन्य कर्मचारियों को उचित अधिकार प्रदान नहीं करते, जो बिना उचित अधिकार के अपना काम ठीक प्रकार से नहीं कर सकते। अधिकार प्रदान करने की कमी सामान्यतः कर्तव्यों और दायित्वों को ठीक प्रकार से निश्चित न करने के कारण होती है। जब तक कोई यह नहीं जानता कि उसे क्या करना है तथा उसके क्या अधिकार हैं, तब तक वह विश्वास और प्रभावी ढंग से न तो काम कर सकता है और न किसी परिणाम के लिए उसे ज़िम्मेदार ही ठहराया जा सकता है।

15. उद्योगों की सफलता का एक निर्णायक तथा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि प्रबन्ध-विभाग में उच्च पद पर पर्याप्त संख्या में अनुभवी व्यक्ति काम कर रहे हों। पर्याप्त प्रबन्धक कर्मचारियों के बिना भी एक अच्छा संयन्त्र चलता दिखाई दे सकता है, और वास्तव में अधिक खर्चीले ढंग पर चल सकता है, परन्तु यदि उनकी संख्या पर्याप्त न हो, तो उद्योग के सामने उत्पादन-व्यय में वृद्धि, कम उत्पादन, सामान की अधिक बर्बादी, मशीन-सम्बन्धी और प्रक्रिया-सम्बन्धी कठिनाइयां तथा मशीनों में खराबी, आदि की समस्याएं खड़ी हो जाती हैं।

16. उद्योगों की सफलता पर विपरीत प्रभाव डालनेवाला एक अन्य कारण प्रबन्ध-विभाग के कर्मचारियों में योग्यता का अभाव है। प्रबन्ध-विभाग के पदों पर अनुभवी व्यक्तियों की अत्यधिक कमी होने के साथ, प्रायः जनरल मैनेजर, उत्पादन-मैनेजर, रख-रखाव-सुपरिंटेंडेंट, आदि महत्वपूर्ण पदों पर भी ऐसे व्यक्ति होते हैं, जिन्हें अपना काम ठीक प्रकार से करने के लिए न तो प्रशिक्षण ही प्राप्त होता है और न अनुभव ही।

17. लाभ और लागत के प्रति भी जागरूकता इतनी व्यापक नहीं है, जितनी होनी चाहिए। प्रबन्ध-विभाग का यह लक्ष्य होना चाहिए कि आर्थिक कुशलता प्राप्त की जाए। इस मनोवांछित परिणाम को प्राप्त करने के लिए व्यय के बारे में सतर्कता आवश्यक है। खर्च के प्रति अत्यधिक सतर्क रहनेवाला मैनेजर भी खर्च पर तब तक नियन्त्रण नहीं रख सकता, जब तक उसे यह न मालूम हो कि वे खर्च क्या हैं, और उसे भी खर्च के लेखा-परीक्षा तथा अन्य प्रबन्ध-सम्बन्धी तकनीक के बिना, जिनका प्रयोग अधिक नहीं

किया जाता है, जानना सम्भव नहीं है। व्यक्तियों के चुनाव में, उनके प्रशिक्षण में, उन्हें अधिकतम सन्तोष प्रदान कर उनसे अधिकतम कार्य सम्पादन कराने में भी कुछ त्रुटियां रह जाती हैं।

18. उपयुक्त कदम उठाने के लिए यहां कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं पर विचार किया गया है :

सरकारी उत्तरदायित्व : सरकारी स्वामित्ववाले उद्योगों पर प्रजातान्त्रिक नियन्त्रण अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसके साथ यह भी सामान्य रूप से मान लिया गया है कि यदि किसी सरकारी उद्योग का सफलतापूर्वक संचालन करना है, तो उसे सरकार और संसद् से कुछ सीमा तक पर्याप्त स्वायत्त-अधिकार मिलना चाहिए। जब सरकारी उद्योग के दिन-प्रति-दिन के निर्णयों पर संसद् में स्पष्टीकरण मांगा जाएगा और बहस होगी, तब मन्त्री के लिए भी यह आवश्यक हो जाएगा कि वह पहले से ही सब जानकारी देने और प्रत्येक निर्णय की पूर्व-स्वीकृति लेने को कहे। निरन्तर सार्वजनिक आलोचना और जांच के कारण प्रबन्ध-विभाग व्यावसायिक उद्योगों में दैनिक कार्य-सम्पादन के लिए आवश्यक निर्णय लेने में भी संकोच करेगा और इस प्रकार प्रत्यक्षतः स्वायत्तशासी उद्योग लालफीताशाही और नौकरशाही के कारण पंगु हो जाएगा। इसलिए यह अनुभव किया गया है कि संसद् की एक समिति बनाई जाए, जो ऐसी जानकारी के साथ आलोचना कर सके, जिसका सरकारी उद्योग पर प्रभाव पड़े। यह समिति सदा सरकारी उद्योग के कामों के बारे में जानकारी रखेगी। यदि समिति के सदस्यों का कार्यकाल 3 वर्ष रखा जाए, तो इससे एक लाभ यह होगा कि सदस्य विविध जटिल तथ्यों को समझ सकेंगे तथा एक निरन्तरता बनी रहेगी। इसका एक परिणाम यह होगा कि संसद् के अधिकाधिक सदस्य इस मामले में विशेष दिलचस्पी ले सकेंगे। चूंकि संसद् समिति की सतर्कता से आश्वस्त होगी, इसलिए संसद् के सदस्य भी व्यक्तिगत रूप से सरकारी उद्योगों के समय-समय पर मूल्यांकन के बारे में समिति के सदस्यों के निर्णयों को महत्व देंगे।

19. **डायरेक्टरों के बोर्ड का स्वरूप और कार्य :** बोर्ड का मुख्य कार्य उद्योग के लिए एक आम नीति तथा उद्देश्य निश्चित करना है। निर्धारित नीतियों के आधार पर मैनेजिंग डायरेक्टर या जनरल मैनेजर को पूरे अधिकार होने चाहिएं तथा आवश्यक परिणाम प्राप्त करने के लिए वही उत्तरदायी होगा। मन्त्रालयों के सचिवों को चेयरमैन या डायरेक्टर नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए। प्रारम्भिक अवस्थाओं में यह उपयोगी हो सकता है कि एक या दो डायरेक्टर ऐसे सरकारी अधिकारियों में से नियुक्त किए जाएं, जो सम्बद्ध प्रशासक मन्त्रालय में और वित्त-मन्त्रालय में परियोजना के बारे में ही देखरेख करते हों। ये अधिकारी कम्पनी के विधान के अधीन रहते हुए अन्य डायरेक्टरों के समान ही काम कर सकेंगे तथा कम्पनी के नियम और कानून भी उन पर उसी तरह लागू होंगे। ऐसे विषयों के बारे में, जिनका सम्बन्ध सरकार से है, वे बोर्ड को बताएंगे कि सरकार का विचार क्या है, तथा ऐसे मामले जब सरकार के पास जाएंगे, तब ये अधिकारी सरकार के सामने बोर्ड के विचार रख सकेंगे।

20. मैनेजिंग डायरेक्टर और (या) चेयरमैन की नियुक्ति सरकार-द्वारा होनी चाहिए। बहुत छोटे उद्योगों को छोड़ कर इनकी नियुक्ति सारे समय के लिए होनी चाहिए। अन्य डायरेक्टर, कम्पनी की आवश्यकताओं के अनुसार, सारे या आंशिक समय के लिए हो सकते हैं।

21. बोर्ड की सदस्यता योग्यता, अनुभव और प्रशासन की दक्षता के आधार पर होगी तथा यह न केवल सरकारी उद्योग के कर्मचारियों के लिए, अपितु निजी क्षेत्र के व्यक्तियों के लिए भी खुली होनी चाहिए। बोर्ड का सदस्य चुन लिए जाने पर सदस्यों को उद्योग के हितों को अपना ही हित समझ कर काम करना चाहिए।

22. डायरेक्टरों के बोर्ड को इस बात के पर्याप्त अधिकार होने चाहिएं कि वे नियुक्तियां और वेतन-मान निश्चित कर सकें। एक सरकारी उद्योग से दूसरे सरकारी उद्योग में कर्मचारियों का जाना रोकने के लिए, जो कि एक ही प्रकार के पदों के लिए विभिन्न वेतन-मान निश्चित करने से स्वाभाविक है, यह आवश्यक है कि बोर्ड को पहले ही सामान्य रूप से यह बता दिया जाए कि विभिन्न श्रेणी के पदों के लिए बुनियादी वेतन-मान क्या हो। फिर भी, बोर्ड को इस बात की स्वतन्त्रता होगी कि वह विशिष्ट कामों के लिए विशेष वेतन निश्चित कर सके।

23. पूजीगत कामों की अनुमति देने के लिए बोर्ड के अधिकारों में पर्याप्त वृद्धि करने की आवश्यकता है, क्योंकि कुछ बड़े उद्योगों के लिए जो सीमा निर्धारित की गई थी, वह बाद में अत्यल्प स्वल्प सिद्ध हुई। बड़े उद्योगों के बारे में वित्तीय सीमा तुलना में कुछ अधिक होनी चाहिए। छोटे उद्योगों में यह सीमा कम हो सकती है। खर्च की स्वीकृति के लिए सरकार से लिखा-पढ़ी या अनुमति प्राप्त करने की कार्रवाई कम-से-कम होनी चाहिए, जिससे कम्पनी की सीमा और नियमों में रहते हुए डायरेक्टरों के बोर्ड को संयन्त्र के संचालन अथवा परियोजना के निर्माण को स्वयं प्रारम्भ करने की पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त हो सके।

24. कुछ समय से ऐसा प्रयत्न रहा है कि बड़ी कम्पनियां स्थापित की जाएं, जिनके अधीन एक ही प्रकार के छोटे-छोटे उद्योगों को ले आया जाए। इस प्रकार की बड़ी कम्पनियों के निर्माण को इसलिए वांछनीय समझा गया कि इससे घटक इकाइयों में सामान्य सुविधाएं प्राप्त हो सकेंगी तथा आय, मितव्ययिता और कुशलता बढ़ सकेगी। मन्त्रालय-द्वारा कम्पनी को व्यापक अधिकार प्रदान करने के साथ यह जरूरी है कि कम्पनी भी घटक इकाइयों के जनरल मैनेजरों को पर्याप्त अधिकार प्रदान करे। यदि ऐसे व्यक्तियों को, जिन्हें उद्योग का संचालन करना है, आवश्यक स्वायत्तता और अधिकार प्रदान न किए गए, तो अत्यधिक केन्द्रीकरण की त्रुटि बनी रहेगी और उद्योग की घटक इकाइयों के संचालन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

25. **मैनेजिंग डायरेक्टर/जनरल मैनेजर :** नेतृत्व, पथ-प्रदर्शन और मुख्य संचालन-शक्ति मैनेजिंग डायरेक्टर या जनरल मैनेजर से आनी चाहिए। उसे तकनीकी क्षमता, प्रशासनीय दक्षता और नेतृत्व की योग्यता के आधार पर चुना जाना चाहिए। वह यह अच्छी तरह देखने में समर्थ हो कि कहां क्या हो रहा है, किस विभाग में काम सन्तोषजनक ढंग से नहीं हो रहा है, तथा उसे इतना आवश्यक ज्ञान और अधिकार होना चाहिए, जिससे वह विभागीय मैनेजरों को काम ठीक करने में सहायता दे सके। उसे निर्धारित सामान्य नियमों की सीमा में रहते हुए काम करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए तथा परिणामों के लिए वही पूरी तरह उत्तरदायी होगा। दिन-प्रति-दिन के निर्णय करना उसका ही काम होना चाहिए। यह बात समझ लेनी चाहिए कि जब कुशलता के हित में शीघ्र निर्णय लिए जाते है, तब कभी-कभी भूल हो जाना अनिवार्य है। उद्योग के संचालन

में लचीलापन तभी सम्भव है, जब जनरल मैनेजर को विभिन्न व्यक्तियों के सामने विभिन्न अवसरों पर किसी विशेष नियम का पालन क्यों नहीं किया गया, आदि बातों का स्पष्टीकरण देने से समुचित मात्रा में छूट प्राप्त हो। अपने उत्तरदायित्व को अच्छी तरह निभाने के लिए जनरल मैनेजर को उद्योग का पर्याप्त लम्बे समय तक अधिकारी बने रहना चाहिए, जिससे उसे अपने उद्योग की समस्याओं और सम्भावनाओं का अच्छी तरह ज्ञान हो सके। इसलिए नियुक्तियों में जल्दी-जल्दी परिवर्तन नहीं किए जाने चाहिएं। इसके साथ ही उसके कार्यकाल की सुरक्षा उसके काम के परिणामों पर निर्भर करनी चाहिए। यदि वह सफल होता है, तो स्वभावतः वह अपने पद पर बना रहेगा तथा उसे प्रोत्साहन मिलेगा, और यदि वह असफल होता है, तो उसके हटा दिए जाने की आशा करनी ही चाहिए।

26. **वित्तीय परामर्शदाता का कार्य :** सभी कम्पनियों को जनरल मैनेजर के अधीन एक आन्तरिक वित्तीय परामर्शदाता रखना चाहिए। मतभेद होने की स्थिति में जनरल मैनेजर को वित्तीय परामर्शदाता के परामर्श को ठुकरा देने का पूरा अधिकार होगा, परन्तु एक परम्परा के रूप में ऐसे मामले जनरल मैनेजर को बोर्ड की अगली बैठक में पेश करने चाहिएं।

27. वित्तीय परामर्शदाता को विशुद्ध रूप से खर्च के नियन्त्रण पर ही ध्यान देने के बदले वित्तीय प्रबन्ध की समस्याओं पर मुख्यतः ध्यान देना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए यह आवश्यक होगा कि वित्तीय परामर्शदाताओं को उद्योग में नियुक्त होने से पूर्व या नियुक्त हो जाने पर अभ्यास-पाठ्यक्रमों-द्वारा वित्तीय सिद्धान्तों और व्यवहार के बारे में पूरी जानकारी प्रदान की जाए। यह विशेष रूप से उन वित्तीय परामर्शदाताओं के लिए आवश्यक ह, जो इस प्रयोजन के लिए अभी उपलब्ध स्रोतों से नियुक्त किए जाते हैं।

28. **सहायक प्रबन्ध-व्यवस्था :** जनरल मैनेजर के पास सहायक प्रबन्ध-कर्मचारी पर्याप्त संख्या में होने चाहिएं, जो समुचित नियन्त्रण, अधीक्षण, निदेशन तथा अन्य कर्मचारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था कर सकें। ऐसे कर्मचारियों का चुनाव तथा नियुक्ति बोर्ड की अनुमति से जनरल मैनेजर करेगा, तथा ये कर्मचारी जनरल मैनेजर या उसके द्वारा अधिकृत किसी व्यक्ति के प्रति ही उत्तरदायी होंगे। जनरल मैनेजर उन्हें पर्याप्त अधिकार प्रदान करे तथा कार्य के सम्पादन का दायित्व उन्हीं पर हो।

29. **प्रबन्धक-वर्ग का निर्माण :** उद्योग का कुशल संचालन दो मुख्य बातों पर, जिनका सम्बन्ध कर्मचारी-वर्ग की व्यवस्था से है, निर्भर करता है। ये हैं, संगठन में उत्तर-दायित्वपूर्ण पदों के लिए प्रशिक्षण और कर्मचारी-वर्ग का इस रूप में विकास कि अन्ततः मुख्य पदों पर नियुक्ति के लिए वह दूसरी पंक्ति के रूप में काम कर सके। मुख्य पदों के लिए प्रबन्ध-विभाग के कर्मचारी केवल तकनीकी रूप से ही योग्य न हों, अपितु सारे संयन्त्र के बारे में ही उनकी दृष्टि विकसित होनी चाहिए। ऐसा किस प्रकार हो, यह प्रत्येक उद्योग की अपनी विशिष्ट स्थिति पर निर्भर करता है। उद्योग इसके लिए विशेष पाठ्यक्रम प्रारम्भ कर सकते हैं या अन्य ऐसे क्रियात्मक कदम उठा सकते हैं, जिनमें चुने हुए व्यक्तियों को उपयुक्त प्रबन्ध-सम्बन्धी पदों पर काम करने का अवसर देना भी शामिल है।

30. **अग्रिम आयोजन :** आयोजन, जिसमें पहले से यह निश्चय होता है कि क्या किया जाना है, उद्योग की सफलता के लिए पहली शर्त है। यह संगठन तथा साधनों को इकटठा

करने, और निदेशन तथा नियन्त्रण को एक आधार प्रदान करती है। योग्य मैनेजर वह है, जो विस्तृत आयोजन के आधार पर विश्वास के साथ यह कह सके कि वह अगले मास और वर्ष की अवधि में किन वस्तुओं का उत्पादन करेगा, उसे किस योग्यता के कितने कर्मचारियों की आवश्यकता है, तथा उन पर कितना व्यय आएगा, उसे कौन-कौन-सा सामान कितनी मात्रा में चाहिए और; माल कितना रद्दी जाएगा। इसी प्रकार स्पष्ट रूप से उसे यह भी बता सकना चाहिए कि अपने संचालन के विभिन्न चरणों में उपलब्धियों के बारे में उसकी क्या योजनाएं हैं।

31. उद्योग के लिए बनाई गई योजनाएं व्यवस्थित और महत्व के क्रम से होनी चाहिएं। उत्तरवर्ती विस्तृत योजनाओं की श्रृंखला जिसमें से प्रत्येक एक बड़ी योजना के अंग-रूप में उसकी पूर्ति के लिए हो, एक सामान्य स्वीकृत उद्देश्य है। इसी प्रकार, कई बड़ी योजनाएं लम्बे समय के लिए, लगभग 5 वर्ष के लिए, होनी चाहिएं तथा प्रत्येक घटक विभागों के लिए वार्षिक कार्य की योजनाएं, बजट और दैनिक विस्तृत कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए।

32. यदि पहले से ही खर्च, संचालन और पूंजी-सम्बन्धी बजट बना लिया जाए तो सम्बद्ध प्रशासक मन्त्रालय को बार-बार प्रत्येक बात के लिए लिखने की आवश्यकता नहीं होगी, उद्योग की स्वायत्तता सुदृढ़ होगी और उसके काम में लचीलापन बना रह सकेगा। इसलिए प्रत्येक उद्योग को अपने हित मे इस प्रकार की पूर्ण सज्जा के लिए आवश्यक व्यवस्था करनी चाहिए।

33. पहले से ही आयोजन करने का एक लाभ यह है कि यह देखा जा सकता है कि उसका प्रत्येक भाग दूसरे से मेल खाए और सब भाग एक ही उद्देश्य की पूर्ति के लिए हों। सावधानीपूर्वक और वास्तविक पूर्व-आयोजन से जब किसी बाधा या त्रुटि का पता लगता है, तो उसके निवारण के लिए उसके होने से बहुत पहले ही कार्रवाई की जा सकती है। यदि पहले से ही त्रुटि को सुधारने के लिए कार्रवाई न की गई, तो भारी व्ययसाध्य मशीनी गड़बड़ी को रोकना असम्भव हो जाता है। यह तो स्पष्ट ही है कि ख़राबियों के बहुत बढ़ जाने पर उनको सुधारने की तुलना में यदि शुरू में ही उनको सुधारा जाए, तो बहुत आसानी रहती है। इस प्रकार, यदि निरोधक रख-रखाव-व्यवस्था को क्रमबद्ध रूप से किया जाए, तो खर्चीली मरम्मतों, मशीनों की अदला-बदली या संयन्त्र को कुछ समय के लिए बन्द करने-जैसी नौबतों से बचा जा सकता है। विस्तृत योजना होने से अधिक कुशल तरीके और प्रक्रियाएं विकसित करने को प्रोत्साहन एवं प्रेरणा मिलती है तथा अधिकार प्रदान करने और उत्तरदायित्व सौंपने में सुविधा होती है।

34. कुछ विशिष्ट बड़े और कुछ उनसे छोटे उद्देश्यों को निर्धारित करना आयोजन की सारी प्रक्रिया का एक अविभाज्य अंग है। अधिक विस्तृत योजना के सम्भावित परिणामों की अभिव्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि काम के विविध मानदंडों और रूपों को निर्धारित किया जाए। इनमें कच्चे माल, बिजली और ईंधन के प्रयोग, श्रमिकों की संख्या, सामान्य खर्च, मात्रा और किस्म, दोनों के ही बारे में उत्पादन के लक्ष्य, प्रशिक्षण के कार्य, आदि भी शामिल होने चाहिएं। इस सम्बन्ध में देश और विदेशों के इसी प्रकार के संयन्त्रों के बारे में तुलनात्मक आंकड़े बड़े उपयोगी हो सकते है। इस दृष्टिकोण से यदि उद्योग का संचालन-बजट सावधानीपूर्वक तैयार किया जाए, तो एक लक्ष्य सामने रहता है,

जिसकी पूर्ति के लिए सभी अन्य क्रियाकलाप किए जा सकेंगे। इस प्रकार के कदम उठाने से अन्य अनेक लाभ भी होंगे। इससे सोद्देश्य और समन्वित आयोजन में बड़ी आसानी हो जाती है, इससे अधिकारियों और काम करनेवालों को आवश्यक बातों पर अपना ध्यान केन्द्रित करने में सहायता मिलती है तथा उद्योग को निरुत्पादक कार्यों से दूर रखने के लिए एक सतत सतर्कता की प्रेरणा मिलती है। आयोजन के लिए उपयोगी संचालन-सम्बन्धी आंकड़ों के संग्रह और मानदंडों के निर्धारण से भविष्य में अधिक वास्तविक कार्यक्रम बनाने के लिए एक आधार प्राप्त होता है, और सर्वाधिक महत्व की बात, जो प्रशासनिक नियन्त्रण के लिए अनिवार्य शर्त है, विशिष्ट उद्देश्यों और उनके स्वरूप को निश्चित करना है। इसका अभिप्राय योजना के अनुसार परिणाम प्राप्त करना है। यदि अनुमानों का कोई मूल्य है, तो मानदंडों और उनके स्वरूप का निर्धारण भी महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही, व्यक्तिगत प्रयत्नों को भी सोद्देश्य बनाने के लिए स्पष्ट रूप से लक्ष्यों और मानदंडों को मान्यता देना तथा उन्हें स्वीकार करना महत्वपूर्ण है।

35. **प्रेरक तत्व :** ऐसे उद्योग में, जहां कार्य-सम्पादन का वास्तविक मानदंड निश्चित किया गया है, अधिक वेतन के लिए प्रेरक व्यवस्थाएं करना बड़ा सुगम है। ये श्रमिकों की उत्पादन-क्षमता को बढ़ाने, खर्चों को कम करने और किस्म में सुधार करने के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। मोटे तौर पर, इन व्यवस्थाओं को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है : (1) काम के आधार पर वेतन-निर्धारण, (2) एक स्वीकृत उत्पादन के लिए निश्चित वेतन और उससे अधिक उत्पादन करने पर उसके लिए सानुपातिक वेतन, (3) कर्मचारियों के ऐसे समूह के उत्पादन पर बोनस देना, जिनका अलग-अलग मूल वेतन है। किस उद्योग के लिए इनमें से कौन-सी व्यवस्था उपयोगी हैं, यह उसकी स्थिति पर निर्भर करता है तथा उसकी आवश्यकताओं के अनुसार ही इनमें से किसी एक को अपनाना चाहिए। संक्षेप में, असल बात यह है कि कर्मचारियों और उद्योग, दोनों के समान हित के लिए यह ज़रूरी है कि यथासम्भव प्रेरक वेतन-व्यवस्था लागू की जाए।

36. **अनुसन्धान-विभाग :** सरकारी उद्योगों में यह आवश्यक है कि अनुसन्धान और विकास-विभागों में अच्छे और पर्याप्त कर्मचारी हों। इन कर्मचारियों को वैज्ञानिक अध्ययन के द्वारा उत्पादन की किस्म और संचालन-सम्बन्धी तथा तकनीकी कुशलता बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार के विभागों की स्थापना की सिफारिशों को अविलम्ब मूर्त रूप दिया जाना चाहिए। नई खोजों और नए विचारों के लिए उपयुक्त पुरस्कार दिया जाना चाहिए और प्रचार किया जाना चाहिए। विभिन्न सरकारी उद्योगों में तकनीकी और प्रबन्ध-सम्बन्धी अनुभवों का समय-समय पर आदान-प्रदान होते रहना चाहिए, जिससे सामान्य अनुभवों से सभी को लाभ हो सके। इस सम्बन्ध में दूसरे उद्योगों का निरीक्षण बड़ा उपयोगी होगा।

37. **कर्मचारियों के सम्बन्ध :** सरकारी क्षेत्र के उद्योगों का यह विशेष उत्तरदायित्व है कि वे ऐसी श्रम-नीतियां अपनाएं, जो उचित खर्च पर योग्य श्रमिक प्राप्त करने और उन्हें रखने में सहायता कर सकें। इसके लिए प्रेरणादायक वेतन-नीति, कर्मचारियों का सावधानीपूर्ण चुनाव, सभी स्तरों के कर्मचारियों की दक्षता को बढ़ाने के लिए संगठित प्रशिक्षण, योग्यता में वृद्धि के साथ कर्मचारियों को ऊंचे पद पर पहुंचने का अवसर, उद्योग

के सचालन में सुधार के लिए कर्मचारियों को सुझाव देने के लिए सक्रिय प्रोत्साहन, उपयोगी विचारों के लिए उचित पुरस्कार, छोटी समस्याएं उग्र रूप धारण करे, इससे पूर्व ही उनको हल करने के लिए शिकायत-प्रक्रिया अपनाना तथा कर्मचारियों के प्रति ऐसी मनोवृत्ति रखना आवश्यक है, जिससे उन्हे अधिक उत्पादन करने और स्वतः पहल के लिए प्रोत्साहन मिल और उनमें सन्तोष पैदा हो, उद्योग में भागीदार होने की तथा उसके प्रति वफादारी की भावना पैदा हो और उद्योग की उपलब्धियो पर उन्हे गौरव का अनुभव हो।

38. **अधिशेष और उसका उपयोग :** जब कोई उद्योग कुशलतापूर्वक संचालित होता है और अपने उत्पादन तथा सेवा के लिए उचित मूल्य-नीति अपनाता है, तो अनिवार्यतः उसके संचालन का परिणाम अधिक अर्जन और फालतू उत्पादन के रूप मे होगा। विकास-शील अर्थव्यवस्था मे दोनों ही बातें महत्वपूर्ण है तथा जिस उद्योग के ये फ़ालतू उत्पादन है, उसके विकास में या अर्थव्यवस्था में अन्यत्र वित्तीय विनियोग के लिए बड़े सुविधाजनक स्रोत हैं। इसलिए सरकारी उद्योगों का यह अनिवार्य कर्तव्य है कि वे कुलशतापूर्वक उत्पादन करें और फालतू बचे माल को एकत्र करें, तथा इससे होनेवाली प्राप्ति को पुनः उद्योग के और अधिक विकास में लगाएं।

39. उद्योग के लिए इतना ही पर्याप्त नही है कि वह कुशलतापूर्वक चले तथा उसे जो कार्य दिया गया है, उसका सम्पादन सन्तोषजनक ढंग से करे। परन्तु उसे निरन्तर अपने कार्य को बढ़ाने और उसका विकास और विस्तार करने के लिए योजना बनाने के क्षेत्र मे पहल करने का भी उत्तरदायित्व लेना चाहिए। सरकारी उद्योग के प्रबन्धकों को केवल सरकार-द्वारा स्वीकृत काम को अंजाम देना ही पर्याप्त नही है, अपितु वे उद्योग के और अधिक विकास की योजना बनाने के लिए तथा आवश्यक साधनों को जुटाने के लिए निकट से सम्बद्ध हों तथा इनके लिए बहुत उत्तरदायी भी हों।

40. यहां जिस प्रकार संक्षेप में समीक्षा की गई है, उसमे अनेक त्रुटियां रह जाना अनिवार्य है। इसका उद्देश्य प्रत्येक उद्योग के लिए संचालन-सम्बन्धी विस्तृत सुझाव देना नहीं, परन्तु कुछ ऐसे महत्वपूर्ण पहलुओं पर प्रकाश डालना है, जिन पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। सरकारी क्षेत्र के अनेक उद्योगों ने पहले ही इस प्रकार की नीतियों तथा प्रबन्ध-तकनीकों को अपना लिया है, जिससे वे अल्प समय में ही अपेक्षया उल्लेखनीय परिणाम प्राप्त करने में समर्थ हो गए है। सरकारी उद्योगों का कार्य इस बात को देखते हुए कि वे तुलनात्मक दृष्टि से हाल ही में प्रारम्भ किए गए है, बड़ा सराहनीय है। प्रबन्ध की जिन त्रुटियों की ओर ध्यान खीचा गया है, वे सभी उद्योगों में, चाहे सरकारी क्षेत्र के हों या निजी क्षेत्र के, आम बात है। निरन्तर उन्नति के लिए सतत प्रयत्न सभी का सामान्य लक्ष्य होना चाहिए।

अनुबन्ध

निर्माण एवं खान-क्षेत्र में केन्द्रीय सरकार के बड़े उद्योगों की सूची

(जिनकी अधिकृत पूंजी 50 लाख रु० या इससे अधिक है)

मन्त्रालय/उद्योग		किस वर्ष में स्थापित
वाणिज्य और उद्योग-मन्त्रालय		
1. इंडियन ड्रग एंड फार्मास्युटिकल्स लि०	..	1961
2. हैवी इलेक्ट्रिकल्स लि०	..	1956
3. हैवी इंजीनियरिंग कारपोरेशन लि०	..	1958
4. हिन्दुस्तान एंटीबायोटिक्स लि०	..	1954
5. हिन्दुस्तान केबल्स लि०	..	1952
6. हिन्दुस्तान इनसेक्टीसाइड्स लि०	..	1954
7. हिन्दुस्तान मशीन-टूल्ज़ लि०	..	1953
8. हिन्दुस्तान आर्गेनिक केमिकल्स लि०	..	1960
9. हिन्दुस्तान साल्ट कम्पनी लि०	..	1958
10. नाहन फाउंड्री लि०	..	1952
11. हिन्दुस्तान केमिकल्स एंड फर्टिलाइज़र्स लि०	..	1956
12. नेशनल इन्स्ट्रूमेंट्स लि०	..	1957
13. नेशनल न्यूज़प्रिंट एंड पेपर मिल्स लि०	..	1947
14. सिन्दरी फ़र्टिलाइज़र्स एंड केमिकल्स लि०	..	1951
15. प्राग टूल्स कारपोरेशन लि०	..	1943
16. हिन्दुस्तान फ़ोटो फ़िल्म्स मैनुफ़ैक्चरिंग कम्पनी लि०	..	1960
प्रतिरक्षा-मन्त्रालय		
17. भारत इलेक्ट्रोनिक्स लि०	..	1954
18. प्रोटोटाइप मशीन टूल्ज़ फैक्टरी†	..	1953
19. हिन्दुस्तान एयरक्राफ़्ट लि०	..	1940
परमाणु-शक्ति-विभाग		
20. इंडियन रेयर अर्थ्स लि०	..	1950
वित्त-मन्त्रालय		
21. सिल्वर रिफ़ायनरी कलकत्ता†	..	1952
रेलवे-मन्त्रालय		
22. चित्तरंजन-लोकोमोटिव-वर्क्स†	..	1948
23. इंट्रेग्रल कोच फैक्टरी†	..	1952
इस्पात, खान और ईंधन-मन्त्रालय		
24. हिन्दुस्तान स्टील लि०	..	1953
25. इंडियन रिफ़ायनरीज़ लि०	..	1958
26. नेशनल कोल डेवलेपमेंट कारपोरेशन लि०	..	1956

† विभागीय उद्योग

अनुबन्ध (जारी)

मन्त्रालय/उद्योग		किस वर्ष में स्थापित
27. नेशनल मिनरल डेवलेपमेंट कारपोरेशन लि०	..	1958
28. नइवेली लिग्नाइट कारपोरेशन लि०	..	1956
29. सिगरेनी कोलियरीज कम्पनी लि०	..	1920
30. ग्रायल एड नेचुरल गैस कमीशन‡	..	1956
परिवहन और संचार-मन्त्रालय		
31. इंडियन टेलीफोन इंडस्ट्रीज लि०	..	1948
32. हिन्दुस्तान शिपयार्ड लि०	..	1952
33. हिन्दुस्तान टेलीप्रिंटर्स लि०	..	1960
निर्माण, आवास और सम्भरण-मन्त्रालय		
34. हिन्दुस्तान हाउसिंग फैक्टरी लि०	..	1953

‡ अनुविहित निगम

इनके अतिरिक्त अन्य कम्पनियां कम्पनी-अधिनियम के अधीन पंजीबद्ध हैं ।

अध्याय 17

प्रशासन और योजना की कार्यान्विति

(1)
प्रशासकीय समस्याएं

पहली दो पंचवर्षीय योजनाओं में राष्ट्रीय स्तर पर जितना प्रयत्न किया गया है, तीसरी योजना में उससे कहीं अधिक प्रयत्न करने का विचार है। अगले पांच वर्षों में राष्ट्र ने जो काम पूरे करने का संकल्प किया है, उनके क्षेत्र और विस्तार का अन्दाज़ा योजना के उद्देश्यों और लक्ष्यों को पढ़ कर नहीं लगाया जा सकता। अन्ततः योजना इस विश्वास पर आधारित है कि जितने प्रयत्न की ज़रूरत है, उतना प्रयत्न लोग करेंगे और मनुष्य की शक्ति-द्वारा जितना सम्भव हो सकता है, उतना प्रयत्न राष्ट्रीय जीवन के हर स्तर पर योजना की कुशल कार्यान्विति के लिए किया जाएगा। पंचवर्षीय योजनाएं जिन बातों को स्वीकार करके चलती हैं, उनमें यह सबसे महत्त्वपूर्ण तो है ही, सबसे मुश्किल भी है। योजना के आर्थिक लक्ष्य अपने-आप में बहुत महत्त्वपूर्ण होने के साथ-साथ भावी विकास की नींव-सदृश भी हैं। फिर भी, योजना में जो चुनौती निहित है, उसका वे केवल एक पहलू हैं। मिसाल के तौर पर, यह आशा की जाती है कि तीसरी पंचवर्षीय योजना में जो-जो भौतिक कार्यक्रम स्वीकार किए गए हैं, उन सबको पूरा करने का काम बचत से प्राप्त रकमों से ही हो सकता है, बशर्ते कि उचित परिस्थितियां मिलें। जनसंख्या में दो प्रतिशत से भी अधिक की वार्षिक वृद्धि को देखते हुए यह आशा करना कि श्रमिकों की संख्या में जितनी वृद्धि होगी, कम-से-कम उतने लोगों के लिए काम की व्यवस्था कर ही दी जाएगी, इस बात पर ही निर्भर नहीं करता कि सभी कार्यक्रमों को कुशलता के साथ लागू किया जाए, बल्कि उसके लिए यह भी ज़रूरी है कि उपलब्ध जनशक्ति-विषयक साधनों का राष्ट्र-भर में पूरा-पूरा उपयोग किया जाए। योजना के प्रमुख सामाजिक उद्देश्यों की—खास कर इन उद्देश्यों की कि सभी नागरिकों को समान अवसर प्राप्त हों, सबकी मूल आवश्यकताएं पूरी हों, आय और सम्पत्ति की विषमता घटे और आर्थिक शक्ति का वितरण अधिक सम हो—प्राप्ति अनेक व्यापक नीतियों और कार्यक्रमों की कार्यान्विति पर निर्भर करती है।

2. योजना की कार्यान्विति कई स्तरों पर होनी है—यथा, राष्ट्र, राज्य, ज़िला, खंड और गांव के स्तरों पर। निर्धारित कार्यों के सम्बन्ध में हर स्तर पर विभिन्न संस्थाओं के बीच सहयोग होना ज़रूरी है। साथ ही, यह भी आवश्यक है कि वे योजना के उद्देश्यों और उनकी पूर्ति के साधनों को समझें। संघीय आधार पर आयोजित एक विशाल और विविधतापूर्ण व्यवस्था में बहुत-कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि उसके विभिन्न स्तरों में और एक ही स्तर पर विभिन्न संस्थाओं में पारस्परिक सम्पर्क के कारगर तरीके मौजूद हों। योजना के कई महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में कार्यान्विति की ज़िम्मेदारी उन अधिकारियों पर होती है, जो बड़ी-बड़ी योजनाओं का कार्यभार वहन करते हैं। ज्यों-ज्यों अर्थ-व्यवस्था विकसित होती है, त्यों-त्यों ऐसी योजनाओं की ज़िम्मेदारियां भी बढ़ती जाती हैं। इसके फलस्वरूप संगठन की बहुत-सी नई समस्याओं को सुलझाना आवश्यक होता है। एक विकासशील अर्थ-व्यवस्था में बढ़ते हुए

सरकारी क्षेत्र और निजी क्षेत्र के—जो अंशतः व्यवस्थित और अधिकांशतः अव्यवस्थित होता है—साथ-साथ काम करने के फलस्वरूप भी कठिन प्रशासकीय समस्याएं पैदा हो जाती हैं।

3. गत दशक में प्रशासन के क्षेत्र में काफी परिवर्तन हुए हैं और उसे अपने-आपको नई परिस्थितियों के अनुकूल ढालना पड़ा है। नई-नई बातें शुरू हुई हैं और नई संस्थाओं की स्थापना हुई है, हालांकि उनमें से बहुतों का अभी एक-दूसरे से और सम्पूर्ण व्यवस्था से समन्वय स्थापित होना बाकी है। विकास की गति और सरकार की ज़िम्मेदारी के क्षेत्र के बढ़ने के साथ-साथ प्रशासकीय कार्य का परिमाण और उसकी उलझनें भी बढ़ गई हैं। प्रशासकीय व्यवस्था पर ज़्यादा ज़ोर पड़ा है और उसमें कई जगहों पर ऐसी स्थिति हो गई है कि जो काम करनेवाले हैं, उनकी न तो संख्या पर्याप्त है और न योग्यता ही। प्रशासन पर विकास-योजनाएं पूरी करने का भार बहुत है; तीसरी योजना में वह कई गुना और बढ़ जाएगा और जन-सम्पर्क की नई-नई समस्याएं भी निश्चय ही सामने आएंगी। इधर प्रशासन के कुछ पहलुओं ने विशेष ध्यान आकृष्ट किया है। इनमें ये भी शामिल हैं—कई क्षेत्रों में काम की धीमी गति, आयोजन में निहित समस्याएं, बड़ी-बड़ी परियोजनाओं का निर्माण और परिचालन—खास तौर से लागत में विशेष वृद्धि और निर्धारित समय का पालन न होना—काफी बड़े पैमाने पर लोगों को प्रशिक्षित करने तथा आवश्यक योग्यता और अनुभववाले कर्मचारी जुटाने की कठिनाइयां, अर्थ-व्यवस्था के सम्बन्धित क्षेत्रों में पूरे-पूरे समन्वय की स्थापना, और सबसे अधिक महत्त्व की बात—समाज का सहयोग और व्यापक सहायता प्राप्त करना। तीसरी योजना का विस्तार कहीं अधिक है; अतः ये समस्याएं और गम्भीर रूप धारण करेंगी तथा इनका जल्दी-से-जल्दी निराकरण करना अनिवार्य हो जाएगा। आम तौर पर अब यह महसूस किया जा रहा है कि तीसरी योजना से जो भी लाभ हो सकते हैं, वे इस बात पर निर्भर करते हैं—खास कर प्रारम्भिक स्तरों पर—कि समस्याएं किस प्रकार सुलझाई जाती हैं। प्रशासकीय व्यवस्था पर जैसे-जैसे बोझ बढ़ता है, वैसे-वैसे उसका विस्तार भी होता है और ज्यों-ज्यों उसका विस्तार होता है, त्यों-त्यों उसकी गति धीमी पड़ती जाती है। इससे काम में देरी होती है और हर स्तर पर काम पर बुरा असर पड़ता है और प्रत्याशित उत्पादन में भी विलम्ब हो जाता है। अगर चालू कामों की सिर्फ आलोचना ही की जाए तो नए कामों को पूरा करना बहुत मुश्किल हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों में यह ज़रूरी है कि कार्य-पद्धति और दृष्टिकोण में आमूल परिवर्तन किए जाएं तथा मौजूदा तरीकों और रवैयों की फिर से जांच की जाए।

(2)
प्रशासन-कुशलता और उनके मानदंड

4. विकास-प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र की अपनी विशेष समस्याएं होती हैं। फिर भी, सुधार की कुछ सामान्य दिशाएं हैं, जिनका उपयोग प्रशासन के हर अंग में किया जा सकता है और दूसरी योजना के अनन्तर प्राप्त अनुभवों के प्रकाश में इन पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। मुख्य उद्देश्य अनिवार्यतः यह होना चाहिए कि कार्यान्विति अधिक कुशलता के साथ-साथ अधिक तेज़ी से भी हो। प्रशासकीय कुशलता बढ़ाने की प्रक्रिया का कोई अन्त नहीं है; कार्य-अध्ययन के माध्यम से और कार्यालय-प्रशासन की उन्नत पद्धतियों तथा अन्य उपायों के द्वारा धीरे-धीरे बेहतर तरीके लागू करना ज़रूरी है। केन्द्र और राज्यों, दोनों में

व्यवस्था और कार्य-पद्धतियों पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है, प्रेरणाएं बढ़ाने और काम का मूल्य आंकने का भी उचित ख्याल रखा जा रहा है। अलग-अलग प्रक्रियाओं के सम्पादन की कुशलता और कार्यान्विति की गति कुछ हद तक एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं। फिर भी, विकास के सन्दर्भ में, शायद कार्यान्विति की गति संगठन-सम्बन्धी अधिक मुश्किल समस्याएं उपस्थित करती है, विशेषकर जब व्यवस्था बड़ी और जटिल होती है तथा उसकी ज़िम्मेदारी बहुत-सारे लोगों में बंटी होती है। राष्ट्रीय और राज्य-स्तर पर जिस तरीके से यह समस्या खड़ी होती है, उसमें कुछ एकरूपता होती है, परन्तु काम की विशालता में अन्तर होने के कारण स्पष्ट मात्रा-भेद अनिवार्य हो जाता है। इस विषय का जितना अध्ययन किया गया है और इस पर जितना विचार किया गया है, उसके आधार पर नीचे इस बात की चर्चा की जाएगी कि कार्यान्विति की गति बढ़ाने के लिए किन-किन दिशाओं में काम करना ज़रूरी है। यह ठीक है कि संगठन और कार्यविधि में परिवर्तन करके कुछ हद तक काम की गति बढ़ाई जा सकती है और विलम्ब के कारणों को दूर किया जा सकता है, लेकिन साथ ही इस बात की भी बहुत ज़रूरत है कि कर्मचारियों के प्रशिक्षण, निरीक्षण और काम का लेखा-जोखा करने तथा उसकी जांच करने पर ज़्यादा ध्यान दिया जाए। परन्तु इसके साथ ही, जब तक प्रशासन की क्रियाशीलता पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाएगा, तब तक इन उपायों से भी पर्याप्त फल प्राप्त नहीं हो सकेगा।

5. किसी भी कार्यक्रम या परियोजना को पूरा करने के लिए सबसे पहले इस बात की ज़रूरत होती है कि सम्बद्ध अभिकरण का और अभिकरण में विशिष्ट व्यक्तियों का दायित्व स्थिर कर दिया जाए। नियत सीमाओं के भीतर प्रत्येक व्यक्ति को पूरी ज़िम्मेदारी दी जानी चाहिए और इसके साथ ही उसे उचित मात्रा में सहयोग और विश्वास भी मिलना चाहिए। अगर वह अपनी ज़िम्मेदारी ठीक तरह से न निभा सके, तो उसके स्थान पर दूसरे व्यक्ति को नियुक्त करना चाहिए। लेकिन जब तक वह अपने नियत पद पर काम कर रहा है, तब तक उसे उसके पूरे दायित्व स्वीकार करने चाहिए; इसके साथ ही यह भी ज़रूरी है कि उसे ऐसी स्थिति में रखा जाए कि वह अपना दायित्व कारगर तरीके से निभा सके। इस तरह दायित्व का निश्चय हो जाने के बाद उसे इस बात की छूट देनी चाहिए कि जिस प्रकार के सलाह-मशविरे की आवश्यकता पड़े, वह ले सके; लेकिन साथ ही इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि ये स्वयं प्रबन्ध की प्रक्रिया के अनिवार्य अंग न बन जाएं। प्रशासन की वर्तमान पद्धति यह है कि अन्य अधिकारियों से सिर्फ बड़े-बड़े मामलों पर सलाह नहीं ली जाती, बल्कि अक्सर ली जाती है और बारीकियों और ब्यौरों पर अधिक विचार किया जाता है। नतीजा यह होता है कि प्रभावशाली ढंग से और शीघ्र काम नहीं हो पाता। वित्तीय नियन्त्रण का प्रयोग इस समस्या का एक पहलू है। ज़ाहिर है, यहां सवाल यह है कि प्रशासकीय विभागों के अध्यक्षों को व्यापक वित्तीय अधिकार प्राप्त हो जाएं और वित्त-विभाग वार्षिक बजट तैयार होने से पहले अपनी मुख्य जांच-पड़ताल करे।

6. जैसा कि पहली और दूसरी, दोनों योजनाओं में बताया जा चुका है, केन्द्रीय मन्त्रालयों की और शायद राज्यों में सचिवालय-विभागों की प्रवृत्ति अधिकाधिक मौलिक काम की ज़िम्मेदारी लेने की ओर रही है। नतीजा यह हुआ है कि प्रबन्ध-विभागों में अपनी ओर से कोई काम उठाने की प्रवृत्ति घट गई है और उनकी स्वतन्त्र काम करने की क्षमता कम हो गई है। मन्त्रालयों और सचिवालय-विभागों का सरोकार तो मुख्यतः नीति-सम्बन्धी मामलों,

सामान्य निरीक्षण और मानदंडों के परिपालन से होना चाहिए। प्रबन्ध-कार्य तो उन विभागों तथा अधिकारियों पर छोड़ दिए जाने चाहिए, जो विशेष कर इसी के लिए बनाए गए हों।

7. किसी पर विशेष ज़िम्मेदारी डालने और उसे पूरा करने के लिए साधन जुटाने की एक आवश्यक शर्त यह है कि सफलता या असफलता का निश्चय परिणामों के आधार पर किया जाए। यह तभी सम्भव है, जब आयोजन के दौरान यह स्पष्ट कर देने की सावधानी बरती जाए कि क्या-क्या काम शुरू किए जाने हैं, किन-किन साधनों का उपयोग किया जाना है तथा विभिन्न सम्बद्ध अभिकरणों और व्यक्तियों के दायित्व क्या-क्या हैं। इसके साथ ही यह भी स्पष्ट कर दिया जाए कि विभिन्न कार्यों का समय-क्रम क्या होगा और उनमें कैसे एक के बाद एक बड़ी योजनाएं बनती चली जाएंगी। ये शर्तें प्रशासन के कई अंगों पर लागू होती हैं, विशेषकर बड़ी परियोजनाओं पर।

8. विकास की किसी भी योजना में लक्ष्य स्थिर करना और आगे चल कर उनकी पूर्ति को आंकना स्वभावतः शामिल होते हैं। लक्ष्य प्रगति के अच्छे सूचक हो सकते हैं और अधिक केन्द्रित प्रयत्नों के लिए प्रेरित कर सकते हैं, लेकिन इनको प्राप्त करने के लिए जिन नीतियों और विशेष उपायों की आवश्यकता होती है, उनका तथा उनके अनवरत परिपालन का भी महत्त्व कम नहीं है। कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जिनमें उत्पादन या क्षमता के अन्तिम आंकड़ों के रूप में लक्ष्यों की उपेक्षा कर जाना ही कुल मिला कर बेहतर होता है, क्योंकि या तो उनमें अनुमान लगाने के तरीके दोषपूर्ण होते हैं, या फिर उनके बारे में जो धारणा बनाई जाती है, वही गलत होती है। फिर भी, जहां लक्ष्य का निश्चय सार्थक हो, वहां उसके लिए जो भी अभिकरण ज़िम्मेदार हो, उसे पूरी सावधानी से अध्ययन करने के बाद उसका निश्चय करना चाहिए और समय-सूची तथा कार्यान्विति की ज़िम्मेवारी की दृष्टि से उसे छोटी-छोटी इकाइयों में बांट लेना चाहिए। पंचवर्षीय लक्ष्यों को भी अनुभव के प्रकाश में हर वर्ष फिर से आंका जाना चाहिए और भविष्य की सम्भावित प्रवृत्तियों के बारे में फिर से विचार किया जाना चाहिए।

9. कभी-कभी इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाया जाता है कि प्रशासन की वर्तमान प्रणाली में प्रेरणाओं को उचित महत्त्व नहीं दिया जाता। यह स्पष्ट है कि प्रेरणाओं से, चाहे वे किसी व्यक्ति के लिए हों या समूह के निमित्त, मनोबल का निर्माण करने में सहायता मिलती है। प्रेरणाओं की कोई योजना तैयार करने के लिए पहले ज़रूरत इस बात की है कि किसी कारगर तरीके से काम के मानदंड निश्चित कर दिए जाएं। किसी खास क्षेत्र में प्रेरणाओं की कोई योजना किन दिशाओं में लाभदायक सिद्ध हो सकती है, इसका अध्ययन किए जाने की आवश्यकता है। मिसाल के तौर पर, हो सकता है कि वर्तमान परिस्थितियों में औद्योगिक प्रतिष्ठानों में प्रेरणा-योजनाओं से बहुत सहायता मिले, बशर्ते कि उनके उद्देश्य इस प्रकार के हों :

(क) निर्माण की लागत में कमी;
(ख) विदेशी मुद्रा के व्यय में कमी;
(ग) रख-रखाव के तरीकों में सुधार;
(घ) स्थानापन्न वस्तुओं और उप-उत्पादनों का प्रयोग; तथा
(ङ) कार्य-प्रणाली का सरलीकरण।

भौतिक प्रेरणाओं का निस्सन्देह महत्त्व है, परन्तु इसके साथ ही भौतिकेतर प्रेरणाओं के विकास के लिए भी अधिकाधिक क्षेत्र होना चाहिए—विशेषकर काम की तारीफ के विभिन्न रूप और महत्त्व की स्वीकृति, एक संयुक्त प्रयत्न में साझेदारी की भावना तथा परस्पर-सम्मान और मैत्री की भावना पर आधारित मानवीय सम्बन्धों का क्षेत्र ।

(3)
सरकारी क्षेत्र की परियोजनाएं

10. सरकारी क्षेत्र में औद्योगिक प्रतिष्ठान, सिंचाई और बिजली की परियोजनाएं, रेलें, सड़क-परिवहन, हवाई परिवहन, जहाज़रानी और अन्य बहुत-सारे उद्यम पहले से ही शामिल हैं । औद्योगिक उद्यमों के संगठन की कुछ प्रमुख समस्याओं की पिछले अध्याय में समीक्षा की जा चुकी है । दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान प्राप्त अनुभवों से काम करने के कुछ ऐसे रास्ते दीख पड़े हैं, जिन पर चलने से परियोजनाओं की कार्यान्विति अधिक कुशलता से और अधिक तेज़ी से हो सकती है तथा उनके निर्माण और परिचालन में अधिक बचत की जा सकती है ।

11. बड़ी-बड़ी परियोजनाओं में काफी अरसे के बाद फल मिलना शुरू होता है और उनके आयोजन के लिए बड़ी सावधानी से तैयारी करनी पड़ती है; उनके आयोजन के लिए योजनाओं की साधारण अवधि से भी लम्बे अरसे का चित्र अपने सामने रखना होता है । इसलिए यह आवश्यक है कि वे ऐसे विकास-कार्यक्रम के अंग हों, जिनका प्रसार अधिक लम्बे अरसे में, यानी कोई 10-15 वर्षों में, हो । तीसरी योजना तैयार करते समय देखा गया है कि उसमें शामिल करने के लिए प्रस्तावित कई परियोजनाएं ऐसी थीं, जिनका पूरा-पूरा ब्यौरा तैयार नहीं था और न उन्हें सही ढंग से पेश ही किया गया था । यह ज़रूर है कि दूसरी योजना के मुकाबले इस योजना में ऐसा कम ही हुआ । तीसरी योजना में शामिल की गई कई परियोजनाएं तो ऐसी हैं, जिनके बारे में अब तक प्राप्त सूचनाएं भी अधूरी हैं । यह दोष कुछ तो इस कारण है कि कई क्षेत्रों में उपेक्षित तकनीकी कर्मचारियों की कमी है और कुछ इस कारण कि ऐसी कोई समुचित व्यवस्था नहीं है कि इन परियोजनाओं पर विचार होने और इनके स्वीकार किए जाने से पहले इनका विस्तारपूर्वक अध्ययन किया जा सके । इसलिए यह आवश्यक है कि केन्द्र और राज्यों, दोनों में तीसरी योजना में शामिल की गई परियोजनाओं के ब्यौरे तैयार करने का काम जल्दी-से-जल्दी पूरा हो जाए । इसके अलावा, चौथी पंचवर्षीय योजना से सम्बद्ध परियोजनाओं के अध्ययन का कार्य अभी से शुरू कर दिया जाना चाहिए, ताकि अगले तीन वर्षों में यह काम काफी हद तक पूरा हो जाए ।

12. सिंचाई, बिजली और परिवहन-जैसे अपेक्षाकृत परिचित क्षेत्रों के विपरीत औद्योगिक और खनिज विकास के क्षेत्रों में वर्तमान तकनीकी संगठन हमेशा पर्याप्त सिद्ध नहीं होते । यह अपर्याप्तता जिस हद तक अनुभवी कर्मचारियों की कमी के कारण हो उस हद तक, कम-से-कम कुछ वर्षों के लिए हमें विदेशों से विशेषज्ञ बुलाने के लिए तैयार रहना चाहिए । यह सुझाव रखा गया है कि औद्योगिक विकास से सम्बद्ध केन्द्रीय मन्त्रालयों को साज़-सामान से पूरी तरह लैस तकनीकी आयोजन-टुकड़ियां बनाने की दशा में जल्दी-से-जल्दी कदम उठाने चाहिए । ये स्थायी केन्द्रों के रूप में बनाए रखे जाने चाहिए और जिन परियोजनाओं का अध्ययन किया जाना हो, उनकी आवश्यकता के अनुसार इनमें कर्मचारी बढ़ा

दिए जाने चाहिए । खास-खास उद्योगों के लिए तकनीकी परामर्शदाताओं की एक सूची रखने के बारे में भी इन्हें विचार करना चाहिए। इस प्रकार, उद्योगों के—विशेषकर सरकारी क्षेत्र के—विकास में देश के भीतर बढ़ते हुए तकनीकी ज्ञान का और आयोजन तथा प्रबन्ध के अनुभव का व्यवस्थित रीति से उपयोग किया जा सकता है । जैसा कि पिछले अध्याय में सुझाया जा चुका है, प्रमुख सरकारी प्रतिष्ठानों को चाहिए कि वे डिज़ाइन और अनुसन्धान-इकाइयों को मज़बूत बनाने की दिशा में और यथावश्यक नई इकाइयां स्थापित करने की दिशा में कदम उठाएं । जहां कहीं सम्भव हो, नई परियोजनाएं तैयार करना उनकी एक मूल ज़िम्मेदारी होनी चाहिए । इससे मन्त्रालयों की तकनीकी आयोजन-टुकड़ियां अपने मतलब की परियोजनाओं के खास-खास तकनीकी और आर्थिक पहलुओं तथा कार्यान्विति के विभिन्न सोपानों के अध्ययन पर अधिक ध्यान दे सकेंगी। साथ ही, वे उन सम्बद्ध कार्रवाइयों पर भी अधिक ध्यान दे सकेंगे, जिनको प्रशासन और नीति के स्तर पर समन्वित करने की आवश्यकता होती है ।

13. बड़ी परियोजनाओं के सन्दर्भ में यह सवाल समय-समय पर सामने आया है कि लागत के अनुमानों की जांच के वर्तमान प्रबन्ध उचित है या नहीं ? वाणिज्य और उद्योग-मन्त्रालय में 'परियोजना-समन्वय-टुकड़ी' की स्थापना करके मामूली तौर पर श्रीगणेश कर दिया गया है, लेकिन इस काम को कहीं बड़े पैमाने पर करना होगा । इसके लिए जो प्रबन्ध आवश्यक हो, उन पर और विचार किया जाना चाहिए । लागत-अनुमानों की जांच और परियोजनाओं के आर्थिक पहलुओं के परीक्षण के अलावा यह भी आवश्यक है कि वित्त-मन्त्रालय प्रति वर्ष केन्द्रीय सरकार के सभी औद्योगिक प्रतिष्ठानों के आर्थिक और वित्तीय पहलुओं का मूल्यांकन करनेवाली रिपोर्ट पेश कर सकने की स्थिति में हो ।

14. बड़ी परियोजनाएं आम तौर से बड़ी लम्बी अवधि के बाद फल देती हैं । दूसरी पंचवर्षीय योजना में वस्तुतः यह अवधि अनुमानों से कहीं अधिक रही है । कई कारणों से समय-अन्तराल की यह खाई कम-से-कम करने का अथक प्रयत्न किया जाना चाहिए । उपलब्ध प्राकृतिक साधन काफी हद तक बड़ी योजनाओं में खप जाते हैं। अतः यह ज़रूरी है कि जिन परियोजनाओं पर काम हो रहा है, उनसे योजना के हर दौर में बराबर लाभ होता रहे । समस्या मूलतः यह है कि आवश्यकताओं को अच्छी तरह ध्यान में रखते हुए सामग्री और सहायक सेवाओं की—जिनमें बिजली और परिवहन भी शामिल हैं—व्यवस्था को बखूबी समझते हुए हर परियोजना के काम के दौर नियत कर दिए जाएं । एक परियोजना की विभिन्न अवस्थाओं या भागों में तथा सम्बद्ध क्षेत्रों में अधिक-से-अधिक समन्वय होना आवश्यक है। कार्य-परिचालन के स्तर पर और समानान्तर पूंजी-विनियोग के आयोजन में, दोनों जगह समन्वय आवश्यक है ।

15. परियोजनाओं का प्रबन्ध प्रशासकीय व्यवस्था का अपेक्षाकृत नया और महत्त्वपूर्ण अंग है और इसकी विशेषताएं ये हैं—निश्चित लक्ष्य और समय-अनुसूची की पूर्ति हो, हर दौर में लागत का ठीक-ठीक हिसाब रखा जाए, परियोजनाओं को कार्यान्वित करने में बहुत साधनों की और पहलकदमी की आवश्यकता, तथा तकनीकी आयोजन के लिए पर्याप्त संगठन की व्यवस्था । बिना पहले से आयोजन किए और लागत का ठीक-ठीक अनुमान रखे किसी भी परियोजना की सफलता का भरोसा नहीं किया जा सकता । कार्यक्रम बनाने के तरीकों को भी निरन्तर उन्नत करते रहने की ज़रूरत है, ताकि जो व्यय किया जाए, उससे प्रत्येक स्तर

पर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके और नियत समय तथा साधनों की परिधि में लक्ष्य प्राप्त हो जाएं।

16. जब एक ही समग्र प्रबन्ध-व्यवस्था के अधीन बड़ी-बड़ी परियोजनाएं हों, तो उनकी लागत कम करने, उत्पादकता बढ़ाने, मानदंड निर्धारित करने और किए हुए काम को तौलने के लिए प्रबन्धकर्त्ताओं की सहायता के निमित्त विशेष इकाइयों की स्थापना आवश्यक हो जाती है। इससे यह निश्चय रहेगा कि जितनी पूंजी लगाई गई है, उसके अनुरूप भौतिक परिसम्पत्ति हाथ में है और नतीजे उचित रहे हैं, पर्याप्त कारणों के बिना असली अनुमानों से अधिक खर्च नहीं किया गया, समय-अनुसूची के मुताबिक काम किया गया है तथा ज़िम्मेदार अधिकारी इस स्थिति में हैं कि काम को कुशलता और मितव्ययिता के साथ ठोस ढंग से पूरा कर सकें। इसलिए यह सुझाव रखा गया है कि जिन राज्यों और केन्द्रीय मन्त्रालयों का सरोकार बड़ी-बड़ी औद्योगिक तथा अन्य परियोजनाओं से हो, वे ऊपर कहे गए उद्देश्यों की पूर्ति के वर्तमान प्रबन्धों को जांचें और प्रगति की समीक्षा और उसके मूल्यांकन के लिए उचित इकाइयों की व्यवस्था करें। ये उच्चतम प्रबन्ध-अधिकारियों के मातहत काम करेंगे, पर नित्य प्रति के काम में नहीं उलझेंगे।

17. निजी उद्योग के माध्यम से योजना के अन्तर्गत जो परियोजनाएं शुरू की गई हैं, उनकी कार्यान्विति के कुछ पहलुओं पर भी यहां दो शब्द कह दिए जाएं। औद्योगिक उत्पादन के विकास में निजी क्षेत्र को बहुत बड़ा योग देना है। राष्ट्रीय उत्पादकता-परिषद्, प्रबन्ध-संघों और अन्य संस्थाओं के माध्यम से प्रबन्ध-कुशलता बढ़ाने की लागत कम करने और आम तौर से निजी उद्यमियों में समूचे समाज के प्रति ज़िम्मेदारी की भावना जगाने के उपायों पर अब अधिक ध्यान दिया जा रहा है। एक योजनाबद्ध अर्थ-व्यवस्था में, जहां सरकारी और निजी क्षेत्र एक-दूसरे के सम्पूरक हों, यह ज़रूरी है कि दोनों में अधिक-से-अधिक बचत करने, देशीय चीज़ों का प्रयोग करने, उत्पादन का स्तर बनाए रखने और उसके विकास के लिए विदेशी मुद्रा का व्यय घटाने, निर्यात की गति बढ़ाने, रोज़गार का विस्तार करने और आम तौर से काम का स्तर ऊंचा करने की समान चिन्ता हो। बहुत-से उद्योगों के लिए जो विकास-परिषदें बना दी गई हैं, वे और निजी उद्योगों का प्रतिनिधित्व करनेवाली दूसरी संस्थाएं हर उद्योग में समान समस्याओं को सुलझाने के लिए सबसे योग्य नेताओं को उभारने तथा प्रबन्ध और खुशहाली के ऊंचे स्तर प्राप्त करने के लिए उपयुक्त माध्यम हैं।

(4)
कर्मचारी-वर्ग

18. दूसरी योजना के आरम्भ से विकास के विभिन्न-क्षेत्रों में प्रशिक्षण की सुविधाएं बढ़ाने की ओर काफी ध्यान दिया गया है। तीसरी पंचवर्षीय योजना के प्रस्तावित प्रशिक्षण-कार्यक्रमों की चर्चा तकनीकी शिक्षा-सम्बन्धी अध्याय में की गई है। यहां आवश्यक दृष्टिकोण और अनुभव-सम्पन्न कर्मचारी-वर्ग तैयार करने की समस्या के कुछ पहलुओं की ओर ध्यान दिलाना उपयोगी सिद्ध होगा, क्योंकि तीसरी योजना की सफलता में इसका विशेष महत्त्व होगा। कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जिनमें कई साल तक उच्चतम स्तर के कर्मचारियों की संख्या अपर्याप्त रहेगी या खास तरह का अनुभव काफी मात्रा में नहीं मिल सकेगा। इन क्षेत्रों में तेज़ी से विकास

करने की खातिर कुछ अरसे तक देशीय कर्मचारियों के साथ-साथ बाहर के लोगों को भी काम पर लगाना वांछनीय होगा ।

19. अब तक बड़ी-बड़ी परियोजनाओं के प्रबन्ध की उलझनों और विभिन्न क्षेत्रों में विकास-कार्यक्रम को वास्तविकता से कम आंका गया है । ऐसे योग्य प्रबन्धक तैयार करना, जो अपना काम जानते हों और जिनमें नेतृत्व करने की योग्यता हो, तीसरी योजना के सभी क्षेत्रों का सबसे अधिक महत्वपूर्ण काम है । इनमें से अधिकांश लोग हर संगठन के बीच के स्तर के कर्मचारियों में से खोजे जाने चाहिए और जो कमी रहे, उसे यथासम्भव अन्य साधनों से पूरा किया जाना चाहिए । सरकार और परियोजनाओं, दोनों में ही उच्च स्तरों पर अधिक दबाव रहा है और मध्यम स्तर के कर्मचारियों के विकास पर काफी ध्यान नहीं दिया गया है । अगर रोज़मर्रा के काम में इस स्तर के कर्मचारियों को ज्यादा ज़िम्मेदारी दी जाए और उन्हें प्रबन्ध-विषयक ऊंचे कामों का अधिक अनुभव प्राप्त करने का मौका दिया जाए, तो इस उद्देश्य की प्राप्ति हो सकती है । इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि हर परियोजना में संगठन के भीतर विभिन्न स्तरों के बीच आपस में और हर सम्बद्ध स्तर पर अलग-अलग परामर्श और विचारों के आदान-प्रदान का तरीका शुरू किया जाए ।

20. अधिकारियों का ज़ल्दी-जल्दी तबादला करने से अक्सर परियोजनाओं के काम को और महत्वपूर्ण कार्यक्रमों को नुकसान पहुंचा है । किसी महत्वपूर्ण काम के लिए यह तो आवश्यक है ही कि ज़िम्मेदार अधिकारी सावधानी से चुने जाएं और उन्हें उचित प्रशिक्षण दिया जाए, साथ ही यह भी ज़रूरी है कि वे एक ही स्थान पर काफी लम्बे अरसे तक काम करते रहें, ताकि अपनी ज़िम्मेदारी के अनुरूप अपना ठीक-ठीक विकास कर सकें । किसी महत्वपूर्ण बड़े काम में भरपूर फल प्राप्त करने के लिए 5 से 10 साल से कम का समय शायद ही कभी पर्याप्त होता हो । नौकरियों में जो तबादले किए जाते हैं, उनमें आम तौर से ऐसी बातों को ध्यान में रखा जाता है, जिनका जनता के हित या प्रतिष्ठान की सफलता की दृष्टि से सबसे अधिक महत्व नहीं होता । तबादलों से काम की निरन्तरता पर भी आघात पहुंचता है और संगठनों का मनोबल भी टूटने लगता है, क्योंकि विकास के दौर में प्रायः हमेशा ही उनका काम नए ढंग का और मुश्किल होता है । ऐसे लोगों को उन्नति का उचित आश्वासन देने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए, जिसको सरकारी नीति के पालन के लिए अपनी-अपनी जगहों पर बनाए रखने की आवश्यकता हो ।

21. देश-भर में, विभिन्न क्षेत्रों में सब तरह के साज़-सामान से लैस जो अनेक सरकारी उद्यम विकसित किए जा रहे हैं, उनमें व्यापक स्तर पर प्रशिक्षण का प्रबन्ध करने की सुविधाएं भी हैं । इस ओर अब तक जो रवैया अख्तियार किया गया है, उससे कहीं अधिक विध्यात्मक नीति अपनाना सम्भव है । यथासम्भव सरकारी क्षेत्र की हर परियोजना में शिक्षार्थियों, आदि के प्रशिक्षण के लिए सुसंगठित कार्यक्रम होने चाहिए और इसके साथ पालिटेक्नीकों में या दूसरे उपयुक्त केन्द्रों में संस्थागत प्रशिक्षण का भी इन्तज़ाम होना चाहिए ।

(5)
निर्माण में मितव्ययिता

22. विकास के कई क्षेत्रों में खर्च का काफी बड़ा हिस्सा निर्माण-कार्यों में लग जाता है । अगर कुछ प्राथमिक पहलुओं पर ध्यान दिया जाए, तो निर्माण की लागत में बचत की काफी

गुंजायश हो सकती है। यों तो, हर बड़े निर्माण-कार्य की अपनी कुछ विशेषताएं होती हैं, फिर भी लागत पर प्रभाव डालनेवाले कारणों को पांच वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :

(1) आयोजन; अन्वेषण, जिसमें कच्चे माल का अन्वेषण भी शामिल है; डिज़ाइन; तफसील, जिसमें उपकरणों की तफसील भी शामिल है; ब्यौरेवार अनुमान; परियोजना की तैयारी, जिसमें परियोजना के अंगभूत तत्वों का विभिन्न सोपानों में वितरण भी शामिल है, ताकि अच्छे-से-अच्छे परिणाम निकल सकें; और वित्तीय विवरण;

(2) निर्माण की आवश्यक तैयारियां—जैसे, कर्मचारियों की व्यवस्था; भूमि-अधिग्रहण; संचार-व्यवस्था; आवास; और संयन्त्र, उपकरण तथा आवश्यक वस्तुएं प्राप्त करने की नीति एवं कार्यविधि;

(3) निर्माण करनेवाली संस्था का चुनाव—यानी, निर्माण-विभाग-द्वारा हो, या ठेकेदार-द्वारा, या श्रमिक-सहकारी संस्थाओं-द्वारा, या स्वैच्छिक संगठनों-द्वारा—और इसका निश्चय करना कि ठेके की पद्धति क्या हो—नियमानुकूल ठेका या कार्यदेश ठेका;

(4) ठेके की कार्यविधियां—जैसे, सुरक्षामूलक जमा धन, सत्यंकार-राशि, सामग्रियों का दिया जाना, भुगतान का तरीका, कार्य-पूर्ति और भुगतान के बीच की अवधि, मूल निश्चियों या निर्दिष्टयों से अन्तर और अतिरिक्त मदों के दावे; तथा

(5) प्रशासकीय व्यवस्था में अधिकारों का हस्तान्तरण, लेखा-अधिकारी और मुख्य इंजीनियर का सापेक्ष स्थान-निर्धारण, मुख्य प्रबन्धकर्ता को अपनी ज़िम्मेदारी निभाने के लिए प्राप्त होनेवाले सहयोग, विश्वास और अधिकारों की पर्याप्तता।

उचित सावधानी और देखरेख से यह सम्भव हो सकता है कि अधिकतर मामलों में लागत के अनुमानों से खास ज़्यादा खर्च न हो और काम पूरा करने में भी समय-अनुसूची का पालन किया जाए।

23. निर्माण में बचत करने के सवाल पर केन्द्रीय सरकार के मन्त्रालयों और राज्य-सरकारों के साथ मिल कर विचार किया गया है और निम्नलिखित उपायों के बारे में आम तौर से सभी सहमत हैं :

(1) कोई भी परियोजना हाथ में लेने से पहले उसके सभी पहलुओं के बारे में उचित आयोजन किया जाना चाहिए। खास तौर से जांच-कार्य किया जाना चाहिए, जिसमें निर्माण के काम आनेवाले सामान की भी जांच शामिल है। इसके अतिरिक्त परियोजना की एक ब्यौरेवार रिपोर्ट तैयार होनी चाहिए, जिसमें कामों के खर्चे, उपकरण के ब्यौरे, परियोजना की अंगभूत इकाइयों का सोपानीकरण, लागत के अनुमान, वित्तीय विवरण, आदि शामिल हों;

(2) इसके साथ-साथ निर्माण के लिए तैयारियां भी शुरू कर दी जानी चाहिए—जैसे, भूमि-अधिग्रहण, आवास, संचार-व्यवस्था, कर्मचारियों की बहाली, संयन्त्र प्राप्त करने तथा उपकरण और दूसरे सामान उपलब्ध करने की कार्य-

विधियों का निश्चय और सामान, आदि पर खर्च के अनुमान का पूरा-पूरा ब्यौरा तैयार करना;

(3) मशीनें लगाने तथा निर्माण के दौरान उनकी मरम्मत और सफाई, आदि के लिए कर्मशाला की समुचित सुविधाएं होनी चाहिए । निर्माण-यन्त्रों के संचालन के लिए बिजली का काम करनेवाले, यान्त्रिक काम करनेवाले और दूसरे प्रकार के जिन कर्मचारियों की ज़रूरत पड़े, उनके प्रशिक्षण की सुविधाएं भी कर्मशाला में ही मिलनी चाहिए;

(4) चूंकि बड़े पैमाने पर रोज़गार देना योजना का एक मूल उद्देश्य है, इसलिए यन्त्रादि-द्वारा निर्माण का आयोजन करते समय शारीरिक श्रम और यन्त्र के उपयोग के बीच बड़ी सावधानी से सन्तुलन रखा जाना चाहिए । यन्त्रों का उपयोग उन्हीं कामों में किया जाना चाहिए, जिन्हें हाथ से करने पर या तो बहुत देर लगने की सम्भावना हो या खर्च बहुत होने की; या फिर जिन्हें हाथ से किया ही न जा सकता हो;

(5) निर्माण-यन्त्रों के लिए जिन फालतू पुर्जों की ज़रूरत हो, उनके तथा दूसरे सामान के आवश्यक परिमाण को बड़ी सावधानी से कूतना चाहिए और उसी हिसाब से उनकी व्यवस्था करनी चाहिए, ताकि एक ओर तो जब ज़रूरत हो, तब आवश्यक सामान और फालतू पुर्ज़े न मिलने से काम रुकने न पाए और चीज़ों का अनावश्यक संग्रह भी न हो ;

(6) अगर परियोजना काफी बड़ी हो, तो उसके अकेले के लिए और अगर कई छोटी-छोटी परियोजनाएं हों, तो उन सबके लिए एक केन्द्रीय डिज़ाइन-संस्था स्थापित की जानी चाहिए । यह संस्था विस्तृत डिज़ाइन, क्षेत्रीय योजनाएं तथा मशीनों और निर्माण-कार्यो की तफसीलें तैयार करेगी, जिसमें निर्माण के काम आनेवाले सामान-सम्बन्धी तफसील भी शामिल होगी । इस संस्था को भवनों के डिजाइन भी तैयार करने चाहिए और जगह के उपयोग के बारे में मानदंड निर्धारित कर देने चाहिए;

(7) वास्तविक काम की ज़रूरतों के मुताबिक भवनों का आयोजन किया जाना चाहिए और उनके डिज़ाइन तैयार होने चाहिए । इन जरूरतों को ध्यान में रखते हुए, जहां भी सम्भव हो, अस्थायी या अर्धस्थायी भवन बनवा कर लागत में कमी का और भी पक्का प्रबन्ध किया जा सकता है । जगह का अधिक-से-अधिक उपयोग करके, मानदंड निर्धारित करके, उचित प्रकार के डिज़ाइन तैयार करके, मकानों के हिस्सों को अलग से पहले ही तैयार करके, उन्नत तरीके अपना कर और भवन में काम की ज़रूरतों के मुताबिक जिन चीज़ों की आवश्यकता न हो, उन पर नियन्त्रण रख कर या उनका निराकरण करके काफी बचत की जा सकती है;

(8) आयोजन और डिज़ाइन के अतिरिक्त जिन महत्वपूर्ण कारणों पर अन्ततः परियोजना की लागत निर्भर करती है, वे हैं—निर्माण-अभिकरण का चुनाव, ठेके की पद्धति और ठेके की कार्यविधि । निर्माण का अभिकरण विभागीय भी हो सकता है, या निर्माण का काम ठेकेदारों, या स्वैच्छिक संगठनों अथवा

श्रमिक-सहकारी संस्थाओं की मार्फत भी कराया जा सकता है। विभागेतर अभिकरणों को अगर काम देना हो, तो वह नियमों के अनुसार ठेके पर या कार्यदेश-पद्धति पर दिया जा सकता है। निर्माण के अभिकरण और ठेके की पद्धति का चुनाव अगर सही-सही कर लिया जाए, तो लागत में काफी कमी आ सकती है। अगर विभाग, या स्वैच्छिक निर्माण-संस्थाओं, या श्रमिक-सहकारी संस्थाओं की मार्फत काम हो, तो ठेकेदारों पर अनावश्यक रूप से निर्भर नहीं रहना पड़ेगा और इसके अलावा मुनाफा भी व्यक्ति के बजाय समुदाय को प्राप्त होगा। स्वैच्छिक संस्थाओं और श्रमिक-सहकारी संस्थाओं को बढ़ावा दिया जाना चाहिए और भरसक कार्यदेश-पद्धति के अनुसार उन्हें ही ठेका दिया जाना चाहिए;

(9) चालू बिलों और अन्तिम बिल के भुगतान में अगर जल्दी की जाए, तो भी लागत कम हो सकती है। लागत कम करने का यह भी एक बड़ा महत्वपूर्ण कारण है। महीने के महीने उचन्ती भुगतान आम तौर से होते ही रहने चाहिए। अतिरिक्त मदों के दावे, अगर वे पहले से मंजूरशुदा न हों तो, निश्चय ही अस्वीकार कर दिए जाने चाहिए;

(10) कार्य-कौशल और उत्पादकता बढ़ाने के लिए कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने का काम भी निर्माण-संगठन का अभिन्न अंग होना चाहिए;

(11) निरन्तरता बनाए रखने के लिए और विशेषज्ञता का विकास करने के लिए अनिवार्य तकनीकी कर्मचारियों के तबादलों को रोका जाना चाहिए—भले ही यह काम विभाग के नियमों और परिपाटी के खिलाफ हो। इसके साथ ही, निर्माण-संगठनों में इस तरह के कर्मचारियों के हितों की पूरी-पूरी रक्षा की जानी चाहिए;

(12) हर बड़ी निर्माण-परियोजना में एक 'लागत घटानेवाली इकाई' स्थापित की जानी चाहिए, जो निर्माण-संगठन का हिस्सा हो और जो पूरी तरह परियोजना के मुख्य इंजीनियर के मातहत हो। इसके काम ये होंगे—निर्माण-कार्य का अध्ययन करना; लागत पर असर डालनेवाले कारणों का बराबर विश्लेषण करते रहना; सामान, तकनीकों, कार्यविधि और संगठन में उचित हेर-फेर करने के बारे में समय-समय पर सुझाव देना; इस बात का ध्यान रखना कि इस हेरफेर का क्या नतीजा हुआ और निर्माण की लागत में बचत करने के काम की प्रगति पर नज़र रखना;

(13) केन्द्र में हर तरह के प्रतिष्ठान के लिए ऐसे सलाहकारों का एक दल रखा जाना चाहिए, जो परियोजना के तकनीकी, आर्थिक और प्रशासकीय पहलुओं के बारे में सलाह देंगे और इसके साथ-साथ जगह-जगह से जानकारी हासिल करके उसे यथास्थान भेजेंगे। इनके पास पूर्व-अर्जित ज्ञान और अनुभव का एक कोश होगा और इसके साथ ही डिज़ाइन तथा निर्माण-संगठनों की ओर से तथा लागत घटानेवाली इकाइयों की ओर से उन्हें बराबर नई-नई जानकारी प्राप्त होती रहेगी। इस दल की सलाह से लागत में जो बचत हो, भरसक उसी से इसका खर्च चलते रहना चाहिए।

(14) हर बड़ी परियोजना के पूरे होने की एक व्यापक रिपोर्ट तैयार की जानी चाहिए, जिसमें उसका पूरा इतिहास आ जाए। इसमें इन बातों का ब्यौरा रहे कि परियोजना के दौरान क्या-क्या गलतियां हुई और क्या जोखिम उठानी पड़ीं, क्या उपचार किए गए और क्या सबक सीखे गए। मंशा यह है कि यह रिपोर्ट भविष्य में उन इंजीनियरों के लिए, जिन पर इसी तरह की परियोजनाओं का भार हो, एक निदेश-पुस्तिका बन जाए और उन्हें रास्ता दिखाए। इस रिपोर्ट की तैयारी उसी वक्त शुरू हो जानी चाहिए, जब कि काम चालू हों और घटनाएं स्मृति में ताज़ी हों। परियोजना पूरी होने के साथ-साथ या यथासम्भव उसके तुरन्त बाद यह रिपोर्ट पूरी हो जानी चाहिए। डिज़ाइन और निर्माण के विविध पहलुओं से सम्बन्ध रखनेवाले तकनीकी बुलेटिन भी उसी समय तैयार कर लिए जाने चाहिए।

24. राज्यों को सलाह दी गई है कि वे इस बात की निगरानी के लिए अन्तर-विभागीय समितियां बना सकते हैं कि निर्माण-लागत घटाने के काम में क्या प्रगति हुई है। कई राज्यों ने इस तरह की समितियां बना भी ली है। केन्द्र में भी इसी तरह की एक समिति बनाई जा रही है। ऊपर जो विविध सुझाव दिए गए है, उन पर और आगे विचार और अमल करने के लिए इस तरह की व्यवस्था कर देने से इस बात पर ज़ोर देना सम्भव हो सकेगा कि जब कोई विकास-कार्यक्रम या परियोजना सामान्य स्वीकृति के लिए पेश हो, तो निर्माण-पक्ष पर भी पूरा-पूरा विचार किया जाए। इससे यह बात और भी पक्की हो जाएगी कि हर क्षेत्र में निर्माण-कार्यक्रमों के ऐसे सोपान तय किए जाएं, जिससे अधिक-से-अधिक बचत हो सके।

(6)
आयोजन के लिए संकेत

25. दूसरी पंचवर्षीय योजना का काम जैसे-जैसे साल-दर-साल बढ़ता गया, वैसे-वैसे यह महसूस किया गया कि अगर और अधिक प्रत्याशा से काम लिया जाता और अधिक सही सांख्यिकी तथा आर्थिक सूचनाएं प्राप्त होती रहतीं, तो शायद कुछ समस्याओं को दूसरे ही ढंग से सुलझाने की कोशिश की गई होती। योजना के पहले सोपान में विदेशी मुद्रा-कोश में जो कमी आई, उसे अधिक लम्बी अवधि में फैला दिया जाता और इसके फलस्वरूप बिजली के विकास तथा उर्वरक-उत्पादन के लिए विदेशी मुद्रा नियत करने में जो कमी की गई, वह उतनी विकट न होती। बड़ी और मध्यम सिंचाई-परियोजनाओं से सिंचाई का लाभ उठाने में जो काफी ढील पड़ गई, उसे कम किया जाता। कोयले के परिवहन में हाल में जो अभाव और असन्तुलन दिखाई पड़े हैं, उनका बहुत हद तक पहले ही कुछ इलाज कर लिया जाता। और अन्त में, पिछले दो वर्षो मे मूल्यों में जिस तेज़ी से घट-बढ़ हुई है और भावों में जो वृद्धि हुई है, उसे संयत किया जा सकता था। ये भुगतान-सन्तुलन तथा देश के भीतर के भावों के स्तर, पूंजी-विनियोग की योजना तथा उसके परिणामस्वरूप होनेवाले उत्पादन तथा उद्योग के सम्बद्ध क्षेत्रों एवं परिवहन तथा बिजली के विकास की परस्पर-निर्भरता के उदाहरण है। इनसे यह संकेत मिलता है कि प्रबन्ध, आयोजन और कार्यान्विति की समस्याएं बहुत बड़ी है और तीसरी पंचवर्षीय योजना के स्वरूप, ढांचे तथा सोपानीकरण में ये निहित है।

26. ये समस्याएं सिर्फ राष्ट्रीय स्तर पर तथा आधुनिक उद्योग, परिवहन और बिजली के क्षेत्रों में ही नहीं उठतीं, बल्कि इसी क्रम में राज्यों की योजनाओं पर जो अधिक ज़िम्मेदारियां आ जाती हैं, उनमें भी परिलक्षित होती हैं। कई क्षेत्रों में राज्यों के स्तर पर आयोजन का काम पूर्णतः राष्ट्रीय स्तर के आयोजन का परिपूरक होता है और राज्य-स्तर की समस्याएं भी अधिक जटिल हो जाती हैं। पूरे देश के आयोजन और हर ज़िले, खंड और गांव के आयोजन के बीच परस्पर-सम्पर्क की कड़ी बहुत बड़ी है। एक ओर व्यापक राष्ट्रीय प्राथमिकताओं की रक्षा करना और दूसरी ओर योजना को उसके विविध रूपों में हर क्षेत्र और हर सम्प्रदाय की ज़रूरतों और परिस्थितियों के अनुकूल बनाना कोई छोटा उद्देश्य नहीं है। इस पृष्ठभूमि में, उन तरीकों पर एक नई नज़र डालनी चाहिए, जिनसे विविध स्तरों पर आयोजन की व्यवस्था तथा प्रक्रिया को सुधारा जा सके, जांच-परख को अधिक सूक्ष्म बनाया जा सके तथा आयोजन के लिए और अच्छे सांख्यिकी एवं अन्य साधन जुटाए जा सकें। ये समस्याएं ऐसी हैं, जिन पर केन्द्रीय मन्त्रालयों तथा राज्य-सरकारों के सलाह-मशविरे से और विचार करने की ज़रूरत है। कुछ ऐसी प्रमुख दिशाओं का संक्षेप में संकेत किया जा सकता है, जिनमें मौजूदा योजनाओं तथा आयोजन की व्यवस्था को और मज़बूत बनाने की ज़रूरत है।

27. आयोजन के शुरू के दौर में जो बात थी, वह अब नहीं रही—अब तो राष्ट्रीय आयोजन में उद्योग, परिवहन, बिजली तथा दूसरे क्षेत्रों की बड़ी-बड़ी परियोजनाओं का अधिकाधिक महत्व होता जा रहा है, जिनमें बड़ी जटिल तकनीकी और आर्थिक समस्याएं तथा खर्च की लम्बी रकमें निहित होती हैं। योजना-आयोग के ऊपर राष्ट्रीय स्तर पर आयोजन करने की ज़िम्मेदारी है। इसलिए वह बड़े-बड़े उद्योगों तथा उद्यमों के कार्यों से निकट सम्बन्ध रखने का प्रयत्न करेगा और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की व्यापक दृष्टि से वस्तुपरक विश्लेषण और सूचनाओं-द्वारा मन्त्रालयों और राज्यों की सहायता करेगा। इस दृष्टि से योजना-आयोग और कार्यक्रम-मूल्यांकन-संगठन पर पुनर्विचार किया जा रहा है। यह आवश्यक होगा कि विभिन्न सांख्यिकी-अभिकरणों के साथ निकटतर सहयोग रहे और विश्वविद्यालयों तथा विद्या-केन्द्रों की मार्फत तथा सीधे होनेवाले आर्थिक और सामाजिक अनुसन्धान का क्षेत्र विस्तृत किया जाए।

28. परियोजनाओं के बारे में रिपोर्ट देने, थोड़े-थोड़े अरसे के बाद सार्थक सूचनाएं प्राप्त करने तथा चालू प्रवृत्तियों को आंकने की वर्तमान प्रणाली को मन्त्रालयों तथा राज्यों के सहयोग से काफी सुधारने की ज़रूरत पड़ेगी। विगत वर्षों में अक्सर ऐसा हुआ है कि काम की प्रगति के बारे में जो सूचनाएं दी गई हैं, उनमें केन्द्रिकता की कमी रही है—उनसे न तो मौजूदा कमज़ोरियां उभर कर सामने आई हैं, और न यह पता चला है कि किस तरह की समस्याएं सामने आ सकती हैं, जिनके निराकरण के लिए विभिन्न स्तरों पर काम करने की ज़रूरत है।

29. राज्यों में आयोजन-संगठनों पर बड़े बोझ लादे जा रहे हैं। राज्यों पर यह दायित्व है कि वे राष्ट्रीय उद्देश्यों की व्याख्या करें, अपनी ज़रूरतों, साधनों तथा सम्भावनाओं को देखते हुए उन्हें कार्य-रूप में परिणत करें, योजना को सुदूरतम स्थानों तक पहुंचाएं तथा स्थानीय साधनों को एकत्र करने और उत्साह जगाने के तरीके निकालें। अब तक राज्यों में आयोजन-संस्था ने, कामों की बात जिस रूप में सोची गई है, उसे देखते हुए अच्छा काम किया है। उसकी सहायता से विभिन्न विभागों ने अपनी ज़िम्मेदारियां निभाई हैं। समन्वय का काम मुख्य मन्त्री

तथा एक मन्त्रिमंडलीय समिति-द्वारा किया गया और अधिकारी-धरातल पर यह काम आयोजन-विभाग तथा राज्य-विकास-आयुक्त ने किया ।

तीसरी योजना के आर्थिक और सामाजिक उद्देश्यों को पूरा करने मे राज्य-योजनाओं की जो महत्वपूर्ण भूमिका है, उसका ज़िक्र पहले किया जा चुका है । अगले तीन वर्षों में देश के लिए अध्याय 2 में वर्णित स्वरूप के आधार पर एक दीर्घकालीन योजना तैयार करने में राज्य भी हिस्सा लेंगे । इस योजना का अभिप्राय अगले लगभग 15 वर्षों में पूरे देश के विकास का सामान्य स्वरूप प्रस्तुत करना है । देश के विभिन्न भागों के साधनों और सम्भावनाओं के अध्ययन के आधार पर यह योजना तैयार की जाएगी और इसमें एक बड़े ढांचे में इन सबको यथास्थान रखने की कोशिश की जाएगी । यह काम जहां एक ओर बड़ा पेचीदा है, वही दूसरी ओर इसमें भविष्य के लिए बड़ी-बड़ी आशाएं भी सन्निहित हैं । इसके लिए केन्द्र और राज्यों की विभिन्न संस्थाओं के बीच निरन्तर और निकट सहयोग की आवश्यकता होगी—खास तौर से उन संस्थाओं के बीच, जिन पर आयोजन की ज़िम्मेदारी है और जो देश में वैज्ञानिक, आर्थिक तथा सामाजिक अनुसन्धान में लगी हुई प्रमुख संस्थाएं हैं । इस दृष्टि से और तीसरी योजना की कार्यान्विति तथा चौथी की तैयारी की दृष्टि से भी राज्यों के लिए यह विचार करना ज़रूरी होगा कि राज्य-स्तर पर आयोजन-व्यवस्था और वर्तमान प्रबन्धों को किन दिशाओं मे अधिक मज़बूत करने की ज़रूरत है ।

30. यह सोचा जाता है, और ठीक ही सोचा जाता है, कि ज़िला और खंड के स्तर पर लोकतान्त्रिक संस्थाओं के आरम्भ और गांव के स्तर पर पंचायतों के काम से देश भर में जनशक्ति संगठित करने तथा लोक-साधन एकत्र करने के साधन मिल जाते है । लेकिन इसके साथ ही यह बात भी है कि इस महत्वपूर्ण परिवर्तन के कारण राज्य-स्तर पर विभागों पर, ज़िला-स्तर पर तकनीकी और दूसरे अधिकारियों पर, और खंड-स्तर पर विस्तार-कार्यकर्ताओं पर कहीं अधिक ज़िम्मेदारियां आ जाती हैं । योजना की—और पंचायती राज्य की—भी सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि लोक-प्रतिनिधियों और सरकारी संस्थाओं, दोनों का दृष्टिकोण विभिन्न समस्याओं के प्रति शुरू से ही ठीक रहे । इन समस्याओं के प्रति सही दृष्टिकोण योजना के कई प्रमुख क्षेत्रों के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक है । इस पहलू पर सामुदायिक विकास के अध्याय में और विचार किया गया है ।

31. अन्त में, अब तक जो योजनाएं बनाई गई हैं, उनमें शहरी क्षेत्रों को सक्रिय रूप से शामिल नहीं किया गया है । विचार यह है कि आयोजन के अगले दौर में यथासम्भव अधिक-से-अधिक कस्बे और नगर—कम-से-कम एक लाख या इससे अधिक आबादीवाले सभी कस्बे और नगर—आयोजन के कार्यक्रम में अभिन्न रूप से समाविष्ट हो जाएं, हर नगर अपने साधन जुटाए और अपने नागरिकों के लिए बेहतर जीवन की परिस्थितियां पैदा करने में सहायता दे । इसके लिए आवश्यक तैयारियां तीसरी योजना के आरम्भ से ही शुरू कर दी जानी चाहिए ।

अध्याय 18

जनता का सहयोग और अंशग्रहण

दृष्टिकोण

हमारी योजनाओं की सफलता के लिए जन-सहयोग को एक आवश्यक शर्त समझा गया है। देश के सामाजिक और आर्थिक लक्ष्यों के प्रकाश में जनता की भूमिका और उसके योगदान का अनुमान लगाया जा सकता है। अपने लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों और मान्यताओं पर अटूट विश्वास रखनेवाले एक विकासशील देश के लिए इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिए जन-सहयोग बहुत महत्वपूर्ण है। स्वतन्त्रता के लिए शान्तिपूर्ण संघर्ष और उससे सम्बद्ध रचनात्मक कार्य की परम्परा ने 10 वर्ष-पूर्व आरम्भ किए गए योजनाबद्ध विकास के कार्यों में जनता की निर्णायक भूमिका स्पष्ट कर दी थी। स्थानीय कार्यों और सुविधाओं के लिए जनता के योग —श्रमदान—तथा सामुदायिक विकास के कार्यों में उसके सहयोग के ज़रिए ही राष्ट्र-विकास के कार्यों में जनता की सहायता ली जा सकती है। परन्तु यह स्पष्ट है कि परिवर्तन और विकास की इन प्रक्रियाओं में जनता को शामिल करने की सम्भावनाओं को अभी तक पूरी तरह समझा नहीं गया है।

2. लोकतन्त्र के सन्दर्भ में, किसी प्रशासन को उसी हद तक कुशल समझा जाता है, जिस हद तक उसे अपने दैनिक कार्यों में जनता का योग और समर्थन मिलता है। उन कार्यों में, जो सरकारी संस्थाओं के ज़रिए किए जा रहे हैं, जन-सहयोग की बहुत गुंजायश है; इसके बिना उनमें अधिक सफलता सम्भव नहीं है। इन कामों को स्पष्ट रूप से बता देना चाहिए तथा जनता को उसके कर्तव्य और उत्तरदायित्व भी साफ-साफ समझा दिए जाने चाहिए।

3. ग्रामीण क्षेत्रों की जनता भी अब सजग हो रही है। एक-पर-एक राज्यों में पंचायती राज की स्थापना के साथ-साथ ग्रामीणों पर उनके अपने कामों की देखभाल की सीधी ज़िम्मेदारी डाली जा रही है। गांवों में पंचायती राज के ज़रिए होनेवाला यह परिवर्तन जनता को अपने हित के कामों में अपनी शक्ति और सामर्थ्य का पूरा उपयोग करने की सुविधा और अवसर दे सकेगा। हर दिशा में अधिक तेज़ी से विकास के लिए जनशक्ति और अन्य साधनों के पूरे उपयोग के अनुकूल परिस्थितियां पैदा की जा रही हैं। इससे जनता-द्वारा अंशग्रहण के अवसर भी बहुत बढ़ेंगे।

4. जन-सहयोग का सिद्धान्त अपने व्यापक अर्थों में स्वैच्छिक कार्यों के उस विशालतर क्षेत्र से सम्बन्ध रखता है, जहां पहल और संगठन की पूरी ज़िम्मेदारी जनता और उसके नेताओं पर होती है और जहां लक्ष्य पूरे करने के लिए कानूनी अधिकार या सरकारी शक्ति पर निर्भर नहीं करना पड़ता। जनता की जरूरतें इतनी अधिक हैं कि सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों में लगाई जा रही पूंजी से वर्तमान स्थिति में, बहुत थोड़ा काम ही हो सकता है। भली-भांति संगठित स्वैच्छिक प्रयत्नों से समाज के पास इतनी सामर्थ्य आ सकती है कि वह अधिक जरूरतमन्द और कमज़ोर लोगों को अच्छा जीवन बिताने के लिए आवश्यक सुविधाएं पहुंचा सके। इसके लिए लाखों-करोड़ों जनता के समय, शक्ति और साधनों का भांडार है, जिसे स्वैच्छिक संस्थाएं देश की विभिन्नतामूलक परिस्थितियों के अनुसार रचनात्मक क्षेत्रों की

ओर मोड़ सकती हैं। हर व्यक्ति कुछ-न-कुछ योग दे सकता है। परन्तु इस सम्बन्ध में अधिक योग देने का कर्तव्य उनका है, जो अधिक समर्थ हैं। इस सहयोग को बड़े पैमाने पर प्राप्त करने से बहुत बड़ी मात्रा में धन और समय की बचत हो सकती है। यह बात कोसी-परियोजना के सिलसिले में देखने में आई थी। देश को इससे बहुत अधिक और व्यापक भौतिक लाभ हो सकते हैं। परन्तु इस दिशा में अभी तक देश में बहुत थोड़ी सफलता प्राप्त की गई है। अतः इस क्षेत्र में शीघ्र ही प्रयत्न किए जाने की ज़रूरत है, ताकि अधिक तीव्र एवं ठोस प्रगति के मार्ग की बाधाएं दूर हो सकें।

5. आर्थिक और सामाजिक जड़ता की स्थिति से विकास की प्रारम्भिक अवस्था तक पहुंचने की प्रक्रिया में अनेक सामाजिक और राजनीतिक बाधाएं आती हैं—विशेष रूप से उस देश में, जहां राजनीतिक स्वतन्त्रता मिले अधिक समय नहीं हुआ है। नए जागरण के साथ आशाएं और अधिकार के दावे तो सामने आ जाते हैं, परन्तु लोग कर्तव्य और ज़िम्मेदारियां भूलने लगते हैं। विकास की प्रक्रिया में भी लोगों पर कुछ त्याग और धैर्य का भार पड़ता है। लोकतान्त्रिक ढांचा और मान्यताएं कायम रखने का दृढ़ निश्चय होने पर तो यह भार और भी बढ़ जाता है। इसका सामना करने और अबाध प्रगति के लिए राजनीतिक एवं सामाजिक वायुमंडल पैदा करने का कार्य विकासशील देश का पहला काम होना चाहिए। इस क्षेत्र में सामाजिक प्रयत्न का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।

6. एक लोकतान्त्रिक समाज के विकास के आरम्भिक दौर में प्रगति के लाभ का कुछ अंश तक असमान वितरण होता है, जिससे घोर निराशा और असन्तोष की भावना पैदा हो जाती है। यह निराशा और असन्तोष तब और भी बढ़ जाता है, जब समाज-विरोधी कार्रवाइयों से बड़ी आमदनी और लाभ होते दिखाई देते हैं। संकुचित प्रादेशिक और दलीय स्वार्थों के कारण भी भारत में अक्सर झगड़े पैदा हो जाते हैं। आज की स्थिति में विभिन्न वर्गों की बढ़ती हुई आशा-आकांक्षाओं की पूर्णतः पूर्ति सम्भव नहीं है। उधर ऐसी ताकतें सक्रिय हैं, जो हर तरह के असन्तोष और तनाव का नाजायज़ फायदा उठा कर राष्ट्र की एकता के लिए खतरा बन जाती हैं। इन प्रवृत्तियों को नष्ट करने के लिए राजनीतिक और प्रशासनिक स्तर पर कार्रवाई ज़रूरी है, परन्तु साथ ही इस बुराई को दूर करने का सबसे प्रभावशाली तरीका यह है कि समाज स्वयं अपनी रक्षा दृढ़तापूर्वक करे और देश की अखंडता पर अन्दर से ही हमला करनेवालों के प्रयत्न विफल कर दे। यह सुरक्षा-क्षमता जनता-द्वारा अपने-आप संगठित होने तथा स्वैच्छिक सेवा तथा रचनात्मक कार्यक्रम अपनाने से आ सकती है। कोई विवाद एकदम ही नहीं फूट पड़ता—यह विस्फोटक स्थिति लम्बे समय से चले आ रहे किसी रोग का लक्षण-मात्र होती है। उसी समय की गई कार्रवाई का भी प्रभाव सीमित होता है। समाज में बुरे प्रभावों और विनाशक प्रवृत्तियों को सदा ही दबाते रहना तथा रचनात्मक एवं स्वस्थ प्रवृत्तियां पैदा करते रहना बहुत ज़रूरी है। इसके लिए सबसे पहले व्यापक सामाजिक जागरण का प्रयत्न आवश्यक है। आखिरी मौके पर की गई अपीलों का अक्सर कोई असर नही होता। स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं के चुपचाप सेवा-कार्य करने से समाज पर जो मूक प्रभाव पड़ता है, उसी से विवेकशीलता आ सकती है और समझाने-बुझाने का कुछ असर हो सकता है। जिस समाज पर अक्सर अशान्ति की छाया पड़ती रहती है, वहां प्रगति और स्वस्थ जीवन के लिए रचनात्मक कार्य एवं निःस्वार्थ सहायता ही सफल आधार हैं। हमारे देश की आज की परिस्थिति में इन तथ्यों और समस्याओं के कारण मामाजिक प्रयत्नों और जन-सहयोग का महत्व काफी बढ़ जाता है।

पहली दो योजनाओं में जन-सहयोग

7. जन-सहयोग के कार्यक्रमों की मुख्य विशेषता यह है कि उनमें बड़े पैमाने पर स्वैच्छिक सेवा की व्यवस्था रहती है । आरम्भिक वर्षों में इसका उपयोग मुख्यतः सड़कों तथा विद्यालय-भवनों के निर्माण, पीने का पानी उपलब्ध करने की योजनाओं और जनता को सुविधाएं पहुंचानेवाले अन्य स्थानीय कार्यों के लिए किया गया था ।

8. पिछले दशक में सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों में नकद, वस्तुओं और सेवा के रूप में दिए गए स्वैच्छिक योग का मूल्य 100 करोड़ रु० के लगभग आंका गया है । स्थानीय विकास-कार्यों में जनता के हिस्से की रकम 15 करोड़ रु० थी, जबकि कुल खर्च 33 करोड़ रु० का था । केन्द्रीय समाज-कल्याण-मंडल की कल्याण-योजनाओं, पिछड़े वर्गों से सम्बद्ध कल्याण-योजनाओं एवं तत्काल सहायता पहुंचानेवाली योजनाओं को मुख्यतः स्वैच्छिक संस्थाओं के ज़रिए ही कार्यान्वित किया गया । खादी और ग्रामोद्योग-आयोग की ग्रामोद्योगों के ज़रिए रोज़गार के अतिरिक्त अवसर पैदा करने के उद्देश्य से बनाई गई सघन क्षेत्र-योजना का बहुत-कुछ आधार ही स्थानीय साधन और जनता के अपने प्रयत्न हैं । मद्रास में विद्यार्थियों को दोपहर का भोजन देने तथा विद्यालयों के सुधार की अन्य योजनाएं जनता के सहयोग से ही चल रही हैं । सर्व-सेवा-संघ के कार्यकर्ताओं के सक्रिय प्रयत्नों से चल रहे भूदान और ग्रामदान-आन्दोलन इस बात के प्रमाण हैं कि ऊंचे आदर्शों और सेवा-भावना से प्रेरित स्वैच्छिक प्रयत्नों से कितने बड़े-बड़े काम हो सकते हैं । विश्वविद्यालय-आयोजन-गोष्ठियों के माध्यम से बहुत बड़ी संख्या में शिक्षकों और छात्रों को छोटी बचतें, साक्षरता, गन्दी बस्तियों का उद्धार और श्रमदानवाली निर्माण-योजनाओं-जैसे विभिन्न सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रमों में भाग लेने की प्रेरणा मिली है ।

9. पहली पंचवर्षीय योजना बनाते समय ही यह मान लिया गया था कि तीव्र प्रगति के लिए विकास के हर क्षेत्र में बड़े पैमाने पर जन-सहयोग ज़रूरी है । जनता के फालतू समय और शक्ति का विभिन्न सामाजिक आर्थिक कार्यों में उपयोग करने के लिए एक संगठन—भारत-सेवक-समाज—का निर्माण किया गया । इस संस्था ने एक बहुमुखी कार्यक्रम बनाया है और इसकी शाखाएं देश-भर में फैली हुई हैं । इसमें बहुत बड़ी संख्या में प्रशिक्षित कार्यकर्ता हैं । सन् 1955-59 में कोसी-परियोजना में इसके सहयोग से यह प्रमाण मिल गया कि जन-सहयोग से विभिन्न परियोजनाओं में खर्च की बचत, काम में सुधार और तेज़ी लाने की कितनी सम्भावनाएं हैं । कोसी-तटबन्ध-योजना पर खर्च का मूल अनुमान 11.5 करोड़ रु० था, परन्तु जन-सहयोग के कारण वास्तविक खर्च घट कर 6.5 करोड़ रु० रह गया । काम पूरा होने की अवधि में भी 2 वर्ष बच गए—सन् 1960 तक काम समाप्त करने का लक्ष्य था, परन्तु वह सन् 1958 में ही पूरा हो गया । भारत-सेवक-समाज ने सिंचाई और बाढ़-सुरक्षा की छोटी परियोजनाओं में भी सहयोग दिया है । अपने अनुभव से उत्साहित होकर इस संस्था ने निर्माण-सेवा की स्थापना की है, जिसकी शाखाएं अनेक राज्यों में हैं । इसने जनता के लिए किए जानेवाले अनेक निर्माण-कार्यों में भाग लिया है । शिक्षा-मन्त्रालय की श्रम एवं समाज-सेवा-शिविर-योजना के अन्तर्गत देश के छात्रों और युवा लोगों के लिए श्रम-शिविरों का आयोजन इस संस्था का एक मुख्य कार्य बन गया है और इसमें जनता का सहयोग बराबर बढ़ रहा है । ग्रामीण क्षेत्रों में इस प्रकार के कामों के लिए एक निश्चित नीति बना ली गई है । इसके अनुसार दो-तीन प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए एक ग्राम-समूह चुन लिया जाता

है। इन कार्यकर्ताओं का कार्य उस क्षेत्र की योजना को आधार मान कर जनता के कार्यक्रमों का संगठित रूप से परिपालन कराना है। इस दिशा में लोक-कार्य-क्षेत्र का उद्देश्य उस क्षेत्र के लिए नए साधनों का विकास और स्थानीय नेता तैयार करना है। इस कार्यक्रम में सरकार सहायता देती है और अब तो स्वैच्छिक संस्थाएं भी योग दे रही हैं। जनता में सामाजिक जागृति पैदा करने और उसे देश की समस्याओं तथा योजना के विभिन्न कार्यक्रमों के बारे में पूरी जानकारी देने के लिए भारत-सेवक-समाज ने जन-जागरण-केन्द्रों की भी स्थापना की है। इस कार्य में पूरी सहायता दी जाती है और अब इसे लोक-कार्य-क्षेत्र-कार्यक्रम का अंग बनाया जा रहा है। शहरी क्षेत्रों में 'समाज' ने गन्दी बस्तियों के निवासियों की ओर अधिक ध्यान दिया है और बेघर लोगों के लिए अनेक रैन-बसेरे चलाए हैं।

10. राष्ट्रीय स्तर पर और भी अनेक संस्थाएं हैं, जिन्होंने समाज की या उसके कुछ वर्गों की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मूल्यवान काम किया है। इन संस्थाओं के काम में समन्वय स्थापित करने की दिशा में भी काफी प्रगति हुई है। जन-सहयोग-सम्बन्धी राष्ट्रीय सलाहकार-समिति जन-सहयोग के क्षेत्र में हुई प्रगति की समय-समय पर समीक्षा करती है और मार्गदर्शन के लिए दिशाएं निर्धारित करती है। इस समिति की सदस्य-संस्थाओं के नाम इस प्रकार हैं: अखिल भारतीय सहकारी संघ, अखिल भारतीय महिला-सम्मेलन, भारत-साधु-समाज, भारत-स्काउट्स एंड गाइड्स, भारत-सेवक-समाज, भारतीय आदिम-जाति-संघ, भारतीय ग्रामीण महिला-संघ, केन्द्रीय समाज-कल्याण-मंडल, गांधी-स्मारक-निधि, हरिजन-सेवक-संघ, भारतीय समाज-कार्य-सम्मेलन, भारतीय शिशु-कल्याण-परिषद्, भारतीय रेड-क्रास-सोसायटी, राष्ट्रीय सैन्यशिक्षार्थी-दल (एन० सी० सी०), सहायक सैन्य-शिक्षार्थी दल (ए० सी० सी०) और सर्व-सेवा-संघ।

प्राथमिकताएं और कार्यक्रम

11. **कल्याण :** देश में इतनी अधिक गरीबी और अज्ञान फैला हुआ है कि दलित जनता के कष्ट दूर करने तथा उसके लिए बेहतर स्थिति बनाने के लिए स्वैच्छिक सेवा के कार्य की कोई सीमा ही नहीं है। परन्तु कार्यकर्ताओं और साधनों की कमी को देखते हुए कुछ कामों और क्षेत्रों को प्राथमिकता देने पर विचार करना आवश्यक है। शहरों और गांवों में सफाई रखने और स्वास्थ्यप्रद आदतों को प्रोत्साहन देने की दिशा में बहुत काम बाकी है। इस क्षेत्र में सामूहिक स्वैच्छिक कार्रवाई से बिना अधिक खर्च किए सन्तोषप्रद परिणाम निकल सकते हैं। अस्पतालों में रोगियों की सेवा की जा सकती है और उन रोगियों को भी आराम पहुंचाया जा सकता है जिन्हें अपने घरों में भी सुविधा-सहायता नहीं मिल पाती। स्वैच्छिक सहायता से साक्षरता का प्रसार तेज़ी से हो सकता है। समाज-सुधार और सामाजिक बुराइयों तथा समाज-विरोधी कार्यों के उन्मूलन में कानून का बहुत अधिक हाथ नहीं हो सकता—मुख्य ज़िम्मेदारी तो स्वैच्छिक संस्थाओं को ही संभालनी पड़ेगी।

12. **सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम :** स्वैच्छिक सेवा का मुख्य लक्ष्य अब सीमित अर्थों में कल्याण-कार्यों से हट कर व्यापक सामाजिक-आर्थिक कार्यों की ओर जा रहा है। पंचायतों और सहकारी सस्थाओं के काम भली-भांति चलाने के लिए अनुकूल वातावरण के निर्माण में स्वैच्छिक संस्थाएं बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में दो मुख्य काम हैं, भौतिक और जनशक्ति-विषयक साधनों के भरपूर उपयोग में सहायता देना, ताकि उत्पादन

तथा लाभकारी रोज़गार के अवसर बराबर बढ़ते रहें। इस उद्देश्य के लिए स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं को चाहिए कि वे सामुदायिक विकास-संस्थाओं को यथासम्भव सहायता पहुंचाएं।* कस्बों और नगरों में स्वैच्छिक सेवा से गन्दी बस्तियों का सुधार किया जा सकता है और उनके निवासियों के लिए बेहतर जीवन-यापन के योग्य स्थिति बनाई जा सकती है। इसका और स्वैच्छिक संस्थाओं की अन्य गतिविधियों का आधार निश्चय ही संगठित स्वयंसेवा हो। सहकारी आन्दोलन का क्षेत्र एक अत्यन्त आदर्श क्षेत्र है, जिसमें बहुत अधिक सामाजिक कार्यकर्ताओं की सेवाओं का उपयोग किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में सेवा-सहकारी समितियों और शहरी क्षेत्रों में सहकारी उपभोक्ता-भांडारों का जाल बिछा देना एक बहुत बड़ी राष्ट्रीय आवश्यकता है और इस पर अविलम्ब ध्यान दिया जाना चाहिए।

13. **निर्माण-कार्य :** बड़ी परियोजनाओं और छोटे तथा स्थानीय कार्यों की निर्माण-विषयक गतिविधियों में ही बेकार पड़ी जन-शक्ति के उपयोग के लिए स्वैच्छिक प्रयत्नों से सर्वाधिक काम लिया जा सकता है। गांवों में स्वैच्छिक संस्थाओं को सीधे अथवा श्रमिक-सहकारी संस्थाओं के ज़रिए निर्माण-कार्य में लगने के लिए प्रोत्साहन दिया जा सकता है। इससे खर्च में बचत होगी, काम के सन्तोषजनक मानदंड का पालन हो सकेगा, श्रमिकों के साथ अच्छा व्यवहार हो सकेगा तथा निर्माण-उद्योग के संचालन में ईमानदारी के व्यवहार को बढ़ावा मिलेगा। ठेकेदारों पर अधिक निर्भर नहीं रहना पड़ेगा और स्वैच्छिक संगठनों के कार्यक्रमों के लिए अतिरिक्त साधन उपलब्ध हो सकेंगे। योजना-आयोग की एक समिति ने भारत-सेवक-समाज-जैसी स्वैच्छिक संस्थाओं के लिए निर्माण-कार्यों में बड़े पैमाने पर योगदान को सरल बनाने के लिए निम्नलिखित सिफारिशें की हैं :

(क) सरकारी संस्थाएं स्वैच्छिक संस्थाओं को अधिक-से-अधिक सहायता देने का प्रयत्न करें। जहां तक सम्भव हो, कुल कार्य का कुछ भाग उनके लिए रख छोड़ा जाए और उनकी क्षमता बढ़ने के साथ-साथ काम का भी विस्तार किया जाए।

(ख) ऐसा प्रबन्ध किया जाए कि काम बराबर मिलता रहे। परियोजना के अधिकारी काफी पहले ही यह निश्चित कर दें कि किस स्वैच्छिक संस्था को कितना और किस प्रकार का काम दिया जाएगा। उन्हें ठेकेदारों के मुकाबले तरजीह दी जाए और आपसी बातचीत के द्वारा ही काम और उससे सम्बद्ध बातें तय की जाएं।

(ग) पारिश्रमिक उचित दर से (1) 'कार्यदेश' के आधार पर या (2) दरों की अनुसूची के आधार पर, जो समर्थ अधिकारी-द्वारा घटाई-बढ़ाई जा सके; दिया जा सकता है। दर-अनुसूची अद्यतन रहनी चाहिए।

(घ) पारिश्रमिक की अदायगी जल्दी होनी चाहिए, विलम्ब से बचा जाना चाहिए। सुपरिंटेंडिंग और एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियरों को अधिकार प्रदान किए जाने चाहिए और जैसे-जैसे काम पूरा हो, कुल काम के खाते से रकम की अदायगी होती जाए।

***सामुदायिक विकास-मन्त्रालय-द्वारा हाल ही में आयोजित एक सम्मेलन में स्वैच्छिक संस्थाओं के लिए निम्नलिखित कार्यक्षेत्र सुझाए गए थे : सामाजिक शिक्षा, कृषि-उत्पादन-कार्यक्रम, ग्रामोद्योग, सफाई तथा स्वास्थ्य, स्थानीय विकास-कार्य, समाज के कमज़ोर वर्गों का कल्याण, महिला तथा शिशु-कल्याण और युवा लोगों के लिए कार्यक्रम।**

(ङ) स्वैच्छिक संस्थाओं की सहायता के लिए राज्य-सरकारों और केन्द्रीय मन्त्रालयों की ओर से तकनीकी कर्मचारी भेजे जाने चाहिए।

(च) कार्य-संचालन-पूंजी तथा उपकरणों की खरीद के लिए ऋण दिए जाने चाहिए।

(छ) स्वैच्छिक संस्थाओं को उनकी क्षमता के अनुसार हर प्रकार का मिट्टी खोदने और राजगीरी का सादा काम करने का भार दिया जा सकता है। आवश्यक तकनीकी उपकरण और कर्मचारी होने पर उन्हें बड़े इमारती काम भी सौंपे जा सकते हैं। इमारती सामान अधिक मात्रा में उपलब्ध करने का ठेका लेने के लिए भी उन्हें प्रोत्साहित किया जा सकता है।

14. **योजनाओं के प्रति अधिक समझदारी :** सामाजिक और आर्थिक जीवन के पुनर्निर्माण के लिए व्यापक सहयोग और स्वैच्छिक अंशदान प्राप्त करने के लिए तीसरी योजना के महत्व, उद्देश्यों और प्राथमिकताओं को अच्छी तरह समझना ज़रूरी है। अर्थव्यवस्था की बढ़ती हुई जटिलता और समस्याओं की अधिकता के कारण निस्सन्देह यह बहुत सरल बात नहीं है। दूसरी ओर, पहली दो योजनाओं के फलस्वरूप तथा उनसे उत्पन्न जागृति के कारण समस्याओं का स्वरूप समझने, उनको हल करने के साधनों की सीमाएं पहचानने तथा तीव्र आर्थिक प्रगति के लिए अधिक बोझ संभालने की हमारी क्षमता बढ़ी है और अन्त में, योजना उस समय काफी अर्थपूर्ण हो जाती है, जब हम देखते हैं कि उसके लक्ष्य क्या हैं और व्यक्ति, स्थानीय समाज तथा जनता के विभिन्न वर्गों को उससे क्या अवसर मिलनेवाले हैं। तीसरी योजना में जनता के सहयोग एवं अंशग्रहण की सुदृढ़ता के कार्यक्रम के अंग-रूप में यह प्रस्ताव किया गया है कि योजना का सन्देश देश के कोने-कोने में पहुंचाया जाए और तीव्र विकास से निकलनेवाले परिणामों से लाभ उठाने की वर्तमान व्यवस्था को सबल किया जाए।

15. **व्यापक उद्देश्य :** देश की बुनियादी आवश्यकताओं, आदर्शों और लक्ष्यों से सम्बन्ध रखनेवाले कुछ बड़े काम भी हमारे सामने हैं। वर्तमान स्थिति में इसके चलते जनता पर कुछ विशेष ज़िम्मेदारियां आ जाती हैं। सबसे बड़ी ज़रूरत इस बात की है कि जनता का दृष्टिकोण और समाज का आचरण राष्ट्रीय उद्देश्यों के अनुरूप हो। इस आचरण के तीन रूप हैं, जिन्हें इस सन्दर्भ में सबसे अधिक आवश्यक माना जा सकता है। पहला यह कि देश के प्रति प्रेम और उसके महान् भविष्य का विश्वास हर हृदय में मज़बूती से घर कर ले। जनता स्वयं ही अपनी समझ से उन सभी बातों की सार्वजनिक रूप से रोकथाम करे तथा उन्हें त्याग दे, जिनसे देश की एकता और अखंडता को आघात पहुंचता हो। लोगों में इसकी पूरी समझ होनी चाहिए कि राष्ट्रीय एकता को किस बात से और कितनी हानि हो सकती है। ईमानदार तथा सेवाभावी कार्यकर्ता सैकड़ों तरीकों से हर नागरिक के मन पर मज़बूत और संगठित देश की छाप बैठा सकते हैं। वे यह भाव भी जमा सकते हैं कि देश की जनता और समाज जिन उपयोगी तथा मूल्यवान चीज़ों की कामना कर सकती है, उनकी प्राप्ति में जनता का संगठित प्रयत्न कितना अधिक महत्वपूर्ण और अपरिहार्य है। देश के विभिन्न भागों में फैली स्वैच्छिक संस्थाएं लोगों में एकता की भावना पैदा कर सकती हैं और महान् राष्ट्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत सारे देश में चल रहे कार्यों में सेवा के छोटे-मोटे कामों में उन्हें लगा कर उन्हें एक ही दिशा में सोचने एवं कार्य करने-योग्य बना सकती है। दूसरी बात यह है कि देश में जो आर्थिक और सामाजिक ढांचा तैयार हो रहा है, उसका आधार क्रमिक समाजवाद और सहकारिता ही रहेगा। तीसरी बात हर किसी को यह समझ लेना चाहिए कि सही आचरण और जीवन से ही राष्ट्र मज़बूत

होगा एवं एक उचित समाज-व्यवस्था का निर्माण हो सकेगा। सभी लोगों के लिए अच्छे जीवन की व्यवस्था करने के हेतु सबको काम करना होगा। हमें ऐसे समाज की ज़रूरत नहीं है जहां कुछ लोगों की समृद्धि के लिए अधिक लोगों को कष्ट झेलने पड़ें। परन्तु इसके लिए जनता की आदतों और उसके दृष्टिकोण में बुनियादी परिवर्तन करने होंगे, ताकि वे एक मानवता और सामाजिक न्याय में विश्वास करने लगें। आचरण के कुछ ऐसे मापदंड बनाने होंगे, जिनमें, संयम, अनुशासन तथा दूसरों के प्रति उदारता पर बल दिया गया हो। इन पर आधारित व्यवहार ही राष्ट्रीय चरित्र का स्वरूप ले सकेगा। राजनीतिक तथा सामाजिक सम्बन्धों, काम-काज एवं आर्थिक कार्यों में सदाचार पर अधिक ध्यान देना होगा। थोड़े समय में जब बड़े पैमाने पर सामाजिक परिवर्तन करना हो, तब जनता का सहयोग इतना अधिक तथा प्रभावशाली होना ही चाहिए कि उस प्रयत्न को व्यापक जन-आन्दोलन का स्वरूप दिया जा सके। जन-संगठनों के ज़रिए स्वैच्छिक सेवा के लिए यहां विस्तृत और असीम क्षेत्र है। यह समझ लेना चाहिए कि आज हमारे सामने क्रान्ति के लिए आह्वान करने का प्रश्न है, जिसके लिए जनता का मन तैयार करना है। इस क्रान्ति में ही जनता को अपने आदर्शवादी विचारों तथा देश-प्रेम की भावना को प्रकट करने का अवसर मिलेगा।

संगठन और तकनीकें

16. चूंकि स्वैच्छिक संगठनों के ज़रिए जनता के सहयोग की इतनी आशा रखी जाती है, इसलिए यह आवश्यक है कि वैसी संस्थाओं की संख्या बढ़े और वे सबल बनें, ताकि अपनी इच्छा से लिए गए कामों को वे पूरी तरह निभा सकें। यह बहुत-कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि अपने ऊपर लिए गए कार्य वे किस प्रकार पूरा करके लोगों में विश्वास जमाती हैं और जनता की ज़रूरतों की पूर्ति में कितना योग देती हैं। उन्हें प्राप्त होनेवाले फालतू समय तथा साधनों का निश्चय ही अच्छा-से-अच्छा उपयोग होना चाहिए। इसके लिए अग्रिम योजनाएं बनाने, आवश्यकताओं का समुचित अनुमान करने, कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने, व्यवस्थित रूप से काम करने, उचित निरीक्षण करने तथा निष्पक्ष मूल्यांकन की ज़रूरत है।

17. स्वैच्छिक संगठनों को स्थानीय संस्थाओं से घनिष्ठ सहयोगमूलक सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए और कुछ मामलों में पंचायतों, नगरपालिकाओं, आदि के काम करनेवाली संस्था का भी रूप ग्रहण करना चाहिए। जन-सहयोग से पूरे होनेवाले कार्यक्रम संयुक्त रूप से तैयार किए जाने चाहिए और उनमें स्वैच्छिक संस्थाओं का स्थान और भूमिका बिल्कुल स्पष्ट कर देनी चाहिए। सरकारी संस्थाओं को उन्हें अधिक-से-अधिक सहायता तथा सुविधाएं देनी चाहिए, परन्तु कार्यक्रमों के संचालन और नियन्त्रण का भार स्वैच्छिक संस्थाओं के नेताओं पर ही छोड़ देना चाहिए। इस तरीके से ही ये संगठन सच्चे राष्ट्रीय संगठन बन सकेंगे और लोगों को अपनी राजनीतिक मान्यताएं दरकिनार रख कर सहयोग के लिए प्रेरणा दे सकेंगे। स्थानीय आवश्यकताओं को देखते हुए कई स्थानों पर स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं के छोटे-छोटे संगठन बन गए हैं। बड़े संगठनों को उनकी सहायता करके उन्हें अधिक कार्य करने-योग्य बनाना चाहिए। यह सहायता कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण, मार्गदर्शन और अन्य सुविधाओं के रूप में हो सकती है।

18. स्वैच्छिक आधार पर अपने-आप काम शुरू होना स्वागत-योग्य अवश्य है, परन्तु इसमें यह खतरा भी है कि दो ओर से एक ही काम होने लगता है और परिणामस्वरूप साधनों

एवं शक्ति का दुरूपयोग होता है। इसलिए स्वैच्छिक संगठनों को समान नीति बनानी चाहिए, घनिष्ठ सहयोग से काम करना चाहिए तथा जिस काम में जो सबसे योग्य है, उसे वही काम अपने हाथ में लेना चाहिए। समन्वय की दिशा में काफी प्रगति हो चुकी है। इस समन्वय का विस्तार होना चाहिए और प्रशिक्षण, अनुसन्धान, मार्गदर्शक परियोजनाओं, जानकारी तथा अनुभव के आदान-प्रदान, पत्रिकाओं तथा उपयोगी सामग्रियों के प्रकाशन और सरकारी संस्थाओं से व्यवहार-जैसे विभिन्न क्षेत्रों में इसका उपयोग किया जाना चाहिए।

19. अभी तक स्वैच्छिक कार्य निजी व्यक्तियों या सरकार से उपलब्ध यत्किंचित सहायता से चले हैं। बहुत-सी संस्थाओं और संगठनों से सहयोग मिलने पर स्वैच्छिक सेवा को सुदृढ़ आधार पर संगठित किया जा सकता है। ये संस्थाएं शिक्षा, मनोरंजन, व्यवसाय, पत्रकारिता, आदि क्षेत्रों की हो सकती हैं। चन्दा-संग्रह-आन्दोलनों, दातव्य प्रदर्शनों, आदि के ज़रिए ये संस्थाएं धन-संग्रह करने में सहायता दे सकती हैं। कुछ निश्चित कामों की ज़िम्मेदारी वे स्वयं भी ले सकती हैं। स्वैच्छिक संगठनों के कार्यक्रमों और गतिविधियों के लिए ये संस्थाएं अपना स्थान, साज़-सामान तथा अन्य सुविधाएं देकर भी उन्हें सहायता पहुंचा सकती हैं।

20. स्वैच्छिक संस्थाओं के कार्यकर्ता जनता के हर वर्ग से आ सकते हैं विशेष रूप से समाज-सेवियों, अध्यापकों, विभिन्न रोज़गार-धन्धेवालों, विधायकों, सरकारी कर्मचारियों तथा स्थानीय संस्थाओं के सदस्यों में से। इस क्षेत्र में सैनिक अथवा असैनिक कार्यों से अवकाश-प्राप्त लोगों ने बहुत प्रशंसनीय काम किए हैं, उन्हें अधिक संख्या में इन कामों में लगाया जा सकता है। इस आन्दोलन का आधार देश का युवा-वर्ग ही है, जिसे उनके अपने हित तथा समाज की भलाई के इन कार्यों में शामिल किया जाना चाहिए।

21. कुछ काल तक परीक्षण और प्रयोग करने के बाद लोक-कार्य का ऐसा स्वरूप तैयार कर लिया गया है, जिससे गैर-सरकारी स्वैच्छिक कार्यों में आवश्यक आयोजन का लाभ उठाया जा सकता है और काम का न टूटनेवाला सिलसिला भी कायम किया जा सकता है। राष्ट्रीय विस्तार-सेवा-खंड की बराबरी का लोक-कार्य-क्षेत्र स्वैच्छिक संस्थाओं के लिए कार्य-क्षेत्र बन सकेगा और वास्तविक काम के स्तर पर विभिन्न संस्थाओं के कार्यों में समन्वय स्थापित हो सकेगा। कार्यक्रम-मूल्यांकन-संगठन ने लोक-कार्य-क्षेत्रों का जो अध्ययन किया है, उससे स्पष्ट है कि इस कार्यक्रम में भाग लेनेवाले कार्यकर्ता स्थानीय साधनों और जन-शक्ति को उपयोग के लिए तैयार करने तथा जनता और उसकी समस्याओं के बारे में अपनी पूरी जानकारी का अधिक अच्छी तरह इस्तेमाल कर सकते हैं। वे विकास के मार्ग की बाधाएं—अज्ञान, दलबन्दी और गांवों में विस्तार-कार्य के लिए अपर्याप्त सुविधाएं, आदि—दूर करने में भी अधिक उपयोगी हैं। अब इसे शहरी क्षेत्रों में भी लागू किया जा रहा है।

22. विश्वविद्यालय-आयोजन-गोष्ठियों से यह आशा की जाती है कि वे तीसरी योजना की अवधि में विश्वविद्यालयों और कालेजों को जन-समाज के निकट सम्पर्क में लाने तथा पंचायती राज-संस्थाओं, नगरपालिकाओं एवं अन्य स्वैच्छिक संगठनों के सहयोग से आरम्भ किए गए रचनात्मक कार्यों के ज़रिए राष्ट्रीय विकास के काम में योगदान करने के लिए शिक्षकों और छात्रों को प्रेरित करने में अधिक बड़ी भूमिका निभाएंगी। आयोजन-गोष्ठियों-द्वारा नियुक्त दलों ने दूसरी योजना की अवधि में जो अध्ययन एवं सर्वेक्षण किए, उनसे छात्रों तथा युवा लोगों को सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं को अधिक बारीकी से समझने का अवसर मिला। समय-समय पर आयोजन-गोष्ठियों-द्वारा आयोजित संगोष्ठियों से भी कई महत्वपूर्ण

सुझाव प्राप्त हुए । इन तथा ऐसी ही गतिविधियों को तीसरी योजना की अवधि में बढ़ाया जाएगा । यह भी आशा की जाती है कि आयोजन-गोष्ठियां योजना-सूचना-केन्द्रों का संगठन करने में समर्थ हो सकेंगी, जिनकी सहायता से छात्रगण तीसरी और परवर्ती योजनाओं की अवधि में राष्ट्र-द्वारा आकांक्षित लक्ष्यों को पूरी तरह हृदयंगम कर सकेंगे ।

प्रशिक्षण, अनुसन्धान और मूल्यांकन

23. जनता के अंशग्रहण करने-सम्बन्धी कार्य में संलग्न कार्यकर्ताओं का काम निश्चय ही सरल नहीं है । उनका मुख्य काम जनता का दृष्टिकोण बदलना, उनका विश्वास प्राप्त करना और उन्हें नए कामों में भाग लेने के लिए प्रेरित करना है । उन्हें समाज में व्याप्त जड़ता तथा परस्पर-विरोधी प्रवृत्तियों का सामना करना है । जटिल सामाजिक स्थिति और विषम समस्याओं का भी उन्हें सामना करना है । इन कार्यकर्ताओं को विशेष विषयों का पूरा प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए; तभी वे अपना काम भली-भांति कर सकेंगे । अभी हाल तक यह पहलू उपेक्षित ही था । अब लोक-कार्य-क्षेत्र के कार्यकर्ताओं के लिए नियमित रूप से सघन प्रशिक्षण की सुविधाएं उपलब्ध की गई हैं । गांवों से लेकर ऊपर तक पूरे या आधे समय के सभी कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण का व्यवस्थित प्रबन्ध होना चाहिए, ताकि वे कुशलता और समझदारी से अपना काम निभा सकें । प्रशिक्षण-कार्यक्रमों का सुदृढ़ आधार और जन-सहयोग के उचित तरीके निकालने के लिए समय-समय पर अपने अनुभवों का विश्लेषण और पूरा अध्ययन करना आवश्यक है । इसके लिए सामूहिक विचार-विमर्श का भी आयोजन होना चाहिए । सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया, समस्याओं और कार्यक्रमों के प्रति विभिन्न वर्गों का दृष्टिकोण तथा जन-सहयोग प्राप्त करने के तरीकों की उपयोगिता कुछ ऐसी बातें हैं, जिनके बारे में अनुसन्धान की बहुत गुंजायश है । देश के विभिन्न भागों में नए विचारों के लिए मार्गदर्शक परियोजनाएं चालू की जानी चाहिए । स्वैच्छिक संगठनों के कार्यों के मूल्यांकन की सुविधाएं दी जानी चाहिए । इन अध्ययनों और प्रयोगों के परिणामों का पूरा विवरण उपयुक्त साहित्य और मार्गदर्शन-सम्बन्धी अन्य सामग्रियों में उपलब्ध किया जाना चाहिए ।

अध्याय 19

कृषि-उत्पादन

ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के पुनर्निर्माण के लिए तीसरी पंचवर्षीय योजना में जिस व्यापक दृष्टि को अपनाया गया है, उसके आधार में कृषि-उत्पादन के कार्यक्रम निहित है। बड़े तथा छोटे सिंचाई-कार्यों का विकास; मिट्टी-संरक्षण के कार्यक्रम; उर्वरकों, सुधरे हुए बीजों तथा ऋण की आपूर्ति और नीचे ग्राम-स्तर तक पहुंचनेवाली विस्तार-सेवाओं की व्यवस्था कुछ ऐसे कदम हैं, जो सीधे उत्पादन बढ़ाने के लिए उठाए गए हैं। इन कार्यक्रमों के लिए सामुदायिक विकास-आन्दोलन के माध्यम से प्रत्येक ग्राम-समाज की शक्तियों का पूरा उपयोग करने और उसकी जनशक्ति तथा अन्य साधनों को प्रभावशाली ढंग से गतिशील बनाने का विचार है। भूमि-सुधार-सम्बन्धी नीतियों का लक्ष्य परम्परागत कृषि-ढांचे के कारण अधिक उत्पादन के मार्ग में आनेवाली बाधाओं को दूर करना और सहकारिता के आधार पर संगठित प्रगतिशील कृषि के विकास का मार्ग प्रशस्त करना है। सहकारिता के विकास के लिए जो विभिन्न कार्यक्रम अपनाए गए हैं और तीसरी योजना में जिन पर और अधिक बल दिया जाएगा, उनका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के द्रुत आर्थिक विकास के लिए आवश्यक ऐसे संस्थात्मक ढांचे का निर्माण करना है, जो ग्रामीण जनता के निर्धन-वर्ग के लिए विशेष लाभप्रद सिद्ध हो। कृषि-उत्पादन बढ़ाने की योजनाओं का पशुपालन और दूध-उद्योग की सफलता तथा मछली-उद्योग और ग्रामोद्योगों के विकास से गहरा सम्बन्ध है। दीर्घ-कालीन विकास की दृष्टि से वन-सम्पदा की देखभाल, मिट्टी और आर्द्रता के संरक्षण तथा गांवों में ईंधन के काम आनेवाले पेड़ उगाने का अत्यधिक महत्त्व है। देश के कुछ भागों में गांवों में बिजली लगने का, सिंचाई-सुविधाओं के विस्तार और टेक्नोलाजी-विषयक परिवर्तनों के माध्यम से, ग्रामीण जीवन पर उल्लेखनीय प्रभाव पड़ने लगा है; यह प्रभाव क्रमशः अधिकाधिक होता जाएगा। पंचवर्षीय योजनाओं-द्वारा ग्रामीण जीवन में लाए जा रहे विराट् परिवर्तनों की व्यापक पृष्ठभूमि में देखने पर कृषि-विकास के इन विभिन्न पहलुओं और विशेषतः कृषि-उत्पादन बढ़ाने के लिए तीसरी योजना में समाविष्ट विशिष्ट कार्यक्रमों का महत्त्व और भी बढ़ जाता है।

पहली और दूसरी योजनाओं के अन्तर्गत प्रगति

2. दूसरी योजना के अन्त में कृषि-उत्पादन का सूचनांक (आधार सन् 1949-50) बढ़ कर 135 हो गया। इसी तरह, खाद्यान्नों का सूचनांक 132 और अन्य फसलों का 142 ठहरा। पहली योजना में कृषि-उत्पादन में 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई। दूसरी योजना की अवधि में सन् 1957-58 और 1959-60, के दो वर्ष प्रतिकूल रहे और कुल मिला कर कृषि-उत्पादन में 16 प्रतिशत की वृद्धि हुई। अगले पृष्ठ की तालिका में सन् 1949-50 से उत्पादन की प्रवृत्तियां दर्शाई गई हैं।

तालिका-संख्या 1

कृषि-उत्पादन : सन् 1949-50 से 1960-61 तक*

वस्तु	इकाई	1949-50	1950-51	1955-56	1956-57	1957-58	1958-59(अ)	1959-60(आ)	1960-61(इ)
चावल	लाख टन	237	209	271	286	249	304	293	320
गेहूं	,,	66	66	86	93	77	98	97	100
सब अनाज	,,	484	437	549	574	530	626	605	640
दालें	,,	92	85	109	114	95	129	112	120
खाद्यान्न (अनाज और दालें) ...	,,	576	522	658	688	625	755	717	760
तेलहन	,,	51	51	56	63	61	69	64	71
गन्ना (गुड़)	,,	49	56	60	68	69	71	76	80
कपास	लाख गांठें	26	29	40	47	47	47	38	51
पटसन	,,	31	33	42	43	41	52	46	40
सभी वस्तुएं (सूचनांक) ...		100	95.6	116.8	124	114.6	132.3	127.2	135

*पहली पंचवर्षीय योजना के दौरान फसल-सम्बन्धी आंकड़े जमा करने का काम क्रमशः बढ़ा और समय-समय पर अनुमान के तरीके बदलते गए। तालिका में खाद्यान्न-उत्पादन के अनुमान सन् 1956-57 तक हुए परिवर्तनों के अनुसार समंजित कर दिए गए।

(अ) अंशतः संशोधित अनुमान

(आ) अन्तिम अनुमान

(इ) अस्थायी अनुमान

3. दूसरी योजना को अन्तिम रूप देने से पहले ही यह समझ लिया गया था कि उसमें भारी उद्योगों पर विशेष बल देते हुए द्रुत आर्थिक विकास का जो कार्यक्रम निर्धारित किया गया था, उसके अनुसार कृषि-उत्पादन को पहले निश्चित की गई मात्रा से कहीं अधिक बढ़ाने की ज़रूरत पड़ती । इसी बात को ध्यान में रखते हुए राज्य-सरकारों के साथ प्रारम्भिक लक्ष्यों के बारे में विचार-विमर्श किया गया और नवम्बर 1956 में निम्न-लिखित नए लक्ष्य निश्चित किए गए : खाद्यान्न—8 करोड़ 5 लाख टन, तेलहन—76 लाख टन, गन्ना (गुड़)—78 लाख टन, कपास—65 लाख गांठें, और पटसन—55 लाख गांठें। ऊपर की तालिका में सन् 1960-61 में खाद्य-उत्पादन की जो मात्रा (7 करोड़ 60 लाख टन) दिखाई गई है, उसके फसल-उत्पादन के संशोधित अनुमानों की प्राप्ति के समय तक 7 करोड़ 80 लाख टन हो जाने की आशा है। गन्ने का उत्पादन दूसरी योजना के लक्ष्य से भी अधिक हुआ, परन्तु कपास और पटसन के उत्पादन के मामले में जड़ता बनी रही। तेलहन का भी उत्पादन लक्ष्य से कम रहा। दूसरी योजना में उत्पादन की प्रवृत्ति को देखते हुए यह अत्यधिक महत्त्व की बात है कि तीसरी योजना में खाद्यान्नों के बारे में आत्म-निर्भरता प्राप्त करने के अतिरिक्त व्यावसायिक फसलों में, विशेषतः कपास, तेलहन और पटसन के उत्पादन में, पर्याप्ति वृद्धि की जानी चाहिए। अर्थ-व्यवस्था की प्रगति और घरेलू मांग में वृद्धि तथा इसके साथ ही निर्यात बढ़ाने की आवश्यकता के कारण व्यावसायिक फसलों की उत्पादन-वृद्धि में सफलता उतनी ही महत्त्व रखती है, जितनी खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि।

4. दूसरी योजना में कृषि और सामुदायिक विकास के लिए अनुमानित कुल 529 करोड़ रु० के व्यय में से 290 करोड़ रु० कृषि के लिए थे। इसके अतिरिक्त, बड़ी और मध्यम सिंचाई-योजनाओं के लिए कुल 372 करोड़ रु० के व्यय की व्यवस्था थी। योजना की अवधि में छोटी सिंचाई-योजनाओं के लिए अतिरिक्त साधन उपलब्ध किए गए। नीचे की तालिका में कृषि-विकास के कार्यक्रमों के परिपालन में हुई प्रगति के बारे में राज्य-सरकारों से प्राप्त सूचनाएं संक्षेप में दी गई हैं :

तालिका-संख्या 2

कृषि-कार्यक्रम—दूसरी योजना में प्रगति

कार्यक्रम	इकाई	अनुमानित उपलब्धि
बड़ी और मध्यम सिंचाई-योजनाएं	लाख एकड़ (कुल)	69
छोटी सिंचाई-योजनाएं	,,	90
खेतों में मिट्टी-संरक्षण	,,	20
भूमि का पुनरुद्धार	,,	12
सुधरे हुए बीजों के अन्तर्गत खेती का क्षेत्र (खाद्यान्न)	,,	550
नत्रजनयुक्त उर्वरकों की खपत (नत्रजन) ...	हज़ार टन	230
फास्फेटयुक्त उर्वरकों की खपत (पी$_2$ ओ$_5$) ...	,,	70
शहरी खाद	लाख टन	30
ग्रामीण खाद	,,	830
हरी खाद	लाख एकड़	118

मौसम के प्रतिकूल प्रभाव के बावजूद दूसरी योजना की अवधि में कृषि-क्षेत्र में अधिक प्रगति हो सकती थी, यदि पर्याप्त पूंजी-विनियोग से होनेवाले लाभों को—यथा छोटे और बड़े सिंचाई-कार्यों से होनेवाले सिंचाई के विस्तार और बीज-फार्मों की स्थापना में किए गए पूंजी-विनियोग के लाभों को—अधिक शीघ्रता से प्राप्त किया जाता। मिट्टी-संरक्षण-जैसे कार्यों में, जिनमें बड़ी संख्या में जनता के भाग लेने की आवश्यकता होती है, सीमित प्रगति हुई। उर्वरकों की खपत में, जो हाल में बड़ी तेज़ी से बढ़ी है, दूसरी योजना के प्रथम चार वर्षों में बहुत धीमी वृद्धि हुई। इसका कारण विदेशी मुद्रा की कमी और नए उर्वरक-संयन्त्रों की स्थापना में हुई अपर्याप्त प्रगति है। सन् 1956 में जब दूसरी योजना के कृषि-सम्बन्धी लक्ष्यों पर पुनर्विचार किया गया था, तब इस बात पर विशेष रूप से बल दिया गया था कि सुधरे हुए बीजों को बहु-गुणित करने, उर्वरकों के प्रयोग, सिंचाई और मिट्टी-संरक्षण, आदि के कार्यक्रमों को इस प्रकार कार्यान्वित किया जाए कि न्यूनतम समय में अधिकतम लाभ उठाया जा सके। यह सोचा गया था कि सिंचाई की सुविधा-प्राप्त या निश्चित वर्षावाली भूमि के प्रत्येक एकड़ में सुधरे हुए बीजों का इस्तेमाल होगा तथा उर्वरकों, कार्बनिक खादों और हरी खादों की आपूर्ति की निश्चित व्यवस्था की जाएगी। परन्तु इन दिशाओं में पर्याप्त प्रगति नहीं हुई। परिणामतः तीसरी योजना की अवधि में कृषि के सम्बन्ध में बहुत-कुछ किया जाना शेष है। वस्तुतः तीसरी योजना की सफलता अन्य किसी भी बात की तुलना में कृषि-लक्ष्यों की पूर्ति पर अधिक निर्भर करती है।

तीसरी योजना का दृष्टिकोण

5. तीसरी योजना के लिए कृषि-उत्पादन के कार्यक्रमों के निर्माण में नियामक विचार यह रहा है कि कृषि-सम्बन्धी प्रयत्नों में किसी भी रूप में वित्तीय या अन्य साधनों के अभाव के कारण रुकावट पैदा न हो। तदनुसार ही आवश्यकता के अनुरूप वित्त की पर्याप्त व्यवस्था की गई। इसके साथ ही यह आश्वासन दिया गया कि यदि उत्पादन के लक्ष्य की पूर्ति के लिए अतिरिक्त साधन उपलब्ध करना आवश्यक पाया गया, तो उन्हें भी योजना के बढ़ने के साथ-साथ सुलभ किया जाएगा। उर्वरकों की आपूर्ति भी बड़े पैमाने पर की जाएगी। राज्यों में कृषि-प्रशासन को संगठित करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं और विभिन्न अभिकरणों में, विशेषतः उनमें, जो कृषि, सहकारिता, सामुदायिक विकास और सिंचाई से सम्बद्ध हैं, अधिकतम सम्भव समन्वय स्थापित करने पर बल दिया गया है। सहकारी संस्थाओं के माध्यम से ऋण की आपूर्ति को विस्तृत किया जा रहा है और ऋण को उत्पादन तथा हाट-व्यवस्था से सम्बद्ध करने पर ज़ोर दिया गया है। फिर भी, यह कहना होगा कि इन प्रयत्नों का काफी महत्त्व होने के बावजूद ये अपने-आप में इस बात की सन्तोषजनक गारंटी नहीं है कि इनसे तीसरी योजना के कृषि-लक्ष्यों को प्राप्त कर ही लिया जाएगा।

6. सामुदायिक विकास-संगठन और खंड तथा ग्राम-स्तर पर विस्तार-कार्यकर्त्ताओं का मुख्य कार्य ग्राम-समाज को सघन कृषि-विकास के लिए संगठित करना, इसके लिए उसमें क्षिप्रता की भावना भरना, सरकार की ओर से काम करनेवाले सभी अभिकरणों को निर्देश देना और इस बात की निश्चित व्यवस्था करना है कि आवश्यक आपूर्ति, सेवाएं एवं तकनीकी सहायता यथासम्भव प्रभावशाली ढंग से उचित समय में और ठीक स्थान पर उपलब्ध हो जाएगी। इसके साथ ही, कृषि-विभाग को खंड-स्तर पर आपूर्ति, प्रशिक्षित कर्मचारियों और

अन्य आवश्यक साधनों को सामुदायिक विकास-संगठन के हवाले कर देना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि गांव के सभी परिवार, विशेषतः कृषि-कार्य में लगे लोग, ग्राम-सहकारी समितियों और पंचायतों के द्वारा कृषि-प्रयत्नों में सम्मिलित हों और गांव की उत्पादन-योजनाओं के द्वारा अधिक बड़े परिणाम प्राप्त करने में समर्थ हों। दूसरी योजना में जो अनुभव प्राप्त हुए है, उनको देखते हुए इन अनिवार्य शर्तों पर जितना भी बल दिया जाए, कम ही होगा। चूंकि तीसरी योजना में देश को अधिक बड़े काम करने है, इसलिए इस बात की अविलम्ब आवश्यकता है कि स्थानीय स्तर पर और राज्यों तथा केन्द्र में उच्च स्तर पर कृषि-कार्यक्रमों के संगठन में सुधार किया जाए।

7. तीसरी योजना में कृषि-उत्पादन-कार्यक्रमों के लिए, जिनमें छोटी और बड़ी सिचाई-योजनाएं, मिट्टी-संरक्षण और सहकारिता भी शामिल है, व्यय के लिए लगभग 1,280 करोड़ रु० की व्यवस्था है, जब कि दूसरी योजना में यह राशि लगभग 667 करोड़ रु० थी।

तालिका-संख्या 3

कृषि-उत्पादन पर व्यय-व्यवस्था

(करोड़ रु०)

	दूसरी योजना	तीसरी योजना
कृषि-उत्पादन	98.1	226.07
छोटी सिंचाई-योजनाएं	94.94	176.76
मिट्टी-संरक्षण	17.61	72.73
सहकारिता	33.83	80.1
सामुदायिक विकास (कृषि-कार्यक्रम) ...	50	126
बड़ी और मध्यम सिंचाई-योजनाएं ...	372.17	599.34
योग	666.65	1,281

तीसरी योजना में उपलब्ध साधनों के अतिरिक्त सहकारी अभिकरणों के द्वारा प्राप्त होनेवाले वित्त की मात्रा में भी पर्याप्त वृद्धि होगी। तीसरी योजना के अन्त तक अल्पकालीन और मध्यमकालीन ऋणों की राशि के 200 करोड़ रु० से बढ़ कर 530 करोड़ रु० और दीर्घकालीन ऋणों के खातों की बकाया राशि के, जो दूसरी योजना के अन्तिम वर्ष में 34 करोड़ रु० थी, 150 करोड़ रु० हो जाने की आशा है।

8. तीसरी योजना की प्रारम्भिक रूपरेखा में कृषि के जो कार्यक्रम और लक्ष्य निर्धारित किए गए थे, वे राज्य-सरकारों और केन्द्र के सम्बद्ध मन्त्रालयों-द्वारा किए गए प्रारम्भिक अध्ययनों पर आधारित थे। इनका उद्देश्य यह था कि ज़िलों, खंडों और ग्रामों में स्थानीय स्थितियों और सम्भावनाओं के प्रकाश में विस्तृत कृषि-कार्यक्रमों के निर्माण के लिए एक आधार बन सके। यह सुझाव दिया गया कि स्थानीय जनता का अधिकतम सहयोग प्राप्त करने की दृष्टि से और विशेष रूप से स्थानीय जनशक्ति-साधनों के पूर्ण उपयोग के लिए कृषि, छोटी सिंचाई, मिट्टी-संरक्षण और सहकारिता के विकास से सम्बद्ध कार्यक्रम ज़िला और खंड की योजनाओं के माध्यम से बनने चाहिए। अनेक राज्यों में इस आधार पर स्थानीय

योजनाएं तैयार करने का प्रयत्न किया गया है। साथ ही, यह भी देखा गया है कि राज्य-योजनाओं की व्यापक परिसीमा और लक्ष्यों का निश्चय हो जाने के बाद स्थानीय स्तर पर योजनाओं का निर्माण बड़ा सुगम हो जाता है। यद्यपि लक्ष्यों को प्रस्तुत करने और कार्यक्रमों को बनाने में राज्य-सरकारों ने ज़िला और खंड की कृषि-योजनाओं के निर्माण-क्रम में प्राप्त अनुभवों का लाभ उठाया है, तथापि उत्पादन के कार्यक्रम और अनुमान, जो अब राज्यों की योजनाओं के अंग बन गए हैं, वस्तुतः राज्य-स्तर पर सम्बद्ध विभागों के अध्ययनों के आधार पर ही तैयार किए गए हैं। उनके प्रस्तावों पर राज्यों, योजना-आयोग और केन्द्रीय मन्त्रालयों के बीच विचार-विमर्श की दो शृंखलाओं में विचार किया गया। इन्हें कुछ विस्तृत रूप में तैयार करने पर विशेष ध्यान दिया गया है। परन्तु विवशताओं के कारण इन्हें क्षेत्रीय योजनाओं पर उतनी दृढ़ता से आधारित नहीं किया जा सका, जितनी आशा की गई थी। अतः राज्यों-द्वारा स्वीकृत कार्यक्रमों और लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि पंचवर्षीय कार्यक्रम की सामान्य योजना की परिधि में प्रति वर्ष ज़िला और खंड-कृषि-योजनाएं बनाने पर निरन्तर बल दिया जाए। ज़िला, खंड और ग्राम-स्तरीय कृषि-उत्पादन-कार्यक्रमों के बिना व्यापक सहयोग, स्थानीय पहल एवं जिन कामों को करना है, उनकी पूरी समझदारी का भरोसा नहीं किया जा सकता, जब कि ये कृषि-विकास की सफलता के लिए आधारभूत शर्तें हैं।

कृषि-उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रम

9. कृषि-उत्पादन बढ़ाने के लिए निम्नलिखित प्रमुख तकनीकी कार्यक्रमों को परिधि बना कर सघन ढंग से काम किया जाना है—(1) सिंचाई, (2) मिट्टी-संरक्षण, बारानी खेती और भूमि-पुनरुद्धार, (3) उर्वरकों और खादों की आपूर्ति, (4) बीजों को बढ़ाना और उनका वितरण, (5) पौध-संरक्षण, (6) सुधरे हुए हल, उन्नत कृषि-उपकरण और कृषि की वैज्ञानिक पद्धतियों का प्रयोग। सभी क्षेत्रों में और विशेषतः सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अधीन विकास-खंडों में इन कार्यक्रमों को इस प्रकार पूरा करने की आवश्यकता होगी कि उनमें स्थानीय जनसमुदाय अधिक-से-अधिक भाग ले सके और ग्राम-उत्पादन-योजनाओं के द्वारा अधिकतम सम्भव परिवारों के साथ सम्पर्क स्थापित किया जा सके। इसके साथ ही प्रस्ताव है कि 15 ज़िलों में, जिनमें सिंचाई की व्यवस्था है अथवा निश्चित वर्षा के कारण स्थिति विशेष रूप से अनुकूल है और सहकारी आन्दोलन को अच्छी प्रकार जमा दिया गया है, कृषि-कार्यक्रमों को सामान्य से अधिक ज़ोरदार ढंग से आरम्भ किया जाए। सभी क्षेत्रों में, विशेषतः इन क्षेत्रों में, सभी किसानों तक पहुंचने के लिए और सुधरी हुई पद्धतियों के प्रयोग को बढ़ाने के लिए पूरा प्रयत्न किया जाएगा।

10. विभिन्न कृषि-विकास-कार्यक्रमों के अधीन मुख्य लक्ष्य संक्षेप में अगली तालिका में दिए गए हैं।

तालिका-संख्या 4

कृषि-कार्यक्रमों के लक्ष्य : तीसरी योजना

कार्यक्रम	इकाई	लक्ष्य
1. सिंचाई :		
(अ) बड़ी और मध्यम सिंचाई (कुल)	लाख एकड़	128
(आ) छोटी सिंचाई (कुल)	,,	128
(1) कृषि	,,	95
(2) सामुदायिक विकास	,,	33
योग	,,	256
2. मिट्टी-संरक्षण, भूमि-पुनरुद्धार, आदि :		
(अ) खेतों में मिट्टी-संरक्षण-कार्य	,,	110
(आ) बारानी खेती	,,	220
(इ) भूमि-पुनरुद्धार	,,	36
(ई) लोनी और क्षारीय भूमि का पुनरुद्धार	,,	.2
3. सुधरे हुए बीजों के अधीन अतिरिक्त क्षेत्र-खाद्यान्न	,,	1,480
4. रासायनिक उर्वरकों की खपत :		
(अ) नत्रजनयुक्त (नत्रजन)	हज़ार टन	1,000
(आ) फास्फेटयुक्त (पी$_2$ ओ$_5$)	,,	400
(इ) पोटासयुक्त (के$_2$ ओ)	,,	200
5. कार्बनिक और हरी खादें :		
(अ) शहरी खाद	लाख टन	50
(आ) ग्रामीण खाद	,,	1,500
(इ) हरी खाद	लाख एकड़	410
6. पौध-संरक्षण	,,	500

राज्यों से अलग-अलग परामर्श करके कृषि-विकास के जो लक्ष्य स्वीकार किए गए हैं, उन्हें इस अध्याय के प्रथम अनुबन्ध में दिया गया है।

छोटी सिंचाई-योजनाएं

11. तीसरी योजना की अवधि में सिंचाई-योजनाओं से सिंचित कुल क्षेत्र अनुमानतः 2 करोड़ 56 लाख एकड़ होगा। इसमें से 1 करोड़ 28 लाख एकड़ क्षेत्र बड़ी और मध्यम सिंचाई-योजनाओं-द्वारा तथा लगभग इतना ही क्षेत्र छोटी सिंचाई-योजनाओं-द्वारा सींचा जाएगा। जिन छोटी सिंचाई-योजनाओं के लिए सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अधीन वित्त की व्यवस्था होगी, उनसे लगभग 33 लाख एकड़ क्षेत्र की सिंचाई होगी तथा शेष की व्यवस्था कृषि-कार्यक्रम में होगी।

भूमि के उपयोग के सम्बन्ध में सन् 1957-58 के बाद के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं, इसलिए यह निश्चय करना बड़ा कठिन है कि जो सिंचाई-कार्यक्रम कार्यान्वित किए गए,

उनसे प्रथम दो योजनाओं में सिंचाई के क्षेत्र में वस्तुतः कुल कितनी वृद्धि हुई। छोटी सिंचाई के कार्यक्रमों में अनेक योजनाएं सम्मिलित हैं। इनमें से कुछ वर्तमान सिंचाई-व्यवस्था को सुदृढ़ करती हैं, अथवा वर्तमान सिंचाई-व्यवस्था में सुधार करती हैं—जैसे, नालियों और तटबन्धों का निर्माण; अतः इनसे सिंचाई के क्षेत्र में वृद्धि आवश्यक नहीं होती। फिर, उन छोटी सिंचाई-योजनाओं के लिए जो 'टूट-फूट' के कारण काम में नहीं आतीं या जिनका स्थान बड़ी और मध्यम सिंचाई-योजनाओं के अधीन होनेवाली सिंचाई ने ले लिया है, कुछ छूट दी जानी चाहिए। प्रारम्भिक रूपरेखा में यह अनुमान लगाया गया था कि दूसरी योजना के अन्त में कुल सिंचित क्षेत्र लगभग 7 करोड़ एकड़ होगा तथा तीसरी योजना के अन्त में बढ़ कर 9 करोड़ एकड़ हो जाएगा। हाल में जो अनुमान लगाए गए हैं, उनमें ये संख्याएं कुछ कम ठहरती हैं, परन्तु जो आंकड़े उपलब्ध हैं, वे भी सन्तोषजनक नहीं हैं। बड़ी और छोटी सिंचाई-योजनाओं की प्रगति के सम्बन्ध में प्राप्त आंकड़ों और तीन वर्ष के व्यवधान के बाद भूमि के प्रयोग के सम्बन्ध में उपलब्ध आंकड़ों में बहुत असमानता पाई जाती है। अतः यह प्रस्ताव किया गया है कि इन असमानताओं की विशेष रूप से जांच की जाए।

12. तीसरी योजना में कृषि और सामुदायिक विकास के अधीन की गई व्यवस्था के अनुसार छोटी सिंचाई-योजनाओं पर कुल व्यय लगभग 250 करोड़ रु० होने की आशा है। सहकारी अभिकरणों-द्वारा उपलब्ध की जानेवाली राशि उसके अतिरिक्त होगी। इस प्रकार तीसरी योजना में छोटी सिंचाई-योजनाओं पर अधिक पूंजी-विनियोग किया जाएगा। छोटी सिंचाई-योजनाओं के मुख्य लाभ ये हैं: इन्हें जल्दी पूरा किया जा सकता है; कम पूंजी की आवश्यकता होती है तथा इनकी पूर्ति और इनसे होनेवाले लाभों के बीच समय का बहुत कम अन्तर होता है। एक बात यह भी है कि व्यक्तियों या कुछ समूहों-द्वारा भी इनके लिए पहल की जा सकती है और इनमें समुदाय-द्वारा भाग लिए जाने का पूरा अवसर रहता है। फिर भी, यह देखा गया है कि छोटे सिंचाई-कार्यक्रमों का झुकाव सरकार-द्वारा संचालित छोटे पैमाने के सिंचाई-कार्यों का रूप ग्रहण करने की ओर है और इनमें स्वैच्छिक श्रम तथा जनता का योगदान नाममात्र को रह जाता है। यह अत्यधिक महत्त्व की बात है कि सभी राज्यों में अधिकांश रूप से छोटे सिंचाई-कार्यों को अनिवार्यतः सामुदायिक कार्यक्रम के रूप में किया जाए तथा इसके लिए स्थानीय धन और श्रम के योग पर विशेष रूप से बल दिया जाए। छोटी सिंचाई-योजनाओं का स्वरूप जब बड़ा हो जाता है, तब इसके लिए संगठन, जांच और प्रयोग की समस्याएं उठ खड़ी होती हैं, जो कि कुछ दृष्टियों से सिंचाई के बड़े कार्यक्रमों में पैदा होनेवाली समस्याओं से भी अधिक कठिन होती हैं। छोटे सिंचाई-कार्यक्रमों के प्राथमिक चरण में सादे ढंग के कामों को हाथ में लिया जा सकता है और इनके लिए सदा व्यापक सर्वेक्षण की आवश्यकता भी नहीं होती। प्रारम्भिक अध्ययनों से यह प्रकट हुआ है कि छोटे सिंचाई-कार्यों के विकास की सम्भावनाओं को 7 करोड़ 50 लाख एकड़ क्षेत्र के लिए बढ़ाया जा सकता है। इस सम्भावना की पूर्ति के लिए विभिन्न नदी-घाटियों के लिए प्रत्येक राज्य में व्यवस्थित ढंग से सर्वेक्षण और जांच का काम आरम्भ किया जाना चाहिए तथा विभिन्न क्षेत्रों में जांच करनेवाले दलों में कर्मचारियों की संख्या भी पर्याप्त होनी चाहिए। इस समय कुछ ही क्षेत्रों में ऐसी छोटी सिंचाई-परियोजनाएं हैं, जिन्हें शीघ्र पूरा करने के लिए काफी पहले से तैयार कर लिया गया है।

13. पहली और दूसरी योजना की अवधि में प्राप्त हुए अनुभवों से कुछ ऐसी दिशाएं

प्रकाश में आई हैं, जिनमें कृषि-उत्पादन में वृद्धि या समुचित वित्तीय प्राप्ति के रूप में पूरे लाभ हस्तगत करने के लिए छोटे सिंचाई-कार्यक्रमों की कार्यान्विति सुधारी जानी चाहिए। इन सुधारों का सम्बन्ध अच्छे रख-रखाव, फसल के उचित तरीकों को अपनाने, पानी के बेहतर उपयोग और अच्छी व्यवस्था, तथा कार्यक्रमों को कुशलतापूर्वक कार्यान्वित करने से है। योजना की परियोजनाओं से सम्बद्ध समिति की जांच तथा अन्य अध्ययनों से यह पता चलता है कि छोटे सिचाई-कार्यों के रख-रखाव की वर्तमान व्यवस्था को राज्य-सरकारों तथा स्थानीय समुदायों-द्वारा अधिक सुदृढ़ करने की आवश्यकता है, ताकि 'टूट-फूट' से होनेवाली हानियों को, जो आजकल बड़े चिन्ताजनक रूप से बढ़ रही हैं, कम किया जा सके। इस समय जो छोटे सिंचाई-कार्यक्रम निर्माण की प्रक्रिया में है, उनका एक बड़ा भाग ऐसा है, जिसके रख-रखाव का दायित्व राज्य-सरकारों को ग्रहण करना चाहिए। अतः यह आवश्यक है कि छोटे सिंचाई-कार्यो के तकनीकी और प्रशासनिक संगठन को सुदृढ़ किया जाए और इस बात की निश्चित व्यवस्था की जाए कि नियमित रूप से इनका निरीक्षण और अधीक्षण होता रहेगा।

यह भी आवश्यक है कि कानून के द्वारा स्थानीय समुदायों पर और सिंचाई-योजनाओं से लाभ उठानेवालों पर कुछ उत्तरदायित्व सौंपे जाए। भारत के अधिकांश भागों में खेतों की नालियों के रख-रखाव के उत्तरदायित्व की बात पुराने समय से चली आ रही है तथा राजस्व-सम्बन्धी अभिलेखों में भी यह बात अंकित है। इन परम्परागत कर्त्तव्यों के प्रति अब प्रायः उपेक्षा का भाव आ गया है; अतः कानून के द्वारा इन्हें अधिक निश्चित करने की आवश्यकता है। कुछ राज्यों ने इस प्रकार के कानून बना भी दिए है। जो मुख्य कर्त्तव्य किए जाने चाहिए, वे हैं—खेतों की नालियों का निर्माण और उनका रख-रखाव; बांधों और तालाबों का रख-रखाव; तथा तालाबों की तलछट साफ करना, बशर्ते कि काम इतने बड़े पैमाने का न हो कि उसे सरकार को ही हाथ में लेना पड़े। यह भी सुझाया गया है कि पंचायतों को ऐसे कानूनी अधिकार दिए जाने चाहिए कि वे लाभ उठानेवालों को इन कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए बाध्य कर सकें। यदि ये लोग समय पर काम को पूरा करने में असफल रहें, तो पंचायत को स्वयं यह काम करना चाहिए तथा इसका खर्च लाभ उठानेवालों से वसूल करना चाहिए। यदि ग्राम-पंचायत भी यह काम न कर सके, तो सरकार या उसकी ओर से विकास-खंड की पंचायत-समिति इस कार्य को पूरा करने की व्यवस्था करे और जो खर्च हो, उसे लाभ उठानेवालों से वसूल करे।

14. निर्माण-कार्यो की पूर्ति और उनसे होनेवाले लाभों की प्राप्ति के बीच समय का जो अन्तर आता है, उसको कम करने की समस्या न केवल बड़े सिंचाई-कार्यक्रमों के लिए है, अपितु छोटे सिंचाई-कार्यो के लिए भी उतने ही बड़े रूप मे है। व्यापक रूप से फैले होने के कारण छोटे निर्माण-कार्यो का यह तकाज़ा है कि विस्तार-अभिकरण उन पर अधिक ध्यान दें। अभी हाल में कार्यक्रम-मूल्यांकन-संगठन ने छोटी सिंचाई की समस्याओं का जो क्षेत्रीय अध्ययन किया, उससे यह प्रकट हुआ कि छोटी सिंचाई के क्षेत्र में भी उपलब्ध सुविधाओं का लाभ न उठाया जाना एक बहुत बड़ी और गम्भीर समस्या है और प्रत्येक क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के सिंचाई-कार्यो का बारीकी से अध्ययन किया जाना चाहिए। किसी भी क्षेत्र में सिंचाई के लिए कृषि-सम्बन्धी कार्रवाइयों की एक श्रृंखला अपनाना आवश्यक है, जिसमें नए ढंग की खेती अपनाना, भूमि-विकास, मिट्टी और जल-संरक्षण तथा अन्य सुधरे हुए कृषि के

तरीके भी शामिल हैं। यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि कृषि-विस्तार-कर्मचारी इन बातों पर अपना ध्यान अधिक केन्द्रित करें ताकि सिंचाई से प्रत्याशित लाभ प्राप्त हो सकें। जो तरीके अपनाए जाने हैं, वे सर्वविदित हैं, तथा मुख्य प्रश्न अग्रिम आयोजन और ऊपर बताए गए कार्यों की ओर निरन्तर ध्यान देने का है।

15. छोटे सिंचाई-कार्यक्रमों के कार्यान्वियन में कुछ हद तक इसलिए क्षति पहुंची कि अपने तकनीकी ज्ञान को विभिन्न प्रकार के निर्माण-कार्यों में लगा सकनेवाले अनुभवी कर्मचारी पर्याप्त संख्या में उपलब्ध नहीं हो सके। इस स्थिति में कुछ सीमा तक सुधार हुआ है। फिर भी, तीसरी योजना में जिस विशाल कार्यक्रम को पूरा करना है, उसे देखते हुए यह आवश्यक है कि अब राज्यों में एक उपयुक्त तकनीकी सेवा-वर्ग का निर्माण किया जाए। यदि बड़े पैमाने पर ग्राम-निर्माण के कार्यक्रम को, जो कि विशेष रूप से कृषि-विकास के लिए है, सफलतापूर्वक संगठित करना है, तो यह और भी महत्त्वपूर्ण हो जाएगा। इसके अतिरिक्त, देश के कुछ भागों में छोटे सिंचाई-कार्यक्रमों के अवसर गांवों में बिजली लगने के कारण अपने-आप बढ़ते जा रहे हैं। दूसरी योजना की अवधि में छोटे सिंचाई-कार्यक्रमों को कुछ हद तक आवश्यक भूमि की प्राप्ति में आनेवाली कठिनाइयों, कार्य-संचालन कर रहे कर्मचारियों को प्राप्त वित्तीय और प्रशासनिक अधिकारों की अपर्याप्तता तथा निर्माण-काल से काफी पहले कामों की स्वीकृति न मिलने के कारण क्षति पहुंची।

16. प्रशासनिक ढंग की भी कुछ समस्याएं हैं, जिनकी ओर ध्यान दिया जाना चाहिए। कृषि और सामुदायिक विकास, दोनों के अधीन छोटी सिंचाई-योजनाओं के लिए वित्तीय व्यवस्था करके एक ही बात दो-दो बार करने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। इसलिए यह आवश्यक है कि छोटी सिंचाई-योजनाओं की—चाहे वे कृषि के अधीन हों या सामुदायिक विकास के अधीन—वित्तीय व्यवस्थाओं को खंड-स्तर पर एकत्र कर लिया जाए तथा सम्बद्ध क्षेत्र के अधिकतम लाभ के लिए उनका प्रयोग किया जाए। यह सोचा गया है कि छोटे सिंचाई-कार्यों के लिए व्यक्तिगत सहायता यथासम्भव सहकारी अभिकरणों, तकावी ऋणों और कृषि-विभागों से आनी चाहिए। सामुदायिक विकास-खंड के बजट की व्यवस्थाओं में ऐसे कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, जिनसे संयुक्त रूप से बहुत-सारे लोगों को लाभ पहुंचता हो। इन कार्यक्रमों को ग्राम-पंचायतों या सहकारी समूहों-द्वारा पूरा किया जा सकता है।

17. पिछले कुछ वर्षों में सिंचाई में तथा कृषि-विकास के अन्य क्षेत्रों में नए क्रिया-कलापों को प्रोत्साहन देने के एक तरीके के रूप में विभिन्न प्रकार के सहायता-अनुदान दिए गए। सामान्य नीति यह होनी चाहिए कि इन सहायता-अनुदानों को क्रमशः कम किया जाए और जहां कहीं सम्भव हो, इन्हें पूर्णतः समाप्त कर दिया जाए। ऐसे सहायता-अनुदानों का कुछ औचित्य हो सकता है, जिनका उद्देश्य समाज के निर्धन-वर्ग को लाभ पहुंचाना अथवा कुछ समय तक ऐसे नए आविष्कारों और उन्नत प्रणालियों को समर्थन प्रदान करना हो, जिन्हें अब तक अपनाया नहीं गया है। सहायता-अनुदान की वर्तमान योजनाओं पर बारीकी से विचार किया जाना चाहिए और इन्हीं उद्देश्यों को सिद्ध करनेवाले अन्य उपायों की परीक्षा करने के बाद सहायता-अनुदान कम करने और जहां तक सम्भव हो, समाप्त करने के लिए क्रमिक कार्यक्रम बनाए जाएं।

81. तीसरी योजना के लिए केन्द्रीय सरकार ने छोटी सिंचाई के क्षेत्र में दो नई

योजनाओं का सूत्रपात किया है। प्रायोगिक अनुसन्धान का एक कार्यक्रम हाथ में लिया जाएगा, जिसमें छोटे सिंचाई-कार्यों को कार्यान्वित करने में आनेवाली समस्याओं का इस दृष्टि से अध्ययन किया जाएगा कि निर्माण-कार्य में होनेवाले व्यय में किस प्रकार मितव्ययिता की जा सकती है, सिंचाई-कार्यों का किस तरह सुचारु रूप से संचालन किया जा सकता है और खेतों में पहुंचनेवाले पानी का किस तरह आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद प्रयोग किया जा सकता है। कृषि-स्नातकों को सिंचाई के पानी के प्रयोग के बारे में प्रशिक्षण देने की एक योजना भी तैयार की गई है। इन योजनाओं को केन्द्रीय और राज्यीय संगठनों के अभिकरणों-द्वारा कार्यान्वित किया जाएगा।

19. देश के कुछ हिस्सों में, विशेषत: पंजाब और उत्तर प्रदेश में, वर्षा या बाढ़ का पानी इकट्ठा होने की समस्या बड़ी गम्भीर हो गई है। पानी में डूबे हुए क्षेत्रों के पुनरुद्धार और स्थिति को अधिक बिगड़ने से रोकने के लिए कृषि-कार्यक्रम में पानी के ऊपर से बह कर निकल जाने की व्यवस्था में सुधार करने और उथले नलकूप लगाने की योजनाएं हैं।

20. अनेक क्षेत्रों के लिए परीक्षणात्मक नलकूप खोदने का व्यापक कार्यक्रम कार्यान्वित किया जा रहा है। मार्च 1961 तक 379 कुओं के लिए खुदाई की गई, जिनमें से 195 सफल रहे। इन सफल नलकूपों को सम्बद्ध राज्य-सरकारें अपने हाथ में ले रही हैं। यदि आंकड़े और अधिक व्यापक रूप से उपलब्ध हो जाएं, तो अनुकूल क्षेत्रों में निजी और सहकारी नलकूपों के निर्माण को प्रोत्साहन दिया जा सकता है।

21. **मिट्टी-संरक्षण, बारानी खेती और भूमि-पुनरुद्धार :** तीसरी योजना में मिट्टी-संरक्षण और बारानी खेती पर पर्याप्त बल दिया जा रहा है। इन कार्यक्रमों पर मिट्टी-संरक्षण-विषयक अध्याय में विस्तार से प्रकाश डाला गया है। फिर भी, यहां भूमि-पुनरुद्धार के बारे में कुछ कहा जा सकता है। इस समय एक तकनीकी समिति राज्य-सरकारों के सहयोग से परती भूमि के बड़े खंडों का सर्वेक्षण कर रही है तथा उनकी स्थिति की जानकारी प्राप्त कर रही है। समिति ने सात राज्यों में 'बेकार भूमि के अतिरिक्त गैर-आबाद भूमि' और 'चालू बेकार भूमि के अतिरिक्त बेकार भूमि' के रूप में वर्गीकृत भूमि का सर्वेक्षण-कार्य पूरा कर लिया है। इसमें से लगभग 10 लाख एकड़ भूमि को, जो 250 एकड़ या इससे अधिक के खंडों में है तथा जो सुधार और पुनर्वास के लिए उपलब्ध है, निर्दिष्ट कर दिया गया है। इन भूमि-खंडों के पुनरुद्धार की योजनाएं तैयार करनी पड़ेंगी। 36 लाख एकड़ भूमि के पुनरुद्धार का जो लक्ष्य निश्चित किया गया है, उसमें राजस्थान की लगभग 20 लाख एकड़ भूमि तथा तकनीकी समिति-द्वारा सिफारिश की गई कुछ अन्य भूमि भी सम्मिलित है। मशीनों-द्वारा भूमि-पुनरुद्धार-अभियान के लिए ट्रैक्टरों के संचालन, रख-रखाव और मरम्मत करनेवाले प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता होगी। इस समय बुदनी (मध्य प्रदेश) में जो ट्रैक्टर-प्रशिक्षण-केन्द्र है, तीसरी योजना में उसके अतिरिक्त एक नया केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था है। बुदनी-स्थित केन्द्र का भी विस्तार किया जाएगा।

22. **उर्वरक और खाद :** तीसरी योजना की अवधि में उर्वरकों की आपूर्ति अगले पृष्ठ पर दी गई अस्थायी परिसूची के अनुसार बढ़ाने का प्रस्ताव है।

(हज़ार टन)

वर्ष		नत्रजनयुक्त उर्वरक (नत्रजन)	फास्फेटयुक्त उर्वरक (पी$_2$ ओ$_5$)	पोटासयुक्त उर्वरक (के$_2$ ओ)
1960-61	..	230	70	85
1961-62	..	400	100	82
1962-63	..	525	150	100
1963-64	..	650	225	130
1964-65	..	800	300	160
1965-66	..	1,000	400	200

स्वदेशी उत्पादन और उर्वरकों तथा आवश्यक कच्ची सामग्रियों के आयात के कार्यक्रम उपर्युक्त अनुमानों पर ही आधारित हैं।

23. यद्यपि उर्वरकों की मांग में बड़ी तेज़ी से वृद्धि हुई है और हाल के वर्षों में किसानों की कुल आवश्यकताओं को पूरा करना सम्भव नहीं हो सका है। तथापि प्रशासन का यह कर्त्तव्य है कि वह तीसरी योजना में की गई व्यवस्था के अनुसार कुशल वितरण और बढ़ी हुई आपूर्ति के प्रयोग की समुचित व्यवस्था करे। इस सम्बन्ध में उर्वरक-वितरण-जांच-समिति की सिफारिशों का विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है, जिनमें मिश्रण के रूप में उर्वरकों के प्रयोग पर इस दृष्टि से बल दिया गया है कि सन्तुलित उर्वरकीकरण में वृद्धि हो और नत्रजनयुक्त उर्वरकों की आपूर्ति का सर्वोत्तम उपयोग किया जा सके। समिति ने वितरण-व्यवस्था में सुधार करने, किस्म पर अधिक ध्यान देने और वितरण के खर्च में कमी करने पर भी बल दिया है। समिति के सुझाव के अनुसार, रासायनिक उर्वरकों के बढ़े हुए वितरण, उनके भांडारण और बिक्री में वृद्धि आदि से उत्पन्न समस्याओं को प्रभावशाली ढंग से हल करने के लिए तीसरी योजना की अवधि में एक केन्द्रीय उर्वरक-हाट-व्यवस्था-निगम की स्थापना करने का प्रस्ताव है। संयुक्त राष्ट्रीय उर्वरक-आयोग ने, जिसने हाल में ही उर्वरकों की समस्या का अध्ययन किया है, इस आवश्यकता पर बल दिया है कि विभिन्न परिस्थितियों में आवश्यक उर्वरकों की मात्रा और प्रकार का निश्चय करने के लिए छोटे किसानों के सहयोग से व्यापक रूप से मिट्टी-परीक्षा की जाए और उर्वरकों के प्रयोग के बारे में निरन्तर अनुसन्धान किया जाए। छोटे किसानों को उर्वरकों के प्रयोग के लिए ऋण देना भी विशेष महत्त्व रखता है। राज्यों-द्वारा निर्मित कार्यक्रमों को मूर्त रूप देते समय इन बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

24. कुछ दिशाओं में प्रगति के बावजूद समग्र रूप में खाद के स्थानीय साधनों —विशेषतः कार्बनिक खाद के साधनों—के विकास-सम्बन्धी विस्तार-कार्य पर अब तक पर्याप्त बल नहीं दिया जा रहा है। तीसरी योजना के लिए राज्यों ने जो लक्ष्य स्वीकार किए हैं, उनमें 50 लाख टन शहरी खाद, 15 करोड़ टन ग्रामीण खाद और 4 करोड़ 10 लाख एकड़ क्षेत्र में हरी खाद के प्रयोग की व्यवस्था है। दूसरी योजना के अन्त में यह क्षेत्र लगभग 1 करोड़ 20 लाख एकड़ था। शहरी खाद-कार्यक्रम के सिवाय,

जो नगरपालिकाओं और बड़ी ग्राम-पंचायतों-द्वारा संगठित है, अन्य लक्ष्यों की पूर्णता का आकलन कर सकना बड़ा कठिन है। आशा की जाती है कि खंड और ग्राम-स्तरों पर सघन कार्य करके हरी खाद और ग्रामीण खाद के लक्ष्यों में और भी सुधार किया जा सकेगा। मल-मूत्र के प्रयोग पर भी अधिकाधिक बल देने का प्रस्ताव है। जिस एक अन्य दिशा में पर्याप्त प्रयत्न किए जाने की आवश्यकता है, वह है मल-मूत्र की खाद का उत्पादन। इस कार्य को अनेक स्थानों पर प्रायोगिक रूप से हाथ में लिया गया है और यह सुझाव दिया गया है कि इससे जो अनुभव प्राप्त हों, उनका अध्ययन एक बड़ा और व्यापक विकास-कार्यक्रम बनाने की दृष्टि से किया जाए।

25. गांवों में प्रयोग के लिए गोबर की गैस और खाद के संयन्त्र के विकास में कुछ प्रगति हुई है। भारतीय कृषि-अनुसन्धान-संस्था ने गैस-संयन्त्र का एक नमूना तैयार किया है, जिसका दिल्ली के पास के तथा कुछ अन्य गांवों में प्रयोग किया जा रहा है। इस गैस-संयन्त्र का मूल्य 400 से 450 रु० तक है। यह बात इसके व्यापक प्रयोग के मार्ग में बाधा-स्वरूप है। गैस-संयन्त्र के व्यापक प्रयोग से भूमि की उर्वरता और फसल-उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ ईंधन की समस्या के समाधान में भी बड़ी सहायता मिलेगी।

26. उत्पादन में वृद्धि के लिए उर्वरक के ठीक प्रयोग का निश्चय करने और मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में मिट्टी की परीक्षा का महत्त्वपूर्ण योगदान होगा। हाल के वर्षों में अनेक प्रयोगशालाएं खोली गई है तथा भारतीय कृषि-अनुसन्धान-संस्था उनके अध्ययन का समन्वय करती है। मिट्टियों के सम्बन्ध में आंकड़े एकत्र करने, मिट्टी-विज्ञान और मिट्टी-रचना के सम्बन्ध में प्रशिक्षण देने तथा आधारभूत और प्रायोगिक मिट्टी-अनुसन्धान का काम हाथ में लेने के उद्देश्य से यह प्रस्ताव किया गया है कि एक केन्द्रीय भूमि-तत्व और मिट्टी-रचना-विद्या-संस्थान की स्थापना की जाए।

27. **बीज-बहुगुणन और वितरण :** दूसरी योजना में जो महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम हाथ में लिए गए थे, उनमें से एक सुधरी हुई किस्म के आधारभूत बीजों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सभी विकास-खंडों में बीज-फार्मों की स्थापना भी था। कुल मिला कर 4,000 बीज-फार्म स्थापित किए जा चुके है, तथा तीसरी योजना के प्रारम्भिक वर्षों में 800 फार्म और स्थापित किए जाएंगे। स्थापित फार्मों में से अधिकांश ने दूसरी योजना के अन्त तक पंजीकृत उत्पादकों-द्वारा बहुगुणन के लिए बीज उपलब्ध करना शुरू कर दिया था। इस कार्यक्रम के लाभ बड़े पैमाने पर प्राप्त करने में अभी दो-तीन वर्ष और लग सकते है। यद्यपि प्रारम्भ में एक बीज-फार्म के लिए औसत रूप से 25 एकड़ के क्षेत्र का संकेत दिया गया था, तथापि अधिकांश बीज-फार्म आकार में इससे बड़े ही हैं। बड़े फार्मों में आवश्यक योग्यता के तकनीकी कर्मचारियों की व्यवस्था करना और आर्थिक दृष्टि से अधिक लाभ के आधार पर उत्पादन करना सुगम होता है। इन बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए, विशेष रूप से उन बीज-फार्मों के सन्दर्भ में, जिनकी अभी स्थापना की जानी है और जो अस्थायी रूप से पट्टे की भूमि पर स्थापित किए गए थे। प्रत्येक बीज-फार्म के साथ एक बीज-भांडार की व्यवस्था है। अच्छे वितरण की व्यवस्था के उद्देश्य से तीसरी योजना में राज्यों ने सामान्य रूप से प्रत्येक विकास-खंड में एक अतिरिक्त बीज-भांडार की स्थापना की

व्यवस्था की है। दूसरी योजना के अन्त में सुधरे हुए बीजों से की गई खाद्यान्नों की खेती का क्षेत्र अनुमानतः 5 करोड़ 50 लाख एकड़ था। तीसरी योजना की अवधि में इसके बढ़ कर 14 करोड़ 80 लाख एकड़ हो जाने की आशा है। एक ओर जहां बीजों को सुधरी हुई किस्मों को बढ़ाने में पंजीकृत उत्पादकों का बड़ा महत्त्वपूर्ण हाथ है, वहीं दूसरी ओर खंड और ग्राम की कृषि-योजनाएं बनाते समय लक्ष्य यह होना चाहिए कि प्रत्येक गांव यथासम्भव सहकारिता के आधार पर, परन्तु साथ ही अच्छे किसानों का लाभ उठाते हुए, अपनी आवश्यकता-भर सुधरे हुए बीज स्वयं ही पैदा कर ले। कार्यक्रम-मूल्यांकन-संगठन ने मौके पर जाकर सुधरे हुए बीजों के बहुगुणन और वितरण के कार्यक्रमों का जो अध्ययन किया था, उससे वर्तमान अवस्था तथा बीज-फार्मों की कार्य-प्रणाली में अनेक कमज़ोरियां प्रकट हुई हैं। यह सुझाव दिया गया है कि राज्य-सरकारें अपनी तीसरी योजना के प्रस्तावों पर इन परिणामों के प्रकाश में पुनर्विचार करें।

28. विगत कुछ वर्षों में मिश्र जाति की मकई की उपज अधिक मात्रा में प्राप्त करने के लिए पर्याप्त अनुसन्धान-कार्य किया गया है और यह देखा गया कि नत्रजनयुक्त उर्वरक के अल्प मात्रा में प्रयोग से ही मिश्र जाति की मकई की उपज स्थानीय किस्मों की तुलना में दुगुनी हो गई। इसलिए यह प्रस्ताव किया गया है कि मिश्र जाति की मकई की खेती देशव्यापी स्तर पर आरम्भ की जाए। इसके लिए प्रथम कदम-स्वरूप तीसरी योजना की अवधि में मकई की खेती के कुल क्षेत्र के 25 प्रतिशत भाग में मिश्र जाति की मकई की खेती की जाएगी। यह भी इरादा है कि मिश्र जाति के ज्वार के बीज का भी उत्पादन प्रारम्भ किया जाए। खाद्य और कृषि-मन्त्रालय चुने हुए फार्मों में कुशल प्रबन्ध की परिस्थितियों में उत्पादन के विनिश्चय, शुद्धता बनाए रखने और अधिकतम उपज के उद्देश्य से शीघ्र ही एक बीज-निगम स्थापित करने का विचार रखता है। आधारभूत बीज के उत्पादन के लिए एक संगठन स्थापित किया जानेवाला है और इस बात पर बल दिया गया है कि सहकारी समितियां तथा अन्य उपयुक्त संगठन—जहां आवश्यक हो, वहां व्यक्तिगत रूप से लोग भी—प्रमाणित बीज-अभिकरणों के रूप में काम करें। बीजों की किस्म पर नियन्त्रण रखने और उनके उत्पादन, हाट-व्यवस्था तथा भेज-भिजाव को नियमित करने के लिए कानून बनाने का प्रश्न भी विचाराधीन है।

29. **पौध-संरक्षण :** गत दशाब्दी में पौध-संरक्षण से सम्बद्ध कार्य कृषि-कार्यक्रम के अन्य अनेक पहलुओं की तुलना में पिछड़े रहे। दूसरी योजना में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 1 करोड़ 60 लाख एकड़ क्षेत्र था। तीसरी योजना के लिए राज्यों ने 5 करोड़ एकड़ के लक्ष्य का संकेत दिया है। कीड़ों, कुतरनेवाले जानवरों और खेती को नष्ट करनेवाले अन्य प्राणियों से तथा बीमारियों, घास-पात, और पौधों को न बढ़ने देनेवाले अन्य निरुपयोगी पौधों से फसलों को कितनी हानि पहुंचती है, इसका निश्चित अनुमान लगा सकना कठिन है, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यह परिमाण विशाल ही होता है। इसी प्रकार, भांडारों में रखे जाने के बाद कीड़ों, चूहे-चुहियों, आदि-द्वारा नुक्सान पहुंचाए जाने के बाद खाद्यान्नों एवं अन्य कृषिजन्य वस्तुओं के मामले में काफी हानि उठानी पड़ती है। ऐसी हानियों को बहुत अंश तक रोका जा सकता है, यदि पौध-संरक्षण-

सम्बन्धी कार्य कृषि-कार्यक्रम के अभिन्न अंग के रूप में पर्याप्त रूप से किए जाएं। अनेक राज्यों के पौध-संरक्षण-संगठनों को विभिन्न स्तरों पर सुदृढ़ करने की आवश्यकता है। विशेष दलों के अतिरिक्त, जो बड़े क्षेत्रों में काम कर सकते हैं, अधिकतम विस्तार-परिणाम प्राप्त करने की दृष्टि से यह आवश्यक है कि हाथ से संचालित होनेवाले छिड़कने और फेंकने के उपकरण ग्राम-पंचायतों को बड़े पैमाने पर दिए जाएं। इनके साथ ही यह भी आवश्यक है कि कीड़ों को नष्ट करनेवाली औषधियां समय पर उपलब्ध करने की व्यवस्था हो।

30. **उन्नत किस्म के कृषि-उपकरण :** पहली और दूसरी योजना में जो कृषि-कार्यक्रम हाथ में लिए गए, उनमें उन्नत किस्म के कृषि-उपकरणों के सम्बन्ध में एक गम्भीर कमी रह गई। अच्छी किस्म के हलों से वैज्ञानिक कृषि करने और फसल काटने के तरीकों का महत्त्व सामान्यतः सभी स्वीकार करते हैं, परन्तु इस दिशा में विशिष्ट कार्रवाई मन्द और अपर्याप्त रही। जैसा कि बताया जा चुका है, उन्नत किस्म के कृषि-उपकरणों के प्रयोग-सम्बन्धी प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि कुछ अन्य दिशाओं में भी कदम उठाए जाएं।

31. तीसरी योजना में उन्नत किस्म के कृषि-उपकरणों को अपनाने-सम्बन्धी कार्यक्रम की मुख्य बातें संक्षेप में इस प्रकार हैं—

(1) कृषि-उपकरणों के लिए आवश्यक किस्म के लोहे और इस्पात की पर्याप्त आपूर्ति की व्यवस्था होनी चाहिए। उत्पादन और वितरण के सम्बन्ध में वस्तुतः कार्यान्वित किए जानेवाले कार्यक्रमों के आधार पर प्रति वर्ष पहले से ही आवश्यकताओं का एक निश्चित अनुमान लगा लेना चाहिए। उपकरणों के निर्माण की आवश्यकताओं का अनुमान मरम्मत और रख-रखाव के अनुमान से अलग लगाया जाना चाहिए। कृषि-प्रयोजनों के लिए लोहे और इस्पात की आपूर्ति राज्यों के कृषि-विभागों को सौंपना लाभप्रद होगा।

(2) विशेषज्ञ-दलों ने उन कृषि-उपकरणों का अस्थायी रूप से चुनाव कर लिया है, जिन्हें प्रत्येक राज्य में लोकप्रिय बनाया जाना चाहिए। इन सुझावों पर राज्य-सरकारों-द्वारा विचार किया जाना चाहिए और उत्पादन, वितरण आदि की व्यवस्था को ध्यान में रखकर अन्तिम चुनाव किया जाना चाहिए।

(3) भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद् ने दूसरी योजना की अवधि में अपने कार्य के एक अंग के रूप में उन्नत किस्म के कृषि-उपकरणों के सम्बन्ध में अनुसन्धान, और परीक्षण करने तथा प्रशिक्षण देने के लिए चार क्षेत्रीय केन्द्र खोले हैं। इन्हें सम्बद्ध राज्यों को हस्तान्तरित कर दिया जाएगा। प्रस्ताव है कि प्रत्येक राज्य में उन्नत किस्म के कृषि-उपकरणों के अनुसन्धान, परीक्षण और प्रशिक्षण-केन्द्रों को इस बात की स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि वे व्यावसायिक स्तर पर निर्माण-कार्य कर सकें, परन्तु मुख्यतः उन्हें अपना ध्यान सुधरे हुए प्रोटोटाइपों, बाज़ार में न मिलनेवाले उपकरणों और ऐसे विशेष किस्म के पुर्जों के उत्पादन

में केन्द्रित करना चाहिए, जिनका अन्य निर्माताओं-द्वारा प्रयोग किया जा सकता है। सघन कृषि-ज़िला-कार्यक्रम के अंग के रूप में अनेक ज़िलों में कर्मशालाएं स्थापित की जा रही हैं। उन्नत किस्म के उपकरणों के तेज़ी से प्रचार और उत्पादन को ज़िला और खंड-स्तर पर विकास-कार्यक्रम के रूप में हाथ में लेना चाहिए और कृषि-उपकरणों के निर्माण के लिए औद्योगिक सहकारी समितियों को सक्रिय समर्थन प्रदान किया जाना चाहिए ।

(4) अपनी परिस्थितियों के अनुसार राज्य-सरकारों को ज़िला और खंड-स्तर पर उन्नत किस्म के कृषि-उपकरणों का प्रदर्शन करने और उन्हें लोकप्रिय बनाने के लिए उचित विस्तार-व्यवस्था करनी चाहिए । इस प्रकार की इकाइयां देश के समस्त विकास-खंडों में खंड-स्तर पर स्थापित करना सम्भव नहीं हैं । इसलिए अनेक छोटी इकाइयां स्थापित करने की सम्भावनाओं पर विचार करना बड़ा लाभप्रद होगा । इसलिए ज़िला-स्तर पर ऐसी कुछ इकाइयां—मान लीजिए 4— स्थापित करने और उन्हें ज़िला-कृषि-अधिकारी से सम्बद्ध करने की सम्भावनाओं पर विचार किया जाना चाहिए । विकास-खंडों में, ये इकाइयां कृषि-विस्तार-अधिकारी और खंड-विकास-अधिकारी के निर्देश पर काम कर सकती हैं। ग्राम-स्तर के कार्यकर्त्ताओं और गांव के कारीगरों को ये इकाइयां आवश्यक ज्ञान प्रदान कर सकती हैं तथा किसानों के लिए उन्नत किस्म के उपकरणों का प्रदर्शन कर सकती हैं । खंड के मुख्यालय में प्रदर्शन और किराए पर सुगमता से उपलब्ध करने के लिए उपकरणों का स्टाक रहना चाहिए। इन उपकरणों को खंड के बजट से खरीदा जा सकता है और अतिरिक्त उपकरणों को राज्य के कृषि-विभाग-द्वारा प्रदान किया जा सकता है।

(5) राज्यों के कृषि-विभागों के कृषि-इंजीनियरी-अनुभाग को सुदृढ़ करने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए। कृषि-प्रशासन-समिति की रिपोर्ट की सिफारिशों को कार्य-रूप में परिणत करने के लिए राज्यों को जो वित्तीय सहायता प्रदान की गई है, वह राज्य-कृषि-विभागों की राज्य और ज़िला-स्तर पर कृषि-इंजीनियरी-सम्बन्धी कर्मचारी-व्यवस्था सुदृढ़ करने के लिए भी उपलब्ध होगी ।

(6) प्रति वर्ष अपनाए जानेवाले कार्यक्रम के आकार के अनुसार सुधरे हुए उपकरणों की आपूर्ति के लिए ऋण की व्यवस्था का भी आश्वासन होना चाहिए। यह ऋण सहकारी अभिकरणों-द्वारा और तकावी ऋण के रूप में दिया जाना चाहिए। सहकारी विकास के लिए बनाई गई योजनाओं में कृषि-उपकरणों के लिए ऋण देने की पर्याप्त व्यवस्था नहीं है। इस पहलू पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए ।

(7) 25 विस्तार-प्रशिक्षण-केन्द्रों में कृषि-कर्मशालाएं स्थापित की गई हैं। अब प्रस्ताव है कि समस्त विस्तार-प्रशिक्षण-केन्द्रों को कृषि-

कर्मशालाओं से सज्जित कर दिया जाना चाहिए, जिनमें ग्राम-स्तर के कार्यकर्त्ताओं, मैकेनिकों और कारीगरों को प्रशिक्षण की सुविधाएं प्राप्त हों।

(8) राज्य-स्तर पर एक समिति या मंडल हो सकता है, जिसमें किसानों एवं निर्माताओं के तथा कुछ अन्य प्रतिनिधि रहें। इसका काम उत्पादन-कार्यक्रमों के निर्माण, वितरण की उपयुक्त व्यवस्था के उपाय खोजने और कच्ची सामग्रियों की आपूर्ति की व्यवस्था करने में सहायता प्रदान करना हो।

कृषि-उपकरण-कार्यक्रम के विस्तार के साथ कृषि-इंजीनियरों की आवश्यकता उससे कहीं अधिक होगी, जो इस समय की प्रशिक्षण-सुविधाओं के अनुसार उपलब्ध हो सकते हैं। तकनीकी शिक्षा का कार्यक्रम बनाते समय इस पहलू पर ध्यान दिया गया है। तीसरी योजना में कृषि-उपकरण-कार्यक्रम के लिए कुल मिला कर 8 करोड़ रु० की व्यवस्था है।

32. **सघन कृषि-जिला-कार्यक्रम :** अधिक सघन प्रयत्नों के लिए कुछ क्षेत्रों के चुनाव की सिफारिश करते हुए फोर्ड-प्रतिष्ठान-द्वारा नियुक्त कृषि-उत्पादन-दल ने यह मत प्रकट किया है कि वर्तमान कम उपज की जिम्मेदारी मिट्टी, अथवा ऋतु-सम्बन्धी या अन्य किसी भौतिक कारण पर नहीं लादी जा सकती। इसलिए इस दल ने सुझाव दिया है कि प्रत्येक राज्य में उन्हीं क्षेत्रों और फसलों का चुनाव किया जाना चाहिए, जिनमें वृद्धि की सम्भावनाएं अधिक हों। इस प्रस्ताव के अनुसार ही प्रत्येक राज्य के एक जिले में सघन कृषि-जिला-कार्यक्रम को प्रारम्भ किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य चुने हुए क्षेत्र में कृषि-उत्पादन को तेजी से बढ़ाना और ऐसी नई खोजों और सम्मिश्र तरीकों का सुझाव देना है, जो अन्यत्र विशेष महत्त्व के हो सकते हैं। चुने हुए जिलों में इस बात का प्रयत्न किया जाएगा कि उत्पादन-वृद्धि के लिए, आवश्यक समस्त चीजें—यथा, उर्वरक, कृमिनाशक दवाएं, सुधरे हुए बीज और परिवहन-उपकरण, आदि जरूरत के अनुसार उपलब्ध किए जाएं। इसके साथ ही, बड़े पैमाने पर सम्मिश्र वैज्ञानिक प्रदर्शन भी किए जाएंगे। इस बात का भी प्रयत्न किया जाएगा कि ऋण इस रूप में प्रदान किया जाए कि वह सभी किसानों तक पहुंच सके—उन्हें भी मिले, जिन्हें अब तक ऋण पाने-योग्य नहीं समझा गया था। साथ ही, ऋण और हाट-व्यवस्था को सम्बद्ध किया जाएगा। विस्तार-कर्मचारी भी—विशेषतः कृषि और सहकारिता के क्षेत्र में काम करनेवाले कर्मचारी—अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक संख्या में उपलब्ध कराए जा रहे हैं, ताकि वे पंचायत-समितियों, ग्राम-पंचायतों और सहकारी संगठनों के साथ मिल कर सघन रूप से कार्य कर सकें। समय-समय पर स्तर के सर्वेक्षण और व्यवस्थित मूल्यांकन के द्वारा इन जिलों में कार्य के उच्च स्तर को स्थापित करने पर पूरा बल दिया जाएगा। सघन विकास के लिए चुने हुए जिलों को प्रत्येक राज्य की कृषि एवं अन्य सेवाओं के सामने विस्तार के सुधरे हुए तरीकों के विकास, और ग्राम तथा खंड-स्तर पर—साथ ही, व्यक्तिगत किसान के सन्दर्भ में—कृषि-उत्पादन के आयोजन के लिए विशेष अवसर प्रदान करने चाहिए।

तीसरी योजना में उत्पादन के अनुमान

33. जिन विकास-कार्यक्रमों की ऊपर चर्चा की गई है, वे तीसरी योजना के अनिवार्य लक्ष्यों के अंग हैं। फिर भी, विभिन्न प्रयोजनों से इस बात का अनुमान लगाना उपयोगी होगा कि यदि विभिन्न विकास-कार्यक्रमों को कार्यान्वित कर दिया जाए और सोचे गए पैमाने पर खेती के सुधरे हुए तरीकों को काम में लाया जाए, तो उत्पादन में कितनी वृद्धि होगी। यद्यपि हाल के वर्षों में यह प्रयत्न किया गया है कि अतिरिक्त उत्पादन के 'मापदंड' निश्चित परीक्षणात्मक आंकड़ों पर आधारित हों, तथापि जो कदम उठाए गए हैं, उन्हें निश्चित लक्ष्यों के लिए सन्तोषजनक आधार समझने के बदले एक अस्पष्ट-सा निदेशक-मात्र समझना चाहिए। फिर, कृषि के लिए मौसम-सम्बन्धी स्थितियों का सदा अत्यधिक महत्त्व रहता है। उत्पादन के निम्नलिखित अनुमानों की तुलना करते समय, जिन्हें तीसरी योजना के अन्त तक प्राप्त किया जा सकता है, इन सीमाओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

तालिका-संख्या 5
तीसरी योजना में उत्पादन के अनुमान

वस्तु	इकाई	आधार-स्तर उत्पादन 1960-61	अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य 1961-66	अनुमानित उत्पादन 1965-66 में	प्रतिशत वृद्धि
खाद्यान्न	लाख टन	760	240	1,000*	31.6
तेलहन	,,	71	27	98	38
गन्ना (गुड़)	,,	80	20	100	25
कपास	लाख गांठें	51	19	70	37.2
पटसन	,,	40	22	62‡	55
नारियल	करोड़	450	77.5	527.5	17.2
सुपारी	हज़ार टन	93	7	100	7.5
काजू	,,	73	77	150	105.5
काली मिर्च	,,	26	1	27	3.9
इलायची	,,	2.26	0.36	2.62	15.9
लाख	,,	50	12	62	24
तम्बाकू	,,	300	25	325	8.3
चाय	करोड़ पौंड	72.5	17.5	90	24.1
कहवा	हज़ार टन	48	32	80	67.7
रबड़	,,	26.4	18.6	45	70.5

***अनुमान है कि सन् 1965-66 में चावल का उत्पादन 4 करोड़ 50 लाख टन, गेहूं का 1 करोड़ 50 लाख टन, अन्य अनाजों का 2 करोड़ 30 लाख टन और दालों का 1 करोड़ 70 लाख टन होगा।**

‡इसमें मेस्ता सम्मिलित नहीं है, जिसकी तीसरी योजना में 13 लाख अतिरिक्त गांठें उपलब्ध होंगी।

विभिन्न राज्यों में प्रमुख फसलों की उत्पादन-वृद्धि का अनुमान इस अध्याय के अनुबन्ध 2 की तालिका-माला में दिया गया है।

34. उत्पादन-वृद्धि के अनुमानों के अनुसार कृषि-उत्पादन का सूचनांक (आधार : 1949-50) सन् 1960-61 के 135 से बढ़ कर सन् 1965-66 में 176 हो जाएगा। इस 5 वर्ष की अवधि में कुल वृद्धि लगभग 30 प्रतिशत की होगी। ऊपर उत्पादन-वृद्धि का जो परिमाण दिखाया गया है, वह इस मान्यता पर ही सम्भव हो सकता है कि विकास-कार्यक्रमों को प्रभावशाली ढंग से जनता के व्यापक सहयोग से तथा स्थानीय जनशक्ति एवं अन्य साधनों का प्रयोग करके कार्यान्वित किया जाएगा और प्रत्येक खंड में खेती के सुधरे हुए तरीकों को अपनाने के लिए सघन प्रयत्न किए जाएंगे। नीचे की तालिका में पौंडों में दूसरी योजना में हुई प्रति एकड़ औसत उपज की तीसरी योजना की सम्भावित उपज के साथ तुलना की गई है :

तालिका-संख्या 6

दूसरी और तीसरी योजना में औसत उत्पादन और प्रति एकड़-उपज

फसल	औसत वार्षिक उत्पादन (लाख टन)		औसत उपज (पौंड : प्रति एकड़)		दूसरी योजना की अपेक्षा तीसरी योजना में प्रतिशत वृद्धि	
	1956-57 से 1960-61	1961-62 से 1965-66	1956-57 से 1960-61	1961-62 से 1965-66	उत्पादन	उपज
खाद्यान्न	709	868	575	670	22.4	16.5
(1) चावल	293	394	807	1,029	34.4	27.5
(2) गेहूं	93	121	662	795	30.1	20.1
तेलहन	65	86	451	500	32.3	10.9
गन्ना (गुड़)	73	93	3,206	3,788	27.4	18.2
कपास (लाख गांठें)	46	61	95	108	32.6	13.7
पटसन ,,	44	51	1,035	1,200	15.9	15.9

उपज में वृद्धि का अधिकांश भाग अनिवार्यतः उन क्षेत्रों से प्राप्त करना होगा, जो सिंचाई के अन्तर्गत हैं या जहां वर्षा निश्चित रूप से होती है, परन्तु अन्य क्षेत्रों में भी मिट्टी-संरक्षण और बारानी खेती-द्वारा उपज में कुछ वृद्धि हो सकती है।

35. तालिका-संख्या 5 में तीसरी योजना के लिए उत्पादन के जो अनुमान दिए गए हैं, उनसे प्रति व्यक्ति-उपलब्धि में पर्याप्त वृद्धि का संकेत मिलता है। खाद्यान्नों के बारे में प्रति व्यक्ति-उपलब्धि सन् 1960-61 के 16 औंस से बढ़ कर सन् 1965-66 में प्रति दिन 17.5 औंस हो जाएगी। इसी तरह, वस्त्र की खपत 15.5 गज़ से बढ़ कर 17.2 गज़ प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष हो जाएगी। खाद्य तेलों की खपत तीसरी योजना की अवधि में 0.4 औंस से बढ़ कर 0.5 औंस प्रति दिन हो जाएगी।

36. तीसरी योजना में भूमि-प्रयोग के तरीकों में सम्भावित परिवर्तनों के बारे में जो प्राथमिक अनुमान लगाए गए हैं, उनसे पता चलता है कि बुआईवाला कुल क्षेत्र

लगभग 32.7 करोड़ एकड़ से बढ़ कर 33.5 करोड़ एकड़ और एक से अधिक बार बुआईवाला क्षेत्र 5.2 करोड़ एकड़ से बढ़कर 6.7 करोड़ एकड़ हो जाएगा। बेकार पड़े कृषि-योग्य क्षेत्र के 4.7 करोड़ एकड़ से घट कर 4.1 करोड़ एकड़ हो जाने की आशा है।

कृषि-कार्यक्रम के अन्य पहलू

37. **व्यावसायिक फसलें :** दूसरी योजना में व्यावसायिक फसलों के उत्पादन के जो लक्ष्य निश्चित किए गए थे, उनकी प्राप्ति में काफी कमी रही—केवल गन्ना अपवाद रहा। इसलिए तीसरी योजना में यह आवश्यक है कि इन फसलों के—विशेषतः कपास, पटसन और तेलहन के—उत्पादन में वृद्धि के लिए विशेष प्रयत्न किए जाएं। छोटी सिंचाई, बीज-फार्म, पौध-संरक्षण, आदि कार्यक्रमों के अतिरिक्त, जिनसे सभी प्रकार की फसलों को लाभ होता है, विभिन्न व्यावसायिक फसलों के लिए विशेष विकास-कार्यक्रम के अधीन 26 करोड़ रु० के व्यय की व्यवस्था की गई है। योजना के आगे बढ़ने के साथ-साथ व्यावसायिक फसलों की विशेष विकास-योजना के लिए और अधिक साधन उपलब्ध करना आवश्यक हो सकता है। इन फसलों के लिए उर्वरकों की पर्याप्ति आपूर्ति की दिशा में विशेष सावधानी बरती जाएगी। यह भी आवश्यक हो सकता है कि रागी के क्षेत्र को व्यावसायिक फसल में बदलने के लिए सुविधा प्रदान की जाए। उद्देश्य केवल उत्पादन का उच्च स्तर प्राप्त करना नहीं है, अपितु उन विभिन्न किस्मों की बड़े पैमाने पर आपूर्ति करनी है, जिनकी निर्यात के लिए बड़ी मांग है, या जिनसे आयात में कमी हो सकती है।

38. विभिन्न वस्तु-समितियों-द्वारा अलग-अलग व्यावसायिक फसलों के लिए विस्तृत कार्यक्रम तैयार किए गए हैं। मुख्यतः, इनमें दूसरी योजना की अवधि में अपनाए गए कार्यक्रमों के विस्तार और उन्हें अधिक ज़ोरदार करने की बात कही गई है। इन कार्यक्रमों की कुछ बातों का, जिन पर तीसरी योजना में विशेष बल दिया जा रहा है, यहां संक्षेप में उल्लेख किया जा सकता है।

यह प्रस्ताव किया गया है कि कपास के, विशेषतः लम्बे रेशेवाली कपास के—जैसे, मैसूर और केरल में होनेवाली 'सी-आइसलैंड' कपास तथा गुजरात और महाराष्ट्र की मिश्र जाति की कपास के—उत्पादन को बढ़ाने के लिए आवश्यक समर्थन प्रदान किया जाए। तीसरी योजना के अन्त तक 'सी-आइसलैंड' कपास के क्षेत्र को वर्तमान 20 हज़ार एकड़ से बढ़ा कर 3 लाख एकड़ किया जाएगा।

पटसन-विकास के कार्यक्रमों की दिशा में मुख्यतः पानी में गलाने के लिए तालाबों तथा उन्नत किस्म के बीजों की व्यवस्था करके किस्म में सुधार करना है। तन्तुदायी अन्य पूरक वस्तुओं—जैसे, मेस्ता, सीसल और रामी, आदि—के विकास पर भी अधिक ध्यान दिया जाएगा।

तेलहन के उत्पादन में वृद्धि तीसरी योजना के गम्भीर लक्ष्यों में से एक है, जो बढ़ी हुई घरेलू मांग को पूरा करने और जो शेष बच जाए, उसका निर्यात करने के लिए है। निर्यात के लिए वनस्पति-तेल की उपलब्धि बढ़ाने के लिए प्रस्ताव है कि तीसरी योजना की अवधि में उपलब्ध बिनौलों में कम-से-कम आधे बिनौलों का प्रयोग तेल

निकालने के लिए किया जाए और निष्कासन-यन्त्र से बनी खली के निष्कषण में पर्याप्त वृद्धि की जानी चाहिए। अखाद्य तेलों—यथा महुआ, नीम और धान की भूसी, आदि—के विकास से सम्बद्ध समस्याओं पर भी अधिक ध्यान दिया जाएगा।

खाद्य और कृषि-मन्त्रालय का विचार 'मसाले और काजू-समिति' की स्थापना करने का है, जो अनुसन्धान करेगी और इन फसलों के विकास के लिए पथ-प्रदर्शन करेगी। काजू के विकास-कार्यक्रम में 3 लाख एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र में काजू की खेती करना भी शामिल है।

तम्बाकू के मामले में, मुख्य समस्या ऐसी किस्मों के उत्पादन की है, जिनकी विदेशों में मांग है। इसलिए वरजीनिया तथा तम्बाकू की ऐसी ही अन्य किस्मों के सुधार पर अधिक ध्यान दिया जाएगा और इसके लिए शुद्ध बीजों की आपूर्ति, आवश्यक प्रकार के उर्वरकों की व्यवस्था, पत्तों की सावधानीपूर्ण साज़-सम्भाल और सुखाने की अच्छी व्यवस्था की जाएगी। तीसरी योजना की अवधि में उत्पादन को 3 लाख टन से बढ़ा कर 3,25,000 टन करने का इरादा है और यह वृद्धि प्रायः सम्पूर्णतः वरजीनिया तम्बाकू के उत्पादन के क्षेत्र में होगी।

39. **चाय, कहवा और रबड़** : बागानों की फसलों को—विशेषतः चाय, कहवा और रबड़ को—तीसरी योजना में उच्च प्राथमिकता दी गई है। योजना में चाय का निर्यात 4,650 लाख पौंड से बढ़ा कर 5,500 लाख पौंड करने तथा कहवा का निर्यात, जो इस समय 3,40,000 हंडरवेट है, बढ़ा कर दुगुना करने पर बल दिया गया है। हाल के वर्षों में रबड़ की खपत बहुत तेज़ी से बढ़ी है; अभी इस खपत का अनुमान 53,000 टन है। तीसरी योजना के अन्त में रबड़ की आवश्यकता का अनुमान लगभग 1 लाख टन है। सोचा गया है कि तीसरी योजना की अवधि में प्राकृतिक रबड़ का उत्पादन 26,000 टन से बढ़ा कर 45,000 टन कर दिया जाए। इसके साथ ही 15,000 टन संशोधित रबड़ और 50,000 टन कृत्रिम रबड़ का उत्पादन किया जाए। सभी बागान-फसलों के लिए बड़े पैमाने पर उर्वरक उपलब्ध किए जाएंगे। पुनः बागान लगाने के कार्यक्रम को सुगम बनाने के लिए आवश्यक वित्त प्रदान करने की भी व्यवस्था की गई है।

40. **बागवानी** : दूसरी योजना की अवधि में फल-उत्पादन के विकास के लिए कई नई योजनाएं लागू की गईं। इनमें नए बाग लगाने के लिए और पुरानों के नवीकरण के लिए वित्तीय सहायता की व्यवस्था और मालियों को प्रशिक्षण की सुविधाएं देना भी शामिल है। दूसरी योजना की अवधि में 1,66,000 एकड़ भूमि में नए बाग लगाए गए, 1,32,000 एकड़ के पुराने बागों को नया रूप दिया गया और 4,000 मालियों को प्रशिक्षित किया गया। इस समय फलों और सब्ज़ियों की खेतीवाले क्षेत्र का अनुमान लगभग 60 लाख एकड़ है। इसके लगभग आधे हिस्से में फल की खेती होती है। तीसरी योजना में फल और सब्ज़ियों के कुल कृषि-क्षेत्र के 70 लाख एकड़ तक बढ़ने की आशा है। सोचा गया है कि 2,35,000 एकड़ क्षेत्र में नए बाग लगाए जाएं और 2,50,000 एकड़ क्षेत्र के पुराने बागों को नया रूप दिया जाए। जिन योजनाओं पर पहले से काम हो रहा है, उनको जारी रखने के अतिरिक्त राज्यों की योजनाओं में पौधशालाओं

और उद्यान-बस्तियों के साथ-साथ छोटे उद्यानों की स्थापना करने की भी व्यवस्था है। ये पौधशालाएं विश्वसनीय जाति के और काम की गारंटीवाले पौधे उपलब्ध करने में सहायता करेंगी।

सब्जियों के उत्पादन के विकास के लिए राज्यों की योजनाओं में सुधरे हुए बीजों की आपूर्ति, पौध-संरक्षण के उपायों और तकनीकी परामर्श देने की व्यवस्था है। साग-सब्जियों के बीजों के प्रमाणीकरण के लिए भी व्यवस्था की जा रही है।

फलों और सब्जियों के संरक्षण के विकास के लिए गत वर्षों में फलों और सब्जियों के लिए टीन की चादरों पर सहायता-अनुदान, निर्यात किए जानेवाले माल के लिए प्रयुक्त चीनी पर उत्पाद-शुल्क में छूट और प्रशिक्षण की सुविधाओं, तकनीकी परामर्श एवं विकास-ऋण की व्यवस्थाओं के द्वारा सहायता दी जा रही है। पहली योजना के अन्त में फलों और सब्जियों का उत्पादन 20,000 टन था, जो दूसरी योजना के अन्त में बढ़ कर 40,000 टन हो गया। आशा है कि तीसरी योजना के अन्त में यह उत्पादन 1,00,000 टन हो जाएगा।

41. **सहायक खाद्य पदार्थ :** सहायक खाद्य-पदार्थों में मुख्यतः आलू, चुकन्दर, टेपिओका और इतर सब्जियां तथा फल एवं कुछ विधायित फलों से तैयार की गई वस्तुएं आती हैं। तीसरी योजना के कार्यक्रम में इन वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाना भी सम्मिलित है। इनके अधिकाधिक प्रयोग का उद्देश्य यह है कि खाद्यान्नों की खपत का जो स्वरूप है, उसमें विभिन्नता आए, तथा सन्तुलित आहार-सेवन में वृद्धि हो। योजना में, शीघ्र नष्ट होनेवाले खाद्यान्नों के वातानुकूलित परिवहन, पानी सोखनेवाली इकाइयों की स्थापना, कोल्ड स्टोरेज के द्वारा संरक्षण और समुचित उपयोग तथा प्रोटीन की अधिकतावाले खाद्यान्नों के विकास के कार्यक्रम भी शामिल हैं।

42. **कृषि-सम्बन्धी हाट-व्यवस्था :** देश में कुल बाज़ारों की संख्या 2,500 है। नियमित बाज़ारों की संख्या, जो पहली योजना के अन्त में 470 थी, दूसरी योजना के अन्त में बढ़ कर 725 हो गई। प्रस्ताव है कि तीसरी योजना में अन्य अवशिष्ट हाटों को भी नियमन की योजना के अन्तर्गत ले आया जाए। कृषि (वर्गीकरण और हाट-व्यवस्था) अधिनियम के अधीन वस्तुओं के वर्गीकरण के कार्यक्रम को भी बढ़ाया जा रहा है।

बाज़ार-सूचना-सेवा के अधीन इस समय 500 बाज़ार हैं। प्रस्ताव है कि तीसरी योजना में सूचना देनेवाले केन्द्रों की संख्या में और अधिक वृद्धि की जाए, ताकि देश के सभी क्षेत्रों की पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो सके और बाज़ारों के समाचारों का प्रसार संगठित रूप से हो सके।

कृषि-हाट-व्यवस्था का एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण पहलू विभिन्न स्तरों पर सहकारी हाट-व्यवस्था-संगठनों का विकास है। सहकारी हाट-व्यवस्था-समितियों के विस्तार के कार्य-क्रम की एक पूर्ववर्ती अध्याय में चर्चा हो चुकी है।

43. **भांडारण :** सरकारी भांडारण-क्षमता के विस्तार, गोदाम-निगमों और विभिन्न सहकारी संगठनों के कार्यक्रम दूसरी योजना में प्रारम्भ किए गए थे। इस समय केन्द्रीय सरकार की भांडारण-क्षमता 25 लाख टन की है। इसमें से लगभग एक-तिहाई पर सरकारी स्वामित्व है। प्रस्ताव है कि इस क्षमता को बढ़ा कर 50 लाख टन कर दिया जाए, जिसमें से 35 लाख टन पर सरकारी स्वामित्व हो। केन्द्रीय और राज्यीय गोदाम-निगमों के गोदामों की भांडारण-क्षमता 3,50,000 टन की है। इसमें 16 लाख टन की वृद्धि की जाएगी।

इसके अतिरिक्त, सहकारी हाट-व्यवस्था-समितियों और प्राथमिक समितियों के गोदामों की भी क्षमता 8,00,000 से बढ़ कर 20 लाख टन हो जाने की आशा है। योजना में सरकार-द्वारा खाद्यान्नों के संग्रह के लिए अतिरिक्त गोदाम बनाने के लिए 25 करोड़ रु०, और गोदाम-कार्यक्रमों के लिए 8 करोड़ रु० प्रदान किए गए हैं। योजना के अधीन मूल्य-नीति को कार्यान्वित करने में भांडारण-क्षमता की व्यवस्था एक महत्त्वपूर्ण कदम है और इसी प्रकार के अन्य साधन, जिनकी आवश्यकता होगी, उपलब्ध कराए जाएंगे।

44. **कृषि-शिक्षा :** कृषि-शिक्षा और अनुसन्धान के विस्तार से सम्बद्ध तीसरी योजना के प्रस्तावों पर 'तकनीकी शिक्षा' और 'वैज्ञानिक एवं टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान' शीर्षक अध्यायों में विचार किया गया है। तीसरी योजना में कृषि-कालेजों की संख्या 53 से बढ़ कर 57 हो जाएगी तथा छात्रों की भर्ती की वार्षिक क्षमता 5,600 से बढ़ कर 6,200 हो जाएगी। योजना की अवधि में कृषि-स्नातकों की कुल आवश्यकता का अनुमान 20,000 है और इस आवश्यकता के पूरा हो जाने की आशा है।

45. दूसरी योजना की अवधि में उत्तर प्रदेश के पन्तनगर (रुद्रपुर) में एक कृषि-विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। अन्य कृषि-विश्वविद्यालय स्थापित करने का प्रस्ताव भी विचाराधीन है। कृषि-विश्वविद्यालयों को कृषि के विकास में विशेष भूमिका निभानी है, इस विचार को कृषि-शिक्षा-सम्बन्धी अनेक विशेषज्ञ-रिपोर्टों में प्रतिपादित किया गया है। इस बात पर विशेष रूप से बल दिया गया है कि यदि भारत की कृषि का स्तर अन्य उन्नत देशों के समकक्ष ऊंचा उठाना है, तो परम्परागत ढंग की कृषि-शिक्षा, जो अनुसन्धान और विस्तार से अच्छी प्रकार सम्बद्ध नहीं है, पर्याप्त नहीं है—विशेष रूप से उस अवस्था में, जबकि बहुसंख्यक किसानों की, जिसमें से अधिकांश बहुत छोटे-छोटे खेतों में खेती करते हैं, समस्याएं बड़ी पेचीदी और परिवर्तनशील हैं। कृषि-विश्वविद्यालय इस बात का प्रयत्न करते हैं कि अनेक सम्बद्ध क्षेत्रों—कृषि, पशुपालन, पशु-चिकित्सा-विज्ञान, दूध-उद्योग, बुनियादी विज्ञानों और मानवीय विज्ञानों—को एक साथ उपस्थित किया जाए। मूलभूत विचार यह है कि कृषि-विश्वविद्यालयों का उत्तरदायित्व कृषि के प्रायोगिक अध्यापन और आधारभूत अनुसन्धान की सीमा से आगे तक विस्तृत है और विश्वविद्यालय-द्वारा सेवित क्षेत्र के किसानों के प्रति उनका एक विशेष कर्त्तव्य है—विशेष रूप से उनका कर्त्तव्य है कि वे उनके साथ काम करते हुए उनकी समस्याओं पर विचार-विमर्श करें, अनुसन्धान के परिणामों को उन तक पहुंचाएं और कृषि एवं कृषि-शिक्षा के अध्यापन, अनुसन्धान और विस्तार को एक समन्वित रूप प्रदान करें।

46. **कृषि-अनुसन्धान :** कृषि-अनुसन्धान के लिए योजना में 28 करोड़ रु० के व्यय की व्यवस्था है—लगभग 11 करोड़ रु० केन्द्र में और 17 करोड़ रु० राज्यों में। पहले कृषि-अनुसन्धान का काम मुख्यतः सरकारी फार्मों और अनुसन्धान-केन्द्रों तक ही सीमित रहता था और इसके परिणाम काफी मात्रा में किसानों तक नहीं पहुंचते थे। विस्तार-कार्यों से अनुसन्धान-कार्यकर्त्ता किसानों के निकट सम्पर्क में आ गए हैं तथा उनके सामने कुछ नई समस्याएं उपस्थित हो गई हैं। राज्यों के अनुसन्धान-संगठनों को इन समस्याओं को सुलझाने के लिए सुदृढ़ किया जा रहा है। गेहूं, चावल, रागी, कपास और तेलहन-जैसी फसलों के लिए राज्यों में किए जा रहे कार्य के अतिरिक्त क्षेत्रीय आधार पर अनुसन्धान की सुविधाओं को विकसित करने का प्रस्ताव है। योजना में नदी-घाटी-परियोजनाओं की सिंचाई-प्रणालियों के अध्ययन और फसलों के लिए पानी की आवश्यकताओं, नई

फसलों की अदला-बदली और सिंचाईवाले क्षेत्र में उर्वरकों के प्रयोग से सम्बद्ध समस्याओं का निश्चय करने की व्यवस्था है। तीसरी योजना में अनुसन्धान के जो नए केन्द्र स्थापित किए जाने हैं, उनमें मिट्टी-विज्ञान और मिट्टी-तत्व-संस्था, चारे और घासवाली भूमि-सम्बन्धी अनुसन्धान-संस्था और विष-अनुसन्धान-संस्था भी शामिल हैं।

47. **कृषि-प्रशासन :** कृषि-विकास के विशाल कार्यक्रमों को देखते हुए, विगत कई वर्षों से राज्यों के कृषि-विभागों को सुदृढ़ करने की आवश्यकता अनुभव की जा रही है। इस सम्बन्ध में 3 वर्ष पूर्व कृषि-प्रशासन-समिति ने अनेक प्रस्ताव रखे थे। इनमें विभिन्न स्तरों पर कर्मचारियों को सुसंगठित करना, शर्तों और काम की स्थितियों पर पुनर्विचार करना, और प्रशिक्षण, शिक्षा तथा अनुसन्धान की सुविधाओं का विस्तार करना भी शामिल है। बहुत हद तक राज्यों की योजनाओं में कृषि-विभागों को सुदृढ़ बनाने के कार्यक्रम भी सम्मिलित हैं, जिन्हें समिति की सिफारिशों के प्रकाश में तैयार किया गया है। फिर भी, राज्य-कृषि-प्रशासन को सुसंगठित करने के प्रस्तावों को कार्यान्वित करने में कुछ विलम्ब हो गया है। इसलिए यह सुझाव दिया गया है कि इन्हें पहली प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

48. **सरकारी फार्म :** सन् 1956 में राजस्थान के सूरतगढ़ नामक स्थान पर 30 हज़ार एकड़ क्षेत्र में एक केन्द्रीय यन्त्रीकृत फार्म स्थापित किया गया था। इसी प्रकार के अन्य सरकारी फार्म स्थापित करने की सम्भावनाओं का अध्ययन किया गया है और यह प्रस्ताव रखा गया है कि तीसरी योजना में एक और यदि सम्भव हो, तो दो नए फार्म स्थापित किए जाएं।

49. **कृषि-मूल्य-नीति :** तीसरी योजना के लिए निर्धारित कृषि-उत्पादन के उच्च लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए यह बात महत्त्वपूर्ण है कि उत्पादक को यह पूरा विश्वास होना चाहिए कि इसके लिए जो अतिरिक्त प्रयत्न और पूंजी लगेगी, उसका उसे पर्याप्त प्रतिफल मिलेगा। गत कुछ वर्षों में देशों के मूल्यों तथा उत्पादन में जो परिवर्तन हुए हैं, उनसे यह प्रकट होता है कि मूल्यों में भारी उतार-चढ़ाव का उत्पादक की उत्पादन बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयत्न करने की क्षमता पर प्रभाव पड़ता है। सन् 1958 में पटसन के मूल्यों में गिरावट का बाद के वर्षों के उत्पादन पर प्रभाव पड़ा। योजना की अवधि में महत्त्वपूर्ण अनाजों और कपास, तेलहन तथा पटसन-जैसी व्यावसायिक फसलों के काम के अनुकूल न्यूनतम मूल्यों के आश्वासन से उत्पादन बढ़ाने के लिए आवश्यक प्रोत्साहन मिलेगा, और इस प्रकार तीसरी योजना में परिकल्पित विभिन्न विकास-कार्यक्रमों की प्रभावशीलता में वृद्धि होगी। इस लक्ष्य को सामने रखते हुए सरकार को किन मूल्यों पर क्रय-विक्रय करना चाहिए, इसका निश्चय बुआई का मौसम आने से काफी पहले कर लिया जाना चाहिए। जहां निम्नतम और अधिकतम मूल्य निश्चित कर दिए गए हैं, वहां वे उत्पादन की आवश्यकताओं से सम्बद्ध होने चाहिए और न्यूनतम तथा अधिकतम मूल्यों का अन्तर भी बहुत अधिक नहीं होना चाहिए।

50. सहकारी हाट-व्यवस्था-समितियां किसानों को एक निश्चित सीमा तक स्थगन-शक्ति प्रदान करने में—विशेषतः तब, जबकि मूल्यों में मौसमी प्रतिकूल उतार-चढ़ाव आते हैं—महत्त्वपूर्ण साधन हैं। इसलिए उपयुक्त स्तरों पर मुख्य कृषिजन्य वस्तुओं का क्रय-विक्रय करनेवाली सहकारी समितियां और सरकारी अभिकरण कृषि-लक्ष्यों तथा तीसरी योजना में निर्धारित मूल्य-नीति के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक संगठन के मुख्य तत्व-सदृश हैं।

अनुबन्ध 1

(1) तीसरी योजना में बड़ी और छोटी सिंचाई-योजनाओं से लाभान्वित होनेवाला कुल क्षेत्र

(हजार एकड़)

राज्य/संघीय क्षेत्र	बड़ी सिंचाई	छोटी सिंचाई-व्यवस्था		
		योग	कृषि-क्षेत्र	सामुदायिक विकास-क्षेत्र
आन्ध्र प्रदेश	1,557	1,427	1,177	250
असम	79	370	220	150
बिहार	2,000	1,064	564	500
गुजरात	864	1,190	1,050	140
महाराष्ट्र	708	1,210	1,136	74
केरल	255	56	192	64
मध्य प्रदेश	850	711	536	175
मद्रास	241	578	524	54
मैसूर	876	182	142	40
उड़ीसा	946	270	120	150
पंजाब	1,301	1,029	763	266
राजस्थान	1,145	479	339	140
उत्तर प्रदेश	1,042	2,945	1,812	1,133
पश्चिम-बंगाल	488	904	812	92
जम्मू-कश्मीर	38	54	29	25
दिल्ली	—	7	6	1
हिमाचल प्रदेश	—	36	25	11
मणिपुर	—	15	14	1
त्रिपुरा	—	20	12	8
उत्तर-पूर्व-सीमान्त अभिकरण	—	7	5	2
योग	12,786	12,754	9,478	3,276

(2) तीसरी योजना में मिट्टी-संरक्षण और भूमि-विकास से लाभान्वित होनेवाला क्षेत्र

(हज़ार एकड़)

राज्य/संघीय क्षेत्र	खेतों में मिट्टी-संरक्षण	बारानी खेती	भूमि-पुनरुद्धार	लोनी और क्षारीय भूमि का पुनरुद्धार
आन्ध्र प्रदेश	550	2,000	229	—
असम	29	1	18	—
बिहार	288	10	75	—
गुजरात	1,179	1,200	12	45
महाराष्ट्र	5,000	3,160	24	37
केरल	70	—	—	—
मध्य प्रदेश	1,392	4,500	260	—
मद्रास	340	400	225	1
मैसूर	270	540	22	38
उड़ीसा	300	500	—	8
पंजाब	46	500	240	50
राजस्थान	178	4,850	2,000	10
उत्तर प्रदेश	1,067	4,004	10	10
पश्चिम-बंगाल	114	100	432	—
जम्मू-कश्मीर	7	—	20	—
दिल्ली	—	5	—	4
हिमाचल प्रदेश	18	20	—	—
योग	10,848	21,790	3,567	203

(3) तीसरी योजना में सुधरे हुए बीजों के अन्तर्गत खाद्यान्न-फसलों का क्षेत्र

(हज़ार एकड़)

राज्य/संघीय क्षेत्र	1960-61	1965-66
आन्ध्र प्रदेश	1,230	12,780
असम	438	3,000
बिहार	2,618	11,800
गुजरात	747	3,025
महाराष्ट्र	2,931	14,538
केरल	500	1,200
मध्य प्रदेश	6,300	15,298
मद्रास	7,250	9,450
मैसूर	4,869	8,876
उड़ीसा	1,200	6,200
पंजाब	3,000	9,000
राजस्थान	4,140	17,000
उत्तर प्रदेश	18,961	29,301
पश्चिम-बंगाल	1,000	6,000
जम्मू-कश्मीर	147	240
दिल्ली	1	1
हिमाचल प्रदेश	107	395
मणिपुर	—	140
पांडिचेरी	2	9
योग	55,441	1,48,253

(4) तीसरी योजना की अवधि में रासायनिक उर्वरकों की खपत

(हज़ार टन)

राज्य/संघीय-क्षेत्र	अमोनियम सल्फेट		सुपरफास्फेट		पोटाश-म्यूरिएट	
	1960-61	1965-66	1960-61	1965-66	1960-61	1965-66
आन्ध्र प्रदेश	273	524	90	350	—	—
असम	10	60	5	25	—	—
बिहार	50	400	15	120	1	20
गुजरात	95	300	48	90	—	13
महाराष्ट्र	100	581	53	324	—	—
केरल	37	191	7	190	1	56
मध्य प्रदेश	26	200	5	40	—	—
मद्रास	150	580	60	320	12	90
मैसूर	87	300	20	320	—	11
उड़ीसा	30	200	8	50	—	2
पंजाब	40	280	2	24	—	—
राजस्थान	15	100	4	33	—	—
उत्तर प्रदेश	297	990	60	300	8	80
पश्चिम-बंगाल	40	500	25	250	—	—
जम्मू-कश्मीर	4	14	—	—	—	—
दिल्ली	1	1	—	—	—	—
हिमाचल प्रदेश	—	1	—	1	—	—
पांडिचेरी	25	25	2	5	1	6
योग	1,280	5,247	404	2,442	23	278*

*'के$_2$ ओ' के सन्दर्भ में खपत का लक्ष्य 1,44,000 टन होना चाहिए। इसकी तुलना में पैराग्राफ 10 और 22 में दी गई कम संख्या का कारण यह है कि उसमें उन राज्यों की खपत के आंकड़े सम्मिलित नहीं हैं, जिनकी सूचनाएं उपलब्ध नहीं हैं।

(5) तीसरी योजना में कार्बनिक और हरी खाद के उत्पादन का अनुमान

राज्य/संघीय क्षेत्र	शहरी कूड़े की खाद 1960-61 (००० टन)	शहरी कूड़े की खाद 1965-66 (००० टन)	ग्रामीण कूड़े की खाद 1960-61 (००० टन)	ग्रामीण कूड़े की खाद 1965-66 (००० टन)	हरी खाद 1960-61 (००० एकड़)	हरी खाद 1965-66 (००० एकड़)
आन्ध्र प्रदेश	262	334	9,439	12,874	3,200	4,500
असम	8	16	800	900	200	1,000
बिहार	75	177	1,000	7,756	1,095	3,095
गुजरात	118	318	246	371	10	100
महाराष्ट्र	342	447	459	1,055	22	1,022
करल	22	55	94	269	250	1,050
मध्य प्रदेश	160	365	130	1,960	50	2,200
मद्रास	400	600	1,400	3,000	3,000	6,000
मैसूर	310	425	3,000	5,380	500	750
उड़ीसा	20	44	2,340	13,956	1,200	7,000
पंजाब	200	400	6,100	8,900	350	1,350
राजस्थान	444	968	887	269	130	630
उत्तर प्रदेश	580	750	56,060	82,340	650	9,000
पश्चिम-बंगाल	40	100	500	7,500	1,000	3,000
जम्मू-कश्मीर	—	15	75	100	—	10
दिल्ली	5	40	—	—	2	30
हिमाचल प्रदेश	—	—	120	220	28	78
मणिपुर	—	—	20	35	—	3
त्रिपुरा	1	2	67	148	—	—
योग	2,987	5,056	82,737	1,48,033	11,687	40,818

अनुबन्ध 2

तीसरी योजना में कृषि-उत्पादन में वृद्धि का अनुमान

(1) खाद्यान्न

(लाख टन)

राज्य	1955-56	1958-59 संशोधित अनुमान	1959-60 अन्तिम अनुमान	1960-61 अनुमानित	तीसरी योजना में अतिरिक्त उत्पादन	तीसरी योजना के अन्त में अनुमानित उत्पादन	तीसरी योजना में प्रतिशत वृद्धि
आन्ध्र प्रदेश	55.36	63.64	62.96	63.95	24.04	87.69	37.6
असम	17.06	16.6	16.6	17.69	4.2	21.89	23.7
बिहार	51.84	68.76	59.39	62.62	20.27	82.89	32.4
गुजरात } महाराष्ट्र	72.55	89.28	75.07	21.16	8.31	29.47	39.3
				62.66	17.32	79.98	27
केरल	8.87	9.65	10.55	10.42	4	14.42	38.4
मध्य प्रदेश	76.17	92.85	90.31	90.74	16.68	107.42	18.4
मद्रास	45.38	49.25	50.96	51.72	16.54	68.26	32
मैसूर	47.83	37.17	36.27	38.5	10.04	48.54	26.1
उड़ीसा	24.63	24.52	24.47	40	16.15	56.15	46.5
पंजाब	47.85	60.78	53.67	60	18.5	78.5	30.8
राजस्थान	41.75	50.93	47.26	50.35	16	66.35	31.8
उत्तर प्रदेश	118.86	133.99	131.82	135.39	47.45	182.84	35.1
पश्चिम-बंगाल	49.73	45.26	46.15	52.24	14.49	66.73	27.8
जम्मू-कश्मीर	4.74	5.49	4.87	4.83	1	5.83	20.5
संघीय क्षत्र	5.32	6.86	7.15	7.15	1.05	8.2	14.7
योग	657.94	755.03	717.5	769.42	236.05	1,005.47	31.6

(2) कपास

(हज़ार गांठें)

आन्ध्र प्रदेश	128	116	115	115	60	175	52.2
असम	9	6	9	9	5	14	55.6
बिहार	2	1	1	6	—	6	—
गुजरात }	1,921	2,481	1,533	{ 1,106	294	1,400	26.6
महाराष्ट्र }				{ 1,207	328	1,535	27.2
केरल	10	8	8	5	100	105	—
मध्य प्रदेश	403	380	279	567	184	751	32.5
मद्रास	335	356	401	420	100	520	23.8
मैसूर	363	441	465	500	250	750	50
उड़ीसा	2	2	2	2	98	100	—
पंजाब	605	711	800	900	300	1,200	33.3
राजस्थान	184	145	148	200	152	352	76
उत्तर प्रदेश	29	34	67	67	54	150	177.8
संघीय क्षेत्र	7	5	7	7	—	7	—
योग	3,998	4,686	3,835	5,098	1,967	7,065	38.6

(3) गन्ना (गुड़)

(हज़ार टन)

आन्ध्र प्रदेश	517	661	627	627	123	750	19.6
असम	66	97	97	100	20	120	20
बिहार	292	606	653	685	45	730	6.6
गुजरात }	553	800	927	{ 98	31	129	31.6
महाराष्ट्र }				{ 880	300	1,180	34.1

तीसरी योजना में कृषि-उत्पादन में वृद्धि का अनुमान—(जारी)

(हज़ार गांठें)

राज्य	1955-56	1958-59 संशोधित अनुमान	1959-60 अन्तिम अनुमान	1960-61 अनुमानित	तीसरी योजना में अतिरिक्त उत्पादन	तीसरी योजना के अन्त में अनुमानित उत्पादन	तीसरी योजना में प्रतिशत वृद्धि
केरल	133	35	36	37	30	67	81
मध्य प्रदेश	115	89	106	163	97	260	59.4
मद्रास	335	384	409	400	101	501	25.3
मैसूर	290	392	384	413	97	510	23.5
उड़ीसा	92	73	73	100	130	230	130
पंजाब	556	725	857	780	120	900	15.4
राजस्थान	45	42	60	90	90	180	100
उत्तर प्रदेश	2,940	3,076	3,203	3,500	700	4,200	20
पश्चिम-बंगाल	131	117	128	128	59	187	46.1
जम्मू-कश्मीर	1	1	1	1	—	1	—
संघीय क्षेत्र	13	15	18	18	—	18	—
योग	5,979	7,113	7,579	8,020	1,943	9,963	24.2

(4) तेलहन

(हज़ार टन)

राज्य	1955-56	1958-59 संशोधित अनुमान	1959-60 अन्तिम अनुमान	1960-61 अनुमानित	तीसरी योजना में अतिरिक्त उत्पादन	तीसरी योजना के अन्त में अनुमानित उत्पादन	तीसरी योजना में प्रतिशत वृद्धि
आन्ध्र प्रदेश	1,188	1,109	1,080	1,079	558	1,637	51.7
असम	56	66	44	60	20	80	33.3
बिहार	56	78	66	60	66	126	110

गुजरात	1,202	1,925	1,588	1,050	300	1,350	28.6
महाराष्ट्र				718	321	1,039	44.7
केरल	20	22	17	20	31	51	155
मध्य प्रदेश	454	621	473	561	125	686	22.3
मद्रास	870	939	945	1,050	290	1,340	27.6
मैसूर	503	574	580	700	175	875	25
उड़ीसा	65	54	54	90	110	200	122.2
पंजाब	149	186	165	185	115	300	62.2
राजस्थान	252	268	198	276	110	386	40
उत्तर प्रदेश	765	996	1,089	1,180	495	1,675	41.9
पश्चिम-बंगाल	49	55	39	40	20	60	52
जम्मू-कश्मीर	19	11	11	11	—	11	—
संघीय क्षेत्र	4	3	3	4	—	4	—
योग	5,643	6,907	6,352	7,084	2,736	9,820	38.6

(5) पटसन

(हज़ार गांठें)

असम	1,212	989	1,114	813	400	1,213	49.2
बिहार	589	1,243	957	839	441	1,280	52.6
उड़ीसा	245	177	212	261	400	661	153.3
उत्तर प्रदेश	89	95	92	89	30	119	33.7
पश्चिम-बंगाल	2,013	2,596	2,170	1,987	840	2,827	42.3
त्रिपुरा	50	58	60	41	40	81	97.6
योग	4,198	5,158	4,605	4,030	2,151	6,181	53.4

अध्याय 20

सामुदायिक विकास

परिचय

आज से लगभग 9 वर्ष पूर्व जब प्रथम सामुदायिक परियोजना को प्रारम्भ किया गया था, तब सामुदायिक विकास को एक पद्धति तथा ग्रामीण विस्तार को एक अभिकरण बताया गया था, जिसके द्वारा गांव के सामाजिक और आर्थिक जीवन का कायाकल्प आरम्भ किया जा सकता है। इस बीच के वर्षों में सामुदायिक विकास-आन्दोलन-द्वारा किन कामों का सम्पादन होना है तथा इसके द्वारा राष्ट्र की किन प्राथमिकताओं को मूर्त रूप मिलना है, इसका और भी अधिक स्पष्टीकरण हो गया है। इसके साथ ही ग्रामीण विस्तार की परिभाषा को बढ़ा कर पंचायती राज का रूप दे दिया गया है। पंचायती राज का अभिप्राय ग्राम, खंड और ज़िला-स्तर पर परस्पर-सम्बद्ध प्रजातान्त्रिक और लोकप्रिय संस्थाओं का विकास करना है, जिनमें ग्राम-पंचायतों, पंचायत-समितियों और ज़िला-परिषदों के प्रतिनिधि और सहकारी संगठन विभिन्न विकास-अभिकरणों के सहयोग और समर्थन से परस्पर मिल कर और एक रूप होकर कार्य करते हैं। तीसरी योजना का एक मुख्य कार्य पंचायती राज-संस्थाओं के विकास और उनके सुचारु रूप से काम करने का आश्वासन प्रदान करना है, जिससे प्रत्येक क्षेत्र अपनी जनशक्ति तथा अन्य साधनों, सहकारी स्वावलम्बन, सामुदायिक प्रयत्नों तथा उपलब्ध साधनों और कर्मचारियों के आधार पर विकास की सम्भावनाओं का अधिकतम लाभ उठा सके।

विकास की समीक्षा

2. इस समय सामुदायिक विकास-कार्यक्रम 3,100 विकास-खंडों में, जिनकी परिधि में 3,70,000 गांव आते हैं, चल रहा है। इनमें से 880 विकास-खंडों का कार्यकाल 5 वर्ष से अधिक हो चुका है तथा वे सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के दूसरे चरण में प्रविष्ट हो गए हैं। अक्तूबर 1963 तक यह कार्यक्रम देश के सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्रों में लागू हो जाएगा। प्रथम दो योजनाओं में सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के लिए लगभग 240 करोड़ रु० की राशि निर्धारित की गई थी। तीसरी योजना में 294 करोड़ रु० रखे गए हैं तथा इसके अतिरिक्त पंचायतों के लिए 28 करोड़ रु० अलग से रखे गए हैं।

3. दूसरी योजना की अवधि में सामुदायिक विकास-कार्यक्रम में तीन महत्त्वपूर्ण बातें हुईं। योजना के प्रारम्भ में 950 विकास-खंडों में कार्य हाथ में लिया गया था; इनमें से 370 सामुदायिक परियोजना-कार्यक्रम तथा 580 राष्ट्रीय विस्तार-कार्यक्रम के अधीन थे। उस समय संगठन की जो व्यवस्था थी, उसके अनुसार प्रत्येक खंड को पहले राष्ट्रीय विस्तार-कार्यक्रम के अधीन लिया जाता था; इस कार्यक्रम के लिए 4,50,000 रु० का बजट बनाया गया था। कुछ समय के बाद, जो एक वर्ष से दो वर्ष तक होता था, राष्ट्रीय विकास-परियोजना के कुछ भाग को सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अधीन ले

लिया जाता था, जिसके लिए 15 लाख रु० का बजट था। इस प्रकार राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास को एक ही कार्यक्रम से सम्बद्ध दो सोपान समझा जाता था। योजना-परियोजना-समिति-द्वारा नियुक्त एक अध्ययन-दल ने सन् 1957 में कार्यक्रमों की समीक्षा की तथा उसकी सिफारिश पर सामुदायिक विकास की एक ही योजना को स्वीकार किया गया तथा इसको पांच-पांच वर्षों के दो चरणों में बांट दिया गया। प्रथम चरण में प्रत्येक खंड के लिए 12 लाख रु० और दूसरे चरण में 5 लाख रु० की राशि निर्धारित की गई। इन परिवर्तनों के साथ यह भी निश्चय किया गया कि इस कार्यक्रम को देश के सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्रों में लागू करने की अवधि को तीन वर्ष के लिए बढ़ा कर अक्तूबर 1960 से अक्तूबर 1963 कर दिया जाए।

4. दूसरी महत्त्वपूर्ण बात पंचायती राज की स्थापना है। अनेक वर्षों से यह अनुभव किया जा रहा था कि यदि ग्रामीण विकास का काम केवल द्रुतगति से ही नहीं, अपितु स्थानीय प्रयत्नों और साधनों के आधार पर करना है, तो यह अनिवार्य और आवश्यक है कि ग्राम-स्तर पर पंचायतों के अतिरिक्त ज़िला और खंड-स्तर पर प्रजातान्त्रिक संस्थाओं की स्थापना की जाए। प्रथम योजना में मोटे तौर पर इस दिशा का निर्देश भी किया गया था। दूसरी योजना में स्पष्ट रूप से ज़िले में प्रशासन के एक सुसंगठित प्रजातान्त्रिक ढांचे के स्वरूप को बताया गया, जिसमें ग्राम-पंचायतें उच्च स्तर पर लोकप्रिय संगठनों से एकांगी भाव से सम्बद्ध होंगी। और अधिक अध्ययन होने तक योजना में ज़िला-विकास-परिषदों और खंडों - में विकास-समितियों की स्थापना का अन्तरिम प्रस्ताव भी है। योजना-परियोजना-समिति-द्वारा नियुक्त अध्ययन-दल की सिफारिशों पर जिनमें 'प्रजातान्त्रिक विकेन्द्रीकरण' की पद्धति का समर्थन किया गया है, राष्ट्रीय विकास-परिषद् ने जनवरी 1958 में विचार किया। परिषद् ने इस बात पर बल दिया कि किसी भी प्रजातान्त्रिक ढांचे का आधार गांवों में प्रजातन्त्रवाद होना चाहिए। जिन दो संगठनों ने ग्रामीण प्रजातन्त्र को कारगर रूप से सम्भव बनाया है, वे हैं ग्राम-पंचायतें और ग्रामीण सहकारी समितियां। इसलिए प्रत्येक क्षेत्र में प्रथम कदम यह होना चाहिए कि ग्राम-स्तर पर आवश्यक संस्थाओं का जाल बिछा दिया जाए। ज़िला, खंड और ग्राम-स्तर पर प्रजातान्त्रिक संगठनों को ज़िले में विकास-प्रशासन के परस्पर-सम्बद्ध ढांचे का एक अंग समझना चाहिए। इसलिए परिषद् ने ज़िला और खंड-स्तर पर प्रजातान्त्रिक संगठनों की स्थापना के लक्ष्य को सम्पुष्ट कर दिया और यह सुझाव दिया कि प्रत्येक राज्य इस ढांचे के लिए अनुकूल परिस्थितियों के अनुसार काम करे। गत तीन वर्षों की अवधि में पंचायती राज को लागू करने के लिए आन्ध्र प्रदेश, असम, मद्रास, मैसूर, उड़ीसा, पंजाब और राजस्थान-राज्यों में कानून बनाए गए। मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में भी राज्य-विधान-मंडलों ने इस सम्बन्ध में कानून पास कर दिए हैं। बिहार में इस प्रकार के कानून पर विचार जारी है, और महाराष्ट्र और गुजरात में विशेष समितियों ने इस सम्बन्ध में प्रस्ताव तैयार कर दिए हैं तथा उनकी रिपोर्टों पर विचार किया जा रहा है। यह सब प्रगति उस आम दिशा का फलितार्थ है, जिसको गत दस वर्षों से प्रजातान्त्रिक परिस्थितियों में ग्रामीण विकास का आधार समझा जाता रहा है और जो आगे बढ़ने के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कदम है।

5. सामुदायिक विकास का तीसरा पहलू, जिसने बहुत अधिक महत्त्व प्राप्त कर लिया है, वह प्रस्ताव है, जिसमें ज़िले के साथ-साथ खंड भी आयोजन और विकास

की एक-इकाई के रूप में काम करेगा। यह सुझाव दिया गया है कि निम्न क्षेत्रों में राज्य-सरकारें तीसरी योजना के लिए अपने प्रस्ताव ज़िला और खंड की योजनाओं के आधार पर बनाएं :

(1) कृषि, छोटी सिंचाई-योजनाएं, भूमि-संरक्षण, ग्रामों के वन, पशुपालन, दूध-उद्योग;

(2) सहकारी समितियों का विकास;

(3) ग्रामोद्योग;

(4) प्राथमिक शिक्षा, विशेष रूप से स्थानीय समुदायों के लिए विद्यालय-भवनों की व्यवस्था;

(5) गांवों में जल-सम्भरण और न्यूनतम सुविधाओं का कार्यक्रम, जिसमें ऐसी सड़कों का, जो निकटतम गांव, सड़क या रेलवे-स्टेशन को मिलानेवाली हों, निर्माण भी शामिल हो; और

(6) ग्रामीण क्षेत्रों की जनशक्ति का पूरा लाभ उठाने के लिए निर्माण-कार्य।

यद्यपि अनेक राज्यों में कृषि के लिए विशेष रूप से खंड-योजनाएं बनाई गई हैं, फिर भी मुख्यतः राज्यों की योजनाएं स्थानीय योजनाओं से स्वतन्त्र रूप में तैयार की गई हैं। इससे यही अनुमान लगाया जा सकता है कि स्थानीय योजनाएं पंचवर्षीय योजनाओं के निर्माण में एक स्पष्ट भूमिका बनें, इसके लिए अभी बहुत प्रयत्न करने की आवश्यकता है। जिस पृष्ठभूमि में तीसरी योजना का निर्माण किया गया है, उसमें यह बात महत्त्वपूर्ण है कि स्थानीय योजनाओं को इस ढंग से बनाया जाए कि वे राज्य-योजना की पूर्ति में एक साधन का काम कर सकें।

6. ज़िले की योजना के आम ढांचे में, खंड-योजना का लक्ष्य खंड में की जानेवाली समस्त सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों को समाविष्ट करना है। इसके लिए (1) खंड और ग्राम-स्तरों पर स्थानीय रूप से आयोजन के लिए पहल, और (2) खंड में किए जानेवाले विभिन्न विभागों के कार्यक्रमों का योजना से समन्वय आवश्यक है। निम्नलिखित कुछ मुख्य गतिविधियां खंड-योजना की परिधि में आती हैं :

(1) विकास की स्थिति के अनुसार सामुदायिक विकास-खंड के बजट-कार्यक्रम में निर्धारित विषय;

(2) विभिन्न विभागों के बजट में सम्मिलित विषय, जिन्हें खंड-संगठन के माध्यम से पूरा किया जाना है;

(3) कानून-द्वारा निर्धारित दायित्वों के अनुसार स्थानीय समाज या उससे लाभ उठानेवालों द्वारा किए जानेवाले कार्य;

(4) खंड में किए जानेवाले ऐसे निर्माण-कार्य, जिनमें अकुशल या अर्द्धकुशल मजदूरों की ही आवश्यकता पड़ती है; और

(5) विभिन्न क्षेत्रों के विकास-कार्यों के लिए स्थानीय जनता का अधिकतम सहयोग प्राप्त करने की दृष्टि से खंड या खंड-संगठनों-द्वारा प्रारम्भ किए गए अन्य कार्य।

7. ऊपर बताए गए तीनों पहलुओं—सामुदायिक विकास-खंडों के विस्तार-कार्य, प्रजातान्त्रिक संगठनों की स्थापना और क्षेत्र तथा ग्राम की योजनाओं का निर्माण एवं उनके परिपालन का बड़ा निकट सम्बन्ध है। विस्तार-कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए प्रत्येक खंड में ग्राम-स्तर के कार्यकर्त्ताओं का एक समूह तथा कृषि, पशुपालन, सहकारिता, ग्रामोद्योगों तथा अन्य क्षेत्रों के बारे में तकनीकी विशेषज्ञों का एक दल है, जो विकास-खंड-अधिकारी के नेतृत्व में मिल कर काम करते हैं। जिला-स्तर के वरिष्ठ विशेषज्ञों के समर्थन एवं निर्देशन में ये विस्तार-कार्य करनेवाले वर्ग खंड में पंचायत-समितियों और गांवों में पंचायतों और ग्राम-सभाओं के लिए कार्य करते हैं। ये कार्यकर्त्ता चुने हुए प्रतिनिधियों की, स्थानीय जन-समुदायों के अधिकतम भाग लेने और स्थानीय जनशक्ति और साधनों के अधिकतम प्रयोग के आधार पर खंड और ग्रामों के लिए तकनीकी दृष्टि से ठोस योजनाओं के निर्माण एवं उनके परिपालन में सहायता देते हैं।

कृषि-विस्तार

8. सामुदायिक विकास-संगठन को जो मुख्य विस्तार-कार्यक्रम सौंपे गए हैं, वे कृषि, पशुपालन, सहकारिता और ग्रामोद्योगों के बारे में हैं। ग्राम-सेवकों से यह आशा की जाती है कि वे अपना अधिकांश समय और शक्ति इन्हीं कामों में लगाएंगे। तीसरी योजना में कृषि और सहकारिता के क्षेत्र में जिन कामों का सम्पादन होना है, वे अत्यधिक विशाल हैं। कृषि-उत्पादन को लगभग 30 प्रतिशत बढ़ाने का लक्ष्य है, और खंडों-द्वारा ही बड़ी संख्या में छोटे सिंचाई-कार्यक्रमों, छोटी और बड़ी सिंचाई-योजनाओं से सिंचाई का लाभ उठाने, भूमि-संरक्षण, और बारानी (बिना पानी के) खेती में उर्वरकों का प्रयोग, और स्थानीय गोबर-कचरे की खाद के विकास आदि के कार्यक्रमों को पूरा किया जाना है। सहकारिता के कार्यक्रम में सहकारी अभिकरणों के माध्यम से कृषि-ऋणों को तीन-गुना करने को कहा गया है। कृषि-उत्पादन में वृद्धि केवल ग्राम-स्तर पर संगठित सघन प्रयत्नों-द्वारा ही सम्भव है। सहकारी ऋणों की वृद्धि के लिए भी यह आवश्यक है कि नीचे से ही सहकारी आन्दोलन को संगठित किया जाए तथा ग्राम के सभी परिवारों को सहकारी समितियों की परिधि में ले आया जाए। इस बात का भी आश्वासन होना चाहिए कि ऋण उत्पादन और हाट-व्यवस्था के बीच एक कड़ी के रूप में है। इस प्रकार इस समय ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के पुनर्गठन की आधारभूत समस्या ग्राम-स्तर पर कृषि-प्रयत्नों को संगठित करना है। उत्पादन-वृद्धि के लिए ग्राम-समुदाय को संगठित करने में जितनी प्रगति होगी, तदनुसार ही गांव की अन्य समस्याओं के समाधान में सुविधा होगी और अन्य दिशाओं में भी—विशेषतः ग्रामीण उद्योगों और सामाजिक सेवाओं की व्यवस्था में—द्रुत विकास हो सकता है। कृषि-उत्पादन में प्रगति इतने महत्त्व की है कि तीसरी योजना के तारतम्य में सामुदायिक विकास-आन्दोलन की मुख्य कसौटी उसका कृषि-विस्तार-अभिकरण के रूप में व्यावहारिक रूप से कारगर होना है। इसलिए सामुदायिक विकास-संगठन के लिए यह आवश्यक है कि वह इस दृष्टि से अपने को सबल बनाने के लिए सभी सम्भव कदम उठाए और यथासम्भव अधिकतम स्थानीय प्रयत्नों के आधार पर कृषि-उत्पादन के लक्ष्य की पूर्ति को अपनी ज़िम्मेदारी समझे। इसके साथ ही कृषि-विभाग और कृषि-उत्पादन से सम्बद्ध

अन्य विभागों का भी यह कर्त्तव्य है कि वे जिला और खंड-स्तर पर सामुदायिक विकास-संगठन को आवश्यक अधीक्षण, निर्देशन, सम्भरण, प्रशिक्षित जनशक्ति, तथा अन्य जरूरी साधन आदि मुहय्या करें।

ग्रामीण उत्पादन-योजनाएं

9. गांव के सभी कृषकों को कृषि-प्रयत्नों में सम्मिलित करने और स्थानीय समुदाय के साधनों को समुचित रूप से गतिशील बनाने का मुख्य साधन ग्राम-उत्पादन-योजना है। ग्राम-स्तर पर कृषि-उत्पादन के मुख्य तत्त्व ये हैं :

(1) सिंचाई-सुविधाओं का पूरा उपयोग (इसमें लाभ उठानेवालों-द्वारा रजवाहों का ठीक रख-रखाव भी शामिल है), सामुदायिक सिंचाई-निर्माण-कार्यों का रख-रखाव और मरम्मत तथा पानी के उपयोग में मित-व्ययिता;

(2) दोहरी-तिहरी फसलों के क्षेत्र में वृद्धि ;

(3) सुधरे हुए बीजों को बढ़ाना तथा सभी किसानों में उनका वितरण;

(4) रासायनिक उर्वरकों का सम्भरण;

(5) कचरे से खाद तैयार करने और हरी खाद के कार्यक्रम;

(6) भूमि-संरक्षण, कंटूर बांध, बारानी (बिना पानी के) खेती, पानी की निकासी, परती भूमि को ठीक करना, वनस्पति-संरक्षण आदि के रूप में सुधरे हुए कृषि-तरीकों को अपनाना;

(7) सामुदायिक सहयोग तथा व्यक्तिगत आधार पर गांवों में नए छोटे सिंचाई-कार्यक्रम आरम्भ करना;

(8) परिष्कृत कृषि-औज़ारों को लागू करने का कार्यक्रम;

(9) सब्ज़ियों और फलों के उत्पादन को बढ़ाने का कार्यक्रम;

(10) कुक्कुटपालन, मत्स्यपालन और दूध-उत्पादनों के विकास का कार्यक्रम;

(11) पशु-नस्ल-सुधार—जैसे सांड़ों का रख-रखाव और निरुपयोगी सांड़ों को बधिया करना;

(12) गांव में ईंधन के काम आनेवाले पेड़ों तथा चरागाहों के विकास का कार्यक्रम।

10. ग्राम-उत्पादन-योजना में दो मुख्य कार्यक्रम हैं : (अ) ऋण देना; खाद और सुधरे बीज मुहय्या करना; वनस्पति-संरक्षण के लिए सहायता देना; और छोटे सिंचाई-कार्यक्रम आदि, जिनके लिए कुछ सहायता गांव के बाहर से आएगी, और (आ) बड़ी परियोजनाओं से खेतों में पानी देने के लिए नालियां खोदना; बांधों और खेतों में पानी देनेवाली नालियों की देखभाल करना; कंटूर बांध बनाना; गांवों के तालाबों को खोदना तथा उनकी निगरानी; स्थानीय खाद एवं साधनों का प्रयोग और विकास; गांवों के लिए ईंधन के पेड़ों को लगाना आदि ऐसे कार्यक्रम, जिनके लिए ग्राम-समुदाय

श्रौर इनसे लाभ उठानेवालों के ही प्रयत्न श्रावश्यक हैं। ग्राम-उत्पादन-योजना की सफलता मुख्यतः ऋण श्रौर सम्भरण के कुशल संगठन तथा विस्तार-कार्यकर्त्ताश्रों-द्वारा दिए गए तकनीकी परामर्श की उपयोगिता पर निर्भर करती है। ऊपर बताए गए दूसरे कार्य-क्रम के लिए ग्राम-समुदाय का उत्साह श्रौर सहयोग उसी मात्रा में होगा, जिस पैमाने पर उन्हें सेवाएं प्रदान की जाएंगी। जून 1960 में सामुदायिक विकास श्रौर सहकारिता-मन्त्रालय ने राज्य-सरकारों को इन्हीं बातों के श्राधार पर कुछ प्रस्ताव भेजे थे, तथा अनेक राज्यों ने उसी प्रकार के श्रादेश सम्बद्ध विभागों को भेज भी दिए हैं। फिर भी अभी यह नहीं कहा जा सकता कि कृषि-विभाग में एक सामान्य प्रक्रिया के रूप में ग्राम-उद्योग-योजनाएं प्रस्थापित हो गई हैं, या इनसे सम्बद्ध अनेक व्यावहारिक समस्याएं हल हो गई हैं। तीसरी योजना के विस्तार के क्षेत्र में जो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य किया जाना है वह ग्राम-उत्पादन-योजनाश्रों के निर्माण के विचार को मूर्त रूप देना है जिससे सभी कृषकों को एक सामान्य प्रयत्न के लिए एकत्र किया जा सके श्रौर इसके साथ ही व्यक्तिगत किसानों को कुशल श्रौर संगठित रूप से ऋण, सम्भरण तथा अन्य ज़रूरी सहायता प्रदान की जा सके। तीसरी योजना में छोटी सिंचाई-योजनाश्रों श्रौर भूमि-संरक्षण के लिए पर्याप्त साधन प्रदान किए गए हैं, बड़े पैमाने पर रासायनिक खाद के सम्भरण का श्राश्वासन दिया गया है, तथा पौध-संरक्षण, सुधरे हुए कृषि-उपकरणों, तथा अन्य कार्यक्रमों के लिए साधनों की व्यवस्था है। बीजों के लिए फार्म स्थापित करने का कार्यक्रम काफी श्रागे बढ़ गया है तथा अब यह कुछ श्रासान हो गया है कि गांवों में सुधरे बीजों की जितनी मात्रा चाहिए, उसको कई गुना बढ़ाया जा सके। इस प्रकार तीसरी योजना में ग्राम-उत्पादन-योजनाश्रों के सफल सम्पादन के लिए श्रावश्यक विभिन्न तत्त्वों की व्यवस्था की गई है।

पंचायती राज

11. ज़िला श्रौर खंड-स्तर पर प्रजातान्त्रिक संस्थाश्रों की स्थापना से, तथा ग्राम-सभाश्रों श्रौर ग्राम-पंचायतों को जो काम सौंपा गया है, उससे ज़िला-प्रशासन के ढांचे में श्रौर ग्रामीण विकास के स्वरूप में श्राधारभूत श्रौर दूरगामी परिवर्तन हो गया है। इनका महत्त्व इस तथ्य में निहित है कि, राज्य-सरकारों के निर्देशन श्रौर अधीक्षण में, ग्राम-विकास-कार्यक्रम के परिपालन का उत्तरदायित्व गांवों में ग्राम-पंचायतों के साथ खंड-पंचायत-समिति श्रौर ज़िला-स्तर पर ज़िला-परिषद् का होगा। इन संस्थाश्रों को कार्य करते हुए बहुत अधिक समय नहीं हुश्रा है, अतः ये केवल अभी यही बता सकती हैं कि किन समस्याश्रों पर सावधानी से ध्यान देने की श्रावश्यकता है। इन पर विचार करते हुए कुछ पहलुश्रों पर बल देना ज़रूरी है। पंचायती राज का मुख्य उद्देश्य प्रत्येक क्षेत्र की जनता को सारी जनसंख्या के हित में सघन श्रौर सतत विकास प्राप्त करने में सहायता करना है। निर्वाचित प्रतिनिधियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे पंचायती राज के विकास को अपने अधिकार के प्रयोग का अवसर न समझ कर, जनता की सेवा के लिए नए-नए अवसरों की प्राप्ति समझें। पंचायती राज की परिभाषा इससे सम्बद्ध गैर-सरकारी श्रौर प्रजातान्त्रिक संगठनों के लिए सीमित नहीं है। प्रशासन की ग्राम योजना में एक विशिष्ट स्तर के दायित्वों श्रौर कार्यों का प्रतिनिधित्व करते हुए पंचायती राज में प्रजातान्त्रिक संस्थाश्रों श्रौर विस्तार-सेवाश्रों, दोनों का समावेश है जिनके

द्वारा विकास-कार्यों का सम्पादन होता है। खंड और ग्राम-स्तर के विस्तार-कार्यकर्त्ता पंचायत-समितियों के अधिकार क्षेत्र में काम करने पर भी एक व्यापक प्रशासन और तकनीकी व्यवस्था के अंगभूत होते हैं, जिसका क्षेत्र ज़िला और उससे भी परे होता है। पंचायती राज की स्थायी सफलता के लिए यह महत्त्वपूर्ण है कि सरकार-द्वारा प्रदत्त तकनीकी और प्रशासनात्मक सेवाओं के ढांचे की अखंडता का और उनके जो कर्त्तव्य तथा दायित्व हैं, उनको पूरा करने की योग्यता का, ज्ञान और अनुभव को ज़िला और खंड-स्तर पर चुने हुए प्रतिनिधियों तक पहुंचाते समय पूरा भरोसा होना चाहिए। यह भी सर्वाधिक महत्त्व की बात है कि राज्य और ज़िला-स्तरों पर तथा बैंक, क्रय-विक्रय, प्रक्रिया, वितरण और शिक्षा तथा प्रशिक्षण के क्षेत्र में काम करनेवाले संघीय सहकारी संगठनों के विशिष्ट कार्यों को स्पष्ट मान्यता प्रदान की जाए। विभिन्न सहकारी संगठनों-द्वारा उत्तरदायित्व के बड़े काम हाथ में लिए गए हैं, तथा सहकारी आन्दोलन की दिशा और सिद्धान्तों के अनुरूप उन्हें पूरा करने की सुविधा मिलनी चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक विकास की अभी शुरुआत है, तथा इस दिशा में बड़ी सम्भावनाएं विद्यमान हैं। इन नई संस्थाओं का तथा प्रत्येक क्षेत्र में स्थापित नए सम्बन्धों का उद्देश्य अपने साधन-स्रोतों की सीमाओं के अनुसार इन सम्भावनाओं को अधिकतम रूप से मूर्त रूप देना है। इस पहलू को देखते हुए निम्न कुछ मुख्य कसौटियां हैं जिनके आधार पर समय-समय पर पंचायत-राज की सफलता को परखा जा सकता है:

(1) तीसरी योजना में उच्चतम राष्ट्रीय प्राथमिकता के रूप में कृषि-उत्पादन;
(2) ग्रामोद्योगों का विकास;
(3) सहकारी संस्थाओं का विकास;
(4) स्थानीय जनशक्ति एवं अन्य साधनों का भरपूर उपयोग;
(5) शिक्षा और वयस्क-साक्षरता की सुविधाओं का विकास;
(6) पंचायती राज-संस्थाओं को उपलब्ध साधनों का—यथा वित्त, कर्मचारी, तकनीकी सहायता तथा उच्च स्तर पर प्राप्त होनेवाली अन्य सुविधाओं का अधिकतम उपयोग;
(7) ग्राम-समाज के आर्थिक दृष्टि से निर्धन वर्ग को सहायता;
(8) अधिकार का क्रमशः वितरण और स्वयंसेवी संगठनों के कार्य पर विशेष बल;
(9) व्यापक शिक्षा तथा कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों के स्पष्ट निर्धारण के द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों और सरकारी कर्मचारियों में सद्भाव और तालमेल; तथा अधिकारियों और गैर-अधिकारियों की योग्यता में क्रमशः वृद्धि;
(10) समाज में समस्तरता और पारस्परिक सहयोग एवं सहायता।

12. अब तक जो थोड़े-से अनुभव प्राप्त हुए हैं, उनके अनुसार पंचायती राज-संस्थाओं के कारगर और सफल संचालन के लिए निम्न सुझाव रखे गए हैं:

(1) संस्थाओं को उच्च स्तर पर विकसित करते समय भी, ग्राम-स्तर पर पंचायत-सभाओं और पंचायतों के काम पर अत्यधिक बल जारी रहना चाहिए। ग्राम-स्तर पर ही जनता के प्रयत्नों को संगठित किया जाना चाहिए तथा यहीं सामुदायिक प्रयत्नों को प्राप्त करने का क्षेत्र बड़ा व्यापक है।

ग्राम-सभा और ग्राम-पंचायत, दोनों में ही प्रत्येक काम के लिए सर्व-सम्मति को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जिससे विभिन्न कार्यों को ग्राम-समुदाय की आम सहमति और सद्भावना से प्रारम्भ किया जा सके।

(2) ज़िला-स्तर के तकनीकी अधिकारियों को इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि वे खंड-स्तर के विस्तार-अधिकारियों और पंचायत-समितियों को किसी निश्चय पर पहुंचने से पूर्व कार्यक्रमों और योजनाओं की प्रारम्भिक तैयारी में परामर्श व सहायता दें। दूसरी ओर, पंचायत-समितियों को इस प्रकार की सहायता के प्रयत्न और उसका स्वागत करना चाहिए, क्योंकि इस समय खंड-स्तर के विस्तार-कर्मचारियों की एक बड़ी संख्या को उतना अनुभव नहीं है जितना होना चाहिए, परन्तु वे ज़िला-स्तर के अधिकारियों से आवश्यक निर्देश व सहायता प्राप्त कर अच्छा कार्य कर सकते हैं।

(3) खंड-विस्तार-दल, जिसमें खंड-विस्तार-अधिकारी और विकास के विभिन्न क्षेत्रों के विस्तार-अधिकारी हैं, जिस ढंग से काम करते हैं, वह पंचायती राज की सफलता के लिए सर्वाधिक महत्त्व का है। पंचायत-समितियों को ठोस सहायता देने के लिए, इन अधिकारियों को एक रूप होकर काम करना चाहिए। खंड-विकास-अधिकारी को आवश्यक समन्वय और नेतृत्व प्रदान करना चाहिए और विभिन्न क्षेत्रों के विस्तार-अधिकारियों को पंचायत-समितियों और उनकी स्थायी समितियों के विचार के लिए कार्यक्रमों और योजनाएं बनाने में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए, नियमों के अनुसार निष्पक्ष रूप से उन पर अमल कराना चाहिए तथा इस बात का आश्वासन देना चाहिए कि आवश्यक सेवाएं और सम्भरण कुशलतापर्वक संगठित होंगी। ग्राम-स्तर के कार्यकर्त्ताओं के कार्य का पर्याप्त अधीक्षण आवश्यक है। इस बात की सावधानी बरतनी चाहिए कि खंड-विकास-अधिकारी और विस्तार-अधिकारीगण, प्रधान कार्यालयों में हर वाद-विवाद में न पड़ कर, खंड-क्षेत्र में व्यापक दौरा करें।

(4) पंचायत-समितियों के कार्य में सावधानीपूर्वक विचार की गई खंड-योजनाओं को तैयार करने तथा उनके परिपालन पर बल दिया जाना चाहिए। इनसे तथा ग्राम-योजनाओं में ही ज़ोरदार और निरन्तर विकास की दिशा में आवश्यक साधन प्राप्त होते हैं। तकनीकी रूप से सुविचारित खंड और ग्राम-योजनाओं से तदर्थ निर्णयों और स्थानीय दबाव को दूर करने में बड़ी सहायता मिलेगी।

(5) पंचायती राज की स्थापना से राज्यों के तकनीकी विभागों का उत्तर-दायित्व बहुत बढ़ गया है। इन्हें विकास के प्रत्येक क्षेत्र में उपलब्ध सर्वोत्तम पथ-प्रदर्शन व अनुभव प्रदान करना चाहिए, निर्वाचित प्रतिनिधियों के उचित प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी चाहिए, और

पंचायत-राज-द्वारा उन पर सौंपे गए भारी उत्तरदायित्वों को पूरा करने म सहायता देनी चाहिए।

(6) पंचायती राज-संस्थाओं की सफलता को निर्विघ्न बनाने का मुख्य दायित्व ज़िले के कलक्टर का होगा। उसका यह कर्त्तव्य है कि वह ज़िला-स्तर पर ज़िला-परिषद् और विभिन्न क्षेत्रों के तकनीकी अधिकारियों में समन्वय स्थापित करे, तकनीकी अधिकारियों, पंचायत-समितियों और खंड-स्तर पर विस्तार-अधिकारियों में निकट सम्पर्क कायम करे और राज्य-स्तरीय विभागों से तकनीकी परामर्श और निर्देशन निरन्तर मिलते रहने की व्यवस्था करे। कलक्टर के काम का एक महत्त्वपूर्ण पहलू प्रजातान्त्रिक संस्थाओं और सरकारी सेवाओं में दिन-प्रति-दिन के कामों में ठीक परम्पराओं को विकसित करने में और सामान्य ध्येय की पूर्ति में उनके योगदान पर आधारित प्रशासनात्मक सम्बन्धों को स्थापित करने में सहायता देना होगा।

13. सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के सफल सम्पादन में विभिन्न तकनीकी विभागों को समन्वित रूप से इकट्ठे मिल कर काम करना होगा। यदि हम बहुसंख्यक कृषकों को अनुसन्धान के परिणामों का लाभ उठाने में और वैज्ञानिक ढंग से खेती करने म सहायता प्रदान करना चाहते हैं, तो यह आवश्यक है कि उन्हें ठीक समय पर तकनीकी परामश, और सुधरे हुए औज़ार, बीज, उर्वरक और ऋण मुहय्या किए जाएं। इन जटिल किन्तु महत्त्वपूर्ण कार्यक्रमों की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि सभी सरकारी अभिकरणों और सम्बद्ध संगठनों की ज़िम्मेदारियों को अच्छी प्रकार निश्चित कर दिया जाए, और उच्च तकनीकी अधिकारियों-द्वारा आवश्यक निर्देशन और अधीक्षण प्रदान करने के उत्तरदायित्वों के बारे में भी कोई अस्पष्टता नहीं होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में, इन मामलों में ऊपर से लेकर ग्रामीण इकाइयों तक उत्तरदायित्वों की एक अखंडित व्यवस्था होनी चाहिए।

ऊपर सरकारी अभिकरणों की ज़िम्मेदारियों को स्पष्ट किया गया है। गैर-सरकारी नेताओं के कार्य निम्न होने चाहिए :

(1) जन-सहयोग प्राप्त करना और जनता को कार्यक्रम स्वीकार करने के लिए प्रोत्साहित करना;

(2) ग्राम-पंचायतों और सहकारी समितियों को उनके कामों में सहायता प्रदान करना;

(3) ग्रामीण नेताओं तथा दूसरे लोगों को प्रशिक्षण देने के कार्यक्रमों में सहायता देना;

(4) स्थानीय जनशक्ति का प्रयोग करते हुए समाज के लाभ के लिए कार्यक्रमों को आयोजित करना; और

(5) समाज के निम्न वर्ग के कल्याण-कार्यों को बढ़ाना।

ज़िला-प्रशासन का पुनर्गठन

14. पंचायती राज की स्थापना से ज़िला-प्रशासन के पुनर्गठन का व्यापक प्रश्न उठता है। इस बात को भली-भांति नहीं समझा गया कि गत दशाब्दी में ज़िला-

प्रशासन में जो परिवर्तन किए गए, वे बड़े अव्यवस्थित थे। जब सामुदायिक विकास-कार्य को हाथ में लिया गया, तब परम्परागत ज़िला-प्रशासन पर बिना किसी उपयुक्त सम्पर्क शृंखला के, विस्तार-संगठन को थोप दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि अनेक ज़िलों में निम्न संगठन बिना किसी तालमेल के समानान्तर रूप से कार्य कर रहे हैं :

(1) राजस्व-प्रशासन, जो तकावी, ऋण देने और ऋणों की प्राप्ति आदि-जैसे विकास के विशिष्ट कार्यों की देखभाल करता है;

(2) ज़िला, तालुका और अन्य स्तरों पर स्थापित विकास-विभाग;

(3) ग्राम-स्तर पर पंचायतों और सहकारी समितियों से सम्बद्ध खंड-अधिकारियों और ग्राम-सेवकों-सहित सामुदायिक विकास-संगठन; और

(4) स्थानीय बोर्ड (जहां उन्हें अभी समाप्त नहीं किया गया है।)

पंचायती राज की स्थापना में पंचायत-समितियों के कार्यों में सामुदायिक विकास के तथा अन्य ऐसे कार्य जो अब तक स्थानीय बोर्डों के थे, समाविष्ट हो गए हैं। जिस प्रकार की स्थिति है, उसमें अभी तक एक ही काम दो संगठनों का हो गया है, अतः यह आवश्यक हो गया है कि ज़िला-प्रशासन का पुनर्गठन किया जाए तथा कर्त्तव्यों और सम्बन्धों को नए सिरे से स्पष्ट किया जाए।

निम्न वर्ग और रोज़गार की समस्या

15. सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों के बारे में समय-समय पर मूल्यांकन-प्रतिवेदनों में तथ्य की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है कि इन कार्यक्रमों से होनेवाले लाभ ग्राम-समाज के कम सौभाग्यशाली वर्ग तक उचित रूप से नहीं पहुंच रहे हैं। हाल के अध्ययन-प्रतिवेदन में इस दिशा में कुछ सुधार का उल्लेख है। सामुदायिक विकास और सहकारिता-मन्त्रालय-द्वारा नियुक्त एक अध्ययन-दल आजकल इस बात का अध्ययन कर रहा है कि किस प्रकार और किस सीमा तक सामुदायिक विकास-कार्यक्रम समाज के निम्न वर्ग के आर्थिक विकास और कल्याण को बढ़ा सकते हैं। इस समस्या पर ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के विकास की पृष्ठभूमि में ही विचार किया जाना चाहिए। निम्न वर्ग का कल्याण सारे ग्राम-समाज के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है, और यदि देखा जाए तो ग्राम-समाज का बड़ा भाग ऐसे लोगों का है, जिन्हें आर्थिक दृष्टि से अशक्त कहा जा सकता है। वर्तमान ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था की मुख्य कमज़ोरी कम आय, कम उत्पादकता, और निरन्तर रोज़गार न मिलना है। जब तक सम्पूर्ण ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था ही पर्याप्त गति से नहीं बढ़ती, तब तक ग्राम-समाज के किसी वर्ग-विशेष की अथवा निम्न वर्ग की समस्याओं को सुलझाना कठिन है। मुख्य लक्ष्य यह होना चाहिए कि अधिक उत्पादक कृषि अर्थ-व्यवस्था को स्थापित किया जाए तथा गांव में बड़ी मात्रा में कृषि-भिन्न पेशों को प्रारम्भ किया जाए जिससे उत्पादन और रोज़गार में वृद्धि हो। इसके साथ ही सभी कार्यों में कम सौभाग्यशाली वर्ग की आवश्यकताओं के प्रति अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।

16. सामुदायिक विकास और ग्रामदान-आन्दोलन में गत तीन वर्षों में अधिकाधिक सामंजस्य स्थापित करने के लिए जो प्रयत्न किए गए, उनमें दोनों के समान लक्ष्यों पर अधिक बल दिया गया है। इनमें एक ग्राम-समाज-द्वारा अपने सभी सदस्यों के कल्याण

रोज़गार और आजीविका का उत्तरदायित्व स्वीकार करना भी है। गांव के निम्न वर्ग की दृष्टि से यह लक्ष्य अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

17. खंड-संगठन पहले ही बनाए गए भूमि-सुधार-कानूनों के परिपालन में जनमत को तैयार कर, तथा जनता को उसके कर्त्तव्यों और दायित्वों के प्रति प्रशिक्षण देकर, महत्त्वपूर्ण सहायता प्रदान कर सकते हैं। अन्य ऐसे कदम जिन्हें खंड-संगठन निम्न वर्ग की जनता के अविलम्ब लाभ के लिए उठा सकता है, ग्रामों में सहायक रोज़गार में वृद्धि करना, ग्रामोद्योगों और ग्राम के कारीगरों की उत्पादकता को बढ़ाना, श्रमिकों की सहकारी समितियों को संगठित करना, और क्षेत्र की जनशक्ति और साधनों के अधिकतम सम्भव प्रयोग को प्रोत्साहित करना आदि हैं। ग्रामों के निर्माण-कार्यक्रम का, जिनसे तीसरी योजना के अन्तिम वर्ष में 25 लाख लोगों को, विशेषत: उस समय जबकि खेतों आदि में कोई काम नहीं रहता है, रोज़गार मिल सकेगा, परिपालन बहुत हद तक सामुदायिक विकास-संगठनों-द्वारा ही किया जाएगा। इस कार्यक्रम को पहले उन क्षेत्रों में प्रारम्भ किया जाएगा जहां जनसंख्या बहुत अधिक है और अर्ध-रोज़गारी भी व्यापक पैमाने पर है। इसके बाद इसे अन्य क्षेत्रों में लागू किया जाएगा। यह कार्यक्रम एक अत्यधिक मूल्यवान अवसर प्रदान करता है जिससे न केवल अतिरिक्त रोज़गार ही उपलब्ध होगा, अपितु स्थानीय जनशक्ति के अधिकतम सम्भव प्रयोग पर और स्थानीय जन-समुदाय के प्रयत्नों एवं सहयोग पर नए सिरे से बल देते हुए सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों को पूरा किया जा सकता है।

अध्याय 21

पशुपालन, दूध-उद्योग और मछली-उद्योग

इधर कुछ वर्षों में पूरक और उपमंगी खाद्यान्न के, विशेषकर प्रोटीनों के, उत्पादन को बढ़ाने की अधिकाधिक ज़रूरत महसूस की गई है। इन चीज़ों की मांग बड़ी तेजी से बढ़ी है और आमदनी में वृद्धि होने के कारण भविष्य मे सम्भवतः और भी तेज़ी से बढ़ेगी। दूध और दूध से बनी चीजों, भोज्य पक्षियों, अंडों और मांस की आपूर्ति बढ़ाना अन्ततः पशुपालन-विकास की प्रगति पर ही निर्भर करता है। मछली-उद्योग के विकास के सिलसिले में महत्वपूर्ण परिणाम पहले ही प्राप्त किए जा चुके हैं, लेकिन अब भी बहुत-कुछ करना बाकी है।

पशुपालन

2. पशुपालन का विकास विविधतापूर्ण खेती की सुचारु पद्धति का ही एक अभिन्न अग है। मिली-जुली खेती पर जोर दिया जाएगा। इस पद्धति में भूमि, श्रम और पूंजी के सही और किफायती इस्तेमाल के लिए फसल उगाने और पशुपालन का काम समन्वित ढंग से किया जाता है। कृषि के उप-उत्पादनों के पूरे उपयोग, भूमि की उर्वरता बनाए रखने, कृपकों को बारहों महीने पूरा रोज़गार देने तथा ग्रामीणों की आमदनी बढ़ाने के लिए खेती और पशुपालन का समेकन आवश्यक है।

3. सन् 1956 की पशु-गणना के अनुसार, देश में कुल 30 करोड़ 60 लाख फार्म-पशु थे। इनमें से 15 करोड़ 90 लाख गाएं और 4 करोड़ 50 लाख भैंसें थी। इन दोनों को मिला कर देखें, तो दुनिया के गोजातीय पशुओं का एक-चौथाई हिस्सा भारत में है। इनके अतिरिक्त, 3 करोड़ 90 लाख भेड़ें, 5 करोड़ 50 लाख बकरियां, 80 लाख अन्य पशु तथा 9 करोड़ 50 लाख कुक्कुट थे। भारत में पशुधन की उत्पादकता आम तौर पर कम है। हालांकि कुछ नस्लों के मवेशी काफी दूध देते है और अन्य नस्लों के मवेशियों की उत्पादकता में भी इधर कुछ वृद्धि होने के संकेत मिले है, फिर भी भारत में औसत उत्पादन अभी बहुत कम है। इस प्रकार, एक ब्यांत में गाय औसतन 400 पौंड के करीब और भैंस 1,100 पौंड से कुछ अधिक दूध देती है, जब कि पश्चिम के उन्नत देशों में यह औसत परिमाण लगभग 5,000 पौंड या इससे भी कुछ ज्यादा है। दूध का कुल उत्पादन सन् 1951 में अनुमानतः 1 करोड़ 70 लाख टन और सन् 1956 में 1 करोड़ 90 लाख टन था। अभी यह मात्रा 2 करोड़ 20 लाख टन है। आशा है कि तीसरी योजना के अन्त तक यह मात्रा बढ़ कर 2 करोड़ 50 लाख टन हो जाएगी। दूध के खपत-सम्बन्धी आंकड़े सन्तोषप्रद नहीं हैं। सन् 1951 के अनुमानों के अनुसार, दूध और उससे बनी चीज़ों की प्रति व्यक्ति-औसत खपत 4.76 औंस प्रति दिन थी, जो अब 4.9 औंस है। इस सम्बन्ध में अलग-अलग राज्यों में बहुत अन्तर विद्यमान था—पंजाब, राजस्थान, हिमाचलप्रदेश और उत्तरप्रदेश में देश के अन्य भागों के मुकाबले अपेक्षाकृत अधिक खपत थी। आशा की जाती है कि तीसरी योजना के अन्त तक प्रति व्यक्ति-खपत 5.1 औंस प्रति दिन हो जाएगी। सन्तुलित भोजन के लिए प्रति व्यक्ति प्रति दिन कम-से-कम 10 औंस की आवश्यकता होती है। इस तरह, इसकी खपत के बारे में आज जिस स्तर की बात सोची जा रही है, वह पूर्णतः अपर्याप्त है।

प्रगति की समीक्षा

4. पहली योजना में पशुपालन-कार्यक्रमों के अन्तर्गत 146 मुख्यग्राम-खंड, जिनमें कृत्रिम गर्भाधान-केन्द्र थे, और 25 गोसदन स्थापित किए गए। पशुओं की महामारी के उन्मूलन के लिए भी एक मार्गदर्शक योजना शुरू की गई। दूसरी योजना में 196 नए मुख्यग्राम-खंड स्थापित करने का काम हाथ में लिया गया और पहली योजना में स्थापित 114 मुख्यग्राम-खंडों का विकास किया गया। पहली योजना में जो मुख्यग्राम-खंड स्थापित किए गए थे, उनमें 4 अलग-अलग इकाइयां थीं। दूसरी योजना के मुख्यग्राम-खंडों में 6-6 इकाइयां हैं। दूसरी योजना के अन्त तक कुल मिला कर 2,000 मुख्यग्राम-इकाइयां स्थापित की जा चुकी थीं। सन् 1960 तक 670 कृत्रिम गर्भाधान-केन्द्र स्थापित किए गए थे। दूसरी योजना में 34 गोसदन और स्थापित किए गए तथा 246 गोशालाएं विकास के लिए चुनी गईं। दूसरी योजना के अन्त तक करीब 4,000 पशु-चिकित्सा-अस्पताल और औषधालय खोले जा चुके थे। इनमें से 650 पहली योजना में स्थापित किए गए थे और करीब 1,900 दूसरी योजना में। दूसरी योजना में गोसदन-योजना में संशोधन किया गया, ताकि राज्य-सरकारें और गैर-सरकारी संस्थाएं, दोनों ही गोसदन स्थापित कर सकें। नुक्सान में कमी करने के विचार से यह प्रस्ताव किया गया कि चमड़ा कमाने और खाल उतारने तथा पशु-शवों को काम में लाने के लिए गोसदनों में चर्मालयों की भी व्यवस्था की जाए और उनमें उपकरण तथा मशीनें, आदि लगाई जाएं। पशुपालन पर पहली योजना में कुल 8 करोड़ रु० और दूसरी योजना में 21 करोड़ रु० के व्यय की व्यवस्था थी।

तीसरी योजना के कार्यक्रम

5. बहुत-सी परिसीमाओं के कारण पहली और दूसरी योजना की अवधि में पशुपालन के क्षेत्र में यथेष्ट विकास-कार्य नहीं किया जा सका। इनमें से कुछ बाधाएं तो प्रायः बनी रहती हैं—जैसे, बेकार और फालतू मवेशियों की अधिकता, भोजन में पौष्टिकता की कमी और अच्छी नस्ल के सांड़ों का अभाव। बहुत-से मुख्यग्राम-खंड स्थापित नस्ल-सुधार-क्षेत्रों के बाहर 'अवर्गीकृत' इलाकों में बसे हुए थे। कई राज्यों में प्रशिक्षित कर्मचारियों की भी कमी थी। तीसरी योजना में पशुपालन के लिए करीब 54 करोड़ रु० की व्यवस्था है। इसमें मुख्यग्राम-कार्यक्रम का पुनर्गठन किया गया है, ताकि प्रत्येक खंड में 10 इकाइयों की व्यवस्था हो सके और केन्द्रीय कृत्रिम गर्भाधान-केन्द्र स्थापित किए जा सकें। पशु-महामारी से सम्बद्ध कार्यक्रम को और तेजी से लागू किया जाएगा और बधिया करने का एक वृहत् कार्यक्रम शुरू किया जाएगा।

6. **नस्ल सुधार :** जैसा कि दूसरी योजना में बताया गया था, भारत में मवेशियों की 25 बढ़िया नस्लें हैं और भैंसों की 6। ये नस्लें देश के विभिन्न भागों में फैली हुई हैं। प्रत्येक नस्ल में बहुत बढ़िया किस्म के कुछ ही मवेशी होते हैं। कुछ नस्लें दूध-उद्योग के लिए अच्छी होती हैं। इनमें मादाएं तो बहुत दूध देती हैं, पर बैल अच्छे नहीं होते। अधिकतर नस्लें बोझा ढोनेवाली किस्म की हैं, जिनमें गाएं कम दूध देनेवाली होती हैं, लेकिन बैल बढ़िया किस्म के होते हैं। बीच की भी कुछ नस्लें हैं, जिन्हें दोहरा प्रयोजनवाली कहा जा सकता है। इनमें गाएं औसत से ज्यादा दूध देती हैं और बैल भी बहुत मेहनती होते हैं। मवेशियों की ये बढ़िया नस्लें देश के खुश्क भागों में पाई जाती हैं। इन क्षेत्रों से बाहर, देश के बाकी बहुत बड़े भाग में,

जो मवेशी हैं—विशेषकर पूर्व और दक्षिण में—वे अवर्गीकृत किस्म के हैं और किसी विशेष वर्ग में नहीं आते । भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद्-द्वारा निर्धारित और केन्द्र तथा राज्य-सरकारों-द्वारा मान्यता-प्राप्त अखिल भारतीय प्रजनन-नीति में कहा गया है कि उत्कृष्ट प्रजनन के माध्यम से बढ़िया दुधारू नस्ल में दूध की मात्रा ज़्यादा-से-ज़्यादा बढ़ाने की कोशिश की जानी चाहिए और नरों का प्रयोग अवर्गीकृत मवेशियों के विकास में होना चाहिए । बढ़िया भारवाही नस्लों के बारे में उद्देश्य यह रखा गया कि उनकी काम करने की क्षमता में किसी प्रकार की रुकावट डाले बिना उनकी दूध देने की क्षमता यथासम्भव बढ़ाई जाए । इस प्रकार 'दोहरे प्रयोजनवाली' नस्ल तैयार करना और इसका विकास करना ही प्रजनन-नीति है, जिससे अच्छी खेती के लिए बैल और मनुष्य के उपयोग के लिए दूध की मात्रा, दोनों ही उपलब्ध हों । तीसरी योजना में प्रयोग के तौर पर इन दिशाओं में काम करने के अलावा यह भी विचार है कि ऊंचाईवाले क्षेत्रों में, जहां वर्षा अधिक होती है, विदेशी नस्लों से मिश्र प्रजनन भी शुरू किया जाए । विदेशी पशु-सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने के वास्ते जरसी पशुओं के केन्द्रिक यूथ के लिए एक फार्म स्थापित करने का विचार है ।

7. मुख्यग्राम-कार्यक्रम पर, जो पिछली दो योजनाओं में व्यापक मवेशी विकास का मुख्य कार्यक्रम रहा है, हाल ही में एक विशेषज्ञ-समिति ने फिर से विचार किया है । समिति ने सुझाव दिया है कि मुख्यग्राम-खंड के काम में सुधार करने और ऐसे खंडों को बन्द करने की दृष्टि से, जिनमें सन्तोषजनक काम नहीं हुआ है, राज्य-सरकारों को उनके काम की समीक्षा करनी चाहिए । बढ़िया किस्म के सांड़ों की कमी को दूर करने के ख्याल से सुझाव दिया गया है कि सरकारी फार्मों में और निजी फार्मों में, जहां आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध हों या उपलब्ध की जा सकती हों, राज्य-सरकारों को पूरी तरह सोच-विचार कर खरीदारी-कार्यक्रम तथा सन्तति-परीक्षण-कार्यक्रम शुरू करने चाहिए । मुख्यग्राम-क्षेत्रों में सन्तोषजनक ढंग से प्रजनन-नियन्त्रण करने के लिए यह सुझाव दिया गया है कि बधिया करने के कार्यक्रम को तेज़ी से लागू किया जाए और सांड़ों को छोटी अवस्था में ही बधिया करने के पक्ष में प्रचार किया जाए । यह भी सुझाव दिया गया है कि मुख्यग्राम-क्षेत्रों में बछड़ों के पोषण के कार्यक्रम का विकास किया जाए । समिति ने इस ओर ध्यान आकर्षित किया है कि मुख्यग्राम-कार्यक्रम से सम्बद्ध खाद्य और चारा-विकास-कार्यक्रम के क्षेत्र में सन्तोषजनक प्रगति नहीं हुई है । इस दोष को दूर करने के लिए समिति ने कई सुझाव दिए हैं, जिनमें ये भी शामिल हैं: चारे के वर्तमान साधनों का बेहतर इस्तेमाल; जहां चरागाह बना दिए गए हैं, वहां चराई का नियन्त्रण; सीमान्त और उपसीमान्त भूमि में चारे की फसलें उगाना; धान की फसल के बाद फलीवाले पौदों की फसल उगाना; खत्तियों का निर्माण तथा किसानों में गायों के चराने-लायक घास उगाने के कार्यक्रम का प्रचार करना; और पशुओं को सन्तुलित भोजन देना । इस बात की आवश्यकता पर बल दिया गया है कि पशुधन और पशुधन के उत्पादनों की बिक्री पशुपालकों की सहकारी हाट-व्यवस्था-समितियों के माध्यम से होनी चाहिए । कृत्रिम गर्भाधान से सम्बद्ध वर्तमान प्रबन्ध को उन्नत करने के बारे में भी समिति ने कई सुझाव दिए हैं ।

8. दूसरी योजना में मुख्यग्राम-क्षेत्रों और मवेशी-फार्मों की आवश्यकता की दृष्टि से सांड़ों के सन्तति-परीक्षण की एक योजना शुरू की गई । परीक्षण के लिए मवेशियों की हरियाना नस्ल और भैंसों की मर्रा नस्ल चुनी गई । विचार यह है कि इस प्रकार की

सन्तति-परीक्षण-योजना धीरे-धीरे हर महत्वपूर्ण नस्ल के लिए लागू की जाए। आन्ध्रप्रदेश की ओंगोल नस्ल और गुजरात की कांकरेज नस्ल पर भी सन्तति-परीक्षण किया जा रहा है।

9. कुछ नियत नस्लों के अनुरूप मवेशियों की रजिस्ट्री करना मवेशियों की नस्ल सुधारने का एक महत्वपूर्ण उपाय है। विचार है कि मुख्य नस्ल-सुधार-क्षेत्रों में किसानों को नस्ल-सुधार-समितियां कायम करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए, जिनमें मवेशियों को दर्ज करने और जितना दूध हो, उसका रिकार्ड रखने की व्यवस्था हो। ये समितियां अन्य क्षेत्रों की जरूरत के अनुसार अच्छी नस्ल के सांड़ों की भी व्यवस्था करेंगी। तीसरी योजना में इस कार्यक्रम के अधीन मवेशियों की हरियाना, गिर और ओंगोल नस्लों पर तथा भैंसों की मुर्रा नस्ल पर मुख्यतः ध्यान दिया जाएगा।

10. पशुपालन के कार्यक्रमों को लागू करने में अच्छी नस्लों के सांड़ों की कमी एक खास रुकावट रही है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए कृत्रिम गर्भाधान का प्रयोग तेजी से बढ़ाया जा रहा है। इस समय 125 सरकारी मवेशी-प्रजनन फार्म हैं, लेकिन इनमें कुल 5,000 के करीब सांड़ तैयार होते हैं। यह संख्या असली आवश्यकता का एक बहुत ही छोटा हिस्सा है। तीसरी पंचवर्षीय योजना में नस्ल-सुधार-क्षेत्रों में 11 सांड़-पालन-फार्म स्थापित करने की व्यवस्था है। इसमें करीब 30,000 बछड़े तैयार करने में सहायता देने की भी व्यवस्था है। अगर ग्राम-पंचायतों और सहकारी नस्ल-सुधार-समितियों को काफी सुविधाएं दी जाएं, तो इस योजना का काफी विस्तार किया जा सकता है। यह भी प्रस्ताव है कि इस समय जो 33 सरकारी मवेशी-प्रजनन-फार्म हैं, उनमें ढोरों की संख्या बढ़ाई जाए तथा उनके प्रबन्ध में सुधार किया जाए, ताकि वे बड़ी संख्या में बढ़िया सांड़ तैयार कर सकें। अनेक नए पशुधन-फार्म भी स्थापित किए जाने हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में पशुधन-विकास आम तौर पर पिछड़ गया है। फिर भी, इन क्षेत्रों में विदेशी नस्लों के साथ मिश्र प्रजनन की काफी गुंजायश है। पहाड़ी मवेशियों के विकास की दृष्टि से सांड़ तैयार करने के लिए एक विदेशी प्रजनन-फार्म स्थापित करने का विचार किया जा रहा है। बड़े नस्ल-सुधार-क्षेत्रों में एक कठिन समस्या इस कारण सामने आती है कि ज्यादा दूध देनेवाले पशु लगातार बड़े-बड़े नगरों में भेजे जा रहे हैं, जहां वे एक या दो ब्यांत के बाद ठल्ले करार दे दिए जाते हैं। इस राष्ट्रीय हानि को रोकने के लिए उपाय खोजे जा रहे हैं।

11. **भोजन और पौष्टिकता :** संख्या में वृद्धि के साथ-साथ अपर्याप्त भोजन और पौष्टिकता का अभाव बहुत हद तक पशुधन की किस्म में गिरावट के लिए ज़िम्मेदार हैं। इसलिए चरागाहों का विकास, चारे के उत्पादन में वृद्धि, इसे रखने के लिए बेहतर प्रबन्ध और कृषि के उप-उत्पादनों का बेहतर उपयोग—ये पशुपालन-विकास के महत्वपूर्ण पहलू हैं। तीसरी योजना में जो उपाय करने का विचार है, उनमें ये भी शामिल हैं—पशुधन-फार्मों में चारे की किस्म सुधारने का काम, गांवों में चारा-प्रदर्शन-प्लाटों की स्थापना, पौदे लगाने के साज़-सामान का वितरण, साइलेज बना कर फालतू बचे चारे का संरक्षण, चुनिन्दा मवेशियों को सन्तुलित मात्रा में भोजन देना, उन्नत तरीकों को अपनाना तथा चारा-प्रदर्शन एवं प्रशिक्षण-केन्द्रों की स्थापना। अभाव के दिनों में चारा-बैंकों का काफी महत्व होता है। दूसरी योजना के दौरान एक ऐसा बैंक स्थापित किया गया था। तीसरी योजना में दो और चारा-बैंक खोलने का विचार है। एक चारा तथा चरागाह-अनुसन्धान-संस्था स्थापित करने का भी विचार है। मिली-जुली खेती के विकास के लिए उपयुक्त क्षेत्रों का चुनाव किया जाएगा। इसके लिए

नदी-घाटी-क्षेत्रों तथा उन क्षेत्रों को, जहां पशुधन का पहले ही सन्तोषजनक विकास हो चुका है, प्राथमिकता दी जा रही है। इन क्षेत्रों में खाद्य और प्रमुख व्यावसायिक फसलें तथा चारा और फलीदार फसलें बारी-बारी से उगाई जाएंगी, बढ़िया किस्म के 'दोहरे प्रयोजनवाले' मवेशी खरीदने के लिए वित्तीय सहायता दी जाएगी तथा चारे के बीज-फार्म और प्रदर्शन-केन्द्र स्थापित किए जाएंगे।

12. **फालतू मवेशी :** फालतू और बेकार मवेशियों की समस्या सभी जगह गम्भीर है, हालांकि इस प्रकार के मवेशियों की संख्या विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग है। जैसा कि दूसरी योजना में बताया गया था, मवेशियों की संख्या अधिक होने से उनके भोजन की व्यवस्था ठीक तरह नहीं हो पाती और भोजन-व्यवस्था ठीक न होने से उत्पादन बढ़ाने में बाधा पड़ती है। घटिया किस्म के मवेशियों का खात्मा मवेशी-उन्नयन और क्रमबद्ध नस्ल-सुधार के कार्यक्रम का अभिन्न अंग है। इस समस्या को किसी हद तक खत्म करने के विचार से गोसदन-योजना, जो सन् 1948 में मवेशी-परीक्षण और विकास-समिति ने तैयार की थी, चालू की गई। इस योजना में बेकार मवेशियों को अलग रखने की व्यवस्था है, ताकि उनकी संख्या और न बढ़ पाए तथा फसल को नुक्सान न पहुंचे। गत दस वर्षों में 59 गोसदन खोले जा चुके हैं—25 पहली योजना में और 34 दूसरी योजना में। तीसरी योजना में 23 नए गोसदन खोलने का विचार है। गोसदन स्थापित करने में स्वभावतः ही कुछ कठिनाइयां सामने आती हैं। इनमें वन्य क्षेत्रों के अन्दरूनी भागों में जहां चरने के लिए आवश्यक सुविधाएं मौजूद हैं, उचित स्थान का प्राप्त न होना, सबसे बड़ी कठिनाई है। गोसदनों को और लाभप्रद रूप देने की दृष्टि से समय-समय पर कार्यक्रम में सुधार किए गए हैं। इस सिलसिले में खाल, हड्डी, सींग, आदि के भरपूर उपयोग के लिए सुविधाएं देने की आवश्यकता पर बल दिया गया है और प्रति पशु-खर्च कम करने की कोशिश की गई है।

जंगली और हरैल पशुओं का खतरा भी पालतू मवेशियों की समस्या का एक पहलू है। दूसरी योजना में गोसदन-कार्यक्रम के एक अंग के रूप में जंगली तथा हरैल पशुओं को पकड़ने, पालतू बनाने और फिर उनकी निकासी की एक योजना शुरू की गई थी। इस योजना के अन्तर्गत दिल्ली, जम्मू-कश्मीर, मध्यप्रदेश, पंजाब तथा उत्तरप्रदेश में काम हो रहा है।

फालतू मवेशियों की समस्या की विकटता और उसकी विशेषताओं को देखते हुए बूढ़े साड़ों को खत्म करने के ख्याल से तीसरी योजना में बधिया करने का कार्यक्रम बड़े पैमाने पर शुरू करने का विचार है। इस कार्यक्रम के अनुसार बधिया करने का काम बड़े पैमाने पर पहले उन क्षेत्रों में शुरू किया जाएगा, जिनमें पशुधन-विकास-कार्यक्रम तेजी के साथ शुरू किए जा चुके हैं। बाद में उसे अन्य क्षेत्रों में फैलाया जाएगा।

13. **पशु-चिकित्सा की सुविधाओं का विस्तार और रोग-नियन्त्रण :** आशा है कि तीसरी योजना में पशु-चिकित्सा-अस्पतालों और औषधालयों की संख्या बढ़ कर 8,000 हो जाएगी और प्रत्येक विकास-खंड में कम-से-कम एक ऐसा अस्पताल या औषधालय होगा। टीकों और सीरे का भी उत्पादन बढ़ाया जाएगा, क्योंकि छूत की बीमारियों की रोकथाम के लिए इनकी ज़रूरत होती है। दूसरी योजना में पशु-महामारी-उन्मूलन का जो कार्यक्रम शुरू किया गया था, उसके अन्तर्गत 9 करोड़ मवेशियों को सुरक्षित कर दिया गया है। अब कोई 4 करोड़ 10 लाख मवेशी बाकी रहते हैं। आशा की जाती है कि सन् 1963-64 के अन्त तक देश में गोजाति के सभी पशुओं को टीके लगाए जा चुकेंगे। इसका एक अनुवर्ती कार्यक्रम शुरू

करने का विचार है, जिसके अन्तर्गत रक्षित क्षेत्र बनाए जाएंगे और पशुओं के प्रवेश करने की मुख्य जगहों पर 10 संगरोध-केन्द्र खोले जाएंगे। इन्हें मिला कर इस प्रकार के केन्द्रों की संख्या 28 हो जाएगी।

14. **सूअर-उद्योग का विकास :** सूअर-उद्योग के उत्पादनों से सस्ता पशु-प्रोटीन प्राप्त होता है और पौष्टिकता-सम्बन्धी आवश्यकताओं के सुधार की दृष्टि से ये बहुत महत्वपूर्ण हैं। उप-उत्पादन के रूप में प्राप्त सूअर के कड़े बाल बहुमूल्य निर्यात-सामग्री हैं। दूसरी योजना की अवधि में सूअर-उद्योग-विकास-खंडों में उपयोग के लिए अच्छी नस्ल के सूअर तैयार करने के वास्ते 13 सूअर-प्रजनन इकाइयां स्थापित की गई थीं। इन इकाइयों के नस्ल-सुधार-सम्बन्धी उपादानों का प्रयोग करने के लिए 28 सूअर-उद्योग-विकास-खंड भी स्थापित किए गए थे। इसके अलावा, 2 प्रादेशिक सूअर-प्रजनन-केन्द्र एवं सूअर-मांस-कारखाने भी खोले जा चुके हैं। इनमें से एक अलीगढ़ (उत्तरप्रदेश) में स्थापित किया गया और दूसरा हरिणघाट (पश्चिम- बंगाल) में। तीसरी पंचवर्षीय योजना में सूअर-उद्योग का बड़े पैमाने पर विकास करने की व्यवस्था है। 2 सूअर-प्रजनन-केन्द्र एवं सूअर-मांस-कारखाने, 12 सूअर-उद्योग-इकाइयां तथा 140 सूअर-उद्योग-विकास-खंड स्थापित करने का विचार है। इस उद्योग का व्यापक विकास होने से ग्राम-समुदाय के गरीब वर्गों के बहुत-से लोगों का आर्थिक स्तर ऊंचा उठाने में मदद मिलेगी।

15. **घोड़ों का नस्ल-सुधार :** देश-विभाजन से पहले सशस्त्र सेनाओं की घोड़ों, खच्चरों, आदि की आवश्यकता ज्यादातर उन विशेष नस्ल-सुधार-योजनाओं से पूरी की जाती थी, जो सरकार ने नहरी बस्तियों में चालू कर रखी थीं। कुछ हद तक विदेशों से आयात करके भी इस आवश्यकता को पूरा किया जाता था। हालांकि अब युद्ध में मशीनों का प्रयोग बहुत बढ़ गया है, फिर भी पर्वतीय तोप-सेना तथा पशु-परिवहन कम्पनियों में और पर्वतीय क्षेत्र में बोझा, आदि ले जाने के लिए घोड़ों तथा खच्चरों की काफी मांग है। ये सब मांगें और इनके साथ ही पुलिस की मांगें 'अनियन्त्रित' पद्धति से, जो कि उत्तरप्रदेश और पंजाब के कुछ ज़िलों में अब भी प्रचलित हैं, और कुछ हद तक आयात से पूरी की जाती हैं।

वर्तमान नस्लों की रक्षा की नीति तथा भारतीय घोड़ों की एक नस्ल तैयार करने के उद्देश्य के परिणामस्वरूप 'भारतीय सुपोषित नस्ल' का विकास हुआ है। इस नस्ल के घोड़े दौड़ने में तेज़ होते हैं; इनमें काफी शक्ति, धैर्य और दृढ़ता होती है तथा इनकी चाल सहज होती है। इस नस्ल के घोड़ों की घुड़दौड़-क्लबों में बहुत मांग है। काठियावाड़ी और मारवाड़ी नस्लों के अतिरिक्त अन्य नस्लों—जैसे, भोटिया, मणिपुरी, स्पिती, शाहाबादी, आदि—को सुधारने की ओर कोई खास ख्याल नहीं दिया गया है। पहली और दूसरी योजनाओं में घोड़ों की नस्ल उन्नत करने का व्यवस्थित प्रयास नहीं किया गया। तीसरी योजना में एक अश्व-प्रजनन-फार्म स्थापित किया जाएगा, जिसमें 48 घोड़ियां और 2 प्रजनन-अश्व तथा 20 गधियां और 5 प्रजनन-गधे रखे जाएंगे। इस फार्म में प्रति वर्ष 12 प्रजनन-अश्व और 6 प्रजनन-गधे तैयार किए जाएंगे और इन्हें स्थानीय नस्लों के सुधार के लिए 10 चुने हुए प्रजनन-केन्द्रों में रखा जाएगा। अगले चार वर्षों में विदेशों से सीमित संख्या में घोड़े मंगाने की बात भी तय हो गई है। अश्व-प्रजनन-कार्यक्रम के अन्य पहलुओं—जैसे, राष्ट्रीय अश्व-प्रजनन-केन्द्र की स्थापना, सहकारी प्रजनन-योजनाओं तथा निजी अश्व-प्रजनन-केन्द्र खोलने के प्रस्ताव—पर विचार किया जा रहा है।

16. **भेड़ें और ऊन-विकास :** देश में करीब 7 करोड़ 20 लाख पौंड ऊन का उत्पादन होता है, जिसमें से दरी-गलीचे, आदि बनाने के उपयुक्त करीब आधा ऊन विदेशों को भेज दिया जाता है; लेकिन इसके साथ ही 1 करोड़ 50 लाख पौंड से लेकर 1 करोड़ 70 लाख पौंड तक अर्द्धविधायित ऊन विदेशों से मंगाया जाता है। सन् 1959-60 में ऊन, भेड़ों तथा उनके उत्पादन से 26.6 करोड़ रु० के मूल्य की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई, जब कि 8.8 करोड़ रु० का अर्द्धविधायित ऊन विदेशों से मंगाना पड़ा। अनुमान है कि तीसरी योजना के अन्त तक भेड़ों तथा उनके उत्पादनों का निर्यात-मूल्य बढ़ कर करीब 35 करोड़ रु० हो जाएगा। दूसरी योजना में बढ़िया किस्म की भेड़ें तैयार करने के लिए 4 भेड़-प्रजनन-फार्म खोले गए। स्थानीय नस्लों में सुधार करने की दृष्टि से स्थापित नस्ल-सुधार-क्षेत्रों के 305 भेड़ और ऊन-विस्तार-केन्द्रों को भेड़े दिए गए। प्रजनन-सुविधाएं उपलब्ध करने के अलावा ये केन्द्र भेड़ों के बाल उतारनें, उनकी श्रेणी निर्धारित करने तथा उनकी बिक्री बढ़ाने के उन्नत तरीकों का निदर्शन भी करते हैं। तीसरी योजना में 15 भेड़-प्रजनन-फार्म स्थापित किए जाएंगे तथा 17 फार्मों का विस्तार किया जाएगा। ग्रामीण क्षेत्रों के भेड़-पालकों को इन फार्मों से कुल मिला कर 2,000-2,500 अच्छी नस्ल के भेड़े दिए जाएंगे। आशा की जाती है कि इन विभिन्न उपायों से तीसरी योजना के अन्त तक ऊन का उत्पादन बढ़ कर 9 करोड़ पौंड हो जाएगा। स्वदेशी उद्योग-द्वारा बढ़िया किस्म के ऊन की वृद्धिशील मांग को देखते हुए भेड़ों के बालों को ठीक तरह से उतारने तथा उनकी किस्म निर्धारित करने का एक बड़ा कार्यक्रम राजस्थान में शुरू किया जाएगा। मिली-जुली खेती के विकास के लिए भेड़ों से काम लेना शुरू किया जाए—इस ख्याल से कुछ राज्यों की योजनाओं में ऋण देने की भी व्यवस्था की गई है।

17. **कुक्कुटपालन :** सूअर-उद्योग के साथ ही, कुक्कुटपालन से गांवों और नगरों, दोनों में रोजगार की सम्भावनाएं बढ़ती हैं—विशेषकर समाज के गरीब वर्गों के लिए। फिर भी, व्यावसायिक अंडा-सेवन-उद्योग और व्यावसायिक खाद्य-उद्योग से सम्बन्ध न होने तथा कुक्कुट-उत्पादनों की बिक्री की कोई संगठित व्यवस्था न होने के कारण भारत में कुक्कुटपालन-उद्योग मूलतः कुटीर उद्योग ही है। दूसरी योजना में प्रजनन के उद्देश्य से बढ़िया किस्म के कुक्कुट तैयार करने के लिए साज-सामान से लैस 5 प्रादेशिक कुक्कुट-फार्म खोले गए थे। इन प्रादेशिक फार्मों से राज्यों के कुक्कुट-फार्मों, विस्तार-केन्द्रों तथा कुक्कुट-पालकों को कुक्कुटों के चूज़े दिए गए। दूसरी योजना के दौरान 269 कुक्कुटपालन-विस्तार-केन्द्र भी खोले गए। तीसरी योजना में 60 राज्य-कुक्कुट-फार्मों के विस्तार तथा 3 प्रादेशिक कुक्कुट-फार्मों और 50 विस्तार एवं विकास-केन्द्रों को बढ़ाने की व्यवस्था है। प्रत्येक कुक्कुट-विकास-केन्द्र में 100 कुक्कुटों की एक प्रदर्शन-इकाई और एक अंडा-अनुवर्रण-इकाई है, जिसमें किसानों को कुक्कुटपालन-केन्द्र में कुक्कुटपालन के आधुनिक तरीके समझाए जाते हैं। इन केन्द्रों में व्यावसायिक अंडा-सेवनालय भी खोले जाएंगे। आशा की जाती है कि इन उपायों के कारण प्रति मुर्गी-अंडों की औसत संख्या 60 से बढ़ कर 70 हो जाएगी। 2 प्रादेशिक बत्तख-प्रजनन-फार्म, 17 बत्तख-विस्तार-केन्द्र, 1 अंडा-चूर्ण कारखाना और कुक्कुटों का चग्गा तैयार करनेवाले 15 केन्द्र भी स्थापित करने का विचार है।

18. **हाट-व्यवस्था :** बढ़िया किस्म के पशु तैयार करने के विचार से यह ज़रूरी है कि पशुधन तथा पशुधन-उत्पादनों की वर्तमान हाट-व्यवस्था में सुधार किया जाए। यह विकास का एक ऐसा पहलू है, जिस पर अभी तक कोई खास ध्यान नहीं दिया गया है। व्यापार के

तरीकों का नियमन ज़रूरी है और बाज़ारों के अहातों में पशुओं को सुस्ताने और पानी पीने, आदि की सुविधाएं दी जानी चाहिए। पालनेवालों को भाव और बिक्री की सम्भावनाओं के बारे में अधिकृत सूचनाएं देने की सुविधाएं भी अभी सन्तोषजनक नहीं हैं। प्रत्येक राज्य में ––विशेषकर मुख्यग्राम-खंडों में––पशुधन तथा पशुधन-उत्पादनों की बिक्री के लिए एक कार्यक्रम होना चाहिए। ठीक तरह से बाल कतरने, उनकी किस्म निर्धारित करने और ऊन की बिक्री की योजनाएं भी काफी महत्व की हैं। राज्यों की योजनाओं में खाल उतारने के ठीक-ठीक तरीके के बारे में तथा छीजन का उचित उपयोग करने के बारे में प्रदर्शन तथा प्रचार करने के कार्यक्रम भी शामिल हैं। कई राज्यों ने बूचड़खानों में सुधार करके मांस-मंडियों का विकास करने तथा कुछ जगहों पर स्वास्थ्य-सिद्धान्तों को ध्यान में रख कर चलाए जाने वाले कसाईखाने खोलने के लिए विशेष व्यवस्था की है।

19. **खाल-कढ़ाई, सफाई तथा छीजन का उपयोग :** आधुनिक बूचड़खाने और कसाई-खाने पर्याप्त संख्या में न होने की वजह से देश में जितनी खाल का उत्पादन होता है, उसका अधिकांश मरे पशुओं की खाल का होता है, जो बूचड़खाने की खाल की किस्म को देखते हुए घटिया किस्म की होती है। उचित तरीके से खाल उतारने और उसे वैज्ञानिक तरीके से साफ करने की सुविधाओं की कमी होने की वजह से देश में जो चमड़ा और खाल तैयार की जाती है, वह घटिया किस्म की होती है और अन्तर्राष्ट्रीय मंडी में उसके कम दाम उठते हैं।

सन् 1960-61 में 28 करोड़ रु० की खाल और चमड़े का निर्यात हुआ तथा आशा की जाती है कि 1965-66 तक यह निर्यात बढ़ कर 34 करोड़ रु० का हो जाएगा। स्वदेशी चमड़ा-निर्माता बढ़िया किस्म के चमड़े की आपूर्ति के लिए अधिकाधिक दबाव डाल रहे हैं। इस बारे में प्रमुख समस्याएं ये हैं : एक तो, जिन साधनों से बेकार अंश इकट्ठे किए जाने हैं, वे बिखरे हुए हैं और दूसरी बात यह, कि स्थानीय खाल उतारनेवाले अपना वर्षों-पुराना व्यवसाय छोड़ने की इच्छा रखते हैं। इस कारण यह ज़रूरी है कि मृत पशुओं की ज़्यादा खाल इकट्ठी करने के लिए और खाल उतारने के बेहतर तरीके के लिए बड़े पैमाने पर काम शुरू किया जाए। इस प्रकार कार्यक्रम शुरू करने के लिए जिन चीज़ों की आवश्यकता होती है, वे ये हैं :

(1) बेकार अंशों की ठीक समय पर प्राप्ति और सभी उप-उत्पादनों––जैसे, मांस, हड्डी, सींग और चर्बी, आदि––का पूरा-पूरा उपयोग;

(2) प्रशिक्षित कर्मचारियों की देखरेख में उन्नत तरीकों से चमड़े और खाल कमाना, और

(3) कुछ चुने हुए केन्द्रों में प्रशिक्षण की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था।

तीसरी योजना के दौरान खाल उतारने, उसकी सफाई करने तथा बेकार अंशों का उपयोग करने के 14 छोटे और 1 बड़ा केन्द्र तथा 2 हड्डी पीसनेवाली चलती-फिरती इकाइयां खोलने का विचार है।

20. **मवेशी-बीमा :** कभी-कभी महामारी फैलने से किसानों के भारवाही या दुधारू पशु मर जाते हैं और उन्हें बड़ा नुक्सान उठाना पड़ता है। बम्बई की 'कोआपरेटिव म्युच्युअल इंश्योरेंस कम्पनी' ने महाराष्ट्र और गुजरात-राज्यों में दुधारू पशुओं और भारवाही मवेशियों का बीमा करना शुरू किया है। केरल-सरकार ने भी इस तरह की योजना में दिलचस्पी दिखाई है। आन्ध्रप्रदेश, उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, मैसूर, मद्रास और पंजाब की सरकारों

ने मवेशियों का बीमा करने की सम्भावनाओं की जांच करने की योजनाओं का प्रस्ताव किया है ।

21. **अन्य योजनाएं** : गोशाला-जैसी निजी संस्थाओं के माध्यम से मवेशी-विकास-कार्यों को गति देने का विचार है । दूसरी योजना में बढ़िया किस्म के सांड़ तैयार करने के लिए 246 गोशालाओं को चुना गया था । इन गोशालाओं के सांड़ों को प्रजनन के लिए और दूध का उत्पादन बढ़ाने के लिए बांटा जाएगा । इस बात पर विचार किया जा रहा है कि 168 अन्य गोशालाओं को वित्तीय तथा तकनीकी सहायता दी जाए, ताकि वे मवेशी-प्रजनन एवं दूध-उत्पादन-इकाइयों में परिणत की जा सकें ।

देश के कुछ भागों में बंजारे रहते हैं, जो परम्परा से मवेशी-पालन का काम करते हैं और जिनके पास कुछ खास नस्लों के बढ़िया मवेशी होते हैं । इन व्यावसायिक पशुपालकों की आर्थिक दशा सुधारने की आवश्यकता है, ताकि वे अपना पुराना धन्धा करते रहें और पशुओं का सुधार तथा विकास करें और उनके पास जो अच्छे पशु हों, उनका उपयोग अवर्गीकृत क्षेत्रों के विकास में किया जा सके । दूसरी योजना की अवधि में आन्ध्रप्रदेश, भूतपूर्व बम्बई राज्य, उत्तरप्रदेश और राजस्थान में इन मवेशी-व्यवसायी बंजारों के पुनर्वास की योजना शुरू की गई थी । राजस्थान के मवेशी-व्यवसायी बंजारों के पास 'राठी' और 'थरपारकर' नस्ल के जो पशु हैं, उनके विकास की भी व्यवस्था की गई है ।

22. **केन्द्रीय गोसंवर्द्धन-परिषद्** : मवेशियों के—खास कर गाय के—विकास में पहले से ही संलग्न निजी संस्थाओं और संगठनों को इस काम में शामिल करने के ख्याल से सन् 1960 में केन्द्रीय गोसंवर्द्धन-परिषद् बनाई गई । परिषद् को विशेष कार्य सौंपे गए हैं—जैसे, मवेशियों के परीक्षण और विकास से सम्बद्ध कार्यों का आयोजन करना, उनको अमल में लाना तथा उनमें समन्वय स्थापित करना और दूध की मात्रा बढ़ाने एवं भारवाही पशुओं की किस्म सुधारने की योजनाओं को लागू करना । परिषद् गोशालाओं और चर्मालयों के कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण-केन्द्र चलाएगी, प्रदर्शनियों का आयोजन करेगी और खेतिहर श्रमिकों के लिए पत्रिकाओं, फिल्मों तथा पुस्तिकाओं की व्यवस्था करेगी । केन्द्रीय गोसंवर्द्धन-परिषद् से यह भी उम्मीद की जाती है कि वह गोसंवर्द्धन के काम में दिलचस्पी लेनेवाली विभिन्न संस्थाओं के बीच अच्छा समन्वय स्थापित करेगी ।

23. **शिक्षा और अनुसन्धान** : दूसरी योजना में शैक्षणिक कार्यक्रमों का काफी हद तक विकास किया गया । इस अवधि में 3 नए पशु-चिकित्सा-कालेज खोले गए और पहले से विद्यमान 14 कालेजों में से 5 का विस्तार किया गया । इज्ज़तनगर के भारतीय पशु-चिकित्सा-अनुसन्धान-संस्थान में स्नातकोत्तर कालेज स्थापित करने के अलावा मथुरा, मद्रास, बम्बई और पटना के 4 पशु-चिकित्सा-कालेजों का विस्तार किया गया, ताकि उनमें स्नातकोत्तर प्रशिक्षण दिया जा सके । तीसरी योजना में 2 नए पशु-चिकित्सा कालेज खोले जाएंगे । इनमें से एक गुजरात में होगा और दूसरा बिहार में । पशुपालन-विस्तार के तरीकों में पर्याप्त प्रशिक्षण की व्यवस्था करने के ख्याल से प्रत्येक कालेज के साथ एक विस्तार-शाखा जोड़ने का भी विचार है । दूसरी योजना में 5,000 पशु-चिकित्सा-स्नातकों की जो अनुमानित मांग थी, वह काफी हद तक पूरी हो चुकी है । अनुमान है कि तीसरी पंचवर्षीय योजना में 6,800 पशु-चिकित्सा-स्नातकों की आवश्यकता होगी, जब कि वर्तमान कालेजों से कुल 5,800 स्नातकों की ही निकासी हो सकेगी । इस प्रकार 1,000 पशु-चिकित्सा-स्नातकों की कमी रह जाएगी,

जिसे पूरा करना होगा। यह अनुभव किया गया है कि वर्तमान संस्थाओं के तथा योजना की अवधि में जो 2 नए पशु-चिकित्सा कालेज खोले जाने हैं, उनके पूरे-पूरे उपयोग से पशु-चिकित्सा-स्नातकों की मांग काफी हद तक पूरी हो जाएगी। कोई 70,000 पशुपालकों को प्रशिक्षित करने का भी प्रबन्ध किया जाएगा, जिससे तीसरी योजना की आवश्यकताएं पूरी हो जाएंगी।

भेड़ों और ऊन के उत्पादन के बारे में बुनियादी और अन्य अध्ययन शुरू करने के लिए राजस्थान में एक केन्द्रीय भेड़-प्रजनन-अनुसन्धान-संस्थान स्थापित किया जाएगा। इसके दो उपकेन्द्र होंगे—एक पंजाब के पहाड़ी क्षेत्र में और दूसरा नीलगिरि में। इस संस्थान में भेड़ों की विभिन्न किस्मों के पालन के सिलसिले में भूमि के उपभोग के बारे में बुनियादी पहलुओं की, ज्यादा उत्पादन के लिए मिश्रीकरण की समस्याओं की, विदेशी नस्लों के परीक्षण की और उत्पादन की सापेक्षता में पौष्टिकता की जांच की जाएगी। यह संस्थान उत्पादन और विधायन के सन्दर्भ में ऊन-टेक्नोलाजी की समस्याओं पर भी विचार करेगा। उपकेन्द्र का काम समशीतोष्ण जलवायुवाले प्रदेशों से लाई गई भेड़ों की नस्ल में परिवर्तित जलवायु सहन करने की शक्ति बढ़ाने के लिए प्रयोग के तौर पर प्रजनन-कार्य करना होगा।

दूध-उद्योग और दूध की आपूर्ति

24. भारत में दूध-उद्योग के सामने कई कठिनाइयां हैं—जैसे कि काफी दूर-दूर पर और कम मात्रा में दूध का उत्पादन, देश के अधिकांश भागों में परिवहन की कठिनाइयां, दूध इकट्ठा करने, उसके उत्पादन और विधायन के लिए आवश्यक मशीनों और संयन्त्रों के लिए आयात पर आश्रित रहना, तकनीकी और कुशल कर्मचारियों की कमी तथा सुव्यवस्थित पद्धति का अभाव। इसलिए संगठित आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों से फालतू दूध जमा करने की तथा उपभोक्ताओं को मुनासिब दाम पर बढ़िया दूध और दूध की चीजें देने की दिशा में प्रयत्न करने होंगे।

प्रगति की समीक्षा

25. पहली योजना में इस कार्य के लिए 7.81 करोड़ रु० की जो व्यवस्था की गई थी, करीब-करीब उस सारी रकम का उपयोग हो गया था। पहली योजना के मुख्य कार्यक्रम थे—बड़े शहरों में स्वास्थ्यवर्द्धक ढंग से दूध की आपूर्ति की व्यवस्था करना और उसके आधार-रूप में ग्रामीण इलाकों से दूध जमा करना।

दूसरी योजना में दूध-उद्योग के विकास-कार्यक्रमों के लिए 17.44 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई थी। इस रकम में से 12.05 करोड़ रु० खर्च हो जाएंगे। दूसरी योजना में ये बातें शामिल हैं—बड़े-बड़े उपभोग-केन्द्रों में दूध की आपूर्ति के लिए 36 दूध-संयन्त्र लगाना, ग्रामीण इलाकों में मक्खन निकालने के 12 कारखाने खोलना, दूध-क्षेत्रों में फालतू दूध का उपयोग करने के लिए दूध की चीजों के 7 कारखाने चालू करना, 12 दूध और सुरक्षा-फार्मों का विस्तार करना, तकनीकी कर्मचारियों का प्रशिक्षण और दूध-क्षेत्रों का सर्वेक्षण।

26. विदेशी मुद्रा की कमी और संयन्त्र तथा मशीनें प्राप्त करने में कठिनाई के कारण दूध-उद्योग के विकास-कार्यक्रमों को आम तौर पर उन्हीं योजनाओं तक सीमित रखना पड़ा, जिनके लिए उपकरण या तो देश में ही उपलब्ध थे या विदेशी सहायता के अन्तर्गत दिए गए थे। दिल्ली, पूना, कुड़गी, करनाल, गुंटूर, कोडइकनाल और हरिणघाट में पहले ही दुग्धालय

स्थापित किए जा चुके है । कुछ प्रमुख नगरों में भी प्रायोगिक दूध-योजनाएं शुरू की गई है । इस समय दूध-आपूर्ति की कुल 28 योजनाओं पर अमल हो रहा है और वे विभिन्न चरणों में हैं । विदेशी सहायता से दूध की बनी चीज़ों के दो कारखाने—एक अमृतसर में और दूसरा राजकोट में—स्थापित किए गए है और तीन ग्रामीण मक्खन-कारखाने—बरौनी, अलीगढ़ और जूनागढ़ में—स्थापित किए गए है । सन् 1958-59 के अन्त में देश में 2,257 सहकारी दूध-आपूर्ति-समितिया और 77 दूध-आपूर्ति-संघ थे । इनके 2,11,131 सदस्य थे और 183 लाख रु० का निजी कोश था । इन्होंने 11.32 करोड़ रु० मूल्य का दूध और दूध की बनी चीज़ें बेचीं ।

तीसरी योजना के कार्यक्रम

27. दूध-उद्योग के बारे में नीति यह है कि दूध-परियोजनाओं का विकास किया जाए और ग्रामीण क्षेत्र में दूध-उत्पादन पर ज्यादा ज़ोर दिया जाए । साथ ही, फालतू दूध को शहरी केन्द्रों में बेचने की योजनाएं भी उनके साथ समन्वित कर दी जाएं । गांवों में फैली सहकारी उत्पादक-समितियां दूध इकट्ठा करने और उसकी आपूर्ति का काम करेंगी । दूध का विधायन और वितरण तथा दूध की चीज़ें बनाने का काम भरसक सहकारिता के आधार पर चलाए जानेवाले संयन्त्रों के माध्यम से किया जाएगा । आशा की जाती है कि सहकारी संगठनों के माध्यम से काम करने पर जनता का अच्छा सहयोग मिल सकेगा और इस काम के लिए योजना के अधीन जो कोश है, उसकी भी वृद्धि होगी । सरकारी क्षेत्र में विकास का जो लक्ष्य रखा गया है, उसके अलावा निजी क्षेत्र में भी दूध की चीज़ें तैयार करने के काम को बढ़ावा देने का विचार है । दूसरी योजना में बच्चों के लिए दूध-खाद्य तथा माल्टयुक्त दूध-खाद्य तैयार करने के लिए क्रमशः एक-एक छोटा कारखाना और मीठा किए हुए सूखे दूध के लिए एक बड़ा कारखाना स्थापित किया गया । तीसरी योजना में दो कारखानों में बच्चों के लिए दूध के खाद्य-पदार्थों का उत्पादन शुरू हो जाएगा और इनकी क्षमता लगभग 900 टन की होगी । तीन कारखानों में सूखा दूध तैयार किया जाएगा, और उनकी कुल क्षमता प्रति वर्ष 5,300 टन माल तैयार करने की होगी । एक कारखाने में प्रति वर्ष 670 टन दूध की पेय सामग्रियां तैयार की जाएंगी ।

28. तीसरी योजना में एक लाख से ज्यादा आबादीवाले शहरों में और विकासशील औद्योगिक नगरों में 55 नई दूध-आपूर्ति-योजनाएं शुरू की जाएंगी । कुछ दूध-क्षेत्रों में अच्छे भावों में तरल दूध की फौरन बिक्री की गुंजायश नहीं है । ऐसी जगहों पर किफायत के साथ दूध का उपयोग करने की दृष्टि से मक्खन, घी, पनीर तथा अन्य उप-उत्पादनों—जैसे, केसीन, लेक्टोज़, दूध-चूर्ण, आदि—के उत्पादन के लिए कारखाने (क्रीमरी) स्थापित किए जाएंगे । गांवों के दूध-क्षेत्रों का विकास करने के लिए 8 मक्खन-कारखाने, दूध की चीज़ों के 4 कारखाने तथा 2 पनीर-कारखाने स्थापित करने का विचार है । दूध गाढ़ा करनेवाले पदार्थों की भी आम तौर पर कमी है, जिसकी वजह से दूध की लागत बढ़ जाती है । कृषि में बेकार जानेवाले और उप-उत्पादनों—जैसे, गेहूं और धान की भूसी, गन्ने का फोक, सीरा, छिलकाहीन खली—का उपयोग करके सन्तुलित खाद्य तैयार करने से मवेशियों के लिए सस्ता चारा प्राप्त

करने में बहुत हद तक सहायता मिल सकती है । दूध-आपूर्ति के बड़े-बड़े कारखानों के आस-पास मवेशियों की सानी तैयार करनेवाले चार कारखाने खोलने का विचार है। तीसरी पंचवर्षीय योजना में दूध-सम्बन्धी कार्यक्रमों के लिए 36 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है ।

दूध-कार्यक्रमों को गति देने के लिए देश में ही दूध-उद्योग के काम आनेवाले उपकरण और मशीनें बनाने की व्यवस्था करनी होगी। दूध-उपकरणों के निर्माण को—विशेषकर छोटे-छोटे दुग्धालयों के लिए आवश्यक उपकरणों के निर्माण को—बढ़ावा दिया जाना चाहिए, ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में दूध-उद्योग को स्थानीय उद्योग के रूप में लोकप्रिय बनाया जा सके। चार फर्मों को पहले ही दूध-उद्योग का सामान बनाने के लिए लाइसेंस दिए जा चुके हैं। तीसरी योजना की अवधि में इनमें उत्पादन शुरू हो जाएगा। दूसरी योजना में शुरू की गई अधिकांश दूध-आपूर्ति-योजनाओं का विस्तार किया जाएगा, ताकि उत्पादकों से अधिक दूध लिया जा सके। चूंकि अक्सर दूध काफी दूर से लाना पड़ता है, इसलिए बड़े-बड़े दूध-विधायन-संयन्त्रों के लिए ठंडी रेल में परिवहन की अधिकाधिक सुविधाएं देने की खास व्यवस्था की गई है।

29. दूध-उद्योग का विकास-कार्यक्रम बनाते समय शहरों की आवश्यकताओं के साथ-साथ किसानों के हितों का भी ख्याल रखा गया है। मिली-जुली खेती के माध्यम से कृषि-अर्थव्यवस्था की बुनियाद को मज़बूत करने के लिए गांवों में सहकारिता के आधार पर चलाए जानेवाले छोटे-छोटे दुग्धालयों और मक्खन-कारखानों के विकास पर ज़ोर दिया जाएगा । दूध देने की अवधि पूरी हो जाने के बाद अच्छे पशुओं के परिरक्षण के लिए बड़े शहरों के पास सुरक्षा-फार्म खोले जाएंगे। जिन क्षेत्रों में दूध-उद्योग और दूध-आपूर्ति की योजनाएं शुरू की जाएंगी, उनमें सघन मवेशी-विकास-योजनाएं भी हाथ में ली जाएंगी ।

30. 'दोहरे प्रयोजनवाले' पशुओं के विकास को बढ़ावा देने के विचार से दूध-कार्यक्रमों को आस-पास के गांवों की अर्थव्यवस्था के साथ कारगर रूप से घुला-मिला दिया जाएगा। यह बात आम तौर पर स्वीकार की जाती है कि चावल की खेतीवाले कुछ इलाकों को छोड़कर, जहां भैंस दोनों ही उद्देश्य पूरे कर सकती है, पशुपालन और दूध-उद्योग की योजनाओं के माध्यम से गाय की दोनों नस्लों को बढ़ावा देना है । इस लक्ष्य को ध्यान में रख कर तीसरी योजना में दुधारू पशु खरीदने के लिए ऋण देने की योजना पर ज़्यादा ध्यान दिया जाएगा और इसके अन्तर्गत प्रजनन-नीति पूरी करने की दिशा में कोशिश की जाएगी । गायों की अच्छी नस्ल के संवर्द्धन के लिए कारखानों को भरसक गाय का दूध भी भैंस के दूध के भाव ही खरीदना चाहिए । दूध का भाव निश्चित करने में उसके चिकनाई-सम्बन्धी तत्व को ही एकमात्र कसौटी नहीं मानना चाहिए । गाय के दूध में चिकनाई की मात्रा कम ज़रूर होती है, लेकिन उसमें कुछ ऐसे विशेष गुण हैं, जिनकी वजह से बच्चों और अस्पताल के रोगियों के लिए इसे ज़्यादा पसन्द किया जाता है।

जहां तक बड़े शहरों के बड़े-बड़े दुग्धालयों का सवाल है, इस प्रकार की योजनाओं की कड़ी गांव से मिलाने की पूरी कोशिश की जानी चाहिए, ताकि दूध का उत्पादन बढ़ाने और बोझा ढोने के दोहरे उद्देश्य से मवेशी-विकास-द्वारा ये दूध-योजनाएं ग्राम-

अर्थव्यवस्था में उन्नत करने में प्रत्यक्षतः सहायता दे सकें। सोपानबद्ध कार्यक्रमों के अनुसार मध्यम आकार के नगरों में मौजूदा छोटे दुग्धालयों को भी इसी दिशा में ढाला जायगा।

31. शहरों को सफाई-व्यवस्था में सुधार करने और दूध-आपूर्ति की अधिक किफायत से व्यवस्था करने के लिए आरे, हरिणघाट और माधवरम् (मद्रास) में मवेशियों की बस्तियां बसाई गई हैं। बस्तियां स्थापित करने के इस तरीके में काफी पूंजी लगी है और इसलिए यह बेहतर समझा गया है कि राज्य की ज़िम्मेदारी भूमि और आवश्यक सेवाओं--जैसे, सड़कें, जल-आपूर्ति और बिजली--की व्यवस्था करने तक ही सीमित हो। विकसित क्षेत्र प्लाटों के रूप में बांटे जाएंगे और विस्थापित मवेशी-मालिकों को मुनासिब शर्तों पर पट्टे पर दिए जाएंगे। जिन लोगों को ये प्लाट दिए जाएंगे, उन्हें स्वीकृत योजना के अनुसार अपने खर्च से मवेशियों के लिए आवश्यक छाजन और अन्य भवन बनाने पड़ेंगे। दूध की बिक्री के लिए सुविधाएं दी जाएंगी। इस प्रकार, दुधारू पशुओं का शहरों से हटाया जाना और बस्तियों में फिर से बसाया जाना मुख्यतः स्वास्थ्य एवं गन्दे इलाकों की सफाई का उपाय समझा जाएगा और इसकी मुख्य ज़िम्मेदारी नगरपालिकाओं और नगर-निगमों पर होगी।

अनुसन्धान, प्रशिक्षण और शिक्षा

32. अनुसन्धान और प्रशिक्षण की अधिक सुविधाएं देने के विचार से राष्ट्रीय दूध-अनुसन्धान संस्था को बंगलोर से करनाल ले जाया गया है। तेज़ी से बढ़ते हुए दूध-उद्योग की अधिक मांगों को पूरा करने के लिए तीसरी योजना में जब इस संस्था में दुधारू पशुपालन, टेक्नोलाजी, रसायनशास्त्र, जीवाणु-विज्ञान, पोषण-विज्ञान, विस्तार-पद्धति और अर्थशास्त्र के अनुसन्धान-प्रभाग खुल जाएंगे, तब उसकी स्थापना का काम पूरा हो जायगा। यह संस्था दूध-उद्योग की बढ़ती हुई मांगों को पूरा करने का प्रयत्न करेगी। संस्था के बंगलोर-स्थित उपकेन्द्र का भी विस्तार किया जाएगा। दूध-विषयक शिक्षा के क्षेत्र में बंगलोर, इलाहाबाद, आनन्द और आरे में 'इंडियन डेरी डिप्लोमा' (आई० डी० डी०) की सुविधाएं और करनाल में बी० एस-सी० (दूध-विज्ञान) तथा स्नातकोत्तर अध्ययन की सुविधाएं बढ़ाने का विचार है। दूध-विज्ञान में स्नातक-स्तर के प्रशिक्षण-पाठयक्रम आनन्द की कृषि-संस्था में भी शुरू किए जाएंगे। बड़े-बड़े दुग्धालयों में संयन्त्रों पर काम करते हुए प्रशिक्षण देने की पद्धति--जो पहले ही शुरू की जा चुकी है--तीसरी योजना में जारी रहेगी और इसका विकास किया जाएगा। खाद्य और कृषि-संगठन का प्रादेशिक प्रशिक्षण-कार्यक्रम, जिसके अन्तर्गत काम हो रहा है, जारी रखा जाएगा और उसका विस्तार किया जाएगा। यह भी प्रस्ताव है कि विभिन्न दूध-प्रशिक्षण-केन्द्रो में अध्यापकों के लिए अध्यापकीय कर्मशालाओं का आयोजन किया जाए और विभिन्न श्रेणियों के तकनीकी कर्मचारियों के लिए--जिनकी विभिन्न दूध-परियोजनाओं में ज़रूरत होती है--अन्य प्रत्यास्मरण-पाठ्यक्रम शुरू किए जाएं। तीसरी योजना में अनुमानतः 2,830 दूध-कर्मचारियों की आवश्यकता होगी। इनमें से 625 डिग्री-प्राप्त, 975 डिप्लोमा-प्राप्त और 1,230 अन्य श्रेणियों के कर्मचारी होंगे। आशा की जाती है कि इतने तकनीकी कर्मचारियों की आवश्यकता काफी हद तक पूरी हो जाएगी।

मछली-उद्योग

33. भारतीय समुद्रों के जल-साधन भांति-भांति के हैं और काफी बड़ी मात्रा में हैं। करीब 3,000 मील लम्बा तट प्रान्त, 1,00,000 वर्गमील से अधिक महाद्विपीय निधान, हिन्द-महासागर की दो विशाल भुजाएं, अनेक खाड़ियां, आदि—भारत के समुद्री साधन सचमुच बहुत हैं। पूरे तटप्रान्त में पश्चजल की पर्याप्त मात्रा है, सागर-संगम हैं, उपहृद और दलदल हैं—यानी इस तरह के साधन भी काफी हैं। बड़ी-बड़ी नदियां और 17,000 मील लम्बी उनकी सहायक नदियां, नहरें और उनके साथ 70,000 मील लम्बी सिंचाई-नालियां तथा अनेक झीलें, जलाशय, पोखरे और तालाब अन्तर्देशीय मछली-उद्योग के लिए बड़े समृद्ध साधन हैं। मछली और उससे सम्बद्ध उद्योगों में कोई दस लाख मछुओं को रोज़गार मिलता है। इनमें से अधिकांश लोग अत्यधिक गरीबी में रहते हैं। सहकारी आधार पर मछुओं को संगठित करके उनसे काम लिया जाए और उत्पादन के सभी पहलुओं में उन्नत नए तरीके अपनाए जाएं, तो मछली-उद्योग से होनेवाली आमदनी काफी बढ़ाई जा सकती है।

प्रगति की समीक्षा

34. पहली योजना में मछली-उद्योग के विकास पर 2.8 करोड़ रु० खर्च किए गए थे। दूसरी योजना में 9 करोड़ रु० खर्च हुए।

दूसरी योजना में 13.34 लाख एकड़ क्षेत्र के सर्वेक्षण से काफी मछली-सम्पदा के विद्यमान होने का पता चला है। उचित किस्मों की मछलियों को इकट्ठा करने के लिए 82,000 एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र तैयार किया गया। करीब 16.7 लाख एकड़ क्षेत्र में कोई 60 करोड़ फ्राई और आंगुलिक मछलियां इकट्ठी की गईं।

मछली पकड़ने के संयन्त्रों और साज़-सामान की बनावट में सुधार करने के विचार से कोचीन के केन्द्रीय मछली-संग्रह-टेक्नोलाजी-अनुसन्धान-संस्था में जांच-पड़ताल की गई है : मछली पकड़ने के नए-नए स्थानों की खोज करने के लिए केन्द्रीय तटीय मछली-संग्रह-केन्द्र के अतिरिक्त कोचीन, तुत्तुकुडि और विशाखापटनम् में भी ऐसे केन्द्र स्थापित किए गए। गुजरात, महाराष्ट्र, मैसूर, केरल, मद्रास और आन्ध्रप्रदेश में नावें बनाने के यार्ड स्थापित किए गए। कोई 1,800 नावें मशीनों से लैस की गईं। इनमें मछुए समुद्र में 15-20 मील की दूरी तक जा सकते हैं, जब कि पुरानी बिना मशीन की नावें ज्यादा-से-ज्यादा 6-7 मील तक जा सकती हैं—वैसे साधारणतः ये केवल 3 मील तक ही जाती हैं। तटवर्ती उत्पादन-केन्द्रों से ताज़ा मछली दिल्ली, कलकत्ता, वगैरह के लिए भेजने के वास्ते प्रयोग के तौर पर 6 ठंडे रेल-डिब्बे चालू किए गए हैं। इन विभिन्न उपायों के फलस्वरूप पहली योजना के अन्त तक मछली-उत्पादन 7 लाख टन से बढ़ कर 10 लाख टन हुआ और दूसरी योजना के अन्त में 14 लाख टन।

तीसरी योजना के कार्यक्रम

35. तीसरी योजना के मछली-उद्योग के कार्यक्रम इस मुख्य उद्देश्य को सामने रख कर तैयार किए गए हैं कि उत्पादन बढ़े, ताकि लोगों को अनाज के अलावा प्रोटीन-

युक्त आहार भी मिल सके। मछुओं की दशा सुधारने पर भी उचित ध्यान दिया गया है। फिर, निर्यात-व्यापार के विकास पर भी ज़ोर दिया गया है।

36. **अन्तर्देशीय मछली-क्षेत्र :** पहली और दूसरी योजनाओं में अन्तर्देशीय मछली-क्षेत्रों के लिए जो कार्यक्रम शुरू किए गए थे, उन्हें आगे बढ़ाया जाएगा। हारमोन-उपचार के द्वारा प्रेरित प्रजनन के तरीके से, जिसका भारतीय मछलियों पर सफल प्रयोग किया जा चुका है, बड़े पैमाने पर विस्तार करना सम्भव हो गया है। यह एक बड़ी बात है, क्योंकि अब अंडे देने के प्राकृतिक क्षेत्रों से अलग अंडे और छोटी मछलियों का उत्पादन किया जा सकता है। इस युक्ति से छोटी मछली और आंगुलिक मछलियों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने में कमी आएगी और परिवहन के क्रम में कम मछलियां मरेंगी। भारतीय शफरी मछली-पोखरों की उत्पादकता बढ़ाने में उपयोगी होती है। दक्षिण-पूर्व एशिया से लाई गई सामान्य शफरी का प्रचलन एक अन्य महत्वपूर्ण बात है, जो भारतीय शफरी-सम्पदा में एक उपयोगी वृद्धि है। इन सब बातों से मछली की आपूर्ति में काफी वृद्धि हो सकती है, बशर्ते कि इनके साथ ही पंचायतों और सहकारी समितियों के माध्यम से स्थानीय स्तर पर संगठन और बिक्री-व्यवस्था में सुधार किया जाए।

37. तीसरी योजना में विभिन्न राज्यों में 50,000 एकड़ जल-क्षेत्र को प्रदर्शन-जन्य मछली-फार्मों के रूप में इस्तेमाल करने की व्यवस्था है। इसी प्रकार, 1,500 एकड़ में संगम-क्षेत्रों के उपयोग के बारे में और 2,000 एकड़ में दलदल-भूमि के उपयोग के बारे में निदर्शन का काम शुरू किया जाएगा। 120 करोड़ छोटी मछलियां और आंगुलिक मछलियां इकट्ठी करके रखने का विचार है। नदी-घाटी-परियोजनाओं में भी, जिनमें मछली-क्षेत्र विकसित करने की काफी गुंजायश होती है, नियमित रूप से मछली जमा करने का काम किया जाएगा। तीसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रमों में ये भी शामिल हैं: पेड़ों, पत्थर के ठेंबों और अन्य रुकावटों को दूर करना; पालन-गृह कायम करना और जब तक मछली पूरी तरह तैयार न हो जाए, उसकी रक्षा के लिए उपाय करना। ये अनिवार्यतः दीर्घकालीन उपाय हैं और तीसरी योजना में जो संग्रह-कार्य किया जाएगा, उसका फल कोई 15 वर्ष बाद मिलेगा। फिर भी, दूसरी योजना में कुछ जलाशयों में जो काम किया गया था, उससे यह स्पष्ट है कि इन दिशाओं में किए गए विकास का कितना अधिक आर्थिक महत्व होता है।

38. अन्तर्देशीय जल का कारगर रूप से प्रयोग किया जाए, इसके लिए स्थानीय स्तर के संगठनों में कुछ सुधार करना ज़रूरी है। पहले जहां जल पर किन्हीं व्यक्तियों का अधिकार हुआ करता था, वहां उनके पास इसे विकसित करने के साधन नहीं थे। जहां इस पर सरकार का अधिकार था, वहां इनकी नीलामी कर दी गई और विकास के पहलू पर कोई खास ध्यान नहीं दिया गया; फलतः वहां मछलियां शीघ्र ही खत्म हो गईं। इसी वजह से बहुत-से तालाब पहले ही बेकार हो चुके हैं। पंचायत-समितियों और पंचायतों को विकासमान स्थानीय साधन के रूप में मछली-तालाबों और अन्य अन्तर्देशीय जल-साधनों की उन्नति करनी चाहिए। उन्हें सहकारी समितियों के निकट सहयोग से काम करना चाहिए और इन सहकारी समितियों के माध्यम से ऋण तथा बिक्री की सुविधाएं उपलब्ध की जानी चाहिए।

39. **सहकारी मछली-उद्योग-समितियां :** तीसरी योजना में सहकारी मछली-उद्योग-समितियों की स्थापना और उनका संचालन मछली-उद्योग के विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू है। इस समय कोई 2,100 सहकारी मछली-उद्योग-समितियां हैं, जिनकी कुल सदस्यता 2,20,000 के करीब है। ये अधिकतर आन्ध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, केरल और मद्रास में हैं, हालांकि मैसूर, असम, बिहार और उड़ीसा, आदि राज्यों में भी कुछ समितियां हैं। सहकारी मछली-उद्योग-समितियों में से किसी को कम और किसी को अधिक सफलता मिली है। उनमें से केवल 800 समितियां ऐसी हैं, जिनका काम सन्तोषजनक ढंग से संचालित कहा जा सकता है। कई कारणों से सहकारी समितियों के विकास को धक्का लगा है। उनमें अधिक महत्वपूर्ण ये हैं :

(क) आम तौर पर मछुओं के पास, अपनी नावें, जाल और अन्य उपकरण नहीं होते। नतीजा यह होता है कि बिचौलिए—जो मछुओं के लिए कर्ज़ की व्यवस्था करते हैं—उन्हें अपनी नावों पर काम करने के लिए नियुक्त कर लेते हैं। नाव काम में लाने की अनुमति देकर, कुल बिक्री का 50 प्रतिशत भाग तक नाव के किराए के रूप में ले लिया जाता है; और

(ख) सहकारी समितियां प्रमुखतः उधार देने की व्यवस्था करने में ही लगी रहीं और उत्पादन तथा बिक्री बढ़ाने की काफी कोशिश नहीं की गई।

वर्तमान सहकारी मछली-उद्योग-समितियों में फिर से जान डालना, उनका आगे विकास करना तथा उन्हें सहकारी बिक्री तथा विधायन-समितियों से जोड़ना एक महत्वपूर्ण काम है, जो तीसरी योजना में किया जाना है। इस उद्देश्य से एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार करने का विचार है। मछुओं को बिचौलियों के शोषण से बचाने के ख्याल से उनके लिए सहकारी समितियां बनाना ज़रूरी है, ताकि मछुओं की ऋणग्रस्तता खत्म हो और उत्पादन बढ़े।

40. **समुद्री मछली-उद्योग :** देश के कुल अनुमानित मछली-उत्पादन का दो-तिहाई हिस्सा समुद्र से प्राप्त होता है। तीसरी योजना में, वर्तमान नावों में इंजिन लगाने के कार्यक्रमों को बढ़ाने और मछली पकड़ने के लिए आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति को निश्चित व्यवस्था करने के अलावा 4,000 नई यन्त्र-सज्जित नावें चालू करने का विचार है। बम्बई, कोचीन, तुत्तुकुडि और विशाखापटनम्-स्थित गहरे समुद्र में मछली पकड़ने के बड़े केन्द्रों के मछली पकड़ने के कार्यक्रमों का विस्तार किया जाएगा तथा बेरावल, मंगलोर, पारद्वीप और पोर्ट ब्लेयर में अतिरिक्त टुकड़ियां कायम की जाएंगी। इन जांच-कार्यों से मछली पकड़ने के आधुनिक उद्योग के विकास में सहायता मिलेगी। 35 बड़े जहाज़ चालू करने और 16 पत्तनों में जहाज़ों में मछलियां उतारने और चढ़ाने का प्रबन्ध करने का भी विचार है।

41. मछली बहुत जल्दी खराब हो जाती है, इसलिए यह ज़रूरी है कि उसकी बिक्री के लिए पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध हों। पकड़ी हुई मछलियां अच्छे दामों पर बिकें, इसके लिए आवश्यक है कि उनके रखने के लिए बर्फवाले ठंडे भांडार हों, उनको साफ करने की और डिब्बों में बन्द करने की व्यवस्था हो। दूसरी योजना में इसकी शुरुआत

की जा चुकी है। कोचीन, मंगलोर और बम्बई में झींगा मछली को बर्फ मे जमाने की सुविधाओं की व्यवस्था हो गई है। तीसरी योजना मे विभिन्न राज्यों में अलग-अलग 72 बर्फ के और ठंडे संग्रह-संयन्त्रों की व्यवस्था करने का विचार है, ताकि मछली को अच्छी हालत में उपभोक्ता-केन्द्रों तक पहुंचाने मे सुविधा रहे। इसके अलावा, पश्चिम-भारत के तटवर्ती क्षेत्रों मे—विशेषकर केरल, मैसूर और गुजरात में—मछलियां जमाने और डिब्बों में बन्द करने की टुकड़िया कायम की जाने की आशा है। ठंडे रेल-डिब्बों के प्रयोग से प्राप्त अनुभव के आधार पर सारे देश के मछली-उत्पादन-केन्द्रों और उपभोक्ता-केन्द्रों के बीच नियमित परिवहन-व्यवस्था विकसित की जाएगी। प्रमुख मार्गों पर करीब 20 नए डिब्बे चलाने का विचार है। केरल में भी—जहां नई किस्म की नावें तैयार की गई है, नावों को मशीनों से लैस किया गया है और बेहतर उपकरणों का प्रयोग शुरू किया गया है— भारत-नार्वे-परियोजना पर अमल करने के फलस्वरूप यही बात स्पष्ट हुई है कि एक समन्वित बिक्री-व्यवस्था आवश्यक है। इस परियोजना मे बर्फ के और ठंडे भांडार-संयन्त्र को काम का आधार बनाया गया है। उपभोक्ता-केन्द्रों में मछली के परिरक्षण के साज-सामान की और विसंवाहित परिवहन की भी व्यवस्था की गई है।

आशा है कि तीसरी योजना की अवधि में जो कार्यक्रम शुरू किए जाने है, उनसे मछली का उत्पादन 14 लाख टन से बढ़ कर 18 लाख टन हो जाएगा। मछली का निर्यात-मूल्य करीब 6 करोड़ रु० से बढ़ कर 12 करोड़ रु० तक हो सकता है। तीसरी योजना में मछली-उद्योग के विकास के लिए 29 करोड़ रु० की धनराशि नियत की गई है।

अनुसन्धान और शिक्षा

42. **अनुसन्धान :** मंडपम में समुद्री मछली-उद्योग के लिए एक केन्द्रीय मछली उद्योग-अनुसन्धान-केन्द्र, बारकपुर में अन्तर्देशीय मछली-उद्योग के लिए अनुसन्धान-केन्द्र और बम्बई में गहरे समुद्र में मछली पकड़ने से सम्बन्धित बड़ा केन्द्र स्थापित हो जाने से व्यापार-योग्य जाति की मछलियों के प्राणिशास्त्रीय अध्ययन में काफी प्रगति हुई है। इसके साथ ही अन्तर्देशीय मछली-साधनों के संरक्षण और व्यवस्था की वैज्ञानिक जांच-पड़ताल में तथा नए मछली-क्षेत्रों के नक्शे तैयार करने में काफी प्रगति हुई है। तीसरी योजना में सागरवर्ती मछली-क्षेत्रों, सागरवर्णना, ऊंचाईवाले मछली-क्षेत्रों, ताज़ी झींगा मछलियों और पश्चजलीय मछली-क्षेत्रों के बारे में नए-नए अन्वेषण-कार्य शुरू किए जाएंगे। परीक्षण के तौर पर तथा खोज के लिए चार नए केन्द्रों में मछली पकड़ना शुरू किया जाएगा।

कोचीन के केन्द्रीय मछली-उद्योग-टेक्नोलाजिकल केन्द्र में मछलियां पकड़ने के यन्त्रों और उनके परिरक्षण; मछली पकड़ने की उन्नत यन्त्रसज्जित नावें तैयार करने; मछली को ताज़ा, ठंडी और जमी हुई हालत में रखने; मछली तथा समुद्र की दूसरी चीज़ों को साफ करने तथा उपभोग के बारे में जांच-पड़ताल का काम शुरू कर दिया गया है। इन जांच-कार्यो को और तेज़ी से किया जाएगा। केन्द्रीय केन्द्रों ने जो अनुसन्धान-कार्यक्रम शुरू किए हैं, उनके अलावा राज्यों के मछली-उद्योग-विभाग भी मछली-उद्योग की स्थानीय समस्याओं पर काम करेंगे।

43. **शिक्षा :** ज़िला-स्तर पर मछली-उद्योग के प्रशासकीय कर्मचारियों के लिए बम्बई में एक मछली-उद्योग-प्रशिक्षण-संस्था चालू हो गई है। उद्योग के अन्तर्गत विभिन्न स्तरों के कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के लिए कोचीन में एक संस्था कायम की जाएगी। सहायक मछली-उद्योग-विकास-अधिकारियों तथा अन्य कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए—जिनकी अन्तर्देशीय मछली-उद्योग में ज़रूरत होती है—उड़ीसा में भुवनेश्वर के पास कौशल्यागंगा में एक उपकेन्द्र खोला जाएगा।

तीसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान मछली-उद्योग की विभिन्न विकास-परियोजनाओं को चलाने के लिए अनुमानतः कुल 2,100 के आस-पास कर्मचारियों की आवश्यकता होगी। इनमें से 300 ज़िला-मछली-उद्योग अधिकारी होंगे और 500 अन्य तकनीकी अधिकारी। ज़िला-मछली-उद्योग-अधिकारियों की आवश्यकता तो ज़्यादातर केन्द्रीय मछली-उद्योग-शिक्षा-संस्था में प्रशिक्षण देकर पूरी हो जाएगी, जो बम्बई में स्थापित की जाएगी, तथा बाकी क्षेत्र-कर्मचारियों की आवश्यकताओं की पूर्ति बारकपुर के अन्तर्देशीय मछली-उद्योग-अनुसन्धान-केन्द्र, उड़ीसा के अन्तर्देशीय मछली-उद्योग-उपकेन्द्र तथा मछली पकड़ने के तटवर्ती केन्द्रों की गतिविधियों का विस्तार करके की जाएगी। जहां तक अनुसन्धान-संस्थानों के लिए तकनीकी कर्मचारियों की आवश्यकता का सवाल है, इसके लिए ज़रूरी है कि विश्वविद्यालयों में इस सिलसिले में पर्याप्त सुविधाएं दी जाएं।

अध्याय 22

वन और मिट्टी-संरक्षण

वन

वन-साधनों का विकास भूमि के अधिकतम उपयोग के कार्यक्रम का अभिन्न अंग है। वनों के दोनों ही कार्य—संरक्षण और उत्पादन—महत्वपूर्ण हैं। वनों से इमारती लकड़ी, ईंधन, चारा और अन्य अनेक वस्तुएं ही प्राप्त नहीं होती, बाढ़ और भू-क्षरण रोकने तथा भूमि उपजाऊ बनाए रखने में भी उनका बहुत योग है। मकान-निर्माण, फर्नीचर, कागज, नकली रेशम, प्लाईवुड, माचिस, चमड़ा आदि बहुत-से उद्योगों को अपने कच्चे माल के लिए वनों पर ही निर्भर रहना पड़ता है। जंगलों के क्षेत्र में रहनेवाली आदिम जातियों के लोगों की आमदनी बढ़ाने के लिए भी वनों और वन-उद्योगों का विकास आवश्यक है।

2. भारत की गर्म जलवायु, नियतकालिक वर्षा, वनों की अपर्याप्त उत्पादकता तथा मुख्यतः कृषि-अर्थव्यवस्था को देखते हुए यह आवश्यक है कि देश की कुल भूमि के एक-तिहाई भाग पर वन हों। परन्तु इसकी तुलना में वनों का वास्तविक प्रतिशत केवल 21.8 है। इतना ही नहीं, अधिकांश वन कुछ थोड़े-से राज्यों—जैसे, असम, मध्यप्रदेश और उड़ीसा तथा कुछ संघीय क्षेत्रों—में ही केन्द्रित हैं। उत्तर-भारत में तो भूमि की तुलना में वनों का अनुपात, भारत के कुल अनुपात के मुकाबले बहुत कम है। सारे देश में वन-क्षेत्र बढ़ाने की आवश्यकता तो है ही, उन क्षेत्रों में सघन विकास की भी ज़रूरत है, जहां वन-सम्पत्ति बहुत कम है।

3. एक ओर, वनों का क्षेत्र अभी तक अपर्याप्त है तथा दूसरी ओर, औद्योगिक और घरेलू, दोनों क्षेत्रों में वनों के उत्पादन की मांग बराबर बढ़ती जा रही है। अनुमान लगाया गया है कि औद्योगिक लकड़ी (लुगदी-सामग्री-सहित) की माग, जो आजकल 45 लाख टन है, सन् 1975 में बढ़ कर 95 लाख टन हो जाएगी। विशेष रूप से कागज़ और नकली रेशम के लिए काम में आनेवाली लुगदी की आवश्यकता बढ़ती हुई आबादी, साक्षरता के प्रसार और जीवन-स्तर में उन्नति के साथ-साथ बहुत अधिक बढ़ जाएगी। नई पौध लगाने पर उसके विकास में 25-30 वर्ष लगते हैं, इसलिए सामान्यतः सन् 1975 तक उत्पादन 55 लाख टन से ऊपर जाने की सम्भावना नहीं है। इसका अर्थ यह है कि तब भी 40 लाख टन की कमी रह जाएगी। ईंधन के काम में आनेवाली लकड़ी की बेहद कमी के कारण 40 करोड़ टन गोबर (गीले का वज़न)—जो 6 करोड़ टन जलानेवाली लकड़ी के बराबर होता है—खाद के रूप में इस्तेमाल करने के बजाय, प्रति वर्ष जलाने के काम में लाया जाता है। सन् 1975 तक जलानेवाली लकड़ी की कमी का अनुमान 10 करोड़ टन है। साधारण उत्पादनों में चमड़ा-उद्योग के काम आनेवाली सामग्री की वर्तमान मांग 30 हज़ार टन है, जिसका 30 प्रतिशत अभी भी विदेशों से आयात किया जाता है। अनुकूल रोपण-स्थिति के कारण ओषधियों के पौधों के विकास की बहुत गुंजायश है।

4. सुव्यवस्थित वनों के उत्पादक क्षेत्रों में साल का उत्पादन 2.75 टन प्रति एकड़ प्रति वर्ष है, जब कि देवदार का 4.10 टन और चीड़ का 1.30 टन है। कुछेक कारणों से

भारत में औसत उत्पादन बेहद कम है। राज्यों में अभी तक अवर्गीकृत वनों के विस्तृत क्षेत्र तथा ज़मीन्दारी-उन्मूलन के बाद सरकार-द्वारा अधिगृहीत निजी वन-क्षेत्र में वृक्षादि अधिक नहीं हैं; उनके विकास और सुधार की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए। दुर्गम पर्वतीय इलाकों के वनों में परिवहन की पर्याप्त सुविधाएं न होने के कारण इमारती लकड़ी का कुछ भाग बेकार चला जाता है। घटिया किस्म की लकड़ी की बड़ी मात्रा का, जो परिपक्व बनाने और संरक्षण के तरीकों के बाद उपयोग में लाने से अधिक समय तक काम दे सकती है, पूरा इस्तेमाल नहीं हो रहा है। वनों पर चले आ रहे परम्परागत अधिकारों और रिआयतों के कारण भी—जो निस्सन्देह महत्वपूर्ण हैं—उत्पादन में कमी हो जाती है। आर्थिक विकास की प्रगति तथा नदी-घाटी एवं अन्य परियोजनाओं पर कार्य होने के कारण वनों का क्षेत्र एक सीमा तक कम होना स्वाभाविक है। वनों का क्षेत्र बढ़ाने में कुछ स्वाभाविक कठिनाइयां हैं। इन परिस्थितियों में वन-नीति का मुख्य उद्देश्य उत्पादकता में क्रमिक वृद्धि करना तथा तेज़ी से बढ़नेवाले पेड़-पौधे लगाना होना चाहिए, जिससे अर्थव्यवस्था को बढ़ती हुई आवश्यकताएं पूरी की जा सकें।

प्रगति की समीक्षा

5. पहली और दूसरी, दोनों योजनाओं में संरक्षण की प्रक्रियाओं, संचार-व्यवस्था में सुधार, हल्की किस्म के वन लगाने, नई पौध—विशेष रूप से तेज़ी से बढ़नेवाले पेड़-पौधे—उगाने, सघन वन-संचालन के आधुनिक तरीकों के प्रयोग, परिपक्वता और संरक्षण-प्रक्रियाओं से घटिया किस्मों के बेहतर उपयोग, संचार-साधनों की उन्नति और लट्ठे बनाने के आधुनिक तरीके अपनाने पर विशेष बल दिया गया था। सन् 1950 में वन-सम्बन्धी केन्द्रीय मंडल की स्थापना की गई। सन् 1952 में सरकार ने अपनी वन-नीति की घोषणा की, जिसमें वनों के उत्पादक और संरक्षक, दोनों स्वरूपों पर बल दिया गया तथा दूरगामी लक्ष्य के रूप में सुझाव दिया गया कि भूमि के एक-तिहाई हिस्से पर वन लगाने चाहिए। पहली योजना में वनों के विकास पर 9.5 करोड़ रु० तथा दूसरी योजना में 19.3 करोड़ रुपये खर्च किए गए। केन्द्रीय सरकार ने वन-अनुसन्धान, वन-सम्बन्धी शिक्षण और वन्य जीवों के संरक्षण की योजनाएं सीधे अपने हाथ में ले लीं। भूतपूर्व ज़मीदारों और राजाओं की जागीरों के साधारण वर्ग के वन सरकार के नियन्त्रण में आ गए। इन क्षेत्रों के सीमांकन और नक्शे तैयार करने का काम शुरू किया गया। पहली और दूसरी योजनाओं में माचिस की लकड़ी के लिए 55,000 एकड़ क्षेत्र में तथा औद्योगिक लकड़ी के लिए 3,30,000 एकड़ क्षेत्र में पेड़ लगाने का काम किया गया। 18,000 वर्ग मील में सर्वेक्षण और सीमांकन किया गया, 9,000 मील लम्बे वन-मार्ग बनाए गए तथा निम्न कोटि के लगभग 4,00,000 एकड़ क्षेत्र के वनों का सुधार किया गया। पंजाब, हिमाचलप्रदेश, उत्तरप्रदेश और जम्मू-कश्मीर में विशेष रूप से लट्ठे बनाने के सुधरे हुए तरीकों का प्रदर्शन किया गया।

तीसरी योजना के कार्यक्रम

6. तीसरी योजना में पहली दो योजनाओं में आरम्भ हुए कार्यक्रमों को तेज़ी से आगे बढ़ाने की व्यवस्था के साथ-साथ देश की दीर्घकालीन आवश्यकताएं पूरी करने के उपायों पर बल देते हुए ऐसी व्यवस्था की गई है, जिससे वनों से प्राप्त उत्पादनों का अधिक किफायतपूर्ण और समुचित लाभ उठाया जा सके। घटिया किस्म की इमारती लकड़ी और लकड़ी के बुरादे

के उपयोग की भी व्यवस्था की गई है। तात्कालिक उद्देश्य इमारती लकड़ी प्राप्त करने के बेहतर तरीकों से उत्पादन में वृद्धि करना, वनों में संचार-व्यवस्था सुधारना एवं संरक्षण और परिपक्वता की प्रक्रियाओं से वन-उत्पादनों का अधिक-से-अधिक उपयोग करना है। राज्यों और संघीय क्षेत्रों में विकास-कार्यक्रमों के लिए योजना में 51 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। इसमें केन्द्रीय तथा केन्द्र-द्वारा मंचालित कार्यक्रमों के लिए 6.7 करोड़ रु० की राशि भी शामिल है। तीसरी योजना के कुछ प्रमुख कार्यक्रम संक्षेप में नीचे दिए गए हैं।

7. **आर्थिक लाभ के लिए पौध लगाना :** उद्योग की बढ़ती हुई मांग पूरी करने के लिए नई पौध लगाने का विशाल कार्यक्रम बहुत जरूरी है। इस नई पौध में लम्बे समय के बाद परिपक्व होनेवाली परम्परागत इमारती लकड़ी की किस्मों के अतिरिक्त तेजी से बढ़नेवाली किस्में भी होनी चाहिए। नए पौध-रोपण-कार्यक्रम में टीक के लिए 2,10,000 एकड़, बांस के लिए 40,000 एकड़, माचिस की लकड़ी के लिए 60,000 एकड़, बबूल के लिए 22,000 एकड़, जलाने की लकड़ी के लिए (जिसमें ओक वृक्ष भी सम्मिलित है) 46,000 एकड़ तथा अन्य प्रकार के पेड़ों, आदि के लिए 3,25,000 एकड़ भूमि की व्यवस्था है। तीसरी योजना की अवधि में 3,00,000 एकड़ अतिरिक्त भूमि पर औद्योगिक लकड़ी के लिए तेज़ी से बढ़ने--वाले वृक्षादि लगाने का भी कार्यक्रम है।

8. **ग्रामों में पौध-रोपण एवं वन-विस्तार :** ग्रामों में तथा ईंधन के काम की लकड़ी के लिए पौध-रोपण एवं वन-विस्तार के महत्व पर अनेक बार बल दिया जाता रहा है, परन्तु व्यावहारिक रूप से उसके परिणाम अधिक नहीं हैं। इन कार्यक्रमों को बड़े पैमाने पर पंचायतों और पंचायत-समितियों को सौंप दिया जाना चाहिए, वन-विभाग को हर क्षेत्र में बीज और पौधे मुहय्या करने का ध्यान रखना चाहिए। ग्रामों की सार्वजनिक भूमि पर, ग्रामीण सड़कों के दोनों ओर तथा कंटूर बांधों और सिंचाई के तालाबों के किनारों पर वृक्ष-रोपण में सारे समाज की ओर से प्रयास किए जाने की बहुत गुंजायश है। वृक्ष लगाने में किसानों को व्यक्तिगत रूप में भी सहायता मिलनी चाहिए। अनुमान है कि तीसरी योजना में खेतों के आसपास वन लगाने का काम 12 लाख एकड़ भूमि में पूरा किया जा सकेगा। राष्ट्रीय तथा राज्यीय मार्गों पर, नहरों के किनारे और रेलवे-लाइनों के दोनों ओर वृक्ष लगाने का कार्यक्रम बढ़ाना चाहिए। इस दिशा में प्रयत्न होने पर ईंधन की लकड़ी तथा औज़ारों एवं उपकरणों के काम आनेवाली लकड़ी की आपूर्ति में बहुत मदद मिल सकेगी।

9. **उत्पादन-वृद्धि के तरीकों को प्रोत्साहन :** लट्ठे बनाने के सुधरे हुए औज़ारों तथा यान्त्रिक उपकरणों की सहायता से नुकसान बचाने और लकड़ी के साधनों के अधिक उपयोग में सहायता मिलेगी। पहाड़ी इलाकों में विशेष रूप से काफी बचत हो सकती है। उन्नत देशों में इस्तेमाल किए जा रहे आधुनिक औज़ारों और अन्य साज़-सामान का परीक्षण किया जा चुका है तथा अनेक राज्यों में वन-विभागों के कर्मचारियों को उनके इस्तेमाल का प्रशिक्षण दिया गया है। देहरादून की वन-अनुसन्धान-संस्था में सुधरे हुए उपकरणों के सम्बन्ध में प्रयोग किए जा रहे हैं।

10. हिमालय पर्वत के ऊंचे स्थानों पर बसे हुए मूल्यवान वनों को अभी तक या तो काम में नहीं लाया गया अथवा आंशिक रूप से इस्तेमाल किया गया है। इसका मुख्य कारण उन तक पहुंचने की कठिनाइयां हैं। अनेक स्थानों पर एकदम सीधी और चट्टानी चढ़ाई है, जहां केबल-क्रेनों की आवश्यकता पड़ती है। वन-मार्गों को बड़ी सड़कों तथा नदी-घाटी से

जोड़ना चाहिए, जिससे इमारती लकड़ी का परिवहन अथवा उसे बहा कर ले जाना आसान हो जाए। योजना में 15,000 मील लम्बे वन-मार्गों के विकास की व्यवस्था है।

11. **वनों के लघु उत्पादन का विकास :** भारतीय वनों में अनेक प्रकार की छोटी-मोटी चीजें मिलती हैं। वन्य जीवों से प्राप्त वस्तुओं के अतिरिक्त वनों में 3,000 से ऊपर किस्मों के लघु उत्पादन हैं। जड़ी-बूटी, आवश्यक तेल, सरेस, चर्बीयुक्त तेल, चर्बी, गोंद, श्वेतसार, बांस, बेंत, अनेक किस्म की घास, कीड़ों से प्राप्त वस्तुओं––जैसे शहद, लाख और मोम––के दोहन और विकास की बहुत गुंजायश है। सर्पगन्ध-जैसी जड़ी-बूटियों के निर्यात की सम्भावनाएं भी बहुत हैं। विभिन्न वन-उत्पादनों के दोहन-सम्बन्धी कार्यक्रम राज्यों की योजनाओं में रखे गए हैं।

12. **इमारती लकड़ी का उपचार :** लगभग 100 गौण किस्मों की इमारती लकड़ी मिलती है, जिसका अभी पूरा उपयोग नहीं किया जा रहा है। उचित रीति से परिपक्व करने और संरक्षण-उपचार के बाद गौण इमारती लकड़ी को असली इमारती लकड़ी के स्थान पर इस्तेमाल किया जा सकता है। योजना में परिपक्वता के 27 और परिपक्वता एवं संरक्षण के 3 संयन्त्र लगाने की व्यवस्था है। यह ध्यान रखना चाहिए कि बढ़िया किस्म की इमारती लकड़ी बहुत महत्वपूर्ण और मूल्यवान कामों में तथा वहीं इस्तेमाल की जाए, जहां उसके स्थान पर किसी और किस्म से काम न चल सकता हो।

13. **सर्वेक्षण और सीमांकन :** संरक्षित वनों के बाहर के विशाल क्षेत्र और राज्यों-द्वारा हाल ही में अधिगृहीत क्षेत्रों का वर्गीकरण अभी नहीं हो सका है और न ही अभी तक उनकी कानूनी स्थिति निश्चित की गई है। उन क्षेत्रों को फिर से ठीक करने और वैज्ञानिक रीति से उनमें काम करने के लिए इन क्षेत्रों की भूमि का समुचित सीमांकन, आदि करना आवश्यक है। 43,000 वर्ग मील के क्षेत्र में सवक्षण और सीमांकन-कार्य की योजना बनाई गई है।

पहले से जिन इलाकों का सर्वेक्षण और सीमांकन हो चुका है, वहां फिर से सुधार का काम शुरू किया जाएगा। यह सुधार-कार्य 6,00,000 एकड़ भूमि में होगा, जो विशेष रूप से उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, मद्रास और मैसूर में है।

14. **वन-साधनों का विनियोग-पूर्व सर्वेक्षण :** कुछ अरसे से महसूस किया जा रहा है कि वनों पर निर्भर रहनेवाले उद्योगों––नकली रेशम, चिपबोर्ड, पार्टिकल बोर्ड, फाइबर बोर्ड आदि–– के विकास के लिए देश के वन-साधनों के व्यापक अनुमान की आवश्यकता है। जब तक कच्चे माल की पर्याप्त और निर्भरयोग्य आपूर्ति का प्रबन्ध नहीं किया जाता, तब तक सुगठित औद्योगिक इकाइयां नहीं बनाई जा सकतीं। तीसरी योजना में वन-साधनों और उद्योगों का, पूंजी लगाने के पहले, सर्वेक्षण करने का कार्यक्रम है। सर्वेक्षण का मुख्य उद्देश्य जल्दी उगनेवाले पेड़-पौधे लगाने का दीर्घकालीन कार्यक्रम बनाने, अन्दरूनी इलाकों में वन-क्षेत्र खोलने, तथा वनों पर आधारित उद्योगों के आर्थिक भविष्य का अनुमान लगाने में सुविधा पहुंचाना है। विनियोग-पूर्व सर्वेक्षण में विभिन्न उद्योगों की अगले 15 या इससे अधिक वर्षों की आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाएगा। सर्वेक्षण के बाद परिवहन-सुविधाओं में सुधार और सुगठित लकड़ी-उपयोग-इकाइयों (लकड़ी चीरने, तख्ते बनाने आदि) की स्थापना के विस्तृत कार्यक्रम तैयार किए जाएंगे। सर्वेक्षण के प्रकाश में ऐसे तरीके अपनाए जाने चाहिए, जो इमारती लकड़ी तथा आर्थिक दृष्टि से वनों के अन्य मूल्यवान उत्पादन की आपूर्ति और इनकी मांग के बीच की खाई कम करने में सहायक हों।

15. **चरागाहों का सुधार :** देश के कुछ भागों में पशुओं के चारे की कई बार बेहद कमी हो जाती है। कुछ ऐसे वृक्ष और झाड़ियां हैं, जिनकी पत्तियां, चारे की कमी के समय पशुओं के खाने के लिए व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाती हैं। जहां खेती बहुत अनिश्चित है और बड़े-बड़े क्षेत्र सिंचाई के बिना बेकार पड़े हैं और लोग पशुओं के बड़े-बड़े रेवड़ रखते हैं, वहां बड़े-बड़े चरागाह बनाना आवश्यक है, जिनमें चारे के काम आनेवाले पेड़-पौधे तथा झाड़ियां बड़ी संख्या में लगाई जाएं। योजना में ऐसे क्षेत्रों में 1,50,000 एकड़ भूमि पर चरागाहों के विकास की व्यवस्था की गई है।

16. **वन-अनुसन्धान :** देहरादून की वन-अनुसन्धान-संस्था में दूसरी योजना के दौरान शुरू किया गया अनुसन्धान-कार्यक्रम जारी रहेगा और उसमें विस्तार भी किया जाएगा। देहरादून की संस्था में हो रहे कार्य की सहायता के लिए तीन प्रादेशिक अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। विभिन्न प्रदेशों में प्राप्त अनेक किस्म की लकड़ी के उपयोग को बढ़ाने के उद्देश्य से उक्त केन्द्रों में विभिन्न प्रकार के गुणों—मज़बूती, टिकाऊपन, उपयोग में किफायत आदि—के बारे में विस्तार से अध्ययन किया जाएगा। चन्दन, अगर, आदि मूल्यवान सामग्रियों का उत्पादन बढ़ाने के कारणों तथा कम प्रचलित वन-उत्पादनों का उपयोग बढ़ाने की सम्भावनाओं की भी जांच की जाएगी। विभिन्न कामों में आनेवाले बेंत और बांस उगाने तथा उनके उपयोग के सम्बन्ध में भी परीक्षण किए जाएंगे।

17. **तकनीकी कर्मचारियों का प्रशिक्षण :** वन-विकास के विभिन्न कार्यक्रमों को सफलता से क्रियान्वित करने के लिए बड़ी संख्या में प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ेगी। अनुमान है कि राज्यों के वन-विभागों के लिए ही 480 अधिकारियों और 1,520 वन-कर्मचारियों (रेंजर्स) को प्रशिक्षित करना पड़ेगा। देहरादून के वन-महाविद्यालय में अधिकारियों के पाठ्यक्रम के लिए प्रवेश की सुविधा 85 से 100 कर देने का इरादा है। इसी प्रकार, देहरादून और कोयमुत्तूर के फारेस्ट रेंजर कालेजों में स्थान 200 से बढ़ा कर 300 करने का विचार है। इसके अतिरिक्त कुछ राज्यों ने भी फारेस्टर और फारेस्ट गार्डों (वन-रक्षकों) के काम के लिए लगभग 10,000 व्यक्तियों को प्रशिक्षण की सुविधाएं देने का कार्यक्रम बनाया है।

18. **प्रकृति-संरक्षण :** वन-विकास में प्रकृति-संरक्षण का बहुत महत्व है। इसमें न केवल प्राकृतिक वनस्पति का उचित संरक्षण और प्रबन्ध शामिल है, बल्कि जीव-जन्तुओं की रक्षा भी सम्मिलित है। जहां मानवीय हस्तक्षेप से जीव-जन्तुओं की संख्या बहुत कम हो गई है, वहां पशु-पक्षी बाहर से भेजे जाएंगे। योजना के अनुसार 5 चिड़ियाघर, 5 राष्ट्रीय उद्यान और 10 वन्य जीव-संरक्षण-क्षेत्र बनाने की व्यवस्था है। दिल्ली के चिड़ियाघर का और भी विस्तार किया जाएगा।

19. **वन-श्रमिकों के लिए सुविधाएं :** वन-श्रमिकों को समुचित रूप से संगठित नहीं किया गया है। उनके हितों की रक्षा करने एवं आदिम जातियों के लोगों को गैर-सरकारी ठेकेदारों से बचाने के लिए वन-श्रमिकों की सहकारी संस्थाएं बनाने का विचार है। इन संस्थाओं को आवश्यक रिआयतें देकर उनके काम तथा अन्य उत्पादनों के उपयोग को बढ़ावा दिया जाएगा। राज्यों की योजनाओं में वन-श्रमिकों के लिए मकान, डाक्टरी सहायता, पीने का पानी और प्राथमिक शिक्षा की सुविधाएं देने की व्यवस्था है।

20. **जन-सहयोग :** वनों के विकास में जन-सहयोग की एक बड़ी भूमिका है। गावों म

तथा वन-विस्तार के काम में स्थानीय जनता के योग का उल्लेख पहले किया जा चुका है। पौधे चाहे सरकारी संस्थाओं के ज़रिए लगाए जाएं अथवा जनता-द्वारा, उनकी देखभाल और रक्षा तभी हो सकती है, जब जनता वृक्षों के मूल्य को समझे और उनकी रक्षा के लिए वस्तुतः प्रयत्न करे। गांवों में ईंधन के काम आनेवाले पेड़-पौधे सारे गांव की महत्वपूर्ण सम्पत्ति हैं और ग्राम-समाजों को उनके विकास का काम अपने ऊपर ले लेना चाहिए और आगे चल कर तो वनों के प्रबन्ध की सारी ज़िम्मेदारी पंचायत-समितियों और पंचायतों को दी जा सकती है।

मिट्टी-संरक्षण

21. देश के अनेक भागों में खेती की उपज में कमी का मुख्य कारण यह है कि क्षरण के कारण मिट्टी धीरे-धीरे कम उपजाऊ होती जाती है। सिंचित क्षेत्रों में पानी जमा हो जाने के फलस्वरूप मिट्टी में नमक और क्षार की मात्रा बढ़ गई और वह कम उपजाऊ हो गई। अनुमान है कि लगभग 20 करोड़ एकड़ भूमि (अथवा देश की कुल भूमि के चौथाई भाग) को इस प्रकार कटाव से हानि पहुंच रही है। यदि मिट्टी ही उपजाऊ न रही, तो उत्पादन बढ़ाना तो दूर, सूखे खेतों में उतनी उपज कायम रखना भी सम्भव नहीं रह जाएगा। इसलिए मिट्टी-संरक्षण तथा नमी बनाए रखने के लिए बड़े पैमाने पर प्रभावशाली कदम उठाए जाने चाहिए।

प्रगति की समीक्षा

22. पहली पंचवर्षीय योजना में मिट्टी-संरक्षण-सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं को तत्काल हल करने की राष्ट्रव्यापी नीति बनाने पर बल दिया गया था। सन् 1953 में खाद्य और कृषि-मन्त्रालय ने केन्द्रीय मिट्टी-संरक्षण-मंडल नियुक्त किया, जिसे मिट्टी और जल-संरक्षण के सम्बन्ध में अनुसन्धान शुरू करने, चलाने और समन्वय करने; कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने तथा मिट्टी-संरक्षण-कार्यक्रम चलाने में राज्यों को सहायता देने का काम सौंपा गया। पहली योजना में मिट्टी-संरक्षण-कार्यक्रमों पर 1.6 करोड़ रु० खर्च किए गए। इस रकम का अधिकांश भाग कंटूर बांध बनाने और 7,00,000 एकड़ भूमि पर सीढ़ीदार खेत बनाने पर खर्च हुआ। यह कार्य मुख्यतः महाराष्ट्र और मद्रास-राज्यों में हुआ। जल-संरक्षण की समस्याओं का अध्ययन करने के लिए 8 प्रादेशिक अनुसन्धान-प्रदर्शन-केन्द्र स्थापित किए गए। इसके अतिरिक्त, जोधपुर में मरु-वनरोपण और अनुसन्धान-केन्द्र की स्थापना की गई, जिसे रेगिस्तान-सम्बन्धी समस्याओं की जांच-पड़ताल का काम सौंपा गया।

23. दूसरी योजना में मिट्टी-संरक्षण के काम पर 18 करोड़ रु० खर्च किए गए। कंटूर बांध और सीढ़ीदार खेत बनाने के काम में बहुत प्रगति हुई, विशेष रूप से पुराने बम्बई-राज्य में इस कार्य से 20 लाख एकड़ भूमि को लाभ हुआ। अखिल भारतीय मिट्टी-संरक्षण और भूमि-उपयोग का संगठित सर्वेक्षण भी शुरू किया गया। अभी तक 1.2 करोड़ एकड़ भूमि का सर्वेक्षण हो चुका है, जिसमें से 20 लाख एकड़ नदी-घाटियों के ग्राह्य क्षेत्रों में है।

24. पहली योजना में देहरादून में अधिकारियों, तथा कोटा, बेल्लारी, उदकमंडलम तथा हज़ारीबाग में सहायकों के प्रशिक्षण के लिए आरम्भ किए गए कार्यक्रम दूसरी योजना में भी चलते रहे। अभी तक 170 अधिकारियों और 900 सहायकों को प्रशिक्षण दिया जा चुका

इसके अलावा, सामुदायिक विकास के लिए कर्मचारी प्रशिक्षित करने और पुनरभ्यास पाठ्यक्रम की भी व्यवस्था की गई।

25. बारानी खेती के तरीकों का प्रचार करने के लिए दूसरी योजना के उत्तरार्द्ध में ग्राह्य क्षेत्रों के आधार पर 40 प्रदर्शन-कार्यक्रमो की व्यवस्था की गई। हरेक कार्यक्रम 1,000 एकड़ भूमि के लिए है। इनमें से कुछ परियोजनाओं पर काम आरम्भ भी हो चुका है और तीसरी योजना में इनका विस्तार तथा इन्हें पूरा किया जाएगा।

26. विभिन्न अनुसन्धान-केन्द्रों मे किए गए अनुसन्धान-कार्य का उपयोगी परिणाम निकला है। गुजरात की घाटियों मे उथली घाटियों को खेती के काम के लिए सुधारने का काम किया गया। गहरी और संकरी घाटियों का बागवानी के काम की फसलों, चारे के काम के पेड़-पौधों और चरागाह सुधारने के लिए विकास किया गया तथा उनके परिणाम बहुत आशाजनक रहे। गहरी काली मिट्टी पर हुए प्रयोगों से पता चला है कि कंटूर बांध बना कर खेती करने से काली मिट्टी की ज़मीन पर ज्वार की उपज में 60-70 पौंड प्रति एकड़ तथा चारे में इससे दुगुनी वृद्धि हो सकती है। जोधपुर में रेत के टीलों को एक जगह स्थिर रखने तथा रेत उड़ने की समस्याओं पर प्रयोग करके 1,800 एकड़ भूमि में रेत के टीले स्थिर किए गए। चरागाहों के विकास-सम्बन्धी अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि बारी-बारी से चराई और बीच-बीच मे चराई बिल्कुल बन्द कर देने मे घास की उपज में बहुत वृद्धि हो गई।

27. जोधपुर के मरु-वनरोपण और अनुसन्धान-केन्द्र को संयुक्त राष्ट्रीय शिक्षा, विज्ञान और संस्कृति-संगठन के सहयोग मे केन्द्रीय शुष्क प्रदेश-अनुसन्धान-संस्था के रूप में पुनर्गठित किया गया। इस संस्था के कार्यक्षेत्र का अब देश-भर में शुष्क और अर्द्ध-शुष्क प्रदेशों की समस्याओं के अध्ययन तक विस्तार हो गया है। जोधपुर में हुए परीक्षणो से सिद्ध हुआ है कि चरागाहों का विकास और प्रबन्ध उड़ती रेत के कारण बेकार हो जानेवाली ज़मीन के बचाव के लिए महत्वपूर्ण है। राजस्थान में चरागाहों के विकास का एक कार्यक्रम आरम्भ किया गया। अनुसन्धान और प्रदर्शन के लिए इस कार्यक्रम के अनुसार चरागाहो के विकास और प्रबन्ध-सम्बन्धी 55 क्षेत्र बनाने की व्यवस्था की गई। हर क्षेत्र लगभग 200 एकड़ का रखने की योजना थी। अभी तक 18 विस्तार-खंडों में 50 क्षेत्र स्थापित किए जा चुके हैं।

तीसरी योजना के कार्यक्रम

28. दूसरी योजना में हुए अनुभव तथा मिट्टी-संरक्षण मे प्रशिक्षित कर्मचारियो की सहायता से तीसरी योजना में विकास-कार्य तेज़ी से चलाने का इरादा है। विभिन्न मिट्टी-संरक्षण-कार्यक्रमों के लिए तीसरी योजना में 72 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है।

29. **कंटूर बांध बनाने और बारानी खेती के तरीके :** भारत में खेती का प्रबन्ध चाहे जितना फैल जाए, फिर भी 14-15 करोड़ एकड़ का विस्तृत क्षेत्र ऐसा बच जाएगा, जिसमें पैदावार बढ़ाने के लिए कंटूर बांध बनाने तथा मिट्टी-संरक्षण और बारानी खेती के ही तरीके अपनाने होंगे। अतः कृषि-साधनों के सन्तुलित विकास के लिए बड़े पैमाने पर मिट्टी-संरक्षण का कार्य और बारानी खेती करनी होगी तथा इन कार्यो में सम्बद्ध गांवों के लोगों को काफी योग देना होगा। तीसरी योजना में 1.1 करोड़ एकड़ भूमि पर कंटूर बांध बनाए जाएंगे तथा 2.2

करोड़ एकड़ भूमि को बारानी खेती के तरीकों से लाभ पहुंचाया जाएगा। कंटूर बांध बनाने के अतिरिक्त, विशेष ध्यान देने-योग्य कार्यक्रमों में वर्षा का पानी सुरक्षित रखने, मोथा-नियन्त्रण, पट्टीदार खेती और हरी खाद-सहित रासायनिक खाद का सही प्रयोग शामिल है।

30. **नदी-घाटी-परियोजनाएं :** नदियों के ग्राह्य क्षेत्रों में वन लगाना और भूमि-उपयोग के लिए इसी प्रकार के अन्य कार्य निम्नलिखित दृष्टि से आवश्यक हैं :

(अ) नदी-घाटी-परियोजनाओं में बनाए गए जलाशयों को बहुत समय तक ठीक हालत में रखने के लिए;

(आ) छोटे सिंचाई-तालों से कारगर तरीके से काम लेने के लिए;

(इ) बाढ़ कम करने के लिए;

(ई) भूमि का कटाव रोकने के लिए;

(उ) मिट्टी का उपजाऊपन बढ़ाने के लिए; और

(ऊ) इमारती लकड़ी तथा ईंधन की आपूर्ति बढ़ाने के लिए।

जैसा कि पहले एक अध्याय में बताया जा चुका है, भाखड़ा-नंगल, दामोदर-घाटी-निगम, हीराकुड और दूसरी बड़ी-बड़ी नदी-घाटी-परियोजनाओं में ग्राह्य क्षेत्रों में भूमि-संरक्षण के उपाय फौरन ही काम में लाने की आवश्यकता है। इन नदी-घाटी-परियोजनाओं के कुल 3.7 करोड़ एकड़ ग्राह्य क्षेत्र में करीब 1.5 करोड़ एकड़ में मिट्टी-संरक्षण के तरीकों का इस्तेमाल ज़रूरी है। दूसरी योजना में इन तरीकों का लाभ 1,40,000 एकड़ भूमि को पहुंचाया गया। तीसरी योजना में 11 करोड़ रु० की व्यवस्था कर 10 लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में इनका लाभ पहुंचाने का कार्यक्रम बनाया गया है। तट के कटाव को रोकने के लिए नदियों और नहरों के किनारे पेड़-पौधे लगाने के कार्यक्रमों की गति बढ़ाने पर भी बल दिया गया है।

31. **क्षारयुक्त और ऊसर भूमि का सुधार :** सिंचित भूमि के नष्ट होने का एक बड़ा कारण भूगर्भ-जल का स्तर बढ़ना तथा मिट्टी में क्षार और नमक की मात्रा का अधिक होना है। ऐसी 1.2 करोड़ एकड़ भूमि का प्रायः एक-तिहाई भाग जलप्लावन और मिट्टी में नमक की मात्रा अधिक होने से, एक-तिहाई भाग क्षार की अधिकता तथा भूगर्भ-जल का स्तर बढ़ने से तथा शेष भूगर्भ-जल का स्तर ज़मीन के नीचे 10 फुट तक आ जाने से बर्बाद हो जाता है। सिंचाई के विस्तार के साथ भूमि को नुकसान पहुंचने का भी खतरा है। इसलिए जलप्लावन-ग्रस्त क्षेत्रों में जल-निकासी की व्यवस्था करना आवश्यक है। तीसरी योजना में 2,00,000 एकड़ भूमि के सुधार की व्यवस्था की गई है, जो जलप्लावन, क्षार और नमकयुक्त होने के कारण नष्ट हो रही है। यह भूमि अधिकांशतः पंजाब, उत्तरप्रदेश, मैसूर, गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान और दिल्ली में है। लखनऊ के निकट बन्थरा-फार्म तथा अन्य केन्द्रों में किए गए प्रयोगों के परिणाम उत्साहवर्द्धक हैं और इस दिशा में आगे अध्ययन जारी है।

32. **उपघाटियों की भूमि की समस्या :** यमुना, चम्बल, माही आदि नदियों और उनकी सहायक नदियों के किनारों की धरती का बड़ा भाग बुरी तरह कटता जा रहा है और वह क्षेत्र उपघाटियों का इलाका बनता जा रहा है। उपघाटियां अबाध गति से बढ़ रही हैं और वहां खेती खत्म होती जा रही है। उपघाटियों के इस प्रकार कटाव से उत्तरप्रदेश में 35 लाख एकड़ और मध्यप्रदेश, गुजरात एवं राजस्थान में 8-8 लाख एकड़ भूमि को बहुत हानि पहुंची है। अनुसन्धान-केन्द्रों में हुए कार्य के परिणामस्वरूप नदी-उपघाटियों

को ग्राह्य क्षेत्रों में भूमि सुधारने के लिए नियन्त्रित चराई, वन-रोपण, सीढ़ीदार खेत बनाने और मिट्टी-संरक्षण के अन्य उपायों के महत्व पर बल दिया गया है। परन्तु विभिन्न क्षेत्रों में समस्या की गम्भीरता का अध्ययन तथा भावी कार्य के सम्बन्ध में सर्वेक्षण की अत्यधिक आवश्यकता है। सुधार-कार्यक्रम बनाने और उन पर अमल करने के लिए सर्वेक्षण तथा भौगोलिक एवं ज़मीन की बनावट-सम्बन्धी नक्शे तैयार करने का काम आरम्भ करने का इरादा है। इसके लिए और कुछ मरुप्रदेशों में सुधार-कार्य-सम्बन्धी सर्वेक्षण एवं परीक्षण-कार्य के लिए 50 लाख रु० की व्यवस्था की गई है। दूसरी योजना में उपघाटियों का क्षेत्र सुधारने की दिशा में कुछ शुरुआत हुई थी तथा मध्यप्रदेश और गुजरात में कुछ परीक्षण-परियोजनाएं आरम्भ की गई थीं। तीसरी योजना में उपघाटियों की 40,000 एकड़ भूमि सुधारने के कार्यक्रम रखे गए हैं।

33. **रेगिस्तानी प्रदेश :** पेड़ों को अन्धाधुन्ध काटने, बहुत अधिक चराई और ज़मीन के अनुचित प्रयोग से रेगिस्तान बराबर बढ़ता जा रहा है। भारत में रेगिस्तान कच्छ की रान से लेकर गुजरात और राजस्थान के बड़े-बड़े शुष्क क्षेत्रों तक फैला हुआ है। पशु और मनुष्य, दोनों की आबादी बढ़ने से आसपास के क्षेत्रों में वनस्पति खत्म होती जा रही है और पंजाब, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश में उर्वर भूमि नष्ट होकर मरुभूमि बढ़ने की स्थिति पैदा होती जा रही है। इन क्षेत्रों में अधिकांश लोगों का मुख्य धन्धा पशुपालन, भेड़ और बकरीपालन है। इसलिए हवा से कटाव की समस्या चरागाहों की समस्या से जुड़ी हुई है। केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र-अनुसन्धान-संस्था ने इन समस्याओं और सम्बद्ध प्रश्नों पर अनुसन्धान का काम आरम्भ किया है। कच्छ की रान के एक भाग में मरुभूमि के सुधार के तरीके और उपयोगिता की जाच के लिए एक परीक्षण-कार्यक्रम शुरू किया जाएगा। विभिन्न राज्यों में मिट्टी-संरक्षण, जिसमें वन-रोपण, चरागाहों का विकास, आदि उपाय शामिल है, का कार्यक्रम 1,00,000 एकड़ मरुभूमि में लागू करने का इरादा है।

34. **पहाड़ी क्षेत्र और दूसरी परती भूमि :** मिट्टी-क्षरण की दृष्टि से पहाड़ी क्षेत्र, वनस्पति-रहित जंगल और परती भूमि, एक गम्भीर समस्या है। इन क्षेत्रों मे मिट्टी-क्षरण का बुरा असर पहाड़ो और मैदानों की खेती पर पड़ता है। बहुत अधिक चराई, अन्धाधुन्ध पेड़ काटना और अनिश्चित खेती से यह हालत हो गई है। मिट्टी-क्षरण पर नियन्त्रण करने और उत्पादकता को सामान्य उपयोग के स्तर तक लाने के लिए पहाड़ी क्षेत्र, परती भूमि और वनस्पति-रहित जंगलों के 7,00,000 एकड़ क्षेत्र में वन-रोपण और चरागाहों का विस्तार किया जाएगा।

35. **सर्वेक्षण, अनुसन्धान, प्रदर्शन और प्रशिक्षण :** केन्द्रीय मिट्टी-संरक्षण-मंडल ने सर्वेक्षण, अनुसन्धान, प्रदर्शन और प्रशिक्षण का एक संगठित कार्यक्रम तैयार किया है। तीसरी योजना मे 1.5 करोड़ एकड़ क्षेत्र का सर्वेक्षण किया जाएगा। इसमे से अधिकांश भूमि नदी-घाटी-परियोजनाओं के ग्राह्य क्षेत्रों में है। मंडल-द्वारा क्षेत्रीय मिट्टी-क्षरण-सम्बन्धी समस्याओं के अध्ययन के लिए स्थापित क्षेत्रीय अनुसन्धान एवं प्रदर्शन-केन्द्रों को और मज़बूत बनाया जाएगा। ये केन्द्र देहरादून (हिमालय-क्षेत्र), चंडीगढ़ (शिवालिक-क्षेत्र), कोटा (राजस्थान की उपघाटियों का क्षेत्र), वसाड (गुजरात की उपघाटियों की भूमि), आगरा (यमुना की उपघाटियां), बेल्लारी (काली भूमि), उदकमंडलम (पहाड़ी क्षेत्र), छतरा (कोसी का जल-विभाजक) और जोधपुर (मरुप्रदेश) में है। लाल मिट्टीवाली भूमि की

समस्याओं के अध्ययन के लिए उड़ीसा और आन्ध्रप्रदेश में दो और केन्द्र स्थापित करने का इरादा है। केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र-अनुसन्धान-संस्था शुष्क क्षेत्रों की मूल और सम्बद्ध समस्याओं का अध्ययन कर उनके बारे में अनुसन्धान का काम करेगा। रेगिस्तान की उड़ती रेत को स्थिर करने के लिए चरागाह-विकास-कार्यक्रम भी चलाया जा रहा है। परिवर्तनशील खेती के तरीकों में सुधार करने की भी व्यवस्था की गई है। असम में एक मुख्य केन्द्र होगा तथा मणिपुर, उत्तर-पूर्व सीमान्त-अभिकरण तथा त्रिपुरा में से प्रत्येक में दो उपकेन्द्र और एक केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। परिवर्तनशील खेती-सम्बन्धी अनुसन्धान और अध्ययनों का उद्देश्य भूमि की उत्पादकता बनाए रखने तथा भूमि एवं जल-संरक्षण के लिए स्थिर खेती के समुचित तरीकों का विकास करना होगा। इस क्षेत्र में परिवर्तनशील खेती के सामाजिक एवं आर्थिक पहलुओं का भी अध्ययन किया जाएगा।

36. अधिकारियों के प्रशिक्षण के लिए देहरादून में तथा सहायकों के लिए चार प्रशिक्षण-केन्द्रों—उदकमंडलम, बेल्लारी, कोटा और हज़ारीबाग—में सुविधाएं दी गई हैं। उपसहायकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था राज्यों-द्वारा की गई है। अधिकारियों और सहायकों के नियमित प्रशिक्षण-क्रम के अतिरिक्त केन्द्रीय सरकार ने गज़टशुदा अधिकारियों के लिए 3 महीने के विशेष पुनरभ्यास और विस्तार व खंड-विकास-अधिकारियों के लिए 2 से 4 सप्ताह के सघन प्रशिक्षण-कार्यक्रम की भी व्यवस्था की है। तीसरी योजना में तकनीकी कर्मचारियों की अतिरिक्त मांग का अनुमान 350 अधिकारी, 1,700 सहायक और 9,000 उपसहायक है। इसके अनुसार प्रशिक्षण की वर्तमान सुविधाएं बढ़ाई जा रही हैं।

37. **प्रशासनिक संगठन :** मिट्टी-संरक्षण का काम बहुत महत्व का हो गया है—नदी-घाटियों में भी, जहां बहुत अधिक धन खर्च कर परियोजनाएं चलाई जा रही हैं और सूखे क्षेत्रों में भी, जहां कंटूर बांध और मिट्टी-संरक्षण के अन्य उपाय बहुत बड़े पैमाने पर अपनाए जाएंगे। मिट्टी-संरक्षण-कार्यक्रम शुरू करने, उसके सम्बन्ध में योजनाएं बनाने तथा उन्हें अमल में लाने के लिए हर राज्य में मज़बूत मिट्टी-संरक्षण-संगठन होना चाहिए, चाहे वह अलग विभाग के रूप में हो अथवा किसी विभाग की शाखा के रूप में। आवश्यकता इस बात की है कि इस कार्यक्रम के मार्गदर्शन और अमल के लिए उपयुक्त स्तर का पूरे समय काम करनेवाला अधिकारी अवश्य रखा जाए। संगठन के कर्मचारियों में कृषि, इंजीनियरी और वन-विद्या-सम्बन्धी योग्यता और प्रशिक्षण-प्राप्त व्यक्ति होना चाहिए। राज्यों की राजधानियों में एक समन्वय-समिति बनाना भी आवश्यक है जिसमें कृषि, सिंचाई, वन और मिट्टी-संरक्षण-विभागों के अध्यक्ष भी हों। इस प्रकार की समिति नीति-सम्बन्धी निर्णय जल्दी-से-जल्दी करने में सहायक होगी और मिट्टी-संरक्षण-कार्यों का समन्वय तथा कुशल मार्गदर्शन कर सकेगी।

38. **जन-सहयोग :** मिट्टी-संरक्षण के अन्तर्गत कंटूर बांध और बारानी खेती आदि के कार्यक्रमों पर अमल करते समय मुख्य लक्ष्य यही होना चाहिए कि भूमि के मालिकों और उपभोक्ताओं को स्वेच्छा से उक्त कार्यक्रम अपनाने के लिए प्रोत्साहन देकर अधिक-से-अधिक बड़े पैमाने पर जन-सहयोग प्राप्त किया जाए। काश्तकारों को कटाव के सम्बन्ध में जागरूक बनाया जाए, जिससे वे मिट्टी-संरक्षण के कार्य में स्वयं ही पहल करने के लिए तैयार हो जाएं। इस कार्य के लिए गांवों की तथा अन्य स्वैच्छिक संस्थाओं की मदद से शिक्षा का सघन कार्यक्रम शुरू करना होगा, जिससे किसानों को इन कार्यों की पूरी जानकारी हो जाए। अनेक

स्थानों में, मुख्यतः महाराष्ट्र में, हुए अनुभव से मालूम हुआ है कि स्थानीय नेतृत्व तैयार करने और समय पर जनता का सहयोग लेने से मिट्टी और जल-संरक्षण-कार्यक्रम तेज़ करना अधिक सहज हो सकता है। पंचायती राज-संस्थाएं जनता को इन कार्यक्रमों की बड़े पैमाने पर जानकारी कराने में बहुत बड़ी भूमिका अदा कर सकती हैं।

39. **विधि-विधान :** कंटूर बांध बनाने, मिट्टी-संरक्षण और भूमि-सुधार के अन्य कार्यक्रमों को ठोस तरीकों से चलाने के लिए कुछ उपयुक्त कानून बनाए जाएं, ताकि राज्य-सरकारों को किसी नदी-क्षेत्र अथवा ग्राम-समूहों के लिए मिट्टी-संरक्षण-कार्यक्रम बनाने का अधिकार प्राप्त हो जाए। सरकारी भूमि पर होनेवाले कार्यों का खर्च राज्य को ही उठाना होगा। लोगों की निजी भूमि पर किए जानेवाले संरक्षण-कार्यक्रमों का खर्च उनसे लाभ उठानेवाले ही उठाएंगे। राज्य की ओर से उपयुक्त तकनीकी निरीक्षण की व्यवस्था की जाएगी। यदि लाभ उठानेवाले स्वयं वह कार्यक्रम अमल में नहीं लाएंगे, तो सरकार अथवा उसकी ओर से पंचायतें या पंचायत-समितियां उन्हें कर देंगी तथा सारा खर्च लाभ उठानेवालों से वसूल कर लेंगी। इस दिशा में 9 राज्यों में कानून बना दिए गए हैं और निकट भविष्य में 5 और राज्य इसी प्रकार के कानून बनाने का इरादा कर रहे हैं।

अध्याय 23

खेतिहर श्रमिक

प्रगति की समीक्षा

योजनाबद्ध विकास के अन्तर्गत एक मुख्य काम खेतिहर श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार करना तथा उन्हें उन सामाजिक अक्षमताओं से मुक्ति दिलाना है, जिनसे वे अब तक पीड़ित रहे हैं। भावी ग्रामीण अर्थव्यवस्था में खेतिहर श्रमिकों का स्थान तथा उनके लिए काम की व्यवस्था, यही दो प्रमुख समस्याएं हैं। अतीत में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार जाति और पेशे पर आधारित वर्गीकरण था। स्वतन्त्रता के बाद किए गए विभिन्न प्रयत्नों और समाज-सुधार-सम्बन्धी कार्रवाइयों के परिणाम-स्वरूप खेतिहर श्रमिकों, और आम तौर पर सभी पिछड़े वर्गों, की सामाजिक कठिनाइयां काफी कम हुई हैं। साथ ही, जनता के इन वर्गों की आर्थिक समस्याएं—विशेषरूप से रोज़गार के अधिक अवसर देने की आवश्यकता—अधिक स्पष्ट हो गई हैं। पंचवर्षीय योजनाओं का एक मुख्य लक्ष्य ग्रामीणों के सभी वर्गों को काम के पूरे अवसर देना और बेहतर जीवन बिताने के साधन उपलब्ध करना, विशेषरूप से खेतिहर श्रमिकों और अन्य पिछड़े वर्गों को अन्य लोगों के बराबर स्तर तक पहुंचने में मदद करना है। इनकी समस्याएं निस्सन्देह चुनौती के समान हैं, और इनका सन्तोष-जनक हल ढूंढ़ने की ज़िम्मेदारी सारे समाज पर है।

2. खेतिहर श्रमिकों की समस्याएं हर प्रदेश में एक समान नहीं हैं—ये आबादी की अधिकता, खेती की कुल ज़मीन, सिंचाई-सुविधाओं और दोहरी फसल के अवसरों में अन्तर, ज़मीन की उत्पादन-शक्ति, फसलों के तरीके, खेती के मौसम के बाद गांव से जाने और खेती के अलावा रोज़गार अपनाने के अवसरों, आदि के कारण विभिन्न प्रदेशों में विभिन्न मात्रा में पाई जाती हैं। फिर भी, दो बार—सन् 1950-51 और 1956-57 में—हुई अखिल भारतीय कृषि-श्रम-जांच के परिणामों तथा कार्यक्रम-मूल्यांकन-संगठन के सर्वेक्षणों के आधार पर कुछ मोटी बातें सामने आई हैं। दोनों बार की जांच के सिद्धान्त कुछ सीमा तक भिन्न थे, इसलिए दोनों के फलस्वरूप प्राप्त आंकड़ों की पूरी तरह तुलना नहीं हो सकती। सारे देश के लिए एक समान मान्यता अपनाना भी ठीक नहीं होगा। हां, दोनों बार की जांच से जो बहुत स्पष्ट रूप में बातें प्रकट हुई, वे हैं—समस्या की विशालता, व्यापक रूप से विद्यमान् अर्द्ध-रोज़गारी और यह तथ्य कि आबादी बढ़ने का सबसे बुरा असर इसी वर्ग पर पड़ा है। कार्यक्रम-मूल्यांकन-संगठन के सर्वेक्षणों से भी इन सामान्य निष्कर्षों की पुष्टि हुई है।

3. खेतिहर श्रमिकों की समस्या ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त बेरोज़गारी और अर्द्ध-रोज़गारी की विशालतर समस्या का एक अंग है। खेती और सिंचाई के विकास के कारण उत्पादन और काम के अवसर बढ़े तो हैं, पर उनमें हिस्सा बंटानेवालों की संख्या बहुत बड़ी है। उन ग्रामीण लोगों को, जो भूमिहीन हैं अथवा वास्तव में काश्त-

कार नहीं हैं, दूसरों की अपेक्षा बहुत कम लाभ पहुंचा है। कुछ क्षेत्रों में तो उनकी अवस्था सम्भवतः और बिगड़ी है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था की बुनियादी समस्याएं हैं—कम आमदनी, कम उत्पादकता और निरन्तर चलनेवाले रोज़गार का अभाव। तीसरी योजना में विकास के सघन कार्यक्रमों के ज़रिए ये समस्याएं ज्यों-ज्यों हल होती जाएंगी, त्यों-त्यों खेतिहर श्रमिकों की स्थिति और उनका भविष्य सुधरता जाएगा। लेकिन साथ ही, यह बात सदा मानी गई है कि ग्रामीण जनता के हित में, ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास के लिए जो कार्यक्रम कार्यान्वित किए जाते हैं, उनकी उद्देश्य-सिद्धि में सहायता पहुंचाने के उद्देश्य से विभिन्न दिशाओं में अन्य विशिष्ट कार्रवाइयां भी की जानी चाहिए, जिनसे खेतिहर श्रमिकों को अपने जीवन-यापन की स्थिति सुधारने तथा सामुदायिक विकास और अन्य कार्यक्रमों के कारण गांवों में मिलनेवाले रोज़गार के अधिक अवसरों में पर्याप्त और उचित हिस्सा ग्रहण करने में सहायता मिले।

4. पहली पंचवर्षीय योजना में खेतिहर श्रमिकों को बसाने और उन्हें अपने ठिकानों से बेदखल होने से बचाने की व्यवस्था की गई थी। भूमि की पुनर्व्यवस्था की दिशा में अधिक प्रगति नहीं हुई। सन् 1948 का न्यूनतम पारिश्रमिक-अधिनियम खेती-सम्बन्धी रोज़गार पर भी लागू किया गया। अनुभव से मालूम हुआ है कि कृषि-सम्बन्धी पारिश्रमिक का स्तर काफी हद तक कृषि-उत्पादकता में वृद्धि और विनिमय के माध्यम के रूप में रुपये के बढ़ते हुए उपयोग से सम्बद्ध रहता है। इसलिए यह निश्चय किया गया कि न्यूनतम पारिश्रमिक-सम्बन्धी व्यवस्था लागू करते समय पहले विभिन्न राज्यों के उन क्षेत्रों पर ध्यान दिया जाए, जहां सबसे कम पारिश्रमिक दिया जाता है।

5. दूसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि एवं सिंचाई के विकास तथा सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के विस्तार से सम्बद्ध कार्यक्रमों के अलावा ग्राम और लघु उद्योगों के विकास के लिए भी 200 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई। ग्रामीण कार्यक्रमों में जनता के कमज़ोर वर्गों — जैसे, खेतिहर श्रमिकों, कारीगरों, आदि — के लाभ की योजनाओं को सबसे ऊंची प्राथमिकता देने का सुझाव रखा गया। योजना में ऐसे विशेष कार्यक्रम भी शामिल किए गए, जिनसे खेतिहर श्रमिकों को लाभ हो; इनमें भूमि की पुनर्व्यवस्था, मकान के लिए स्थान की व्यवस्था, सहकारी श्रमिक-संस्थाओं की स्थापना, आदि कार्यक्रम शामिल थे। सितम्बर 1957 में राष्ट्रीय विकास-परिषद् ने सुझाव रखा कि जोत की अधिकतम सीमा निश्चित करने तथा भूदान एवं ग्रामदान के ज़रिए प्राप्त भूमि पर भूमिहीन श्रमिकों के 3 लाख परिवारों को बसाने का कार्यक्रम हाथ में लिया जाए। उस समय तक जोत की अधिकतम सीमा निश्चित करने-सम्बन्धी व्यवस्था अपनी प्रारम्भिक अवस्था में थी, इसलिए यह योजना अपने प्रस्तावित रूप में अमल में नहीं लाई जा सकी। फिर भी, कुछ राज्यों ने अपनी-अपनी पुनर्व्यवस्था-सम्बन्धी योजनाओं के अनुसार काम जारी रखा और कुछ योजनाओं में केन्द्रीय सरकार ने भी सहयोग दिया। पंजाब, बम्बई, आन्ध्रप्रदेश और बिहार आदि कुछ राज्यों में श्रमिकों की सहकारी संस्थाओं की दिशा में भी प्रगति की गई।

6. केन्द्रीय सरकार से सहायता-प्राप्त दो योजनाओं के अन्तर्गत बिहार में 10 हज़ार परिवार भूदान में मिली ज़मीन पर बसाए गए। उड़ीसा में ग्रामदान में मिले

गांवों के विकास के लिए भी सहायता दी गई। भूदान में मिली कुल 44 लाख एकड़ भूमि में से 9 लाख एकड़ भूमि का अब तक वितरण हो चुका है। प्रगति में धीमापन प्राप्त ज़मीन की मिल्कियत-सम्बन्धी तथा अन्य संगठनात्मक कार्यों में उत्पन्न होनेवाली कठिनाइयों के कारण आया।

7. दूसरी योजना की अवधि में अनेक राज्य-सरकारों ने भूमिहीन खेतिहर श्रमिकों को मकान बनाने के लिए मुफ्त या सस्ती ज़मीन देने तथा उन्हें जबरन बेदखली से बचाने के लिए कदम उठाए। आन्ध्रप्रदेश में सभी वास्तविक आवेदनकर्ताओं को मकान बनाने के लिए ज़मीन दी गई—प्राथमिकता उन लोगों को दी गई, जिनके पास पहले बिल्कुल ज़मीन नहीं थी। मध्यप्रदेश में आम तौर पर गांवों में ही उनके मकानों के लिए ज़मीन निश्चित कर दी गई; जहां सरकारी ज़मीन थी, वहां उनसे कोई किस्त या मूल्य नहीं लिया गया। मद्रास में सरकारी फालतू ज़मीन बेघर-बार लोगों को दी गई। हरिजनों और अन्य लोगों को देने के लिए जहां सरकारी ज़मीन नहीं थी, वहां अधिग्रहण करके उन्हें या तो वही ज़मीन दी गई, जिस पर वे रहते थे या और कोई ज़मीन दी गई। मकानों के लिए यह ज़मीन बेघर और बेज़मीन-लोगों को बिलकुल मुफ्त दी गई। महाराष्ट्र-सरकार ने निदेश दिया है कि सामान्यतः गांवों के निकट की ज़मीनों का पहला उपयोग मकानों के लिए ही किया जाए। यह भी व्यवस्था की गई कि कलक्टर खेतिहर परिवारों को मकान के लिए दो 'गुंठा' या 200 रु० तक की ज़मीन दे दे। मैसूर में, जहां सरकारी ज़मीन उपलब्ध नहीं थी, वहां मुआवज़ा देकर गैर-सरकारी ज़मीन का अधिग्रहण किया गया और वह खेतिहरों को मकान बनाने के लिए दे दी गई। पंजाब में भूमिहीनों को ज़मीन खरीदने तथा मकान के लिए उचित स्थान प्राप्त करने के लिए सहायता देने की योजनाएं बनाई गई हैं।

तीसरी योजना के कार्यक्रम

8. पहली दो योजनाओं के अनुभवों से यह स्पष्ट है कि खेतिहर श्रमिकों के हित की विशेष योजनाएं उपयोगी तो हैं, परन्तु वे समस्या को पूरी तरह हल नहीं कर पातीं, छू-भर देती हैं। अन्ततः, समग्र देश के आर्थिक विकास की प्रक्रिया के अंग-रूप में ग्रामीण क्षेत्रों के तीव्र और सघन विकास से ही समाज के भूमिहीन वर्गों को पर्याप्त लाभ पहुंच सकेगा। तीसरी योजना में ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास के लिए पर्याप्त पूंजी लगाने की व्यवस्था है। सरकारी क्षेत्र में कृषि, सामुदायिक विकास और सिंचाई पर 1,700 करोड़ रु० से भी अधिक के व्यय की व्यवस्था है। इससे कृषि-उत्पादन में 30 प्रतिशत वृद्धि होने की आशा है। सिंचाई से 2 करोड़ एकड़ क्षेत्र को लाभ पहुंचेगा और खेती की 1 करोड़ 10 लाख एकड़ ज़मीन मिट्टी-संरक्षण के अन्तर्गत आएगी।

9. ग्राम और लघु उद्योगों के कार्यक्रम में खादी, अम्बर खादी, ग्रामोद्योगों तथा लघु उद्योगों के लिए 92 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है एवं गांवों में औद्योगिक बस्तियां बसाने का निश्चय किया गया है। 5,000 से अधिक आबादीवाले सभी कस्बों तथा गांवों और 2,000 से 5,000 के बीच की आबादीवाले आधे गांवों में बिजली पहुंच जाने की आशा है। यदि इन सुविधाओं का भरपूर उपयोग किया जाए, तो अतिरिक्त

रोज़गार के अवसर बहुत बड़ी संख्या में पैदा होंगे। सम्पूर्ण ग्राम और लघु उद्योग-कार्यक्रम के अन्तर्गत 80 लाख व्यक्तियों को थोड़े समय का या अतिरिक्त रोज़गार दिया जा सकेगा तथा 9 लाख व्यक्तियों को पूरे समय का रोज़गार प्राप्त होगा। योजना को पूरी तरह अमल में लाने पर इससे भी अधिक और अच्छे परिणाम निकल सकते हैं।

10. 6 से 11 वर्ष तक की अवस्था के हर बच्चे को शिक्षा की सुविधा देने तथा अन्य सामाजिक सेवाओं के विकास के कारण समाज के दुर्बल वर्गों की कुछ कठिनाइयां कम हो जाएंगी। गांवों में पानी पहुंचाने का एक कार्यक्रम हाथ में लिया जा रहा है, जिस पर 35 करोड़ रु० खर्च होंगे और जिससे तीसरी योजना के अन्त तक सभी गांवों में पीने का साफ पानी उपलब्ध हो जाएगा। योजना में पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए भी कार्यक्रम हैं, जिन पर 114 करोड़ रु० का खर्च आएगा। इस रकम का एक अच्छा हिस्सा खेतिहर श्रमिकों के लाभ के कामों पर खर्च होगा। सामुदायिक विकास-कार्यक्रम में सदा उन विकास-कार्यों पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए, जिनसे समाज के दुर्बल वर्गों को लाभ पहुंचे। ग्राम-आवास-परियोजना में 5 करोड़ रु० गांवों में ज़मीन के अधिग्रहण के लिए रखे गए हैं; यह ज़मीन खेतिहर श्रमिकों को मकान बनाने के लिए दी जाएगी। यह स्पष्ट है कि इन विभिन्न कार्यक्रमों पर अच्छी तरह अमल करने तथा उनका लाभ खेतिहर श्रमिकों और अन्य पिछड़े वर्गों को पहुंचाने की व्यवस्था करने से स्थिति में सुधार होगा। मोटी बात यह कि खेतिहर श्रमिकों और ग्राम-समाज के अन्य दुर्बल वर्गों की समस्या का सबसे बड़ा हल स्वयं योजना को, उसके बुनियादी, सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों को सामने रखकर, भली-भांति और कुशलता से अमल में लाना है।

11. भूमि की पुनर्व्यवस्था के लिए राज्यों की योजनाओं में 4 करोड़ रु० की व्यवस्था है। आशा की जाती है कि जोत की अधिकतम सीमा निश्चित करने के बाद बच रहनेवाली फालतू ज़मीन के भूमिहीनों एवं अन्य लोगों के बीच फिर से बंटवारे के लिए आवश्यक अतिरिक्त साधन राज्यों को अपनी वार्षिक योजनाओं से उपलब्ध हो सकेंगे। इसके अलावा, केन्द्र में भी भूमिहीन श्रमिकों को फिर से बसाने की योजनाओं के लिए 8 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। भारत-सरकार-द्वारा स्थापित एक समिति ने हाल में ही उन भूमि-खंडों का सर्वेक्षण किया, जिन्हें 'खेती की अन्य भूमि' जिसमें बंजर भूमि शामिल नहीं है और 'बंजर भूमि' जिसमें चालू बंजर भूमि शामिल नहीं है, वर्गों में रखा गया है और 250 एकड़ से ऊपर के खंडों में करीब 10 लाख एकड़ भूमि का पता लगाया है। ज़िला-अधिकारियों-द्वारा 250 एकड़ से कम के खंडों की भूमि का सर्वेक्षण होने पर और भूमि उपलब्ध हो सकेगी। यह और कृषि-कार्यक्रमों के अन्तर्गत सुधारी जानेवाली भूमि को मिलाकर कुल परिमाण 40 लाख एकड़ होने की आशा है। हाल में योजना-आयोग-द्वारा नियुक्त खेतिहर श्रमिकों-सम्बन्धी केन्द्रीय परामर्शदात्री समिति ने अनुमान लगाया है कि तीसरी योजना की अवधि में 50 लाख एकड़ भूमि पर भूमिहीन श्रमिकों के 7 लाख परिवार बसाने के प्रयत्न किए जा सकेंगे। इस लक्ष्य को सामने रखकर उक्त कार्यक्रम को सम्भव बनाने के लिए पुनर्व्यवस्था-योग्य ज़मीन का पता लगाया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में आबादी-योग्य ज़मीन के सर्वेक्षण के प्रयत्न ग्राम और खंड-स्तर तक बढ़ा दिए जाने चाहिए। जहां कहीं

बसाने का अवसर हो, वहां उसका उपयोग किया जाए, चाहे ऐसे हर स्थान पर थोड़े-थोड़े परिवारों को ही लाभ पहुंचता हो। जहां ज़मीन दी जाएं, वहां ऋण और ऐसी ही अन्य सहायता देकर उन बसनेवाले लोगों को अपना पुनर्वास भली-भांति करने की सुविधा प्रदान की जाए ।

12. कुछ अर्थों में तीसरी योजना का सबसे महत्वपूर्ण विकास-कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में निर्माण-कार्य है, जिसकी चर्चा पहले 'रोज़गार और जनशक्ति' शीर्षक अध्याय में की जा चुकी है और जिससे सर्वाधिक लाभ खेतिहर श्रमिकों को मिलेगा। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत, आशा की जाती है कि तीसरी योजना के अन्त तक 25 लाख लोगों के लिए गांवों में वर्ष में 100 दिन का रोज़गार मुहय्या किया जा सकेगा, विशेषरूप से फसल के बाद के खाली दिनों में। कार्यक्रम में कृषि-विकास की इन योजनाओं पर अधिक ध्यान दिया जाएगा : सिंचाई, बाढ़-नियन्त्रण, भूमि-पुनरुद्धार, वन-रोपण और मिट्टी-संरक्षण, सड़क-विकास-परियोजनाएं, ग्रामीणों को सुविधाएं देने की व्यवस्था और गांवों की आवास-परियोजनाएं । ग्रामीण निर्माण-कार्यों में सहकारी श्रमिक-समितियों और अन्य निर्माण-संस्थाओं को बड़ा काम करना होगा। उन्हें उपकरण ले जाने होंगे, ठेके प्राप्त करने होंगे और कर्मचारी-मंडल संगठित करके पंचायतों और पंचायत-समितियों के साथ निकट सहयोग से काम करना होगा। अर्द्धरोज़गारी की समस्या का स्थायी हल तभी निकलेगा, जब सारे देश में खेती की वैज्ञानिक विधियां अपना ली जाएंगी तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था बहुमुखी एवं सबल हो जाएगी । तीसरी योजना में इस दिशा में भी विशेष प्रयत्न किए जाएंगे। दूसरी ओर, गांवों में निर्माण के बड़े कार्यक्रम से बहुत सहायता मिलेगी और ग्रामों में विकास की गति तेज़ करने में बहुत मदद मिलेगी।

13. वस्तुतः खेतिहर श्रमिकों की समस्या के मूल में ग्रामीण अर्थव्यवस्था में लम्बे अरसे से चली आ रही जड़ता और जाति-पांति पर आधारित अनुदार सामाजिक ढांचा है । इन बुनियादी दुर्बलताओं को धीरे-धीरे दूर किया जा रहा है। साथ ही, सामाजिक और औद्योगिक परिवर्तन की प्रक्रिया तेज़ करनी पड़ेगी । एक के बाद एक पंचवर्षीय योजनाएं देश के प्राकृतिक साधनों के उपयोग, उत्पादन और रोज़गार बढ़ाने तथा ग्रामीण क्षेत्रों को अधिक सुविधाएं उपलब्ध करने के लिए प्रयत्न कर रही हैं। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सहकारी आधार पर पुनर्गठित करने तथा समाज के दायित्वों एवं कार्य पर बल देने का प्रयोजन केवल कृषि-उत्पादकता बढ़ाना और ग्रामों के आर्थिक ढांचे को बहुमुखी बनाना ही नहीं, बल्कि इसका उद्देश्य जल्दी-से-जल्दी संगठित समाज बनाना है, जिसमें जाति-पांति और वर्ग को ध्यान में रखे बिना समाज के हर सदस्य को समान अवसर मिल सके । दूसरे शब्दों में, पंचवर्षीय योजनाओं के प्रयत्नों से ग्रामीण अर्थव्यवस्था का जो ढांचा तैयार हो रहा है, उसमें खेतिहर श्रमिक भी दूसरे लोगों के समान भाग ले सकेंगे और शेष ग्रामीण जनता के मुकाबले बराबर का सामाजिक एवं आर्थिक दर्जा प्राप्त कर सकेंगे। विशेष अध्ययनों और मूल्यांकनों तथा केन्द्रीय खेतिहर श्रमिक-परामर्शदात्री समिति एवं राज्यों में स्थापित होनेवाली ऐसी ही अन्य संस्थाओं-द्वारा समीक्षा के माध्यम से इन दिशाओं में हुई वास्तविक प्रगति पर कड़ी निगरानी रखी जानी चाहिए ।

अध्याय 24

सिंचाई और बिजली

सिंचाई और बिजली पहली योजना के आरम्भ से ही विकास के दो अत्यन्त महत्वपूर्ण क्षेत्र रहे हैं। खेती को बहुमुखी बनाने और फसलों की उपज बढ़ाने के लिए छोटी और बड़ी, दोनों तरह की परियोजनाओं के ज़रिए सिंचाई का विस्तार करना अत्यन्त आवश्यक है। बड़े-बड़े औद्योगिक कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए पहले बिजली का विकास करना बहुत ज़रूरी है। अन्य विकास-कार्यक्रमों के साथ-साथ भाखड़ा-नंगल, हीराकुड, चम्बल, तुंगभद्रा, नागार्जुनसागर और दामोदर-घाटी-निगम-जैसी नदी-घाटी-परियोजनाओं को भी, जिनसे सिंचाई की व्यवस्था होने के साथ-साथ बिजली भी मिलती है, अपने-अपने क्षेत्र में जीवन-स्तर ऊंचा करने के कार्य में महत्वपूर्ण योगदान करना है। इस प्रकार, सिंचाई और बिजली का बड़े पैमाने पर विकास होने से कृषि-अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण में तो सहायता मिलती ही है, देश के तीव्र उद्योगीकरण के लिए मार्ग भी तैयार होता है।

सिंचाई

2. सन् 1950 में लगाए गए अनुमान के अनुसार देश का नदी-जल-साधन 1 अरब 35 करोड़ 60 लाख एकड़-फुट है। भौगोलिक और भूमि की बनावट-सम्बन्धी कारणों से इसमें से सिर्फ 45 करोड़ एकड़-फुट जल का ही उपयोग सिंचाई के लिए किया जा सकता है। सन् 1951 तक लगभग 7 करोड़ 60 लाख एकड़-फुट जल का—उपयोगजन्य जल के 17 प्रतिशत भाग का और कुल बहाव के 5.6 प्रतिशत भाग का—ही उपयोग किया गया था। अनुमान है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक 12 करोड़ एकड़-फुट जल का—यानी, उपयोगजन्य जल के 27 प्रतिशत भाग का और कुल बहाव के 8.9 प्रतिशत भाग का—इस्तेमाल हो सकेगा। आशा है कि तीसरी योजना में 4 करोड़ एकड़-फुट अतिरिक्त जल का, यानी उपयोगजन्य जल के 36 प्रतिशत भाग का, उपयोग होने लगेगा।

3. भूगर्भीय जल-साधनों से बड़ी मात्रा में जल प्राप्त हो सकता है। इन साधनों की अब तक कोई सूची तो तैयार नहीं की गई है, परन्तु सन् 1953 में एक भूगर्भीय जल-खोज-परियोजना आरम्भ की गई थी, जिसके अन्तर्गत भूगर्भीय जल की सम्भावना-वाले क्षेत्रों में—जैसे, नदी-घाटियों एवं तटीय इलाकों में—खुदाई करके जल की उपस्थिति का पता चलाया जाना था। मुख्यतः सिन्धु-गंगा-घाटी, साबरमती-घाटी और मद्रास तथा आन्ध्रप्रदेश के तटीय क्षेत्रों में भूगर्भीय जल-साधनों के विकास की बहुत गुंजायश है। भूगर्भीय जल से उन क्षेत्रों में सिंचाई की जा सकती है, जहां नहरों-द्वारा सिंचाई सस्ती नहीं पड़ती, या जहां पानी का जमाव होने की आशंका रहती है।

4. पहली योजना के अन्त में भूमि-उपयोग की स्थिति इस प्रकार थी :

	लाख एकड़
कुल क्षेत्र	8,060
खेती-योग्य क्षेत्र	4,760

बुआई का शुद्ध क्षेत्र		3,180
एक से अधिक बार बुआई का क्षेत्र		450
फसलवाला कुल क्षेत्र		3,630
शुद्ध सिंचित क्षेत्र :*		
सरकारी नहरें	198	
निजी नहरें	34	
तालाब	109	
नलकूप और अन्य कुएं	167	
अन्य साधन	54	
योग	562 या 560	
एक बार से अधिक सिंचाईवाला क्षेत्र		70
कुल सिंचित क्षेत्र†		630

5. पहली पंचवर्षीय योजना के आरम्भ में सब साधनों से कुल 5 करोड़ 15 लाख एकड़ क्षेत्र की सिंचाई होती थी, जिसमें से 2 करोड़ 20 लाख एकड़ की सिंचाई बड़ी और मध्यम परियोजनाओं से होती थी। अनुमान लगाया गया है कि पांचवीं पंचवर्षीय योजना (1975-76) के अन्त तक बहुद्देश्यीय परियोजनाओं-सहित बड़ी और मध्यम परियोजनाओं, से कुल 8 करोड़ 50 लाख एकड़ भूमि में सिंचाई करना सम्भव हो सकेगा। तीसरी पंचवर्षीय योजना तैयार करते समय इस दीर्घकालीन लक्ष्य को दृष्टि में रखा गया है। बड़ी‡ और मध्यम सिंचाई-परियोजनाओं की कुल सिंचाई-क्षमता का अनुमान 10 करोड़ एकड़ है और छोटे तालाबों, नलकूपों, खुले कुओं, आदि-जैसे छोटे सिंचाई-साधनों की क्षमता का कुल 7 करोड़ 50 लाख एकड़। बड़ी और मध्यम योजनाओं से बड़े और दूर तक के क्षेत्रों को सिंचाई का लाभ मिलता है, अभाववाले वर्षों में भी उनसे लाभ और संरक्षण का अधिक भरोसा रहता है तथा वे और भी कई प्रयोजन सिद्ध कर सकती हैं। छोटी योजनाओं पर अपेक्षाकृत कम खर्च होता है, जल्दी ही परिणाम निकल आते हैं और उन्हें स्थानीय साधनों से शीघ्र पूरा किया जा सकता है। परन्तु सूखावाले वर्षों में इनसे मिलनेवाले संरक्षण में काफी कमी आ

***शुद्ध सिंचित क्षेत्र वह क्षेत्र है, जिसकी—एक से अधिक फसल के लिए सिंचित क्षेत्र को हिसाब में रखते हुए—वर्ष में केवल एक बार सिंचाई होती है।**

†कुल सिंचित क्षेत्र का अर्थ वर्ष-भर में सिंचित फसलवाला कुल क्षेत्र है; अर्थात् शुद्ध सिंचित क्षेत्र में उस क्षेत्र का योगफल, जिसकी वर्ष-भर में विभिन्न फसलों के लिए सिंचाई होती है।

‡5 करोड़ रु० से अधिक खर्चवाली सिंचाई-परियोजनाएं बड़ी, 10 लाख से 5 करोड़ रु० तक खर्चवाली मध्यम और 10 लाख रु० से कम खर्चवाली छोटी (बशर्ते कि ये किसी बड़ी या मध्यम परियोजना का अंग न हों) योजनाएं कहलाती हैं।

सकती है, जब कि उस समय उसकी अधिक ज़रूरत होती है। खास कर तालाब आदि वर्षा के भाव में सूख जाते हैं। इसलिए बड़ी और मध्यम सिंचाई-परियोजनाओं तथा छोटी सिंचाई-योजनाओं का सन्तुलित विकास ज़रूरी है, क्योंकि इन तीनों को मिला कर ही एक संगठित सिंचाई-कार्यक्रम तैयार किया जा सकता है। हर क्षेत्र को उसके अनुकूल योजना से लाभ पहुंचाया जाना चाहिए, ताकि कम-से-कम खर्च में अधिक-से-अधिक अच्छे परिणाम निकल सकें।

6. **सिंचाई का विकास :** पहली और दूसरी योजनाओं के अन्त तक सिंचाई के क्षेत्र में हुई प्रगति तथा तीसरी योजना के लक्ष्य नीचे की तालिका में दिए गए हैं :

तालिका-संख्या 1

सिंचित क्षेत्र

(शुद्ध क्षेत्र लाख एकड़ में)

	1950-51	1955-56	1960-61	1965-66
बड़ी और मध्यम सिंचाई	220	249	310	425
छोटी सिंचाई	295	313	390	475
योग	515	562	700	900

पहली और दूसरी योजनाओं के कार्यक्रम

7. अनुमान है कि पहली और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत सिंचाई की बड़ी और मध्यम योजनाओं पर कुल व्यय 1,400 करोड़ रु० बैठा और आशा है कि उनका पूरी तरह विकास हो जाने पर लगभग 3 करोड़ 80 लाख एकड़ भूमि की सिंचाई हो सकेगी। पहली योजना के अन्त तक इन सिंचाई-योजनाओं पर 380 करोड़ रु० का व्यय हुआ था। दूसरी योजना में उन पर कुल 370 करोड़ रु० खर्च होने का अनुमान है। इन सिंचाई-परियोजनाओं पर तीसरी योजना में 436 करोड़ रु० खर्च करने की ज़रूरत पड़ेगी, जिसमें से 214 करोड़ रु० का भार चौथी योजना को सौंपा जाएगा। राजस्थान-नहर, गंडक, उकई, नर्मदा, नागार्जुनसागर, आदि-जैसी कुछ परियोजनाओं पर तीसरी योजना के बाद भी काम चलता रहेगा।

8. अगले पृष्ठ की तालिका में पहली दोनों योजनाओं के सिंचाई-कार्यक्रमों से प्राप्त लाभ, पहली योजना के अन्त में और दूसरी योजना की अवधि में दिखाए गए हैं।

राज्यों-द्वारा पहली और दूसरी योजना की अवधि में बड़ी और मध्यम सिंचाई-योजनाओं से मिलनेवाले लाभ का वितरण, दूसरी योजना के अन्त तक पैदा होनेवाली क्षमता और उसका उपयोग अनुबन्ध 1 में दिखाया गया है।

9. दूसरी योजना में बड़ी और मध्यम सिंचाई-परियोजनाओं के ज़रिए 1 करोड़ 20 लाख एकड़ अतिरिक्त ज़मीन में सिंचाई की व्यवस्था करने का निश्चय किया गया था। सन् 1958 में योजना की समीक्षा के समय यह लक्ष्य घटा कर 1 करोड़ 4 लाख एकड़ कर दिया गया। राज्यों-द्वारा अब अनुमान लगाया गया है कि 69 लाख एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र में ही सिंचाई की व्यवस्था होने की आशा है। दूसरी योजना के आरम्भ में लगाए गए व्यय के अनुमान की तुलना में वास्तविक व्यय 370 करोड़ रु० ठहरता है। कई राज्यों में तकनीकी कर्मचारियों की कमी के कारण कार्यक्रम

तालिका-संख्या 2

सिंचाई-योजनाओं से लाभ

वर्ष के अन्त में	जलमार्ग से निकासी पर कुल सिंचाई-क्षमता* (लाख एकड़ में)	कुल सिंचित क्षेत्र (लाख एकड़ में)	कुल सिंचित क्षेत्र निकासी पर क्षमता का प्रतिशत	शुद्ध सिंचित क्षेत्र (लाख एकड़ में)
1955-56	65	31	48	29
1956-57	74	42	58	34
1957-58	82	58	71	49
1958-59	97	65	67	59
1959-60	115	83	72	74
1960-61 (अनुमित)	130	100	76	90

पिछड़ गया। कुछ मामलों में इस्पात, सीमेंट, कोयला, आदि-जैसी आवश्यक वस्तुओं की अपर्याप्त उपलब्धि के कारण भी प्रगति में बाधा पहुंची। अतीत में भी स्थानीय या प्रादेशिक दबाव के कारण कुछ परियोजनाओं पर, पूरी जांच और पर्याप्त सर्वेक्षण के बिना ही, काम शुरू कर दिया गया था, जिसके परिणामस्वरूप परियोजनाएं लटकी रहीं और इनसे मिलनेवाले लाभ में भी देरी हुई। पारिश्रमिक और चीज़ों की कीमत में वृद्धि के कारण भी व्यय के सम्बन्ध में लगाए गए अनुमान पूरे नहीं हो सके। दूसरी योजना में उपयोग की गति में सुधार हुआ है, जैसा कि तालिका-संख्या 2 से स्पष्ट है। यदि ठीक समय पर खेतों की नालियां‡ खोदने और सिंचाई-सुविधाएं उपलब्ध होने पर काम में लाए जानेवाले खेतों के सुधरे हुए तरीकों और फसल-पद्धति का समय रहते किसानों के समक्ष प्रदर्शन करने पर अधिक ध्यान दिया जाता तो अधिक अच्छे परिणाम निकल सकते थे। तीसरी योजना बनाते समय तकनीकी संगठन मज़बूत करने तथा योजना की प्रगति के मार्ग में आनेवाली बाधाएं दूर करने की व्यवस्था पर अधिक ध्यान दिया गया है।

तीसरी योजना के लिए कार्यक्रम

10. सिंचाई-परियोजनाओं पर जो इतनी अधिक पूंजी लगाई जा रही है, उससे कम-से-कम समय में अधिक-से-अधिक लाभ प्राप्त करने की नितान्त आवश्यकता है। इसके साथ ही इस बात की भी पक्की व्यवस्था होनी चाहिए कि इन परियोजनाओं से होनेवाले लाभ जल-निकासी की समुचित व्यवस्था न होने तथा पानी जमा हो जाने के

***जलमार्ग से निकासी पर जो जल प्राप्त होता है, उससे जितना क्षेत्र सींचा जा सके, वह उसकी सिंचाई-क्षमता है।**

‡ 'खेतों की नालियां' का अर्थ वे नालियां हैं, जो निकासी-केन्द्र से जल ले जाकर सिंचाई के लिए खेतों में पहुंचाती हैं।

कारण भूमि नष्ट होने से व्यर्थ या कम न हो जाएं। इसलिए तीसरी योजना में निम्न-लिखित वर्ग की योजनाओं पर बल दिया गया है :

(1) दूसरी योजना से जो काम चले आ रहे हैं, उन्हें पूरा करके पानी सीधे किसानों के खेतों तक पहुंचाया जाए, यानी खेतों की नालियां बनाने तक का काम पूरा होना चाहिए;

(2) जल-निकासी तथा पानी का जमाव रोकने की योजनाएं; और

(3) सिंचाई की मध्यम परियोजनाएं।

11. दूसरी योजना के अन्त तक 32 लाख एकड़ सिंचाई-क्षमता का उपयोग करना शेष रह गया । तीसरी योजना के दौरान, पहले से चल रही योजनाओं से 1 करोड़ 38 लाख एकड़ क्षेत्र में तथा नई योजनाओं से 24 लाख एकड़ क्षेत्र में सिंचाई के योग्य क्षमता पैदा होने की आशा है । तीसरी योजना की अवधि में उपयोग का कुल क्षेत्र 1 करोड़ 28 लाख एकड़ हो जाने की आशा है। सिंचाई-क्षमता और उसके उपयोग का राज्यवार विवरण अनुबन्ध 1 में दिया गया है। राज्यों ने यह प्राक्कलन तैयार करते समय साधारणतः अनुमान किया है कि जलमार्गों के मुहानों पर जब से पानी मिलना शुरू होगा, तब से 5 वर्षो में बड़ी परियोजनाओं की और 2-3 वर्षो में मध्यम परियोजनाओं की सिंचाई-क्षमता का पूरा-पूरा उपयोग होने लगेगा । यदि सम्बद्ध क्षेत्रों में अधिक समन्वित प्रयत्न किए जाएं, तो उनके अनेक परियोजनाओं में उपयोग की गति को और बढ़ाया जा सकता है ।

12. तीसरी योजना में सिंचाई और बाढ़-नियन्त्रण-कार्यक्रमों पर 661 करोड़ रु० के खर्च का अनुमान है। इसमें दूसरी योजना में शुरू किए गए परन्तु अब तक चल रहे कार्यक्रमों के लिए 436 करोड़ रु०, नई परियोजनाओं के लिए 164 करोड़ रु० और बाढ़-नियन्त्रण, जल-निकासी, पानी का जमाव रोकने और समुद्र से भूमि का कटाव रोकने के लिए 61 करोड़ रु० के खर्च की व्यवस्था है। राज्यवार वितरण का लेखा अनुबन्ध 2 और 3 में दिया गया है । तीसरी योजना में जो नई परियोजनाएं शुरू की जाएंगी, उनमें ये भी शामिल हैं :

(1) 95 नई मध्यम सिंचाई-योजनाएं, जो कृषि-विकास और प्रादेशिक विकास, दोनों के लिए मूल्यवान होंगी;

(2) सिन्धु नदी के पानी के बारे में सन् 1960 में हुई सन्धि के फलस्वरूप पंजाब में व्यास नदी पर भांडारण की योजनाएं; और

(3) मुख्यतः बिजली के विकास के लिए शुरू की गई बहूद्देश्यीय योजनाओं के सिंचाई-पक्ष से सम्बद्ध योजनाएं और पड़ोसी राज्यों में चल रहे सिंचाई-कार्यक्रमों के कारण आवश्यक हो गई सिंचाई-योजनाएं—जैसे उत्तरप्रदेश में गंडक-परियोजना ।

13. अगली तालिका में पहली, दूसरी और तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं के सिचाई-कार्यक्रमों पर व्यय का क्रम दिया गया है।

तालिका-संख्या 3

व्यय का क्रम

(करोड़ रु०)

	कुल लागत	पहली योजना से पूर्व व्यय	पहली योजना में व्यय	दूसरी योजना में व्यय	तीसरी योजना में व्यय	चौथी योजना में आवश्यक व्यय
पहली योजना के कार्यक्रम	790	80	300	270	135	5
दूसरी योजना के कार्यक्रम (नए)	610	—	—	100	301	209
तीसरी योजना के कार्यक्रम (नए)	364	—	—	—	164	200
योग	1,764	80	300	370	600	414

14. **बाढ़-नियन्त्रण, जल-निकासी, पानी का जमाव रोकने तथा समुद्र से भूमि का कटाव रोकने की योजनाएं :** बाढ़-नियन्त्रण, जल-निकासी और जलप्लावन-निरोध का सिंचाई से घनिष्ठ सम्बन्ध है । विकास की व्यापक योजनाएं बनाते समय इन्हें ध्यान में रखना होगा। दूसरी योजना तैयार करते समय बाढ़-नियन्त्रण के विस्तृत प्रस्ताव बनाने के लिए, जिससे उन्हें राज्यों की योजनाओं में शामिल किया जा सके, पर्याप्त जानकारी उपलब्ध नहीं थी। बाढ़-नियन्त्रण-कार्यक्रम एक तात्कालिक संकट समझकर उसी आधार पर शुरू किया गया था और इसलिए उसे केन्द्र-संचालित-कार्यक्रम का रूप दिया गया था । अब बाढ़-नियन्त्रण-कार्यक्रम पर पूरी तरह काम चालू है और सर्वेक्षणों एवं जांच-पड़ताल के काम में काफी प्रगति हुई है । तीसरी योजना में बाढ़-नियन्त्रण-योजनाएं और जल-निकासी, जलप्लावन-निरोध एवं समुद्र से भूमि का कटाव रोकने के सभी कार्यक्रम राज्यों की योजनाओं के अंग हैं।

15. पहले बताया जा चुका है कि सिंचित क्षेत्रों में जल का स्तर ऊंचा न होने देने तथा फलस्वरूप जलप्लावन रोकने के लिए जल-निकासी की सन्तोषजनक व्यवस्था का कितना महत्व है । चालू और नई योजनाओं में सिंचित क्षेत्रों में जल-निकासी का खच सिंचाई-परियोजनाओं के खर्च में ही शामिल किया जाएगा। देश के कुछ भागों में, विशषरूप से पंजाब में, जलप्लावन की समस्या गम्भीर बन गई है; इसलिए तीसरी योजना में नालियां बनाने, सिंचाई की नहरों के विशेष हिस्सों को पक्का बनाने, जल का स्तर नीचा करन, आदि अन्य जलप्लावन-निरोधक उपाय बड़े पैमाने पर किए जाने की आवश्यकता है । केरल-जैसे कुछ तटीय क्षेत्रों में समुद्र से भूमि का कटाव रोकने के लिए उपाय किए जाने चाहिए। दूसरी योजना में बाढ़-नियन्त्रण-कार्यक्रमों के लिए 60 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई थी। वास्तविक खर्च 48 करोड़ रु० हुआ था । तीसरी योजना म बाढ़-नियन्त्रण, जल-निकासी, जलप्लावन एवं समुद्री कटाव-निरोधक योजनाओं पर कुल 61 करोड़ रु० के खर्च की व्यवस्था राज्यों की योजनाओं में की गई है।

16. तीसरी योजना में सिंचाई के कार्यक्रम पर, जिसमें बाढ़-नियन्त्रण, जल-निकासी, जलप्लावन तथा समुद्री कटाव रोकने, आदि कार्य भी शामिल हैं, कुल 661 करोड़ रु० के व्यय की व्यवस्था है। इस राशि के वितरण का ब्यौरा तथा विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत होनेवाले लाभ का विवरण इस प्रकार है :

तालिका-संख्या 4

तीसरी योजना के कार्यक्रम और उनके लाभ

वर्ग	अनुमित व्यय (करोड़ रु०)	अतिरिक्त लाभ (लाख एकड़)	
		सिंचाई-क्षमता	कुल सिंचित क्षेत्र
सिंचाई			
चालू योजनाएं	436	138	116.5
नई योजनाएं	164	24	11.5
योग	600	162	128
		शुद्ध क्षेत्र	115
बाढ़-नियन्त्रण, जल-निकासी, जलप्लावन एवं समुद्री कटाव-निरोधक योजनाएं	61	करीब 50 लाख एकड़ क्षेत्र को लाभ पहुंचेगा तथा 25 मील लम्बे समुद्र-तट की रक्षा हो सकेगी।	
कुल सिंचाई और बाढ़-नियन्त्रण	661		

तीसरी योजना की सिंचाई-योजनाओं के लिए 50 करोड़ रु० मूल्य की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता होगी। पहली और दूसरी योजनाओं से चली आ रही प्रमुख सिंचाई-परियोजनाओं तथा तीसरी योजना की नई परियोजनाओं का विवरण अनुबन्ध 4 और 5 में दिया गया है।

17. **नदी-घाटी-ग्राहक क्षेत्रों में मिट्टी-संरक्षण** : सिंचाई तथा बिजली-उत्पादन के लिए बड़े जलाशय बनाने पर बड़ी रकमें खर्च की जा रही हैं। इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि ग्राहक क्षेत्रों में से मिट्टी, आदि भारी मात्रा में बह कर इन जलाशयों का जीवन कम तो नहीं कर रही है। साथ ही, ग्राहक क्षेत्र में मिट्टी के ऊपर की परत का भी संरक्षण ज़रूरी है। अतः यह वांछनीय है कि ग्राहक क्षेत्रों में वन लगाने, कंटूर बांध बनाने, सीढ़ीदार खेत बनाने, बांध बनाने, चराई का नियमन, खेतों की अदल-बदल रोकने, आदि-जैसी मिट्टी-संरक्षण की योजनाओं पर ध्यान दिया जाए। हीराकुड, भाखड़ा-नंगल, दामोदर-घाटी, चम्बल और मचकुंड-जैसी बड़ी नदी-घाटी-योजनाओं के ही कुल 3 करोड़ 70 लाख एकड़ के ग्राहक क्षेत्र में से 1 करोड़ 50 लाख एकड़ में मिट्टी-संरक्षण के उपाय किए जाने की आवश्यकता है। यह कार्यक्रम अन्य नदी-घाटियों में भी अपनाया जाना चाहिए। ऊपर की परियोजनाओं में दूसरी योजना के अन्त तक 1 करोड़ रु० खर्च करके मिट्टी-संरक्षण-कार्यक्रम का लाभ 1.4 लाख एकड़ भूमि को पहुंचाया गया है। तीसरी योजना में नदी-घाटी-क्षेत्रों में मिट्टी-संरक्षण-कार्य के लिए 'कृषि' की मद में 11 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है, जिससे

लगभग 10 लाख एकड़ ग्राहक क्षेत्र की देखभाल हो सकेगी। मिट्टी-संरक्षण का कार्यक्रम दरअसल एक दीर्घकालीन कार्यक्रम है, जिसे 4-5 योजनाओं की अवधि में ही पूरा किया जा सकता है। इस कार्यक्रम की प्रशासनिक ज़िम्मेदारी केन्द्र में खाद्य और कृषि-मन्त्रालय पर है तथा केन्द्रीय जल और बिजली-आयोग ने नदी-घाटियों के ग्राहक क्षेत्रों की मिट्टी-रक्षा-योजनाओं के लिए राज्यों की ओर से प्रस्तावित कार्यक्रमों पर विचार करने तथा सलाह देने के लिए एक विशेष शाखा स्थापित कर दी है। नदी-मंडलों की स्थापना से (जिनका आगे चल कर उल्लेख किया गया है) मिट्टी-रक्षा के कार्यक्रमों पर तेज़ी से अमल करने में सुविधा हो जाएगी। अन्तः राज्यीय नदी-घाटियों में मिट्टी-संरक्षण रोकने तथा वन लगाने के कार्यक्रमों का समन्वय करना इन मंडलों का एक मुख्य कार्य होगा।

18. **परियोजनाओं का सोपानीकरण:** परियोजनाओं के सोपान सही ढंग से निश्चित करना बहुत ही महत्व रखता है। इससे न केवल निर्माण-कार्यों में खर्च की बचत होगी, बल्कि परियोजना के पूरे होने से पहले ही उससे मिलनेवाली सिंचाई-सुविधाओं का अधिकतम उपयोग करना सम्भव हो जाएगा। सोपान तय करने से एक बात यह भी होगी कि वास्तविक आवश्यकता से बहुत पहले पूंजी व्यर्थ में किसी काम में नहीं फंस सकेगी। सिंचाई-कार्यों के आयोजन के चार पहलू हैं, जो परस्पर-सम्बद्ध हैं तथा परियोजना स्वीकार होने के समय से ही जिनका उचित समन्वय हो जाना चाहिए। वे चार पहलू इस प्रकार हैं:

(1) पानी का बहाव मोड़ने या संग्रह करने के लिए बांध बनाना;

(2) नहर, और जल का वितरण करनेवाले साधनों का निर्माण, ताकि हर गांव तक पानी सुविधाजनक ढंग से पहुंच सके;

(3) इन सुविधाओं से लाभ उठानेवालों-द्वारा ऊपर की संख्या 2 में उल्लिखित पहलू को ध्यान में रख कर हर गांव में खेतों की नालियों का निर्माण, ताकि नहरों में पानी आते ही उस परियोजना-द्वारा सेवित सम्पूर्ण क्षेत्र की सिंचाई हो सके; और

(4) सुधरे हुए खेती के तरीके एवं फसलों की विधियां अपनाना, ताकि सिंचाई-सुविधाओं का उत्कृष्टतम उपयोग करके अधिकतम कृषि-उत्पादन प्राप्त किया जा सके।

इन विभिन्न सोपानों के समुचित आयोजन और कार्यान्वियन से ही हर परियोजना से क्रमानुसार ठोस परिणाम निकल सकेंगे।

आर्थिक लाभ

19. हाल के वर्षों में सिंचाई-सम्बन्धी जो निर्माण-कार्य हुए हैं और जो अभी चल रहे हैं, उन पर अतीत में हुए निर्माण-कार्यों की अपेक्षा अधिक खर्च हुआ है। इसका कारण कुछ तो यह है कि पारिश्रमिक और सामान का खर्च पहले से अधिक बढ़ गया है और कुछ यह कि चीजें मुहय्या करने के साधन कहीं कठिन और इसीलिए बहुत खर्चीले हैं—जैसे, ऊंचे बांध, आदि। इसी कारण—पुरानी तथा नई परियोज-

नाओं के रख-रखाव एवं संचालन का खर्च बढ़ने के कारण भी—समुचित लाभ प्राप्त नहीं हो रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप प्रायः सभी राज्यों में सिंचाई-योजनाओं का काम घाटे में चल रहा है। दूसरे वित्त-आयोग ने सिंचाई की योजनाओं से होनेवाली शुद्ध आय में कमी की ओर ध्यान दिलाया था। हाल के वर्षों में स्थिति और बिगड़ गई है। इसीलिए आर्थिक लाभ की स्थिति सुधारने के लिए निम्नलिखित विशेष कदम उठाने का सुझाव दिया गया है :

(1) सिंचाई की परियोजनाओं से जो सिचाई-सुविधाएं प्राप्त हुई है, उनका तेज़ी से इस्तेमाल किया जाए ;

(2) पानी की दरों में संशोधन किया जाए और अनिवार्य रूप से जल-शुल्क लगाया जाए ;

(3) खुशहाली कर की वसूली; और

(4) सिंचाई-सुविधाओं के उपयोग में मितव्ययिता ।

20. सिंचाई-व्यवस्था के उपयोग के लिए कई विभागों—सिंचाई, राजस्व, कृषि, सामुदायिक विकास, सहकारिता, आदि—के समन्वित प्रयत्नों की आवश्यकता है; इनमें से प्रत्येक को अपना विशिष्ट योगदान करना है। हर परियोजना के निर्माण-कार्यक्रम (जिसमें खेतों की नालियों का निर्माण भी शामिल है) के सोपान तय करने के साथ-साथ, सिंचाई-सुविधाओं के उपयोग में तेज़ी लाने के लिए बड़ी संख्या में अन्य विकास-कार्यक्रम भी चलाने पड़ेंगे। इन पहलुओं पर इसी अध्याय मे आगे चल कर विचार किया गया है।

21. **पानी की दरें** : पानी की दरें आम तौर पर इतनी होनी चाहिए कि उनसे काम चलाने का खर्च और ऋण-प्रभार पूरा हो जाए तथा कमीवाले इलाकों के बाहर सिंचाई के कार्यक्रमों के कारण सामान्य राजस्व को घाटा न पहुंचे। अधिकतर राज्यों में पानी की मौजूदा दरें अपेक्षाकृत कम हैं। एक ओर जहां सिंचाई-सुविधाओं के फलस्वरूप फसलों के मूल्य में काफी वृद्धि हुई है और रख-रखाव का खर्च भी बढ़ गया है, वहां दूसरी ओर पानी की दरों में कोई वृद्धि नहीं हुई है। इसलिए, कुल मिलाकर, इन दरों को बढ़ाने की ज़रूरत है। इसके अतिरिक्त, जिन राज्यों में पानी का प्रभार वैकल्पिक है, वहां एक अनिवार्य जल-शुल्क उस पूरे क्षेत्र पर लगाया जाना चाहिए, जिसके लिए सिंचाई की सुविधाओं की व्यवस्था की गई हो—चाहे किसान पानी लें या न लें। इसका परिणाम यह होगा कि किसान को समय पर पानी का उपयोग करने की प्रेरणा मिलेगी और फसलों की उपज बढ़ेगी।

22. **खुशहाली कर और बाढ़-शुल्क** : उत्तरप्रदेश, पश्चिम-बंगाल और जम्मू-कश्मीर को छोड़ कर अन्य सभी राज्यों में खुशहाली कर-सम्बन्धी कानून बनाए जा चुके हैं। नियत दर के अनुसार यह वसूली 15-20 वर्षों के अरसे में होगी तथा सिंचाई का पानी प्राप्त होने के 2-3 वर्ष बाद शुरू की जाएगी। प्रायः सभी जगह यह कानून लागू करने का काम कुछ पिछड़ गया है और दूसरी योजना के शुरू में निर्धारित लक्ष्य 47 करोड़ रु० के मुकाबले वस्तुतः 3.5 करोड़ रु० की वसूली होने की सम्भावना है। बाढ़-शुल्क के बारे में आन्ध्रप्रदेश, असम, बिहार, जम्मू-कश्मीर, केरल और मैसूर ने आवश्यक कानून बना दिए हैं और मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, उड़ीसा, पंजाब,

राजस्थान, उत्तरप्रदेश और पश्चिम-बंगाल में इस प्रश्न पर विचार हो रहा है। मद्रास-राज्य में बाढ़ की कोई गम्भीर समस्या नहीं है। तीसरी योजना में खुशहाली कर और बाढ़-शुल्क की वसूली का लक्ष्य 39 करोड़ रु० निश्चित किया गया है, परन्तु इसे पूरा करने के लिए ज़रूरी है कि शेष राज्यों में कानून बनाए जाएं और जहां बन चुके हैं, वहां उन्हें लागू किया जाए ।

23. यह बात अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि जब किसी नए क्षेत्र में कोई सिंचाई-परियोजना शुरू करने का प्रस्ताव हो, तो राज्य-सरकार परियोजना की रूपरेखा और उससे होनेवाले फायदों से उस इलाके के किसानों को परिचित कराए, विशेषरूप से उन्हें पानी की दरों का ढांचा, खुशहाली कर, बाढ़-शुल्क, आदि की जानकारी दे, जिनकी अदायगी लाभ उठानेवालों को करनी पड़ेगी। इस रीति से जन-सामान्य को इन बातों से परिचित कराने का फल यह होगा कि सिंचाई-व्यवस्था का अविलम्ब उपयोग होने लगेगा और परियोजना के मूर्त रूप ग्रहण करते ही लाभ प्राप्त करनेवाले लोग खुशी से पानी की दर और खुशहाली कर की अदायगी स्वीकार कर लेंगे।

24. **लाभों का मूल्यांकन :** सिंचाई-परियोजनाओं से होनेवाला आर्थिक लाभ एक महत्वपूर्ण पहलू है अवश्य, पर परियोजना का कुल लाभ आंकने का यह एकमात्र आधार नहीं है। सिंचाई-परियोजनाओं से होनेवाले विभिन्न लाभों का अनुमान लगाने के लिए योजना-आयोग के अनुरोध पर अनुसन्धान-कार्यक्रम-समिति ने पांच मुख्य सिंचाई-कार्यक्रमों—राजस्थान की गंग नहर, उत्तरप्रदेश की शारदा नहर, बिहार की त्रिवेणी नहर, पश्चिम-बंगाल की दामोदर नहर और मद्रास की कावेरी-मेत्तूर-परियोजना—का मूल्यांकन-अध्ययन आरम्भ किया। इन मूल्यांकन-अध्ययनों से पता चलता है कि सिंचाई के बहुत-से अप्रत्यक्ष लाभों का अनुमान निश्चित मात्रा के रूप में तो नहीं लगाया जा सकता; परन्तु सरकार को आर्थिक लाभ के अतिरिक्त ये मुख्य लाभ होंगे—भूमि और अन्य साधनों का अधिक व्यापक उपयोग होने लगेगा; खेती की बेहतर प्रणाली अपनाई जाएगी तथा अधिक मूल्यवान फसलें पैदा करने की ओर ध्यान दिया जाएगा; नई पूंजी लगाने के लिए अनुकूल स्थिति पैदा होगी एवं खेती के धन्धे में उत्पादक-पूंजी बढ़ जाएगी; खेती की उत्पादकता में वृद्धि होगी, और खेती की आमदनी बढ़ेगी तथा स्थायी होगी; श्रमिकों को रोज़गार के अधिक अवसर मिलेंगे; और उद्योगों—विशेषरूप से विधायन-उद्योग—तथा व्यापार एवं परिवहन को बढ़ावा मिलेगा। इन अध्ययनों से सिंचाई-विकास के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में भी उपयोगी जानकारी मिली है।

सिंचाई का उपयोग

25. पहली और दूसरी योजनाओं में सिंचाई के उपयोग में रह गई कमी को देखते हुए योजना-आयोग ने पिछले 2-3 वर्षों में इस ओर विशेष ध्यान दिया है। सिंचाई-परियोजनाओं से अधिक तेज़ी से लाभ प्राप्त करने के लिए कुछ मुख्य उपाय इस प्रकार हैं :

(i) हैडवर्क्स, नहरें, वितरण-नहरें, जल-मार्ग और खेतों की नालियां बनाने के काम में पूरा समन्वय रहना आवश्यक है, ताकि ऐसी व्यवस्था

हो सके कि हैडवर्क्स पर जिस समय पानी उपलब्ध हो, प्रायः उसी समय किसान के खेत में भी पानी पहुंच जाए। खेतों की नालियां छोड़ कर शेष निर्माण-कार्यक्रम में समन्वय स्थापित करने की सीधी ज़िम्मेदारी परियोजना-अधिकारियों पर है।

(2) इन सिंचाई-सुविधाओं का तेज़ी से लाभ उठाने के लिए परियोजना के स्वीकृत होते ही जल्दी-से-जल्दी उससे लाभान्वित होनेवाले क्षेत्र में विकास-खंडों की स्थापना की जाए।

(3) जलमार्गों और खेतों की नालियों की खुदाई में विलम्ब न होने देने के लिए परियोजना-अधिकारियों को चाहिए कि वे गांवों के नक्शों पर उन्हें रेखांकित कर दें। ये नक्शे ज़िले और खंड के अधिकारियों के पास भेज दिए जाएं, ताकि वे लाभ उठानेवाले लोगों से ठीक समय पर खेतों की नालियां तैयार करवा सकें। ऐसा पक्का प्रबन्ध कर लेना चाहिए कि जब नहर-व्यवस्था पूरी हो, तब लाभ उठानेवाले लोगों-द्वारा नालियां खोदने का काम भी पूरा हो चुके। यदि वे यह काम पूरा न करें, तो पंचायत-समितियां और ग्राम-पंचायतों को सरकार के प्रतिनिधि-रूप में यह काम करवाने तथा लागत वसूल करने का अधिकार होना चाहिए।

(4) इसके साथ ही और भी कई विकास-कार्य करने होंगे। इनमें ये भी शामिल हैं: मिट्टी-सर्वेक्षण, नवीन फसल-प्रणालियां विकसित और निर्धारित करने तथा कई फसलें उगाने, आदि के लिए प्रायोगिक फार्मों की स्थापना, और सिंचाई के वैज्ञानिक तरीकों—विशेष रूप से पानी का किफायत से इस्तेमाल करने की विधि—का प्रदर्शन करने के लिए फार्मों की स्थापना। यह आवश्यक है कि सिंचाई-विभाग के अधिकारियों को किसानों की समस्याओं और उनके खेती के तरीकों की पूरी जानकारी हो। इसलिए उन्हें कुछ महीने तक नौकरी में रहते हुए प्रशिक्षण देने का प्रबन्ध किया जाना चाहिए। इस प्रशिक्षण के कारण उन्हें सिंचाई-योजनाएं बनाने और चलाने के काम में बहुत सुविधा हो जाएगी।

(5) पानी के उपयोग में किफायत करना बहुत जरूरी है। नहरों के पानी के क्षेत्रवार वितरण का वर्तमान तरीका किफायतशारी में कोई सहायता नहीं देता। मात्रा-माप के तरीके से वितरण व्यावहारिक नहीं, क्योंकि पहले तो माप की व्यवस्था बहुत खर्चीली होगी और दूसरे मापक-यन्त्रों के बिगाड़ दिए जाने की आशंका रहेगी। कृषि-विभाग को विभिन्न फसलों के लिए उपयुक्त सिंचाई की पद्धति और खेती-सम्बन्धी ज़रूरी बातों के बारे में परामर्श देना होगा तथा हर क्षेत्र में आवश्यक जांच-पड़ताल करनी होगी। इस प्रकार, नहरों का जो पानी बचेगा, उसका उपयोग अधिक सघन सिंचाई तथा नए क्षेत्रों में पानी की व्यवस्था करने में होगा। सामुदायिक विकास-संगठन को ग्राम और खंड-स्तर पर सघन शिक्षा-कार्य शुरू करना चाहिए।

(6) यह भी आवश्यक है कि सम्बद्ध विभाग अपने-अपने क्षेत्र में पहले से ही आयोजन कर लें––जैसे, उन्नत किस्म के बीज और खाद की व्यवस्था तथा स्थानीय खाद-साधनों का विकास; बड़ी-बड़ी रकमों के ऋण तथा हाट-व्यवस्था-सम्बन्धी सुविधाएं; गोदामों और भांडारों की स्थापना; तथा सिंचाई-परियोजनाओं से सम्बद्ध क्षेत्रों में संचार-व्यवस्था का सुधार। इससे किसान सिंचाई-सुविधा का अधिकतम लाभ उठा सकेंगे और उनकी शुद्ध आमदनी बढ़ जाएगी।

(7) नई सिंचाई-परियोजनाओं के आरम्भिक 2-3 वर्षों के लिए अनेक राज्यों ने पानी की रिआयती दरें लागू कर रखी हैं। यह एक उपयोगी, उन्नतिमूलक कदम है और इससे सिंचाई के तेज़ी से विकास में सहायता मिलती है।

26. राज्य-सरकारें सभी सम्बद्ध विभागों के प्रतिनिधियों को लेकर विकास-समितियां बना रही हैं, जिनका काम इस बात की व्यवस्था करना है कि सिंचाई-विभाग की ओर से निर्माण-कार्यों का आयोजन आरम्भ होने के साथ-साथ अन्य सम्बद्ध विभाग भी अपने-अपने क्षेत्र में आयोजन आरम्भ कर दें। शुरू से ही सभी सम्बद्ध विभागों के बीच घनिष्ठ रूप से विचार-विमर्श होते रहना चाहिए और हर महत्वपूर्ण सिंचाई-परियोजना के प्रकाश में सम्बद्ध विभागों को अपना कार्यक्रम पूरा करने की ज़िम्मेदारी निभाने की व्यवस्था कर लेनी चाहिए। ज़िला-स्तर पर कलक्टर को सभी विभागों के कार्यक्रमों का समन्वय करना चाहिए, ताकि उस ज़िले को लाभ पहुंचाने के लिए बनी सिंचाई-योजनाओं से प्राप्त सुविधाओं का तेज़ी से उपयोग किया जा सके।

अन्वेषण, अनुसन्धान और डिज़ाइन

27. नदी-घाटी-परियोजनाओं के लिए सूक्ष्म अन्वेषण की अवश्यकता होती है, योजनाबद्ध ढंग से देश के भूमि और जल-विषयक साधनों के समन्वित विकास तथा जल-साधनों के विकास में निरन्तरता बनाए रखने के लिए सभी नदी-परियोजनाओं की टेक्नोलाजी-विषयक सम्भावनाओं––जैसे, उपयुक्त परियोजना-स्थलों का चुनाव, जल-सम्बन्धी स्थिति; सिंचाई-योग्य क्षेत्रों, आदि––की पूरी जानकारी पहले से ही प्राप्त कर लेनी चाहिए। इसके फलस्वरूप परियोजनाओं का उचित रूप से चुनाव हो सकेगा और उन्हें यथायोग्य प्राथमिकता मिल सकेगी। हर राज्य में सिंचाई के दीर्घकालीन विकास के लिए वृहत् योजनाएं तैयार कर ली जानी चाहिए, ताकि विभिन्न सिंचाई और बहूद्देश्यीय योजनाओं की क्षमता की सम्पूर्ण सम्भावनाए पूरी तरह स्पष्ट हो सकें। यद्यपि प्रायः सभी राज्यों में विशेष अन्वेषण-दल बनाए जा चुके हैं, तथापि परियोजनाओं के अन्वेषण और तैयारी के काम में पर्याप्त प्रगति नहीं हो सकी है; दूसरी योजना में शामिल की गई परियोजनाओं के सम्बन्ध में भी यही स्थिति है। यह आवश्यक है कि तीसरी योजना में कार्यक्रमों के भली-भांति अन्वेषण––जिसमें उस क्षेत्र के मिट्टी-सर्वेक्षण का काम भी शामिल हो––तथा हर महत्वपूर्ण दृष्टि से परियोजना-सम्बन्धी रिपोर्टें तैयार करने पर अधिक बल दिया जाए। इस कार्य के लिए राज्यों की अन्वेषण-टुकड़ियों को सुदृढ़ किया जाना चाहिए। उन योजनाओं का ठीक समय पर अन्वेषण किया जाना चाहिए, जो राज्य-सरकारें चौथी योजना के विचारार्थ पेश करना चाहती हैं। तीसरी

योजना की अवधि में ही उन परियोजनाओं के सम्बन्ध में रिपोर्टें तैयार हो जानी चाहिए। परियोजना-सम्बन्धी रिपोर्टें तैयार और पेश करने के क्षेत्र में हाल में ही कुछ सुधार किए गए हैं। इनके अनुसार यह आवश्यक हो गया है कि किसी परियोजना पर अन्तिम निर्णय करने तथा निर्माण-कार्य शुरू होने से पहले ही उसके विभिन्न तकनीकी, वित्तीय और अन्य पहलुओं पर पूरी तरह विचार कर लिया जाए।

28. सिंचाई की वृहत् योजनाएं तैयार करने में राज्य-सरकारों को सहायता देने के लिए केन्द्रीय जल और बिजली-आयोग कंटूर-नक्शों की मदद से देश के विभिन्न नदी-क्षेत्रों में परियोजना के उपयुक्त स्थलों के सम्बन्ध में प्रारम्भिक अध्ययन कर रहा है। अन्तिम रूप देने से पहले उन्हें राज्यों के विचारार्थ पेश किया जाता है। इन योजनाओं के सम्बन्ध में क्षेत्रीय अन्वेषण और सर्वेक्षण सामान्य तौर पर राज्य-सरकारों को ही करना होगा, ताकि वे यह निश्चय कर सकें कि विस्तृत अन्वेषण तथा परियोजना-सम्बन्धी रिपोर्टें तैयार करने के लिए किस योजना को प्राथमिकता दी जा सकती है। केन्द्रीय जल और बिजली-आयोग ने चम्बल, रामगंगा, सोन, ताम्रपर्णी, वैगई, आदि नदियों के सिंचित क्षेत्र के सम्बन्ध में प्रारम्भिक अध्ययन पूरा कर लिया है। अन्य महत्वपूर्ण नदी-घाटियों के बारे में अध्ययन-कार्य प्रगति के विभिन्न चरणों में है और तीसरी योजना की अवधि में उसके पूरा हो जाने की आशा है।

29. **अनुसन्धान :** सिंचाई और जल-इंजीनियरी के क्षेत्र में अनुसन्धान का कार्य पूना-स्थित केन्द्रीय जल और बिजली-अनुसन्धान-केन्द्र तथा राज्यों के 15 अन्य अनुसन्धान-केन्द्रों में चल रहा है। इन केन्द्रों में प्रायोगिक इंजीनियरी में—सिंचाई-कार्यों, जल-विज्ञान, मिट्टी, आदि से सम्बद्ध समस्याओं पर—अनुसन्धान होने के साथ-साथ बुनियादी अनुसन्धान भी हो रहा है। अब चूंकि विकास के बड़े कार्यक्रमों को अमल में लाया जा रहा है, इसलिए इन संगठनों का काम भी बढ़ रहा है। दूसरी योजना के अन्तर्गत किए गए बुनियादी अनुसन्धान-कार्यों में नदियों की उत्पात-शक्ति, नहरों-नालियों के डिज़ाइन, मिट्टियों के इंजीनियरी-विषयक-तत्व, कंक्रीट में वायु-प्रवेश, ज़मीन के नीचे की पहली सतह में पानी के बहाव, जल-धाराओं और जलाशयों में मिट्टी के जमाव, नदी-संरक्षण-कार्य, आदि से सम्बन्धित अनुसन्धान शामिल है। केन्द्रीय सिंचाई और बिजली-मंडल अनुसन्धान-कार्यक्रमों में समन्वय स्थापित करता है। तीसरी योजना में सिंचाई-सम्बन्धी अनुसन्धान-कार्य का विस्तार किया जा रहा है, ताकि अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित नई समस्याओं पर भी अन्वेषण किया जा सके :

(1) मिट्टी-तलीय अन्वेषणों में आइसोटोपों का उपयोग;

(2) पहले से ढाले गए जलीय ढांचों की तकनीकों का विकास;

(3) बिजलीघर के पाइपों, आदि में गन्दगी न जाने देने की व्यवस्था में सुधार के फलस्वरूप बचत करने के उपाय;

(4) जलीय ढांचों में भार-विश्लेषण के प्रयोगजन्य तरीके; और

(5) गीली मिट्टी तथा पानी के नीचे बैठी हुई मिट्टी के सम्बन्ध में अनुसन्धान, जिसमें मिट्टी के बांध बनाने-सम्बन्धी जांच का विशेष स्थान है।

तीसरी योजना में सिचाई-सम्बन्धी बुनियादी अनुसन्धान के कार्यक्रमों के लिए 120 लाख रु० की व्यय-व्यवस्था की गई है।

30. **डिज़ाइन-संगठन** : सिंचाई-परियोजनाओं में बड़ी रकमें लगाई जा रही हैं, इसलिए यह आवश्यक है कि डिज़ाइन और निर्माण के सुधरे हुए तरीकों का इस्तेमाल किया जाए और निर्माण-सामग्रियों का समुचित रूप से चुनाव किया जाए, ताकि परियोजना की कुल लागत में अधिक-से अधिक किफायत हो सके। सिफारिश की गई है कि हर राज्य एक सुदृढ़ डिज़ाइन-संगठन बनाए, जो अनुसन्धान-संगठनों से मिल कर सर्वाधिक उपयुक्त और कमखर्च डिज़ाइन तैयार करे। केन्द्र में, केन्द्रीय जल और बिजली-आयोग का एक विभाग है, जो राज्यों को अधिक जटिल ढांचे तैयार करने में आवश्यक सहायता प्रदान करता है।

31. **नदी-मंडल** : नदी-घाटियां, विशेषरूप से बड़ी नदियों की घाटियां, स्वभावतः किसी एक राज्य तक सीमित नहीं होतीं। कुछ नदियों के मामले में तो स्थिति यह है कि सिंचाई-परियोजना बनाने का सबसे अनुकूल स्थान एक राज्य में है और उससे सिंचाई और बिजली का लाभ उठानेवाला क्षेत्र किसी दूसरे राज्य में। अतः जल-साधनों के संगठित और मितव्ययितापूर्ण विकास के लिए अन्तःराज्यीय सहयोग की व्यवस्था आवश्यक है। जल-साधनों के दीर्घकालीन आयोजन में इस महत्वपूर्ण पहलू पर ध्यान देना बहुत आवश्यक है कि उद्योगीकरण की प्रगति के साथ-साथ उद्योगों और बढ़ती हुई नागरिक आबादी की आवश्यकताओं के लिए जल-आपूर्ति की समस्या विकास के मार्ग की एक बड़ी समस्या बन जाएगी। नदी-मंडल-अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत महत्वपूर्ण नदी-घाटियों के लिए नदी-मंडलों की स्थापना होने से समग्र नदी-घाटियों की आवश्यकताओं पर समन्वित रूप से ध्यान दिया जा सकेगा——इसमें ग्राहक क्षेत्रों में मिट्टी-संरक्षण भी शामिल है। अधिक महत्वपूर्ण नदियों के लिए नदी-मंडलों की स्थापना करने के लिए राज्यों की सलाह से कदम उठाए जा रहे हैं।

32. **जन-सहयोग** : बाढ़-नियन्त्रण, जल-निकासी, जलप्लावन-निरोधक तथा समुद्री कटाव-निरोधक योजनाओं और सिंचाई-कार्यों के कुछ अंशों में विशेषरूप से जनता का सहयोग लिया जा सकता है। इन योजनाओं के कार्य ऐसे हैं कि श्रमिकों के लिए अधिक कुशलता की ज़रूरत नहीं पड़ती। ये कार्यक्रम अधिकतर उन गांवों के निकट होते हैं, जिन्हें इन सिंचाई-योजनाओं से लाभ पहुंचता है। यह प्रबन्ध करना ज़रूरी है कि योजनाओं से लाभ उठानेवाले भी इन योजनाओं के कार्य में स्वेच्छा से श्रमदान करें अथवा उसे उसके बदले में धन दें। इन कार्यक्रमों के लिए स्थानीय संगठनों का घनिष्ठ सहयोग लेना भी ज़रूरी है। पंचायत-समितियों और ग्राम-पंचायतों के सहयोग की विशेष आवश्यकता है। जहां तक सम्भव हो, श्रमिकों की सहकारी संस्थाओं का अधिकतम उपयोग किया जाना चाहिए। भारत-सेवक-समाज-जैसे स्वैच्छिक संगठन भी औज़ारों-उपकरणों की आपूर्ति, सम्बद्ध विभागों से ठेका प्राप्त करने, निर्माण-कार्य का प्रबन्ध करने और श्रमिकों का कल्याण आदि कामों में सहायता पहुंचा सकते हैं। इन कार्यों में सामुदायिक विकास-संगठनों की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। उन्हें ऐसा वातावरण तैयार करना चाहिए जो जनता का उत्साह बढ़ा सके, उनका सहयोग ले सके और परियोजना के कार्य में हिस्सा लेने की भावना उनके दिलों में भर

सके। उन्हें ग्रामीणों को उनका उत्तरदायित्व समझाना चाहिए तथा खेती के सुधरे हुए तरीके अपनाने की शिक्षा देनी चाहिए जिससे वे सिंचाई से अधिकतम लाभ उठा सकें।

33. **मानव-श्रम और मशीनों का उपयोग :** नदी-घाटी-योजनाओं में निर्माण-कार्य-सम्बन्धी मशीनों के उपयोग पर विचार करते समय देश में जनशक्ति के विशाल साधनों तथा इतने अधिक लोगों को लाभकारी रोज़गार देने की आवश्यकता को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। मशीनों के बड़े पैमाने पर उपयोग से विदेशी मुद्रा की बहुत अधिक आवश्यकता पड़ती है। सामान्यतः परियोजना का सारा निर्माण-कार्य मानव-श्रम से ही किया जाना चाहिए। मशीनों का इस्तेमाल उसी हालत में करना चाहिए, जब यह देखा जाए कि मानव-श्रम से काम पूरा होने में असाधारण रूप से विलम्ब हो रहा है अथवा परियोजना का खर्च बेतरह बढ़ रहा है। । हां, आवश्यकतानुसार श्रमिकों की सहायता के लिए मशीनों और ऐसे साज़-सामान का समुचित उपयोग किया जा सकता है। श्रमिकों के काम करने के तरीकों में सुधार पर ध्यान दिया जाना चाहिए, ताकि निर्माण-कार्य में तेज़ी आए और श्रमिक कुशलता से काम कर सकें। तीसरी योजना में शामिल की गई परियोजनाओं पर विचार करते समय इन पहलुओं पर विस्तार से एवं सावधानी से ध्यान देने की ज़रूरत है।

34. **विद्यमान सिंचाई-साधनों का रख-रखाव :** स्वतन्त्रता से पहले सिंचाई-विभागों का मुख्य काम विद्यमान सिंचाई-साधनों का संचालन और रख-रखाव ही था, क्योंकि बहुत कम नए सिंचाई-कार्यक्रम हाथ में लिए जाते थे। परन्तु पहली और दूसरी योजना में सिंचाई के विशाल कार्यक्रम शुरू किए गए। इस परिवर्तन के कारण संचालन एवं रख-रखाव के बजाय निर्माण-कार्यक्रमों की ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा। नतीजा यह हुआ कि सिंचाई-व्यवस्था में ढील आ गई और रख-रखाव का स्तर गिरने लगा। इसका एक कारण यह भी है कि विद्यमान नहरों, आदि की देखभाल के लिए खर्च की उतनी रकमें नहीं बढ़ाई गईं, जितना पारिश्रमिक और सामान की बढ़ती हुई दरों को देखते हुए आवश्यक था। कुछ वर्षों तक यह स्तर निरन्तर गिरते रहने का कुल नतीजा गम्भीर हो सकता है। नए कार्यक्रमों-द्वारा सिंचाई-सुविधाओं का विस्तार होने के साथ ही यह भी ज़रूरी है कि समुचित रख-रखाव और कुशल संचालन से वर्तमान सुविधाओं का अधिकतम लाभ उठाया जाए।

35. **तकनीकी कर्मचारी :** सिंचाई और बिजली-कार्यक्रमों के सन्तोषप्रद कार्यान्वयन की पहली और मुख्य आवश्यकता यह है कि सभी स्तरों पर समुचित रूप से प्रशिक्षित तकनीकी कर्मचारी पर्याप्त संख्या में उपलब्ध हों। नीचे की तालिका में दूसरी योजना के अन्त में इंजीनियरों को सिंचाई और बिजली-कार्यक्रमों से सम्बद्ध कामों में लगाने-सम्बन्धी विवरण प्रस्तुत किया गया है :

तालिका-संख्या 5

दूसरी योजना में तकनीकी कर्मचारियों को रोज़गार देने का अनुमान

इंजीनियरों की श्रेणियां	डिग्रीधारी	डिप्लोमाधारी	योग
सिविल	5,600	15,900	21,500
इलैक्ट्रिकल	4,200	6,400	10,600
मेकैनिकल	1,100	1,900	3,000
योग	10,900	24,200	35,100

तीसरी योजना में सिंचाई और बिजली-कार्यक्रमों के लिए इंजीनियरों की अतिरिक्त आवश्यकता का अनुमान इस प्रकार है :

तालिका-संख्या 6

तीसरी योजना में तकनीकी कर्मचारियों की अतिरिक्त आवश्यकता का अनुमान

इंजीनियरों की श्रेणियां	डिग्रीधारी	डिप्लोमाधारी	योग
सिविल	2,300	6,700	9,000
इलैक्ट्रिकल	2,800	4,400	7,200
मेकैनिकल	800	1,100	1,900
योग	5,900	12,200	18,100

आशा है कि तीसरी योजना में डिग्रीधारियों की संख्या आवश्यकता को देखते हुए पर्याप्त होगी; परन्तु डिप्लोमाधारियों की संख्या कुछ कम होने की सम्भावना है। योजना के पहले दो वर्षों में प्रशिक्षण की सुविधाओं का विस्तार करके यह कमी पूरी करने का प्रयत्न किया जाएगा। इसके साथ ही मिट्टी खोदने एवं हटाने की मूल्यवान मशीनों को चलाने और उनके रख-रखाव के लिए समुचित प्रशिक्षण-प्राप्त आपरेटरों और मेकैनिकों की ज़रूरत होगी। कोटा (राजस्थान) और नागार्जुनसागर (आन्ध्रप्रदेश) के परियोजना-स्थलों पर केन्द्रीय सरकार-द्वारा खोले गए दो तकनीकी प्रशिक्षण-केन्द्रों में आपरेटरों और मेकैनिकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई है।

36. **नियन्त्रण-मंडल :** भाखड़ा, चम्बल, रिहन्द, कोसी, हीराकुड, नागार्जुन-सागर, तुंगभद्रा, राजस्थान-नहर और कोयना-जैसी विशाल परियोजनाओं के लिए नियन्त्रण-मंडलों की स्थापना की जा चुकी है। इन मंडलों का काम इस बात का प्रबन्ध करना है कि परियोजनाओं के आयोजन और कार्यान्वियन में किफायतशारी और कुशलता से काम लिया जाए। वे इस बात की भी व्यवस्था करेंगे कि परियोजना के विभिन्न चरणों में मिलनेवाले लाभों का तेज़ी से और अधिकतम उपयोग किया जा सके। तीसरी योजना में अनेक बड़ी परियोजनाएं आरम्भ की जा रही हैं। परियोजनाएं स्वीकार होते ही उनके लिए नियन्त्रण-मंडलों की स्थापना से काम में सहायता मिलती है। इस सुझाव पर सम्बद्ध राज्य-सरकारों की सलाह से विचार किया जा रहा है। जिन बड़ी परियोजनाओं के लिए नियन्त्रण-मंडलों की स्थापना नहीं की गई है, उनके काम में बाधाएं न आने देने तथा तेज़ी से काम होने की व्यवस्था करने के लिए सिंचाई और बिजली-मन्त्रालय को समय-समय पर कार्य की समीक्षा का प्रबन्ध करना चाहिए।

बिजली

शक्ति के साधन

37. भारत में शक्ति के जो मुख्य साधन उपलब्ध हैं—जैसे, कोयला, भूरा कोयला (लिग्नाइट), जलप्रपात, यूरेनियम और थोरियम, तेल, प्राकृतिक गैसें और शोधनात्मक गैसें—उनमें से किसी से भी बिजली पैदा की जा सकती है। तरंग-शक्ति, वायु-शक्ति, भू-ऊष्मा-शक्ति और सौर-विकिरण अन्य सम्भावित साधन हैं, जिनसे बिजली पैदा की जा सकती है; परन्तु देश में बिजली के विकास पर इनका प्रभाव अभी तक नगण्य रहा है।

38. अनुमान लगाया गया है कि सारे देश में कोयले के ऐसे भांडारों की क्षमता, जहां से कोयला प्राप्त किया जा सकता है, 5,000 करोड़ टन है। इसमें से अधिकांश बिहार और पश्चिम-बंगाल में हैं और शेष असम, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा तथा आन्ध्रप्रदेश में फैले हुए हैं। इसके अलावा, भूरा कोयला (लिग्नाइट) के 200 करोड़ टन के भांडार का अनुमान लगाया गया है, जो मद्रास, राजस्थान, गुजरात और जम्मू-कश्मीर के कुछ भागों में उपलब्ध है। धातुशोधन और अन्य उद्योगों के लिए आवश्यक बढ़िया किस्म का कोयला कम है, इसलिए कोयला धोने के कारखाने स्थापित करना आवश्यक है। घटिया किस्म का कोयला, जिसके जलने से अधिक राख निकलती है, तथा कोयला धोने के कारखानों में प्राप्त मध्यम किस्म के कोयले को कम खर्च में दूर-दूर तक नहीं पहुंचाया जा सकता, इसलिए उसे बिजलीघरों के एक ही स्थान पर काम करने के लिए लगाए गए बायलरों में जलाना विशेष उपयोगी है। भाप से चलनेवाले बिजलीघरों के बायलरों में, कोयले की जगह भट्ठी-तेल का इस्तेमाल किया जा सकता है। डिग्बोई, विशाखापटनम और बम्बई के अलावा अब गौहाटी (असम), बरौनी (बिहार) तथा खम्भात (गुजरात) में भी तेल-शोधनालय स्थापित किए जा रहे हैं। परिवहन-व्यवस्था पर दबाव तथा लाने-ले-जाने का खर्च कम करने के लिए यह उचित है कि भाप से चलनेवाले बिजलीघर ऐसे स्थानों पर बनाए जाएं, जहां कोयला-खानें, कोयला धोने के कारखाने और शोधनालय हों। डीज़ल-चालित बिजली-घरों में बिजली-उत्पादन का अत्यधिक खर्च और डीज़ल के आयात में कमी करने की आवश्यकता को देखते हुए इस प्रकार के बिजली-उत्पादन का विस्तार दूरस्थ स्थानों पर और छोटी योजनाओं के लिए अथवा पूरक कार्यों के लिए ही होगा। कहीं-कहीं बिजली पैदा करने के लिए शोधनालयों, धमन-भट्ठियों और कोक-भट्ठी-गैसों का भी उपयोग होता है। असम के नहरकटिया नामक स्थान में प्राकृतिक गैस के भी भांडार प्राप्त हुए हैं। तीसरी योजना में बिजली पैदा करने के लिए अन्य वस्तुओं के अलावा प्राकृतिक गैस के उपयोग का भी इरादा है।

39. बड़े भापीय तापमान और दबाववाले बड़े-बड़े तापीय बिजलीघरों की स्थापना से बिजली-सम्बन्धी कुशलता ही नहीं बढ़ेगी, बल्कि स्थापित क्षमता के प्रति किलोवाट पूंजीगत खर्च में भी कमी आएगी। 30, 60, 100 और 120 मेगावाट के आधुनिक संयन्त्रों से उपलब्ध तापीय क्षमता क्रमशः 26, 29, 32 और 34 प्रतिशत तक होती है। 120 मेगावाट के बिजलीघर का प्रति किलोवाट पूंजीगत व्यय 30 मेगावाट के बिजलीघर के मुकाबले 20 प्रतिशत कम रहता है। भारत के तापीय बिजलीघरों की कुल क्षमता सन् 1959-60 में 19.5 प्रतिशत थी, क्योंकि अनेक बिजलीघर छोटे और पुराने थे। बड़े बिजलीघरों की स्थापना और संचालन से कुल तापीय क्षमता में काफी सुधार की आशा है; प्रयुक्त प्रति टन कोयले से अधिक किलोवाट-घंटे बिजली पैदा हो सकेगी।

40. पानी से बिजली पैदा करने का विशेष महत्व है, क्योंकि कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस और न्यैष्टिक ईंधनों से बिजली पैदा करने में उक्त वस्तुएं खर्च करनी पड़ती हैं, जब कि बहता हुआ पानी बिजली प्राप्त करने का अक्षय साधन है। सन् 1953 में केन्द्रीय जल तथा बिजली-आयोग ने देश की नदियों की बिजली पैदा करने की क्षमता का व्यवस्थित अनुमान लगाने का काम शुरू किया। मुद्रित नक्शों

पर सम्भावित पन-बिजली-स्थलों को अंकित किया गया तथा वर्षा एवं नदियों के सम्बन्ध में उपलब्ध विभिन्न आंकड़ों के आधार पर (इन नदियों के पानी का सिंचाई, बाढ़-नियन्त्रण, नौकानयन, आदि के लिए उपयोग को ध्यान में रखते हुए) अनुमान लगाया गया कि इस साधन से 4 करोड़ 10 लाख किलोवाट बिजली पैदा करना तकनीकी और आर्थिक दृष्टि से सम्भव है।

41. अनुमान लगाया गया है कि देश का थोरियम-भांडार विश्व के सबसे बड़े भांडारों में स्थान रखता है और यह यूरेनियम से भी अधिक व्यापक क्षेत्र में उपलब्ध है। थोरियम के इस्तेमाल के लिए देश में न्यैष्टिक शक्ति के कार्यक्रम पर तीन चरणों में अमल करना पड़ेगा; और इस पर स्पष्टतः बहुत समय लगेगा। पहले चरण में प्राकृतिक यूरेनियम का ईंधन के रूप में प्रयोग करके बिजली तथा विखंडनीय तत्व प्लुटोनियम पैदा किया जाएगा। दूसरे चरण में न्यैष्टिक प्रतिकारियों में प्लुटोनियम का ईंधन के रूप में तथा थोरियम का उर्वर सामग्री के रूप में इस्तेमाल करके बिजली बनाई जाएगी तथा थोरियम के अंश को यू-233 में बदला जाएगा। तीसरे चरण में यू-233 को थोरियम के साथ प्रजननकारी प्रतिकारियों में प्रयुक्त किया जाएगा, जिससे एक ओर बिजली पैदा होगी और दूसरी ओर उससे अधिक यू-233 पैदा होगा, जितना बिजली पैदा करने की प्रक्रिया में जलेगा। कतिपय अस्थायी अनुमानों के अनुसार, ख्याल है कि इस चरण में बिजली पैदा करने का खर्च अन्य दोनों चरणों से कम बैठेगा।

42. यह देखते हुए कि एक टन यूरेनियम में उतनी ही बिजली पैदा करने की क्षमता है, जितनी 10-11 हज़ार टन कोयले में, हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि परिवहन-सुविधाओं में न्यैष्टिक शक्ति का प्रयोग विशेष लाभकारी होगा। यद्यपि तापीय बिजलीघरों के मुकाबले न्यैष्टिक केन्द्रों का पूंजीगत व्यय अभी डेढ़-दो गुना बैठता है, तथापि कोयला-खानों से दूरस्थ और उन स्थानों पर, जहां बिजली पैदा करने के किफायती साधन नहीं हैं, न्यैष्टिक बिजलीघर स्थापित करने के लिए आवश्यक परिस्थितियां वर्तमान हैं। बिजली पैदा करने के लिए न्यैष्टिक संयन्त्रों के निर्माण और संचालन के लिए उच्च वैज्ञानिक और इंजीनियरी दक्षता की ज़रूरत होती है। अतः यह वांछनीय है कि देश के तकनीकी कर्मचारी इस क्षेत्र में आवश्यक प्रशिक्षण और अनुभव प्राप्त करें, ताकि उचित अवसर पर एक विशालतर न्यैष्टिक शक्ति-कार्यक्रम शुरू किया जा सके।

43. तरंगों और भू-तापीय शक्ति से चलनेवाले बिजलीघरों का भारत में बहुत सीमित उपयोग हुआ है। इन साधनों से कम खर्च में बिजली पैदा करने की सम्भावनाएं अभीनगण्य हैं। विश्व के अनेक भागों में सौर-शक्ति से सीधे बिजली प्राप्त करने के प्रयोग चल रहे हैं। भारत में, दूरस्थ स्थानों पर पम्प-द्वारा पानी पहुंचाने के लिए हवा से चलनेवाले संयन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। हाल में ही वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् ने बंगलोर की राष्ट्रीय वायुविद्या-प्रयोगशाला में वायुशक्ति-विभाग की स्थापना की है, जो पवनचक्कियों और पवन की गतिविधियों के सम्बन्ध में मार्गदर्शक अध्ययन आरम्भ करेगा। वायु-शक्ति के घटते-बढ़ते रहने के कारण ऐसी संग्राहक बैटरियां लगाने की आवश्यकता होगी, जिनसे निरन्तर शक्ति प्राप्त होती रहे। वायु-बिजलीघर बनाने में अधिक रकम लगती है, अतः देश में बिजली पैदा करने के इस तरीके का व्यापक रूप से इस्तेमाल नहीं किया जा सकता।

बिजली-विकास की वर्तमान स्थिति

44. पहली योजना के आरम्भ में बिजली की कुल स्थापित उत्पादन-क्षमता 23 लाख किलोवाट थी। इसमें 6 लाख 30 हज़ार किलोवाट का राज्याधिकृत सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में, 10 लाख 80 हज़ार किलोवाट का कम्पनी-अधिकृत सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में तथा 5 लाख 90 हज़ार किलोवाट का औद्योगिक संस्थानों में, जिनके पास अपने बिजलीघर थे, उत्पादन होता था। पहली योजना में कुल स्थापित उत्पादन-क्षमता में 49 प्रतिशत की वृद्धि हुई; वृद्धि का लक्ष्य 14 लाख किलोवाट था, जब कि वास्तविक वृद्धि 11 लाख 20 हज़ार किलोवाट की ही हुई। दूसरी योजना में उत्पादन-क्षमता लगभग 67 प्रतिशत बढ़ी—34 लाख 20 हज़ार किलोवाट से बढ़कर 57 लाख किलोवाट हो गई (अनुबन्ध 6)। प्रारम्भिक लक्ष्य 34 लाख 80 हज़ार किलोवाट का था, परन्तु वास्तविक वृद्धि 22 लाख 80 हज़ार किलोवाट की हुई। लक्ष्य-पूर्ति में कमी का मुख्य कारण दूसरी योजना के आरम्भिक वर्षों में विदेशी मुद्रा की कमी तथा भाखड़ा-नंगल, कोयना, रिहन्द और हीराकुड-जैसी कुछ परियोजनाओं के काम में विलम्ब था। तीसरी योजना के आरम्भिक वर्षों में बिजली के गम्भीर अभाव की स्थिति से बचने के लिए दूसरी योजना की शेष बिजली-परियोजनाओं को पूरा करने के लिए विदेशी मुद्रा उपलब्ध करने के क्षेत्र में कदम उठाए गए। इन परियोजनाओं को पहले 'अप्रमुख' बताया गया था। दूसरी योजना के दौरान कुछ प्रदेशों की बढ़ती हुई मांगों को पूरा करने के लिए कुछ ऐसी अतिरिक्त योजनाओं पर भी काम शुरू किया गया, जिन्हें पहले दूसरी योजना में शामिल नहीं किया गया था। दूसरी योजना के अन्तिम वर्ष में तीसरी योजना की कुछ चुनी हुई योजनाओं पर भी प्रारम्भिक कार्य शुरू करने की व्यवस्था की गई। पहली और दूसरी योजनाओं के दौरान जिन मुख्य बिजलीघरों को चालू किया गया, उनकी सूची अनुबन्ध 7 में दी गई है।

45. पहली योजना के शुरू में बिजली-प्रतिष्ठानों पर 150 करोड़ रु० की पूंजी लगी थी। इसमें से आधी से कुछ कम राशि सरकारी क्षेत्र के प्रतिष्ठानों में थी। स्वयं बिजली-उत्पादन करनेवाले औद्योगिक संस्थानों में 40 करोड़ रु० की पूंजी लगी हुई थी। पहली योजना में बिजली-विकास की योजनाओं पर 302 करोड़ रु० खर्च हुए, जिसमें से 260 करोड़ रु० राज्याधिकृत प्रतिष्ठानों पर, 32 करोड़ रु० कम्पनी-अधिकृत प्रतिष्ठानों पर तथा 10 करोड़ रु० स्वयं उत्पादन करनेवाले औद्योगिक संस्थानों पर खर्च किए गए। इससे सम्बद्ध दूसरी योजना के आंकड़े क्रमशः 525 करोड़ रु०, 460 करोड़ रु०, 37 करोड़ रु० तथा 28 करोड़ रु० हैं। इस 460 करोड़ रु० की राशि में दामोदर-घाटी-निगम और कुछ राज्य-बिजली-मंडलों-द्वारा अपने साधनों से लगाई गई पूंजी भी शामिल है। इस प्रकार, दूसरी योजना के अन्त तक बिजली पर पूंजी-विनियोग की कुल रकम 1,017 करोड़ रु० ठहरती है, जिसमें से राज्याधिकृत सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में लगी पूजी 790 करोड़ रु० थी।

बिजली-विकास का परिपेक्ष

46. दूसरी योजना के दौरान अतिरिक्त उत्पादन-क्षमता की स्थापना का औसत 4 लाख 50 हज़ार किलोवाट प्रति वर्ष रहा। तीसरी योजना में प्रति वर्ष औसत रूप से 14 लाख किलोवाट बिजली पैदा करके इस कार्यक्रम को बढ़ाने का विचार है, परन्तु चौथी और

उसके बाद की योजनाओं में विकास की गति इससे भी अधिक रहेगी। इस प्रकार, सन् 1975-76 तक देश में कुल स्थापित उत्पादन-क्षमता 3 करोड़ 50 लाख किलोवाट तक पहुंचने की सम्भावना है। वर्तमान अनुमानों के अनुसार, मोटे तौर पर, इसका 50 प्रतिशत भाग पन-बिजली-परियोजनाओं से और शेष तापीय बिजलीघरों से मिलेगा। इन लक्ष्यों को पूरा करने के उद्देश्य से पन बिजलीघरों के लिए नए स्थानों की खोज तेज़ी से की जानी चाहिए तथा उन पर समय रहते ही काम शुरू कर दिया जाना चाहिए, ताकि आगे बननेवाली योजनाओं में उनका लाभ उठाया जा सके। शक्ति के वर्तमान साधनों को देखते हुए, ख्याल है कि आनेवाले वर्षों में शक्ति की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने में न्यैष्टिक शक्ति की महत्वपूर्ण भूमिका होगी।

तीसरी योजना के लिए कार्यक्रम

47. **बुनियादी बातें और मापदंड :** विभिन्न क्षेत्रों के उपयुक्त बिजली-उत्पादन के विशिष्ट तरीकों का निश्चय करते समय निम्नलिखित मुख्य बातें सामने आती हैं : स्थापित क्षमता के प्रति किलोवाट पर पूंजीगत व्यय, विदेशी मुद्रा की आवश्यकता का परिमाण, प्रति किलोवाट-घंटा बिजली के उत्पादन पर लागत, निर्माण के लिए आवश्यक अवधि, अन्य विकास-कार्यक्रमों—जैसे, कोयला-खान, कोयला धोने का उद्योग, सिंचाई, प्राकृतिक गैसों का उपयोग, नई टेक्नोलाजी के विकास को प्रोत्साहन, आदि—पर प्रभाव। पानी, कोयला और डीज़ल-चालित बिजलीघरों में बिजली-उत्पादन का औसत खर्च क्रमशः 1.2 नए पैसे, 3 नए पैसे और 25 नए पैसे प्रति किलोवाट-घंटा पड़ता है। परमाणविक बिजलीघरों में उत्पादन की लागत 3.5 से 4 नए पैसे प्रति किलोवाट-घंटा तक पड़ेगी, जो कि कोयला-खानों से दूर स्थित क्षेत्रों में कोयला-चालित बिजलीघर में बिजली-उत्पादन के लगभग बराबर ठहरेगी। पन-बिजलीघरों के मुकाबले कोयला-चालित बिजलीघरों की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता 2-3 गुना अधिक होती है। परमाणविक बिजलीघरों के लिए इससे भी अधिक विदेशी मुद्रा की आवश्यकता होती है। विभिन्न प्रकार से बिजली-उत्पादन के तरीकों के कारण किफायत करने के लिए आवश्यक है कि उत्पादन के विभिन्न तरीकों में एक सन्तुलन रखा जाए और एक ग्रिड के बुनियादी, अधिकतम और मौसमी लोड को देखते हुए उनमें परस्पर-सम्बन्ध स्थापित किया जाए।

48. तीसरी योजना में राज्यों में बिजली-कार्यक्रम का आकार तय करते समय मुख्य प्रश्न अगले कुछ वर्षों में बिजली के लोड की सम्भावित मांग का ही था। दूसरी योजना के अन्त में केन्द्रीय जल और बिजली-आयोग-द्वारा किए गए लोड-सम्बन्धी विस्तृत सर्वेक्षण से मालूम पड़ा कि मांग सन् 1958 में किए गए प्रारम्भिक लोड-सर्वेक्षण के अनुमानों से कहीं अधिक है। तीसरी योजना में बिजली-उत्पादन के कार्यक्रम का आधार यही ताज़ा सर्वेक्षण तथा प्रस्तावित औद्योगिक कार्यक्रम है। मद्रास, महाराष्ट्र, पंजाब और उत्तरप्रदेश में सिंचाई के लिए पम्पों का विस्तार करने का विचार है, जिससे बिजली का भी उपयोग बढ़ जाएगा। पश्चिम-बंगाल-जैसे कुछ क्षेत्रों में उद्योगों में बिजली की मांग बहुत बढ़ जाने की सम्भावना है। कलकत्ता और कानपुर के बीच तथा कुछ अन्य मार्गों पर रेलवे के बिजलीकरण से बिजली पहुंचाने की आवश्यकता बढ़ जाएगी। कुछ राज्यों में, जहां दूसरी योजना में उत्पादन-क्षमता का अधिक विस्तार नहीं हो सकता था, नई योजना की अवधि में बिजली-विस्तार-कार्यक्रमों में पिछली बड़ी कमी दूर करने की भी व्यवस्था करनी पड़ेगी। तीसरी योजना के

मुख्य बिजली-उत्पादन-कार्यक्रम अनुबन्ध 8 मे दिए गए है। । अनुबन्ध 9 मे बिजली-कार्यक्रमों का राज्यवार खर्च और तीसरी योजना मे उनसे मिलनेवाले लाभ का विवरण प्रस्तुत किया गया है ।

भौतिक लाभ और सोपानीकरण

49. तीसरी योजना के अन्त तक, कार्यरत और बन रहे सयन्त्रो की कुल उत्पादन-क्षमता 1 करोड़ 34 लाख किलोवाट होगी, जिसमें से 1 करोड़ 26 लाख 90 हजार किलोवाट का इस्तेमाल व्यावसायिक काम-काज मे होगा। यह स्थापित उत्पादन-क्षमता दूसरी योजना के मुकाबले 123 प्रतिशत अधिक होगी । इस कार्यक्रम के पूरा होने पर बिजली का प्रति व्यक्ति उत्पादन सन् 1951 के 18 किलोवाट-घटे, सन् 1956 के 28 किलोवाट-घंटे और सन् 1961 के 45 किलोवाट-घंटे से बढ़ कर सन् 1966 में 95 किलोवाट-घंटे हो जाएगा।

50. एक न्यैष्टिक बिजलीघर बम्बई के निकट तारापुर में स्थापित किए जाने की योजना है । इसमे दो प्रतिकारी होंगे और प्रत्येक की उत्पादन-क्षमता 150 मेगावाट की होगी। इनमें से पहला प्रतिकारी तीसरी योजना के अन्त से पहले ही काम शुरू कर देगा तथा दूसरा चौथी योजना के पहले वर्ष में कार्यारम्भ करेगा। दिल्ली-पंजाब-राजस्थान-उत्तरप्रदेश-क्षेत्र में भी एक न्यैष्टिक बिजलीघर बनाने के लिए अनुकूल स्थान की खोज के काम को हाल मे स्वीकृति दी गई है ।

51. बिजली-योजनाओं से मिलनेवाले लाभ का क्रम तय करना मुख्यत: विदेशी मुद्रा की प्राप्ति और तीसरी योजना के कार्यक्रमों को अमल में लाने की राज्य-बिजली-मंडलों की क्षमता पर निर्भर है। ये बिजली-मंडल ही सरकारी क्षेत्र में बिजली-परियोजनाओं को अमल मे लाने के लिए ज़िम्मेदार है । इसके लिए परियोजना-सम्बन्धी रिपोर्टें तैयार करने; नापजोख एवं टेंडर-सम्बन्धी कार्रवाई करने; प्राप्त होने पर टेंडरों की जांच करने और आर्डर देने; सामान पहुंचाने और संयन्त्र लगाने, उनका परीक्षण करने तथा काम चालू करने तक के विस्तृत कार्यक्रम तैयार किए जाने चाहिए एवं कार्यक्रम के मार्ग की सम्भावित बाधाओ का अनुमान करके उनके निराकरण के उपाय किए जाने चाहिए। योजनाओं की प्रगति पर कड़ी नजर रखे बिना तथा बिजलीघरों, आदि के निर्माण की अवधि कम करने के लिए हर सम्भव प्रयत्न किए बिना विभिन्न क्षेत्रों में बिजली की कमी को दूर नही किया जा सकता।

52. यद्यपि वर्तमान अवस्था में अनेक अनिश्चितताए है, तथापि नीचे की तालिका में तीसरी योजना में मिलनेवाले लाभों का सम्भावित सोपानीकरण दिखाया गया है .

तालिका-संख्या 7

लाभों का सोपानीकरण

वर्ष	वर्ष के दौरान वृद्धि (लाख किलोवाट)	वर्ष के अन्त में कुल स्थापित उत्पादन-क्षमता (लाख किलोवाट)
1961-62	6	63
1962-63	7 3	70.3
1963-64	10.5	80.8
1964-65	20.7	101.5
1965-66	25.4	126.9

यह समझ लिया जाना चाहिए कि विकास के उपर्युक्त विशाल कार्यक्रम के बावजूद मांग में वृद्धि के कारण कुछ क्षेत्रों में बिजली की कमी बनी रहेगी, विशेषरूप से तीसरी योजना के प्रारम्भिक वर्षों में। बिजली का विकास एक निरन्तर प्रक्रिया रहनी चाहिए और ऐसी अनेक परियोजनाओं पर काम आरम्भ कर देना चाहिए, जिनका लाभ आनेवाली योजनाओं के दौरान ही मिल सकेगा। इसी दृष्टि से व्यास, पुनासा, इदिक्की आदि परियोजनाएं भी तीसरी योजना में शामिल की गई हैं।

53. तीसरी योजना में संचरण-पथों का और भी विस्तार किया जाएगा। इसका विवरण नीचे की तालिका में दिया गया है :

तालिका-संख्या 8

संचरण-पथ

वर्ष के अन्त में	संचरण-पथ 11 किलोवाट और अधिक	
	सर्किट मील	सर्किट किलोमीटर
1955	36,500	58,400
1960-61	84,000	1,34,400
1965-66	1,50,000	2,40,000

वित्तीय व्यय

54. तीसरी योजना में सरकारी क्षेत्र में बिजली-कार्यक्रम के लिए कुल व्यय-राशि 1,039 करोड़* रु० रखी गई है। निजी क्षेत्र में 50 करोड़ रु० के पूंजी-विनियोग की आशा है। सरकारी क्षेत्र में खर्च की जानेवाली राशि में से 661 करोड़ रु० पन-बिजली और तापीय बिजली-कार्यक्रमों के लिए, 51 करोड़ रु० परमाणविक बिजली के लिए और 327 करोड़ रु० संचरण एवं वितरण-योजनाओं (जिसमें गांवों में बिजली पहुंचाने पर होनेवाला 105 करोड़ रु० का खर्च भी शामिल है) के लिए रखे गए हैं। इस कार्यक्रम में बोकारो के इस्पात-कारखाने में बिजली पहुंचाने की भी व्यवस्था है तथा नइवेली के बिजलीघर में 150 मेगावाट के विस्तार का खर्च भी शामिल है। यूरेनियम निकालने, निर्माण और प्लुटोनियम निकालने के संयन्त्रों पर होनेवाला 24 करोड़ रु० का खर्च, जो प्रारम्भिक रूपरेखा में 'बिजली' शीर्षक के अन्तर्गत दिखाया गया था, अब 'उद्योग और खनिज पदार्थ' शीर्षक के अन्तर्गत कर दिया गया है।

55. तीसरी योजना के बिजली-कार्यक्रम के लिए 320 करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता होगी। दूसरी योजना के अनुभव से ज्ञात होता है कि बिजली-सम्बन्धी साज़-सामान के लिए आयात पर निर्भर रहने के कारण बिजली के तीव्र विकास में बाधा पहुंचती है। तीसरी योजना में भी मशीनें और अन्य उपकरण काफी बड़ी तादाद में विदेशों से मंगाने पड़ेंगे। भोपाल में बिजली की भारी मशीनें तथा उपकरण तैयार करने के कारखाने

***इसमें दामोदर-घाटी-निगम के बिजली-कार्यक्रम और बंडील-तापीय बिजलीघर का पूरा खर्च भी शामिल है।**

को पूरा करने तथा उसके विस्तार के अलावा तीसरी योजना में दो और बड़े कारखानों की व्यवस्था सरकारी क्षेत्र में की गई है, जिनमें बायलर, भापीय और जलीय टरबाइन तथा बिजली के अन्य बड़े उपकरण तैयार किए जाएंगे। गैर-सरकारी क्षेत्र के कारखाने ट्रांसफार्मर, मोटर, स्विचगियर आदि बनाने की क्षमता बढ़ाएंगे। इस प्रकार, बिजली-परियोजनाओं के लिए साज़-सामान का काफी बड़ा हिस्सा देश में होनेवाले उत्पादन से ही प्राप्त हो जाएगा।

56. स्थापित-क्षमता और बिजली-उत्पादन में विकास नीचे की तालिकाओं तथा अगले पृष्ठ की तालिका सं० 11 में दिखाया गया है :

तालिका-संख्या 9

स्थापित क्षमता का विकास

(लाख किलोवाट)

	1950	1955	1960-61 (अनुमान)	1965-66 (अनुमान)
राज्याधिकृत सार्वजनिक प्रतिष्ठान	6.3	15.2	33.2	98.2
कम्पनी-अधिकृत सार्वजनिक प्रतिष्ठान	10.8	11.8	13.6	14.5
खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठान	5.9	7.2	10.2	14.2
योग	23	34.2	57	126.9

तालिका-संख्या 10

संयन्त्र की किस्म के अनुसार स्थापित-क्षमता

(लाख किलोवाट)

	1950	1955	1960-61 (अनुमान)	1965-66 (अनुमान)
पन-बिजली-चालित संयन्त्र	5.6	9.4	19.3	51
भाप-चालित संयन्त्र	15.9	22.7	34.6	70.8
तेल-चालित संयन्त्र	1.5	2.1	3.1	3.6
न्यैष्टिक संयन्त्र	—	—	—	1.5
योग	23	34.2	57	126.9

तालिका-संख्या 11

उत्पादित बिजली का विकास

(करोड़ किलोवाट-घंटे)

	1950	1955	1960-61 (अनुमान)	1965-66 (अनुमान)
राज्याधिकृत सार्वजनिक प्रतिष्ठान	210.4	457.3	1,125	3,450
कम्पनी-अधिकृत सार्वजनिक प्रतिष्ठान	300.3	401.9	575	650
खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठान	146.8	218.5	285	400
योग	657.5	1,077.7	1,985	4,500

उपभोग का स्वरूप

57. अनुबन्ध 10 में उपभोक्ताओं के विभिन्न वर्गों-द्वारा उपभोग के स्वरूप (सन् 1951-61 में) का विवरण दिया गया है। इस अवधि में होनेवाले परिवर्तन का क्षेत्र और सन् 1965-66 में अनुमानित उपभोग का विवरण नीचे की तालिका में दिया गया है :

तालिका-संख्या 12

उपभोग का स्वरूप

वर्ग	सन् 1965-66 में अनुमानित उपभोग (करोड़ किलोवाट-घंटे)	कुल उत्पादन का प्रतिशत	
		1965-66	1951-61 की अवधि में परिवर्तन
घरेलू या रिहायशी प्रकाश एवं अल्प शक्ति	340	7.6	7.5 से 8
व्यावसायिक प्रकाश एवं अल्प शक्ति	190	4.2	4.2 से 4.8
औद्योगिक शक्ति	2,840	63.1	61.3 से 62.9
परिवहन	180	4	2.3 से 4.4
सार्वजनिक प्रकाश	40	0.9	0.9 से 1
सिंचाई	190	4.2	2.4 से 4.2
सार्वजनिक जल-व्यवस्था एवं मल-पम्पिंग-व्यवस्था	90	2	2.3 से 2.8
संचरण की हानियां, सहायक कामों में उपभोग आदि	630	14	14.4 से 16.3
योग	4,500	100	

सन् 1951-61 के बीच की दस वर्षों की अवधि में परिवहन और पम्पों-द्वारा सिंचाई के अतिरिक्त और किसी वर्ग के उपभोग में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। परिवहन में बिजली

के उपयोग का विकास बिजली-उत्पादन के विकास के बराबर नही हुआ है, इस कारण इस वर्ग का उपभोग उत्पादन के 4.4 प्रतिशत (सन् 1951 में) से गिर कर सन् 1960-61 में 2.3 प्रतिशत रह गया। पम्पों-द्वारा सिंचाई में उपभोग 2.7 प्रतिशत से बढ़ कर 4.2 प्रतिशत तक पहुंच गया। यह उल्लेखनीय है कि कुल उपभोग ढाई-गुना बढ़ा, परन्तु पम्पों-द्वारा सिंचाई के लिए बिजली का उपभोग सन् 1951 के मुकाबले चार-गुना से अधिक बढ़ गया तथा यह प्रगति और तेज होने की आशा है। पहली और दूसरी योजनाओं में विभिन्न वर्गों में बिजली के उपभोग का विकास अनुबन्ध 11 में विस्तार से दिया गया है। उद्योगों में कुल उत्पादित बिजली का 61 से 63 प्रतिशत तक खप जाता है, अथवा यों कहिए कि उपभोक्ताओं को बेची जानेवाली शक्ति का 72 प्रतिशत भाग उद्योग लेते हैं। इससे ज़ाहिर है कि औद्योगिक और बिजली-कार्यक्रमों में समन्वय की कितनी आवश्यकता है। तीसरी योजना में भारी और बुनियादी उद्योगों पर निरन्तर बल देने के साथ ही बिजली-उत्पादन पर भी बराबर वृद्धि के लिए ज़ोर दिया जा रहा है।

गांव का बिजलीकरण

58. तीसरी योजना का एक मुख्य लक्ष्य छोटे कस्बों और गावों में उपयोगी छोटे उद्योगों का विकास करना है, ताकि रोज़गार के अधिक अवसर उपलब्ध किए जा सकें, आमदनी और जीवन का स्तर ऊंचा उठे तथा गांवों की अर्थव्यवस्था अधिक सन्तुलित एवं बहुमुखी बने। इन उद्देश्यों की पूर्ति में एक बड़ी बाधा शक्ति की कमी है। जहां बिजली उपलब्ध है, वहां परम्परागत उद्योग चलाए जा सकते हैं और धीरे-धीरे सुधरे हुए तरीकों पर अन्य छोटे उद्योग शुरू किए जा सकते हैं, ताकि बढ़ती हुई ग्राम-अर्थव्यवस्था की नई आवश्यकताएं पूरी की जा सकें। अनेक राज्यों में पम्पों से सिंचाई में बिजली का काफी उपयोग होता है और इस क्षेत्र में अभी विस्तार की बहुत गुंजायश है। इससे स्पष्ट है कि ग्राम-अर्थव्यवस्था के विकास में गांवों में बिजली पहुंचाने का महत्व बढ़ता जा रहा है; इसका मूल्य तात्कालिक आर्थिक लाभ के रूप में ही नहीं लगाया जा सकता।

59. दूसरी योजना के अन्त तक देश में जिन गांवों और कस्बों में बिजली पहुंचा दी गई है, उनकी कुल संख्या का अनुमान 23,000 है; जब कि पहली योजना में यह संख्या 7,400 थी। तीसरी योजना में गांवों के बिजलीकरण के लिए 105 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। इसमें गांवों की लोड-आवश्यकता पूरी करने के लिए बिजली-उत्पादन का खर्च शामिल नहीं है, क्योंकि वह खर्च बिजली-उत्पादन के कुल खर्च का ही भाग है। तीसरी योजना के अन्त तक जिन गांवों और कस्बों में बिजली पहुंच जाएगी, उनकी संख्या में 20,000 की वृद्धि हो जाएगी यानी कुल संख्या 43,000 हो जाएगी। हर राज्य में ग्राम-बिजलीकरण-कार्यक्रमों की गुंजायश का हिसाब लगाते समय उत्पादन-क्षमता में वृद्धि तथा संचरण-विस्तार, वितरण और ग्राम-बिजलीकरण दोनों के सन्तुलन बनाए रखने की आवश्यकता को भी ध्यान में रखा गया है। चौथी और पांचवीं योजना में गांवों में बिजली पहुंचाने पर अधिक व्यय एवं तेज़ विकास की व्यवस्था करने का विचार है।

60. अगले पृष्ठ की तालिका में दिखाया गया है कि विभिन्न योजनाओं की अवधि में कितनी आबादी तक के गांवों और कस्बों में बिजली पहुंचाई जा चुकी है और तीसरी योजना के अन्त तक ऐसे गांवों की संख्या कितनी हो जाएगी।

तालिका-संख्या 13

बिजलीवाले गांव और कस्बे

आबादी-वर्ग	सन् 1951 की जनगणना के अनुसार कुल संख्या	मार्च 1951 तक बिजलीवाले गांव और कस्बे	मार्च 1956 तक बिजलीवाले गांव और कस्बे	मार्च 1961 तक बिजलीवाले गांव और कस्बे (अनुमानित)	मार्च 1966 तक बिजलीवाले गांव और कस्बे (अनुमानित)
1 लाख से अधिक	73	49	73	73	73
50 हज़ार से 1 लाख तक	111	88	111	111	111
20 हज़ार से 50 हज़ार तक	401	240	366	399	401
10 हज़ार से 20 हज़ार तक	856	260	350	756	856
5 हज़ार से 10 हज़ार तक	3,101	258	1,200	1,800	3,101
5 हज़ार से कम	5,56,565	2,792	5,300	19,861	38,458
योग	5,61,107	3,687	7,400	23,000	43,000

इससे स्पष्ट है कि तीसरी योजना के अन्त तक 5,000 से ऊपर आबादीवाले सभी गांवों और कस्बों में बिजली पहुंचा दिए जाने की सम्भावना है। 2 से 5 हज़ार के बीच की आबादी-वाले 50 प्रतिशत गांव, अर्थात्, 10 हजार गांव बिजली की सुविधा का लाभ उठाने लगेंगे।

61. ऐसे दूरस्थ और बिखरे हुए स्थान बहुत है, जहां कम खर्च में 10 से लेकर 100 किलोवाट शक्ति तक के पन-बिजली-संयन्त्र लगाए जा सकते है। 100 किलोवाट तक क्षमता के छोटे पन-बिजली-संयन्त्र भारत में ही बनाए जा रहे है। आगे चलकर इनमें डीज़ल आल्टर-नेटर सेटों के मुकाबले किफायत भी रहेगी और उन्हें प्राप्त करने या चलाने में विदेशी मुद्रा की भी कोई आवश्यकता नहीं रहेगी। क्षेत्रीय सर्वेक्षण शुरू करने एवं उनमें सहायता देने के लिए तथा ऐसे संयन्त्रों की स्थापना में मदद देने के लिए केन्द्रीय जल तथा बिजली-आयोग में एक इकाई खोल दी गई है। पहाड़ी क्षेत्रों के लिए बिजली-विकास का यह पहलू विशेष महत्त्व का है और इसके लिए उपयुक्त कार्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए।

62. गांवों में बिजली ले जाने में अपेक्षाकृत अधिक लागत मुख्यतः इसलिए आती है कि एक तो एक गांव से दूसरे गांव की दूरी बहुत होती है; दूसरे, बिजली की खपत की मात्रा बहुत कम होती है; और तीसरे, बिजली को--विशेष रूप से खेती में--खास मौसमों मे, खास अवसरों पर ही आवश्यकता रहती है; यह आवश्यकता सदा एक-सी नही रहती। इसका नतीजा यह होता है कि लोड कम होता है तथा प्राप्त उत्पादन-क्षमता का पूरा उपयोग नहीं किया जाता। लोड-तत्त्व को सुधारने के लिए यह ज़रूरी है कि बिजली का उपयोग करनेवाले आर्थिक दृष्टि से लाभकर कार्यों का समन्वित रूप से विकास किया जाए। इस लक्ष्य की सिद्धि हर क्षेत्र के लिए सावधानी से तैयार किए गए विकास-कार्यक्रमों के द्वारा ही हो सकती है। इनमें विकास के विभिन्न क्षेत्रों की कार्रवाइयां शामिल हैं--जैसे, छोटे सिंचाई-कार्य; औज़ारों, आदि के लिए ऋण और मरम्मत आदि की सुविधा; सुधरे हुए बीज और अच्छी खाद; लघु उद्योग और ग्रामोद्योग, आदि--ताकि गांव में बिजली लगाने से कृषि और उद्योगों का उत्पादन बढ़ाने में यथासम्भव अधिक सहायता मिल सके। काम शुरू करने से 2-3 वर्ष पहले से ही गांवों में बिजली लगाने की योजना तैयार हो जानी चाहिए, ताकि उसी समय से दूसरे क्षेत्रों में भी काम शुरू हो सके।

63. ज़िला-विकास-योजना के अंग-रूप में बिजली के उपयोग से सम्बद्ध सुनिश्चित योजनाएं सुचारू रूप से तैयार करने के लिए राज्यीय बिजली-मंडलों को चाहिए कि वे सम्बद्ध ज़िला-संस्थाओं को पहले से ही इस बात का संकेत दे दें कि उनके अनुमान से तीसरी योजना के अन्तर्गत राज्य के गांवों और कस्बों के लिए प्रतिवर्ष कितनी बिजली दी जा सकेगी। राज्यों को सुझाव दिया गया है कि जिन ज़िलों में बिजली की सुविधाएं हैं या होने वाली हैं, उनमें ग्राम-विकास-कार्यक्रमों के बारे में सलाह देने के लिए छोटी-छोटी समितियां बना दी जाएं। ये कार्यक्रम थोड़े बिस्तार से तैयार किए जाने चाहिएं और सीमित क्षेत्रों के अनुसार उनके आवश्यक क्रम निश्चित कर दिए जाने चाहिएं--जैसे, एक कस्बे और उसके आस-पास के इलाकों या कुछ ऐसे गांवों को एक क्षेत्र में रखा जा सकता है, जिनके लिए बिजली का एक ही स्रोत है और सुव्यवस्थित आर्थिक कार्यक्रम के आधार पर जिनका विकास किया जा सकता है। इन ज़िला-योजनाओं को राज्यों की योजनाओं के अंग-रूप में ही अमल में लाया जाना चाहिए, ताकि गांवों को बिजली देने के कार्यक्रम का विकास अतिरिक्त बिजली-उत्पादन-क्षमता के कार्यक्रम के साथ-साथ बढ़ सके।

64. ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग आरम्भ करने के प्रश्न पर, जिसके बारे में इसी रिपोर्ट में अन्यत्र चर्चा की गई है, विचार करते समय यह मान लिया जाता है कि वहां शक्ति उपलब्ध हो जाएगी। ग्रामोद्योगों और छोटे उद्योगों के विकास की योजनाओं तथा बिजली के उत्पादन और वितरण के कार्यक्रमों में घनिष्ठ सम्बन्ध होना चाहिए। सिंचाई की छोटी योजनाओं में भी इसी प्रकार के समन्वय की आवश्यकता है, क्योंकि इनमें भी पम्प चलाने के लिए बिजली की ज़रूरत पड़ती है।

65. गांवों के बिजलीकरण के अन्य कई पहलुओं पर—जैसे, ग्रामीण लोड के लिए शक्ति की आपूर्ति, आपूर्ति की दर, बिजली-वितरण में पंचायत-समितियों और ग्राम-पंचायतों की भूमिका, आदि—आगे विचार किया जा रहा है।

शक्ति के समन्वित विकास की समस्याएं

66. बिजली (आपूर्ति) अधिनियम 1948 के अनुसार बिजली-सम्बन्धी एक ठोस, पूर्ण और एकरूप राष्ट्रीय नीति की आवश्यकता है। इसके ज़रिए राष्ट्रीय शक्ति-साधनों के नियन्त्रण और उपयोग के सम्बन्ध में आयोजक संस्थाओं के कार्य में समन्वय किया जाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि राज्यों की सीमाओं का ध्यान रखे बिना सारे प्रदेश के लाभ के लिए प्राकृतिक साधनों का सबसे अधिक किफायती तरीकों से उपयोग किया जाए। भाप-चालित बिजलीघर कोयला-खानों, कोयला धोने के कारखानों और तेल-शोधनालयों के पास ही बनाए जाने चाहिए। नदियों की घाटियों में पन-बिजलीघर स्थापित करते समय भी सबसे अधिक किफायतवाला स्थान ही प्राथमिकता के अनुसार चुना जाना चाहिए। न्यूष्टिक बिजलीघरों की भी स्थापना उन्हीं क्षेत्रों में ही होनी चाहिए, जहां शक्ति के अन्य साधन या तो बहुत अधिक खर्चीले हैं अथवा बहुत कम हैं। सभी बिजलीघरों को राज्यीय, प्रादेशिक या बड़े ग्रिडों के रूप में परस्पर-सम्बद्ध किया जाना चाहिए, जिससे सारी बिजली इकट्ठी करके उस प्रदेश के सर्वाधिक लाभ के काम में लाई जा सके। बिजलीघरों और बिजली-व्यवस्था के परस्पर-सम्बद्ध संचालन से बिजली-आपूर्ति-संस्थाओं के काम में कुशलता आएगी, क्योंकि 'लोड' तत्त्व बढ़ जाएगा, आवश्यकता के लिए वैकल्पिक मशीनें तैयार रखने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी तथा उपलब्ध संयन्त्र का कुशलता से संचालन हो सकेगा।

67. भाखड़ा-नंगल, मचकुंड, तुंगभद्रा, चम्बल और अन्य परियोजनाओं के काम में अतीत में अन्तःराज्यीय सहयोग रहा है। इस प्रकार के सहयोग को और बढ़ाना चाहिए, जिससे बिजली का उत्पादन किसी एक राज्य की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए न होकर प्रादेशिक या क्षेत्रीय आधार पर हो। इससे एक लाभ यह भी होगा कि पड़ोसी राज्यों में बिजली की दरों में किसी तरह की असमानता नहीं रहेगी। क्षेत्रीय आधार पर काम न होने से सम्भव है कि किसी राज्य में शक्ति के विशाल साधन होते हुए भी उनका उपयोग न हो सके, चाहे इसका कारण उस परियोजना के लिए सारा खर्च बर्दाश्त करने में राज्य-सरकार की असमर्थता हो अथवा उस राज्य में बिजली की मांग की इतनी कमी हो कि तत्काल विकास-कार्यक्रम शुरू करना ज़रूरी न समझा जाए। एक से अधिक राज्यों को लाभ पहुंचाने वाले बिजलीघरों के आयोजन और निर्माण-सम्बन्धी समस्याओं पर भी विचार किया जा रहा है।

68. केन्द्रीय जल और बिजली-आयोग आन्ध्रप्रदेश, मैसूर, मद्रास और केरल-राज्यों के बिजलीघरों को जोड़ कर दक्षिण क्षेत्र के लिए एक बड़ा ग्रिड बनाने के सम्बन्ध में जांच-

पड़ताल कर रहा है। इस बीच राज्यों में बिजली के आदान-प्रदान की सुविधाओं के लिए 220 किलोवाट की अन्तःराज्यीय सम्पर्क-लाइने बनाने का काम शुरू किया जा रहा है। तीसरी योजना में महाराष्ट्र और गुजरात की बिजली-व्यवस्था का तथा राजस्थान के चम्बल ग्रिड और मध्यप्रदेश की सतपुड़ा-बिजली-व्यवस्था का परस्पर सम्बन्ध जोड़ने का कार्यक्रम पूरा किया जाएगा। निम्नलिखित अन्तःराज्यीय सम्पर्क जोड़ने पर भी विचार किया जा सकता है : उत्तरप्रदेश की रिहन्द-बिजली-व्यवस्था का मध्यप्रदेश की अमरकटक-कोरबा-व्यवस्था से; फिर, अमरकंटक-कोरबा-व्यवस्था का उड़ीसा की हीराकुड-व्यवस्था से; उत्तर-प्रदेश के गंगा ग्रिड का दिल्ली-पंजाब-व्यवस्था से; और मैसूर की शरावती-व्यवस्था का महाराष्ट्र की कोयना-व्यवस्था से। केन्द्रीय जल और बिजली-आयोग में एक विशेष इकाई स्थापित कर दी गई है, जो राज्यीय बिजली-मंडलों और अन्य बिजली-आपूर्ति-सस्थाओं के सहयोग से बड़े क्षेत्रीय ग्रिड बनाने के सम्बन्ध में जाच-पड़ताल का काम करेगी।

वित्तीय पहलू

69. बिजली (आपूर्ति) अधिनियम 1948 के अनुसार सभी राज्यों मे स्वायत्त बिजली-मडलों की स्थापना हो चुकी है। इन मंडलों का काम सबसे अधिक कुशलता और किफायती तरीकों से अपने-अपने राज्य में बिजली के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण के कार्य का समन्वित विकास करना तथा विशेष रूप से उन क्षेत्रों में विकास पर अधिक ध्यान देना है, जिनकी सुविधा के लिए फिलहाल कोई लाइसेंसशुदा कम्पनी, आदि काम नही कर रही है।

70. यह जरूरी है कि सरकारी क्षेत्र की बिजली-कम्पनियां खर्च से अधिक कमाएं और भावी विकास के लिए पूंजी प्रदान करे। बिजली-विकास का ढंग ही कुछ ऐसा बन गया है कि उसमें ज्यादा पूंजी लगानी पड़ती है और उसकी मांग भी तेजी से बढ़ रही है। इसलिए सरकारी क्षेत्रों में विनियोग के लिए काफी पूजी तैयार रखने की आवश्यकता है।

71. दूसरे वित्त-आयोग ने बिजली-कम्पनियों के काम के ढंग के असन्तोषजनक वित्तीय परिणामों का जिक्र किया था और इस बात पर जोर दिया था कि राज्य-सरकारें ऐसे प्रबन्ध करने के लिए उचित कदम उठाए कि बिजली-मंडल राज्य के बकाया ऋणों के ब्याज का बोझ उतारते रह सकें। हाल ही मे विभिन्न बिजली-मंडलों की वित्तीय स्थिति की जांच से पता चला है कि उसमें कोई सुधार नही हुआ है। राज्यीय बिजली-मंडलों की वित्तीय स्थिति में सुधार के लिए ये मुख्य कदम उठाने पड़ेंगे :

(1) शक्ति-उत्पादन की सबसे कम खर्चवाली परियोजनाओं का चुनाव हो;

(2) निर्माण के खर्च में अधिक-से-अधिक बचत की जाए;

(3) परियोजनाओं के सोपान इस तरह निश्चित किए जाएं, कि लाभ की उपलब्धता और उसके उपयोग के बीच की दूरी कम हो जाए;

(4) वर्तमान उत्पादन-क्षमता का अधिकतम उपयोग किया जाए— इसके लिए 'लोड' इस प्रकार बढ़ाया जाए कि संयन्त्र और 'लोड' तत्त्व, दोनों में सुधार हो;

(5) विभिन्न उपायों-द्वारा बिजलीघरों का अधिकतम कुशलता के साथ परिचालन किया जाए— जैसे ईधन की बचत की जाए, नुक्सान कम किए जाएं, आदि;

(6) पड़ोसी राज्यों के ग्रिडों के साथ मिल-जुल कर कार्य-संचालन हो; तथा

(7) बिजलीघरों और शुल्क-दरों का फिर से समायोजन किया जाए।

राज्यों को सुझाव दिया गया है कि इन पहलुओं पर विशेष रूप से विचार किया जाए तथा आमदनी बढ़ाने के लिए उचित कदम उठाए जाएं।

72. **पन-बिजली-परियोजनाओं की जांच-पड़ताल :** पन-बिजली-परियोजनाओं के लिए विस्तृत जांच-पड़ताल की आवश्यकता होती है। ऐसी परियोजनाएं कम हैं, जिनकी जांच-पड़ताल पूरी तरह कर ली गई हो; अतः बिजली के इस सस्ते स्रोत के विकास में बाधाएं आती हैं। कई राज्यों में अलग-अलग जांच-इकाइयां बना दी गई हैं। परन्तु अब भी बहुत काम करना बाकी है। इन इकाइयों को मज़बूत करना होगा, ताकि तीसरी योजना में इस पहलू पर अधिक ध्यान दिया जा सके। 1 करोड़ 20 लाख किलोवाट की क्षमता वाली 64 पन-बिजली-परियोजनाओं के सम्बन्ध में जांच-पड़ताल का कार्यक्रम तैयार किया गया है और इस पर विशेष ध्यान देना ज़रूरी है। इन कार्यक्रमों की जांच-पड़ताल के काम पर 13 करोड़ रु० के खर्च का अनुमान है, जिसमें 1.13 करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा भी शामिल है। इस कार्यक्रम में विदेशी मुद्रा की आवश्यकता पूरी करने के लिए सहायता प्राप्त हो चुकी है।

73. **'लोड'-सर्वेक्षण :** राज्यीय बिजली-मंडलों और केन्द्रीय जल तथा बिजली आयोग-द्वारा विभिन्न प्रदेशों में प्रत्याशित 'लोड' का व्यवस्थित सर्वेक्षण कराया जाना चाहिए तथा समय-समय पर उस पर विचार होते रहना चाहिए। भावी योजनाओं की अवधि में उत्पादन-क्षमता के सम्बन्ध में पहले ही आयोजन करने के लिए यह बहुत महत्त्व-पूर्ण है। योजना में इस बात की व्यवस्था कर दी गई है कि केन्द्रीय जल तथा बिजली-आयोग में 'लोड' सर्वेक्षण-निदेशालय अपना काम जारी रख सकें।

74. **अनुसन्धान :** बिजली, उत्पादन, संचरण और वितरण की समस्याओं पर बंगलोर की बिजली-अनुसन्धान-संस्था में अन्वेषण किया जाएगा। संस्था में जिन समस्याओं पर जांच-पड़ताल का काम किया जाएगा, उनमें ये भी शामिल हैं : संचरण-पथ पर बिजली चमकने का प्रभाव, देश में इन्सुलेटिंग-सामग्री का निर्माण, छोटी और सरल मशीनों का विकास और निर्माण, उपकरण और अन्य औज़ार, केबल-सम्बन्धी विशेषताएं, बिजली-व्यवस्था-सम्बन्धी अन्य अध्ययन, आदि। भोपाल में एक स्विचगियर-परीक्षण-केन्द्र भी खोला जा रहा है, जिसमें स्विचगियर के डिज़ाइनों का परीक्षण और विकास किया जाएगा।

75. **डिज़ाइन और निर्माण :** बड़े-बड़े पन-बिजलीघरों और तापीय बिजलीघरों का आयोजन करने, उनके डिज़ाइन तैयार करने और उनके निर्माण के लिए एक विशेषज्ञ-संगठन की स्थापना की ज़रूरत महसूस की जाती रही है। फ़िलहाल ये काम विदेशी संस्थाओं से कराए जा रहे हैं। इस नए संगठन में बारीक तकनीकी कार्य के लिए कर्मचारी ही प्रशिक्षित नहीं किए जाएंगे, बल्कि विदेशी मुद्रा की भी बचत होगी। केन्द्रीय जल और बिजली-आयोग में इस उद्देश्य से एक इकाई की स्थापना की जा रही है।

76. **अन्य पहलू :** बिजली-कार्यक्रम के कुछ और भी पहलू हैं, जिन पर तीसरी योजना में बराबर ध्यान दिए जाने की ज़रूरत है। दूसरी योजना में बंगलोर और गंगवाल में 'गर्म लाइन' कर्मचारी-प्रशिक्षण-केन्द्र खोले गए थे। इन केन्द्रों में बिजली का काम करने-वाले मिस्त्री प्रशिक्षित किए जाते हैं, जो अधिक दबाववाली बिजली के सजीव संचरण-

पथ पर काम कर सकें। बिना बिजली बन्द किए इन्सुलेटरों की सफ़ाई, टूटे इन्सुलेटरों की अदला-बदली, कंडक्टरों को जोड़ना और सहायक पुर्ज़े लगाने का काम होना चाहिए, जिससे उपभोक्ताओं को बराबर बिजली मिलती रहे। इस प्रकार के प्रशिक्षण और 'गर्म लाइन के साज़-सामान तथा औज़ारों की सहायता से बिजली के खम्भों पर काम करने का यह तरीका देश-भर में प्रायः सभी बिजली-व्यवस्था-केन्द्रों में लागू कर दिया गया है।

77. तीसरी योजना में उपकरणों के मानकीकरण के प्रश्न पर भी विशेष विचार किए जाने की ज़रूरत है। इस प्रकार के मानकीकरण से परियोजनाओं का काम तेज़ी से होगा निर्माण क खर्च में किफ़ायत होगी और रख-रखाव का भी खर्च कम होगा। केन्द्रीय जल और बिजली-आयोग ने गावों में विस्तार के लिए एक निर्माण-नियम-पुस्तिका तैयार की है। तापीय बिजलीघरों, प्रसारण-लाइन-व्यवस्था और उप-बिजलीघरों के सम्बन्ध में भी ऐसी ही कार्रवाई करने का इरादा है।

अनुबन्ध 1

बड़ी और मध्यम सिंचाई-परियोजनाओं के प्रत्याशित लाभ

(पैराग्राफ 8 और 11 में उल्लिखित)

कुल क्षेत्र (हज़ार एकड़)

राज्य	पहली और दूसरी योजना के कार्यक्रमों से पूर्ण विकास के बाद सिंचाई	पहली और दूसरी योजनाओं के कार्यक्रम: दूसरी योजना के अन्त तक उत्पादन-क्षमता	पहली और दूसरी योजनाओं के कार्यक्रम: दूसरी योजना के अन्त तक उपयोग	पहली और दूसरी योजनाओं के कार्यक्रम: तीसरी योजना के अन्त तक क्षमता	पहली और दूसरी योजनाओं के कार्यक्रम: तीसरी योजना के अन्त तक उपयोग	तीसरी योजना के नए कार्यक्रम: तीसरी योजना के अन्त तक क्षमता	तीसरी योजना के नए कार्यक्रम: तीसरी योजना के अन्त तक उपयोग	तीसरी योजना के अन्त तक चालू और नई योजनाओं से कुल लाभ: क्षमता (स्तम्भ 5+7)	तीसरी योजना के अन्त तक चालू और नई योजनाओं से कुल लाभ: उपयोग (स्तम्भ 6+8)	तीसरी योजना में अतिरिक्त लाभ: क्षमता (स्तम्भ 9–3)	तीसरी योजना में अतिरिक्त लाभ: उपयोग (स्तम्भ 10–4)
1. आन्ध्रप्रदेश	3,720	830	736	3,361	2,159	134	134	3,495	2,293	2,665	1,557
2. असम	—	—	—	—	—	88	79	88	79	88	79
3. बिहार	5,569	915	720	3,192	2,402	482	318	3,674	2,720	2,759	2,000
4. गुजरात	3,809	640	227	1,716	1,091	—	—	1,716	1,091	1,076	864
5. जम्मू-कश्मीर	163	5	5	55	32	11	11	66	43	61	38
6. केरल	555	358	358	527	527	86	86	613	613	255	255
7. मध्यप्रदेश	2,242	95	75	1,365	905	40	20	1,405	925	1,310	850
8. मद्रास	890	611	581	791	789	33	33	824	822	213	241
9. महाराष्ट्र	1,248	233	105	999	713	353	100	1,352	813	1,119	708

10	मैसूर	1,480	707	324	1,348	1,173	52	27	1,400	1,200	693	876
11	उडीसा	2,615	1,000	720	2,287	1,666	—	—	2,287	1,666	1,287	946
12	पजाब	4,351	3,307	2,957	4,157	4,058	200	200	4,357	4,258	1,050	1,301
13	राजस्थान	3,666	734	618	2 357	1,754	25	9	2,382	1,763	1,648	1,145
14	उत्तरप्रदेश	4,262	2,118	1,179	2,800	2,423	912	98	3,712	2,521	1,594	1,042
15	पश्चिम-बगाल	2,990	1,690	1,084	2,071	1,936	32	32	2,103	1,968	413	884
	योग	37,560	13,243	9,989	27,026	21,628	2,448	1,147	29,474	22,775	16,271	12,786

टिप्पणी : पहलो और दूसरी योजना के चालू कार्यक्रमों का अतिरिक्त उपयोग (स्तम्भ 6–स्तम्भ 4) =1,16,39,000 एकड़

अनुबन्ध 2

बड़ी और मध्यम परियोजनाओं की अनुमित लागत और तीसरी योजना में उनके लिए निश्चित व्यय-राशि

(पैराग्राफ़ 12 में उल्लिखित)

(लाख रु०)

राज्य	पहली और दूसरी योजनाओं के कार्यक्रमों की अनुमानित लागत	पहली और दूसरी योजना के चालू कार्यक्रम, जो तीसरी योजना में भी चलेंगे			तीसरी योजना के नए कार्यक्रम		चालू और नए कार्यक्रमों के लिए तीसरी योजना में कुल व्यवस्था (स्तम्भ 5+7)
		अनुमानित लागत	दूसरी योजना का शेष	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	अनुमित लागत	तीसरी योजना में व्यय-राशि	
1. आन्ध्रप्रदेश	16,536	13,941	6,745	6,548	1,842	832	7,380
2. असम	170	—	—	—	277	228	228
3. बिहार	10,743	9,094	7,118	4,712	3,144	1,445	6,157
4. गुजरात	17,411	17,267	12,098	5,014	110	110	5,124
5. जम्मू-कश्मीर	1,529	1,285	1,141	556	130	44	600
6. केरल	2,635	2,262	378	378	2,150	764	1,142
7. मध्यप्रदेश	8,860	8,402	5,097	3,600	2,364	560	4,160
8. मद्रास	6,086	4,602	2,150	2,150	689	592	2,742
9. महाराष्ट्र	10,438	10,360	6,637	5,034	3,174	1,570	6,604
10. मैसूर	10,853	10,328	3,897	3,341	3,757	725	4,066
11. उड़ीसा	10,226*	10,184*	2,657	1,911	807	230	2,141
12. पंजाब	11,424	10,193	1,348	904	4,882	1,300	2,204

13. राजस्थान	14,074	13,987	8,069	5,770	6,450	2,740	8,510
14. उत्तरप्रदेश	8,966	6,938	4,109	2,422	4,024	2,749	5,171
15. पश्चिम-बंगाल	8,407	4,104	2,646	1,206	749	686	1,892
16. केन्द्रशासित प्रदेश	10	10	10	10	—	—	10
17. केन्द्रीय कार्यक्रम	—	—	—	—	1,803†	1,803†	1,803†
योग	1,38,368	1,26,957	64,100	43,556	36,352	16,378	59,934

*हीराकुड चरण 1 (बिजली-सम्बन्धी हिस्सा) का खर्च शामिल है ।

†बोकारो इस्पात-कारखाना तथा अन्य उद्योगों को पानी पहुंचाने पर होनेवाला 10 करोड़ रु० का खर्च शामिल है ।

अनुबन्ध 3

बाढ़-नियन्त्रण, जल-निकासी, जलप्लावन-निरोधक एवं समुद्री कटाव-निरोधक कार्यक्रमों पर होनेवाला अनुमानित खर्च और व्यय-व्यवस्था

(पैराग्राफ 12 में उल्लिखित)

(लाख रु०)

राज्य	पहली और दूसरी योजना के कार्यक्रम, जो तीसरी योजना में भी जारी रहेंगे			तीसरी योजना के नए कार्यक्रम		चालू और नए कार्यक्रमों के लिए तीसरी योजना में कुल व्यय-व्यवस्था (स्तम्भ 4+6)
	अनुमानित खर्च	दूसरी योजना का शेष	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	अनुमानित खर्च	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	
1. आन्ध्रप्रदेश	195	35	35	210	208	243
2. असम	436	115	115	507	385	500
3. बिहार	2,532	700	700	291	200	900
4. गुजरात	60	50	50	—	—	50
5. जम्मू-कश्मीर	1,060	855	855	45	45	900
6. केरल	302	71	71	431	350	421
7. मध्यप्रदेश	235	9	9	11	11	20
8. मद्रास	—	—	—	—	—	—
9. महाराष्ट्र	—	—	—	30	30	30
10. मैसूर	—	—	—	—	—	—
11. उड़ीसा	74	48	48	300	202	250

12. पंजाब	770	432	432	2,216	1,069	1,501
13. राजस्थान	110	90	90	—	—	90
14. उत्तरप्रदेश	568	56	56	602	519	575
15. पश्चिम-बंगाल	2,305	84	84	847	431	515
16. केन्द्रशासित प्रदेश	79	69	69	164	68	173
योग	8,726	2,614	2,614	5,654	3,518	6,132

अनुबन्ध 4

बहूद्देश्यीय और बड़ी सिंचाई-योजनाएं—पहली और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं से चालू और तीसरी योजना में भी जारी

(पैराग्राफ़ 16 में उल्लिखित)

कार्यक्रम का नाम और राज्य	कुल खर्च (केवल सिंचाई का हिस्सा) (लाख रु०)	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था (लाख रु०)	उपयोग (हज़ार एकड़) कुल क्षेत्र पूरा होने पर	दूसरी योजना के अन्त में	तीसरी योजना के अन्त में
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
1. बाग (महाराष्ट्र)	610	120	60	—	2
2. बनास (गुजरात)	827	605	110	—	59
3. बनास (राजस्थान)	776	150	200	—	—
4. बरना (मध्यप्रदेश)	552	200	173	—	—
5. भद्रा** (मैसूर)	3,193	1,310	245	32	182
6. भाखड़ा-नंगल** (पंजाब और राजस्थान)	10,189	419	3,604	2,550	3,604
7. चम्बल (चरण 1 और 2) (राजस्थान और मध्यप्रदेश)	5,485	1,703	1,400	60	800
8. दामोदर-घाटी** (पश्चिम-बंगाल)	3,468	116	1,273	610	1,023
9. गंडक** (बिहार और उत्तरप्रदेश)†	4,645	3,000	3,138	—	300
10. घाटप्रभा बायां तट नहर (चरण 1 और 2) (मैसूर)	1,863	572	298	53	180
11. गिरना (महाराष्ट्र)	865	519	143	—	116
12. हीराकुड** (चरण 1) महानदी-डेल्टा (उड़ीसा) सहित	9,334*	1,200	2,158	710	1,337

13. इतियादह (महाराष्ट्र)	692	200	75	—	1
14. कदम (आन्ध्रप्रदेश)	601	90	75	25	75
15. काकरापाड़ा-नहर (लोअर तापी) (गुजरात)	1,870	400	562	50	296
16. केकावती-परियोजना (पश्चिम-बंगाल)	2,526	807	950	—	250
17. के० सी० नहर (आन्ध्रप्रदेश)	659	100	346	230	346
18. खडकवासला (महाराष्ट्र)	1,055	596	43	—	43
19. कोसी (बिहार)	2,482	1,200	1,397	—	900
20. माही (चरण 1 और 2) (गुजरात और राजस्थान)	4,178	876	751	29	214
21. मलमपुझा (केरल)	532	31	109	95	109
22. माताटीला-बांध (उत्तरप्रदेश)	1,283	272	413	220	370
23. मयूराक्षी (पश्चिम-बंगाल)	2,015	210	720	462	580
24. मूला (महाराष्ट्र)	1,500	600	162	—	8
25. नागार्जुनसागर** (आन्ध्रप्रदेश)	9,112	5,000	2,060	—	900
26. नर्मदा (भड़ौंच, गुजरात)	4,309	1,200	963	—	—
27. परमबिकुलम-परियोजना** (मद्रास)	2,487	2,112	240	—	150
28. पूर्णा (महाराष्ट्र)	1,284	861	152	—	94
29. राजस्थान-नहर (राजस्थान)	6,647	3,800	1,684	—	284
30. रामगंगा-परियोजना** (उत्तरप्रदेश)	3,455	1,600	1,705	—	175
31. उझ-बांध या तावी-परियोजना (जम्मू-कश्मीर)	900	332	62	—	—

**बहूद्देश्यीय परियोजना

†उत्तरप्रदेश के लिए तीसरी योजना के अन्तर्गत यह एक नया कार्यक्रम है।

*हीराकुड चरण 1 बिजली का अनुमानित खर्च भी शामिल है।

अनुबन्ध 4—जारी

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
32. शारदा-सागर (चरण 2) (उत्तरप्रदेश)	636	169	185	40	105
33. शतरंजी (गुजरात)	674	373	86	—	26
34. सरहिन्द पूरक (पंजाब)	670	10	‡	‡	‡
35. सोन-परियोजना (बिहार)	2,069	1,200	307	50	150
36. तावा** (मध्यप्रदेश)	2,184	1,000	787	—	25
37. तुंगभद्रा** (आन्ध्रप्रदेश और मैसूर)	4,453	513	843	365	815
38. तुंगभद्रा ऊंची सतह नहर (चरण 1) (आन्ध्रप्रदेश और मैसूर)	1,300	1,040	187	—	168
39. उकाई-परियोजना (गुजरात)	2,897	700	392	—	—
40. वीर बांध (महाराष्ट्र)	541	278	66	—	61
41. पश्चिमी यमुना नहर का पुनर्निर्माण (पंजाब)	534	150	555	354	555

‡इस परियोजना से भाखड़ा-नहर और सरहिन्द-नहर के अन्तर्गत अधिक आपूर्ति हो सकेगी ।

**बहूद्देश्यीय परियोजना

अनुबन्ध 5

तीसरी योजना के नए बहूद्देश्यीय और बड़े सिंचाई-कार्यक्रम

(पैराग्राफ 6 में उल्लिखित)

कार्यक्रम का नाम	कुल खर्च (केवल सिंचाई का हिस्सा) (लाख रु०)	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था (लाख रु०)	उपयोग (हज़ार एकड़) कुल क्षेत्र: पूरा होने पर	उपयोग (हज़ार एकड़) कुल क्षेत्र: तीसरी योजना के अन्त में
1. व्यास **(पंजाब और राजस्थान)	11,743	3,700	2,630	—
2. भीमा उद्वहन सिंचाई-कार्यक्रम (महाराष्ट्र)	946	78	100	—
3. वीरगोविन्दपुर (उड़ीसा)	507	150	178	—
4. दामोदर-घाटी** (पश्चिम-बंगाल)	664	575	*	*
5. हरंगी और/अथवा ... ... कम्बदकाड़ा (मैसूर)	1,050 170	200	105	—
6. हासदेव** (मध्यप्रदेश)	1,600	150	300	—
7. कल्लडा (केरल)	840	150	107	—
8. कोसी-पश्चिमी नहर और पूर्वी नहरों का विस्तार (बिहार) ...	1,700	450	1,149	150
9. कोयना-सिंचाई-कार्यक्रम (महाराष्ट्र)	950	275	93	—
10. मालप्रभा (मैसूर)	2,000	300	500	—
11. सरजू-नहर (उत्तरप्रदेश)	1,078	200	418	—
12. वंशधारा और/अथवा पोचम्पद (आन्ध्रप्रदेश)	1,450 1,525	400	357 360	115

**बहूद्देश्यीय परियोजना

*विस्तार और सुधार-कार्य

टिप्पणी : अपर कृष्णा-परियोजना (मैसूर) को तीसरी योजना में शामिल करने का प्रश्न विचाराधीन है।

अनुबन्ध 6

स्थापित बिजली-उत्पादन-क्षमता और उत्पादन की पहली और दूसरी योजना में प्रगति

(पैराग्राफ़ 44 में उल्लिखित)

विवरण	1950*	1955*	1950 के मुकाबले वृद्धि (पहली योजना)	1960-61** (अनुमान)	1955 के मुकाबले वृद्धि (दूसरी योजना)
प्रतिष्ठान (सार्वजनिक और निजी)					
1. **पन-बिजली-संयन्त्र**					
(अ) स्थापित उत्पादन-क्षमता (मेगावाट में)	559.3	939.5	68	1,932	106
(आ) उत्पादित बिजली (10 लाख किलोवाट-घंटे में) ...	2,519.8	3,742.2	49	7,850	110
(इ) स्थापित उत्पादन-क्षमता के प्रति किलोवाट पर उत्पादित किलोवाट-घंटे	4,510	4,000	—	4,070	—
2. **भाप-संयन्त्र**					
(अ) स्थापित उत्पादन-क्षमता (मेगावाट में)	1,004.4	1,546.8	54	2,439	57.7
(आ) उत्पादित बिजली (10 लाख किलोवाट-घंटे में) ...	2,387.2	4,618.9	93.3	8,790	90.5
(इ) स्थापित उत्पादन-क्षमता के प्रति किलोवाट पर उत्पादित किलोवाट-घंटे	2,380	3,000	—	3,600	—
3. **तेल-संयन्त्र**					
(अ) स्थापित उत्पादन-क्षमता (मेगावाट में)	148.8	208.5	40.2	310.6	49
(आ) उत्पादित बिजली (10 लाख किलोवाट-घंटे में) ...	199.7	231.3	15.9	360	55.7
(इ) स्थापित उत्पादन-क्षमता के प्रति किलोवाट पर उत्पादित					

किलोवाट-घंटे	1,340	1,110	—	1,160	—
ख. अपनी बिजली स्वयं पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठान					
(अ) स्थापित उत्पादन-क्षमता (मेगावाट में)	587.8	723.5	23.1	1,015	40.3
(आ) उत्पादित बिजली (10 लाख किलोवाट-घंटे में) ...	1,467.8	2,184.8	49	2,850	30.5
(इ) स्थापित उत्पादन-क्षमता के प्रति किलोवाट पर उत्पादित किलोवाट-घंटे	2,500	3,040	—	2,810	—
योग (क+ख)					
(अ) स्थापित उत्पादन-क्षमता (मेगावाट में)	2,300.3	3,418.3	48.5	5,696.6	66.6
(आ) उत्पादित बिजली (10 लाख किलोवाट-घंटे में) ...	6,574.5	10,777.2	64	19,850	84.2
(इ) स्थापित उत्पादन-क्षमता के प्रति किलोवाट पर उत्पादित किलोवाट-घंटे	2,860	3,140	—	3,490	—

***कैलेंडर-वर्ष के अनुसार आंकड़े**

****अप्रैल 1960-31 मार्च, 1961 से सम्बद्ध आंकड़े**

टिप्पणी : स्थापित उत्पादन-क्षमता वर्ष के अन्त की स्थिति के अनुसार तथा बिजली-उत्पादन पूरे वर्ष के लिए दिखाया गया है।

अनुबन्ध 7

पहली और दूसरी योजना में चालू प्रमुख बिजलीघर

(पैराग्राफ 44 में उल्लिखित)

योजना का नाम	चालू स्थापित क्षमता (किलोवाट में)
पहली योजना में चालू किए गए संयन्त्र	
1. निज़ामसागर पनबिजली-योजना (आन्ध्रप्रदेश)	15,000
2. मचकुंड पनबिजली-परियोजना (आन्ध्रप्रदेश और उड़ीसा) ...	34,000
3. सिंदरी तापीय बिजलीघर (बिहार)	80,000
4. बोकारो तापीय बिजलीघर (दामोदर-घाटी-निगम)	1,72,500
5. उत्रन तापीय बिजलीघर (गुजरात)	22,500
6. अहमदाबाद बिजली-आपूर्ति-विस्तार (निजी क्षेत्र—गुजरात) ...	60,000
7. सेंगुलम बिजलीघर (केरल)	48,000
8. चांदनी तापीय बिजलीघर (मध्यप्रदेश)	17,000
9. इन्दौर तापीय बिजलीघर-विस्तार (मध्यप्रदेश)	13,000
10. मोयर बिजलीघर (मद्रास)	36,000
11. पायकारा बिजलीघर (मद्रास)	27,200
12. मद्रास-संयन्त्र-विस्तार (मद्रास)	30,000
13. खापरखेड़ा तापीय बिजलीघर (महाराष्ट्र)	30,000
14. चोल बिजलीघर (महाराष्ट्र)	78,000
15. बल्लारशाह तापीय बिजलीघर (महाराष्ट्र)	7,750
16. भीर पनबिजली-योजना (महाराष्ट्र)	22,000
17. जोग बिजलीघर (मैसूर)	72,000
18. नंगल बिजलीघर (पंजाब)	48,000
19. कानपुर तापीय बिजलीघर (उत्तरप्रदेश)	15,000
20. पथरी पनबिजली-योजना (उत्तरप्रदेश)	20,400
21. शारदा पनबिजली-योजना (उत्तरप्रदेश)	41,400
22. कलकत्ता बिजली-आपूर्ति-निगम-विस्तार (पश्चिम-बंगाल) ...	30,000
23. दिल्ली तापीय बिजलीघर (दिल्ली)	20,000
दूसरी योजना में चालू किए गए संयन्त्र	
1. मचकुंड पनबिजली-योजना (आन्ध्रप्रदेश और उड़ीसा)	81,000
2. तुंगभद्रा पनबिजली-योजना (आन्ध्रप्रदेश और मैसूर)	36,000
3. रामगुंडम तापीय बिजलीघर (आन्ध्रप्रदेश)	37,500
4. उमत्रु पनबिजली-परियोजना (असम)	8,400
5. मैथन पनबिजली-योजना (दा० घा० नि०)...	60,000
6. पंचेत पनबिजली-योजना (दा० घा० नि०)	40,000

7.	बोकारो तापीय बिजलीघर-विस्तार (दा० घा० नि०)	82,500
8.	दुर्गापुर तापीय बिजलीघर (दा० घा० नि०)	1,65,000
9.	अहमदाबाद तापीय बिजलीघर-विस्तार (निजी क्षेत्र, गुजरात) ..	15,000
10.	उत्रन तापीय बिजलीघर (गुजरात)	45,000
11.	पोरिंगलकुत्तु पनबिजली-परियोजना (केरल)	32,000
12.	नेरियामंगलम पनबिजली-परियोजना (केरल)	45,000
13.	कोरबा तापीय बिजलीघर (मध्यप्रदेश)	90,000
14.	गांधीसागर बांध-बिजलीघर (मध्यप्रदेश और राजस्थान) ...	69,000
15.	भिलाई इस्पात-कारखाना बिजलीघर (मध्यप्रदेश)	25,000
16.	मद्रास तापीय बिजलीघर-विस्तार (मद्रास)	30,000
17.	पेरियार पनबिजली-परियोजना (मद्रास)	1,05,000
18.	कुंडा पनबिजली-परियोजना (मद्रास)	1,45,000
19.	ट्राम्बे तापीय बिजलीघर (निजी क्षेत्र, महाराष्ट्र)	1,87,500
20.	अकोला (पारस) तापीय बिजलीघर (महाराष्ट्र)	30,000
21.	बल्लारशाह तापीय बिजलीघर (महाराष्ट्र)	15,500
22.	खापरखेड़ा तापीय बिजलीघर-विस्तार (महाराष्ट्र)	30,000
23.	तुंगभद्रा बायां तट बिजलीघर (मैसूर)	9,000
24.	हीराकुड पनबिजली-परियोजना (उड़ीसा)	1,23,000
25.	रूरकेला इस्पात-कारखाना-बिजलीघर (उड़ीसा)	75,000
26.	भाखड़ा-नंगल-परियोजना (पंजाब और राजस्थान)	2,07,000
27.	कानपुर तापीय बिजलीघर-विस्तार (उत्तरप्रदेश)	15,000
28.	पूर्वी क्षेत्र बिजलीघर (उत्तरप्रदेश)	45,000
29.	दुर्गापुर कोक-भट्ठी-कारखाना-बिजलीघर (पश्चिम-बंगाल) ...	60,000
30.	इंडियन आयरन एंड स्टील कम्पनी-बिजलीघर (बर्नपुर, पश्चिम-बंगाल)	20,000

अनुबन्ध 8

तीसरी योजना में शामिल मुख्य बिजली-उत्पादन-कार्यक्रम

(पैराग्राफ़ 48 में उल्लिखित)

कार्यक्रम का नाम	कुल स्थापित क्षमता (किलोवाट में)
चालू कार्यक्रम	
1. तुंगभद्रा पनबिजली-परियोजना चरण 2 (आन्ध्रप्रदेश और मैसूर) ...	36,000
2. नेल्लोर तापीय बिजलीघर (आन्ध्रप्रदेश)	30,000
3. अपर सिलेरू पनबिजली-परियोजना (आन्ध्रप्रदेश)	1,20,000
4. उमियम पनबिजली-परियोजना चरण 1 (असम)	36,000
5. बरौनी तापीय बिजलीघर (बिहार)	30,000
6. पथराटू तापीय बिजलीघर (बिहार)	1,00,000
7. चन्द्रपुरा तापीय बिजलीघर (दा० घा० नि०)	2,80,000
8. अहमदाबाद तापीय बिजलीघर-विस्तार (निजी क्षेत्र, गुजरात) ...	30,000
9. पन्नियार पनबिजली-परियोजना (केरल)	30,000
10. शोलायर पनबिजली-परियोजना (केरल)	54,000
11. गांधीसागर बांध-बिजलीघर, इकाई 4 (मध्यप्रदेश और राजस्थान) ...	23,000
12. अमरकंटक तापीय बिजलीघर (मध्यप्रदेश)	60,000
13. नइवेली लिग्नाइट-बिजलीघर (मद्रास)	2,50,000
14. कुंडा पनबिजली-परियोजना (मद्रास)	35,000
15. कोयना पनबिजली-परियोजना चरण 1 (महाराष्ट्र)	2,40,000
16. पूरना पनबिजली-परियोजना (महाराष्ट्र)	15,000
17. भद्रा पनबिजली-परियोजना (मैसूर)	33,200
18. तुंगभद्रा बायां तट बिजलीघर (मैसूर)	18,000
19. शरावती पनबिजली-परियोजना चरण 1 (मैसूर)	1,78,200
20. हीराकुड पनबिजली-परियोजना (उड़ीसा)	1,47,000
21. भाखड़ा परियोजना (पंजाब और राजस्थान)	1,64,000
22. राणा प्रतापसागर बांध-बिजलीघर (राजस्थान और मध्यप्रदेश) ...	1,28,000
23. रिहन्द पनबिजली-परियोजना (उत्तरप्रदेश)	2,50,000
24. कानपुर तापीय बिजलीघर-विस्तार (उत्तरप्रदेश)	15,000
25. माताटीला पनबिजली-परियोजना (उत्तरप्रदेश)	60,000
26. हरदुआगंज तापीय बिजलीघर (उत्तरप्रदेश)	30,000
27. यमुना पनबिजली-परियोजना (उत्तरप्रदेश)	3,20,000
28. रामगंगा पनबिजली-परियोजना (उत्तरप्रदेश)	1,27,500
29. जलढाका पनबिजली-परियोजना (पश्चिम-बंगाल)	18,000
30. दुर्गापुर कोक-भट्ठी-कारखाना-बिजलीघर-विस्तार (पश्चिम-बंगाल)	1,50,000
31. दिल्ली तापीय बिजलीघर-विस्तार (दिल्ली)	30,000

नए कार्यक्रम

1.	कोठागुडम तापीय बिजलीघर (आन्ध्रप्रदेश)	1,20,000
2.	रामगुंडम तापीय बिजलीघर-विस्तार (आन्ध्रप्रदेश)	60,000
3.	नागार्जुनसागर पनबिजली-परियोजना (आन्ध्रप्रदेश)	1,00,000
4.	श्रीशैलम पनबिजली-परियोजना (आन्ध्रप्रदेश)	3,30,000
5.	नहरकटिया तापीय बिजलीघर (असम)	67,200
6.	उमियम पनबिजली-परियोजना चरण 2 (असम)	65,000
7.	बरौनी तापीय बिजलीघर-विस्तार (बिहार)	75,000
8.	पथराटू तापीय बिजलीघर-विस्तार (बिहार)	2,50,000
9.	दामोदर-घाटी-निगम-क्षेत्र में तापीय विस्तार (दा० घा० नि०) ...	2,80,000
10.	गंडक पनबिजली-परियोजना (बिहार)	15,000
11.	कोसी पनबिजली-परियोजना (बिहार)	20,000
12.	अहमदाबाद तापीय बिजलीघर-विस्तार (निजी क्षेत्र, गुजरात) ...	30,000
13.	धुवरन (खम्भात) तापीय बिजलीघर (गुजरात)	2,00,000
14.	चेनानी पनबिजली-परियोजना (जम्मू-कश्मीर)	15,000
15.	झेलम पनबिजली-परियोजना (जम्मू-कश्मीर)	27,000
16.	सलाल पनबिजली-परियोजना (जम्मू-कश्मीर)	60,000
17.	शबरीगिरि (पम्बा) पनबिजली-परियोजना (केरल)	3,00,000
18.	इडिक्की पनबिजली-परियोजना (केरल)	3,90,000
19.	कुट्टियाडी पनबिजली-परियोजना (केरल)	45,000
20.	कोरबा तापीय बिजलीघर-विस्तार (मध्यप्रदेश)	2,00,000
21.	सतपुड़ा तापीय बिजलीघर (मध्यप्रदेश)	1,80,000
22.	तावा पनबिजलीघर-परियोजना (मध्यप्रदेश)	42,000
23.	पुनासा पनबिजली-परियोजना (मध्यप्रदेश और गुजरात) ...	5,76,000
24.	कुंडा पनबिजली-परियोजना (मद्रास)	2,40,000
25.	मैत्तूर सुरंग पनबिजली-परियोजना (मद्रास)	1,00,000
26.	पेरियार पनबिजलीघर-विस्तार (मद्रास)	35,000
27.	नइवेली लिग्नाइट-बिजलीघर (मद्रास)	1,50,000
28.	परमबिकुलम पनबिजली-परियोजना (मद्रास)	1,80,000
29.	कोयना पनबिजली-परियोजना चरण 2 (महाराष्ट्र)	3,00,000
30.	खापरखेड़ा तापीय बिजलीघर विस्तार (महाराष्ट्र)	60,000
31.	अकोला (पारस) तापीय बिजलीघर-विस्तार (महाराष्ट्र) ...	60,000
32.	भुसावल तापीय बिजलीघर (महाराष्ट्र)	60,000
33.	न्यैष्टिक बिजलीघर (महाराष्ट्र और गुजरात)	3,00,000
34.	वैतरणा पनबिजली-परियोजना (महाराष्ट्र)	45,000
35.	शरावती पनबिजली-परियोजना चरण 2 (मैसूर)	5,34,600
36.	शरावती 'टेल रेस' विकास (मैसूर)	1,45,000
37.	तालचर तापीय बिजलीघर (उड़ीसा)	2,40,000
38.	बालीमेला/गुंटावाडा पनबिजली-योजना (उड़ीसा और आन्ध्रप्रदेश)...	2,40,000

39.	भाखड़ा दायां तट बिजलीघर (पंजाब और राजस्थान)	2,80,000
40.	उहल नदी पनबिजली-परियोजना चरण 2 (पंजाब)	40,000
41.	अपर बारी-दोआब नहर-परियोजना (पंजाब)	22,000
42.	व्यास-परियोजना चरण 1 (पंजाब और राजस्थान)	2,40,000
43.	तापीय विस्तार (राजस्थान)	90,000
44.	कोटा पनबिजली-परियोजना (राजस्थान और मध्यप्रदेश) ...	78,000
45.	हरदुआगंज तापीय बिजलीघर-विस्तार (उत्तरप्रदेश)	30,000
46.	सिंगरौली तापीय बिजलीघर (उत्तरप्रदेश)	2,50,000
47.	ओबरा पनबिजली-परियोजना (उत्तरप्रदेश)	80,000
48.	बंडील तापीय बिजलीघर (पश्चिम-बंगाल)	3,00,000
49.	दिल्ली तापीय बिजलीघर-विस्तार (दिल्ली और पंजाब)	1,80,000

अनुबन्ध 9

तीसरी योजना में राज्याधिकृत प्रतिष्ठानों के द्वारा राज्यों में बिजली के विकास पर खर्च और प्राप्त होनेवाला लाभ

(पैराग्राफ 48 में उल्लिखित)

राज्य का नाम	व्यय-राशि लाख रु० में			मगावाट में लाभ: तीसरी योजना में			मगावाट में लाभ	
	चालू योजनाएं	नई योजनाएं	योग	चालू योजनाओं से	नई योजनाओं से	योग	1966-67 चौथी योजना का पहला वर्ष	1966-67 के बाद
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)
1. आन्ध्रप्रदेश	1,934	4,560	6,494	178.8	180	358.8	100	510
2. असम	550	2,200	2,750	31	96.2	127.2	25	25
3. बिहार†	1,535	4,023	5,558	130	245	375	95	20
4. गुजरात*	50	4,598	4,648	18	250	268	—	288
5. जम्मू-कश्मीर	127	870	997	14.8	20	34.8	23	69
6. केरल	2,676	1,608	4,356	334	—	334	50	435
7. मध्यप्रदेश	2,309	5,291	7,600	145.5	281.5	427	89	390
8. मद्रास×	319	9,700	10,019	35	335	370	220	—

† इसमें दामोदर-घाटी-निगम का खर्च और लाभ शामिल नहीं है ।

* न्यैष्टिक बिजलीघर पर व्यय और उसका लाभ शामिल नहीं है ।

× नईवेली बिजलीघर पर व्यय और उसका लाभ शामिल नहीं है ।

अनुबंध 9—जारी

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)
9. महाराष्ट्र*	1,674	6,450	8,124	255	405	660	120	—
10. मसूर	3,070	3,897	6,967	236.6	356.4	593	178.2	735
11. उड़ीसा	657	3,805	4,462	147	180	327	60	240
12. पंजाब	718	6,046	6,764	139.4	363	502.4	22	1,240
13. राजस्थान	765	2,735	3,500	103.1	153.5	256.6	39	—
14. उत्तरप्रदेश	4,640	6,196	10,836	415	230	645	50	471.5
15. पश्चिम-बंगाल† ...	1,367	2,340@	3,707@	168	300	468	—	9
16. दामोदर-घाटी-निगम‡ ...	2,974	3,039	6,013	280	140	420	140	—
योग	25,365	67,430	92,795	2,631.2	3,535.6	6,166.8	1,211.2	4,432.5
केन्द्रशासित प्रदेश								
1. दिल्ली	300	1,490	1,790	30	135	165	—	—
2. हिमाचलप्रदेश	78	119	197	—	2	2	—	—
3. त्रिपुरा	1.87	71.13	73	—	0.5	0.5	—	—
4. मणिपुर	5.5	101.04	106.58	—	2.8	2.8	—	—
5. पांडिचरी	3.1	65.47	68.57	—	—	—	—	—
6. अंडमान और निकोबार-द्वीपसमूह	4.25	10.1	14.35	—	—	—	—	—
7. लक्षदीवी, मिनिकाय और अमीनदीवी-द्वीपसमूह ...	1.5	3.76	5.26	—	—	—	—	—

8. उत्तर-पूर्व सीमान्त अभि-करण	16.57	43.43	60	1	1.5	2.5	—	
9. नागा-पहाड़ी और त्वेन्सांग-क्षेत्र	9.5	20.5	30	0.5	0.5	1	—	—
केन्द्रशासित प्रदेश का योग	420.29	1,924.47	2,344.76	31.5	142.3	173.8	—	—
सर्वयोग	25,785.29	69,354.47	95,139.76	2,662.7	3,677.9	6,340.6	1,211.2	4,432.5

* न्यैष्ठिक बिजलीघर पर व्यय और उसका लाभ शामिल नहीं है ।

† इसमें दामोदर-घाटी-निगम का खर्च और लाभ शामिल नहीं है ।

@ यह अस्थायी है और साधन बढ़ने पर इसका पुनर्निर्धारण हो सकता है । इस वृद्धि का अनुमान 43 करोड़ रु० है । राज्य-सरकार अध्याय 6—वित्तीय साधन में दिखाए गए 90 करोड़ रु० के अतिरिक्त उक्त रकम प्राप्त करने की आशा करती है ।

‡ केन्द्र का हिस्सा शामिल है ।

टिप्पणी : संयुक्त परियोजनाओं में राज्यों का हिस्सा अलग-अलग राज्य को मिलनेवाले लाभ के साथ दिखाया गया है ।

अनुबन्ध 10

बिजली-उपयोग का स्वरूप—अखिल भारत 1951-61

(खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के उत्पादन सहित)

(पराग्राफ 57 में उल्लिखित)

उपयोग का वर्ग	1951		1952		1953		1954	
	10 लाख किलोवाट-घंटे	कुल का प्रतिशत	10 लाख किलोवाट-घंटे	कुल का प्रतिशत	10 लाख किलोवाट-घंटे	कुल का प्रतिशत	10 लाख किलोवाट-घंटे	कुल का प्रतिशत
1. घरेलू या रिहायशी प्रकाश तथा अल्प शक्ति	595.005	7.9	628.882	7.9	690.516	8	759.169	7.9
2. व्यावसायिक प्रकाश तथा अल्प शक्ति	331.533	4.4	336.628	4.2	399.107	4.6	446.156	4.6
3. औद्योगिक शक्ति†	4,609.754	61.4	7,908.222	61.4	5,411.388	62.3	6,002.887	62.9
4. परिवहन	329.594	4.4	324.75	4.1	358.317	4.1	378.411	3.9
5. सार्वजनिक प्रकाश	67.917	0.9	73.942	0.9	81.445	0.9	93.938	1
6. सिंचाई	203.048	2.7	215.192	2.7	214.138	2.5	231.373	2.5
7. सार्वजनिक जल-व्यवस्था और मल-निकासी के लिए पम्प	211.583	2.8	219.764	2.7	240.374	2.8	267.471	2.8
8. सहायक कामों में उपयोग, संचरण में व्यय, आदि (खुद बिजली पदा करन-वाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों में उत्पादन के 5 प्रतिशत सहित)	1,165.537	15.5	1,296.544	16.1	1,285.811	14.8	1,397.008	14.4
9. कुल उत्पादन‡	7,513.971	100	8,003.924	100	6,681.096	100	9,576.413	100

†निश्चित आंकड़ों के अभाव में खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के उत्पादन का 5 प्रतिशत नुक्सान मान लिया गया है।

‡खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के बिजली-उत्पादन सहित।

अनुबन्ध 10—जारी

उपयोग का वर्ग	1955		1956		1957-58	
	10 लाख किलोवाट-घंटे	कुल का प्रतिशत	10 लाख किलोवाट-घंटे	कुल का प्रतिशत	10 लाख किलोवाट-घंटे	कुल का प्रतिशत
1. घरेलू या रिहायशी प्रकाश तथा अल्प शक्ति	850.426	7.9	934.122	7.9	1,094.564	8
2. व्यावसायिक प्रकाश तथा अल्प शक्ति	514.423	4.8	544.853	4.6	611.512	4 5
3. औद्योगिक शक्ति†	6,757.063	62.6	7,403.858	62.5	8,362.737	61 3
4. परिवहन	403.302	3.7	404.925	3 4	421 894	3.1
5. सार्वजनिक प्रकाश	105.631	1	117.767	1	141.402	1
6. सिंचाई	254.803	2 4	316.178	2 7	565 817	4 1
7. सार्वजनिक जल-व्यवस्था और मल-निकासी के लिए पम्प	284.637	2.6	317 076	2 7	365 649	2 7
8. सहायक कामों में उपयोग, संचरण में व्यय, आदि (खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानो में उत्पादन के 5 प्रतिशत सहित)	1,606.981	15	1,831 863	15.2	2,093 857	15 3
9. कुल उत्पादन‡	10,777.266	100	11,871.642	100	13,657 432	100

† निश्चित आंकड़ों के अभाव में खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के उत्पादन का 5 प्रतिशत नुक्सान मान लिया गया है ।

‡ खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के बिजली-उत्पादन सहित ।

अनुबन्ध 10—जारी

उपयोग का वर्ग	1958-59		1959-60		1960-61	
	10 लाख किलोवाट-घंटे	कुल का प्रतिशत	10 लाख किलोवाट-घंटे	कुल का प्रतिशत	10 लाख किलोवाट-घंटे	कुल का प्रतिशत
1. घरेलू या रिहायशी प्रकाश तथा अल्प शक्ति	1,238.044	8	1,368.884	7.7	1,492	7.5
2. व्यावसायिक प्रकाश तथा अल्प शक्ति	682.818	4.5	758.988	4.3	870	4.4
3. औद्योगिक शक्ति†	9,488.486	61.5	11,015.074	62	12,313.5	62
4. परिवहन	441.549	2.9	440.594	2.5	449	2.3
5. सार्वजनिक प्रकाश	156.066	1	175.42	1	192	1
6. सिंचाई	583.482	3.8	727.026	4.1	836	4.2
7. सार्वजनिक जल-व्यवस्था और मल-निकासी के लिए पम्प	392.617	2.6	430.845	2.4	455	2.3
8. सहायक कामों में उपयोग, संचरण में व्यय, आदि (खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों में उत्पादन के 5 प्रतिशत सहित)	2,431.507	15.7	2,835.547	16	3,242.5	16.3
9. कुल उत्पादन‡	15,414.569	100	17,752.378	100	19,850	100

† निश्चित आंकड़ों के अभाव में बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के उत्पादन का 5 प्रतिशत नुक्सान मान लिया गया है ।

‡ खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के बिजली-उत्पादन सहित ।

अनुबन्ध 11

पहली और दूसरी योजना में बिजली-उपयोग का वर्गवार विकास

(खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों का भी उत्पादन शामिल है)

(पैराग्राफ़ 57 में उल्लिखित)

उपयोग का वर्ग	1950* 10 लाख किलो-वाट-घंटे	1955* 10 लाख किलो-वाट-घंटे	1950 के मुकाबले प्रतिशत वृद्धि (पहली योजना)	1960-61† (अनुमानित) 10 लाख किलो-वाट-घंटे	1955 के मुकाबले प्रतिशत वृद्धि (दूसरी योजना)
1. घरेलू या रिहायशी प्रकाश तथा अल्प शक्ति	524.6	850.4	62	1,492	75.5
2. व्यावसायिक प्रकाश तथा अल्प शक्ति	308.8	514.4	65.5	870	69.3
3. औद्योगिक शक्ति‡	3,983.6	6,757.1	92.5	12,313.5	82.5
4. परिवहन	308.4	403.3	30.8	449	11.3
5. सार्वजनिक प्रकाश	60.3	105.6	75	192	82
6. सिंचाई	161.7	254.8	57.6	836	228
7. सार्वजनिक जल-व्यवस्था और मल-निकासी के लिए पम्प	189.1	284.6	50.5	455	60
8. सहायक कार्यों में उपयोग, संचरण में व्यय, आदि (खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानो में उत्पादन के 5 प्रतिशत सहित)	1,038	1,607	55	3,242.5	102
9. कुल उत्पादन	6,574.5	10,777.2	64	19,850	84.3

* कैलेंडर-वर्ष के आंकड़े।

† अप्रैल 1960 से 31 मार्च 1961 तक के आंकड़े।

‡ खुद बिजली पैदा करनेवाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के उत्पादन का 95 प्रतिशत मिला कर, क्योंकि निश्चित आंकड़ों के अभाव में 5 प्रतिशत को उत्पादन के दौरान हुआ नुकसान मान लिया गया है।

अध्याय 25

ग्रामोद्योग और लघु उद्योग

(1)

योजनाबद्ध विकास में भूमिका

ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों ने पहली और दूसरी योजनाओं की अवधि में रोज़गारी के विस्तार, उत्पादन में वृद्धि और अधिक समान वितरण के लक्ष्यों की पूर्ति में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। तीसरी योजना में जिस बड़े पैमाने पर काम होना है, उससे उनके कार्य का महत्त्व और भी अधिक बढ़ जाएगा। इन उद्योगों के कार्यक्रमों के लक्ष्य, जिन्हें सन् 1956 के औद्योगिक नीति-सम्बन्धी प्रस्ताव तथा दूसरी योजना में स्पष्ट किया गया था, इस प्रकार हैं : अपेक्षाकृत कम पूंजी से अधिक बड़े पैमाने पर शीघ्र और स्थायी रोज़गार प्रदान करना; उपभोक्ता-वस्तुओं और साधारण उत्पादक वस्तुओं की बढ़ती हुई मांग को काफी हद तक पूरा करना; पूंजी और दक्ष व्यक्तियों (जिनका अन्यथा पूरा-पूरा उपयोग न होना सम्भव है) के एकत्रीकरण के लिए आवश्यक परिस्थितियां तैयार करना; और इन उद्योगों के विकास को एक ओर ग्रामीण अर्थव्यवस्था के साथ और दूसरी ओर बड़े उद्योगों के साथ समन्वित करना। इसके साथ ही ये उद्योग इस प्रकार के भी उपाय प्रस्तुत करते हैं कि राष्ट्रीय आय का अधिक समान रूप से वितरण हो तथा कुछ उन समस्याओं को भी पैदा होने से रोका जा सके, जो शहरों के योजनाहीन विकास से उत्पन्न हो सकती हैं। तकनीक और संगठन में सुधार होने पर इन उद्योगों की, अर्थव्यवस्था के सुचारु और विकासशील विकेन्द्रित क्षेत्र के रूप में, उन्नति की अच्छी सम्भावनाएं हैं। इनसे सारे देश में लोगों को काम मिल सकेगा और उन्हें आय होगी। इसलिए इस क्षेत्र में आयोजन का एक मुख्य लक्ष्य परिष्कृत तकनीक अपनाने और संगठन के अधिक सक्षम रूप ग्रहण करने में सहायता प्रदान करना है, ताकि सामान्य आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप जो बुनियादी सुविधाएं और सेवाएं उपलब्ध हैं, उनका पूरा लाभ उठाया जा सके और एक अवधि के बाद यह सारा क्षेत्र आत्मनिर्भर तथा आत्मचालित बन सके। इसके साथ ही तकनीकी परिवर्तन की गति को इस प्रकार नियमित किया जाए कि बड़े पैमाने पर होनेवाली बेकारी और उससे लाखों लोगों को होनेवाली कठिनाई और कष्टों को दूर किया जा सके।

2. पिछली दशाब्दी में एक महत्त्वपूर्ण शिक्षा यह मिली कि जिन किन्हीं छोटे उद्योगों ने, जिनमें ग्रामोद्योग भी हैं, सुधरी हुई तकनीकें नहीं अपनाईं या सहकारिता के आधार पर मात्रा और संगठन-सम्बन्धी मितव्ययिता के क्षेत्र में सफलता प्राप्त नहीं की, उनका उत्पादन-व्यय अपेक्षाकृत अधिक रहा। साथ ही, न बिके माल के जमा होने, उत्पादन में कमी आने और बेकारी की समस्याएं पैदा हो गईं। ये समस्याएं कुछ परम्परागत उद्योगों में भी आई हैं। गतिशील अर्थव्यवस्था में तेज़ी से बदलनेवाली स्थितियों से निरन्तर अनुकूलता स्थापित करना तथा नई तकनीकों, तरीकों और संगठन के रूपों को स्वीकार करना विभिन्न ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों की स्थिरता और विकास के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। गत 10 वर्षों में इन उद्योगों को सहायता देने के लिए अनेक कार्यक्रम बनाए गए तथा ऋण, आर्थिक सहायता, तकनीकी और

हाट-व्यवस्था-सम्बन्धी परामर्श के द्वारा उन्हे पर्याप्त सम्बल प्रदान किया गया । कुछ उद्योगों में उत्पादन का क्षत्र निश्चित करके भी मदद पहुचाई गई । दूसरी योजना के उत्तरार्द्ध मे आयात-प्रतिबन्धों के अधिक कड़ा कर दिए जाने के कारण कुछ छोटे उद्योगों की हाट-व्यवस्था की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ । इन प्रतिबन्धों की आवश्यकता अनिश्चित काल तक के लिए बनी नही रह सकती । साथ ही, देश के एक बड़े भाग मे बिजली की व्यवस्था होने, संचार और परिवहन के साधनों में सुधार होने, नवीनतम मशीनों और तकनीको का प्रयोग होने तथा विज्ञान और टेक्नोलाजी की प्रगति से सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था रूपान्तरित हो रही है । इसलिए ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों की समस्याओं पर निरन्तर विचार होना चाहिए तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मे अनिवार्य और स्थायी तत्त्व के रूप में विकेन्द्रित उद्योग की प्रगति की पूरी सम्भावनाएं प्राप्त करने के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए ।

3. पहली और दूसरी योजना में विभिन्न लघु उद्योगो की, जिनमे हथकरघा, खादी, ग्रामोद्योग, छोटे पैमाने के उद्योग, हस्तशिल्प, रेशम के कीडे पालने का उद्योग और नारियल-जटा-उद्योग भी शामिल हैं, प्रगति की एक कार्यकारी दल ने और एक समिति ने दूसरी योजना के मध्य-काल में समीक्षा की । एक विशेष अध्ययन-दल ने 6 वर्ष पूर्व सामुदायिक विकास-खडो में चालू की गई 25 औद्योगिक मार्गदर्शक परियोजनाओं के कार्य का विवेचन किया । कार्य-क्रम-मूल्यांकन-संगठन ने भी चुने हुए सामुदायिक विकास-खंडों मे ग्रामीण उद्योगो का अध्ययन किया । इन अध्ययनों के अनन्तर जो आकड़े प्राप्त हुए तथा जो परिणाम निकले, वे तीसरी योजना के लिए कार्यक्रम बनाने में बड़े मूल्यवान सिद्ध हुए हैं । प्रथम दो योजनाओं की अवधि में इन उद्योगों को प्रगति को संक्षिप्त झाकी आगे प्रस्तुत की जा रही है ।

(2)
प्रगति की समीक्षा

4. पहली योजना में ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों के विकास के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण कदम अखिल भारतीय मंडलों की स्थापना था । ये मंडल हथकरघा-उद्योग, खादी और ग्रामोद्योगों, छोटे पैमाने के उद्योगों, हस्तशिल्प, रेशम के कीड़े पालने के उद्योग और नारियल-जटा-उद्योगों को परामर्श देने के साथ-साथ विकास-कार्यक्रम के निर्माण मे सहायता देंगे । खादी और ग्रामोद्योग-मंडल ने न केवल अपने से सम्बद्ध उद्योगों के लिए कार्यक्रम तैयार किए, अपितु इन कार्यक्रमों को पंजीकृत संस्थाओं और सहकारी समितियों-द्वारा पूरा भी कराया । अन्य उद्योगों में कार्यक्रमों के परिपालन की ज़िम्मेदारी राज्य-सरकारों की रही, यद्यपि कुछ कार्यक्रमों को मूर्त रूप देने के लिए मंडलों ने केन्द्रीय सरकार की ओर से भी काम किया । दूसरी योजना की अवधि की एक उल्लेखनीय घटना अनुविहित खादी और ग्रामोद्योग-आयोग की स्थापना थी । इस आयोग को खादी और ग्रामोद्योग-मंडल से कही अधिक व्यापक परि-पालक अधिकार दिए गए । खादी और ग्रामोद्योग-मंडल की स्थिति आयोग से निकट रूप से सम्बद्ध परामर्शदाता के रूप में बनी रही । साथ ही, प्रायः सभी राज्यों की सरकारों ने कानून बना कर अपने यहां राज्य-खादी और ग्रामोद्योग-मंडलों की स्थापना की । राज्यों के उद्योग-विभागों को भी संगठित करने के लिए कदम उठाए गए । इस प्रकार, एक त्रिसूत्रीय संगठन का विकास किया गया—केन्द्र में वाणिज्य और उद्योग-मन्त्रालय, अखिल भारतीय मंडल, और राज्यों के उद्योग-विभाग तथा राज्य-मंडल । इनके अतिरिक्त, ज़िला और खंड-स्तर पर उद्योग-अधिकारी नियुक्त किए गए । दूसरी योजना के अन्त तक 3,110 विकास-खंडों में से 1,650

में उद्योग-विस्तार-अधिकारियों की व्यवस्था कर दी गई। कार्यक्रमों में तालमेल बनाए रखने के लिए केन्द्र में छोटे उद्योगों के लिए एक समन्वय-समिति गठित की गई, जिसमें सम्बद्ध मन्त्रालयों के प्रतिनिधि और अखिल भारतीय मंडलों तथा खादी और ग्रामोद्योग-आयोग के अध्यक्ष रखे गए। अधिकांश राज्यों में भी समन्वय-समितियां गठित की गईं।

5. पहली योजना के विकास-कार्यक्रमों की एक विशेषता इन उद्योगों को विभिन्न प्रकार से—ऋण, प्रशिक्षण-सुविधाएं, तकनीकी परामर्श, आसान शर्तों पर सुधरे हुए औज़ारों और उपकरणों की आपूर्ति तथा बिक्री-केन्द्रों की स्थापना आदि के रूप में—सहायता देने की व्यवस्था थी। दूसरी योजना में इन सभी प्रयोजनों के लिए सहायता का स्तर बहुत बढ़ा दिया गया। इस मद में सम्भावित व्यय 180 करोड़ रु० से थोड़ा कम आंका गया, जबकि पहली योजना में यह राशि केवल 43 करोड़ रु० थी। अनेक नए कार्यक्रम भी तैयार किए गए। कारखानों को स्थान देने के लिए लगभग 60 औद्योगिक बस्तियां स्थापित की गईं। छोटे पैमाने के उद्योगों के विस्तार के लिए अनेक सामान्य सुविधाएं दी गईं। खादी और ग्रामोद्योग-आयोग ने बड़े पैमाने पर अम्बर चर्खे के निर्माण एवं वितरण का कार्य हाथ में लिया। सहकारी हथकरघा-बुनकर-समितियों को बिजली-चालित करघे लगाने के लिए सहायता देने का एक कार्यक्रम भी लागू किया गया। सहायता के इन विभिन्न कार्यक्रमों के अतिरिक्त कुछ उद्योगों के उत्पादनों के लिए अच्छे बाज़ारों की व्यवस्था के क्षेत्र में भी कदम उठाए गए। कपड़े की कुछ विशेष किस्मों का उत्पादन केवल हथकरघा-उद्योग के लिए तथा कृषि के कुछ खास प्रकार के उपकरणों का निर्माण केवल छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए निश्चित कर दिया गया। यह निश्चय किया गया कि कुछ बड़े पैमाने के उद्योगों में—यथा, वनस्पति-तेल, धान की मिलों, चमड़े के जूते और दियासलाई के कारखानों में—जहां उपलब्ध क्षमता का पूरी तरह से उपयोग भी नहीं हो रहा था, और अधिक विस्तार की अनुमति न दी जाए। बाइसिकल और सिलाई की मशीन-जैसे कुछ उद्योगों के छोटे और बड़े पैमाने के क्षेत्रों में उत्पादन के लक्ष्य निश्चित कर दिए गए।

6. अनेक उद्योगों में—विशेषतः छोटे पैमाने के उद्योगों और हस्तशिल्प-उद्योगों में—व्यक्तिगत कारीगरों और नए संचालकों को सहायता दी जानी थी, क्योंकि कारीगरों के अनेक संगठन क्षेत्रीय स्तर पर विकसित नहीं हुए थे। परन्तु हथकरघा और नारियल-जटा-उद्योग में सहायता सहकारी समितियों के माध्यम से तथा खादी और ग्रामोद्योग में अधिकांशतः पंजीकृत संस्थाओं के ज़रिए दी गई। पहली योजना में लघु उद्योगों और ग्रामोद्योगों के विकास के लिए एक साधन के रूप में औद्योगिक सहकारी समितियां स्थापित करने पर काफी बल दिया गया था। औद्योगिक सहकारी समितियों की संख्या, जो सन 1951 में 7,105 थी, सन् 1956 में बढ़ कर 15,300 हो गई। हथकरघा-उद्योग में 8,000 सहकारी समितियां थीं; दूसरा स्थान ताड़-गुड़-समितियों का था और उसके बाद क्रमशः खाल कमानेवाले तथा चमड़े की चीज़ें बनानेवाले कर्मचारियों, हल्के इंजीनियरी सामान-समेत छोटे पैमाने के उद्योगों तथा रेशम-उद्योग की सहकारी समितियों का स्थान आता था। सन् 1959-60 तक औद्योगिक सहकारी समितियों की संख्या बढ़ कर 29,000 हो गई। इनमें लगभग हथकरघा-बुनकरों की लगभग 11,200 समितियां भी शामिल थीं। फिर भी, ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों का एक बहुत छोटा हिस्सा ही औद्योगिक सहकारिता की परधि में आता था। सन् 1958 में एक विशेष कार्यकारी दल ने औद्योगिक सहकारी समितियों की द्रुत गति में

बाधा डालनेवाली कठिनाइयों पर विचार किया तथा उनके विकास को गति देने के लिए कुछ उपाय सुझाए। कार्यकारी दल के प्रस्तावों पर कार्रवाई की जा रही है।

7. प्रशासनिक और संगठनमूलक व्यवस्था को सुदृढ़ करने, एवं सहायता-कार्यक्रम के विस्तार के साथ कुछ उद्योगों के लिए अच्छे बाज़ार प्रदान करने से ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों के विकास के लिए बड़ी अनुकूल स्थितियां तैयार हो गई हैं। प्रत्येक उद्योग ने गत 10 वर्षों में कितनी उन्नति की है, पूर्ण एवं विश्वसनीय आंकड़ों के अभाव में इसका विस्तृत विवरण देना तो सम्भव नहीं है, फिर भी इतना निश्चित है कि अनेक उद्योगों में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।

8. इस समय जो सूचनाएं उपलब्ध हैं, उनके अनुसार हथकरघा-वस्त्रों का उत्पादन, जो सन् 1950-51 में 74 करोड़ 20 लाख गज़ था, सन् 1960-61 में बढ़कर 1 अरब 90 करोड़ गज़ हो गया। इस उद्योग में लगभग 30 लाख बुनकरों को पहले से अधिक रोज़गार दिया गया और विगत 3 वर्षों में प्रति वर्ष औसत रूप से 3 करोड़ 60 लाख गज़ हथकरघा वस्त्र का, जिसका मूल्य 5 करोड़ रु० से भी अधिक ठहरता है, निर्यात किया गया। सहकारिता की परधि में आनेवाले करघों की संख्या सन् 1953 में 7 लाख से कुछ कम से बढ़ कर सन् 1960 के मध्य लगभग 13 लाख हो गई। परम्परागत खादी (सूती, रेशमी और ऊनी) का भी उत्पादन, जो सन् 1950-51 में 70 लाख गज़ था, सन् 1960-61 में बढ़ कर 4 करोड़ 80 लाख गज़ हो गया। 1.4 लाख बुनकरों और बढ़इयों को पूरे समय का रोज़गार मिलने के अतिरिक्त 11 लाख कताई करनेवालों को भी अधिकांशतः अंशकालिक काम मिला। अम्बर-खादी (अम्बर चर्खे और सादे चर्खे से उत्पन्न सूतों को मिला कर बनाया गया कपड़ा) का उत्पादन सन् 1956-57 में 19 लाख गज़ था, जो सन् 1960-61 में बढ़ कर लगभग 2 करोड़ 60 लाख गज़ हो गया। इस कार्यक्रम से 51,000 बुनकरों और अन्य व्यक्तियों को पूरे समय का काम मिलने के अलावा 3 लाख कातनेवालों को अधिकांशतः अंशकालिक रोज़गार मिला।

9. ग्रामोद्योगों की प्रगति के बारे में जो सूचनाएं उपलब्ध हुई हैं, वे केवल पंजीकृत संस्थाओं, सहकारी समितियों और ऐसे केन्द्रों के बारे में है, जिन्हें खादी और ग्रामोद्योग-आयोग से सहायता मिली है। दूसरी योजना की अवधि में विभिन्न कार्यक्रमों के लिए 18 करोड़ से कुछ अधिक रुपये वितरित किए गए। इस सहायता का अधिकांश भाग अनाजों और दालों के विधायन, तेलहनों की पेराई, खाल कमाने और चमड़ा तैयार करने, ताड़-गुड़, अखाद्य तेलों और साबुन, दियासलाई, हाथ के बने कागज़, गुड़ और खांडसारी, मधुमक्खी-पालन, मिट्टी का बर्तन-उद्योग, आदि के लिए सुधरे हुए उपकरणों की आपूर्ति, प्रशिक्षण तथा हाट-व्यवस्था की सुविधाओं के रूप में दिया गया। वितरित धन-राशि का एक बड़ा भाग दूसरी योजना के प्राथमिक वर्षों में अप्रयुक्त ही रहा। ग्रामोद्योग-सम्बन्धी मूल्यांकन-समिति ने, जिसने दूसरी योजना के लगभग मध्य-काल में खादी और ग्रामोद्योग-आयोग की सहायता से चलनेवाले कुछ उत्पादन-केन्द्रों की स्थिति की समीक्षा की थी, यह मत प्रकट किया था कि इनके उत्पादन और नियोजन-विषयक परिणाम इन पर किए गए खर्च के अनुकूल नहीं हैं। परन्तु इसके बाद से इन केन्द्रों के कार्य-संचालन और प्रदत्त धन के उपयोग में पर्याप्त सुधार हुआ है। दूसरी योजना के ग्रामोद्योग-सम्बन्धी कार्यक्रमों में गांवों के लगभग 5 लाख कारीगरों और अर्द्धरोज़गार-प्राप्त महिला श्रमिकों को आंशिक सहायता देने के लिए व्यवस्था थी।

इनसे ऐसे अनुभव भी मिले हैं, जो ग्रामीण क्षेत्रों में औद्योगिक विकास के भावी स्वरूप के निश्चय में बड़े उपयोगी साबित होंगे।

10. रेशम के कीड़े पालने के उद्योग से सम्बन्धित कार्यक्रमों का मुख्य लक्ष्य शहतूत की खेती के तरीकों और रेशम-कीट-बीजों की किस्म में सुधार करना, कातने और लपेटने के परिष्कृत उपकरण उपलब्ध करना और अनुसन्धान-कार्यों को संगठित करना है। ब्रह्मपुर-स्थित केन्द्रीय रेशम-कीट-पालन-अनुसन्धान-संस्था तथा कलिम्पोंग-स्थित उसके उपकेन्द्र का विस्तार किया गया और मैसूर में एक प्रशिक्षण-संस्था की तथा श्रीनगर में एक रेशम-कीट-बीज-केन्द्र की स्थापना की गई। कच्चे रेशम का उत्पादन, जो सन् 1951 में 25 लाख पौंड था, सन् 1960 में बढ़ कर 36 लाख पौंड हो गया। दूसरी योजना के अन्त में हिसाब लगाया गया कि इस उद्योग में 35 हज़ार व्यक्तियों को पूरे समय का रोज़गार मिलने के अतिरिक्त 27 लाख व्यक्तियों को अंशकालिक रोज़गार मिला। प्रति एकड़ शहतूत का कम उत्पादन, कोयों से कम रेशम की प्राप्ति, आदि के कारण उत्पादन-व्यय की अधिकता इस उद्योग की प्रमुख समस्या बनी रही।

11. नारियल-जटा-उद्योग में सामान्यतः मन्द प्रगति हुई। नारियल-जटा-सहकारी समितियों की संगठन-सम्बन्धी त्रुटियों, कताई के लिए निम्न कोटि के उपकरणों का प्रयोग होने के कारण जटा के रेशों की घटिया किस्म और विदेशी बाज़ारों में पूरक माल से प्रतियोगिता आदि के कारण ही तीव्र प्रगति न हो सकी। सन् 1957-58 में जटा-रेशे और उससे निर्मित माल के निर्यात को बड़ा धक्का लगा। इसके बाद इसमें कुछ सुधार तो हुआ परन्तु पहली योजना के अन्त के स्तर तक नहीं पहुंचा जा सका। अनुमान है कि इस समय इस उद्योग में 8 लाख व्यक्तियों को रोज़गार मिला हुआ है।

12. दूसरी योजना में हस्तशिल्प के कार्यक्रमों को बढ़ाया गया ; इनमें 4 प्रादेशिक डिज़ाइन-केन्द्रों और अनेक प्रदर्शन एवं बिक्री-केन्द्रों की स्थापना भी शामिल है। इनके अतिरिक्त, कुछ विशिष्ट हस्तशिल्पों——यथा, हाथी-दांत और शंख के सामान, बिदरी के सजावटी बर्तनों और खिलौनों, बांस के सामान, कागज़ की लुगदी के सामान, आदि——के प्रशिक्षण एवं उत्पादन के भी केन्द्र खोले गए। हस्तशिल्प के सामान की घरेलू खपत और निर्यात, दोनों में वृद्धि हुई है। 100 से भी अधिक प्रदर्शन और बिक्री-केन्द्र खोले गए तथा इनमें होनेवाली बिक्री की वार्षिक राशि पहली योजना के अन्त के 1 करोड़ रु० से बढ़ कर सन् 1959-60 में 2.50 करोड़ रु० हो गई। अनुमान है कि दूसरी योजना के अन्तिम तीन वर्षों में प्रति वर्ष औसत रूप से 6 करोड़ रु० का हस्तशिल्प का सामान, जिसमें गलीचे भी शामिल हैं, विदेशों को भेजा गया। कुशल कारीगरों को स्थायी और पूरे समय के रोज़गार उपलब्ध करने के लिए अनुकूल परिस्थितियां पैदा की गईं; फलतः उनकी कमाई में भी पर्याप्त वृद्धि हुई। परन्तु तकनीकी कर्मचारियों और कुछ विशेष प्रकार के बुनियादी कच्चे माल की कमी तथा कारीगरों को ऋण देने के क्रम में उठनेवाली कठिनाइयों के कारण प्रगति के मार्ग में कुछ रुकावटें आईं।

13. विगत 5 वर्षों में छोटे पैमाने के उद्योगों में बहुत अच्छी प्रगति हुई। कुछ बुनियादी कच्चे माल की कमी के बावजूद अनेक छोटे उद्योगों में——मुख्यतः मशीनी औज़ारों, सिलाई की मशीनों, बिजली के पंखों और मोटरों, साइकिलों, निर्माण-जन्य सामग्रियों और हाथ के औज़ारों के क्षेत्र में——उत्पादन में प्रति वर्ष 25 से 50 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई।

आयात-प्रतिबन्धों का भी इनमें से कुछ उद्योगों की प्रगति पर प्रभाव पड़ा । 5 लाख रु० से कम की अधिकृत पूंजीवाली पंजीकृत कम्पनियों की संख्या, जो विधायन और निर्माण के कार्य में लगी हैं, सन् 1957-61 की अवधि में बढ़ कर 1,160 हो गई। औद्योगिक बस्तियों के कार्यक्रम में भी पर्याप्त प्रगति हुई । सन् 1960-61 तक 60 औद्योगिक बस्तियों का कार्य पूरा हो गया। इनमें से 52 बस्तियों में, जिनमें 1,035 कारखानों के लिए शेड पड़े हैं तथा 13,000 कर्मचारी नियुक्त हैं, काम भी आरम्भ हो गया है। अनुमान है कि छोटे पैमाने के उद्योगों में 3 लाख व्यक्तियों को पूरे समय का रोज़गार मिला है।

(3)

तीसरी योजना का दृष्टिकोण

14. तीसरी योजना में ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों के कार्यक्रमों पर अमल करते समय निम्नलिखित लक्ष्यों को सामने रखना होगा :

(1) कर्मचारी की उत्पादकता बढ़ाना और सहायता के ठोस रूपों—यथा, दक्षता में वृद्धि, तकनीकी परामर्श, अच्छे उपकरण और ऋण, आदि—पर अपेक्षाकृत अधिक बल देकर उत्पादन-व्यय में कमी लाना ;

(2) सहायता-अनुदानों, बिक्री पर छूट और संरक्षित बाजारों में क्रमशः कमी करना;

(3) गांवों और छोटे कस्बों में उद्योगों के विकास को बढ़ावा देना ;

(4) छोटे पैमाने के उद्योगों को बड़े उद्योगों के सहायक के रूप में विकसित करना; और

(5) कारीगरों और शिल्पियों को सहकारी आधार पर संगठित करना।

इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जो नीतियां और उपाय सुझाए गए हैं, उनका विवरण नीचे दिया गया है :

15. **दक्षता और उत्पादकता में सुधार :** तीसरी योजना में ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों के क्षेत्र में तकनीकी और प्रबन्ध-सम्बन्धी कर्मचारियों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रशिक्षण-सुविधाओं को पर्याप्त रूप से बढ़ाया जाएगा। इस सम्बन्ध में कारीगरों और इंजीनियरों को प्रशिक्षण देने के लिए जो व्यवस्थाएं की गई हैं, उन पर तकनीकी शिक्षा-सम्बन्धी अध्याय में प्रकाश डाला गया है। ग्रामीण कारीगरों के लिए चुने हुए क्षेत्रों में केन्द्रीय संस्थाएं स्थापित करने की एक योजना बनाई गई है। ये संस्थाएं कुछ ग्रामों के समूहों के लिए सम्बद्ध पेशों—लोहारगीरी, बढ़ईगीरी, आदि—के लिए पाठ्यक्रमों का आयोजन करेंगी । ये पाठ्यक्रम एक वर्ष या इससे कुछ अधिक समय के लिए इस बात को ध्यान में रख कर चलाए जाएंगे कि कारीगर कृषि-सम्बन्धी उपकरणों और भारी कृषि-मशीनों के हिस्सों के रख-रखाव और मरम्मत का प्रशिक्षण प्राप्त कर सकें। ये संस्थाएं, जहां कहीं आवश्यकता होगी, पूर्व-स्थापित उत्पादन सह-प्रशिक्षण-केन्द्रों का स्थान ग्रहण करेंगी। इसके अतिरिक्त , राज्य-सरकारों-द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में भ्रमणकारी प्रदर्शनों और प्रशिक्षण-दलों का आयोजन करके प्रशिक्षण की सुविधाएं उपलब्ध की जाएंगी। इन ग्राम प्रशिक्षण-कार्यक्रमों के अलावा खादी, ग्रामोद्योगों और हस्तशिल्पों के लिए विशेष प्रशिक्षण-कार्यक्रम इन उद्योगों के विकास-कार्यक्रमों के अंग-रूप में हाथ में लिए जाएंगे। औद्योगिक विस्तार की

तकनीकों में प्रशिक्षण की सुविधाएं प्रदान करने के लिए एक अखिल भारतीय संस्था भी स्थापित की जाएगी ।

16. ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों के सभी कार्यक्रमों में सुधरे हुए औज़ारों और उपकरणों के प्रयोग पर भी बल दिया गया है । दूसरी योजना की अवधि में छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए किस्तों पर खरीद के आधार पर मशीन-आपूर्ति की योजना लागू की गई थी । इसको तीसरी योजना में भी बढ़ाने का इरादा है, ताकि छोटे उद्योगपतियों और सहकारी समितियों को बड़ी संख्या में मशीनें दी जा सकें । हथकरघा-क्षेत्र में 'टेक अप मोशन अटैचमेंट' और अर्द्धस्वचालित करघे चालू करने तथा दूसरी योजना के प्रारम्भ में आरम्भ किए गए सहकारिता के आधार पर हथकरघों को बिजलीचालित करघों में बदलने के कार्यक्रम को भी जारी रखने की व्यवस्था है । खादी और ग्रामोद्योगों के क्षेत्र में अम्बर चर्खा, तेलघानियों, हाथ से धान कूटने के उपकरणों तथा अन्य ग्रामोद्योगों में अनुसन्धान और परीक्षण जारी रहेंगे । नारियल-जटा-उद्योग में, मार्गदर्शक कार्यक्रम के आधार पर सुधरे हुए जटा-कताई-उपकरण लागू करने के लिए इस प्रकार के उपकरण बड़े पैमाने पर तैयार करने का प्रस्ताव है । रेशम-कीट-पालन-उद्योग में, एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम लपेटने के लिए ग्राम चर्खे के प्रयोग के बदले 'काटेज बेसिन' के प्रयोग को प्रोत्साहन देना है । इसी प्रकार, हस्तशिल्प में भी सुधरे हुए उपकरणों तथा औज़ारों के प्रयोग को प्रोत्साहन दिया जाएगा और सहायता प्रदान की जाएगी ।

17. विभिन्न उद्योगों में काम करनेवाले कारीगरों और शिल्पियों को तकनीकी परामर्श देने के लिए बड़े पैमाने पर प्रयत्न किए जाएंगे । छोटे पैमाने के उद्योगों के क्षेत्र में लघु उद्योग-सेवा-संस्थाओं, विस्तार-केन्द्रों और खंड-स्तर पर विस्तार-अधिकारियों (उद्योग) के माध्यम से औद्योगिक विस्तार-सेवा का निर्माण किया गया । खादी और ग्रामोद्योगों के क्षेत्र में भी इस प्रकार का परामर्श पंजीकृत संस्थाओं और केन्द्रों के तकनीकी अधिकारियों तथा खंडों में विस्तार-अधिकारियों के ज़रिए उपलब्ध किया जाता है । फिर भी, प्रत्येक कारीगर और शिल्पी को उसकी आवश्यकता के अनुसार तकनीकी सहायता और परामर्श देने के लिए अभी बहुत-कुछ किया जाना शेष है तथा तीसरी योजना में इस दिशा में और ज़ोरदार प्रयत्नों की आवश्यकता है ।

18. सुधरे हुए औज़ारों और उपकरणों, निर्माण की प्रक्रियाओं एवं डिज़ाइन, आदि के विकास के लिए अनुसन्धान पर विशेष ध्यान दिया जाएगा । वर्तमान सुविधाओं का और अधिक विस्तार करने-सम्बन्धी कार्यक्रमों पर वैज्ञानिक और टेकनोलाजी-विषयक अनुसन्धान के अध्याय में प्रकाश डाला गया है ।

19. **ऋण और वित्त :** ऋण-सुविधाओं को, जो ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों की एक अनिवार्य आवश्यकता है, तीसरी योजना में बड़े पैमाने पर संगठित किया जाएगा तथा उचित शर्तों पर न्यूनतम प्रक्रिया-सम्बन्धी विलम्ब के साथ दिया जाएगा । तीसरी योजना में छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए व्यय-राशि का निश्चय करते समय दीर्घ और मध्यमकालीन पूंजी तथा कार्य-संचालन पूंजी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए उद्योगों को राजकीय सहायता-अधिनियमों के अन्तर्गत ऋणों के लिए अच्छी-खासी रकम की व्यवस्था की गई है । इसी प्रकार खादी और ग्रामोद्योग के लिए व्यय-राशि निश्चित करते समय ऋण देने के लिए अच्छी-खासी रकमें अलग रखी गई हैं। फिर भी, योजना में ऋण देने की व्यवस्था, मांग की तुलना में अनिवार्य रूप से सीमित है; अतः लक्ष्य यह होना चाहिए कि ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों

की ऋण की आवश्यकताएं अधिकाधिक मात्रा में ग्राम बैंकों और वित्तीय संस्थाओं से पूरी हो जाएं। इन उद्योगों के लिए ऋण की समन्वित व्यवस्था के हेतु स्टेट बैंक ऑफ इंडिया-द्वारा शुरू की गई एक मार्गदर्शक योजना के अधीन जो ऋण दिए जा चुके हैं। तथा जिनके लिए स्वीकृति मिल गई है, उनकी राशि सन् 1961 के मार्च के अन्त लगभग 9 करोड़ रु० थी। दूसरी योजना में संस्थात्मक अभिकरणों के माध्यम से ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों को ऋण, देने के लिए तीन मुख्य कदम उठाए गए। रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया केन्द्रीय सहकारी अभिकरणों को हथकरघा-उद्योग की कार्य-संचालन पूंजी-सम्बन्धी मांग को पूरा करने के लिए पेशगी देने की विशेष सुविधाएं देता है। जुलाई 1960 में एक मार्गदर्शक ऋण-गारंटी-योजना लागू की गई। इसके अधीन सरकार कुछ विशिष्ट बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं के साथ, लघु उद्योगों को दिए गए ऋणों के बारे में खतरों में हिस्सा बंटाती है। सन् 1960-61 के अन्त तक 2 करोड़ रु० के ऋणों के लिए गारंटी दी गई। बैंकों और संस्थामत्क अभिकरणों-द्वारा ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों के क्षेत्र में सुप्रतिष्ठित संस्थाओं—जैसे खादी और ग्रामोद्योग आयोग, राष्ट्रीय लघु उद्योग-निगम, आदि—को दिए गए ऋणों के लिए सरकारी गारंटी के हेतु भी एक प्रस्ताव तैयार किया गया। तीसरी योजना में भी इस तरह के प्रयत्न जारी रखने का प्रस्ताव है। इस बात का निश्चय करने के लिए कि उद्योगों को राजकीय सहायता-अधिनियमों के अधीन ऋण देते समय ग्रामीण क्षेत्रों के कारीगरों की ऋण-सम्बन्धी आवश्यकताओं की उपेक्षा नहीं की जाएगी, यह स्वीकार कर लिया गया है कि इन अधिनियमों के अधीन वितरित की जानेवाली राशि का एक भाग ग्रामीण क्षेत्रों के कारीगरों के लिए निश्चित रहेगा और इसी उद्देश्य के लिए इतनी ही राशि की व्यवस्था सामुदायिक विकास-खंडों के बजट में होगी।

20. **सहायता-अनुदान, बिक्री पर छूट, आदि :** आशा की जाती है कि उत्तरोत्तर ठोस सहायता-कार्यक्रम के विस्तार के साथ तीसरी योजना में सहायता-अनुदानों, बिक्री पर छूट और संरक्षित बाज़ारों में कमी करना सम्भव हो सकेगा। आशा है कि खादी के क्षेत्र में तकनीकी सुधारों, उत्पादन-व्यय के एकीकरण और परिवहन तथा अन्य वितरण-व्ययों में मितव्ययिता के द्वारा मूल्यों में क्रमशः कमी की जा सकेगी। खादी पर और विशेष रूप से रेशमी तथा ऊनी खादी पर बिक्री पर छूट के प्रश्न पर इस दृष्टि से विचार किया जाएगा कि यथासम्भव उनको समाप्त करके उनके बदले उचित प्रबन्ध-अनुदान दिए जाएं। ग्रामोद्योगों के सम्बन्ध में भी प्रस्ताव रखा गया है कि वर्तमान सहायता-अनुदानों या उनके माल की बिक्री पर दी जानेवाली छूट का स्थान क्रमशः प्रबन्ध-अनुदान ले लें। इसी प्रकार, हथकरघा-उद्योग में बिक्री पर छूट के बदले अधिक ठोस सहायता देने पर बल दिया जाएगा।

21. पहली और दूसरी योजनाओं में सामान्य उत्पादन-कार्यक्रम के मुख्य तत्त्वों के रूप में जिन बातों का उल्लेख किया गया है, उनमें संगठन और सहायता-सम्बन्धी ठोस कार्रवाइयां, कच्चे माल की आपूर्ति की व्यवस्था और अनुसन्धान तथा प्रशिक्षण, आदि में समन्वय स्थापित करना है। उद्योगों की विभिन्न शाखाओं के लिए विकास-कार्यक्रम बनाते समय इस बात का निश्चय करने के लिए कि सामाजिक एवं अन्य उद्देश्यों की पृष्ठभूमि में समाज की कुल आवश्यकताओं के प्रति बड़े पैमाने और छोटे पैमाने के उद्योग-क्षेत्र का तथा कुटीर-क्षेत्र का योगदान कितना रहे, जिस बुनियादी दृष्टिकोण को अपनाया गया है, उसे आसानी से प्रकट करने के लिए 'सामान्य उत्पादन-कार्यक्रम' नाम दिया गया है। कार्यक्रम के अन्य तत्व, जिनका लक्ष्य छोटे पैमाने के उद्योग-क्षेत्र को हाट-व्यवस्था के बारे में प्राथमिकता या आश्वासन

प्रदान करना है, ये हैं : उत्पादन के क्षेत्र सुरक्षित करना, बड़े उद्योगों की विस्तार-क्षमता को सीमित करना, बड़े पैमाने की इकाइयों पर 'सेस' लगाना और छोटी इकाइयों को विभेदात्मक कराधान, सहायता-अनुदान, बिक्री पर छूट, आदि के द्वारा मूल्य कम रखने का लाभ प्रदान करना। इस बात को स्वीकार कर लिया गया है कि सामान्य उत्पादन-कार्यक्रम के सिद्धान्तों को पृथक्-पृथक् उद्योगों की समस्याओं की जांच और विस्तृत अध्ययन करने के बाद ही लागू किया जाए। उदाहरण के लिए, कुछ परम्परागत उद्योगों के मामले में उनके उत्पादनों को प्राथमिकता और बाज़ार का आश्वासन, छोटे पैमाने के उद्योगों की तुलना में, अपेक्षाकृत कुछ दीर्घ अवधि के लिए जारी रहना चाहिए।

22. **ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे कस्बों में औद्योगिक विकास :** यद्यपि ग्रामोद्योग, खादी, रेशम-कीट-पालन, नारियल-जटा, आदि उद्योग तथा काफी सीमा तक हथकरघा-उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों में ही स्थापित हैं, तथापि छोटे पैमाने के उद्योगों का विकास सामान्यत: शहरों या बड़े कस्बों के आस-पास ही हुआ है। चूंकि इस क्षेत्र के कार्यक्रमों का मुख्य लक्ष्य सारे देश में व्यापक रूप से आय और रोज़गार के अवसर प्रदान करना है, इसलिए तीसरी योजना में इन कार्यक्रमों के परिपालन में अधिक ज़ोर इस बात पर होगा कि ग्रामीण क्षेत्रों में, छोटे कस्बों में तथा ऐसे कम उन्नत क्षेत्रों में, जहां प्रचुर औद्योगिक सम्भावनाएं हैं, उद्योगों के अधिक विकास को प्रोत्साहन दिया जाए। इस दिशा में प्रथम पग के रूप में ऐसे क्षेत्रों का पता लगाना होगा, जहां तीसरी योजना में अन्य क्षेत्रों में हुए विकास के परिणामस्वरूप, बिजली, बड़े पैमाने पर कृषि-सम्बन्धी कच्चा माल, परिवहन के सुधरे हुए साधन, आदि बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध हो सकें। ऐसे ही क्षेत्रों में उद्योगों के विकास में सहायता देने के कार्यक्रम बनाए जाने चाहिए। 'सिंचाई और बिजली' के अध्याय में लघु उद्योगों के विकास-कार्यक्रम को गांवों में बिजली-विकास के कार्यक्रम के साथ जोड़ने पर बल दिया गया है। अन्य आवश्यक कदम विभिन्न प्रकार की सहायता देना होगा। यह सहायता प्रशिक्षण-सुविधाएं, ऋण, तकनीकी परामर्श, औज़ारों और मशीनों, आदि के रूप में ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे कस्बों में उद्योग स्थापित करनेवालों को समन्वित रूप से दी जानी चाहिए। ग्राम-समूहों के लिए केन्द्रीय ढंग के प्रशिक्षण-केन्द्र स्थापित करने, ग्रामीण कारीगरों को ऋण देने, सामान्य सुविधाओं से युक्त कारखाने खोलने और ग्रामीण बस्तियां बसाने के कार्यक्रमों को मूर्त रूप देते समय इस पहलू को ध्यान में रखा जाना चाहिए। योजना के अधीन साधनों का अधिक अच्छा उपयोग करने के लिए इस बात का प्रयत्न किया जाना चाहिए कि उस जगह अधिक सहायता प्रदान की जाए, जहां परिस्थितियां अपेक्षाकृत अधिक अनुकूल हों, और इस प्रकार कुछ ऐसे सफल केन्द्र स्थापित किए जाएं, जो आदर्श बन सकें और व्यापक विकास के लिए केन्द्रबिन्दु हों। इससे न केवल अपने सतत विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियों में ही लघु उद्योग के विकास को प्रोत्साहन मिलेगा, अपितु सम्बद्ध क्षेत्रों में समन्वित उद्योग के विकास में भी सहायता मिलेगी।

23. तीसरी योजना में परिकल्पित अनाजों, दालों और गन्ना तथा तेलहन-जैसी व्यावसायिक फसलों के उत्पादन में वृद्धि होने पर ग्रामीण क्षेत्रों में विधायन-उद्योगों के विस्तार के अवसर बढ़ जाएंगे। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को विविधतापूर्ण और सुदृढ़ बनाने तथा अधिक रोज़गार प्रदान करने की दृष्टि से यह वांछनीय है कि इन उद्योगों को सहकारिता के आधार पर विकेन्द्रित और छोटे पैमाने के उद्योग-क्षेत्र में अधिकतम सीमा तक विकसित किया जाए। बुनियादी सुविधाओं—यथा, बिजली, प्रशिक्षित श्रमिक और कच्चे तथा तैयार माल रखने

की सुव्यवस्था—से इन उद्योगों के संचालन को कमखर्चीला बनाने में मदद मिलेगी। ग्रामीण क्षेत्रों में जहां ये सुविधाएं फिलहाल उपलब्ध नहीं हो सकती हैं, ग्रामीण कारीगरों को इस बात के लिए सहायता दी जानी चाहिए कि वे सहकारिता के आधार पर कच्चे माल की खरीद एवं उसके संग्रह के लिए संगठन बनाएं, परिष्कृत तकनीकें अपनाएं और अपने उत्पादनों को बेचने की व्यवस्था करें।

24. **लघु उद्योगों का सहायक उद्योगों के रूप में विकास :** पहली और दूसरी योजना में इस बात के लिए प्रयत्न किए गए कि छोटे पैमाने के उद्योगों को बड़े उद्योगों के सहायक-रूप में विकसित किया जाए। कुछ हद तक ऐसे उद्योग स्वतः ही विकसित हो जाते हैं। एक विशेष समिति इस प्रकार के विकास को प्रोत्साहन देनेवाले विभिन्न तरीकों की जांच कर रही है। दूसरी योजना में बंगलौर की नई औद्योगिक बस्ती में स्थापित कुछ छोटी इकाइयों के उत्पादन को सार्वजनिक क्षेत्र की एक विशाल परियोजना—हिन्दुस्तान मशीनी औज़ार-कारखाना—के उत्पादन से जोड़ने का महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम हाथ में लिया गया। सुझाव रखा गया है कि इस प्रकार के कार्यक्रम सार्वजनिक और निजी, दोनों क्षेत्रों की कुछ अन्य परियोजनाओं में भी लागू करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाए। योजनाबद्ध विकास के लिए यह ज़रूरी है कि उद्योग की प्रत्येक शाखा में समाज की आवश्यकताओं को तथा बड़े पैमाने के उद्योगों की तुलना में छोटे उद्योगों के योगदान को और उत्पादन के विधायन तथा स्तरों के विकेन्द्रीकरण की सम्भावनाओं को व्यापक रूप से ध्यान में रखा जाए। पहली और दूसरी योजना की अवधि में कुछ छोटे और कुछ बड़े उद्योगों—यथा, सूती वस्त्र और कृषि-उपकरण—के उत्पादन-क्षेत्र की सीमा निर्धारित कर दी गई थी। कुछ अन्य उद्योगों—यथा, बाइसिकल, सिलाई-मशीन, स्टोरेज बैटरियां, आदि—में आवश्यकताओं का अनुमान लगाने के बाद बड़े पैमाने के और छोटे पैमाने के उद्योगों में उत्पादन के अलग-अलग लक्ष्य निर्धारित किए गए थे। बड़े और छोटे उद्योगों में समन्वय स्थापित करने के लिए प्रत्येक उद्योग के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से विचार किया जाना चाहिए। इस समय इस पहलू से जिन उद्योगों का अध्ययन किया जा रहा है, वे हैं—कृषि-उपकरण और मशीनें, मशीन और हाथ के औज़ार, बाइसिकल और बाइसिकल के पुर्ज़े, सिलाई की मशीन और सिलाई की मशीन के पुर्ज़े, मोटरगाड़ियों और डीज़ल इंजिन के पुर्ज़े, रेडियो-सेट और ऐम्प्लीफायर, खाल-कमाई और जूता-निर्माण, फल और सब्ज़ी-संरक्षण, सूती वस्त्र-मशीनों के पुर्ज़े, बिजली की मोटरें और बिजली के पंखे, रंग और वारनिश, स्टोरेज बैटरियां, कांच के वैज्ञानिक और घरेलू सामान, शल्यक्रिया और गणित के यन्त्र तथा प्लास्टिक के उत्पादन।

25. **औद्योगिक सहकारी समितियां :** हथकरघा और नारियल-जटा-जैसे उद्योगों में, जिनमें सहकारी समितियों के निर्माण में पर्याप्त प्रगति हुई है, तीसरी योजना में वर्तमान सहकारी समितियों की संगठन-सम्बन्धी और वित्तीय स्थिति को सुदृढ़ करने तथा अधिकाधिक कर्मचारियों को सहकारिता के क्षेत्र में लाने पर बल दिया जाना चाहिए। अन्य उद्योगों में सहकारी समितियां बनाने के लिए प्रयत्न होने चाहिए। इस दिशा में जो मुख्य उपाय सुझाए गए हैं, उनमें सीमित समय तक प्रबन्ध और अधीक्षण-कर्मचारी-वर्ग का खर्च उठाने के लिए वित्तीय सहायता, केन्द्रीय सहकारी वित्त-अभिकरणों-द्वारा प्राथमिक सहकारी समितियों से लिए जानेवाले सूद की दर के लिए सहायता-अनुदान, कर्मचारियों—विशेषतः औद्योगिक सहकारी समितियों के मध्य-स्तर क कर्मचारियों—के लिए प्रशिक्षण

की सुविधाओं का विस्तार और राज्यों के उद्योग या सहकारिता-विभागों में काम करनेवाले कर्मचारियों को, जो औद्योगिक सहकारी समितियों से व्यवहार करते हैं, सुसंगठित करना शामिल है। सहकारी समितियों के कार्यक्रमों के समन्वित परिपालन की गारंटी प्रदान करने के लिए केन्द्र में एक छोटा-सा केन्द्रीय संगठन भी स्थापित किया जा रहा है। कुछ चुने हुए क्षेत्रों में कतिपय शर्तों के साथ—जैसे, सहकारी आधार पर संगठित अनेक औद्योगिक इकाइयां एक जगह स्थापित हों, और साधनों का एक भाग जमा की जानेवाली राशियों से प्राप्त हो सके—अलग से औद्योगिक सहकारी बैंक स्थापित किए जा सकते हैं। छोटे पैमाने पर चलनेवाले उन उद्योगों के लिए, जहां उद्योग-संचालकों और भागीदारों का ही ज़ोर है, कच्चा माल प्राप्त करने और बेचने के लिए तथा तकनीकी ज्ञान और सूचनाओं के प्रसार, बहीखातों के रख-रखाव, आदि कार्यों के लिए औद्योगिक संघों के निर्माण को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

26. **समन्वय की व्यवस्था :** यद्यपि केन्द्रीय और राज्य-स्तर पर ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों के कार्यक्रमों के निर्माण एवं परिपालन में पृष्ठपेषण या दुहरेपन से बचने का यथासम्भव प्रयत्न किया जाता है, तथापि व्यवहार में प्रदर्शन एवं बिक्री-केन्द्रों, प्रदर्शनियों, प्रशिक्षण, आदि से सम्बद्ध मामलों में कुछ पृष्ठपेषण या पुनरावृत्ति हो ही जाती है। कार्यक्रम के परिपालन से सम्बद्ध विभिन्न मंडलों और अभिकरणों में समन्वय स्थापित करने के लिए नए उपाय खोजे जाने चाहिए। कार्यक्षेत्र-स्तर पर इस समन्वय की आवश्यकता का और अधिक अनुभव होता है। यह बात विशेष रूप से खादी और ग्रामोद्योगों के कार्यक्रमों पर लागू होती है, जहां राज्य-सरकारों, राज्य-खादी-मंडलों, पंजीकृत संस्थाओं और खंड-स्तर के कर्मचारियों की कार्रवाइयां बहुत अधिक समन्वित होनी चाहिए। कृषि, बिजली, परिवहन, आदि के क्षेत्र में विकास की जो दृष्टि प्रदान की गई है, उसे देखते हुए यह और भी आवश्यक है कि ग्रामीण उद्योगीकरण की सम्पूर्ण समस्या पर संयुक्त और सम्बद्ध रूप से विचार किया जाए। वर्तमान मंडलों के लिए सदा इस प्रकार का दृष्टिकोण अपनाना सम्भव नहीं भी हो सकता है, क्योंकि प्रत्येक का अपना अलग-अलग कार्यक्षेत्र है। खादी और ग्रामोद्योग-आयोग का ग्रामीण उद्योग-कार्यक्रम अभी केवल 12 परम्परागत उद्योगों तक ही सीमित है। ग्रामीण उद्योगीकरण के व्यापक कार्यक्रम के लिए प्रत्येक क्षेत्र के विकास के विविध पहलुओं को ध्यान में रखना होगा और इस बात का आश्वासन देना भी आवश्यक होगा कि स्थानीय योजनाओं को बनाने तथा उनके परिपालन में क्षेत्रीय या खंड-स्तर पर काम करनेवाली संस्थाओं और अभिकरणों का निकट सहयोग मिलेगा। यह सुझाव दिया गया है कि इस प्रश्न के विविध पहलुओं की राज्य-सरकारों और मंडलों से परामर्श करके जांच की जाए।

व्यय-व्यवस्था और आवंटन

27. तीसरी योजना में ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों के कार्यक्रमों के लिए 264 करोड़ रु० के व्यय का प्रस्ताव किया गया है, जबकि दूसरी योजना में इस मद में अनुमानित व्यय-राशि 180 करोड़ रु० से कुछ कम है। इस राशि में से 141 करोड़ रु० राज्यों और केन्द्र-शासित प्रदेशों के कार्यक्रमों के लिए तथा 123 करोड़ रु० केन्द्र और केन्द्र-द्वारा प्रणीत कार्यक्रमों और योजनाओं के लिए हैं। विभिन्न उद्योगों के लिए इस राशि का किस प्रकार वितरण किया गया है, यह अगली तालिका में प्रस्तुत है।

विभिन्न उद्योगों के लिए व्यय-व्यवस्था

(करोड़ रु०)

उद्योग		दूसरी योजना (अनुमानित व्यय)	तीसरी योजना की व्यय-व्यवस्था		
			राज्य और केन्द्र-शासित प्रदेश	केन्द्र	योग
हथकरघा-उद्योग	..	29.7	31	3	34
हथकरघा-क्षेत्र में बिजली-चालित करघे		2	—	4	4
खादी: परम्परागत				37	
अम्बर	..	82.4	3.4	32	92.4
ग्रामोद्योग				20	
रेशम-कीट-पालन-उद्योग	..	3.1	5.5	1.5	7
नारियल-जटा-उद्योग	..	2	2.4	0.8	3.2
हस्तशिल्प	..	4.8	6.1	2.5	8.6
छोटे पैमाने के उद्योग	..	44.4	62.6	22	84.6
औद्योगिक बस्तियां	..	11.6	30.2	—	30.2
योग	..	180*	141.2	122.8	264

इससे यह स्पष्ट है कि छोटे पैमाने के उद्योगों और औद्योगिक बस्तियों पर खर्च में पर्याप्त वृद्धि की व्यवस्था की गई है। हथकरघा, खादी और ग्रामोद्योगों का व्यय-स्तर दूसरी योजना से कुछ अधिक होगा।

28. ऊपर बताई गई व्यय-व्यवस्था के अतिरिक्त सामुदायिक विकास-कार्यक्रम में इन उद्योगों के विकास के लिए 20 करोड़ रु० की व्यवस्था है। विस्थापित व्यक्तियों के पुनर्वास, समाज-कल्याण, और पिछड़ी जातियों के कार्यक्रमों में भी इस प्रयोजन के लिए कुछ व्यवस्था है। यह भी आशा है कि निजी स्रोतों से, जिनमें बैंक भी शामिल हैं, इस मद में 275 करोड़ रु० की पूंजी लगाई जाएगी।

(4)
हथकरघा, खादी और ग्रामोद्योग

29. तीसरी योजना के विकास-कार्यक्रमों को अब तक प्राप्त हुए अनुभवों और पूर्वोल्लिखित मूल्यांकन-कार्यकारी दलों के निष्कर्षों तथा सुझावों के आलोक में तैयार किया गया है। खादी और ग्रामोद्योगों के क्षेत्र में कार्यक्रम के सामान्य सिद्धान्त में कुछ परिवर्तन कर दिया गया है। प्रत्येक कार्यक्रम के अधीन यह आवश्यक है कि भवन-निर्माण-सम्बन्धी एवं अन्य ऊपरी खर्चे कम-से-कम हों।

30. **हथकरघा और बिजली-चालित करघा-उद्योग :** तीसरी योजना की अवधि में हथकरघा-कार्यक्रम का उद्देश्य हथकरघा-बुनकरों को पूरे समय का रोज़गार देकर

*सम्भावित व्यय-परिमाण लगभग 175 करोड़ रु० है।

और सुधरी हुई तकनीकें लागू करके उत्पादन बढ़ाना है। बिक्री पर छूट—जो पहले ही 6 नए पैसे से घटा कर 5 नए पैसे कर दी गई है—और अन्य सहायता-अनुदानों के बदले क्रमशः ठोस सहायता पर बल दिया जाएगा, बुनकरों को सामान्य स्तर पर ऋण-सहायता दी जाएगी, जिससे सहकारी समितियों में अधिक हिस्सा-पूंजी के आधार पर संस्थात्मक अभिकरणों से अधिक रुपया उधार लेना उनके लिए सम्भव हो सके। इसके साथ ही परिष्कृत उपकरणों की आपूर्ति, जिनमें अर्द्धस्वचालित करघे भी शामिल हैं; विधायन और प्रशिक्षण की सुविधाओं; सुधरे हुए डिज़ाइनों के प्रयोग; और सहकारी कताई-मिलों से आवश्यक सूत की अधिकाधिक खरीद को उच्च प्राथमिकता दी जाएगी। कुछ कमज़ोर सहकारी समितियों को पुनः सबल बनाने और मार्गदर्शक आधार पर निर्यात की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सामान्य बुनाई-केन्द्रों के रूप में कुछ कारखाने खोलने का भी प्रताव है। हथकरघा-वस्त्र का निर्यात बढ़ाने के लिए भी कदम उठाए जाएंगे। हथकरघा-कार्यक्रम का अधिकांश भाग राज्य-सरकारों और केन्द्रशासित प्रदेशों के प्रशासनों-द्वारा पूरा किया जाएगा। जिन कार्यक्रमों को हथकरघा-मंडल स्वयं हाथ में लेगा, उनमें बम्बई, मद्रास, वाराणसी, कलकत्ता और कांचीपुरम् में पहले से स्थापित बुनकर-सेवा-केन्द्रों का विस्तार, और हथकरघा-टेक्नोलाजी तथा प्रचार-संस्थाओं का पुनर्गठन भी शामिल है।

31. बुनकरों की आर्थिक स्थिति सुधारने की दृष्टि से दूसरी योजना के आरम्भ में सहकारिता के आधार पर हथकरघों को बिजली-चालित करघों में बदलने का कार्यक्रम हाथ में लिया गया था। यह कल्पना की गई थी कि सन् 1956-58 के दो वर्षों में 35,000 बिजली-चालित करघे स्थापित हो जाएंगे, परन्तु इस दिशा में बड़ी मन्द प्रगति हुई और दूसरी योजना के अन्त तक स्वीकृत लगभग 13,000 हथकरघों में से केवल 3,500-4,000 ही स्थापित किए गए। शेष 9,000-9,500 करघे आगामी कुछ वर्षों में लगा दिए जाएंगे। हथकरघा-बुनकर-सहकारी समितियों से भिन्न संस्थाओं या लोगों-द्वारा बिजली-चालित करघों की स्थापना रोकने के लिए कारगर कदम पहले ही उठाए जा चुके हैं।

32. तीसरी योजना के अन्तिम वर्ष के लिए कपड़े का कुल उत्पादन-लक्ष्य 930 करोड़ गज़ निश्चित किया गया है। इसमें विकेन्द्रित क्षेत्र—हथकरघा, बिजली-चालित करघा और खादी-उद्योगों—का भाग 350 करोड़ गज़ है, जबकि सन 1960-61 में इनका उत्पादन लगभग 235 करोड़ गज़ ठहरा। आशा है कि अतिरिक्त उत्पादन में अधिक हिस्सा हथकरघा-उद्योग का होगा; परन्तु इन विभिन्न विभागों के बीच अभी तक कोई निश्चित बंटवारा नहीं किया गया है। प्रत्येक क्षेत्र में हुई प्रगति के आलोक में बीच-बीच में स्थिति की समीक्षा की जाएगी।

33. **खादी—परम्परागत और अम्बर :** दूसरी योजना की अवधि में उच्च कुशलता और अधिक उत्पादनवाले अम्बर चरखे के प्रचलन से, यह सोचा गया था कि परम्परागत खादी कम महत्त्वपूर्ण हो जाएगी और खादी के भावी विकास में अम्बर चरखा अधिक हिस्सा बंटाएगा। ये आशाएं पूरी तरह फलवती नहीं हुई। कताई करनेवालों के लिए अम्बर चरखे पर काम करना नई शुरुआत तो थी ही, परम्परागत चरखे से एकदम भिन्न भी थी। प्रारम्भ में जो अम्बर चरखे बनाए गए, उनमें कुछ त्रुटियां थीं। उनकी मरम्मत के काम को भी मांग के अनुसार संगठित नहीं किया जा सका। इन प्रारम्भिक कठिनाइयों के कारण अम्बर चरखे पर औसत रूप से वर्ष में 200 दिन (प्रति दिन 2 घंटे के हिसाब से) काम हुआ। औसत

उत्पादन प्रति दिन 1.8 गुंडी रहा। यह परिणाम पहले की गई आशा से बहुत कम था। पहले आशा की गई थी कि अम्बर चरखे पर वर्ष में काम के 300 दिनों में प्रति दिन 8 घंटे काम किया जा सकेगा और प्रति दिन का औसत उत्पादन 8 गुंडी होगा। (अम्बर चरखा जांच-समिति का अनुमान 6 गुंडी का था।) ये धारणाएं अपने-आप में भी वास्तविक नहीं थी, क्योंकि हाथ से कताई का काम सामान्यतः महिलाएं करती हैं और वह भी अंशकालिक काम के रूप में। फिर भी, अम्बर चरखे पर कताई करनेवालों की आय परम्परागत चरखे पर कातनेवालों की तुलना में बहुत अधिक है। अम्बर चरखे पर औसत वार्षिक आय जहां 52 रु० है, वहां परम्परागत चरखे से औसत आय केवल 35 रु० है। कुछ क्षेत्रों में अम्बर चरखे पर कताई से होनेवाली आय बढ़कर 80 और 100 रु० तक हो गई है जो कि अधिकांश खेतिहर श्रमिकों की औसत आय के बराबर है। अम्बर चरखे पर कातनेवालों को यह आय भी तब हुई है, जब अम्बर चरखे की प्रति गुंडी का मूल्य 2 आने है, और इसके मुकाबले परम्परागत चरखे से काती गई गुंडी का मूल्य $2\frac{3}{4}$ आने है। यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि कपास के मूल्य में वृद्धि होने के बावजूद, जिसके कारण मिलों का कपड़ा महंगा हो गया, खादी के कपड़ों का मूल्य बढ़ने नहीं दिया गया। दूसरी ओर, अम्बर और परम्परागत खादी का उत्पादन इतना अधिक बढ़ा कि दूसरी योजना के अन्तिम दो वर्षों में कपड़े का काफी बड़ा स्टाक इकट्ठा हो गया। उत्पादन को स्थानीय रूप से खपाने के साथ-साथ बिक्री बढ़ाने के लिए भी विशेष कदम उठाए गए।

34. तीसरी योजना में खादी का और अधिक विकास मुख्यतः खादी और ग्रामोद्योग-आयोग-द्वारा बनाए गए पुनर्गठन-कार्यक्रम के आधार पर किया जाएगा। इसमें कुछ चुने हुए सम्बद्ध क्षेत्रों या ग्राम-इकाइयों में समुचित ग्राम-विकास के लिए सघन प्रयत्न पर विशेष बल दिया जाएगा। प्रस्ताव है कि 3,000 ग्राम-इकाइयां, जिनमें से प्रत्येक एक ग्राम या 5,000 तक की जनसंख्यावाले ग्राम-समूहों का प्रतिनिधित्व करे, संगठित की जाएं। इसके लिए उन्हीं क्षेत्रों का चुनाव किया जाएगा, जिनमें पहले ही आयोग के सघन क्षेत्र-कार्यक्रम, या सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अधीन अब तक स्वैच्छिक संगठनों, पंजीकृत संस्थाओं और सहकारी समितियों-द्वारा कुछ काम किया जा चुका है। खादी के भावी विकास-कार्यक्रम की एक अन्य विशेषता स्थानीय योजनाओं का निर्माण होगा। इनका लक्ष्य अधिकतम-सम्भव स्थानीय आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए स्थानीय कामों में उपलब्ध साधनों का अधिकतम लाभ उठाना है। ये योजनाएं पंजीकृत संस्थाओं, सेवा-सहकारी समितियों और ग्राम-पंचायतों-द्वारा सम्पादित की जाएंगी। इस प्रकार, आयोग की जिम्मेदारी केवल वित्तीय और तकनीकी सहायता तथा प्रशिक्षण-सुविधाएं देने तक सीमित रहेगी और कार्यक्रमों का निर्माण एवं उनका सम्पादन राज्य-मंडलों एवं संस्थाओं पर तथा ग्राम-स्तर पर स्थानीय अभिकरणों पर छोड़ दिया जाएगा। ग्रामीण विकास-कार्य में संलग्न अन्य अभिकरणों के साथ तालमेल रखने के बारे में कुछ कदम उठाए भी गए हैं; परन्तु लोक-कार्य-क्षेत्र-जैसे कार्यक्रमों में जनता-द्वारा भाग लेने के कार्यक्रमों के साथ समन्वय की व्यवस्था अभी पूरी नहीं हुई है।

35. तीसरी योजना में खादी-कार्यक्रम का लक्ष्य क्रमशः शहरी बाजारों पर निर्भरता में कमी करना और स्थानीय उपयोग के लिए अधिक उत्पादन तथा कातने और बुनने की तकनीकों में सुधार करना है, जिससे उत्पादन और अर्जन में वृद्धि हो सके। खादी की किस्म में भी सुधार करने पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। आशा की जाती है कि तीसरी योजना

की समाप्ति तक कुल उत्पादित खादी का 40-50 प्रतिशत भाग स्थानीय बाज़ारों में खप जाएगा और मूल्यों में भी 15 से 20 प्रतिशत तक कमी आएगी। अम्बर चरखे में भी कुछ सुधार कर दिया गया है। आशा की जाती है कि इससे उत्पादन प्रति घंटा 1 गुंडी से बढ़ कर 1.5 गुंडी हो जाएगा। इन सुधारों की अभी आज़माइश हो रही है। हाथ से कते सूत और खादी की बिक्री बढ़ाने-सम्बन्धी कार्रवाइयों का सुझाव देने के लिए भी एक समिति नियुक्त की गई है।

36. परम्परागत चरखे का महत्त्व अभी बना रहेगा; परन्तु अम्बर चरखे को लोकप्रिय बनाने के लिए अधिक प्रयत्न किए जाएंगे। प्रस्ताव है कि पहले से वितरित 3.5 लाख अम्बर चरखों में से 2.5 लाख का उपयोग आरम्भ कर दिया जाए और ग्राम-इकाइयों में 3 लाख नए अम्बर चरखे प्रचलित किए जाएं। अम्बर चरखे की उत्पादकता को भी वर्तमान औसत 2 गुंडी से बढ़ा कर 4 गुंडी करना तथा ग्राम-इकाई-केन्द्रों में काम के समय को बढ़ाने के प्रयत्न जारी रहेंगे, ताकि तीसरी योजना की अवधि में वे औसतन वर्ष के 200 दिन 2 घंटे से, जो कि दूसरी योजना का औसत था, अधिक समय तक काम करें। जैसा कि पहले बताया गया है, विकेन्द्रित क्षेत्र के विभिन्न विभागों के लिए कपड़े के उत्पादन का कोई निश्चित बंटवारा नहीं किया गया है, परन्तु अभी खादी के लिए 16 करोड़ गज़ के लक्ष्य का अनुमान है।

37. **ग्रामोद्योग :** सामान्य तौर पर ग्रामीण कारीगर विभिन्न गांवों में, जो कि दूर-दूर बसे हैं, बिखरे हुए हैं। यह बात तथा उनकी अशिक्षा और निर्धनता विकास-कार्यक्रमों के द्रुत परिपालन में एक बहुत बड़ी बाधा है। ग्रामोद्योग-कार्यक्रमों की मन्द प्रगति के अन्य कारण हैं : इन उद्योगों के विकास के बारे में पूर्वानुभवों का अभाव, प्रशिक्षित और योग्यता-प्राप्त कर्मचारियों की कमी, उत्पादन-केन्द्रों की अनुपयुक्त स्थानों पर प्रतिष्ठा, पर्याप्त पूंजी का अभाव, बड़े पैमाने पर कच्चे माल के संग्रह के लिए संगठन की कमी और उत्पादन की अधिक उत्तम तकनीकों को अपनाने में विफलता। जो तकनीकी सुधार किए भी गए, उनसे उत्पादकता में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई। इसलिए उन्हें आम तौर पर नहीं अपनाया गया।

38. दूसरी योजना की अवधि में एक सघन क्षेत्र-कार्यक्रम लागू किया गया था, जिसका लक्ष्य समुचित ग्रामीण अर्थव्यवस्था के व्यापक प्रयत्नों के अंग-रूप में खादी और ग्रामोद्योगों का सघन विकास करना था। इस योजना को कार्यरूप देने के लिए बुनियादी इकाई लगभग 20,000 की जनसंख्यावाले 30-40 गांवों का एक चुना हुआ क्षेत्र था। इस कार्य में दृष्टिकोण यह रहा है कि ऐसी ग्राम-योजनाएं तैयार हों, जिनमें उपलब्ध समस्त जनशक्ति का तथा अन्य प्रसुप्त साधनों का उपयोग किया जा सके। इसलिए इस योजना के क्षेत्र में कुओं की खुदाई तथा बीजों और खाद के वितरण-द्वारा कृषि-उत्पादन में सुधार के उपाय, मकान, सड़कें और औषधालय, आदि के निर्माण-कार्य भी शामिल हैं। सितम्बर 1960 के अन्त में यह कार्यक्रम 65 सघन क्षेत्रों में और 18 पूर्व-सघन क्षेत्रों में चालू था। इस कार्यक्रम पर अमल करने से जो अनुभव प्राप्त हुए हैं, उनसे तीन मुख्य परिणाम निकलते हैं। पहली बात, गांवों में सुधारी हुई तकनीकों और मशीनी शक्ति के प्रचलन के लिए एक व्यापक क्षेत्र है तथा इस प्रचलन से जनशक्ति के पूर्ण नियोजन के सम्बन्ध में कोई कठिनाई पैदा नहीं होगी। इसका कारण यह है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में विकास की विशाल सम्भावनाएं हैं। दूसरी बात, उपयुक्त स्थानीय आयोजन और संगठन के द्वारा निष्क्रिय जनशक्ति को उत्पादक स्रोत में बदलना सम्भव है। तीसरी बात, यदि ग्रामोद्योगों के विकास को स्थायी

बनाना है, तो उसे सम्पूर्ण ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध करना होगा।

39. नवीन दृष्टिकोण और ऊपर बताए गए लक्ष्यों के अनुसार तीसरी योजना में ग्रामोद्योगों का कार्यक्रम सघन क्षेत्रों में मूर्त रूप देने के लिए और विशेष रूप से स्थानीय मांगों को पूरा करने के लिए बनाया गया है। सहायता के कार्यक्रम पहले की तरह जारी रहेंगे। परन्तु जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, वर्तमान सहायता-अनुदानों या कुछ ग्रामोद्योगों के उत्पादन पर दी जानेवाली बिक्री पर छूट का स्थान क्रमशः कम होनेवाले उपयुक्त प्रबन्ध-अनुदान ले लेंगे। इनमें से अनेक उद्योगों का स्वरूप सुधरी हुई तकनीकों के प्रयोग से तथा जहां कहीं बिजली उपलब्ध है, उसके प्रयोग से बदल जाने की आशा है, जो कि वांछनीय भी है ।

40. विभिन्न उद्योगों के कार्यक्रमों के कुछ महत्त्वपूर्ण विवरण इस प्रकार हैं :

(अ) धान की हाथ से कुटाई : यह प्रस्ताव किया गया है कि आंशिक उबालने की उन्नत विधियों को लागू किया जाए, उत्पादन के सुधरे तरीकों के लिए व्यक्तियों को प्रशिक्षित किया जाए, उन्नत उपकरणों के उत्पादन के लिए अनुसन्धान-कार्य को जारी रखा जाए और गोदामों का निर्माण किया जाए ।

चावल-मिल-उद्योग (नियमन) अधिनियम 1958 के अधीन राज्य-सरकारों को नई चावल-मिलें लगाने या बन्द मिलों को पुनः चालू करने के लिए लाइसेंस देने का अधिकार दिया गया है। यह व्यवस्था न केवल वर्तमान हाथ-कुटाई-उद्योग पर सम्भावित प्रभावों की दृष्टि से, अपितु इसके भावी विकास की दृष्टि से भी की गई है। यह भी नियम बना दिया गया है कि चावल-मिलों की क्षमता-वृद्धि की अनुमति देते समय सहकारिता के आधार पर चलनेवाली चावल-मिलों को प्राथमिकता दी जाए। इस अधिनियम के वास्तविक अमल से प्रकट हुआ है कि कुछ राज्यों में धान कूटने की नई क्षमता के लिए लाइसेंस प्रदान किए गए हैं और इस सम्बन्ध में कानून के मुख्य उद्देश्यों को पूरा नहीं किया गया है। प्रस्ताव किया गया है कि उत्पन्न समस्याओं पर आगे विचार किया जाए, ताकि कानून में जो नीतियां निर्दिष्ट की गई हैं, उन पर कारगर ढंग से अमल हो।

(आ) तेलहनों की पेराई : कार्यक्रम में तेलहनों का संग्रह और उनके वितरण की व्यवस्था, वर्तमान वर्धा-घानी में सुधार, और अधिक उत्पादकतावाले सस्ते नमूनों का विकास भी शामिल है। सुधरी हुई घानियां लोहारगीरी और बढ़ईगीरी के केन्द्रों में बनाने का प्रस्ताव है।

(इ) खाल-कमाई और चमड़ा : इस समय एक अध्ययन-दल खाल उतारने, उसे कमाने, खालों और चमड़े के वर्गीकरण और उनकी रंगाई के तरीकों में सुधार के व्यावहारिक सुझाव देने के लिए खालें उतारने और मुर्दे जानवर प्राप्त करने के वर्तमान केन्द्रों की कार्य-प्रणाली का अध्ययन कर रहा है। इस बीच खाल उतारने, मुर्दा जानवर प्राप्त करने और रंगाई में सुधार के लिए ज़ोरदार प्रयत्न प्रारम्भ कर दिए गए हैं। इस सघन विकास के लिए 200 केन्द्र खोलने का प्रस्ताव है।

(ई) दियासलाई : बाज़ार में बिकने योग्य अच्छी दियासलाइयों के निर्माण के उद्देश्य से तकनीकों और औज़ारों के स्वरूप में परिवर्तन किया जा रहा है। कुटीर दियासलाई-विशेष

जांच-समिति की सिफारिशों के अनुसार, 'डी' श्रेणी के 200 नए दियासलाई-उत्पादन-केन्द्र स्थापित करने का प्रस्ताव है।

(उ) **गुड़ और खांडसारी :** बिजली के प्रयोग को सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से विभिन्न आकारों की, हाथ अथवा पैर से चलाई जानेवाली सेंट्रीफ्युगल से युक्त, उत्पादन-इकाइयां स्थापित की जाएंगी। बिजली-चालित गन्ना पेरने के यन्त्र लगाने के लिए भी सहायता और प्रोत्साहन दिया जा रहा है।

(ऊ) **मधुमक्खी-पालन :** तीसरी योजना की अवधि में जहां कहीं भी सम्भव होगा, अधिक सघन ढंग से उद्योग का क्रमिक विस्तार करने पर बल दिया जाएगा। इस उद्योग के विकास का मुख्य दृष्टिकोण शहद-उत्पादन के बदले आनुषंगिक क्षेत्रों—जैसे फसल एवं फल, आदि—में सुधार करना होगा। कार्यक्रम में 44 क्षेत्रीय कार्यालयों और 975 उप-केन्द्रों की स्थापना तथा मधुमक्खी पालने के 94,500 डिब्बों का वितरण करने को कहा गया है।

(ए) **अन्य ग्रामोद्योग :** ताड़-गुड़, हाथ से बना कागज़, साबुन, रेशा, आदि-जैसे अन्य ग्रामोद्योगों के कार्यक्रम में उत्पादन-केन्द्रों की स्थापना और सुधरे हुए उपकरणों के वितरण की योजनाएं भी शामिल हैं। मेथेन गैस के उत्पादन के लिए कुछ केन्द्र स्थापित करने तथा चूना-उद्योग के विकास के लिए एक कार्यक्रम बनाने का भी प्रस्ताव है।

(5)
रेशम-उद्योग और नारियल-जटा-उद्योग

41. **रेशम-उद्योग :** रेशम-उद्योग के विकास-कार्यक्रम में उत्पादन के व्यय में कमी करने, उपयुक्त हाट-संगठन स्थापित करने और निर्यात बढ़ाने की सम्भावनाओं की खोज पर अधिक बल दिया जाएगा। कच्चे रेशम के उत्पादन-व्यय को बढ़ानेवाले मुख्य तत्त्व निरन्तर चलते रहनेवाले ढंग के हैं, अतः वर्तमान स्थिति में पर्याप्त सुधार करने के लिए तीसरी योजना की अवधि में संकल्प के साथ प्रयत्न करने होंगे। कच्चे रेशम के व्यय का 60 प्रतिशत शहतूत पर आता है। अतः यह आवश्यक है कि शहतूत की प्रति एकड़-उपज को, जो अभी बहुत कम है, बढ़ाया जाए। इस समय शहतूत की खेती के बहुत अल्प भाग को सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध हैं। शहतूत की खेती को अन्य लाभदायी नगदी फसलों से प्रतियोगिता भी करनी है। ऐसी स्थिति में पहला कदम यह होना चाहिए कि शहतूत की खेती को, सिंचाई तथा खाद, आदि के द्वारा प्रति एकड़-उत्पादन बढ़ा कर, लाभ का पेशा बना दिया जाए। कच्चे रेशम के उत्पादन-व्यय को प्रभावित करनेवाली अन्य महत्त्वपूर्ण बातें रोगमुक्त बीजों का वितरण और रेशम लपेटने के लिए अधिक उपयुक्त उपकरण हैं। तीसरी योजना में इन पहलुओं पर अधिक ध्यान दिया जाएगा। एक उपयुक्त बीज-संगठन विकसित करने का भी प्रस्ताव है, ताकि रोगमुक्त बीजों की आपूर्ति बढ़ाई जा सके। रेशम लपटने के उपकरणों के सम्बन्ध में, दूसरी योजना के कार्यक्रमों से यह अनुभव प्राप्त हुआ कि जहां कहीं परम्परागत चरखे के स्थान पर 'काटेज बेसिन' का प्रयोग किया गया, रेशम की किस्म में सुधार हुआ। तीसरी योजना में 'काटेज बेसिन' के प्रयोग को अपनाने के लिए और अधिक प्रोत्साहन दिया जाएगा। परम्परागत चरखे के स्थान पर 'काटेज बेसिन' का प्रयोग इसलिए भी सरल है, कि इससे रेशम लपेटने के विकेन्द्रित उद्योग पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जहां तक हाट-व्यवस्था

की सुविधाओं का सम्बन्ध है, तीसरी योजना में संगठित प्रयत्नों की आवश्यकता है, ताकि रेशम के कोयों और कच्चा रेशम, दोनों के लिए सहकारी हाट-व्यवस्था की सुविधाएं उपलब्ध हो सकें। इससे उत्पादकों की लागत कम हो सकेगी और कच्चे रेशम के अनुचित रूप से बढ़ते हुए मूल्यों पर रोक लग सकेगी। विदेशी बाज़ारों की प्रतियोगिता को ध्यान में रख कर प्राच्य रंग-ढंग और डिज़ाइनों के वस्त्र तैयार करके निर्यात-वृद्धि की सम्भावनाएं ढूंढ़नी होंगी। तीसरी योजना की अवधि में केन्द्रीय रेशम-मंडल और राज्य-सरकारों के प्रयत्न इन्हीं लक्ष्यों की पूर्ति के लिए होंगे। यह सम्भावना व्यक्त की गई है कि सन् 1960 के 36 लाख पौंड की तुलना में सन् 1965-66 में शहतूती और गैर-शहतूती रेशम का उत्पादन बढ़कर 50 लाख पौंड हो जाएगा।

42. **नारियल-जटा-उद्योग :** नारियल-जटा-उद्योग के उत्पादन के 55 प्रतिशत से कुछ अधिक भाग का निर्यात होता है। अतः तीसरी योजना के विकास-कार्यक्रम में मुख्य बल निर्यात को और बढ़ाने पर दिया जाएगा। उद्योग का आन्तरिक संगठन, जो प्रक्रियाओं—छिलका इकट्ठा करना, छिलके को नरम करना, जटा-रेशा तैयार करना और आसन, गलीचे, आदि माल तैयार करना—के आधार पर विकसित हुआ है, पर्याप्त समर्थ और दृढ़ नहीं है तथा इससे उद्योग को दृढ़ आधार पर उन्नत करने में कोई सहायता नहीं मिली है। विकास-कार्यक्रम की सफलता मुख्यतः जटा-रेशा तैयार करनेवाले प्राथमिक उत्पादकों को ठीक तरह से संगठित करने पर निर्भर करता है। सामान्यतः ये ऐसे व्यक्ति हैं, जिनके साधन बड़े अल्प हैं तथा जो एक ओर छिलका-व्यापारी और दूसरी ओर जूट का सामान और रेशा निर्यात करने-वालों के बीच पिसे रहते हैं। ये दोनों ही इस स्थिति में होते हैं कि उत्पादक की लाचारी का लाभ उठा सकें। इन छोटे उत्पादकों की कुछ प्राथमिक सहकारी समितियों का निर्माण भी किया गया, परन्तु उनमें से अनेक को घाटा उठाना पड़ा है। अतः यह आवश्यक है कि स्वस्थ विकास के लिए इन समितियों के कार्यों पर कठोर नियन्त्रण और अधीक्षण रखा जाए। जटा-सहकारी समितियों को सुदृढ़ बनाने के अतिरिक्त तीसरी योजना का एक महत्त्वपूर्ण कार्य पैर से चलनेवाली कताई की मशीनें उपलब्ध करना होगा, जिससे रेशे की किस्म सुधर सके और रंगाई की समुचित व्यवस्था हो। जटा-रेशा और अन्य उत्पादनों के पंजीकृत निर्माता-सह-निर्यातकर्त्ताओं को सहायता देने के लिए एक विशेष निर्यात-वृद्धि-योजना बनाई गई है। इस योजना के अनुसार गांठें बनाने के यन्त्र, सीसल का रेशा और रंग आयात करने की सुविधाएं दी जाएंगी। कार्यक्रम की अन्य महत्त्वपूर्ण बातें हैं: (1) नई वस्तुओं—यथा, कड़े और चटाइयों के रेशे, रस्सियां आदि के उत्पादन में नई विधियों को विकसित करना, नारियल के तने के रेशों और जटा-रद्दी को उपयोग में लाना और जटा-रेशे को अन्य वस्तुओं के रेशों या रबर-जैसी अन्य वस्तुओं के साथ मिला कर बनाना, और (2) चटाइयों और कड़े रेशों के निर्माण के लिए विशेष संयन्त्रों की स्थापना करना।

(6)
हस्तशिल्प

43. अखिल भारतीय हस्तशिल्प-मंडल पर 40 विभिन्न शिल्पों के विकास का दायित्व है। इनमें से 12 शिल्पों—यथा, कालीन, धातु के सजावटी सामान, हाथ से छपाई

हाथी-दांत, ज़री, लकड़ी का काम, कागज़ की लुगदी का सामान, नक्काशी का काम, बेंत, और उनसे सम्बद्ध शिल्प, गुड़िया और खिलौने, बर्तन और आभूषण——के विकास के लिए विशिष्ट कार्रवाइयां की जा रही हैं। इन शिल्पों के मामले में मंडल की सहायता विशेष शिल्प-समितियां करती हैं, जिनमें शिल्पियों, उत्पादकों, विक्रेताओं, निर्यातकर्त्ताओं और राज्य-सरकारों के प्रतिनिधि होते हैं। विगत वर्षों में जो काम हुआ, उसके फलस्वरूप विभिन्न शिल्पों की समस्याएं सामने आईं और उनसे अच्छी तरह निबटने के लिए तीसरी योजना की अवधि में विशेष कार्रवाइयां की जाएंगी। कुछ शिल्पों के क्षेत्र में प्रगति बहुत-कुछ कच्ची सामग्रियों के आयात और वितरण की व्यवस्था पर निर्भर करती है——जैसे, धातु के सजावटी बर्तन और हाथी-दांत का सामान। फिर, कुछ शिल्पों की प्रगति विधायन और डिज़ाइन में सुधार तथा कुछ आवश्यक तकनीकी समस्याओं के समाधान पर निर्भर करती है——जैसे, लकड़ी का काम, नक्काशी का काम, बर्तन और कागज़ की लुगदी का सामान। इसके अतिरिक्त, कुछ शिल्पों में——यथा, ज़री और पीतल के बर्तन में——किस्म के नियन्त्रण और निर्धारित विशिष्टताओं तथा मानकों के पालन पर प्रगति का दारोमदार होता है। सभी शिल्पों में कारीगरों का अधिक प्रभावशाली संगठन निरन्तर रोज़गार मिलते रहने, टेक्नोलाजी-विषयक सुधार लाने और अधिक सुविधाओं की उपलब्धता के निश्चय के लिए आवश्यक है। दूसरी योजना के अन्त तक हस्तशिल्प-सहकारी समितियों की संख्या सन् 1957-58 के लगभग 1,000 से बढ़कर 1,600 हो गई। हस्तशिल्प-प्रदर्शन-केन्द्र, जिनकी संख्या इस समय 115 है, सामान के लिए आर्डर देकर, तकनीकी परामर्श और कच्ची सामग्रियां देकर तथा ऋण की सुविधाएं उपलब्ध करके सहकारी समितियों के विकास में काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं। तीसरी योजना में इसी ढंग से कार्य-विस्तार होना चाहिए। हालांकि हस्तशिल्पों के क्षेत्र में विकास की मुख्य दिशा सहकारी समितियों के संगठन की होगी, फिर भी हस्तशिल्पों से सम्बद्ध नए छोटे उद्योग-संचालकों के संगठन बनाने की गुंजाइश रहेगी, ताकि व्यवसाय के उन्नत स्तर, किस्म पर नियन्त्रण तथा कारीगरों के लिए काम की अच्छी दशा का आश्वासन मिल सके।

44. देश-भर के कारीगरों को दूसरी योजना-अवधि में दिल्ली, बम्बई, बंगलौर और कलकत्ता में स्थापित 4 प्रादेशिक डिज़ाइन-विकास-केन्द्रों के परिणामों से अवगत कराने के उद्देश्य से उन चुने हुए क्षेत्रों में डिज़ाइन-विस्तार-केन्द्र का प्रस्ताव है, जहां काफी संख्या में शिल्पी रहते हैं। जो अन्य उपाय काम में लाए जाएंगे, उनमें बाज़ार-अनुसन्धान, अन्तः-राज्यीय हाट-व्यवस्था की उन्नति, मानकों और विशिष्टताओं का निर्धारण तथा प्रदर्शन-केन्द्रों की व्यवस्था, बिक्री-कला और सजावट-सम्बन्धी प्रशिक्षण-सुविधाओं का विस्तार शामिल है। विभिन्न हस्तशिल्पों में प्रयुक्त होनेवाले उपकरणों और तकनीकों का अध्ययन करने और समुचित सुधार सुझाने के लिए एक केन्द्रीय हस्तशिल्प-विकास-केन्द्र हाल में ही स्थापित किया गया है। कुछ शिल्पों के लिए सामान्य सुविधा-केन्द्र भी स्थापित किए गए हैं, जिनका तीसरी योजना की अवधि में विस्तार करने की आवश्यकता होगी। सर्वेक्षण कराने और प्रशिक्षण तथा प्रयोग की व्यवस्था के उद्देश्य से कालीन, हाथ से छपाई, बांस और बेंत का काम, धातु के सामान, कशीदाकारी और विभिन्न कढ़ाई-शिल्पों के लिए शिल्प-संस्थाओं की स्थापना का प्रस्ताव रखा गया है। हस्तशिल्पों के निर्यात-विस्तार की काफी गुंजायश है, खास कर किस्म-नियन्त्रण, जहाज़ पर लादने से पहले जांच, कच्ची सामग्रियों

की व्यवस्था, हस्तशिल्प की वस्तुओं के निर्यातकर्त्ताओं के लिए ऋण-विषयक तथा अन्य सेवाओं की व्यवस्था, विदेशों से आर्डर की प्राप्ति तथा नए बाज़ारों के विकास के लिए अधिक प्रचार के द्वारा इन कार्यक्रमों को आगे बढ़ाया जाना चाहिए। अतीत में हस्तशिल्प मुख्यतः विदेशी बाज़ारों और ऊंची आयवाले लोगों की आवश्यकताएं पूरी करते थे। अब निर्यात के अतिरिक्त, हस्तशिल्पों के उत्पादन को ऐसा रूप देना है कि देश के अन्दर विभिन्न आय-वर्गों के खरीदारों की ज़रूरतें पूरी हो सकें और ग्रामीण शिल्पों की उन्नति तथा विकास हो।

(7)

छोटे पैमाने के उद्योग

45. दूसरी योजना के विकास-कार्यक्रमों का एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण अंग छोटे पैमाने के उद्योगों का विकास था। यह बात पृथक्-पृथक् छोटे उद्योगों से प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट हो जाती है। उदाहरण के लिए, सन् 1956-60 के बीच बाइसिकलों के उत्पादन में संलग्न छोटे पैमाने की इकाइयों की संख्या 44 से बढ़कर 150 हो गई। इसी प्रकार, सिलाई-मशीन, मशीनी औज़ार, बिजली के मोटर और बिजली के पंखे के क्षेत्र में ये संख्याएं क्रमशः 35 से 75, 344 से 500, 6 से 74 और 22 से 47 रहीं। छोटे पैमाने के उद्योग-क्षेत्र में बाइसिकलों का उत्पादन सन् 1956 के 25,500 से बढ़कर सन् 1960 में 2,28,000 हो गया और सिलाई-मशीनों का 23,600 से बढ़कर 52,000। अवर्गीकृत मशीनी औज़ारों का, जिनका उत्पादन छोटे पैमाने की इकाइयों में हुआ, मूल्य सन् 1956 के 1.3 करोड़ रु० से बढ़कर सन् 1960 में 4 करोड़ रु० हो गया। रंजक सामान और प्लास्टिक की वस्तुओं के लिए उत्पादन की अनेक नई इकाइयों की स्थापना हुई है। इसमें बहुत कम सन्देह की गुंजायश है कि तीसरी योजना में अर्थव्यवस्था के विकास की जो कल्पना की गई है, उससे विद्यमान और नए छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए काफी बड़े अवसर उपलब्ध होंगे। इस क्षेत्र के विकास-कार्यक्रमों का इस तरह नवीकरण और संगठन किया जाना चाहिए कि छोटे पैमाने की इकाइयां इन अवसरों का पूरा-पूरा लाभ उठा सकें।

46. दूसरी योजना की अवधि में छोटे पैमाने के उद्योगों को तकनीकी परामर्श और जानकारी तथा ऋण-विषयक एवं अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए कई कदम उठाए गए। इन कार्रवाइयों का और भी विस्तार करना होगा, ताकि तीसरी योजना में निर्धारित कहीं बड़े लक्ष्य पूरे हो सकें। उत्पादन में वृद्धि और उसे विविधतापूर्ण बनाने के अलावा तीसरी योजना के कार्यक्रमों का लक्ष्य अनेक उद्योगों के क्षेत्र में छोटे पैमाने तथा बड़े पैमाने की इकाइयों के बीच अधिक निकट सम्बन्ध स्थापित करना तथा सहायक उद्योगों के रूप में छोटे उद्योगों का विकास होना चाहिए। छोटे उद्योगों को, जिनकी प्रवृत्ति अभी बड़े नगरों और कस्बों में जमने की है, यथासाध्य छोटे कस्बों और गांवों में स्थापित और विकसित किया जाना चाहिए। फिर, जहां तक सम्भव होगा, उत्पादन, कच्ची सामग्रियों की खरीद और वितरण, सामान्य सुविधाओं की व्यवस्था, विभिन्न पुर्ज़ों और अंगों को जोड़ने, उत्पादनों की बिक्री-व्यवस्था तथा भारी परिमाण में आर्डर प्राप्त करने के लिए सहकारी समितियां स्थापित करने के हेतु भी विशेष प्रयत्न किए जाएंगे। सहकारी समितियों के साथ-साथ हर उद्योग की छोटे पैमाने की इकाइयों के व्यापार-संघ भी काफी उपयोगी साबित हो सकते हैं। तीसरी योजना के विकास का एक अनिवार्य पहलू दो पालियों की

व्यवस्था अपनाकर तथा ज़रूरी कच्ची सामग्रियों की व्यवस्था करके उपलब्ध क्षमता का अधिकाधिक उपयोग करना होगा।

47. दूसरी योजना की अवधि में, केन्द्र और राज्यों में छोटे पैमाने के उद्योगों के विकास-सम्बन्धी संगठन को सशक्त किया गया है। अब इसमें 16 लघु उद्योग सेवा-संस्थाएं हैं, जिनकी 4 शाखा-संस्थाएं और 53 विस्तार-केन्द्र हैं। इन सबमें अभी अधिकारी-वर्ग के 300 तथा अन्य वर्गों के 1,500 तकनीकी और विशेष प्रशिक्षण-प्राप्त कर्मचारी नियुक्त हैं। राज्यों के उद्योग-विभागों में भी अब कर्मचारियों, आदि की काफी अच्छी व्यवस्था है। सामुदायिक विकास-कार्यक्रम-द्वारा सेवित आधे से अधिक विकास-खंडों में उद्योग के लिए विस्तार-अधिकारी नियुक्त हैं। लघु उद्योग सेवा-संस्थाओं ने लगभग 60 लघु उद्योगों और 102 विभिन्न क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया है। कई जिलों में छोटे पैमाने के उद्योगों के विकास की सम्भावनाओं का विशिष्ट अध्ययन किया गया है। समय-समय पर छोटे पैमाने के पृथक्-पृथक् उद्योगों के सर्वेक्षण से भी योजनाबद्ध विकास में भौतिक सहायता प्राप्त हो सकती है। कुछ उद्योगों के लिए 'सम्भावना-पत्र' तैयार किए जा रहे हैं। कुछ आदर्श योजनाएं भी तैयार की गई हैं। नए उद्योग आरम्भ करने के लिए इस तरह का मार्गदर्शन नए उद्योगपतियों, कारीगरों की सहकारी समितियों और शिक्षित युवाजनों को सुलभ किया जाना चाहिए। दूसरी योजना की अवधि में प्रशिक्षण-सुविधाओं के विस्तार के लिए जो कार्यक्रम हाथ में लिया गया, उसमें व्यवसाय-प्रबन्ध एवं इंजीनियरी तथा गैर-इंजीनियरी व्यवसायों में प्रशिक्षण के अतिरिक्त ज़िला-उद्योग-अधिकारियों तथा खंड-स्तरीय विस्तार-अधिकारियों के लिए प्रशिक्षण भी शामिल था। कारीगरों को मशीन-संचालन का प्रशिक्षण काफी हद तक चलती-फिरती कर्मशाला-गाड़ियों ने दिया। हर क्षेत्र में, राज्य-उद्योग-विभाग तथा अन्य अभिकरणों के सहयोग से, वर्तमान सुविधाओं का तीसरी योजना की अवधि में और विस्तार किया जाएगा।

48. दूसरी योजना में लघु उद्योगों के विकास के लिए आवश्यक संगठन-निर्माण के अलावा ऋण-व्यवस्था, मशीनों की आपूर्ति और हाट-व्यवस्था तथा सामान-खरीद के विकास की सुविधाएं सुलभ करने की दिशा में प्रगति हुई। तीसरी योजना में इन सब दिशाओं में काफी विस्तार की बात सोची गई है और मुख्य लक्ष्य यह रखा गया है कि सहकारी समितियों, छोटे उद्योग-संचालकों तथा नए-नए प्रवेश करनेवालों को अधिक सुविधाएं प्राप्त हों। हालांकि स्टेट बैंक ऑफ इंडिया-द्वारा शुरू की गई योजना और रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया-द्वारा बैंक-ऋणों के लिए दी जानेवाली गारंटियों के माध्यम से ऋण-सुविधाएं सुलभ करने के क्षेत्र में शुरुआत कर दी गई है, फिर भी आम व्यावसायिक बैंकों-द्वारा छोटे उद्योगों को ऋण दिए जाने का क्षेत्र काफी व्यापक है। इसी प्रकार, राज्य-वित्त-निगम भी छोटे पैमाने के उद्योगों को काफी सहायता पहुंचा सकते हैं। राष्ट्रीय लघु उद्योग-निगम ने किस्त पर खरीद के आधार पर 4.2 करोड़ रु० की मशीनों का वितरण किया है। इसमें से 1 करोड़ रु० की मशीनें सन् 1960-61 में दी गईं। इस योजना का विस्तार करना और अपेक्षाकृत अधिक सहकारी समितियों तथा छोटे उद्योग-संचालकों को किस्त पर खरीद की सुविधाओं के उपभोग के लिए अवसर देना सम्भव होना चाहिए। राज्य-सरकारों और उनके विभिन्न अभिकरणों-द्वारा किस्त पर खरीद की सुविधाओं के विस्तार से छोटे पैमाने के उद्योगों के विकास में मदद मिलेगी। सामान-खरीद की नीतियों से छोटी इकाइयों के उत्पादन में वृद्धि तथा नई चीज़ों के उत्पादन के विकास,

दोनों क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण सहायता प्राप्त होगी। इस प्रकार, कुटीर और छोटे पैमाने के उद्योगों से केन्द्रीय सरकार-द्वारा की गई खरीद की राशि सन् 1953-54 के 74 लाख रु० से बढ़कर सन् 1960-61 में 6 करोड़ रु० हो गई। यदि खरीद के सम्बन्ध में काफी पहले से योजना बना ली जाए और साथ ही अच्छी तरह तैयार किए गए विकास-कार्यक्रम कार्यान्वित किए जाएं, तो सामान-खरीद के लाभ काफी हद तक बढ़ सकते हैं। सामान-खरीद-नीतियों और सम्बद्ध कार्यक्रमों का व्यापक रूप से राज्यों और केन्द्र में विकास होना चाहिए।

49. तीसरी योजना में छोटे पैमाने के उद्योग के क्षेत्र में जिन कार्रवाइयों की बात सोची गई है, उनमें से एक उल्लेखनीय कार्रवाई विद्यमान क्षमता के पूर्णतर उपयोग में सहायता पहुंचाने के उद्देश्य से छोटी इकाइयों को कच्ची सामग्रियां देने के लिए भांडारों की स्थापना है। अतिरिक्त प्रोटोटाइप-उत्पादन और प्रशिक्षण-केन्द्रों की स्थापना करके छोटी मशीनों के निर्माण-सम्बन्धी प्रशिक्षण-सुविधाओं का विस्तार किया जाएगा। एक औद्योगिक डिज़ाइन-संस्था स्थापित करने तथा पुरस्कारों एवं अन्य उपायों से आविष्कार करने के लिए प्रोत्साहन देने का भी प्रस्ताव है। कुछ उत्पादनों के लिए उत्कृष्टता के चिह्न देने की योजनाओं को भी—जैसी कि दूसरी योजना की अवधि में कुछ राज्यों में आरम्भ की गई थी—अधिक विकसित करने का विचार है। कुछ राज्यों ने अभी हाल में औद्योगिक बस्तियों की स्थापना तथा कच्ची सामग्रियों के भांडारों और सामान्य सेवा-सुविधा-केन्द्रों के संचालन के लिए लघु उद्योग-निगमों की स्थापना की है। कुछ अन्य राज्यों में भी ऐसे ही निगम स्थापित करने की बात सोची जा रही है।

50. **औद्योगिक बस्तियां :** दूसरी योजना में औद्योगिक बस्तियां बसाने का कार्यक्रम बड़ा लोकप्रिय रहा और लगभग 60 बस्तियां बसाई गई। यद्यपि इनमें से अनेक बस्तियां अपने मुख्य लक्ष्य—कारखाने के लिए उपयुक्त स्थान प्रदान करने और काम को कुशलता-पूर्वक करने के लिए अनुकूल स्थिति प्रदान करने—में सफल हो गई, तथापि कुछ में व्यय बहुत हुआ और रोज़गार के जो नए अवसर उपलब्ध हुए, वे पर्याप्त नहीं हैं। फिर, चूंकि अधिकांश औद्योगिक बस्तियां बड़े-बड़े नगरों के निकट बसाई गई हैं, इसलिए नए उद्योग-केन्द्रों की स्थापना का लक्ष्य एक सीमित मात्रा में ही पूरा हुआ है।

51. ऊपर वर्णित 60 औद्योगिक बस्तियों के अतिरिक्त अन्य 60 औद्योगिक बस्तियां ऐसी हैं, जिनके लिए दूसरी योजना में स्वीकृति दे दी गई थी या काम शुरू हो गया था। इनके पूरे होने में कुछ समय लगेगा। तीसरी योजना में विभिन्न आकार और प्रकार की 300 नई बस्तियां स्थापित करने का प्रस्ताव है। इनको यथासम्भव छोटे और मध्यम आकार के कस्बों के निकट स्थापित किया जाएगा। यह भी विचार है कि कुछ औद्योगिक बस्तियां कुछ चुने हुए ग्रामीण क्षेत्रों में, जहां बिजली, पानी एवं अन्य आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध हैं या आसानी से उपलब्ध हो सकती है, स्थापित की जाएं। गांवों की औद्योगिक बस्तियों में मुख्यतः ऐसे कारखाने होंगे, जो कारीगरों के प्रयोग के लिए होंगे। इनमें कुछ सामान्य सेवा-सुविधाएं होंगी तथा नियमित कारखानों की संख्या बहुत सीमित होगी। इस बात को ध्यान में रखा जाएगा कि ऐसी औद्योगिक बस्तियां उन्हीं स्थानों पर स्थापित की जाएं, जहां कारीगरों और शिल्पकारों की संख्या काफी है, और जो सुधरी हुई तकनीकों, अच्छे औजारों और अपेक्षाकृत आधुनिक सुविधाओं का लाभ उठाने की स्थिति में हैं।

52. एक दृष्टि यह भी है कि उपयुक्त स्थानों पर, विशेषतः बड़े नगरों और कस्बों के निकट, केवल औद्योगिक बस्ती के स्थान को विकसित कर देना चाहिए और वहां कारखानों के शेड बना कर देने के बदले प्लाट ही छोटे उद्यमियों को दे देने चाहिए, जिस पर वे अपने कारखाने स्वयं बनाएं। छोटे आनुषंगिक उद्योगों के विकास के लिए यह प्रस्ताव किया गया है कि छोटी इकाइयों को विशेष प्रयोजन के लिए स्थान प्रदान करने के लिए कुछ 'कार्य-संचालन बस्तियां' बसाई जाएं, जिनमें बड़े उद्योगों से सम्बद्ध सहायक माल तैयार किया जाए। कुछ चुने हुए विश्वविद्यालयों में भी मार्गदर्शक आधार पर कुछ औद्योगिक बस्तियां स्थापित करने का विचार है। इससे छात्र पढ़ते हुए जहां कुछ अर्जन कर सकेंगे, वहीं उन्हें प्रशिक्षण भी प्राप्त होगा और भविष्य में वे अपना उद्योग स्वयं प्रारम्भ कर सकेंगे। योजना की परियोजनाओं-विषयक समिति-द्वारा नियुक्त एक दल ने औद्योगिक बस्तियों के सामान्य ले-आउट और कारखानों के भवनों के निर्माण में मितव्ययिता लाने के लिए अनेक सुझाव दिए हैं। तीसरी योजना में नई औद्योगिक बस्तियां स्थापित करते समय इन सुझावों का पालन किया जाएगा।

नियोजन

53. तीसरी योजना के कुल पूंजी-विनियोग के आधार पर, जिसमें सरकारी क्षेत्र और निजी क्षेत्र की पूंजी भी सम्मिलित है, यह अनुमान लगाया गया है कि ऊपर इस अध्याय में ग्रामोद्योग और लघु उद्योगों के विकास-कार्यक्रमों की जो रूपरेखा प्रस्तुत की गई है, उससे लगभग 80 लाख व्यक्तियों को अंशकालिक या अर्द्धरोज़गार तथा लगभग 9 लाख व्यक्तियों को पूरे समय का रोज़गार मिल सकेगा। खादी-उत्पादन के कार्यक्रमों में अधिकांश रूप से अंशकालिक रोज़गार ही मिलेगा। हथकरघा-उद्योग, हथकरघा-क्षेत्र के बिजली-चालित करघों, ग्रामोद्योगों, रेशम के कीड़े पालने के उद्योग और नारियल-जटा-उद्योग में जो लोग पहले से काम कर रहे हैं, उनको और अधिक समय के लिए रोज़गार मिल सकेगा। छोटे पैमाने के उद्योगों के कार्यक्रमों में, जिनमें औद्योगिक बस्तियां, हस्तशिल्प और कुछ सीमा तक कुछ अन्य उद्योग भी शामिल हैं, मुख्यतः पूरे समय का रोज़गार मिलने की आशा है।

निर्यात

54. नारियल के जटा-रेशों और उससे निर्मित वस्तुओं, हथकरघा के वस्त्रों एवं हस्तशिल्प के सामान का औसत वार्षिक निर्यात लगभग 21 करोड़ रु० के मूल्य का है। कई दिशाओं में छोटे पैमाने के उद्योगों के उत्पादनों ने भी निर्यात में योगदान करना आरम्भ कर दिया है। उदाहरणस्वरूप, दूसरी योजना की अवधि में छोटी इकाइयों-द्वारा निर्मित चमड़े के 6,00,000 जोड़े जूतों का निर्यात किया गया। हाल में सूती होज़ियरी सामान, खेल के सामान, निर्माण-सामग्रियां, चमड़े के माल, डिब्बाबन्द फल और सब्ज़ियां तथा अन्य उत्पादन निर्यात-वृद्धि के लिए चुने गए हैं। छोटे उद्योगों के उत्पादनों के लिए स्थायी एवं विस्तारशील बाज़ार मिलना सम्भव होना चाहिए। फिर भी, यह आवश्यक है कि माल में सुधार एवं उसकी किस्म के मानक-निर्धारण, उत्पादन-व्यय में कमी, नए-नए डिज़ाइन खोजने और उत्पादन के समुचित संगठन पर अधिक बल दिया जाए। विदेशी खरीदारों में विश्वास पैदा करने के लिए वस्तु

की कोटि चिह्नित करने की योजना बड़ी उपयोगी सिद्ध हो सकती है तथा जहा कही सम्भव, हो, इसको लागू करना चाहिए ।

अंक-संकलन

55. यद्यपि अतीत में विभिन्न अभिकरणों और संगठनों-द्वारा अनेक उद्योगों और विशेष क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया गया, तथापि सारे देश के लघु उद्योगो के सम्बन्ध मे बुनियादी आंकड़ों-सम्बन्धी विवरण, जो कि कार्यक्रमों के संख्यात्मक प्रभाव का आकलन करने और नई योजनाएं बनाने के लिए आवश्यक है, उपलब्ध नही है । यह आशा की जाती है कि सन् 1961 की जनगणना से औद्योगिक इकाइयों की पूरी सूची उपलब्ध हो सकेगी । यह प्रस्ताव है कि इसे आधार बना कर प्रति दूसरे वर्ष सर्वेक्षण किया जाए, जिसमे वे सब इकाइया (चाहे बिजली से चलनेवाली हों या बिना बिजली के) भी आ जाएं, जिनमें 10 या इसस अधिक कर्मचारी काम करते है और जिनमें 5 लाख रु० से अधिक की पूजी नही लगी है ।

उद्योग

दो योजनाओं की अवधि में हुई प्रगति की समीक्षा

पिछले दशक में भारत में एक औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ है। इस अवधि में उद्योगों की अभिवृद्धि और विविधता काफी उल्लेखनीय रही है तथा दूसरी योजना के पांच वर्षों में इस क्षेत्र में विशेष तेज़ी से प्रगति की गई है। इस अल्प अवधि में सरकारी क्षेत्र में दस-दस लाख टन की क्षमतावाले तीन नए इस्पात-कारखानों का निर्माण-कार्य पूरा हुआ है और निजी क्षेत्र के पहले से विद्यमान दो इस्पात-कारखानों की क्षमता दुगुनी की गई है, ताकि वे क्रमशः 20 लाख टन और 10 लाख टन इस्पात की सिल्लियां तैयार कर सकें। भारी बिजली-सामान और भारी मशीनी औज़ार-उद्योगों तथा भारी मशीन-निर्माण और भारी इंजीनियरी की अन्य शाखाओं की नींव रख दी गई है एवं सीमेंट तथा कागज़-उद्योगों के लिए मशीनों का उत्पादन पहली बार प्रारम्भ किया गया है। रासायनिक उद्योगों के क्षेत्र में व्यापक आधार पर प्रगति हुई है और न केवल नत्रजनयुक्त उर्वरकों, कास्टिक सोडा, सोडा ऐश और गन्धक-अम्ल, आदि आधारभूत रासायनिक पदार्थों के बड़े कारखाने बने हैं तथा उनका उत्पादन बढ़ा है, बल्कि यूरिया, अमोनिया फास्फेट, पेनिसिलीन, संश्लिष्ट रेशे, औद्योगिक विस्फोटक पदार्थ, पोलिथिलीन, अखबारी कागज़ और रंजक पदार्थ, आदि-जैसे अनेक नए उत्पादनों का निर्माण भी आरम्भ हुआ है। बाइसिकल, सिलाई की मशीन, टेलीफोन, बिजली का सामान, वस्त्र और चीनी की मशीन, आदि अन्य अनेक उद्योगों का भी उत्पादन काफी बढ़ा है। कारीगरों ने नए-नए काम सीखे हैं। और दूसरी ओर औद्योगिक व्यवस्थापकों का एक विशाल और विकासशील वर्ग भी तैयार हुआ है। सब मिला कर पिछले दस वर्षों में संगठित उद्योगों का उत्पादन लगभग दुगुना हो गया है। औद्योगिक उत्पादन का सूचनांक, जो सन् 1950-51 में 100 था, सन् 1960-61 में बढ़कर 194 हो गया।

2. किन्तु केवल तथ्यों के इस वर्णन से वास्तविक प्रगति के प्रति ठीक न्याय नहीं हो सकता। विशाल नए इस्पात-कारखानों, बड़ी-बड़ी नई खुली खानों, नए औद्योगिक नगरों और देश के मुख्य नगरों के इर्द-गिर्द सिर उठानेवाले विभिन्न कारखानों को देखने से आंखों के सामने औद्योगिक गतिविधियों की विशालता की कहीं अधिक प्रभावकारी तसवीर खिंच जाती है। समग्र औद्योगिक दृश्य पर दृष्टिपात करने के बाद निष्पक्ष विशेषज्ञों ने यह स्वीकार किया है कि बहुत अल्प अवधि में भारत ने बहुत अधिक प्रगति की है, और उनकी राय में औद्योगिक आधार का विस्तार एवं निर्माण-उद्योगों की साहसिकता दूसरी योजना के प्रारम्भ के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था का सर्वाधिक आश्चर्यजनक परिवर्तन है।

3. इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि औद्योगिक क्षेत्र में बड़ी दूरगामी प्रगति की गई है। किन्तु साथ ही यह भी स्वीकार करना होगा कि भले ही यह प्रगति कम न हो, परन्तु आम जनता की सामान्य स्थिति पर गहरा प्रभाव डालने या अर्थव्यवस्था के ढांचे को आमूलचूल बदलने के लिए इतना ही पर्याप्त नहीं है। इसके अतिरिक्त, देश ने जो औद्योगिक लक्ष्य

निर्धारित किए थे, उनकी तुलना में कुछ मामलों में हम काफी पीछे रह गए है । इस प्रकार, यद्यपि दूसरी पंचवर्षीय योजना में तीन नए इस्पात-कारखानों की स्थापना अपने-आप में एक अत्यन्त प्रभावकारी उपलब्धि थी, तथापि सन् 1960-61 में उनका कुल उत्पादन केवल 6 लाख टन था, जबकि लक्ष्य 20 लाख टन का था । इसी प्रकार, टाटा ग्रायरन एंड स्टील वर्क्स (टिस्को) का भी उत्पादन दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए निर्धारित लक्ष्य से कम हुआ। इन पांच वर्षों में उसका बिक्री-योग्य इस्पात का कुल उत्पादन केवल 45 लाख टन हुआ, जबकि तटकर-आयोग ने सन् 1955 में 52 लाख टन उत्पादन की बात कही थी । उर्वरकों के क्षेत्र में भी यही स्थिति रही । सरकारी क्षेत्र में सिन्दरी के उर्वरक-कारखाने और निजी क्षेत्र में वाराणसी की अमोनियम क्लोराइड-परियोजना के विस्तार-कार्य को निर्धारित तिथि के बाद 12 से 18 महीने तक भी पूरे नहीं हो सके और उन्हें अपनी पूर्ण क्षमता के उत्पादन की स्थिति में पहुंचने में गम्भीर प्रारम्भिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है । नंगल, नइवेली और राउरकेला में सरकारी क्षेत्र में खुलनेवाले तीन नए उर्वरक-कारखानों के मामले में भी एक या दो वर्ष की देर हो गई है । योजना यह थी कि ये तीनों कारखाने सन् 1960-61 में न्यूनाधिक पूरा उत्पादन करने लगेंगे, किन्तु इनमें से नंगल-कारखाना जनवरी 1961 में आंशिक उत्पादन प्रारम्भ कर सका और शेष दो कारखाने अभी तक निर्माण की ही अवस्था में है । इन कारखानों और भोपाल की भारी बिजली-सामान-परियोजना के मामले में विलम्ब का मुख्य कारण विदेशी मुद्रा की कठिनाई है । किन्तु भारी मशीनों, खान में काम आनेवाली मशीनों तथा ढलाई/गढ़ाई-परियोजनाओं के बारे में यह बात नहीं कही जा सकती । ये तीनों परियोजनाएं, जिन्हें अब तक निर्माण की दृष्टि से काफी आगे बढ़ जाना चाहिए था, प्रारम्भिक दिशा में ही है और तीसरी योजना में कोई कीमती योग देने के बजाय उसकी समाप्ति पर ही उत्पादन प्रारम्भ कर सकेंगी । कार्बनिक मध्यवर्ती पदार्थों के निर्माण की परियोजना में, जो रंजक पदार्थों, प्लास्टिक और औषध-उद्योगों के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, विलम्ब का कारण परियोजना के वास्तविक विस्तार, क्षेत्र-निर्धारण एवं अन्य प्रारम्भिक कार्रवाइयों में विशेष समय लगने के अलावा विदेशी सहयोगियों के साथ वार्ता में कठिनाइयां उपस्थित होना भी था । दूसरी योजना के अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया है कि हर परियोजना का, विशेष कर भारी इंजीनियरी उद्योगों का, परिपाक-काल साधारणतः आशा से अधिक होता है । इस बात से पहले से ही आयोजन करने का महत्त्व सिद्ध होता है ।

4. जिन उद्योगों के लक्ष्य पूरे नहीं हो सके, उनमें मुख्य हैं: लोहा एवं इस्पात, उर्वरक, कुछ भारी मशीनें—यथा, कागज़ और सीमेंट बनाने की मशीनें—भारी ढलाई और गढ़ाई, अल्युमीनियम, अखबारी कागज़, कच्ची फिल्म, रासायनिक लुगदी, सोडा ऐश, कास्टिक सोडा, रंजक पदार्थ और सीमेंट । दुर्भाग्य से यह कमी कुछ ऐसे उद्योगों में भी रह गई, जो अत्यधिक बुनियादी महत्त्व के हैं और उसने देश की अर्थव्यवस्था को उन लाभों से वंचित कर दिया, जिनके तीसरी योजना के प्रारम्भ में प्राप्त होने की आशा की गई थी। इसके आंकड़े अगले पृष्ठ पर दिए गए हैं ।

अन्य उद्योगों में से अधिकांश के क्षमता और उत्पादन के लक्ष्य लगभग पूरे हो गए और शक्ति-चालित पम्प, डीज़ल इंजिन, बिजली के मोटर, ए० सी० एस० आर० केबल, बिजली के पंखे, रेडियो-सेट और चीनी, आदि कुछ उद्योग तो लक्ष्य से भी आगे बढ़ गए ।

तालिका-संख्या 1

सन् 1960-61 के उत्पादन-लक्ष्य और वास्तविक उत्पादन

	इकाई	उत्पादन-लक्ष्य	वास्तविक उत्पादन
तैयार इस्पात	लाख टन	43	22
नत्रजनयुक्त उर्वरक (नत्रजन की मात्रा)	हज़ार टन	290	110
फास्फेटयुक्त उर्वरक पी$_2$ओ$_5$की मात्रा	हज़ार टन	120	55
वस्त्रोद्योग-मशीनें	करोड़ रु०	17	9
सीमेंट-मशीनें	करोड़ रु०	2	0.6
कागज़-मशीनें	करोड़ रु०	4	—
अल्युमीनियम	हज़ार टन	25	18.5
अखबारी कागज़	हज़ार टन	60	25
रासायनिक लुगदी	टन	30,000	—
सोडा ऐश	हज़ार टन	230	145
कास्टिक सोडा	हज़ार टन	135	100
रंजक पदार्थ	लाख पौंड	220	115
सीमेंट	लाख टन	130*	85

5. मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि औद्योगिक प्रगति अर्थव्यवस्था को यथा-सम्भव शीघ्र आत्मनिर्भर विकास की दशा तक पहुंचाने के लक्ष्य के अनुरूप हुई, क्योंकि लक्ष्य-प्राप्ति में कुछ कमी रह जाने पर भी लोहा और इस्पात, भारी इंजीनियरी तथा अन्य पूंजीगत सामान के उद्योगों के विकास में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।

6. बहुत-सी परियोजनाओं का वास्तविक व्यय उतने से अधिक हुआ है, जितना दूसरी योजना तैयार करते समय आंका गया था। उदाहरण के लिए, प्रारम्भिक परियोजना-रिपोर्टों के आधार पर दूसरी योजना में सरकारी क्षेत्र के तीन इस्पात-कारखानों, उनके नगरों, लोहे की खानों और पत्थर की खानों के लिए 425 करोड़ रु० का व्यय निर्धारित किया गया था। सन् 1956 के अन्त में प्राप्त प्रथम विस्तृत अनुमानों से प्रतीत हुआ कि पूंजी-विनियोग की उनकी संशोधित आवश्यकता 559 करोड़ रु० होगी और उसमें वस्तुओं की महंगाई के कारण बढ़ा हुआ मूल्य शामिल नहीं होगा। अब इस्पात-कारखानों तथा उपर्युक्त सहायक वस्तुओं पर वास्तविक व्यय का अनुमान 620 करोड़ रु० है। सन् 1956 के अनुमानों की तुलना में व्यय में वृद्धि का कारण मुख्यतः काम की मात्रा में वृद्धि और वस्तुओं की महंगाई बताया गया है। निजी क्षेत्र में 'टिस्को' की परियोजना के व्यय-अनुमान और वास्तविक व्यय में भी इसी प्रकार का भारी अन्तर आया है। उसके विस्तार-कार्यक्रम पर पूंजीगत व्यय प्रारम्भिक अनुमान की तुलना में 30 करोड़ रु० अधिक हुआ है। यद्यपि परियोजना-सम्बन्धी

***मई 1958 में संशोधन करके इस लक्ष्य को 100-100 लाख टन कर दिया गया।**

इंजीनीयरी कार्य का अनुभव न होने के कारण अतीत में इस प्रकार का अन्तर स्वाभाविक था, तथापि भविष्य मे अधिक शुद्ध अनुमान लगाने की आवश्यकता पर बल दिया जाना चाहिए। अन्य देशों मे इस क्षेत्र में विशेषज्ञ परामर्शदाता-संगठनों ने बहुत महत्त्वपूर्ण योग दिया है और पिछले कुछ वर्षों में इस देश मे भी ऐसे कुछ अभिकरण अस्तित्व मे आए है और वे उद्योगों के प्रतिष्ठापकों को अधिक पूर्ण और वैज्ञानिक ढंग से परियोजनाओं के मूल्याकन और पूजी-व्यय के अनुमानों में सहायता दे सकेंगे।

7. पिछले दस वर्षो में उद्योगों को अधिक व्यापक क्षेत्र मे बिखेर कर स्थापित करने मे कुछ सफलता मिली है। तीन नए इस्पात-संयन्त्रों (भिलाई, राउरकेला और दुर्गापुर), भारी मशीनरी-संयन्त्र (रांची) तथा भारी बिजली-सामान-परियोजना (भोपाल) के लिए स्थानों का चुनाव और मद्रास-राज्य में नइवेली के भूरे कोयले के भांडार के उपयोग का निश्चय —ये दोनों विशुद्ध आर्थिक दृष्टि से तो उचित थे ही, इन्होंने देश के अब तक अछूते इलाकों में नए औद्योगिक केन्द्रों की स्थापना में भी योग दिया। वास्तव में, इस बात का हमेशा ध्यान रखा गया है कि यदि तकनीकी और आर्थिक दृष्टि से बहुत अनुचित न हो, तो यथा-सम्भव सरकारी क्षेत्र की परियोजनाओं के लिए स्थान अपेक्षाकृत पिछड़े इलाकों में चुने जाएं। भविष्य में भी यही सिद्धान्त निदेशक-रूप मे रहेगा। इसी प्रकार निजी क्षेत्र की परि-योजनाओं के लिए लाइसेंस देते समय भी अल्प-विकसित क्षेत्रों के दावों को यथासम्भव ध्यान में रखा गया है।

औद्योगिक कार्यक्रमों के लिए वित्त-व्यवस्था

8. सब मिला कर सन् 1956-61 की अवधि में सरकारी क्षेत्र की परियोजनाओं पर स्थिर पूंजी-विनियोग 770 करोड़ रु० का हुआ, जबकि मूल अनुमान 560 करोड़ रु० का था। निजी क्षेत्र के लिए पूजी-विनियोग के ये आंकड़े क्रमशः 850 करोड़ रु० और 685 करोड़ रु० है। सिन्दरी-स्थित उर्वरक-कारखाने को छोड़कर, जहां आन्तरिक प्रसाधनों ने नए विनियोग के लिए वित्त-व्यवस्था करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, सरकारी क्षेत्र की शेष सभी परियोजनाएं सरकार-द्वारा हिस्सा-पूजी अथवा ऋणों के रूप मे दिए गए धन से ही पूरी हुई। सरकारी इस्पात-कारखानों, मशीन-निर्माण, खनन-उपकरण और भारी ढलाई/गढ़ाई-परियोजनाओं के व्यय का विदेशी मुद्रा-सम्बन्धी भाग मुख्यतः मित्र देशों-द्वारा दिए गए ऋणों से पूरा हुआ। सरकारी क्षेत्र की परियोजना में यदि अच्छी मात्रा में कहीं विदेशी हिस्सा-पूंजी लगी, तो वह सिर्फ राउरकेला के इस्पात-कारखाने में, जिसका क्रप-डेमाग कम्पनी ने मूलतः प्रस्ताव किया था। सन् 1956 मे मशीनों की खरीद के ठेके के सम्बन्ध में वार्ता के समय इस प्रस्ताव का परित्याग कर दिया गया था। निजी क्षेत्र के इस्पात-विस्तार-कार्यक्रमों के लिए 70 करोड़ रु० की सहायता अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण एवं विकास-बैंक और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय स्रोतों से उपलब्ध ऋणों से तथा 20 करोड़ रु० की सहायता भारत-सरकार-द्वारा दिए गए ब्याज-मुक्त ऋणों से प्राप्त हुई। निजी उद्योग के अन्य क्षेत्रों मे बड़े स्तर पर जो पूजी-विनियोग हुआ, वह बहुत-कुछ विलम्बित भुगतान-व्यवस्था का आश्रय लेने के कारण सम्भव हुआ।

9. निजी उद्योगो ने योजना के प्रारम्भ में प्रकट की गई आशाओं की तुलना में विभिन्न स्वीकृत स्रोतों से कितना धन लिया, उसका विवरण अगले पृष्ठ पर दिया हुआ है।

तालिका-संख्या 2

धन की उपलब्धि के स्रोत और उनसे निजी उद्योगों-द्वारा ली गई धन-राशियां

(करोड़ रु०)

	दूसरी योजना में आशा	दूसरी योजना के लिए नवीनतम अनुमान
संस्थात्मक अभिकरणों से ऋण ..	40	80
केन्द्रीय और राज्य-सरकारों-द्वारा सीधा ऋण	20	20
विदेशी पूंजी (उपलब्ध करानेवालों के ऋण-सहित)	100	200
नई हिस्सा-पूंजी ..	80	150
आन्तरिक तथा अन्य स्रोत ..	380	400
योग ..	620	850

10. 'औद्योगिक विकास-कार्यक्रम : 1956-61' की भूमिका (पृष्ठ 9) में दिए गए अनुमानों की तुलना में संगठित उद्योगों में किए गए समग्र पूंजी-विनियोग के वितरण का नवीनतम आकलन इस प्रकार है :

तालिका-संख्या 3

समग्र पूंजी-विनियोग का विवरण

(करोड़ रु०)

	दूसरी योजना के प्रारम्भ में अनुमान	नवीनतम आकलन
धातुकर्म-उद्योग (लोहा और इस्पात, अल्युमीनियम तथा लौह-मैंगनीज़)	502.5	770
इंजीनियरी उद्योग (भारी और हल्के)	150	175
रासायनिक उद्योग (भारी रसायन, उर्वरक, औषध, कोयला-कार्बनीकरण, रंजक पदार्थ, प्लास्टिक और रासायनिक लुगदी)	132	140
सीमेंट, बिजली के पोर्सिलेन और ऊष्मसह पदार्थ	93	60
कागज़, अखबारी कागज़ और करेंसी नोटवाला कागज़ ...	10	30
पेट्रोल-शोधन	54	40
चीनी	51	56
कपास, पटसन, ऊनी और रेशमी सूत तथा वस्त्र	36.3	50
रेयन और व्यावसायिक रेशम	24	34
अन्य	41.5	115
मशीनों का परिवर्तन और आधुनिकीकरण	150	150
योग	1244.3	1620

11. विशाल पूंजी-विनियोग (योजना के अनुमान से लगभग 30 प्रतिशत अधिक) के बावजूद दूसरी योजना में निर्धारित भौतिक लक्ष्यों की पूर्ति मोटे अनुमान के अनुसार कुल 85 से 90 प्रतिशत तक ही हुई है। सीमेंट-उद्योग के लिए मूलत: निर्धारित उच्च लक्ष्य और वस्तुतः उपलब्ध उत्पादन-क्षमता के बीच का भारी अन्तर भौतिक लक्ष्यों की प्राप्ति में समग्र कमी का एक बड़ा कारण है।

तीसरी पंचवर्षीय योजना : उद्देश्य और समग्र दृष्टिकोण

12. यदि राष्ट्रीय आय और नियोजन-सम्बन्धी दीर्घकालीन लक्ष्य प्राप्त करने हैं, तो सन् 1961-66 की अवधि के लिए औद्योगिक योजना आगामी 15 वर्षों में अधिक तीव्र उद्योगीकरण के लिए नींव रखने की सर्वोपरि आवश्यकता को ध्यान में रख कर बनानी होगी। इस दृष्टि से यह आवश्यक है कि बुनियादी पूंजीगत सामान और उत्पादक सामान-उद्योगों की स्थापना—जिसमें मशीन-निर्माण-कार्यक्रमों पर अधिक बल दिया जाए—और सम्बद्ध कौशल, तकनीकी जानकारी और डिज़ाइन-विषयक क्षमता की प्राप्ति के द्वारा आगे बढ़ा जाए, ताकि आगामी योजना-कालों में शक्ति, परिवहन, उद्योग और खनिज उत्पादन के क्षेत्रों में अर्थव्यवस्था का विकास स्वचालित हो और बाहरी सहायता पर कम-से-कम निर्भर करना पड़े।

13. किन्तु कुछ और बातें भी हैं, जिन्हें ध्यान में रखना होगा। इस प्रकार, जहां दीर्घ-कालीन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए पूंजीगत सामान-उद्योगों और विधायित औद्योगिक कच्ची सामग्रियों की उत्पादन-वृद्धि पर ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है, वहां तीसरी योजना के औद्योगिक कार्यक्रम में अन्य बहुत-सी निर्मित वस्तुओं की आगामी पांच वर्षों में उत्पन्न होनेवाली सम्भावित मांग की पूर्ति के लिए भी यथासम्भव व्यवस्था करनी होगी। उपलब्ध साधनों का एक बड़ा भाग भावी विकास की नींव रखने में नियोजित करने की आवश्यकता के कारण सब मामलों में इस मांग को पूरा करना कठिन हो सकता है। उद्देश्य यह है कि अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पूरी व्यवस्था की जाए, किन्तु उपभोग पर थोड़ा-बहुत नियन्त्रण अपरिहार्य होगा—खास कर विलास-सम्बन्धी या अंशतः विलास-सम्बन्धी वस्तुओं के उपभोग पर, जिनका उत्पादन मांग की वृद्धि के साथ-साथ उसी अनु-पात में बढ़ाना कठिन होगा।

14. उद्योगों का संचालन केवल बाजारों पर ही नहीं, बल्कि कच्ची सामग्रियों, बिजली, ईंधन और परिवहन की सुविधाओं की उपलब्धि पर भी निर्भर करता है। इसलिए औद्योगिक कार्यक्रमों के लिए न केवल इस बात को ध्यान में रखना आवश्यक होता है कि कच्ची सामग्रियों और बिजली, आदि की उपलब्धि किस दर से बढ़ाई जा सकती है, बल्कि वास्तव में उनकी सीमा भी इसी से निश्चित होती है। विशेष रूप से बिजली और ईंधन के तीसरी योजना के पूर्वार्द्ध-काल में, बाधक तत्त्व बने रहने की सम्भावना है। फलतः यह सम्भव है कि कुछ औद्योगिक प्रक्रियाओं को, जिनमें बिजली की अधिक आवश्यकता होती है, उनके आकर्षण के बावजूद छोड़ देना पड़े।

15. **औद्योगिक नीति :** उद्योगों का विस्तार आगे भी अप्रैल 1956 के औद्योगिक नीति-सम्बन्धी प्रस्ताव से संचालित रहेगा। दूसरी योजना की भांति इस बार भी सरकारी और निजी क्षेत्रों की भूमिका एक-दूसरे के पूरक और सहायक-रूप में मानी गई है। उदाहरण

के लिए, नत्रजनयुक्त उर्वरकों के मामले में, जहां सरकारी क्षेत्र पहले ही प्रधान भूमिका ग्रहण कर चुका है, यह सोचा गया है कि तीसरी योजना में निजी क्षेत्र इसमें पहले से अधिक बड़े रूप में भाग ले और सरकारी क्षेत्र के प्रयत्नों की अनुपूर्ति करे। कच्चे लोहे के मामले में भी नीति को कुछ उदार बना कर निजी क्षेत्र में एक लाख टन की अधिकतम क्षमता के कारखानों की स्थापना की अनुमति देने का निश्चय किया गया है, जबकि अब तक केवल 15,000 टन की क्षमतावाले कारखानों की ही अनुमति दी जाती थी। निजी क्षेत्र में रंजक पदार्थों, प्लास्टिक और औषधों के निर्माण के कार्यक्रम सरकारी क्षेत्र में इस्पात-कारखानों में उपोत्पादन के रूप में प्रारम्भिक गन्धीय मिश्रणों के उत्पादन एवं कार्बनिक अन्तरायकों के निर्माण को शीघ्र हाथ में लेने के कार्यक्रम के पूरक होंगे। इसी प्रकार, जहां भारी मात्रा में औषधों के निर्माण का काम सरकारी क्षेत्र में विशाल पैमाने पर संगठित किया जाएगा, वहां इन औषधों के परवर्ती विधायन का काम निजी क्षेत्र में होगा।

16. समाजवादी ढंग के समाज-निर्माण के लक्ष्य की पृष्ठभूमि में निजी क्षेत्र के कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देते और अनुमोदित करते समय यह तथ्य ध्यान में रखना आवश्यक हो जाता है कि औद्योगिक विकास कुछ उद्योगपतियों के हाथों में ही केन्द्रित न हो जाए और उसके परिणामस्वरूप पूर्णतः अथवा अंशतः एकाधिकार न कायम हो जाएं। इस सम्बन्ध में प्रथम अध्याय के 26-29 पैराग्राफ में विचार किया गया है।

17. **औद्योगिक प्राथमिकताएं :** औद्योगिक विस्तार की योजनाओं को लगभग एक-जैसे महत्त्व के विभिन्न और प्रतिस्पर्धी दावों के बीच सन्तुलन रखना पड़ता है। किन्तु इस सम्बन्ध में कुछ सामान्य विचारणीय बातें हैं, जिनका उल्लेख करना आवश्यक है। पहली बात यह, कि जहां उत्पादन-क्षमता और वास्तविक उत्पादन में बहुत भारी अन्तर है, या जहां बहु-पाली-व्यवस्था अथवा सन्तुलनकारी उपकरणों की व्यवस्था करके कम लागत पर अधिक उत्पादन करना सम्भव है, वहां कारखानों के विस्तार या नए कारखानों की स्थापना के बजाय विद्यमान स्थापित क्षमता के पूर्णतर उपयोग को ही प्राथमिकता दी जानी चाहिए। दूसरी बात यह, कि नए कारखाने लगाने के बजाय मौजूदा संयन्त्रों के विस्तार को अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए, क्योंकि इस तरीके से न केवल अधिक तेजी से अतिरिक्त उत्पादन-क्षमता पैदा होगी, बल्कि प्रति इकाई-उत्पादन पर पूंजी-विनियोग भी कम करना पड़ेगा। उदाहरण के लिए, भिलाई, राउरकेला और दुर्गापुर के इस्पात-संयन्त्रों का विस्तार तैयार इस्पात के पूंजी-विनियोग को 2,000 रु० प्रति टन से घटा कर 1,500 रु० प्रति टन कर देगा तथा अधिधारण-मूल्यों के स्तर पर भी उपयोगी प्रभाव डालेगा।

18. जहां तक नए विकास-कार्यों का सम्बन्ध है, अधिक बल उन परियोजनाओं पर देना होगा, जो निर्यात में योग देकर विदेशी मुद्रा अर्जित करेंगी या आयात को रोक कर उसकी बचत करेंगी। ऐसे उद्योगों के बहुत अधिक विस्तार के लिए अनुमति देना सम्भव नहीं होगा, जो कच्ची सामग्रियों के आयात पर बहुत अधिक निर्भर हैं और इस कारण जिनके विस्तार के लिए इन कच्ची सामग्रियों के देश के भीतर उपलब्ध होने तक अनुरक्षण के हेतु बहुत बड़ी मात्रा में विदेशी पूंजी की आवश्यकता होगी, दूसरी ओर, अर्थव्यवस्था की अल्पकालीन और दीर्घकालीन, दोनों प्रकार की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए ऐसे उद्योगों के विकास पर अधिक ध्यान देना पड़ेगा, जिनके उत्पादनों के लिए निर्यात-बाज़ार प्राप्त होने की समुचित सम्भावना होगी।

19. इन सामान्य बातों को दृष्टि में रखते हुए अगले कुछ वर्षों में कार्यक्रमों और परियोजनाओं पर मोटे तौर पर निम्नलिखित प्राथमिकताओं के अनुसार बल देने की आवश्यकता होगी :

(1) दूसरी पंचवर्षीय योजना में शामिल की गई उन परियोजनाओं की पूर्ति, जो कार्यान्वित की जा रही है या जो सन् 1957-58 में विदेशी मुद्रा की कठिनाइयों के कारण स्थगित कर दी गई थीं।

(2) भारी इंजीनियरी और मशीन-निर्माण-उद्योगों, ढलाई और गढ़ाई, मिश्र-धातु के औजार और विशिष्ट इस्पात, लोहा और इस्पात तथा लौह-मिश्रित धातुओं की उत्पादन-क्षमता का विस्तार और उनमें विविधता लाना तथा उर्वरकों और पेट्रोलियम से सम्बद्ध वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि।

(3) अल्युमीनियम, खनिज तेल, घुलनेवाली लुगदी, बुनियादी कार्बनिक और और अकार्बनिक रासायनिक पदार्थों तथा उद्योगों में पुनः काम आनेवाले अन्तरायकों, जिनमें पेट्रोल-रासायनिक उत्पादन भी शामिल हैं, आदि मुख्य बुनियादी कच्ची सामग्रियों तथा उत्पादक सामग्रियों की उत्पादन-वृद्धि।

(4) आवश्यक औषधों, कागज़, कपड़ा, चीनी, वनस्पति-तेल और गृह-निर्माण-सामग्री, आदि अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वांछनीय वस्तुओं के देशी उद्योगों की उत्पादन-वृद्धि।

औद्योगिक विकास-कार्यक्रम

20. तीसरी योजना में उद्योगों और खनिज पदार्थों के विकास के लिए निर्धारित कार्यक्रमों पर 2,993 करोड़ रु० का पूंजी-विनियोग करना पड़ेगा, तभी उनके लिए नियत भौतिक लक्ष्यों की पूर्ति हो सकेगी। इसमें से 1,338 करोड़ रु० की आवश्यकता इन कार्यक्रमों के लिए विदेशी मुद्रा के रूप में पड़ेगी। इसका शीर्षकवार विवरण इस प्रकार

(करोड़ रु०)

	सरकारी क्षेत्र		निजी क्षेत्र		सरकारी और निजी क्षेत्र	
	कुल	विदेशी मुद्रा	कुल	विदेशी मुद्रा	कुल	विदेशी मुद्रा
(क) नया पूंजी-विनियोग						
(1) खनिज विकास	478	200	60	28	538	228
(2) औद्योगिक विकास	1,330	660	1,125	450	2,455	1,110
योग	1,808	860	1,185	478	2,993	1,338
(ख) पुरानी मशीनों के स्थान पर नई मशीनें	—	—	150	50	150	50

ऊपर की तालिका में सरकारी क्षेत्र में उद्योगों और खनिज-पदार्थों के लिए दिखाया गया 1,808 करोड़ रु० का स्थिर पूंजी-विनियोग सरकारी क्षेत्र की उद्योगों और खनिज-पदार्थों की आवश्यकता के रूप में अन्यत्र उल्लिखित 1,882 करोड़ रु० की राशि से मेल नहीं खाता। इस अन्तर का कारण यह है कि 1,882 करोड़ रु० की इस राशि में ये चीज़ें भी सम्मिलित हैं: (क) बागान-उद्योगों को, जो कि सही मानी में निर्माण-उद्योगों में नहीं आते, दी गई सहायता; (ख) हिन्दुस्तान शिपयार्ड के निर्माण के लिए दी गई सहायता की राशि; और (ग) राष्ट्रीय उत्पादकता-परिषद् और भारतीय मानक-संस्थान के कार्यक्रम और तोल तथा माप की मीट्रिक प्रणाली के विस्तार पर खर्च, एवं राष्ट्रीय औद्योगिक विकास-निगम के ज़रिए निजी क्षेत्र को दी गई सहायता तथा निजी व्यवसायों को दिए गए सीधे ऋण या उनमें राज्य की हिस्सेदारी।

21. ऊपर की तालिका में पुरानी मशीनों के स्थान पर नई मशीनें लगाने के लिए दिखाई गई अनुमानित पूंजी-विनियोग की राशि सूती, पटसन और ऊनी वस्त्र-उद्योगों की न्यूनतम आवश्यकताओं से भी, जिनके बारे में हाल में विशेष अध्ययन किया गया है, कम है। इन तीन उद्योगों में ही पुरानी मशीनों को बदलने के लिए 169 करोड़ रु० की कमी का अनुमान लगाया गया है। तीसरी योजना में पुरानी मशीनों को बदलने के लिए केवल 150 करोड़ रु० के पूंजी-विनियोग का अनुमान न्यूनाधिक दूसरी योजना में इस कार्य के लिए हुए वास्तविक पूंजी-विनियोग के ही आधार पर लगाया गया है। इतना होने पर भी यह अनुमान आशावादितापूर्ण है, क्योंकि (क) निजी उद्योगों और संस्थात्मक अभिकरणों के उपलब्ध साधनों पर नए पूंजी-विनियोग के लिए बहुत दवाब पड़ रहा है, (ख) जिन मिलों में बहुत बड़े पैमाने पर पुरानी मशीनों को बदलना ज़रूरी हो गया है, वे आवश्यकता के मुताबिक नवीकरण के लिए वित्तीय साधन जुटाने की स्थिति में नहीं हैं, और (ग) इन कार्यक्रमों में वित्तीय सहायता देने के लिए योजना में राष्ट्रीय औद्योगिक विकास-निगम के लिए भी थोड़ी राशि की व्यवस्था की गई है।

22. यहां यह कह देना ज़रूरी है कि अनेक परियोजनाओं के व्यय के अनुमान, जिनके आधार पर कुल मिलाकर समग्र आंकड़े तैयार किए गए हैं, अभी यथोचित रूप में सही नहीं हैं, क्योंकि ये परियोजनाएं अपने विस्तार, प्रक्रियाओं, स्थान तथा अन्य सम्बद्ध विवरणों की दृष्टि से निर्धारण के प्रारम्भिक चरण में ही हैं। इसके अतिरिक्त, इनमें से कुछ परियोजनाएं ऐसे उद्योगों की श्रेणी में आती हैं, जिनके बारे में देश में इतना अनुभव अभी तक उपलब्ध नहीं है कि उसके आधार पर अधिक सही आंकड़े तैयार किए जा सकें। विदेशी मुद्रा की आवश्यकताओं के अनुमान इस धारणा पर बनाए गए हैं कि अदायगियां नकदी में की जाएंगी और मोटे तौर पर मशीनें और अन्य सामग्रियां उपलब्धि के सबसे सस्ते स्रोत से खरीदी जाएंगी। यदि इन पूर्व-धारणाओं में परिवर्तन कर दिया गया, तो ये अनुमान भी बदलने पड़ेंगे। उदाहरण के लिए, यदि विभिन्न देशों द्वारा दिए गए ऋणों के उपयोग के लिए, साधन सामग्री का एक बड़ा हिस्सा ऐसे स्रोतों से खरीदना पड़ा, जो सबसे सस्ते नहीं हैं, तो ये अनुमान काफी बढ़ जाएंगे।

23. इन अनुमानित आवश्यकताओं की तुलना में सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों के कार्यक्रमों के लिए उपलब्ध साधन, मौजूदा गणना के अनुसार, कम प्रतीत होते हैं। सरकारी क्षेत्र में उद्योगों और खनिज-पदार्थों के लिए निर्धारित वर्तमान राशियां और निजी

क्षेत्र के लिए उपलब्ध होनेवाली सम्भावित और अनुमानित राशियां केवल 2,570 करोड़ रु० हैं—1,470* करोड़ रु० सरकारी क्षेत्र के लिए और 1,100 करोड़ रु० निजी क्षेत्र के लिए। इसके अतिरिक्त, यह आशा की जाती है कि कुछ पूर्व-युद्धकालीन उद्योगों में पुरानी मशीनों को बदलने और आधुनिकीकरण के शेष कार्यक्रम की पूर्ति के लिए 150 करोड़ रु० की राशि और भी उपलब्ध हो सकेगी।

24. इन अनुमानों से इस सम्भावना का संकेत मिलता है कि दोनों क्षेत्रों में काफी बड़ा काम चौथी योजना के लिए बचा रह जाएगा और तीसरी योजना के अन्त तक सब भौतिक लक्ष्य पूरे नहीं हो सकेंगे। जो भी हो, कुछ-न-कुछ काम चौथी योजना के लिए बच ही रहेगा, क्योंकि कुछ परियोजनाएं अभी तक प्रारम्भिक स्थिति में हैं, विदेशी मुद्रा-सम्बन्धी स्थिति अनिश्चित है और भारी उद्योगों में परिपाक-काल अपेक्षाकृत अधिक लम्बा होता है। अभी से यह ठीक-ठीक भविष्यवाणी करना सम्भव नहीं है कि कौन-कौन परियोजनाएं विलम्बित हो जाएंगी और चौथी योजना के लिए बच रहेंगी तथा कौन-कौन भौतिक लक्ष्य पूरे नहीं हो सकेंगे। फिर भी, इस विषय पर सरकारी और निजी क्षेत्रों के कार्यक्रमों के सिलसिले में आगे विचार किया गया है।

सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रम

25. **सामान्य तथ्य :** सरकारी क्षेत्र के औद्योगिक और खनिज विकास-कार्यक्रम अनुबन्ध 1 और 2 में दिखाए गए हैं। इनमें प्रतिरक्षा-उद्योगों और रेलवे-मन्त्रालय तथा परिवहन और संचार-मन्त्रालयों की परियोजनाएं शामिल नहीं हैं, जिनका प्रयोजन उनकी अपनी संचालन-सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बिजली और डीज़ल के रेल-इंजिन, टेलीफोन और टेलीप्रिंटर, आदि बनाना है। उन कार्यक्रमों का कुल व्यय लगभग 1,882† करोड़ रु० है, जबकि उनके लिए योजना में व्यवस्था केवल 1,520 करोड़ रु० (1,450 करोड़ रु० केन्द्र में और 70 करोड़ रु० राज्यों में) की ही की जा सकी है। इसलिए, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह सम्भव है कि उन्हें पूर्णतः कार्यान्वित करने में पांच वर्ष से अधिक समय लग जाए। अभी यह कहना सम्भव नहीं है कि सन् 1965-66 तक सरकारी क्षेत्र की इन परियोजनाओं में से कौन किस चरण में होगी, किन्तु कुछ सामान्य संकेत अवश्य दिए जा सकते हैं। जैसा कि अनुबन्ध 1 को देखने से स्पष्ट होगा; केन्द्रीय सरकार की परियोजनाएं इन तीन श्रेणियों में बांटी गई हैं:

(1) वे परियोजनाएं, जो अभी कार्यान्वित हो रही हैं और दूसरी योजना के अवशेष के रूप में आई हैं;

(2) नई परियोजनाएं, जिनके लिए विदेशी ऋणों की पूर्ण अथवा आंशिक प्राप्ति का आश्वासन मिल गया है; तथा

(3) नई परियोजनाएं, जिनके लिए अभी विदेशी ऋण की व्यवस्था की जानी है।

---

*इसमें 50 करोड़ रु० की वह राशि सम्मिलित नहीं है, जो निजी क्षेत्र को हस्तान्तरित की जाएगी।

†इसमें दो परियोजनाओं के लिए 20 करोड़ रु० की वह अतिरिक्त राशि सम्मिलित नहीं है, जिसके गैर-सरकारी सूत्रों से प्राप्त होने की आशा है।

यह मान लेना युक्तियुक्त ही होगा कि प्रथम श्रेणी में आनेवाली परियोजनाएं तीसरी योजना के दौरान पूरी हो जाएंगी। यही बात दूसरी श्रेणी की अधिकतर परियोजनाओं के बारे में भी कही जा सकती है; कम-से-कम इन परियोजनाओं में काफी बड़ी प्रगति तो की ही जा सकेगी। किन्तु इनमें से कुछ परियोजनाएं––उदाहरणार्थ, सूक्ष्म-यन्त्र-परियोजना और भारी बिजली के सामान की दो परियोजनाएं––अभी तक तैयारी के प्रारम्भिक चरण में हैं और उनका विस्तार कितना हो तथा उनमें क्या-क्या सम्मिलित हो, यह निश्चित करना बाकी है। इसलिए यह सम्भव है कि इनमें से कुछ परियोजनाएं कुछ हद तक चौथी योजना में चली जाएं। यह स्पष्ट है कि इस समय सबसे अधिक अनिश्चयात्मक स्थिति तीसरी श्रेणी की परियोजनाओं के बारे में है। किन्तु इनमें से कुछ परियोजनाएं–– जैसे, मिश्रित इस्पात-संयन्त्र––बहुत ऊंची प्राथमिकतावली हैं और उन्हें द्रुतगति प्रदान करने के लिए यथासम्भव सब-कुछ करना होगा।

26. प्रतिरक्षा-प्रतिष्ठानों की मिश्र इस्पात, ट्रैक्टर, ट्रक, बिजली के उपकरण, नाइट्रोसेल्यूलोज़ और रासायनिक उत्पादनों-सम्बन्धी विस्तार की योजनाओं से नागरिक आवश्यकताओं की पूर्ति में जो योग मिलने की आशा है, उसका भी तीसरी योजना के औद्योगिक कार्यक्रम में ध्यान रखा गया है। इस सम्बन्ध में जो भी सम्भावनाएं हैं, उनका सैनिक कारखानों की उत्पादन-क्षमता का पूरा उपयोग करके काम उठाया जाएगा, ताकि उत्पादन अधिकतम और विविध प्रकार का किया जा सके तथा उसके परिणामस्वरूप पूजी-विनियोग में बचत हो।

27. तीसरी योजना में सरकारी क्षेत्र में सम्मिलित की गई मुख्य औद्योगिक परियोजनाएं लोहा और इस्पात, औद्योगिक मशीनों, बिजली के भारी उपकरणों, मशीनी औज़ारों, उर्वरकों, बुनियादी रसायनों और अन्तरायकों, आवश्यक औषधों तथा पेट्रोलियम के शोधन के क्षेत्र में हैं। इनकी इसी अध्याय में आगे चलकर पृथक्-पृथक् उद्योग के अन्तर्गत निजी क्षेत्र में उद्योगों के सम्बद्ध वर्गों में हुई प्रगति के साथ संक्षेप में समीक्षा की गई है।

28. **केन्द्रीय सरकार की परियाजनाओं के लिए वित्त-व्यवस्था :** यद्यपि दूसरी योजना की भांति सरकारी क्षेत्र की औद्योगिक परियोजनाओं के लिए आवश्यक धन के अधिक भाग का प्रबन्ध सरकार करेगी, तथापि कुछ सरकारी व्यावसायिक संस्थानों-द्वारा भी अपने आन्तरिक स्रोतों से उसमें काफी बड़ा योग दिए जाने की सम्भावना है। इस प्रकार, सरकारी व्यावसायिक संस्थानों के उत्पादन-सम्बन्धी भविष्यवाणियों के आधार पर यह अनुमान है कि औद्योगिक पूजी-विनियोग के लिए उनके आन्तरिक स्रोतों से लगभग 300 करोड़ रु० प्राप्त हो सकेंगे। इस राशि का एक बड़ा भाग सरकारी क्षेत्र के इस्पात और उर्वरक-कारखानों से उपलब्ध होगा। यह भी विचार किया गया है कि हिन्दुस्तान मशीन टूल्ज़ अपनी देखरेख में एक या दो ऐसे नए मशीनी औज़ार-कारखाने स्थापित करे, जिनके खर्च का वह भाग, जो रुपये की मुद्रा के रूप में खर्च होगा, मुख्यतः आन्तरिक स्रोतों से जुटाया जाए।

29. **संस्थात्मक अभिकरणों को सहायता और अन्य विविध आवश्यकताएं :** केन्द्रीय सरकार की उद्योगों-सम्बन्धी योजना में औद्योगिक वित्त-निगम और राष्ट्रीय औद्योगिक विकास-निगम को, दूसरी योजना की अपेक्षा अधिक ऊंचे स्तर पर कार्य-संचालन के लिए,

दिए जानेवाले वित्तीय साधनों को भी ध्यान में रखना है। बागान-उद्योगों, राष्ट्रीय उत्पादकता-परिषद्, भारतीय मानक-संस्थान और मीट्रिक प्रणाली के विस्तार के लिए भी वित्त की व्यवस्था की जानी है। इन विविध कामों के लिए वित्तीय आवश्यकताएं, जिनका अनुमान अत्यन्त मितव्ययिता के आधार पर लगाया गया है, अनुबन्ध 1 में दी गई है।

30. **राज्य-सरकारों की औद्योगिक परियोजनाएं :** राज्य-सरकारों-द्वारा सरकारी क्षेत्र के व्यावसायिक संस्थानों के रूप में विकास के लिए प्रस्तावित मुख्य परियोजनाएं अनुबन्ध 2 में प्रस्तुत की गई हैं। इनमें से अनेक दूसरी योजना से आगे आई हैं—जैसे, मैसूर आयरन एंड स्टील वर्क्स तथा आन्ध्र पेपर मिल्स का विस्तार, दुर्गापुर कोक-भट्ठियों को दुहरा करना और दुर्गापुर से कलकत्ता तक गैस की पाइप डालना। राज्य-सरकारों की मुख्य नई-परियोजनाएं ये हैं : अमोनियम फास्फेट, अमोनियम सल्फेट और अमोनियम क्लोराइड के उत्पादन में वृद्धि के लिए एफ० ए० सी० टी० कारखाने के विस्तार का तीसरा चरण और त्रावणकोर-कोचीन कैमिकल्स का समन्वित विकास; और कास्टिक सोडा, फिनोल, थैलिक ऐनहाइड्राइड तथा कुछ अन्य कार्बनिक रसायनों के निर्माण के लिए दुर्गापुर उद्योग-मंडल की कार्बनिक रसायन-परियोजना।

31. राज्य-सरकारों की योजनाओं में उद्योगों के लिए निर्धारित राशियों की सीमा के भीतर ही, न केवल उपर्युक्त परियोजनाओं के लिए, बल्कि राज्य-वित्त-निगमों और औद्योगिक विकास-क्षेत्र-योजनाओं के लिए भी वित्त-व्यवस्था की जानी है। औद्योगिक विकास-क्षेत्र-योजनाओं का उद्देश्य उन प्रदेशों में, जो इस समय औद्योगिक दृष्टि से अपेक्षाकृत पिछड़े हुए हैं, उद्योगों के विकास में योग देना है। विचार यह है कि औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े हुए इलाकों में ऐसे स्थानों पर, जहां संचार के साधन अच्छे हैं या आसानी से विकसित किए जा सकते हैं, ज़मीन के उपयुक्त टुकड़े अधिगृहीत कर उन पर कारखानों के लिए स्थान विकसित किए जाएं; उनमें बिजली, पानी, नालियां, आदि बुनियादी सुविधाओं की व्यवस्था की जाए; और फिर उन्हें उद्योग स्थापित करने के इच्छुकों के हाथ बेचा जाए या पट्टे पर दे दिया जाए। राज्यों की योजनाओं में औद्योगिक विकास-क्षेत्र-योजनाओं के लिए 5.4 करोड़ रु० का व्यय प्रस्तावित किया गया है।

निजी क्षेत्र के कार्यक्रम

32. **सामान्य तथ्य :** अप्रैल 1956 के औद्योगिक नीति-विषयक प्रस्ताव के अन्तर्गत 'क' अनुसूची के उद्योगों के अतिरिक्त भी, जो कि राज्य के लिए सुरक्षित हैं, निजी उद्योगों के लिए बहुत व्यापक कार्य-क्षेत्र खुला पड़ा है। निजी उद्योग इन अवसरों का लाभ उठाने में पीछे नहीं रहे हैं। इसी अध्याय में पहले निर्माता-उद्योगपतियों की साहसिकता का उल्लेख किया जा चुका है। किन्तु यह बात नहीं भुलाई जानी चाहिए कि निजी क्षेत्र के इस जीवन्त विकास में गत दस वर्षों में किए गए सरकारी पूंजी-विनियोग के विशाल कार्यक्रम ने बहुत बड़ा योग दिया है। यह योग आवश्यक ऊपरी साधनों की व्यवस्था के द्वारा प्रत्यक्ष रूप में और मांग को प्रोत्साहन देकर और उसके द्वारा औद्योगिक वृद्धि के लिए अनुकूल वातावरण पैदा कर अप्रत्यक्ष रूप में दिया गया है। अगले पांच वर्षों के लिए बड़े पैमाने पर आयोजित सरकारी पूंजी-विनियोग से निजी क्षेत्र के उद्योगों के संचालन के लिए इन्हीं अनुकूल परिस्थितियों के बने रहने की सम्भावना है, किन्तु इस बात का ध्यान रखना होगा कि ये उद्योग

औद्योगिक विकास के समग्र ढांचे के अंग-रूप में रहें और उपर्युक्त पैराग्राफ 19 में निर्दिष्ट प्राथमिकताओं के अनुसार हों। इसके अतिरिक्त, दूसरी योजना के अन्तिम वर्षों में विदेशी मुद्रा और बिजली की जो कमी थोड़ी-बहुत अनुभव की गई है, उसके तीसरी योजना की सम्पूर्ण अवधि में कायम रहने और उसके फलस्वरूप निजी उद्योगों के उन्मुक्त विकास के सीमित होने की सम्भावना है। दूसरी योजना में जहां अनेक मूल औद्योगिक लक्ष्यों को बढ़ा दिया गया था, वहां तीसरी योजना में औद्योगिक लक्ष्यों में कोई भी परिवर्तन समस्त परिस्थितियों को—जिनमें विदेशी मुद्रा, आन्तरिक साधन, परिवहन, बिजली की उपलब्धि, प्रशिक्षित कर्मचारी और योजना में निर्दिष्ट प्राथमिकताएं शामिल हैं—ध्यान में रखकर ही किया जाएगा।

33. तीसरी योजना के लिए क्षमता और उत्पादन के लक्ष्य निर्धारित करने के लिए योजना-आयोग ने जून 1960 में योजना की प्रारम्भिक रूपरेखा के प्रकाशन से पहले और बाद में भी विभिन्न उद्योगों के प्रतिनिधियों से विचार-विनिमय किया था। आयोग ने विकास-परिषदों और अन्य अभिकरणों से विभिन्न उद्योगों के लक्ष्यों पर विचार करने का अनुरोध किया था, उनकी सिफारिशें भी आयोग के सामने थीं। तीसरी योजना के काल में निजी क्षेत्र को पूंजी-विनियोग के लिए उपलब्ध कराए जानेवाले सम्भावित वित्तीय साधनों-जैसे व्यापक प्रश्नों पर देश के प्रमुख औद्योगिक और वाणिज्य-संगठनों से भी विचार-विनिमय किया गया था।

34. इस अध्याय के अन्त (अनुबन्ध 3) में दिए गए विवरण में तीसरी योजना के अन्तर्गत विभिन्न उद्योगों के लिए प्रस्तावित लक्ष्य दिए गए हैं। ये सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों के सम्मिलित लक्ष्य हैं। इंजीनियरी उद्योगों के लिए ये लक्ष्य दो पालियां चला कर कारखानों की स्थापित क्षमता का पूरा उपयोग करने के आधार पर निर्धारित किए गए हैं।

निजी क्षेत्र के कार्यक्रमों के लिए वित्त-व्यवस्था

35. तीसरी योजना की अवधि में निजी क्षेत्र में सम्पूर्ण स्थिर सम्पत्तियों के लिए वित्त-व्यवस्था करने के निमित्त विनियोगजन्य धन की आपूर्ति के स्रोत और हर स्रोत से उपलब्ध हो सकनेवाले धन के अनुमान इस प्रकार हैं :

तालिका-संख्या 4

निजी क्षेत्र के औद्योगिक और खनिज कार्यक्रमों के लिए धन की उपलब्धि के स्रोत

(करोड़ रु०)

स्रोत	तीसरी योजना की अवधि में
संस्थात्मक अभिकरण	130
केन्द्रीय और राज्य-सरकारों-द्वारा सीधे दिए गए ऋण और अन्य सहायता	20
नया पूंजी-निर्गमन	200
आन्तरिक साधन (पुनः अदायगी की देनदारियां छोड़ कर) ...	600
पूंजी के लिए विदेशों से प्राप्त प्रत्यक्ष ऋण-राशि	300
योग	1,250

इन अनुमानों के अनुसार, जितनी राशि की प्राप्ति की सम्भावना है, वह निजी क्षेत्र के कार्यक्रमों की आवश्यकताओं से, जो अनुमानतः 1,350 करोड़ रु० की होंगी, कम है। समग्र वित्तीय साधनों की कमी के साथ-साथ एक और कठिनतर समस्या है, समस्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विदेशी मुद्रा की उपलब्धि। विदेशी मुद्रा की आवश्यकता 530 करोड़ रु० से कम नहीं है। इस आवश्यकता को सम्पूर्णतः पूरा करने के लिए विदेशों से सहायता या ऋण प्राप्त होने के अभी कोई लक्षण दिखाई नहीं पड़ते। वर्तमान स्थिति में यह नहीं कहा जा सकता कि किन-किन उद्योगों में वास्तविक कार्य लक्ष्य से कम होगा। यह बहुत-कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि जिन उद्योगों में विदेशी सहयोग और पूजी-विनियोग वाछनीय है, उनमें उसे प्राप्त करने में कितनी सफलता मिलती है। किन्तु उच्च प्राथमिकतावाले उद्योगों में इस बात का प्रयत्न किया जाएगा कि उनके लक्ष्य पूरे हो जाएं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इरादा यह है कि औद्योगिक कार्यक्रमों की नियमित रूप से समय-समय पर समीक्षा की जाए और प्राप्त सफलता तथा समय-समय पर सामने आनेवाली प्राथमिकताओं के आधार पर छः मास बाद अलग-अलग उद्योगों के लिए विदेशी मुद्रा या ऋण का बंटवारा किया जाए। इस तरीके से सन्तुलित होने की आशा है।

36. प्राथमिकताएं निर्धारित करते समय एक महत्वपूर्ण बात यह ध्यान में रखी जाएगी कि कौन-सा उद्योग आयात में कमी या निर्यात में वृद्धि करके विदेशी मुद्रा के दबाव को कम करने में कितनी सहायता कर सकता है। इस प्रकार, जो उद्योग विदेशी मुद्रा का सीधा अर्जन या बचत कर सकेंगे, उन्हें उन उद्योगों पर प्राथमिकता दी जाएगी, जो केवल देश के आन्तरिक बाज़ार के लिए ही निर्मित वस्तुओं की उपलब्धि बढ़ाने में योग देंगे। आयात में बचत का अनुमान लगाने के लिए अब पहले की अपेक्षा अधिक कड़ी कसौटियां काम में लाई जाएंगी

औद्योगिक कार्यक्रम की मुख्य बातें

तीसरी योजना में मुख्य उद्योगों के विकास-कार्यक्रमों की खास-खास बातों का विवेचन निम्नलिखित पैराग्राफों में किया गया है :

धातुकर्म-उद्योग

37. **लोहा और इस्पात :** इस उद्योग के अन्तर्गत कुल लक्ष्य 102 लाख टन इस्पात-सिल्लियों की उत्पादन-क्षमता तथा 15 लाख टन बिक्री-योग्य कच्चे लोहे के उत्पादन का रखा गया है। सन् 1965-66 तक कच्चे लोहे और तैयार इस्पात की अनुमानित आवश्यकता, जिसके आधार पर इस उद्योग की योजना तैयार की गई है, नीचे प्रस्तुत की गई है। उसके साथ ही तीसरी योजना के प्रारम्भ में उपलब्ध स्थापित क्षमता के आंकड़े भी दिए गए हैं। तीसरी योजना के लिए लोहे और इस्पात की मांग का अनुमान इस बुनियादी धारणा के आधार पर लगाया गया है कि मौजूदा बिक्री-मूल्य ही तीसरी योजना की अवधि में भी बना रहेगा।

38. इस्पात के लक्ष्य में निजी क्षेत्र का हिस्सा 32 लाख टन सिल्लियों का है। टाटा आयरन एंड स्टील कम्पनी तथा इंडियन आयरन एंड स्टील कम्पनी की वर्तमान उत्पादन-क्षमता 30 लाख टन की है। निजी क्षेत्र में इस्पात-उद्योग की क्षमता का विस्तार बिजली

तालिका-संख्या 5

लोहे और इस्पात की मांग का श्रेणीवार विवरण

(हज़ार टन)

इस्पात-निर्मित तैयार वस्तुएं		1965-66 तक अनुमानित मांग	1961 के प्रारम्भ में विद्यमान क्षमता
भारी पटरियां और फिशप्लेटें	...	400	345
भारी निर्माण-सामग्री और चौड़ी धरनें	...	550	445
स्लीपर और क्रासिंग स्लीपर	...	200	180
मध्यम और हल्की निर्माण-सामग्री	...	550	680
गोल और चपटी चीज़ें, जिनमें नट, बोल्ट और पेंच, आदि भी शामिल हैं	...	2,200	1,305
टीन की चादरें ...	...	300	150
चादरें 3/16 इंच और अधिक की	...	650	300
तार और तार के रस्से	...	400	220
हूप और बक्से बांधने की पट्टियां	...	50	45
नलियों के लिए स्ट्रिप और स्केल्प	...	1,200	740
चादरें ...	...	400	188
ढलाई की सिल्लियां और सलाखें	...	300	132
पहिए, टायर और ऐक्सल	...	100	30
योग ...	...	7,300	4,760
बिक्री के लिए कच्चा लोहा	...	1,500	660-870

की भट्ठियों की स्थापना से होने की आशा है, जो री-रोलरों को की जानेवाली बिलेटों की आपूर्ति में वृद्धि करेंगी। ख्याल है कि तीसरी योजना की समाप्ति तक मुख्य इस्पात-उत्पादकों-द्वारा री-रोलिंग कारखानों को दस लाख टन बिलेट मिलने लगेंगे। जहां तक बिक्री-योग्य कच्चे लोहे का सम्बन्ध है, निजी क्षेत्र का उत्पादन फिलहाल 3 लाख टन आंका गया है, जो नीची शैफ्टवाली धमन-भट्ठियों में लोहा-निर्माण-क्षमता का विस्तार करके अथवा बिजली की भट्ठियों में खनिज लोहे को पिघला कर, अथवा दोनों ही तरीकों से तैयार किया जाएगा।

39. जहां तक सरकारी क्षेत्र का सम्बन्ध है, नए इस्पात-कारखानों में, जिनका निर्माण सन् 1960-61 तक पूरा हो गया है, शीघ्रातिशीघ्र क्षमता-भर उत्पादन कराया जाने लगेगा और यह तीसरी योजना के शुरू के वर्षों का सबसे महत्वपूर्ण काम होगा। योजना में सम्मिलित किए गए इस उद्योग के विकास के नए कार्यक्रम ये हैं: भिलाई, दुर्गापुर और राउरकेला के इस्पात-कारखानों और मैसूर आयरन एंड स्टील वर्क्स का विस्तार तथा बोकारो में एक नए इस्पात कारखाने की स्थापना। इसके अतिरिक्त, योजना में एक कच्चे लोहे के कारखाने की परियोजना भी शामिल की गई है, जिसमें नीची शैफ्टवाली

धमन-भट्ठी की तकनीकें काम में लाई जाएंगी और नइवेली का भूरा कोयला प्रयुक्त होगा। इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत उत्पादन-क्षमता का लक्ष्य इस प्रकार रखा गया है :

(लाख टन)

योजना	क्षमता का लक्ष्य	
	इस्पात की सिल्लियां	कच्चा लोहा
(क) विस्तार-कार्यक्रम :		
भिलाई	25	3
राउरकेला	18	—
दुर्गापुर	16	3
मैसूर आयरन एंड स्टील वर्क्स ...	1	—
(ख) बोकारो इस्पात-परियोजना ...	10	3.5
(ग) नइवेली कच्चा लोहा-परियोजना ...	उत्पादन-क्षमता अभी तक निर्धारित नहीं की गई है	

40. नइवेली कच्चा लोहा-परियोजना, जिसकी विधि और प्रयोग में लाई जानेवाली कच्ची सामग्रियों के सम्बन्ध में प्रारम्भिक जांच करना अभी शेष है, दक्षिण-क्षेत्र में लगभग 5 लाख टन क्षमता के एक इस्पात-कारखाने की स्थापना की दिशा में एक मध्यवर्ती चरण है। तीसरी योजना में इसके लिए की गई वित्त-व्यवस्था मुख्यतः लिग्नाइट (भूरा कोयला) से कोक तैयार करने के लिए उच्च तापमान पर कार्बनीकरण करनेवाले संयन्त्र की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए है।

41. मैसूर आयरन एंड स्टील वर्क्स के विस्तार-कार्यक्रम मे मुख्यतः लौह-सिलिकन-संयन्त्र पर होनेवाला पिछला अवशिष्ट व्यय तथा एल० डी० विधि से इस्पात-निर्माण और हल्की निर्माण-सामग्री तैयार करने के एक कारखाने के लिए व्यवस्था शामिल है।

42. बोकारो में बननेवाले नए इस्पात-संयन्त्र का नक्शा 20 लाख टन इस्पात की सिल्लियों की क्षमता को दृष्टि में रख कर तैयार किया जा रहा है, किन्तु प्रारम्भ में दस लाख टन उत्पादन के लिए ही संयन्त्र लगाने का इरादा है। आशा है कि यह संयन्त्र विशेष रूप से इस्पात की विभिन्न किस्मों की चपटी चीजें तैयार करेगा। इस समय इस बात पर विचार किया जा रहा है कि पहले चरण में इस संयन्त्र में किस-किस किस्म की चीजें तैयार की जाएं और उन्हें परिष्कृत रूप देने के लिए क्या-क्या यन्त्र लगाए जाएं।

इन विकास-कार्यक्रमों की समाप्ति पर सरकारी क्षेत्र के इस्पात-कारखानों की मध्यम किस्म के इस्पात की उत्पादन-क्षमता 30 लाख टन से बढ़ कर 70 लाख टन हो जाएगी और निजी क्षेत्र की उत्पादन-क्षमता को मिला कर क्षमता 102 लाख टन सिल्लियों की हो जाएगी।

43. तीसरी योजना में सम्मिलित सरकारी क्षेत्र के इस्पात-विकास-कार्यक्रमों के लिए कुल 525 करोड़ रु० के पूंजी-विनियोग की आवश्यकता ह। इसमे नन्दिनी में चूने

के पत्थर का एवं दल्ली रजारा तथा बरसुआ में खनिज लोहे का उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रस्तावित विस्तार-कार्यक्रमों के लिए आवश्यक पूंजी-विनियोग भी शामिल है। साथ ही, इसमें बोकारो इस्पात-संयन्त्र के लिए कोयले और खनिज लोहे की उत्पादन-वृद्धि के लिए आवश्यक पूंजी-विनियोग तथा चारों इस्पात-कारखानों से सम्बद्ध नगरों पर होनेवाला खर्च भी शामिल है।

44. तीसरी योजना की अवधि में देश में तैयार इस्पात का कुल उत्पादन फिलहाल 241 लाख टन आंका गया है, जिसमें बोकारो इस्पात-संयन्त्र से सन् 1965-66 में होनेवाला 3 लाख टन का उत्पादन भी शामिल है। विभिन्न वर्षों में उत्पादन का अनुमान इस प्रकार है :

तैयार इस्पात का अनुमानित उत्पादन

वर्ष						लाख टन
1961-62	...	...	...	...	...	35
1962-63	...	...	...	...	...	40
1963-64	...	...	...	...	...	43
1964-65	...	...	...	...	...	55
1965-66	...	...	...	...	...	68
				योग	...	241

उत्पादन-सम्बन्धी उपर्युक्त अनुमानों और विभिन्न प्रकार की तैयार इस्पात की वस्तुओं की उपलब्धि की सम्भावना के आधार पर यह आशा की जाती है कि अभाव की मात्रा काफी उल्लेखनीय होगी—खास कर योजना-अवधि के प्रारम्भिक वर्षों में और टीन की प्लेटों, चादरों, स्केल्प और प्लेटों आदि चपटी चीज़ों के मामले में। इसके परिणामस्वरूप, इन चपटी चीज़ों के आयात की मात्रा निर्धारित करने और विभिन्न श्रेणियों के उपभोक्ताओं में उन्हें बांटने के लिए प्राथमिकताओं की एक योजना बनानी पड़ेगी। प्रथम दृष्टि में ऐसा प्रतीत होता है कि रोलिंग मिलों में चपटी चीज़ों के उत्पादन के लिए प्राप्त सुविधाओं का अधिक सघन उपयोग करने के लिए यदि सरकारी क्षेत्र के कारखानों में इस्पात की सिल्लियों का अधिक उन्मुक्त रूप से आदान-प्रदान किया जाए, तो कम उपलब्ध होनेवाली इस्पात की वस्तुओं की मांग और आन्तरिक उत्पादन के अन्तर को कम करना बहुत हद तक सम्भव हो सकेगा। इस सम्भावना पर हर वर्ष उत्पन्न होनेवाली परिस्थिति के प्रकाश में उत्पादन का आयोजन करते समय ध्यान दिया जाना चाहिए।

45. प्रमुख इस्पात-उत्पादकों के उत्पादन में टाटा आयरन एंड स्टील कम्पनी-द्वारा और राउरकेला के कारखाने में उत्पादित वैद्युतिक इस्पात की चादरें भी शामिल होंगी। इसी प्रकार, वैद्युतिक भट्ठी बिलेटों पर काम करनेवाले उत्पादकों और शस्त्रास्त्र-कारखानों-द्वारा उत्पादित तैयार इस्पात के सामान में स्प्रिंग का इस्पात और फ्री-कटिंग इस्पात भी शामिल होंगे। मध्यम इस्पात की इन विशिष्ट किस्मों का उत्पादन-स्तर सन् 1965-66 की मांग के, जो स्प्रिंग और फ्री-कटिंग इस्पात के लिए 75,000 टन और वैद्युतिक इस्पात-चादरों के लिए 70,000 टन आंकी गई है, अनुरूप होगा।

46. **औज़ारी, मिश्र और स्टेनलेस इस्पात :** दूसरी पंचवर्षीय योजना में सरकारी क्षेत्र में मिश्र, औज़ारी और विशेष इस्पातों का एक संयंत्र स्थापित करने की बात सोची गई थी। तदनुसार ही, सन् 1958 में विभिन्न किस्मों के तैयार माल के 25,000 टन वार्षिक उत्पादन के आधार पर एक संयन्त्र की स्थापना के लिए कुछ प्रमुख विदेशी उत्पादकों से प्रारम्भिक परियोजना-रिपोर्टें प्राप्त हुई। इस योजना को कार्यान्वित करने में इसलिए विलम्ब हो गया कि इसकी अधिक विस्तृत परियोजना-रिपोर्ट प्राप्त करने का निश्चय किया गया और जब यह रिपोर्ट तैयार की जाने लगी, तो इस ख्याल से कि तीसरी योजना में मिश्र इस्पात की मांग काफी बढ़ जाने की सम्भावना के कारण अधिक बड़ा और लाभकारी संयन्त्र स्थापित किया जाना चाहिए, परियोजना का क्षेत्र अधिक व्यापक कर दिया गया। फलतः जुलाई 1960 में परामर्शदाताओं से रिपोर्ट प्राप्त हुई और नवम्बर 1960 में यह निश्चय किया गया कि दुर्गापुर में 48,000 टन की वार्षिक उत्पादन-क्षमतावाला मिश्र और औज़ारी इस्पात का कारखाना खोला जाए और उसमें ऐसी व्यवस्था रहे कि आवश्यकता पड़ने पर उसका उत्पादन द्रुत गति से बढ़ा कर एक लाख टन किया जा सके।

47. इंजीनियरी उद्योगों की इन ऊंची कीमतवाली किन्तु आवश्यक कच्ची सामग्रियों की मौजूदा भारी मांग इन उद्योगों के अनुरक्षण की दृष्टि से एक गम्भीर समस्या है। इसलिए इन उत्पादनों की पंचवर्षीय अवधि में आवश्यकताओं की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि दीर्घकालीन मांग-वृद्धि की सम्भावनाओं की दृष्टि से भी, औज़ारी, मिश्र और स्टेनलेस इस्पातों के रूप में काम आनेवाले इस्पात के उत्पादन को तीसरी योजना में बहुत उच्च प्राथमिकता देना आवश्यक है। सन् 1965 और सन् 1970 में इन वस्तुओं की मांग के अनुमान, जिन्हें इस क्षेत्र में आयोजन के लिए पथ-प्रदर्शक के रूप में सामने रखा गया है, नीचे दिए जा रहे हैं। इनके साथ ही दुर्गापुर में स्थापित की जानेवाली सरकारी क्षेत्र की परियोजना में तैयार होने वाली वस्तुओं का विवरण भी दिया जा रहा है :

तालिका-संख्या 6

मिश्र, औज़ारी और विशेष इस्पात की भारी मांग के अनुमान

(तैयार इस्पात की टन में दी गई मात्रा—इसमें वैद्युतिक इस्पात-चादरें, स्प्रिंग इस्पात और फ्री-कटिंग इस्पात शामिल नहीं हैं)

	1965	1970	दुर्गापुर मिश्र इस्पात-परियोजना की उत्पादन-क्षमता
औज़ारी इस्पात	42,000	70,000	13,000
निर्माण-कार्योपयोगी चादरें ...	1,00,000	2,41,000	17,500
स्टेनलेस इस्पात	50,000	68,000	17,000
सांचा-सम्बन्धी और अन्य मिश्र इस्पात	8,000	10,000	500
योग	2,00,000	3,89,000	48,000

48. दुर्गापुर के प्रस्तावित मिश्र इस्पात-संयन्त्र में उन्नत देशों में हाल में विकसित की गई कुछ आधुनिकतम उत्पादन-विधियां और साधन-सामग्रियां भी काम में लाई जाएंगी। उदाहरण के लिए, परियोजना के गैस-प्रज्वलित गढ़ों के बजाय, बिजली-द्वारा चालित शोषक गढ़े बनाए जाएंगे। भविष्य में इस संयन्त्र के और विस्तार के लिए यह बात भी ध्यान में रखी जाएगी कि इसमें प्रारम्भिक कच्ची सामग्री के तौर पर लोहे की कतरनों के बजाय स्पंज लोहे का इस्तेमाल करना और अनवरत ढलाई की मशीनें लगाना वांछनीय होगा। विकास के वर्तमान चरण में यह निश्चय किया गया है कि यह संयन्त्र निकटवर्ती इस्पात-संयन्त्र से कच्ची सामग्री के तौर पर बढ़िया किस्म के इस्पात की कतरनें ले। इस परियोजना पर 50 करोड़ रु० का व्यय आंका गया है, जिसमें से 20 करोड़ रु० विदेशी मुद्रा के रूप में होगा।

49. आशा की जाती है कि प्रतिरक्षा-मन्त्रालय के शस्त्रास्त्र-कारखाने सरकारी क्षेत्र में मिश्र इस्पात की आपूर्ति के मामले में दूसरे स्रोत का काम देंगे। इशापुर और कानपुर के शस्त्रास्त्र-कारखानों का सम्मिलित उत्पादन, जिसमें मुख्यतः निर्माण-सामग्री के रूप में काम आनेवाला इस्पात और अंशतः स्प्रिंग इस्पात है, 50,000 टन होने का अनुमान है।

इस उद्योग का शेष विकास-कार्य निजी क्षेत्र के लिए रखा गया है, जिसमें इन उत्पादनों की विभिन्न श्रेणियों की कमी को ध्यान में रखते हुए उनकी पूर्ति के लिए अतिरिक्त कारखाने लगाए जाएंगे।

50. **अल्युमीनियम :** अलौह धातुओं के क्षेत्र में अल्युमीनियम की प्रधानता आगे भी बनी रहने की आशा है। सन् 1965-66 के लिए इस धातु के उत्पादन का लक्ष्य 87,500 टन रखा गया है। निजी क्षेत्र की निम्नलिखित परियोजनाओं के फलस्वरूप, जिन्हें कार्यान्वित करने की अनुमति दी जा चुकी है, इस लक्ष्य के पूरा हो जाने की आशा है :

(1) हीराकुड में इंडियन अल्युमीनियम कम्पनी के संयन्त्र का 10,000 टन अतिरिक्त वार्षिक उत्पादन के योग्य और अलवाए के संयन्त्र का 5,000 टन अतिरिक्त वार्षिक उत्पादन के योग्य विस्तार।

(2) रिहन्द में 20,000 टन वार्षिक उत्पादन-क्षमता के एक प्रद्रावण-केन्द्र की स्थापना।

(3) कोयना में भी 20,000 टन वार्षिक उत्पान-क्षमता के एक प्रद्रावण-केन्द्र की स्थापना।

(4) सेलम के समीप 10,000 टन वार्षिक उत्पादन-क्षमता के एक प्रद्रावण-केन्द्र की स्थापना।

(5) भारतीय अल्युमीनियम-निगम के संयन्त्र का विस्तार करके उसके उत्पादन में 5,000 टन वार्षिक की वृद्धि।

51. वैद्युतिक तांबे की बढ़ती हुई मांग और तीसरी योजना में उसके उत्पादन में अधिक वृद्धि की अत्यल्प सम्भावनाओं को देखते हुए अल्युमीनियम के उत्पादन का विस्तार प्रथम दृष्टि में वांछनीय प्रतीत होता है। किन्तु यह विस्तार कितना हो, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि अगले पांच वर्षों में टेक्नोलाजी की दृष्टि से तांबे का स्थान अल्युमीनियम को देना किस हद तक सम्भव है, हालांकि अल्युमीनियम के निर्यात की सम्भावना भी इस सम्बन्ध

में एक महत्वपूर्ण विचारणीय बात होगी। यदि इन कारखानों के लिए आवश्यक बिजली के उत्पादन की भी व्यवस्था करनी हो, जो कि लगभग निश्चित प्रतीत होती है, तो इनके विस्तार के लिए विदेशी मुद्रा की आवश्यकता बहुत बड़ी होगी। अल्युमीनियम-उत्पादन के विस्तार के नए प्रस्ताव कितने आकर्षक हैं, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि अतिरिक्त विदेशी मुद्रा-सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति किस हद तक हो सकती है।

52. **तांबा** : भारतीय तांबा-निगम-द्वारा घाटशिला में अपना कारखाना चालू किए जाने के साथ तीसरी योजना के प्रारम्भिक वर्षों में वैद्युतिक तांबे का उत्पादन प्रारम्भ हो जाएगा। खेतड़ी और दरीबो की तांबा-खानों से सम्बद्ध प्रद्रावण-केन्द्र और वैद्युतिक शोधनालय सन् 1964 के मध्य तक स्थापित हो जाएंगे। इन तांबा-खानों से वर्ष में 11,500 टन वैद्युतिक तांबा प्राप्त होगा।

53. **जस्ता** : भारत में जस्ते का उत्पादन पहली बार तीसरी योजना के मध्य-काल में प्रारम्भ होने की आशा है, जब कि राजस्थान की ज़ावर खानों से सम्बद्ध जस्ता-प्रद्रावण-केन्द्र चालू होगा। इस संयन्त्र की वार्षिक उत्पादन-क्षमता 15,000 टन की होगी। इस संयन्त्र के साथ ही प्रद्रावण-केन्द्र की गैसों से उपोत्पादन के रूप में गन्धक-अम्ल तैयार करने का एक संयन्त्र भी लगाया जाएगा और यह गन्धक-अम्ल बाद में फास्फेटयुक्त उर्वरकों के निर्माण में प्रयुक्त होगा।

इंजीनियरी उद्योग—भारी और हल्के

54. कच्चे लोहे और इस्पात की आपूर्ति में वृद्धि की सम्भावनाओं, मशीनों के निर्माण पर अधिक बल तथा अनेक मामलों में पूंजी-विनियोग की तुलना में रोज़गार की अधिक व्यापक सम्भावनाओं को देखते हुए इस क्षेत्र में बड़े पैमाने पर विकास कार्य किए जाने का प्रस्ताव है। सरकारी क्षेत्र मुख्यतः भारी मशीनों और भारी मशीन-निर्माण की परियोजनाओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करेगा। इसके अतिरिक्त, इस क्षेत्र के अन्तर्गत निजी उद्योगों के लिए भी अनेक प्रकार की वस्तुओं के उत्पादन के लक्ष्य प्रस्तावित किए गए हैं—जैसे, ट्रैक्टर, डीज़ल इंजिन, सड़क कूटने के इंजिन, डम्पर और शोवल, आदि-सदृश कृषि-यन्त्र और निर्माण-कार्य में प्रयुक्त होनेवाले उपकरण; ट्रान्सफार्मर (33 किलोवाट से कम शक्ति के), बिजली के केबल और तार तथा घरों में काम आनेवाले मीटर, आदि-जैसे बिजली के वितरण और मापन के साधन; रेल-इंजिन, माल-डिब्बे, सवारी डिब्बे, व्यावसायिक गाड़ियां (बसें और ट्रक), आदि-जैसे रेल और सड़क-परिवहन के साधन, चीनी, कागज़, सीमेंट और वस्त्र-उद्योगों, कुछ रासायनिक उद्योगों, भाप पैदा करनेवाले उपकरणों (बायलरों) और मशीनी औज़ारों, वैल्डिंग इलैक्ट्रोड-जैसी उपभोग-जन्य सामग्रियों तथा कार, सिलाई की मशीन, बाइसिकल और बिजली के पंखे-जैसी टिकाऊ उपभोक्ता-सामग्रियों के लिए नई इकाइयां स्थापित करने के हेतु पूरे संयन्त्र। परन्तु ये लक्ष्य विस्तार की सभी दिशाओं का प्रतिनिधित्व नहीं करते।

55. इस क्षेत्र में नई वस्तुओं का उत्पादन, जिनमें विभिन्न प्रकार की मशीनें सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं, दो प्रकार से किया जाएगा। एक तो, विशेष प्रयोजन के लिए निर्मित नए संयन्त्रों में, जैसे कि सीमेंट-उद्योग के उपकरणों और अधिक दबाववाले बायलरों के निर्माण के लिए दुर्गापुर में स्थापित ए० वी० बी० संयन्त्र (एसोसिएटेड सीमेंट-वाइकर्स-बैबकाक

विल्काक्स); और दूसरे, पहले से ही स्थापित तथा संचालित इंजीनियरी कर्मशालाओं में विविध वस्तुओं का उत्पादन करके। विशेष कार्यों के लिए निर्मित नए कारखानों की अपेक्षा पुराने चालू कारखानों में ही नई चीज़ों के निर्माण के लिए पूंजी-विनियोग की आवश्यकता कम होगी। इसी कारण इस वर्ग के कई उद्योगों में उत्पादन की तुलना में पूंजी-विनियोग का अनुमान कम है। कुछ निर्माण-कार्यक्रमों में यह पद्धति भी अपनाई जा रही है कि कुछ पुर्ज़ों और हिस्सों का उत्पादन सहायक कारखानों अथवा ऐसे बड़े कारखानों को सौंप दिया जाए, जिनमें उत्पादन-क्षमता बेकार पड़ी है। ऐसी परिस्थिति में उत्पादन और पूंजी-विनियोग का सामान्य अनुपात इनमें लागू नहीं किया जा सकता।

आगे के पैराग्राफों में इंजीनियरी उद्योगों के प्रमुख क्षेत्रों के कार्यक्रमों की संक्षिप्त रूपरेखा दी गई है।

ढलाई और गढ़ाई के कारखाने

56. मशीन निर्माण-कार्यक्रमों के लिए ढलाई और गढ़ाई के कारखानों की क्षमता बहुत महत्वपूर्ण है। तीसरी योजना में इस क्षेत्र के लिए कुल मिलाकर धूसर लोहे की गढ़ाई का लक्ष्य 12 लाख टन, इस्पात की ढलाई का लक्ष्य 2 लाख टन और इस्पात की गढ़ाई का भी लक्ष्य 2 लाख टन रखा गया है। इन लक्ष्यों की सीमा के भीतर रहते हुए सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रमों में अधिक बल अधिक टन वज़नवाली भारी मशीनों के निर्माण पर दिया गया है। सरकारी क्षेत्र की परियोजनाओं में इन सुविधाओं की व्यवस्था की जा रही है।

रांची में स्थापित किए जा रहे ढलाई/गढ़ाई-कारखाने में 45,000 टन इस्पात की ढलाई, 38,000 टन धूसर लोहे की ढलाई और 70,000 टन इस्पात की गढ़ाई की जाएगी। दुर्गापुर, भिलाई और राउरकेला के इस्पात-संयन्त्रों, भोपाल की भारी बिजली-सामान-परियोजना, दुर्गापुर की खान-मशीन-परियोजना और हिन्दुस्तान मशीन टूल्ज़ के साथ सम्बद्ध ढलाई-कारखानों की क्षमता बढ़ाई जाएगी। चित्तरंजन इंजिन-कारखाने में एक ढलाई-कारखाने का निर्माण किया जा रहा है। इन योजनाओं के फलस्वरूप सरकारी क्षेत्र में कुल उत्पादन-क्षमता इस प्रकार होने की आशा है:

तालिका-संख्या 7

सरकारी क्षेत्र में ढलाई और गढ़ाई की क्षमता

(टन)

	धूसर लोहे की ढलाई	इस्पात की ढलाई	इस्पात की गढ़ाई
रांची का ढलाई-गढ़ाई का कारखाना (तीसरा चरण)	38,000	45,000	69,700
दुर्गापुर का खान-मशीन संयन्त्र (खान-मशीनों के लिए क्षमता—30,000 टन) ...	11,000	6,000	7,000
हिन्दुस्तान मशीन टूल्ज़, बंगलोर ...	6,000	—	—

तालिका-संख्या 7—(जारी)

	धूसर लोहे की ढलाई	इस्पात की ढलाई	इस्पात की गढ़ाई
इस्पात संयन्त्र :			
दुर्गापुर भिलाई ... ... राउरकेला	75,000	15,000	—
चित्तरंजन का इंजिन-कारखाना ...	3,000	10,000	—
अन्य (रेलवे कर्मशालाओं से सम्बद्ध ढलाई कारखानों-सहित)	6,000	—	—
योग ...	1,39,000	76,000	76,700

तीसरी योजना में सरकारी क्षेत्र में सम्मिलित अन्य अनेक मशीन-परियोजनाओं के लिए भी ढलाई और गढ़ाई के इस्पात की आवश्यकता होगी। किन्तु इन आवश्यकताओं और इनकी पूर्ति की व्यवस्था की अर्थात् इनकी पूर्ति अन्य परियोजनाओं से बंधे ढलाई/गढ़ाई-कारखानों से की जाएगी या स्वतन्त्र इकाइयों से अथवा दोनों से—ठीक-ठीक तसवीर तभी सामने आएगी, जब परियोजना-रिपोर्टें प्राप्त होंगी।

57. मोटर-उद्योग और वस्त्र, सीमेंट, चीनी, कागज़ तथा इसी प्रकार के पूंजीगत सामान-उद्योगों के लिए मशीन-निर्माण के विस्तार के फलस्वरूप मांग बढ़ने पर निजी उद्योग में भी ढलाई-गढ़ाई की नई उत्पादन-क्षमता काफी मात्रा में बढ़ने की आशा है।

औद्योगिक मशीनें

58. इस दिशा में सरकारी क्षेत्र की मुख्य परियोजनाएं ये हैं : रांची के निकट भारी मशीन-संयन्त्र; दुर्गापुर की खान-मशीन-परियोजना; भोपाल का बिजली के भारी सामान का संयन्त्र; तथा दो अन्य भारी बिजली-सामान-उत्पादन-परियोजनाएं, जिनके स्थान के बारे में अभी एक विशेष समिति विचार कर रही है।

59. रांची के समीप स्थापित किए जा रहे भारी मशीन-संयन्त्र का विस्तार जब 80,000 टन वार्षिक उत्पादन तक कर लिया जाएगा, तब वह दस लाख टन वार्षिक इस्पात-उत्पादन-क्षमता की वृद्धि तक के लिए आवश्यक साधनों का अधिकतर भाग उपलब्ध कर सकेगा। दुर्गापुर में स्थापित की जा रही खान-मशीन-परियोजना का भी कुछ विस्तार किया गया है और वह 45,000 टन वार्षिक उत्पादन तक की दृष्टि से कार्यान्वित की जा रही है। बिजली का भारी सामान तैयार करनेवाली परियोजनाओं के डिज़ाइन भी इस हिसाब से बनाए गए हैं कि वे आन्तरिक स्रोतों से इतनी मात्रा में बिजली का भारी सामान उपलब्ध करा सकें कि सन् 1971 के बाद प्रति वर्ष 20 लाख किलोवाट बिजली की वृद्धि की जा सके। वे भारी मोटर, रैक्टीफायर और नियन्त्रण-सम्बन्धी उपकरण भी तैयार करेंगे। चैकोस्लोवाकिया की सहायता से एक और भारी इंजीनियरी सामान तैयार करने की परियोजना है, जिसमें तापीय बिजली-संयन्त्रों के लिए ऊंचे दबाववाले

बायलर तैयार किए जाएंगे और उसकी उत्पादन-क्षमता 28,000 टन (2,500 टन भाप प्रति घंटा) वार्षिक होगी। यद्यपि प्रारम्भ में इसकी कल्पना भारी बिजली का सामान तैयार करनेवाली एक बड़ी और मिली-जुली परियोजना के अंग-रूप में की गई थी, तथापि अब यह सोचा जा रहा है कि इस परियोजना को एक स्वतन्त्र संयन्त्र के रूप में विकसित किया जाए, जिसकी विशेषता भारी दबाववाले बायलर तैयार करना हो।

60. निजी क्षेत्र में सीमेंट, कागज़, चीनी और कपड़े के कारखानों की आवश्यकता पूरी करने के लिए सम्पूर्ण संयन्त्रों के उत्पादन के निर्धारित लक्ष्य और उनके भारत में निर्मित होनेवाले अंश का विवरण नीचे दिया जा रहा है :

तालिका-संख्या 8

कुछ प्रमुख औद्योगिक मशीनों के उत्पादन के लक्ष्य

मशीनें	संयन्त्र का मानक माप (टन दैनिक)	संयन्त्रों की संख्या	बिजली के सामान को छोड़कर संयन्त्रों का मूल्य (करोड़ रु०)	देश में निर्मित अंश (प्रतिशत)
सीमेंट-कारखाने की मशीनें ...	500	6-7	4-5	90
कागज़-कारखाने की मशीनें :				
(क) बड़े संयन्त्र ...	50	4	6.5-7	70
(ख) छोटे संयन्त्र ...	10	4		
चीनी-कारखानों की मशीनें	1,000-1,200 (गन्ना)	14	10	85
सूती कपड़े के कारखाने की मशीनें:				
(क) कताई कारखाने	12,000 (तकुए)		20	85
(ख) मिले-जुले कारखाने	12,000 तकुए और 300 करघे			
गन्धक-अम्ल-संयन्त्र ...	50	10	1.3	80

यह अत्यधिक वांछनीय है कि न केवल सन् 1965-66 के लिए मशीन-निर्माण के निर्धारित लक्ष्य पूरे किए जाएं, बल्कि हर मशीन के जितने हिस्से और पुर्ज़े देश में बनाने का लक्ष्य रखा जाए, उसे भी पूरा किया जाए। कारखानों के लिए पूरे संयन्त्रों के निर्माण और आपूर्ति के लिए कई फर्मों के परस्पर मिल कर काम करने की पद्धति, जो चीनी के कारखानों की मशीनें तैयार करने के लिए अपनाई गई है, अन्य क्षेत्रों में भी शीघ्र प्रगति के लिए सुविधाजनक सिद्ध हो सकती है।

मशीनी औज़ार

61. मशीनी औज़ारों के मामले में सन् 1965-66 तक 30 करोड़ रु० मूल्य के सामान के वार्षिक उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है, जब कि दूसरी योजना के अन्तिम वर्ष में अनुमानत

7 करोड़ रु० मूल्य के सामान का उत्पादन हुआ। इसके अतिरिक्त, सन् 1965-66 तक छोटे पैमाने के उद्योगों से भी 5 करोड़ रु० मूल्य के वार्षिक उत्पादन की आशा की जाती है। इस प्रकार, तीन-गुनी वृद्धि हो जाने पर भी उत्पादन मांग की तुलना मे, जिसके तीसरी योजना के अन्त तक 50 करोड़ रु० वार्षिक के स्तर तक पहुंच जाने की आशा है, बहुत कम है। इस क्षेत्र में उत्पादन-वृद्धि की कुछ सीमाएं हैं, क्योंकि एक तो इसके लिए दक्ष श्रमिकों की बहुत अधिक आवश्यकता है और दूसरे जिन औज़ारों की मांग है, उनकी किस्में बहुत-सारी हैं। फिर भी, यह एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें यदि सम्भव हो तो और अधिक विकास को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

62. सरकारी क्षेत्र में अब तक किए गए विदेशी मुद्रा-सम्बन्धी प्रबन्ध से यह पूरी तरह सम्भव है कि हिन्दुस्तान मशीन टूल्ज़, जलहाली, और प्राग टूल्ज़, हैदराबाद के विस्तार और रांची के समीप एक नए भारी मशीनी औज़ार-कारखाने तथा पंजाब में हिन्दुस्तान मशीन टूल्ज़ के बराबर परिमाण और उसी किस्म के एक और मशीनी औज़ार-कारखाने की स्थापना का काम तुरन्त प्रारम्भ किया जा सके। अनुमान है कि सरकारी क्षेत्र के इन मशीनी औज़ार-कारखानों का उत्पादन, जिसमें प्रतिरक्षा-मन्त्रालय के अम्बरनाथ-स्थित प्रोटोटाइप कारखाने से प्राप्त होनेवाला सम्भावित योग भी शामिल है, बढ़ कर 15 करोड़ रु० के लगभग हो जाएगा।

63. निजी क्षेत्र के विस्तार-कार्यक्रम मोटे तौर पर सरकारी क्षेत्र की योजनाओं के सम्पूरक और परिपूरक होंगे तथा मशीनी औज़ारों की विभिन्न किस्मों की भावी मांगों के अनुमानों के अनुसार निर्धारित किए जाएंगे।

रेल के इंजिन और डिब्बे

64. इस दिशा में सरकारी क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण चीज़ होगी, चित्तरंजन रेल-इंजिन-कारखाने के उत्पादन में विविधता लाकर बिजली के इंजिनों का निर्माण। इन बिजली के इंजिनों को ट्रैक्शन मोटर हैवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड, भोपाल के कारखाने में बनाने का इरादा है। डीज़ल इलेक्ट्रिक और डीज़ल हाइड्रालिक रेल-इंजिनों की निर्माण-परियोजना, जो रेलों की योजना में शामिल की गई है, रेलवे-सामग्री में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में सहायक होगी। 12 करोड़ रु० की डीज़ल इंजिन-परियोजना के अन्तर्गत वर्ष में 140 इंजिनों का निर्माण होगा, जिनका मूल्य 10 करोड़ रु० होगा। डीज़ल हाइड्रालिक इंजिनों में भारतीय रेलवे के एक इंजीनियर-द्वारा अभी हाल में आविष्कृत सुधरे हुए डिज़ाइन 'सूरी ट्रान्समिशन' का भी, जिसे पश्चिम जर्मनी में मूर्त रूप देने के लिए लाइसेंस दिया गया है, इस्तेमाल किया जाएगा। निजी क्षेत्र बिजली की रेलों के सवारी डिब्बों, माल-डिब्बों और छोटी लाइन के भाप के इंजिनों का निर्माण-कार्य जारी रखेगा।

जहाज़-निर्माण

65. जहाज़-निर्माण के कार्यक्रमों म हिन्दुस्तान शिपयार्ड लिमिटेड का विस्तार और विशाखापटनम में एक सूखे घाट का निर्माण शामिल है। इन कार्यक्रमों के पूरा हो जाने पर विशाखापटनम के जहाज़-निर्माण-घाट की वार्षिक जहाज़-निर्माण-क्षमता 50,000 से 60,000 डी० डब्ल्यू० टी० टन तक हो जाएगी।

कोचीन में दूसरे जहाज़-घाट का निर्माण और डीज़ल-चालित समुद्री जहाज़ों के इंजिनों के निर्माण की एक योजना सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रम के अंग हैं। इनमें से पहले अंग पर 20 करोड़ रु० और दूसरे पर 5 करोड़ रु० खर्च होने का अनुमान है।

66. तटीय और नदी यातायात के लिए छोटे जहाज़ों, टगों और नौकाओं तथा उनके प्रोपेलर यन्त्रों का निर्माण निजी क्षेत्र में ही होता रहेगा। किन्तु इस क्षेत्र का काम मुख्यतः 'जाब' के आधार पर होगा, इसलिए इन रिवाज़ी चीज़ों के लिए विशिष्ट उत्पादन-लक्ष्य निश्चित नहीं किए गए हैं।

ढांचा-विषयक सामान

67. ढांचा-विषयक सामान के उत्पादन की वर्तमान अनुमानित क्षमता 5,00,000 टन है, जिसमें वैगन बनानेवाले कारखानों की क्षमता भी शामिल है। इसके मुकाबले तीसरी योजना के अन्तिम वर्ष के लिए उत्पादन का लक्ष्य 11 लाख टन रखा गया है। तीसरी योजना के दौरान भारी ढांचे के सामान के उत्पादन पर पहले की अपेक्षा अधिक बल दिया जाएगा। ढांचे के सामान के इन कारखानों के साथ-साथ भारी प्लेट और वेसल कारखानों की स्थापना-द्वारा प्रैशर वैसल, हीट एक्सचैंजर तथा रासायनिक संयन्त्रों एवं उपकरणों की अन्य किस्मों के निर्माण की सुविधाओं की भी योजना है। क्रेनों का निर्माण इससे सम्बद्ध एक अन्य महत्वपूर्ण दिशा है।

68. सरकारी क्षेत्र में नागपुर-वर्धा इलाके में एक ही स्थान पर एक भारी ढांचों का कारखाना और एक वेसल कारखाना स्थापित करने के लिए विस्तृत प्रस्ताव तैयार किए गए हैं। भारी ढांचों के कारखाने की एक पाली की उत्पादन-क्षमता 10,000 टन और वेसल कारखाने की क्षमता 18,000 से 20,000 टन तक प्रति वर्ष होगी। इन दोनों संयन्त्रों पर 10 करोड़ 10 लाख रु० खर्च होने का अनुमान है।

कारखानों और बिजलीघरों के बायलर

69. सरकारी क्षेत्र में चैकोस्लोवाकिया की सहायता से बननेवाले भारी बिजली के सामान की परियोजना के अलावा निजी क्षेत्र में बिजलीघरों और विभिन्न कारखानों के लिए बायलरों के उत्पादन की व्यवस्था की गई है। सन् 1965-66 में 25 करोड़ रु० मूल्य के बायलरों का उत्पादन होने की आशा

मोटर तथा उससे सम्बद्ध उद्योग

70. इन उद्योगों के लिए प्रस्तावित विकास-स्तर मोटे तौर पर मोटर-उद्योग-सम्बन्धी तदर्थ-समिति की मार्च 1960 की रिपोर्ट में की गई सिफारिशों और मोटर तथा तत्सम्बन्धी उद्योगों के लिए स्थापित विकास-परिषद् की सिफारिशों के अनुसार ही है। इस क्षेत्र की विविध वस्तुओं के लिए निर्धारित उत्पादन-क्षमता के लक्ष्य विकास-परिषद्-द्वारा सिफारिश किए गए न्यूनतम लक्ष्यों के अनुकूल हैं। इसका अपवाद केवल कारें हैं, जिनके लिए तदर्थ-समिति-द्वारा निर्धारित अपेक्षाकृत छोटा लक्ष्य स्वीकार किया गया है। कारों, व्यावसायिक गाड़ियों, जीपों, मोटर-साइकिलों और स्कूटरों के लिए निर्धारित अस्थायी लक्ष्य अगले पृष्ठ पर दिए गए हैं।

	संख्या
कारें	30,000
व्यावसायिक गाड़ियां	60,000
जीपें और स्टेशन वैगन	10,000
मोटर-साइकिलें, स्कूटर और तिपहिया गाड़ियां	60,000

व्यावसायिक गाड़ियों के लिए निर्धारित लक्ष्य में वे 4,000 गाड़ियां भी शामिल हैं, जिनके सैनिक कारखानों में तैयार होने की आशा है।

71. विदेशी मुद्रा के साधनों पर लगातार अधिक दबाव डाले बिना मोटरों के उत्पादन का लक्ष्य पूरा करने के लिए यह आवश्यक है कि सन् 1965-66 तक उनके 85 प्रतिशत भाग देश के भीतर ही बनने लगें, जब कि तीसरी योजना के प्रारम्भ में 60 प्रतिशत से भी कम भाग देश में बनते हैं। इसलिए यह ज़रूरी होगा कि नए कारखाने स्थापित करने या मौजूदा कारखानों का विस्तार करने के बजाय देश के भीतर अधिकाधिक पुर्ज़े और हिस्से बनाने के लिए पूंजी-विनियोग को प्राथमिकता दी जाए। इसके अतिरिक्त, व्यावसायिक गाड़ियों के उत्पादन को भी प्राथमिकता देनी होगी। मोटर-उद्योग की सम्पूर्ण आवश्यकता की पूर्ति के लिए—ढलाई और गढ़ाई के इस्पात, आदि के उत्पादन पर होने-वाले पूंजी-विनियोग को छोड़ कर—इस क्षेत्र के शेष कार्यों की लक्ष्य-पूर्ति के लिए 85 करोड़ रु० का सीधा पूंजी-विनियोग आवश्यक होगा, जिसमें से विदेशी मुद्रा ·40 करोड़ रु० होगी। सीधे पूंजी-विनियोग से भी अधिक महत्वपूर्ण अनुरक्षण के लिए आवश्यक विदेशी मुद्रा है, जिसका तीसरी योजना के लिए कुल अनुमान 175 करोड़ रु० लगाया गया है।

अन्य इंजीनियरी उद्योग

72. सरकारी क्षेत्र की निम्नलिखित परियोजनाओं को छोड़ कर, अन्य इंजीनियरी उद्योगों की क्षमता का, इस अध्याय के अनुबन्ध 3 में निर्दिष्ट लक्ष्यों के अनुसार, विस्तार निजी क्षेत्र के प्रयत्नों से ही किया जाएगा :

(क) सूक्ष्म यन्त्र-परियोजना
(ख) सूक्ष्म यन्त्र-कारखाना, लखनऊ, का विस्तार
(ग) हिन्दुस्तान केबल्स, रूपनारायणपुर, का विस्तार
(घ) सरकारी बिजली-कारखाना, बंगलोर का विस्तार
(ङ) भारी कम्प्रेसर और पम्प-परियोजना
(च) बाल और रोलर बियरिंग-परियोजना
(छ) शल्य-क्रिया-उपकरण-परियोजना, गिंडी

भावी उन्नति की दृष्टि से सूक्ष्म यन्त्र-परियोजना बुनियादी महत्व रखती है और एक अत्यन्त विशिष्ट क्षेत्र में एक नई प्रगति की द्योतक है। इस परियोजना के अन्तर्गत वर्ष में अन्ततः 20 करोड़ रु० मूल्य के नियन्त्रण-औज़ार और उपकरण तैयार करने का प्रस्ताव है। गिंडी के समीप शल्य-क्रिया-उपकरण-संयन्त्र का आयोजन 2.7 करोड़ रु० लागत से 25 प्रकार के उपकरण तैयार करने के लिए किया गया है। डीज़ल रेल-इंजिन-परियोजना की भांति हिन्दुस्तान केबल्स का विस्तार भी संचार के क्षेत्र में सरकार की मांगों की वृद्धि से सम्बद्ध है।

इस या अन्य क्षेत्रों में, जहां कहीं भी किसी वस्तु के लिए कोई लक्ष्य निर्धारित नहीं किया गया ह, वहां विकास-कार्यक्रम समय-समय पर तदर्थ समीक्षाओं-द्वारा विनियमित किए जाते रहेंगे।

रसायन एवं अन्य सम्बद्ध उद्योग

73. इस शीर्षक के अन्तर्गत तीसरी योजना में सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण पूंजी-विनियोग उर्वरकों के क्षेत्र में किया जाएगा। कृषि-कार्यक्रमों में तेज़ी से बढ़ती हुई मांग के कारण नत्रजनयुक्त उर्वरकों का बड़े पैमाने पर उत्पादन बहुत आवश्यक हो गया है और तेल-शोधनालयों तथा कोक-भट्ठी-संयन्त्रों से उपलब्ध होनेवाली बेकार गैसों एवं कच्चे पेट्रोलियम के खनन से निकलनेवाली गैस और सबसे बढ़ कर पेट्रोलियम नैफ्था की प्राप्ति ने उन कार्बनिक रासायनिक उद्योगों को भी बड़ा उभारा है, जिन्हें अब तक मुख्यतः शीरे से प्राप्त अलकोहल एवं कार्बाइड से प्राप्त ऐसिटिलीन पर निर्भर करना पड़ता था। कार्बनिक हाइड्रोकार्बनों——यथा, बेनेज़ीन, टाल्वीन, नैफ्थलीन, ऐन्थ्रेसीन और ज़ाइलीन, आदि——की प्राप्ति से कार्बनिक अन्तरायकों के उत्पादन के लिए अनुकूल परिस्थितियां पैदा हो गई हैं। सरकारी क्षेत्र के इस्पात-संयन्त्रों में कोयले से कोक के निर्माण में जैसे-जैसे वृद्धि होगी, वैसे-वैसे यह उत्पादन और भी बढ़ता जाएगा। ख्याल है कि कुछ तेल-शोधनालयों में मामूली संशोधन और परिवर्द्धन से कुछ हाइड्रोकार्बनों की प्राप्ति सम्भव है।

इस क्षेत्र के कुछ प्रमुख उद्योगों के कार्यक्रमों का नीचे संक्षेप में विवरण दिया गया है :

अकार्बनिक रसायन

74. **उर्वरक** : सन् 1965-66 तक नत्रजन और फास्फेटयुक्त उर्वरकों की मांग बढ़ कर, नत्रजन और P_2O_5 (पी 2 ओ 5) के सन्दर्भ में, क्रमशः 10 लाख टन और 4 लाख टन हो जाएगी। जहां तक फास्फटयुक्त उर्वरकों का सम्बन्ध है, उपभोक्ताओं की ज़रूरतों को पूरा करने क लिए उनके उत्पादन का कम-से-कम 50 प्रतिशत भाग पानी में घुलने-योग्य होना चाहिए। नत्रजनयुक्त उर्वरकों के उत्पादन-सम्बन्धी आयोजन के लिए उनके स्वरूप और मात्राएं इस प्रकार निर्धारित की गई हैं :

तालिका-संख्या 9

नत्रजनयुक्त उर्वरकों का स्वरूप

(हज़ार टन नत्रजन)

	1965-66
अमोनियम सल्फेट	230
अमोनियम सल्फेट-नाइट्रेट	30
नाइट्रोचाक और नाइट्रोलाइम स्टोन	160
नाइट्रोफास्फेट मिश्र उर्वरक	45
यूरिया	305
अमोनियम फास्फेट	200
अमोनियम क्लोराइड	30
योग ...	1,000

उपर्युक्त विवरण से यह प्रकट होता है कि नत्रजन के अतिरिक्त उत्पादन का एक बड़ा भाग भौतिक और/या मिश्र उर्वरकों के रूप में बनाने का आयोजन किया गया है, ताकि फास्फेट (पी$_2$ ओ$_5$) की भी कुछ आवश्यकता पूरी हो सके। उत्पादन का यह स्वरूप इस ढंग से तैयार किया गया है कि गन्धक और जिप्सम पर निर्भरता एक सीमा के अन्दर रह सके।

75. यह निश्चय किया गया है कि दूसरी योजना की अवशिष्ट उर्वरक-परियोजनाओं की पूर्ति के साथ-साथ केन्द्रीय सरकार और कुछ राज्य-सरकारें सरकारी क्षेत्र में नत्रजन-युक्त उर्वरकों के उत्पादन के लिए कुछ नए कारखाने स्थापित करें। तीसरी योजना की प्रारम्भिक रूपरेखा के प्रकाशन के समय स्थायी तौर पर यह सोचा गया था कि सरकारी क्षेत्र की नत्रजनयुक्त उर्वरकों के उत्पादन की क्षमता बढ़ा कर आठ लाख टन तक कर दी जाए और दस लाख टन के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए अवशिष्ट दो लाख टन की उत्पादन-क्षमता निजी क्षेत्र में स्थापित की जाए। किन्तु अब प्रतीत होता है कि निजी क्षेत्र शायद पूर्व-कल्पना से अधिक उत्पादन-क्षमता के कारखाने खड़े कर सकेगा और सन् 1965-66 तक सरकारी क्षेत्र की उत्पादन-क्षमता आठ लाख टन से कुछ कम रहेगी। साहू कैमिकल्स के वाराणसी-स्थित कारखाने की क्षमता बढ़ा कर 20,000 टन करने के अलावा अब तक उर्वरक-उत्पादन के लिए निजी क्षेत्र से इन स्थानों के लिए प्रार्थनापत्र स्वीकार किए जा चुके हैं : मद्रास के निकट एन्नोर में (8,250 टन नत्रजन); मध्यप्रदेश में (50,000 टन नत्रजन); आन्ध्रप्रदेश के विशाखापटनम (80,000 टन नत्रजन) और कोठागुडियम में (80,000 टन नत्रजन); तथा राजस्थान में (80,000 टन नत्रजन)। इसके अतिरिक्त, निजी क्षेत्र-द्वारा पश्चिम-बंगाल-सरकार की साझीदारी में दुर्गापुर में भी एक उर्वरक-कारखाना (58,000 टन नत्रजन) स्थापित किए जाने की आशा है।

गुजरात और मैसूर में भी उर्वरक-कारखानों की स्थापना का विचार है। इस सम्बन्ध में विस्तृत बातों पर अभी विचार किया जा रहा है।

76. तीसरी योजना के अन्त तक सरकारी क्षेत्र में उर्वरक-उत्पादन की क्षमता फिल-हाल 7,30,000 टन आंकी गई है, जिसका विवरण नीचे की तालिका में प्रस्तुत है :

तालिका-संख्या 10

सरकारी क्षेत्र में नत्रजनयुक्त उर्वरकों की उत्पादन-क्षमता

	(टन नत्रजन)
वर्तमान क्षमता (सिन्दरी, नंगल और एफ० ए० सी० टी०) ...	2,17,000
राउरकेला	1,20,000
नइवेली	70,000
ट्राम्बे	90,000
नहरकटिया	32,500
एफ० ए० सी० टी० का विस्तार	40,000
गोरखपुर	80,000
सरकारी क्षेत्र में एक और उर्वरक-कारखाना	80,000
योग ...	7,29,500

साधारणतः नए संयन्त्रों की उत्पादन-क्षमता 70,000 से 80,000 टन नत्रजन तक

रखी जाएगी, ताकि उचित मार्गदर्शन किया जा सके और उर्वरक-संयन्त्र से सम्बद्ध उपकरणों के निर्माण-विषयक आयोजन में सुविधा हो।

77. सादे फास्फेटयुक्त उर्वरकों के मामले में, दो लाख टन पी$_2$ ओ$_5$ की उत्पादन-क्षमता का आयोजन पहले ही किया जा चुका है। सुपरफास्फेट के उत्पादन में वृद्धि की कोई योजना नहीं है।

78. नत्रजन और फास्फेटयुक्त उर्वरकों का उत्पादन सन् 1961-66 में न्यूनाधिक इस प्रकार होने की आशा है :

तालिका-संख्या 11

नत्रजन और पी$_2$ ओ$_5$ के उत्पादन के अनुमान

(हज़ार टन)

	नत्रजन	पी$_2$ ओ$_5$
1961-62	140	100
1962-63	200	150
1963-64	300	225
1964-65	500	300
1965-66	800	400

पूंजी-खाते में उर्वरक-कार्यक्रमों का कुल पूंजी-विनियोग 225 करोड़ रु० और उसका विदेशी मुद्रा का भाग 100 करोड़ रु० होने की आशा है।

79. **गन्धक-अम्ल :** गन्धक-अम्ल का उत्पादन औद्योगिक गतिविधियों का एक महत्वपूर्ण मापदंड है। उसके उत्पादन के लिए निर्धारित 17.5 लाख टन का लक्ष्य देश में उद्योग के सर्वतोमुखी विकास की एक झलक देता है। सरकारी क्षेत्र में गन्धक-अम्ल के उत्पादन में वृद्धि उर्वरकों के उत्पादन, इस्पात-संयन्त्रों से उपोत्पादनों की प्राप्ति और पिकलिंग-प्रक्रिया, पेट्रोलियम-शोधन और कार्बनिक अन्तरायकों तथा औषधों के निर्माण एवं खनिज पदार्थों से यूरेनियम निकालने के साथ सम्बद्ध है। सन् 1965-66 तक सरकारी क्षेत्र में अम्ल की कुल मांग 5,50,000 टन हो जाने की आशा है, जब कि दूसरी योजना के अन्त तक सरकारी क्षेत्र में उत्पादन-क्षमता 1,50,000 टन के लगभग थी।

सन् 1960-61 में इस अम्ल के उपभोग का वर्गीकरण और सन् 1965-66 में उसकी आवश्यकता इस प्रकार आंकी गई है :

(हज़ार टन गन्धक-अम्ल)

	1960-61 में अनुमानित उपभोग	**1965-66 में अनुमानित आवश्यकता**
उर्वरक	210	1,090
इस्पात-कारखाने	26	30
रेयन और स्टेपल रेशे	59	135
सल्फेट और अन्य अकार्बनिक लवण	24	40
पेट्रोलियम-शोधन	8	20
विविध	33	185
योग ...	360	1,500

80. यद्यपि अब तक गन्धक-अम्ल का उत्पादन गन्धक पर आधारित रहा है, तथापि तीसरी योजना में स्थापित की जानेवाली क्षमता का एक भाग उपोत्पादन, प्रद्रावण-गैसों (जस्ता और तांबा प्रद्रावकों) तथा अमजोर (बिहार) की खानों से उत्पन्न पाइराइटों से सम्बद्ध रहेगा। यदि दुर्गापुर और बोकारो के इस्पात-संयन्त्रों के निकट बड़े पैमाने पर उर्वरक-कारखाने स्थापित कर उनसे सम्बद्ध पाइराइट-गन्धक-अम्ल संयन्त्र स्थापित किए जाएं, तो उनसे निकलनेवाले 'हल्के आक्साइडों' का खनिज लोहे के सिंटरिंग में प्रयोग करके लाभ उठाया जा सकेगा।

81. **गन्धक :** अनुमान लगाया गया है कि गन्धक का उपभोग सन् 1960-61 की 1,75,000 टन की मात्रा से बढ़ कर तीसरी योजना के अन्तिम वर्ष में 6,00,000 टन के करीब हो जाएगा, जिसमें पाइराइटों और प्रद्रावण-गैसों में विद्यमान गन्धक की मात्रा भी शामिल है। अन्य देशों में गन्धक की उपलब्धि के नए स्रोतों के विकास के फलस्वरूप इस बुनियादी औद्योगिक कच्चे माल के आयात-मूल्य में विशेष वृद्धि होने की अभी कोई सम्भावना प्रतीत नहीं होती। फिर भी, यह बहुत आवश्यक है कि देश के भीतर गन्धक का कोई स्रोत विकसित किया जाए। तीसरी योजना में इस समस्या के समाधान का एक बड़ा प्रयत्न किया जाएगा। पाइराइटों से गन्धक की प्राप्ति के लिए एक सरकारी परियोजना तीसरी योजना में शामिल की गई है। (अध्याय 27 के पैराग्राफ 50 के अनुसार)

82. **कास्टिक सोडा और सोडा ऐश :** इन रासायनिक पदार्थों के लक्ष्य इस दृष्टि से निर्धारित किए गए हैं कि उनसे सन् 1965-66 की पूरी अनुमानित आवश्यकताएं आन्तरिक स्रोतों से ही पूरी की जा सकें। त्रावणकोर-कोचीन कैमिकल्स के विस्तार-कार्यक्रम और पश्चिम-बंगाल की कार्बनिक रसायन-योजना को छोड़ कर, इन दोनों उद्योगों का विकास पूर्णतः निजी उद्योग पर ही निर्भर है। कास्टिक सोडे के लक्ष्य की पूर्ति के लिए आवश्यक अतिरिक्त उत्पादन इलेक्ट्रोलिटिक और रासायनिक, दोनों विधियों से किए जाने की आशा है। दूसरी और तीसरी योजनाओं के अन्तिम वर्षों में इन दोनों विधियों से कास्टिक सोडे के उत्पादन के अलग-अलग आंकड़े इस प्रकार हैं :

(टन)

	1960-61	1965-66
रासायनिक कास्टिक	27,000	50,000
इलेक्ट्रोलिटिक कास्टिक	97,435	3,50,000
योग ...	1,24,435	4,00,000

सोडा ऐश के उत्पादन के विस्तार में भारी सोडा ऐश का उत्पादन भी सम्मिलित किए जाने की आशा है। भारी और हल्के सोडा ऐश की उत्पादन-क्षमता की वृद्धि इन अंकों से प्रकट होती है :

(टन)

	1960-61	1965-66
सोडा ऐश (हल्का)	2,20,000	3,70,000
सोडा ऐश (भारी)	—	1,60,000
योग ...	2,20,000	5,30,000

83. **विविध :** प्रमुख भारी रासायनिक पदार्थों के अलावा, जिनका कार्यक्रम ऊपर दिया गया है, तीसरी योजना में टाइटेनियम डाइग्राक्साइड, कैल्शियम कार्बाइड, सोडियम हाइड्रोसल्फाइड, सोडियम सल्फेट, पोटाशियम हाइड्रोक्साइड और बेरियम रसायन-जैसे अन्य उत्पादनों के विकास-स्तर भी मांग की वृद्धि के अनुसार निर्धारित किए गए हैं।

कार्बनिक रसायन

84. तीसरी योजना में लगभग पहली बार कार्बनिक रसायनों के क्षेत्र में बड़े पैमाने पर विकास की कल्पना की गई है। कहा जा सकता है कि पिछले दशक में प्लास्टिक, रंजक पदार्थों, औषधों, आदि-जैसे सम्बद्ध रासायनिक उद्योगों के विकास के फलस्वरूप अनेक वस्तुओं की मांग बढ़ने के कारण ये कार्यक्रम बनाए गए हैं। तीसरी योजना में परिकल्पित नाइलोन और टेरिलीन-जैसे नए उद्योगों की स्थापना और अगले पांच वर्षों में मौजूदा उद्योगों के विस्तार को दृष्टि में रख कर इस क्षेत्र में समुचित विकास के स्तर निर्धारित किए गए हैं। तीन मुख्य वस्तुओं के निम्नलिखित लक्ष्य अस्थायी समझे जाने चाहिए, क्योंकि यह अभी तक स्पष्ट नहीं है कि इन वस्तुओं के महत्वपूर्ण ग्राहक उद्योग, जिनकी अभी देश में स्थापना की जानी है, किस गति से विकसित होते हैं :

(टन)

	1965-66 के लिए क्षमता का लक्ष्य
थैलिक ऐनहाइड्राइड	15,000
फिनोल	15,000
मिथेनोल	40,000

इस प्रसंग में प्लास्टिक मोनोमर, विनाइल क्लोराइड और स्टीरीन, ब्यूटेडीन, कार्बन ब्लैक और रबड़-रसायन, ब्युटाइल अल्कोहल और उसके एस्टर, साइट्रिक एसिड तथा आक्जलिक एसिड का भी, जिनका निजी क्षेत्र में पहली बार उत्पादन करने का प्रस्ताव है, उल्लेख करना उचित होगा।

85. सरकारी क्षेत्र में भी पानवेल (महाराष्ट्र) के निकट बुनियादी रसायन तथा अन्तरायक-संयन्त्र (बी० सी० आई०) के द्वारा बड़े पैमाने पर काम किए जाने की बात सोची गई है। चूंकि बी० सी० आई० परियोजना अन्तरायक रसायन उपलब्ध कराएगी, अतः यह हैदराबाद के निकट सनतनगर में स्थापित होनेवाली संश्लिष्ट औषध-परियोजना के साथ गहरे रूप में सम्बद्ध है। इन दो परियोजनाओं के परिणामस्वरूप तीसरी योजना की अवधि में एक सर्वथा नए क्षेत्र में बड़ा कीमती तकनीकी ज्ञान प्राप्त होने की आशा है। बी० सी० आई० परियोजना के अन्तर्गत 40 विभिन्न कार्बनिक अन्तरायकों का उत्पादन किया जाएगा, जो सब मिलाकर 25,160 टन होगा। इस उत्पादन में यथा-समय 15,000 टन की और वृद्धि करने की भी व्यवस्था की जा रही है। क्लोरिनीकरण, सल्फोनीकरण, क्षारीय संसरण, नाइट्रीकरण, रिडक्शन और आक्साइडीकरण, आदि निर्माण-प्रक्रियाओं में अनेक बुनियादी अकार्बनिक रासायनिक पदार्थ भी काम में लाए जाते हैं। इन परियोजनाओं के भीतर

ही अन्य उद्देश्यों से स्थापित संयन्त्रों में इनमें से कुछ अकार्बनिक रसायनों के उत्पादन का भी निश्चय किया गया है।

पेट्रोलियम-शोधन

86. सरकारी क्षेत्र में उच्च घनता-सूचक स्नेहक तेल-उत्पादनों के निर्माण का निश्चय किया गया है और इसके लिए एक परियोजना-रिपोर्ट प्राप्त की जाएगी। सरकार निजी क्षेत्र के साथ मिल कर भी इस काम के लिए एक संयन्त्र स्थापित करने का विचार कर रही है। इसके अलावा, शोधित पेट्रोलियम-उत्पादनों के क्षेत्र में सारा कार्य सरकारी क्षेत्र में ही करने का निश्चय किया गया है। इस कार्यक्रम में नूनमती (गौहाटी) और बरौनी में बनाए जा रहे तेल-शोधनालयों को पूरा करना और गुजरात में 20 लाख टन वार्षिक क्षमता-वाले एक तीसरे तेल-शोधनालय की सरकारी क्षेत्र में स्थापना शामिल है। इस तीसरे कारखाने के लिए विदेशी ऋण और तकनीकी सहायता का आश्वासन मिल गया है और अब उसके लिए स्थान का चुनाव किया जा रहा है। नूनमती और बरौनी की भांति इस तेल-शोधनालय के लिए भी यह निश्चय करना होगा कि उसमें उत्पादन का स्वरूप क्या हो और उसमें यथासम्भव यह प्रयत्न किया जाएगा कि उनसे मिट्टी का तेल और डीज़ल तेल की कमी पूरी की जा सके। इस बात के लिए पूरा प्रयत्न किया जा रहा है कि यह तेल-शोधनालय सन् 1964 के मध्य तक तैयार हो जाए और वर्तमान संकेतों से ऐसा प्रतीत होता है कि यह कारखाना तीसरी योजना के अन्त तक लगभग 35 लाख टन अशोधित तेल का शोधन कर सकेगा। सन् 1965 तक इस उद्योग के अन्त्य उत्पादनों की अनुमानित आवश्यकता और विद्यमान तथा निर्माणरत तेल-शोधनालयों के सम्भावित उत्पादन के आंकड़े अगले पृष्ठ की तालिका में दिए गए हैं।

87. यदि कोयला-क्षेत्रों से दूर-स्थित इलाकों के उद्योगों को कोयले के बजाय ईंधन-तेल के उपयोग के लिए कुछ वित्तीय प्रोत्साहन दिए जाएं तो भट्ठी-तेल की मांग और बढ़ सकती है। यह विषय अभी विचाराधीन है।

88. अन्य अनेक देशों की भांति भारत को मोटर-स्पिरिट (गैसोलिन) के उत्पादन और उसकी मांग के असन्तुलन की समस्या का सामना करना पड़ेगा। यद्यपि फालतू मोटर-स्पिरिट को बेचने के लिए निर्यात का अवसर अभी मिल रहा है, किन्तु इस ढंग से उसके निपटान के अधिकाधिक कठिन होते जाने की सम्भावना है, क्योंकि पड़ोसी देशों में तेल के शोधन की क्षमता का सर्वतोमुखी विकास हो रहा है। असन्तुलन की समस्या के हल के लिए नीचे लिखे उपायों का आश्रय लेना पड़ेगा :

(1) मध्यवर्ती आसुतों (डिस्टिलेट) का उत्पादन बढ़ाने के टेक्नोलाजी-विषयक उपाय। उत्पादन के स्वरूप में विविधता के लिए इसमें बहुत कम गुंजायश होती है। फ्लैश प्वायंट की विशिष्टताओं में परिवर्तन लाकर मिट्टी के तेल और ऊंची रफ्तार के डीज़ल तेल का उत्पादन बढ़ाने के प्रश्न की जांच की जा रही है।

(2) समुचित वित्तीय उपाय, जिनसे ऊंची रफ्तार के डीज़ल तेल की खपत को बढ़ने से रोका जा सके। कुछ हद तक इस उपाय से सन् 1960-61 में काम लिया गया है।

तालिका-संख्या 12

पेट्रोलियम-उत्पादनों की अनुमानित आवश्यकता

(हज़ार टन)

अन्त्य उत्पादन	1965 तक अनुमानित आवश्यकता: प्रारम्भिक रूपरेखा के अनुसार	1965 तक अनुमानित आवश्यकता: मार्च 1961 में तेल-परामर्शदात्री समिति-द्वारा अनुमित	कार्यरत शोधनालय (निजी क्षेत्र)	निर्माणरत शोधनालय (सरकारी क्षेत्र)	कुल उत्पादन*	कमी या बचत
मिट्टी का तेल	2,200	2,660	916	366	1,282	− 1,378
उच्च गतिवाला डीज़ल तेल	1,800	2,607	1,064	514	1,578	− 1,029
मोटर-स्पिरिट	1,300	1,123	1,023	514	1,537	+ 414
विमान टर्बाइन ईंधन (ए० टी० एफ०)	300	408	—	189	189	−219
विमान-स्पिरिट	60	53	—	10	10	−43
भट्ठी का तेल	2,200	2,753	1,619	311	1,930	−823
हल्का डीज़ल तेल	700	872	511	208	719	−153
बिट्यूमन	700	628	394	120	514	−114
पटसन बैचिंग तेल	100	80	47	—	47	−33
वाष्पन तेल						
खनिज तारपीन						
विलायक तेल						
पैराफीन मोम						
स्नेहक	100	130	46	—	46	−84
	500	409	21	50	71	−338
योग	9,960	11,723	5,641	2,282	7,923	−4,214 + 414 (मोटर-स्पिरिट)

*गुजरात के तेल-शोधनालय का उत्पादन इसमें शामिल नहीं है ।

(3) मिश्र ईंधन का प्रयोग बढ़ाना। इससे ऊंची रफ्तार के तेल की मांग कम होगी और गैसोलिन की निकासी अधिक होगी। मौजूदा डीज़ल गाड़ियों में मिश्र ईंधन का, जिसमें 10 प्रतिशत तक पेट्रोल हो, आसानी से प्रयोग किया जा सकता है। इससे उनमें कोई परिवर्तन नहीं करना पड़ेगा।

(4) मोटर-स्पिरिट के फालतू उत्पादन में कमी करने या उससे बचने के लिए एक उपाय यह भी हो सकता है कि हल्के आसुत (नैफ्था) को, जिससे मोटर-स्पिरिट बनती है, नत्रजनयुक्त उर्वरकों और पेट्रोल-रसायन आदि अन्य उत्पादनों के निर्माण में लगाया जाए। नैफ्था को ट्राम्बे, विशाखापटनम, गोरखपुर और एन्नोर (मद्रास के निकट) में बनाए जानेवाले उर्वरक-कारखानों तथा फर्टिलाइज़र्स एंड कैमिकल्स, त्रावणकोर के विस्तार के तीसरे चरण में फीड स्टाक के रूप में इस्तेमाल करने का निश्चय किया जा चुका है।

89. इस दिशा में सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रमों में नहरकटिया की प्राकृतिक गैस से एथिलीन, ब्यूटेन, और अन्य एलिफेटजन्य हाइड्रोकार्बनों को पृथक् करने तथा उन्हें पेट्रोल-रसायन-उद्योगों के लिए सुलभ करने के लिए एक पृथक्करण-परियोजना भी शामिल की गई है। अवशिष्ट गैसें नहरकटिया उर्वरक-परियोजना और पेट्रोल-रसायन-संयन्त्रों के निकट स्थापित होनेवाले बिजली-संयन्त्र को उपयोग के लिए दी जाएंगी।

औषध आदि

90. दूसरी योजना के अन्तिम वर्षों में सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों में अनिवार्य औषधों के उत्पादन में विविधता लाने की दिशा में काम आरम्भ कर दिया गया है। इसका उदाहरण है, हिन्दुस्तान एंटीबायोटिक्स लिमिटेड-द्वारा स्ट्रेप्टोमाइसिन के निर्माण का प्रबन्ध और बम्बई की दो प्रमुख औषध-निर्माता फर्मों-द्वारा लेमनग्रास तेल से विटामिन 'ए' का संश्लेषण। इस क्षेत्र में सरकार और निजी क्षेत्र, दोनों नए-नए विकास-कार्यों की परियोजनाएं बना रहे हैं, जिसके फलस्वरूप अनिवार्य औषधों का उत्पादन देशी कच्चे माल से हो सकेगा और वे जनता को वाजिब मूल्य पर उपलब्ध हो सकेंगे।

इस क्षेत्र की सरकारी परियोजनाएं, जिनका सम्मिलित व्यय 27.3 करोड़ रु० होने की आशा है, निम्नलिखित हैं :

(1) सनतनगर (आन्ध्रप्रदेश) की संश्लिष्ट औषध-परियोजना, जिसमें सल्फा औषध, विटामिन, फिनेसिटिन, दूसरे संश्लिष्ट औषध (आई० एन० एच० ल्युमिनोल, क्लोरोक्विन, आदि) और अन्तरायकों (जिनमें 1,500 टन प्रति वर्ष ए० एस० सी० का उत्पादन भी शामिल है) का निर्माण होगा। इनका कुल वार्षिक उत्पादन 6.4 करोड़ रु० मूल्य का होगा।

(2) ऋषिकेश (उत्तरप्रदेश) के निकट एंटीबायोटिक्स-संयन्त्र, जिसमें पेनिसिलीन स्ट्रेप्टोमाइसिन, क्लोरो तथा अन्य टेट्रासाइक्लिन, आदि नए कीटाणुनाशक औषध तैयार किए जाएंगे। इनके कुल वार्षिक उत्पादन का मूल्य 26 करोड़ रु० होगा।

(3) केरल में फाइटो-कैमिकल संयन्त्र, जिसमें कैफीन, एफेड्रीन, डिजिटालिस, ग्लाइकोसाइड, लेनेटेज़ाइड, अरगट ऐलकालायड, ऐट्रोपीन, स्कोपोलेमिन, रेसरपिन, पेपिन और विटामिन 'पी' तैयार किए जाएंगे। इनका वार्षिक उत्पादन 77 लाख रु० का होगा।

फाइटो-रसायनों के निर्माण के सिलसिले में औषध-फार्मों की स्थापना बहुत महत्वपूर्ण हो गई है। कुछ राज्यों की पंचवर्षीय योजना में इन सम्बद्ध कार्यक्रमों के लिए व्यवस्था रखी गई है।

प्लास्टिक

91. प्लास्टिक-सामग्रियों का कुल उत्पादन-लक्ष्य 85,000 टन रखा गया है, किन्तु उसमें सबसे बड़ा भाग पोलिओलिफिनों (पोलिथिलीन आदि) के उत्पादन का है। उनका उत्पादन-लक्ष्य 27,000 टन है। वृद्धि की गति की दृष्टि से दूसरा महत्व का स्थान पोलिस्टिरीन और पोलिविनाइल क्लोराइड को दिया गया है, जिनके लिए उचित लक्ष्य निर्धारित किए जा रहे हैं। पोलिथिलीन में नमी के प्रतिरोध की बहुत अधिक शक्ति है, इसलिए इसे उर्वरकों को बोरियों के भीतर स्तर के तौर पर लगाने के लिए उच्च प्राथमिकता दी गई है। कच्चे माल के रूप में अल्कोहल के बजाय पेट्रोल-रसायनों से निर्मित एथीलीन का इस्तेमाल होने की आशा है, क्योंकि वह उससे सस्ता पड़ता है। यह एक ऐसा क्षेत्र है, जिसके लक्ष्य पर पुनर्विचार करना उपयोगी होगा। इससे निर्यात तो बढ़ेगा ही, रबड़ और चमड़ा-जैसे दुर्लभ पदार्थों की जगह भी इसका उपयोग हो सकेगा।

साफ्ट कोक

92. नइवेली के भूरे कोयले से 3,80,000 टन प्रति वर्ष के हिसाब से साफ्ट कोक का उत्पादन दूसरी योजना से आगे आई हुई एक बड़ी योजना है। लकड़ी का कोयला बनाने के लिए तीव्र गति से जंगलों की कटाई को दृष्टि में रखते हुए साफ्ट कोक के उत्पादन की क्षमता में वृद्धि प्रथम दृष्टि में ही वांछनीय प्रतीत होती है। सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रम में साफ्ट कोक के उत्पादन के लिए नीचे तापमान पर कार्बनीकरण के संयन्त्रों की स्थापना का प्रस्ताव भी शामिल है। किन्तु इस क्षेत्र के विकास-कार्यक्रम-विषयक दृष्टिकोण में परिवर्तन की गुंजायश रखी गई है।

सीमेंट

93. सीमट के उत्पादन का सन् 1965-66 के लिए निर्धारित लक्ष्य 150 लाख टन है, जो दूसरी योजना के अन्त तक के लिए प्रत्याशित स्तर से 50 प्रतिशत अधिक है। सीमेंट की मांग का जो रुख इस समय नजर आ रहा है, उससे मालूम होता है कि सन् 1960-61 की मांग के जिस अनुमानित स्तर को भावी विकास की परियोजनाओं का आधार बनाया गया था, वह शायद कम था। इस विषय की अगले वर्ष पुनः समीक्षा की जाने की आशा है। यदि निर्माण-सम्बन्धी प्रवृत्तियों को सीमित करना आवश्यक या वांछनीय नहीं समझा गया, तो सीमेंट के लक्ष्य में परिवर्द्धन असम्भव नहीं है।

सीमेंट-उद्योग की पूरी आवश्यकता के अनुरूप चूना-पत्थर की उत्पादन-वृद्धि में कठिनाइयों के कारण इस्पात-कारखानों से प्राप्त धातुमल (स्लैग) के चूर्ण के उपयोग की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। दूसरी योजना की अवधि में सीमेंट-निर्माण के लिए धमन-भट्ठियों से प्राप्त धातुमल के उपयोग की दिशा में अधिक प्रगति नहीं हुई।

कांच और कांच का सामान

94. इस उद्योग में महत्वपूर्ण विकास-कार्य होगा दूरबीन और सूक्ष्मवीक्षण आदि, एवं चश्मे के काम में आनेवाले कांच का निर्माण। पहली किस्म का कांच यन्त्र-उद्योग के लिए बुनियादी महत्व की चीज़ है और तीसरी योजना में उसका निर्माण वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् की केन्द्रीय कांच और मृत्तिका-अनुसन्धान-संस्था-द्वारा अर्जित ज्ञान तथा अनुभव के आधार पर प्रारम्भ किया जाएगा। चश्मों के कांच का निर्माण दुर्गापुर में सोवियत रूस की मदद से किया जाएगा।

कच्ची फिल्में

95. कच्ची फिल्मों, एक्स-रे फिल्मों और सूक्ष्म ग्रहणशील (सैंसिटिव) कागज़ों के निर्माण के लिए मद्रास-राज्य में उदकमंडलम् के समीप फ्रांस की मैसर्स बोशे एत सी फर्म के तकनीकी सहयोग से एक संयन्त्र का निर्माण इस क्षेत्र की प्रमुख सरकारी परियोजना है। इस योजना में 8 करोड़ रु० का पूंजी-विनियोग होगा और इसमें प्रति वर्ष 5 करोड़ रु० मूल्य का सामान मिलेगा। इसके विकास के वर्तमान चरण के अन्तर्गत पूरा उत्पादन होने पर इससे 48 लाख वर्ग मीटर फिल्में और 15 लाख वर्ग मीटर फोटोग्राफी का कागज़ उपलब्ध होने की आशा है।

उपभोक्ता-सामान-उद्योग

96. सरकारी क्षेत्र में उपभोक्ता-सामान के निर्माण के कार्यक्रम संगठित उद्योगों में प्रत्यक्ष पूंजी-विनियोग की दृष्टि से अपेक्षाकृत गौण स्थिति में है। इसका अपवाद केवल अनिवार्य औषध है, जिनका वर्णन ऊपर पैराग्राफ 90 में किया गया है। घड़ी और कैमरा, दो ऐसी टिकाऊ उपभोक्ता-वस्तुएं हैं, जिनके जापान के तकनीकी सहयोग से सरकारी क्षेत्र में निर्माण की योजना है। कैमरों का उत्पादन कलकत्ता में राष्ट्रीय यन्त्र-कारखाने में किया जाएगा। सरकारी क्षेत्र उपभोक्ता सामग्रियों के निर्माण में दिलचस्पी ले रहा है, यह सहकारी उद्यमों की स्थापना और विस्तार के लिए दी जा रही सहायता से स्पष्ट है। भविष्य में भी मुख्यतः चीनी और कपास का सूत तैयार करनेवाली मिलों को यह सहायता दी जाएगी। तीसरी योजना में मुख्य उपभोक्ता-सामान-उद्योगों के कायक्रमों और लक्ष्यों की रूपरेखा संक्षेप में नीचे दी जा रही है।

97. **सूती वस्त्र :** तीसरी योजना के अन्त में सूती वस्त्र की आवश्यकता इस धारणा के आधार पर आंकी गई है कि 845 करोड़ गज़ कपड़े की देश के आन्तरिक उपयोग के लिए और 85 करोड़ गज कपड़े की निर्यात के लिए आवश्यकता होगी। आन्तरिक उपभोग की आवश्यकता का यह अनुमान सन् 1960-61 के मांग के अनुमानित स्तर से 20 प्रतिशत अधिक है। दूसरे शब्दों में, यह अनुमान यह मान कर लगाया गया है कि प्रति वर्ष देश की

आबादी और प्रति व्यक्ति-उपभोग, दोनों में दो-दो प्रतिशत की वृद्धि होगी। इस गणना के लिए सन् 1960-61 की आन्तरिक मांग 700 करोड़ गज़ आंकी गई है। इस वर्ष आन्तरिक उपयोग के लिए कपड़े की वास्तविक उपलब्धि लगभग 675 करोड़ गज़ थी। किन्तु इस अपेक्षाकृत कम मात्रा का मुख्य कारण सन् 1959-60 में कपास की फसल अच्छी न होने से कम कपास उपलब्ध होना है। इसलिए यह आंकड़ा सन् 1960-61 की वास्तविक मांग का सूचक नहीं माना जा सकता। इस धारणा की पुष्टि ऊंची कीमतों से भी होती है, जिनके कारण कपड़े की निकासी सीमित रही। निर्यात के लिए निर्धारित आंकड़े हाल के वर्षों के औसत से बहुत ऊंचे नहीं हैं, क्योंकि कुछ समय से निर्यात स्थिर-सा है और उसमें वृद्धि का कोई निश्चित रुख नज़र नहीं आया।

98. सूती वस्त्र के 930 करोड़ गज़ के कुल लक्ष्य में से 350 करोड़ गज़ विकेन्द्रित क्षेत्र (हथकरघा, बिजलीचालित करघा और खादी) के लिए रख दिया गया है। मिलों के लिए उत्पादन-लक्ष्य 580 करोड़ गज़ रखा गया है, जब कि उसके वर्तमान उत्पादन और अनुमानित प्रभावी क्षमता का स्तर 500 करोड़ गज़ है। इस अवशिष्ट 80 करोड़ गज़ के अतिरिक्त उत्पादन के लिए तीसरी योजना में अनुमानतः 25,000 स्वचालित करघे लगाने पड़ेंगे।

99. कपड़े के 930 करोड़ गज़ के उत्पादन-लक्ष्य को दृष्टि में रख कर और यह मान कर कि होज़ियरी और निवार आदि अन्य वस्तुओं के लिए भी सूत की जरूरत होगी, सूत के उत्पादन का लक्ष्य 225 करोड़ पौंड रखा गया है। इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए यह आवश्यक होगा कि मिलों के सक्रिय तकुओं की संख्या बढ़ा कर 165 लाख कर दी जाए, जब कि दूसरी योजना के अन्त में उनकी संख्या 127 लाख थी। नए कारखाने स्थापित करके या मौजूदा कारखानों का विस्तार करके कितने नए तकुए लगाने की आवश्यकता होगी, इसका निश्चय तभी किया जा सकेगा, जब यह मालूम हो कि मौजूदा मिलों के आधुनिकीकरण-कार्यक्रम के फलस्वरूप कितने बेकार पड़े तकुओं को पुनः चालू किया जा सकता है। पैराग्राफ 21 में तकुओं को बदलने पर होनेवाले पूंजी-विनियोग के बारे में जो मोटी बातें कही गई हैं, उन पर पुनर्विचार करना पड़ेगा और आधुनिकीकरण-कार्यक्रमों और नई मिलों की स्थापना-द्वारा उपलब्ध अतिरिक्त प्रभावी तकुओं पर होनेवाले पूंजी-विनियोग का निर्धारण वास्तविक आधार पर करना होगा। किन्तु अतिरिक्त तकुए चाहे आधुनिकीकरण से प्राप्त हों या नए कारखानों की स्थापना से, उनके लिए अनुमानित पूंजी-विनियोग करीब-करीब वही रहेगा। तीसरी योजना में परिकल्पित तकुओं और करघों की अतिरिक्त क्षमता में से एक खासा बड़ा भाग निर्यात के योग्य वस्त्र के लिए रखने का प्रस्ताव है।

100. **रेयन और स्टेपल धागा** : रेयन और स्टेपल धागे के उद्योग के विस्तार के लिए निर्धारित तीसरी योजना के लक्ष्य में उत्पादन-क्षमता को, जो दूसरी योजना के अन्त में 10 करोड़ पौंड (5.23 करोड़ पौंड रेयन धागा और 4.8 करोड़ पौंड स्टेपल धागा) थी, बढ़ा कर 21.5 करोड़ पौंड (14 करोड़ पौंड रेयन धागा और 7.5 करोड़ पौंड स्टेपल धागा) करने का निश्चय किया गया है। इस विस्तार-कार्यक्रम में और चीज़ों के साथ-साथ रेयन के वस्त्रों का प्रति व्यक्ति-उपयोग, जो सन् 1960-61 में 1.3 गज़ था, सन् 1965-66 में 1.8 गज़ करने की व्यवस्था है। रेयन के धागे के समग्र लक्ष्य में 2 करोड़ पौंड टायर का धागा, जो मोटर-टायर-उद्योग में काम आता है, 7.6 करोड़ पौंड विस्कोस धागा, 2.4

करोड़ पौंड एसिटेट धागा, 1 करोड़ पौंड क्यूप्रामोनियम और 1 करोड़ पौंड संश्लिष्ट धागा शामिल है ।

101. इस उद्योग में विनियोग के लिए अलग-अलग चरण निर्धारित करने को बहुत महत्व दिया गया है, ताकि चालू खाते में विदेशी मुद्रा का दबाव कम किया जा सके । इसलिए यह प्रस्ताव किया गया है कि रेयन और स्टेपल धागों की उत्पादन-क्षमता में और अधिक वृद्धि के बजाय रेयन श्रेणी की लुगदी के निर्माण की क्षमता बढ़ाने को प्राथमिकता दी जाए । इस सम्बन्ध में स्थिति की समीक्षा समय-समय पर की जाती रहेगी, ताकि इस क्षेत्र में अतिरिक्त उत्पादन-क्षमता कच्चे माल के निर्माण की प्रगति के साथ चल सके । इस उद्योग के, खास कर स्टेपल धागे के, भावी आयोजन पर इस बात का भी असर पड़ेगा कि लम्बे रेशे के कपास का उत्पादन किस हद तक बढ़ाया जा सकता है, क्योंकि स्टेपल धागा उसका स्थान लेनेवाला माना जा सकता है ।

102. **कागज और अखबारी कागज :** कागज़ और गत्ता-उद्योग का विस्तार-कार्यक्रम मोटे तौर पर इन अनिवार्य वस्तुओं में आत्मनिर्भरता के उद्देश्य के अनुकूल बनाया गया है । सन् 1965-66 तक इनकी मांग 7 लाख टन होने का अनुमान है, अतः उनकी वर्तमान उत्पादन-क्षमता 4,10,000 टन से बढ़ा कर तीसरी योजना के अन्त तक 8,20,000 टन करने का प्रस्ताव है । तीसरी योजना के दौरान स्थापित की जानेवाली अतिरिक्त उत्पादन-क्षमता का एक बड़ा भाग स्थानीय कच्ची सामग्रियां इस्तेमाल करनेवाले छोटे संयन्त्रों के रूप में होगा ।

103. होशंगाबाद में 1,500 टन वार्षिक क्षमतावाली जो सिक्यूरिटी पेपर मिल स्थापित की जाएगी, वह विशेष किस्म का कागज़ तैयार करेगी, जिसके आयात पर इस समय काफी मात्रा में विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ती है ।

104. जहां तक अखबारी कागज़ का सम्बन्ध है, तीसरी योजना में उसकी मांग में सम्भावित वृद्धि के अनुसार उसका उत्पादन 30,000 टन से बढ़ा कर पांच-गुना, यानी 1,50,000 टन, करने का प्रस्ताव है । अतिरिक्त उत्पादन-क्षमता की प्राप्ति नेपा मिल्स की क्षमता को दुगुना कर और गन्ने की खोई तथा हिमालय-क्षेत्र में उपलब्ध नर्म लकड़ी को कच्ची सामग्री के तौर पर इस्तेमाल करनेवाले नए कारखाने स्थापित करके की जाएगी ।

105. इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कागज़ और अखबारी कागज़-उद्योगों को बांस की जगह, जो अब तक उनका मुख्य आधार रहा है, नई कच्ची सामग्रियों पर आश्रित होना पड़ेगा । रेयन के लिए काम आनेवाली लुगदी, आदि नए औद्योगिक उपयोगों में बांस के इस्तेमाल के कारण कागज़-उद्योग के लिए उसकी कमी और बढ़ जाएगी । यद्यपि बांस की नई बुआई और पुनः बुआई के कार्यक्रमों से कुछ हद तक इस समस्या का दीर्घकालीन हल निकल सकता है, तथापि तीसरी योजना में कागज़ और अखबारी कागज़ के उत्पादन में वृद्धि के लिए गन्ने की खोई पर, जो इस समय चीनी-मिलों-द्वारा ईंधन के रूप में इस्तेमाल की जाती है, काफी निर्भर रहना पड़ेगा । कागज़-उद्योग में गन्ने की खोई का उपयोग चीनी के कारखानों के लिए कोई दूसरी ईंधन उपलब्ध कराने पर निर्भर है ।

106. **चीनी :** चीनी-उद्योग के क्षेत्र में तीसरी योजना के प्रारम्भ तक आत्मनिर्भर विकास की स्थिति आ गई है, क्योंकि देश में मिलों की मशीनें तैयार करने में काफी प्रगति

हुई है। इसके अलावा, गन्ने की उपलब्धि इस उद्योग की प्रगति को प्रभावित करनेवाला दूसरा बड़ा उपादान है। तीसरी योजना में गन्ने का उत्पादन बढ़ा कर 10 करोड़ टन करने का विचार किया गया है और उसके लिए मुख्यतः प्रति एकड़-उपज बढ़ाने के ही उपाय का आश्रय लिया गया है। गुड़ बनाने तथा अन्य विविध उपयोगों के लिए गन्ने का उपयोग किए जाने पर भी चीनी के उत्पादन के लिए 350 लाख टन गन्ना उपलब्ध हो जाने की आशा है। इस मौसमी उद्योग में गन्ने की पेराई को पूरा करने के लिए तीसरी योजना में इस उद्योग की उत्पादन-क्षमता 35 लाख टन (गुड़ के रूप में) करने का निश्चय किया गया है। तीसरी योजना में इस उद्योग में सहकारी उद्यमों के भी काफी प्रगति करने की आशा है और ख्याल है कि चीनी की कुल उत्पादन-क्षमता में से सहकारी मिलों का हिस्सा बढ़ कर 25 प्रतिशत के लगभग हो जाएगा। तीसरी योजना में राज्य-सरकारों ने सहकारी चीनी-कारखानों में हिस्सा-पूंजी के रूप में लगाने के लिए करीब 6 करोड़ रु० की व्यवस्था की है।

आशा है, समूची तीसरी योजना के दौरान चीनी के उत्पादन से देश की आन्तरिक आवश्यकता तो पूरी होगी ही, फालतू चीनी का निर्यात भी किया जा सकेगा।

107. **वनस्पति-तेल** : वनस्पति-तेलों के उत्पादन में और अधिक विस्तार पांच मुख्य तेलहनों—मूंगफली, तिल, सरसों, अलसी तथा अरंडी—की कृषि के विस्तार-कार्यक्रमों पर निर्भर करता है। इन तेलहनों का अनुमानित उत्पादन सन् 1960-61 में 71 लाख टन था, जिसे सन् 1965-66 में बढ़ा कर 98 लाख टन करने का लक्ष्य रखा गया है। इन तेलों के उपभोग और जनसंख्या में वृद्धि की रफ्तार को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि खाद्य तेलों की उपलब्धि इतनी नहीं होगी कि आन्तरिक आवश्यकताओं को पूरा करने के बाद वे निर्यात के लिए भी बचे रह सकें। वनस्पति-तेलों की उपलब्धि में वृद्धि के हेतु बनाए गए व्यापक कार्यक्रम में अनेक प्रस्ताव हैं, जिनमें से एक बिनौले के उत्पादन को बढ़ा कर एक लाख टन वार्षिक करना है। इस लक्ष्य की प्राप्ति इस बात पर निर्भर करेगी कि बिनौले के बजाय बिनौले की खली को जानवरों के भोजन के रूप में लोकप्रिय बनाने में कितनी सफलता मिलती है और कपास के रेशे का औद्योगिक कच्ची सामग्री के रूप में कितना उपयोग होता है। बिनौले के तेल का अतिरिक्त उत्पादन मुख्यतः वनस्पति-तेल के निर्माण में प्रयुक्त होगा, ताकि मूंगफली के तेल का उस क्षेत्र में विशेष प्रयोग न हो। वनस्पति-तेल के साधनों में वृद्धि के लिए तीसरी योजना का दूसरा महत्वपूर्ण कार्यक्रम है, खली में से विलायकों के द्वारा तेल अधिक मात्रा में निकालना। अभी यह मात्रा 40,000 टन है, जिसे बढ़ा कर 1,60,000 टन किया जाएगा। निष्कर्षण-द्वारा उत्पादित यह तेल मुख्यतः औद्योगिक कामों में प्रयुक्त होगा। तेल की उपलब्धि के अन्य गौण साधन भी, हालांकि टनों में उनकी मात्रा बहुत कम है, ध्यान में रखे गए हैं—उदाहरण के लिए, चावल की भुसी का तेल। वनस्पति-तेलों का कुल उत्पादन नारियल के तेल-सहित सन् 1965-66 तक 29 लाख टन हो जाने की आशा है।

विकास की समस्याएं और आम सिफारिशें

108. तीसरी योजना में प्रस्तावित औद्योगिक विकास का स्वरूप और स्तर, दोनों ही सरकारी और निजी क्षेत्रों के लिए एक बड़ी चुनौती पेश करते हैं, क्योंकि एक सीमित अवधि में बहुत-सी समस्याओं का सामना करना पड़ेगा। वित्तीय साधन और विदेशी मुद्रा

महत्वपूर्ण होने पर भी एकमात्र समस्याएं नहीं हैं । इस्पात-संयन्त्रों के उत्पादन के बढ़ते हुए स्तर को कायम रखने और साथ ही उनका विस्तार करने में निजी क्षेत्र की दो कम्पनियों के सामने जो समस्याएं आई हैं, वे बड़ी जटिल पाई गई हैं; इसलिए सरकारी क्षेत्र के संयन्त्रों के उत्पादन को पूर्णता के स्तर पर ले आने और साथ ही उनका विस्तार करने के मार्ग में आनेवाली कठिनाइयों पर विजय पाने के लिए उनके अनुभव का पूरा लाभ उठाया जाना चाहिए ।

109. मशीन-निर्माण की गतिविधियों, जिनका सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रमों में महत्वपूर्ण स्थान है, तथा निजी क्षेत्र के मशीन-उत्पादन में डिज़ाइनों का विकास और परियोजना-इंजीनियरी प्रमुख महत्व की चीज़ें हैं । जहां तक परियोजना-इंजीनियरी का सम्बन्ध है, जिसका पैराग्राफ 6 में संक्षेप में वर्णन किया गया है, राष्ट्रीय औद्योगिक विकास-निगम सरकारी क्षेत्र की अपनी निजी तथा वाणिज्य-उद्योग-मन्त्रालय की परियोजनाओं के लिए उत्तरदायित्व लेने की व्यवस्था कर रहा है और सन् 1960-61 में टेक्नोलाजी-विषयक एक परामर्श-कार्यालय स्थापित कर दिया गया । इस कार्यालय के कामों में, परियोजनाओं के प्रारम्भिक अध्ययन तैयार करना, स्थानों की जांच और चुनाव, विस्तृत परियोजना-विवरणों की तैयारी तथा ढांचों के डिज़ाइन तैयार करना शामिल होंगे । जहां तक डिज़ाइनों के विकास का सम्बन्ध है, हालांकि आरम्भ में संयन्त्र और साधनों का प्रकल्पन निश्चय ही मुख्यतः विदेशों से खरीदे गए डिज़ाइनों पर आधारित होगा, फिर भी उद्देश्य यह रहेगा कि निकट भविष्य में देश में ही तैयार किए गए डिज़ाइनों के आधार पर औद्योगिक मशीनें बनाई जाएं । सरकारी क्षेत्र में इरादा यह है कि 'हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड' तथा 'सिन्दरी फर्टिलाइज़र्स एंड केमिकल्स' के अन्तर्गत कार्य कर रहे केन्द्रभूत संगठनों का विस्तार किया जाए और अन्य मशीनी परियोजनाओं में भी इसी प्रकार के अधिकरणों की समुचित ढंग से स्थापना की जाए । बंगलोर में मशीनी औज़ारों के लिए, एक केन्द्रीय प्रतिष्ठान की स्थापना का प्रस्ताव है । निजी क्षेत्र में भी इसी प्रकार के कार्यक्रमों को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए और उन्हें तेज़ी से आगे बढ़ाने के लिए उचित कदम उठाए जाने चाहिए । चूंकि इस क्षेत्र में मशीन के ठीक काम करने की गारंटी देने का रिवाज़ है, इसलिए उनकी परीक्षा (टेस्टिंग) के लिए भी यन्त्र और सुविधाएं उपलब्ध करना अनिवार्य होगा । भोपाल में स्विचगियर के टेस्टिंग और डिज़ाइन-विकास के लिए ऊंचे वाल्टेज की एक प्रयोगशाला स्थापित की जा रही है । निजी क्षेत्र में भी जहां कहीं आवश्यक होगा, इस समस्या की ओर ध्यान देना होगा ।

110. औद्योगिक क्षेत्र को चूंकि निर्यात-अभियान में भी हिस्सा लेना होगा, इसलिए न केवल उत्पादन-वृद्धि की ओर, बल्कि उन सब कारणों और उपादानों की ओर भी ध्यान देना होगा, जो उत्पादकता बढ़ाने और खर्च घटाने में सहायक होते हैं । जहां तक ऊंचे उत्पादन-व्यय की समस्या का सम्बन्ध है, यदि स्थापना के लिए प्रस्तावित संयन्त्र मध्यम आकार के हों और उपोत्पादनों और या सहोत्पादनों का, जैसे कि इलेक्ट्रोलिटिक कास्टिक सोडा-संयन्त्रों में उत्पन्न होते हैं, आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद विकास किया जाए, तो इस समस्या का समाधान हो सकता है । उत्पादन-क्षमता के उपयोग का उच्च स्तर ऊपरी खर्चों में बचत करने में सहायक होगा । ये ऐसे पहलू हैं, जिनका विकास-परिषदों को विशेषज्ञ-स्तर पर निरन्तर अध्ययन करते रहना चाहिए ।

111. इस्पात-संयन्त्रों, पेट्रोल-शोधनालयों, उर्वरक-कारखानों, आदि-जैसे अनेक

भारी उद्योगों को, जिनके विकास की योजना है, अपनी विभिन्न प्रक्रियाओं में उपयोग के लिए बहुत बड़ी मात्रा में पानी चाहिए। इसी प्रकार, मशीन-निर्माण-परियोजनाओं को, जिनमें चुने हुए खास-खास स्थानों पर औद्योगिक श्रमिकों का भारी जमाव हो जाता है, पीने तथा बस्ती के अन्य कामों के लिए पानी की बहुत बड़ी मात्रा में आवश्यकता होती है, हालांकि कारखानों की प्रक्रियाओं के लिए पानी की आवश्यकता बहुत अधिक नहीं होती। तीसरी योजना में शामिल की गई कुछ बड़ी औद्योगिक परियोजनाओं के लिए उचित स्थान के चुनाव की सिफारिश करने के हेतु नियुक्त की गई विशेष समितियों के अध्ययन में पानी की उपलब्धि एक बड़ा महत्वपूर्ण अंग रहा है और स्थान के अन्तिम चुनाव पर उसका बहुत असर पड़ा है। यह देखा गया है कि अनेक इलाके, जो अन्य दृष्टियों से भारी उद्योगों की स्थापना के लिए बहुत उपयुक्त हैं, आवश्यक मात्रा में पानी उपलब्ध न होने के कारण छोड़ देने पड़े हैं। पानी की उपलब्धि का दीर्घकालीन आयोजन किए बिना, ऐसे इलाकों में उद्योग-विकास के अवसर व्यर्थ हो जाएंगे। इसी प्रकार, उद्योगों में उत्पन्न उत्क्षेप्यों के विसर्जन की भी समस्या बहुत महत्वपूर्ण है। यह ध्यान रहे कि अनेक रासायनिक संयन्त्र गंगा तथा अन्य नदियों के ऊपरी भागों में स्थापित किए जा रहे हैं। ऐसी दशा में उनके उत्क्षेप्यों के विसर्जन की समुचित व्यवस्था न करने पर इन कारखानों की समीपवर्ती नदियों के पानी का दूषित हो जाना जन-स्वास्थ्य की एक गम्भीर समस्या पैदा कर देगा। औद्योगिक विस्तार से सम्बद्ध उपादानों पर विस्तृत विचार करते हुए इन दोनों समस्याओं पर उनके बढ़ते हुए महत्व के अनुरूप विचार करना होगा।

सन् 1965-66 में औद्योगिक क्षेत्र की स्थिति

112. तीसरी योजना के लिए निर्धारित औद्योगिक विस्तार से बहुमुखी लाभ होंगे। सरकारी क्षेत्र के पूंजी-विनियोग और उत्पादन में तीव्र वृद्धि समाजवादी शैली के समाज के लक्ष्य को काफी आगे बढ़ाएगी। कृषि, बिजली, रेलें, मोटर-परिवहन, आदि अर्थतन्त्र के कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्रों की साधन-सामग्री के लिए आयात पर निर्भरता भी काफी कम हो जाएगी। स्वयं औद्योगिक क्षेत्र में, भारी इंजीनियरी और मशीन-निर्माण के विकास से, उद्योगों के लिए आवश्यक बहुत-सी पूंजीगत सामग्रियां, जो इस समय विदेशों से मंगाई जाती हैं, यहीं बन सकेंगी। इसी प्रकार, रेयन श्रेणी की लुगदी, कार्बनिक, रसायन, संश्लिष्ट रबड़ एवं रंजक पदार्थ और अनिवार्य औषध-उद्योगों के लिए आवश्यक अन्तरायक, आदि बुनियादी कच्ची सामग्रियों के देश में ही उत्पादन से अनेक महत्वपूर्ण उद्योगों के अनुरक्षण के लिए विदेशों से किए जानेवाले आयात में कमी की जा सकेगी। इस प्रकार, तीसरी योजना के लिए तैयार किए गए औद्योगिक कार्यक्रम के पूरा होने पर उद्योगों की स्वचालित प्रगति के लिए आवश्यक बुनियाद पड़ जाएगी। सन् 1965-66 में औद्योगिक उत्पादन का सामान्य सूचनांक जोकि आम तौर पर प्रगति के सूचकों में से एक माना जाता है, 329 पर (आधार 1950-51 = 100) पहुंच जाएगा, जब कि सन् 1960-61 के लिए इसका अस्थायी अनुमान 194 है। पहली योजना के अन्तिम वर्ष में सूचनांक 139 था।

अनुबन्ध 1

तीसरी पंचवर्षीय योजना

केन्द्रीय सरकार की औद्योगिक परियोजनाएं

योजना का नाम	स्थान	कुल पूंजी-विनियोग (करोड़ रु०)	विदेशी मुद्रा की राशि (करोड़ रु०)	1965-66 में क्षमता (विस्तार की स्थिति में अन्तिम क्षमता)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)
अ. दूसरी योजना की अवशिष्ट परियोजनाएं, जिन पर काम चल रहा है। (अ)				
1. तीन इस्पात-संयन्त्रों को पूरा करना	राउरकेला, भिलाई, दुर्गापुर	50	. 20	30 लाख टन इस्पात की सिल्लियां और बिक्री के लिए 7 लाख टन कच्चा लोहा
2. राउरकेला उर्वरक-कारखाना	राउरकेला			1,20,000 टन नत्रजन
3. भारी मशीन-संयन्त्र	राची	80	55	45,000 टन तैयार मशीनें
4. ढलाई/गढ़ाई-कर्मशाला	राची			94,000 टन की ढलाई और गढ़ाई
5 खनन-मशीन-संयन्त्र	दुर्गापुर			30,000 टन खनन-मशीनें
6. भारी बिजली-संयन्त्र	भोपाल	16	7	12.5 करोड़ रु० मूल्य के बिजली के उपकरण

अनुबन्ध 1—जारी

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)
7. औषध-परियोजनाएं				
(अ) सांश्लेषिक औषध-संयन्त्र	सनतनगर (आन्ध्रप्रदेश)	30	15	6.4 करोड़ रु० मूल्य के औषध
(आ) एंटीबायोटिक संयन्त्र	ऋषिकेश (उत्तरप्रदेश)			25.8 करोड़ रु० मूल्य की कीटाणुनाशक दवाएं
(इ) फाइटो-कैमिकल्स-संयन्त्र	मन्नार (केरल)			77 लाख रु० मूल्य के फाइटो-कैमिकल्स
(ई) शल्य-उपकरण-संयन्त्र	गिंडी (मद्रास)			2.8 करोड़ रु० मूल्य के उपकरण
8. कार्बनिक अन्तरायक संयन्त्र	पनवेल के निकट (महाराष्ट्र)	11	6	25,000 टन कार्बनिक अन्तरायक
9. हिन्दुस्तान एंटीबायोटिक्स का विस्तार	पिम्परी (महाराष्ट्र)	0.5	गौण	45,000 किलोग्राम स्ट्रेप्टोमाइसीन और 1.5 टन टैटरासाइक्लीन
10. ट्राम्बे उर्वरक-कारखाना	ट्राम्बे (महाराष्ट्र)	25	13	90,000 टन नत्रजन
11. नहरकटिया उर्वरक-कारखाना	नहरकटिया (असम)	12	7	32,500 टन नत्रजन
12. नइवेली उर्वरक-कारखाना	नइवेली (मद्रास)	15.68	11.56	70,000 टन नत्रजन
13. ब्रिकेटिंग और कार्बनीकरण-संयन्त्र		13.84*	8.61*	3.8 लाख टन कार्बनीकृत ब्रिकेट
14. नइवेली तापीय बिजली-संयन्त्र		9.67	5.86	250 मेगावाट

15. नूनमती तेल-शोधनालय	नूनमती (असम)	8.5	4.9	7.5 लाख टन कच्चा तेल
16. बरौनी तेल-शोधनालय	बरौनी (बिहार)	23	7.5	20 लाख टन कच्चा तेल
		295.19	161.4	

आ. नई परियोजनाएं, जिनके लिए आंशिक या पूर्ण रूप से विदेशी सहायता का आश्वासन मिल चुका है

17. भारी मशीन-संयन्त्र का विस्तार	रांची	14	11	80,000 टन तैयार मशीनें
18. ढलाई-गढ़ाई का विस्तार	रांची	10	5.5	1,53,000 टन की ढलाई-गढ़ाई
19. खनन-मशीन-संयन्त्र का विस्तार	दुर्गापुर	15	10	45,000 टन खनन-मशीनें
20. दूसरी और तीसरी भारी बिजली-सामान-परियोजनाएं	अनिश्चित	69	45	तीसरी परियोजना के कार्य के बारे में अभी अन्तिम निश्चय किया जाना शेष है
21. भारी मशीनी औज़ार-परियोजना	रांची	11	9	3-4 करोड़ रु० मूल्य के मशीनी औज़ार
22. सूक्ष्म उपकरण-परियोजना	अनिश्चित	8	6	20 करोड़ रु० मूल्य के उपकरण
23. चश्मे के कांच की परियोजना	दुर्गापुर	2.6	2	300 टन चश्मे का कांच
24. कच्ची फिल्म-परियोजना	उदकमंडलम	8	5	63 लाख वर्ग मीटर कच्ची फिल्म, फोटो-सम्बन्धी कागज़ आदि

*** विनियोग तथा विदेशी विनिमय के संशोधित अनुमान क्रमशः 20 करोड़ रु० तथा 11.5 करोड़ रु० हैं।**

अनुबन्ध 1—(जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)
25. घड़ियों का कारखाना	बंगलौर	2.5	1.5	3,60,000 घड़ियां
26. भिलाई इस्पात-संयन्त्र का विस्तार	भिलाई	138	56	25 लाख टन इस्पात की सिल्लियां और 3 लाख टन कच्चा लोहा बिक्री के लिए
27. दुर्गापुर इस्पात-संयन्त्र का विस्तार	दुर्गापुर	56	27	16 लाख टन इस्पात की सिल्लियां और 3 लाख टन कच्चा लोहा बिक्री के लिए
28. राउरकेला इस्पात-संयन्त्र का विस्तार	राउरकेला	90	50	18 लाख टन इस्पात की सिल्लियां
29. हिन्दुस्तान मशीनी औज़ार-कारखाने का विस्तार	बंगलौर	3	2	7 करोड़ रु० मूल्य के मशीनी औज़ार
30. बुनियादी रिफ्रैक्टरी परियोजना	भिलाई	3	1.5	अभी निश्चय नहीं हुआ
31. पंजाब में नया मशीनी औज़ार-कारखाना	अनिश्चित	5	3	3.5 करोड़ रु० मूल्य के 1,000 मशीनी औज़ार
32. गुजरात तेल-शोधनालय	अनिश्चित	30	15	20 लाख टन कच्चा तेल
33. प्राग औज़ार-कारखाने का विस्तार	सिकन्दराबाद (आन्ध्रप्रदेश)	1	0.5	1 करोड़ रु० मूल्य के मशीनी औज़ार

34. भारी ढांचा-कारखाना	अनिश्चित		†	एक पाली के आधार पर 10,000 टन भारी ढांचे
35. भारी प्लेट और वेसल कारखाना	अनिश्चित	6	4	एक पाली के आधार पर 18,000-20,000 टन की रासायनिक-संयन्त्र-मशीनें
36. गोरखपुर उर्वरक-कारखाना	गोरखपुर	18	8	80,000 टन नत्रजन
37. सिक्युरिटी कागज़-मिल	होशंगाबाद (मध्यप्रदेश)	5.5	4	1,500 टन सिक्युरिटी कागज़
38. हिन्दुस्तान केबल्स का विस्तार	रूपनारायणपुर (पं० बंगाल)	3.5	1.2	दोहरी पाली के आधार पर 2,000 मील लम्बे सूखे कोर के केबल और नगर में लगाए जानेवाले प्लास्टिक की परत वाले 500 मील लम्बे केबल
		499.1	267.2	
	इ. अन्य परियोजनाएं (आ)			
39. बोकारो इस्पात-परियोजना	बोकारो	200	100	10 लाख टन की इस्पात की सिल्लियां और 3,50,000 टन कच्चा लोहा बिक्री के लिए
40. मिश्र धातु और औज़ारी इस्पात-संयन्त्र	दुर्गापुर	50	20	48,000 टन तैयार माल
41. भोपाल भारी बिजली-संयन्त्र का विस्तार	भोपाल	19	8	25 करोड़ रु० मूल्य के बिजली के उपकरण

†नवीन अनुमानों के अनुसार इन परियोजनाओं पर 10.1 करोड़ रु० का व्यय आएगा। इसके लिए 6.4 करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता होगी।

अनुबन्ध 1—(जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)
42. हिन्दुस्तान जहाज़-घाट का विस्तार (विस्तार और सहायता-अनुदान)	विशाखापटनम	10	1.5	50,000 से 60,000 डी॰ डब्ल्यू॰ टी॰
43. हिन्दुस्तान जहाज़-घाट की सूखी गोदी-परियोजना	विशाखापटनम	2	0.5	
44. दूसरा जहाज़-घाट	कोचीन	20	5	
45. एफ॰ ए॰ सी॰ टी॰ का विस्तार	अलवाए (केरल)	8	5.6	60,000 टन नत्रजन
46. नेपा मिल का विस्तार	नेपानगर (मध्यप्रदेश)	4	3	60,000 टन अखबारी कागज़
47. नमक-विकास		3	0.8	
48. भारी कम्प्रेशर और पम्प-परियोजना	अनिश्चित	15	10	अभी निश्चय नहीं हुआ
49. बाल और रोलर बियरिंग-परियोजना	अनिश्चित	8	6	20 लाख बियरिंग
50. मशीनी औज़ार-कारखाने की अतिरिक्त क्षमता 51. दूसरा भारी ढांचा-कारखाना 52. दूसरा प्लेट और वेसल कारखाना	अनिश्चित	15	10	अभी निश्चय नहीं हुआ
53. समुद्री डीज़ल-इंजिन-कारखाना	अनिश्चित	3	1.5	
54. सरकारी अलकालायड-कारखाने का विस्तार व आधुनिकीकरण	गाज़ीपुर (उत्तरप्रदेश)	0.4		
55. स्नेहक तेल-परियोजना		12	6	1 लाख टन एच॰ बी॰ आई॰ स्नेहक
56. अल्प ताप कार्बनीकरण-संयन्त्र		22	15	22 लाख टन कोयला

57. नइवेली लिग्नाइट उच्च ताप कार्बनीकरण-संयन्त्र और कच्चे लोहे के उत्पादन के लिए सम्बद्ध सुविधाएं	नइवेली (मद्रास)	25	13	अभी निश्चय नहीं हुआ
58. नगर	परियोजना-स्थलों पर	50		
		466.4	205.9	
	योग	1260.69	634.5	

अनुबन्ध 1––(जारी)

2. केन्द्रीय सरकार की खनिज परियोजनाएं

(करोड़ रु०)

योजना का नाम	कुल व्यय-व्यवस्था	विदेशी मुद्रा का भाग
(1)	(2)	(3)
अ. दूसरी योजना की अवशिष्ट परियोजनाएं, जिन पर काम चल रहा है (अ)		
कोयला		
राष्ट्रीय कोयला-विकास-निगम के कार्यक्रम ..	8	—
भोजूडीह, पाथरडीह और दुग्दा में कोयला धोने के केन्द्र	7.5	4
	15.5	4
तेल		
कच्चे तेल की आयल इंडिया लाइन ..	8	—
आयल इंडिया में हिस्सा-पूंजी ..	1.42	—
	9.42	—
लिग्नाइट		
नईवेली लिग्नाइट-परियोजना ..	3.29	1.3
खनन-योजना		
आवास ..	3	—
खनिज लोहा	6.29	1.3
किरिबुरु ..	6	3.93
योग	37.21	9.23
आ. नई परियोजनाएं, जिनके लिए पूर्ण या आंशिक रूप से विदेशी सहायता का आश्वासन मिल गया है (आ)		
कोयला		
राष्ट्रीय कोयला-विकास निगम से अतिरिक्त कोयला (170 लाख टन)	57†	28

†गहरी और गैस-भरी खानों के लिए इसके अतिरिक्त भी कुछ राशि की आवश्यकता पड़ सकती है ।

अनुबन्ध 1—(जारी)

(1)		(2)	(3)
सिंगरेनी-विस्तार (30 लाख टन)		20	6
उत्पादन का रख-रखाव		16	10
केन्द्रीय कर्मशाला	..	8	2.7
सम्भावनाओं के लिए खुदाई ..	..	2	1.4
चौथी योजना के लिए अग्रिम कार्यवाही	..	10	7
केन्द्रीय रोपवेज़	..	16	8
कोकिंग कोयला धोने की अतिरिक्त क्षमता	..	20	11.3
		149	74.4
तेल			
तेल की खोज	..	115	53.53
खनिज लोहा			
बैलाडिला खनिज लोहा-परियोजना	..	17	8.55
तांबा-परियोजना			
खेतड़ी तांबा-परियोजना	..	10	6.36
दरीबो तांबा-परियोजना	..	2.5	
	योग	12.5	6.36
		293.5	142.84

इ. अन्य परियोजनाएं (आ)

कोयला			
गैर-कोकिंग कोयला धोने के केन्द्र	..	12	7
नइवेली लिग्नाइट-परियोजना			
खान-उत्पादन का विस्तार	..	3.8	1.45
तेल			
तेल-वितरण-कार्यक्रम	..	10	—
आयल इंडिया	..	8	—
कच्चे तेल की पाइप-लाइनें	..	4	—
तेल उत्पादनों के लिए पाइप-लाइनें	..	37	10
		59	10

अनुबन्ध 1—(जारी)

(1)	(2)	(3)
अन्य खनिज		
सिक्किम तांबा-परियोजना	2.5	1.3
पन्ना की हीरा-परियोजना ..	1.5	0.6
खनिज मैंगनीज़ उपयोग-संयन्त्र ..	5	1
पाइराइट से गन्धक-प्राप्ति की परियोजना	5	2.5
कोलार की सोना-खानें	1.5	0.84
हुत्ती की सोना-खानें	0.5	0.2
किरिबुरु का विस्तार	6	3
यूरेनियम-खनन, संरचना और प्लुटोनियम निकालने का संयन्त्र	24	8.17
	46	17.61
सर्वेक्षण		
जी० एस० आई० विस्तार	10	3.19
आ० बी० एम० विस्तार	5	1.89
योग	15	5.08
सर्वयोग	466.51	193.21

3. संस्थात्मक अभिकरणों को सहायता तथा अन्य विविध आवश्यकताएं (केन्द्रीय)

मैसूर आयरन एंड स्टील वर्क्स को सहायता	5	—
एन० आई० डी० सी०	20	—
संस्थात्मक वित्तीय निगमों को ऋण	26	—
बागान-उद्योगों को ऋण-सहायता	11.7	—
राष्ट्रीय उत्पादकता-परिषद्	1.3	—
मीट्रिक पद्धति	7	—
भारतीय मानक-संस्थान	3.6	—
	74.6	

अनुबन्ध 2

1. राज्य सरकारों की औद्योगिक परियोजनाएं

योजना का नाम	स्थान	कुल पूंजी-विनियोग (करोड़ रु०)	विदेशी मुद्रा का भाग (करोड़ रु०)	1965-66 में वार्षिक उत्पादन-क्षमता (विस्तार की अवस्था में अन्तिम क्षमता)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)
50 लाख रु० या इससे अधिक खर्च की परियोजनाएं				
	अ. दूसरी योजना से आगे आई हुई परियोजनाएं (अ)			
1. आन्ध्र पेपर मिल्स का विस्तार	राजमुन्दरी (आन्ध्रप्रदेश)	4	2.49	18,000 टन कागज़
2. मैसूर आयरन एंड स्टील वर्क्स का विस्तार	भद्रावती (मैसूर)			
(अ) इस्पात-विस्तार-कार्यक्रम		2*	3.5	1 लाख टन इस्पात की सिल्लियां
(आ) लौह-सिलिकन संयन्त्र का विस्तार		0.95	0.37	20,000 टन लौह सिलिकन
3. सरकारी बिजली कारखाने का विस्तार	बंगलोर (मैसूर)	0.9	0.48	बिजली ट्रांसफार्मर : 2 लाख के० वी० ए०, बिजली की मोटरें : 60,000 अश्व-शक्ति स्विचगियर और स्विच-बोर्ड : 40 लाख रु० मूल्य के
4. दुर्गापुर धमन-भट्ठियां	दुर्गापुर (प० बंगाल)			
(अ) गैस-ग्रिड		2.25		प्रति दिन 75 लाख घन-फुट गैस

*केन्द्रीय योजना में 5 करोड़ रु० और राज्य की योजना में 2 करोड़ रु०

(अ) कुल व्यय और विदेशी मुद्रा के अंक वे राशियां हैं, जिनके तीसरी योजना में आ जाने की सम्भावना है।

अनुबन्ध 2—(जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)
(आ) तार संचायक-संयन्त्र		0.5	0.17	100 टन कोलतार प्रतिदिन
(इ) धमन-भट्ठियों और उपोत्पादनों के संयन्त्र को दुगुना करना		4.2		कोक : 6,50,000 टन, बेनज़ीन : 7.25 लाख गैलन, टाल्वीन : 2.35 लाख गैलन, नैप्थेलीन: 1,200 टन और सड़क-कोलतार
आ. तीसरी योजना में सम्मिलित नई परियोजनाएं (आ)				
5. प्राकृतिक गैस-वितरण	(असम)	1.65	0.3	
6. गैस-पृथक्करण और प्रसारण-योजना	(असम)	1.5	0.5	
7. बिहार सुपरफास्फेट-कारखाने का विस्तार	सिन्दरी (बिहार)	0.5	0.15	46,000 टन सुपरफास्फेट
8. उच्च तनाव इन्सुलेटर-कारखाने का विस्तार	रांची (बिहार)	0.58	0.17	4,800 टन इन्सुलेटर
9. उर्वरक-परियोजना*		20	10	80,000 टन नत्रजन
10. सूत-कताई मिल	शम्बा (जम्मू-कश्मीर)	0.5	0.25	12,000 तकुए
11. मार्गदर्शक लोहा और इस्पात-संयन्त्र	(मद्रास)	0.75		
12. इस्पात रोलिंग-मिल	(मद्रास)	1		20,000 टन रोलिंग उत्पादन
13. बम्बई में गैस-वितरण	(बम्बई)	0.5		प्रति दिन 2 करोड़ घनफुट गैस
14. नंगल के कारखाने का पुनर्गठन	नंगल (पंजाब)	0.5		

15. रिफ़ैक्टरी-संयन्त्र	चुर्क (उत्तरप्रदेश)	0.85	0.3	24,000 टन रिफ़ैक्टरिया
16. सूक्ष्म उपकरण-कारखाने का विस्तार	लखनऊ (उत्तरप्रदेश)	0.69	0.22	•
17. कार्बनिक रसायन-योजना†	दुर्गापुर (प० बंगाल)	4	2	कास्टिक सोडा: 6,600 टन, फिनोल : 6,600 टन, क्लोरिन : 5,800 टन, थैलिक एनीहाइड्राइड : 6,600 टन, फारमलडिहाइड : 5,000 टन, पेंटा-क्लोरोफिनोल : 1,000 टन
18. सूत-कताई मिल	(पश्चिम-बंगाल)	0.65	0.08	25,000 तकुए
50 लाख रु० से कम खर्च की विभिन्न योजनाएं		15.61	4	
		64.08	24.98	

(आ) कुल व्यय और विदेशी मुद्रा के अंक योजनाओं को पूरा करने में सम्भावित व्यय के सम्बन्ध में हैं। सूची में निर्दिष्ट कुछ परियोजनाओं के व्यय के कुछ भाग, उद्योगों और खनिज-पदार्थों के लिए व्यवस्था तथा उनके लिए आवश्यक व्यय-राशि के अन्तर के अनुसार चौथी योजना में भी चले जाएंगे।

* राज्य-क्षेत्र में अस्थायी रूप से निर्दिष्ट है। स्थान और अभिकरण का निश्चय अभी किया जाना है।

† परियोजना की इक्विटी पूंजी में अल्पमत के आधार पर निजी उद्योगपतियों की साझेदारी का सुझाव है।

अनुबन्ध 2—(जारी)

2. राज्य-सरकारों की खनिज परियोजनाएं

(करोड़ रु०)

योजना का नाम	कुल व्यय-व्यवस्था
राज्यों की योजनाओं में सम्मिलित 50 लाख रु० या इससे अधिक खर्च की नई योजनाएं	
कालाकोट कोयला-खान-परियोजना (जम्मू-कश्मीर)	0.6
राजस्थान खनन-निगम (पालान लिग्नाइट और डूंगरपुर में फ्लोरस्पार की खोज)	2.75
खनिज विकास-मंडल, मैसूर (राज्य में लोहा और खनिज मैंगनीज़ की खोज)	0.9
50 लाख रु० से कम खर्च की विविध योजनाएं और कार्यक्रम	6.75
योग	11

3. निजी उद्योगों में साझेदारी और निजी क्षेत्र को सहायता देने के कार्यक्रमों के लिए राज्यों की पूंजी की आवश्यकता

(करोड़ रु०)

योजना का नाम	स्थान	कुल पूंजी-विनियोग	विशेष
औद्योगिक विकास-क्षेत्र	आन्ध्रप्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, केरल, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, प० बंगाल	5.4	
राज्य औद्योगिक विकास-निगम	आन्ध्रप्रदेश, बिहार, केरल, मद्रास, उत्तरप्रदेश	6.08	
निजी क्षेत्र की परियोजनाओं में राज्यों की साझेदारी	असम, जम्मू-कश्मीर, केरल, मैसूर, पंजाब, प० बंगाल	9.47	
रबड़-बागानों का विकास	केरल	4.65	85,000 एकड़ क्षेत्र
	योग	25.6	

अनुबन्ध 3

कतिपय चुने हुए बड़े उद्योगों और खनिजों का विस्तार : प्रगति और लक्ष्य

उद्योग का नाम	उत्पादन इकाई	1950-51	1955-56 उत्पादन	1960-61 अनुमानित क्षमता	1960-61 अनुमानित उत्पादन	1965-66 क्षमता	1965-66 उत्पादन	1961-66 में स्थिर पूंजी-विनियोग (करोड़ रु०)	स्थिर पूंजी-विनियोग का विदेशी मुद्रा-सम्बन्धी भाग (करोड़ रु०)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)
अ. धातुकर्म उद्योग									
1. लोहा और इस्पात									
इस्पात की सिल्लियां	दस लाख टन	1.4	1.7	6	3.5	10.2	9.2		
तैयार इस्पात	दस लाख टन	0.98	1.3	4.5	2.2	7.5	6.8		
बिक्री के लिए कच्चा लोहा	दस लाख टन	0.35	0.38	0.9	0.9	1.5	1.5	640	305
मिश्रधातु, औज़ारी और विशेष इस्पात (तैयार)	हज़ार टन	—	—	—	—	200	200		
धूसर लोहे की ढलाई	दस लाख टन	—	—	अनुप०	अनुप०	1.2	1.2		
इस्पात की ढलाई	दस लाख टन	—	—	0.1	0.05	0.2	0.2	30(क)	15(क)
इस्पात की गढ़ाई	हज़ार टन	—	—	60	35	200	200		
2. लौह मैंगनीज़, विद्युत्-तापीय	हज़ार टन	—	—	150	100	220	200	5	2
3. लौह सिलिकन	हज़ार टन	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध	5	6	40	40	2	1.2

अनुबन्ध 3—(जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)
4. अल्युमीनियम	हज़ार टन	3.7	7.3	18.2	18.5	87.5	80	65	32
5. तांबा (आग में संशोधित और विद्युत्-श्लेषित)	हज़ार टन	6.6	7.5	9	8.9	22	20	0.6(ख)	0.4(ख)
6. सीसा	हज़ार टन	0.8	2.1	6.1	3.5	8.5	8	7.3	2.7
7. जस्ता	हज़ार टन	—	—	—	—	15	15		
8. टंगस्टन कारबाइड	हज़ार टन	—	—	5	4	69	25	1	0.5
				आ. मेकैनिकल इंजीनियरी उद्योग					
9. औद्योगिक मशीनें (1)									
सूती वस्त्र-मशीनें	करोड़ रु०	अनुपलब्ध	4	10	9	22	20	5	3
सीमेंट-मशीनें	करोड़ रु०	—	0.34(ग)	1.1	0.6	4.5	4.5	3	2
चीनी-मशीनें	करोड़ रु०	—	0.19	10.5	3.3	11 से 12	10	7	4
कागज़-मशीनें	करोड़ रु०	—	—	0.7	—	8.5	6.5 से 7		
दूध-उद्योग की मशीनें	करोड़ रु०	—	—	0.25	गौण	2.5	2.5	0.5	—
औद्योगिक बायलर	करोड़ रु०	—	—	3.7	0.4	29	25	10(घ)	5(घ)
क्रेन	हज़ार टन	—	—	2.5	1.5	60	60		
मशीनी औज़ार	करोड़ रु०	0.34	0.78	7	5.5	30	30	40	27
भारी मशीन निर्माण (इस्पात और रासायनिक मशीनें	हज़ार टन	—	—	—	—	80	(ङ)	119	81.5
कोयला-खनन-मशीनें	हज़ार टन	—	—	—	—	45	30		

भारी प्लेट और वेसल कारखाना (प्रेशर वेसल, ताप विनिमापक और अन्य प्रकार के रासायनिक संयन्त्र तथा उपकरण)	हज़ार टन	—	—	—	—	40	30	20	12
10. ढांचा-सम्बन्धी निर्माण (जिसमें भारी ढांचा-सम्बन्धी उद्योगशालाएं भी शामिल हैं)	हज़ार टन	—	90	500	150	1,100	1,000	25	10
11. सूक्ष्म उपकरण—औद्योगिक तथा वैज्ञानिक	करोड़ रु०	—	—	3.6	3	23	12	9	6.5
12. शल्य-क्रिया के औज़ार	दस लाख (संख्या)	—	—	—	—	2.5	2.5	2.7	2
13. घड़ियां	हज़ार (संख्या)	—	—	—	—	360(च)	240(च)	4	2.5
14. रेलों के डिब्बे तथा हिस्से		—	—	—	—	—	—	2	1
इंजिन :									
भाप-चालित	(संख्या)	7	179	300	295	300	1,175(छ)		
डीज़ल-चालित	(संख्या)	—	—	—	—	अनुपलब्ध	434(छ)		
बिजली-चालित	(संख्या)	—	—	—	—	60	232(छ)		
माल-डिब्बे (चौपहिए)	(संख्या)	2,924	41,966(छ)	26,000	20,000	33,500	1,09,866(छ)		
सवारी डिब्बे	(संख्या)	479	4,384(छ)	1,300	1,210	1,420	7,837(छ)		

अनुबन्ध 3—(जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)
15. मोटर तथा सहायक उद्योग								85	40
सवारी कारें	हज़ार (संख्या)			20	20	30	30		
व्यावसायिक गाड़ियां	हज़ार (संख्या)	16.5	25.3	28	28	60	60		
जीपें और स्टेशन-वैगन	हज़ार (संख्या)			5.5	5.5	10	10		
सहायक वाहन	करोड़ रु०	0.42	2.3	अनुपलब्ध	9	25	25		
मोटर-साइकिल और स्कूटर	हज़ार (संख्या)	—	1.5	24	18	48 से 60	50		
16. बाल और रोलर बियरिंग	दस लाख (संख्या)	0.08	0.9	1.6	2.9	10	14(ज)		
17. मिट्टी हटाने के उपकरण									
क्रालर ट्रैक्टर	(संख्या)	—	—	—	—	600	500		
डम्पर और स्क्रेपर	(संख्या)	—	—	—	—	600	500		
फावड़े	(संख्या)	—	—	—	—	125	100		
18. सड़क के रोलर	(संख्या)	—	—	800	400	800	700		
19. कृषि-उपकरण और मशीनें									
बिजली-चालित पम्प	हज़ार (संख्या)	34	37	184	90	184	150		
डीज़ल-इंजिन	हज़ार (संख्या)	5.5	10.	62	40	72	66	27	18
ट्रैक्टर	हज़ार (संख्या)	—	—	1.05	0.6	12	10		
20. बाइसिकलें	दस लाख (संख्या)	0.1	0.51	2.2	1.05	2.2	2(झ)		
21. सिलाई-मशीनें	हज़ार (संख्या)	33	111	268	297	700	700(ञ)		
22. वेल्डिंग इलेक्ट्रोड	दस लाख आर० फुट	—	—	600	350	1,080	900		
23. जहाज़-निर्माण (हिन्दुस्तान शिपयार्ड का विस्तार, सूखी गोदी और दूसरा जहाज़घाट	हज़ार जी० आर० टी०	—	50(छ)	20	20	50 से 60	50 से 60	32	7

इ. बिजली इंजीनियरी उद्योग

24. बिजली के ट्रांसफार्मर (33 किलोवाट से नीचे)	दस लाख के० वी० ए०	0.18	0.63	2.2	1.2	4	3.5		
25. बिजली के मोटर (200 अश्व-शक्ति और उससे कम)	दस लाख अश्व-शक्ति	0.1	0.27	1.25	0.7	3(ट)	2.5(ट)		
26. बिजली के केबल और तार									
ए० सी० एस० आर०	हज़ार टन	1.7	8.7	28	22	55	44		
वी० आई० आर० और प्लास्टिक की पर्त चढ़े	दस लाख गज़	39.4	86.9	500	220	800	600		
पेपर इन्सुलेटेड	मील	—	—	1,000	750	4,500	4,000		
सूखे कोर के केबल	मील	—	525	470(ठ)	1,077	2,000 से 2,500	2,000	30	18
कोएक्सियल केबल	मील	—	—	300	200	300	300		
27. बिजली के पंखे	दस लाख (संख्या)	0.19	0.29	1.8	0.98	2.8	2.5		
28. घरेलू मीटर	दस लाख (संख्या)	—	0.25(ग)	0.6	0.46	2.5	2.1		
29. बिजली की बत्तिया									
जी० एल० एस० आदि	दस लाख (संख्या)	15	25.03	43.13(ठ)	38.05	76	68		
फ्लोरोसेंट ट्यूब	दस लाख (संख्या)	—	0.75	1.20(ठ)	1.46	7	6		
30. रेडियो-रिसीवर (संगठित क्षेत्र)	हज़ार (संख्या)	49	102	279.18(ठ)	254	900	800		
31. स्टोरेज बैटरियां	हज़ार (संख्या)	200	258.08	379.30(ठ)	509	900	800		
32. सूखी बैटरियां	दस लाख (संख्या)	136.3	161.1	224.50(ठ)	200	400	350		
33. सरकारी क्षेत्र में बिजली के भारी उपकरण	करोड़ रु०	—	—	—	—	80	80	104	60

अनुबन्ध 3—(जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)
ई. रासायनिक और सम्बद्ध उद्योग									
34. उर्वरक								225	100
नत्रजनयुक्त (नत्रजन की मात्रा के अनुसार)	हज़ार टन	9	79	248	110	1,000	800		
फास्फेटयुक्त (फास्फेट की मात्रा के अनुसार)	हज़ार टन	9	12	60	55	500	400		
35. भारी रसायन								42	18
गन्धक-अम्ल	हज़ार टन	99	164	476	363	1,750	1,500		
सोडा ऐश	हज़ार टन	45	81	268	145	530	450		
कास्टिक सोडा	हज़ार टन	11	35	124	100	400	340		
कैल्शियम कारबाइड	हज़ार टन	—	3(ग)	17	10	67	60		
सोडियम हाइड्रोसल्फाइट	हज़ार टन	—	—	2.3	0.6	12	10		
हाइड्रोजन पैरोक्साइट	हज़ार टन	—	—	3	1.2	9.5	8		
36. विविध रासायनिक उत्पादन								13	5
कार्बन ब्लैक	हज़ार टन	—	—	—	—	30	30		
औद्योगिक विस्फोटक									
खंडनकारी विस्फोटक	हज़ार टन	—	—	5	6	20	20		
तरल ऑक्सीजन विस्फोटक	हज़ार टन	—	—	2	2	9	9		
सेफ्टीफ्यूज़	दस लाख क्वायल	—	—	7	2	25	25		
डिट्रोनेटर	दस लाख (संख्या)	—	—	—	—	80	80		
रबड़-रसायन	हज़ार टन	—	—	—	—	3	3		

37. कोक									
साफ्ट कोक (कम ताप कार्बनीकरण)	दस लाख टन	—	—	—	—	2	1.8	42	26.6
हार्ड कोक उप-उत्पादन	हज़ार टन	—	—	620	500	1,160	1,100	29.2	13
38. रंजक और कार्बनिक अन्तरायक								28	13
रंजक	दस लाख पौंड	—	4	18	11.5	22.4	18		
अन्तरायक	टन		—	—	—	25,000	25,000		
39. औषध और सम्बद्ध पदार्थ								39.3	18
सल्फा औषध	टन	—	83(ग)	330	150	1,000	1,000		
पेनिसिलीन	दस लाख मेगा यूनिट	—	6.6	45	40	205	120		
स्ट्रेप्टोमाइसीन	टन	—	—	—	—	150	150		
पी० ए० एस०	टन	—	40(ग)	145	100	400	400		
पेचिश-निरोधक औषध	टन	—	6(ग)	60	30	75	75		
आइ० एन० च०	टन	—	1(ग)	33	30	100	100		
फाइटोकेमिकल	टन	—	—	—	—	76.4	76.4		
डी० डी० टी०	टन	—	284	2,800	2,800	2,800	2,800		
40. प्लास्टिक (पोलिथिलीन पी० वी० सी० पोलिस्टाइ-रीन और अन्य)	हज़ार टन	—	0.7	15.7	10	85	74	27.5	10.5
41. साबुन (2)	हज़ार टन	106	102	254	150	254	500	3	1
संश्लेषित स्वच्छकारी	हज़ार टन	—	—	7.2	1.5	20	20	3	1

अनुबन्ध 3—(जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)
42. कच्ची फिल्में : सिनेमाटोग्राफिक, आदि	दस लाख वर्ग-मीटर	—	—	—	—	10	10	9	5.5
43. रबड़ के उत्पादन								11.5	5
मोटर के टायर	दस लाख (संख्या)	—	0.9	1.61	1.35	3.7	3		
बाइसिकल के टायर	दस लाख (संख्या)	—	5.8	16.9	11	38.6	31		
44. कृत्रिम रबड़	हज़ार टन	—	—	—	—	50	50	25	12.5
45. कागज़ और गत्ता	हज़ार टन	114	187	410	350	820	700 }	100	35
अखबारी कागज़	हज़ार टन	—	4.2	30	25	150	120 }		
सिक्युरिटी कागज़	टन	—	—	—	—	1,500	1,500	5.5	4
46. सीमेंट	दस लाख टन	2.7	4.6	9	8.5	15	13	60	12
47. रिफ्रैक्टरियां	दस लाख टन	—	0.28	0.87	0.52	2	1.6	22	10
48. बिजली के पोर्सिलेन (उच्च तनाव और कम तनाव के इन्सुलेटर)	हज़ार टन	—	4.3	12.5	8.4	30	24	3	2.2
49. कांच और कांच का सामान	हज़ार टन	92	125	370	225	615	440	11	3.5
50. पेट्रोलियम की चीज़ें	दस लाख टन	—	3.6	6.02 कच्चा तेल	5.67	10.77 कच्चा तेल	9.86 }	73.5	33.4
स्नेहक तेल	हज़ार टन	—	—	—	—	100	100 }		
51. मोटरों और उद्योगों में व्यवहृत अलकोहल	दस लाख गैलन	8.6	15.2	40	22	72	60	4	0.4

52. औद्योगिक गैसें								11	6.5
ऑक्सीजन	दस लाख घन फुट	—	—	1,000	700	2,300	1,650		
एसीटिलीन	दस लाख घन फुट	—	—	156	90	250	200		
उ. वस्त्र-उद्योग									
53. कपास								32.5	11
सूत	दस लाख पौंड	1,179	1,640	2,100	1,750	2,250	2,250		
कपड़ा (मिल-निर्मित)	दस लाख गज़	3,720	5,102	5,300	5,127	5,800	5,800		
54. पटसन	हज़ार टन	892	1,150	1,200	1,065	1,200	1,100		
55. रेयन और रेशेवाले कपड़े								75	45
रेयन का तार	दस लाख पौंड	0.4	16	52.3	47	140	140		
रेशेवाला कपड़ा	दस लाख पौंड	—	14	48	47.8	75	75		
रासायनिक लुगदी	हज़ार टन	—	—	—	—	100	90		
56. ऊनी उत्पादन								2	1
ऊनी और बटा हुआ तार	दस लाख पौंड	18.3	21.7	67	28	67	52		
ऊनी कपड़ा	दस लाख गज़	—	15	48	15	48	35		
ऊनी टाप	दस लाख पौंड	—	—	10	—	31.5	31.5		
ऊ. खाद्य-उद्योग									
57. नमक	दस लाख टन	2.7	3	3.9	3.7	6.5	5.4	9	2
58. चीनी (3)	दस लाख टन	1.12	1.86	2.25	3	3.5	3.5	100	12

अनुबन्ध 3—(जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)
59. वनस्पति तेल									
खली का विलायक तत्त्व	हज़ार टन	—	—	550 (खली)	25 (तेल)	2,000 (खली)	160 (तेल)	10	2.5
बिनौले का तेल	हज़ार टन	—	—	180(ङ) (बीज)	15(ङ) (तेल)	850 (बीज)	100 (तेल)		
60. वनस्पति	हज़ार टन	153	276	434	330	550	500		
61. विविध उद्योग		—	—	—	—	—	—	168(ढ)	43
योग								2,454.6	1,109.9

टिप्पणी :—इंजीनियरी उद्योगों की क्षमता का अनुमान दोहरी पाली के आधार पर लगाया गया है।

(1) सूती वस्त्र-उद्योगों की मशीनों के अलावा इस शीर्षक के अन्तर्गत क्षमता और उत्पादन का सम्बन्ध मूल उपकरणों की मांग से है।

(2) 1965-66 के सिवाय उत्पादन के ये आंकड़े संगठित क्षेत्र से सम्बन्धित हैं।

(3) आंकड़े फसल-वर्ष के बारे में हैं।

(क) ढलाई-गढ़ाई (तालिका की प्रविष्ट-संख्या 9 में सम्मिलित), खनन-मशीन-परियोजना और चित्तरंजन इंजिन-कारखाने के इस्पात-ढलाई-कारखाने के लिए निर्धारित व्यय से अधिक।

(ख) सरकारी क्षेत्र की क्षमता पर पूंजी-विनियोग खनिज-पदार्थों की व्यय-व्यवस्था के अन्तर्गत दिखाया गया है।

(ग) कैलेंडर-वर्ष के अनुसार।

(घ) व्यय केवल निजी क्षेत्र की योजनाओं के बारे में है। सरकारी क्षेत्र की व्यय-राशि तालिका की 10 और 33 प्रविष्टियों के अन्तर्गत है।

(ङ) वास्तविक उत्पादन को इस्पात-क्षमता के विस्तार-कार्यक्रम से सम्बद्ध कर दिया जाएगा।

(च) केवल सरकारी क्षेत्र के बारे में।

(छ) पांच वर्ष की अवधि के लिए ।

(ज) तीन पालियों की कार्यक्षमता के आधार पर ।

(झ) इसके अतिरिक्त लघु उद्योग-क्षेत्र में 5 लाख साइकिलें तैयार होने की आशा है ।

(ञ) इसके अतिरिक्त लघु उद्योग-क्षेत्र में 1.5 लाख सिलाई-मशीनें बनने की आशा है ।

(ट) ये आंकड़े 300 अश्व-शक्ति और उससे कम के बारे में है ।

(ठ) एक पाली की क्षमता ।

(ड) आंकड़े केवल संगठित क्षेत्र के बारे में है ।

(ढ) इसमें नगरों के लिए 50 करोड़ रु० और सरकारी क्षेत्र के अन्य उद्योगों के लिए 47 करोड़ रु० भी सम्मिलित है, जो उक्त उद्योगों में सम्मिलित नहीं किए गए है ।

अध्याय 27

खनिज-पदार्थ और तेल

पहली और दूसरी योजनाओं के काल में हुई प्रगति की समीक्षा

उद्योग के क्षेत्र में पहली योजना मुख्य रूप से बड़े पैमाने के विकास की तैयारी-भर थी। इसलिए उसमें खनिज-पदार्थों का उत्पादन बहुत बढ़ाने पर कोई खास ज़ोर नहीं था, बल्कि इस बात पर विशेष ध्यान दिया गया था कि महत्त्वपूर्ण खनिज-पदार्थों के गुण और परिमाण का सही-सही अनुमान लगाने के ख्याल से देश की खनिज सम्पदा की ब्यौरेवार और व्यवस्थित जांच-पड़ताल की जाए और ऐसे उपाय किए जाएं कि लापरवाही के कारण उनका अपव्यय न होने पाए। हालांकि सामान्यतः भूगर्भशास्त्रीय दृष्टि से देश का सर्वेक्षण किया जा चुका था और प्रमुख खनिज क्षेत्रों का पता लगाया जा चुका था, फिर भी ज्यादातर मामलों में खनिज साधनों का अन्वेषण ठीक-ठीक और पूरी तरह नहीं हुआ था तथा खनिज-पदार्थों के ज़खीरों का अनुमान, बहुत ही मोटे तौर पर लगाया गया था। सन् 1948 में भारतीय खान-संस्था की स्थापना से और जनवरी 1951 में भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था के विस्तार का निश्चय हो जाने से पूरी-पूरी जांच-पड़ताल के लिए रास्ता बन गया और उसके संरक्षण के उपायों पर ज्यादा ध्यान देना सम्भव हुआ। दूसरी योजना में इनके फल निकलने लगे और गत कुछ वर्षों में कुछ खनिज-पदार्थों का उत्पादन काफी बढ़ गया; जैसे —कोयला, खनिज लोहा और बाक्साइट।

2. पिछले दस वर्षों में विभिन्न क्षेत्रों में जो प्रगति हुई है, उसकी संक्षिप्त समीक्षा नीचे के पैराग्राफों में की गई है।

कोयला

3. **उत्पादन :** पहली पंचवर्षीय योजना में कोयले के उत्पादन का कोई विशेष कार्यक्रम नहीं रखा गया था, क्योंकि जिस हिसाब से मांग बढ़ रही थी, उसकी पूर्ति के लिए कोयले के उत्पादन की जितनी क्षमता थी, वह काफी थी। दूसरी योजना में औद्योगिक और बिजली-विकास के जो कार्यक्रम सोचे गए थे, उनके लिए कोयले की आवश्यकताओं के आधार पर, और रेल-द्वारा जितना यातायात होने की आशा थी, उसके आधार पर, दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष में 6 करोड़ टन कोयला-उत्पादन का लक्ष्य स्थिर किया गया था, यानी सन् 1955 के उत्पादन-स्तर से 2.2 करोड़ टन अधिक। मांग इस कदर बढ़ रही थी कि केवल चालू कोयला-खानों का उत्पादन बढ़ा कर उसकी पूर्ति नहीं की जा सकती थी; इसके लिए नई खानें शुरू करने की ज़रूरत थी। चालू कोयला-खानों का उत्पादन बढ़ाने की क्षमता को ध्यान में रख कर तथा सरकार की इस नीति को ध्यान में रख कर कि नई खानें सरकारी क्षेत्र के अधीन ही शुरू की जा सकती हैं, सरकारी क्षेत्र के लिए 1 करोड़ 20 लाख टन अतिरिक्त कोयला-उत्पादन का लक्ष्य रखा गया। इसमें से 20 लाख टन चालू खानों का उत्पादन बढ़ा कर और 1 करोड़ टन अछूते क्षेत्रों में नई खानें चालू करके हासिल करना था। बाकी का 1 करोड़ टन अतिरिक्त कोयला चालू कोयला-खानों से और उनके आस-पास के क्षेत्रों से हासिल करने का काम निजी क्षेत्र पर छोड़ दिया गया।

4. सरकारी और निजी, दोनों ही क्षेत्रों में चालू खानों में उत्पादन बढ़ाने में तो कोई खास कठिनाई नहीं हुई, लेकिन नई कोयला-खानों से कोयले के अतिरिक्त उत्पादन में सरकारी क्षेत्र का काम बहुत कठिन हो गया। नई खानें प्रायः बिल्कुल ही नए क्षेत्रों में खोदनी पड़ीं। सरकार नए क्षेत्रों को अपने अधिकार में ले सके, इसके लिए विधान बनाना पड़ा और इन क्षेत्रों की विस्तृत जाच-पड़ताल करनी पड़ी, ताकि जखीरों का ठीक-ठीक पता लग जाए और विकास के लिए खंडों का चुनाव किया जा सके। इसके अलावा, सरकारी क्षेत्र को बिल्कुल शून्य से ही शुरुआत करनी पड़ी और ऐसे अनुभवी तकनीकी कर्मचारियों की जबर्दस्त कमी रही, जो अधीक्षक-पद के योग्य हों। एक ओर तो यह मुश्किल और दूसरी ओर कार्यक्रम के लिए विदेशी मुद्रा प्राप्त करने की प्रारम्भिक कठिनाइयों के परिणामस्वरूप योजना के प्रारम्भिक वर्षों में प्रगति काफी धीमी रही। इसलिए दूसरी योजना के उत्पादन को इन कठिनाइयों के सन्दर्भ में ही देखना चाहिए : सन् 1960-61 में 5 करोड़ 46 लाख 20 हज़ार टन उत्पादन हुआ, जबकि लक्ष्य 6 करोड़ टन का था। हालांकि वास्तविक उत्पादन लक्ष्य से कम हुआ, फिर भी सरकारी क्षेत्र ने—जिसमें राष्ट्रीय कोयला-विकास-निगम की और सिंगरेनी की कोयला-खानें शामिल हैं—इतनी मात्रा में कोयले का उत्पादन करने की क्षमता प्राप्त कर ली है कि उसके लिए जो लक्ष्य स्थिर किया गया है, उससे वह पीछे न रहे। पिछले वर्ष में राष्ट्रीय कोयला-विकास-निगम की खानों में बहुत तेज़ी से उत्पादन बढा है। पहली तिमाही में उसके उत्पादन का स्तर इतना था कि उस हिसाब से साल में 53 लाख टन कोयले का उत्पादन होता, पर आखिरी तिमाही में यह स्तर बढ़कर इतना हो गया कि साल में 1 करोड़ 37 लाख टन का उत्पादन होता, जबकि लक्ष्य पूरे साल-भर के लिए 1 करोड़ 35 लाख टन का रखा गया था। सिंगरेनी की कोयला-खानों के ये आंकड़े क्रमशः 24 लाख टन और 26 लाख टन थे, जबकि उत्पादन का लक्ष्य 30 लाख टन था। इसी प्रकार, निजी क्षेत्र में आंकड़े ये रहे : 4 करोड़ 38 लाख टन और 4 करोड़ 57 लाख टन, जबकि उत्पादन-लक्ष्य 4 करोड़ 40 लाख टन का था।

5. दूसरी योजना के शुरू में कोयला-उत्पादन के बारे में जो कल्पना की गई थी, उसकी तुलना में पिछले दस वर्षों में उत्पादन की क्या प्रगति रही और 1960-61 में क्षेत्रवार वास्तविक उत्पादन कितना हुआ, इसका विवरण नीचे की तालिकाओं में दिया जा रहा है :

तालिका-संख्या 1

कोयला-उत्पादन

वर्ष		लाख टनों में
1951	..	344.3
1952	..	363
1953	..	359.8
1954	..	368.8
1955	..	382.3
1956-57	..	403

तालिका-संख्या 1—(जारी)

वर्ष		लाख टनों में
1957-58	..	441
1958-59	..	459.4
1959-60	..	478.2
1960-61	..	546.2

तालिका-संख्या 2

1960-61 में क्षेत्रवार उत्पादन

(लाख टनों में)

क्षेत्र	दूसरी योजना में उत्पादन का लक्ष्य	1960-61 में वास्तविक उत्पादन
असम	5	6.8
दार्जिलिंग	0.3	0.4
रानीगंज	181.6	180.8
झरिया	166.9	160.9
करनपुरा	60	44.8
बोकारो	28.8	37.5
गिरिडीह	2.6	4.6
बिहार के अन्य छोटे क्षेत्र	1.4	1.5
छिन्दवाड़ा और चांदा	22.5	30.6
कोर्बा	40	5.7
मध्य-भारत के कोयला-क्षेत्र	53.1	36.7
सस्ती	0.7	1.4
उड़ीसा	5.2	8.8
सिंगरेनी	29.3	25.2
बीकानेर	0.3	0.5
योग	597.7	546.2

तालिका देखने से पता चलता है कि दूसरी योजना में जितने उत्पादन की बात सोची गई थी, उसमें और 1960-61 के वास्तविक उत्पादन में फर्क है—विशेषकर कोर्बा और मध्य-भारत के कोयला-क्षेत्रों में। इसकी वजह यह थी कि कोयले के उत्पादन और वितरण से सम्बद्ध कुछ तथ्य जैसे-जैसे स्पष्ट होकर सामने आए, वैसे-वैसे निश्चयों में कुछ संशोधन करना आवश्यक हो गया। इसके अतिरिक्त, मध्य-भारत के कोयला-क्षेत्रों में कोयले की किस्म उ तनी बढ़िया भी नहीं थी, जितनी आशा की जाती थी।

6. **संरक्षण :** कोकिंग कोयले के सीमित ज़खीरों के संरक्षण के लिए निम्नलिखित कदम उठाए गए हैं :

(1) **क्षेप्य भरण (स्टोइंग) :** कोयला-खान (संरक्षण तथा सुरक्षा) अधिनियम, 1952 के द्वारा क्षेप्य भरण को संरक्षण तक विस्तृत किया गया ; उस समय तक यह सुरक्षा की दृष्टि से ही अनिवार्य था।

(2) **उत्पादन पर नियन्त्रण:** कोकिंग कोयले के उत्पादन की अधिकतम सीमाएं निश्चित कर दी गईं। उद्देश्य यह था कि कोकिंग कोयले के उत्पादन को घटा कर इस स्तर तक ले आया जाए कि केवल ऐसे उपभोक्ताओं की मांग की पूर्ति हो सके, जिनके लिए वह बहुत आवश्यक हो। परन्तु दूसरी योजना के दौरान इस्पात-विस्तार-कार्यक्रम के लिए अधिक मात्रा में कोयला निकालने की आवश्यकता के कारण धीरे-धीरे ये सीमाएं फिर बढ़ा दी गईं। इस्पात के नए कारखाने खोले जाने लगे और वर्तमान कारखानों में विस्तार होने के कारण अब उत्पादन-सीमा निर्धारित करने की आवश्यकता नहीं रही।

(3) **कोयला धोने के कारखानों की स्थापना :** चूंकि कोयले की धुलाई उसके संरक्षण का एक तरीका है, इसलिए दूसरी पंचवर्षीय योजना में चार केन्द्रीय धुलाई-कारखाने और दुर्गापुर के इस्पात-संयन्त्र में एक धुलाई-कारखाना स्थापित करके 64 लाख टन की अतिरिक्त धुलाई-क्षमता की व्यवस्था की गई। दुर्गापुर के इस्पात-संयन्त्र का यह कारखाना (जिसकी क्षमता 8 लाख टन है) और करगली का धुलाई-कारखाना (जिसकी क्षमता 16 लाख टन है) स्थापित किए जा चुके हैं। तीन और धुलाई-कारखाने तीसरी योजना के शुरू के वर्षों में कायम हो जाएंगे। दूसरी योजना के अनुभव से पता चला है कि धुलाई-कारखानों की स्थापना के लिए तैयारियां करने में बहुत समय लग जाता है। खान के विभिन्न स्तरों और विभिन्न खानों से प्राप्त कोयले की धुलाई-सम्बन्धी विशेषताओं को समझना आवश्यक है, ताकि (क) धुलाई का तरीका निश्चित किया जा सके और धुलाई-कारखानों के बारे में तफसीलें तैयार की जा सकें; और (ख) यह तय कर दिया जाए कि किस धुलाई-कारखाने में किन-किन खानों का कोयला भेजा जाएगा।

(4) **मिश्रण :** कमज़ोर कोकिंग या गैर-कोकिंग कोयले को मज़बूत कोकिंग कोयले के साथ मिलाने से कोकिंग कोयले के सीमित ज़खीरे अधिक अवधि तक रह सकेंगे। दुर्गापुर के इस्पात-कारखाने में रानीगंज का कमज़ोर कोकिंग या अर्द्ध-कोकिंग कोयला ही काम में लाया जाता है, जिसमें 55 प्रतिशत तक झरिया का कोकिंग कोयला मिला होता है।

(5) **कोकिंग कोयले के स्थान पर गैर-कोकिंग कोयले का प्रयोग :** रेलों में कोकिंग कोयले के स्थान पर गैर-कोकिंग कोयले का उपयोग करने का कई सोपानों में बंटा हुआ एक कार्यक्रम तैयार किया गया। चूंकि मूल उपभोक्ताओं की ओर से कोकिंग कोयले की उतनी मांग न हो सकी, जितना कि पहले अनुमान लगाया गया था, इसलिए कोयले का जितना उत्पादन उपभोक्ताओं की

आवश्यकताओं से अधिक था, उसका उपयोग रेलों में होता रहा। यह अतिरिक्त मात्रा सन् 1957 में लगभग 50 लाख टन थी, किन्तु सन् 1960 में घट कर लगभग 15 लाख टन रह गई।

(6) **अन्य उपाय :** जिन खानों को राष्ट्रीय हित की दृष्टि से उत्पादन जारी रखने के लिए कहा जाता है, किन्तु जिन्हें प्रतिकूल परिस्थितियों का——जैसे, गैस मौजूद होने, काम की जगहों की गहराई, आदि का——सामना करना पड़ता है, उन्हें विशेष सहायता दी जाती है।

7. **खानों का एकीकरण :** छोटी खानों के एकीकरण से सम्बद्ध समिति की सिफारिश पर सरकार ने छोटी और घाटेवाली खानों को मिलाने की बात सैद्धान्तिक रूप से स्वीकार कर ली है। जब तक अनिवार्य एकीकरण के लिए विधान नहीं बन जाता, तब तक के लिए खानों के स्वैच्छिक एकीकरण को प्रोत्साहन देने के विचार से एक समिति बना दी गई। यह समिति अब तक स्वैच्छिक एकीकरण के 31 मामलों का अनुमोदन कर चुकी है, जिनमें से मार्च, 1961 के अन्त तक 17 मामलों में एकीकरण हो भी चुका है। समिति अभी तक अपना काम कर रही है। कोयले का उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रम की गति कुछ मन्द न हो जाए, इस आशंका से अनिवार्य एकीकरण के लिए विधान लागू करने का काम तीसरी योजना के लगभग मध्य तक स्थगित कर दिया गया है।

खनिज तेल

8. असम के डिगबोई-क्षेत्र को छोड़ कर, जहां थोड़ी मात्रा में तेल प्राप्त हो जाता है, देश में इस समय कहीं भी तेल का उत्पादन नहीं होता। आशा की जाती है कि नहरकटिया-तेल-क्षेत्र से, जिसका पता 'असम आयल कम्पनी' ने लगाया है, शीघ्र ही 27 लाख 50 हज़ार टन बिना साफ किया तेल प्रति वर्ष मिलने लगेगा। तेल-सम्पदा का उपयोग करने के लिए 'आयल इंडिया' नामक जो कम्पनी बनाई गई है, उसमें भारत-सरकार का हिस्सा पहले एक-तिहाई था, जिसे अब बढ़ा कर आधा कर दिया गया है। बिना साफ किया तेल नली-द्वारा दो नए शोधनालयों में ले जाया जाएगा, जो निजी क्षेत्र में गौहाटी (नूनमती, असम) और बरौनी (बिहार) में तैयार किए जा रहे हैं और जिनकी क्षमता क्रमशः 7 लाख 50 हज़ार टन और 20 लाख टन होगी। नहरकटिया-क्षेत्र में तेल के अलावा प्राकृतिक गैस भी है। इसकी जानकारी अभी प्राप्त नहीं हो सकी है कि यहां कुल कितनी मात्रा में गैस उपलब्ध हो सकेगी, किन्तु बिजली और उर्वरक पैदा करने तथा अन्य प्रयोजनों के लिए इसमें से कुछ गैस का उपयोग करने की व्यवस्था की जा चुकी है।

9. असम के ज्ञात तेल-प्रदेशों के बाहर तेल की खोज के लिए इंडो-स्टैनवाक पेट्रोल-परियोजना पहला बड़ा प्रयास था। पश्चिम-बंगाल की घाटी में तेल की खोज के लिए 'स्टैंडर्ड वेकुअम आयल कम्पनी' ने जितना खर्च किया, उसका एक-चौथाई हिस्सा भारत-सरकार ने दिया। कई अन्वेषण-कूप खोदे गए, किन्तु चूंकि कहीं भी न तो तेल मिला और न गैसें, इसलिए कम्पनी ने यह परियोजना समाप्त कर दी। सरकार ने खर्च में अपने हिस्से के तौर पर 1.67 करोड़ रुपये दिए।

10. तेल के देशी साधन विकसित करने की भारी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए सरकार ने पहली योजना की अवधि के अन्त तक तेल की खोज के लिए एक संगठन

की स्थापना की थी। जो भी उपकरण और तकनीकी कर्मचारी प्राप्त हो सके, उनकी सहायता से राजस्थान के जैसलमेर-क्षेत्र में जांच-पड़ताल शुरू की गई। दूसरी योजना में इस दिशा में तेज़ी से प्रयास करने और इसके लिए संगठन का विस्तार करने की व्यवस्था की गई। तेल और प्राकृतिक गैस-आयोग की स्थापना हुई। पहले इसे एक विभागीय संगठन का रूप दिया गया, पर आगे चल कर एक अनुविहित निकाय का रूप दे दिया गया। आयोग ने पहले पंजाब में और फिर खम्भात तथा असम की ब्रह्मपुत्र-घाटी में भूगर्भीय सर्वेक्षण, भू-भौतिक सर्वेक्षण और तेल का पता लगाने के लिए कुएं खोदने के काम किए। पंजाब में अब तक जिन स्थानों पर जांच-पड़ताल की गई है, उनमें न तो कहीं तेल मिला है और न ही इतनी गैस कि उसे निकालना व्यापार की दृष्टि से लाभदायक हो। पंजाब के दूसरे क्षेत्रों में अभी खोज-बीन हो रही है। खम्भात में अन्वेषण-कार्य में अधिक सफलता मिली, क्योंकि वहां पहले कुएं में ही तेल मिल गया। इस प्रारम्भिक सफलता से प्रोत्साहित होकर खम्भात में और फिर अंकलेश्वर-क्षेत्र में, कई कुएं खोदे गए हैं। बहुत-से कुओं में तेल या गैस मिली है और यद्यपि इस आविष्कार की सम्भावनाओं का अनुमान लगाने के लिए अभी और कुएं खोदने पड़ेंगे, किन्तु लगता यही है कि इस इलाके में काफी बड़ा तेल-क्षेत्र है। असम की ब्रह्मपुत्र-घाटी में दो कुएं उस क्षेत्र के बाहर खोदे गए हैं, जिसे आयल इंडिया ने ठेके पर ले रखा है। इनमें से एक कुएं में तो तेल का पता भी चला है। गंगा-घाटी में भी भूगर्भीय और भू-भौतिक अन्वेषण-कार्य आरम्भ किए गए।

तेल-अन्वेषण पर दूसरी योजना की अवधि में सरकार ने लगभग 26 करोड़ रुपये खर्च किए।

खनिज उत्पादन

11. सन् 1951-60 के दस वर्षों में, खनिज उत्पादन की मात्रा और मूल्य में सामान्यतः वृद्धि होती रही। सन् 1950 में उत्पादन का मूल्य लगभग 83 करोड़ रुपये था, जो 1960 में बढ़ कर लगभग 159 करोड़ रुपये हो गया। सबसे उल्लेखनीय वृद्धि खनिज लोहे के उत्पादन में हुई—सन् 1950 के 29.7 लाख टन से बढ़ कर सन् 1960 में 1 करोड़ 5 लाख टन। देश में इस्पात का उत्पादन बढ़ने और जापान तथा अन्य देशों के साथ निर्यात-व्यापार में प्रगति होने के कारण ही खनिज लोहे के उत्पादन में इतनी तेज़ी से वृद्धि हुई है। कच्चे मैंगनीज़, जिसका उत्पादन मुख्यतः निर्यात के लिए ही किया जाता है, के उत्पादन में पहले की तरह निरन्तर वृद्धि नहीं हुई। सन् 1950 में इसका उत्पादन 8.8 लाख टन था, जो सन् 1953 में बढ़ कर 19 लाख टन हो गया। उत्पादन में यह वृद्धि बहुत हद तक अमेरिका के संचयन-कार्यक्रम के कारण थी। इसके बाद कच्चे मैंगनीज़ का उत्पादन घटता-बढ़ता रहा है और सामान्यतः उसका झुकाव कमी की ओर ही है। इसका एक कारण तो अमेरिका के संचयन-कार्यक्रम में कमी और इस्पात-उद्योग का गतिरोध है और दूसरा कारण कच्चे मैंगनीज़ के बाज़ार में प्रतियोगियों का पैदा हो जाना है।

12. कुछ महत्त्वपूर्ण खनिज-पदार्थों के उत्पादन की मात्रा और मूल्य की प्रवृत्तियां अगले पृष्ठ की तालिका में दिखाई गई हैं।

तालिका-संख्या 3

खनिज-पदार्थों के उत्पादन की मात्रा और मूल्य-सम्बन्धी प्रवृतियाँ

(मात्रा हज़ार टनों में, मूल्य लाख रुपयों में)

खनिज-पदार्थ	1950		1955		1960	
	मात्रा	मूल्य	मात्रा	मूल्य	मात्रा	मूल्य
कोयला	32,310	4,668	38,230	5,603	51,810†	10,895
खनिज लोहा	2,970	154	4,680	323	10,520	770
कच्चा मैंगनीज़	880	848	1,580	1,082	1,160	818
चूना (लाइमस्टोन)	2,920††	103††	7,370	302	12,530	562
क्रोमाइट	17	6	89	27	99	57
इल्मेनाइट	213	33	251	132	246	147
बाक्साइट	64	8	90	9	377	42
मैग्नेसाइट	53	11	58	13	154	27
संलखड़ी	206	14	690	45	982	63
खनिज तांबा	360	120	353	258	441	237
सान्द्रीकृत सीसा	2††	**	3	8	6	22
सान्द्रीकृत ज़स्ता	2††	7††	5	17	10	25
उपर्युक्त खनिज-पदार्थों-सहित समस्त खनिज-पदार्थों का कुल मूल्य		8,341		9,436		15,902

*अस्थायी आंकड़े

†इसमें जम्मू और कश्मीर का भी लिग्नाइट शामिल है—सन् 1960 में 4,647 टन।

††आंकड़ों का सम्बन्ध 1951 के कैलेंडर-वर्ष से है।

**आंकड़े उपलब्ध नहीं

खनिज सर्वेक्षण

13. पहली दो योजनाओं की अवधि में भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था और भारतीय खान-संस्था का विस्तार होने से एक इंच-एक मील के हिसाब से तैयार किए गए भूगर्भीय नक्शे को बढ़ा कर उसमें नए क्षेत्रों का समावेश किया गया और कुछ महत्त्वपूर्ण खनिज क्षेत्रों में अधिक बड़े माप के नक्शे तैयार किए गए। दूसरी योजना के आरम्भ में देश के लगभग 24 प्रतिशत क्षेत्र का सर्वेक्षण हो चुका था और एक इंच-एक मील के नक्शे में उसे दिखाया जा चुका था। दूसरी योजना की अवधि में इस माप के नक्शे में 40,000 वर्गमील क्षेत्र और शामिल किया गया और 5,775 वर्गमील के खनिज क्षेत्र अधिक बड़े माप के नक्शे में दिखाए गए। करनपुरा, बोकारो, कोर्बा, कोरिया, विश्रामपुर, झिलिमिली, कालाकोट, तालचर और धरंगिरि के कोयला-क्षेत्रों का विस्तृत पूर्वेक्षण किया गया, तो पता चला कि इनमें कोयले के इतने काफी ज़खीरे हैं कि दूसरी योजना की अवधि में इनमें से कुछ क्षेत्रों में नई खानें स्थापित की जा सकती हैं। इन अन्वेषण-कार्यों के फलस्वरूप सिगरौली-कोयला-क्षेत्र में 70 से 90 फुट तक मोटी एक तह और रामगढ़-कोयला-क्षेत्र में दो तहों—एक 74 फुट मोटी और दूसरी 12 फुट 8 इंच मोटी—का पता चला। यह दूसरी तह कोकिंग कोयलेवाली थी। इसके अतिरिक्त, यह भी सिद्ध हो चुका है कि दिशरगढ़ की तह आसानी से खोदी जा सकनेवाली गहराई में है और 20 फुट मोटी कोकिंग लैक-डिह तह रानीगंज-कोयला-क्षेत्र में ऐसी ज़मीन में है, जो ठेके पर दी हुई नहीं है। इसी प्रकार, झरिया कोयला-क्षेत्र में कोयला मेज़र्स की जलोढ़ मिट्टी के नीचे उसके पूर्वी फैलाव का अस्तित्व भी साबित हो चुका है। राजहरा और बरसुआ-क्षेत्रों में खनिज लोहे का पता लगाने से भिलाई और राउरकेला के इस्पात-कारखानों के वास्ते खनिज लोहा जुटाने के लिए नई खानों की स्थापना में सहायता मिली। किरिबुरु के क्षेत्र में जिस ज़खीरे का पता लगा, वह किरिबुरु खनिज लोहा-परियोजना का आधार बना। इस परियोजना से जापान को निर्यात करने के लिए प्रति वर्ष 20 लाख टन खनिज लोहा मिलेगा। मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र में कच्चे मैंगनीज़ की तहों की बनावट के बड़े नक्शे बनाने से पता चला है कि अब तक जितने ज़खीरे का अनुमान लगाया गया है, उससे कहीं अधिक ज़खीरा वहां है। जिन अलौह धातुओं—विशेषतः तांबा, सीसा और जस्ता—का पता लग चुका है या जिनकी सूचना मिली है, उनकी सम्भावनाओं का पता लगाने के लिए सर्वेक्षण किए गए। खेतरी (राजस्थान) और सिक्किम में खुदाई और अन्वेषण-सम्बन्धी जो कार्य किए गए हैं, उनसे साबित हुआ है कि खेतरी क्षेत्र में लगभग 2 करोड़ 80 लाख टन कच्चा तांबा (तांबे की औसत मात्रा 0.8 प्रतिशत) और सिक्किम में लगभग 3.5 लाख टन कच्ची धातु है, जिसमें औसतन 6.24 प्रतिशत तांबा, सीसा और ज़स्ता है। यह संकेत भी मिला है कि नागौड़ (राजस्थान) में सेलखड़ी, अलमोड़ा (उत्तरप्रदेश) में मैगनेसाइट, अमजोर (बिहार) में पाइराइट्स और ज़िला शाहाबाद (बिहार) में चूने का पत्थर बहुत बड़ी मात्रा में उपलब्ध हो सकता है।

14. अगले पृष्ठ की तालिका में मोटे तौर पर पिछले दस वर्षों में किए गए अन्वेषण-कार्यों के अधिक महत्त्वपूर्ण परिणामों की ओर संकेत किया गया है।

तालिका-संख्या 4

जख़ीरों का अनुमान

खनिज-पदार्थ	स्थान	पहली योजना के आरम्भ में स्थिति	पुनरीक्षण के बाद अब स्थिति	
		(जख़ीरे : लाख टनों में)		
कोयला		3,73,000	5,00,000	इसके अतिरिक्त, 8,000 करोड़ टन के अनुमानित ज़ख़ीरे और हैं।
खनिज मैंगनीज़		200 (उच्चकोटि का)	1,800	लगभग 40 प्रतिशत विपण्य कोटि का है।
खनिज तांबा	खेतरी	कोई अनुमान नहीं	280	तांबे की 0.8 प्रतिशत औसत मात्रा से युक्त
	सिक्किम	कोई अनमान नहीं	3.5	तांबे, सीसे और ज़स्ते की मिली-जुली 6.24 प्रतिशत औसत मात्रा से युक्त
पाइराइट्स	अमजोर	कोई अनुमान नहीं	3,840	इसमें प्रमाणित ज़ख़ीरे 80 लाख टन हैं और 6 करोड़ 80 लाख टन अनुमानित हैं। प्रमाणित ज़ख़ीरों में गन्धक की औसत मात्रा 40 प्रतिशत है।

	इंगलदल	कोई अनुमान नही	20	
सेलखड़ी (जिप्सम)	नागौड़ (राजस्थान)	कोई अनुमान नही	10,000	
	रामबाण (जम्मू और कश्मीर)	कोई अनुमान नही	500	
चूने का पत्थर	शाहाबाद जिला	कोई अनुमान नहीं	लगभग चार करोड़ चालीस लाख टन फ्लक्स-कोटि का और 26 करोड़ 80 लाख टन भट्ठी-कोटि का	
क्रोमाइट	बैरापुर (मैसूर)	कोई अनुमान नही	7	
खनिज लोहा	किरिबुरु (उड़ीसा)	कोई अनुमान नही	1,730	
बाक्साइट	जामनगर ज़िला (गुजरात)	कोई अनुमान नही	60	
मैगनेसाइट	अलमोड़ा (उत्तरप्रदेश)	कोई अनुमान नही	120	
ऐपेटाइट	सिहभूमि-तांबा-पट्टी (बिहार)	7	18	
सीसा और जस्ता	जवार (राजस्थान)	कोई अनुमान नही	107	सीसे और जस्ते की मिली-जुली 3 प्रतिशत औसत मात्रा से युक्त
बेटोनाइट	बारमेर (राजस्थान)	कोई अनुमान नही	100	

तीसरी पंचवर्षीय योजना के लिए कार्यक्रम

15. तीसरी योजना में उद्योग के विस्तार को अधिक महत्व दिया गया है। इस बात को ध्यान में रखते हुए खनिज पदार्थों की खोज-बीन और विकास के ऐसे कार्यक्रमों की आवश्यकता है, जिन्हें तेज़ी से अमल में लाया जा सके। मुख्य उद्देश्य यह है कि देश की खनिज सम्पदा की खोज-बीन की जाए, जिससे कि :

(क) ऐसे खनिज पदार्थों और धातुओं के ज़खीरों का पता चल सके, जिनका इस समय पूरी तरह या अंशतः आयात किया जाता है;

(ख) खनिज लोहा, बाक्साइट, सेलखड़ी, कोयला, चूने का पत्थर-जैसे खनिज पदार्थों के अतिरिक्त ज़खीरों का पता लगाया जा सके और अर्थव्यवस्था की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उन्हें विकसित किया जा सके ; और

(ग) ज़खीरों का पता लगाया जा सके और खनिज लोहा-जैसे निर्यात-योग्य खनिज पदार्थों के उत्पादन के लिए नई खानें शुरू की जा सकें।

इन उद्देश्यों की सिद्धि के लिए आवश्यक है कि आगामी वर्षों में भूगर्भीय मानचित्र तैयार करने का काम तीव्र गति से किया जाए, भू-भौतिक और भू-रासायनिक तरीकों का उपयोग अधिक व्यापक स्तर पर किया जाए और ऐसे साधनों का पूर्वेक्षण विस्तृत रूप से किया जाए, जिनसे खनिज पदार्थ मिलने की आशा हो, ताकि उन्हें विकसित करने के विचार से यह पता लगाया जा सके कि ज़खीरा कितना है और उसकी किस्म कैसी है।

16. तीसरी योजना में जो खनिज-विकास-कार्यक्रम रखे गए हैं और जिनका उल्लेख उद्योगों से सम्बन्धित 26वें अध्याय के अनुबन्धों में किया गया है, उनके लिए सरकारी क्षेत्र में 478 करोड़ रुपये (इसमें 200 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा शामिल है) और निजी क्षेत्र में लगभग 60 करोड़ रुपये (28 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा-सहित) लगाने पड़ेंगे। इस समय सरकारी क्षेत्र में उद्योगों और खनिज पदार्थों के लिए 1,520 करोड़ रुपये की राशि निर्धारित की गई है, जब कि इस काम के लिए कुल मिला कर 1,882 करोड़ रुपये की आवश्यकता है। साधनों की आवश्यकता और उनकी वास्तविक उपलब्धि के इस अन्तर से प्रकट होता है कि इस क्षेत्र के बहुत-से कार्य चौथी योजना में शामिल करने होंगे और कुछ लक्ष्यों की पूर्ति तीसरी योजना की अवधि के अन्त तक नहीं हो सकेगी। जैसा कि उद्योगों से सम्बन्धित अध्याय में बताया जा चुका है (पैरा 24), इस समय ठीक-ठीक बताना कठिन है कि किन-किन परियोजनाओं की क्रियान्विति में देर लगेगी।

कोयला

17. **मांग का अनुमान :** तापीय बिजली पैदा करने के और रेलों के विकास-कार्यक्रमों और लोहा और इस्पात, सीमेंट तथा अन्य ऐसे उद्योगों के, जिनमें कोयले की खपत बहुत ज्यादा होती है, निर्धारित लक्ष्यों को देखते हुए अनुमान लगाया गया है कि तीसरी योजना के अन्तिम वर्ष में कोयले की मांग 9 करोड़ 70 लाख टन होगी। यह अनुमान अगले पृष्ठ पर दी गई बातों को ध्यान में रख कर लगाया गया है।

(क) रेलों में बिजली और डीज़ल का उपयोग करने के कार्यक्रम का उनकी कोयले-सम्बन्धी आवश्यकताओं पर प्रभाव, और (ख) तापीय बिजली पैदा करने के लिए वाशरी मिडलिंग और लिग्नाइट का प्रयोग।

18. तीसरी योजना के लिए 9 करोड़ 70 लाख टन का जो लक्ष्य निर्धारित किया गया है, उसकी पूर्ति के लिए दूसरी योजना के 6 करोड़ टन के लक्ष्य से 3 करोड़ 70 लाख टन अधिक कोयला पैदा करना होगा। यद्यपि दूसरी योजना के लक्ष्य की पूर्ति में पूरी सफलता न मिल सकी, तथापि लक्ष्य की पूर्ति के लिए अपेक्षित क्षमता उत्पन्न करने के लिए आवश्यक पूंजी दूसरी योजना की अवधि में ही लगाई जा चुकी है। मार्च 1961 में 52 लाख 70 हज़ार टन कोयले का उत्पादन हुआ। 1960-61 के लिए निर्धारित उत्पादन-लक्ष्य की पूर्ति के लिए प्रति मास कोयले का जितना उत्पादन होना चाहिए था, उससे यह मात्रा कुछ अधिक ही थी।

19. दूसरी योजना की अवधि में अतिरिक्त उत्पादन में निजी क्षेत्र ने अपना योगदान मौजूदा खानों के द्वारा ही दिया, जब कि सरकारी क्षेत्र में अतिरिक्त उत्पादन अधिकतर नए इलाकों में हुआ। तीसरी योजना में इतनी अधिक मात्रा में उत्पादन करने की आवश्यकता है कि बहुत-सी नई खानें शुरू करनी पड़ेंगी—विशेषरूप से सरकारी क्षेत्र में। ये खानें विकसित तथा बिल्कुल नए, दोनों ही क्षेत्रों में स्थापित करनी पड़ेंगी। इसके लिए अत्यधिक प्रयास और बहुत ज़्यादा पूंजी लगाने की आवश्यकता होगी।

20. अनुमान है कि इस्पात के कारखानों और व्यापारिक कोक-कारखानों के लिए क्रमश: 2 करोड़ 50 लाख टन और 20 लाख टन धातुशोधी कोयले की आवश्यकता होगी। कोकिंग कोयले के सीमित ज़खीरों के संरक्षण के लिए ज़रूरी है कि जहां तक हो सके, कम-कोकिंग या अर्द्ध-कोकिंग कोयले को सशक्त कोकिंग कोयले के साथ मिला कर काम में लाया जाए, जिससे कि कोकिंग कोयले का कम इस्तेमाल हो। ऐसा किया भी जाने लगा है। दुर्गापुर के इस्पात-कारखाने और पश्चिम-बंगाल के कोक-भट्ठी-संयन्त्र (दुर्गापुर) में रानीगंज के अर्द्ध-कोकिंग कोयले और झरिया के कोकिंग कोयले को मिला कर काम में लाया जाता है। सन् 1960 में उच्च कोटि (चुनींदा कोटि और प्रथम कोटि) के कोकिंग कोयले का उत्पादन लगभग 1 करोड़ 30 लाख टन और मिश्रणीय कोयले का उत्पादन लगभग 20 लाख टन था। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि धातुशोधी कोयला-उद्योगों की कुछ आवश्यकता तो मिश्रणीय कोयले से पूरी हो जाएगी, अनुमान लगाया गया है कि तीसरी योजना की अवधि के अन्त में कोकिंग कोयले और मिश्रणीय कोयले की जो अतिरिक्त मात्रा आवश्यक होगी, वह क्रमश: 1 करोड़ टन और 20 लाख टन होगी। अनुमान लगाया गया है कि रेलवे और अन्य उद्योगों के लिए उच्च कोटि के गैर-कोकिंग कोयले की जो अतिरिक्त मात्रा आवश्यक होगी, वह लगभग 1 करोड़ टन होगी। 9 करोड़ 70 लाख टन का जो उत्पादन-लक्ष्य निर्धारित किया गया है, उसका कोयले की कोटि के अनुसार विभाजन इस प्रकार है :

	(लाख टनों में)
चुनींदा—क	120.5
चुनींदा—ख	188.7
प्रथम कोटि	442.8

द्वितीय कोटि	159.7
तृतीय कोटि	57.1
योग	968.8

तीसरी योजना में कोयला-कार्यक्रम का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य यह व्यवस्था करना है कि इस्पात-कारखानों और व्यापारिक कोक-कारखानों को कोकिंग और मिश्रणीय कोयला और रेलवे तथा अन्य उद्योगों को गैर-कोकिंग कोयला, जिसकी उन्हें अनिवार्य रूप से जरूरत होती है, आवश्यक मात्रा में मिलता रहे। उपर्युक्त कोटियों के कोयले की अतिरिक्त मात्रा मुख्यतः झरिया और रानीगंज की कोयला-खानों से प्राप्त करनी होगी और इसमें सरकारी क्षेत्र पहले की अपेक्षा अधिक सक्रिय भाग लेगा।

21. **अतिरिक्त उत्पादन का नियतन :** कार्यक्रम तैयार करने और विशेष रूप से इस बात का निश्चय करने में कि कितना अतिरिक्त उत्पादन निजी क्षेत्र में होना चाहिए और कितना सरकारी क्षेत्र में, उपर्युक्त उद्देश्यों का और निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा गया है :

(क) निजी क्षेत्र की अपनी चालू खानों और आसपास के इलाकों में उत्पादन बढ़ाने की क्षमता; तथा

(ख) सरकार की नीति, जिसके अनुसार नई खानें शुरू करने का अधिकार केवल सरकारी क्षेत्र को प्राप्त है।

निजी क्षेत्र की उत्पादन बढ़ाने की क्षमता एक कार्यकारी दल के द्वारा आंकी गई। अलग-अलग कम्पनियों के विस्तार-कार्यक्रम के ब्योरों की जांच करने के बाद इस दल ने उनकी क्षमता 1 करोड़ 68 लाख 30 हज़ार टन आंकी। इसके अनुसार, 3 करोड़ 70 लाख टन की अतिरिक्त मात्रा में से सरकारी क्षेत्र को 2 करोड़ टन का उत्पादन करना होगा। दोनों क्षेत्रों में अतिरिक्त उत्पादन का यह नियतन ऐसा नहीं है कि इसमें घट-बढ़ न की जा सकती हो। कार्यक्रमों की प्रगति पर हमेशा दृष्टि रखी जाएगी, ताकि आवश्यकता पड़ने पर उनमें फेर-बदल किया जा सके। मूल उद्देश्य यह है कि कुल जितनी मात्रा में उत्पादन करने की योजना बनाई गई है, उतनी मात्रा अवश्य प्राप्त हो जाए।

सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रम

22. सरकारी क्षेत्र में तीस लाख टन की अतिरिक्त मात्रा आन्ध्रप्रदेश में सिंगरेनी की कोयला-खानों का विस्तार करके प्राप्त की जाएगी। इसके लिए चालू खानों का विस्तार किया जाएगा और अधिकांशतः नए इलाकों में नए गढ़े (शैफ्ट) खोदे जाएंगे। शेष 1 करोड़ 70 लाख टन की अतिरिक्त मात्रा राष्ट्रीय कोयला-विकास-निगम को प्राप्त करनी होगी। तीसरी योजना के अन्तर्गत उत्पादन बढ़ाने के उद्देश्य से नए क्षेत्रों का पूर्वेक्षण 1958 में आरम्भ किया गया था और अब तक जो सामग्री एकत्र की गई है, उसके आधार पर निगम ने 1 करोड़ 85 लाख टन की अतिरिक्त मात्रा के उत्पादन के लिए एक कार्यक्रम तैयार किया है। विभिन्न कोयला-क्षेत्रों में मात्रा का विभाजन अस्थायी रूप से अगले पृष्ठ पर दिया गया है।

तालिका-संख्या 5

राष्ट्रीय कोयला-विकास-निगम के अतिरिक्त उत्पादन का क्षेत्रवार वितरण

क्षेत्र	(लाख टनों में)
दक्षिण-बालन्दा	10
विश्रामपुर	25
उत्तर-बालन्दा	10
जारंगडिह्	2
कठारा (अतिरिक्त)	5
करगली-बोकारो (अतिरिक्त)	5
सावंग	3
सिंगरौली	25
कामठी	15
पेंच-कान्हन	10
चर्चा-झिलिमिली	10
पश्चिम-बोकारो	5
रामगढ़	15
कोर्बा (घोरदेवा तह्)	15
रानीगंज (ब्लाक नं० 8 और 9)	5
रानीगंज (अन्य ब्लाक)	5
दिशेरगढ़	5
झरिया	15
योग	185

उपर्युक्त परियोजनाओं में से पहली दो पक्की हो चुकी है। परियोजना-रिपोर्टें तैयार हो चुकी हैं और स्वीकृत कर ली गई हैं तथा तीसरी योजना के पहले वर्ष के दौरान ही उत्पादन होने लगेगा। बाद की चार परियोजनाएं वर्तमान खानों में विस्तार की परियोजनाएं हैं और चूंकि ज़खीरों के बारे में बुनियादी बातें मालूम हो चुकी हैं, इसलिए उनके लिए तय किए गए लक्ष्यों की पूर्ति में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। जहां तक अन्य परियोजनाओं का सम्बन्ध है, सब क्षेत्रों में अभी पूर्वेक्षण का काम पूरा नहीं हुआ है। आशा की जाती है कि तीसरी योजना के पहले दो वर्षों के दौरान परियोजना-रिपोर्ट तैयार करने के लिए काफी जानकारी हासिल कर ली जाएगी और योजना के तीसरे वर्ष में नई खानें शुरू की जा सकेंगी। राष्ट्रीय कोयला-विकास-निगम के प्रयास से 1 करोड़ 70 लाख टन कोयला मिलने की आशा है, जब कि इन कार्यक्रमों के फलस्वरूप कुल मिला कर 1 करोड़ 85 लाख टन कोयला मिलना चाहिए। इन कार्यक्रमों पर अमल करने में कहीं आशा से कम सफलता प्राप्त न हो—इस स्थिति का प्रतिकार करने के लिए अधिक क्षमता की गुंजाइश रखी गई है। राष्ट्रीय कोयला-विकास-निगम के कार्यक्रम के अन्तर्गत बिल्कुल

नए इलाकों में लगभग एक साथ ही कई खानें शुरू करनी पड़ेंगी। एक ऐसे देश के लिए, जो अन्य उद्योगों का भी व्यापक स्तर पर विकास करने में लगा हुआ है, यह एक बहुत बड़ा काम है। कार्य की व्यापकता और अनुभवी तकनीकी कर्मचारियों की कमी को ध्यान में रखते हुए कार्यक्रम में नई खानों, कारखानों और कोयला धोने के कारखानों की स्थापना के लिए ब्रिटेन, पोलैंड, पश्चिम-जर्मनी, फ्रांस, सोवियत रूस और अमेरिका से तकनीकी सहयोग प्राप्त करने की व्यवस्था की गई है।

23. अनुमान है कि सरकारी क्षेत्र में 2 करोड़ टन अतिरिक्त कोयला पैदा करने के लिए लगभग 103 करोड़ रुपये की पूंजी लगानी पड़ेगी। इसके अतिरिक्त, तीसरी योजना की अवधि में चौथी पंचवर्षीय योजना के कोयला-कार्यक्रम की तैयारी पर दस करोड़ रुपये और खर्च करने होंगे।

निजी क्षेत्र के कार्यक्रम

24. कार्यकारी दल के अनुमान के अनुसार निजी क्षेत्र से मिलनेवाली अतिरिक्त मात्रा का विभाजन इस प्रकार है :

कोकिंग कोयला	48 लाख 70 हज़ार टन
मिश्रणीय कोयला	11 लाख 20 हज़ार टन
उच्च कोटि का गैर-कोकिंग कोयला	1 करोड़ 8 लाख 40 हज़ार टन

कोकिंग कोयला मुख्यतः झरिया से, मिश्रणीय कोयला रानीगंज से और गैर-कोकिंग कोयला मुख्यतः रानीगंज-कोयला-क्षेत्र से तथा थोड़ी मात्रा में बोकारो, करनपुरा और मध्य-प्रदेश के कोयला-क्षेत्रों से भी मिल सकेगा। कोकिंग, मिश्रणीय और गैर-कोकिंग कोयले के अतिरिक्त सम्भावित उत्पादन का अलग-अलग अन्दाज़ा लगाने के अलावा कार्यकारी दल ने कोटि और क्षेत्र के अनुसार भी अतिरिक्त उत्पादन का विभाजन किया तथा वार्षिक आधार पर उत्पादन की विभिन्न अवस्थाओं की ओर संकेत किया। अतिरिक्त उत्पादन का एक बड़ा भाग (1 करोड़ 10 लाख टन) चालू खानों से मिलेगा और बाकी हिस्सा ऐसे क्षेत्रों में नए गढ़े खोद कर मिलेगा, जो ठेके पर लिए गए क्षेत्र हैं। अनुमान है कि निजी क्षेत्र के कार्यक्रम में लगभग 60 करोड़ रुपये लगेंगे, जिसमें 28 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा भी शामिल है।

25. ऊपर पैरा 20 में 9 करोड़ 70 लाख टन के लक्ष्य का कोटि के अनुसार जो विभाजन किया गया है, उससे प्रकट है कि घटिया किस्म के कोयले का अनुपात बहुत कम है। घटिया किस्म का कोयला दूसरी चीज़ों के साथ-साथ ईंट पकाने और घर के काम-काज में प्रयुक्त होता है, इसलिए उसकी मांग का उतना सही और ठीक-ठीक अनुमान नहीं लगाया जा सकता, जितना कि अच्छी किस्म के कोयले का, जिसकी आवश्यकता बड़े-बड़े उपभोक्ताओं को होती है। घटिया किस्म के कोयले का उत्पादन अपेक्षाकृत कम खर्च करके और अधिक तेज़ी के साथ बढ़ाया जा सकता है, क्योंकि यह अधिकांशतः खुले गढ़ों से निकाला जाता है। उत्पादन बढ़ाने की क्षमता इसके उत्पादन में उतनी बाधक नहीं होती, जितनी कि परिवहन की कठिनाई। निजी तथा सरकारी क्षेत्रों के कार्यक्रमों के अन्तर्गत होनेवाले अतिरिक्त उत्पादन का कोयला-क्षेत्र के अनुसार विभाजन अगले पृष्ठ की तालिका में दिखाया गया है।

तालिका-संख्या 6

सरकारी तथा निजी क्षेत्रों में कोयले के अतिरिक्त उत्पादन का कोयला-क्षेत्र के अनुसार विभाजन

(लाख टनों में)

क्षेत्र	कोकिंग	मिश्रणीय	गैर-कोकिंग	योग
बंगाल-बिहार :				
रानीगंज	3.5	16.2	86.6	106.3
झरिया	58.4	—	—	58.4
बोकारो	16.8	—	3.3	20.1
पश्चिम-बोकारो	5	—	—	5
रामगढ़	15	—	—	15
करनपुरा	—	—	4.2	4.2
मध्यप्रदेश :				
पेंच-कान्हन	—	—	34.3	34.3
विश्रामपुर	—	—	25	25
चर्चा-झिलिमिली	—	5	5	10
सिंगरौली	—	—	25	25
कोर्बा	—	—	15	15
महाराष्ट्र :				
कामठी	—	—	15	15
उड़ीसा :				
तालचर	—	—	20	20
आन्ध्रप्रदेश :				
सिंगरेनी	—	—	30	30
योग	98.7	21.2	263.4	383.3

26. इस्पात के उत्पादन के लिए कोकिंग कोयले की भावी आवश्यकताओं को देखते हुए कोकिंग कोयले के ज़खीरे (जितने का अब तक पता चला है) सीमित ही माने जाएंगे। ये लगभग 280 करोड़ टन हैं, जब कि उच्च कोटि के खनिज लोहे के बहुत बड़े-बड़े ज़खीरे हैं। इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए ऐसे उपाय करना आवश्यक है, जिनसे एक ओर कोकिंग कोयले की सीमित मात्रा का संरक्षण हो सके—जैसे, क्षेप्य भरण, धुलाई और मिश्रण, ताकि ज़खीरे अधिक समय तक रह सकें, और दूसरी ओर उसका इस्तेमाल किफायत से किया जा सके। धमन-भट्ठियों में खनिज लोहे के चूरे का उपयोग तो किया ही जाए, क्योंकि इसका उपयोग न किया गया, तो यह बेकार चला जाएगा, साथ ही निसादित (सिंटर्ड) खनिज भी काम में लाई जाए, तो प्रति टन इस्पात के हिसाब से कोयले की खपत कम हो जाएगी। संरक्षण के अन्य उपाय तो पहले से ही किए जा रहे हैं, किन्तु निसादित कच्ची धातु का अधिक व्यापक स्तर पर उपयोग करने की आवश्यकता प्रतीत होती है। खनिज लोहे के चूरे के इस्पात-कारखानों

में काम में लाए जाने या निर्यात के योग्य बनाने के लिए ज्वालाश्म चयन की तकनीकी सम्भावना, उसके अर्थशास्त्रीय पक्ष, और वास्तव में इस तरीके से किस हद तक काम लिया जा सकता है—इन सब बातों पर सरकार-द्वारा नियुक्त एक समिति विचार कर रही है।

27. कोटि को ध्यान में रखते हुए गत कुछ वर्षों में कोयले के उत्पादन पर दृष्टि डाली जाए तो प्रकट होगा कि कुल उत्पादन में प्रथम कोटि और घटिया किस्म के कोयले का उत्पादन समानुपात बढ़ता रहा है। पश्चिम-बंगाल और बिहार के कोयला-क्षेत्रों से सम्बन्धित जो तालिका नीचे दी गई है, उससे यह बात बहुत स्पष्ट हो जाती है :

तालिका-संख्या 7

पश्चिम-बंगाल और बिहार की कोयला-खानों के कोटिपरक उत्पादन की प्रवृत्तियां

(लाख टनों में)

वर्ष	चुनींदा-क	चुनींदा-ख	प्रथम कोटि	द्वितीय कोटि	तृतीय कोटि	योग
1951	72.03	94.04	50.80	45.01	20.28	282.16
1955	71.68	102.76	63.09	54.15	15.70	307.38
1956	68.26	103.96	69.88	52.96	18.42	313.48
1960	74.57	99.00	143.36	59.58	32.10	408.61

सन् 1951 की अपेक्षा सन् 1960 में कुल उत्पादन 2 करोड़ 82 लाख टन से बढ़ कर 4 करोड़ 8 लाख 60 हज़ार टन तक पहुंच गया, किन्तु चुनींदा-क कोयले का उत्पादन 72 लाख टन से बढ़ कर केवल 75 लाख टन तक और चुनींदा-ख कोयले का 94 लाख टन से बढ़ कर 99 लाख टन तक ही पहुंच सका (यद्यपि सन् 1955 और सन् 1956 में यह मात्रा बढ़ कर क्रमशः 103 लाख टन और 104 लाख टन तक पहुंच गई थी)। प्रथम कोटि के कोयले का उत्पादन 51 लाख टन से बढ़ कर 143 लाख टन तक, द्वितीय कोटि के कोयले का उत्पादन 45 लाख टन से बढ़ कर 60 लाख टन तक और तृतीय कोटि के कोयले का उत्पादन 20 लाख टन से बढ़ कर 32 लाख टन तक पहुंच गया। इस प्रवृत्ति का कारण कुछ तो यह मालूम होता है कि चुनींदा कोटि के कोयले के अधिक आसानी से निकाले जा सकनेवाले ज़खीरे धीरे-धीरे खत्म हो गए और चुनी हुई खानों की खुदाई बन्द करनी पड़ी। दूसरा कारण हुआ, बढ़ती हुई यान्त्रिक खनन-क्रियाएं। तीसरी योजना की अवधि के अन्त तक कोयले के कुल उत्पादन में प्रथम कोटि के कोयले और घटिया किस्म के कोयले के उत्पादन का समानुपात चुनींदा कोटि के कोयले के उत्पादन के समानुपात की अपेक्षा बहुत तेज़ी से बढ़ेगा। अच्छी किस्म के कोयले के उत्पादन की वृद्धि में बढ़ती हुई कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए इस बात की तात्कालिक आवश्यकता है कि उसके उपयोग में किफ़ायत की जाए। कोयला-परिषद् की ईंधन-उपयोग-समिति ने प्रत्येक उद्योग की ईंधन-सम्बन्धी आवश्यकताओं के सभी तकनीकी पहलुओं पर विचार करके और अच्छी किस्म के कोयले के उपयोग में किफ़ायत बरतने की

आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए विभिन्न उद्योगों के लिए कोयले की किस्में, कोटियां और माप निर्धारित कर दिए हैं।

•28. **क्षेप्य भरण :** तीसरी योजना की अवधि में संरक्षण के एक उपाय के रूप में क्षेप्य भरण पर बहुत बल देना होगा, क्योंकि अतिरिक्त उत्पादन का एक हिस्सा चालू खानों से 'डिपिलरिंग' के द्वारा ही मिलता है। बड़ी कोयला-खानें रेत इकट्ठी करने और मंगाने की व्यवस्था स्वयं करती हैं, किन्तु तकनीकी और वित्तीय कारणों से छोटी कोयला-खानें इस तरह की व्यवस्था नहीं कर सकतीं। इस असुविधा को दूर करने और क्षेप्य भरण के लिए रेत अधिक मात्रा में उपलब्ध कराने के उद्देश्य से कोयला-मंडल सात रस्सी-मंडल स्थापित करेगा—चार झरिया के कोयला-क्षेत्र में और तीन रानीगंज के कोयला-क्षेत्र में। रेत दामोदर और अजय नदियों से इकट्ठी की जाएगी और ऐसे स्थानों पर पहुंचाई जाएगी, जहां ऐसी खानों के समूहों को वह आसानी से मिल सके, जिन्हें क्षेप्य भरण की तात्कालिक आवश्यकता, कोयले की किस्म, आदि को ध्यान में रखते हुए चुना गया है। अनुमान है कि रस्सी-मार्ग पर 17 करोड़ रुपये खर्च होंगे। कार्यक्रम में निश्चित किया गया है कि योजना के पहले दो वर्षों के दौरान रस्सी-मार्ग तैयार हो जाने चाहिए, किन्तु विदेशी मुद्रा की कठिनाइयों के कारण सम्भव है कि काम निश्चित समय के भीतर न हो सके।

29. **तकनीकी कर्मचारी :** कोयला-परिषद् की उत्पादन और तैयारी-समिति ने अनुमान लगाया कि 3,000 प्रबन्ध-कार्यकर्ताओं (खनन-इंजीनियरी की डिग्रीवाले) और 37,000 अवर कर्मचारियों की आवश्यकता होगी। इसके अलावा, कुछ बिजली, यान्त्रिक और सिविल इंजीनियरी के कर्मचारियों तथा टेक्नीशियनों की भी आवश्यकता होगी। ऊपर इंगित 3,000 प्रबन्ध-कर्मचारियों से कोयला-खनन और धातुमय लौह-खनन—दोनों की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकेगी।

30. दूसरी योजना के आरम्भ में केवल दो संस्थाएं थीं—'कालेज आफ माइनिंग एंड मेटालर्जी' वाराणसी और 'इंडियन स्कूल आफ माइन्स ऐंड एप्लायड जियोलाजी' धनबाद—जिनमें खनन-सम्बन्धी डिग्री-पाठ्यक्रम की सुविधाएं थीं। सन् 1956-57 में, इन दोनों संस्थाओं में, जगहें बढ़ा कर दुगुनी कर दी गई। इसके अतिरिक्त, पांच इंजीनियरी कालेजों और 'इंडियन इंस्टीट्यूट आफ टेकनोलोजी', खड़गपुर में खनन के पाठ्यक्रम शुरू किए गए हैं। इनमें से प्रत्येक में प्रति वर्ष 25 से 30 छात्र तक भरती हो सकते हैं।

31. खानों के मुख्य निरीक्षक ने कोयला-खान-विनियमों में कुछ हद तक ढील देना स्वीकार कर लिया है; साथ ही खान-प्रबन्धकों के योग्यता-प्रमाणपत्र की वर्ष में दो परीक्षाएं करना भी मंजूर कर लिया है। इस समय वर्ष में केवल एक परीक्षा होती है। इन उपायों से प्रबन्ध-कर्मचारियों की जो आवश्यकता है, वह कमोबेश पूरी हो जाएगी। जहां तक अवर तकनीकी कर्मचारियों का सम्बन्ध है, खनन और खनन-सर्वेक्षण के राष्ट्रीय प्रमाणपत्र-पाठ्यक्रम के लिए 14 संस्थाएं स्थापित करने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया है। ये संस्थाएं केन्द्रीय सरकार की सहायता से सम्बन्धित राज्य-सरकारों-द्वारा स्थापित की जाएंगी। पश्चिम-बंगाल, मध्यप्रदेश, बिहार और उड़ीसा में खनन की सान्ध्य कक्षाएं खोलने के प्रस्ताव पर विचार किया जा रहा है। पश्चिम-बंगाल और बिहार में खान की सान्ध्य कक्षाएं पहले से चल रही हैं, किन्तु राष्ट्रीय प्रमाणपत्र-पाठ्यक्रम के स्तर पर लाने के लिए उनका फिर से संगठन करना आवश्यक है।

32. राष्ट्रीय कोयला-विकास-निगम पांच प्रशिक्षण-विद्यालय चला रहा है। इन विद्यालयों में हाल ही में जगहों की संख्या लगभग दुगुनी कर दी गई है और कम-से-कम योजना के पहले तीन वर्षों में निगम की आवश्यकताओं की पूर्ति इन विद्यालयों से हो सकेगी। सिंगरेनी-कोयला-क्षेत्र में विभिन्न व्यवसायों के लिए एक शागिर्दी-योजना शुरू की गई है। इस उद्योग के निजी क्षेत्र में कुछ बड़े खान-समूहों के अपने नियमित विद्यालय हैं, जहां शागिर्द भरती किए जाते हैं और उन्हें विभिन्न प्रकार के कार्यों का प्रशिक्षण दिया जाता है। तीसरी योजना में निजी क्षेत्र को कोयला का अतिरिक्त उत्पादन जितनी बड़ी मात्रा में करना है, उसको देखते हुए कुछ और सुविधाओं की व्यवस्था करनी पड़ सकती है और प्रशिक्षण-क्रम में कुछ हद तक एकरूपता लानी पड़ सकती है।

33. **परिवहन :** कोयले का उत्पादन बंगाल और बिहार के कोयला-क्षेत्रों में केन्द्रित होने के कारण परिवहन की विकट समस्याएं पैदा हो गई हैं, क्योंकि कोयले को देश-भर में फैले हुए उपभोक्ताओं तक पहुंचाना पड़ता है। बहिर्वर्ती कोयला-क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ा कर परिवहन की कठिनाइयों को कुछ हद तक दूर किया जा सकता है, किन्तु इससे समस्या पूरी तरह हल नहीं हो सकती क्योंकि बंगाल-बिहार के कोयला-क्षेत्रों, विशेष रूप से रानीगंज के कोयला-क्षेत्र, के बाहर अच्छी किस्म का कोयला प्रचुर मात्रा में नहीं मिलता। तीसरी योजना में कोयले के उत्पादन-कार्यक्रम में वृद्धि होने के कारण दूर के उपभोक्ताओं तक कोयला पहुंचाने में रेलवे पर और अधिक दबाव पड़ेगा। रेलवे की क्षमता बढ़ाई जा रही है, किन्तु रेल-परिवहन पर दबाव को कम करने के लिए आवश्यक है कि :(क) कोयला-क्षेत्रों के पास के उपभोक्ताओं तक कोयला सड़क से ले जाया जाए, और (ख) दक्षिण तथा पश्चिम-भारत के उपभोक्ताओं के लिए रेल और समुद्र के मिले-जुले रास्ते से ले जाए जानेवाले कोयले की मात्रा बढ़ाने के लिए कदम उठाए जाएं। इस प्रकार के उपायों पर विचार किया जा रहा है। इस बात की सम्भावना पर भी विचार किया जा रहा है कि पश्चिम और दक्षिण-भारत के उपभोक्ता कोयले के बदले भट्ठी-तेल का उपयोग करें।

34. **कोयला धोने के कारखाने :** दूसरी योजना के इस्पात-कार्यक्रम के अनुसार 1 करोड़ 16 लाख 30 हज़ार टन कच्चा कोयला धोने (यानी 81 लाख टन धुले कोयले) की क्षमता स्थापित करना आवश्यक था। इसमें 60 लाख 30 हज़ार टन कच्चा कोयला धोने, यानी 41 लाख टन धुले कोयले, की क्षमता स्थापित की जा चुकी है। आशा है कि शेष क्षमता सन् 1963 के मध्य तक पूरी तरह स्थापित हो जाएगी।

35. तीसरी योजना में इस्पात-उत्पादन बढ़ाने की जो रूपरेखा सोची गई है, उसे देखते हुए मोटे तौर पर अनुमान लगाया गया है कि 1 करोड़ 27 लाख टन कच्चा कोयला धोने की अतिरिक्त क्षमता की व्यवस्था करनी होगी। यह अनुमान रानीगंज-क्षेत्र के दिशेरगढ़ और बराकर मेज़र्स तथा झिलिमिली के मिश्रणीय कोयले को अलग करके लगाया गया है, क्योंकि यह कोयला बिना धोए ही काम में लाया जाएगा। इस अतिरिक्त क्षमता की व्यवस्था कुछ हद तक ऐसे कारखानों के विस्तार-द्वारा करने का विचार है, जो पहले से मौजूद हैं या तैयार हो रहे हैं—जैसे, दुगड़ा और भोजूडीह में जो कारखाने कायम हो रहे हैं, उनकी क्षमता दुगुनी करके। इससे 32 लाख टन कोयला धोना सम्भव हो सकेगा। शेष क्षमता के लिए (30 लाख टन की क्षमता के) दो नए कारखाने कठारा में, (35 लाख टन की क्षमता के) दो कारखाने करनपुरा में और (30 लाख टन का) एक कारखाना झरिया में कायम

किया जाएगा। कठारा के कारखानों में कठारा-खान और जारंगडीह, सावंग तथा कुरगली की गहरी खानों का कोयला और करनपुरा के कारखानों में झरिया-कोयला-क्षेत्र में राष्ट्रीय कोयला-विकास-निगम की नई खान का कोयला धुलने के लिए आ सकेगा। करनपुरा के कारखानों का दोहरा प्रयोजन है। धुला हुआ स्लैक कोयला इस्पात के कारखानों को दिया जाएगा और धुले हुए भाप-कोयले की खपत रेलवे में होगी। भोजूडीह और दुगड़ा के कारखानों की धुलाई-क्षमता बढ़ाने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए, क्योंकि जिन इलाकों का कोयला धुलने के लिए आएगा, उनके अधिकांश कोयले की धुलाई-सम्बन्धी विशेषताएं पहले ही मालूम हो चुकी हैं। करनपुरा और कठारा के कारखानों के बारे में प्रारम्भिक परियोजना-रिपोर्ट तैयार करने के लिए आंकड़े एकत्र किए जा रहे हैं। झरिया के मध्य में कायम किया जानेवाला कारखाना शायद तीसरी योजना की अवधि के अन्त में ही स्थापित हो सकेगा, क्योंकि नई खान की स्थापना में और उसके कोयले की धुलाई-सम्बन्धी विशेषताएं निश्चित करने में कुछ समय लगेगा। इसके अतिरिक्त, दुर्गापुर में पश्चिम-बंगाल कोक-भट्ठी-कारखाने के अखंड भाग के रूप में कोयला धोने का एक कारखाना कायम करने की भी योजना बनाई जा रही है।

36. उपर्युक्त धुलाई-कारखाने मुख्यतः इस्पात-कारखानों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हैं। इनके अलावा, योजना में गैर-कोकिंग कोयले के लिए भी, जिनकी आवश्यकता रेलवे को होती है, धुलाई-कारखाने खोलने की व्यवस्था की गई है। गैर-कोकिंग कोयले को धोना आवश्यक होता जा रहा है, क्योंकि खान से निकाले जानेवाले कोयले की किस्म धीरे-धीरे बिगड़ती जा रही है और अच्छी किस्म का गैर-कोकिंग कोयला पर्याप्त मात्रा में मिलने में कठिनाई होती है। कोकिंग कोयले के विपरीत गैर-कोकिंग कोयले के धोने में अधिक कठिनाई होती है और इन कोयलों की धुलाई-सम्बन्धी विशेषताओं के बारे में जो जानकारी प्राप्त हो सकी है, वह अपर्याप्त है। इसके अलावा, कोकिंग कोयला धोनेवाले कारखानों में रेलवे के उपयोग के लिए धुले हुए भाप-कोयले की मात्रा साफ कोयले की मात्रा की अपेक्षा बहुत कम होगी। इसलिए कार्यक्रम में व्यवस्था की गई है कि विभिन्न कोयला-खानों से निकाले गए गैर-कोकिंग कोयले की धुलाई-सम्बन्धी विशेषताओं की विस्तृत रूप से छानबीन की जाए और धुलाई से सम्बन्धित अर्थशास्त्रीय पहलुओं का अध्ययन किया जाए। प्रारम्भिक अध्ययन हो जाने और इस प्रकार के कोयले की धुलाई से सम्बन्धित अर्थशास्त्रीय पक्ष निश्चित कर दिए जाने के बाद इन अतिरिक्त धुलाई-कारखानों को स्थापित करने का विचार है। प्रायोगिक रूप से 70 से 80 लाख टन (कच्चा कोयला) तक की क्षमता स्थापित करने का विचार है।

37. **नइवेली-लिग्नाइट-परियोजना :** दक्षिण-अर्काट ज़िले (मद्रास) में नइवेली स्थान पर लिग्नाइट-संचय के समन्वित विकास की परियोजना में, जो दूसरी योजना में सम्मिलित की गई थी, निम्नलिखित उद्देश्य रखे गए थे :

(1) प्रति वर्ष 35 लाख टन कच्चे लिग्नाइट का उत्पादन, जिससे निम्नलिखित आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके :

(क) 250 मिलीवाट की क्षमतावाला एक तापीय बिजली-संयन्त्र,

(ख) यूरिया के रूप में 70,000 टन स्थिर नत्रजन तैयार करनेवाला एक उर्वरक-संयन्त्र, और

(ग) 3,80,000 टन कार्बनीकृत ब्रिकेट तैयार करने के लिए शोधन और कार्बनीकरण-संयन्त्र ; तथा

(2) प्रति वर्ष 6,000 टन सफेद चीनी मिट्टी और बाल क्ले का उत्पादन करने के लिए मिट्टी की धुलाई का संयन्त्र ।

समन्वित परियोजना के विभिन्न अंगों की आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद जो बिजली बच रहेगी, वह राज्य की बिजली-व्यवस्था को दे दी जाएगी ।

आम तथा विशेष प्रकार की मशीनों से काम लेते हुए खानों में ज़खीरों के ऊपर पड़े हुए किरचे को हटाने का कार्य बहुत आगे बढ़ चुका है और तापीय बिजली-संयन्त्र की पहली टुकड़ी की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए सन् 1961 के अन्त में ठीक समय पर लिग्नाइट का उत्पादन शुरू हो जाएगा। इसके बाद धीरे-धीरे उत्पादन में वृद्धि होती जाएगी और तापीय बिजली-केन्द्र की दूसरी टुकड़ियां तथा उर्वरक और ब्रिकेटीकरण तथा कम-तापीय कार्बनीकरण-संयन्त्रों की स्थापना के साथ उत्पादन दूसरी योजना के निर्धारित लक्ष्य, यानी 35 लाख टन, तक पहुंच जाएगा।

तीसरी योजना में ये उद्देश्य सम्मिलित किए गए हैं : (क) दूसरी योजना के कार्यक्रमों को पूरा करना, (ख) तापीय बिजली की क्षमता में 150 मिलीवाट की वृद्धि करना, (ग) लिग्नाइट के उत्पादन को दूसरी योजना के 35 लाख टन के लक्ष्य से बढ़ा कर 38 लाख टन तक पहुंचाना, ताकि विस्तार किए हुए तापीय बिजली-संयन्त्र की ईंधन-सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। ऊपर (ख) में बताए गए उद्देश्य के लिए 15 करोड़ रुपये के व्यय का अनुमान है, जिसमें 9.93 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा भी शामिल है। सिंचाई और बिजली से सम्बन्धित अध्याय के पैरा 54 में इसके बारे में बताया गया है। खान-उत्पादन के विस्तार पर 3.8 करोड़ रुपये (1.45 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा-सहित) के व्यय का अनुमान है। यह राशि मुख्य रूप से विशिष्ट प्रकार के खनन-उपकरणों की एक अतिरिक्त टुकड़ी खरीदने में खर्च होगी। यह उपकरण लिग्नाइट के उत्पादन को बढ़ा कर 60 लाख टन तक पहुंचाने के लिए पर्याप्त होगा। लिग्नाइट पैदा करने के लिए प्रस्तावित उच्च तापीय कार्बनीकरण-संयन्त्र के लिए लिग्नाइट की यह मात्रा आवश्यक होगी (देखिए, उद्योगों से सम्बन्धित अध्याय का पैराग्राफ 40)।

खनिज तेल

38. खनिज तेल-सम्बन्धी कार्यक्रम में निम्नलिखित कार्य सम्मिलित किए गए हैं : (क) असम में आयल इंडिया के ठेके के क्षेत्रों में जो ज़खीरे हैं, उनका कम्पनी-द्वारा उपयोग, (ख) तेल के ज़खीरों का पता लगाने के लिए तेल तथा प्राकृतिक गैस-आयोग-द्वारा अधिक खोज-बीन और तेल का अतिरिक्त उत्पादन, (ग) क्रमशः गौहाटी और बरौनी में तेल-शोधनालयों के निर्माण का काम पूरा करना और गुजरात में एक नया शोधनालय स्थापित करना, जिसकी क्षमता लगभग 20 लाख टन होगी, (घ) पैट्रोल की बनी चीज़ें एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाने के लिए पाइप-लाइनें तैयार करना, और (ङ) सरकारी क्षेत्र के शोधनालयों में तैयार की गई चीज़ों तथा देश में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होने के कारण विदेशों से फायदे की शर्तों पर मंगाई गई चीज़ों का सरकार की मार्फत वितरण करने के लिए सुविधाएं देना। (ग) के विषय में उद्योग-सम्बन्धी अध्याय के पैरा 86 में विस्तारपूर्वक उल्लेख किया गया है।

39. सरकारी क्षेत्र के शोधनालयों के लिए, जो गौहाटी (नूनमती) और बरौनी में स्थापित किए जा रहे हैं, काफी संख्या में तेल के कुओं की व्यवस्था करने के लिए आयल इंडिया-द्वारा अतिरिक्त कुएं खोदे जाएंगे। अनुमान है कि तीसरी योजना की अवधि में इस काम पर सरकार को 1.4 करोड़ रुपये खर्च करने पड़ेंगे। कुएं खोदने और पाइप-लाइन बिछाने के कार्यक्रम पर इस प्रकार अमल किया जाएगा कि शोधनालयों के निर्माण का काम पूरा होने के साथ ही यह कार्यक्रम भी पूरा हो जाए। कार्यक्रम का उद्देश्य यह है कि अगर असम में आयल इंडिया के क्षेत्रों में अतिरिक्त ज़खीरों का पता लग जाए, तो बिना साफ किए तेल का वार्षिक उत्पादन बढ़ा कर 27 लाख 50 हज़ार टन से अधिक कर दिया जाए। यदि ऐसा हुआ या असम के अन्य क्षेत्रों में व्यापार के लिए काम में लाए जा सकनेवाले तेल के ज़खीरे मिले, तो इस समय जो पाइप-लाइन तैयार की जा रही है, उसकी क्षमता बढ़ानी पड़ सकती है, जिससे वह ज्यादा तेल ले जा सके। पाइप-लाइन का डिज़ाइन तैयार करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है।

40. यदि आयल इंडिया नहरकटिया-क्षेत्र में प्रति वर्ष 27 लाख 50 हज़ार टन की दर से उत्पादन करने लगे, तो देशी स्रोतों से प्राप्त होनेवाले बिना साफ किए तेल की मात्रा देश की आवश्यकता से बहुत कम होगी। इसलिए तेल के नए ज़खीरों की खोज आवश्यक है। दूसरी योजना में सरकार ने तेल तथा प्राकृतिक गैस-आयोग के द्वारा तेल की खोज का कार्यक्रम स्वयं आरम्भ किया। आयोग के कार्यों के फलस्वरूप गुजरात के खम्भात-अंकलेश्वर-क्षेत्र और असम के शिवसागर-क्षेत्र में तेल और गैस का पता लगा है। तेल के ज़खीरों का पता लगाने और अतिरिक्त उत्पादन की व्यवस्था करने के लिए आयोग तीसरी योजना के दौरान अधिक व्यापक स्तर पर काम करेगा।

तीसरी योजना के कार्यक्रम के अन्तर्गत 115 करोड़ रुपये खर्च करने का विचार है, जब कि दूसरी योजना में इसके लिए केवल 26 करोड़ रुपये रखे गए थे। इस कार्यक्रम के क्षेत्र में कावेरी-घाटी समेत देश के ऐसे सभी अवसादीय (सैडीमेंटरी) इलाके आ जाएंगे, जहां से तेल मिलने की आशा होगी; किन्तु शुरू में खम्भात-अंकलेश्वर और शिवसागर के क्षेत्र में ही मुख्य रूप से कुएं खोदने पर बल दिया जाएगा, ताकि वहां तेल के जिन ज़खीरों का पता लगा है, उनसे तेल निकाला जा सके। जिन इलाकों में तेल के ज़खीरे मौजूद हैं और इस स्थिति में हैं कि उनसे तेल निकाला जा सकता है, वहां उत्पादन के विकास और पाइप-लाइनों के लिए समय-समय पर आवश्यकतानुसार रकमें देने की व्यवस्था की जाएगी।

सरकार ने विदेशी तेल-अन्वेषकों को भी भारत में तेल खोजने के लिए बुलाने का निश्चय किया है। उनसे कहा जाएगा कि वे ऐसी शर्तों पर इस काम में हाथ बटाएं, जो दोनों पक्षों को स्वीकार्य हों। जिन कम्पनियों ने यह काम करना स्वीकार किया है, उनमें से एक 'बर्मा आयल कम्पनी' भी है। असम में तेल के अन्वेषण और उत्पादन के लिए सहयोग के नए आधार के बारे में इस कम्पनी से बातचीत हो चुकी है। आयल इंडिया की हिस्सा-पूंजी और व्यवस्था, दोनों में सरकार और 'बर्मा आयल कम्पनी' बराबर के साझेदार होंगे। (पहले सरकार का केवल एक-तिहाई हिस्सा था)। पुनर्गठित रूप में कम्पनी नहरकटिया, मोरन और हुगरीजन के वर्तमान क्षेत्रों में और साथ ही वर्तमान क्षेत्र के उत्तर-पूर्व में 1,886 वर्ग मील के नए क्षेत्र में काम करेगी। शोधन और हाट-व्यवस्था-सम्बन्धी कामों की जिम्मेदारी

पहले की तरह सरकारी क्षेत्र पर ही होगी, किन्तु डिगबोई-शोधनालय को, जो 'बर्मा ग्रायल कम्पनी' की एक उपसंगी 'ग्रसम ग्रायल कम्पनी' के स्वामित्व में है, बिना साफ किया तेल देने का ग्राश्वासन दिया गया है। डिगबोई-तेल-क्षेत्र से शोधनालय की ग्रावश्यकता में जितनी कमी रह जाएगी, उतना बिना साफ किया हुग्रा तेल उसे मिलता रहेगा। ग्रायल इंडिया में यथासम्भव ग्रधिक-से-ग्रधिक संख्या में भारतीयों को नौकरी मिलेगी ग्रौर उनके प्रशिक्षण के लिए सुविधाएं दी जाएंगी तथा 'बर्मा ग्रायल कम्पनी' ग्रायल इंडिया के खर्चे से भारतीयों को विदेश में पेट्रोल-उद्योग से सभी विषयों में प्रशिक्षण दिलाएगी।

भारत-सरकार के ग्रामन्त्रण पर दूसरी विदेशी कम्पनियों ने जो सेवाएं प्रस्तुत की हैं, उन पर विचार किया जा रहा है।

ग्राशा की जाती है कि दिसम्बर 1961 से ग्रंकलेश्वर-क्षेत्र में बिना साफ किए तेल का उत्पादन प्रायोगिक रूप से 1,500 टन प्रति दिन के हिसाब से शुरू हो जाएगा ग्रौर ग्रनुमानित ज़खीरे से प्रति वर्ष 20 लाख टन से 25 लाख टन तक तेल प्राप्त हो सकेगा। ग्राशा की जाती है कि तीसरी योजना की ग्रवधि के ग्रन्त तक देशी बिना साफ किए तेल का उत्पादन 65 लाख टन तक पहुंच जाएगा ग्रौर तीसरी योजना के दौरान देशी बिना साफ किए तेल का कुल उत्पादन लगभग 1 करोड़ 80 लाख टन हो जाएगा।

41. **तेल का वितरण :** 'इंडियन ग्रायल कम्पनी', जिसकी स्थापना तेल के सामान के वितरण ग्रौर विपणन के लिए सरकारी एजेंसी के रूप में सन् 1959 में हुई थी, सोवियत रूस के निर्यात-संगठन के साथ चार वर्ष का एक करार कर चुकी है। इसके ग्रनुसार, करार की ग्रवधि में 19 लाख टन उन चीज़ों का, जिनका देश में पर्याप्त उत्पादन नहीं होता, मुख्यतः मिट्टी का तेल ग्रौर उच्च गतिवाले डीज़ल तेल का, ग्रायात किया जा सकेगा। इसी तरह की वस्तुएं सम्बद्ध व्यापार-करारों के ग्रधीन रूमानिया से भी ग्रायात की जाएंगी। देश में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होनेवाले पेट्रोलियम के सामान के ग्रायात पर स्वतन्त्र विदेशी मुद्रा का व्यय कम करने के लिए इस बात का बहुत प्रयत्न करना होगा कि इस प्रकार के सामान का ग्रायात 'इंडिया ग्रायल कम्पनी' के द्वारा बढ़ाया जाए ग्रौर ग्रदायगी रुपये में की जाए। इसके ग्रतिरिक्त, सरकारी क्षेत्र में जो दो शोधनालय बन रहे हैं ग्रौर गुजरात में जो तीसरा शोधनालय बनाने का विचार है, उनके तेल का वितरण भी (प्रत्यक्ष रूप से या ग्रन्य वितरण-कम्पनियों से माल-विनिमय के ग्राधार पर) वही कम्पनी करेगी। तीसरी योजना की ग्रवधि में वितरण-कार्य पर 10 करोड़ रुपये की पूंजी लगाने का विचार है।

42. **पेट्रोलियम-सामान ले जाने की पाइप-लाइनें :** योजना में बरौनी के शोधनालय से पश्चिमी केन्द्रों ग्रौर कलकत्ता तक पेट्रोलियम का सामान ले जाने के लिए पाइप-लाइनों के निर्माण की व्यवस्था की गई है। इस परियोजना के तकनीकी तथा ग्राथिक पहलुग्रों का ग्रध्ययन करने के लिए ग्रावश्यक उपाय किए जा रहे हैं। ग्रनुमान लगाया गया है कि इन पाइप-लाइनों के निर्माण पर 35 करोड़ रुपये खर्च होंगे।

खनिज लोहा

43. तीसरी योजना की ग्रवधि के ग्रन्त तक के लिए लोहे ग्रौर इस्पात का जो लक्ष्य रखा गया है, उसके ग्राधार पर ग्रनुमान है कि लगभग 2 करोड़ टन खनिज लोहे की ग्राव-श्यकता होगी। इसके ग्रतिरिक्त, निर्यात के लिए भी खनिज लोहे की ग्रावश्यकता होगी।

जापान और यूरोप के कई देश भारत के खनिज लोहे में दिलचस्पी ले रहे हैं। भारत-सरकार और जापान-सरकार ने एक करार पर हस्ताक्षर किए हैं, जिसके अनुसार किरिबुरु-क्षेत्र से 20 लाख टन और मध्यप्रदेश के बेलाडिला-क्षेत्र से 40 लाख टन खनिज लोहा जापान को निर्यात किया जाएगा। यह मात्रा उस 20 लाख टन के अलावा होगी, जिसका इस समय निर्यात किया जाता है। अन्य देशों को निर्यात की मात्रा यदि लगभग 20 लाख टन मान ली जाए, तो निर्यात के लिए कुल मिला कर लगभग 1 करोड़ टन खनिज लोहे की आवश्यकता होगी। देश के उद्योगों और इस निर्यात-लक्ष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तीसरी योजना में 3 करोड़ 20 लाख टन खनिज लोहा पैदा करने की क्षमता का लक्ष्य रखा गया है।

44. भिलाई और राउरकेला के इस्पात-कारखानों की आवश्यकताएं उन खानों से पूरी की जाएंगी, जो इसी उद्देश्य से दूसरी योजना की अवधि में स्थापित की गई हैं। बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इन खानों में उत्पादन बढ़ाने पर जो पूंजीगत व्यय होगा, वह उपर्युक्त दो कारखानों के विस्तार के व्यय में शामिल कर लिया गया है। जहां तक दुर्गापुर के इस्पात-कारखाने का सम्बन्ध है, दूसरी योजना में स्थापित की गई खान से उसकी बढ़ती हुई आवश्यकताओं की शायद पूर्ति न हो सके और उसे किरिबुरु की खानों से, जो जापान से निर्यात-सम्बन्धी वादे को पूरा करने के लिए विकसित की जा रही है, खनिज लोहा मंगवाना पड़े। इसलिए बेलाडिला-परियोजना के लक्ष्य को 40 लाख टन से बढ़ा कर 60 लाख टन कर दिया गया है। जब बेलाडिला-खान में पूरा उत्पादन होने लगेगा, तब जापान को निर्यात की जानेवाली सारी मात्रा वहां से प्राप्त हो जाएगी। इस तरह, किरिबुरु से प्राप्त होनेवाले सारे खनिज लोहे से दुर्गापुर के इस्पात-कारखाने की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकेगी। बोकारो के नए इस्पात-कारखाने के लिए भी खनिज लोहा किरिबुरु-क्षेत्र से ही लेना पड़ेगा। इसके लिए या तो वर्तमान खानों की क्षमता बढ़ानी पड़ेगी या आसपास नई खानें खोदनी पड़ेंगी।

45. आशा की जाती है कि किरिबुरु-खनिज लोहा-परियोजना के अन्तर्गत सन् 1963 में उत्पादन शुरू हो जाएगा। यह परियोजना जापान की सहायता से क्रियान्वित की जा रही है। बेलाडिला के खनिज लोहे के ज़खीरों का पूर्वेक्षण किया जा रहा है और एक नई खान स्थापित की जाएगी, जिसमें योजना के अन्तिम चरण तक उत्पादन होने लगेगा। इस खान से अन्ततः 60 लाख टन खनिज लोहा प्रति वर्ष निकलेगा। इस परियोजना पर 17 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है और यह भी जापान की सहायता से क्रियान्वित की जा रही है। किरिबुरु में उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रम पर लगभग 6 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है और इसे इस तरह अमल में लाया जाएगा कि बोकारो में नए इस्पात-कारखाने स्थापित होते ही कार्यक्रम पूरा हो जाए और कारखाने को आवश्यक मात्रा में खनिज लोहा मिल सके।

46. उपर्युक्त परियोजनाओं के अतिरिक्त, यह भी आशा की जाती है कि राष्ट्रीय खनिज-विकास-निगम रेडी-क्षेत्र (महाराष्ट्र) से 5 लाख टन, उड़ीसा-खनिज-निगम-सुकिंडा दैत्री-क्षेत्र से 5 लाख टन और खनिज-विकास-मंडल मैसूर के बेलारी-हास्पेट-क्षेत्र तथा पश्चिमी तट से 10 लाख टन खनिज लोहे की अतिरिक्त मात्रा प्राप्त कर सकेगा।

अन्य खनिज-परियोजनाएं

47. **तांबा-परियोजनाएं :** देश में प्रति वर्ष केवल 8,000 टन तांबा पैदा किया जाता है, जब कि इस समय मांग 70,000 टन की है। अनुमान है कि सन् 1965 तक तांबे की मांग बढ़ कर

1,50,000 टन हो जाएगी। इस समय अधिकांश मांग की पूर्ति आयात-द्वारा की जाती है और जब तक देश में तांबे के उत्पादन में अधिकाधिक वृद्धि नहीं होगी, तब तक अधिक मात्रा में तांबा विदेशों से मंगाना पड़ेगा।

48. राजस्थान के खेतरी-दरीबो-क्षेत्र और सिक्किम के रंगपो-क्षेत्र में विस्तृत कार्य करने से कच्चे तांबे के खोदे जा सकनेवाले बड़े ज़खीरों का पता चला है। खेतरी का ज़खीरा लगभग 2 करोड़ 80 लाख टन का है और उसमें औसतन 0.8 प्रतिशत तांबा है। रंगपो का ज़खीरा लगभग 3 लाख 50 हज़ार टन का है और उसमें तांबे की मात्रा औसतन 6.24 प्रतिशत है। दरीबो में तांबे की मात्रा अधिक है, किन्तु ज़खीरा कितना बड़ा है, इसका अभी तक पूरा पता नहीं लग सका है। खेतरी में जो ज़खीरे मिले हैं और दरीबो में जिनका संकेत मिला है, वे प्रति वर्ष 11,500 टन इलेक्ट्रोलिटिक तांबे की क्षमतावाले प्रद्रावक (स्मेल्टर) के लिए पर्याप्त समझे जाते हैं। योजना में खेतरी और दरीबो में कच्चे तांबे के खनन और सान्द्रण के लिए और सान्द्रीकृत तांबे के खेतरी में स्थापित किए जानेवाले प्रद्रावक में प्रद्रावण के लिए एक परियोजना शामिल की गई है। अनुमान है कि इस पर 12.5 करोड़ रुपये लगाने पड़ेंगे।

49. रंगपो में जिन ज़खीरों का पता लगा है, वे यद्यपि उच्च कोटि के हैं तथापि अपेक्षाकृत छोटे हैं। इनका उपयोग सिक्किम-खनन-निगम-द्वारा किया जाएगा। यह निगम सिक्किम-दरबार और भारत-सरकार, दोनों के संयुक्त प्रयास का फल है। खान से निकाली गई कच्ची धातु खान में ही सान्द्रीकृत की जाएगी और तब वह देश के किसी प्रद्रावक कार-खाने में प्रद्रावण के लिए रेल-द्वारा भेज दी जाएगी। अनुमान है कि इस परियोजना पर लगभग 2.5 करोड़ रुपये खर्च होंगे।

50. **पाइराइट्स-गन्धक-परियोजना :** देश में तत्व-गन्धक के खोदे जा सकनेवाले ज़खीरे न होने के कारण सारा ध्यान गन्धक के वैकल्पिक स्रोत के रूप में पाइराइट्स पर केन्द्रित कर दिया गया है। शाहाबाद ज़िला (बिहार) के अमजोर-बोगा क्षेत्र में पाइराइट्स का लगभग 80 लाख टन का ज़खीरा मिला है। इसमें गन्धक की मात्रा औसतन 40 प्रतिशत है। अनुमान लगाया गया है कि 38 करोड़ 40 लाख टन के ज़खीरे और मिल सकते हैं। पाइराइट्स से लगभग 84,000 टन गन्धक प्राप्त करने के लिए एक परियोजना तैयार की जा रही है।

51. **पन्ना-हीरा-परियोजना :** प्रारम्भिक कार्यों के परिणाम आशाजनक रहे हैं और इसलिए पन्ना के हीरा-क्षेत्रों और मध्यप्रदेश में उनसे मिले हुए क्षेत्रों का विस्तृत रूप से पूर्वेक्षण किया जा रहा है, ताकि रत्न की किस्म के और उद्योगों में काम आनेवाले हीरों का उत्पादन किया जा सके। अनुमान है कि इस परियोजना पर 1.5 करोड़ रुपये खर्च होंगे।

52. **कच्चा मैंगनीज़-शोधन-परियोजना :** देश में कच्चे मैंगनीज़ का जो ज़खीरा है, उसका एक बड़ा हिस्सा बहुत ही मामूली दर्जे का है। इसके अतिरिक्त, खनन और निर्यात की जाने-वाली कच्ची धातु निर्धारित करने के फलस्वरूप कुछ हिस्सा अविपण्य समझ कर रद्द कर दिया जाता है। खानों में जो ढेर इकट्ठा हो जाता है, उसमें यह सामग्री काफी मात्रा में होती है। उच्च कोटि के कच्चे मैंगनीज़ के सीमित ज़खीरे के संरक्षण के लिए यह ज़रूरी हो गया है कि इस सामग्री के शोधन के लिए सुविधाएं दी जाएं। योजना में इस काम के लिए एक परियोजना शामिल की गई है, जिस पर 5 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है।

53. **सोना :** कोलार में सोने के ज़खीरों की अधिक खोज-बीन करने और उनका लाभ उठाने का एक कार्यक्रम योजना में रखा गया है। आशा की जाती है कि हट्टी की सोने की खानों में इस समय जो अन्वेषण-कार्य हो रहे है, वे सन् 1962-63 तक पूरे हो जाएंगे। उसके बाद प्राप्त सूचनाओं के आधार पर खनन और पोषण-क्षमता बढ़ा कर प्रति दिन 1 हज़ार टन तक करने के प्रश्न पर विचार किया जाएगा।

54. **परमाणु-खनिजों का विकास :** एक परमाणु-शक्ति-केन्द्र स्थापित करने की परियोजना के सिलसिले में योजना में कच्चे यूरेनियम के खनन, यूरेनियम निकालने और परमाणु की दृष्टि से उसे शुद्ध धातु या सम्मिश्रण का रूप देने तथा ईधन-तत्वों से प्लुटोनियम निकालने की सुविधाएं देने का विचार है। अनुमान लगाया गया है कि इस काम पर 24 करोड़ रुपये खर्च होंगे।

खनिज पदार्थों की आवश्यकताएं

55. तीसरी योजना में शामिल किए गए कार्यक्रमों के लिए कोयला और खनिज-सम्बन्धी आवश्यकताओं की चर्चा अन्यत्र की गई है। तीसरी योजना में विभिन्न उद्योगों के लिए जो उत्पादन-क्षमता निश्चित की गई है, उसको देखते हुए खनिज पदार्थों की मांग बढ़ेगी। देश के उद्योगों के लिए अधिक महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों की आवश्यकता का अनुमान और खनिज मैंगनीज़ की निर्यात की जानेवाली अनुमानित मात्रा नीचे दी जा रही है :

(लाख टनों में)

	देश की आवश्यकता	**निर्यात**
खनिज मैंगनीज़	5	15
बाक्साइट	4.5	—
सेलखड़ी	21†	—
चूने का पत्थर	298‡	—

खनिज सर्वेक्षण

56. गत दस वर्षों में देश के खनिज साधनों का सर्वेक्षण करने की दिशा मे प्रगति हुई है और इस कार्य के जो परिणाम निकले है, उनका लाभ भी उठाया गया है, किन्तु खनिज सामग्री की तेजी से बढ़ती हुई मांग को देखते हुए आवश्यक है कि इस प्रकार के सर्वेक्षण और अन्वेषण-कार्य और भी तेज़ी से किए जाएं। इस्पात का उत्पादन बढ़ जाने के कारण फ्लक्स-कोटि के चूने के पत्थर और डोलोमाइट तथा अन्य उष्मसह सामग्रियों के नए ज़खीरों का पता लगाना बहुत आवश्यक हो गया है। इसी प्रकार, तांबा, सीसा, और ज़स्ता-जैसी

†इसमें सिन्दरी फर्टिलाइज़र्स और हनुमानगढ़ में कायम किए जानेवाले उर्वरक-कारखाने तथा 1 करोड़ 50 लाख टन सीमेंट के उत्पादन-लक्ष्य की आवश्यकताएं सम्मिलित हैं।

‡सीमेंट, इस्पात और लौह-मैंगनीज-उद्योगों की आवश्यकताएं तथा विविध उद्योगों की आवश्यकताओं का कुल अनुमान भी इसमें शामिल है ।

अलौह धातुओं के खोदे जा सकनेवाले अतिरिक्त ज़खीरों का पता लगाना भी बहुत आवश्यक है। ये इस समय अधिकतर बाहर से मंगाने पड़ते हैं। बाक्साइट के ज़खीरों का पता चलना भी बहुत ज़रूरी है, क्योंकि अल्युमीनियम-उद्योग के विस्तार के साथ ही इसकी मांग बढ़ जाएगी। इन तात्कालिक आवश्यकताओं को देखते हुए भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था और भारतीय खान-संस्था का और विस्तार करना बहुत ज़रूरी है। तीसरी योजना में इन दोनों संस्थाओं को और बढ़ाने की व्यवस्था है और अनुमान है कि इन पर क्रमश: 10 और 5 करोड़ रुपये खर्च करने पड़ेंगे।

57. इन दोनों विभागों के कार्यक्रमों के अन्तर्गत अन्वेषण-कार्य व्यापक स्तर पर और तेज़ी से करने का विचार है। उनके कार्यक्रमों के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं :

(1) जितनी जल्दी हो सके, अधिक-से-अधिक क्षेत्र भूगर्भीय नक्शों की परिधि में आ जाएं—तीसरी योजना की अवधि में लगभग 1,70,000 वर्ग मील सम्मिलित करने का विचार है;

(2) तांबे, सीसे और ज़स्ते के जो ज़खीरे ज्ञात हो चुके हैं या जिनके बारे में कुछ पता चला है, उनकी तेज़ी से खोज-बीन की जाए। भूगर्भीय नक्शे तैयार करने के दौरान इन धातुओं के बारे में प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने के अतिरिक्त ऐसे स्थान, जहां से अधिक मात्रा में धातु मिलने की आशा हो, बड़े माप के नक्शे में दिखाए जाएंगे और भू-भौतिक तरीकों से तथा कुएं खोद कर उनकी खोज की जाएगी। भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था के 'बेस मेटल्स डिवीज़न' का विस्तार किया जाएगा;

(3) बाक्साइट, सेलखड़ी, खनिज लोहा, खनिज मैंगनीज़, क्रोमाइट, ग्रेफाइट, और चूने के पत्थर-जैसे अन्य खनिज पदार्थों के अधिक विस्तृत सर्वेक्षण और अन्वेषण का काम किया जाएगा और यदि आवश्यक हुआ, तो इसके लिए उनके ज़खीरों की बनावट के नक्शे तैयार किए जाएंगे और खुदाई की जाएगी;

(4) अलौह धातुओं और भूमिगत जल-साधनों की खोज-बीन के लिए भू-भौतिक और भू-रासायनिक तरीकों से अधिक काम किया जाएगा; तथा

(5) तीसरी योजना के कोयला-कार्यक्रम के सिलसिले में और बाद की योजनाओं की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए चुनी हुई कोयला-खानों का भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था-द्वारा क्षेत्रीय पूर्वेक्षण और भारतीय खान-संस्था-द्वारा विस्तृत सर्वेक्षण किया जाएगा।

58. इन कार्यक्रमों में शामिल किए गए अधिक महत्वपूर्ण कार्य नीचे दिए जा रहे हैं :

कोयला : सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रमों के अन्तर्गत सिंगरौली, पश्चिम-बोकारो, झिलिमिली, पेंच-कान्हन और सिंगरेनी की कोयला-खानों तथा रानीगंज और झरिया की कोयला-खानों के चुने हुए खंडों की विस्तृत खोज-बीन और ड्रिलिंग एवं कोटि तथा परिमाण के निर्धारण के लिए सोनहाट, सोहागपुर, उत्तर-करनपुरा और कालाकोट की कोयला-खानों के क्षेत्रीय नक्शे तैयार करना और उनकी ड्रिलिंग करना।

खनिज लोहा : बिहार और उड़ीसा के खनिज लोहे के क्षेत्र की बनावट के नक्शे तैयार करना और बेलाडिला (मध्यप्रदेश), सेलम (मद्रास), तुमकुर, चितलद्रुग और बेलारी-हास्पेट (मैसूर) के ज़खीरों के बड़े माप के नक्शे तैयार करना और इसके बाद ड्रिलिंग करना।

खनिज मैंगनीज़ : पंचमहल और मध्यप्रदेश के कच्चे मैंगनीज़ के कुछ चुने हुए क्षेत्रों के ज़खीरों की खोज के लिए ड्रिलिंग करना तथा उड़ीसा और राजस्थान के ज़खीरों का विस्तृत अध्ययन करना।

क्रोमाइट : जोजूहाट (बिहार), हस्सन और मैसूर ज़िलों (मैसूर), कटक, क्योंझर और ढेंकानाल ज़िलों (उड़ीसा) के ज़खीरों की विस्तृत खोज-बीन करना।

बाक्साइट : खैरा और जामनगर ज़िले (गुजरात), कोल्हापुर (महाराष्ट्र), बेलगांव (मैसूर), अमरकंटक (मध्यप्रदेश), रांची और पलामू ज़िले (बिहार) के ज़खीरों की विस्तृत खोज-बीन करना।

चूने का पत्थर : बिहार, मध्यप्रदेश और उड़ीसा में फ़्लक्स-कोटि के चूने के पत्थर की खोज करना और मिर्ज़ापुर ज़िले (उत्तरप्रदेश) में चूने के पत्थर के ज़खीरों की खोज-बीन करना।

तांबा, सीसा और ज़स्ता : कुडपाह-कर्नूल और नेलोर ज़िलों (आन्ध्रप्रदेश) हज़ारीबाग, सन्थाल परगना और मुंगेर ज़िलों (बिहार), जबलपुर और बस्तर ज़िलों (मध्यप्रदेश), पचेकनी (सिक्किम), अल्मोड़ा और गढ़वाल ज़िलों (उत्तरप्रदेश), उदयपुर ज़िला (राजस्थान), रियासी (जम्मू तथा कश्मीर) और मणिपुर के ज़खीरों के विस्तृत नक्शे तैयार करना और भूभौतिक अन्वेषण तथा ड्रिलिंग करना।

मैग्नेसाइट : अल्मोड़ा (उत्तरप्रदेश) और सेलम (मद्रास) में मैग्नेसाइट के ज़खीरों की विस्तृत खोज-बीन करना।

59. भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था और भारतीय खान-संस्था के कार्यक्रमों में व्यावहारिक भूगर्भ-विज्ञान और खनन में स्नातकोत्तर छात्रों के प्रशिक्षण की सुविधाओं की व्यवस्था करने के अतिरिक्त विश्वविद्यालयों और भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था के कर्मचारियों के विनिमय की व्यवस्था भी की गई है, ताकि विश्वविद्यालय के अध्यापक क्षेत्रीय कार्य का अनुभव प्राप्त कर सकें और भूगर्भ-सर्वेक्षण-अधिकारी अपनी सैद्धान्तिक जानकारी को ताज़ा कर सकें।

60. **राज्यों के कार्यक्रम :** केन्द्रीय सरकार के खनिज-सर्वेक्षण-कार्यक्रम के अतिरिक्त राज्य-सरकारों की योजनाओं में भी राज्यों के खान और भूगर्भ-विज्ञान निदेशालयों का विकास करने और कुछ खनिज ज़खीरों का लाभ उठाने की व्यवस्था की गई है। इन योजनाओं के अधिक महत्वपूर्ण कामों में पालना (राजस्थान) में लिग्नाइट के ज़खीरों, कालाकोट (जम्मू तथा कश्मीर) में कोयले के ज़खीरों और मैसूर में खनिज लोहे और खनिज मैंगनीज़ के ज़खीरों का फायदा उठाना भी शामिल है।

परिवहन और संचार-साधन

पिछले दस वर्षों में हमारी अर्थव्यवस्था का विकास तेज़ी से हुआ है। इसके परिणाम-स्वरूप हमारे परिवहन-साधनों पर जो बोझ पड़ा है, उसे ठीक से समझा नहीं गया है। मुख्य बोझ रेलों पर पड़ा है, जो आजकल पहली पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ से पहले के काल की अपेक्षा 100 प्रतिशत अधिक माल ढो रही हैं और जिन पर यात्रियों की संख्या 27 प्रतिशत बढ़ गई है। इसके साथ ही यह बात भी है कि उस अवधि के प्रारम्भ में, युद्ध के कारण, रेलों के बहुत-से डिब्बे और इंजिन पुराने थे और पटरियां बदलने-योग्य हो रही थीं। इसी अवधि में सड़क-परिवहन-उद्योग की वहन-क्षमता पहले की अपेक्षा दुगुनी से भी अधिक हो गई और प्रमुख बन्दरगाहों से होकर जाने और आनेवाले माल की मात्रा भी 85 प्रतिशत बढ़ गई।

इन दस वर्षों के अनुभव को देखते हुए हमारा ध्यान आर्थिक आयोजन में परिवहन और संचार के महत्व की ओर जाना ही चाहिए। यद्यपि पहली दोनों योजनाओं में कुल खर्च का काफी बड़ा अंश परिवहन और संचार-साधनों के विकास के लिए दिया गया, फिर भी परिवहन-व्यवस्था से हमारी बढ़ती हुई आवश्यकताएं मुश्किल से ही पूरी हो सकी हैं। विशेषकर रेलों के लिए लगभग इस सारी अवधि में बड़ी कठिनाई उपस्थित रही है और ऐसे समय भी आए हैं, जब वे सारे माल और यात्रियों को नहीं ले जा सकी हैं। चूंकि हमारी अर्थव्यवस्था तेज़ी से फैल रही है, इसलिए ऐसा अनुभव होता है कि ये परिस्थितियां अभी कुछ वर्ष तक बनी रहेंगी।

पहली दो योजनाओं का अनुभव--संक्षिप्त समीक्षा

2. पहली दो योजनाओं में परिवहन और संचार-सम्बन्धी कार्यक्रमों पर हुए खर्च का ब्योरा नीचे की तालिका में दिया गया है :

तालिका-संख्या 1

पहली और दूसरी योजनाओं में परिवहन और संचार-सम्बन्धी कार्यक्रमों पर खर्च

(करोड़ रुपये)

कार्यक्रम	पहली योजना	दूसरी योजना	
	वास्तविक खर्च	निर्धारित राशि	अनुमानित खर्च
परिवहन			
रेलें	258.5	900.0	860.1*
सड़कें और सड़क-परिवहन	146.8	262.7	241.8

***इसमें 15 करोड़ रुपये की वह राशि सम्मिलित नहीं है, जो रेलों की योजना की मद से डाक तथा तार-विभाग की योजना और रेल-बिजलीकरण-कार्यक्रम के सम्बन्ध में बिजली-अधिकारियों को दी गई थी और न 3.5 करोड़ रुपये की वह राशि शामिल है, जो विशाखापटनम बन्दरगाह के लिए परिवहन और संचार-मन्त्रालय को दी गई थी।**

तालिका-संख्या 1—(जारी)

कार्यक्रम	पहली योजना	दूसरी योजना	
	वास्तविक खर्च	निर्धारित राशि	अनुमानित खर्च
पत्तन और बन्दरगाह	27.6	45.3	33.4†
जहाज़रानी	18.7	47.7	52.7
नागरिक विमान-परिवहन	23.2	43.0	49.0
परिवहन-क्षेत्र के अन्य कार्यक्रम	1.9	10.4	4.2
परिवहन पर कुल खर्च	476.7	1,309.1	1,241.2
संचार-साधन			
डाक तथा तार	39.5	63.0	50.6
प्रसारण-सहित अन्य संचार-साधन	6.6	13.0	8.0
संचार-साधनों पर कुल खर्च	46.1	76.0	58.6
परिवहन और संचार-साधनों पर कुल खर्च	522.8	1,385.1	1,299.8

परिवहन और संचार-साधनों पर पहली योजना की तुलना में दूसरी योजना में अधिक धन की व्यवस्था की गई थी। योजनाओं पर कुल खर्च के अनुपात की दृष्टि से देखा जाए, तो भी पहली योजना की अपेक्षा यह राशि अधिक थी। पहली योजना में परिवहन और संचार-साधनों पर 27 प्रतिशत खर्च किया गया और दूसरी योजना में 29 प्रतिशत। सब बातों को देखते हुए इस क्षेत्र में कार्यक्रमों की प्रगति सन्तोषजनक थी।

3. पहली योजना में परिवहन के क्षेत्र में मुख्य काम यह था कि पिछले दस वर्षों में जिन साधनों पर अधिक बोझ पड़ा था, उनके स्थान पर नए साधनों की व्यवस्था की जाए। रेलवे के इंजिन और डिब्बे बदलने, पुरानी पटरियों के स्थान पर नई पटरियां बिछाने, पुराने जहाज़ों के स्थान पर नए जहाज़ लाने और बन्दरगाहों तथा पत्तनों के उपकरणों को बदलने के लिए बड़ी-बड़ी राशियों की व्यवस्था करनी पड़ी। पुराने सामान के स्थान पर नया सामान, उपकरण, आदि लाने की इतनी अधिक आवश्यकता थी कि पहली योजना में समुचित प्रसार सम्भव नहीं हो सका। दूसरी योजना में फिर काफी बड़ी राशि, विशेषकर रेलों के लिए, पुराने उपकरणों के स्थान पर नए लाने के लिए रखी गई। परन्तु दूसरी योजना में, रेलों के विभिन्न भागों पर लाइनों की वहन-क्षमता बढ़ाने के कार्यक्रमों पर और इस बात पर अधिक ज़ोर दिया गया कि कृषि और उद्योगों के बढ़ते हुए उत्पादन से उत्पन्न आवश्यकताएं पूरी करने के लिए अधिक इंजिन और डिब्बे प्राप्त किए जाएं। चालू इंजिनों और डिब्बों की संख्या पहले से बढ़ गई, है, जैसा कि अगले पृष्ठ की तालिका से स्पष्ट है। यदि दूसरी योजना में, मुख्यत: समय पर इस्पात न मिलने के कारण, माल के डिब्बे प्राप्त करने के कार्यक्रम में अड़चन न पड़ जाती, तो सन् 1960-61 के अन्त में रेलवे के पास 3,41,041 से अधिक माल-डिब्बे होते।

†इसमें वह खर्च शामिल नहीं है, जो पुनर्निर्माण और विकास के अन्तर्राष्ट्रीय बैंक से प्राप्त ऋणों और पत्तनों के अपने साधनों में से किया गया।

तालिका-संख्या 2

1951, 1956 और 1961 के 31 मार्च को चालू इंजिनों और डिब्बों की संख्या

चालू इंजिन और डिब्बे	1951	1956	1961
रेल के इंजिन	8,461	9,172	10,554
सवारी-डिब्बे (इकाइयां)	20,502	23,155	28,171
माल के डिब्बे (चौपहिए)	2,22,441	2,68,493	23,41,041

इन दस वर्षों की अवधि में रेलों ने लाइनों की क्षमता बढ़ाने के व्यापक कार्य प्रारम्भ किए हैं। इनमें ये कार्य सम्मिलित हैं : 1,300 मील इकहरी पटरी को दुहरा कर, लगभग 800 मील लम्बी लाइनों पर बिजली-द्वारा रेल चलाने की व्यवस्था करना, बहुत-से यार्डों को नए ढंग से बनाना और कई नए यार्डों का निर्माण। जो नई लाइनें बनाई गई हैं, उनकी कुल लम्बाई 1,200 मील के लगभग है। इसके अतिरिक्त 400 मील लम्बी वे लाइनें फिर बिछाई गईं, जो युद्ध-काल में उखाड़ दी गई थीं। यह कार्यक्रम मुख्यतः रेलवे की आवश्यक संचालन-आवश्यकताओं को पूरा करने और लोहा और इस्पात तथा कोयला-उद्योगों के प्रसार के लिए ज़रूरी लाइनों का निर्माण करने तक सीमित रहा है।

4. दूसरी ओर, पिछले दस वर्षों में सड़कों की कुल लम्बाई काफी बढ़ी है। आशा है कि डामर-बिछी सड़कों की लम्बाई, जो सन् 1950-51 में 97,500 मील थी, सन् 1960-61 में 1,44,000 मील हो जाएगी और बिना डामर-बिछी सड़कों की लम्बाई 1,51,000 मील से बढ़ कर 2,50,000 मील से भी अधिक हो जाएगी। इस अवधि में सड़क-परिवहन-उद्योग की वहन-क्षमता में भी समुचित प्रसार हुआ है। सड़कों पर माल ले जानेवाली गाड़ियों की संख्या, जो सन् 1950-51 में 81,000 थी, सन् 1960-61 में बढ़ कर पहले से लगभग दुगुनी, अर्थात् 1,60,000, हो गई। सवारी गाड़ियों की संख्या भी इस अवधि में लगभग 45 प्रतिशत बढ़ कर 34,000 से 50,000 हो गई। सड़क-परिवहन-उद्योग की वहन-क्षमता में जो वृद्धि हुई है, वह वास्तव में उससे कहीं अधिक है, जो कि इन आंकड़ों से प्रकट होती है। इसका कारण यह है कि सड़क पर चलनेवाली गाड़ियों की कुल संख्या के अनुपात में भारी डीज़ल गाड़ियों की संख्या अधिक बढ़ी है।

5. पत्तनों और बन्दरगाहों, विशेष कर बड़े पत्तनों की क्षमता में, पहली दो योजनाओं की अवधि में पर्याप्त प्रसार हुआ है। पहली योजना में बड़े पत्तनों की क्षमता 2 करोड़ टन से बढ़ कर 2 करोड़ 50 लाख टन हो गई; अनुमान है कि दूसरी योजना में उनकी क्षमता बढ़ कर 3 करोड़ 70 लाख टन हो गई। दूसरी योजना के अन्तर्गत कई परियोजनाएं प्रारम्भ की गईं, जिनका काम अभी चल रहा है और जिनके पूरा हो जाने पर बड़े पत्तनों की कुल क्षमता साढ़े चार करोड़ टन से अधिक हो जाएगी।

6. भारतीय जहाज़ों की कुल वहन-क्षमता, जो सन् 1950-51 में 3.9 लाख टन (कुल पंजीकृत क्षमता) थी पहली योजना के अन्त में 4.8 लाख टन (कुल पंजीकृत क्षमता) हो गई। अनुमान है कि यह क्षमता दूसरी योजना के अन्त में 9 लाख टन (कुल पंजीकृत क्षमता) हो गई। तट पर चलनेवाले जहाज़ों की कुल क्षमता में अपेक्षाकृत कम वृद्धि हुई है—सन् 1950-51 में यह क्षमता 2.1 लाख टन (कुल पंजीकृत क्षमता) थी और सन् 1960-61 में वह बढ़ कर केवल 2.9 लाख टन हो पाई।

7. सन् 1953 में विमान-सेवाओं के राष्ट्रीयकरण के बाद से, नागरिक वि वहन की वहन-क्षमता में काफी वृद्धि हुई है। इंडियन एयरलाइन्स कारपोरेशन, क्षमता जो सन् 1953-54 में लगभग 4 करोड़ 60 लाख टन-मील थी, सन् 196 बढ़ कर लगभग 6 करोड़ 90 लाख टन-मील हो गई। इसी अवधि मे एयर इंडिया नेशनल की वहन-क्षमता 1 करोड़ 70 लाख टन-मील से बढ़ कर 10 करोड़ 30 लाख टन-मील हो गई।

रेल और सड़क-यातायात की प्रवृत्तियां

8. नीचे की तालिका से पता चलता है कि इस अवधि में रेलों और सड़कों के यातायात की क्या प्रवृत्तियां रहीं :

तालिका-संख्या 3

पहली और दूसरी योजनाओं के अन्त में रेलों और सड़कों से जानेवाले यात्रियों की संख्या और माल का परिमाण*

(करोड़)

वर्ष	माल-यातायात			यात्री-यातायात		
	रेलें		सड़क	रेलें		सड़क
	टन मूल	टन (मील)	टन (मील)	यात्री मूल	यात्री (मील)	यात्री (मील)
1950-51	9.15	2,698	335.8	128.4	4,133.2	1,437.4
1955-56	11.4	3,643.4	547	127.5	3,877.4	1,955.9
1960-61 (अनुमानित)	15.4	5,470	1,060	162.4	4,860	3,000

इस काल में रेलों पर ढोए जानेवाले माल की औसत दूरी 292 मील से बढ़ कर 354 मील हो गई। अतः रेलों पर यद्यपि टन-भार की दृष्टि से यातायात लगभग 69 प्रतिशत बढ़ा है, परन्तु टन-मील की दृष्टि से देखा जाए, तो 100 प्रतिशत से भी अधिक वृद्धि हुई है। इसी काल में यात्री-यातायात का औसत 31.9 मील से घट कर 29.9 मील रह गया है। इसका कारण यह है कि रेलों पर एक नगर से दूसरे नगर की अपेक्षा नगरों से उपनगरों तक अधिक यातायात हुआ है। उपनगरों के यात्रियों के यातायात के आंकड़े केवल सन् 1950-51 के बाद से मिलते हैं। सन् 1951-52 में यह यातायात 424.7 करोड़ यात्री-मील था और 1960-61 में 750 करोड़ यात्री-मील; अर्थात् इसमें 77 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जब कि इसी अवधि में यात्री-मील की वृद्धि कुल 24 प्रतिशत थी।

***रेलों के आंकड़े भारत की सरकारी रेलों पर ले जाए गए माल और यात्रियों के वास्तविक आंकड़े हैं। सड़क-परिवहन-सम्बन्धी आंकड़े परिवहन-नीति और समन्वय-समिति (1961) की प्रारम्भिक रिपोर्ट में मोटर-गाड़ियों के उपयोग के बारे में उल्लिखित धारणाओं के आधार पर तैयार किए गए, अनुमानित आंकड़े हैं।**

अनुमान है कि इस अवधि में सड़क-परिवहन से ले जाए जानेवाले माल में, टन-मीलों की दृष्टि से, तिगुनी वृद्धि हुई। इसी काल में किराए की मोटर-गाड़ियों (टैक्सियों और निजी मोटर-कारों को छोड़) द्वारा जानेवाले यात्रियों का यातायात, यात्री-मीलों की दृष्टि से, पहले की अपेक्षा दुगुने से भी अधिक हो गया।

9. दूसरी पंचवर्षीय योजना में यह आशा थी कि रेलों-द्वारा वहन किया जानेवाला कुल यातायात सन् 1955-56 के 12 करोड़ टन से बढ़ कर सन् 1960-61 में 18.1 करोड़ टन हो जाएगा, अर्थात् लगभग 51 प्रतिशत की वृद्धि होगी। योजना में इस लक्ष्य के लिए जो राशि रखी गई थी, वह रेलों को इतना यातायात करने में समर्थ बनाने के लिए अपर्याप्त समझी गई। यह विचार था कि रेलों के पास 10 प्रतिशत इंजिनों और डिब्बों तथा 5 प्रतिशत पटरियों की कमी के कारण उनकी क्षमता पर्याप्त नहीं होगी। सन् 1958 में संशोधित अनुमानों के अनुसार यह आशा थी कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष में रेलों का मूल यातायात बढ़ कर 16.8 करोड़ टन हो जाएगा। इसलिए रेलों के कार्यक्रम में कुछ परिवर्तन किए गए, जिससे कि वे अधिक डिब्बे और इंजिन खरीद सकें। अनुमान है कि सन् 1960-61 में रेलों ने 15.4 करोड़ टन माल ढोया। परन्तु साथ ही यह भी अनुमान है कि सन् 1960-61 में रेलों ने जितना माल ढोया, उसका परिमाण (टन-मील) उससे अधिक था, जिसकी व्यवस्था, प्रारम्भ में, दूसरी योजना में की गई थी और कुछ समय से रेल-व्यवस्था पर बोझ-सा पड़ रहा है। कोयला ढोने में, विशेषकर बंगाल और बिहार के कोयला-क्षेत्रों से कोयला ढोने में कठिनाइयों का अनुभव हुआ है। इसका कारण कुछ हद तक तो यह है कि कोयले के उत्पादन के स्वरूप में, परिवर्तन हुआ है और इस्पात-संयन्त्रों को कच्चा माल पहुंचाने की योजनाओं में कुछ फेरबदल हुआ है। परिणामतः रेलों में यातायात-दूरी उससे कहीं अधिक है, जिसकी प्रारम्भ में आशा थी। इस परिस्थिति का आंशिक कारण यह भी है कि रेलवे के कुछ विकास-कार्यक्रमों, विशेषकर माल के डिब्बों की प्राप्ति, के लक्ष्य पूरे नहीं हो पाए।

10. पिछले दस वर्ष के अनुभव से हमें भावी आयोजन के लिए शिक्षा मिलती है। इस अवधि में परिवहन की मांग में वृद्धि की दर राष्ट्रीय आय या अर्थव्यवस्था के किसी प्रमुख क्षेत्र में उत्पादन की वृद्धि की दर से कहीं अधिक रही है। राष्ट्रीय आय में लगभग 42 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, कृषि का उत्पादन लगभग 41 प्रतिशत बढ़ गया है और औद्योगिक उत्पादन में लगभग 94 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस अवधि में टन-मीलों के हिसाब से रेलवे-यातायात दुगुना हो गया है और सड़क-परिवहन का यातायात दुगुने से भी अधिक हो गया है। भारत का पिछले दस वर्षों का अनुभव औद्योगिक दृष्टि से उन्नत देशों के प्रारम्भिक विकास-काल के अनुभव से मेल खाता है और आशा की जा सकती है कि अगली कुछ योजनाओं के काल में भी ये प्रवृत्तियां जारी रहेंगी।‡

परिवहन का समन्वय : तीसरी योजना में निहित दृष्टिकोण

11. जुलाई 1959 में परिवहन-नीति और समन्वय-समिति बनाई गई थी, जिसका काम लम्बे काल के लिए परिवहन-नीति के सम्बन्ध में परामर्श देना और इस नीति को ध्यान में रख कर यह बताना था कि अगले पांच या दस वर्षों में विभिन्न परिवहन-साधनों का क्या रूप रहेगा। समिति ने फरवरी 1961 में अपनी रिपोर्ट योजना-आयोग के समक्ष प्रस्तुत

‡परिवहन-नीति और समन्वय-समिति की प्रारम्भिक रिपोर्ट (1961)

कर दी। इस रिपोर्ट में समिति ने रेल तथा सड़क-समन्वय के सम्बन्ध में ब्योरेवार आंकड़े दिए हैं और वे प्रश्न उठाए हैं, जो देश के लिए लम्बे काल की नीति निर्धारित करने के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण समझे गए है। समिति की अन्तिम रिपोर्ट अभी कुछ समय तक तैयार होने की आशा नहीं है। इसकी सिफारिशों पर तीसरी योजना के परिवहन-कार्यक्रमों पर फिर विचार किया जाएगा। परन्तु कुछ सामान्य बातें हैं, जिनका अगले कुछ वर्षों में परिवहन के विकास पर प्रभाव पड़ेगा और यहां उनका उल्लेख करना उचित होगा। सबसे पहली बात तो यह माननी पड़ेगी कि तीसरी योजना में कोयला, खनिज लोहा और इस्पात-संयन्त्रों के लिए अन्य माल का अधिकतर भाग रेलों-द्वारा ढोना अनिवार्य होगा। जैसा कि आगे बताया गया है, तीसरी योजना की अवधि में जो अतिरिक्त यातायात होगा, उसका लगभग 88 प्रतिशत भाग ऐसे ही माल का होगा। रेलों को इतने यातायात के योग्य बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उन पर भारी राशियां खर्च की जाएं।

12. दूसरी बात यह है कि यद्यपि देश में परिवहन की सामान्य रूप से कमी है, जो कि कुछ समय तक जारी रहेगी, तथापि यह आवश्यक नहीं है कि कुछ मार्गों पर और कुछ वस्तुओं के यातायात में रेलों और सड़क-परिवहन की प्रतिद्वन्द्विता बनी न रहे। इस समय यह मालूम करना कठिन है कि यह प्रतिद्वन्द्विता किस हद तक होगी और सड़क-परिवहन-उद्योग के विस्तार-कार्यक्रमों का रेलों पर और रेलों के कार्यक्रमों का सड़क-परिवहन-उद्योग पर क्या प्रभाव पड़ेगा। आशा है कि परिवहन-नीति और समन्वय-समिति इस सम्बन्ध में सुझाव देगी कि रेल तथा सड़क-परिवहन के समन्वय के लिए क्या कार्रवाई की जानी चाहिए। परन्तु इस समय यह स्पष्ट है—समिति ने इस ओर ध्यान भी आकर्षित किया है—कि रेलों को विभिन्न क्षेत्रों में लाइनों की वहन-क्षमता की ब्योरेवार योजनाएं बनाते समय इस बात का ध्यान रखना पड़ेगा कि उन क्षेत्रों में सड़क-परिवहन का भावी विकास भी सम्भव है। नई रेल-लाइनें बिछाने के सुझावों के सम्बन्ध में समन्वय के प्रश्न को और भी अधिक महत्व देना पड़ेगा। पहली दो योजनाओं की तरह तीसरी योजना में भी जो नई लाइनें बनाने का विचार है, उनकी आवश्यकता या तो रेलों के परिचालन की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए है या फिर कोयले और अन्य खनिजों-जैसी बुनियादी चीज़ों को ढोने के लिए। देश-भर में बहुत-सी नई लाइनें बनाने की मांग की गई है। परिवहन-नीति और समन्वय-समिति ने कुछ औद्योगिक दृष्टि से उन्नत देशों के अनुभव की चर्चा की है, जिन्हें हाल के कुछ वर्षों में ऐसी शाखा-लाइनें बन्द करने पर विवश होना पड़ा है, जिनसे लाभ नहीं हो रहा था। यह भी कहा गया है कि भारत में पिछले दस वर्षों में जो नई लाइनें बनी हैं, या जिन उखाड़ी गई लाइनों को फिर बिछाया गया है, उन पर जितना माल ढोया जा सकता है, उससे बहुत कम ढोया जा रहा है और इस तरह उनसे पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाया जा रहा है। समिति ने यह प्रश्न उठाया है कि क्या कुछ सुस्पष्ट मानदंड निर्धारित किए जा सकते हैं, जिनके आधार पर समय-समय पर लाइनें चुनी जा सकें और जिन्हें रेल-विकास-कार्यक्रम का अंग बनाया जा सके। समिति का कहना है कि 'जहां प्रश्न यह हो कि रेल-लाइन बने या कि सड़क, वहां निर्णय करने से पहले बड़ी सावधानी से विचार करने की आवश्यकता है।. . .एक तरीका तो यह सोचा जा सकता है कि तकनीकी अध्ययन के आधार पर जिन लाइनों के लाभकारी सिद्ध होने की आशा न हो, या जिन्हें सामरिक दृष्टिकोण से या अन्य सामाजिक और राजनीतिक कारणों से बनाना आवश्यक हो, उनके लिए सरकार या सम्बद्ध पक्षों से रेलवे को प्रत्यक्ष सहायता मिलनी चाहिए।'

13. इससे हम एक तीसरे पहलू पर पहुंचते हैं, जिसे ध्यान में रखना आवश्यक है। इस समय भारतीय रेलें न केवल अपना खर्च पूरा कर रही हैं, बल्कि तीसरी योजना के लिए साधन जुटाने में समुचित योग भी दे रही हैं। इसके विपरीत कई देशों में इधर रेलों को घाटे हो रहे हैं और भारत में भी कुछ प्रतिकूल कारण हैं, जिनका प्रभाव रेलों की वित्त-व्यवस्था पर दिखाई पड़ने लगा है। इस बात की ओर परिवहन-नीति-समिति ने ध्यान आकर्षित किया है। समिति ने सामान्य राजकोष के प्रति भविष्य में रेलों के दायित्व के बारे में भी प्रश्न उठाए हैं। पिछले दस वर्षों में बहुत बड़ी पूंजी रेलों में लगाई गई है, जिसके कारण इन बातों का बहुत अधिक महत्व हो गया है। रेलों में लगी हुई पूंजी सन् 1950-51 में 834 करोड़ रुपये से बढ़ कर सन् 1960-61 में 1,559 करोड़ रुपये हो गई और आशा है कि सन् 1965-66 में यह पंजी 2,313 करोड़ रुपये तक पहुंच जाएगी। प्रत्यक्षतः यह वांछनीय है कि वित्त की दृष्टि से भारतीय रेल-व्यवस्था का नीचे की ओर प्रयाण न हो, जैसा कि कुछ अन्य देशों में हुआ है।

परिवहन-नीति और समन्वय-समिति की अन्तिम रिपोर्ट मिल जाने पर इन बातों और देश में परिवहन के विभिन्न साधनों के समन्वय से सम्बन्धित अन्य प्रश्नों पर और आगे विचार किया जाएगा।

तीसरी योजना में परिवहन और संचार के लिए नियत राशियां

14. तीसरी योजना में सरकारी क्षेत्र में परिवहन और संचार के कार्यक्रमों के लिए 1,486 करोड़ रुपये की राशि नियत की गई है। नीचे की तालिका से पता चलता है कि विभिन्न कार्यक्रमों के लिए कितनी-कितनी राशियां रखी गई हैं:

तालिका-संख्या 4

तीसरी योजना में परिवहन और संचार-कार्यक्रमों के लिए नियत राशियां

कार्यक्रम	नियत राशि (करोड़ रुपये)
रेलें	890†
सड़कें और सड़क-परिवहन	297
जहाज़रानी, अन्तर्देशीय जल-परिवहन, पत्तन और प्रकाश-स्तम्भ	153‡
नागरिक विमान-परिवहन	55
डाक तथा तार (टेलीप्रिंटर-कारखाने-सहित)	68
पर्यटन	8
प्रसारण	7
अन्य परिवहन और संचार-साधन	8
योग	1,486

† इसमें 350 करोड़ रुपये की वह राशि शामिल नहीं है, जो कि रेलें अपने मूल्य-ह्रास-निधि में से देंगी और न 35 करोड़ रुपये की वह राशि जिसकी रेलों को सामान क उचन्ती खाते के लिए आवश्यकता है।

‡ इसमें 20 करोड़ रुपये की वह राशि शामिल है, जो बड़े पत्तनों के अपने साधनों से प्राप्त होगी।

योजना में जो कार्यक्रम शामिल किए गए हैं उनमें से कुछ पर नियत राशि से अधिक खर्च होने का अनुमान है। यह बात विशेषकर रेलों, सड़कों, बड़े पत्तनों और डाक तथा तार के सम्बन्ध में सच है। इन कार्यक्रमों में क्या होगा और इन पर कितना खर्च होने का अनुमान है, इस सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी आगे दी गई है।

तीसरी पंचवर्षीय योजना के लिए विकास-कार्यक्रम

रेलें

15. **यातायात के लक्ष्य :** तीसरी योजना में रेल-विकास-कार्यक्रम इस आधार पर बनाए गए हैं कि योजना के अन्तिम वर्ष, अर्थात् सन् 1965-66 में, मूल यातायात 24.5 करोड़ टन तक बढ़ जाएगा। इस प्रकार, यातायात सन् 1960-61 की तुलना में 9.1 करोड़ टन अधिक हो जाएगा, अर्थात् उसमें लगभग 59 प्रतिशत की वृद्धि होगी। इसमें विभिन्न वस्तुओं का मोटे तौर पर कितना-कितना परिमाण होगा, यह निम्न तालिका में दिखाया गया है :

तालिका-संख्या 5

तीसरी योजना में रेलों-द्वारा माल का यातायात

(करोड़ टन)

वस्तु	1960-61	1965-66	1960-61 की तुलना में 1965-66 में वृद्धि
इस्पात-संयन्त्रों के लिए कोयले के अतिरिक्त अन्य माल और इस्पात	1.3	3.4	2.1
कोयला (उस कोयले को मिला कर, जो रेलों को अपने लिए चाहिए)	4.95	9.0	4.05
सीमेंट	0.65	1.2	0.55
सामान्य माल, जिसमें शामिल है कोयले के अतिरिक्त रेलवे का अपना माल	1.8	2.25	0.45
निर्यात के लिए खनिज लोहा	0.3	1.1†	0.8
बाकी सब माल	6.4	7.55	1.15
सामान्य माल का योग	8.5	10.9	2.4
सर्व योग	15.4	24.5	9.1

तीन मूल उद्योगों, अर्थात् लोहा और इस्पात, कोयला तथा सीमेंट के लिए परिवहन-आवश्यकताओं का हिसाब अनुमानित उत्पादन और उत्पादन-इकाइयों की सम्भावित स्थिति के आधार पर लगाया गया है। इस्पात और इस्पात के लिए आवश्यक कच्चे माल के

† इसमें 40 लाख टन निर्यात का माल भी शामिल है, जो बैलाडिला-क्षेत्र में से विशाखापटनम होकर बाहर जाएगा। यह वहन-क्षमता सन् 1966 में प्राप्त हो जाएगी।

यातायात का अनुमान इस आधार पर लगाया गया है कि तैयार इस्पात और कच्चे लोहे का 83 लाख टन का उत्पादन-लक्ष्य पूरा हो जाएगा। इसमें बोकारो-इस्पात-संयन्त्र का लगभग 10 लाख टन उत्पादन भी शामिल है। कोयले के यातायात का अनुमान 9 करोड़ टन है; कोयले के उत्पादन का लक्ष्य तो 9 करोड़ 70 लाख टन है, परन्तु उसमें से 70 लाख टन या तो कोयला-खानों में खप जाएगा या उसको रेलवे के अतिरिक्त अन्य परिवहन-साधनों-द्वारा ढोया जाएगा। कोयला धोने के कारखानों तक कोयले के थोड़ी दूरी के वहन की सम्भावनाओं का अधिक ब्योरेवार अध्ययन पूरा हो जाने पर सम्भव है कि इस अनुमान का पुनरीक्षण करना पड़े।

जहां तक साधारण माल के यातायात का सम्बन्ध है, अनुमान है कि 2.25 करोड़ टन रेलवे का सामान और निर्यात के लिए 1.1 करोड़ टन खनिज लोहा रेल-द्वारा ढोना पड़ेगा। इन आंकड़ों में 40 लाख टन वह खनिज लोहा भी शामिल है जिसके 1966 तक बैलाडिला से प्राप्त होने की आशा है। कुछ छोटे पत्तनों तक खनिज लोहे की जो मात्रा सड़क-द्वारा ढोनी पड़ेगी, उसे शामिल कर दिया जाए, तो सन् 1966 तक निर्यात के लिए खनिज लोहे की वहन-क्षमता लगभग 1.3 करोड़ टन होने की आशा है। जहां तक इस वर्ग की अन्य वस्तुओं का सम्बन्ध है, कुछ महत्वपूर्ण वस्तुओं—जैसे, कपास, कपड़े, पटसन की बनी चीजें, नमक, कागज़, चीनी और अनाज आदि—के उत्पादन, आयात और निर्यात के सम्बन्ध में रेल-द्वारा उनके यातायात की विगत प्रवृत्तियों का सावधानी से अध्ययन किया गया। कुल मिला कर, यह अनुमान है कि निर्यात के लिए खनिज लोहे और रेलवे के अपने सामान के अतिरिक्त अन्य वस्तुओं के यातायात में 1.15 करोड़ टन की वृद्धि होगी। आजकल रेल-द्वारा ढोया जानेवाला यह यातायात 6.4 करोड़ टन है। इस हिसाब से पांच वर्षों में यह वृद्धि 18 प्रतिशत होगी। अनुमान है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना की तुलना में इन वस्तुओं का यातायात लगभग 80 लाख टन बढ़ा है, अर्थात् सन् 1955-56 में यह यातायात 5.6 करोड़ टन था और सन् 1960-61 में बढ़ कर 6.4 करोड़ टन हो गया।

16. मुसाफिरों के यातायात के सम्बन्ध में रेल-कार्यक्रम में यह व्यवस्था की गई है कि उपनगरों के अलावा दूसरे यातायात में 3 प्रतिशत प्रति वर्ष की वृद्धि होगी। जहां तक उपनगरीय यातायात का सम्बन्ध है, पुराने अनुभव के आधार पर यह आशा है कि इसमें काफी अधिक वृद्धि होगी। इरादा यह है कि जिस अरसे में भीड़ सबसे ज्यादा हुआ करती है, उस समय अधिकाधिक रेलगाड़ियां चलाई जाएं और लाइनों की वहन-क्षमता में उतनी ही वृद्धि की जाए, जितनी कि आवश्यक हो।

17. आज यह ठीक-ठीक कहना कठिन है कि पांच वर्ष बाद यातायात की आवश्यकताएं क्या होंगी। पहली बात तो यह है कि कोयले और उर्वरक-जैसे उद्योगों की कुछ महत्वपूर्ण और बड़ी इकाइयां कहां स्थित होंगी, यह निश्चित नहीं है और यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि इन वस्तुओं के यातायात का ढांचा कैसा होगा। विशेषतया कोयला-उद्योग में, पहले से यह कहना कठिन है कि तीसरी पंचवर्षीय योजना में उत्पादन के ढांचे में जिन परिवर्तनों की कल्पना की गई है, उनका वहन-दूरी पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इस सम्बन्ध में यह याद रखना है कि उत्पादन का प्रमुख भाग बंगाल और बिहार के कोयला-क्षेत्रों के अतिरिक्त दूसरे क्षेत्रों से प्राप्त होगा। दूसरे, जहां तक खनिज लोहे और इस्पात-जैसी महत्वपूर्ण वस्तुओं का सम्बन्ध है, उनका उत्पादन देश में बढ़ गया है और सम्भव है कि भविष्य में उनके यातायात का ढांचा

पिछले कुछ समय की तुलना में भिन्न हो। तीसरे, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, इस समय यह ठीक-ठीक बताना कठिन है कि देश में रेल और सड़क-परिवहन के अलग-अलग क्षेत्र कौन-से होंगे, हालांकि तीसरी योजना के अतिरिक्त यातायात का वह भाग अपेक्षाकृत कम है, जिसके लिए रेल और सड़क-परिवहन में परस्पर प्रतिद्वन्द्विता होने की सम्भावना है। तीसरी योजना की अवधि के अन्त में रेलों-द्वारा ढोए जानेवाले माल के यातायात में कुल वृद्धि 9.1 करोड़ टन होगी, जिसमें 7.95 करोड़ टन तो कोयला, इस्पात और इस्पात के लिए आवश्यक कच्चा माल, सीमेंट, निर्यात के लिए खनिज लोहा और रेलों का अपना ही सामान होगा और बाकी 1.15 टन में सामान्य माल आ जाएगा। यह कल्पना की गई है कि तीसरी योजना की अवधि में अतिरिक्त यातायात का 20 प्रतिशत भाग, माल ढोकर खाली वापस आनेवाले डिब्बों में भरा जाएगा। इसीलिए इस यातायात के लिए रेल-इंजिनों और डिब्बों के लिए रखी गई राशि में कमी कर दी गई है।

18. कोयले और कुछ अन्य महत्वपूर्ण उद्योगों के लिए विकास-कार्यक्रमों का ब्योरा अभी तक तैयार नहीं किया गया है। जब उनका ठीक-ठीक रूप और आवश्यकताएं स्पष्ट हो जाएंगी, तब उनके साथ रेल-कार्यक्रम का समन्वय अधिक सुचारू रूप से हो सकेगा, जिससे यह बात निश्चित हो जाएगी कि उनमें परस्पर-सामंजस्य रहे और उनके क्रम और कार्यान्विति में तालमेल रहे।

और फिर, चूंकि अभी यातायात के कुल अनुमानों को अस्थायी ही माना जा सकता है, प्रति वर्ष यातायात के रुख को देखते हुए उनका पुनरीक्षण बराबर किया जाता रहेगा।

19. **रेल-विकास-कार्यक्रम :** रेल-विकास-कार्यक्रम के वर्तमान रूप को देखते हुए उसकी लागत का अनुमान 1,325 करोड़ रुपये के लगभग है, जिसमें 35 करोड़ रुपये की वह राशि भी सम्मिलित है, जो सामान के उचन्ती खाते के लिए ज़रूरी है। अलग-अलग आंकड़े इस प्रकार हैं :

तालिका-संख्या 6

तीसरी योजना में रेल-विकास-कार्यक्रम

कार्यक्रम	अनुमानित लागत (करोड़ रुपये)
इंजिन और डिब्बे	510
कारखाने, मशीनें और संयन्त्र	62
पटरियों की बदली	170
नई लाइनें	147
बिजलीकरण	70
सिग्नल और सुरक्षा-व्यवस्था	25
यातायात-सुविधाएं (लाइनों की क्षमता बढ़ाने के कार्य)	183
पुल-सम्बन्धी कार्य	25
अन्य बिजली-सम्बन्धी कार्य	8
अन्य संरचना-सम्बन्धी कार्य	15
कर्मचारियों के क्वार्टर और कर्मचारी-कल्याण	50
उपभोक्ता-सुविधाएं	15
सड़क-सेवाएं	10
सामान उचन्ती खाता	33
योग	1,325

20. **इंजिनों तथा डिब्बों का कार्यक्रम :** इंजिनों तथा डिब्बों के कार्यक्रम में यह व्यवस्था की गई है कि यातायात में प्रत्याशित वृद्धि से जनित मांग पूरी करने के लिए और पुराने इंजिन तथा डिब्बों को बदलने के लिए नए इंजिन और डिब्बे खरीदे जाएं। इनका ब्योरा निम्न तालिका में दिया गया है :

तालिका-संख्या 7

तीसरी योजना में रेल-इंजिनों और डिब्बों का कार्यक्रम

कार्यक्रम	इंजिन	सवारी-डिब्बे	माल के डिब्बे (चौपहियों के हिसाब से)
नए	1,150	5,025	90,447
बदले जानेवाले	614	2,854	26,697
योग	1,764	7,879	1,17,144

अतिरिक्त इंजिनों और डिब्बों की आवश्यकताओं का अनुमान लगाते समय, रेलों के संचालन में किए गए आयोजन और सुधारों का ध्यान रखा गया है और इस बात को भी देखा गया है कि निर्दिष्ट स्थानों पर कोयले और खनिज लोहे को उतारने के लिए मशीनों की व्यवस्था की जाए। कोयले और अन्य कच्चे माल की निर्दिष्ट बड़ी मात्रा को इस्पात-संयन्त्रों तक ढोने के लिए माल के डिब्बों की वापसी का अनुमान ढुलाई की वास्तविक दूरी के आधार पर लगाया गया है। अनुमान है कि और सभी चीज़ों के यातायात के सम्बन्ध में माल के डिब्बों का वापसी का समय तीसरी योजना के अन्त तक बड़ी लाइनों पर 11 दिन से घट कर 9.5 दिन और मीटर गेज लाइनों पर 8 दिन से घट कर 6.5 दिन रह जाएगा। इसका मतलब है कि रेलों के संचालन में काफी सुधार हो जाएगा और रेलें इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भरसक प्रयत्न करेंगी।

21. पुनस्संस्थापन-कार्यक्रम बनाते समय रेलों ने दूसरी योजना में पुराने इंजिनों और डिब्बों को उनकी हालत का ध्यान रख कर बेकार ठहराने के अपने वास्तविक अनुभव का ध्यान रखा है। नीचे की तालिका से पता चलता है कि दूसरी और तीसरी योजनाओं के अन्त में चालू इंजिनों, सवारी-डिब्बों और माल के डिब्बों की तुलना में पुराने इंजिनों और डिब्बों आदि का क्या अनुपात था :

तालिका-संख्या 8

पहली, दूसरी और तीसरी योजनाओं के अन्त में कुल इंजिनों तथा डिब्बों की तुलना में पुराने इंजिनों तथा डिब्बों का प्रतिशत अनुपात

वर्ष	बड़ी लाइन			मीटर गेज लाइन		
	इंजिन	सवारी-डिब्बे	माल-डिब्बे	इंजिन	सवारी-डिब्बे	माल-डिब्बे
1950-51	23.0	29.5	13.3	31.0	45.0	29.4
1955-56	33.2	32.3	18.0	25.8	32.7	21.0
1960-61	26.7	34.4	10.2	17.9	28.1	11.7
1965-66	27.2	26.8	11.6	18.6	18.7	11.4

22. **कारखाने :** कारखानों के कार्यक्रम में कारखानों की तथा बिगड़ी हुई लाइनों और शेडों की अतिरिक्त सुविधाओं की व्यवस्था की गई है, जो कि रेलों पर अधिक इंजिनों और डिब्बों को चालू रखने के विचार से आवश्यक हैं। उसमें डीज़ल से चलनेवाले इंजिन बनाने की भी व्यवस्था है। चित्तरंजन इंजिन-कारखाने में भाप से चलनेवाले बड़ी लाइन के इंजिन बनाने की जितनी क्षमता है, वह तीसरी योजना में इन इंजिनों की मांग पूरी करने के लिए काफी समझी गई है और इसमें और कोई वृद्धि नहीं की जाएगी। परन्तु यह विचार अवश्य है कि हवी इलेक्ट्रिकल्स लि० भोपाल के सहयोग से चित्तरंजन में बिजली से चलनेवाले इंजिनों का निर्माण प्रारम्भ किया जाए।

23. **लाइनों की क्षमता बढ़ाने के कार्य :** सन् 1960-61 से सन् 1965-66 तक की अवधि में टन-भार के हिसाब से माल ढोने के लिए रेल-परिवहन-क्षमता की मांग में 60 प्रतिशत के लगभग वृद्धि होने की आशा है। रेल-विकास-कार्यक्रम में 1,600 मील से अधिक लम्बी इकहरी लाइन को दोहरा बनाने और लाइनों की क्षमता बढ़ाने के अन्य कामों के लिए भी व्यवस्था की गई है जैसे कि यार्डों को नए ढंग का बनाना, परिगामी (क्रासिंग के) स्टेशन बनाना और परिगामी लूप (लाइन) बनाना, आदि। लाइनों की क्षमता बढ़ाने के कार्यक्रम बनाने का मुख्य कारण यह है कि मुख्य मार्गों को और उन लाइनों को सुव्यवस्थित किया जाए, जहां से भविष्य में कोयले और खनिज लोहे-जैसी भारी वस्तुओं के यातायात का परिमाण बढ़ जाने की सम्भावना है। लाइनों की क्षमता के विकास का कार्यक्रम बनाते समय रेलों ने उन टेक्नोलाजिकल सुधारों का ध्यान रखा है, जो तीसरी योजना में किए जा सकते हैं और जिनमें काफी हद तक उन बड़े बोगी-डिब्बों का इस्तेमाल भी शामिल है, जिनमें मध्य-टक्कररोक-कपलर लगा होगा और जो कोयला-खानों से महत्वपूर्ण केन्द्रों तक बड़ी मात्रा में कोयला ढोने के काम आएंगे। इन केन्द्रों पर बड़े परिमाण में कोयला जमा करने का विचार है। रेल-विकास-कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य यह है कि धीरे-धीरे गाड़ियों-द्वारा अधिक माल ढोया जाए, जिससे कि लाइनों की क्षमता बढ़ाने के कार्यों में लगनेवाली पूंजी कम हो जाए। तीसरी योजना में रेल-विकास-कार्यक्रम का एक आधार-भूत पहलू यह है कि ऊंचाई पर बने कोठों में से भारी मात्रा में कोयला नए बोगी-डिब्बों में लादा जाए। ऐसे कोठों की व्यवस्था प्रमुख कोयला-खानों पर की जाएगी।

24. **बिजलीकरण :** इस कार्यक्रम में लगभग 1,100 मील लम्बी लाइनों पर बिजली से गाड़ियां चलाने की व्यवस्था है। ये लाइनें ऐसी हैं, जहां यातायात के घनत्व और उसकी प्रत्याशित वृद्धि का ध्यान रखते हुए परिचालन के दृष्टिकोण से, भाप के स्थान पर बिजली से चलनेवाले इंजिनों का चलाना आवश्यक समझा जाता है। इस कार्यक्रम में प्रमुख रूप से कुछ भागों पर बिजलीकरण के उन कामों को पूरा करने की व्यवस्था है, जो दूसरी योजना में प्रारम्भ किए गए थे। उनमें से अधिकतर लाइनें इस्पात-संयन्त्रों और कोयला-खानों के क्षेत्रों में हैं। तीसरी योजना में अभी तो केवल मुगलसराय से कानपुर तक की लाइन पर बिजली से रेलगाड़ियां चलाने की व्यवस्था करने का विचार है। इस भाग के बिजलीकरण की आवश्यकता मुख्य रूप से इसलिए है कि भविष्य में इस लाइन पर कोयला-यातायात बढ़ने की सम्भावना है।

25. **पटरियां बदलना :** पटरियां बदलने की आवश्यकता सुरक्षा के विचार से, और इस कारण से है कि गाड़ियां तेज़ी से आ-जा सकें, जिससे लाइनों की क्षमता बढ़ जाए।

पटरियां बदलने का एक काफी बड़ा कार्यक्रम पहली और दूसरी योजना में प्रारम्भ किया गया था। फिर भी, तीसरी योजना में उस काम को पूरा करना है, जो पहले से बाकी पड़ा है। दूसरी योजना में 8,000 मील लम्बी लाइनें बदलने की व्यवस्था भी की गई थी। इस कार्यक्रम की प्रगति सन्तोषजनक रही है, और केवल पटरियों का सामान मिलने में कठिनाइयों के कारण लक्ष्य की पूर्ति में कुछ कमी रह जाने का अनुमान है। तीसरी योजना में यह व्यवस्था है कि इसकी अवधि के अन्त तक पटरियां बदलने का बहुत-सा बकाया काम पूरा कर दिया जाए। लगभग 5,000 मील लम्बी समूची पटरी बदलने, लगभग 2,500 मील लम्बी पटरी की लाइनें बदलने और लगभग 2,250 मील लम्बी लाइन के स्लीपर बदलने की व्यवस्था की गई है। यह भी विचार है कि तीसरी योजना में पटरियों के जोड़ों के टांके लगाने का काम बड़े पैमाने पर प्रारम्भ किया जाए।

26. **संकेत और सुरक्षा-कार्य :** संकेतन और सुरक्षा के कार्यक्रम में कुछ भागों पर सुरक्षा के विचार से, संकेत और दूरसंचार-सुविधाओं के सुधार तथा इंटरलाकिंग की व्यवस्था की गई है। असम को जानेवाले सम्पर्क-मार्ग पर केन्द्रीकृत यातायात-नियन्त्रण की व्यवस्था की जाएगी। कुछ उपनगरीय भागों में स्वचालित संकेत का प्रबन्ध किया जाएगा। यह व्यवस्था उन भागों पर भी की जाएगी, जहां यातायात अधिक है और जहां कोयले और अन्य माल के भारी यातायात की प्रत्याशा है, जिसके लिए इस प्रकार की संकेतन-व्यवस्था अत्यावश्यक समझी जाती है। इसके अतिरिक्त, मुख्य मार्गों पर संकेतन का स्तर सुधारा जाएगा, जिससे गाड़ियां तेज़ी से आ-जा सकेंगी, और महत्वपूर्ण मुख्य मार्गों, विन्यास-यार्डों और अन्य महत्वपूर्ण संचालन-केन्द्रों में अधिक अच्छी दूरसंचार-व्यवस्था की जाएगी।

27. **नई लाइनें :** तीसरी योजना की अवधि में लगभग 1,200 मील लम्बी लाइनें बिछाने की व्यवस्था की गई है। कुछ लाइनें तो दूसरी योजना से चली आ रही हैं; जैसे, गढ़वा रोड-राबर्टसगंज, सम्बलपुर-तितलागढ़ और विमलागढ़-किरिबुरु। इनको पूरा करने के अतिरिक्त, निम्नलिखित अतिरिक्त नई लाइनें बिछाने का कार्यक्रम है : झुंड-कांडला; माधोपुर-कठुआ; उदयपुर-हिम्मतनगर; ऐसी लाइनें, जिनके बन जाने से दिल्ली आने की आवश्यकता नहीं रहेगी; दिवा-पनवेल-खरपड़ा लाइन, जिसे उड़न तक ले जाया जाएगा; पथरकंडी-धर्मनगर; गुना-मक्षी; रांची-बोंडामुंडा; हिन्दूमलकोट-श्रीगंगानगर; गाज़ियाबाद-तुगलकाबाद; बैलाडिला-कोटावलासा; और हल्दिया पत्तन तक नई लाइन। तीसरी योजना में नई लाइनों के कार्यक्रम में 200 मील लम्बी उन लाइनों को बनाने का भी विचार है, जिनकी कोयला-उद्योग के विकास के सम्बन्ध में आवश्यकता है। कार्यक्रम के इस भाग को अभी अन्तिम रूप नहीं दिया गया है।

28. निम्नलिखित नई लाइनों को रेल-कार्यक्रम में सम्मिलित करने के बारे में विचार किया जा रहा है : (1) मंगलोर-हसन, (2) बंगलोर-सेलम, (3) मनमदुरई-विरुधुनगर, और (4) उड़ीसा के सुकिन्द-देतारी, खान-क्षेत्रों को खड़गपुर से कटक की बड़ी लाइन से मिलानेवाली लाइन। मंगलोर-हसन लाइन की आवश्यकता मंगलोर से खनिज लोहे के निर्यात के सम्बन्ध में पड़ेगी, जिसे बड़ा पत्तन बनाने का विचार है। बंगलोर-सेलम लाइन से सेलम के औद्योगिक विकास की आवश्यकताएं पूरी होंगी। मनमदुरई-विरुधनगर लाइन इन दोनों स्टेशनों के बीच एक वैकल्पिक कड़ी का काम देगी और इसके कारण मनमदुरई से मदुरई और मदुरई से विरुधुनगर की वर्तमान लाइनों पर अधिक बोझ

नहीं पड़ेगा। उड़ीसा के खान-क्षेत्रों में रेलवे लाइन इसलिए बनाई जानी है कि वहां से कलकत्ता, हल्दिया के प्रस्तावित पत्तन और परादीप पत्तन तक निर्यात के लिए खनिज लोहा पहुंचाया जा सके।

ऊपर जिन लाइनों का उल्लेख किया गया है, उनके अतिरिक्त कम लम्बाई की कुछ और लाइनें भी हैं, जिन्हें सम्भवतः सिंचाई, बिजली या खनिज-सम्बन्धी परियोजनाओं के लिए बनाना पड़े। इनके अतिरिक्त, रेलवे-बोर्ड ने कुछ और नई लाइनों के निर्माण का सुझाव रखा है।†

29. **पुल-निर्माण-कार्य :** पुल-निर्माण-कार्यक्रम मुख्यतः उन निर्माण-कार्यों तक ही सीमित रहेगा, जो दूसरी पंचवर्षीय योजना में पूरे नहीं हो पाए थे। दूसरी योजना में दो बड़े पुलों का काम प्रारम्भ हुआ था : एक तो असम में ब्रह्मपुत्र नदी पर और दूसरा दिल्ली में यमुना नदी पर। राउरकेला-दुर्ग और गोधरा-रतलाम लाइनों पर नए पुल बनाने का विचार है। दूसरी योजना में इन लाइनों पर दोहरी पटरी बिछाई जा रही थी। इस कार्यक्रम में यह व्यवस्था भी की गई है कि योजना-काल में कई वर्तमान पुलों को नया किया जाए।

30. **कर्मचारियों के लिए क्वार्टर और कर्मचारी-कल्याण :** इस मद के लिए 50 करोड़ रुपये की राशि रखी गई है, जिसमें से 35 करोड़ रुपये तो कर्मचारियों के लिए क्वार्टर बनाने पर खर्च किए जाएंगे और 15 करोड़ रुपये उनके लिए सुख-साधन जुटाने पर। मिश्रित परियोजनाओं के अन्तर्गत जो क्वार्टर बनेंगे, उनके अतिरिक्त तीसरी योजना में 54,000 नए क्वार्टर बनाने का विचार है। सुख-साधन जुटाने के कार्यक्रम में चिकित्सा-सुविधाओं का प्रसार, कर्मचारियों के क्वार्टरों में सुधार, नालियों की व्यवस्था, पानी की व्यवस्था और कर्मचारियों की बस्तियों में बिजली तथा आमोद-प्रमोद की सुविधाओं की व्यवस्था करना सम्मिलित है। इस कार्यक्रम में स्कूल और छात्रावास बनाने की भी व्यवस्था की गई है।

31. **उपभोक्ताओं के लिए सुख-साधन :** इस मद में उतनी ही राशि की व्यवस्था की गई है, जितनी कि दूसरी योजना में की गई थी। इस कार्यक्रम में स्टेशनों, विश्राम-कक्षों, ठहरने और भोजनादि के कमरों को नए ढंग का बनाने के अलावा ये काम शामिल है : पैदल जानेवालों के लिए ऊपरी पुल बनाना, पानी की अधिक अच्छी व्यवस्था करना, संडासों और नहाने की व्यवस्था करना और रेलवे-स्टेशनों पर बिजली के प्रकाश और पंखों का प्रबन्ध करना। चूंकि इस काम के लिए उपलब्ध राशि सीमित है, इसलिए इन कामों के लिए मितव्ययितापूर्ण योजनाएं बनाई जाएंगी।

---

† रेलवे-बोर्ड-द्वारा सुझाई गई लाइनें निम्नलिखित हैं :

1. बख्तियारपुर-राजगीर लाइन को मानपुर के पास तक ग्रैंड कार्ड से मिलाना,
2. पूना-मीरज मीटर गेज लाइन को बड़ी लाइन में परिवर्तित करना,
3. रेनीगुंटा से तिरुपति तक बड़ी लाइन,
4. कठुआ-जम्मू,
5. तिन्नवेली-कन्याकुमारी अन्तरीप,
6. चंडीगढ़-लुधियाना,
7. रतलाम-बांसवाड़ा, और
8. धर्मनगर-देव नदी-घाटी

32. **आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए कार्रवाई :** तीसरी योजना में भी रेल-विकास-कार्यक्रम में इस बात को ध्यान में रखा गया है कि रेल को अपनी आवश्यकताओं के लिए आत्मनिर्भर बनने का उद्देश्य सामने रखना चाहिए। दूसरी योजना की अवधि में ही इंजिन और डिब्बे बनाने की क्षमता में समुचित वृद्धि हो चुकी है; रेलों के लिए जितने भी भाप से चलनेवाले इंजिनों, सवारी-गाड़ी के डिब्बों और माल-डिब्बों की आवश्यकता है, उन सब का निर्माण देश में ही हो रहा है। यान्त्रिक संकेतन-उपकरणों के निर्माण में आत्म-निर्भरता प्राप्त की जा चुकी है और बिजली से चलनेवाले संकेतन-उपकरणों का निर्माण प्रारम्भ हो चुका है। देश में ही इतनी निर्माण-क्षमता की व्यवस्था की जा रही है कि पटरियों के लिए आवश्यक सभी माल यहीं तैयार किया जाए। जहां तक सम्भव होगा, तीसरी योजना की अवधि में यह चेष्टा की जाएगी कि डीज़ल और बिजली से चलनेवाले इंजिन और उन अन्य उपकरणों का निर्माण प्रारम्भ किया जाए, जो अभी तक बाहर से मंगाए जाते हैं। रेल-विकास-कार्यक्रम के लिए अनुमानतः 186 करोड़ रुपये मूल्य की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता होगी। दूसरी योजना में इस कार्यक्रम पर 332 करोड़ रुपये के मूल्य की विदेशी मुद्रा खर्च की गई थी।

सड़कें

33. पहली दो योजनाओं में सड़क-विकास-कार्यक्रम सन् 1943 की युद्धोत्तर-सड़क-विकास-योजना को, जिसे आम तौर पर 'नागपुर-योजना' कहा जाता है, ध्यान में रखते हुए बनाए गए थे। विभाजन के बाद भारत में उपर्युक्त योजना के अनुसार 1,23,000 मील लम्बी डामर-बिछी सड़कें और 2,08,000 मील लम्बी बिना डामर की सड़कें बनाने का विचार था। पहली और दूसरी योजनाओं में जो कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए, उनके फलस्वरूप डामर-बिछी और बिना डामर-बिछी, दोनों प्रकार की सड़कों का निर्माण लक्ष्य से अधिक हो गया है। आशा है कि दूसरी योजना के अन्त तक देश में डामर-बिछी सड़कों की लम्बाई 1,44,000 मील होगी और बिना डामर-बिछी सड़कों की लम्बाई 2,50,000 मील से भी अधिक होगी। पिछले दस वर्षों में अधिक सड़कें बन जाने पर भी कुछ पहलुओं से सड़कों की व्यवस्था अपूर्ण है, जैसे नदियों पर पुल नहीं हैं, सड़कों की सतह घटिया है और यान-पथ संकरे हैं। लगभग 60 प्रतिशत सड़कें ऐसी हैं, जिन पर रोड़ी या कंकर नहीं बिछा है। देश में सड़कों की कुल जितनी लम्बाई है, उसमें से 15,000 मील तो राष्ट्रीय राजपथ हैं, परन्तु इनमें से 2,300 मील लम्बे राजपथों पर दोहरे यान-पथ हैं; बाकी सब इकहरी सड़कें हैं। लगभग 1,000 मील लम्बे राष्ट्रीय राजपथ ऐसे हैं, जिनमें एक ही यान-पथ है, जो गीली मिट्टी से बना है या जिसकी सतह नीची है और जिस पर सीमेंट या डामर नहीं बिछा है। राष्ट्रीय राजपथ और राज्यों के राजपथों की ऊपरी तह 9 या 10 इंच मोटी है और तकनीकी विशेषज्ञों का मत है कि आजकल के यातायात की बहुलता या सघनता को देखते हुए वह अपर्याप्त है। इसके अतिरिक्त, मुख्य मार्गों पर बहुत-से स्थानों पर पुल नहीं हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त में अकेले राष्ट्रीय राजपथों पर ही 80 बड़े पुल बनने रह जाएंगे। इनमें से 47 पर काम चालू है और विभिन्न अवस्थाओं में हैं।

34. **तीसरी योजना में सड़क-विकास के उद्देश्य और प्राथमिकताएं :** तीसरी योजना के सड़क-विकास-कार्यक्रम उन उद्देश्यों के अनुकूल बनाए जा रहे हैं, जो कि हाल ही में केन्द्र तथा राज्य-सरकारों के मुख्य इंजीनियरों ने सन् 1961-81 के लिए बनाई गई बीस-वर्षीय सड़क-

विकास-योजना में निर्धारित किए हैं। इस योजना का मुख्य उद्देश्य यह है कि किसी विकसित और कृषि-क्षेत्र में एक भी गांव ऐसा न रहे, जो पक्की सड़क से 4 मील से अधिक दूर हो या जिससे डेढ़ मील की दूरी तक कोई भी सड़क न हो। इस योजना में अविकसित और अर्द्धविकसित क्षेत्रों की विशेष आवश्यकताओं का ध्यान रखा गया है। इसके अन्तर्गत बीस वर्ष के बाद, अर्थात् सन् 1981 में, 2,52,000 मील लम्बी डामर-बिछी और 4,05,000 मील लम्बी बिना डामर-बिछी सड़कें हो जाएंगी।

बीस-वर्षीय योजना में प्राथमिकताओं का क्रम मोटे तौर पर इस प्रकार होगा : (क) सभी मुख्य मार्गों पर, जहां-जहां पुल नहीं हैं, पुल बनाए जाएं और सड़कों की सतह सुधारी जाए, जिससे कि वह कम-से-कम काली सतहवाली एक लेन की निर्दिष्टि के अनुकूल हो जाए; (ख) बड़े नगरों के आसपास की मुख्य सड़कों को चौड़ा किया जाए और उनकी चौड़ाई दो लेनों के बराबर अवश्य हो जाए; और (ग) बड़े-बड़े मुख्य मार्गों पर कम-से-कम दो लेन के यान-पथ हों। इस योजना में कहा गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों की सड़कों के बारे में सबसे पहला काम उनका इस ढंग से सुधार करना है कि वे अच्छे मौसम के स्तर की हो जाएं। इन प्राथमिकताओं के सम्बन्ध में इस बात पर ज़ोर देना आवश्यक है कि पिछले दस वर्षों में ज़िलों और गांवों की उन सड़कों की मांग बढ़ती जा रही है, जिनके सुधार से ग्रामीण क्षेत्रों में रहनेवाले करोड़ों लोगों को लाभ पहुंचेगा। तीसरी योजना में विभिन्न प्रकार की सड़कों के लक्ष्यों पर विचार करते समय इस मांग को ध्यान में रखना पड़ेगा।

35. दूसरी योजना में सड़क-विकास पर 224 करोड़ रुपये की राशि खर्च होने का अनुमान है। तीसरी योजना में सम्मिलित सड़क-विकास-कार्यक्रमों की लागत 324 करोड़ रुपये है। इसमें से राज्यों के क्षेत्र के कार्यक्रमों पर लगभग 244 करोड़ रुपये खर्च होंगे और केन्द्रीय क्षेत्र के कार्यक्रमों पर 80 करोड़ रुपये। केन्द्रीय कार्यक्रमों में राष्ट्रीय राजपथों के अतिरिक्त वे सड़कें भी शामिल हैं, जो विभिन्न राज्यों को मिलाती हैं या जिनका आर्थिक दृष्टि से महत्व है।

36. **राज्यों के सड़क-कार्यक्रम :** सड़कें बनाने के कार्यक्रम का अधिकांश राज्य-सरकारों के क्षेत्र में आता है। राज्यों की योजनाओं के अन्तर्गत सड़क-कार्यक्रम अभी बनाए ही जा रहे हैं और यह कहना कठिन है कि योजना में नियत राशियों की सीमा में रहते हुए कुल कितने मील लम्बी और सड़कें बनाई जा सकेंगी। परन्तु मोटे तौर पर यह अनुमान है कि इस योजना की अवधि में लगभग 25,000 मील लम्बी डामर-बिछी सड़कें और बनाई जाएंगी जब कि दूसरी योजना में 22,000 मील लम्बी डामर-बिछी नई सड़कें बनी थीं। नई सड़कों के निर्माण के कार्यक्रम बनाते समय एक ओर तो दुर्गम क्षेत्रों को सड़कों-द्वारा मिलाने की व्यवस्था करने का ध्यान रखना होगा और दूसरी ओर यह देखना पड़ेगा कि सिंचाई, विद्युत् और उद्योग के क्षेत्रों में परियोजनाओं के फलस्वरूप कितनी सड़कों की ज़रूरत है। राज्यों के पुनर्गठन के फलस्वरूप सड़क-विकास की जो आवश्यकताएं हैं, उनको भी ध्यान में रखना पड़ेगा। राज्यों की योजनाओं में सड़क-कार्यक्रमों के लिए जो राशि रखी गई है, उसका काफी बड़ा भाग इस उद्देश्य के लिए है कि वर्तमान सड़कों को सुधारा जाए, जिससे कि वे बढ़ते हुए यातायात, विशेषकर गाड़ियों के यातायात, की ज़रूरतें पूरी कर सकें। इन कार्यक्रमों में सड़कों को चौड़ी बनाने, उनकी सतह सुधारने और उनको परस्पर जोड़नेवाली सड़कें और पुल बनाने के काम शामिल हैं।

37. **केन्द्रीय सड़क-कार्यक्रम :** केन्द्रीय क्षेत्र के कार्यक्रमों में मुख्यतया यह व्यवस्था की गई है कि वर्तमान राष्ट्रीय राजपथों को सुधारा जाए। इस काम के लिए जितनी राशि उपलब्ध है, उससे तो केवल एक सौ मील लम्बी सड़क—उत्तर सलमारा से ब्रह्मपुत्र के पुल तक—बनाई जा सकेगी। यहां इस बात का उल्लेख कर देना चाहिए कि हाल ही में 1,200 मील लम्बी सड़कें बनाई गई हैं। दूसरी योजना में राष्ट्रीय राजपथों के कार्यक्रम में यह व्यवस्था की गई थी: 700 मील लम्बी सड़कें अन्य सड़कों को जोड़ने के लिए बनाना, 40 बड़े पुल, 1,500 मील लम्बी मौजूदा सड़कों का सुधार और 900 मील लम्बी सड़कों को चौड़ी करके उन पर दोहरे यान-पथ बनाना। राष्ट्रीय राजपथों के कार्यक्रमों में सभी लक्ष्य पूरे किए जा चुके हैं। हां, विद्यमान सड़कों को मिलानेवाली सड़कें बनाने का काम कुछ पीछे पड़ गया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत जो काम पूरे किए गए हैं उनमें से कुछ महत्वपूर्ण ये हैं: जम्मू-श्रीनगर-राजपथ पर जवाहर-सुरंग के पूर्वी और पश्चिमी भागों का निर्माण, बंगाल में रायगंज से बिहार में स्थित डलखोला तक राष्ट्रीय राजपथ के भाग का निर्माण और दिल्ली-आगरा सड़क का चौड़ा किया जाना। दूसरी योजना में जो अधिक बड़े पुल बनाए गए हैं, वे हैं: बिहार के मोकामा नामक स्थान में गंगा पर रेल तथा सड़क-पुल, मध्यप्रदेश में चम्बल पर निमज्जनीय पुल, आन्ध्रप्रदेश में कृष्णा नदी पर रेगुलेटर-सह-सड़क-पुल, गुजरात में माहे नदी पर पुल, और मद्रास-डिंडीगुल सड़क पर पोनियार नदी का पुल। तीसरी योजना के कार्यक्रम में यह व्यवस्था की गई है कि दूसरी योजना के अन्तर्गत जो कुछ महत्वपूर्ण सड़कें और पुल नहीं बन पाए थे, उन्हें पूरा किया जाए। इस कार्यक्रम में राष्ट्रीय राजपथों के हाल में बने कुछ भागों का सुधार तथा कलकत्ता के समीप विवेकानन्द-पुल-उपमार्ग और राजपथों के वे टुकड़े बनाना भी शामिल है, जो उन्हें एक-दूसरे से जोड़ने के लिए आवश्यक हैं।

38. राज्यों के बीच की सड़कों और आर्थिक महत्व की सड़कों के जो कार्यक्रम पहली दो योजनाओं में सम्मिलित किए गए थे, उनमें कई परियोजनाएं थीं। उनमें से प्रमुख परियोजनाएं पश्चिमी तट की सड़क, पासी-बदरपुर सड़क, पठानकोट-उधमपुर सड़क और उन सड़कों की थीं, जिनकी आवश्यकता मैसूर, उड़ीसा और आन्ध्रप्रदेश के राज्यों में खनिज लोहे के निर्यात के सम्बन्ध में थी। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सन् 1960-61 तक लगभग 1,000 मील लम्बी सड़कें बनाई गईं और 2,300 मील लम्बी सड़कों को सुधारा गया। दूसरी योजना में कुछ कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए थे, जिन्हें अब तीसरी योजना में समाप्त करना पड़ेगा। अनुमान लगाया गया है कि इस कार्यक्रम के लिए लगभग 22 करोड़ रुपये की आवश्यकता पड़ेगी। सम्भव है कि इस कार्यक्रम के अन्तर्गत कुछ नई योजनाओं का काम हाथ में लिया जा सके।

39. **पिछड़े हुए क्षेत्रों की विशेष आवश्यकताएं :** दूसरी योजना की तरह तीसरी योजना में भी सड़क-कार्यक्रमों के लिए धन की व्यवस्था करते समय उन क्षेत्रों की आवश्यकताओं का विशेष ध्यान रखा गया है, जो संचार-साधनों की दृष्टि से अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा पिछड़े हुए हैं। इसलिए, अंडमान और निकोबार द्वीप, हिमाचलप्रदेश, मणिपुर, उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेंसी, नागा पहाड़ी-त्वेनसांग-प्रदेश और त्रिपुरा की योजनाओं में यह व्यवस्था की गई है कि योजनाओं के कुल खर्च का एक-चौथाई से एक-तिहाई भाग सड़क-विकास की मद में खर्च किया जाए। जिन राज्यों में सड़क-विकास को अधिक प्राथमिकता दी गई है, वे हैं: असम, जम्मू और कश्मीर, मध्यप्रदेश और राजस्थान। स्वयं राज्यों के भीतर भी

अपेक्षतया कम विकसित क्षेत्रों के लिए अधिक राशि की व्यवस्था की जाएगी ; उदाहरणार्थ इन क्षेत्रों में : पंजाब के पहाड़ी प्रदेश; उत्तरप्रदेश में उत्तराखंड, बुन्देलखंड और अन्य पहाड़ी क्षेत्र; महाराष्ट्र में विदर्भ और मराठवाड़ा; आन्ध्रप्रदेश में तेलंगाना; मैसूर और केरल में उत्तरी ज़िले; जम्मू और कश्मीर में लद्दाख और सोनाबेरी के क्षेत्र; और नागा पहाड़ी-त्वेनसांग-क्षेत्र में त्वेनसांग का इलाका ।

40. **ग्रामीण सड़कों का विकास :** ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है । कई राज्यों की योजनाओं में इस काम के लिए विशेष राशियां अलग रखी गई हैं । इसके अतिरिक्त, स्थानीय निकायों और सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों के अन्तर्गत इस काम के लिए धन-राशियां नियत की गई हैं । कुछ समय पहले परिवहन और संचार-मन्त्रालय ने एक तदर्थ जांच कराई थी, जिसके परिणामस्वरूप ऐसी ज़िला-योजनाएं बनाने की चेष्टा की गई है, जिनमें यह दिखाया गया कि भविष्य में ग्रामीण क्षेत्रों में जो सड़कें बनाई जाएं, उनका परस्पर-सम्बन्ध किस तरह से होगा । इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि ग्रामीण क्षेत्रों में सड़क-विकास के लिए ज़िम्मेदार विभिन्न संस्थाओं में तालमेल स्थापित किया जाए और जनता से गांवों में सड़कें बनाने के लिए अधिक अंशदान प्राप्त किया जाए ।

41. **सड़क-अनुसन्धान :** तीसरी योजना में सड़क-विकास-कार्यक्रम के लिए नियत राशि का कुछ भाग अनुसन्धान के लिए अलग रखा जा रहा है । सम्भव है कि कुल मिला कर, राज्यों की योजनाओं में, अनुसन्धान-कार्यक्रमों के लिए दो करोड़ रुपये मिल सकें, जिसे प्रयोगशाला-गवेषणा के बजाय क्षेत्रीय अनुसन्धान पर खर्च किया जाएगा । केन्द्र और राज्यों की सड़क अनुसन्धान-प्रयोगशालाओं में सड़कें बनाने की आधुनिक तकनीकों पर अनुसन्धान किया जा रहा है । इस अनुसन्धान का मुख्य उद्देश्य यह है कि निर्माण-लागत में कमी की जाए । तीसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रम में यह व्यवस्था की गई है कि नई तकनीकों और नए ढंग के सामान से सड़कें बनाने के प्रयोग किए जाएं । अब तक जो अनुसन्धान किया गया है, उसके परिणामों के समुचित रूप से मूल्यांकन को सरल बनाने और आगे अनुसन्धान की योजनाएं चुनने के लिए एक केन्द्रीय मूल्यांकन-समिति बनाने का विचार है । इस समिति में केन्द्रीय सरकार और विभिन्न राज्य-सरकारों के संगठनों और कुछ ऐसे गैर-सरकारी संगठनों के प्रतिनिधि होंगे, जिनका सड़क-विकास और सड़क-अनुसन्धान-कार्यों से सम्बन्ध है । तीसरी पंचवर्षीय योजना में नई तकनीकों के क्षेत्रीय प्रयोग इस समिति की सिफारिशों के अनुसार किए जाएंगे ।

सड़क-परिवहन

42. पिछले बीस वर्षों में देश में मोटर-परिवहन, विशेषकर माल लाने और ले जानेवाली गाड़ियों का काफी प्रसार हुआ है । अविभाजित भारत में (देशी राज्यों को छोड़ कर) माल ढोनेवाली मोटर-गाड़ियों की संख्या, जो सन् 1938-39 में 12,397 थी, सन् 1946-47 में बढ़ कर 40,107 तक पहुंच गई थी । देश के विभाजन के बाद 10 वर्षों में भारत में माल ढोनेवाली मोटर-गाड़ियों की संख्या लगभग दुगुनी हो गई । सन् 1948-49 में यह संख्या लगभग 73,000 थी, जो सन् 1960-61 में 1,60,000 तक पहुंच गई । जहां तक सवारी मोटर-गाड़ियों का सम्बन्ध है, यद्यपि युद्ध के प्रारम्भिक वर्षों में उनकी संख्या घट गई थी, तथापि बाद में यह संख्या बढ़ी और सन् 1946-47 में लगभग उतनी

ही हो गई, जितनी सन् 1938-39 में थीं। सन् 1948-49 से इन गाड़ियों की संख्या बराबर बढ़ती ही गई है। सन् 1948-49 में यह संख्या 27,275 थी और सन् 1960-61 में बढ़ कर लगभग 50,000 हो गई, अर्थात् इसमें 85 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

43. जैसा कि पहले कहा जा चुका है, हाल के कुछ वर्षों में सड़क-परिवहन-साधनों-द्वारा होनेवाले यातायात में जो वृद्धि हुई है, वह मोटर-गाड़ियों की संख्या में वृद्धि के अनुपात में बहुत अधिक है। इसका कारण यह है कि इस काल में मोटर-गाड़ियों की वहन-क्षमता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। दूसरी योजना में मोटर-गाड़ियों के निर्माण का जो लक्ष्य रखा गया था, यदि वह पूरा हो जाता, तो गाड़ियों की संख्या और सड़क-परिवहन-उद्योग की वहन-क्षमता और भी बढ़ जाती। दूसरी योजना में यद्यपि 40,000 गाड़ियों के निर्माण का लक्ष्य था, परन्तु सन् 1960-61 में वास्तविक उत्पादन कुल 30,000 गाड़ियों का ही हो पाएगा। नई गाड़ियां कम संख्या में मिल पाई हैं, विशेषकर पिछले कुछ वर्षों में, जिसका कारण विदेशी मुद्रा की कमी है। यही मुख्य कारण था, जो इस अवधि में सड़क-परिवहन के तेज़ी से विकास में बाधक हुआ है। हाल के कुछ वर्षों में सड़क-परिवहन के सम्बन्ध में लाइसेंस-नीति को अधिक उदार बनाने के लिए कई कार्रवाई की गई हैं। यह भी प्रयत्न किया जा रहा है कि सड़क-परिवहन-उद्योग को उस पर लगाए जानेवाले विभिन्न करों को सरल बना कर सहायता दी जाए। विशेषतः परिवहन और संचार-मन्त्रालय ने सारी राज्य-सरकारों से प्रार्थना की है कि सभी करों को मिला कर एक कर दिया जाए, जो कि यथासम्भव एक ही अभिकरण-द्वारा इकट्ठा किया जाए। उनसे यह भी कहा गया है कि वे अन्तर-राज्य-मार्गों पर चलनेवाली सड़क-परिवहन-सेवाओं पर दोहरे कर को हटाने के प्रश्न पर विचार करें।

44. तीसरी योजना में तिजारती सड़क-परिवहन का प्रसार मुख्य रूप से इस बात पर निर्भर होगा कि मोटर-उद्योग की अपनी निर्माण-क्षमता कितनी है। मोटर-उद्योग-सम्बन्धी तदर्थ समिति, 1960 ने मोटर-गाड़ियों के निर्माण के जिस लक्ष्य की सिफारिश की है, उसे सरकार ने तीसरी योजना का निर्माण-कार्यक्रम बनाने के लिए स्वीकार कर लिया है। सन् 1965-66 में तिजारती गाड़ियों के निर्माण का लक्ष्य 60,000 है, जो कि सन् 1960-61 के निर्माण-स्तर का दुगना है। मोटे तौर पर यह अन्दाज़ा लगाया गया है कि तिजारती गाड़ियों की संख्या, जो सन् 1960-61 में लगभग 2,00,000 थी, सन् 1965-66 में बढ़ कर 3,65,000 हो जाएगी, अर्थात् उसमें लगभग 82 प्रतिशत की वृद्धि होगी। इस अवधि में माल ढोनेवाली मोटर-गाड़ियों की संख्या 1,60,000 से बढ़ कर 2,85,000 हो जाएगी और सवारी-गाड़ियों की संख्या, जो अब 50,000 है, बढ़ कर 80,000 हो जाएगी। परिवहन-नीति और समन्वय-समिति की प्रारम्भिक रिपोर्ट में जो हिसाब लगाया गया है, उसके अनुसार पांच वर्षों में सड़क-द्वारा जानेवाले माल में लगभग 120 प्रतिशत की वृद्धि होगी, अर्थात् यह यातायात सन् 1960-61 के 1,060 करोड़ टन-मील से बढ़ कर सन् 1965-66 में 2,335 करोड़ टन-मील हो जाएगा।

45. राज्यों में राष्ट्रीयकृत सड़क-परिवहन-प्रतिष्ठानों के, जो आजकल अधिकतर यात्री-सेवाओं की व्यवस्था करते हैं, प्रसार-कार्यक्रम पर तीसरी योजना में 26 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है। आशा है कि योजना की अवधि में राष्ट्रीयकृत प्रतिष्ठानों की मोटर-गाड़ियों की संख्या में 7,500 की वृद्धि की जाएगी, जब कि दूसरी योजना की अवधि में इनमें 5,000 नई गाड़ियां खरीदी गई थीं। सड़क-द्वारा यात्रियों को लाने-ले जाने की सेवाओं

में राष्ट्रीयकृत प्रतिष्ठानों का अंशदान वर्तमान-जितना, अर्थात् 30 प्रतिशत, ही रहने की आशा है। कुछ समय पहले योजना-आयोग ने राज्य-सरकारों को परामर्श दिया था कि वे सड़क-परिवहन-निगम-अधिनियम के अन्तर्गत निगम बना लें, जो राष्ट्रीयकृत सड़क-परिवहन-प्रतिष्ठानों का प्रबन्ध करें और इस प्रबन्ध में रेलों, और यदि सम्भव हो, निजी मोटर-वालों का भी सहयोग रहे। नीति-सम्बन्धी इस निर्णय का आधारभूत सिद्धान्त इस बात की आवश्यकता है कि राज्य-सरकारों के प्रतिष्ठान, जिनके भविष्य में बड़े इज़ारों का रूप ले लेने की सम्भावना है, रेलों के साथ प्रतिद्वन्द्विता में न पड़ें, जिन पर केन्द्रीय सरकार का एकाधिकार है। प्रबन्ध का स्वरूप निगम-जैसा हो, तो उनके बीच अनुचित प्रतिद्वन्द्विता से किसी सीमा तक बचा जा सकता है। परिवहन-नीति और समन्वय-समिति ने अपनी प्रारम्भिक रिपोर्ट में एकमत होकर इस नीति का समर्थन किया है। कई राज्यों में निगम बन चुके है। बाकी राज्यों में भी यथासम्भव जल्दी ही निगम बना दिए जाएंगे। रेलवे की योजना में इस बात की व्यवस्था की गई है कि रेलें राज्यों के राष्ट्रीयकृत सड़क-परिवहन-प्रतिष्ठानों के प्रसार-कार्यक्रम में अपना अंशदान दें।

46. तीसरी योजना की अवधि में रेलवे-परिवहन पर भारी बोझ और विभिन्न प्रकार के परिवहनों के समन्वित विकास की आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए सरकारी क्षेत्र के लिए सड़क-द्वारा माल-यातायात करने के क्षेत्र मे अपनी गतिविधियां बढ़ाना आवश्यक हो सकता है। बहुत-से प्रश्नों—जैसे, संगठन का रूप क्या होगा और कार्यक्रम का क्षेत्र क्या होगा—पर आगे चल कर यातायात-नीति और समन्वय-समिति की सिफारिशों के प्रकाश मे तथा राज्य-सरकारों से सलाह-मशविरा करके विचार किया जाएगा।

अन्तर्देशीय जल-परिवहन

47. देश के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र—अर्थात्, असम, पश्चिम-बंगाल और बिहार के राज्यों—में अन्तर्देशीय जलपथों का बड़ा महत्व है। इस समय असम और कलकत्ता के बीच आने-जाने-वाले माल का परिमाण 25 लाख टन से अधिक है। इसमें से लगभग आधा माल नदी-द्वारा जाता है और बाकी आधा रेलों और अन्य परिवहन-साधनों-द्वारा। दक्षिण में—केरल राज्य मे—अन्तर्देशीय जलपथों का महत्वपूर्ण स्थान है। केरल की नदियां बहुत-से छोटे पत्तनों को कोचीन के मुख्य पत्तन से मिलाती है। उन पत्तनों के आसपास कई उद्योग स्थित है। उधर, उड़ीसा के डेल्टा-क्षेत्र में भी अन्तर्देशीय जलपथ संचार के महत्वपूर्ण माध्यम है। इस क्षेत्र में केन्द्रपाड़ा और तालडांडा की नहरों में और उड़ीसा-तट-नहर में नावें चलती है। अन्तर्देशीय जल-परिवहन की व्यवस्था किसी सीमा तक आन्ध्रप्रदेश और मद्रास के राज्यों में भी है। अन्तर्देशीय जल-परिवहन-समिति ने इस परिवहन-साधन का विस्तृत अध्ययन किया है। समिति ने सन् 1959 में अपनी रिपोर्ट परिवहन और संचार-मन्त्रालय को पेश की। इस समिति ने देश-भर में अन्तर्देशीय जलपथों के विकास के सम्बन्ध में दीर्घकालीन सुझाव दिए हैं। तीसरी पंचवर्षीय योजना के लिए कार्यक्रम इस समिति की सिफारिशों को ध्यान में रख कर बनाया गया है। पहली दो योजनाओं में इस क्षेत्र में कार्यक्रमों की प्रगति बहुत धीमी रही है, जिसका कारण मुख्य रूप से यह है कि योजनाएं बनाने और नावों, आदि के डिज़ाइन तैयार करने में बहुत समय लगता है। पहली दो योजनाओं में इन कार्यक्रमों पर एक करोड़ रुपये से भी कम राशि खर्च की गई थी, जब कि तीसरी योजना में जो कार्यक्रम शामिल किए गए है, उन पर 7.5 करोड़ रुपये खर्च होंगे। इसमें से 6 करोड़ रुपये की राशि

केन्द्रीय क्षेत्र में है और 1.5 करोड़ रुपये राज्यों की योजनाओं के लिए नियत किए गए हैं ।

48. पहली पंचवर्षीय योजना में अन्तर्देशीय जल-परिवहन के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण कदम यह उठाया गया कि गंगा-ब्रह्मपुत्र-बोर्ड की स्थापना की गई, जिसमें केन्द्र-सरकार के साथ उत्तरप्रदेश, बिहार, पश्चिम-बंगाल और असम की सरकारें भी शामिल थीं। इस बोर्ड को यह काम सौंपा गया कि वह गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों में जल-परिवहन के विकास के सम्बन्ध में विभिन्न सरकारों के क्रियाकलाप में तालमेल स्थापित करे और इस बात का पता लगाने के लिए कि उथले जलमार्गों में आधुनिक ढंग की नावें चलाना कहां तक व्यावहारिक हो सकता है, प्रायोगिक परियोजनाओं का संचालन करे। यह बोर्ड इस समय इन सेवाओं का परिचालन कर रहा है; (क) छपरा और बरहज के बीच 94 मील के फासले में देशी नौचालन-सेवा; (ख) पटना और बक्सर (93 मील) और पटना और राजमहल (203 मील) के बीच कर्षनाव (पुशर टग्स) और इस्पात से बने बजरों द्वारा आने-जाने की साप्ताहिक व्यवस्था। ये सेवाएं अभी प्रयोग-मात्र के लिए हैं। यह बोर्ड भविष्य में प्रारम्भ की जानेवाली परियोजनाओं के सम्बन्ध में आंकड़े इकट्ठे करने के लिए भूवृत्त और जलवृत्त-सम्बन्धी सर्वेक्षण भी कर रहा है। दूसरी योजना की अवधि में सरकार ने ज्वायंट स्टीमर-कम्पनियों को नदी-संरक्षण-अनुदान देना स्वीकार कर लिया था और यह भी मान लिया था कि उन्हें नए स्टीमर खरीदने के लिए 2 करोड़ रुपये का ऋण दिया जाएगा। असम और भारत के बाकी भाग के बीच नदी-द्वारा ले जाए जानेवाले माल का अधिकतर भाग यही कम्पनियां ढोती हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना में जो अन्य महत्वपूर्ण परियोजनाएं प्रारम्भ की गई थीं, वे दक्षिणी क्षेत्र में थीं। केरल में पश्चिमी तट-नहर को बड़ागारा से माहे तक बढ़ाने की परियोजना का काम प्रारम्भ किया गया और अप्रैल 1958 में सरकार ने एक निगम की स्थापना की, जिसका काम क्विलोन और एर्णाकुलम के बीच (90 मील) यात्री ले जानेवाली मोटर-बोट चलाने का काम गैर-सरकारी संचालकों से ले लेना था। आन्ध्रप्रदेश और मद्रास में बकिंघम-नहर से मिट्टी निकालने की भी व्यवस्था की गई।

49. तीसरी योजना में केन्द्रीय कार्यक्रम में यह व्यवस्था की गई है कि ज्वायंट स्टीमर-कम्पनियों को ऋण-द्वारा सहायता दी जाए, जिसकी स्वीकृति पहले ही दी जा चुकी है, और पांडु में एक अन्तर्देशीय पत्तन तथा दामोदर-घाटी-नहर में नौचालन-कार्य को भी पूरा करने की व्यवस्था है, जो कि दूसरी पंचवर्षीय योजना में प्रारम्भ किए गए थे। इस कार्यक्रम में जो नई योजनाएं शामिल की गई हैं, उनमें ये महत्वपूर्ण हैं: (1) गंगा-ब्रह्मपुत्र-बोर्ड-द्वारा सुन्दरवन के क्षेत्र में नौकर्षण की प्रायोगिक परियोजना की शुरुआत; (2) अन्तर्देशीय जल परिवहन-सम्बन्धी मामलों के बारे में परामर्श देने के लिए एक केन्द्रीय संगठन की स्थापना, (3) सुन्दरवन और ब्रह्मपुत्र के लिए मिट्टी निकालने की मशीनों और लांचों की खरीद, (4) गौहाटी में अग्रिम तट का उन्नयन, तथा (5) प्रशिक्षण-संस्थाओं की स्थापना। राज्य-क्षेत्र में, अन्य योजनाओं के अतिरिक्त, केरल में पश्चिमी तट-नहर के विस्तार और उन्नयन, उड़ीसा में तालदंड और केन्द्रपारा नहरों के उन्नयन, विशेषकर परदीप-द्वारा खनिज लोहे के निर्यात के सन्दर्भ में, और राजस्थान-नहर में जल-परिवहन की सुविधाओं के विकास के लिए समुचित व्यवस्था की गई है।

जहाज़रानी

50. पहली दो योजनाओं की अवधि में जहाज़ों के टन-भार में काफी वृद्धि हुई और विदेशी मुद्रा की कठिनाइयों के बावजूद यह आशा है कि दूसरी योजना के अन्त तक 9 लाख टन (कुल पंजीकृत भार) का लक्ष्य पूरा हो जाएगा। अनुमान है कि भारतीय जहाज़ इस समय देश के समुद्र-पार-व्यापार का 8 से 9 प्रतिशत अंश ढोते हैं। निम्नलिखित आंकड़ों से पता चलता है कि पहली और दूसरी योजना के अन्त में तटीय और समुद्रपार-व्यापार में लगे हुए जहाज़ों का टन-भार कितना था :

तालिका-संख्या 9

पहली और दूसरी योजनाओं के अन्त में जहाज़ों का टन-भार

(कुल पंजीकृत भार लाख टनों में)

	1950-51	1955-56	1960-61
तटीय	2.17	2.4	2.92
समुद्रपार	1.74	2.4	6.13
योग	3.91	4.8	9.05

समुद्रपार और तटीय जहाज़रानी के लिए दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त में क्रमशः 4.9 लाख टन और 4.1 लाख टन (कुल पंजीकृत भार) का लक्ष्य था। समुद्रपार जानेवाले जहाज़ों का कुल टन-भार तो लक्ष्य से अधिक है, परन्तु तटीय जहाज़ों का भार लक्ष्य से काफी कम है। पहली योजना में जहाज़रानी के कार्यक्रम पर 18.7 करोड़ रुपये की राशि खर्च की गई और अनुमान है कि दूसरी योजना में यह खर्च 52.7 करोड़ रुपये होगा। दूसरी योजना में की गई एक महत्वपूर्ण कार्रवाई यह थी कि जहाज़ी कम्पनियों को जहाज़ खरीदने के वास्ते ऋण देने के लिए एक जहाज़रानी-विकास-निधि स्थापित की गई। यह निधि व्ययगत नहीं होगी।

51. तीसरी योजना में जहाज़रानी के लिए 55 करोड़ रुपये की राशि रखी गई है। आशा है कि इसके अतिरिक्त 4 करोड़ रुपये की राशि जहाज़रानी-विकास-निधि से मिल सकेगी। आशा है कि जहाज़ी कम्पनियां अपने संसाधनों में से 7 करोड़ रुपये की व्यवस्था करेंगी। कुल राशि का आधे से अधिक भाग गैर-सरकारी क्षेत्र में खर्च किए जाने की आशा है। बाकी राशि सरकारी क्षेत्र के दो निगमों—अर्थात्, ईस्टर्न शिपिंग कारपोरेशन और वेस्टर्न शिपिंग कारपोरेशन—के कार्यक्रमों पर खर्च करने का विचार है। आशा है कि तीसरी योजना की अवधि में 57 नए जहाज़ लिए जाएंगे, जिनका कुल पंजीकृत भार 3,75,000 टन होगा। इसमें से 1,94,000 टन-भार के जहाज़ों की आवश्यकता पुराने जहाज़ों को बदलने के लिए पड़ेगी और बाकी 1,81,000 टन कुल पंजीकृत भार के नए जहाज़ मौजूदा बेड़े में बढ़ जाएंगे। इससे कुल पंजीकृत टन-भार 11 लाख टन हो जाएगा। लगभग 2,16,000 टन के जहाज़ गैर-सरकारी क्षेत्र में और बाकी 1,50,000 टन के जहाज़ सरकारी क्षेत्र में खरीदे जाएंगे।

52. अगले पृष्ठ की तालिका से पता चलता है कि तीसरी योजना में सरकारी और गैर-सरकारी क्षेत्र में समुद्रपार और तटीय व्यापार के लिए प्राप्त किए जानेवाले जहाज़ों का टन-भार कितना-कितना होगा।

तालिका-संख्या 10

तीसरी योजना में प्राप्त किए जानेवाले जहाज़ों का कुल पंजीकृत टन-भार

मद	गैर-सरकारी क्षेत्र	सरकारी क्षेत्र	योग
तटीय			
बदली के लिए	1,00,000	—	1,00,000
नए	25,000	7,500	32,500
कुल तटीय...	1,25,000	7,500	1,32,500
समुद्रपार			
बदली के लिए	56,000	37,600	93,600
नए	35,200	1,13,200	1,48,400
कुल समुद्रपार	91,200	1,50,800	2,42,000
योग : तटीय और समुद्रपार ...	2,16,200	1,58,300	3,74,500

कुल टन-भार में से 1,32,500 पंजीकृत टन-भार की आवश्यकता तटीय व्यापार के लिए है और बाकी 2,42,000 पंजीकृत टन-भार की समुद्रपार-व्यापार के लिए। तटीय जहाज़ों के कार्यक्रम का अधिकांश पुराने जहाज़ों को बदलने के लिए है। तटीय जहाज़ों में 32,500 पंजीकृत टन-भार की वृद्धि की जाएगी। इसमें से 25,000 टन के छोटे तटीय जहाज़ सामान्य माल ढोने के लिए होंगे और बाकी 7,500 टन का एक तटीय टैंकर जहाज़ होगा। जहां तक समुद्रपार-व्यापार का सम्बन्ध है, 93,600 पंजीकृत टन-भार के पुराने जहाज़ों के बदलने की व्यवस्था की गई है और 1,48,000 पंजीकृत टन के नए जहाज़ खरीदने का विचार है। अतिरिक्त टन-भार में 53,000 पंजीकृत टन-भार के टैंकर होंगे। तीन टैंकर खरीदने का विचार है—दो बिना साफ किए पेट्रोलियम के आयात के लिए और एक पेट्रोलियम-उत्पादनों के आयात के लिए।

53. इस बात को मान लिया गया है कि जहाज़रानी के प्रसार को अधिक प्राथमिकता मिलनी चाहिए, क्योंकि इससे उस विदेशी मुद्रा की बचत हो सकेगी, जो देश को अपने समुद्रपार-व्यापार की ढुलाई के लिए खर्च करनी पड़ रही है। राष्ट्रीय जहाज़रानी-मंडल ने सिफारिश की है कि सन् 1965-66 तक 14.2 लाख पंजीकृत टन-भार का लक्ष्य पूरा हो जाना चाहिए। परन्तु जहाज़रानी-विकास-कार्यक्रम बहुत-कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि हमें इस काम के लिए विदेशों से कितनी सहायता मिलती है और इसलिए इसका सीमित होना स्वाभाविक ही है। जहां तक तटीय जहाज़रानी का सम्बन्ध है, आशा है कि परिवहन-नीति और समन्वय-समिति अपनी अन्तिम रिपोर्ट में इस सम्बन्ध में सिफारिशें करेगी कि रेलों के मुकाबले में तटीय जहाज़रानी का क्या अंशदान रहेगा। इस बीच यह प्रयत्न किया जा रहा है कि जितने भी जहाज़ हैं, उन्हें बड़े परिमाण में वस्तुएं—विशेषकर कोयला—ले जाने के लिए पूरी तरह प्रयोग में लाया जाए, जिससे कि रेलों पर कम बोझ पड़े।

पत्तन और बन्दरगाह

54. **मुख्य पत्तन :** पहली योजना में मुख्य पत्तनों के विकास-कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य यह था कि वर्तमान पत्तनों पर पूरी सुविधाओं की व्यवस्था की जाए और उन्हें नए ढंग का बनाया जाए—विशेषकर उन पत्तनों को, जहां युद्धकाल में बहुत अवक्षयण हुआ है—और कांडला पर उस यातायात के लिए एक मुख्य पत्तन बनाया जाए, जो पहले कराची से होता था। कार्यक्रम की ब्योरेवार बातों को अन्तिम रूप देने में देरी हो जाने के कारण पहली योजना में प्रगति धीमी रही। इस काल में मुख्य पत्तनों की क्षमता 2 करोड़ टन से बढ़ कर 2.5 करोड़ टन हो गई। योजना के अन्तिम वर्ष में 2.4 करोड़ टन का यातायात हुआ। दूसरी योजना का उद्देश्य यह था कि पहली योजना में प्रारम्भ की गई परियोजनाओं का काम पूरा किया जाए और कलकत्ता, मद्रास, विशाखापटनम और कोचीन के पत्तनों पर जहाज़ों के ठहरने के लिए अधिक स्थान की व्यवस्था की जाए। इस योजना के पहले दो वर्षों में पत्तनों में भारी माल के बड़े पैमाने पर होनेवाले आयात के कारण बहुत भीड़ रही और मुख्य पत्तनों की समाई बढ़ाने और उन्हें अधिक माल लेने और भेजने-योग्य बनाने के लिए कई कार्रवाइयां की गई। हुगली नदी में डुबाव की परिस्थिति बिगड़ जाने के कारण, कलकत्ता पत्तन में विशेष कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए, जिनका उद्देश्य बहुव्यय-साध्य नदी-नियन्त्रण-कार्यो को हाथ में लेना और कठिन बाधाओं को वहां से हटाना था। इन कार्यक्रमों पर काफी खर्च किया गया। अब मुख्य पत्तनों की क्षमता काफी बढ़ गई है और अनुमान है कि सन् 1960-61 में वहां से होनेवाला यातायात लगभग 3.3 करोड़ टन था।

55. तीसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रम में मुख्य रूप से उन्हीं परियोजनाओं का काम पूरा करने की व्यवस्था है, जो प्रारम्भ की जा चुकी है। बम्बई पत्तन को आधुनिक ढंग का बनाने और उसकी गोदियों के प्रसार की व्यवस्था की गई है। इसके अतिरिक्त, कोई ऐसी बड़ी योजना शामिल नहीं की गई, जिससे वर्तमान पत्तनों की क्षमता में अधिक वृद्धि होने की आशा की जा सके। वर्तमान पत्तनों के सम्बन्ध में जो योजनाएं है, उनका मुख्य उद्देश्य यह है कि वहां पहले से प्राप्त सुविधाओं को बनाए रखा जाए और बेहतर बनाया जाए। आशा है कि उन योजनाओं के पूरा होने से, जिनमें से अधिकतर दूसरी योजना में प्रारम्भ कर दी गई थीं, मुख्य पत्तनों की क्षमता 4.9 करोड़ टन हो जाएगी। तीसरी योजना के अन्त तक जितना यातायात होने का अनुमान है, उसके लिए यह पर्याप्त होगी।

56. कलकत्ता पत्तन को ठीक-ठाक रखने और उसके संरक्षण के लिए इस कार्यक्रम में दो महत्वपूर्ण योजनाएं शामिल की गई हैं। ये योजनाएं है : (क) हल्दिया में एक सहायक पत्तन का निर्माण, और (ख) फरक्का मे गंगा नदी पर बांध का निर्माण। हल्दिया पत्तन कलकत्ता का अनुपूरक पत्तन होगा और वहां से 56 मील नीचे (नदी के बहाव की ओर) बनाया जाएगा। इस पत्तन में बड़े परिमाण में कोयला खनिज, लोहा और खाद्यान्न लाने तथा भेजने और सामान्य माल के जहाज़ों से माल उतारने की सुविधाओं की व्यवस्था करने का विचार है। सामान्य माल कलकत्ता पत्तन से ही आए-जाएगा। इन परियोजनाओं को अन्तिम रूप देने के लिए आवश्यक तकनीकी जांच की जा रही है। पत्तन के निर्माण पर, जिसमें चार बर्थवाली गोदी बनाना भी शामिल है, 25 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है। तीसरी पंचवर्षीय योजना में इस परियोजना के लिए 7 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई

है और सम्भव है कि इसका बहुत-सा काम चौथी योजना की अवधि में ही पूरा हो। इस पत्तन को एक सीधे रेल-मार्ग-द्वारा कलकत्ता-खड़गपुर मुख्य लाइन से मिलाने का विचार है।

57. जहां तक गंगा नदी पर बांध का प्रश्न है, उसे हुगली नदी में डुबाव की स्थिति सुधारने और कलकत्ता पत्तन को बनाए रखने के लिए आवश्यक माना गया है। नदी के तल में जमी हुई मिट्टी को ज़ोर से बहा कर ले जाने के लिए पानी की कमी के कारण हुगली की स्थिति बराबर बिगड़ती जा रही है। इससे न केवल हुगली नदी के नौकानयन के योग्य बने रहने पर बुरा असर पड़ता है, बल्कि नदी के तल पर मिट्टी जमा हो जाने से पानी की धारा भी अवरुद्ध हो गई है। इससे एक ओर तो हुगली में बान-ज्वार अधिक आने लगे ह और दूसरी ओर इसका पानी अधिकाधिक नमकीन होता जा रहा है। कलकत्ता के पत्तन को चालू रखने के लिए मिट्टी निकालने के प्रयत्न तेज़ी से करना आवश्यक हो गया था, लेकिन वे अपर्याप्त सिद्ध हो रहे हैं। गंगा पर फरक्का-बांध बन जाने स हुगली में ऊपर से आनेवाले पानी की मात्रा बढ़ जाएगी और इस समस्या का एक ठोस हल निकल आएगा। इस बांध से कुछ अन्य आनुषंगिक लाभ होंगे, जिनमें से एक यह होगा कि कलकत्ता और उसकी परिधि में स्थित औद्योगिक नगरों में पानी की मात्रा बढ़ जाएगी। इसके अतिरिक्त, उत्तर और दक्षिण-बंगाल के बीच संचार-व्यवस्था सुधर जाएगी और असम तथा बंगाल, आदि के बीच अन्तर्देशीय जल-परिवहन-मार्ग की लम्बाई कम हो जाएगी। अनुमान है कि परियोजना पर कुल 56 करोड़ रुपये खर्च होंगे। इस परियोजना को 9 वर्षों में पूरा करने का कार्यक्रम है। इस प्रकार, तीसरी योजना के काल में इस पर 25 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है।

58. हल्दिया के अनुपूरक पत्तन और फरक्का-बांध के अतिरिक्त कलकत्ता में बलारी धारा (चेलन) को सुधारने के लिए दिशा-नियन्त्रण-सम्बन्धी निर्माण-कार्य की व्यवस्था की गई है और मिट्टी निकालनेवाली अधिक मशीनों तथा अन्य उपकरणों का प्रबन्ध किया गया है। इन योजनाओं पर 28 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है।

बम्बई पत्तन के कार्यक्रम में जो योजनाएं शामिल की गई हैं, उन पर लगभग 26 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है। इनमें से अधिक महत्वपूर्ण ये हैं: गोदियों को आधुनिक बनाने की योजना, बन्दरगाह की मुख्य धारा में से मिट्टी निकालना, बैलार्ड बंगसार का प्रसार और बंगसार पर यात्रियों के उतरने के लिए आवश्यक भवन का निर्माण, अलेग्ज़ेंड्रा गोदियों में क्रेनों को बिजली से चलाने की व्यवस्था और मज़दूरों के लिए आवास की योजना। गोदियों को आधुनिक ढंग का बनाने की योजना का उद्देश्य यह है कि पत्तन में जहाज़ों के ठहरने के लिए अधिक गहरे डुबाववाले बर्थों का निर्माण किया जाए। हाल के कुछ वर्षों में इस पत्तन में आनेवाले बड़े जहाज़ों की संख्या बढ़ गई है, इसलिए यह योजना आवश्यक हो गई है। बैलार्ड बंगसार-सम्बन्धी योजनाएं पत्तन पर यात्रियों के यातायात के लिए आवश्यक समझी गई हैं। यात्रियों के उतरने की इमारत को तुरन्त नया बनाना ज़रूरी है, क्योंकि मौजूदा इमारत की नींव तेज़ी से कमज़ोर होती जा रही है।

मद्रास पत्तन के कार्यक्रम पर लगभग 7 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है। जो परियोजनाएं चल रही हैं, उन्हें पूरा करने के अतिरिक्त इस कार्यक्रम में खनिज और कोयले के लिए नए यार्ड बनाने और खनिज लोहे को लादने-उतारने के लिए उपकरणों की व्यवस्था की गई है।

विशाखापटनम के कार्यक्रम पर 9 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है। इसमें चार अतिरिक्त घाट-योजनाओं और खनिजों को लादने के लिए यन्त्र लगाने की व्यवस्था की गई है, जिन पर दूसरी पंचवर्षीय योजना में काम प्रारम्भ हो गया था। इस योजना का उद्देश्य यह है कि पत्तन को इस योग्य बनाया जाए कि वहां से सन् 1964 से 20 लाख टन खनिज लोहा प्रति वर्ष जापान को भेजा जा सके और सन् 1966 से 40 लाख टन और अधिक लोहे के निर्यात की व्यवस्था की जा सके।

कांडला में यह व्यवस्था की गई है कि दो अतिरिक्त घाट पूरे किए जाएं, एक निकर्षण-पोत मंगाया जाए, उपनगर का प्रसार किया जाए और पत्तन में अधिक पानी की व्यवस्था करने की योजनाएं क्रियान्वित की जाएं।

कोचीन पत्तन के कार्यक्रम में मुख्य रूप से उन्हीं योजनाओं का काम पूरा करने की व्यवस्था है, जो दूसरी पंचवर्षीय योजना से चली आ रही हैं।

59. पत्तनों के विकास-कार्यक्रम में, दो छोटे पत्तनों, अर्थात् तुत्तुकुडि और मंगलोर, को सम्पूर्ण वर्ष चालू रहनेवाला पत्तन बनाने की दो परियोजनाएं सम्मिलित की गई हैं। तुत्तुकुडि के साथ ही सम्पूर्ण वर्ष चालू रहनेवाले पत्तन का विकास इसलिए ज़रूरी समझा गया है कि पत्तन वर्तमान यातायात को सुचारु रूप से निबटा सके और यातायात में वृद्धि के लिए आवश्यक क्षमता की व्यवस्था हो जाए। इस परियोजना का ठीक-ठीक विस्तार इस बात पर निर्भर है कि भविष्य में इस पत्तन से कितना यातायात हो सकता है : वर्तमान यातायात में अधिकतर भाग उन वस्तुओं का है, जो तटीय यातायात में आती हैं। इस सम्बन्ध में लम्बे समय की बात तभी सोची जा सकती है, जब परिवहन-नीति और समन्वय-समिति की रिपोर्ट प्राप्त हो जाए।

मंगलोर का विकास करने का विचार मुख्यतः इस प्रयोजन से है कि इसे चितलदुर्ग और मंगलोर के आसपास-स्थित अन्य खान-क्षेत्रों से भविष्य में प्रत्याशित 20 लाख टन खनिज लोहे का यातायात करने-योग्य बनाया जाए। बन्दरगाह के विकास के सम्बन्ध में तकनीकी जांच की जा रही है।

60. अनुमान है कि पत्तन-विकास-कार्यक्रम की कुल लागत 115 करोड़ रुपये के लगभग बैठेगी। इसमें से 80 करोड़ रुपये की राशि मुख्य पत्तनों के कार्यक्रमों के लिए, 25 करोड़ रुपये फरक्का-बांध के लिए और 10 करोड़ रुपये की राशि मंगलोर तथा तुत्तुकुडि में नए मुख्य पत्तनों के विकास के लिए है।

61. **छोटे पत्तन** : भारत में छोटे पत्तनों की संख्या 150 से अधिक है। अनुमान है कि वहां से प्रति वर्ष 60 लाख टन सामान का यातायात होता है। छोटे पत्तनों के लिए पहली पंचवर्षीय योजना में 2.4 करोड़ रुपये की योजनाएं शामिल की गई थीं, परन्तु वास्तविक खर्च 1.4 करोड़ रुपये से अधिक नहीं हुआ। दूसरी पंचवर्षीय योजना में छोटे पत्तनों के लिए 5 करोड़ रुपये की राशि रखी गई थी और अनुमान है कि वह सारी राशि खर्च कर दी गई। तीसरी पंचवर्षीय योजना में जो कार्यक्रम शामिल किए गए हैं, उन पर 15 करोड़ रुपया खर्च होने का अनुमान है।

62. मध्यवर्ती पत्तन-विकास-समिति (1960) ने छोटे पत्तनों—जिन्हें 'मध्य पत्तन' कहा जाता है—में से कुछ महत्वपूर्ण पत्तनों का विस्तृत सर्वेक्षण करने के बाद अगले

पांच से दस वर्ष तक के लिए विकास-योजनाओं की सिफारिश की है। तीसरी पंचवर्षीय योजना का कार्यक्रम समिति की सिफारिशों के आधार पर तैयार किया गया है। इस कार्य-क्रम की अधिक महत्वपूर्ण योजनाओं में परदीप में एक मध्यवर्ती पत्तन बनाने का प्रस्ताव उल्लेखनीय है। यह पत्तन सुकिन्द-दैतरी क्षेत्रों से 5 लाख टन खनिज लोहे के निर्यात के लिए होगा। खान-क्षेत्रों से पत्तन खनिज लोहा ले जाने के लिए आवश्यक परिवहन-सुविधाओं के विकास की भी व्यवस्था की जा रही है। नीन्दाकारा (केरल) को भी मध्यवर्ती पत्तन बनाने का विचार है, और यदि कारवार में गहरे डुबाव के घाट की व्यवस्था तकनीकी दृष्टि से सम्भव हुई, तो यह काम भी किया जाएगा, ताकि वहां से खनिज लोहे का निर्यात हो सके। इस कार्यक्रम में जो और योजनाएं शामिल की गई हैं, वे ये हैं : काकीनाडा में 'ग्रोयनों' का विस्तार और एक 'ड्रेज़र' प्राप्त करना, मछलीपट्टम में जल-धारा स्थिरीकरण, कड्डलूर में समुद्रतल को लहरों से कटने से बचाने के लिए लकड़ी की दीवारें और एक बंगसार की व्यवस्था करना, रत्नगिरि में नीची तलवाली जेटी को चौड़ा करना और उसका स्तर ऊंचा करना, रेडी में माल उतारने का घाट बनाना, भावनगर में जलबन्धक फ़ाटक का सुधार, पोरबन्दर में माल-बोटों के ठहरने के लिए अतिरिक्त स्थानों का निर्माण और ओखा में तेल के जहाज़ों के ठहरने के लिए घाट बनाना। केन्द्रीय क्षेत्र में निकर्षण एवं सर्वेक्षण-पोतों की व्यवस्था की गई है। इसके अन्तर्गत दो निकर्षण-पोत और छः सर्वेक्षण-पोत खरीदने की व्यवस्था की जा चुकी है। तीसरी पंचवर्षीय योजना में एक निकर्षण-पोत और प्राप्त किया जाएगा।

तीसरी योजना में सम्मिलित किए गए कार्यक्रम पूरे होने पर सब छोटे पत्तनों की क्षमता बढ़ कर 90 लाख टन हो जाने की आशा है।

प्रकाश-स्तम्भ

63. प्रकाश-स्तम्भों और प्रकाश-नौकाओं के विकास के लिए 6 करोड़ रुपये की राशि रखी गई है, जिसमें से 2.4 करोड़ रुपये की राशि तो उन कामों को पूरा करने के लिए आवश्यक होगी, जो दूसरी योजना के समय से चले आ रहे हैं और बाकी 3.6 करोड़ रुपये नए निर्माण-कार्यों के लिए होंगे। दूसरी योजना की अवधि में 72 नए प्रकाश-स्तम्भ स्थापित हुए और नौकानयन में सहायक अन्य उपकरणों—जैसे, रेडियो-संकेतक, अधिक शक्ति के रेडियो-प्रसार-यन्त्र और प्रकाशयुक्त तथा प्रकाशहीन बोताओं—की व्यवस्था की गई है। 50 प्रकाश-स्तम्भों के निर्माण और सुधार और नौकानयन में सहायक अन्य उपकरणों—जैसे, रैडार, रेडियो-संकेतक, धुन्ध-संकेतक और प्रकाश-बोताओं—के सम्बन्ध में काम जारी है। इसके अतिरिक्त, दो डेका नौकानयन-शृंखलाओं और कलकत्ता में प्रकाश-स्तम्भ-कारखाने और प्रयोगशाला की स्थापना के सम्बन्ध में काम चल रहा है। तीसरी योजना में जो नए कार्यक्रम शामिल किए गए हैं, उनमें एक प्रकाश-स्तम्भ-टेंडर की योजना भी है, जिस पर 140 लाख रुपये खर्च होगा।

नागरिक विमान-परिवहन

64. **नागरिक उड्डयन :** विभाजन के बाद से नागरिक उड्डयन में तेज़ी से प्रगति हुई है। सन् 1947 से पहली योजना के प्रारम्भ तक नागरिक उड्डयन-सम्बन्धी कार्यों पर लगभग

6.6 करोड़ रुपये खर्च किए गए। पहली दो योजनाओं की अवधि में 24 करोड़ रुपये खर्च हुए। पहली योजना में जो कार्यक्रम सम्मिलित किए गए, उनका मुख्य उद्देश्य यह था कि हवाई अड्डों, संचार-सुविधाओं और उपकरणों, आदि की कमी को पूरा किया जाए। दूसरी योजना में देशीय और अन्तर्राष्ट्रीय यातायात की बढ़ती हुई मांगें पूरी करने और विशेषकर वे मांगें पूरी करने के लिए आवश्यक सुविधाएं देने की व्यवस्था की गई थी, जो अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन-अभिसमय के अधीन भारत के दायित्वों और हाल की तकनीकी उन्नति के फलस्वरूप उत्पन्न हुई। इस अभिसमय के अन्तर्गत भारत पर यह उत्तरदायित्व था कि हवाई अड्डों पर अभिसमय में विहित मानकों के अनुसार सुविधाओं की व्यवस्था की जाए। इस समय नागरिक उड्डयन-विभाग की देख-रेख में 85 हवाई अड्डे हैं, जिनमें से चार दूसरी योजना की अवधि में बने थे। चार अन्य हवाई अड्डों का निर्माण-कार्य समाप्तप्राय है। तीसरी योजना में नागरिक उड्डयन पर लगभग 25.5 करोड़ रुपये खर्च करने का विचार है। नीचे की तालिका में बताया गया है कि विभिन्न प्रकार की योजना पर कितना-कितना खर्च होगा। तालिका में यह भी बताया गया है कि पहली और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं में इन योजनाओं पर कितना खर्च किया गया था :

तालिका-संख्या 11

नागरिक उड्डयन पर पहली दो योजनाओं में किया गया खर्च और तीसरी योजना के लिए नियत राशि

(लाख रुपये)

योजना	पहली योजना (वास्तविक खर्च)	दूसरी योजना (अनुमानित खर्च)	तीसरी योजना (नियत राशि)
हवाई अड्डों पर कार्य	612	1,290	1,850
दूर-संचार उपकरण	68	229	500
वायु-मार्ग और हवाई अड्डे	29	43	100
प्रशिक्षण और शिक्षा-उपकरण	10	23	84
अनुसन्धान और विकास-उपकरण ...	5	6	17
योग	724	1,591	2,550

65. दूसरी पंचवर्षीय योजना में बम्बई (सांताक्रूज़), कलकत्ता (दमदम) और दिल्ली (पालम) के हवाई अड्डों पर विस्तृत विकास-कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए। ये कार्यक्रम, जो कि मुख्यतः जेट विमानों की उड़ान की सुविधा के लिए आरम्भ किए गए थे, तीसरी योजना में पूरे किए जाएंगे। तीसरी पंचवर्षीय योजना में निम्नलिखित कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी जाएगी : जहां भी आवश्यक हो, विद्यमान धावन-पथों का प्रसार, जिसमें मद्रास में एक ऐसे विमान-अड्डे का विकास भी शामिल है, जहां मलाया-इंडोनीशिया-आस्ट्रेलिया मार्ग पर चलनेवाले जेट विमान उतर सकें; लखनऊ, गया और अहमदाबाद के हवाई अड्डों के धावन-पथों को बढ़ाना और उन्हें मज़बूत बनाना, क्योंकि ये हवाई अड्डे अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डों के विकल्प-स्वरूप माने जाते हैं। इसके अतिरिक्त, टैक्सी-पथ बनाने, एपरान बनाने और अड्डों

के सीमान्त भवन तथा अन्य तकनीकी इमारतें बनाने की भी व्यवस्था की गई है। इस कार्यक्रम में यह भी व्यवस्था की गई है कि कई हवाई अड्डों के धावन-पथों पर प्रकाश का स्थायी प्रबन्ध किया जाए। हवाई अड्डों के निर्माण-कार्यों के लिए नियत कुल राशि में से 65 लाख रुपये की राशि नए हवाई अड्डे बनाने, उड्डयन और ग्लाइडिंग क्लबों तथा पर्यटन की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थानों पर विमान-पट्टियां बनाने के लिए रखी गई है। इसके अतिरिक्त, लगभग 20 लाख रुपये की राशि इस कार्यक्रम में पर्यटन के विकास के लिए रखी गई है। यह धन पर्यटन-यातायात के विकास के लिए हवाई अड्डे और विमान-पट्टियां बनाने पर खर्च किया जाएगा। नागरिक उड्डयन के लिए नियत राशि में दो करोड़ रुपये की वह राशि भी शामिल है, जो दिल्ली में आवश्यकतानुसार एक बिल्कुल नया हवाई अड्डा बनाने पर खर्च की जाएगी। अनुमान है कि इस परियोजना की कुल लागत 12 करोड़ रुपये के लगभग होगी।

66. वैमानिक संचार-सेवाओं के कार्यक्रम में जो योजनाएं सम्मिलित की गई हैं, उनमें कुछ हवाई अड्डों पर विमान-चालन में सहायक अच्छे ढंग के उपकरणों की योजना भी है, ताकि ऊंचाई पर तेज़ी से उड़नेवाले जहाज़ों की हर प्रकार के मौसम में सहायता की जा सके। यह भी योजना है कि हवाई अड्डों पर टर्मिनल नियन्त्रण-संचार और मौसम-सम्बन्धी जानकारी देने की सुविधाएं बढ़ाई जाएं। प्रशिक्षण-कार्यक्रम में, इलाहाबाद के प्रशिक्षण-केन्द्र के लिए विमान और अन्य उपकरणों के खरीदने और 15 नए उड्डयन-क्लब खोलने की व्यवस्था की गई है। दूसरी योजना की अवधि में ऐसे कुल पांच क्लब खोले गए थे।

67. **विमान-निगम :** सन् 1953 के बाद से, जब विमान-निगम बनाए गए थे, उनका कार्यकलाप तेज़ी से बढ़ा है। नीचे की तालिका से पता चलता है कि सन् 1953-54 से सन् 1959-60 तक उनकी वहन-क्षमता और उनके द्वारा ढोए गए माल तथा यात्रियों की संख्या में कितनी वृद्धि हुई है :

तालिका-संख्या 12

1953-54 और 1959-60 में विमान-निगमों-द्वारा किया गया यातायात

(लाख में)

मद	1953-54	1959-60
इंडियन एयरलाइन्स कारपोरेशन		
उपलब्ध क्षमता, टन-मील में	458.4	678.7
ले जाए गए टन-मील पर आय	312.2	479.9
जितने मुसाफिर ले जाए गए	4.3	7.0
एयर इंडिया इंटरनेशनल		
उपलब्ध टन-मील	169.1	595.2
टन-मील पर आय	104.7	346.2
जितने मुसाफिर ले जाए गए	0.3	0.9

अनुमान है कि एयर इंडिया इंटरनेशनल की वहन-क्षमता सन् 1960-61 में और अधिक, **अर्थात्** 10.32 करोड़ टन-मील, हो गई थी।

68. एयर इंडिया इंटरनेशनल ने जब कार्य प्रारम्भ किया था, तब उसके पास कुल चार कान्स्टेलेशन विमान थे। पहली योजना में पांच और दूसरी योजना में अन्य पांच सुपर-कान्स्टलेशन विमान खरीदे गए, परन्तु सन् 1959 में एक दुर्घटना में एक विमान नष्ट हो गया। निगम ने दूसरी योजना में तीन 707 बोइंग जेट विमान भी खरीदे और एक बोइंग मंगाया, जो तीसरी योजना की अवधि के प्रारम्भ में आएगा। आजकल निगम के पास 3 बोइंग और 9 सुपर कान्स्टेलेशन विमान हैं। तीसरी योजना में सम्मिलित किए गए कार्यक्रम में चार और जेट विमान खरीदने की व्यवस्था है, जिसमें से निगम ने दो का आर्डर दे भी दिया है। योजना में इस निगम के लिए कुल 14.5 करोड़ रुपये की राशि नियत की गई है, जिसमें से 13.5 करोड़ रुपये की आवश्यकता विमान खरीदने के लिए है। बाकी 1 करोड़ रुपये की राशि वर्कशापों और हैंगरों के प्रसार तथा उपकरणों, आदि के खरीदने के लिए है। तीसरी योजना के प्रारम्भ में ही बम्बई में जेट इंजिनों की पूरी मरम्मत और सफाई के लिए एक केन्द्र स्थापित करने का विचार है।

69. दूसरी पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में इंडियन एयरलाइन्स कारपोरेशन के पास 92 विमान थे, जिनमें से 66 डकोटा, 12 वाइकिंग, 6 स्काइमास्टर और 8 हेरोन थे। दूसरी योजना में निगम ने 10 वाइकाउंट विमान खरीदे, जिससे उसकी वहन-क्षमता काफी बढ़ गई। परन्तु इसी काल में सारे वाइकिंग और हेरोन विमानों का चलना बन्द कर दिया गया। निगम ने दूसरी योजना की अवधि में डकोटा विमानों के बदलाव के लिए 5 फाक्कर फ्रेंडशिप विमानों का आर्डर दिया। सन् 1960-61 के अन्त में निगम के चालू विमानों में 54 डकोटा, 5 स्काइमास्टर और 10 वाइकाउंट थे। दूसरी योजना की अवधि में एक अच्छी बात यह हुई है कि वाइकाउंट विमान चालू करने से आय में काफी वृद्धि हुई है। इसके परिणामस्वरूप, सन् 1959-60 में पहली बार निगम को यदि लाभ नहीं हुआ, तो घाटा भी नहीं हुआ। तीसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रम में डकोटा विमानों के बदलाव के लिए 4 वाइकाउंट विमान और 25 आधुनिक विमान खरीदने की व्यवस्था की गई है। तीसरी योजना के अन्त में लगभग 10 डकोटा विमान चालू करने का विचार है। उन्हें माल ढोने के लिए प्रयुक्त किया जाएगा। निगम के लिए तीसरी योजना में कुल 15 करोड़ रुपये की राशि रखी गई है। अनुमान है कि इसमें से 10 करोड़ रुपये की राशि, डकोटा विमानों के स्थान पर मध्यम आकार के विमान खरीदने और 1 करोड़ रुपये 4 और (पुराने) वाइकाउंट विमान खरीदने के लिए आवश्यक होंगे। मुख्य कार्यालय के कर्मचारियों के क्वार्टर और निगम के लिए आवश्यक अन्य भवनों के निर्माण के लिए 2.8 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। 1.5 करोड़ रुपये की बाकी राशि वर्कशाप के उपकरण और गाड़ियां, आदि खरीदने तथा नए ढंग के विमानों के चालकों के लिए प्रशिक्षण-सुविधाओं का प्रबन्ध करने के लिए आवश्यक होगी।

पर्यटन

70. इधर कुछ वर्षों में पर्यटन का महत्व अधिकाधिक बढ़ता गया है। पिछले दस वर्षों में विदेशों से पर्यटन के लिए भारत आनेवालों की संख्या लगभग छः-गुनी हो गई है—सन् 1951 में इनकी संख्या 20,000 थी, जो सन् 1960 में 1,23,000 हो गई। सन् 1950 में पर्यटन से करीब 4 करोड़ रुपये के मूल्य की विदेशी मुद्रा की आमदनी हुई थी, जो सन् 1960 म

बढ़ कर कोई 20 करोड़ रुपये हो गई । दूसरी पंचवर्षीय योजना में पर्यटन के विकास के जो कार्यक्रम शामिल किए गए थे, उनका उदेश्य मुख्यतः महत्वपूर्ण पर्यटन-केन्द्रों में ग्रावास, परिवहन और मनोरंजन की सुविधाओं की व्यवस्था करना था। इन केन्द्रों को मिलानेवाली सड़कें बनाने के लिए भी व्यवस्था की गई थी। दूसरी पंचवर्षीय योजना में इन कार्यक्रमों को अन्तिम रूप देने में काफी वक्त लगा था। इनमें ज्यादातर भवन-निर्माण की परियोजनाएं थीं और जम्मू-कश्मीर को छोड़ कर सर्वत्र प्रगति धीमी ही रही है। जम्मू-कश्मीर के लिए लगभग एक करोड़ रुपये की जो राशि नियत की गई थी, वह प्रायः सारी-की-सारी इस्तेमाल की जा चुकी है।

71. तीसरी पंचवर्षीय योजना में पर्यटन के विकास के लिए करीब 8 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। इस राशि का आधे से कुछ कम भाग तो केन्द्रीय पर्यटन-विभाग की योजनाओं के लिए और राज्य-सरकारों को दिए जानेवाले अनुदानों के लिए होगा और बाकी रकम राज्यों की योजनाओं के लिए हिस्से के रूप में खर्च की जाएगी। केन्द्रीय क्षेत्र की योजनाओं के अन्तर्गत उन पर्यटन-केन्द्रों में सुविधाएं देने की व्यवस्था है, जो विदेशी पर्यटन की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, जब कि राज्यों की योजनाओं में मुख्यतः देशीय पर्यटन को दृष्टि में रखा गया है। दूसरी योजना की तरह तीसरी योजना में भी अधिकतर परिवहन और ग्रावास की सुविधाओं की व्यवस्था करने पर ज्यादा ध्यान दिया गया है। कश्मीर में गुलमर्ग में शीतकालीन खेलों की व्यवस्था की गई है। पर्यटन की बढ़ती हुई आवश्यकता के अनुरूप देश में होटल-उद्योग का समुचित विकास नहीं हुआ है। नए होटलों के निर्माण के लिए और वर्तमान होटलों के विकास या सुधार के लिए ऋण देकर इस उद्योग को सहायता देने के उपायों पर भी विचार किया जा रहा है।

संचार-साधन

72. पिछले दस वर्षों में औद्योगिक और वाणिज्यिक कामों के विस्तार के कारण संचार-सुविधाओं की मांग अधिकाधिक बढ़ती गई है। इनका विकास देश की औद्योगिक और टेक्नोलाजिकल उन्नति का एक अभिन्न अंग है। संचार-सेवाओं में डाक, तार और टेलीफोन-सेवाएं, समुद्रपार-संचार और ऋतु-विज्ञान भी शामिल हैं। पिछली दो योजनाओं में देश के डाकघरों की मार्फत 80 प्रतिशत वस्तुएं ज्यादा आईं अर्थात् यह संख्या 227 करोड़ से बढ़ कर 405 करोड़ 40 लाख हो गई। तारों की संख्या 43 प्रतिशत बढ़ी, यानी सन् 1950-51 में 2 करोड़ 79 लाख तार दिए गए थे, जब कि सन् 1960-61 में 4 करोड़ तार दिए गए। टेलीफोन-विभाग के अधीन एक शहर से दूसरे शहर के लिए किए जानेवाले टेलीफोनों की संख्या लगभग पांच-गुना बढ़ गई, यानी सन् 1950-51 के 71 लाख से बढ़ कर सन् 1960-61 में लगभग 3 करोड़ 40 लाख हो गई। इन आंकड़ों से पता चलता है कि देश के आर्थिक विकास से डाक और तार-विभाग पर काम का कितना दबाव हो गया है। डाक-तार-सेवाओं की तथा देश के अन्य संचार-साधनों की क्षमता का काफी विस्तार हो जाने के बावजूद इधर कुछ वर्षों से विभाग पर काम का कुछ ज्यादा बोझ रहा है। संचार-विभाग के अन्तर्गत विभिन्न विभागों के लिए पहली और दूसरी योजनाओं में जितनी रकमों की व्यवस्था की गई थी, और जो खर्च हुआ था उसका तथा तीसरी योजना में विभिन्न विभागों के लिए स्वीकृत कार्यक्रमों की लागत का ब्योरा अगले पृष्ठ की तालिका में दिया गया है।

तालिका-संख्या 13

संचार-साधनों पर खर्च

(करोड़ रुपये)

विभाग		पहली योजना (वास्तविक खर्च)	दूसरी योजना व्यवस्था	दूसरी योजना प्रत्याशित खर्च	तीसरी योजना (स्वीकृत कार्य-क्रमों की लागत)
डाक और तार ..	..	39.57	63	50.7	77.6
समुद्र-पार-संचार	...	0.58	2	0.72	3
ऋतु-विज्ञान ...	...	0.47	1.5	0.99	3
भारतीय टेलीफोन-उद्योग	.	2.91	0.5	0.5	2.8
बेतार-आयोजन और समन्वय		—	—	—	0.5
दूरमुद्रक-कारखाना	...	—	—	0.09	1.4
योग	...	43.53	67	52.9	88.3

डाक और तार

73. तीसरी योजना में शामिल किए गए डाक और तार-विभाग के कार्यक्रमों पर अनुमानतः 77.6 करोड़ रुपये की लागत आएगी। इसका विवरण इस प्रकार है :

तालिका-संख्या 14

तीसरी योजना में डाक और तार-विभाग के कार्यक्रमों की लागत

(करोड़ रुपये)

योजना	अनुमानित लागत
टेलीफोन सेवाएं	
स्थानीय टेलीफोन	35.0
ट्रंक टेलीफोन	6.0
ट्रंक केबल	8.6
तार-सेवाएं	2.0
अन्य प्रशासनों की मांगें	2.0
भवन-निर्माण	11.0
विविध	2.0
रेलों पर बिजली की व्यवस्था करने के लिए दूर-संचार-सुविधाएं ...	11.0
योग ...	77.6

74. **टेलीफोन-सेवाएं :** सन् 1950-51 में देश में टेलीफोनों की संख्या 1,68,000 थी, जो सन् 1955-56 में बढ़ कर 2,80,000 और सन् 1960-61 में बढ़ कर 4,60,000 हो गई। इसी प्रकार, पहली योजना में 1,12,000 नए टेलीफोन लगाए गए, जब कि दूसरी योजना में 1,80,000 नए टेलीफोन लगाए गए। तीसरी पंचवर्षीय योजना में 2,00,000 नए सीधे टेलीफोन लगाने की व्यवस्था है। इसके अलावा, परिचालित लाइनों को स्वचालित लाइनों में बदलने की भी व्यवस्था की गई है। कोई 45 नगरों में स्वचालित टेलीफोन-केन्द्र स्थापित किए जाएंगे तथा 32 नगरों के वर्तमान स्वचालित केन्द्रों को बढ़ाया जाएगा। जो नए टेलीफोन दिए जाएंगे, उनमें से बहुत-सारे 6 अंकोंवाले होंगे, जिनके लिए केन्द्रों में और उपकरणों की आवश्यकता पड़ेगी।

तीसरी योजना में ट्रंक-टेलीफोन-कार्यक्रम के अन्तर्गत दस स्वचालित ट्रंक-टेलीफोन-केन्द्र, कई परिचालित ट्रंक-टेलीफोन-केन्द्र और करीब 2,000 सार्वजनिक टेलीफोन-केन्द्र खोलने की व्यवस्था है। महत्वपूर्ण नगरों के बीच ट्रंक-टेलीफोनों की भारी मांग को पूरा करने के लिए सीधे टेलीफोन-से-टेलीफोन मिलाने की व्यवस्था करने का विचार है। कार्यक्रम का उद्देश्य ज़िला, सब-डिवीज़न और तहसील, आदि सभी महत्वपूर्ण प्रशासनिक सदर मुकामों में ट्रंक-टेलीफोनों का जाल बिछाना है। दिल्ली-कलकत्ता तथा दिल्ली-बम्बई के बीच को-एक्सियल केबल डालने की जो परियोजना दूसरी पंचवर्षीय योजना में शुरू की गई थी, उसे पूरा करने की व्यवस्था कर दी गई है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत बम्बई-मद्रास-कोयम्बटूर के बीच तथा बम्बई-नागपुर और दिल्ली-अमृतसर के बीच भी को-एक्सियल केबल डालने की व्यवस्था की गई है।

75. **तार-सेवाएं :** सन् 1950-51 में देश में तार-घरों की संख्या 3,600 थी, जो सन् 1955-56 में बढ़ कर 5,100 और फिर सन् 1960-61 में 6,450 हो गई। तीसरी योजना की अवधि में 2,000 तार-घर और खोलने की व्यवस्था की गई है। कार्यक्रम का एक उद्देश्य यह भी है कि सामान्य तार दिए जाने से लेकर उसे ठिकाने तक पहुंचाने में जो समय लगता है, उसे कम-से-कम किया जाए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह ज़रूरी हो गया है कि दूर-मुद्रक और टेप-रिले-जैसी आधुनिक युक्तियों का बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जाए, ताकि एक ही तार से कई बार न उलझना पड़े और धीरे-धीरे मोर्स-पद्धति खत्म की जा सके।

76. **डाक-सेवाएं :** सन् 1950-51 में देश में डाक-घरों की संख्या 36,000 थी, जो सन् 1955-56 में बढ़ कर 55,000 और सन् 1960-61 में 77,000 हो गई। आशा की जाती है कि तीसरी योजना की अवधि में इनकी संख्या में 17,000 की और वृद्धि होगी। पहली पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य था कि तहसील, तालुका और थाना-जैसे प्रत्येक प्रशासनिक सदर मुकाम के अतिरिक्त कई ऐसे गांवों को मिला कर उनमें डाक की सुविधाएं दी जाएं, जो दो मील के दायरे में हों और जिनकी कुल आबादी 2,000 हो, बशर्तेकि इस पर प्रति डाक-घर 750 रुपये वार्षिक से ज़्यादा नुक्सान न उठाना पड़े और उनसे तीन मील की दूरी तक कोई डाक-घर न हो। गांवों में डाक-घर खोलने की शर्तों में दूसरी योजना में कुछ ढील दे दी गई और कार्यक्रम का लक्ष्य यह निश्चित किया गया कि दो मील के दायरे में जो गांव बसे हों और जिनकी आबादी 2,000 हो, उनके बीच एक डाक-घर अवश्य हो। इसके अलावा, राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक परियोजना-खंड के हरेक सदर मुकाम में भी डाक-घर खोलने की व्यवस्था की गई थी,

बशर्तेकि उसमे वार्षिक हानि और किसी मौजूदा डाक-घर से दूरीवाली शर्तें पूरी होती हों। सन् 1959 मे सामुदायिक परियोजनाओं और राष्ट्रीय-विस्तार-सेवा-खंडों के सदर मुकामों मे और उन स्थानों पर, जहां जिला-बोर्ड या स्थानीय बोर्ड-द्वारा स्कूल चलाए जा रहे हों अथवा राज्य-सरकारों-द्वारा स्वीकृत स्कूल चलाए जा रहे हों, डाक-घर खोलने की शर्तों मे और ढील दे दी गई। ऐसी सभी जगहों पर डाक-घर खोलने के लिए दूरी की शर्त तीन मील से कम करके दो मील कर दी गई। तीसरी योजना की अवधि में, अगर जरूरी हुआ तो, नए डाक-घर खोलने की शर्तो में और ढील देने के सवाल पर विचार किया जाएगा ।

77. **अन्य योजनाएं :** डाक और तार-विभाग के कार्यक्रम के अन्तर्गत कलकत्ता और जबलपुर के वर्कशापों के विस्तार तथा बम्बई के वर्कशाप को नई जगह ले जाने की भी व्यवस्था है। तीसरी योजना की अवधि में विभाग की आवश्यकता को पूरा करने के लिए दफ्तरों की इमारतें बनाने और कर्मचारियों के लिए 5,000 क्वार्टर बनाने की भी व्यवस्था की गई है।

रेल-बिजलीकरण-कार्यक्रम के सिलसिले में विभाग दूर-सचार की सुविधाए भी देगा। इन सुविधाओं पर अनुमानतः 11 करोड़ रुपये खर्च होगे।

दूरमुद्रक-कारखाना

78. तीसरी योजना में दूरमुद्रकों के निर्माण के हेतु एक कारखाना खोलने के लिए 1.4 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। इटली के सहयोग से दिसम्बर 1960 मे 3 करोड़ रुपये की अधिकृत पूंजी से इस काम के लिए एक अलग कम्पनी बनाई गई। इस कम्पनी का नाम है, 'हिन्दुस्तान टेलीप्रिंटर्स लिमिटेड'। कारखाने में सन् 1961 से उत्पादन शुरू हो जाएगा और इस वर्ष कोई 170 दूरमुद्रक तैयार किए जाएंगे। धीरे-धीरे इसकी क्षमता बढ़ाई जाएगी और आशा की जाती है कि सन् 1963-64 तक 2,000 से अधिक मशीनें तैयार करने का लक्ष्य प्राप्त हो जाएगा। धीरे-धीरे लगभग चार-पांच साल के भीतर मशीनों में सभी पुर्जे भी देशी लगाए जान लगेंगे।

भारतीय टेलीफोन-उद्योग

79. दूसरी पचवर्षीय योजना की अवधि में भारतीय टेलीफोन-उद्योग अपनी क्षमता को काफी बढ़ाने मे समर्थ हुआ है। दूसरी योजना के शुरू होने के समय विनिमय-लाइनों का उत्पादन 30,000 था; सन् 1960 में यह बढ़ कर 78,000 हो गया और इसी अवधि में टेलीफोन-उपकरणों का उत्पादन करीब 50,000 से बढ़ कर 1,20,000 हो गया। इसके अतिरिक्त सन् 1960-61 में कारखाने में कोई 64 लाख रुपये मूल्य के संचारण के सामान भी तैयार किए गए। फिर भी, तीसरी योजना में देश में टेलीफोन-व्यवस्था के विस्तार का जो लक्ष्य स्थिर किया गया है, उसको देखते हुए कारखाने की क्षमता—विशेषतः संचारण-उपकरणों के निर्माण के सन्दर्भ में—अपर्याप्त ही है। तीसरी योजना में भारतीय टेलीफोन-उद्योग के विकास-कार्यक्रमों पर कोई 2.8 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे। इससे तीसरी योजना के अन्त तक इस उद्योग में प्रतिवर्ष 1,00,000 विनिमय-लाइनें और 1,60,000 टेलीफोन-उपकरण तैयार होने लगेंगे। योजना की अवधि में संचारण-उपकरण तैयार करने की क्षमता काफी बढ़ाने का विचार है।

समुद्रपार-संचार-सेवा

80. जब पहली योजना शुरू हुई थी, तब भारत का जिन देशों से सीधे रेडियो-तार, टेलीफोन और टेलीफोटो-व्यवस्था-द्वारा सम्बन्ध था, उनकी संख्या क्रमशः 7, 2 और 2 थी। पहली दो योजनाओं के अन्तर्गत हाथ में लिए गए विस्तार-कार्यक्रमों के फलस्वरूप इस तरह के देशों की संख्या बढ़ कर क्रमशः 23, 23 और 9 हो गई। तीसरी योजना के लक्ष्य प्रत्येक केन्द्र में स्वतन्त्र संचारण-परिपथों की संख्या के रूप में निश्चित किए गए हैं, जो नीचे की तालिका में दिए जा रहे हैं :

तालिका-संख्या 15

तीसरी योजना में समुद्रपार-संचार-सेवा-केन्द्रों के लक्ष्य

(संख्या)

केन्द्र	रेडियो-संचारण-परिपथ		टेलीफोन-संचारण-परिपथ	
	1-9-60 को	31-3-66 तक	1-9-60 को	31-3-66 तक
बम्बई	10	12	3	4
कलकत्ता	7	9	2	3
नई दिल्ली	4	9	1	2
मद्रास	1	1	1	1

इस व्यवस्था को अधिक कुशल बनाने और गति देने के लिए गलतियों को पकड़नेवाली आधुनिक स्वचालित युक्तियों की अधिकाधिक पैमाने पर शुरुआत करने तथा लीज्ड चैनल और टेलेक्स-सर्विस का विकास करने की भी व्यवस्था की गई है। अन्तर्राष्ट्रीय संचार की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को देखते हुए और इस व्यवस्था में विस्तार होने से विदेशी मुद्रा के खर्च में काफी बचत होने की आशा से समुद्रपार-संचार से सम्बद्ध कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी गई है।

ऋतु-विज्ञान

81. भारतीय ऋतु-विज्ञान-विभाग विभिन्न उद्देश्यों के लिए मौसम की आवश्यक जानकारी प्रदान करता है—जैसे, नागरिक तथा सैनिक उड्डयन, व्यापारिक और नौसैनिक जहाजरानी, संचार-सेवाओं, कृषि और सार्वजनिक स्वास्थ्य-सेवाओं, आदि के लिए। दूसरी योजना के दौरान सौर, नक्षत्रीय और रेडियो-खगोल के क्षेत्र में कोडाइकनाल-वेधशाला की गतिविधियों का विस्तार किया गया। दिल्ली की भूकम्प-वैज्ञानिक वेधशाला एक नई इमारत में ले जाई गई और इसमें पूर्णतः नए भूकम्पमापी यन्त्र लगाए गए। पोर्टब्लेयर में भी एक भूकम्प-वैज्ञानिक वेधशाला खोली गई। दूसरी योजना के अन्तर्गत शुरू किए गए अन्य कार्यक्रमों में से त्रिवेन्द्रम और अन्नमलइनगर में खोली गई दो क्षेत्र-चुम्बकीय वेधशालाओं तथा रेडियो-ऋतु-विज्ञान, मौसम-विज्ञान और कृषि-ऋतु-विज्ञान के विकास और आधुनिकीकरण का उल्लेख किया जा सकता है।

82. तीसरी पंचवर्षीय योजना में प्रमुख वेधशालाओं में उपकरणों के आधुनिकीकरण

के साथ-साथ और प्रगति की जाएगी। आधुनिक विद्युदणु-उपकरणों से लैस 18 और केन्द्र चालू करके रावित रेडियो-सोन्दे केन्द्रों के जाल को अधिक उन्नत करने का विचार है, ताकि देश में जेट विमानों की ऊंची उड़ानों के लिए पूर्व-सूचनाएं देने के वास्ते हवा की ऊपरी परतों के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सके और हवाई अड्डों में तूफानों का पता लगाने-वाले रैडार भी लगाए जाएंगे। उत्तरी गोलार्द्ध की ऋतु-सम्बन्धी जानकारी एकत्र करने तथा उसके अध्ययन और प्रसार के लिए नई दिल्ली में एक उत्तरी गोलार्द्ध-सम्बन्धी एकत्रण तथा विश्लेषण-केन्द्र खोलने का विचार है। कर्मचारियों को रेडियो-ऋतु-विज्ञान का प्रशिक्षण देने के लिए नई दिल्ली में एक प्रशिक्षण-केन्द्र भी खोला जाएगा। उष्ण देशीय ऋतु-विज्ञान के प्रशिक्षण और उच्च अनुसन्धान के लिए पूना में एक उष्णदेशीय ऋतु-विज्ञान-संस्थान खोला जाएगा। विभाग की मूल उपकरण-सम्बन्धी मांग को पूरा करने के लिए 2 करोड़ रुपये की और निर्माण-कार्य के लिए 1 करोड़ रुपये की व्यवस्था कर दी गई है।

बेतार-आयोजन और समन्वय

83. बेतार-आयोजन और समन्वय के दो मुख्य काम हैं। पहला काम है, 'आवृति-प्रबन्धन'—यानी, पहले ही से जो आवृत्तियां (फ्रीक्वेन्सीज) देश की बेतार-सेवा के लिए उपलब्ध है, उनकी रक्षा करना और नए खाली वर्णपटों का पता लगाना जो भारत की तेजी से विकासशील बेतार-व्यवस्था के लिए उपयोग में लाए जा सकते हों। दूसरे काम का मुख्य सम्बन्ध इंडियन वायर टेलीग्राफी ऐक्ट और अन्तर्राष्ट्रीय दूर-संचार-अभिसमय और नियमनों के परिचालन और क्रियान्विति से है। तीसरी पंचवर्षीय योजना में जो रकम रखी गई है, वह मानीटरिंग-स्टेशन खोलने तथा वर्तमान मानीटरिंग स्टेशनों का विस्तार करने और उनके लिए साज़-सामान खरीदने के लिए है।

प्रसारण

84. गत दस वर्षों में प्रसारण के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है। पहली पंचवर्षीय योजना मे हर भाषा-क्षेत्र में कम-से-कम एक प्रसारण-केन्द्र की व्यवस्था अवश्य कर दी गई थी। इस प्रकार, पहली योजना में इनकी कुल संख्या 26 थी। दूसरी योजना के अन्त में इनकी संख्या बढ़ा कर 28 कर दी गई। दूसरी पंचवर्षीय योजना में विकास-कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य यह था कि मुख्य रूप से आन्तरिक शार्ट-वेव प्रेषित्रों के द्वारा उपलब्ध सेवाओं का विस्तार, ज्यादा-से-ज्यादा जितने क्षेत्र में किया जा सकता हो, किया जाए और विदेशों के लिए होनेवाले प्रसारणों की व्यवस्था को मज़बूत बनाया जाए। तीसरी पंचवर्षीय योजना में उद्देश्य यह है कि मीडियम-वेव प्रसारण-सेवाओं का विस्तार करके और कार्यक्रमों को पहले रिकार्ड करने के प्रबन्ध में सुधार करके देश के लिए किए जानेवाले प्रसारणों को अधिक कारगर बनाया जाए। तीसरी पंचवर्षीय योजना में विदेशीय प्रसारण-व्यवस्था में और सुधार करने का भी प्रबन्ध किया गया है।

85. तीसरी योजना में प्रसारण-विकास के जो कार्यक्रम शामिल किए गए है, उन पर अनुमानतः लगभग 11 करोड़ रुपये की लागत आएगी। कार्यक्रम के अन्तर्गत जो विभिन्न योजनाएं शामिल की गई है, उनका ब्योरा अगले पृष्ठ पर दिया गया है।

तालिका-संख्या 16

तीसरी योजना के प्रसारण-कार्यक्रमों का अलग-अलग ब्योरा

योजना	व्यवस्था (लाख रुपये)
दूसरी योजना के कार्यक्रमों को आगे बढ़ाना (मीडियम वेव-सम्बन्धी कार्यक्रमों में से जो-कुछ बच रहा है, वह भी इसमें शामिल है)	442
मीडियम वेव-सेवाओं का विस्तार	148
रिकार्ड करने और पार्श्व-संगीत के उपकरणों की व्यवस्था	91.5
यन्त्रादि को बदलना	40.5
टेलीविज़न-केन्द्र, बम्बई	40
सामुदायिक रेडियो-श्रवण-योजना	40
अन्य योजनाएं, जिनमें कर्मचारियों के लिए क्वार्टर बनाने और अनुसन्धान, आदि की योजनाएं भी शामिल हैं	94
विदेशों के लिए प्रसारण-सेवाएं	200
योग ...	1,096

इन प्रस्तावों को तैयार करते समय देशीय प्रसारण-सेवाओं को सबसे अधिक प्राथमिकता दी गई थी। अन्तर्राष्ट्रीय करारों के कारण यह काम जल्दी-से-जल्दी पूरा करना ज़रूरी हो गया। इसलिए विस्तार-कार्यक्रम दूसरी-योजना में शुरू किया गया और तीसरी योजना में इसे पूरा करने का विचार है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत देश के विभिन्न भागों में मीडियम-वेव के 55 और शार्ट-वेव के 2 प्रेषित्र लगाए जाएंगे। इसका उद्देश्य मुख्यतः यह है कि मौजूदा केन्द्रों की परधि में वे क्षेत्र भी आ जाएं, जहां अब तक कोई व्यवस्था नहीं है और इसके साथ ही शहरी श्रोताओं को सुगम संगीत के कार्यक्रम भी विकल्प के रूप में सुनने को मिल सकें। इसका नतीजा यह होगा कि अभी तो मीडियम-वेव की देशीय प्रसारण-व्यवस्था की परिधि में देश के कुल क्षेत्र का 37 प्रतिशत भाग आता है और कुल आबादी के 55 प्रतिशत लोग आते हैं, पर विस्तार हो जाने पर 61 प्रतिशत क्षेत्र और 74 प्रतिशत आबादी उसकी परिधि में आ जाएगी।

कुछ स्थानों को छोड़ कर और कहीं नए स्टूडियो या स्वतन्त्र कार्यक्रम की व्यवस्था करने का विचार नहीं है, लेकिन वर्तमान केन्द्रों के कार्यक्रमों को टेप पर पहले ही रिकार्ड कर नए प्रेषित्रों पर पुनः प्रसारित कर दिया जाया करेगा, जो एक तरह से सहायक या गौण प्रसारण के रूप में होगा। इसलिए इन प्रस्तावों में सभी केन्द्रों में टेप-रिकार्ड करने, पार्श्व-संगीत और कार्यक्रमों को फिर से प्रसारित करने के उपकरण उपलब्ध और संस्थापित करने का व्यापक कार्यक्रम शामिल है।

86. आकाशवाणी के कार्यक्रम की प्रमुख बात मीडियम-वेव के विस्तार तथा सम्बद्ध टेप-रिकार्ड-व्यवस्था की योजना होगी, परन्तु साथ ही कार्यक्रम में कुछ अन्य योजनाएं भी शामिल हैं—जैसे, गांवों में सामुदायिक रेडियो-श्रवण की सुविधाओं का विस्तार, बम्बई में एक टेलीविज़न केन्द्र की स्थापना (यह दिल्ली की छोटी सी शैक्षणिक टेलीविज़न-

टुकड़ी के अलावा होगा), इंजीनियरी-अनुसन्धान और विदेशी सेवाओं का उन्नयन, आदि। आशा है कि आकाशवाणी के सामुदायिक रेडियो-श्रवण की व्यवस्था के अन्तर्गत तीसरी योजना में 32,000 नए रेडियो-सेट लगाए जा सकेंगे। इनके अलावा, सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत और भी रेडियो-सेट लगाए जाएंगे। आकाशवाणी के सामुदायिक रेडियो-श्रवण-कार्यक्रम और सामुदायिक विकास-मन्त्रालय के कार्यक्रम के बीच ताल-मेल पैदा करने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं।

विदेशों के लिए प्रसारण-सेवाओं के कार्यक्रम पर अनुमानतः 2 करोड़ रुपये खर्च होंगे और इसमें इन सेवाओं को सुदृढ़ बनाने के लिए पांच और शार्ट-वेव प्रेषित्र लगाने की व्यवस्था की गई है।

अध्याय 29

शिक्षा

शिक्षा और राष्ट्रीय विकास

आर्थिक क्षेत्र में तेज़ी से विकास करने, टेक्नोलाजी के क्षेत्र में उन्नति करने तथा स्वतन्त्रता, सामाजिक न्याय और समान अवसर के सिद्धान्त पर आधारित समाज-व्यवस्था की स्थापना के लिए यदि कोई एक तत्व सबसे महत्वपूर्ण है, तो वह शिक्षा है। समान नागरिकता के बन्धनों को दृढ़ करने, लोगों की शक्ति का पूरा-पूरा उपयोग करने और देश के हर क्षेत्र के प्राकृतिक और मानवीय साधनों का विकास करने के प्रयत्नों की नींव है, शिक्षा-कार्यक्रम। पिछले दस वर्षों में जो-कुछ काम हुआ है, उससे आर्थिक उन्नति की प्रक्रिया ने गति पकड़ी है। फिर भी, शिक्षा के क्षेत्र में बहुत-सारी कमियां हैं और अगर हमें अपनी उन्नति को स्थायी बनाना है तथा निरन्तर उन्नति करनी है, तो इन कमियों को जल्दी-से-जल्दी दूर करना होगा। शिक्षा के प्रयत्नों को विस्तृत करना और गति देना तथा हर घर को उसकी परिधि में समेटना तीसरी योजना के प्रमुख लक्ष्यों में से एक है। इस तरह, भविष्य में राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक अंग में शिक्षा सुयोजित विकास का केन्द्रबिन्दु बन जाएगी।

2. तीसरी योजना के अन्तर्गत सामान्य शिक्षा के क्षेत्र में—तकनीकी शिक्षा की बात यहां नहीं की जा रही—सबसे ज़्यादा ज़ोर इन बातों पर दिया जाएगा : 6 से 11 वय-वर्ग के सभी बच्चों की शिक्षा के लिए सुविधाएं देना, माध्यमिक और विश्वविद्यालय-स्तर पर विज्ञान की शिक्षा का विस्तार करना और उसमें सुधार लाना, सभी स्तरों पर व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा का विकास करना, शिक्षा के हर स्तर के अध्यापकों के लिए प्रशिक्षण-सुविधाओं का विस्तार और सुधार करना तथा वज़ीफे, छात्रवृत्तियां और दूसरी तरह की अधिकाधिक सहायता देना। लड़कियों की शिक्षा पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाएगा और लड़कियों तथा लड़कों की शिक्षा के विकास के स्तरों में आज जो विषमता है, उसे काफी हद तक दूर कर दिया जाएगा। सभी प्राथमिक विद्यालयों को 'बुनियादी' ढांचे में ढाला जाएगा, विश्वविद्यालय-शिक्षा को तीन-वर्षीय डिग्री-पाठ्यक्रम के अनुरूप व्यवस्थित करने का काम पूरा किया जाएगा, एवं स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम और शोध-कार्य की सुविधाओं को बढ़ाया जाएगा तथा उनमें सुधार किए जाएंगे। शिक्षा के हर स्तर पर लक्ष्य यह होना चाहिए कि विद्यार्थियों में कुशलता, ज्ञान और रचनात्मक दृष्टिकोण जागे—एक ऐसी राष्ट्रीय एकता की भावना पैदा हो, जो प्रदेश, जाति और भाषा-विषयक विवादों से ऊपर रहे और समान हितों तथा दायित्वों की समझ पैदा हो।

उपलब्धियां और लक्ष्य

3. सन् 1951-61 के दस वर्षों में विद्यार्थियों की संख्या 2 करोड़ 35 लाख से बढ़ कर 4 करोड़ 35 लाख हो गई है। 6–11 वय: वर्ग के विद्यार्थियों की संख्या में 79 प्रतिशत की, 11–14 वय-वर्ग के विद्यार्थियों में 102 प्रतिशत की और 14–17 वय-वर्ग के विद्यार्थियों में 139 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। विद्यालय जानेवाले इन वय-वर्गों के बच्चों का अनुपात

बढ़कर क्रमशः 43 से 61, 13 से 23 और 5 से 12 प्रतिशत हो गया है। तीसरी योजना के दौरान विद्यालयों के छात्रों की कुल संख्या में 2 करोड़ 4 लाख की वृद्धि होने की आशा है— 6–11 वय-वर्ग में 1 करोड़ 53 लाख, 11–14 वय-वर्ग में 35 लाख और 14–17 वय-वर्ग में 16 लाख। नीचे की तालिका में पिछली दो योजनाओं की प्रगति और तीसरी योजना मे सम्भावित वृद्धि दिखाई गई है :

तालिका-संख्या 1

विद्यालय जानेवाले बच्चों की संख्या

(आंकड़े लाख में दिए गए हैं)

स्तर और वय-वर्ग	1950-51	1955-56	(सम्भावित उपलब्धि) 1960-61	(लक्ष्य) 1965-66
प्राथमिक (6–11)				
भरती	191.5	251.7	343.4	496.4
वय-वर्ग का प्रतिशत अनुपात	42.6	52.9	61.1	76.4
माध्यमिक (11–14)				
भरती	31.2	42.9	62.9	97.5
वय-वर्ग का प्रतिशत अनुपात	12.7	16.5	22.8	28.6
उच्चतर माध्यमिक (14–17)				
भरती	12.2	18.8	29.1	45.6
वय-वर्ग का प्रतिशत अनुपात	5.3	7.8	11.5	15.6
योग (6–17)				
भरती	234.9	313.4	435.4	639.5
वय-वर्ग का प्रतिशत अनुपात	25.4	32.1	39.9	50.1

4. पहली दो योजनाओं के दौरान विद्यालयों की संख्या में 73 प्रतिशत की वृद्धि हुई, यानी उनकी संख्या 2,30,555 से बढ़ कर 3,98,200 हो गई। अलग-अलग हिसाब लगाएं तो प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में 63 प्रतिशत की, माध्यमिक विद्यालयों की संख्या में 191 प्रतिशत की और उच्च विद्यालयों की संख्या में 128 प्रतिशत की वृद्धि हुई। प्रारम्भिक स्तर पर बुनियादी शिक्षा के क्षेत्र में हुई प्रगति की झलक जूनियर बुनियादी विद्यालयों और सीनियर बुनियादी विद्यालयों के बढ़े हुए अनुपात में मिलती है। जूनियर बुनियादी विद्यालयों का अनुपात 16 से बढ़ कर 29 प्रतिशत और सीनियर बुनियादी विद्यालयों का अनुपात 3 से बढ़ कर 30 प्रतिशत हो गया है। उच्चतर माध्यमिक शिक्षा को फिर से व्यवस्थित करने के सिलसिले में मुख्य रूप से ये काम हुए हैं: उच्च विद्यालयों को उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में बदला गया है; ऐसे बहूद्देश्यीय विद्यालयों की स्थापना की गई है, जिनमें पाठ्यक्रमों की विविधता है; और सामान्य विज्ञान के तथा वैकल्पिक विषय के रूप में विज्ञान के शिक्षण के लिए सुविधाओं का विस्तार किया गया है। सन् 1957-59 में जो अखिल भारतीय शैक्षणिक सर्वेक्षण हुआ, उससे यह बात स्पष्ट हो गई है कि शिक्षा-संस्थाओं के वितरण में अनेक त्रुटियां हैं। फलतः देश-भर का हिसाब लगा कर देखें, तो सन् 1957 में करीब 29

प्रतिशत गांवों के लिए और गांवों की लगभग 17 प्रतिशत आबादी के लिए विद्यालयों की कोई व्यवस्था न थी। कुछ राज्यों में तो ये अनुपात और भी अधिक थे।

पहली दो याजनाओं की अवधि में नए विद्यालय स्थापित करने के क्रम में, प्राथमिक विद्यालयों की अपेक्षा माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के मामले में अधिक प्रगति हुई। तीसरी योजना के दौरान जब 6–11 वय-वर्ग के सभी बच्चों के लिए शिक्षा-सुविधाओं की व्यवस्था हो जाएगी, तब यह प्रवृत्ति काफी हद तक सुधर जाएगी। इस योजना में 73,000 नए प्राथमिक विद्यालय, 18,100 नए माध्यमिक विद्यालय और 5,200 उच्च विद्यालय खोलने का विचार किया गया है। इस तरह, देश में विद्यालयों की कुल संख्या लगभग 4,94,500 हो जाएगी, यानी लगभग 24 प्रतिशत बढ़ जाएगी। नीचे की तालिका में दिखाया गया है कि पहली दोनों योजनाओं में नए विद्यालय खोलने की दिशा में कितनी प्रगति हुई और तीसरी योजना का क्या कार्यक्रम है :

तालिका-संख्या 2

विद्यालयों की संख्या

शीर्षक	1950-51	1955-56	(सम्भावित उपलब्धि) 1960-61	(लक्ष्य) 1965-66
प्राथमिक विद्यालय (जूनियर बुनियादी विद्यालय-समेत)	2,09,671	2,78,135	3,42,000	4,15,000
जूनियर बुनियादी विद्यालय	33,379	42,971	1,00,000	1,53,000
माध्यमिक विद्यालय (सीनियर बुनियादी विद्यालय-समेत)	13,596	21,730	39,600	57,700
सीनियर बुनियादी विद्यालय	351	4,842	11,940	16,700
उच्च और उच्चतर माध्यमिक विद्यालय	7,288	10,838	16,600	21,800
उच्चतर माध्यमिक विद्यालय	47	503	3,121	6,390
बहूद्देश्यीय विद्यालय	—	255	2,115	2,446
माध्यमिक विद्यालय, जिनमें वैकल्पिक विषय के रूप में विज्ञान पढ़ाया जाता है	—	—	4,625	9,579

5. सन् 1951-61 के 10 वर्षों में प्रशिक्षित शिक्षकों का अनुपात प्राथमिक विद्यालयों में 59 से बढ़ कर 65, माध्यमिक विद्यालयों में 53 से बढ़ कर 65 और उच्च विद्यालयों में 54 से बढ़ कर 68 प्रतिशत हो गया है। इन आंकड़ों से पता चलता है कि प्रशिक्षित शिक्षकों की व्यवस्था करने के क्षेत्र में उचित पैमाने पर, प्रगति नहीं हुई। तीसरी योजना में इस सम्बन्ध में सघन ढंग से काम किया जाएगा, जिसके फलस्वरूप आशा की जाती है कि हर श्रेणी के प्रशिक्षित शिक्षकों का अनुपात बढ़कर 75 प्रतिशत हो जाएगा। प्रशिक्षण-संस्थाओं और प्रशिक्षित शिक्षकों की संख्या में वृद्धि का विवरण अगले पष्ठ की तालिका में दिया गया है।

तालिका-संख्या 3

प्रशिक्षित शिक्षक और प्रशिक्षण-संस्थाएं

शीर्षक	1950-51	1955-56	(सम्भावित उपलब्धि) 1960-61	(लक्ष्य) 1965-66
प्रशिक्षण संस्थाएं :				
प्रशिक्षण-विद्यालय	782	930	1,307	1,424
प्रशिक्षण-कालेज	53	107	236	312
शिक्षक :				
प्राथमिक विद्यालय				
कुल शिक्षक	5,37,918	6,91,249	9,10,000	12,66,000
प्रशिक्षित शिक्षक	3,16,124	4,23,192	5,91,500	9,49,500
प्रशिक्षित शिक्षको का प्रतिशत अनुपात	58.8	61.2	65	75
माध्यमिक विद्यालय				
कुल शिक्षक	85,496	1,48,394	2,30,000	3,60,000
प्रशिक्षित शिक्षक	45,569	86,810	1,49,500	2,70,000
प्रशिक्षित शिक्षकों का प्रतिशत अनुपात	53.3	58.5	65	75
उच्च और उच्चतर माध्यमिक विद्यालय				
कुल शिक्षक	1,26,504	1,89,794	2,29,000	2,90,000
प्रशिक्षित शिक्षक	68,059	1,13,307	1,55,720	2,17,500
प्रशिक्षित शिक्षकों का प्रतिशन अनुपात	53.8	59.7	68	75

विचार यह है कि राज्यो ने इस समय प्रशिक्षित शिक्षको के बारे मे जो लक्ष्य निर्धारित किए है, उन्हे अस्थायी समझा जाए और उनमें वृद्धि करने की भरसक कोशिश की जाए ।

6 विश्वविद्यालयों और कालेजों में विद्यार्थियों की संख्या बहुत बढ़ गई है । कला, विज्ञान और वाणिज्य के पाठ्यक्रमो मे भरती होनेवाले छात्रों की कुल संख्या सन् 1950-51 में 3,60,000 थी, जो सन् 1955-56 में बढ कर 6,34,000 और सन् 1960-61 मे लगभग 9,00,000 हो गई । दूसरी योजना की अवधि में देश-भर मे विज्ञान पढ़नेवाले विद्यार्थियों की संख्या 33 प्रतिशत से बढ कर लगभग 36 प्रतिशत हो गई । कुछ राज्यों मे प्रगति काफी अच्छी हुई, पर कुछ राज्य ऐसे भी है, जो अभी इस दृष्टि से काफी पीछे है । तीसरी योजना में यह तय किया गया है कि विश्वविद्यालय के स्तर पर लगभग 4,00,000 विद्यार्थियों की जो वृद्धि हो, उसमें से लगभग 60 प्रतिशत विज्ञान की कक्षाओं में होनी चाहिए । इस तरह विज्ञान के पाठ्यक्रम में प्रवेश लेनेवाले छात्रों का अनुपात बढ़ कर 42 प्रतिशत हो जाएगा । पहली दोनों योजनाओं में विश्वविद्यालय-स्तर पर कला, विज्ञान और वाणिज्य की

शिक्षा में जो प्रगति हुई, उसका विवरण तथा तीसरी योजना के प्रस्तावित लक्ष्य नीचे की तालिका में दिए गए हैं :

तालिका-संख्या 4

छात्रों की भरती और शिक्षण-संस्थाएं

(संख्याएं हज़ार में)

शीर्षक	1950-51	1955-56	(सम्भावित उपलब्धि) 1960-61	(लक्ष्य) 1965-66
विश्वविद्यालय-स्तर, वय-वर्ग 17—23				
भरती	360	634	900	1,300
वय-वर्ग का प्रतिशत	0.9	1.5	1.8	2.4
विज्ञान की कक्षाओं में भरती	140	210	323	553
कुल भरती के सन्दर्भ में विज्ञान की कक्षाओं में भरती का प्रतिशत अनुपात	38.1	33	35.8	42.5
संस्थाएं				
कला, विज्ञान और वाणिज्य के कालेज (संख्या)	542	772	1,050	1,400
विश्वविद्यालय (संख्या)	27	32	46	58

व्यय

7. शिक्षा पर पहली योजना में कुल मिला कर 153 करोड़ रु० और दूसरी योजना में 256 करोड़ रु० खर्च हुए। इसमें इंजीनियरी और टेक्नोलाजी की शिक्षा पर होनेवाला खर्च भी शामिल है। तीसरी योजना में जो कार्यक्रम शामिल किए गए हैं, उन पर कुल मिलाकर 560 करोड़ रु० खर्च होने का अनुमान है। इंजीनियरी और टेक्नोलाजी की शिक्षा से सम्बन्धित कार्यक्रमों से—जिनका विवरण अगले अध्याय में दिया गया है—भिन्न कार्यक्रमों पर पहली योजना में 133 करोड़ रु० और दूसरी योजना में 208 करोड़ रु० खर्च किए गए, जब कि तीसरी योजना में इन कार्यक्रमों पर 418 करोड़ रु० के व्यय का अनुमान है। इसमें से 10 करोड़ रु० सांस्कृतिक कार्यक्रमों पर खर्च किए जाएंगे।

अगली तालिका में पहली, दूसरी तथा तीसरी योजनाओं के अधीन सामान्य शिक्षा के कार्यक्रमों पर व्यय किस प्रकार हुआ है और होगा, इसका ब्योरा दिया गया है।

तालिका-संख्या 5

व्यय का विवरण

उपशीर्षक	धन-राशि (करोड़ रु०)			प्रतिशत अनुपात		
	पहली योजना	दूसरी योजना	तीसरी योजना	पहली योजना	दूसरी योजना	तीसरी योजना
प्रारम्भिक शिक्षा	85	87	209	63.9	41.9	50
माध्यमिक शिक्षा	20	48	88	15.1	23.1	21.1
विश्वविद्यालय-शिक्षा	14	45	82	10.5	21.6	19.6
अन्य कार्यक्रम						
सामाजिक शिक्षा	—	4	6	—	1.9	1.4
शारीरिक शिक्षा और युवा-कल्याण	14	10	12	10.5	4.8	2.9
अन्य	—	10	11	—	4.8	2.6
योग	133	204	408	100	98.1	97.6
सांस्कृतिक कार्यक्रम	*	4	10	—	1.9	2.4
सर्वयोग	133	208	418	100	100	100

'शिक्षा' की मदद में जितनी धन-राशि का प्रबन्ध किया गया है, उसके अतिरिक्त 37 करोड़ रु० की व्यवस्था सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत तथा 42 करोड़ रु० की व्यवस्था पिछड़ी जातियों के कल्याण-कार्यक्रम के अन्तर्गत होने की आशा है। इस तरह, तीसरी योजना में कुल मिला कर सामान्य शिक्षा के लिए 497 करोड रु० की व्यवस्था हो जाएगी, जब कि दूसरी योजना में कुल 250 करोड़ रु० की ही व्यवस्था की गई थी।

8. दूसरे क्षेत्रों की भांति शिक्षा के क्षेत्र में भी हर योजना में जो व्यवस्थाएं की जाती हैं, वे उन साधनों के अलावा है, जो पिछली योजना के अन्त तक स्थापित की गई संस्थाओं को चलाने के लिए उपलब्ध करने होते हैं; गैर-सरकारी सूत्रों से जो मदद मिलती है, उससे भी इनका कोई ताल्लुक नहीं है। अनुमान है कि तीसरी योजना की अवधि में शिक्षा-संस्थाओं के संचालन के लिए कुल मिला कर लगभग 700 करोड़ रु० खर्च करने होंगे, जब कि दूसरी योजना में कुल 375 करोड़ रु० ही खर्च हुए थे। गैर-सरकारी क्षेत्रों के योगदान को सही-सही आंकना मुश्किल है। पिछले दस वर्षों में यह योगदान 50 करोड़ रु० के आसपास से बढ कर करीब 90 करोड़ रु० प्रति वर्ष हो गया है। तीसरी योजना के दौरान, चूंकि प्रारम्भिक शिक्षा की जिम्मेदारी पंचायतों और पंचायत-समितियों पर डाल दी गई है तथा नगर-निगमों और नगर-पालिकाओं-द्वारा अधिक प्रयत्न किए जा रहे हैं, इसलिए आशा है कि गैर-सरकारी क्षेत्रों का योगदान बढ़ कर 120-130 करोड़ रु० प्रति वर्ष हो जाएगा।

*** पहली योजना में सांस्कृतिक कार्यक्रमों पर होनेवाला व्यय 'अन्य कार्यक्रम' के अन्तर्गत शामिल कर लिया गया था।**

पूर्व-विद्यालय-शिक्षा

9. पूर्व-विद्यालय-शिक्षा की सुविधाओं के विस्तार की आवश्यकता पर बराबर अधिकाधिक ज़ोर दिया जा रहा है। अब तक इस दिशा में जो प्रगति हुई है, वह मुख्यत: स्वैच्छिक संस्थाओं के काम और कुल बालवाड़ियों की स्थापना पर निर्भर रही है। पूर्व-विद्यालय-कक्षाओं में भरती होनेवाले बच्चों की संख्या सन् 1950-51 में 28,000 थी, जो सन् 1955-56 में बढ़ कर 75,000 हो गई। अनुमान है कि अब यह संख्या लगभग 3,00,000 है। इस समय लगभग 5,000 बालवाड़ियां हैं। इनमें से प्राय: 2,500 को केन्द्रीय और राज्य-समाज-कल्याण-मंडलों-द्वारा सहायता दी जाती है। मौजूदा बालवाड़ियों में सुधार करने की ज़रूरत है और उनके लिए प्रशिक्षित बाल-सेविकाओं की व्यवस्था की जानी चाहिए। तीसरी योजना में बाल-सेविकाओं के लिए 6 प्रशिक्षण-केन्द्र खोलने का निश्चय किया गया है। सामुदायिक विकास तथा समाज-कल्याण-कार्यक्रमों के अन्तर्गत जो साधन उपलब्ध हैं, उनके अतिरिक्त शिक्षा के कार्यक्रम में बाल-कल्याण और इससे सम्बद्ध योजनाओं के लिए केन्द्र में 3 करोड़ रु० की ओर राज्यों में लगभग 1 करोड़ रु० की रकमें नियत की गई हैं। शिक्षा-मन्त्रालय अब बाल-कल्याण की जो योजनाएं तैयार कर रहा है, उनमें ये बातें शामिल हैं: मौजूदा बालवाड़ियों का सुधार, नई बालवाड़ियों की स्थापना, बाल-सेविकाओं के लिए प्रशिक्षण-कार्यक्रम का विस्तार और बाल-कल्याण की कई प्रायोगिक परियोजनाएं जिनमें शिक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण-कार्यों की समन्वित ढंग से व्यवस्था की जाएगी। सामुदायिक विकास-खंडों तथा कल्याण-विस्तार-परियोजनाओं में स्त्रियों और बच्चों के लिए जो कार्यक्रम शुरू किए जाएंगे, उनमें बच्चों की योजनाओं का--खास तौर से बालवाड़ियों की स्थापना का--महत्वपूर्ण स्थान रहेगा।

प्रारम्भिक शिक्षा

10. संविधान में 14 साल तक के सभी बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने की बात कही गई है। यह काम बहुत बड़ा है, इस बात को ध्यान में रख कर दूसरी योजना के शुरू में तय किया गया था कि इस दिशा में पहले कदम के तौर पर 6–11 वय-वर्ग के सभी बच्चों की शिक्षा के लिए सुविधाएं उपलब्ध की जाएं। यह तीसरी योजना के मुख्य लक्ष्यों में से एक है। इसके बाद चौथी और पांचवीं योजनाओं में वय-वर्ग 11–14 के सभी बच्चों के लिए शिक्षा का और विस्तार किया जाएगा। 6–11 वय-वर्ग के सभी बच्चों के लिए तीसरी योजना की अवधि में शिक्षा की सुविधाएं उपलब्ध करने के मार्ग में मुख्य समस्याएं निम्नलिखित कारणों से पैदा होती हैं:

(अ) लड़कियों को काफी संख्या में विद्यालयों में लाने में कठिनाई;

(आ) शिक्षा के क्षेत्र में कुछ इलाकों और आबादी के कुछ खास वर्गों का बेहद पिछड़ा होना; और

(इ) परिवार की आय बढ़ाने के योग्य होते ही मां-बाप-द्वारा बच्चों के विद्यालयों से उठा लिए जाने के कारण होनेवाली 'क्षति'। इसका नतीजा यह होता है कि आधे से अधिक बच्चे चौथी श्रेणी तक भी नहीं पहुंच पाते और इस तरह स्थायी साक्षरता नहीं प्राप्त कर पाते।

11. विद्यालय जानेवाले लड़कों और लड़कियों के अनुपात में अब भी बहुत बड़ा अन्तर है। सन् 1960-61 में, लगभग 80.5 प्रतिशत लड़के विद्यालय जा रहे थे, जब कि लड़कियों का अनुपात सिर्फ 40.4 प्रतिशत था। जिन राज्यों में पढ़नेवाली लड़कियों का अनुपात पूरे देश की औसत से बहुत कम हैं, उनके नाम ये है— राजस्थान (15 प्रतिशत), उत्तरप्रदेश (20 प्रतिशत), जम्मू और कश्मीर (21 प्रतिशत), मध्यप्रदेश (19 प्रतिशत), बिहार (27 प्रतिशत), उड़ीसा (24 प्रतिशत), और पंजाब (36 प्रतिशत)। प्राथमिक, माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक-स्तरों पर लड़कियों की शिक्षा की उन्नति करने के लिए क्या खास उपाय किए जाने चाहिए, इस सम्बन्ध में राष्ट्रीय स्त्री-शिक्षा-परिषद् ने बड़ी सावधानी से विचार किया है और कई सिफारिशें की हैं। इनमें ये बातें शामिल हैं— शिक्षिकाओं के लिए क्वार्टरों का इन्तज़ाम हो, ग्रामीण क्षेत्रों में काम करनेवाली शिक्षिकाओं को विशेष भत्ता दिया जाए, वयस्क स्त्रियों के लिए थोड़े समय के पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जाए, ताकि शिक्षिकाएं अधिक संख्या में मिल सकें, प्रशिक्षणाधीन अध्यापिकाओं को वज़ीफे दिए जाएं, उपस्थिति-पुरस्कार और छात्रवृत्तियां दी जाएं, सहशिक्षा-संस्थाओं में 'स्कूल-मदर' नियुक्त की जाएं तथा अन्य सुविधाओं की व्यवस्था की जाए। कुछ हद तक इसी तरह के प्रस्ताव राज्यों की योजनाओं में शामिल किए जा चुके हैं। सुझाव यह है कि इन योजनाओं में जो व्यवस्थाएं की गई हैं, उन पर जल्दी पुनर्विचार किया जाए और योजना के दूसरे वर्ष से विशेषतः उन सुविधाओं के विस्तार के लिए और कदम उठाए जाएं, जिनसे शिक्षिकाएं अधिक संख्या में उपलब्ध हो सकें और उन्हे ग्रामीण इलाकों में काम करने के लिए आकर्षित किया जा सके।

12. पिछड़े क्षेत्रों में शिक्षा-सुविधाओं की व्यवस्था करने की समस्या का एक अंग यह है कि संस्थाएं ऐसी जगह स्थित हों कि प्रायः हर बच्चा घर से विद्यालय तक का रास्ता आराम से पैदल तय कर सके। पहले जिस शिक्षा-सर्वेक्षण के निष्कर्षों की चर्चा की गई है, उनसे राज्यों को इस पहलू को ध्यान में रख कर नए विद्यालयों की योजना बनाने और उनकी अब स्थिति तय करने में सहायता मिलेगी। जहां बस्तियां बिखरी-बिखरी हों—जैसे, पहाड़ी इलाकों में— वहां कुछ खास कठिनाइयां स्पष्ट ही सामने आती है। ऐसी जगहों पर कुछ अतिरिक्त सुविधाएं देना आवश्यक होगा, भले ही कुछ अधिक खर्च करना पड़े।

13. मां-बाप की गरीबी के अलावा जिन परिस्थितियों के कारण 'क्षति' होती है, वे ये है : समुचित योग्यता-प्राप्त और प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव, दोषपूर्ण पाठ्यक्रम और मां-बाप-द्वारा शिक्षा के मूल्य का ठीक-ठीक न समझा जाना। इस 'क्षति' से एक और चीज़ का निकट सम्बन्ध है, वह है जड़ता। इसके कारण बच्चे एक वर्ष से अधिक समय तक एक ही कक्षा में रह जाते हैं। इस 'क्षति' और 'जड़ता' को घटाने के लिए ये कदम उठाए जाने चाहिए : शिक्षा को अनिवार्य बनाना, प्रशिक्षित और योग्यता-प्राप्त शिक्षकों की नियुक्ति करना, पढ़ाने के तरीके सुधारना, मां-बाप को इस बात का और अधिक अनुभव कराना कि उनके लिए अपने बच्चों को विद्यालय में रहने देना वांछनीय है, विद्यालयों में छुट्टियां फसलों की बुआई और कटाई के मौसम में करना।

14. 6–11 तक के वय-वर्ग के सभी बच्चों के लिए शिक्षा की व्यवस्था करने का कार्यक्रम इतने अधिक महत्व का है कि किसी भी राज्य में वित्तीय समस्याओं को उसके

सफल परिपालन के रास्ते में नहीं आने देना चाहिए। किन्तु इसके अलावा कुछ और परिसीमाएं भी हो सकती हैं, जिन्हें थोड़े अरसे में पार कर सकना कठिन हो— उदाहरण के लिए, आबादी के अपेक्षाकृत अधिक गरीब या पिछड़े हुए वर्गों पर अथवा कम उन्नत क्षेत्रों पर शिक्षा-आन्दोलन का असर पड़ने की मात्रा; सभी माता-पिताओं को अपनी लड़कियों को विद्यालय भेजने के लिए सहमत करने में लगनेवाला समय; स्थानीय लोगों-द्वारा शिक्षा-आन्दोलन को सफल बनाने में किया जानेवाला योगदान और उनकी उत्सुकता; शिक्षा-अधिकारियों को काफी संख्या में ऐसे शिक्षकों और शिक्षिकाओं की प्राप्ति, जो अपने कार्य-क्षेत्र के लोगों के बीच घुलमिल जाएं; और अन्त में, प्राथमिक विद्यालयों में काम करनेवाले शिक्षकों के लिए समुचित परिस्थितियां पैदा करने तथा उनमें भविष्य के लिए आशाएं जगाने के हेतु उठाए जानेवाले व्यावहारिक कदम। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए, अनुमान है कि तीसरी योजना के अन्त तक 90 प्रतिशत लड़के और लगभग 62 प्रतिशत लड़कियां विद्यालय जाने लगेंगी। इसमें 6–11 वय-वर्ग का प्रतिशत अनुपात कुल मिला कर 76 होगा। जैसा कि नीचे की तालिका से स्पष्ट है, तीसरी योजना के दौरान लगभग 1 करोड़ 53 लाख और बच्चे विद्यालय जाना शुरू कर देंगे, जिनमें से लगभग 86 लाख लड़कियां होंगी :

तालिका-संख्या 6

6-11 वय-वर्ग के विद्यार्थी

वर्ष	पहली से पांचवीं कक्षाओं तक भरती (लाख)			6-11 वय-वर्ग की कुल संख्या का प्रतिशत अनुपात		
	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां	योग
1950-51	137.7	53.8	191.5	59.8	24.6	42.6
1955-56	175.3	76.4	251.7	70.3	32.4	52.9
1960-61	233.8	109.6	343.4	80.5	40.4	61.1
1965-66	301.2	195.2	496.4	90.4	61.6	76.4

विभिन्न राज्यों के विकास-स्तरों का अन्तर कुछ हद तक तो कम होगा, फिर भी काफी बना रहेगा। इस अध्याय के अनुबन्ध 1 में दिए गए विभिन्न राज्यों के लक्ष्यों को देखने पर यह अन्तर स्पष्ट हो जाएगा।

15. **माध्यमिक शिक्षा (11-14 वर्ष)** : सन् 1951-61 के दस वर्षों में 11–14 वय-वर्ग के बच्चों की संख्या दुगुनी और लड़कियों की संख्या लगभग तिगुनी हो गई। फिर भी, इस दशक के अन्त में विद्यालय जानेवाले लड़कों की संख्या जहां 34 प्रतिशत थी, वहां लड़कियों की केवल 11 प्रतिशत थी। तीसरी योजना में यह तय किया गया है कि विद्यालय जानेवाली लड़कियों की संख्या अब से दुगुनी हो जानी चाहिए, जब कि इस वय-वर्ग में कुल वृद्धि केवल 54 प्रतिशत की ही प्रत्याशित है। इसके बाद भी इस वय-वर्ग में विद्यालय जानेवाले लड़कों और लड़कियों के बीच विषमता काफी अधिक रहेगी, क्योंकि इस वय-वर्ग के विद्यालय जानेवाले लड़कों का अनुपात तो 40 प्रतिशत हो जाएगा, परन्तु लड़कियों

का अनुपात 17 प्रतिशत से भी कम रहेगा। नीचे की तालिका में पहली, दूसरी और तीसरी योजनाओं में छठी से आठवीं कक्षा तक लड़कों और लड़कियों की भरती का विवरण दिया जा रहा है :

तालिका-संख्या 7

11-14 वय-वर्ग के विद्यार्थी

वर्ष	छठी से आठवीं कक्षा तक भरती (लाख)			11-14 वय-वर्ग की कुल आबादी का प्रतिशत अनुपात		
	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां	योग
1950-51	25.9	5.3	31.2	20.7	4.5	12.7
1955-56	34.2	8.7	42.9	25.5	6.9	16.5
1960-61	48.2	14.7	62.9	34.3	10.8	22.8
1965-66	70	27.5	97.5	39.9	16.5	28.6

16. 6–11 वय-वर्ग के बच्चों में शिक्षा-सुविधाओं के प्रसार के सिलसिले में जो मुख्य समस्याएं विद्यमान हैं, वही कुछ गम्भीर रूप में 11–14 वय-वर्ग के बच्चों के सन्दर्भ में भी सामने आती हैं—खास तौर से ग्रामीण क्षेत्रों में।

विभिन्न राज्यों के विकास के स्तरों में बहुत अन्तर है, यह बात इस अध्याय के अनुबन्ध 2 को देखने से स्पष्ट हो जाएगी। पिछड़े हुए क्षेत्रों में तथा बिखरी हुई बस्तियों के लिए विद्यालय की सुविधाएं उपलब्ध करने में प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर जो कठिनाइयां हैं, उनसे कहीं अधिक माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर सामने आती हैं।

अधिक पिछड़े हुए क्षेत्रों में तथा आबादी के अधिक पिछड़े हुए वर्गों में, माध्यमिक स्तर की शिक्षा का विकास तेज़ी से तभी हो सकता है, जब प्राथमिक स्तर पर नींव पक्की हो गई हो। अतः तीसरी योजना के अन्तर्गत इन क्षेत्रों में उक्त वय-वर्गों के लिए प्राथमिक शिक्षा के प्रसार पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक होगा।

दिन-भर में कुछ थोड़ा-सा वक्त अलग करने या सामान्य कक्षाओं के साथ ही कुछ अन्य कक्षाओं की व्यवस्था करके उचित काम-धन्धों के प्रशिक्षण की सुविधाएं देने के सवाल पर इस समय विचार किया जा रहा है। माध्यमिक विद्यालयों, बुनियादी विद्यालयों, जूनियर तकनीकी विद्यालयों तथा दूसरे केन्द्रों में इस प्रकार के पाठ्यक्रमों की व्यवस्था करना और उसका उत्तरोत्तर विस्तार करते जाना सम्भव हो सकता है। 11–14 वय-वर्ग के बच्चों के लिए पूर्णकालीन आधार पर इस प्रकार के प्रशिक्षण की व्यवस्था करने के सम्बन्ध में भी जांच की जानी चाहिए।

लड़कियों के लिए शिक्षा-सुविधाओं का विस्तार करने के हेतु प्राथमिक शिक्षा के सन्दर्भ में पहले जो दिशा-निर्देश दिया गया है, उसी के अनुरूप राष्ट्रीय स्त्री-शिक्षा-परिषद् की विभिन्न सिफारिशों पर विचार किया जाना चाहिए।

17. व्यावहारिक और प्रशासकीय कारणों से संविधान में उल्लिखित 6 से 14 वय-वर्ग के बच्चों के लिए शिक्षा-कार्यक्रम को दो अवस्थानों में बांट दिया गया है—पहला अवस्थान

6 से 11 वर्ष तक के लिए और दूसरा अवस्थान 11 से 14 वर्ष तक के लिए। यदि इस पूरे वय-वर्ग पर एक साथ विचार करें, तो नीचे की तालिका से यह स्पष्ट होगा कि पिछले दस वर्षों में विद्यालय जानेवाले बच्चों की संख्या 2 करोड़ 23 लाख से बढ़ कर 4 करोड़ 6 लाख हो गई है, जब कि इस वय-वर्ग में कुल आबादी का अनुपात लगभग 32 से बढ़ कर 49 प्रतिशत हो गया है। इसमें लड़कों का अनुपात 46 से बढ़ कर 65 प्रतिशत हुआ है और लड़कियों का 18 से बढ़ कर 31 प्रतिशत।

तालिका-संख्या 8

6·14 वय-वर्ग के विद्यार्थी

वर्ष	1 से 8 कक्षा तक भरती (लाख)			6 से 14 वय-वर्ग की कुल आबादी का प्रतिशत अनुपात		
	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां	योग
1950-51	163.6	59.1	222.7	45.9	17.5	32.1
1955-56	209.5	85.1	294.6	54.6	23.5	40
1960-61	282	124.3	406.3	65.4	30.6	48.5
1965-66	371.2	222.7	593.9	73	46.1	59.5

तीसरी योजना में यह अनुमान लगा कर चला गया है कि 6–14 वय-वर्ग के बच्चों की संख्या लगभग उसी गति से बढ़ेगी, जिस गति से पिछले दस वर्षों में बढ़ी है। लड़कियों का अनुपात इस वय-वर्ग में बढ़ कर लगभग 46 प्रतिशत हो जाएगा और लड़कों का करीब 73 प्रतिशत। कुल मिलाकर अनुपात लगभग 60 प्रतिशत हो जाएगा। इन आंकड़ों से यह पता चलता है कि चौथी और पांचवीं योजनाओं की अवधि में कितना अधिक काम करना होगा।

बुनियादी शिक्षा

18. विद्यालय-शिक्षा को बुनियादी स्वरूप देना पहली योजना के आरम्भ से ही एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम रहा है। तीसरी योजना में यह विचार किया गया है कि लगभग 57,760 विद्यालय बुनियादी विद्यालयों में बदल दिए जाएं, बाकी विद्यालयों को बुनियादी ढांचे में ढाल लिया जाए, सभी प्रशिक्षण-संस्थाओं को बुनियादी पद्धति के अनुकूल बनाया जाए, शहरी क्षेत्रों में बुनियादी स्कूलों की स्थापना की जाए और बुनियादी शिक्षा को प्रत्येक स्थानीय समुदाय की विकास-सम्बन्धी गतिविधियों से समन्वित कर दिया जाए।

19. पूर्ण विकसित बुनियादी विद्यालयों की दिशा में प्रगति अनिवार्यत: काफी लम्बे अरसे में हो पाएगी, क्योंकि इस कार्यक्रम की परिधि में आनेवाले प्राथमिक विद्यालयों की संख्या बहुत है और मौजूदा शिक्षकों में से अधिकतर ऐसे हैं, जिन्हें बुनियादी शिक्षा-पद्धति का प्रशिक्षण मिलना बाकी है। मौजूदा विद्यालयों को बुनियादी विद्यालयों में बदलने की तैयारी के तौर पर दूसरी पंचवर्षीय योजना में उन्हें बुनियादी पद्धति के अनुकूल ढालने का कार्यक्रम शुरू किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य यह है कि सभी बुनियादी और गैर-बुनियादी विद्यालय में पाठ्यक्रम एक-सा हो जाए, आसान शिल्पों की शिक्षा दी

जाने लगे और समाज-सेवा, सामुदायिक जीवन-यापन, सांस्कृतिक और मनोरंजन-कार्यक्रम, आदि शुरू किए जाएं, जिनमें न तो ज्यादा खर्च हो और न बुनियादी शिक्षा के क्षेत्र में पूरी तरह प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता ही पड़े। विद्यालयों को इस नई पद्धति के अनुकूल ढालने की प्रक्रिया तीसरी योजना के शुरू के दौर में ही पूरी करने के ख्याल से यह विचार किया गया है कि इस काम के लिए आवश्यक सरल उपकरण विद्यालयों को दिए जाएं और जिन अध्यापकों को बुनियादी शिक्षा का प्रशिक्षण नहीं मिला, उनके लिए संक्षिप्त विषयज्ञान-पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जाए।

बुनियादी और अन्य विद्यालयों के लिए प्रशिक्षित शिक्षक

20. बुनियादी शिक्षा के प्रसार के लिए जो उपाय किए जा रहे हैं, उनमें शायद सबसे महत्वपूर्ण यह है कि बुनियादी विद्यालयों के शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए अधिक सुविधाएं प्रदान की जाएं और मौजूदा प्रशिक्षण-केन्द्रों को बुनियादी पद्धति के अनुरूप पुनस्संगठित किया जाए। दूसरी योजना के अन्त में, 1,307 संस्थाओं में प्रारम्भिक विद्यालय-शिक्षकों को प्रशिक्षण मिल रहा था। इन संस्थाओं में से लगभग 70 प्रतिशत बुनियादी पद्धति के अनुसार ढाली जा चुकी हैं। तीसरी योजना के अन्त तक प्रशिक्षण-संस्थाओं की संख्या बढ़ कर 1,424 हो जाएगी और ये सभी बुनियादी पद्धति के अनुसार प्रशिक्षण देंगी। इनमें लगभग 2 लाख शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया जाएगा, जबकि सन् 1960-61 में 1,35,000 शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया गया था। जिन शिक्षकों को बुनियादी शिक्षा का प्रशिक्षण नहीं मिला है, उनके लिए बुनियादी शिक्षा के सरल पहलुओं के प्रशिक्षण के अल्पकालीन पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जाएगी।

अधिकतर राज्यों में प्रारम्भिक विद्यालय-शिक्षकों की प्रशिक्षण-अवधि बढ़ा कर दो साल कर देने का विचार है, ताकि पाठ्यक्रम और पद्धतियों, दोनों की ही दृष्टि से ज्यादा पुख्ता काम हो सके। आसपास के विद्यालयों में पढ़ाई का स्तर ऊंचा करने के ख्याल से कई प्रशिक्षण-विद्यालयों में विस्तार-विभाग स्थापित किए जाएंगे। दूसरी योजना के अन्तिम दौर में 276 नई प्रशिक्षण-संस्थाओं की स्थापना की गई, ताकि तीसरी योजना में सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा शुरू करने के लिए तैयारियां की जा सकें। राज्यों के कार्यक्रमों में इन और अन्य संस्थाओं के लिए साज-सामान, भवन और अन्य सुविधाओं की व्यवस्थ की गई है।

बुनियादी शिक्षा के प्रसार को सीमित रखनेवाला एक कारण यह है कि अधिकतर उसे देहाती क्षेत्रों में बांध कर रखा गया है। अतः विचार है कि नगरों में प्रयोग के तौर पर कुछ बुनियादी विद्यालय खोले जाएं, ताकि नगरों में बुनियादी विद्यालयों की समस्याओं को भलीभांति समझा जा सके और प्रशिक्षण-कालेजों के सहयोग से उनके लिए समाधान खोजे जा सकें।

सामुदायिक प्रयत्न

21. कुछ कार्यक्रमों के लिए यह आवश्यक है कि राज्यों की योजनाओं में जो व्यवस्था की गई हो, उसकी परिपूर्ति स्थानीय सामुदायिक प्रयत्न-द्वारा की जाए। मिसाल के तौर पर, ये कार्यक्रम लिए जा सकते हैं: भरती-आन्दोलनों का आयोजन, लड़कियों को

विद्यालय भेजने के बारे में माता-पिता को समझाना-बुझाना, विद्यालय-भवनों का निर्माण, विद्यालयों के लिए अतिरिक्त उपकरणों और कुर्सी-मेज, आदि की व्यवस्था तथा गरीब बच्चों के लिए दोपहर के खाने और मुफ्त कपड़े का इन्तज़ाम। कुछ राज्यों में स्थानीय साधन जुटाने के प्रयत्नों के बड़े उत्साहवर्द्धक परिणाम निकले हैं और आशा की जाती है कि विभिन्न राज्यों में जैसे-जैसे पंचायती राज-संस्थाओं की स्थापना होती जाएगी, वैसे-वैसे स्थानीय सहायता भी बढ़ती जाएगी।

कई राज्यों ने अपनी योजनाओं में विद्यालय जानेवाले बच्चों के लिए दोपहर के भोजन की व्यवस्था की है। इस सिलसिले में विशेष रूप से मद्रास, केरल, आन्ध्रप्रदेश, मैसूर और उड़ीसा के नाम लिए जा सकते हैं। इस क्षेत्र में मद्रास का कार्यक्रम सबसे बड़ा है। वहां इस प्रकार की व्यवस्था से कोई 10 लाख बच्चे लाभ उठा सकेंगे। लगभग इतने ही, यानी 10 लाख बच्चों को पहले ही इस कार्यक्रम से फायदा पहुंच रहा है। इसका लगभग 40 प्रतिशत खर्च स्थानीय समुदाय-द्वारा दिया जाता है। दोपहर के भोजन की व्यवस्था से हर शहरी और ग्रामीण समुदाय को न केवल शिक्षा-प्रयत्न में भाग लेने का विशेष अवसर मिलता है, बल्कि विद्यालयों में पोषण तथा स्वास्थ्य का स्तर ऊंचा उठाने तथा गरीब विद्यार्थियों की सहायता करने का भी मौका मिलता है। हालांकि आर्थिक कठिनाइयों के कारण फिलहाल यह कार्यक्रम कुछ सीमित-सा है, फिर भी यह विचार है कि राज्य-सरकारें कम-से-कम ऐसी जगहों पर अवश्य इस तरह की व्यवस्था करें, जहां स्थानीय समुदाय अपना हिस्सा जुटाने को तैयार हों।

उच्चतर माध्यमिक शिक्षा

22. अर्थव्यवस्था के विकास, उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की संख्या तथा उनमें भरती किए गए 14–17 वय-वर्ग के विद्यार्थियों की संख्या में भारी वृद्धि होने से उन मांगों का स्वरूप ही बदल गया है, जिनकी पूर्ति की आशा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा से की जाती है। नए-नए समाज-वर्ग शिक्षा पाने के लिए आगे बढ़ रहे हैं और उसके प्रभाव में आ रहे हैं। विस्तार के कारण उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों की योग्यता और रुचियों का क्षेत्र विविधतापूर्ण हो गया है। उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों का संगठन इस ढंग से किया जाना है कि वे विद्यार्थियों की ज़रूरतों के मुताबिक वैविध्यपूर्ण शिक्षा की व्यवस्था कर सकें। आर्थिक जीवन की कई शाखाओं के मध्यवर्ती तथा निम्नवर्ती स्तरों पर —प्रशासन, ग्राम-विकास, वाणिज्य, उद्योग और व्यवसाय में—जितनी संख्या में प्रशिक्षित लोगों की आवश्यकता पड़ेगी, उसे उच्चतर माध्यमिक शिक्षा समाप्त करनेवालों को उचित प्रशिक्षण देकर ही पूरा करना पड़ेगा।

उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के पुनस्संगठन और सुधार का कार्यक्रम उच्चतर माध्यमिक शिक्षा-आयोग की रिपोर्ट के बाद शुरू किया गया था। यह कार्यक्रम कई दिशाओं में चला है। इसका उद्देश्य प्रथमतः उच्चतर माध्यमिक शिक्षा की परिधि का विस्तार करना है और दूसरे, शिक्षा-प्रणाली में उसे एक आत्मनिर्भर इकाई का रूप देना है। इसके लिए निम्नलिखित उपायों से काम लेने का विचार है : उच्च विद्यालयों को उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में परिवर्तित करना; बहूद्देश्यीय विद्यालय का विकास करना, जिनमें शैक्षणिक पाठ्यक्रम के साथ-साथ और उसके अतिरिक्त कई ऐच्छिक विषयों की

व्यवस्था हो; विज्ञान पढ़ाने की सुविधाएं बढ़ाना और उन्हें व्यापक रूप देना; शिक्षा और धन्धों के बारे में मार्ग-प्रदर्शन की व्यवस्था करना; परीक्षा-पद्धति और उत्तर-पुस्तिकाएं जांचने की प्रणाली में सुधार करना; धन्धों की शिक्षा-सुविधाओं का विस्तार करना, लड़कियों और पिछड़ी जातियों की शिक्षा के लिए अधिक सुविधाएं देना और छात्रवृत्तियां, आदि देकर योग्य छात्रों को प्रोत्साहित करना।

23. उपर्युक्त दिशाओं में पुनर्निर्माण की दृष्टि से उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के पाठ्यक्रम में बहुत फेरबदल करनी होगी तथा उसमें नई पद्धतियों और कार्यविधियों का समावेश करना होगा। सामान्य विज्ञान और सामाजिक अध्ययन-जैसे विषय तथा विभिन्न ऐच्छिक पाठ्यक्रम अपेक्षाकृत नई बातें हैं, जो अब तक उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के पाठ्यक्रम में शामिल न थीं। इन सबके कारण उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने-आपको नए तौर पर ढाले। फलतः नौकरी में रहते हुए शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के लिए राज्यों के शिक्षा-विभागों और विशेष विस्तार-सेवाओं-द्वारा आयोजित देशव्यापी कार्यक्रम आवश्यक हो गए हैं।

उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों को नए विषय अच्छी तरह पढ़ाने के योग्य बनाने के लिए अच्छी तरह तैयार करना है। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर जो परिवर्तन हुए हैं, उनको देखते हुए नौकरी से पहले के स्तर पर शिक्षकों के शिक्षण-कार्यक्रम को फिर से संगठित करना होगा। विज्ञान की शिक्षा को इस स्तर तक ऊंचा उठाना है कि उससे राष्ट्र की भावी वैज्ञानिक प्रगति को पूरा-पूरा सहारा मिल सके। बहूद्देश्यीय विद्यालयों के कार्य-संचालन में जो भी खामियां देखी गई हैं, उन्हें दूर करना होगा और इस योजना को स्थायी आधार प्रदान करना होगा। शिक्षा और काम-धन्धों के क्षेत्र में पथ-प्रदर्शन के कार्यक्रम को भी विस्तार देना होगा, ताकि अधिक-से-अधिक विद्यालय और विद्यार्थी उससे लाभ उठा सकें। उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के पुनस्संगठन के समूचे कार्यक्रम को पक्की नींव पर स्थापित करने के लिए कुछ और कार्रवाइयां भी करनी होंगी—जैसे, शिल्प-शिक्षा में सुधार, विद्यालय-पुस्तकालयों का संगठन, श्रव्य-दृश्य तकनीकों का बेहतर उपयोग, आदि। इसलिए तीसरी योजना में उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के पुनस्संगठन के सभी पहलुओं में उसका स्तर ऊंचा करने और नींव मज़बूत करने पर खास ज़ोर दिया जाएगा।

24. **भरती :** पहली दोनों पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 7,288 (1950-51) से बढ़ कर लगभग 16,600 (1960-61) हो गई। नवीं से ग्यारहवीं कक्षा तक में भरती होनेवाले बच्चों की संख्या करीब 12 लाख से बढ़ कर 29 लाख हो गई। हालांकि इस अवधि में इन कक्षाओं में लड़कियों की संख्या 2,00,000 से बढ़ कर 5,20,000 हो गई, फिर भी उनकी संख्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के कुल विद्यार्थियों की संख्या का पांचवा हिस्सा ही रही। जैसा कि अगली तालिका से स्पष्ट है, दूसरी योजना के अन्त में 14–17 वय-वर्ग की केवल लगभग 4.2 प्रतिशत लड़कियों ने उच्च विद्यालय-स्तर की शिक्षा का लाभ उठाया, जब कि लड़कों का अनुपात 18.4 प्रतिशत के आसपास रहा। इस प्रकार, हम देखते हैं कि दोनों वर्गों की भरती में बड़ा भारी अन्तर है और इसका शिक्षिकाओं, नर्सों, ग्राम-सेविकाओं, समाज-सेविकाओं और दूसरे काम करनेवाली स्त्रियों की उपलब्धि-संख्या पर बड़ा असर पड़ता

है। तीसरी योजना में विद्यालय जानेवाली लड़कियों की संख्या लगभग दुगुना हो जाएगी परन्तु समग्र वय-वर्ग में उनका अनुपात कम ही रहेगा—कुल लगभग 7 प्रतिशत, जब कि लड़कों का अनुपात 24 प्रतिशत होगा।

तालिका-संख्या 9

14-17 वय-वर्ग के विद्यार्थी

वर्ग	नवीं से ग्यारहवीं कक्षाओं तक भरती (लाख)			14–17 वय-वर्ग की आबादी में प्रतिशत अनुपात		
	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां	योग
1950-51	10.2	2	12.2	8.7	1.8	5.3
1955-56	15.8	3	18.8	12.8	2.6	7.8
1960-61	23.9	5.2	29.1	18.4	4.2	11.5
1965-66	35.7	9.9	45.6	23.7	6.9	15.6

इस स्तर पर भरती की राज्यवार स्थिति अनुबन्ध 3 में दी गई है।

25. **उच्चतर माध्यमिक विद्यालय :** उच्चतर माध्यमिक शिक्षा-आयोग की एक प्रमुख सिफारिश यह थी कि उच्च विद्यालयों को उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों का रूप दे दिया जाए, ताकि पाठ्यक्रम पहले से अधिक व्यापक हो जाए और विद्यालय-शिक्षा में एक वर्ष का समय बढ़ा कर शिक्षा का स्तर ऊंचा उठाया जाए। इसके फलस्वरूप ऐसे बहुत-से विद्यार्थियों के लिए वही शिक्षा का अन्तिम बिन्दु होगा, जिन्हें उच्चतर माध्यमिक विद्यालय की शिक्षा के बाद सीधे जीवन के क्षेत्र में कदम रखना पड़ता है। पहली दो पंचवर्षीय योजनाओं में विभिन्न राज्यों में 3,121 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय खोले गए। आशा है, तीसरी योजना के अन्त तक यह संख्या बढ़ कर 6,390 हो जाएगी।

26. **विज्ञान की शिक्षा :** दूसरी योजना में माध्यमिक स्तर पर विज्ञान की शिक्षा के प्रसार और सुधार के काम को बहुत अधिक प्राथमिकता दी गई। उच्चतर माध्यमिक शिक्षा-आयोग ने सिफारिश की थी कि उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के हर विद्यार्थी को महत्वपूर्ण अनिवार्य विषय के रूप में सामान्य विज्ञान का अध्ययन करना चाहिए, ताकि अपनी सामान्य शिक्षा के अंग-रूप में वह आवश्यक परिमाण में वैज्ञानिक ज्ञान का भी अर्जन कर ले। इसके अतिरिक्त उन विद्यार्थियों के लिए, जो उच्चतर शिक्षा प्राप्त करना चाहते हों, वैकल्पिक विषय के रूप में भी विज्ञान पढ़ाने की व्यवस्था की जानी थी। दूसरी योजना के अन्त तक लगभग सभी विद्यालयों में सामान्य या प्रारम्भिक विज्ञान पढ़ाने का कार्यक्रम शुरू कर दिया गया और लगभग 4,625 विद्यालयों में वैकल्पिक विषय के रूप में विज्ञान की पढ़ाई शुरू की गई। लेकिन अभी अनेक विद्यालय ऐसे हैं, जिनकी प्रयोगशालाओं और साज़-सामान तथा उपर्युक्त पाठ्य पुस्तकों और हैंडबुकों से सम्बन्धित

बुनियादी ज़रूरतें भी पूरी नहीं हुई हैं। सामान्य विज्ञान पढ़ाने के लिए जिस समन्वित दृष्टिकोण की आवश्यकता है, उसके लिए शिक्षक तैयार किए जाने हैं। यह भी ज़रूरी है कि विज्ञान के क्षेत्र में विद्यार्थियों को सृजनात्मक और मौलिक काम के लिए प्रोत्साहन दिया जाए। चुने हुए उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों तथा प्रशिक्षण-कालेजों में विज्ञान-क्लबों की स्थापना करके दूसरी योजना के दौरान इस दिशा में प्रयत्न किए गए थे। इस अवधि में इस प्रकार के लगभग 450 विज्ञान-क्लब खोले गए।

तीसरी योजना में सभी उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में अनिवार्य विषय के रूप में सामान्य विज्ञान पढ़ाने की व्यवस्था तो की ही जाएगी, 21,800 विद्यालयों में से 9,500 से भी अधिक में वैकल्पिक स्तर पर विज्ञान की पढ़ाई का इन्तज़ाम किया जाएगा। यह कार्यक्रम पूरा हो जाने पर तीसरी और बाद की योजनाओं में विश्वविद्यालय-स्तर पर विज्ञान की शिक्षा के विस्तार के लिए अब के मुकाबले में अधिक सुदृढ़ नींव की स्थापना हो जाएगी। विज्ञान की शिक्षा में सुधार करने और उसकी नींव पक्की करने के लिए कई और उपाय भी किए जा रहे हैं, जिनसे काफी सहारा मिलेगा। आजकल विभिन्न राज्यों में विज्ञान के जो पाठ्यक्रम चालू हैं, उन पर फिर से विचार किया जाएगा और उनमें यथावश्यक संशोधन किए जाएंगे, ताकि शिक्षा के शुरू और बाद के स्तरों पर विज्ञान के जो पाठ्यक्रम नियत हैं, उनके और इनके बीच सामंजस्य स्थापित हो सके। शिक्षकों के लिए हैंडबुक, विद्यार्थियों के लिए निर्देशिकाएं, विज्ञान की पाठ्य पुस्तकें तथा विज्ञान की अनुपूरक पाठ्य सामग्री तैयार करने का कार्यक्रम भी शुरू किया जाएगा। विश्वविद्यालय-स्तर पर विज्ञान की शिक्षा की सुविधाएं बढ़ा कर तथा मौजूदा विज्ञान-शिक्षकों के लिए नौकरी में रहते हुए विषयवस्तु और प्रक्रिया-प्रविधि के क्षेत्र में विविध प्रकार के प्रशिक्षण की व्यवस्था करके विज्ञान-शिक्षकों की मौजूदा कमी को भरसक दूर करने का प्रयत्न किया जाएगा। प्रयोगशाला-सहायकों को प्रयोगशाला का सामान सम्हाल कर रखने और सही तरीके से उसे उठाने-धरने का प्रशिक्षण देना भी इस अरसे में शुरू किया जाएगा। इसके अलावा, वैज्ञानिक उपकरणों में डिज़ाइनों को मानक रूप देने तथा देश में ही उनका निर्माण शुरू करने के लिए भी कदम उठाए जाएंगे। विज्ञान की पढ़ाई के सारे कार्यक्रम में तालमेल रखने, उसका मार्गप्रदर्शन करने तथा उसे निर्देशित करने के लिए तथा महत्वपूर्ण कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए, तीसरी योजना के अन्तर्गत एक केन्द्रीय विज्ञान-शिक्षा-संगठन की स्थापना करने का विचार है। वैज्ञानिक प्रतिभा की खोज की भी एक योजना शुरू की जाएगी, ताकि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर ही होनहार वैज्ञानिकों का पता लगाया जा सके और उनकी प्रतिभा के विकास का अवसर दिया जा सके।

27. **बहुद्देश्यीय विद्यालय :** उच्चतर माध्यमिक शिक्षा-प्रणाली के मुख्य दोषों में से एक यह था कि उसका स्वरूप एकपक्षीय था। यह जाने बिना कि किसी विद्यार्थी की व्यक्तिगत रुचि और योग्यता किस दिशा में है, सबके लिए एक ही तरह के पाठ्यक्रम निर्धारित कर दिए जाते थे। अतः उच्चतर माध्यमिक शिक्षा-आयोग ने बहुद्देश्यीय विद्यालय खोलने की सिफारिश की, जिनमें पढ़ाई के प्रवाह के साथ-साथ कई व्यावहारिक शिक्षण-क्रमों की भी व्यवस्था होगी। इसके फलस्वरूप विद्यार्थी के सामने कई तरह के शिक्षण-क्रम रहेंगे और वह अपनी खास रुचि के अनुसार उनमें से किसी को भी चुन सकता है। पहली दो योजनाओं के दौरान 2,115 बहुद्देश्यीय स्कूल खोले गए। इनमें मानविकी (ह्यूमैनिटीज़)

और विज्ञान के अतिरिक्त टेक्नोलाजी, कृषि, वाणिज्य, गृह-विज्ञान और ललित कलाओं में भी एक या उससे अधिक व्यावहारिक शिक्षण-क्रमों की व्यवस्था होगी। हालांकि बहूद्देश्यीय विद्यालयों के विचार को तुरन्त ग्रहण कर लिया गया है और इस योजना का विस्तार भी बड़ी तेज़ी से हुआ है, फिर भी कुछ कठिनाइयां सामने आई हैं जैसे, ऐसे शिक्षकों की कमी, जो व्यावहारिक विषय पढ़ाने का प्रशिक्षण पा चुके हों; अध्यापन-सामग्रियों की अपर्याप्तता, खास तौर से पाठ्य ग्रन्थों और हैंडबुकों की; वैकल्पिक पाठ्यक्रमों की सीमित परिधि और शिक्षा तथा व्यावहारिक क्षेत्र में पथ-प्रदर्शन की सुविधाओं की अपर्याप्तता। इसलिए तीसरी योजना में विचार किया गया है कि जो संस्थाएं स्थापित हो चुकी हैं, उन्हें मज़बूत बना कर इस योजना की नींव पक्की करने पर ध्यान केन्द्रित किया जाए। विस्तार-कार्यक्रम लगभग 331 नए विद्यालयों तक ही सीमित है। बहूद्देश्यीय विद्यालयों के लिए एक समन्वित शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किया जाएगा और इस काम के लिए चार प्रादेशिक प्रशिक्षण-कालेज खोले जाएंगे। इन कालेजों में व्यावहारिक और वैज्ञानिक, दोनों विषयों में नौकरी के दौर में और नौकरी से पहले के प्रशिक्षण-कार्यक्रमों के द्वारा शिक्षक बहूद्देश्यीय विद्यालयों के लिए तैयार किए जाएंगे। ऐसे अध्ययन-क्रमों की व्यवस्था करने के लिए, जो विभिन्न स्तरों की योग्यतावाले लोगों के लिए उपयुक्त हों, बहूद्देश्यीय विद्यालयों में और अधिक प्रयोगात्मक कार्यों को प्रोत्साहन देने के लिए कदम उठाए जाएंगे। इन अध्ययन-क्रमों में प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के लिए शिक्षा के विशेष कार्यक्रम भी शामिल होंगे।

28. **शिक्षा और व्यवसाय के लिए पथ-प्रदर्शन :** उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के सफल संगठन के लिए यह ज़रूरी है कि शिक्षा और व्यवसाय के क्षेत्र में पथ-प्रदर्शन का एक सुयोजित कार्यक्रम तैयार किया जाए, ताकि विद्यार्थियों और उनके माता-पिता को सबसे उपयुक्त शैक्षणिक पाठ्यक्रम और सबसे अधिक सन्तोषजनक व्यवसाय चुनने में सहायता मिल सके। अब तक बहूद्देश्यीय विद्यालयों के काम में इस तरह के पथ-प्रदर्शन के सुयोजित कार्यक्रम का अभाव एक बहुत बड़ी बाधा रही है। दूसरी योजना के दौरान एक केन्द्रीय शिक्षा एवं व्यवसाय-विषयक पथ-प्रदर्शन-कार्यालय स्थापित किया गया और बारह राज्यों में इस तरह के राज्य-कार्यालय स्थापित किए गए। ये कार्यालय विद्यालयों के लिए व्यवसाय-मास्टर और सलाहकार प्रशिक्षित करने, परीक्षा-पद्धति का निर्माण करने और पथ-प्रदर्शन की व्यवस्था करने के कार्यक्रम लागू करते रहे हैं। फिर भी, इन कामों का अभी उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों पर कोई खास असर नहीं पड़ा है। अतः तीसरी योजना में सब जगह राज्य-कार्यालयों को इस ढंग से संगठित करने का विचार है कि उन्हें इस पथ-प्रदर्शन-कार्यक्रम को अपने क्षेत्र में और आगे बढ़ाने में सहायता मिले और भरसक ज्यादा-से-ज्यादा विद्यालयों में व्यवसाय-विषयक सूचना प्रदान करने का एक खास स्तर का कार्यक्रम कार्यान्वित हो सके।

29. **शिल्प-शिक्षा :** उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के पुनस्संगठित अध्ययन-क्रम में शिल्प को एक केन्द्रवर्ती विषय के रूप में स्वीकार किया गया है। काफी संख्या में शिल्प-शिक्षक पाने और शिल्प-शिक्षा को सुधारने की समस्या उच्चतर माध्यमिक शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा, दोनों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अतः शिक्षा-मन्त्रालय इस समस्या का विशेष अध्ययन करा रहा है और इस अध्ययन के जो निष्कर्ष होंगे, उनका शिल्प और व्यवसाय-शिक्षा का कार्यक्रम निर्धारित करने में उपयोग किया जाएगा।

30. **विद्यालय-पुस्तकालय :** उच्चतर माध्यमिक शिक्षा का एक और पहलू है, जिस पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। यह पहलू है, विद्यालय-पुस्तकालयों का संगठन। पहली और दूसरी, दोनों योजनाओं में विद्यालय-पुस्तकालयों को सुधारने के लिए कदम उठाए गए थे, पर इस सिलसिले में अभी बहुत-कुछ करना बाकी है कि पुस्तकालय-सुविधाओं का और अच्छा उपयोग हो तथा विद्यार्थियों की पढ़ने की आदतें सुधरें। पुस्तकालय-सुविधाओं का उपयोग करना सिखाना कक्षा की पढ़ाई का अभिन्न अंग होना चाहिए। तीसरी योजना में चुने हुए प्रशिक्षण-कालेजों से संलग्न प्रदर्शन-विद्यालयों में कुछ आदर्श पुस्तकालय खोलने का विचार है। ये पुस्तकालय संगठन और संचालन के लिए आदर्श प्रस्तुत करने के साथ-साथ शिक्षक-पुस्तकालयाध्यक्षों के लिए प्रशिक्षण-केन्द्र का भी काम देंगे। उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के पुस्तकालयों के वर्तमान संगठन और उसमें अपेक्षित सुधारों का अभी अध्ययन हो रहा है।

31. **उत्तर-बुनियादी विद्यालय :** कुछ राज्यों में बुनियादी से ऊपर के स्तर के विद्यालय खोले गए, ताकि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सीनियर बुनियादी विद्यालयों का क्रम जारी रह सके। अभी इस तरह के कोई 66 विद्यालय हैं। हाल में एक समिति ने इस बात पर विचार किया कि इन विद्यालयों और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों का आपस में क्या सम्बन्ध होना चाहिए। प्रस्ताव किया गया है कि अध्ययन-क्रम, पढ़ाई, उपकरण, प्रयोग-शाला और शिक्षक-वर्ग, सब की दृष्टि से इन्हें अपना स्तर ऊंचा करने में सहायता दी जाए, ताकि ये उच्चतर माध्यमिक और बहूद्देश्यीय विद्यालयों के स्तर पर आ जाएं। जब तक ये कार्रवाइयां पूरी नहीं हो जातीं, तब तक इन विद्यालयों की अन्तिम परीक्षा को नौकरी, आदि के मामले में उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों को दिए जानेवाले प्रमाण-पत्र के समकक्ष समझा जा सकता है।

32. **शिक्षकों का प्रशिक्षण :** प्रशिक्षण-कालेजों की संख्या सन् 1950-51 में 53 थी, जो सन् 1960-61 में बढ़ कर 236 हो गई। आशा है, तीसरी योजना के दौरान यह संख्या बढ़ कर 312 हो जाएगी। मौजूदा प्रशिक्षण-कालेजों का भी विस्तार किया जाएगा, ताकि अधिक संख्या में प्रशिक्षित अध्यापक मिल सकें। इन उपायों से प्रशिक्षित स्नातक अध्यापकों की संख्या अवश्य बढ़ जाएगी, किन्तु प्रशिक्षण-कालेज-कार्यक्रम को फिर से संगठित करने और दृढ़तर बनाने के लिए भी कदम उठाने पड़ेंगे, ताकि वे उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की मौजूदा जरूरतों को पूरा कर सकें। इस सिलसिले में इन बातों पर खास तौर से ज़ोर दिया जाएगा : विज्ञान और समाज-अध्ययन के शिक्षकों का नौकरी से पहले प्रशिक्षण, मूल्यांकन की नई पद्धतियों का समावेश, विविध प्रकार के विशेष विषयों की व्यवस्था—जैसे पथ-प्रदर्शन, श्रव्य-दृश्य शिक्षा—और अनुसन्धान का संगठन।

माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों को नौकरी में रहते प्रशिक्षण पाने की सुविधाएं देने के ख्याल से दूसरी योजना के दौरान 54 चुने हुए प्रशिक्षण-कालेजों में विस्तार-केन्द्रों की स्थापना की गई। ये केन्द्र अध्यापकों के नौकरी में रहते हुए प्रशिक्षण पाने के व्यापक कार्यक्रम पर अमल करते रहे हैं। कार्यक्रम में ये चीजें शामिल हैं—संगोष्ठियां, कर्मशालाएं और सम्मेलन, श्रव्य-दृश्य साधन, पुस्तकालय और पथ-प्रदर्शन-सेवाएं तथा प्रकाशन।

हर केन्द्र अपने नियत क्षेत्र में अनेक विद्यालयों के लिए (जिनकी संख्या 100 से 300 तक होती है) विस्तार-सेवा की और बिल्कुल पास के कुछ चुने हुए विद्यालयों के लिए (जिनकी संख्या करीब 20 होती है) गहन प्रशिक्षण की व्यवस्था करता है। विस्तार-सेवा-कार्यक्रम नौकरी में रहते हुए निरन्तर प्रशिक्षण का महत्वपूर्ण माध्यम और प्रशिक्षण-कालेजों तथा उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों को परस्पर निकट सम्पर्क में रखने का साधन साबित हुआ है। तीसरी योजना में इस कार्यक्रम का विस्तार करके और बहुत-सारे प्रशिक्षण-कालेजों को इसकी परिधि में लाने का विचार है। अन्तिम लक्ष्य यह है कि विस्तार-सेवा प्रशिक्षण-कालेज के काम का एक अभिन्न अंग बन जाए।

विश्वविद्यालय-शिक्षा

33. प्रारम्भिक और माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का विस्तार होने के कारण पिछले दस वर्षों में उच्चतर शिक्षा की मांग बेहद बढ़ गई है। सन् 1950-51 में विश्वविद्यालयों की संख्या 27 थी। सन् 1955-56 में यह संख्या बढ़ कर 32 हो गई और सन् 1960-61 में 46। आशा है कि तीसरी योजना की अवधि में विश्वविद्यालयों की संख्या एक दर्जन और बढ़ जाएगी। कालेजों की संख्या सन् 1955-56 में 772 थी, जो सन् 1960-61 में बढ़ कर 1,050 हो गई (इनमें इंटरमीडिएट कालेज शामिल नहीं हैं)। तीसरी योजना के दौरान हर वर्ष कालेजों की संख्या में लगभग 70-80 की वृद्धि होती रहेगी। हाल के वर्षों में विश्वविद्यालयों और कालेजों की संख्या में जिस तेजी से वृद्धि हुई है, उसके कारण कई समस्याएं उठ खड़ी हुई हैं। इनका विवेचन विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग की सन् 1959-60 की रिपोर्ट में किया गया है।

आयोग ने इस बात पर जोर दिया है कि अगर शिक्षा का स्तर गिरने न देने के लिए यह ज़रूरी है कि विद्यार्थियों की संख्या जितनी बढ़े, उसी हिसाब से अध्यापन की भौतिक और अन्य सुविधाओं का भी विस्तार हो। तीसरी योजना में इस सिलसिले में और अधिक सुविधाएं दी जा रही हैं कि विद्यार्थी व्यावसायिक और टेक्नोलाजी-विषयक शिक्षा की ओर अधिक संख्या में जाएं। फिर भी, यह तो स्पष्ट है कि यह समस्या बहुत बड़ी है और इन सुविधाओं को ध्यान में रखने पर भी इसमें सन्देह नहीं कि कला, विज्ञान और वाणिज्य के उच्चतर शिक्षा-क्रमों में प्रवेश चाहनेवालों की संख्या बहुत अधिक होगी तथा उनके चुनाव के लिए ठीक-ठीक कसौटियां निर्धारित करनी होंगी। योजना में उच्चतर शिक्षा की सुविधाएं बढ़ाने की तो व्यवस्था की ही गई है; सान्ध्य कालेजों, पत्राचार शिक्षा-क्रमों और बाहर के उम्मीदवारों को डिग्रियां देने के सुझावों पर भी विचार किया जा रहा है।

34. **विज्ञान की शिक्षा :** इस बात की चर्चा पहले की जा चुकी है कि तीसरी योजना में विज्ञान की शिक्षा के लिए सुविधाएं बढ़ाने का कार्यक्रम है। इस सिलसिले में अधिक वैज्ञानिक उपकरणों की व्यवस्था करनी होगी और इसके साथ-साथ विज्ञान के अधिक अध्यापकों की नियुक्ति करनी पड़ेगी। शिक्षा-अधिकारियों के मार्ग-प्रदर्शन के लिए वैज्ञानिक उपकरणों की प्रामाणिक सूचियां तैयार कराने का भी विचार है। इस तरह का ज़रूरी सामान कम लागत पर तैयार कराने और बंटवाने की योजनाएं भी शुरू की जाएंगी। विज्ञान के मेधावी विद्यार्थियों को बड़ी संख्या में छात्रवृत्तियां भी दी जाएंगी। हर स्तर पर

विज्ञान और टेक्नोलाजी के अध्यापन और परीक्षा के मानकों की बराबर जांच की जाती रहेगी। इसके साथ ही, शिक्षा-कार्यक्रमों में उपयोग के लिए आवश्यक प्रामाणिक पाठ्य ग्रन्थ तैयार कराने और छपवाने की योजना भी शुरू की जाएगी।

35. **स्नातकोत्तर-अध्ययन और अनुसन्धान :** तीसरी योजना के अन्तर्गत विज्ञान और मानविकी (ह्यूमेनिटीज) के क्षेत्र में स्नातकोत्तर-अध्ययन और अनुसन्धान का अधिक विस्तार किया जाएगा। दूसरी योजना के दौरान विश्वविद्यालयों को प्रयोगशालाओं के वास्ते अतिरिक्त स्थान, उपकरण और पुस्तकालय-सुविधाओं के लिए सहायता दी गई। दूसरी योजना में विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग ने जो कदम उठाए, उनका सम्बन्ध वैज्ञानिक अध्ययन के विशिष्ट क्षेत्रों में—जैसे भूभौतिकी, ज्योतिष, नक्षत्र-भौतिकी, व्यावहारिक भौमिकी, समुद्रवर्णना, व्यावहारिक भौतिकी और पशु-जनन-विज्ञान, आदि—विश्वविद्यालयों में नए विभाग खोलने से था। मानविकी के क्षेत्र में, बौद्ध दर्शन और संस्कृति, आदि के अध्ययन तथा अफ्रीकी अध्ययन के विभाग खोले गए तथा हिन्दी, भाषा-विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान तथा पुरातत्वशास्त्र, संग्रहालय-विद्या, संगीत, आदि के भी संस्थान अथवा विभाग स्थापित किए गए। विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग ने दूसरी योजना में स्नातकोत्तर तथा अनुसन्धान-छात्रवृत्तिया और वजीफे देने का कार्यक्रम भी शुरू किया। दूसरी योजना की अवधि में जो कार्यक्रम शुरू किए गए, वे तीसरी योजना की अवधि में भी जारी रखे जाएंगे और उनका विकास किया जाएगा। आयोग विश्वविद्यालयों और कालेजों के स्नातकोत्तर विभागों को स्नातकोत्तर-अध्ययन तथा अनुसन्धान का विकास करने में सहायता देगा। विज्ञान की शिक्षा पर खास जोर दिया जाएगा। विज्ञान में स्नातकोत्तर-अध्ययन-क्रम में प्रवेश लेनेवाले विद्यार्थियों की संख्या कोई 7,000 तक और शोधार्थियों की लगभग 1,000 तक बढ़ जाने की आशा है। कला-विषयों के विद्यार्थियों की संख्या में क्रमशः 7,000 और 2,000 की वृद्धि होने की आशा है। कुल मिला कर स्नातक-स्तर के बाद के विज्ञान-छात्रों की भरती में 70 प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी।

36. **स्त्री-शिक्षा :** ऐसी शिक्षित स्त्रियों की काफी कमी है, जो विभिन्न व्यवसायों को अपना सकें। इससे इस बात का संकेत मिलता है कि कालेजों और विश्वविद्यालयों में कुल जितने विद्यार्थी भरती होते हैं उनमें छात्राओं का अनुपात बढ़े। सन् 1955-56 में भारतीय विश्वविद्यालयों में छात्राओं का अनुपात केवल 13 प्रतिशत था। सन् 1960-61 में यह अनुपात बढ़ कर करीब 17 प्रतिशत हो गया और सन् 1965-66 में इसके 21 प्रतिशत हो जाने की आशा है। दूसरी योजना में छात्राओं की बढ़ती हुई संख्या के लिए तो कालेजों और विश्वविद्यालयों में व्यवस्था की ही गई, उनकी विशेष रुचि के अध्ययन-क्रम भी शुरू किए गए—जैसे, गृह-विज्ञान, संगीत, चित्रकारी, नर्सिंग, आदि। इन सुविधाओं का अभी और विस्तार करना होगा। दूसरी योजना में विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग ने लड़कियों के कालेजों और छात्रावासों के लिए उदारतापूर्वक सहायता दी। तीसरी योजना में भी यह सहायता जारी रहेगी। इसके अलावा, छात्राओं को प्रोत्साहन देने के लिए विशेष छात्रवृत्तिया बराबर दी जाती रहेंगी। इस समय स्त्रियों को संगठन, प्रशासन और प्रबन्ध-कार्य का प्रशिक्षण देने के लिए एक संस्थान स्थापित करने के सुझाव पर भी विचार हो रहा है।

37. **ग्राम-संस्थान :** गांव के विद्यार्थियों को उनके अपने ही वातावरण में उच्चतर

माध्यमिक स्तर के बाद की उच्चतर शिक्षा देने के उद्देश्य से दूसरी योजना की अवधि में ग्यारह ग्राम-संस्थान स्थापित किए गए। इस प्रकार की शिक्षा से गांवों के अपने नेता पैदा होंगे और सामुदायिक विकास तथा कल्याण-कार्यक्रमों में गांव की जनता के सक्रिय सहयोग को प्रोत्साहन मिलेगा। इन संस्थानों की स्थापना का उद्देश्य ग्राम-विकास, सहकारिता, समाज-कल्याण, समाज-शिक्षा तथा लघु उद्योगों, आदि के क्षेत्रों में विशेष कार्यों के लिए ग्रामीण युवकों को प्रशिक्षित करना था। ग्राम-संस्थानों में ग्राम-सेवाओं, ग्रामीण और असैनिक इंजीनियरी, कृषि और स्वास्थ्य-सेवाओं के डिप्लोमा अध्ययन-क्रम शुरू किए गए। दूसरी योजना के अन्त तक इन संस्थानों में 2,300 से अधिक विद्यार्थी भरती हुए और विभिन्न अध्ययन-क्रमों को पूरा करनेवालों की संख्या प्रति वर्ष 500 से ऊपर रही।

यह कार्यक्रम अभी प्रयोग की अवस्था में है। तीसरी योजना में इसे जारी रखा जाएगा, ताकि ये संस्थान अपने काम का पूरा-पूरा विकास कर सकें। विशेष समितियों-द्वारा कुछ ग्राम-संस्थानों के काम की समीक्षा भी की गई और इनकी सिफारिशों के अनुसार सुधार के उपाय किए गए। तीसरी योजना में इन संस्थानों की पूरी-पूरी सम्भावनाओं तथा ग्राम-विकास के लिए जनशक्ति की आवश्यकताओं को पूरा करने में इनके योगदान की जांच करना जरूरी होगा, ताकि ग्राम-समुदाय की विकास-आवश्यकताओं को देखते हुए इन्हें पूरी तरह से लैस किया जा सके।

38. **तीन वर्ष का डिग्री-पाठ्यक्रम :** उच्चतर शिक्षा का स्तर ऊपर उठाने के उद्देश्य से अधिकतर विश्वविद्यालयों में उच्चतर माध्यमिक विद्यालय-परीक्षा के बाद कला, विज्ञान और वाणिज्य का तीन वर्ष का डिग्री-पाठ्यक्रम अथवा वर्तमान मैट्रिकुलेशन या उसके समकक्ष परीक्षा के बाद पूर्व-विश्वविद्यालय-स्तर पर एक वर्ष का पाठ्यक्रम पहले ही शुरू किया जा चुका है। तीन वर्ष के डिग्री-पाठ्यक्रम के अन्तर्गत और सुधार भी शामिल हैं—जैसे, अध्यापक-छात्र-अनुपात में सुधार, ट्यूटोरियल पद्धति का आरम्भ, सामान्य शिक्षा, पुस्तकालयों का सुधार, प्रयोगशालाओं और अध्यापन-भवनों का निर्माण। विभिन्न विषयों के अध्यापकों के लिए दूसरी योजना की तरह समय-समय पर सम्मेलन, संगोष्ठियां होती रहेंगी और ग्रीष्म-संस्थानों तथा प्रत्यास्मरण-पाठ्यक्रम भी चलते रहेंगे। अध्यापकों को थोड़े अरसे के लिए अनुसन्धान-केन्द्र देखने के हेतु विशेष अनुदान भी दिए जाएंगे। विद्यार्थियों के लिए जो अतिरिक्त सुविधाएं दी जाएंगी, उनमें ये भी शामिल हैं—छात्रावासों की व्यवस्था, शौकिया काम-धन्धों की कर्मशालाएं, अनावासी छात्र-केन्द्र, स्वास्थ्य-केन्द्र, परामर्श-व्यवस्था तथा विद्यार्थी-सहायता-निधि की व्यवस्था। तीसरी योजना में ये सभी चीज़ें जारी रहेंगी।

लड़कियों की शिक्षा

39. विभिन्न स्तरों पर लड़कियों की शिक्षा की समस्या के कुछ पहलुओं की चर्चा पहले प्राथमिक, माध्यमिक और विश्वविद्यालय-शिक्षा के सन्दर्भ में की जा चुकी है। इस विषय के कुछ मुख्य पहलू ऐसे हैं, जिन पर और विचार करने की जरूरत है। पिछले दस वर्षों में 1 करोड़ 32 लाख और लड़के शिक्षा-संस्थाओं में भरती हुए, जब कि नई भरती होनेवाली लड़कियों की संख्या सिर्फ 68 लाख रही। सन् 1961 की जनगणना से पता

चला है कि पुरुषों में साक्षरता का अनुपात 34 प्रतिशत है, जब कि सिर्फ 13 प्रतिशत स्त्रियां ही साक्षर हैं। फलतः शिक्षा के क्षेत्र में तीसरी योजना का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य विभिन्न स्तरों पर लड़कियों की शिक्षा की सुविधाएं बढ़ाना होना चाहिए। जो कार्यक्रम निर्धारित किए जा चुके हैं, उनके अनुसार 6–14 वय-वर्ग में विद्यालय जानेवाली लड़कियों का अनुपात बढ़ कर 46 प्रतिशत हो जाना चाहिए। इसकी तुलना में लड़कों का अनुपात 73 प्रतिशत निर्धारित किया गया है। तीसरी योजना में विभिन्न वय-वर्गों में लगभग 2 करोड़ 4 लाख और बच्चे स्कूलों में भरती किए जाएंगे। आशा है कि इनमें 1 करोड़ 3 लाख लड़कियां होंगी। सबसे नीचे के वय-वर्ग में उनका अनुपात 56 प्रतिशत होगा। तीसरी योजना के अन्त में यद्यपि लड़कियों और लड़कों के अनुपात का वैषम्य कुछ कम हो जाएगा, तथापि वह काफी होगा। ऊपर जो अनुमान बताए गए हैं, उन्हें पूरा करने के लिए देश-भर में बड़े विराट प्रयत्न की आवश्यकता होगी—खास तौर से उन राज्यों में, जहां लड़कियों की शिक्षा का कार्य काफी पिछड़ा हुआ है।

40. योजना के अन्तर्गत शिक्षा-विकास के लिए जो साधन उपलब्ध हैं, उनमें से अनुमानतः 175 करोड़ रु० लड़कियों की शिक्षा पर खर्च किए जाएंगे। इसमें से लगभग 114 करोड़ रु० प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय-स्तर पर खर्च करने के लिए हैं। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, लड़कियों की शिक्षा के सामान्य कार्यक्रम को सहारा देनेवाली विशेष योजनाओं के लिए भी कुछ रकम की व्यवस्था की गई है। यह सुझाव है कि राज्यों की योजनाओं में लड़कियों की शिक्षा के लिए जो विभिन्न व्यवस्थाएं हैं, उन पर अमल करने में वे राष्ट्रीय स्त्री-शिक्षा-समिति की रिपोर्ट में की गई विस्तृत सिफारिशों को अवश्य ध्यान में रखें। जैसा कि बताया जा चुका है, ऐसी समुचित परिस्थितियां पैदा करने पर खास ज़ोर दिया जाना चाहिए कि माता-पिता को अपनी लड़कियों को पढ़ने के लिए विद्यालय में भेजने की प्रेरणा मिले, उपयुक्त जनमत तैयार हो, ऐसी ग्रामीण स्त्रियों की संख्या बढ़े, जो अध्यापन का धन्धा अपना सकें और शहरी क्षेत्रों की स्त्रियां गांवों के विद्यालयों में शिक्षिका की जगह स्वीकार करने के लिए तैयार हों। विचार है कि हर वर्ष सावधानी से इसका मूल्यांकन किया जाए कि लड़कियों की शिक्षा का कार्यक्रम लागू करने की दिशा में कितनी प्रगति हुई है और तीसरी योजना के लक्ष्य पूरे करने के लिए सभी ज़रूरी उपाय किए जाएं। लड़कियों की शिक्षा के क्षेत्र में यह खास तौर से जरूरी है कि देश के विभिन्न भागों में जो उपाय सफल रहें, उनका बारीकी से अध्ययन किया जाए और वह अनुभव सबके लिए सुलभ हो। वार्षिक योजनाएं तैयार करने में भी इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि लड़कियों की शिक्षा का कार्यक्रम आर्थिक साधनों की कमी के कारण पिछड़ने न पाए और वे सभी संगठन-सम्बन्धी तथा सामाजिक बाधाएं भरसक जल्दी-से-जल्दी दूर हो जाएं, जो प्रगति में बाधक होती हैं।

छात्रवृत्तियां

41. छात्रवृत्ति-कार्यक्रमों पर सन् 1950-51 में 3.5 करोड़ रु० के लगभग खर्च हुआ था। सन् 1955-56 में यह खर्च बढ़ कर 8 करोड़ रु० और सन् 1957-58 में 11 करोड़ रु० हो गया। आशा है कि सन् 1960-61 तक यह खर्च बढ़ कर 18 करोड़ रु० के करीब हो जाएगा। सन् 1950-51 में छात्रवृत्ति पानेवालों की संख्या 3.6 लाख

थी, जो सन् 1956-57 में बढ़ कर 8.8 लाख हो गई। इसमें से 7.8 लाख विद्यार्थी विद्यालयों के थे और कोई 1 लाख कालेजों तथा विश्वविद्यालयों के। इसके अलावा, सन् 1956-57 तक लगभग 50 लाख विद्यार्थियों को निःशुल्क छात्रत्व और दूसरी आर्थिक रिआयतें मिलने लगी थीं। इनमें से 1.5 लाख कालेजों और विश्वविद्यालयों के विद्यार्थी थे तथा 48.5 लाख विद्यालयों के। कालेजों और विश्वविद्यालयों में छात्रवृत्ति और वज़ीफे पानेवाले विद्यार्थियों का अनुपात सन् 1950-51 में 9 प्रतिशत था। इस समय अनुमान है कि यह अनुपात 16 प्रतिशत है। तीसरी योजना की अवधि मे ये छात्रवृत्तियां जारी रखी जाएंगी।

छात्रवृत्तियों की एक महत्वपूर्ण योजना अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए मैट्रिकुलेशन के बाद की छात्रवृत्तियों के बारे में है। ये कुछ वर्ष पहले शुरू की गई थीं और अब इनसे 50,000 विद्यार्थी लाभ उठाते हैं। इस पर प्रतिवर्ष 2.7 करोड़ रु० के करीब खर्च होता है। मैट्रिकुलेशन-पूर्व स्तर पर सन् 1960-61 में इन वर्गों के 40 से 50 लाख के बीच बच्चों को छात्रवृत्तियां और दूसरी रिआयतें मिलीं और इस मद में दूसरी योजना के अन्तर्गत 12 करोड़ रु० खर्च किए गए।

42. तीसरी योजना के अन्तर्गत विभिन्न क्षेत्रों में नई छात्रवृत्तियों की व्यवस्था इस प्रकार है :

	(करोड़ रु० में)
शिक्षा-कार्यक्रम	
पूर्व-विश्वविद्यालय-स्तर	4
विश्वविद्यालय-स्तर	6
पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए कार्यक्रम	
पूर्व-विश्वविद्यालय-स्तर	11
विश्वविद्यालय-स्तर	6
तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा	
इंजीनियरी और टेक्नोलाजी	8
शिल्पी	2
योग	37

ऊपर जिन रकमों का उल्लेख किया गया है, उनके अलावा विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग की अनुसन्धान-छात्रवृत्तियां और वज़ीफे तथा कृषि, स्वास्थ्य, वैज्ञानिक अनुसन्धान, आदि क्षेत्रों की छात्रवृत्ति-योजनाएं भी हैं।

43. राज्य-योजनाओं में छात्रवृत्तियों के मौजूदा कार्यक्रमों के विस्तार की व्यवस्था है। शिक्षा-मन्त्रालय ने जो योजनाएं शुरू की हैं, उनमें मैट्रिकुलेशन के बाद के स्तर पर मेधावी विद्यार्थियों के लिए राष्ट्रीय छात्रवृत्तियों की योजना तथा विदेशों में अध्ययन के लिए छात्रवृत्तियों की योजना का उल्लेख किया जा सकता है। इसके अलावा, विदेशों और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं-द्वारा भारतीय विद्यार्थियों के लिए विविध प्रकार की छात्रवृत्तियों की भी व्यवस्था की गई है। पिछड़े वर्गों के कल्याण के कार्यक्रम के अन्तर्गत, आशा है, विद्यालय-स्तर पर छात्रवृत्तिधारियों की संख्या बढ़ कर लगभग 70 लाख हो जाएगी।

जहां तक तकनीकी शिक्षा का प्रश्न है, अभी सिर्फ 6,000 विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियां या दूसरी प्रकार की सहायता प्राप्त होती है, पर आशा है कि यह संख्या बढ़ कर लगभग 32,000 हो जाएगी, यानी कुल भरती का 18 प्रतिशत ।

44. तीसरी योजना में छात्रवृत्तियों को जो महत्व दिया गया है, उसे देखते हुए यह सुझाव दिया गया है कि राज्य-सरकारें तथा सम्बद्ध केन्द्रीय मन्त्रालय इस उद्देश्य को सामने रख कर अपनी मौजूदा योजनाओं की समीक्षा करें कि जिन नियमों के अधीन छात्रवृत्तियां दी जाती हैं, उनका अगर ठीक-ठीक पालन होता रहे, तो इससे सचमुच होनहार किन्तु साथ ही ज़रूरतमन्द विद्यार्थियों को अपनी पढ़ाई पूरी करने में सहायता मिलती रहेगी और साधारणतः बीच में सहायता बन्द नहीं होगी । ऐसे विद्यार्थियों के लिए केवल मैट्रिकुलेशन के बाद के स्तर पर ही नहीं, बल्कि उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में भी उचित व्यवस्था होनी चाहिए । जहां तक आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों के विद्यार्थियों का सवाल है, लक्ष्य यह होना चाहिए कि इस तरह के जितने विद्यार्थी आएं, उनके लिए उचित व्यवस्था हो और उनमें से अधिकाधिक विद्यार्थी शिक्षा के उच्चतर स्तरों पर पहुंच सकें । यह देखा गया है कि चूकि काफी संख्या में योग्य उम्मीदवार नहीं आते, इसलिए इस वर्ग के लिए जगहें आरक्षित रखने के बारे में जो प्रशासकीय विनियम हैं, उनका हमेशा पूरा-पूरा पालन नहीं किया जाता । अन्त में, कुछ श्रेणियां कर्मचारियों की ऐसी भी हैं, जिनकी बहुत बड़ी संख्या में आवश्यकता है, पर आम तौर से उनमें उम्मीदवारों की संख्या अपर्याप्त ही रहती है—जैसे विज्ञान के शिक्षक, शिक्षिकाएं, नर्सें आदि । हर राज्य में इस बात की भलीभांति जांच-पड़ताल होनी चाहिए कि ऐसी श्रेणियां कौन-कौन-सी हैं और इस बात की कोशिश होनी चाहिए कि मैट्रिकुलेशन के बाद के स्तर पर ही इस तरह के होनहार विद्यार्थी छांट लिए जाएं और प्रशिक्षण की पूरी अवधि में छात्रवृत्तियों और वज़ीफों के रूप में उन्हें सहायता दी जाए । उन्हें यह विश्वास दिला दिया जाए कि उन्हें निश्चय ही नौकरी मिल जाएगी और इसके बदले में वे भी एक नियत अवधि तक नौकरी करने के लिए बाध्य हों ।

शिक्षकों के वेतन-मान और नौकरी की परिस्थितियां

45. पहली योजना के अन्त में अध्यापकों के वेतन-मान बढ़ाने की समस्या की ओर खास ध्यान दिया गया । दूसरी योजना में इस दिशा में काफी प्रगति हुई और अनुमान है कि विद्यालय-शिक्षकों के वेतन बढ़ाने के फलस्वरूप लगभग 30 करोड़ रु० का खर्च हुआ । इसके फलस्वरूप लगभग सभी राज्यों में प्रारम्भिक कक्षाओं के शिक्षकों के—और कुछ हद तक उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के शिक्षकों के—मूल वेतन पहले से अच्छे हो गए । इसके अतिरिक्त, विश्वविद्यालय-अध्यापकों के वेतन-मान बढ़ाने के कारण भी काफी खर्च करना पड़ा । कुछ राज्यों ने तीसरी योजना में अध्यापकों के वेतन और भत्ते बढ़ाने की व्यवस्था की है ।

तीसरी योजना में शिक्षकों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति सुधारने के प्रयत्न बराबर किए जाते रहेंगे । अध्यापन के क्षेत्र में विशिष्ट सेवा के लिए सन् 1958 से राष्ट्रीय पुरस्कार देने की जो पद्धति शुरू की गई है, वह अपने-आप में एक उपयोगी और नई सूझ है । तीसरी योजना में इन पुरस्कारों की संख्या बढ़ा दी जाएगी । योजना के अन्तर्गत

प्रारम्भिक और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों के लिए योग्यता-छात्रवृत्तियों की भी व्यवस्था है ।

शैक्षणिक अनुसन्धान और महत्वपूर्ण कर्मचारियों का प्रशिक्षण

46. किसी भी शिक्षा-पद्धति के विकास के लिए शैक्षणिक उद्देश्यों, तरीकों और तकनीकों के अनुसन्धान का एक जानदार कार्यक्रम आवश्यक होता है। भारत में आज इसका खास तौर से बड़ा महत्व है, क्योंकि यहां तेज़ी से विकास करते हुए समाज की बदलती हुई आवश्यकताओं के अनुरूप सारी पद्धति संशोधित हो रही है। पहली दोनों योजनाओं के दौरान कई अनुसन्धान-संस्थाएं खोली गईं। राष्ट्रीय बुनियादी शिक्षा-संस्था ने बुनियादी शिक्षा से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं के बारे में कई अन्वेषण कराए हैं, राज्यों में महत्वपूर्ण कर्मचारियों के लिए अल्पकालीन प्रशिक्षण-पाठ्यक्रमों और संगोष्ठियों का संगठन किया है तथा विभिन्न समस्याओं पर कई मूल्यवान अध्ययन प्रकाशित कराए हैं। राष्ट्रीय मौलिक शिक्षा-केन्द्र ने समाज-शिक्षा की समस्याओं का अध्ययन किया है तथा ज़िला-समाज-शिक्षा-संगठनकर्ताओं के कई दलों को प्रशिक्षण दिया है। राष्ट्रीय श्रव्य-दृश्य-शिक्षा-संस्था सामूहिक सम्पर्क के विभिन्न—नए और पुराने—माध्यमों के बारे में अनुसन्धान करता है। उसने इस क्षेत्र में काम करनेवाले महत्वपूर्ण कर्मचारियों के लिए कई संगोष्ठियों का आयोजन किया है। केन्द्रीय शैक्षणिक और व्यावसायिक पथ-प्रदर्शन-कार्यालय ने विभिन्न विषयों में परीक्षाएं लेने तथा विद्यार्थियों की विशेष रुचियों और रुझानों का पता लगाने के लिए—ताकि अध्ययन-क्रम और व्यवसाय चुनने में उनका मार्गप्रदर्शन किया जा सके—कई वस्तुपरक परीक्षणों का विकास किया है। राज्यों में मार्गप्रदर्शन करनेवाले कर्मचारियों के लिए यह कार्यालय संगोष्ठियों तथा अल्पकालीन अध्ययन-क्रमों की व्यवस्था करता है। इन उपायों से व्यावसायिक और शैक्षणिक मार्ग-प्रदर्शन का तो विकास होगा ही, विद्यालयों और कालेजों में मानसिक स्वास्थ्य-सेवाएं शुरू करने में भी सहायता मिलेगी। इनमें विद्यार्थियों की निजी और भावनात्मक समस्याओं के बारे में सलाह देना भी शामिल है। राज्यों में भी इसी तरह की संस्थाएं खोलने के लिए शिक्षा-मन्त्रालय ने सहायता दी है। केन्द्रीय पाठ्यग्रन्थ-अनुसन्धान-कार्यालय विभिन्न राज्यों में नियत पाठ्यग्रन्थों का विषयवस्तु और उनके चुनाव में अपनाई गई कार्य-विधि की दृष्टि से अध्ययन करता है। पाठ्यग्रन्थों का मूल्यांकन करने को कसौटियां भी तैयार कर ली गई हैं। लेखकों को पाठ्यग्रन्थ तैयार करने का प्रशिक्षण देने के लिए कर्मशालाओं का भी प्रबन्ध किया जा रहा है।

47. दूसरी योजना की अवधि में उच्चतर माध्यमिक शिक्षा की समस्या के अन्वेषण के लिए प्रशिक्षण-कालेजों को सहायता दी गई थी। उच्चतर माध्यमिक शिक्षा-विस्तार-कार्यक्रम-निदेशालय ने माध्यमिक शिक्षा से सम्बद्ध विभिन्न समस्याओं का अध्ययन किया है—जैसे परीक्षा-पद्धति का सुधार, पुनस्संगठित माध्यमिक विद्यालयों के लिए नए विषयों का पाठ्यक्रम, विज्ञान-शिक्षा की समस्याएं, अध्ययन-क्रमों में विविधता लाने का प्रयत्न, आदि ।

48. ऊपर अनुसन्धान के जिन कामों का उल्लेख किया गया है, वे सभी तीसरी योजना में जारी रहेंगे और उनका विस्तार किया जाएगा। राष्ट्रीय स्तर पर प्रशिक्षण और अनु-

सन्धान का एक केन्द्र विकसित करने के विचार से एक राष्ट्रीय शिक्षा-अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण-संस्था स्थापित करने का विचार है। मौजूदा केन्द्रीय शिक्षा-संस्था तथा दूसरी केन्द्रीय संस्थाएं और अभिकरण उसी में मिला दिए जाएंगे। विचार है कि उक्त संस्था एक स्वायत्त-संस्था के रूप में काम करेगी और उसके काम की परिधि में शिक्षा-विषयक अनुसन्धान के विविध क्षेत्र आ जाएंगे। इन क्षेत्रों में ये भी शामिल होंगे—प्रारम्भिक, उच्चतर माध्यमिक, सामाजिक और दृश्य-श्रव्य शिक्षा तथा इन और दूसरे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण कर्मचारियों का प्रशिक्षण। प्रशिक्षण-संस्थाओं के माध्यम से विस्तार-सेवाओं के कार्यक्रम में तालमेल रखना और उसका निदेशन करना राष्ट्रीय संस्था का काम होगा।

120 प्रारम्भिक शिक्षक-प्रशिक्षण-संस्थाओं में विस्तार-विभाग खोले जाएंगे, जो चुने हुए क्षेत्रों में अनुसन्धान करेंगे और प्रारम्भिक विद्यालयों के शिक्षकों को उनके नौकरी में रहते हुए प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करेंगे।

पाठ्य पुस्तकें

49. हाल के वर्षों में पाठ्य पुस्तकों की समस्या बराबर अधिकाधिक महत्वपूर्ण होती गई है और इसका जल्दी ही कुछ हल निकाला जाना चाहिए। किसी पाठ्य पुस्तक में जिन पहलुओं पर विचार किया जाता है, उनमें प्रमुख ये हैं—विषय-वस्तु, उसे प्रस्तुत करने का ढंग, छपाई, गेट-अप और मूल्य। एक और महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि पाठ्य पुस्तकों के चुनाव का तरीका क्या होना चाहिए। पाठ्य पुस्तकों के मामले में जो कठिनाइयां सामने आती हैं, उन्हें दूर करने के लिए राज्य-सरकारों ने प्रयोग के तौर पर पाठ्य पुस्तकों का 'राष्ट्रीय-करण' शुरू कर दिया है। अभी यह प्रयोग इतना छोटा है कि इससे कोई निश्चित निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता। लेखकों और चित्रकारों का चुनाव करने, उन्हें प्रशिक्षित करने और प्रोत्साहन देने के लिए तथा कागज की मात्रा बढ़ाने और छपाई की उचित व्यवस्था करने के लिए आवश्यक कदम उठाने पड़ेंगे। बड़े पैमाने पर पाठ्य पुस्तकें तैयार करने में केन्द्र और राज्यों को अपने प्रयत्नों में समन्वय लाना होगा, ताकि एक तो कीमते कम हों और दूसरे कुछ राष्ट्रीय उद्देश्य बराबर सबके सामने रहें। विश्वविद्यालय-स्तर पर अनिवार्यतः विदेशी पुस्तकों पर काफी भरोसा करना पड़ता है—उनकी कीमतें कम करने के लिए उन्हें भारत में छपवाने के प्रबन्ध पर विचार किया जा रहा है। साथ ही, भारतीय लेखकों के हितों की भी पूरी तरह रक्षा की जानी चाहिए। विभिन्न भाषाओं में प्रामाणिक पाठ्य पुस्तकों के अनुवाद की समस्या और इन भाषाओं में मौलिक किताबें लिखने की समस्या बहुत महत्वपूर्ण हो गई है, क्योंकि विश्वविद्यालयों में उनका उपयोग बढ़ता जा रहा है।

परीक्षा-पद्धति में सुधार

50. उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों के क्षेत्र और विविधता में विस्तार के कारण वर्तमान परीक्षा-पद्धति उसके उपयुक्त नहीं रह गई है। हाल के वर्षों में उसकी काफी आलोचना भी हुई है। उच्चतर माध्यमिक शिक्षा-आयोग ने परीक्षा-पद्धति में सुधार की आवश्यकता पर विशेष बल दिया था। उच्चतर माध्यमिक शिक्षा-विस्तार-कार्यक्रम-निदेशालय में दूसरी योजना के अन्तिम दौर में एक जांच-टुकड़ी की नियुक्ति की गई

और परीक्षा-पद्धति के सुधार का कार्यक्रम हाथ में लिया गया। इस कार्यक्रम के अधीन परीक्षा की तकनीकों में क्रमशः सुधार करने का विचार किया गया है और उसके उद्देश्य इस प्रकार हैं :

(1) विद्यालय के विविध विषयों के अध्ययन में जो विशिष्ट शैक्षणिक उद्देश्य निहित हों, उन्हें स्पष्ट करना और उनकी व्याख्या करना;

(2) बाहरी परीक्षाओं के तरीकों का इन उद्देश्यों के साथ समन्वय करना, ताकि परीक्षा-प्रश्नों और अन्य परीक्षणों से यह जांचा जा सके कि इनके सन्दर्भ में विद्यार्थियों की उपलब्धियां क्या हैं;

(3) विद्यालय की निजी परीक्षाओं में उसी हिसाब से परिवर्तन करना;

(4) विद्यालय के अपने मूल्यांकन को अधिकाधिक महत्व देना;

(5) हर विषय के लिए जो शैक्षणिक उद्देश्य निश्चित किए जाएं, उनको ध्यान में रखते हुए पढ़ाने के तरीकों और अध्ययन-क्रम में सुधार करना।

कार्यक्रम का जितना अंश अब तक पूरा हुआ है, उससे संगोष्ठियों और कर्मशालाओं के माध्यम से बहुत-से अध्यापकों को नई संकल्पनाओं और पद्धतियों से परिचित कराने और प्रशिक्षण-कालेजों, उच्चतर माध्यमिक विद्यालय-मंडलों और दूसरी संस्थाओं को परीक्षा-पद्धति में सुधार की समस्याओं की जानकारी कराने में मदद मिली है। आगे के लिए भी काफी तैयारियां कर ली गई हैं। तीसरी योजना में ऊपर बताई गई दिशाओं में और तेजी से काम किया जाएगा। राज्यों में मूल्यांकन-टुकड़ियां स्थापित करने का विचार है, जो कार्यक्रम को लागू करने में केन्द्रीय टुकड़ी के साथ तालमेल रखते हुए काम करेंगी। विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग ने तीन विश्वविद्यालयों में परीक्षा-शोध-टुकड़ियां खोलने में सहायता दी है। आगे भी अनुसन्धान-कार्य का आयोजन किया गया और अधिक संख्या में मूल्यांकन-कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया जाएगा। कुछ विश्वविद्यालयों में अनुसन्धान और मूल्यांकन-टुकड़ियां भी खोली जाएंगी।

51. **हिन्दी और संस्कृत का विकास :** पहली दो योजनाओं में हिन्दी के विकास के लिए ये कार्यक्रम शुरू किए गए—हिन्दी की पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण, शब्दकोश और मौलिक साहित्य की रचना, विश्वविद्यालय-स्तर की पुस्तकों का हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं में अनुवाद और प्रकाशकों की मार्फत हिन्दी में लोकप्रिय पुस्तकों का प्रकाशन। हिन्दी के प्रचार-कार्य में संलग्न स्वतन्त्र संस्थाओं को आर्थिक सहायता दी गई। अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों में विद्यालय-पुस्तकालयों और दूसरी शिक्षा-संस्थाओं को उपहार-स्वरूप पुस्तकें दी गईं। हिन्दी-शिक्षकों के प्रशिक्षण की सुविधाएं बढ़ाने तथा हिन्दी-शिक्षक-प्रशिक्षण-कालेजों की स्थापना के लिए कुछ राज्यों को अनुदान दिए गए। अहिन्दी-भाषी राज्यों में उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी-शिक्षकों की नियुक्ति के लिए और उनके वेतनमान बढ़ाने के लिए धन-राशि की भी व्यवस्था की गई। पहली और दूसरी योजनाओं की अवधि में जो कार्यक्रम शुरू किए गए हैं, तीसरी योजना में उन्हें जारी रखा जाएगा तथा उनका विस्तार किया जाएगा।

52. देश में संस्कृत-शिक्षा की अवस्था के प्रश्न पर हर पहलू से विचार करने के लिए और उसके विकास के तरीके सुझाने के लिए शिक्षा-मन्त्रालय ने एक संस्कृत-आयोग की नियुक्ति की थी, जिसने सन् 1957 में अपनी सिफारिशें पेश कीं। दूसरी योजना के

दौरान इन सिफारिशों पर अमल शुरू हो गया। संस्कृत के प्रचार और विकास के प्रश्नों पर भारत-सरकार को सलाह देने के लिए सन् 1959 में केन्द्रीय संस्कृत-मंडल की स्थापना की गई। उसकी सलाह से कुछ कदम भी उठाए गए हैं। तीसरी योजना के कार्यक्रम में ये बातें शामिल होंगी—साहित्य का निर्माण करना, अनुसन्धान के लिए छात्रवृत्तियां देना, गुरुकुलों का विकास करना, संस्कृत-पाठशालाओं को आधुनिक रूप देना, शब्दकोश तैयार करना और अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए एक केन्द्रीय संस्कृत-संस्था की स्थापना करना। इसी तरह के कार्यक्रम लागू करने के लिए कुछ राज्यों ने भी आवश्यक धन-राशि की व्यवस्था की है।

53. **विकलांगों की शिक्षा :** दूसरी योजना के अन्तर्गत विकलांगों की शिक्षा और प्रशिक्षण के लिए कई कार्यक्रम शुरू किए गए। तीसरी योजना में इन्हें जारी रखा जाएगा। राष्ट्रीय अन्धजन-केन्द्र को बढ़ाया जाएगा और एक राष्ट्रीय ब्रेल-पुस्तकालय की स्थापना की जाएगी। वयस्क बहरों के लिए प्रशिक्षण-केन्द्र खोला जाएगा तथा मानसिक विकृति-वाले बालकों के लिए एक विद्यालय की स्थापना की जाएगी। छात्रवृत्ति की उस योजना को और भी बढ़ाया जाएगा, जिसके अधीन विकलांग विद्यार्थियों को उच्चतर और तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा के लिए सहायता दी जाती है। स्वतन्त्र संस्थाओं की मार्फत विकलांगों के लिए सेवाओं के विकास पर और शारीरिक दृष्टि से विकलांगों के लिए विशेष रोज़गार-दफ्तरों की व्यवस्था पर ज़ोर दिया जाएगा।

शारीरिक शिक्षा, खेल और युवा-कल्याण-कार्यक्रम

54. इस क्षेत्र में दूसरी योजना की अवधि में जो महत्वपूर्ण बातें हुईं, उनमें ये उल्लेखनीय हैं : ग्वालियर में राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा-कालेज की स्थापना (जो देश में अपनी तरह का पहला कालेज है), बाल-भवन की स्थापना (जिससे बच्चों की मनोरंजन की आवश्यकताएं पूरी हों) और सावधानी से श्रेणीबद्ध परीक्षणों के आधार पर राष्ट्रीय शारीरिक क्षमता-आन्दोलन की शुरुआत। दूसरी योजना के अन्त में विभिन्न खेलों और क्रीड़ाओं में उच्च श्रेणी के प्रशिक्षक तैयार करने के लिए राष्ट्रीय खेल-कूद-संस्था की स्थापना की गई। युवकों के लिए जो काम किए गए उनमें स्टेडियम, तैराकी के तालाब और खुली रंगशालाएं, आदि के निर्माण के लिए अनुदान भी शामिल हैं। राष्ट्रीय सैन्य शिक्षार्थी-दल, सहायक सैन्य शिक्षार्थी-दल, भारत स्काउट्स एंड गाइड्स और राष्ट्रीय अनुशासन-योजना के कार्यकलाप को प्रोत्साहन देने के लिए भी कदम उठाए गए।

तीसरी योजना में ये सभी कार्यक्रम जारी रखे जाएंगे। राष्ट्रीय खेल-कूद-संस्था का विकास किया जाएगा, ताकि उसमें सभी महत्वपूर्ण खेलों का समावेश हो जाए। इस संस्था में प्रशिक्षण पानेवाले खेल-शिक्षकों की सहायता से एक राष्ट्रीय खेल-शिक्षा-योजना शुरू की जाएगी, जिसमें खेलों की शिक्षा की व्यापक सुविधाएं दी जाएंगी, ताकि खेलों का स्तर धीरे-धीरे ऊपर उठे। राष्ट्रीय शारीरिक क्षमता-आन्दोलन को भी ज़ोरदार तरीके से चलाया जाएगा, ताकि उसका ज़्यादा असर हो। बाल-भवन के संपूरक के रूप में एक राष्ट्रीय बाल-संग्रहालय स्थापित करने का भी विचार है।

समाज-शिक्षा और वयस्क-साक्षरता

जैसा कि पहली योजना में बताया गया था, समाज-शिक्षा का मतलब है—'सामुदायिक

प्रयत्न के द्वारा समाज के उत्थान का सर्वव्यापी कार्यक्रम।' इस प्रकार, समाज-शिक्षा में साक्षरता, स्वास्थ्य, मनोरंजन और वयस्कों के गार्हस्थ्य जीवन के कार्यक्रम, नागरिकता का प्रशिक्षण और आर्थिक क्षमता बढ़ाने के लिए मार्गप्रदर्शन भी शामिल है। बारीकी से सोचने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि लोकतान्त्रिक व्यवस्था में सुयोजित विकास की सफलता—जिसकी परिधि में लाखों लोगों की आवश्यकताएं आ जाती हैं—समाज-शिक्षा के प्रसार, प्रगतिशील दृष्टिकोण तथा सामूहिक नागरिकता की भावना के विकास पर निर्भर होती है। फिर भी कृषि, सामुदायिक विकास, स्वास्थ्य तथा कुछ अन्य कल्याण-कार्यक्रमों के शैक्षणिक उद्देश्य पूरा करना सबसे अधिक कठिन है। पिछले दस वर्षों में कई दिशाओं में काफी प्रगति हुई है—जैसे, सामुदायिक केन्द्रों के विकास में, गांवों में वाचनालय खोलने में, नवयुवकों और स्त्रियों के संगठित क्रियाकलाप की उन्नति में और ग्राम-पंचायतों तथा सहकारिता-आन्दोलन में नए प्राण फूंकने में। फिर भी, समाज-शिक्षा का एक पहलू, जो कई तरह से सबसे महत्वपूर्ण है, चिन्तनीय है। सन् 1951 और 1961 के बीच साक्षरता 17 प्रतिशत से बढ़ कर केवल 24 प्रतिशत तक पहुंची है। ज़िला-स्तर और खंड-स्तर पर पंचायती राज लागू हो जाने और ग्राम-पंचायतों को जो कार्य-भार सौंपा गया है, उसके महत्व को देखते हुए यह ज़रूरी हो गया है कि भरसक कम-से-कम समय में वयस्क आबादी का काफी बड़ा भाग पढ़ने-लिखने के योग्य हो जाए। यह उनके अपने हित में तो होगा ही, इनसे सारे समाज का भी भला होगा। चूंकि इस दिशा में अभी तक काफी प्रगति नहीं हुई है, इसलिए वयस्क-साक्षरता का तेज़ी से प्रसार करने के उपाय निकालने के लिए इस समस्या पर फिर नए सिरे से विचार किया जा रहा है।

56. शिक्षा-मन्त्रालय के कार्यक्रमों में राष्ट्रीय शिक्षा-संस्था के अंग-रूप में राष्ट्रीय मौलिक शिक्षा-केन्द्र के विकास, नवसाक्षरों के लिए साहित्य का निर्माण, समाज-शिक्षा-कार्य में संलग्न स्वैच्छिक संगठनों को सहायता तथा पुस्तकालय-सुविधाओं के विस्तार की व्यवस्था है। राज्यों की शिक्षा-योजनाओं में पुस्तकालयों, सम्पर्क-स्थापक वर्गों, कुछ हद तक वयस्क-विद्यालयों तथा वयस्क-साक्षरता के प्रोत्साहन के लिए अन्य कार्यक्रमों की व्यवस्था है। समाज-शिक्षा के लिए धन-राशि की मुख्य व्यवस्था सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न योजनाओं के बजट में की गई है। यह आशा की जाती है कि तीसरी योजना में समाज-शिक्षा के लिए कुल मिला कर 25 करोड़ रुपये मिल सकेंगे।

57. वयस्क-साक्षरता के किसी भी बड़े और कारगर कार्यक्रम के लिए हर स्तर पर उन कर्मचारियों का अधिकाधिक सहयोग आवश्यक है, जो शिक्षा और सामुदायिक विकास के कार्य में संलग्न हैं। इसके लिए उपलब्ध जन और धन-साधनों को जुटाना ज़रूरी होगा, स्वयं-सेवी कार्यकर्ताओं और संगठनों को एक साथ एक ही दिशा में सक्रिय होना पड़ेगा, तथा खंड और ग्राम-स्तर पर तथा हर शहर और कस्बे में वयस्क-शिक्षा और साक्षरता के कार्य का विकास करना होगा, ताकि वह अधिकाधिक जन-आन्दोलन का रूप धारण करे। शिक्षा-संस्थाओं को—विशेषकर गांवों के विद्यालयों को—पंचायतों तथा सहकारी समितियों और स्वैच्छिक संगठनों के सहयोग से समाज-शिक्षा और वयस्क-साक्षरता को विस्तार-कार्य के रूप में विकसित करना होगा। मोटे तौर पर, उद्देश्य यह होना चाहिए कि जहां कहीं भी कुछ लोग—जो मिल कर एक कक्षा का रूप धारण करने के लिए काफी हों—पढ़ने की इच्छा प्रकट करें, वहीं शिक्षक और शिक्षा-सामग्री के रूप में उन्हें आवश्यक सुविधाएं तुरन्त दी जाएं। प्रत्येक शिक्षा-संस्था को इस प्रयत्न में योग

देना चाहिए और इस काम में जो शिक्षक हाथ बटाएं, उन्हें उचित पारिश्रमिक दिया जाना चाहिए। साथ ही, ग्राम-पंचायत और अन्य संस्थाओं को भी इस दिशा में उचित योगदान करना चाहिए। समाज-शिक्षा-संगठनकर्ताओं, खंड-शिक्षा-अधिकारियों और निजी शिक्षा-संस्थाओं को परस्पर-सहयोग से काम करके स्थानीय पंचायत-समितियों, ग्राम-पंचायतों तथा स्वैच्छिक संगठनों के लिए आवश्यक सुविधाएं जुटानी चाहिए, ताकि लोगों में उत्साह पैदा हो और बराबर बना रहे तथा एक अनवरत आधार पर ऐसे तरीके से वयस्क-शिक्षा और साक्षरता का विकास हो कि उसका उनकी अपनी आवश्यकताओं और परिस्थितियों से अभिन्न सम्बन्ध हो। पुरुषों और स्त्रियों, दोनों में साक्षरता के प्रसार के लिए हर कदम पर स्थानीय नेताओं, शिक्षकों और स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं को इस आन्दोलन में शामिल किया जाना चाहिए।

58. **पुस्तकालय :** पुस्तकालयों की समुचित व्यवस्था किसी भी सुयोजित शिक्षा-प्रणाली का एक आवश्यक अंग है। भारत-सरकार-द्वारा नियुक्त पुस्तकालय-समिति ने सन् 1959 में अपनी रिपोर्ट में इस ओर संकेत किया था कि पुस्तकालयों की समुचित व्यवस्था की मांगों और उनकी वर्तमान स्थिति के बीच बहुत बड़ी खाई है। यह खाई लम्बे समय के और उचित रीति से अवस्थानों में बंटे हुए कार्यक्रम के द्वारा ही पाटी जा सकती है। तीसरी योजना में दिल्ली, कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के चारों राष्ट्रीय पुस्तकालयों की स्थापना या विकास की दिशा में कदम उठाए जाएंगे। विभिन्न राज्यों की राजधानियों में पुस्तकालयों को उन्नत करने तथा ज़िलों और तालुकों में पुस्तकालयों की संख्या बढ़ाने की भी व्यवस्था है। इसके अलावा, शिक्षा-संस्थाओं के अपने पुस्तकालय हैं। तीसरी योजना के दौरान इनकी उन्नति और सुधार किया जाएगा। पुस्तकालयों के प्रमुख कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए दूसरी योजना में एक पुस्तकालय-विज्ञान-संस्था स्थापित की गई थी। तीसरी योजना में इसका और विकास किया जाएगा। अन्य विश्व-विद्यालयों में भी पुस्तकालय-विज्ञान में अनुसन्धान करने की सुविधाएं तथा पुस्तकालय-कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने की सुविधाएं हैं।

सांस्कृतिक कार्यक्रम

59. नई पीढ़ी की मांगों को देखते हुए कला, साहित्य, नृत्य, नाटक, और संगीत के क्षेत्र में भारत की विशिष्ट परम्परा को और भी विकसित करना होगा। भारत की सांस्कृतिक एकता के सम्प्रेषण के लिए पुरातात्विक स्मारकों और प्राचीन कला की रक्षा करनी होगी तथा उनकी पुनर्व्याख्या करनी होगी। इस दिशा में जो महत्वपूर्ण कदम पहले ही उठाए जा चुके हैं, उनमें से कुछ ये हैं : ललित कला-अकादेमी, साहित्य-अकादेमी, संगीत-नाटक-अकादेमी, राष्ट्रीय-संग्रहालय एवं राष्ट्रीय कला-भवन की स्थापना। इसके अलावा, दूसरी योजना में जिन अन्य कार्यक्रमों पर अमल किया गया, उनमें संग्रहालयों तथा पुस्तकालयों का पुनर्गठन और विकास तथा गज़ेटियर तैयार करने के काम शामिल हैं, जिनका तीसरी योजना में और विकास किया जाएगा।

दूसरी योजना में ज़िला तथा भारतीय गज़ेटियरों के संशोधन का जो काम शुरू किया गया था, उसे और आगे बढ़ाया जाएगा। पुरानी पांडुलिपियां प्रकाशित करने, उनका परिरक्षण करने और वर्णक्रमानुसार उनकी सूची तैयार करने का काम तथा

दुलभ पांडुलिपियों का एक माइक्रोफिल्म-पुस्तकालय स्थापित करने तथा इस प्रकार की पांडुलिपियां उपलब्ध करने का काम भी इस योजना का एक अंग है।

60. यह बहुत ज़रूरी है कि हिन्दी और संस्कृत के साथ-साथ आधुनिक भारतीय भाषाओं का भी विकास किया जाए। द्विभाषिक-शब्दकोश तैयार करने, अनुवादों पर पुरस्कार देने, विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं में विश्वकोश और अंग्रेज़ी-भारतीय भाषा का शब्दकोश तैयार कराने की व्यवस्था करने तथा पुरानी पांडुलिपियां और दुर्लभ ग्रन्थ, सूचीपत्र और ग्रन्थ-सूचियां प्रकाशित कराने का भी विचार है। तीसरी योजना में भारत के भाषागत सर्वेक्षण की भी व्यवस्था है।

हाल में ही साहित्य-अकादेमी ने सम-सामयिक भारतीय साहित्य का सर्वेक्षण किया है। राष्ट्रीय पुस्तक-न्यास (नेशनल बुक ट्रस्ट) इस बात के लिए कदम उठा रहा है कि अच्छे साहित्य का निर्माण हो और पुस्तकालयों, शिक्षा-संस्थाओं और आम जनता को अच्छी पुस्तकें सस्ती कीमत पर मिल सकें। विदेशी भाषाओं की प्रसिद्ध पुस्तकों का भारतीय भाषाओं में तथा एक भारतीय भाषा की प्रामाणिक पुस्तकों का दूसरी भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराना भी इस न्यास का उद्देश्य है।

भारत की सांस्कृतिक एकता के विकास के लिए यह ज़रूरी है कि भारतीय भाषाओं और उनके साहित्य को देश के विभिन्न भागों में प्रसारित और प्रचारित करने के काम को काफी महत्व दिया जाए। केन्द्रीय शिक्षा-सलाहकार-मंडल ने इस पहलू पर ज़ोर दिया है और सिफारिश की है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर हर विद्यार्थी को अपनी मातृ-भाषा के अलावा एक और भारतीय भाषा पढ़ाई जानी चाहिए। कुछ विश्वविद्यालयों में भारतीय भाषाओं के अध्ययन की सुविधाएं दी जा रही हैं। तीसरी योजना के सन्दर्भ में कहीं व्यापक आधार पर इन सुविधाओं की व्यवस्था करने की आवश्यकता है।

61. संग्रहालयों का पुनर्गठन और विकास विशेषज्ञ-संग्रहालय-सर्वेक्षण-समिति (1955) की सिफारिशों और इसी उद्देश्य से स्थापित केन्द्रीय संग्रहालय-सलाहकार-मंडल के परामर्श के अनुसार किया जाएगा। तीसरी योजना में राष्ट्रीय आधुनिक कला-दीर्घा के लिए कला-संग्रह प्राप्त करने की एक परियोजना शामिल है और इस सिलसिले में सरकार को सलाह देने के लिए समितियां बना दी गई हैं। केन्द्रीय सरकार ने हैदराबाद के सालारजंग-संग्रहालय को अपने अधिकार में ले लिया है, जिसे दक्षिण-भारत के लिए राष्ट्रीय संग्रहालय के रूप में विकसित किया जाएगा।

62. पुरातत्व-विभाग ने कुछ कार्यक्रम बना रखे हैं, जो तीसरी योजना में जारी रहेंगे—जैसे, प्राचीन इमारतों का परीक्षण, प्राचीन चित्रों की प्रतिलिपियां तैयार करना और पुरानी चीज़ों का सर्वेक्षण कराना। इसके साथ ही खुदाई-शाखा का और विकास किया जाएगा। ऐतिहासिक महत्व और राष्ट्रीय सौन्दर्य के ऐसे स्थानों की देखभाल के लिए जो पुरातत्व-विभाग के कार्यक्षेत्र में नहीं आते, एक राष्ट्रीय न्यास कायम किया जाएगा।

63. तीसरी योजना में नृतत्वशास्त्र और नृजाति-विज्ञान के क्षेत्र में अनुसन्धान की व्यवस्था की गई है।

विभिन्न कार्यक्रमों के लिए आवश्यक प्रशिक्षित कर्मचारियों की मांग पूरी करने के लिए विभिन्न सांस्कृतिक क्षेत्रों में विद्यार्थियों और युवा कार्यकर्ताओं को छात्रवृत्तियां

दी जाएंगी। इसके साथ ही उन्हें विदेश भेजने के लिए भी कुछ छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की गई है।

, 64. तीसरी योजना में अन्य देशों के साथ सांस्कृतिक सम्बन्ध बढ़ाने के काम को और प्रोत्साहित किया जाएगा। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए जो योजनाएं बनाई गई हैं, उनमें ये भी शामिल हैं—भारतीय सांस्कृतिक सम्पर्क-परिषद् का विकास, दिल्ली-विश्वविद्यालय में अन्तर्राष्ट्रीय विद्यार्थी-गृह का निर्माण तथा विदेशों मे सास्कृतिक संस्थाओं के उपयोग के लिए चित्रों, मूर्तियों और भारतीय कलाकृतियों की नकलें तैयार करना।

दूसरी योजना की अवधि में दिल्ली में बुद्ध-जयन्ती-स्मारक बनाने की जो योजना शुरू की गई थी, उसे तीसरी योजना में पूरा किया जाएगा। उच्चतर अध्ययन और अनुसन्धान की वर्तमान संस्थाओं का अधिक विकास किया जाएगा। अन्य कार्यक्रमों में दिल्ली में एक राष्ट्रीय रंगशाला और एक विशाल खुला रंगमंच स्थापित करना भी शामिल है।

65. दूसरी पंचवर्षीय योजना में विभिन्न सास्कृतिक कार्यक्रमों पर 4 करोड़ रु० खर्च किए गए थे—2.6 करोड़ रु० केन्द्र-द्वारा और 1.4 करोड़ रु० राज्यों-द्वारा। तीसरी पंचवर्षीय योजना में इस काम के लिए 10 करोड़ रु० की स्वीकृति दी गई है, जिसमें से 6 करोड़ रु० केन्द्र-द्वारा और 4 करोड़ राज्यों-द्वारा खर्च किए जाएंगे।

राष्ट्रीय एकता

66. भारत में आर्थिक आयोजन की सफलता बहुत-कुछ इस बात पर निर्भर होगी कि भाषा, धर्म, जाति और प्रदेश की विविधताओ के बीच हममें एक राष्ट्र के रूप में संगठित होने की कितनी क्षमता है। लोकतन्त्र में एकता का आधार समान सांस्कृतिक परम्परा तथा समान रूप से स्वीकृत भावी लक्ष्य की चेतना तथा उन्हे अभिव्यक्ति देने के अनावरत प्रयत्न ही हो सकते हैं। भारत की एक समृद्ध और सामाजिक संस्कृति है। समाज के प्रत्येक वर्ग का उसमें योगदान है और इसके लिए गर्व का अनभव करना उचित ही है। इस संस्कृति के मूल तत्व हैं—उदारता, एक-दूसरे के प्रति सहिष्णुता की भावना, भौतिकता और आध्यात्मिकता के बीच सन्तुलन, तथा सहयोग पर आश्रित जीवन-प्रणाली जिसमें किसी समुदाय के विभिन्न व्यक्ति समान रूप से स्वीकृत अधिकारों और दायित्वों के द्वारा एक-दूसरे से बंधे है। भारत के भावी लक्ष्य उसके संविधान मे निहित है और उन्हें प्राप्त करने के मुख्य साधन हैं, उसकी विकास-योजनाएं।

67. नई पीढ़ी में राष्ट्रीय एकता और सामाजिक सामंजस्य पैदा करने में शिक्षा-संस्थाओं को बड़ा महत्वपूर्ण काम करना है। विद्यालय का कार्यक्रम इस तरह तैयार किया जाना चाहिए कि विद्यार्थियों में राष्ट्रीय एकता की भावना जागे और इसके लिए विद्यालयों में सहकारी आत्मनिर्भरता और लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों पर आधारित सामुदायिक जीवन की व्यवस्था की जानी चाहिए, शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर अध्ययन-क्रम में भारत के इतिहास और संस्कृति के अध्ययन की व्यवस्था होनी चाहिए और ऐसी उपयुक्त पाठ्य पुस्तकें होनी चाहिए, जिनसे विद्यार्थियों में नैतिक तथा सामाजिक मूल्यों के प्रति निष्ठा जागे। ललित कलाओं—नृत्य, नाटक, संगीत तथा साहित्य—के माध्यम से भारत की सामाजिक सांस्कृतिक परम्परा के पुनरुत्थान और विकास का प्रयत्न होना चाहिए। विद्यालय-कार्यक्रम को बल देने के लिए कुछ और काम भी ज़रूरी हैं—जैसे, विद्यार्थियों को

एक मंच पर लाने और शिक्षा-यात्राओं के द्वारा उन्हें देश की वैविध्यपूर्ण संस्कृति का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त कराने का कार्यक्रम; आधुनिक भारतीय भाषाओं और प्राचीन भाषाओं का विकास और उनके समृद्ध साहित्य-भांडार को अनुवादों के द्वारा देश के विभिन्न भागों में अधिकाधिक लोगों को उपलब्ध कराना, आदि। इसके साथ ही, यह भी जरूरी है कि विद्यार्थियों में योजना की व्यापक और सही समझ पैदा करने के लिए कदम उठाए जाएं। इन सब उपायों का उद्देश्य भावात्मक और रचनात्मक ढंग से राष्ट्रीय संगठन और एकता की शक्तियों को बल प्रदान करना है।

इस समय एक विशेष समिति हमारी शिक्षा-पद्धति को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय एकता लाने और राष्ट्रीय चेतना बढ़ाने के सवाल पर विचार कर रही है। समिति की जो भी सिफारिशें होंगी, उनकी रोशनी में शिक्षा-नीतियों और कार्यक्रमों पर पुनर्विचार करना होगा।

अनुबन्ध 1

6-11 वय-वर्ग के बच्चों के लिए विद्यालय-सम्बन्धी सुविधाएं (1960-61 और 1965-66)

(संख्याएं लाख में)

राज्य का नाम	1 से 5 तक की कक्षाओं में भरती						6-11 वय-वर्ग में आबादी का प्रतिशत अनुपात (अनुमानित)					
	1960-61			1965-66			1960-61			1965-66		
	योग	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
आन्ध्रप्रदेश ..	28.2	17.5	10.7	44.2	25.4	18.8	60.3	74	46.2	84.5	96.1	72.7
असम ..	10.68	6.79	3.89	15.08	8.99	6.09	61.7	73.7	48	77.4	86.6	66.9
बिहार ..	32	24	8	48	30	18	53.5	80	26.9	72.6	90.4	54.7
गुजरात ..	20	12.3	7.7	26.63	15.62	11.01	72	85.9	57.3	84.2	95.8	71.9
जम्मू और कश्मीर ..	1.97	1.54	0.43	3.02	2.24	0.78	45	66.1	21	62.3	87.2	34.2
केरल ..	23.44	12.58	10.86	26.61	14.28	12.33	108.8	118	99.7	108.7	117.8	99.7
मध्यप्रदेश ..	20	16	4	30	20	10	47	73.5	19.3	64	83.3	43.8
मद्रास ..	33.5	21.26	12.24	47.5	25.5	22	78.9	99.7	58	100	106.8	93.1
महाराष्ट्र ..	39	24.47	14.53	54	32.3	21.7	73.3	89	56.6	90 5	104.8	75.3
मैसूर ..	21.44	13.64	7.8	31.44	16.08	15.36	67.4	84	50.1	88.2	88.4	88.1
उड़ीसा ..	10	7.5	2.5	16	10.5	5.5	47.8	71.6	23.9	64.6	85	44.3
पंजाब ..	16.86	12.26	4.6	22.86	15	7.86	61.8	84	36.3	74.6	91.4	55.2
राजस्थान ..	11.51	9.51	2	21	13.9	7.1	42	66.2	15.3	68.2	86.2	48.4

अनुबन्ध 1—(जारी)

1	2	3	4	5	6	7	8	6	10	11	12	13
उत्तरप्रदेश ..	40.43	32	8.43	66.5	45	21.5	45.4	68.6	19.9	61.7	79.5	41.9
पश्चिम-बंगाल ..	28.52	18.67	9.85	35.02	21.5	13.52	65.6	80.8	48.4	73.4	84.5	60.7
दिल्ली ..	2.91	1.68	1.23	4.08	2.21	1.87	86.6	89.3	83.1	99.5	104.2	94.4
हिमाचलप्रदेश ..	0.8	0.63	0.17	1.14	0.71	0.43	48.8	73.3	21.8	69.5	83.5	54.4
पांडिचेरी ..	0.35	0.2	0.15	0.47	0.25	0.22	72.9	83.3	62.5	87	92.6	81.5
अन्य केन्द्र-शासित क्षेत्र	1.79	1.23	0.56	2.8	1.68	1.12	62.6	84.2	40	78.2	91.8	64
योग	343.4	233.76	109.64	496.35	301.16	195.19	61.1	80.5	40.4	76.4	90.4	61.6

अनुबन्ध 2

11-14 वय-वर्ग के बच्चों के लिए विद्यालय सम्बन्धी सुविधाएं (1960-61 और 1965-66)

(संख्याएं लाख में)

राज्य का नाम	6 से 8 तक की कक्षाओं में भरती						1 -14 वय-वर्ग में आबादी का प्रतिशत अनुपात (अनुमानित)					
	1960-61			1965-66			1960-61			1965-66		
	योग	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
आन्ध्रप्रदेश ..	3.55	2.74	0.81	6.13	4.68	1.45	15.6	23.9	7.2	21.9	33.1	10.4
असम	2.05	1.49	0.56	3.25	2.2	1.05	27.4	37.4	16	35.3	44.8	24.5
बिहार	5.5	4.9	0.6	9.25	7.4	1.85	19.4	34.3	4.2	26.7	42.6	10.7
गुजरात	3.56	2.67	0.89	5.77	3.56	2.21	26.8	39	13.8	34.9	41.8	27.6
जम्मू और कश्मीर ..	0.6	0.51	0.09	0.88	0.72	0.16	27.8	44	9	33.5	51.4	13
केरल	5.44	3.18	2.26	6.19	3.61	2.58	50.3	59.4	41.3	45.3	53.4	37.3
मध्यप्रदेश ..	3.27	2.73	0.54	4.96	4.16	0.8	16.3	26.6	5.5	20.3	33.3	6.7
मद्रास	6.36	4.44	1.92	9.36	6.57	2.79	30.1	41.8	18.3	35.9	50.1	21.5
महाराष्ट्र	7.25	5.35	1.9	11.47	8.22	3.25	28.5	40.7	15.5	36.2	50.2	21.2
मैसूर	3.64	2.66	0.98	5.64	3.66	1.98	23.8	34.1	13.1	29.5	37.5	21.2
उड़ीसा	0.85	0.74	0.11	1.7	1.36	0.34	7.9	13.8	2	13.1	21	5.2
पंजाब	3.75	2.75	1	5.55	3.54	2.01	28.3	38.8	16.3	33.8	40.3	26.4
राजस्थान	1.91	1.66	0.25	3.85	3.1	0.75	14.8	24.5	4.1	23.9	36.7	9.8

अनुबन्ध 2—(जारी)

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
उत्तरप्रदेश ..	8.6	7.5	1.1	11.6	10	1.6	18.6	30.9	5	20.5	33.7	5.9
पश्चिम-बंगाल ..	4.72	3.6	1.12	9.02	5.3	3.72	21.1	30.3	10.7	33.3	36.7	29.4
दिल्ली	1.02	0.7	0.32	1.65	1.06	0.59	60.4	73.7	43.2	67.3	84.1	49.6
हिमाचलप्रदेश ..	0.2	0.17	0.03	0.3	0.25	0.05	28.6	45.9	9.1	36.6	59.5	12.5
पांडिचेरी ..	0.08	0.06	0.02	0.1	0.07	0.03	33.3	50	16.7	35.7	51	21.4
अन्य केन्द्र-शासित क्षेत्र ..	0.53	0.37	0.16	0.81	0.54	0.27	38.1	52.9	23.2	43.5	58.1	29
योग	62.88	48.22	14.66	97.48	70	27.48	22.8	34.3	10.8	28.6	39.9	16.5

अनुबन्ध 3

14-17 वय-वर्ग के बच्चों के लिए विद्यालय-सम्बन्धी सुविधाएं (1960-61 और 1965-66)

(संख्याएं लाख में)

राज्य का नाम	9 से 11 तक की कक्षाओं में भरती						14-17 वय-वर्ग में आबादी का प्रतिशत अनुपात (अनुमानित)					
	1960-61			1965-66			1960-61			1965-66		
	योग	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां	योग	लड़के	लड़कियां
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
आन्ध्रप्रदेश ..	1.86	1.62	0.24	2.36	1.94	0.42	8.8	15.1	2 3	9.6	15.7	3.5
असम	1.1	0.87	0.23	1.71	1.31	0.4	17.5	26	7.8	22.9	32.9	11.5
बिहार . ..	3.1	2.9	0.2	5	4.4	0.6	12.4	23	1.5	17.3	30.3	4.2
गुजरात	1.48	1.14	0.34	2.26	1.53	0.73	12.2	18.2	5.8	15.9	20.8	10.6
जम्मू और कश्मीर ..	0.2	0.17	0.03	0.27	0.23	0.04	9.9	15.9	3.2	11.8	18.9	3.7
केरल	2.25	1.39	0.86	2.95	1.8	1.15	21.6	27	16.3	24.2	30	18.7
मध्यप्रदेश	0.78	0.67	0.11	1.1	0.95	0.15	4.3	7.3	1.3	5.3	9	1.5
मद्रास	2.66	1.98	0.68	3.97	2.71	1.26	13.4	19.9	6.9	17.3	23.4	11
महाराष्ट्र	3.15	2.42	0.73	4.97	3.78	1.19	13.6	20.1	6 5	18.2	26.8	9
मैसूर	1.47	1.16	0.31	2.05	1.44	0.61	10.4	16.6	4.5	12.3	16.9	7.5
उड़ीसा	0.4	0.36	0.04	0.8	0.67	0.13	4.2	7.5	0.8	7.4	12.4	2.4
पंजाब	1.45	1.25	0.2	2.25	1.82	0.43	12	19 3	3.6	16.1	24.4	6.6
राजस्थान	0.86	0.79	0.07	1.53	1.33	0.2	7.4	13	1.3	11.2	18.6	3.1

अनुबन्ध 3—(जारी)

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
उत्तरप्रदेश	5.12	4.6	0.52	7.4	6.6	0.8	12.2	20.9	2.6	15.3	26.1	3.5
पश्चिम-बंगाल . .	2.38	2	0.38	5.3	4	1.3	11.2	17.6	3.8	21.9	31.1	11.5
दिल्ली	0.54	0.4	0.14	1.19	0.9	0.29	32.5	43	19.2	60.1	88.2	30.2
हिमाचलप्रदेश . .	0.06	0.05	0.01	0.08	0.06	0.02	10.2	16.1	3.6	9.8	14.3	5
पांडिचेरी	0.03	0.02	0.01	0.06	0.04	0.02	13.6	18.2	9.1	23.1	30.8	15.4
अन्य केन्द्र-शासित क्षेत्र . .	0.19	0.12	0.07	0.31	0.2	0.11	12.8	16	9.6	16.4	21.1	11.7
योग	29.08	23.91	5.17	45.56	35.71	9.85	11.5	18.4	4.2	15.6	23.7	6.9

अध्याय 30

तकनीकी शिक्षा

कर्मचारियों की आवश्यकता, प्रशिक्षण-कार्यक्रम तथा जन-शक्ति की आवश्यकता आर्थिक विकास की तीन आधारभूत बातें हैं। तीसरी और चौथी योजना के सन्दर्भ में इन तीन बातों से सम्बन्धित मूल नीतियों पर पहले ही विचार किया जा चुका है। इस अध्याय में इंजीनियरी और टेक्नोलाजी तथा शिल्पियों के प्रशिक्षण से सम्बन्धित शैक्षणिक कार्यक्रमों की चर्चा की गई है। इन कार्यक्रमों का उद्देश्य औद्योगिक विकास, शिक्षा और अनुसन्धान की विभिन्न योजनाओं के लिए आवश्यक प्रशिक्षित तकनीकी कर्मचारी तैयार करना है। ये कार्यक्रम बनाते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि विज्ञान और टेक्नोलाजी के विकास के साथ-साथ समय-समय पर प्रशिक्षण-प्रणाली में परिवर्तन करना होगा और शिक्षा-पद्धति में सुधार लाना होगा। विभिन्न क्षेत्रों में, प्रत्येक स्तर पर, प्रशिक्षित कर्मचारियों की वृद्धि करना; पर्याप्त संख्या में शिक्षक तैयार करना; प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्तियों और शिष्यवृत्तियों की व्यवस्था करना; अंशकालीन, अल्पकालीन और पत्र-व्यावहारिक पाठ्यक्रम प्रारम्भ करना; कुछ क्षेत्रों में विशेष पाठ्यक्रम प्रारम्भ करना; उपलब्ध भौतिक साधनों का समुचित उपयोग करना; अपव्यय में कमी और अनुसन्धान का विकास करना—इन सब पर तीसरी योजना के कार्यक्रमों मे विशेष ज़ोर दिया गया है।

2. तीसरी योजना में इंजीनियरी और टेक्नोलाजी की डिग्री व डिप्लोमा की शिक्षा का विस्तार करने की व्यवस्था है, जिससे प्रति वर्ष डिग्री-पाठ्यक्रमों में 13,860 के बजाय 19,140 और डिप्लोमा-पाठ्यक्रमों में 25,570 के बजाय 37,390 विद्यार्थियों को प्रवेश मिल सकेगा। इसके अतिरिक्त, विभिन्न प्रकार के अंशकालीन और पत्र-व्यावहारिक पाठ्यक्रम चलाने और कुछ विशेष प्रकार के शिक्षा-संस्थान खोलने की भी व्यवस्था है।

विभिन्न केन्द्रीय मन्त्रालयों, राज्य-सरकारों और निजी उद्योगों-द्वारा संचालित शिल्पियों के प्रशिक्षण की योजनाओं के अतिरिक्त औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थानों में तीसरी योजना की अवधि में 42,000 के स्थान पर 1,00,000 प्रशिक्षणार्थियों को प्रवेश मिल सकेगा। प्रशिक्षकों (इंस्ट्रक्टर्स) के प्रशिक्षण के लिए इस समय चार केन्द्रीय प्रशिक्षण-संस्थान है, जिनमें से एक महिलाओं के लिए है। प्रशिक्षित प्रशिक्षकों की मांग को पूरा करने के लिए तीसरी योजना में इन चारों संस्थानों का विकास किया जाएगा और तीन नए संस्थान खोले जाएंगे।

3. तीसरी योजना में शिक्षा के कार्यक्रमों के लिए 560 करोड़ रुपये की व्यवस्था है, जिसमें से 142 करोड़ रुपये इंजीनियरी और टेक्नोलाजी-सम्बन्धी तकनीकी शिक्षा के कार्यक्रमों पर व्यय किए जाएंगे। पहली और दूसरी योजनाओं में शिक्षा-सम्बन्धी कुल व्यय का क्रमशः 13 और 19 प्रतिशत भाग तकनीकी शिक्षा के लिए निर्धारित किया गया था, जब कि तीसरी योजना में तकनीकी शिक्षा पर लगभग 25 प्रतिशत व्यय करने की व्यवस्था है।

शिल्पियों के प्रशिक्षण के कार्यक्रम के लिए दूसरी योजना में 13 करोड़ रुपये की व्यवस्था थी, जब कि तीसरी योजना में इस मद के अन्तर्गत औद्योगिक प्रशिक्षण-

संस्थानों के विकास, राष्ट्रीय शिष्यता-शिक्षण योजना (नेशनल अप्रेंटिसशिप स्कीम), औद्योगिक कर्मचारियों के लिए सायंकालीन कक्षाओं और शिल्प-प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए 49 करोड़ रुपये की व्यवस्था है।

विस्तार-कार्यक्रम

4. दूसरी योजना में इंजीनियरी शिक्षा की सुविधाओं का काफी विस्तार हुआ है। इंजीनियरी कालेजों की संख्या 65 से बढ़ कर 100 हो गई है और प्रति वर्ष 5,890 के बजाय 13,860 विद्यार्थियों को प्रवेश मिलने लगा है। डिप्लोमा प्रदान करनेवाले पोलिटेक्नीकों की संख्या 114 से बढ़ कर 196 हो गई है और इनमें प्रति वर्ष 10,490 के बजाय 25,570 विद्यार्थियों को प्रवेश मिलने लगा है। दूसरी योजना में कुल मिला कर प्रति वर्ष डिग्री प्राप्त करने वालों की संख्या 4,020 से बढ़ कर लगभग 5,700 हो गई और डिप्लोमा प्राप्त करनेवालों की संख्या 4,500 से बढ़ कर 8,000 से भी अधिक हो गई। इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण बात यह है कि तीसरी योजना के लिए आवश्यक प्रशिक्षित कर्मचारियों की मांग दूसरी योजना के अन्त तक स्थापित संस्थानों-द्वारा पूरी हो जानी चाहिए। तकनीकी शिक्षा के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक योजना आगामी योजना के लिए आधार तैयार करती है।

5. चौथी योजना के लिए इंजीनियरी डिग्री-धारियों और डिप्लोमा-धारियों की सम्भावित आवश्यकता को ध्यान में रख कर ही तीसरी योजना में तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की गई है। तीसरी योजना में 17 नए इंजीनियरी कालेज खोले जाएंगे, जिनमें 7 प्रादेशिक इंजीनियरी कालेज होंगे। दूसरी योजना में 8 प्रादेशिक इंजीनियरी कालेजों की व्यवस्था की गई और उसमें से एक को छोड़ कर बाकी सब चल रहे हैं। प्रत्येक प्रादेशिक इंजीनियरी कालेज में 250 विद्यार्थियों को प्रवेश मिल सकता है। प्रादेशिक इंजीनियरी कालेजों में खनिज विज्ञान, धातु-कर्म और रसायन-इंजीनियरी, आदि इंजीनियरी और टेक्नोलाजी की विशेष शाखाओं में प्रशिक्षण की व्यवस्था रहेगी। इन शाखाओं में, चौथी पंचवर्षीय योजना में, प्रशिक्षित कर्मचारियों की काफी संख्या में आवश्यकता होगी। तीसरी योजना में 67 नए पोलिटेक्नीक खोलने का कार्यक्रम है। इनमें से प्रत्येक पोलिटेक्नीक में 180 या इससे भी अधिक विद्यार्थियों को प्रवेश मिल सकेगा। इसके अतिरिक्त, जहां कहीं सम्भव होगा, वर्तमान संस्थानों की प्रवेश-क्षमता बढ़ाई जाएगी। नीचे की तालिका में अब तक की प्रगति और तीसरी योजना के कार्यक्रमों के सम्बन्ध में जानकारी दी गई है:

इंजीनियरी कालेजों और पोलिटेक्नीकों की प्रवेश-क्षमता तथा निकासी

वर्ष	डिग्री-पाठ्यक्रम			डिप्लोमा-पाठ्यक्रम		
	संस्थाओं की संख्या	प्रवेश-क्षमता	निकासी	संस्थाओं की संख्या	प्रवेश-क्षमता	निकासी
1950-51	49	4,120	2,200	86	5,900	2,480
1955-56	65	5,890	4,020	114	10,480	4,500
1960-61	100	13,860	5,700	196	25,570	8,000
1965-66	117	19,140	12,000	263	37,390	19,000

विभिन्न राज्यों में प्रस्तावित विस्तार-सम्बन्धी जानकारी इस अध्याय के अनुबन्ध के अन्तर्गत एक विवरण में दी गई है।

6. तीसरी योजना में इंजीनियरी और टेक्नोलाजी की विभिन्न शाखाओं के अंश-कालीन और पत्र-व्यावहारिक पाठ्यक्रम आरम्भ करने की व्यवस्था है। इसका ब्योरेवार कार्यक्रम तैयार किया जा रहा है। सामान्यतः पत्र-व्यवहार-पाठ्यक्रम 20 से 35 वर्ष तक की अवस्था के विद्यार्थियों के लिए होंगे। उद्देश्य यह है कि इनसे परिपक्व बुद्धिवाले विद्यार्थी लाभ उठा सकें। अंशकालीन और पत्र-व्यावहारिक पाठ्यक्रमों के संचालन से विद्यार्थियों को यह लाभ होगा कि वे इंस्टीट्यूट आफ़ इंजीनियर्स-जैसी संस्थाओं की सदस्यता प्राप्त करने के लिए सुव्यवस्थित ढंग से तैयारी कर सकेंगे।

प्रतिरक्षा-मन्त्रालय के अधीन 12 केन्द्रों में 1,000 इंजीनियरी डिप्लोमा-धारियों को अंशकालीन प्रशिक्षण देने की एक प्रारम्भिक योजना तैयार की गई है। ये केन्द्र विद्यार्थियों को इंस्टीट्यूट आफ़ इंजीनियर्स के 'एसोशिएट मेम्बरशिप' परीक्षा के भाग 'क' और 'ख' के लिए तैयार करेंगे। दूसरी योजना की अवधि में कलकत्ता और मद्रास में यान्त्रिक इंजीनियरी के मध्यवर्ती पाठ्यक्रम तजुर्बे के तौर पर आरम्भ किए गए थे। ये पाठ्यक्रम अन्य केन्द्रों में आरम्भ किए जाएंगे—हो सकता है, शिक्षा की नई शाखाओं में भी आरम्भ किए जाएं।

7. विज्ञान और टेक्नोलाजी की प्रगति के कारण यह आवश्यकता अनुभव की जा रही है कि टेक्नोलाजी-सम्बन्धी संस्थानों में गणित-शास्त्र, भौतिक-विज्ञान और रसायन-विज्ञान, आदि बुनियादी वैज्ञानिक विषयों की शिक्षा दी जाए। इस बात पर विश्व-विद्यालय-अनुदान-आयोग और अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा-परिषद्, दोनों ने ज़ोर दिया है। दूसरी योजना के अन्तर्गत रुड़की इंजीनियरी विश्वविद्यालय में विज्ञान-संकाय स्थापित किया गया, जिसमें भौतिक-विज्ञान, गणित-शास्त्र, रसायन-विज्ञान, भूगर्भ-विज्ञान और भू-भौतिकी-विभाग खोले गए हैं। टेक्नोलाजी के संस्थानों में आम तौर पर वैज्ञानिक विषयों के विभागों में सम्पूर्ण साज़-सामान की व्यवस्था होती है।

8. इंडियन इंस्टीट्यूट आफ़ टेक्नोलाजी, खड़गपुर को, जो पहली योजना में स्थापित किया गया था, सन् 1957 में संसद् के एक अधिनियम के अनुसार 'राष्ट्रीय महत्व का संस्थान' घोषित किया गया। इंडियन इंस्टीट्यूट आफ़ साइन्स, बंगलोर में इंजीनियरी की स्नातकोत्तर-शिक्षा भी प्रारम्भ कर दी गई है और सन् 1959 से उसे विश्व-विद्यालय-अनुदान-आयोग-अधिनियम के अनुसार एक विश्वविद्यालय मान लिया गया है। दूसरी योजना की अवधि में बम्बई, मद्रास और कानपुर में भी टेक्नोलाजी के संस्थान खोले गए हैं।

9. दूसरी योजना में इंजीनियरी और टेक्नोलाजी के स्नातकोत्तर-पाठ्यक्रम 34 चुने हुए इंजीनियरी कालेजों और विश्वविद्यालय-विभागों में आरम्भ किए गए। स्नातकोत्तर-पाठ्यक्रमों और अनुसन्धान-कार्य की प्रगति पर विचार करने के लिए एक विशेषज्ञ-समिति नियुक्त की गई है। समिति को यह सुझाव भी देना है कि इस क्षेत्र में भावी विकास की रूपरेखा क्या हो। समिति की सिफारिशों को कार्यान्वित करने के लिए केन्द्रीय स्तर पर व्यवस्था कर दी गई है। इसके अतिरिक्त, इंजीनियरी कालेजों में स्नातकोत्तर-कार्य और प्रशिक्षण को बढ़ावा देने की दृष्टि से, विभिन्न राज्यों की योजनाओं में व्यवस्था कर दी

गई है, ताकि प्रत्येक संस्थान अनुसन्धान-कार्य प्रारम्भ कर सके। इंजीनियरी और टेक्नोलाजी में स्नातकोत्तर-अध्ययन करनेवाले विद्यार्थियों को वृत्तिकाएं और इंजीनियरी के विषयों में अनुसन्धान करनेवालों को छात्रवृत्तियां देने की व्यवस्था की गई है।

10. तीसरी योजना में इंजीनियरी और टेक्नोलाजी के विशिष्ट क्षेत्रों के लिए कर्मचारियों की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, दूसरी योजना में कुछ चुने हुए तकनीकी संस्थानों में खनिज विज्ञान, धातु-कर्म, रसायन-इंजीनियरी, भू-भौतिकी, पेट्रोलियम-टेक्नोलाजी और औद्योगिक इंजीनियरी की शिक्षा की सुविधाएं प्रदान की गईं। इसके अतिरिक्त, नगर-आयोजन, भवन-निर्माण, मुद्रण और व्यवसाय-प्रबन्ध विषयों में विशेष प्रशिक्षण की सुविधाएं प्रदान की गईं। 'सेंट्रल स्कूल आफ़ प्लानिंग ऐंड आरकिटेक्चर' दिल्ली में 'इंस्टीट्यूट आफ़ टाउन प्लैनर्स' के सहयोग से आरम्भ किया गया था। तीसरी योजना में इसका सम्पूर्ण विकास किया जाएगा। इलाहाबाद, बम्बई, कलकत्ता और मद्रास में चार प्रादेशिक मुद्रण-विद्यालय हैं। इनमें 410 विद्यार्थियों को प्रवेश मिल सकता है। इन विद्यालयों में मुद्रण और लीथो-कार्य की विभिन्न शाखाओं में अंशकालीन तथा पूर्णकालीन पाठ्यक्रम चलाए जाते हैं। तीसरी योजना में इनका और अधिक विकास किया जाएगा तथा दिल्ली पोलिटेक्नक में एक केन्द्रीय मुद्रण-विद्यालय की स्थापना-द्वारा अतिरिक्त सुविधाएं प्रदान की जाएंगी।

इंडियन इंस्टीट्यूट आफ टेक्नोलाजी, खड़गपुर, विक्टोरिया जुबिली टेक्निकल इंस्टीट्यूट, बम्बई और इंडियन इंस्टीट्यूट आफ साइंस, बंगलोर में औद्योगिक इंजीनियरी और औद्योगिक प्रबन्ध के स्नातकोत्तर-पाठ्यक्रम आरम्भ किए गए।

कई केन्द्रों में व्यवसाय-प्रबन्ध के पाठ्यक्रम प्रारम्भ किए जा रहे हैं। दो अखिल भारतीय प्रबन्ध-संस्थानों की स्थापना की भी योजना है।

अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा-परिषद्-द्वारा नियुक्त एक समिति ने हाल ही में वाणिज्य-शिक्षा-सम्बन्धी कठिनाइयों का अध्ययन किया है। यह अध्ययन वाणिज्य-स्नातकों के रोज़गार के वर्तमान अवसरों को आंकने और हमारी विकासोन्मुख अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं और साधनों के अनुरूप वाणिज्य-शिक्षा की एक समुचित पद्धति सुझाने के लिए किया गया। इस समिति ने यह सिफारिश की है कि मैट्रिक के बाद या माध्यमिक शिक्षा की दसवीं कक्षा के बाद विद्यार्थियों के लिए वाणिज्य-शिक्षा का एक डिप्लोमा-पाठ्यक्रम आरम्भ किया जाए, ताकि व्यापार और वाणिज्य-प्रशासन के माध्यमिक स्तर के पदों के लिए प्रशिक्षित कर्मचारी प्राप्त हो सकें। यह भी सिफारिश की गई है कि ये पाठ्यक्रम पोलिटेक्नीकों और जूनियर कमर्शियल स्कूलों में आरम्भ किए जाएं। समिति ने स्नातक-पूर्व और स्नातकोत्तर वाणिज्य-शिक्षा, व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करने के लिए सुविधाओं की व्यवस्था और व्यवसाय-प्रशासन तथा प्रबन्ध-शिक्षा के सम्बन्ध में भी सिफारिशें की हैं।

11. औद्योगिक इंजीनियरी की तकनीकों और पद्धतियों का उपयोग करने-योग्य प्रशिक्षित तकनीकी कर्मचारी तैयार करने के लिए औद्योगिक इंजीनियरी में प्रशिक्षण का राष्ट्रीय संस्थान आरम्भ करने का प्रस्ताव है।

तीसरी योजना में रांची के हेवी फ़ाउंड्री और फोर्जिंग कारखाने के सहयोग से, जहां प्रशिक्षणार्थियों के लिए व्यावहारिक प्रशिक्षण और अंशकालीन शिक्षकों के रूप

में काम करने की सुविधाएं उपलब्ध हैं, इस क्षेत्र में विशेषज्ञों को प्रशिक्षित करने के हेतु रांची में 'सेन्ट्रल इस्टीट्यूट ग्राफ फोजिंग ऐंड फाउंड्री इंजीनियरिंग' खोला जाएगा।

12. दूसरी योजना में वरिष्ठ कार्यपालक अधिकारियों और प्रशासकों के प्रशिक्षण के लिए सरकार, निजी उद्योगों और वाणिज्यिक संस्थाओं के संयुक्त और सहकारी प्रयास से हैदराबाद में प्रशासनिक कर्मचारी कालेज की स्थापना की गई।

अधिकांश विश्वविद्यालयों में इंजीनियरी और टेक्नोलाजी का पंचवर्षीय समन्वित डिग्री-पाठ्यक्रम आरम्भ करने का कार्यक्रम पूरा हो जाएगा। इसके अतिरिक्त, तीसरी योजना में छात्रावास-सम्बन्धी सुविधाओं में वृद्धि करने, राज्यों में तकनीकी शिक्षा-मंडलों को शक्तिशाली बनाने और कला-सम्बन्धी शिक्षा का विकास करने के कार्यक्रम सम्मिलित हैं।

13. सन् 1960-61 में लगभग 2,180 इंजीनियरी डिग्री और डिप्लोमा-धारियों को औद्योगिक संस्थाओं और प्रतिष्ठानों में व्यावहारिक प्रशिक्षण दिलाया गया। व्यावहारिक प्रशिक्षण-वृत्तियां देने के कार्यक्रम को तीसरी योजना में न केवल जारी रखा जाएगा, बल्कि बढ़ाया जाएगा। अनुमान है कि प्रति वर्ष इंजीनियरी की डिग्री प्राप्त करनेवालों में से 25 प्रतिशत को और डिप्लोमा प्राप्त करनेवालों में से 12½ प्रतिशत को तीसरी योजना में व्यावहारिक प्रशिक्षण की सुविधाएं दिलाई जा सकेंगी, जब कि दूसरी योजना में ये संख्याएं क्रमशः 12 और 3 प्रतिशत ही थीं। जहां तक खनिज उद्योग में प्रशिक्षण का सम्बन्ध है, इस उद्योग की सहायता से निर्धारित आवश्यकताओं के अनुरूप सर्वांगीण प्रशिक्षण-कार्यक्रम बनाए जाएंगे। जहां कहीं आवश्यकता अनुभव होगी, प्रशिक्षणार्थियों के लिए छात्रावासों की भी व्यवस्था कर दी जाएगी।

14. दूसरी योजना में तजुर्बे के तौर पर 14 से 17 वर्ष तक के विद्यार्थियों के लिए जूनियर तकनीकी स्कूलों की एक योजना बनाई गई, जिसके अन्तर्गत 38 स्कूल खोले गए। तीसरी योजना में 96 जूनियर तकनीकी विद्यालय और खोले जाएंगे। ये स्कूल काफी हद तक पोलिटेक्नीकों से सम्बद्ध होंगे। राज्यों की योजनाओं में लड़कियों और महिलाओं के लिए तकनीकी संस्थानों की भी व्यवस्था है।

15. भारतीय तकनीकी संस्थानों और प्रादेशिक कालेजों में 25 प्रतिशत विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्तियों की व्यवस्था है। अन्य संस्थानों में इंजीनियरी और टेक्नोलाजी के अध्ययन के लिए छात्रवृत्तियों की व्यवस्था बहुत ही कम है। ऐसी आशा है कि तीसरी योजना में यह कमी काफी हद तक दूर हो जाएगी। तीसरी योजना में वर्तमान व्यवस्था के अतिरिक्त योग्यता के आधार पर और ऋण के रूप में छात्रवृत्तियां देने के लिए 8 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। यह आशा की जाती है कि तीसरी योजना में देश-भर के तकनीकी संस्थानों में शिक्षा पानेवाले विद्यार्थियों में से 14 प्रतिशत से भी अधिक को आर्थिक सहायता मिल सकेगी, जब कि दूसरी योजना के अन्त तक केवल 5 प्रतिशत को ही सहायता मिल रही थी। अन्य पहलुओं के अतिरिक्त, अधिक छात्रवृत्तियां देने का एक लाभ यह भी होगा कि तकनीकी संस्थानों में कुछ हद तक बर्बादी को रोका जा सकेगा, क्योंकि शिक्षा पानेवाले गरीब विद्यार्थी भी अपना पाठ्यक्रम पूरा कर सकेंगे।

16. तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र की एक प्रमुख समस्या है, तकनीकी संस्थानों में

विद्यार्थियों की तेजी से बढ़ती हुई संख्या के लिए उचित मूल्य पर पर्याप्त पाठ्य-पुस्तकें उपलब्ध कराना, देश में ही उन पुस्तकों को तैयार कराना और उन्हें विदेशी पुस्तकें उपलब्ध कराना। इस समय इस समस्या के विभिन्न पहलुओं पर ग़ौर किया जा रहा है।

शिक्षक

17. तकनीकी शिक्षा के विकास के लिए सबसे अधिक महत्व की बात यह है कि पर्याप्त संख्या में योग्यता-प्राप्त शिक्षक मिलें। इस समय इंजीनियरी कालेजों और पोलिटेक्नीकों में शिक्षकों की भारी कमी है। इस कमी को दूर करने के लिए बहुत-से उपायों पर विचार किया जा रहा है। दूसरी योजना में देश तथा विदेशों में जो शिक्षक-प्रशिक्षण-कार्यक्रम आरम्भ किए गए थे, उनका और विकास किया जाएगा। तकनीकी संस्थाओं में शिक्षकों के वेतन-क्रम बढ़ाए जा रहे हैं और उनकी सेवाओं की सामान्य शर्तों में सुधार किया जा रहा है। ऐसी योजनाओं को अधिकाधिक बढ़ाया जाना चाहिए, जिनके अन्तर्गत शिक्षकों की अग्रिम नियुक्ति की जा सके और संस्थानों में शिक्षा-कार्य के लिए सामान्य संख्या से अधिक पदों को स्वीकृति दी जा सके। इंजीनियरी और टेक्नोलाजी में स्नातकोत्तर-अध्ययन का विकास होने के फलस्वरूप शिक्षण-कार्य के लिए पहले से अधिक संख्या में विशेषज्ञ और अनुसन्धान-सम्बन्धी योग्यतावाले व्यक्ति मिल सकेंगे। संस्थानों के लिए यह वांछनीय है कि वे विभिन्न उद्योगों में कार्य करनेवाले इंजीनियरों और कार्यपालक अधिकारियों को अंशकालीन शिक्षकों के रूप में कार्य करने के लिए आमन्त्रित करें। प्रत्यास्मरण-पाठ्यक्रमों तथा गोष्ठियों से प्रत्येक स्तर के शिक्षण-कार्य को उन्नत किया जा सकता है।

शिल्पियों का प्रशिक्षण

18. औद्योगिक विकास के लिए इतना ही आवश्यक नहीं है कि कुशल कर्मचारियों या शिल्पियों की संख्या में समुचित वृद्धि हो जाए, बल्कि यह भी आवश्यक है कि उनकी कारीगरी में गुण की दृष्टि से उत्तरोत्तर सुधार होता जाए। विशिष्ट कौशल और तत्सम्बन्धी प्रक्रियाओं को समझने पर अधिक ज़ोर दिया जा रहा है। इसलिए विभिन्न देशों में व्यावसायिक स्कूलों में प्रवेश के लिए अनिवार्य निम्नतम योग्यता और सामान्य शिक्षा के स्तर को बढ़ाने की प्रवृत्ति रही है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, तीसरी योजना में 13 लाख शिल्पियों की आवश्यकता होगी—8,10,000 की इंजीनियरी व्यवसायों में और शेष की ग़ैर-इंजीनियरी व्यवसायों में। इस समय शिल्पियों या कुशल कर्मचारियों और कामगारों को कई प्रकार के संस्थानों में विभिन्न ढंगों से प्रशिक्षित किया जाता है। इनमें ये शामिल हैं: (1) श्रम तथा नियोजन-मन्त्रालय की योजनाओं के अन्तर्गत औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थान, (2) प्रतिरक्षा, रेल, डाक-तार, आदि सरकारी विभाग एवं संस्थाएं और सार्वजनिक प्रतिष्ठान, जिनमें प्रशिक्षण की सुविधाएं उपलब्ध हैं, (3) राज्यों के उद्योग-विभागों और वाणिज्य और उद्योग मन्त्रालय-द्वारा लघु उद्योगों के लिए प्रदत्त प्रशिक्षण-सुविधाएं, (4) सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों के अन्तर्गत ग्रामीण कारीगरों के प्रशिक्षण-केन्द्र, (5) निजी तौर पर चलाए जानेवाले

असंख्य औद्योगिक स्कूल, और (6) एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से व्यक्तिगत रूप से कारीगरी सीखने का परम्परागत तरीका।

19. आजकल जो नए उद्योग स्थापित किए जा रहे हैं, उनमें विधिवत प्रशिक्षण-प्राप्त शिल्पियों की पहले से कहीं अधिक संख्या में आवश्यकता है। पहली योजना के अन्त में श्रम तथा नियोजन-मन्त्रालय-द्वारा संचालित किए गए कार्यक्रमों के अन्तर्गत विभिन्न राज्यों में 59 प्रशिक्षण-केन्द्र खोले जा चुके थे। इनमे लगभग 10,500 व्यक्तियों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था थी। दूसरी योजना के अन्त तक प्रशिक्षण-केन्द्रों की संख्या 167 हो गई थी, जिनमें 42,000 व्यक्तियों को प्रवेश मिल सकता था। इसके अतिरिक्त, विस्थापित लोगों के लिए प्रशिक्षण की विशेष सुविधाओं की व्यवस्था की गई थी। तीसरी योजना में लगभग 57,850 शिल्पियों के प्रशिक्षण के लिए अतिरिक्त सुविधाएं जुटाने का प्रस्ताव है; इस प्रकार कुल संख्या लगभग एक लाख हो जाएगी। तीसरी योजना के अन्त तक शिल्पी-प्रशिक्षण-केन्द्रों की संख्या लगभग 318 हो जाएगी। इन सुविधाओं के विस्तार का राज्यवार कार्यक्रम अनुबन्ध में दिया गया है। आशा है कि राष्ट्रीय शिष्यता-प्रशिक्षण-योजना के अन्तर्गत लगभग 12,000 व्यक्तियों के प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया जाएगा। । जैसा कि पहले बताया जा चुका है, शिष्यता-प्रशिक्षण को शीघ्र ही अनिवार्य कर दिया जाएगा और इस सम्बन्ध में विधान बनाया जा रहा है।

औद्योगिक कर्मचारियों के लिए सांयकालीन कक्षाओं का भी विस्तार किया जा रहा है। इसके फलस्वरूप 11,000 से भी अधिक व्यक्तियों को प्रवेश मिलने लगेगा, जब कि इस समय लगभग 2,000 व्यक्तियों को ही प्रवेश मिल पाता है। शिल्पियों के प्रशिक्षण में 'ट्रेड सर्टिफ़िकेट कोर्स' के बाद एक 'हायर नेशनल ट्रेड सर्टिफ़िकेट कोर्स' की भी व्यवस्था की जाएगी। यह कोर्स व्यवसाय-विशेष को दृष्टि में रखते हुए 6 से 12 महीने तक की अवधि का हो सकता है।

20. रेल और प्रतिरक्षा-प्रतिष्ठानों की आवश्यकताएं उनके अपने प्रशिक्षण-कार्यक्रमों से पूरी की जा रही हैं। रेल-विभाग में अर्द्धकुशल और अकुशल, दोनों प्रकार के कर्मचारियों के प्रशिक्षण की सुविधाएं हैं। जिन औद्योगिक कर्मचारियों के पास व्यवसाय-विशेष में कोई मान्यता-प्राप्त योग्यता नहीं है, उनके लिए प्राइवेट परीक्षार्थी के रूप में व्यवसाय-सम्बन्धी प्रशिक्षण की राष्ट्रीय परिषद्-द्वारा आयोजित परीक्षाएं देकर नेशनल ट्रेड सर्टिफ़िकेट प्राप्त करने की व्यवस्था है। तमाम सरकारी प्रतिष्ठानों और बहुत-से निजी उद्योगों में अपनी आवश्यकता पूरी करने के लिए प्रशिक्षण-कार्यक्रम चलाए जाते हैं। शिल्पियों के प्रशिक्षण के लिए प्रतिरक्षा-प्रतिष्ठानों में उपलब्ध प्रशिक्षण-सुविधाओं का उपयोग करने का भी प्रस्ताव है। उन व्यवसायों के लिए, जो उपर्युक्त योजनाओं में नहीं आते, राज्यों के उद्योग-विभाग लघु उद्योग-कार्यक्रमों के अन्तर्गत विशेष प्रशिक्षण-योजनाओं का संगठन करेंगे। ये योजनाएं व्यवसाय-सम्बन्धी प्रशिक्षण की राष्ट्रीय परिषद्-द्वारा निर्धारित रूपरेखा के अनुसार बनाई जाएंगी। लघु उद्योग-सेवा-संस्थानों और उनके विस्तार-केन्द्रों-द्वारा प्रदान की जानेवाली प्रशिक्षण-सुविधाओं का विस्तार किया जाएगा, ताकि प्रबन्धकों, निरीक्षकों और विस्तार-कर्मचारियों की मांग पूरी हो सके। कई केन्द्रीय मन्त्रालयों और उनसे सम्बद्ध विभागों में कर्मचारियों के लिए व्यावहारिक

प्रशिक्षण के विशेष कार्यक्रमों की व्यवस्था है । इनमें राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान, सिंचाई तथा बिजली-मन्त्रालय, भारतीय ऋतु-विज्ञान-विभाग और आकाशवाणी के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त अखिल भारतीय लघु उद्योग-मंडलों —नारियल-जटा, रेशम, हथकरघा और हस्तशिल्प—तथा खादी और ग्रामोद्योग-आयोग-द्वारा अपने-अपने क्षेत्र के कुशल तथा अर्द्धकुशल कर्मचारियों के प्रशिक्षण-कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। व्यवसाय-सम्बन्धी प्रशिक्षण की राष्ट्रीय परिषद् शिल्पियों के प्रशिक्षण-कार्यक्रमों का समन्वय करेगी और उन्हें अधिक उपयोगी बनाएगी।

21. औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थानों और अन्य संस्थानों में शिल्पियों के प्रशिक्षण-कार्यक्रमों के लिए व्यावसायिक धन्धों के शिल्प-प्रशिक्षकों की आवश्यकता होती है । उनके प्रशिक्षण के लिए दूसरी योजना के अन्त तक कलकत्ता, बम्बई और कानपुर में तीन केन्द्रीय प्रशिक्षण-संस्थान खोले गए थे। इनके खुल जाने से कुल प्रवेश-क्षमता 500 से भी अधिक हो गई है। इसके अतिरिक्त, महिला प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए दिल्ली में एक केन्द्रीय प्रशिक्षण-संस्थान है। तीसरी योजना में इन संस्थानों की प्रवेश-क्षमता 1,000 से भी अधिक हो जाएगी। इसके अतिरिक्त, मद्रास, हैदराबाद और लुधियाना में तीन नए संस्थान खोले जाएंगे, ताकि तीसरी योजना के अन्त तक विभिन्न व्यवसायों में प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए लगभग 1,800 व्यक्तियों को प्रवेश मिलने लगे। ऐसा अनुमान है कि तीसरी योजना में इन संस्थानों में लगभग 7,800 व्यक्ति प्रशिक्षण प्राप्त कर सकेंगे।

अनुबन्ध

तकनीकी संस्थाओं का राज्यवार ब्योरा : 1960-61 और 1965-66

राज्य	इंजीनियरी कालेज				पोलिटेक्नीक				औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थान			
	1960-61		1965-66		1960-61		1965-66		1960-61		1965-66	
	संख्या	प्रवेश-क्षमता	संख्या	प्रवेश-क्षमता	संख्या	प्रवेश-क्षमता	संख्या	प्रवेश-क्षमता	संख्या	प्रवेश-क्षमता	संख्या	प्रवेश-क्षमता
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)	(13)
1. आन्ध्रप्रदेश	8	1,060	9‡	1,210	19	2,473	20	2,593	10	2,834	18	5,314
2. असम	2	240	3	550	3	480	6	1,080	6	1,166	12	2,966
3. बिहार	7	1,346	7	1,480	11	1,620	16	2,700	15	2,932	27	11,880
4. गुजरात	5	1,055	6	1,325	12	1,610	16	2,150	12	1,720	18	4,232
5. जम्मू और कश्मीर	1	120	1	120	2	240	2	240	2	328	5	1,016
6. केरल	5	580	7‡	1,040	11	1,494	12	2,044	6	2,048	10	4,968
7. मध्यप्रदेश	7	1,085	8	1,385	13	1,352	18	1,982	8	2,980	14	6,020
8. मद्रास	12	1,332	14‡	2,142	24	3,090	27‡	3,790	10	2,480	24	6,012
9. महाराष्ट्र	10	1,545	12	2,155	16	2,155	22	2,915	18	4,210	30	10,386
10. मैसूर	11	1,455	11	1,545	24	2,885	26	3,245	13	2,170	18	4,694

टिप्पणी : टेक्नोलाजी-संस्थान-जैसे अखिल-भारतीय संस्थानों को उन राज्यों में दिखाया गया है, जहां वे स्थित हैं ।

‡ तीसरी योजना में आरम्भ की जानेवाली निजी संस्थाएं भी शामिल हैं ।

अनुबन्ध—(जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)	(13)
11. उड़ीसा	1	120	2	430	6	880	8	1,180	7	1,440	13	2,512
12. पंजाब	6	585	7	955	11	1,480	20	2,740	17	3,546	32	7,970
13. राजस्थान	3	405	4	770	5	760	8	1,330	6	1,264	17	3,712
14. उत्तरप्रदेश	11	1,152	13	1,842	18	2,182	31	4,492	15	5,904	48	16,304
15. पश्चिम-बंगाल	10	1,578	12‡	1,878	17	2,510	24	3,770	11	3,884	18	7,896
16. दिल्ली	1	200	1	310	1	60	3	720	7	1,684	8	3,008
17. हिमाचलप्रदेश	—	—	—	—	1	120	1	120	2	202	3	598
18. मणिपुर	—	—	—	—	1	60	1	60	1	96	1	184
19. पांडीचेरी	—	—	—	—	—	—	1	60	—	—	—	—
20. त्रिपुरा	—	—	—	—	1	120	1	180	1	248	2	312
योग	100†	13,858	117	19,137	196†	25,571	263	37,391	167	42,136	318	99,984

‡ तीसरी योजना में आरम्भ की जानेवाली निजी संस्थाएं भी शामिल हैं ।

† सन् 1960-61 तक प्रारम्भ किए गए सभी संस्थान सम्मिलित हैं ।

अध्याय 31

वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान

(1)

वैज्ञानिक अनुसन्धान की भूमिका

किसी देश के विकास में वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान का बुनियादी महत्व होता है। इसके कारण फसलें पहले से बढ़िया और अधिक मात्रा में हुई हैं, रोगों की रोक-थाम और इलाज-द्वारा जनता के स्वास्थ्य में उन्नति हुई है; जल, स्थल और वायु, तीनों प्रकार के परिवहन-साधनों का विकास हुआ है तथा उनकी रफ़्तार में वृद्धि हुई है; और इन सबके साथ-साथ लोगों के लिए अधिक संख्या में तथा विभिन्न प्रकार के रोज़गार के अवसर प्राप्त हुए है। 'शान्ति के लिए परमाणुओं का प्रयोग' और 'अन्तरिक्ष की खोज' इस अनुसन्धान की नवीनतम चुनौतियां हैं।

2. विज्ञान और टेक्नोलाजी की प्रगति तथा उसके साथ-साथ द्रुत गति से हुए विकास के कारण ही अधिक उन्नत देशों में रहन-सहन का स्तर ऊंचा हुआ है। नवीन वैज्ञानिक ज्ञान का प्रवाह अबाध है और उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। इसके अन्तर्गत शुद्ध तथा व्यावहारिक, दोनों प्रकार के अनुसन्धान आते हैं। शुद्ध अनुसन्धान से नवीन ज्ञान की प्राप्ति होती है और प्रकृति तथा उसके नियमों की जानकारी मिलती है। इसी वैज्ञानिक जानकारी के आधार पर व्यावहारिक अनुसन्धान का कार्य चलाया जाता है। नए उत्पादन और नई प्रक्रियाओं में नए सिद्धान्त और नए विचार अपनाए जाते हैं। टेक्नोलाजी की प्रगति विज्ञान के समक्ष नई समस्याएं प्रस्तुत करती है और साथ ही उन समस्याओं को सुलझाने के लिए नए उपकरण भी प्रदान करती है।

3. दूसरे महायुद्ध के समय से अधिक उन्नत देशों में वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान का कार्य काफी बढ़ा है। इन देशों की अर्थव्यवस्था में वैज्ञानिक अनुसन्धान का स्थान बड़े महत्व का है और उसे हर प्रकार से बढ़ावा दिया जाता है। अनुसन्धान के क्षेत्र का विकास करने के साथ-साथ इस कार्य पर उत्तरोत्तर अधिक धन लगाया जाता है; वैज्ञानिक प्रतिभा के लिए गहरी खोज की जाती है; अनुसन्धान-कार्यकर्ताओं की संख्या और योग्यता में उन्नति होती है; अनुसन्धान-कार्य तेज़ी से किए जाते है और उनके परिणामों तक पहुंचने में कम समय लगता है। अधिक उन्नत देशों में अनुसन्धान के विकास का एक और प्रतिफल यह है कि उनमें तथा कम उन्नत देशों में जो अन्तर है, वह बढ़ता जा रहा है। हमारे देश भारत को अधिक उन्नत देशों के बराबर आना है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए हमें वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान का विकास करना होगा और अपने विकास-सम्बन्धी कार्यक्रमों को विज्ञान के सहारे बढ़ाना होगा। इसके लिए हमें अथक प्रयास करना होगा।

4. वैज्ञानिक अनुसन्धान पर हम जो-कुछ व्यय करते हैं, वह देश की समृद्धि के लिए महान् और स्थायी योगदान है। उदाहरणार्थ, हम कह सकते है कि भारत में चीनी और कपास के उत्पादन में जो उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, वह मुख्यतः पौधों

की नस्लों से सम्बन्धित तकनीकें अपनाने के कारण है । अधिक उन्नत देशों में सरकार के अतिरिक्त उद्योगों-द्वारा अनुसन्धान के लिए बड़ी मात्रा में धन लगाया जाता है । उद्योग अनुसन्धान पर धन खर्च करते हैं और बदले में अनुसन्धान उद्योगों को उन्नत करता है; इस प्रकार दोनों में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध स्थापित होता है। भारत में वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिए उद्योगों की ओर से इस समय जो कार्य किया गया है, वह अर्थव्यवस्था की उन्नति और योजनाबद्ध विकास के कारण उपलब्ध अवसरों की दृष्टि से समुचित नहीं है । हमारी पंचवर्षीय योजनाओं में वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिए उत्तरोत्तर अधिक धन की व्यवस्था की गई है । कृषि, चिकित्सा तथा स्वास्थ्य-सुविधाओं, कच्चे माल की तलाश और तैयारी; एक प्रकार के कच्चे माल के स्थान पर दूसरे प्रकार के माल की उपलब्धि; और उद्योग, परिवहन, बिजली, संचार-साधन तथा अन्य आवश्यक सेवाओं के लिए उपकरण और तकनीक प्रस्तुत करने में जो उन्नति हुई है, उससे यह पता चलता है कि हमें वैज्ञानिक अनुसन्धान पर लगाए गए धन से कई गुना अधिक लाभ हुआ है । वर्तमान उद्योग-धन्धे चलाने तथा नए उद्योग-धन्धे आरम्भ करने के लिए आवश्यक सामग्रियों का आयात करने का जो बोझ हम पर पड़ा है, उसे हम अनुसन्धान के द्वारा उत्तरोत्तर कम कर सकेंगे और साथ ही अनुसन्धान हमारे निर्यात को बढ़ाने और तकनीकी योग्यता तथा जानकारी में वृद्धि करने में भी सहायक होगा ।

5. **वैज्ञानिक नीति के लक्ष्य :** मार्च 1958 के वैज्ञानिक नीति-सम्बन्धी प्रस्ताव में भारतीय वैज्ञानिक नीति के लक्ष्य निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किए गए हैं :

(1) तमाम उपयुक्त साधनों-द्वारा विज्ञान तथा वैज्ञानिक अनुसन्धान के शुद्ध, व्यावहारिक एवं शैक्षणिक, तीनों पक्षों के विकास को ध्यान में रखना, समुन्नत करना और बनाए रखना;

(2) देश-भर में समुचित संख्या में उच्चतम योग्यता रखनेवाले अनुसन्धान-कर्ता वैज्ञानिकों की सेवाएं उपलब्ध कराना और उन वैज्ञानिकों के कार्य को राष्ट्र की शक्ति का एक महत्वपूर्ण भाग मानना;

(3) विज्ञान तथा शिक्षा, कृषि तथा उद्योग, और प्रतिरक्षा-सम्बन्धी देश की आवश्यकताओं को पूरा करने की दृष्टि से समुचित रूप में वैज्ञानिक और तकनीकी कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण-कार्यक्रमों को यथासम्भव शीघ्रतापूर्वक आरम्भ करना और बढ़ावा देना;

(4) पुरुषों और स्त्रियों की सृजनात्मक प्रतिभा को प्रोत्साहन देने तथा उन्हें वैज्ञानिक क्षेत्र में कार्य करने के पूर्ण अवसर जुटाना;

(5) शिक्षा के स्वतन्त्र वातावरण में नवीन ज्ञान की खोज और ज्ञान की प्राप्ति तथा उसके प्रसार के लिए व्यक्तिगत प्रयास को प्रोत्साहन देना; और सामान्य रूप से

(6) ऐसा सुनिश्चित वातावरण तैयार करना, जिसमें वैज्ञानिक ज्ञान का समस्त जनता के हित के लिए प्रयोग किया जा सके ।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सरकार ने यह निश्चय किया कि वैज्ञानिकों के लिए सेवा की शर्तें अच्छी रखी जाएं, नीति-निर्धारण के कार्य में उनका सहयोग लिया जाए और उन्हें राष्ट्रीय जीवन में सम्मानपूर्ण स्थान दिया जाए।

6. **अनुसन्धान कार्यक्रम :** पहली पंचवर्षीय योजना में अधिक ध्यान राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं और अन्य अनुसन्धान-संस्थानों के निर्माण की ओर दिया गया। दूसरी योजना में उपलब्ध सुविधाओं का विकास किया गया, अनुसन्धान के कार्य-क्षेत्र को और अधिक विस्तृत किया गया, तथा विश्वविद्यालयों एवं अन्य अनुसन्धान-केन्द्रों में अनुसन्धान-सम्बन्धी सुविधाओं को बढ़ाया गया । तीसरी योजना में वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान-कार्यक्रम विशेषतः निम्नांकित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बनाया जाएगा :

(1) वर्तमान अनुसन्धान-संस्थानों को मज़बूत बनाना और अनुसन्धान-सम्बन्धी सुविधाओं में यथावश्यक वृद्धि करना, ताकि विस्तृत क्षेत्र में अनुसन्धान किया जा सके;

(2) विश्वविद्यालयों में बुनियादी अनुसन्धान को प्रोत्साहन देना;

(3) इंजीनियरी और टेक्नोलाजी में अनुसन्धान के लिए विशेष रूप से प्रोत्साहन देना;

(4) अनुसन्धान-कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देना और अनुसन्धान-शिष्यवृत्तियों तथा छात्रवृत्तियों के कार्यक्रम को बढ़ाना;

(5) वैज्ञानिक और औद्योगिक औज़ारों के निर्माण और विकास के सम्बन्ध में अनुसन्धान करना;

(6) राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, विश्वविद्यालयों, तकनीकी संस्थानों, वैज्ञानिक संघों की प्रयोगशालाओं तथा सरकारी विभागों के अनुसन्धान-संगठनों में किए जानेवाले अनुसन्धान-कार्य में समन्वय स्थापित करना; और

(7) प्रायोगिक उत्पादन-संयन्त्रों तथा बड़े पैमाने के परीक्षणों, आदि के आधार पर आज़माइश करने के बाद अनुसन्धानों के परिणामों को प्रयोग में लाना।

7. प्रथम दो योजनाओं की अवधि में हुए विकास के परिणामस्वरूप वैज्ञानिक अनुसन्धान-संस्थानों का एक विस्तृत जाल-सा बिछ गया है, और बहुत-से केन्द्रों में शुद्ध अनुसन्धान, व्यावहारिक अनुसन्धान तथा विशिष्ट अनुसन्धान का कार्य किया जा रहा है ।

मुख्यतः विश्वविद्यालयों एवं वैज्ञानिक संस्थाओं तथा संघों की प्रयोगशालाओं में शुद्ध विज्ञान-सम्बन्धी अनुसन्धान किया जाता है । वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् तथा देश-भर के विश्वविद्यालयों एवं अन्य संस्थानों में बुनियादी अनुसन्धान को बढ़ावा दिया जाता है।

राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, सहकारी औद्योगिक अनुसन्धान-संघों तथा कुछ औद्योगिक उपक्रमों में व्यावहारिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान का कार्य किया जा रहा है।

कुछ राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, टेक्नोलाजी-सम्बन्धी संस्थानों, विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध इंजीनियरी कालेजों और सड़क, रेल, भवन-निर्माण, सिंचाई, बिजली, संचार-साधन, उड्डयन, आदि से सम्बन्ध रखनेवाले सहकारी विभागों के अनुसन्धान-संगठनों में इंजीनियरी के विषयों पर अनुसन्धान किया जा रहा है।

भारतीय खान-संस्था, भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था, राष्ट्रीय धातुकर्म-प्रयोगशाला, केन्द्रीय ईंधन-अनुसन्धान-संस्था, केन्द्रीय खनिज अनुसधान-केन्द्र और तेल तथा प्राकृतिक गैस-आयोग-द्वारा खनिज विज्ञान में अनुसन्धान किया जा रहा है।

चिकित्सा-अनुसन्धान का कार्य मुख्यतया भारतीय चिकित्सा अनुसन्धान-परिषद्-द्वारा किया जाता है। परिषद् बहुत से केन्द्रों की अनुसन्धान-योजनाओं का समारम्भ कराती है तथा उनका समन्वय करती है।

भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद् तथा जिन्स-समितियां कृषि-अनुसन्धान के कार्यों का समारम्भ कराती हैं और उनका समन्वय करती हैं। यह कार्य केन्द्रीय तथा राज्य-सरकारों की ओर से चलाए गए अनेक संस्थानों और अनुसन्धान-केन्द्रों में किया जाता है।

परमाणु-शक्ति तथा आइसोटोपों से सम्बन्ध रखनेवाला अनुसन्धान तथा विकास-कार्य परमाणु-शक्ति-विभाग की देख-रेख में ट्राम्बे के परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान में परमाणु-शक्ति-विभाग के स्वैच्छिक अनुसन्धान-कार्यक्रम के अन्तर्गत किया जाता है।

8. **वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान के लिए साधन :** नीचे दी गई तालिका में केन्द्रीय सरकार की ओर से वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान के विकास के लिए किया गया व्यय और तीसरी योजना के कार्यक्रमों पर प्रस्तावित व्यय दिखलाया गया है :

(करोड़ रुपये)

	दूसरी योजना (अनुमानित व्यय)	**तीसरी योजना**
वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् (इसमें बड़े पैमाने के प्रयोग भी शामिल हैं) तथा वैज्ञानिक अनुसन्धान और सांस्कृतिक कार्य-मन्त्रालय	20	35
परमाणु-शक्ति-विभाग	27	35
कृषि-अनुसन्धान	13.8	26.4
चिकित्सा-अनुसन्धान	2.2	3.5
अन्य केन्द्रीय मन्त्रालय (प्रतिरक्षा को छोड़कर) के अनुसन्धान	9	30.89
योग	72	130

तीसरी योजना की अवधि में प्रस्तावित व्यय के अतिरिक्त 75 करोड़ रु० दूसरी योजना के अन्त तक आरम्भ किए गए कार्यक्रमों को जारी रखने पर खर्च किए जाएंगे।

9. वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान के सम्बन्ध में पहली दो योजनाओं की प्रगति और तीसरी योजना के कार्यक्रमों का लेखा-जोखा निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत आगे दिया गया है :

(1) वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् ;
(2) वैज्ञानिक अनुसन्धान-मन्त्रालय;
(3) परमाणु-शक्ति-विभाग;
(4) कृषि तथा उससे सम्बद्ध क्षेत्रों में अनुसन्धान;

(5) चिकित्सा-अनुसन्धान;
(6) अनुसन्धान के अन्य कार्यक्रम :
  (क) सिंचाई और बिजली ;
  (ख) परिवहन और निर्माण;
  (ग) खनिज पदार्थ;
  (घ) संचार;
(7) चीनी, पटसन तथा अन्य उद्योग;
(8) विश्वविद्यालयों और उच्च टेक्नोलाजी के संस्थानों में (जिनमें इंजीनियरी अनुसन्धान और अंक-संकलन-सम्बन्धी संस्थान शामिल हैं) अनुसन्धान;
(9) वैज्ञानिक अनुसन्धान का उपयोग;
(10) वैज्ञानिक औज़ार; और
(11) मानकीकरण, श्रेणी-नियन्त्रण और उत्पादकता।

(2)

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद्

10. **प्रगति का लेखा-जोखा :** वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् अपनी प्रयोगशालाओं और संस्थानों में अनुसन्धान-कार्य करती है और विश्वविद्यालयों तथा अन्य अनुसन्धान-संस्थानों के लिए अनुसन्धान-योजनाओं का समारम्भ कराती है।

11. इस समय 23 राष्ट्रीय और प्रादेशिक प्रयोगशालाओं में मुख्यत: व्यावहारिक अनुसन्धान-कार्य किया जाता है। दूसरी योजना में केन्द्रीय मेकैनिकल इंजीनियरी अनुसन्धान-संस्था, केन्द्रीय जन-स्वास्थ्य इंजीनियरी अनुसन्धान-संस्था, राष्ट्रीय वैमानिक प्रयोगशाला और असम की प्रादेशिक अनुसन्धान-प्रयोगशाला नामक नई प्रयोगशालाएं आरम्भ की गई। इनके अतिरिक्त, तीन वर्तमान प्रयोगशालाओं का कार्य-संचालन वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् ने अपने हाथ में ले लिया। इन प्रयोगशालाओं के नाम इस प्रकार हैं—भारतीय जीवरसायन और प्रायोगिक चिकित्सा-संस्था, प्रादेशिक अनुसन्धान-प्रयोगशाला, हैदराबाद और प्रादेशिक अनुसन्धान-प्रयोगशाला, जम्मू। कलकत्ता में बिड़ला औद्योगिक और टेक्नोलाजी-विषयक संग्रहालय की स्थापना की गई है। परिषद् ने औषधीय वनस्पति की उपज बढ़ाने के लिए केन्द्रीय भारतीय औषधीय वनस्पति-संगठन की और वैज्ञानिक औज़ार बनाने के लिए केन्द्रीय वैज्ञानिक औज़ार-संगठन की भी स्थापना की है।

12. राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं में कच्चे माल का सर्वेक्षण और आकलन किया गया है तथा विदेशों से मंगाए जानेवाले तथा देश में कम पाए जानेवाले कच्चे माल के स्थान पर प्रयोग की जा सकनेवाली सामग्री के उत्पादन का विकास किया गया है। निर्माण-विधियों को उन्नत किया गया है और बहुत-से नए उत्पादनों का विकास किया गया है। इस सम्बन्ध में जिन चीज़ों के उत्पादन का विशेष रूप से ज़िक्र कर दिया जाना चाहिए, वे इस प्रकार हैं—अभ्रक-अवशेष की इंसुलेटिंग ईंटों का निर्माण, देशी कच्चे

माल से चश्मे, आदि बनाने के काम आनेवाले कांच का उत्पादन, निकल-रहित स्टेनलेस इस्पात और सिक्के बनाने के काम आनेवाले धातु मिश्रण का विकास, एक प्रायोगिक संयन्त्र पर घटिया किस्म के खनिज लोहे से लोहे का उत्पादन करने और अधातुकर्मीय कोयले का उत्पादन करने के लिए नीची शैफ्टवाली भट्ठी की स्थापना, बहुप्रयोजनीय खाद्य, खली तथा दूसरे अनाजों पर आधारित प्रोटीनमय खाद्य, मक्खन निकले हुए भैंस के दूध से बनाए गए बच्चों के आहार, सूखे फलों से बनाई गई चीजें, तम्बाकू-अवशेष से निकोटीन सल्फेट का उत्पादन, इमली के बीजों से बनाए गए 'पोल्योसैस', काजू के छिलके से निकलनेवाले लाल पदार्थ से आयन-विनिमय कारी रेज़िन का उत्पादन, घटिया किस्म के कोयले से रंग-विरोधी एवं आयन-विरोधी कार्बन निकालना, लकड़ी के बुरादे और दूसरे लिग्नो-सेल्युलोज़िक फालतू पदार्थों से भवन-निर्माण के काम आनेवाले तख्ते बनाना, मिट्टी के कंडन्सर का निर्माण, यातायात-नियन्त्रण के लिए स्वचालित इलेक्ट्रानिक यन्त्र की तैयारी और बधिर बच्चों के लिए समूह-श्रवण सहायक यन्त्र का निर्माण। कोयला, मैंगनीज़ और अन्य धातुओं का स्तर ऊंचा करने की विधियों का भी विकास किया गया है।

13. परिषद् ने राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं के अतिरिक्त देश-भर में बहुत-से अनुसन्धान-केन्द्रों और इकाइयों की स्थापना की है। सुगन्धित तेल के पौधों की खेती के विकास के लिए लगभग पांच अनुसन्धान-संस्थान केवल सुगन्धित तेलों के सम्बन्ध में शोध कर रहे हैं, दिल्ली के चन्द्रावल वाटर वर्क्स में एक जन-स्वास्थ्य इंजीनियरी अनुसन्धान-केन्द्र और एक वर्षा तथा मेघ-सम्बन्धी भौतिकी अनुसन्धान-इकाई काम कर रही है। गैस-टरबाइनों, वात-शक्ति, औषधीय वनस्पति और भूचाल-इंजीनियरी, आदि के लिए भी अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित किए जा चुके हैं।

14. परिषद् विभिन्न विश्वविद्यालयों और संस्थानों में अनुसन्धान-योजनाओं का समारम्भ भी कराती है और विशिष्ट अनुसन्धान-योजनाओं के लिए सहायता-अनुदान देती है। ये अनुदान परिषद् की विभिन्न विषयों पर काम करनेवाली 13 अनुसन्धान-समितियों की सलाह पर दिए जाते हैं। इन समितियों में विश्वविद्यालयों, अनुसन्धान-संस्थानों, उद्योगों तथा सम्बद्ध सरकारी विभागों के प्रतिनिधि होते हैं। सन् 1960-61 में 90 विभिन्न केन्द्रों में 360 से भी अधिक अनुसन्धान-योजनाएं आरम्भ की गईं।

15. वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् में एक राष्ट्रीय रजिस्टर-इकाई है, जो देश-भर के वैज्ञानिक और तकनीकी कार्यकर्ताओं के सम्बन्ध में पूरी जानकारी रखती है। यह इकाई विदेशों में प्रशिक्षण प्राप्त करनेवाले भारतीय वैज्ञानिकों की एक अलग सूची भी रखती है।

छोटे और बड़े दर्जे की अनुसन्धान-शिष्यवृत्तियां देने की एक योजना वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् ने आरम्भ की है। ये शिष्यवृत्तियां राष्ट्रीय प्रयोग-शालाओं के अतिरिक्त विश्वविद्यालयों और अन्य संस्थानों के विद्यार्थी भी प्राप्त कर सकते हैं।

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् में एक वैज्ञानिक समुच्चय भी है, जो विदेशों में प्रशिक्षण प्राप्त करके आए हुए वैज्ञानिकों को अस्थायी तौर पर कार्य

दिलाता है और जब तक उन्हें उन विषयों से सम्बन्धित कार्य नहीं मिल जाता, जिनमें कि वे विशेषज्ञ हैं, तब तक उन्हें उपयुक्त कार्य दिलाता रहता है। इस वैज्ञानिक समुच्चय की क्षमता हाल में 100 से बढ़ा कर 200 कर दी गई है।

सेवा-नियुक्त अनुसन्धान-कार्य करनेवाले वैज्ञानिकों को अपने सक्रिय अनुसन्धान जारी रखने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने की एक योजना सन् 1958 में आरम्भ की गई थी।

16. **औद्योगिक अनुसन्धान :** परिषद् की यह नीति रही है कि उद्योग-सम्बन्धी समस्याओं पर अनुसन्धान करने के लिए उद्योगों-द्वारा स्थापित सहकारी अनुसन्धान-संघों को प्रोत्साहन दिया जाए। इस नीति के अनुसार, परिषद् ने रेशम तथा नकली रेशम, रबर और रंजक-उद्योगों-द्वारा स्थापित सहकारी अनुसन्धान-इकाइयों तथा अहमदाबाद, बम्बई और कोयम्बुत्तूर में वस्त्र-उद्योग-अनुसन्धान-एसोसिएशनों-द्वारा स्थापित सहकारी अनुसन्धान-इकाइयों को सहायता दी है।

राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं ने विभिन्न उद्योगों को तकनीकी सलाह और परीक्षण की सुविधाएं प्रदान की हैं। इसके अतिरिक्त, प्रयोगशालाओं ने अप्राप्य कच्चे माल के स्थान पर प्रयोग करने-योग्य सामग्री की जांच करने में भी सहायता दी है। परिषद् औद्योगिक संघों, वाणिज्य-चेम्बरों और केन्द्रीय तथा राज्य-सरकारों के तकनीकी विभागों से सम्पर्क रखती है, ताकि समस्याओं का सही ज्ञान हो सके और उपयुक्त प्रयोगशालाओं में उनका अध्ययन किया जा सके। उद्योगों से सम्बन्ध बनाए रखने के लिए औद्योगिक सम्पर्क-कार्यालयों की भी स्थापना की गई है।

17. **राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं के कार्यक्रम :** प्रत्येक राष्ट्रीय प्रयोगशाला ने अपने कार्य का लेखा-जोखा किया है और तीसरी योजना के लिए विकास-कार्यक्रम बनाए हैं। इन कार्यक्रमों की कुछ प्रमुख बातों का संक्षेप में यहां ज़िक्र कर देना उचित होगा। राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला में रेडियो के हिस्सों के विकास के लिए एक प्रायोगिक संयन्त्र के स्तर पर काम किया जाएगा। राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला की ओर से रंगाई की सामग्री तथा अकार्बनिक अन्तरायकों और सुगन्धित तेलों से सम्बद्ध नए विभाग शुरू किए जाएंगे और बहुत-सी नई प्रायोगिक संयन्त्र-परियोजनाएं आरम्भ की जाएंगी। राष्ट्रीय धातुकर्म-प्रयोगशाला मिश्र इस्पात के लिए और विभिन्न परिस्थितियों में क्षरण की समस्या का अध्ययन करने के लिए एक नए विभाग की स्थापना करेगी। केन्द्रीय ईंधन-अनुसन्धान-संस्था घटिया किस्म के कोयले का उपयोग करने के सम्बन्ध में कार्य करेगी और बड़े पैमाने पर प्रायोगिक संयन्त्र पर परीक्षण आरम्भ करेगी। कांच और मृत्तिका-संस्था चश्मे, आदि बनाने के काम आनेवाले कांच के उत्पादन के लिए एक प्रायोगिक संयन्त्र और अभ्रक से विभिन्न प्रकार की चीज़ें बनाने के सम्बन्ध में अनुसन्धान करने के लिए एक अलग शाखा स्थापित करेगी। केन्द्रीय औषध-अनुसन्धान-प्रयोगशाला की कीटाणुनाशक तथा बढ़िया रसायनों के लिए एक विभाग खोलेगी। केन्द्रीय खाद्य-टेक्नोलाजी अनुसन्धान-संस्था फलों तथा सब्ज़ियों के परिरक्षण के लिए कुछ प्रादेशिक केन्द्र खोलेगी। केन्द्रीय सड़क-अनुसन्धान-संस्था पुल-निर्माण-सम्बन्धी समस्याओं के अध्ययन के लिए एक नए विभाग की स्थापना करेगी। केन्द्रीय भवन-निर्माण-अनुसन्धान-संस्था पांच प्रादेशिक अनुसन्धान-इकाइयां आरम्भ करने का विचार रखती है। केन्द्रीय चर्म-अनुसन्धान-संस्था

की ओर से भी प्रादेशिक विस्तार-केन्द्र खोले जाएंगे। केन्द्रीय विद्युत-रसायन-अनुसन्धान-संस्था क्षरण तथा रसायन-भौतिकी पर अनुसन्धान करने के लिए नए विभाग खोलेगी। केन्द्रीय नमक-अनुसन्धान-संस्था 'एल्गोलाजी' पर कार्य करेगी और 'साल्ट-बिटर्न्स' से उपोत्पादन प्राप्त करने के सम्बन्ध में प्रायोगिक परियोजनाएं आरम्भ करेगी।

भारतीय राष्ट्रीय वैज्ञानिक आलेख-केन्द्र का विस्तार किया जाएगा, ताकि वह वैज्ञानिक तथा तकनीकी जानकारी के राष्ट्रीय सूचना-केन्द्र के रूप में काम कर सके।

दूसरी योजना में जो संस्थान आरम्भ किए गए थे, उनमें निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं: दुर्गापुर की केन्द्रीय मेकैनिकल इंजीनियरी अनुसन्धान-संस्था, नागपुर की केन्द्रीय जन-स्वास्थ्य इंजीनियरी अनुसन्धान-संस्था, बंगलोर की राष्ट्रीय वैमानिक प्रयोगशाला, असम की प्रादेशिक अनुसन्धान-प्रयोगशाला, केन्द्रीय भारतीय औषधीय वनस्पति-संगठन और केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण-संगठन। तीसरी योजना में इन संस्थानों में हर प्रकार के साज़-सामान की व्यवस्था की जाएगी।

18. **तीसरी योजना में नए अनुसन्धान-संस्थान :** तीसरी योजना में बहुत-से नए संस्थान और अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था है। इन संस्थानों में पेट्रोलियम-संस्था, राष्ट्रीय जीवविज्ञान-प्रयोगशाला और एक प्रादेशिक अनुसन्धान-प्रयोगशाला भी शामिल है।

पेट्रोलियम तथा इससे बनाई गई चीज़ों के सम्बन्ध में अनुसन्धान करने के लिए देहरादून में पेट्रोलियम-संस्था स्थापित की जा रही है।

राष्ट्रीय जीवविज्ञान-प्रयोगशाला में शरीर-विज्ञान 'साइटोलाजी' तथा प्रजनन-विज्ञान, प्रायोगिक भ्रूण-विज्ञान जीवाणु-विज्ञान, विषाणु-विज्ञान तथा उपचार-विज्ञान, जीव-भौतिकी तथा 'बायोमेट्री' और जीव-रसायन-विज्ञान के विभाग खोले जाएंगे।

रुड़की की केन्द्रीय भवन-निर्माण-अनुसन्धान-संस्था की बम्बई-स्थित प्रादेशिक इकाई के साथ एक अग्नि-अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित करने का भी प्रस्ताव है। इस केन्द्र में आग लग जाने की समस्याओं पर अनुसन्धान किया जाएगा और यह केन्द्र आग लग जाने के खतरों से बचने की समस्याओं पर सलाह देगा।

भवनों पर भूचाल के दुष्प्रभावों के सम्बन्ध में अध्ययन करने तथा भूचाल-सह भवनों के डिज़ाइन बनाने के लिए दूसरी योजना में रुड़की में जो भूचाल-इंजीनियरी अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित किया गया था, उसको और सुगठित किया जाएगा।

राष्ट्रीय धातुकर्म-प्रयोगशाला, जमशेदपुर, में नीची शैफ़्टवाली भटठी की परियोजना के अन्तर्गत एक मार्गदर्शक संयन्त्र स्थापित किया गया था। यह संयन्त्र कोक बनानेवाले कोयले का प्रयोग किए बिना लोहा-उत्पादन का परीक्षण करने के लिए स्थापित हुआ था। लौह-मिश्र धातुओं का उत्पादन करने के लिए इस संयन्त्र का विकास किया जाएगा। इस परियोजना के अन्तर्गत नीची शैफ़्टवाली भट्ठी की गैस से घटिया दर्जेवाली कच्ची मैंगनीज़ की किस्म को बढ़िया करने तथा परिशुद्ध लोहे के उत्पादन का भी काम किया जाएगा।

तीसरी योजना में स्वचालित वाहनों, सीमेंट, गढ़ाई, छपाई, खाद्य तथा सम्बद्ध उद्योगों के लिए सहकारी अनुसन्धान-संघ स्थापित करने के प्रस्तावों पर विचार किया जा रहा है।

(3)

वैज्ञानिक अनुसन्धान-मन्त्रालय

19. भारतीय सर्वेक्षण-संस्था, राष्ट्रीय एटलस-संगठन, वनस्पति-विज्ञान तथा प्राणिविज्ञान-सर्वेक्षण-संस्थाओं और केन्द्रीय भूभौतिकीय मंडल-जैसे अनुसन्धान-संगठनों का विकास करने तथा वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिए अनुदान देने का काम वैज्ञानिक अनुसन्धान-मन्त्रालय करता है।

20 **भारतीय सर्वेक्षण-संस्था :** पहली और दूसरी योजनाओं की अवधि में मानक पैमाने पर देश में 1.66 लाख वर्ग मील क्षेत्र का विभागीय सर्वेक्षण किया गया। इसके अतिरिक्त, पश्चिम-पाकिस्तान और भारत के बीच की सीमा-रेखा के निर्धारण का कार्य अधिकांशतः पूरा कर लिया गया। इस संस्था ने 150 से भी अधिक नदी-घाटी, बाढ़-नियन्त्रण तथा औद्योगिक परियोजनाओं के सिलसिले में लगभग 1,10,000 वर्ग मील क्षेत्र का सर्वेक्षण किया। अन्तर्राष्ट्रीय भूभौतिकी वर्ष के कार्यक्रमों के अन्तर्गत किए गए अध्ययनों में भारतीय सर्वेक्षण-संस्था ने भाग लिया। पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत परियोजनाओं के सर्वेक्षण-कार्य तथा उनके मानचित्र बनाने के काम की भारी माग को पूरा करने के लिए भारतीय सर्वेक्षण-संस्था ने विस्तार, यन्त्रीकरण और आधुनिकीकरण की एक योजना बनाई है। तीसरी योजना की अवधि में भारतीय सर्वेक्षण-संस्था 'कार्टोग्राफी', 'ज्योडेसी' और 'फोटोग्रामेट्री' के लिए अलग-अलग अनुसन्धान-प्रकोष्ठ स्थापित करने का विचार रखती है।

21. **राष्ट्रीय एटलस-संगठन :** राष्ट्रीय एटलस-संगठन की मंजूरी सन् 1956 में दी गई थी। इसके सामने बहुत बड़ा कार्यक्रम है। इस संस्था ने भारत के राष्ट्रीय एटलस का प्रारम्भिक हिन्दी-संस्करण निकाल दिया है और आजकल मुख्य संस्करण की तैयारी में व्यस्त है। यह संस्था जनसंख्या, प्रकृति, परिवहन, इत्यादि से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के मानचित्र धारावाहिक रूप से निकालने का विचार रखती है।

22. **भारतीय वनस्पति-विज्ञान-सर्वेक्षण संस्था :** भारतीय वनस्पति विज्ञान-सर्वेक्षण-संस्था ने तीसरी योजना के लिए एक विकास-कार्यक्रम बनाया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत आर्थिक वनस्पति-विज्ञान और औषधीय पौधों के लिए विभाग स्थापित करना, समुद्री जल तथा दूसरे जल में होनेवाले पौधों-सहित नर और मादा-विहीन पौधों का एक राष्ट्रीय संग्रह बनाना, लकड़ी, 'पालेन', 'फासिल' और 'कार्पोलाजिकल' वस्तुओं का एक केन्द्रीय समुच्चय बनाना, और भिन्न जलवायुवाले क्षेत्रों में प्रायोगिक उद्यान लगाना सम्मिलित है। मरुस्थल-नियन्त्रण, बाढ़-नियन्त्रण, मिट्टी-संरक्षण और वन्य प्राणियों पर और अधिक ध्यान देने के लिए भारतीय इकोलाजी-अनुसन्धान-परिषद् का और विकास करने का प्रस्ताव है। वनस्पति-विज्ञान-सर्वेक्षण-संस्था तीसरी योजना में दो नए संगठन बनाने का विचार रखती है। इनमें से एक ऊष्ण कटिबन्ध की समस्याओं पर कार्य करेगा।

23. **भारतीय प्राणिविज्ञान-सर्वेक्षण-विभाग :** दूसरी योजना में प्राणिविज्ञान-सर्वेक्षण संस्था की ओर से पशु-पक्षियों के सम्बन्ध में, सांभर झील के सम्बन्ध में तथा पांडिचेरी-कराइकल का सर्वेक्षण किया गया। इन सर्वेक्षणों के अन्तर्गत कई हज़ार पशु-पक्षी इकट्ठे

किए गए, उनका अध्ययन किया गया और राष्ट्रीय प्राणिविज्ञान-संग्रहालय में रखा गया। तीसरी योजना में इस विभाग की विकास-योजनाओं में 'इकोलाजी' और वन्य-प्राणी-संरक्षण तथा 'पालेजुलाजी' के लिए नए खंड खोलने की और स्वच्छ जल तथा ऊंचे धरातल के जीवन-विज्ञान-सम्बन्धी अनुसन्धान करने के लिए दो नए क्षेत्रीय केन्द्र खोलने की व्यवस्था भी शामिल है। समुद्र-सर्वेक्षण इकाई का भी विस्तार किया जाएगा।

24. **केन्द्रीय भूभौतिकी मंडल** : दूसरी योजना में केन्द्रीय भूभौतिकी मंडल ने भूभौतिकी अनुसन्धान-शाखा और समुद्र-वर्णना-अनुसन्धान-शाखा आरम्भ की। ये शाखाएं अभी आरम्भिक अवस्था में ही हैं। तीसरी योजना के आरम्भ से वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् इन शाखाओं का कार्य-भार सम्भाल लेगी। भूभौतिकी अनुसन्धान-शाखा भू-भौतिकी समन्वेषण और उपकरण-सम्बन्धी विभिन्न पहलुओं पर ध्यान देगी।

समुद्र-वर्णना-अनुसन्धान-शाखा अरब-सागर और बंगाल की खाड़ी के विस्तृत क्षेत्रों में सामुद्रिक तथ्य एकत्र करेगी। यह शाखा सन् 1960-64 में होनेवाले अन्तर्राष्ट्रीय भारतीय समुद्र-अभियानों में भाग लेगी।

25. **वैज्ञानिक संस्थाओं और संघों के लिए सहायता** : वैज्ञानिक संस्थाएं और संघ अपने अनुसन्धान-संस्थान चलाते हैं तथा उदीयमान युवक-वैज्ञानिकों को छात्र-वृत्तियां और शिष्यवृत्तियां प्रदान करते हैं। दूसरी योजना में वैज्ञानिक अनुसन्धान-मन्त्रालय ने वैज्ञानिक संस्थाओं और संघों को लगभग 2 करोड़ रुपये सहायता-अनुदान के रूप में दिए। जिन संगठनों को सहायता दी गई, उनमें भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान-संस्था, भारतीय विज्ञान-कांग्रेस-संघ, भारतीय विज्ञान-उन्नयन संघ, बोस-संस्था, भारतीय विज्ञान-अकादेमी (रमण-संस्था), भौतिक अनुसन्धान-प्रयोगशाला (अहमदाबाद) और बीरबल साहनी पालियो-वनस्पति-विज्ञान-संस्था शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, भौतिक विज्ञान, रसायन-विज्ञान, गणित-शास्त्र, वनस्पति-विज्ञान, प्राणिविज्ञान, भूगर्भशास्त्र, खनन-विज्ञान और इंजीनियरी के क्षेत्र में काम करनेवाली अन्य योग्य वैज्ञानिक संस्थाओं को भी सहायता दी जाती है।

26. पिछले कुछ वर्षों से देश में पर्वतारोहण के सम्बन्ध में दिलचस्पी दिखाई जा रही है। दार्जिलिंग में हिमालय-पर्वतारोहण-संस्था स्थापित होने के बाद से इस दिशा में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। तीसरी योजना में पर्वतारोहण-सम्बन्धी अनुसन्धानों और अभियानों को आवश्यक सहायता दी जाएगी।

दूसरी योजना के अन्त में दार्जिलिंग में हिमालयवर्ती प्राणी-उद्यान की स्थापना की गई थी। तीसरी योजना में इसका और अधिक विकास किया जाएगा।

27. **विज्ञान-मन्दिर** : विज्ञान-मन्दिर-योजना (ग्रामीण विज्ञान-प्रयोगशाला) का उद्देश्य वैज्ञानिक विकास, वैज्ञानिक जानकारी का प्रसार और ग्रामीण जनता के नित्य-प्रति के जीवन में विज्ञान का समावेश करना है। दूसरी योजना के अन्त तक 39 विज्ञान-मन्दिर स्थापित किए जा चुके हैं। इस योजना के कार्य का लेखा-जोखा एक समिति ने लिया है। इस समिति की सिफारिश है कि सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के क्षेत्र में विज्ञान-मन्दिरों को प्रसिद्ध सार्वजनिक संगठनों और शैक्षणिक संस्थाओं के निकट सहयोग में कार्य करना चाहिए और इन विज्ञान-मन्दिरों का प्रशासन राज्य-सरकारों को सम्भाल लेना चाहिए। ये सिफारिशें विचाराधीन हैं। अस्थायी रूप से यह अनुमान लगाया गया है

कि तीसरी · योजना के काल नें 160 अतिरिक्त विज्ञान-मन्दिरों की स्थापना की जाएगी।

(4)
परमाणु-शक्ति-विभाग

28. परमाणु-शक्ति-विभाग के मुख्य उद्देश्य हैं : बिजली के उत्पादन में परमाणु-शक्ति के प्रयोग का विकास, और वैज्ञानिक अन्वेषणों में 'ट्रेसरों' के रूप में तथा विकिरण के साधन के रूप में आइसोटोपों के व्यापक प्रयोग-द्वारा कृषि, जीवविज्ञान, उद्योग तथा चिकित्सा में उसका अधिकाधिक प्रयोग है। विश्व में थोरियम का सबसे बड़ा भांडार भारत में है। हमारा अन्ततः उद्देश्य यह है कि देश में न्यैष्टिक शक्ति का उत्पादन थोरियम पर आधारित हो। इस काम के लिए काफी लम्बे समय तक अनुसन्धान करना होगा और भौतिक विज्ञान, रसायन-विज्ञान, धातुकर्म और इंजीनियरी के क्षेत्र में कितनी ही कठिन टेक्नोलाजी-विषयक समस्याओं को हल करना होगा।

29. **परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान :** ट्राम्बे में जनवरी 1957 में स्थापित किया गया परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान परमाणु-शक्ति के क्षेत्र में वैज्ञानिक अनुसन्धान और तकनीकी विकास-कार्य का मुख्य केन्द्र है। इस समय 1,300 से भी अधिक स्नातक वैज्ञानिक और इंजीनियर इसमें काम कर रहे हैं। इनको प्रतिष्ठान में काम करते हुए उच्च प्रशिक्षण दिया गया है। प्रतिष्ठान का कार्य कोई 15 विभागों में बंटा हुआ है। ये विभाग भौतिक विज्ञान, रसायन-विज्ञान, जीवविज्ञान, चिकित्सा, इंजीनियरी और धातुकर्म-सम्बन्धी वैज्ञानिक कार्य करते हैं।

भौतिक विज्ञान-समूह में न्यैष्टिक भौतिकी, स्वास्थ्य भौतिकी और इलैक्ट्रानिक्स-विभाग तथा तकनीकी भौतिकी अनुभाग है। न्यैष्टिक भौतिकी विभाग विभिन्न पदार्थों में न्यूट्रनों के विग्रह तथा उनके धीमे पड़ जाने के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण खोज-कार्य कर रहा है। यह कार्य ठोस पदार्थों के बुनियादी भौतिक स्वरूप की जानकारी प्राप्त करने तथा न्यैष्टिक प्रतिकारियों के डिजाइन तैयार करने के लिए आवश्यक है। न्यूट्रनों के बिखरने और उनकी दूसरी प्रतिक्रियाओं के सम्बन्ध में भी कार्य आरम्भ किया जानेवाला है।

स्वास्थ्य भौतिकी विभाग का 'एयर मानिटरिंग' अनुभाग न केवल ट्राम्बे-प्रतिष्ठान के इर्द-गिर्द के प्रमुख स्थानों पर एयर मानिटरिंग का कार्य करता है, बल्कि इसने वायु, वर्षा-जल और दूध में रेडियो-सक्रिय तत्वों का सुव्यवस्थित सर्वेक्षण करने के लिए देश के विभिन्न भागों में 34 केन्द्र भी स्थापित किए हैं। इससे परमाणु-विस्फोटों की विनाशकारी तत्व-वर्षा की रोकथाम सम्भव होती है। विशेष रूप से बम्बई के आसपास उगनेवाली वनस्पति में रेडियो-सक्रिय तत्वों को मापा जाता है और परमाणविक विनाशकारी तत्व-वर्षा के कारण गृहीत रेडियो-स्ट्रानटियम का असर जानने के लिए जानवरों और मनुष्यों की हड्डियों में स्ट्रानटियम को मापा जाता है।

स्वास्थ्य भौतिकी विभाग के विकिरण-परिमाप-अनुभाग ने ट्राम्बे-प्रतिष्ठान में विकिरण तथा रेडियो-सक्रिय पदार्थों से सम्बद्ध कर्मचारियों के लिए और स्वैच्छिक

रूप से देश के अस्पतालों और अनुसन्धान-संस्थानों के लिए एक 'फ़िल्म बैज सर्विस' चला रखी है।

इलैक्ट्रानिक्स-विभाग ने परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान में काम आनेवाले तथा रेडियो-सक्रिय खनिज पदार्थों के सर्वेक्षण में काम आनेवाले लगभग सभी उपकरण तैयार कर लिए हैं। तीसरी योजना के अन्तर्गत इलैक्ट्रानिक उपकरणों की समग्र आवश्यकता को पूरा करने के लिए उत्पादन-कार्यक्रम का विस्तार किया जा रहा है। 'अप्सरा' और 'ज़रलीना' प्रतिकारियों की नियन्त्रण-प्रणालियों का विकास प्रतिकारी-नियन्त्रण-अनुभाग ने किया था, जो अब हर प्रकार के प्रतिकारियों के लिए, जिनमें न्यैष्टिक शक्ति-केन्द्र भी शामिल हैं, नियन्त्रण-प्रणाली की रचना कर सकता है।

तकनीकी भौतिकी अनुभाग उन उपकरणों के निर्माण और विकास-कार्य में लगा है, जो अब तक विदेशों से मंगाए जाते थे। विभिन्न प्रकार के कितने ही 'स्पेक्ट्रोमीटरों' तथा अन्य उपकरणों के डिज़ाइन बनाए जा चुके हैं और उन्हें तैयार भी किया जा चुका है।

30. रसायन-विज्ञान-समूह में विश्लेषणात्मक रसायन-विज्ञान, आइसोटोप, रेडियो-रसायन और रासायनिक इंजीनियरी के विभाग हैं तथा एक कठिन कार्य-अनुभाग है। इस समूह ने ऐसी तकनीकों का विकास किया है, जिनसे परमाणविक दृष्टि से शुद्ध पदार्थों में ज़रा-सी भी अशुद्धता को ढूंढ़ निकाला जा सकता है। उदाहरण के लिए ग्रैफ़ाइट में करोड़वें हिस्से तक के बेरोन का पता लगाया जा सकता है। रेडियो-आइसोटोपों के उत्पादन तथा प्रयोग के सम्बन्ध में और रेडियो-आयोडीन, रेडियो-फ़ासफ़ोरस, रेडियो-स्वर्ण, रेडियो-सोडियम, रेडियो-लौह, इत्यादि-जैसे अत्यधिक रेडियो-सक्रिय पदार्थों के प्रयोग तथा प्रबन्ध के सम्बन्ध में तकनीकों का इतना विकास कर लिया गया है कि अब अनुसन्धान और चिकित्सा के कार्यों में उनका प्रयोग करना सरल हो गया है। प्रयोग में आ चुके ईंधन के तत्वों से प्लुटोनियम और दुर्लभ मृत्तिकाएं अलग निकालने की औद्योगिक प्रक्रियाओं का विकास करने के लिए प्लुटोनियम और दुर्लभ मृत्तिकाओं के रासायनिक गुणों के अध्ययन पर महत्वपूर्ण कार्य किया जा चुका है। अपरिष्कृत यूरेनियम साल्ट के परमाणविक रूप में शुद्ध यूरेनियम तैयार करने के लिए अनुसन्धान और विकास-कार्य किए गए हैं। इस कार्य के आधार पर एक प्रायोगिक संयन्त्र का सफलतापूर्वक डिज़ाइन बनाया गया और उसका निर्माण किया गया, जो सन् 1959 के अप्रैल मास से कार्य कर रहा है। इस संयन्त्र से जो यूरेनियम तैयार किया गया, वह 'ज़रलीना' और 'कनाडा-भारत' प्रतिकारी के लिए ईंधन का काम देता है। कच्चे यूरेनियम से यूरेनियम निकालने के लिए बिहार में जो यूरेनियम-कारखाना स्थापित किया जानेवाला है, उसके लिए आवश्यक प्रक्रियाएं और 'फ्लोशीटें' तैयार कर ली गई हैं। तांबे के अवशेष से थोड़े परिमाण में यूरेनियम निकालने के लिए एक प्रक्रिया का विकास किया गया है, जिसका एक प्रायोगिक संयन्त्र पर परीक्षण किया जा रहा है। नत्रजन 14-जैसे स्थायी आइसोटोप बनाने के लिए प्रायोगिक संयन्त्र स्थापित किए गए हैं। भारी पानी तैयार करने की विभिन्न विधियों पर काम किया जा रहा है। परमाणु प्रतिकारियों में प्रयोग के बाद भारी पानी का स्तर गिर जाता है; उसे फिर से उच्च स्तर पर लाने के सम्बन्ध में काफी काम किया जा रहा है। यूरेनियम, थोरियम तथा परमाणु-शक्ति-कार्य के लिए महत्वपूर्ण अन्य मिश्र धातुओं के

विकास के सम्बन्ध में बुनियादी अनुसन्धान-कार्य धातुकर्म-विभाग में किया जा रहा है। 'एलीमेंट' के उत्पादन के लिए एक कारखाने का डिज़ाइन बनाने, उसका निर्माण करने और उसे चलाने का भी श्रेय इसी विभाग को है। यूरेनियम-धातु और ईंधन-निर्माण-संयन्त्रों की स्थापना के फलस्वरूप भारत को उन कुछ देशों के बीच स्थान प्राप्त हो गया है, जो अपनी ईंधन-सामग्रियों की स्वयं व्यवस्था करते हैं ।

31. इंजीनियरी-समूह में तीन विभाग हैं : प्रतिकारी-इंजीनियरी, प्रतिकारी-संचालन और इंजीनियरी-सेवा । इस समूह का सम्बन्ध परमाणु-प्रतिकारियों की डिज़ाइन निर्माण और संचालन-सम्बन्धी इंजीनियरी समस्याओं से है। प्रतिकारियों में प्रयुक्त सामग्रियों के आचरण का अध्ययन करने के लिए इस समूह ने सात 'लूपों' के डिज़ाइन तैयार किए और उनका निर्माण किया। 'अप्सरा' और 'जरलीना' के यान्त्रिक तथा इंजीनियरी डिजाइन भी इसी समूह ने तैयार किए थे।

अगस्त, 1956 को 'अप्सरा' ने कार्य आरम्भ किया और चार वर्ष तक लगातार बिना किसी गड़बड़ी के काम करता रहा; 4 अगस्त, 1960 को मरम्मत तथा नवीकरण के लिए इसे बन्द करना पड़ा । इन चार वर्षों में यह प्रतिकारी 22 लाख किलोवाट-घंटे चला और भारत में तैयार किए गए अधिकांश रेडियो-आइसोटोप यहीं बने। इसके अतिरिक्त, भौतिक विज्ञान-सम्बन्धी प्रयोगों के लिए भी यह प्रतिकारी बहुत मूल्यवान साबित हुआ । जनवरी 1961 से यह प्रतिकारी पुनः कार्य-संलग्न है । अब इसकी नियन्त्रण तथा शीतकरण-प्रणाली में काफी सुधार कर दिया गया है । 'ज़रलीना' ने अपना कार्य 15 जनवरी, 1961 को आरम्भ किया। 'कनाडा-भारत' प्रतिकारी का कार्य पहले-पहल 16 जून, 1960 को आरम्भ हुआ था । यह प्रतिकारी ऊंचे 'फ्लक्स' का है, इसमें प्राकृतिक यूरेनियम का ईंधन के रूप में प्रयोग होता है, और इसमें भारी पानी को सन्तुलित करने तथा हल्के पानी को ठंडा करने की व्यवस्था है । इंजीनियरी-अनुसन्धान के लिए यह एक शक्तिशाली प्रतिकारी है और न्यैष्टिक शक्ति-केन्द्र की डिज़ाइन के लिए आवश्यक सुविधा प्रदान करता है। यह अधिकतम क्षमतावाले आइसोटोपों का उत्पादन करनेवाला प्रतिकारी है और भारत को सामूहिक रूप से उत्पादित आइसोटोपों के मामले में आत्मनिर्भर बना देगा । इन आइसोटोपों में 'रेडियो-कोबाल्ट'-जैसे आइसोटोप भी शामिल हैं, जिनका चिकित्सा-सम्बन्धी कार्यों में उपयोग होता है।

32. जीवविज्ञान-विभाग और चिकित्सा-विभाग ने जीवविज्ञान-सम्बन्धी प्राणियों पर विकिरण के प्रभावों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण कार्य किया है। यह कार्य विशेष रूप से कोशीय स्तर पर किया गया है।

33. टाटा बुनियादी अनुसन्धान-संस्था की स्थापना सन् 1945 में हुई थी। यह संस्था न्यैष्टिक विज्ञान और गणित-विज्ञान में उच्च अध्ययन तथा आधारभूत अनुसन्धान के लिए प्रमुख केन्द्र है। इस संस्था ने सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान में प्रारम्भिक कणों के क्षेत्र में जो अनुसन्धान-कार्य किया है और ब्रह्मांडीय किरणों, भू-भौतिकी, न्यैष्टिक भौतिकी तथा उसके गणित-सम्प्रदाय में जो प्रयोग किए हैं, उन्हें व्यापक मान्यता मिली है । गणित, ब्रह्मांडीय किरणों, भू-भौतिकी तथा न्यैष्टिक भौतिकी में किए जानेवाले आधारभूत कार्य को और बढ़ाया जाएगा । इस संस्था में नवीनतम प्रकार का एक द्रुत गतिवाला ट्रांज़िस्टरमय अंक-गणना-यन्त्र लगाने का विचार है। इस समय

उपलब्ध गणना-यन्त्रों से अधिक गतिवाले और अधिक शक्तिशाली गणन-सुविधाएं प्रदान करनेवाले गणना-यन्त्र की डिज़ाइन तैयार करने और उसका उत्पादन करने की भी योजना है। उच्च शक्तिवाले न्यैष्टिक भौतिक विज्ञान के कार्य के लिए एक विद्युतीकरणकृत कण-अग्रायक के सम्बन्ध में भी विचार किया जा रहा है।

34. परमाणु-शक्ति-विभाग में परमाणु-खनिज-सम्बन्धी एक बड़ा प्रभाग है, जो परमाणु-शक्ति-कार्यक्रम में काम आनेवाले खनिज पदार्थों के नए भांडारों का पता लगाता है। 10 प्रतिशत संकेन्द्रणवाले लगभग 3 लाख टन थोरियम के भांडार का बिहार में पता चला है। इसी प्रकार, और भी बहुत-से भांडारों का पता लगाने के लिए कार्य किया गया। देश में इन भांडारों का पता लगाने के लिए खुदाई का काम चल रहा है। बिहार के एक भांडार में कई हज़ार टन यूरेनियम है। परमाणु-शक्ति-कार्यक्रम में काम आनेवाले बेरिल, ज़िरकन तथा अन्य महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों के भी महत्वपूर्ण भांडार भारत में हैं।

35. **तीसरी योजना के कार्यक्रम :** तीसरी योजना की अवधि में परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान उपर्युक्त कार्यक्रमों को और सघन तथा विस्तृत करेगा। वर्तमान अस्थायी प्रयोगशालाओं के स्थान पर नई प्रयोगशालाएं खोली जाएंगी। इनमें विशेष रूप से एक 'माडुलर' प्रयोगशाला शामिल होगी, जिसमें उन विभागों को स्थान दिया जाएगा, जो थोड़े परिमाणवाली रेडियो-सक्रिय सामग्रियों का प्रयोग करेंगे। एक बहुत बड़ी रेडियोलाजिकल प्रयोगशाला भी होगी, जिसमें गर्म कोशों पर उच्च गतिविधियों से सम्बद्ध कार्य होगा। इस कार्य में एक लाख क्यूरी की मात्राएं प्रयोग में लाई जा सकती हैं। आइसोटोप-विभाग, रेडियो-रसायन-विभाग और प्लुटोनियम-प्रयोगशाला में क्यूरी की इतनी मात्रा की आवश्यकता पड़ेगी।

36. तीसरी योजना में किए जानेवाले कुछ अधिक महत्वपूर्ण कार्यों का भी संक्षेप में यहां ज़िक्र करना उचित होगा। स्वास्थ्य-भौतिकी विभाग की 'फिल्म बैज सर्विस' रेडियो-सक्रिय पदार्थों या विकिरण का प्रयोग करनेवाले देश के तमाम संस्थानों के लिए विस्तृत की जाएगी।

इलैक्ट्रानिक्स-विभाग इलैक्ट्रानिक उपकरणों के डिज़ाइन बनाने और उनका निर्माण करने के कार्य का विस्तार करेगा। इस विभाग ने ट्रांज़िस्टरों के विकास और निर्माण का भी काम अपने हाथ में लिया है।

इस्तेमाल में आ चुके ईंधन-तत्वों का उपचार करने और प्लुटोनियम निकालने के लिए ट्राम्बे में एक संयन्त्र की स्थापना का कार्य चल रहा है जो सन् 1963 की प्रथम छमाही में पूरा हो जाएगा। इस संयन्त्र में 2 प्रतिशत तक सम्पन्न यूरेनियम ईंधन-तत्वों के उपचार की व्यवस्था है। यह संयन्त्र तीसरी योजना में प्रस्तावित प्लुटोनियम-संयन्त्र के निर्माण के लिए आवश्यक अनुभव भी प्रदान करेगा। एक वृहत् परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान के लिए आवश्यक है कि उसमें अवशेषों को निबटाने की बड़े पैमाने पर व्यवस्था हो। अतः प्लुटोनियम-संयन्त्र के साथ-साथ उच्च सक्रिय अवशेषों के उपचार के लिए एक संयन्त्र का भी डिज़ाइन तैयार किया जा रहा है। कनाडा-भारत प्रतिकारी के पास ही एक संयन्त्र लगाया जाएगा, जिसमें अल्प सक्रिय अवशेषों का उपचार होगा।

दूसरी योजना के काल में ही ज़िरकोनियम, बेरिलियम तथा परमाणु-शक्ति-कार्यक्रम में काम आनेवाली अन्य धातुओं के उत्पादन की प्रक्रियाओं का विकास किया जा चुका है। इनका एक प्रायोगिक संयन्त्र-स्तर पर परीक्षण किया जाएगा।

37. देश-भर की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आइसोटोप-विभाग फ़ासफ़ोरस 32, सल्फ़र 35, क्रोमियम 51, आयरन 59, ब्रोमाइन 82, आयोडीन 131 और गोल्ड 198 जैसे रेडियो-आइसोटोपों के उत्पादन में वृद्धि करेगा। इसके अतिरिक्त, जीवविज्ञान-सम्बन्धी परीक्षणों के लिए आवश्यक 'लेबेल्ड' कार्बनिक मिश्रणों के उत्पादन को, जो कि आरम्भ भी हो चुका है, काफी विस्तृत किया जाएगा।

चिकित्सा-कार्य के लिए कोबाल्ट 60 का बड़े परिमाण में उत्पादन किया जाएगा। यह विकिरण-साधन कैन्सर के इलाज में बहुत महत्व रखता है। इसके उत्पादन में वृद्धि होने से देश के अनेक अस्पतालों में इसका वितरण किया जा सकेगा।

एक चिकित्सा-आइसोटोप-केन्द्र खोला जाएगा, जो चिकित्सा-अनुसन्धान और इलाज में आइसोटोपों के प्रयोग का प्रबन्ध करेगा। यह केन्द्र देश-भर के डाक्टरों को इन नए उपकरणों के प्रयोग का प्रशिक्षण देगा।

कैन्सर, रासायनिक 'मुटेजनों' और कैन्सर-विरोधी तत्वों के सम्बन्ध में अधिक अध्ययन होने के कारण जीवविज्ञान-विभाग और चिकित्सा-विभाग का बहुत विकास होगा। पौधों में परिवर्तनों की सृष्टि और उनका अध्ययन करने तथा पौधों की बढ़िया नस्लों का विकास करने के लिए ट्राम्बे में गामा-क्षेत्र का निर्माण-कार्य पूरा कर दिया जाएगा।

विकिरण-द्वारा खाद्य-सामग्री के परिरक्षण के सम्बन्ध में तथा पट्टियों एवं चिकित्सा के सामान, इत्यादि को विकिरण की मदद से जीवाणुहीन करने के सम्बन्ध में भी काम किया जाएगा।

38. कनाडियन किस्म का एक 200 मेगावाट का न्यैष्टिक शक्ति-केन्द्र स्थापित करने में कितना व्यय होगा, इस सम्बन्ध में अध्ययन किया जा रहा है। इस केन्द्र में सन्तुलन के लिए भारी पानी का तथा ठंडा करने के लिए कार्बनिक का प्रयोग किया जाएगा।

20. मेगावाट का एक प्रोटोटाइप न्यैष्टिक शक्ति-केन्द्र स्थापित करने का काम भी आगे बढ़ाया जाएगा। इस केन्द्र में प्राकृतिक यूरेनियम को ईंधन के रूप में, भारी पानी को सन्तुलन-कारी के रूप में तथा कार्बनिक को ठंडा करनेवाले तत्व के रूप में प्रयुक्त किया जाएगा।

39. गुलमर्ग में एक ऊंचे धरातलवाली प्रयोगशाला स्थापित करने का कार्य पूरा किया जाएगा। इस प्रयोगशाला का सम्बन्ध रज्जुमार्ग-द्वारा खिलनमर्ग और अफरवट-स्थित अधिक ऊंचे केन्द्र से स्थापित किया जाएगा। इन प्रयोगशालाओं में ऊंचे धरातल पर ब्रह्मांडीय किरणों-सम्बन्धी अनुसन्धान तुरन्त ही आरम्भ कर दिए जाएंगे। इसके अतिरिक्त, ऊंचे धरातल पर जीवविज्ञान, शरीर-विज्ञान तथा अन्य वैज्ञानिक विषयों में अनुसन्धान करने के लिए भी इन प्रयोगशालाओं का प्रयोग होगा।

दक्षिण-भारत में 8,000 फुट की ऊंचाई पर कोडाइकनाल में एक ऊंचे धरातल-वाली प्रयोगशाला स्थापित करने की योजना है। यह प्रयोगशाला चुम्बकीय विषुवत रेखा पर होगी।

40. टाटा बुनियादी अनुसन्धान-संस्था के सहयोग से परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान एक प्रशिक्षण-विद्यालय चला रहा है। इसमें स्नातकोत्तर शिक्षा-प्राप्त करनेवाले लगभग 200 विद्यार्थियों को प्रति वर्ष प्रवेश दिया जाता है। ये विद्यार्थी देश-भर के विश्व-विद्यालयों से लिए जाते हैं। तीसरी योजना में यह प्रशिक्षण-विद्यालय भारतीय विश्व-विद्यालयों के स्नातकोत्तर-शिक्षा प्राप्त करनेवाले और अधिक वैज्ञानिकों को शिक्षा-सुविधाएं प्रदान कर सकेगा। इसके साथ ही, विदेशी वैज्ञानिकों को भी सीमित संख्या में इस विद्यालय में प्रवेश मिलेगा। परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान ने विश्वविद्यालयों में पूर्व-स्नातक तथा स्नातकोत्तर-स्तर के छात्रों को प्रति वर्ष 120 छात्रवृत्तियां देने की एक योजना चालू की है। इस योजना का उद्देश्य प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को वैज्ञानिक बनने के लिए प्रोत्साहित करना है।

प्रतिष्ठान का विचार है कि दो अन्तर्विश्वविद्यालय-केन्द्र—एक उत्तर-भारत में तथा दूसरा दक्षिण-भारत में—खोले जाएं, जिनमें विश्वविद्यालयों के वैज्ञानिकों को इस प्रकार के अनुसन्धान की सुविधाएं दी जाएं, जिनमें प्रायोगिक प्रतिकारियों और अन्य मूल्यवान साज़-सामान की आवश्यकता पड़ती है।

(5)

कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रों में अनुसन्धान

41. केन्द्रीय अनुसन्धान-संस्थाओं तथा राज्यों के अनुसन्धान-केन्द्रों में कृषि-अनुसन्धान का कार्य किया जाता है। भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद्, दिल्ली; वन-अनुसन्धान-संस्था, देहरादून; भारतीय पशु-चिकित्सा-अनुसन्धान-संस्था, इज्ज़तनगर; और राष्ट्रीय दूध-अनुसन्धान संस्था, करनाल के अतिरिक्त कई केन्द्रीय अनुसन्धान-संस्थाओं में चावल, आलू और मछली-उद्योग के सम्बन्ध में आधारभूत अध्ययन तथा अनुसन्धान किया जाता है। स्थानीय समस्याओं के बारे में बहुत-से अनुसन्धान केन्द्रों में अनुसन्धान किया जाता है, जिन्हें भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद् की ओर से तथा कपास, पटसन, तेलहन, तम्बाकू, गन्ना, सुपारी, नारियल और लाख-सम्बन्धी जिन्स-समितियों की ओर से सहायता दी जाती है। बागानी फसलों के सम्बन्ध में अनुसन्धान का कार्य चाय, काफी और रबड़-मंडलों-द्वारा कराया जाता है। भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद् और जिन्स-समितियां प्रादेशिक या अखिल भारतीय स्वरूप की समन्वित अनुसन्धान-परियोजनाओं में भी सहायता देती हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में एक महत्वपूर्ण बात यह हुई कि कपास, तेलहन और ज्वार के लिए 17 सामासिक अनुसन्धान केन्द्र स्थापित किए गए। इन अनुसन्धान-केन्द्रों की स्थापना से कृषि-सम्बन्धी जलवायु की विभिन्न परिस्थितियों के सम्बन्ध में अनुसन्धान करने की सुविधा मिली है। केन्द्रीय मिट्टी-संरक्षण-मंडल के तत्वावधान में मिट्टी-संरक्षण-सम्बन्धी समस्याओं पर अनुसन्धान किया जाता है।

42. **कृषि :** पिछले दस वर्षों में कृषि-सम्बन्धी अनुसन्धानों के कारण बढ़िया फसल उगाने के क्षेत्र में कई सफलताएं मिलीं। यहां यह उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा कि भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद् ने गेहूं की कुछ ऐसी किस्में तैयार की हैं, जिनमें कीड़ा नहीं लगता। इनमें से एक किस्म परमाणु-शक्ति के प्रयोग से परिवर्तन पैदा करके

तैयार की गई थी। पहली और दूसरी योजना में जो अनुसन्धान-कार्य किए गए, वे अधिक चावल देनेवाली धान की किस्में तैयार करने, नई किस्में तैयार करने, पर्वतीय धान की किस्म को उन्नत करने और चावल की रोग-अवरोधक किस्में तैयार करने के सम्बन्ध में थे। चावल के पौधों की अभिवृद्धि के सम्बन्ध में आधारभूत अध्ययन भी किए गए। ज्वार और बाजरे की अधिक अन्न देनेवाली किस्में तैयार करने के लिए मिश्रण-सम्बन्धी तकनीक का प्रयोग किया गया। कई केन्द्रों में बाजरे के सम्बन्ध में उन्नत कृषि-प्रणालियों का भी अध्ययन किया जा रहा है। केरल में 'एन्ड्रूज़' किस्म की समुद्र-द्वीपीय कपास का जलवायु-अनुकूलन कपास-अनुसन्धान के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण बात है। मद्रास और पंजाब में काफी लम्बे रेशेवाली कपास तैयार की गई और व्यावसायिक आधार पर उसकी खेती की सिफारिश की गई। मिश्र मक्का के बीज का उत्पादन करने के लिए एक बड़ा कार्यक्रम हाथ में लिया गया है। टेपिओका तथा आलू-जैसे सहायक खाद्य की फसलों, टमाटर तथा बैंगन-जैसी सब्ज़ियों, अंगूर तथा पपीता-जैसे फलों और दालों तथा तेलहनों की कई उन्नत किस्में तैयार की गई हैं। यह भी निश्चित कर लिया गया है कि विभिन्न फसलों के लिए कितनी खाद और कितना पानी देना उपयोगी है। घास-पात को बढ़ने से रोकने और औषध छिड़क कर रोगों तथा कीड़ों पर नियन्त्रण रखने के कारण फसलों से अधिक उपज प्राप्त हुई है।

43. तीसरी योजना में भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद् ने राज्यों में अनुसन्धान-सुविधाओं का विकास करने के लिए एक कार्यक्रम बनाया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत वर्तमान कृषि-संस्थाओं का विस्तार किया जाएगा तथा विभिन्न प्रदेशों में भूमि तथा जलवायु के आधार पर प्रायोगिक केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। चावल का उत्पादन करनेवाले प्रत्येक राज्य में चावल-अनुसन्धान-केन्द्र तथा उप-केन्द्र खोले जाएंगे। गेहूं के कीड़े की रोकथाम-सम्बन्धी अनुसन्धान तथा मिश्र मक्का पर समन्वित कृषि-अर्थशास्त्र-सम्बन्धी परीक्षण और अनुसन्धान को विस्तृत किया जाएगा। ज्वार-बाजरा, कपास और तेलहनों पर अनुसन्धान करने के लिए मिश्र जिन्स-केन्द्र भी विकसित किए जाएंगे। प्रत्येक बड़ी नदी-घाटी-परियोजना के क्षेत्र में कृषि-अनुसन्धान-केन्द्र खोले जाएंगे और इन क्षेत्रों का कृषि-अर्थशास्त्र-सम्बन्धी सर्वेक्षण किया जाएगा। उर्वरक-टेक्नोलाजी, चारा और घास-भूमि-सम्बन्धी-अनुसन्धान, भूमि-अनुसन्धान और पौधों के विषाणु-सम्बन्धी अनुसन्धान के लिए नई संस्थाएं खोलने का विचार है। फलों, मसालों, काजू और कोको पर किए जानेवाले अनुसन्धान-कार्यों का विस्तार किया जाएगा। आलू के अतिरिक्त ज़मीन के नीचे पैदा होनेवाली अन्य फसलों पर अनुसन्धान करने के लिए प्रादेशिक केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। एक राष्ट्रीय पौधशाला स्थापित की जाएगी, जो भारत में लाए गए तमाम पौधों के भांडार के रूप में काम देगी। कृषि-उपकरणों के सम्बन्ध में अनुसन्धान करने, उनकी किस्म उन्नत करने तथा उनका परीक्षण करने के लिए सुविधाओं का समुचित विकास किया जाएगा।

44. भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद् के सभी विभागों का तीसरी योजना की अवधि में विस्तार किया जाएगा। मक्का और ज्वार-बाजरे की कई बढ़िया, मिश्र और संश्लिष्ट किस्में तैयार की जाएंगी। फसलों को उन्नत करने के लिए रेडियो-आइसोटोपों और रासायनिक 'म्युटेजनों' के प्रयोग से परिवर्तन पैदा करने की विधियों का और भी

विकास किया जाएगा। पौधों को उन्नत करने तथा उनके विकास के सम्बन्ध में अध्ययन करने के लिए कृत्रिम-जलवायु-गृह (फाइटोट्रान) की सुविधाओं का प्रयोग और विस्तार किया जाएगा। मिट्टी-सम्बन्धी भौतिकी पर अनुसन्धान-कार्य को सघन करने का विचार है। कृषि-फसलों को नुकसान पहुंचानेवाले 'नेमाटोडों' पर अनुसन्धान करने के लिए 'प्लांट नेमाटोलाजी' का एक अनुभाग खोला जाएगा। फसलों के कीड़ों पर, उनकी उत्पत्ति और पौधों की उनसे लड़ने की क्षमता की दृष्टि से अनुसन्धान का काम बढ़ाया जाएगा। इन सबके अतिरिक्त भूमि जोतने के सम्बन्ध में एक प्रयोगशाला और एक जलीय तथा सामान्य इंजीनियरी-प्रयोगशाला खोली जाएगी।

45. विभिन्न जिन्स-समितियों के अधीन विभिन्न जिन्सों के बारे में जो अनुसन्धान किए जाएंगे, उनका उद्देश्य साधारणतया उपज बढ़ाना और उपज की किस्म को उन्नत करना होगा। अधिक उपज प्रदान करनेवाली तथा रोग-अवरोधक फसलें प्राप्त करने के लिए उन पर होनेवाले अभिजनन-कार्य का विस्तार किया जाएगा। कपास, पटसन, तम्बाकू, इत्यादि पर किए जानेवाले टेक्नोलाजी-विषयक, अनुसन्धान उनके विधायन, पैकिंग और निर्माण-सम्बधी विधियों को उन्नत करने के उद्देश्य से किए जाएंगे। पटसन और लाख के नए उपयोग ढूंढ़ निकालने के प्रयास किए जाएंगे। नारियल के छिलके, पटसन की डंठल, नारियल की जटाएं, तम्बाकू के अवशेष, लाख के अवशेष, कपास के अवशेष, बिनौले के छिलके, इत्यादि जैसे उपोत्पादनों को उपयोग में लाने पर भी ज़ोर दिया जाएगा।

46. पहली दोनों योजनाओं में खाद्य तथा कृषि-मन्त्रालय-द्वारा आरम्भ किए गए कृषि-सम्बन्धी आर्थिक अनुसन्धान-केन्द्रों का और विकास किया जाएगा। तमाम राज्यों में चुने हुए क्षेत्रों को लाभ पहुंचाने के लिए फार्मों के प्रबन्ध के सम्बन्ध में अध्ययन-सुविधाओं में विस्तार करने का भी विचार है।

47. **मिट्टी-संरक्षण :** भारत में मिट्टी-संरक्षण-सम्बन्धी मुख्य समस्याओं को प्रदेशों के आधार पर बांट दिया गया है और बहुत-से अनुसन्धान-कार्यक्रम आरम्भ कर दिए गए हैं। वर्तमान अनुसन्धान-सह-प्रदर्शन तथा प्रशिक्षण-केन्द्रों के अतिरिक्त लाल मिट्टीवाले क्षेत्रों के लिए दो और अनुसन्धान-केन्द्र तीसरी योजना की अवधि में खोले जाएंगे। इनमें से एक उड़ीसा में अधिक वर्षावाले क्षेत्रों के लिए और दूसरा आन्ध्रप्रदेश में कम वर्षा-वाले क्षेत्रों के लिए होगा।

मिट्टी-संरक्षण-सम्बन्धी अनुसन्धान-कार्यक्रमों में प्रायोगिक तथा आधारभूत, दोनों प्रकार के अध्ययन सम्मिलित किए जाएंगे। प्रायोगिक अध्ययनों में ये प्रमुख हैं—मिट्टी के विभिन्न पहलू, खेती और फसलों के हेर-फेर के सम्बन्ध में कृषि-अर्थशास्त्र की दृष्टि से अध्ययन, मिली-जुली खेती, भूमि के छोटे-छोटे टुकड़ों पर की जानेवाली खेती, हरी खाद की फसलों के परीक्षण, पर्वतीय ढलानों और औद्योगिक फसलों की खेती, भूमि-क्षरण के नियन्त्रण और चरागाह-प्रबन्ध के लिए विभिन्न प्रकार की घासों पर घास-विज्ञान-सम्बन्धी अध्ययन, वनरोपण-सम्बन्धी अध्ययन, भूमि को पुनः उपजाऊ बनाना और जलाशय-प्रबन्ध, नियन्त्रण-बांधों और 'बेंच-टेरेसों' के विभिन्न क्रास-सेक्शनों, श्रेणियों तथा लम्बाइयों के सम्बन्ध में इंजीनियरी अध्ययन, विभिन्न प्रकार के अवरोधन-बांधों-द्वारा कन्दराओं को फिर से खेती के योग्य बनाना, मिट्टी के बांधों का निर्माण और रेगिस्तानी भूमि के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन, तथा मिट्टी संरक्षण-सम्बन्धी उपायों के आर्थिक पक्ष का अध्ययन।

आधारभूत अध्ययनों में इन विषयों को शामिल किया जाएगा—विभिन्न प्रकार की प्रबन्ध-प्रणालियों के अधीन जलाशयों के जल-विज्ञान-सम्बन्धी व्यवहारों को अनुशासित करनेवाले बुनियादी कानूनों के सम्बन्ध में जांच-पड़ताल और मिट्टी तथा जल-संरक्षण के सम्बन्ध में बुनियादी मिट्टी-परीक्षण।

48. **पशुपालन :** पशुपालन-सम्बन्धी अनुसन्धानों के अन्तर्गत नस्ल की तैयारी, पोषण और रोग-नियन्त्रण के विभिन्न पहलुओं पर कार्य हो चुका है। बहुत-से केन्द्रों ने पर्वतीय और अधिक वर्षावाले क्षेत्रों में अनुल्लिखित पशुओं के संकरण के सम्बन्ध में क्षेत्रीय परिस्थितियों में अनुसन्धान किए। इन अनुसन्धानों से यह मालूम हुआ कि इन परिस्थितियों में नई नस्ल से अधिक दूध प्राप्त होने लगता है। अधिक दूध देने की क्षमता रखनेवाले पशुओं की प्रसिद्ध नस्लों के साथ स्थानीय पशुओं का गर्भाधान कराकर उनकी नस्ल सुधारने के बजाय स्थानीय पशुओं में से ही एक विशिष्ट प्रकार की नस्ल तैयार करने के गुण-दोष की छान-बीन करने के लिए एक समन्वित अनुसन्धान-योजना आरम्भ कर दी गई है। पशुओं की नस्ल सुधारने के कार्य के लिए कृत्रिम गर्भाधान-सम्बन्धी अनुसन्धान-द्वारा नस्लें तैयार करनेवालों को एक नया सूत्र मिल गया है।

इज़्ज़तनगर में पशुओं के लिए पौष्टिक आहार के सम्बन्ध में किए जा रहे अनुसन्धान के अतिरिक्त प्रादेशिक पशु-पौष्टिकता-केन्द्र भी स्थापित किए गए हैं। इन केन्द्रों में विभिन्न प्रदेशों में मिलनेवाली खाद्य-सामग्रियों के रासायनिक मिश्रण और पौष्टिक मूल्य के सम्बन्ध में एवं पौष्टिक तत्वों की कमी का पता लगाने तथा उन्हें पूरा करने के सम्बन्ध में अध्ययन की सुविधाएं सुलभ हैं। धान के पुआल में पाए जानेवाले पौष्टिक तत्वों को उन्नत करने के सम्बन्ध में अनुसन्धान किए गए हैं। भारत में पशुओं को खाद्य-सामग्री के रूप में सबसे अधिक धान का पुआल दिया जाता है। इसका पौष्टिक तत्व बढ़ाने के लिए किए गए अनुसन्धान से ऐसे साधारण उपायों का पता चला है, जो धान के पुआल के हानिकारक प्रभावों को दूर करने के लिए काम में लाए जा सकते हैं। अकाल पड़ जाने पर या अभाव के समय पशुओं को दी जा सकनेवाली पेड़ की पत्तियों और कुछ अन्य प्रकार के चारे में पाए जानेवाले पौष्टिक तत्वों के सम्बन्ध में भी कार्य किया गया है।

पशुओं के रोगों के सम्बन्ध में भी बहुत विस्तार से अनुसन्धान किए गए हैं। कुछ रोगों के कारणों तथा उनके उपचार और रोकथाम के बारे में लाभदायक परिणामस्वरूप बकरी के ठंडक में सुखाए गए 'टिशुओं' से तैयार किए गए टीकों का विकास हुआ है। यह टीका मैदानी क्षेत्रों के उन पशुओं को प्रतिरक्षित करने के काम में लाया जा रहा है, जो महामारी का अपेक्षाकृत अधिक मुकाबला करने की क्षमता रखते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों के सहज ही महामारीग्रस्त होनेवाले पशुओं को प्रतिरक्षित करने के लिए 'लैपिनाइज़्ड' और 'लैपिनाइज़्ड-एविनाइज़्ड' टीके के विकास के लिए भी अनुसन्धान किया गया है। पशुओं को 'पासच्युरेलासिस' से प्रतिरक्षित करने के लिए भी एक टीका तैयार किया जा रहा है।

49. तीसरी योजना के काल में भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद् पशुपालन-सम्बन्धी अनेक वर्तमान अनुसन्धान-योजनाओं को जारी रखेगी। अधिक वर्षावाले तथा ऊंचे धरातलवाले क्षेत्रों में देशी पशुओं के संकरण-सम्बन्धी प्रायोगिक अनुसन्धान चालू

रखे जाएंगे। देश के विभिन्न क्षेत्रों में चुनी हुई नस्लें तैयार करने, नस्लें उन्नत करने और संकरण के तुलनात्मक लाभों का अध्ययन करने के लिए कार्य जारी रखा जाएगा। भारतीय पशुओं और भैंसों के लिए पौष्टिक तत्वों की आवश्यकताओं के बारे में और अध्ययन किए जाएंगे। पशुओं के ककुद पर होनेवाली बीमारियों का नियन्त्रण करने तथा उनको समूल नष्ट करने के लिए समन्वित आधार पर अनुसन्धान किए जाएंगे। पशुओं में होनेवाले 'ब्रुसेलासिस' रोग तथा भेड़, बकरी, सूअर और कुक्कुट, आदि को होनेवाले विभिन्न रोगों के नियन्त्रण के सम्बन्ध में भी अनुसन्धान किए जाएंगे। सूअर तथा अन्य पशुओं की नस्लें तैयार करने के सम्बन्ध में अध्ययन-कार्य का विस्तार किया जाएगा। पशुओं की विभिन्न जातियों और नस्लों के शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी प्रतिमानों, चारा-उत्पादन और पशुओं की आवश्यकता पूरी करने की दृष्टि से चरागाहों एवं चारे की फसलों की क्षमता के सम्बन्ध में अध्ययन किए जाएंगे। फार्मों के पशुओं को होनेवाली श्लेष्यत्वचा की बीमारी तथा 'साल्मोनेला' नामक छूत की बीमारी और पशुओं की पीलिया की बीमारी के सम्बन्ध में भी नई योजनाओं पर कार्य किया जाएगा। क्षय-रोग की रोक-थाम के लिए भी अनुसन्धान किए जाएंगे। स्थानीय तथा प्रादेशिक समस्या-सम्बन्धी अनुसन्धानों पर ज़ोर देने के लिए राज्यों में पशुधन-अनुसन्धान केन्द्र आरम्भ करने का विचार है। पशुओं के लिए प्रादेशिक पौष्टिक आहार-अनुसन्धान-केन्द्रों को स्थायी रूप दे दिया जाएगा।

50. पोशाकें बनाने के काम आनेवाली बढ़िया ऊन उपलब्ध करने के लिए विशेष प्रकार की नस्लों की आवश्यकता होती है। इस दृष्टि से भेड़ों की चुनी हुई नस्लें तैयार करने का कार्य किया गया तथा उनका 'रेमबायलेट' जैसी विदेशी नस्लों से प्रसंकरण कराया गया। मिलीजुली खेती की व्यवस्था में भेड़ों का प्रजनन बढ़ाने के सम्बन्ध में तीसरी योजना में अनुसन्धान किया जाएगा। भेड़ों में भी कृत्रिम गर्भाधान कराने के सम्बन्ध में अध्ययन किए जाएंगे। भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद् का विचार है कि एक केन्द्रीय भेड़ तथा ऊन-अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित किया जाए।

51. कुक्कुटपालन के विकास के लिए कम खर्चवाले सन्तुलित कुक्कुट-खाद्य तैयार किए गए हैं। अधिक अंडे प्राप्त करने की दृष्टि से एक प्रकार के देशी पक्षियों की नस्ल सुधारी गई है। बहुत समय तक सुरक्षित रखने के उद्देश्य से अंडों को पिंडोत्पत्ति-अवरोधक बनाने के उपाय विकसित किए गए हैं। कम खर्च में अंडे सेने का कार्य करनेवाले केन्द्र सफलतापूर्वक स्थापित किए गए और कुक्कुटपालन विकास-खंडों की स्थापना करते समय इन केन्द्रों की उपयोगिता का प्रदर्शन किया गया। इस क्षेत्र में बहुत सफल परिक्षण किए गए, जिनमें 10 सप्ताह के समय में $3\frac{1}{2}$ पौंड वज़न के चूज़े तैयार किए गए। तीसरी योजना में कुक्कुटों पर चुनी हुई अन्तरज नस्लों के प्रसंकरण का कार्य किया जाएगा और कुक्कुटों पर सन्तति-सम्बन्धी परीक्षण किए जाएंगे। ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध सामान से बनाए गए सस्ते कुक्कुट-गृहों में कुक्कुट-खाद्यों के बारे में जो समन्वित योजनाएं चल रही हैं, उन्हें जारी रखा जाएगा। ये योजनाएं सस्ते खाद्य ढूंढ़ निकालने से आरम्भ की गई हैं। इन खाद्यों में कृषि-उपोत्पादन तथा उद्योगों की अवशिष्ट सामग्रियां भी शामिल हैं।

52. **दूध-उद्योग :** ग्रामीण क्षेत्रों में अल्प व्यय में दूध की चीज़ें और उपोत्पादन तैयार करने की विधियों के बारे में अनुसन्धान-कार्य किया गया है। विभिन्न क्षेत्रों में दूध के जीवाणुओं तथा रासायनिक गुणों के सम्बन्ध में जो अनुसन्धान किए गए हैं, उनसे प्राप्त

जानकारी से कई दूध-उद्योग-विकास-योजनाओं के निर्माण में सहायता मिली। घी तैयार करने के भी उन्नत तरीके ढूंढ़े गए हैं और दूध में मिलावट पकड़ने का नया एक तरीका निकाला गया है।

देशी गायों एवं जरसी सांड़ों के प्रसंकरण-द्वारा नई नस्लें तैयार करने और थारपरकर पशुओं की सहायता से कंगायम नस्ल को उन्नत करने के सम्बन्ध में नए अध्ययन किए जाएंगे। विशिष्ट दूध-उद्योग, एकरस खेती-बारी तथा मिली-जुली खेती-बारी की तुलनात्मक आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में अनुसन्धान-कार्यों को और बढ़ाया जाएगा। दूध के स्थान पर अन्य पदार्थ खिलाकर बछड़ों के पोषण पर होनेवाले व्यय में कमी करने के उद्देश्य से अध्ययन किए जाएंगे। अधिक परिमाण में दूध के संग्रहण और परिवहन-सम्बन्धी समस्याओं तथा मक्खन, इत्यादि बनाने के लिए अधिक अम्लवाली क्रीम तैयार करने के सम्बन्ध में परीक्षण किया जाएगा। रेडियो-सक्रिय आइसोटोपों की सहायता से जुगाली करनेवाले पशुओं के शरीर के खनिज तत्वों के सम्बन्ध में परीक्षण किए जाएंगे।

राष्ट्रीय दूध-अनुसन्धान-संस्था विभिन्न नस्लों के पशुओं की पौष्टिक आहार-सम्बन्धी शरीर-रचना, चरागाह-प्रबन्ध और बछड़ों के विकास की मात्रा के बारे में अनुसन्धान-कार्य आरम्भ करेगी। यह संस्था बहुत बड़े परिमाण मे दूध के विधायन, रख-रखाव तथा वितरण के सम्बन्ध में टेक्नोलाजी-विषयक पहलुओं पर तथा दूध से बनी चीज़ों के उत्पादन, पैकिंग एवं संग्रहण के सम्बन्ध मे भी अध्ययन आरम्भ करेगी। दूध-उद्योग में काम आनेवाले बर्तनों, दूध और दूध की बनी चीज़ों के जीवाणु शास्त्र, अवशिष्ट कृमि-नाशकों, दूध के प्रादेशिक मिश्रणों, मिलावट का पता लगाने के कार्य, अधिक समय तक दूध को सुरक्षित रख सकने और दूध के खनिज सन्तुलन के सम्बन्ध में अनुसन्धान किए जाएंगे। दूध और दूध की बनी चीजों के पौष्टिक तत्वों पर अनुसन्धान करने के लिए एक नया आहार-विभाग खोला जाएगा।

53. **वन-अनुसन्धान :** तीसरी योजना में उन बहुत-सी अनुसन्धान-योजनाओं को चालू रखा जाएगा, जो दूसरी योजना के काल में देहरादून-स्थित वन-अनुसन्धान-संस्था में स्वीकृत की गई थी। इन योजनाओं में इन विषयों पर अध्ययन शामिल है—वन-वृक्षों की वंश-परम्परा, वन के प्रभाव, जंगली कीड़ों आदि की महामारी, जलीय कीटाणुओं से इमारती लकड़ी का रक्षण, हरें बांसों का परिरक्षण, मलाया की बैत का भारत मे प्रचलन, राज्यों में किए जानेवाले वृक्ष-पालन-सम्बन्धी अनुसन्धानों का समन्वय, भारतीय इमारती लकड़ी तथा अन्य प्रकार की लकड़ी का उत्पादन तथा परिमाण। इसके अतिरिक्त, तीसरी योजना में वन-मिट्टी-अध्ययन, वनों में पाए जानेवाले पशु-पक्षियों का परिस्थिति-विज्ञान, चरागाहों और चारे के सम्बन्ध में अनुसन्धान तथा भारतीय वृक्षो की छाल के उपयोग के सम्बन्ध में अनुसन्धान-जैसी नवीन योजनाओं पर भी कार्य किया जाएगा; प्रादेशिक अनुसन्धान-केन्द्र, जबलपुर में एक जीवविज्ञान-शाखा तथा नागपुर में एक उपयोगिता-शाखा स्थापित करने का भी विचार है। बंगलोर तथा कोयमुत्तूर-स्थित अनुसन्धान-केन्द्र को सशक्त किया जाएगा।

54. **मछली-उद्योग :** मंडपम-स्थित केन्द्रीय समुद्री मछली-उद्योग-अनुसन्धान-केन्द्र में भारतीय समुद्रों की मछली-उत्पादन-क्षमता, मछली-उद्योग के सम्बन्ध मे समुद्रों का अध्ययन, मोल्यूसकन मछली-उद्योग, मछलीखाद्य-उपलब्धि, आदि के सम्बन्ध में अनुसन्धान-योजनाओं

पर कार्य जारी रखा जाएगा। नई योजनाओं के अन्तर्गत 'मेकेरल', 'सारडीन' 'प्रान', आदि किस्मों की मछलियों के सम्बन्ध में अध्ययन किए जाएंगे।

बैरकपुर-स्थित केन्द्रीय अन्तर्देशीय मछली-उद्योग केन्द्र में तालाबों, नदियों, झीलों और संगमों में पाई जानेवाली मछलियों के सम्बन्ध में अनुसन्धान जारी रखे जाएंगे। इस केन्द्र में जो नई परियोजनाएं आरम्भ की जाएंगी, उनमें बृह्मपुत्र का सर्वेक्षण, ऊंचे धरातल, स्वच्छ जल तथा पश्च जल में मछली-उद्योग, बांधों का मछलियों पर प्रभाव, आदि शामिल हैं।

बम्बई में केन्द्रीय गहरा सागर-मछली-केन्द्र मछली पकड़ने के समुद्री क्षेत्रों के मानचित्र तैयार करने, मछली पकड़ने के मौसम तथा मछली पकड़ने के गहन प्रयास करने के सम्बन्ध में निश्चय करने, मछली पकड़ने के उपकरणों की उपयुक्तता जांचने, इस क्षेत्र में काम करनेवाले व्यक्तियों को प्रशिक्षण देने, इत्यादि के सम्बन्ध में कार्य करने के लिए स्थापित किया गया था। तीसरी योजना के काल में बम्बई, तुत्तुकुडि-कोचीन और विशाखापटनम में मछली पकड़ने के समन्वेषी तथा परीक्षणात्मक कार्यक्रमों का विकास करने के अतिरिक्त मंगलोर, काकीनाडा, परदीप, और पोर्टब्लेयर में अतिरिक्त इकाइयां स्थापित की जाएंगी।

कोचीन-स्थित केन्द्रीय मछली-उद्योग-टेक्नोलाजी-अनुसन्धान-केन्द्र मछली पकड़ने की नौका तथा यन्त्र की डिज़ाइनों, नौका तथा यन्त्र-सम्बन्धी सामान तथा उसके परिरक्षण, मछली पकड़ने की विधि तथा मछली-परिरक्षण, मछली के मानक, क्रय-विक्रय और निरीक्षण, आदि के सम्बन्ध में अनुसन्धान-कार्य करता है। विभिन्न क्षेत्रों में मछली पकड़ने के लिए यन्त्र-सज्जित नौकाओं, पुलिन नौकाओं, नौकाओं में लगनेवाले यन्त्रादि की डिज़ाइनें उन्नत करने और उनके परिरक्षण के लिए तीसरी योजना में विस्तृत कार्यक्रम आरम्भ किए जाएंगे।

(6)

चिकित्सा-सम्बन्धी अनुसन्धान

55. भारतीय चिकित्सा-अनुसन्धान-परिषद् चिकित्सा-सम्बन्धी अनुसन्धानों का प्रवर्तन तथा समन्वय करती है। तीसरी योजना के कार्यक्रम पिछले कुछ वर्षों में किए गए कार्य की पृष्ठभूमि को ध्यान में रख कर बनाए गए हैं। क्षय रोग, हैज़ा, कुष्ठ रोग, बालातिसार, फीलपांव, इत्यादि संक्रामक रोगों पर गहन अनुसन्धान करने का और क्षय रोग तथा हैज़े के सम्बन्ध में स्थायी अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित करने का विचार है।

'ऐथ्रोपाड-बोर्न' विषाणुओं पर अनुसन्धान करने के लिए पूना में एक सर्वसम्पन्न केन्द्र स्थापित किया जा चुका है और कुन्नूर-स्थित चरागाह-संस्था में विषाणु-अनुसन्धान की सुविधाओं को उन्नत कर दिया गया है। भारतीय चिकित्सा-अनुसन्धान-परिषद् ने कुछ चुने हुए मेडिकल कालेजों में विषाणु-रोगों के अनुसन्धान-कार्य को बढ़ावा दिया है। पूना-स्थित विषाणु-अनुसन्धान-केन्द्र में चिकित्सा-वैज्ञानिकों को विष-विज्ञान-सम्बन्धी तकनीकों में प्रशिक्षण देने के लिए सुविधाएं प्रदान की गई हैं। तीसरी योजना के काल में विषाणु-रोगों के क्षेत्र में किए जानेवाले कार्य का विकास किया जाएगा और अलीगढ़ में विश्वविद्यालय के सहयोग से आंखों के रोगों के सम्बन्ध में एक अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित किया जाएगा।

भारतीय चिकित्सा-अनुसन्धान-परिषद् 'कार्डियो-वास्कुलर' रोगों, पाचन-सम्बन्धी विकारों, 'इंटेस्टाइनल पेरासिटिज़्म' और यौन-रोगों तथा अन्य रोगों के सम्बन्ध में

किए जानेवाले कार्यों को बढ़ावा देती रही है। इन कार्यों को चालू रखने के अतिरिक्त, तीसरी योजना की अवधि में प्रोटीन और कार्बोहाड्रेट से सम्बद्ध पाचन-समस्याओं पर भी ध्यान केन्द्रित किया जाएगा। आंतरोगों के सम्बन्ध में 'ऐंटामोएबा'-द्वारा परीक्षण आरम्भ किए जाएंगे। विभिन्न 'हैलमिन्थिक पैरासाइटों' के सम्बन्ध में भी परीक्षण किए जाएंगे। बंगलोर-स्थित अखिल भारतीय मानसिक स्वास्थ्य-संस्थान में मानसिक रोगों पर अनुसन्धान किए जाएंगे। प्रसूति, बाल-कल्याण, पौष्टिक आहार तथा अन्य सम्बद्ध समस्याओं के सम्बन्ध में भी अनुसन्धान-कार्यों का विकास किया जाएगा। मेडिकल कालेजों में उपलब्ध अनुसन्धान-सुविधाओं को उन्नत किया जाएगा। अखिल भारतीय सफाई तथा जन-स्वास्थ्य-संस्था में किए जानेवाले कार्यों के अतिरिक्त दो-तीन ऐसे नए केन्द्र खोले जाएंगे, जहां विभिन्न व्यवसायों से सम्बद्ध स्वास्थ्य की समस्याओं के बारे में अनुसन्धान किए जाएंगे।

56. दूसरी योजना की अवधि में भारतीय चिकित्सा-अनुसन्धान-परिषद् ने देशी औषधों के सम्बन्ध में परीक्षण करने के लिए काफी संख्या में अनुसन्धान-इकाइयां स्थापित करने की स्वीकृति दी थी। अभी तक ऐसी सात इकाइयां स्थापित की जा चुकी है। तीसरी योजना में कुछ और औषधों के बारे में अध्ययन किया जाएगा।

57. दूसरी योजना की अवधि में परिवार-आयोजन के सम्बन्ध में सामाजिक स्थिति, चिकित्सा और जीवविज्ञान-सम्बन्धी अनुसन्धान किए गए हैं। बहुत बड़ी संख्या में मेकैनिकल तथा रासायनिक गर्भ-निरोधक उपकरणों का परीक्षण किया गया है। मौखिक गर्भ-निरोधक औषधों पर अनुसन्धान किए जा रहे है। इन मौखिक ओषधियों में 'मेटा-एक्साइलो-हाइड्रोक्विनान' और देशी औषध भी शामिल है। बम्बई-स्थित मानव-विभेद-इकाई कुछ क्षेत्रों में 'जीनों' के वितरण के सम्बन्ध में कार्य कर रहा है। सन् 1954 में जुड़वां बच्चों और रक्त-सम्बन्ध के विषय में एक दीर्घकालीन अध्ययन आरम्भ किया गया था, उसे भी जारी रखा गया। तीसरी योजना में इन अन्वेषण-कार्यों को चालू रखा जाएगा और इनका विकास किया जाएगा।

(7)

अनुसन्धान के अन्य कार्यक्रम

58. **सिंचाई और बिजली :** इस समय भारत में पनबिजली और सिंचाई-सम्बन्धी अनुसन्धान करनेवाले 19 केन्द्र हैं। इनमें से दो केन्द्र (जो पूना और दिल्ली में स्थित हैं) केन्द्रीय सरकार के प्रबन्ध में और अन्य राज्य-सरकारों के प्रबन्ध में हैं। केन्द्रीय सिंचाई और बिजली-मंडल सिंचाई और बिजली-सम्बन्धी अनुसन्धानों का समन्वय करता है। सन् 1953 में इस मंडल ने सिंचाई-सम्बन्धी आधारभूत तथा प्रायोगिक अनुसन्धानों का एक सर्वांगीण कार्यक्रम तैयार किया और विभिन्न अनुसन्धान-केन्द्रों को कार्य करने के लिए परियोजनाएं सौंपी। जिन समस्याओं के सम्बन्ध में अन्वेषण आरम्भ किए गए, उनमें ये भी शामिल हैं—'एअर-एंट्रेनमेंट', 'टरबुलेन्स' 'कैविटेशन', जल-मार्गों की डिज़ाइनें, मिट्टी के तत्व, रेत आदि इकट्ठा हो जाने के कारण जलाशयों के कार्य में रुकावट, भूमिगत पानी, 'पुज्ज़ोलाना' के रूप में सुर्खी का प्रयोग, और निर्माण-कार्यों में पत्थरों के स्थान पर काम में लाई जानेवाली सस्ती चीज़ें।

ये अन्वेषण तीसरी योजना की अवधि में जारी रखे जाएंगे। तीसरी योजना में जिन नई अनुसन्धान-समस्याओं पर कार्य किया जाएगा, उनमें ये भी शामिल हैं—अधोभूमि-जल के अध्ययन में आइसोटोपों का प्रयोग, विभिन्न प्रकार की मिट्टी का मिश्रण, जलीय ढांचों के लिए ढलाई-पूर्व तकनीकों का विकास, तलछट हटाने की तकनीकों का आविष्कार और सोखन, रसन तथा उद्वाष्पन के कारण होनेवाली हानि को न्यूनतम करने के उपाय।

59. बंगलोर-स्थित बिजली अनुसन्धान-संस्था के कार्य-क्षेत्र का विकास करने का विचार है। भोपाल में भारी बिजली-सामान-संयन्त्र के कार्य-क्षेत्र का विस्तार करने के साथ-साथ उसके पास ही एक स्विचगियर-परीक्षण और विकास-प्रयोगशाला स्थापित करने का भी विचार है। बंगलोर-स्थित बिजली-अनुसन्धान-संस्था में उपकरणों से पूर्णतः सज्जित 4 विभाग खोले जाएंगे, जो उच्च वोल्टेज, सामान्य बिजली-इंजीनियरी, यान्त्रिक इंजीनियरी और जलीय इंजीनियरी के क्षेत्र में काम करेंगे। ये विभाग प्रायोगिक संयन्त्र चलाने और छोटे पैमाने पर क्षेत्र-अध्ययन करने के लिए आवश्यक सहायक सुविधाओं के सम्बन्ध में भी कार्य करेंगे। यह संस्था देश में उपलब्ध लकड़ी, अभ्रक, कागज़, आदि-जैसी बिजली की इंसुलेटिंग-सामग्रियों पर विकास-कार्य करने के अवसर प्रदान करेगा। इसके अतिरिक्त, इस संस्था में क्षमता और विद्युत्-धारा के 'ट्रांसफार्मरों' तथा दूसरे उपकरणों का विकास करने के लिए और मेघ-विद्युत् की प्रकृति, उसकी लहरों और संचरण-लाइनों की यान्त्रिक समस्याओं पर अध्ययन किया जाएगा।

60. **परिवहन तथा निर्माण :** 'रेल-अनुसन्धान, डिज़ाइन और मानक-संगठन' का मुख्यालय शिमला में है और इसका परीक्षण तथा अनुसन्धान-उपकरणों से सज्जित अनुसन्धान-निदेशालय लखनऊ में है। इस अनुसन्धान-निदेशालय में बड़ी लाइन तथा छोटी लाइन से सज्जित एक यार्ड है। अनुसन्धान-निदेशालय का धातुकर्म तथा रसायन-सम्बन्धी अनुभाग चित्तरंजन में है। वहां इस अनुभाग के लिए परीक्षण और प्रयोग करने का प्रबन्ध है। रेल-सम्बन्धी अनुसन्धान के मुख्य क्षेत्रों में जो कार्य आते हैं, वे इस प्रकार हैं: रेल की लाइन तथा चलते हुए पहियों का परस्पर-व्यवहार; प्रोटोटाइपों का परीक्षण, जिसमें चलती हुई तथा रुकी हुई गाड़ियों का परीक्षण सम्मिलित है, सम्पूर्ण रूप में जोड़े गए इंजिनों, डिब्बों, लाइनों और पुलों तथा इनके हिस्सों, ईंधन, स्नेहकों और संरक्षकों का प्रदर्शनात्मक परीक्षण; रेलों में इस्तेमाल होनेवाले विदेशी सामान के स्थान पर उत्तरोत्तर देशी सामान का प्रयोग; कोयले की राख, लकड़ी का बुरादा, प्रयोग किए गए स्नेहक, आदि-जैसे अनुपयोगी उत्पादनों का इस्तेमाल; और तटों, कतरनों तथा ढांचों की बुनियाद को मज़बूत करने की दृष्टि से मिट्टी-सम्बन्धी कार्य।

61. परिवहन-मन्त्रालय अपनी सड़क-शाखा के द्वारा सड़कों के सम्बन्ध में अनुसन्धान-कार्य आरम्भ करने, उनमें समन्वय स्थापित करने तथा सहायता करने का कार्य करता है। पिछले कुछ वर्षों में सड़कों की जिन कुछ समस्याओं पर, विशेषकर केन्द्रीय सड़क-अनुसन्धान-संस्था-द्वारा ध्यान दिया गया, उनमें ये शामिल हैं—सभी मौसमों में चलनेवाली कम लागत की सड़कें बनाने के लिए स्थानीय सामान के प्रयोग-द्वारा मिट्टी को मज़बूत बनाने की विधियां; सड़कें बनाने के लिए काली मिट्टीवाली भूमि को मज़बूत बनाना; मिट्टियों की सहन-शक्ति का अध्ययन; सड़क-निर्माण के लिए पत्थर और ईंटों

के मसाले का मूल्यांकन; बिटुमिन मिलाकर बारीक रेत को मज़बूत बनाना; मरुस्थलों में सड़कों के लिए स्थानीय कंकड़ों का प्रयोग; अधिक वर्षावाले क्षेत्रों में बिटुमिनवाली सड़कों का विश्लेषण; पुलियां और छोटे पुलों की तुरन्त मरम्मत करने के तरीके; विभिन्न प्रकार की पटरियों की मोटाई और डिज़ाइन; सड़क-निर्माण में इस्तेमाल होनेवाले विभिन्न प्रकार के सामान के भार-वहन-गुण; दलदलवाले क्षेत्रों में सड़क-निर्माण के तरीके; सड़क इस्तेमाल करनेवालों के व्यवहार की परीक्षा; तेज़, धीमे और मिले-जुले यातायात के लिए उपयुक्त सड़कों और चौराहों की ज्यामितिक डिज़ाइनें, सड़कों पर सुरक्षा-व्यवस्था-सम्बन्धी यातायात-समस्याएं, और बैलगाड़ियों की धुरी और पहियों के डिज़ाइन में सुधार। तीसरी योजना में सड़क-शाखा हल्के यातायात के लिए प्रयोग के तौर पर कम खर्चवाली कच्ची सड़कें बनाएगी। केन्द्रीय सड़क-अनुसन्धान-संस्था के अनुसन्धान-कार्यक्रमों को पांच मुख्य भागों में बांट दिया गया है। वे भाग इस प्रकार है : भूमि, बिटुमिन, कंक्रीट, सड़क-डिज़ाइन और यातायात-इंजीनियरी। तीसरी योजना में संस्था का विचार पुलों-सम्बन्धी अनुसन्धान-कार्य आरम्भ करने का है।

62. तीसरी योजना में राष्ट्रीय भवन-निर्माण-संगठन नई और सस्ती सामग्रियों, भवन-निर्माण की नई तकनीकों और उन्नत पद्धतियों के प्रयोग-द्वारा भवन-निर्माण के व्यय को कम करने के लिए कार्य करेगा। राष्ट्रीय भवन-निर्माण-संगठन इन विषयों पर अनुसन्धान और परीक्षण कराएगा—परम्परागत और नवीन भवन-निर्माण-सामग्रियां, नगरों और ग्रामीण क्षेत्रों में सस्ते और अच्छे भवन बनाने के लिए डिज़ाइन, भूमि की सहन-शक्ति, ईंटें बनाने के लिए मिट्टी की उपयुक्तता, सिकुड़नेवाली भूमि पर रखी जानेवाली नींवों के उपयुक्त डिज़ाइन, निर्मित ढांचे की मज़बूती, लोहे को ज़ंग लगने से बचाने और नमी को रोकने के उपाय। विभिन्न प्रकार के भवनों के लिए मानक भी निर्धारित किए जाने हैं। 'प्रिस्ट्रेस्ड कंक्रीट', 'शेल-कन्स्ट्रक्शन', 'प्रिफैब्रिकेटेड कन्स्ट्रक्शन', आदि तरीके अपना कर निर्माण की तकनीकों का विकास किया जाएगा। भवन-निर्माण-उद्योग की विभिन्न प्रक्रियाओं का भी उत्पादकता की दृष्टि से अध्ययन किया जाएगा।

63. **खनिज :** खनिज पदार्थों के सर्वेक्षण और अनुसन्धान में लगे हुए मुख्य संगठनों के नाम इस प्रकार हैं—भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था, भारतीय खान-विभाग और तेल तथा प्राकृतिक गैस-आयोग।

तीसरी योजना की अवधि में भारतीय भूगर्भ-सर्वेक्षण-संस्था के अनुसन्धान-कार्यक्रमों में निम्नलिखित सम्मिलित हैं: बुनियादी शैल-तत्व, रसायन और पुराजीव-सम्बन्धी अनुसन्धान; भूगर्भीय मानचित्र-सम्बन्धी प्रायोगिक अध्ययन; प्रारम्भिक खनिज-आकलन; कोयला, सस्ती धातु तथा अन्य खनिज पदार्थों एवं धातुओं के सम्बन्ध में अनुसन्धान; इंजीनियरी भूगर्भ-विज्ञान; भूमिगत जल का आकलन और भू-भौतिकी-सम्बन्धी समस्याएं। यह संस्था विभिन्न प्रकार के धातु-भांडारों तथा अन्य खनिज भांडारों के परीक्षणों में खोज के भू-भौतिकी तरीकों का प्रयोग कर रही है।

भारतीय खान-संस्था-द्वारा देश के विभिन्न भागों में अलौह धातुओं के लिए भरपूर भूगर्भीय अध्ययन किया जाएगा। लोहा, कोयला, ऐस्बेस्टस, बाक्साइट, सोना और हीरा, आदि अन्य धातुओं के सम्बन्ध में भी अध्ययन किया जाएगा।

खनन-अनुसन्धान का कार्य भी भरपूर किया जाएगा। तांबे, कच्चे तांबे, सीशे-जस्ते और कच्ची मैंगनीज़ के संस्करण के लिए प्रायोगिक संयन्त्र-परीक्षण किए जाएंगे। इस संस्था के अनुसन्धान-कार्यक्रमों में 'सिंटरिंग'-द्वारा कच्चे लोहे के कणों को उपयोग में लाने के काम को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाएगा। क्रोमाइट, इल्मेनाइट रेत, पाइ-राइट्स, खड़िया मिट्टी, मैग्नेसाइट, चूना, हीरा, ग्रेफाइट, फ्लुओर्सपार और मिट्टी के उपचार के लिए उपयुक्त प्रणालियां ढूंढ़ी जाएंगी। कच्ची धातुओं तथा खनिज पदार्थों के अस्तित्व की सूचना देनेवाले नवीन माध्यमों के प्रयोग से विश्लेषणात्मक विधियों का विकास किया जाएगा। इससे समय और धन की बचत होगी। खनिज पदार्थों तथा कच्ची धातुओं का रासायनिक मूल्यांकन करने के लिए विलायक तत्व निकालने की तकनीकों का प्रयोग करने के सम्बन्ध में भी अनुसन्धान किए जाएंगे। बैटरियां बनाने में देशी मैंगनीज़ डाइआक्साइड का प्रयोग करने, 'अब्रैजिव्स' में सिलिका का प्रयोग करने, और लौह-मैंगनीज़-उद्योग की समस्याओं के सम्बन्ध में किए जानवाले कार्य का विस्तार किया जाएगा।

तेल तथा प्राकृतिक गैस-आयोग का अनुसन्धान-कार्य उसके भूगर्भ-विज्ञान, भू-भौतिकी-विज्ञान और इंजीनियरी विभागों में किया जाता है। भूगर्भ-विज्ञान-विभाग उपस्तरीय संरचनात्मक प्रवृत्तियों को चित्रित करने के लिए लगभग 2,50,000 वर्ग मील क्षेत्र में फोटो-जिओमार्फालाजिकल अध्ययन करता है। दलदलों की खुदाई, तेल के कुओं के सीमेंट, केन्द्रवर्ती नमूनों के गुणों, अशोधित तेलों के परीक्षण और उसके उपचार, पेट्रोलियम प्राप्त करने के लिए तत्सम्बन्धी चट्टानों के अध्ययन और रन्ध्रों के माध्यम से प्राकृतिक गैस के प्रवाहमान गुणों के सम्बन्ध में भी यह विभाग अध्ययन करने का विचार रखता है।

64. **संचार-साधन :** संचार-साधन-सम्बन्धी अनुसन्धानों में ऋतु-विज्ञान, प्रसारण, बेतार और दूर-संचार तथा नागरिक उड्डयन शामिल हैं।

तीसरी योजना में ऋतु-विज्ञान-विभाग की कर्मशालाओं तथा प्रयोगशालाओं को विकसित तथा उन्नत किया जाएगा, ताकि मौसम-सम्बन्धी जानकारी के लिए काम आनेवाले उपकरणों की दृष्टि से हम आत्मनिर्भर हो सकें। मेघों की ऊंचाई एवं मोटाई नापने, हाव की गति का निश्चय करने के लिए इलैक्ट्रानिक उपकरणों और तूफान का पता लगानेवाले राडार के डिज़ाइन तैयार किए जाएंगे और उनका विकास किया जाएगा। भारत के ऋतु-विज्ञान पर एक पुस्तक तथा कृषि-जलवायु-विषयक एक मान-चित्रावली भी प्रकाशित करने का विचार है। आधुनिक साज़-सामान से पूरित 18 अतिरिक्त केन्द्र खोल कर राबिनसौंडे-रेडियोसोंडे केन्द्रों की शृंखला को और अधिक मज़बूत कर दिया जाएगा। भूकम्प-अध्ययन के लिए कुछ और वेधशालाएं स्थापित की जाएंगी और ऋतु-विज्ञान-विभाग की कर्मशालाओं में भूकम्प-सूचक यन्त्र बनाए जाएंगे। कुछ केन्द्रों में नभोविद्युत् तथा वायुमंडलीय दोषों को मापने का कार्य भी आरम्भ किया जाएगा। कोलाबा-वेधवाला में आयनमंडलीय अध्ययन किए जाएंगे और रात्रि-आकाश तथा वायु-प्रकाश के सम्बन्ध में अध्ययन किए जाएंगे। कोडाइ-कनाल-वेधशाला, उज्जैन के निकट खोली जानेवाली केन्द्रीय ज्योतिषीय वेधशाला और नौसेना की ज्योतिषी-वेधशाला में खगोल-भौतिकी एवं खगोलशास्त्र-सम्बन्धी अध्ययनों

की सुविधा प्रदान की जाएगी। नई दिल्ली में उत्तर-गोलार्द्ध-सम्बन्धी एक संकलन तथा विश्लेषण-केन्द्र स्थापित करने का भी प्रस्ताव है। यह केन्द्र सम्पूर्ण उत्तरी गोलार्द्ध से सम्बन्ध रखनेवाले ऋतु-विज्ञान-विषयक तथ्यों तथा विश्लेषणों को एकत्र करने, उनका अध्ययन करने तथा प्रसार करने के उद्देश्य से खोला जाएगा। यह परियोजना उड्डयन के लिए मौसम-सम्बन्धी पूर्वसूचना देने और विशेषकर लम्बे उड्डयनों के लिए पूर्वसूचना देने की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है।

65. तीसरी योजना में आकाशवाणी के अनुसन्धान-विभाग की ओर से जो कार्य किए जानेवाले हैं, उनमें ये भी सम्मिलित है :—बहुत ऊंची तथा अत्यन्त ऊंची आवृत्तियों तथा सूक्ष्म तरंग तकनीकों एवं प्रसारण, सेमी-कंडक्टर और ट्रांज़िस्टर टेक्नोलाजियां तथा प्रसारण-उपकरणों के डिज़ाइनों में उनका प्रयोग, और टेलीविज़न के प्रसारण एवं प्राप्ति के क्षेत्रों में सघन अध्ययन। वातावरण-सम्बन्धी कोलाहल और आयनमंडल-सम्बन्धी ग्राह्यता की जांच करने के लिए आयनमंडलीय तथ्य एकत्र करने के लिए उपकरणों तथा सुविधाओं में सुधार और विशृंखल प्रसारण का अध्ययन करने का विचार है। आकाशवाणी तथा अन्य प्रसारण-संगठनों के बीच रिकार्ड की हुई सामग्रियों का आदान-प्रदान करने के उद्देश्य से टेप-रेकार्डिंग की तकनीकों तथा उपकरणों का मानकीकरण किया जाएगा। प्रसारण के लिए आवश्यक श्रवण-उपकरणों तथा स्टीरियो प्रसारण एवं प्राप्ति के लिए स्टीरियो तकनीकों का मानकीकरण तथा विकास किया जाएगा। एक अन्य महत्वपूर्ण परियोजना स्टूडियो में ध्वनि-ग्रहण तथा 'इंसुलेशन' के काम आनेवाली सामग्री के सम्बन्ध में होगी। इस परियोजना के अन्तर्गत उपयुक्त देशी सामग्रियों के निर्माण को बढ़ावा दिया जाएगा।

66. परिवहन तथा संचार-मन्त्रालय की बेतार-आयोजन एवं समन्वय-शाखा के कार्यक्रम में निम्नांकित कार्य भी सम्मिलित हैं :

(1) 50 किलोसाइकिल्स से 30 मेगासाइकिल्स तक के बैंड पर होनेवाले वायुमंडलीय कोलाहल का व्यवस्थापूर्वक अध्ययन;

(2) भारत के विभिन्न स्थानों की आयन-सम्बन्धी परिस्थितियों का व्यवस्थापूर्वक अध्ययन;

(3) शहरी क्षेत्रों में मनुष्य-कृत कोलाहलों के कारण होनेवाले व्यतिकरण को आंकने के लिए व्यवस्थापूर्ण परिमापन; और

(4) विभिन्न प्रकार के दूर-संचार-सर्किटों के विभिन्न स्तरों तक विश्वसनीय कार्य-संचालन के लिए आवश्यक कोलाहल-अनुपातसूचक संकेतों का निश्चय।

दूर-संचार-अनुसन्धान-केन्द्र डाक तथा तार-महानिदेशालय के अधीन कार्य करता है। इस केन्द्र का मुख्य कार्य जनता के लिए टेलीफोन तथा तार-सेवाओं को अधिक सुविधाजनक बनाने के उद्देश्य से अनुसन्धान तथा विकास-कार्य करना और भारतीय टेलीफोन-उद्योग एवं देश की टेलीफोन बनानेवाली अन्य इकाइयों को दूर-संचार-उपकरणों के डिज़ाइन उपलब्ध कराना है।

67. नागरिक उड्डयन-विभाग के अनुसन्धान तथा विकास-निदेशालय को तीसरी

योजना की अवधि में जिन मुख्य परियोजनाओं पर काम करना है, वे इस प्रकार हैं— (1) 'एयरफ्रेम्स' तथा पंखों का ढांचे की दृष्टि से सम्पूर्ण परीक्षण, (2) चालक पंखे-सहित टर्बाइन शक्ति-संयन्त्रों और प्रेषण-यन्त्रों की किस्मों का परीक्षण, (3) देशी वायुयान-सामग्रियों, उपकरणों और प्रक्रियाओं का विकास तथा मानकीकरण, (4) सुरक्षा-विधियों का विकास, (5) व्यक्तिगत कृषि-सम्बन्धी तथा अन्य कार्यों में प्रयुक्त हल्के वायुयानों तथा ग्लाइडरों के डिज़ाइन बनाना एवं उनका विकास करना, और (6) वायुयानों के ढांचों की शिथिलता तथा नागरिक उड्डयन के लिए बुनियादी महत्व की अन्य समस्याओं का अध्ययन ।

(8)

चीनी, पटसन और अन्य उद्योग

68. धातुकर्म, इंजीनियरी, रसायन, खाद्य तथा खनन-उद्योगों के लिए अनुसन्धान-कार्य राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं और विभिन्न विभागों तथा अनुसन्धान-संस्थाओं में किए जाते हैं । इनके अतिरिक्त, चीनी, पटसन, कपास और रेशम तथा नकली रेशम-उद्योगों, कुटीर-उद्योगों एवं लघु उद्योगों-सम्बन्धी अनुसन्धानों का ज़िक्र कर देना भी उपयुक्त होगा ।

चीनी पर अनुसन्धान कानपुर-स्थित राष्ट्रीय चीनी-संस्था में किया जाता है। तीसरी योजना की अवधि में यह संस्था उच्च अनुसन्धान के लिए आवश्यक प्रयोगशाला-उपकरणों, एक परीक्षणात्मक कारखाने और प्रायोगिक संयन्त्रों की व्यवस्था करेगी। जिन समस्याओं का इस संस्था में अध्ययन किया जाएगा, उनमें ज्वलन-क्रिया-नियन्त्रण; हाई पोलिमर्स, कैंडी तथा मिठाई-उद्योगों पर अनुसन्धान और उपोत्पादनों का उपयोग सम्मिलित हैं।

भारतीय केन्द्रीय पटसन-समिति की टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान-प्रयोग-शालाओं के एक कार्यक्रम के अन्तर्गत पटसन के 'हेमोसेल्युलोज़ों' के गठन और रासायनिक सुधार-पर अनुसन्धान किया जाएगा, ताकि वे पानी में जल्दी न फूलें और छोटे जीवाणुओं से पूर्वापेक्षा अपनी अधिक रक्षा कर सकें। इसके अतिरिक्त, पटसन के रेशे पर ताप तथा नमी के प्रभाव; वृद्धि की विभिन्न अवस्थाओं में पटसन के रेशे के नव्यतन एवं कोषायतन; पटसन के पौधों को नष्ट करनेवाले बैकटेरिया तथा फुंगी के अध्ययन; लुगदी तथा कागज़ बनाने में पटसन के डंठलों के उपयोग; घर सजाने के वस्त्रों-सहित पटसन के सम्भावित नए उपयोग; पटसन के परिष्कृत धागे की आर्द्रता-विषयक मज़बूती को बढ़ाने; पटसन के थैलों से छन-छन कर सीमेंट का निकलना रोकने; जिल्दसाज़ी में काम आनेवाले कपड़े, रेक्ज़िन तथा अन्य उपयोगों के लिए पटसन का मोटी बुनाई का वस्त्र तैयार करने; और मेस्टा तथा अन्य प्रतिस्थापित रेशों के विधायन को उन्नत करने के सम्बन्ध में अनुसन्धान किए जाएंगे । भारतीय पटसन-कारखाना-संघ की अनुसन्धान-संस्था में जूट तथा 'बास्ट' के रेशे के मेकैनिकल तथा अन्य गुणों और रासायनिक मिश्रण के अध्ययनों; पटसन पर विनाशकारी प्रभाव डालनेवाले फुंगियों, बैकटेरियों तथा अन्य परिस्थितिजन्य कारणों के प्रभाव; और पटसन के वस्त्रों के 'प्रूफिंग' तथा 'फिनिशिंग' के विकास के सम्बन्ध में कार्य हो रहा है ।

भारतीय केन्द्रीय कपास-समिति की टेक्नोलाजी-विषयक प्रयोगशाला में कपास की किस्में तैयार करनेवालों की सहायता के लिए कताई-परीक्षण रेशों के गुणों के माप और कताई की दृष्टि से रेशों के महत्व का निश्चय किया जाता है । अहमदाबाद-वस्त्र-उद्योग-अनुसन्धान-संघ ने भी तीसरी योजना की अवधि के लिए एक अध्ययन-कार्यक्रम तैयार किया है, जिसके अन्तर्गत निम्नांकित कार्यों के सम्बन्ध में अध्ययन किए जाएंगे—'सेल्युलोजों' के आणविक गठन और तत्वों के बीच का सम्बन्ध, कपास के रेशों पर 'थर्मोसेटिंग रेज़िनों' का प्रयोग करने पर पोलिमर का उद्भव; 'साइज़ मिक्स्चर्स' बनाते समय काम आनेवाली 'स्टार्च'-जैसी 'पोलिमरों' के तत्वों पर मसृणकारियों और अकार्बनिक लवणों के प्रयोग का प्रभाव, ताप-शुष्कीकरण की प्रक्रियाओं का सुधार, शुष्कीकरण की प्रक्रियाओं का वस्त्र की 'फिनिश' पर प्रभाव, धुलाई-सम्बन्धी टेक्नोलाजी, वस्त्र-उद्योग के काम आनेवाले वैज्ञानिक औज़ारों के डिज़ाइन और उनका विकास, सूत के रेशों की व्यवस्था का सूत की किस्म पर प्रभाव और वस्त्र के रेशों-द्वारा विभिन्न प्रकार के तत्वों की ग्राह्यता-सम्बन्धी क्रियाविधि ।

रेशम तथा नकली रेशम-कारखाना-अनुसन्धान-संघ की स्थापना सन् 1958-59 में हुई थी । इसके मार्गदर्शक कारखानों, प्रयोगशालाओं और तकनीकी संस्था के निर्माण का काम लगभग पूरा हो चुका है । यह संघ अपने सदस्यों-द्वारा रेशे, सूत और कपड़े के बारे में प्रस्तुत समस्याओं पर विचार करेगा, निर्माण-प्रक्रियाओं के दोष मालूम करेगा और उन्हे दूर करने तथा निर्यात के लिए रेयन कपड़े की उपयुक्तता के सम्बन्ध में अध्ययन करेगा । रेशा-उत्पादन में सुधार, सूत के परिष्करण, कपड़ा के उत्पादन और उसकी फिनिश के सम्बन्ध में संघ काम करेगा ।

69. **कुटीर तथा लघु उद्योग :** अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग-मंडल के अधीन एक केन्द्रीय ग्रामोद्योग-अनुसन्धान-संस्था वर्धा में काम कर रही है। इस संस्था में प्रक्रियाओं और उत्पादनों को नियन्त्रित तथा विकसित करने के लिए प्रयोगशालाएं, उपकरणों के डिज़ाइन बनाने और उन्नत किस्म के उपकरण तैयार करने के लिए कर्मशालाएं तथा उपकरणों और तकनीकों का अध्ययन करने के लिए परीक्षणात्मक उत्पादन-केन्द्र हैं। इस संस्था के अतिरिक्त और भी बहुत-से अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित किए गए है ।

नारियल-जटा-मंडल की केन्द्रीय नारियल-जटा-अनुसन्धान-संस्था केरल मे और उसकी एक शाखा पश्चिम-बंगाल में है। मंडल नारियल जटा के रेशे और धागे के आधारभूत तथा प्रायोगिक, दोनों पहलुओं पर अनुसन्धान करने का विचार रखता है । आधारभूत अनुसन्धान-कार्यक्रम के अन्तर्गत नारियल-जटा के रेशे और धागे के रचनामूलक, रासायनिक, जैविक तथा अन्य बुनियादी तत्वों का पता लगाया जाएगा। 'सिसल' और 'एलो'-जैसे प्रतियोगी रेशों का तुलनात्मक अध्ययन भी किया जाएगा। प्रायोगिक अनुसन्धान-योजनाओं के अन्तर्गत नारियल-जटा का रेशा निकालने की विधियों पर कार्य किया जाएगा। यह कार्य रेशे को खराब होने से बचाने और उस पर किए जानेवाले श्रम को कम करने के उद्देश्य से किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, इस कार्यक्रम के अन्तर्गत पांव से चलाई जानेवाली एक उन्नत किस्म की कताई-मशीन, रस्सी बनाने की मशीन, तीन 'मैटिंग लूम' वाला एक प्रायोगिक संयन्त्र, नारियल-मज्जा और नारियल-जटा के अवशेषों के प्रयोग, नायिल-जटा के रेशे और धागे की रंगाई तथा नारियल-जटा एवं उसके उत्पादनों के नए

प्रयोगों के विकास के सम्बन्ध में कार्य किया जाएगा ; रेशम के कीड़े पालने-सम्बन्धी तीन अनुसन्धान-संस्थाएं पश्चिम-बंगाल, मैसूर और असम-राज्यों में हैं । केन्द्रीय रेशम-मंडल बिहार और जम्मू तथा कश्मीर में दो प्रादेशिक अनुसन्धान-केन्द्र और कलिम्पोंग में एक उपकेन्द्र भी खोलेगा । रेशम-उद्योग की मुख्य समस्याएं रेशम की किस्म को उन्नत करने और रेशम पर होनेवाले व्यय में कमी करने से सम्बद्ध हैं । अनुसन्धान-केन्द्रों पर रेशम के कीड़ों की नई तथा उन्नत नस्लें तैयार करने का प्रयास किया जाएगा ।

हथकरघा-मंडल ने हथकरघा-टेक्नोलाजी की दो वर्तमान संस्थाओं का पुनर्गठन करने की योजनाएं तैयार की हैं । मंडल का विचार बहुत-सी अनुसन्धान-योजनाओं पर काम करने का है—जैसे, एक उपयुक्त छोटे 'साइजिंग' और 'बीमिंग' उपकरण का डिज़ाइन, शहतूत के अतिरिक्त वृक्षों पर तैयार किए गए रेशम के वस्त्रों का प्रयोग, संश्लेषित रेशे के परिष्कार और रंगाई-सम्बन्धी कुटीर-उद्योग, हथकरघा पर तैयार किए गए वस्त्रों को 'ऐंटी-क्रीज़' बनाना तथा अन्य प्रकार से 'फिनिश' करना, टसर बनाने के लिए छोटी रीलिंग मशीन का डिज़ाइन, संश्लेषित रंगों के साथ वनस्पति-रंगों का प्रयोग और मशीन-द्वारा बांस की खपचियां तैयार करना ।

लघु उद्योगों के क्षेत्र में लघु उद्योग-सेवा-संस्थाओं और विस्तार-केन्द्रों के कार्यकलाप को संगठित करने और उनका विस्तार करने का काम किया जाएगा । इन केन्द्रों में वे केन्द्र भी शामिल हैं जो कच्ची सामग्रियों के समुचित प्रयोग, उन्नत तकनीकी प्रक्रियाओं और मशीनों के डिज़ाइन-सम्बन्धी समस्याओं पर अनुसन्धान करते हैं ।

(9)

विश्वविद्यालयों तथा उच्चतर टेक्नोलाजी की संस्थाओं में अनुसन्धान

70. विज्ञान की समस्त शाखाओं में आधारभूत अनुसन्धान-कार्य मुख्यतः विश्व-विद्यालयों में किया जाता है । उद्योगों के विकास के लिए आवश्यक तकनीकी एवं वैज्ञानिक कर्मचारी भी विश्वविद्यालयों से ही प्राप्त होते हैं । विज्ञान और टेक्नोलाजी के द्रुत विकास के सन्दर्भ में विश्वविद्यालयों का स्थान असाधारण महत्व का हो गया है । प्रत्येक क्षेत्र में बढ़िया किस्म का व्यावहारिक अनुसन्धान करने के लिए यह आवश्यक है कि विश्वविद्यालयों में बुनियादी अनुसन्धान-कार्य को सहायता दी जाए । वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान परिषद्, भारतीय कृषि-अनुसन्धान-परिषद् तथा भारतीय चिकित्सा-अनुसन्धान-परिषद्-जैसे संगठन विश्वविद्यालयों में अनुसन्धान-परियोजनाओं को सहायता दे रहे हैं, किन्तु वर्तमान परिस्थितियों में यह आवश्यक है कि बुनियादी अनुसन्धान पर ही विशेष बल दिया जाए । विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग ने भी विश्वविद्यालयों में बुनियादी अनुसन्धान-सम्बन्धी सुविधाओं का विस्तार करने में सहायता दी है ।

71. टेक्नोलाजी-संस्थाओं के अतिरिक्त इस समय 46 विश्वविद्यालय हैं । इनमें से अधिकांश में विज्ञान की कई शाखाओं में उच्च अनुसन्धान करने की सुविधाएं हैं । दूसरी योजना में विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग की सहायता से विश्वविद्यालयों में कई विशिष्ट अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित किए गए हैं । उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:—हैदराबाद में परीक्षणात्मक खगोलविद्या; दिल्ली में सैद्धान्तिक खगोलविद्या; अलीगढ़ एवं जम्मू-कश्मीर में ब्रह्मांडीय किरण-अनुसन्धान; अन्नमलइ एवं त्रिवेन्द्रम में जैविक समुद्र-

शास्त्र; कलकत्ता, आन्ध्र, दिल्ली एवं अलीगढ़ में क्ष-किरण और बिल्लौर-विद्या; वाराणसी एवं कर्नाटक में वर्णपटशास्त्र; कलकत्ता एवं इलाहाबाद में इलैक्ट्रानिकस तथा प्रायोगिक भौतिक शास्त्र; चंडीगढ़ में पशु-वंश-विकास-शास्त्र; और वाराणसी, दिल्ली एवं कलकत्ता में पौधों का रचना-सम्बन्धी शास्त्र। वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् ने रूड़की-विश्वविद्यालय में भूकम्प-सम्बन्धी एक विद्यालय की स्थापना की है। तीसरी योजना की अवधि में वर्तमान अनुसन्धान-विभागों का विकास किया जाएगा और प्रायोगिक भूगर्भ-विज्ञान, भूभौतिकी, रेडियो-खगोलविद्या, समुद्र-शास्त्र और चिकित्सा-सम्बन्धी बुनियादी विज्ञान में अनुसन्धान-सुविधाओं की अभिवृद्धि की जाएगी।

72. **इंजीनियरी अनुसन्धान :** यद्यपि पिछली शताब्दी के अन्तिम दशक में रूड़की-विश्वविद्यालय ने जलशक्ति-सम्बन्धी अनुसन्धान में अभिनव कार्य किया, तथापि पहली पंचवर्षीय योजना की समाप्ति तक देश में इंजीनियरी-अनुसन्धान प्रारम्भिक अवस्था में ही था। पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत औद्योगिक क्षेत्र में जो बड़े पैमाने पर विकास हुआ, उसके परिणामस्वरूप भारतीय इंजीनियरों को मौलिक तथा सृजनात्मक अनुसन्धान करने और बड़े-बड़े डिज़ाइन बनाने तथा फैब्रिकेशन और निर्माण-कार्य का उत्तरदायित्व सम्भालने के नए-नए अवसर मिले। फिर भी, अब तक वर्तमान कालेजों में कुछ ही ऐसे हैं, जहां अनुसन्धान करने की सुविधाएं हैं, हालांकि अब भारतीय विज्ञान-संस्था, रूड़की-विश्वविद्यालय, यादवपुर-विश्वविद्यालय, मद्रास-टेक्नोलाजी-संस्था और खड़गपुर, बम्बई, मद्रास एवं कानपुर की टेक्नोलाजी-संस्थाओं-जैसी संस्थाओं का उच्च टेक्नोलाजी-विषयक और स्नातकोत्तर शिक्षण-संस्थाओं के रूप में विकास किया जा रहा है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में रूड़की-विश्वविद्यालय में जल-शक्ति-सम्बन्धी अनुसन्धानों का पुनस्संगठन किया गया और भूकम्प-सम्बन्धी इंजीनियरिंग एवं 'स्ट्रक्चरल डायनेमिक्स'-सम्बन्धी समस्याओं पर कार्य किया गया। बंगलोर-स्थित भारतीय विज्ञान-संस्था ने बिजली-इंजीनियरी, धातुकर्म, आन्तरिक ज्वलन-क्रिया इंजिन, गैस टरबाइनों और वैमानिक इंजीनियरी-सम्बन्धी अनुसन्धान-कार्य किए। खड़गपुर-स्थित भारतीय टेक्नोलाजी-संस्था इलैक्ट्रन ट्यूब आसिलेटरों एवं ऐम्पलीफायरों, ट्रांज़िस्टरों एवं सूक्ष्म तरंगों, नौसेना-वास्तुविद्या और 'शिप माडल टैंक' सम्बन्धी परीक्षणों पर अनुसन्धान कर रही थी।

73. वात-शक्ति, जल-शुद्धीकरण, सौर शक्ति, इत्यादि-जैसी इंजीनियरी-अनुसन्धान-योजनाओं और विभिन्न प्रकार की मेकैनिकल, बिजली-विषयक एवं दूर-संचार-सम्बन्धी परियोजनाओं पर कार्य करने के लिए विभिन्न राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं में प्राप्त सुविधाओं का अधिकाधिक प्रयोग किया जा रहा है। जो राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं इंजीनियरी-सम्बन्धी अनुसन्धान कर रही हैं, उनमें ये भी सम्मिलित हैं—केन्द्रीय सड़क-अनुसन्धान-संस्था, राष्ट्रीय धातुकर्म-प्रयोगशाला, केन्द्रीय ईंधन-अनुसन्धान-संस्था, केन्द्रीय इलैक्ट्रानिक्स इंजीनियरी-अनुसन्धान-संस्था, केन्द्रीय जन-स्वास्थ्य-इंजीनियरी-अनुसन्धान-संस्था, केन्द्रीय मेकैनिकल इंजीनियरी-अनुसन्धान-संस्था और केन्द्रीय खनन-अनुसन्धान-केन्द्र।

ट्राम्बे-स्थित परमाणु-शक्ति-प्रतिष्ठान में भी इंजीनियरी-विषयक काफी अनुसन्धान कार्य किया जा रहा है। यहां मुख्यतः सस्ती न्यैष्टिक शक्ति के उत्पादन और अनुसन्धान-

कार्य के लिए आवश्यक परमाणु प्रतिकारियों के डिज़ाइन तथा निर्माण-सम्बन्धी इंजीनियरी-समस्याओं के सम्बन्ध में कार्य किया जा रहा है। वास्तविक विकिरणहीन परिस्थितियों में सम्पूर्ण प्रतिकारी-प्रणालियों, एवं सामग्रियों के परीक्षण के सम्बन्ध में भी काम आगे बढ़ाया जा रहा है। ट्रांज़िस्टर बनाने के लिए सिलिकन एवं जर्मेनियम तथा इलैट्रानिक औज़ारों के उत्पादन के सम्बन्ध में भी अनुसन्धान-कार्य किया जा रहा है।

इंजीनियरी-अनुसन्धान के विकास के लिए तीसरी योजना में अधिक धन-राशि की व्यवस्था की गई है। इस समय एक विशेष समिति इंजीनियरी-सम्बन्धी स्नातकोत्तर शिक्षण तथा अनुसन्धान-सम्बन्धी कार्यक्रमों का अध्ययन कर रही है।

74. **अंक-संकलन-सम्बन्धी अनुसन्धान :** पहली दो योजनाओं की अवधि में अंक-संकलन-अनुसन्धान-सम्बन्धी सुविधाओं का समुचित विकास किया गया है। राष्ट्रीय नमूना-सर्वेक्षण-संस्था अंक-संकलन-सम्बन्धी तथ्यों को एकत्र करने के लिए नमूना-सर्वेक्षण करती है। राज्यों के अंक-संकलन-कार्यालय तथा राष्ट्रीय नमूना-सर्वेक्षण-संस्था, दोनों मिल कर नमूने के सम्बन्ध में जांच-पड़ताल करते हैं। भारतीय अंक-संकलन-संस्था विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग करने के लिए नए अंक-संकलन-उपकरणों के विकास तथा अंक-संकलन के सिद्धान्तों के सम्बन्ध में आधारभूत अनुसन्धान करती है। राष्ट्रीय नमूना-सर्वेक्षण-संस्था-द्वारा की जानेवाली पूछताछ की रूपरेखा तैयार करने तथा सर्वेक्षण-संस्था-द्वारा एकत्र किए गए तथ्यों की सारणी तैयार करने का कार्य भी यही संस्था करती है। भारतीय अंक-संकलन-संस्था की आर्थिक शाखा कार्य-संचालन, अनुसन्धान-इकाई और प्रादेशिक सर्वेक्षण-इकाई आयोजन-सम्बन्धी तकनीकी अध्ययन करती है। केन्द्रीय अंक-संकलन-संगठन तथा राज्यों के अंक-संकलन-कार्यालय एक-दूसरे के निकट सहयोग से काम करते हैं। हाल में केन्द्रीय सरकार ने विभिन्न मन्त्रालयों तथा राज्य-सरकारों को अंक-संकलन की समस्याओं पर सलाह देने और अंक-संकलन के लिए आवश्यक नियम एवं मानक निश्चित करने के बारे में सामान्य निदेश देने का कार्य करने के लिए अंक-संकलन-विभाग की स्थापना की है। कृषि-अंक-संकलन-संस्था कृषि-सम्बन्धी अंक-संकलन के क्षेत्र में अनुसन्धान-कार्य कर रही है।

(10)

वैज्ञानिक अनुसन्धान का उपयोग

75. कुछ वर्षों से इस बात पर ज़ोर दिया जा रहा है कि वैज्ञानिक अनुसन्धान के परिणामों का व्यावसायिक स्तर पर तेज़ी से और व्यापक आधार पर उपयोग किया जाए। प्रयोगशालाओं में होनेवाले अनुसन्धान-कार्यों के परिणामों का व्यावसायिक उत्पादन में उपयोग करने के उद्देश्य से 7 वर्ष पूर्व राष्ट्रीय अनुसन्धान-विकास-निगम की स्थापना की गई थी। निगम ने देश में हुए अनुसन्धानों के आधार पर तैयार की गई वस्तुओं के लिए लगभग 120 लाइसेंसों के सम्बन्ध में बातचीत की है, जिनमें से 30 से अधिक व्यावसायिक उत्पादन के लिए हैं। निगम ने 16 विकास-परियोजनाएं भी चलाई हैं। फिर भी, देश में होनेवाले वैज्ञानिक अनुसन्धानों के बहुत बड़े भाग का अभी उपयोग नहीं हो पाता। प्रयोगशाला में अनुसन्धान पूरा हो जाने पर भी काफी अर्से तक उसकी जानकारी जनता को नहीं होती। इस सम्बन्ध में कुछ विशेष कदम उठाने की आवश्यकता

है। सुझाया गया है कि अनुसन्धान के परिणामों का तुरन्त उपयोग न होने के कुछ मुख्य कारण ये हैं—मार्गदर्शक संयन्त्र और डिज़ाइन तथा फैब्रीकेशन-सम्बन्धी सुविधाओं का अभाव; उद्योगों और अनुसन्धान-संगठनों के बीच समुचित सम्पर्क का अभाव; विदेशों से मंगाई जानेवाली वस्तुओं को देश में ही बनाने की आवश्यकता के सम्बन्ध में उद्योगों का उपेक्षा-भाव; और लाइसेंस-सम्बन्धी नीति और अनुसन्धान के विकास-कार्यक्रमों के बीच समुचित समन्वय का अभाव। मार्गदर्शक संयन्त्रों के डिज़ाइन और फैब्रीकेशन की सुविधाएं अब पहले की अपेक्षा कहीं अधिक मात्रा में उपलब्ध है और जो-कुछ कमी रह गई है, वह तीसरी योजना में पूरी कर दी जाएगी। इसके अतिरिक्त ऊपर जिन अन्य बातों की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है, उनका सम्बन्ध मुख्यतः संगठनात्मक कार्यों से है। यह अत्यन्त आवश्यक है कि अनुसन्धान-कर्ताओं और उद्योगों के बीच घनिष्ठ सम्पर्क हो, उन्हें समस्याओं और अनुसन्धान के परिणामों के बारे में पूरा ज्ञान हो, और ऐसे उद्योग अनुसन्धान के परिणामों का प्रयोग करने के लिए सुविचारित योजनाएं बनाएं तथा देश में होनेवाले अनुसन्धान के आधार पर विदेशों से मंगाई जानेवाली चीज़ों को देश में बनाया जाए और उत्पादन का स्तर ऊंचा किया जाए। विशेष रूप से विकास-परिषदों और विभिन्न उद्योगों से सम्बन्धित संगठनों को चाहिए कि दूसरी पंचवर्षीय योजना में ऐसी योजनाओं को अपने विकास-कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग मानें। उन्हें इसका प्रबन्ध भी करना होगा कि अनुसन्धान-कार्यकर्ताओं को औद्योगिक संयन्त्रों तथा विभिन्न उद्योगों में कार्यपालक अधिकारियों और इंजीनियरों का पूरा-पूरा सहयोग प्राप्त हो।

76. उद्योगों की भांति परिवहन, निर्माण और बिजली-जैसे विकास के अन्य क्षेत्रों में भी अनुसन्धान के परिणामों का उपयोग तुरन्त नहीं हो पाता। अनुसन्धान के द्वारा बहुत आशाजनक परिणाम निकलते है और नए-नए डिज़ाइनों, तकनीकों और विशेष विवरणों का आविष्कार किया जाता है, किन्तु उनका विस्तृत उपयोग नहीं हो पाता। सम्भवतः उद्योगपतियों की संकोचशील मनोवृत्ति के कारण ऐसा होता है। अतः अनुसन्धान पर किए गए व्यय का हम पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाते और इसीलिए तकनीकी प्रगति तथा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया भी शिथिल पड़ जाती है। सड़क-विकास के क्षेत्र में केन्द्रीय सरकार और राज्य-सरकारों की अनुसन्धान-प्रयोगशालाओं में सड़क-निर्माण और तत्सम्बन्धी विशेष बातों की उन्नत तकनीकें खोजने के सम्बन्ध में कार्य हो रहा है, ताकि उनका तुरन्त उपयोग किया जा सके। सुझाव रखा गया है कि राज्य-सरकारें सड़कों के लिए तीसरी योजना में निर्धारित धन-राशि का एक प्रतिशत प्रायोगिक तकनीकों और तीसरी योजना में बनाई जानेवाली सड़कों के कुछ भागों के निर्माण पर व्यय करें। यह तरीका अपनाने से राज्य-सरकारों को कुछ अतिरिक्त व्यय तो ज़रूर करना पड़ेगा। किन्तु इसके लिए भी केन्द्र के सड़क-कार्यक्रमों के अन्तर्गत व्यवस्था कर दी गई है। प्रस्ताव है कि भारतीय सड़क-कांग्रेस की एक समिति सड़क-निर्माण की नई तकनीकों का चुनाव करे और उनको आजमाया जाए। इस तरीके को निर्माण के क्षेत्रों तथा सार्वजनिक उपयोग-सेवाओं आदि के लिए भी काम में लाया जा सकता है।

77. **आविष्कार और पेटेंट :** किसी देश की टेक्नोलाजी-विषयक प्रगति का पता

वहां किए गए आविष्कारों की संख्या से लगता है। कुछ तो ऐसे महत्वपूर्ण अनुसन्धान होते हैं, जो प्रयोगशालाओं में दीर्घकाल तक किए जाते हैं, किन्तु कुछ ऐसे आविष्कार भी होते हैं, जिनका कुशल कर्मचारियों और तकनीकी कर्मचारियों को अपने प्रति दिन के कार्य में सहसा पता लग जाता है। किसी समस्या का हल खोजते समय कई बार वे बहुत ही महत्वपूर्ण परिणामों पर पहुंच जाते हैं। उद्योगीकरण की प्रक्रिया के विकास के लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक क्षेत्र में वैज्ञानिकों, तकनीकी कर्मचारियों तथा अन्य कर्मचारियों की रचनात्मक प्रतिभा को प्रोत्साहन देने का प्रयत्न किया जाए। सन् 1959 में केन्द्रीय सरकार ने स्वतन्त्र रूप से काम करनेवाले कारीगरों, शिल्पियों और तकनीकी कर्मचारियों में आविष्कार की भावना उत्पन्न करने और उसे प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से आविष्कार-विकास-मंडल की स्थापना की। यह मंडल इन लोगों को तकनीकी और वित्तीय सहायता देता है। आशा की जाती है कि सार्वजनिक प्रतिष्ठान तथा निजी उद्योग और केन्द्रीय तथा राज्य-सरकारों के विभिन्न संगठन अपने तकनीकी कर्मचारियों में आविष्कार की प्रवृत्ति को बढ़ावा देने की योजना बनाएंगे और उन्हें अपने आविष्कार को पूरा करने के लिए आवश्यक आर्थिक सहायता देंगे।

पेटेंट चालू करने का उद्देश्य कानूनी जामा पहनाना है। तथा उद्योगों को इन आविष्कारों को तुरन्त ग्रहण करने के लिए प्रोत्साहन देना है। किन्तु कई वर्षों तक पेटेंटों से सम्बन्धित कानूनों के बारे में काफी असन्तोष प्रगट किया जाता रहा है। भारतीय पेटेंटों में से अधिकांश पर विदेशियों का अधिकार है और वस्तुतः इनमें से देश में बहुत कम बनाए जाते हैं। पेटेंटों के सम्बन्ध में कानून बनाने और उनकी प्रशासनिक तथा अन्य प्रकार की व्यवस्था पर विस्तृत रूप से हाल में विचार किया गया है। इस सम्बन्ध में जो सुझाव दिए गए हैं, केन्द्रीय सरकार उन पर विचार कर रही है।

(11)

वैज्ञानिक औज़ार

78. वैज्ञानिक औज़ारों के लिए विदेशों पर निर्भर रहने के कारण वैज्ञानिक अनुसन्धान के विकास और विद्यालयों तथा कालेजों में विज्ञान की शिक्षा की सुविधाओं के सुधार और विस्तार में बड़ी भारी बाधा आती है। सन् 1959 में वैज्ञानिक औज़ार-समिति ने विभिन्न क्षेत्रों की वैज्ञानिक औज़ारों की आवश्यकता का आकलन किया और यह सिफारिश की कि वाणिज्य और उद्योग-मन्त्रालय में एक वैज्ञानिक औज़ार-निदेशालय और वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् के अधीन एक वैज्ञानिक औज़ार-संगठन स्थापित किया जाए। इन सिफारिशों के अनुसार वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद् ने अक्तूबर 1959 में केन्द्रीय वैज्ञानिक औज़ार-संगठन की स्थापना की। इस संगठन ने वैज्ञानिक औज़ारों का उत्पादन, कच्चे माल की उपलब्धि, उत्पादन-क्षमता का विस्तार, किस्म-नियन्त्रण, आदि की तकनीकी कठिनाइयों के सम्बन्ध में सर्वेक्षण किया। पिछले कुछ वर्षों में वैज्ञानिक औज़ारों के उत्पादन में कुछ वृद्धि हुई है। इस समय लगभग 35 बड़ी और माध्यम इकाइयां विज्ञान, ड्राइंग, सर्वेक्षण, गणित और उद्योगों-सम्बन्धी औज़ारों का उत्पादन कर रही हैं। सन् 1956 में 63 लाख रुपये के मूल्य के औज़ारों का उत्पादन हुआ था, जब कि सन् 1960 में 3 करोड़ मूल्य के औज़ार तैयार

किए गए। इसके अतिरिक्त, छोटी इकाइयों में भी वैज्ञानिक औज़ारों के उत्पादन की काफी गुंजाइश है। सन् 1956 में छोटी इकाइयों में कुल 35 लाख रुपये के मूल्य के औज़ारों का उत्पादन होता था, जब कि सन् 1960 में 60 लाख रुपये मूल्य के औज़ारों का उत्पादन होने लगा। अभी प्रति वर्ष लगभग 10 करोड़ रुपये मूल्य के वैज्ञानिक औज़ारों का आयात किया जाता है। इस दृष्टि से, यह एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें उत्पादन बहुत तेज़ी से और काफी बढ़ाया जा सकता है। सरकारी विभागों और शिक्षा-संस्थाओं को चाहिए कि वे वैज्ञानिक औज़ारों की अपनी दीर्घकालीन आवश्यकताओं का हिसाब लगा लें और उत्पादन करनेवाली फर्मों को अपनी मांग बता दें, ताकि वर्तमान तथा सम्भावित उत्पादनकर्ता उत्पादन के दीर्घकालीन कार्यक्रम बना सकें। । देखा जाता है कि वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत औज़ार खरीदने की कोई अग्रिम योजना नहीं बनाई जाती, क्योंकि कई बार तो शिक्षा-संस्थाओं को वर्ष के अन्त में ही धन दिया जाता है। परिणामतः रुपये जल्दी में खर्च किए जाते हैं और घटिया किस्म का सामान खरीद लिया जाता है। केन्द्रीय और राज्य-सरकारों के क्रय-संगठनों और माल की मांग भेजनेवाले विभिन्न अधिकारियों को चाहिए कि वैज्ञानिक औज़ार-उद्योग के विकास को ध्यान में रखते हुए वर्तमान पद्धतियों के सुधार के लिए मिल कर प्रयत्न करें।

(12)

मानकीकरण, किस्म-नियन्त्रण और उत्पादकता

79. **मेट्रिक माप-तौल :** देश-भर में माप-तौल की प्रणाली का मेट्रिक पद्धति पर मानकीकरण करने का निश्चय दूसरी योजना के आरम्भ में ही कर लिया गया था। पिछले वर्षों में कई क्षेत्रों में मेट्रिक पद्धति को अपनाया गया है। कपास और पटसन के वस्त्र, लोहा और इस्पात, अलौह धातु, इंजीनियरी, रसायन, सीमेंट, कागज़, पेट्रोलियम, आदि उद्योगों में व्यापक लेन-देन में अब मेट्रिक पद्धति अपना ली गई है। सीमा-शुल्क और उत्पादन-शुल्क की दरें अब मेट्रिक इकाइयों में बताई जाती हैं। रेलवे, बन्दरगाहों, जहाज़रानी, आयात और निर्यात-व्यापार-नियन्त्रण और अन्य बहुत-सी केन्द्रीय और राज्यीय संस्थाओं ने मेट्रिक पद्धति अपना ली है। कुछ क्षेत्रों में मेट्रिक बाट अक्तूबर 1958 में चालू किए गए थे और अक्तूबर 1960 में उनका प्रयोग अनिवार्य कर दिया गया। देश के अन्य भागों में अप्रैल 1962 से मेट्रिक बाटों का इस्तेमाल अनिवार्य कर दिया जाएगा। व्यापार में सन् 1961 में मेट्रिक क्षमता-माप और सन् 1962 में मेट्रिक लम्बाई-माप लागू करने का विचार है। अगले तीन वर्षों में मेट्रिक पद्धति बहुत हद तक अन्य पद्धतियों का स्थान ले लेगी। दिसम्बर 1966 के बाद देश में केवल मेट्रिक पद्धति को ही कानूनी मान्यता प्राप्त होगी।

80. **मानकीकरण :** औद्योगिक विकास और साधनों के समुचित उपयोग की दृष्टि से मानकीकरण का बहुत महत्व है। सन् 1947 में भारतीय मानक-संस्थान की स्थापना हुई थी। इस संस्थान ने अब तक अधिकांश उद्योगों के लिए, जिनमें कृषि और खाद्य-उत्पादन भी सम्मिलित हैं, राष्ट्रीय मानक तैयार कर दिए हैं और अभी लगभग 1,900 मानक काम में लाए जा रहे हैं। 'इंडियन स्टैंडर्ड्स सर्टिफिकेशन मार्क ऐक्ट, 1952' के अन्तर्गत भारतीय मानक पर सही उतरनेवाले माल को प्रामाणिक घोषित

करने के लिए उत्तरोत्तर अधिक संख्या में लाइसेंस दिए जा रहे हैं। भारतीय मानक-संस्थान उद्योगों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है। मानकीकरण के उद्देश्यों को विशेष मानक-सम्मेलनों से बढ़ावा मिलता है और केन्द्रीय तथा राज्य-सरकारों ने यह नियम बना लिया है कि वे सरकारी कार्यालयों के लिए भारतीय मानक के आधार पर ही माल खरीदेंगे। दूसरी योजना में भारतीय मानक तैयार करने की गति में लगभग 70 प्रतिशत की वृद्धि हुई। दूसरी योजना के अन्त में जो गति थी, तीसरी योजना की अवधि में उसे दुगुना करने का कार्यक्रम है। तीसरी योजना में उपभोक्ता-माल के मानक तैयार करने पर अधिक बल दिया जाएगा। मानकों को दृढ़तापूर्वक लागू करने के लिए कारखानों के स्तर पर मानकीकरण को प्रोत्साहन देने के प्रयत्न किए जाएंगे, वर्तमान उपभोक्ता-संगठनों को मज़बूत बनाया जाएगा और नए संगठन स्थापित किए जाएंगे, तथा जन-शिक्षा पर बल दिया जाएगा। उद्योग और वाणिज्य की विभिन्न शाखाओं में मेट्रिक प्रणाली लागू करने के कार्य को सुविधाजनक बनाने के लिए भारतीय मानक-संस्थान अपने वर्तमान मानकों को मेट्रिक पद्धति के अनुसार बना रहा है तथा अन्य ऐसे मानक तैयार कर रहा है, जिनकी नए माप-तौल के नियन्त्रण के लिए आवश्यकता होगी। संस्थान की वर्तमान सुविधाओं का, जिनमें अनुसन्धान-प्रयोगशालाएं और वैज्ञानिक तथा तकनीकी कर्मचारी शामिल हैं, विस्तार किया जाएगा। देश-भर की प्रयोगशालाओं में विभिन्न समस्याओं पर परीक्षण की व्यवस्था करने के अतिरिक्त संस्थान अपनी अनुसन्धान-प्रयोगशालाओं में दीर्घकालीन समस्याओं का अध्ययन भी करेगा।

81. **किस्म-नियन्त्रण :** मानकों से उत्पादनों की अपेक्षित किस्म का तो पता चलता है, किन्तु उनकी वास्तविक सफलता वैसी किस्म का माल प्राप्त करने के लिए अपनाई जानेवाली उन विभिन्न तकनीकों पर निर्भर करती है, जो 'किस्म-नियन्त्रण' के अन्तर्गत आती हैं। 'किस्म-नियन्त्रण' की अंक-संकलन-पद्धितयों और नमूनाजन्य तकनीकों का उन सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपकरणों में स्थान है, जो इस उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। इन तकनीकों को ठीक से अपनाने से कच्चे माल के इस्तेमाल की दृष्टि से सामग्रियों, मशीनों और कर्मचारियों के उपयोग के क्षेत्र में दक्षता बहुत बढ़ती है और अपेक्षित किस्म का माल तैयार होता है। भारतीय अंक-संकलन-संस्था और इसकी शाखाओं में कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है। साथ ही, यह संस्था विभिन्न उद्योगों को अंक-संकलन-विषयक-नियन्त्रण की समस्याओं पर सलाह देती है। पिछले कुछ वर्षों में इस क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है। तीसरी योजना में इसका और तेज़ी से विस्तार किया जाएगा। किस्म-नियन्त्रण की सम्भावनाएं असीम हैं—इसके कारण उत्पादन की किस्म में सुधार होता है, ग्राहकों में विश्वास बढ़ता है तथा निर्यात का भी विस्तार होता है। अतः अर्थव्यवस्था के विकास की दृष्टि से इसका बहुत महत्व है। किस्म-निर्धारण की बहुत-सी योजनाओं को अधिक-से-अधिक लागू किया जा रहा है—जैसे, भारतीय मानक-संस्थान की प्रमाणीकरण मार्किंग, ऐगमार्क योजनाएं, तथा निर्यात-विकास-परिषदों-द्वारा संचालित योजनाएं। तीसरी योजना में बहुत-से नए क्षेत्रों में इन गतिविधियों के विस्तृत किए जाने की आवश्यकता है—विशेषकर, जहाज़ में माल लादने से पूर्व उसका परीक्षण तथा ऐसे ही कुछ अन्य आसान तरीके अपनाने होंगे, ताकि निर्यात किए जानेवाले माल की किस्म की जांच की जा सके। ऐसे तरीके उत्पादन के

सभी क्षेत्रों में अपनाए जाने चाहिए। यदि आवश्यक हो, तो कानून भी बनाया जाना चाहिए।

82. **उत्पादकता :** विभिन्न उद्योगों में उत्पादकता की वृद्धि की औसत गति से ही किसी उद्योग की प्रगति की गति का सही-सही पता लगता है। जैसा कि पहले एक अध्याय में बताया जा चुका है, अर्थव्यवस्था की गतिशीलता तथा आवश्यकता का वास्तविक आधार उत्पादकता की वृद्धि है। हमारे देश में उत्पादकता-आन्दोलन अभी आरम्भ ही हुआ है। किन्तु इसके महत्व को अब भली-भांति अनुभव किया जाने लगा है। सन् 1958 में राष्ट्रीय उत्पादकता-परिषद् की स्थापना की गई थी। तब से भारतीय उद्योगों में उत्पादकता-वृद्धि का आन्दोलन उत्तरोत्तर तेज़ होता जा रहा है। पिछले 3 वर्षों में राष्ट्रीय उत्पादकता-परिषद् के तत्वावधान में 43 स्थानीय उत्पादकता-परिषदें स्थापित की गई है और बहुत-से लोगों ने उत्पादकता-सम्बन्धी विचार-गोष्ठियों और सम्मेलनों में भाग लिया है। इस प्रकार यह प्रयत्न किया गया है कि इस क्षेत्र की समस्याओं और तकनीकों को अधिक-से-अधिक लोग समझें। राष्ट्रीय उत्पादकता-परिषद् ने 230 प्रशिक्षण-पाठ्यक्रमों का संगठन किया है, जिनमें लगभग 4 हज़ार प्रबन्धकों, तकनीशियनों और निरीक्षकों ने भाग लिया है। उच्च प्रबन्ध-कार्यक्रमों में वरिष्ठ कार्यपालक अधिकारियों ने भी भाग लिया है। आशा है कि कुछ समय बाद राष्ट्रीय उत्पादकता-परिषद् के कार्यक्रमों का सम्बन्ध अखिल भारतीय प्रबन्ध-संस्था और राष्ट्रीय औद्योगिक इंजीनियरी-प्रशिक्षण-संस्था के कार्यक्रमों के साथ जोड़ दिया जाएगा। तीसरी योजना में प्रबन्धकों, तकनीशियनों और निरीक्षकों के सामान्य प्रशिक्षण-कार्यक्रमों का विस्तार करने का भी प्रस्ताव है। प्रशिक्षण के अन्तर्गत कारखानों में पहले से अधिक मात्रा में उत्पादकता-सम्बन्धी तकनीकों को अपनाने का कार्यक्रम भी शामिल होगा। साथ ही, उत्पादकता की कुछ विशेष तकनीकों में प्रशिक्षकों को भी प्रशिक्षित किया जाएगा। राष्ट्रव्यापी स्तर पर उत्पादकता में वृद्धि करने के लिए न केवल अधिक उन्नत पद्धति और बेहतर संगठन तथा वैज्ञानिक तरीके अपनाने की आवश्यकता है, बल्कि व्यक्तिगत मानवीय सम्बन्धों में परिवर्तन करने, प्रत्येक व्यक्ति के महत्व को मान्यता देने तथा मिल कर काम करने और प्रत्येक उद्योग में सामूहिक हित और दायित्व की भावना उत्पन्न करने की भी आवश्यकता है।

अध्याय 32

स्वास्थ्य और परिवार-आयोजन

तीसरी योजना में स्वास्थ्य और परिवार-आयोजन-सम्बन्धी कार्यक्रमों का उद्देश्य मोटे तौर पर स्वास्थ्य-सेवाओं का विस्तार, एक निश्चित न्यूनतम शारीरिक कल्याण की व्यवस्था से जनता के स्वास्थ्य में क्रमिक सुधार तथा अधिक कुशलता और उत्पादकता के लिए अनुकूल परिस्थितियां पैदा करना है। निरोधक सार्वजनिक स्वास्थ्य-सेवाओं पर अधिकाधिक बल दिया जाएगा। दूसरी योजना के समान तीसरी योजना में भी सफाई, स्वास्थ्यकर परिस्थितियों, विशेष रूप से गांवों और शहरों में पीने के पानी की व्यवस्था में सुधार, संक्रामक रोगों की रोकथाम, स्वास्थ्य-सेवाओं के लिए और चिकित्सा एवं स्वास्थ्य-कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने के लिए संस्थागत सुविधाओं की व्यवस्था तथा मातृ और शिशु-कल्याण, स्वास्थ्य-शिक्षा और पौष्टिक आहार-सम्बन्धी सेवाओं की व्यवस्था के लिए विशिष्ट कार्यक्रम बनाए गए हैं। तीसरी योजना में परिवार-आयोजन को भी बहुत ऊंची प्राथमिकता दी गई है ।

2. पहली और दूसरी योजनाओं में इन कामों के लिए निश्चित व्यय-राशि क्रमशः 140 और 225 करोड़ रुपये थी। इसकी तुलना में तीसरी योजना के कार्यक्रमों के लिए कुल 342 करोड़ रु० रखे गए हैं। इसमें से लगभग 297 करोड़ रु० राज्यों की योजनाओं के लिए तथा शेष केन्द्रीय कार्यक्रमों के लिए निश्चित किए गए हैं। इस राशि को विभिन्न मदों में इस प्रकार बांटा गया है :

तालिका-संख्या 1

व्यय-राशि का वितरण

(करोड़ रुपये)

कार्यक्रम	पहली योजना	दूसरी योजना	तीसरी योजना
स्वास्थ्य			
जल की व्यवस्था और सफाई (ग्रामीण और शहर)	49.0	76.0	105.3
प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयां, अस्पताल और औषधालय	25.0	36.0	61.7
संक्रामक रोगों की रोकथाम	23.1	64.0	70.5
शिक्षा, प्रशिक्षण और अनुसन्धान	21.6	36.0	56.3
देशी चिकित्सा-प्रणालियां, होम्योपैथी और प्राकृतिक चिकित्सा	0.4	4.0	9.8
अन्य योजनाएं	20.2	6.0	11.2
परिवार-आयोजन	0.7	3.0	27.0
योग	140.0	225.0*	341.8

*वास्तविक व्यय 216 करोड़ रु० होने की सम्भावना है।

(1)
स्वास्थ्य
प्रगति और कार्यक्रम

3. पिछले दस वर्षों में विभिन्न स्वास्थ्य-कार्यक्रमों में बहुत प्रगति हुई है, अनेक दिशाओं में तो उल्लेखनीय प्रगति हुई है। मलेरिया की रोकथाम के लिए उठाए गए कदम के फलस्वरूप इस रोग से ग्रस्त होनेवालों की संख्या में काफी कमी आई है। सन् 1958 में रोकथाम के स्थान पर मलेरिया को समूल नष्ट कर देने का कार्यक्रम अपनाया गया। फाइ-लेरिया, तपेदिक, कोढ़ और यौन रोग-जैसे संक्रामक रोगों की रोकथाम की दिशा में भी प्रशंस-नीय प्रगति हुई है। अस्पतालों और औषधालयों की संख्या सन् 1950-51 में 8,600 थी, जो सन् 1960-61 में बढ़ कर 12,600 हो गई; रोगी-शय्याओं की भी संख्या 1,13,000 से बढ़ कर 1,85,600 हो गई। 20 करोड़ की आबादी के 2,800 विकास-खंडों में बुनियादी ढंग के स्वास्थ्य-संगठन स्थापित किए जा चुके है, जो सामान्यत: सभी रोगों के सम्बन्ध में निरोधक और उपचारात्मक कार्य करते है। दूसरी योजना के अन्त में देशी चिकित्सा-प्रणाली की शिक्षा देनेवाली 78 संस्थाएं थीं, जिनमें प्रतिवर्ष 1,375 विद्यार्थी प्रवेश पा सकते थे। आजकल 98 अस्पतालों और 5,372 औषधालयों में देशी प्रणाली से चिकित्सा की सुविधाएं उपलब्ध हैं; इनमे कुल 2,462 रोगी-शय्याएं है। शहरों में पीने का पानी मुहय्या करने और जल-निकासी-सम्बन्धी 664 योजनाएं, जिन पर खर्च का अनुमान 112 करोड़ रु० है, या तो पूरी हो चुकी है या उन पर काम जारी है। सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों, स्थानीय विकास-कार्यों और पिछड़े वर्गो के कल्याण के कार्यो के अन्तर्गत देहातों में पीने का पानी मुहय्या करने की जो योजनाएं क्रियान्वित हो चुकी हैं, उनके अतिरिक्त स्वास्थ्य-कार्यक्रम के अन्तर्गत 228 और योजनाएं हाथ में ली गई है। इन पर कुल खर्च का अनुमान 20 करोड़ रु० है।

4. जन्म और मरण की दर-सम्बन्धी आंकड़े तैयार करने के काम की अपनी सीमाएं है और सन् 1951 के बाद के काल के लिए कच्चे अनुमान ही लगाए जा सकते है। फिर भी, नीचे की तालिका से जनता के स्वास्थ्य में हुए क्रमिक सुधार का मोटे तौर पर पता चलता है:

तालिका-संख्या 2

जन्म-दर, मरण-दर और सम्भावित आयु-सीमा--1941-61

अवधि	जन्म-दर	मरण-दर	बाल-मृत्यु-दर		जन्म के समय आयु की सम्भावित सीमा	
			पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
1941-51	39.9	27.4	190.0	175.0	32.45	31.66
1951-56	41.7	25.9	161.4	146.7	37.76	37.49
1956-61	40.7	21.6	142.3	127.9	41.68	42.06

5. दूसरी योजना की अवधि की समाप्ति तक स्वास्थ्य और सम्बद्ध सेवाओं के क्षेत्र में बहुत विकास होने के बावजूद कुछ त्रुटियां विशेष रूप से परिलक्षित हुई। आवश्यकता की तुलना में संस्थागत सुविधाएं बिल्कुल अपर्याप्त थीं—विशेष रूप से देहातों में। देहातों और शहरों

में डाक्टरों की संख्या उचित अनुपात में नहीं थी; अनेक शहरी क्षेत्रों में डाक्टरों की संख्या बहुत अधिक थी, तो देहाती क्षेत्रों में आम तौर पर बहुत कम। अस्पतालों और औषधालयों में भी कर्मचारियों की संख्या पूरी नहीं थी। प्रशिक्षित कर्मचारियों और कुछ हद तक साज़-सामान की कमी के कारण देश के अनेक भागों में संक्रामक रोगों की रोकथाम के काम में बहुत कठिनाइयां आईं। ग्रामों में पीने का पानी मुहय्या करने के काम में कुछ प्रगति होने के बावजूद बहुत बड़ा देहाती क्षेत्र ऐसा बच गया, जहां पीने का साफ-सुरक्षित पानी नहीं पहुंचाया जा सका। अनेक शहरी क्षेत्रों में आबादी तेज़ी से बढ़ने के कारण जल-निकासी की समस्या उग्रतर हो गई।

6. तीसरी योजना का उद्देश्य, मोटे तौर पर, वे सब कमियां दूर करना है, जिनका ऊपर उल्लेख किया गया है। एक मुख्य लक्ष्य यह है कि तीसरी योजना के अन्त तक देश के प्राय: सभी गांवों में पीने का पानी पहुंचा दिया जाए। संस्थागत सुविधाओं का विस्तार किया जाएगा, जिससे चिकित्सा और स्वास्थ्य-सेवाएं धीरे-धीरे अधिक लोगों तक पहुंच सकें, विशेष रूप से देहातों में। मलेरिया के उन्मूलन का कार्यक्रम पूरा किया जाएगा तथा चेचक के उन्मूलन एवं फाइलेरिया, हैज़ा, तपेदिक, कुष्ठ रोग और अन्य संक्रामक रोगों की रोकथाम के प्रयत्न किए जाएंगे। शहरी क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर जल-निकासी का प्रबन्ध किया जाएगा।

नीचे की तालिका में तीसरी योजना के विशिष्ट भौतिक लक्ष्यों तथा पहली और दूसरी योजना की प्रगति का विवरण सार-रूप में दिया गया है :

तालिका-संख्या 3

उपलब्धियां और लक्ष्य

वर्ग/इकाइयां	1950-51	1955-56	1960-61	1965-66
अस्पताल और औषधालय				
संस्थाएं	8,600	10,000	12,600	14,600
रोगी-शय्याएं	1,13,000	1,25,000	1,85,600	2,40,100
प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयां	—	725	2,800	5,000
मेडिकल शिक्षा				
मेडिकल कालेज	30	42	57	75
वार्षिक प्रवेश-संख्या	2,500	3,500	5,800	8,000
दन्त-चिकित्सा शिक्षा				
दन्त-कालेज	4	7	10	14
वार्षिक प्रवेश-संख्या	150	231	281	400
प्रशिक्षण-कार्यक्रम				
डाक्टर*	56,000	65,000	70,000	81,000
नर्सें*	15,000	18,500	27,000	45,000
सहायक नर्स-मिडवाइफें और मिडवाइफें*	8,000	12,780	19,900	48,500
स्वास्थ्य-निरीक्षक*	521	800	1,500	3,500

* प्रेक्टिस या नौकरी कर रहे व्यक्तियों की संख्या।

तालिका-संख्या 3—(जारी)

वर्ग/इकाइयां	1950-51	1955-56	1960-61	1965-66
नर्स-दाइया/दाइयां*	1,800	6,400	11,500	40,000
सफाई-निरीक्षक*	3,500	4,000	6,000	19,200
औषध-निर्माता	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध	42,000	48,000
संक्रामक रोगों की रोकथाम				
मलेरिया				
इकाइयां	—	133	390	390†
लाभ उठानेवाली जन-संख्या (लाख में)	—	1,070	4,380	4,970
फाइलेरिया				
इकाइयां	—	11	48	48
लाभ उठानेवाली जन-संख्या (लाख में)	—	15.1	24.6	अनुपलब्ध
तपेदिक				
बी० सी० जी० दल	15	119	167	167
तपेदिक-औषधालय	110	160	220	420
तपेदिक के प्रदर्शन एवं प्रशिक्षण-केन्द्र	—	3	10	15
रोगी-शय्याएं	10,371	22,000	26,500	30,000
कुष्ठ रोग				
सहायता-केन्द्र	—	33	135	235
यौन रोग				
यौन रोग-औषधालय	—	—	83	189
मातृ और शिशु-स्वास्थ्य-केन्द्र	1,651	1,856	4,500	10,000

पानी की व्यवस्था और सफाई

7. **गांवों में पानी की व्यवस्था:** गांवो में पानी पहुचाने की समस्या हर प्रदेश मे भिन्न-भिन्न रूप मे है; अनेक बार तो एक ही प्रदेश मे समस्या एकरूप नहीं रहती। गावों मे पानी पहुंचाने का कार्यक्रम मुख्यत: सामुदायिक विकास, स्थानीय विकास और पिछड़े वर्गो के कल्याण-कार्यक्रमों के अतर्गत रहा है। 'स्वास्थ्य' के अन्तर्गत राष्ट्रीय जल-आपूर्ति और सफाई का कार्यक्रम उक्त कार्यक्रम का पूरक है। इस राष्ट्रीय कार्यक्रम का उपयोग उन गांवो मे पानी पहुंचाने के लिए किया जाता है, जहां जल-व्यवस्था के डिजाइन बनाने तथा निर्माण, आदि में तकनीकी

*प्रैक्टिस या नौकरी कर रहे व्यक्तियों की संख्या।
†तीसरी योजना के उत्तरार्द्ध में य इकाइयां धीरे-धीरे समाप्त कर दी जाएंगी।

कुशलता की आवश्यकता होती है। इस कार्यक्रम में उन गांवों को प्राथमिकता दी जाती है, जहां पानी की बेहद कमी है, पानी अत्यधिक खारा है और जहां पानी के कारण रोगों की अधिकता है। पहली और दूसरी योजनाओं में इस कार्यक्रम पर कुल 33 करोड़ रु० खर्च किए गए थे और पाइप डाल कर 11,000 गांवों में पानी पहुंचाया गया था।

8. अनेक राज्यों में देहातों में जल-आपूर्ति की वर्तमान स्थिति के सम्बन्ध में सर्वेक्षण किया जा रहा है। जहां ऐसे सर्वेक्षण आरम्भ नहीं किए गए हैं, वहां इनकी व्यवस्था करना ज़रूरी है, क्योंकि इसी प्रकार हर राज्य की समस्या का सही अनुमान लगाया जा सकेगा और यही तीसरी योजना में क्रियान्वित होनेवाले विस्तृत कार्यक्रम का आधार होगा। तीसरी योजना के अन्त तक अधिकांश गांवों में पीने का शुद्ध पानी पहुंचा देने के उद्देश्य के लिए केवल सघन प्रयत्न ही आवश्यक नहीं है, बल्कि इस बात की भी ज़रूरत है कि ज़िला और खंड-स्तर पर, देहातों को पानी पहुंचाने के कार्य में लगी सभी संस्थाओं में ठोस समन्वय हो और स्थानीय लोगों से पहल एवं अधिकतम योगदान प्राप्त किया जाए। पहली और दूसरी योजनाओं के अनुभव ने सुझाया है कि ग्रामीण जल-व्यवस्था के तकनीकी डिज़ाइन और अनुमान तैयार करने तथा खर्च कम करने के लिए बहुत सावधानी बरतने की आवश्यकता है।

9. विभिन्न कार्यक्रमों के अन्तर्गत गांवों में पानी पहुंचाने के लिए तीसरी योजना में लगभग 67 करोड़ रु० की व्यवस्था है। इसमें 35 करोड़ रु० ग्राम-जल-आपूर्ति-कार्यक्रम के लिए, 16 करोड़ रु० 'स्वास्थ्य' के अन्तर्गत राज्यों के कार्यक्रमों के लिए, 12-13 करोड़ रु० सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के लिए और 3-4 करोड़ रु० पिछड़े वर्गों के विकास के कार्यक्रम के लिए शामिल हैं। ग्राम-जल-आपूर्ति-कार्यक्रम के लिए निश्चित राशि का मुख्य भाग इन क्षेत्रों के लिए है: (क) पिछड़े क्षेत्र, (ख) सामुदायिक विकास-कार्यक्रम से बाहर के क्षेत्र, (ग) पूर्व-विस्तार खंड, और (घ) वे खंड, जो सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत अपना पहला और दूसरा दौर पूरा कर चुके हैं। ग्राम-जल-आपूर्ति-कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ग्राम-स्तर पर देहातों में पानी पहुंचाने का प्रबन्ध करना है। नियम के रूप में, प्रति गांव पर 10,000 रु० की सीमा अपनानी होगी। जन-सहयोग 50 प्रतिशत तक होने की सम्भावना है, परन्तु दुर्गम या पिछड़े क्षेत्रों में यह अनुपात बदला जा सकता है। उन ग्राम-समूहों की योजनाएं, जहां पाइपों से पानी पहुंचाना है और कार्यक्रम के लिए इंजीनियरी-सरीखे कामों की आवश्यकता है, 'स्वास्थ्य' के अन्तर्गत आती हैं, परन्तु ऐसी योजनाओं के लिए भी ग्राम-जल-आपूर्ति-कार्यक्रम की 10,000 रु० प्रति गांव की दर में से कुछ धन दिया जा सकता है। ग्राम-जल-आपूर्ति-कार्यक्रम का संचालन पंचायत-समितियों और ग्राम-पंचायतों के द्वारा खंड-स्तर पर किया जाएगा और इसके लिए खंड-स्तर के संगठन की मार्फत धन, मुहय्या किया जाएगा। सुझाव है कि स्थानीय स्तर पर एक सामान्यतः सर्वसम्मत कार्यक्रम होना चाहिए, जिसके अन्तर्गत जल-व्यवस्था के लिए निर्धारित कुल राशि का प्रभावशाली ढंग से उपयोग हो सके। यह कार्यक्रम सावधानी से किए गए सर्वेक्षणों पर आधारित होना चाहिए।

10. गांवों में पानी पहुंचाने के साथ ही गांवों में सफाई के कार्यक्रम पर, विशेष रूप से गांवों के मल की उचित तरीके से व्यवस्था करने पर, अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। गांवों में शौचालयों के उचित डिज़ाइन और निर्माण की समस्याओं तथा इस कार्यक्रम के शिक्षा और संगठन-सम्बन्धी पहलुओं का हाल में ही अध्ययन किया गया था। कहा जा सकता है कि इस क्षेत्र में कार्य करने की मोटी रूपरेखा काफी हद तक तैयार कर ली गई है। शुरू में,

प्रगति यद्यपि बहुत धीमी रहेगी, तथापि यह जरूरी है कि हर विकास-खंड में ग्राम-स्वच्छता की समस्याओं के प्रति लोगों को जागरूक बनाने और स्कूलों, शिविरों, मकान-समूहों और जहां सम्भव हो, हर मकान के लिए अलग और स्वच्छ शौचालयों के उपयोग का प्रबन्ध करने का प्रयत्न किया जाए। यदि स्थानीय सफाई-निरीक्षक शौचालय तैयार करने के काम में भी प्रशिक्षित हों, तो शौचालयों का प्रचलन अधिक लोगों में करना आसान हो जाएगा। स्थानीय लोगों के योगदान से ऐसे शौचालय बहुत कम खर्च से तैयार किए जा सकते हैं। खंड-कार्यक्रम के रूप से इस पर काम शुरू करने से शीघ्र ही अधिक ठोस परिणाम निकलने की सम्भावना है। स्वास्थ्य-सम्बन्धी शिक्षा निस्सन्देह ग्राम-स्वच्छता के कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण पहलू है। साफ, दुर्गन्धरहित और सस्ते शौचालयों से होनेवाले लाभ और सुविधाएं स्पष्ट हैं। मानव-मल के खाद-गुणों की रक्षा करने तथा भूमि को अधिक उपजाऊ बनाने के लिए भी ये कम-आवश्यक नहीं हैं।

11. **शहरों में पानी की व्यवस्था :** शहरों में पानी की आपूर्ति के कार्यक्रमों पर केन्द्रीय और राज्य-सरकारों के ऋणों की सहायता से नगरपालिकाएं और नगर-निगम अमल कर रहे हैं। शहरों में पानी की आपूर्ति के कार्यक्रमों के लिए स्थानों के चुनाव के सम्बन्ध में जो प्राथमिकताएं दूसरी योजना में स्वीकार की गई थीं, वे तीसरी योजना में भी कायम रहेंगी। वे इस प्रकार है :

(1) नगरपालिका के वे क्षेत्र, जहां साफ पानी पहुंचाने की कोई व्यवस्था नहीं है;

(2) उन शहरी क्षेत्रों में पानी की वर्तमान व्यवस्था का विस्तार अथवा उसमें सुधार, जहां वर्तमान व्यवस्था अपर्याप्त है अथवा जनता के स्वास्थ्य की दृष्टि से खतरनाक है;

(3) तीर्थ-स्थान; और

(4) नलों-द्वारा पानी की व्यवस्थावाले क्षेत्र, जहां गन्दगी की सफाई तथा जन-स्वास्थ्य-सम्बन्धी खतरे दूर करने के जल-निकासी की नई व्यवस्था करना अथवा वर्तमान व्यवस्था में सुधार करना आवश्यक हो।

12. पहली दो योजनाओं में शहरों को पानी मुहय्या करने एवं सफाई के कार्यक्रमों का उद्देश्य डेढ़ करोड़ शहरी जनता को साफ पानी देना और जल-निकासी की व्यवस्था करना था। इनमें से 450 कार्यक्रम दूसरी योजना के अन्त तक पूरे हो जाएंगे और बाकी तीसरी योजना में जारी रहेंगे। पहली और दूसरी योजनाओं के कुछ मुख्य कार्यक्रम इस प्रकार हैं : बम्बई की वैतरणा-तन्सा-योजना; तथा दिल्ली, कलकत्ता, मद्रास, बंगलोर, अहमदाबाद, उत्तर-प्रदेश के कानपुर, आगरा, वाराणसी, इलाहाबाद और लखनऊ नगरों एवं आन्ध्रप्रदेश के विशाखा-पटनम नगर की जल-आपूर्ति और जल-निकासी-व्यवस्था में सुधार। इन कार्यक्रमों को पूरा करने में कुछ त्रुटियां रह गई। ये त्रुटियां मुख्यतः प्रशिक्षित कर्मचारियों के अभाव, अपर्याप्त संगठन एवं आयोजन, तथा सामग्रियों, विशेष रूप से गलवनाइज्ड लौह पाइप, पम्प सेट और सम्बद्ध उपकरणों की कमी के कारण रह गई थीं।

13. दूसरी योजना के शहरी जल-आपूर्ति-कार्यक्रमों के अनुभवों के परिणामस्वरूप तीन मुख्य सुझाव पेश किए जा सकते हैं। पहला, शहरी जल-आपूर्ति-योजनाओं को विशेष रूप से बड़ी योजनाओं को समुचित रूप से क्रमबद्ध करना ज़रूरी है, ताकि परियोजना के विभिन्न अंग सिलसिलेवार रहें और हर दौर में व्यय की गई राशि का कुछ लाभ मिलता जाए। विलम्ब रोकने

के लिए योजनाओं और अनुमानों की तकनीकी जांच-पड़ताल आवश्यक है। दूसरा, प्राप्त धनराशि का सबसे अधिक लाभकारी उपयोग करने की दृष्टि से यह उचित होगा कि बहुत-सी योजनाओं में थोड़ा-थोड़ा धन न लगाया जाए। इसके लिए समुचित सिद्धान्त तय कर के शहरी जल-आपूर्ति-योजनाओं का सावधानी से चुनाव करना जरूरी है। तीसरा सुझाव यह कि एक बार परियोजना के स्वीकृत होने पर सम्बद्ध नगरपालिका राज्य-सरकार-द्वारा निश्चित सीमा तक उसके निर्माण में न केवल खर्च का कुछ बोझ उठाए, बल्कि निर्माण के बाद उसके अनुरक्षण की भी ज़िम्मेदारी सम्भाले। सभी राज्यों में सुगठित जन-स्वास्थ्य-इंजीनियरी-विभागों की भी आवश्यकता है। ये विभाग विभिन्न जल-आपूर्ति-योजनाओं के इंजीनियरी और स्वास्थ्य के पहलुओं में आवश्यक समन्वय कर सकते हैं, चाहे वे योजनाएं राज्य-सरकारों की हों अथवा नगर-निगमों या नगरपालिकाओं की। जहां भी यह समन्वय नहीं हो सका, वहीं काम पूरा करने में देर हुई और अनुरक्षण भी सन्तोषजनक नहीं रहा। कानून-द्वारा स्थापित जल और मल-व्यवस्था-मंडल, जिन्हें अपने-अपने क्षेत्र में जल-आपूर्ति और मल-व्यवस्था की योजनाएं चलाने के लिए बनाया गया हो और जिन्हें ऋण जारी करने एवं शुल्क लगाने का भी अधिकार हो, जल-आपूर्ति-योजनाओं के कुशल प्रबन्ध और संचालन के लिए सबसे अधिक उपयुक्त संस्थाएं हैं।

14. तीसरी योजना के काल में शहरी जल-आपूर्ति तथा जल-निकासी-योजनाओं के लिए 89 करोड़ रु० की राशि निर्धारित की गई है। शहरी जल-आपूर्ति के लिए निश्चित रकम से एक सीमित संख्या में ही नई योजनाएं हाथ में ली जा सकती हैं। राज्यों-द्वारा आरम्भ की जानेवाली अन्य जल-आपूर्ति एवं जल-निकासी-योजनाओं के साथ-साथ निम्नलिखित महत्वपूर्ण योजनाएं भी शुरू अथवा पूरी की जाएंगी : मद्रास, जबलपुर, बंगलोर, मंगलोर, दिल्ली, कलकत्ता, बम्बई और उत्तरप्रदेश के कानपुर, आगरा, वाराणसी, इलाहाबाद और लखनऊ नगर, आन्ध्रप्रदेश की विशाखापटनम और मंजीरा जल-आपूर्ति-योजनाएं तथा केरल की एरणाकुलम-मत्तनचेरी एवं त्रिवेन्द्रम जल-आपूर्ति तथा जल-निकासी-योजनाएं।

15. जल-निकासी एवं मल-व्यवस्था के कार्यक्रमों के महत्व और प्रबल आवश्यकता तथा कस्बों और अन्य नगरों में मल की समुचित व्यवस्था पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। जल-आपूर्ति के मुकाबले उक्त सुविधाएं अभी पिछड़ी हुई हैं और यह आवश्यक है कि जल-निकासी और मल-व्यवस्था की योजनाएं भी जल-आपूर्ति के साथ ही चलाई जाएं और वे एक समन्वित कार्यक्रम का अंग बनें। इससे शहरों को जल-आपूर्ति-योजनाओं के परिणामस्वरूप मच्छरों की संख्या में वृद्धि तथा सफाई-व्यवस्था की अवनति से बचाया जा सकेगा। 1,00,000 से ऊपर की आबादीवाले नगरों में आवश्यक है कि जल-आपूर्ति-योजनाओं की अनुमानित लागत का 20 से 30 प्रतिशत तक हिस्सा मल-व्यवस्था पर खर्च किया जाए।

प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयां, अस्पताल और औषधालय

16. दूसरी योजना के अन्त तक अधिकांश विकास-खंडों में 2,800 प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयां स्थापित हो चुकेंगी। अस्पतालों और औषधालयों की संख्या सन् 1951 के 8,600 से बढ़ कर सन् 1961 में 12,600 हो जाएगी। इसी अवधि में अस्पतालों में रोगी-शय्याओं की संख्या 1,13,000 से बढ़ कर 1,85,600 हो जाएगी।

दूसरी योजना के दौरान प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयों के कार्य-संचालन से मालूम पड़ता है कि इस कार्यक्रम की प्रगति में निम्नलिखित बाधाएं रहीं : (1) स्वास्थ्य-कर्मचारियों की कमी, (2) इमारतों और कर्मचारियों के रहने के क्वार्टरों के निर्माण में देरी, (3) देहातों में सेवा के लिए आनेवाले विभिन्न वर्गों के कर्मचारियों के प्रशिक्षण की अपर्याप्त सुविधाएं। प्राथमिक-स्वास्थ्य इकाइयों को मजबूत करने की भी ज़रूरत महसूस की गई है। इसके साथ-साथ स्वास्थ्य-सेवाओं की सामान्य गतिविधियों में मलेरिया, तपेदिक, आदि की रोकथाम की सेवाओं का जल्दी-से-जल्दी समन्वय करने की भी आवश्यकता अनुभव की गई है। प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयों की कार्यकुशलता बढ़ाने के लिए उठाए जानेवाले अन्य कदम ये है : न्यूनतम आवश्यक कर्मचारियों की व्यवस्था, आवश्यक-प्रशिक्षण सुविधाओं की व्यवस्था तथा उस क्षेत्र की अन्य स्वास्थ्य-सेवाओं और प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयों के कार्यों का एकीकरण।

17. पर्याप्त संख्या में डाक्टर प्राप्त करने में कठिनाई महसूस की गई है। देहाती क्षेत्रों के लिए कर्मचारियों को आकृष्ट करने के लिए अनुकूल परिस्थितियां और वातावरण तैयार करने के उद्देश्य से निम्नलिखित उपाय सुझाए गए हैं :

(1) जैसा कि कुछ राज्यों में हो भी रहा है, शहरी और देहाती क्षेत्रों मे काम करने-वाले कर्मचारियों का एक ही वर्ग होना चाहिए। सेवा-नियमों मे यह शर्त शामिल कर दी जाए कि कर्मचारियों के वर्ग में आनेवाले हर व्यक्ति को एक निश्चित अवधि तक देहातों में काम करना पड़ेगा; इसके बाद ही वह अगला ऊंचा वेतन-क्रम पा सकेगा या योग्यता-अवरोध को पार कर सकेगा। जल्दी पद-वृद्धि करने, अग्रिम वेतन-वृद्धि करने तथा स्नातकोत्तर-प्रशिक्षण के लिए चुनाव करते समय देहातों में की गई सेवा की अवधि को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

(2) देहातों में काम करनेवाले चिकित्सा-कर्मचारियों को रहने के लिए मकान और अन्य सुविधाएं दी जानी चाहिए। उनके अतिरिक्त व्यय-भार (बच्चों की शिक्षा, आदि) का भी ध्यान रखा जाना चाहिए।

(3) प्रशिक्षणार्थी छात्रों को बड़ी संख्या में छात्रवृत्तियां दी जाएं, बशर्तेकि वे यह प्रतिज्ञा करें कि स्नातक बनने के बाद एक निश्चित न्यूनतम अवधि तक देहातों में काम करेंगे।

(4) शहरों और देहातों, दोनों स्थानों पर काम करनेवाले डाक्टरों की सेवाएं अस्पतालों और औषधालयों तथा स्कूल-स्वास्थ्य-सेवा के लिए आंशिक समय के लिए प्राप्त की जाएं।

(5) प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयों और उप-केन्द्रों के लिए चिकित्सा-अधिकारी के अलावा देशी चिकित्सा-प्रणालियों मे समुचित रूप से प्रशिक्षित स्नातकों की भी सेवाएं प्राप्त की जाएं।

18. प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयों का स्तर बनाए रखने और उन्हें विशेष सुविधाओं का लाभ पहुंचाते रहने के लिए यह ज़रूरी है कि इन इकाइयों को ज़िला के और अन्य विशिष्ट अस्पतालों से सम्बद्ध किया जाए। फिलहाल विशेष सेवाएं बड़े नगरों के ही अस्पतालों में उपलब्ध है। छोटे कस्बों और गावों की जनता को इन सेवाओं का लाभ पहुंचाने के लिए

यह ज़रूरी है कि जिला और सब-डिवीज़न के अस्पतालों में रोगी-शय्याओं की संख्या बढ़ाई जाए और वहां एक्स-रे, खून, थूक, आदि की परीक्षा, चिकित्सा, आपरेशन आदि तथा प्रसूति-सम्बन्धी विशेष सुविधाएं उपलब्ध की जाएं। अस्पतालों में शय्याओं की संख्या में वृद्धि के अतिरिक्त, बाहरी रोगियों की चिकित्सा के विभागों को बहुरोगी-अस्पतालों का रूप दिया जाए, जिससे बाहरी विभाग में ही तकनीकी साज़-सामान उपलब्ध हो और चिकित्सा का भी प्रबन्ध हो सके।

19. तीसरी योजना में 2,000 नए अस्पताल और औषधालय खोलने तथा 54,500 अतिरिक्त शय्याओं का प्रबन्ध करने का लक्ष्य है।

संक्रामक रोगों की रोकथाम

20. तीसरी योजना में मलेरिया, फाइलेरिया, तपेदिक, चेचक, यौन रोग, कुष्ठ रोग, हैज़ा और गिल्लड़-जैसे संक्रामक रोगों की रोकथाम का कार्य बड़े पैमाने पर चलाया जाएगा। मलेरिया और चेचक के उन्मूलन पर विशेष बल दिया जाएगा। संक्रामक रोगों की रोकथाम पर पहली योजना में 23 करोड़ रु० तथा दूसरी योजना में 64 करोड़ रु० खर्च किए गए। तीसरी योजना के कार्यक्रमों पर कुल 70 करोड़ रु० खर्च किए जाएंगे।

21. **मलेरिया-उन्मूलन :** पहली दो योजनाओं में किए गए मलेरिया-निरोधक उपायों से इस रोग की भीषणता में बहुत कमी हुई है : सन् 1952-53 में मलेरिया ने साढ़े सात करोड़ लोगों पर आक्रमण किया था, जब कि सन् 1960-61 में यह संख्या घट कर 1 करोड़ रह गई। बच्चों के तिल्ली बढ़ने की दर सन् 1956 में 7.7 प्रतिशत थी, जो सन् 1960 में गिर कर 1.4 प्रतिशत रह गई। इसी प्रकार, जिन बच्चों के रक्त में मलेरिया के कीटाणु पाए गए, उनकी दर 1.8 प्रतिशत से 0.2 प्रतिशत रह गई तथा पशुओं के मामले में यह दर 0.7 प्रतिशत से घट कर 0.1 प्रतिशत रह गई। दूसरी योजना के अन्त में 390 मलेरिया-उन्मूलन-इकाइयां काम कर रही थीं। साथ ही, निगरानी की कार्रवाई भी चालू कर दी गई है और ज्यों-ज्यों तीसरी योजना आगे बढ़ेगी, त्यों-त्यों ये इकाइयां कम कर दी जाएंगी और आवश्यकता पड़ने पर, विशेष रूप से सीमा-क्षेत्रों में, केवल थोड़ी-सी इकाइयां काम करने के लिए रख ली जाएंगी।

22. **फाइलेरिया की रोकथाम :** फाइलेरिया रोग विशेष रूप से तटवर्ती क्षेत्रों में पाया जाता है। दूसरी योजना की अवधि में किए गए सर्वेक्षण से पता चला है कि संक्रामक क्षेत्रों में 4 करोड़ व्यक्तियों को इस रोग की आशंका है। इसकी रोकथाम के उपायों में सामूहिक रूप से दवा-वितरण, मच्छर-नाशक कार्रवाई और लारवा-नाशक कार्रवाई शामिल हैं। फाइलेरिया मुख्यतः एक शहरी समस्या है तथा इसके निरोध के लिए प्रभावशाली दीर्घकालीन उपाय सफाई का समुचित प्रबन्ध है। सन् 1956 में फाइलेरिया-नियन्त्रण-केन्द्रों की संख्या 11 थी, जो 1961 में बढ़ कर 48 हो गई। तीसरी योजना में फाइलेरिया-निरोधक उपाय जारी रहेंगे, परन्तु इस रोग से ग्रस्त शहरों में जल-निकासी-कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी जाएगी।

23. **चेचक :** चेचक को भारत में एक महामारी का स्वरूप प्राप्त है और अन्य देशों में भी इसके फैलने का बराबर खतरा रहता है। टीके लगाने के आन्दोलनों के कारण चेचक रोग

से मरनेवालों और बदसूरत हो जानेवालों की संख्या में कमी हुई है, परन्तु वर्ष के कुछ मौसमों में चेचक का आक्रमण अब भी हो जाता है तथा 5-6 वर्ष में एक बार यह महामारी के रूप में प्रकट हो जाती है।

चेचक ऐसा रोग है, जिसे रोकना सम्भव है। टीका लगाना ही इस रोग के लिए सबसे बड़ा निरोधक अस्त्र है। इसलिए तीसरी योजना में यह तय किया गया है कि चेचक रोग का समूल नाश करने का प्रयत्न किया जाए। सन् 1960-61 में सभी राज्यों में परीक्षण के लिए प्रारम्भिक योजनाएं शुरू की गई थीं। तीसरी योजना के कार्यक्रमों की मुख्य बातें ये होंगी : (1) टीके की दवा के उत्पादन में वृद्धि, (2) टीका लगानेवाले कर्मचारियों की भर्ती और प्रशिक्षण, (3) अगली बार महामारी के रूप में चेचक फैलने से पहले सारी आबादी को टीका लगाने का काम। टीके की दवा का उत्पादन बढ़ाने की कार्रवाई शुरू भी हो चुकी है।

24. **तपेदिक :** चिकित्सा-सम्बन्धी भारतीय परिषद् के तत्वावधान में हाल में ही नमूने के तौर पर किए गए सर्वेक्षण से पता चला है कि देश में फेफड़ों की तपेदिक के रोगियों की संख्या प्रायः 50 लाख है, जिसमें से 15 लाख को छूतवाली तपेदिक है। यह भी पता चला है कि तपेदिक से मरनेवालों की संख्या चाहे कम हो गई हो, उससे ग्रस्त रोगियों की दर शहरों और देहातों, दोनों में प्रायः उतनी ही है। दूसरी योजना में करीब 12 करोड़ लोगों की बी० सी० जी० का टीका लगा कर जांच की गई थी। तपेदिक के औषधालयों की संख्या सन् 1956 के 160 से बढ़ा कर सन् 1961 में 220 कर दी गई। तपेदिक-निरोधक तरीकों का प्रदर्शन करने तथा उनका प्रशिक्षण देने के लिए 10 केन्द्र स्थापित किए गए। तपेदिक के रोगियों के लिए शय्याओं की भी संख्या बढ़ा कर सन् 1956 के 22,000 की तुलना में सन् 1961 में 26,500 कर दी गई। सन् 1959 में बंगलोर में एक राष्ट्रीय तपेदिक-प्रशिक्षण-संस्थान की स्थापना की गई।

तीसरी योजना में बी० सी० जी० का टीका लगाने का आन्दोलन बढ़ाया जाएगा तथा 10 करोड़ और व्यक्तियों को टीके लगाए जाएंगे। औषधालयों की संख्या भी 220 से बढ़ाकर 420 कर दी जाएगी। इसके अतिरिक्त, देहाती क्षेत्रों में सेवा के लिए 25 चलते-फिरते औषधालयों का प्रबन्ध किया जाएगा, जिनमें एक्स-रे की छोटी फिल्में लेने तथा खून-थूक आदि के नमूने लेने एवं साधारण परीक्षण करने के लिए एक प्रयोगशाला की व्यवस्था की जाएगी। तपेदिक-सम्बन्धी प्रदर्शन और प्रशिक्षण के लिए 5 और केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। तपेदिक के रोगियों के लिए 3,500 अतिरिक्त शय्याओं का प्रबन्ध किया जाएगा, जिसके फलस्वरूप कुल रोगी-शय्याओं की संख्या सन् 1966 तक 30,000 हो जाएगी। रोग-मुक्ति के बाद की देखभाल तथा रोगमुक्त व्यक्तियों के पुनर्वास के लिए 7 केन्द्रों की स्थापना की जाएगी।

25. **यौन रोग :** देश में सामान्यतः व्याप्त यौन रोगों में सुज़ाक और गरमी प्रमुख हैं। नगरों, बन्दरगाहों, औद्योगिक क्षेत्रों और हिमालय के अंचल के क्षेत्रों में यह रोग अधिक है। शहरीकरण और उद्योगीकरण के कारण इन रोगों के और अधिक फैलने की आशंका है। दूसरी योजना के अन्त तक इन रोगों की रोकथाम के लिए 75 ज़िला-औषधालयों और 8 मुख्यालय-औषधालयों की स्थापना की जा चुकी थी। शीघ्र निदान और उपचार के कारगर तरीकों के इस्तेमाल से आबादी में छूत लगने के कारणों को रोकने में काफी सफलता मिली है। तीसरी योजना में 100 और ज़िला-औषधालय तथा 6 और

मुख्यालय-औषधालय स्थापित किए जाएंगे और रोग की रोकथाम के लिए प्रोकेन एल्युमीनियम मोनोसटियरेट (पी० ए० एम०) का मुफ्त वितरण किया जाएगा ।

26. **कुष्ठ रोग :** देश में कुष्ठ रोग से पीड़ित लोगों की संख्या लगभग 20 लाख है। इनमें से 20-25 प्रतिशत का रोग तो छूत से फैलनेवाला है। रोग फैलने की घटनाएं 0.5 प्रतिशत से 5 प्रतिशत तक हैं। आधुनिक दवाओं, विशेष रूप से सल्फोन, की सहायता से बड़े पैमाने पर उपचार के व्यापक और सघन उपायों से कोढ़ पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। दूसरी योजना के अन्त तक कोढ़ के अध्ययन और उपचार-सम्बन्धी 135 केन्द्रों की स्थापना की जा चुकी थी। 70 लाख व्यक्तियों का सर्वेक्षण हो चुका था और 90,000 व्यक्तियों का उनके घरों में ही उपचार किया गया था। चिंगलपट-स्थित केन्द्रीय कुष्ठ रोग-शिक्षण और अनुसन्धान-संस्थान में इस रोग के सम्बन्ध में विभिन्न समस्याओं पर अनुसन्धान होता है और कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है। सन् 1958 में कुष्ठ रोग-नियन्त्रण-कार्यक्रमों की समीक्षा के लिए स्थापित कुष्ठ रोग-सलाहकार-समिति ने भारत में कोढ़-नियन्त्रण-कार्य बढ़ाने के लिए अनेक सिफारिशें की हैं। कुछ सिफारिशें ये हैं : इस क्षेत्र में काम करनेवाले कर्मचारियों को विशेष भत्ता और रहने के लिए मुफ्त मकान देना, सेवा-नियमों में सुधार करना और उनके लिए केन्द्रीकृत प्रशिक्षण-कार्यक्रम चलाना ।

तीसरी योजना में कुष्ठ रोग पर नियन्त्रण के कार्यक्रम में 100 और नियन्त्रण-इकाइयों की स्थापना, सर्वेक्षण, शिक्षण और उपचार-केन्द्रों की स्थापना तथा चालू कार्यक्रमों को जारी रखने की व्यवस्था है। इस कार्यक्रम में अनेक स्वैच्छिक संस्थाओं तथा समाज-सेवियों का भी सहयोग लिया जाएगा। महामारी के क्षेत्रों में हर अस्पताल और प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाई को कोढ़-नियन्त्रण-कार्य में केन्द्र-बिन्दु के रूप में गठित किया जाएगा ।

27. **हैज़ा :** बहुत लम्बे समय से भारत में हैज़ा रोग बुरी तरह फैला हुआ है। हाल में ही एक विशेषज्ञ-समिति ने अपनी रिपोर्ट में बताया था कि पश्चिम-बंगाल, उड़ीसा, आन्ध्रप्रदेश और मद्रास की मुख्य नदियों के डेल्टा-क्षेत्र में पांच महामारी-क्षेत्र हैं, जिनमें से पश्चिम-बंगाल और उड़ीसा के क्षेत्र अधिक गम्भीर हैं। हैज़ा की महामारी को बार-बार भड़कने से रोकने के लिए इन क्षेत्रों को समाप्त करना होगा। इसके लिए वहां की आबादी को पीने का शुद्ध पानी पहुंचाना होगा और मल-निकासी-व्यवस्था के आधुनिक तरीके अपनाने होंगे। व्यावहारिक उपाय यह है कि उन शहरों में पहले रोकथाम के उपाय किए जाएं, जहां हैज़ा जल्दी फैलता है। देहातों की बारी बाद में आ सकती है, क्योंकि वहां की आबादी घनी न होने से रोग फैलने की सम्भावना कम है। भारत में सबसे बड़ा हैज़ा-केन्द्र बृहत्तर कलकत्ता है, जो पश्चिम-बंगाल के मुख्य हैज़ा-क्षेत्र के मध्य में है। नदी का पानी साफ करने की वर्तमान व्यवस्था बहुत पुरानी हो चुकी है, इसलिए उसका काफी विस्तार करना चाहिए। इस समय नगर का केवल दो-तिहाई हिस्सा ऐसा है, जहां भूगर्भ-नालियों द्वारा मल-निकासी की व्यवस्था है। जल-आपूर्ति, जल-निकासी और मल-निकासी-व्यवस्था में सुधार और उनके आधुनिकीकरण के सम्बन्ध में ध्यानपूर्वक आयोजन करना और तुरन्त कार्य करना बहुत ज़रूरी है। विश्व-स्वास्थ्य-संगठन की ओर से एक दल ने हाल में ही कलकत्ता-क्षेत्र की जल-आपूर्ति एवं सफाई की स्थिति का अध्ययन किया था और अनेक कार्रवाइयां हाल में ही शुरू की गई हैं ।

28. हैजे को जड़ से खत्म करने के लिए जल-आपूर्ति और सफाई की व्यवस्था में पहली और दूसरी योजनाओं के मुकाबले कहीं अधिक काम करना आवश्यक है। तीसरी योजना में सुरक्षित पानी की आपूर्ति का बड़ा कार्यक्रम अमल में लाया जाएगा। हैज़ाग्रस्त राज्यों में इस कार्यक्रम का बड़ा हिस्सा महामारी के क्षेत्रों के लिए सुरक्षित रखना चाहिए। इन क्षेत्रों के लिए अलग से विशेष योजनाएं भी फौरन ही तैयार कर लेनी चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर योजना के अन्तर्गत प्राप्त धनराशि में से कुछ और लेकर उक्त कार्यक्रम पूरे करने चाहिए। कोई कारण नहीं है कि तीसरी योजना के दौरान हैज़े की तीव्रता काफी कम न हो जाएगी और चौथी योजना के अन्त तक इसका पूरा उन्मूलन नहीं हो जाएगा।

29. **गिल्लड़ रोग :** हिमालय के अंचल के क्षेत्रों में गिल्लड़ रोग बहुत फैला हुआ है। दूसरी योजना की अवधि में भारत-सरकार ने संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय बाल-संकट-कोश के सहयोग से राजस्थान की सांभर झील के निकट एक कारखाने की स्थापना की, जहां पंजाब के रोगग्रस्त जिलों में वितरण के लिए आयोडाइज्ड/आयोडेटेड साल्ट (आयोडिनकृत नमक) बनाने का काम शुरू किया गया। इस कारखाने में 27 लाख व्यक्तियों—खतरे मे पड़ी जनता का एक-तिहाई हिस्सा—के लिए आयोडिनकृत नमक तैयार किया जा सकता है। गिल्लड रोग का उन्मूलन करने के लिए आयोडिनकृत नमक का उत्पादन बढ़ाना होगा तथा दो और कारखानों की स्थापना करनी होगी।

30. तीसरी योजना में ट्रेकोमा (रोहा रोग) के उपचार और नियन्त्रण के लिए भी व्यवस्था की गई है। तीसरी योजना में कैंसर के तुरन्त निदान और इस क्षेत्र में अनुसन्धान की सुविधाओं का विस्तार किया जाएगा।

डाक्टरी शिक्षा और अनुसन्धान

31. पहली दो योजनाओं में मेडिकल (चिकित्सा-सम्बन्धी) और पैरा-मेडिकल (सहायक चिकित्सा-सम्बन्धी) कर्मचारियों के प्रशिक्षण की सुविधाओं के विस्तार-सम्बन्धी आंकड़े तालिका-संख्या 3 में दिए गए हैं। तीसरी योजना में मेडिकल कालेजों और संलग्न अस्पतालों में प्रशिक्षण की सुविधाओं का और भी विस्तार किया जाएगा तथा 18 नए मेडिकल कालेज खोले जाएंगे, जिससे मेडिकल कालेजों की कुल संख्या 75 हो जाएगी। सामाजिक और निरोधक चिकित्सा के अध्ययन के लिए सभी मेडिकल कालेजों में अलग विभागों की स्थापना की जाएगी। आल इंडिया इन्स्टीट्यूट आफ मेडिकल साइंसेज़ के विस्तार का कार्यक्रम पूरा किया जाएगा और कई मेडिकल कालेजों में कतिपय विभागों का दर्जा बढ़ाया जाएगा। साथ ही, स्नातकोत्तर-प्रशिक्षण तथा अनुसन्धान की व्यवस्था की जाएगी।

32. पहली दो योजनाओं में डाक्टरों के प्रशिक्षण की सुविधाओं का विस्तार आबादी की वृद्धि के अनुपात के साथ मुश्किल से रह सका है। सन् 1951-61 के दशक में आबादी और डाक्टर का अनुपात 6,000 : 1 का रहा है। तीसरी योजना के कार्यक्रमों के बाद भी यही अनुपात बना रहेगा, क्योंकि कार्यक्रम बनाते समय वर्तमान मेडिकल कालेजो में शिक्षकों की कमी को भी ध्यान में रखना पड़ता है। देहातों में डाक्टरों की कमी और उसे दूर करने के लिए आवश्यक उपायों का पहले ही उल्लेख कर दिया गया है। एक नया उपाय यह भी है कि जल्दी ही 'मेडिकल सहायकों' के प्रशिक्षण के लिए अल्पकालीन पाठ्यक्रम चालू किया जाए। प्रशिक्षणार्थी गांवो में प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयों में 3 से 5 वर्ष तक काम करें,

जिसके बाद उन्हें सामान्य मेडिकल योग्यता प्राप्त करने और लोकसेवा-क्षेत्र में कार्य करते रहने के लिए विशेष सुविधाएं दी जाएं ।

33. **स्नातकोत्तर-डाक्टरी शिक्षा :** नए मेडिकल कालेजों की स्थापना और वर्तमान कालेजों के तेज़ी से विस्तार के कारण शिक्षकों की मांग बढ़ जाएगी । छात्रों की एक बड़ी संख्या को विभिन्न विषयों में स्नातकोत्तर-स्तर तक प्रशिक्षण देना होगा, जिससे वे मेडिकल कालेजों में अध्यापन का काम सम्भाल सकें । स्नातकोत्तर-शिक्षा की वर्तमान सुविधाएं प्रति-वर्ष 750 छात्रों के लिए ही पर्याप्त हैं और 250 छात्र प्रतिवर्ष शिक्षा पूरी करके निकल सकते हैं । अनुमान है कि वर्तमान मेडिकल कालेजों में फिलहाल 2,000 शिक्षकों की कमी है । इन कालेजों के सम्भावित विस्तार और नए मेडिकल कालेजों की स्थापना के कारण 2,500 शिक्षकों की ज़रूरत पड़ेगी । इसका अर्थ है कि तीसरी योजना-काल में कुल 4,500 शिक्षकों की आवश्यकता होगी । तीसरी योजना में स्नातकोत्तर-शिक्षा की सुविधाओं का विस्तार करने के लिए 3.5 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है । इस कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता दी गई है और आशा है कि योजना के आरम्भिक वर्षों में ही यह पूरा हो जाएगा ।

34. **दन्त-शिक्षा :** फिलहाल देश में कुल 10 दन्त-शिक्षा कालेज हैं, जिनमें प्रतिवर्ष 280 छात्रों के प्रवेश की व्यवस्था है । तीसरी योजना में 4 नए कालेज स्थापित किए जाएंगे और कुछ वर्तमान कालेजों का विस्तार किया जाएगा । इस प्रकार, वार्षिक प्रवेश-संख्या 400 हो जाएगी । तीसरी योजना में दन्त-औषधालय और दन्त-चिकित्सा-सम्बन्धी अनु-सन्धान के लिए भी व्यवस्था की गई है ।

35. **चिकित्सा-सम्बन्धी अनुसन्धान :** भारतीय चिकित्सा-अनुसन्धान-परिषद् की सिफारिशों के आधार पर दूसरी योजना के लिए अनुसन्धान-कार्यक्रम तैयार किए गए थे । इन कार्यक्रमों में संक्रामक रोगों, विशेष रूप से तपेदिक, ट्रेकोमा, कुष्ठ रोग, हैज़ा और कीटाणुजन्य अन्य रोगों के सम्बन्ध में अनुसन्धान-कार्य सम्मिलित हैं । पोषण-सम्बन्धी अव्यवस्था और उससे होनेवाले रोगों पर विशेष ध्यान दिया गया है । उद्योगों की बेकार चीज़ों तथा कल-कारखानों की गन्दगी से नदियों का पानी दूषित होने से बचाने के तरीकों का विकास करने के लिए भी अध्ययन किए गए । कीटाणुजन्य रोगों के सम्बन्ध में भी अनुसन्धान-कार्य शुरू किया गया है । तीसरी योजना में चिकित्सा-सम्बन्धी अनुसन्धान-कार्यक्रमों का उल्लेख और विवरण वैज्ञानिक और टेक्नोलाजी-विषयक अनुसन्धान-सम्बन्धी अध्याय में दिया गया है । सफाई और संक्रामक रोगों की समस्याओं के अध्ययन को प्राथमिकता दी जाएगी । विभिन्न क्षेत्रों में पर्याप्त संख्या में अनुसन्धान-कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाएगा । देशी औषध पर भी अनुसन्धान-कार्य तेज़ किया जाएगा ।

अधीनस्थ कर्मचारियों का प्रशिक्षण

36. पहली योजना के आरम्भ से अब तक नर्सों और अन्य अधीनस्थ स्वास्थ्य-कर्मचारियों (दाइयों, आदि) के प्रशिक्षण की सुविधाओं के विस्तार के लिए बराबर प्रयत्न होते रहे हैं । फिर भी, उनकी भारी कमी बराबर बनी हुई है । तालिका-संख्या 3 में अब तक की प्रगति तथा तीसरी योजना के लक्ष्य-सम्बन्धी आंकड़े दिए गए हैं । तीसरी योजना में इस समस्या को निम्नलिखित ढंग से हल करने का इरादा है ।

(1) **नर्सें :** नर्सों के लिए काम की स्थिति सुधारने और बड़ी संख्या में स्त्रियों को इस पेशे की ओर आकृष्ट करने के लिए सुझाव रखा गया है कि हर राज्य में विशेष नर्सिंग-सेवा हो तथा स्वास्थ्य-सेवाओं के निदेशक को परामर्श एवं सहायता देने के लिए नर्स सुपरिन्टेंडेंट की नियुक्ति की जाए। अस्पतालों में योग्य और अनुभवी नर्सिंग सिस्टरों की भी नियुक्ति होनी चाहिए।

(2) **सहायक नर्स / मिडवाइफें :** सहायक नर्स / मिडवाइफों को 2 वर्ष का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसका उद्देश्य यह है कि ये प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयों में और अन्यत्र मिडवाइफों का स्थान ले लें। तीसरी योजना में इनके प्रशिक्षण की सुविधाएं काफी बढ़ाई जाएंगी।

(3) **स्वास्थ्य-निरीक्षक :** वर्तमान कार्यक्रमों में स्वास्थ्य-निरीक्षकों को प्रशिक्षण देने-वाले संस्थानों की संख्या 30 से बढ़ा कर 50 करने की योजना है; वार्षिक प्रवेश-संख्या 650 से बढ़ा कर 850 की जाएगी। स्वास्थ्य-निरीक्षकों की संख्या में वर्तमान कमी तथा देहाती स्वास्थ्य-सेवाओं में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका को देखते हुए यह आवश्यक है कि उनके प्रशिक्षण की सुविधाएं काफी बढ़ाई जाएं। यह सुझाव है कि राज्यों में प्रशिक्षण-कार्यक्रमों पर पुर्नविचार किया जाए तथा उनमें स्वास्थ्य-निरीक्षकों और ग्राम-स्वास्थ्य-कार्यक्रमों को अमल में लानेवाली अन्य महिला कार्यकर्ताओं के सम्बन्ध में विशेष व्यवस्था की जाए।

(4) **दाइयां :** गांवों में बच्चों की पैदाइश का काम प्रायः दाइयों के ही ज़िम्मे रहता है। परन्तु दाइयां प्रशिक्षण-प्राप्त नहीं होती। योजना के कार्यक्रम का उद्देश्य इन दाइयों को प्रशिक्षण देना तथा मोटी बातों की जानकारी कराना है, जिससे वे गांवों में पहले से अधिक अच्छी तरह कार्य कर सकें। योजना में ऐसे प्रशिक्षण के लिए व्यवस्था की जा रही है।

37. **जन-स्वास्थ्य-इंजीनियर :** तीसरी योजना में जन-स्वास्थ्य-इंजीनियरों, अधीनस्थ कर्मचारियों तथा जलव्यवस्था का संचालन करनेवाले कर्मचारियों के प्रशिक्षण की सुविधाओं का विस्तार किया जा रहा है। शहरी और ग्रामीण जल-आपूर्ति-व्यवस्था के कार्यक्रमों के लिए इन वर्गों के कर्मचारियों की मांग और बढ़ गई है।

योजना में सफाई-निरीक्षकों, प्रयोगशालाओं के तकनीकी जानकारों, किरण-वक्रता से सम्बन्धित कर्मचारियों, चश्मे बनानेवालों, रेडियोग्राफरों तथा कुष्ठ रोग, यौन रोग और तपेदिक की चिकित्सा के क्षेत्र में काम करनेवालों के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था है—स्वास्थ्य-सम्बन्धी आंकड़े रखने का प्रशिक्षण देने की सुविधाओं का भी प्रबन्ध किया जा रहा है।

38. **औषध-निर्माता (फारमासिस्ट्स) :** औषध-निर्माताओं की शिक्षा का नियमन सन् 1948 के फारमेसी-अधिनियम के अनुसार किया जाता है। यह अधिनियम अस्पतालों और औषधालयों में काम करनेवाले औषध-निर्माताओं के प्रशिक्षण का स्तर ऊंचा करने के उद्देश्य से बनाया गया था। आजकल सामान्यतः दवाएं बनाने के लिए नियुक्त कम्पाउंडरों के स्थान पर प्रशिक्षित औषध-निर्माताओं की नियुक्ति करना एक लम्बी प्रक्रिया है। फिर भी, तीसरी योजना में आवश्यक अतिरिक्त कर्मचारियों की संख्या में से, जो 6,000 है, अधिक-से-अधिक संख्या में औषध बनानेवाले प्रशिक्षित किए जाएंगे। वर्तमान योजनाओं

के अनुसार 2,000 औषध-निर्माताओं की कमी अनुभव होती है, जो मुख्यतः वर्तमान प्रशिक्षण- संस्थाओं के विस्तार से दूर की जा सकती है।

स्वास्थ्य-शिक्षा

39. अपने व्यापक अर्थों में स्वास्थ्य-शिक्षा ही एक सफल जन-स्वास्थ्य-कार्यक्रम की नींव है। जैसा कि पहली योजना में बताया गया था, स्वच्छता के सामान्य नियमों का अज्ञान और उनका पालन करने में लापरवाही ही अस्वास्थ्य का मुख्य कारण है और स्वास्थ्य-शिक्षा के अतिरिक्त कोई भी एक चीज ऐसी नहीं है, जो व्यय-राशि के अनुपात में अधिक लाभ दे सकती हो। स्वास्थ्य-शिक्षा के कार्यक्रम क्रियान्वित करने के लिए स्वास्थ्य-सेवाओं के महानिदेशालय में सन् 1956 में केन्द्रीय स्वास्थ्य-शिक्षा-ब्यूरो की स्थापना की गई थी। अनेक राज्यों ने भी ऐसे ब्यूरो स्थापित किए हैं। स्वास्थ्य-शिक्षा के मुख्य पहलू ये हैं : निजी स्वच्छता, पास-पड़ोस की सफाई, संक्रामक रोगों की रोकथाम, उचित पोषण, व्यायाम, विवाह-सम्बन्धी ज्ञान, प्रजनन से पहले और बाद की स्वास्थ्य-रक्षा तथा प्रसूति और शिशु-स्वास्थ्य, आदि। स्वास्थ्य शिक्षा को राष्ट्रीय कार्यक्रम के तौर पर चलाना चाहिए तथा सामुदायिक विकास-खंडों में सामाजिक शिक्षा-कार्य में इस पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। तीसरी योजना में स्वास्थ्य-शिक्षा के प्रशिक्षण, स्वास्थ्य-सम्बन्धी प्रदर्शन और प्रचार की सुविधाएं बढ़ाने की व्यवस्था की गई है। शहरों और गांवों, दोनों में वर्तमान स्वास्थ्य-शिक्षा के तौर-तरीकों में परिवर्तन की गुंजायश है, जिससे व्यापक स्वास्थ्य-शिक्षा में उन्हें ठोस आधार बनाया जा सके।

स्वास्थ्य-बीमा

40. कर्मचारी-राज्य-बीमा-योजना के अन्तर्गत औद्योगिक मजदूरों के लिए तथा अंशदायी स्वास्थ्य-सेवा-योजना के अन्तर्गत दिल्ली-स्थित केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के लिए स्वास्थ्य और चिकित्सा-सम्बन्धी सुविधाएं उपलब्ध कर के स्वास्थ्य-बीमा की ओर एक कदम उठाया गया है। इस अनुभव के प्रकाश में केन्द्रीय और राज्य-सरकारों को इसी प्रकार की अन्य योजनाएं चालू करनी चाहिए, जिससे कुछ काल बाद आबादी के बड़े भाग के लिए एक अंशदायी स्वास्थ्य-बीमा की एक बहुमुखी व्यवस्था शुरू हो जाए। इस सम्बन्ध में विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करने का इरादा है, जिससे योजना पर अमल के लिए क्रमिक कार्य-क्रम तैयार किया जा सके।

स्कूली छात्रों का स्वास्थ्य

41. दूसरी योजना के अन्त में 4 करोड़ 40 लाख बच्चे स्कूलों में पढ़ रहे थे; तीसरी योजना में इस संख्या में 2 करोड़ और वृद्धि होने की सम्भावना है। तीसरी योजना के अन्त तक 6 से 11 वर्ष तक की वय के स्कूली छात्रों की संख्या 5 करोड़ होगी। बच्चों की इतनी बड़ी संख्या के स्वास्थ्य की देखभाल अपने-आप में तो महत्वपूर्ण है ही, सारे समाज के स्वास्थ्य का एक महत्वपूर्ण पहलू भी है। स्कूल-स्वास्थ्य-समिति ने एक वर्ष पूर्व अपनी अन्तरिम रिपोर्ट पेश की थी, जिसमें बताया गया था कि समुचित पोषण न मिलने और अन्य निरोधक उपाय न होने से स्कूली छात्रों में रोगों से पीड़ित होनेवालों की संख्या बहुत अधिक है। इसीलिए सुझाव रखा गया है कि राज्यों की तीसरी योजना के लिए स्वास्थ्य-कार्यक्रम तैयार करते समय स्कूलों में स्वास्थ्य की देखभाल के लिए कुछ न्यूनतम सेवाओं का निश्चित

रूप से प्रबन्ध होना चाहिए। वे सेवाएं इस प्रकार हैं : (1) स्कूलों में पीने का साफ पानी तथा सफाई, आदि की व्यवस्था, (2) डाक्टरी जांच की व्यवस्था, (3) विकास-खंडों में प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाई के सहयोग से स्कूल-काल के बाद भी स्वास्थ्य की देखभाल की व्यवस्था, तथा (4) शिक्षकों को स्वास्थ्य-शिक्षा देने का प्रबन्ध।

बच्चों के स्वास्थ्य और पोषण के ख्याल से, विशेष रूप से गरीब परिवारों के बच्चों के लिए स्कूलों में दोपहर का भोजन देने के महत्व को देखते हुए, इस कार्यक्रम को धीरे-धीरे, ज्यों-ज्यों स्थानीय जनता इस कार्यक्रम में समुचित योग देने लगे, बढ़ाना चाहिए। 'शिक्षा' के अध्याय में इसके सम्बन्ध में उल्लेख किया जा चुका है। कालान्तर में यह कार्यक्रम स्कूली छात्रों की कुल संख्या के लिए, विशेष रूप से छोटे बच्चों के लिए, लागू हो जाना चाहिए।

मातृ और शिशु-स्वास्थ्य

42. दूसरी योजना के अन्त तक देश में लगभग 4,500 प्रसूति और शिशु-कल्याण-केन्द्र थे। प्रत्येक केन्द्र 10,000 से 25,000 की आबादी की सेवा कर रहा था। इनमें से एक-तिहाई केन्द्र शहरी इलाकों में हैं। पहली दो योजनाओं में जच्चाओं की देखभाल की व्यवस्था में हुए सुधार के परिणामस्वरूप, जच्चाओं की मृत्यु-दर, जो सन् 1938 में जीवित शिशु-जन्म पर 20 प्रति हज़ार थी, घट कर 12.4 प्रति हजार रह गई। बच्चों की पैदाइश के बाद जच्चाओं में खून की कमी की घटनाएं भी उन क्षेत्रों में बहुत घट गई है, जहां सेवाएं भली भांति स्थापित हैं; शिशु-मृत्यु-दर में भी बहुत कमी हुई है। दूसरी योजना में देहातों में प्रसूति और शिशु-कल्याण-सेवाएं ग्राम स्वास्थ्य-सेवा का अभिन्न अंग बन गईं। अधिकांश राज्यों में प्रसूति और शिशु-कल्याण-ब्यूरो स्थापित कर दिए गए हैं। दूसरी योजना में बाल-चिकित्सा की प्रशिक्षण-व्यवस्था में भी सुधार के लिए कदम उठाए गए। हाल के वर्षों में मेडिकल कालेजों में बाल-चिकित्सा की सुविधाओं का विस्तार किया गया है। प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों-द्वारा मुहय्या की जानेवाली प्रसूति और शिशु-कल्याण-सेवाओं को कल्याण-विस्तार-परियोजनाओं और स्वैच्छिक संगठनों की सेवाओं से पूरा किया जाता है।

तीसरी योजना में इरादा है कि प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयों से सम्बद्ध प्रसूति और शिशु-कल्याण-सेवाएं ज़िला-अस्पतालों की विस्तृत सुविधाओं से जोड़ दी जाएं। प्रसूति और शिशु-स्वास्थ्य के क्षेत्र में कार्य करनेवालों के लिए अल्पकाल के अभ्यासक्रम चलाए जाएंगे।

मानसिक स्वास्थ्य

43. केन्द्रीय सरकार-द्वारा हाल में ही स्थापित मानसिक स्वास्थ्य-सलाहकार-समिति ने जन-स्वास्थ्य और डाक्टरी सुविधाओं के विकास के कार्यक्रमों में मानसिक स्वास्थ्य-सेवाओं के बढ़ते हुए महत्व पर प्रकाश डाला है। मानसिक चिकित्सालयों में यथा-सम्भव अधिक-से-अधिक उपचार-सुविधाओं की व्यवस्था करने के अतिरिक्त अब मानसिक आचार-सम्बन्धी निरोधक सेवाओं पर, और विशेष रूप से प्रशिक्षण-कार्यक्रमों की व्यवस्था की ओर, ध्यान देना ज़रूरी है। तेज़ी से हो रहे उद्योगीकरण, टेक्नोलाजी-विषयक परिवर्तन और आबादी के गांवों से शहरों की ओर जाने के कारण कुछ मानसिक अव्यवस्था और तनाव आ जाता है, जिसे आरम्भिक दौर में ही ठीक करने पर ध्यान दिया जाना चाहिए। चिकित्सा-

विशेषज्ञों, जन-स्वास्थ्य-सम्बन्धी काम करनेवालों और समाज-सेवकों, विशेष रूप से प्रसूति और शिशु-स्वास्थ्य-केन्द्रों में काम करनेवालों को मानसिक स्वास्थ्य-सम्बन्धी जानकारी देना जरूरी है। स्वास्थ्य-शिक्षा-कार्यक्रम में मानसिक स्वास्थ्य-शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। बाल-मनोविज्ञानवेत्ताओं और मनोवैज्ञानिक समाज-सेवकों के लिए प्रशिक्षण-सुविधाएं बराबर बढ़ती जानी चाहिए। शिक्षा-क्षेत्र में स्कूली छात्रों के स्वास्थ्य-कार्यक्रम के विशेष अंग के रूप में यह आवश्यक व्यवस्था करनी चाहिए कि बच्चों की छोटी-मोटी व्यक्तिगत और मानसिक समस्याओं पर उन्हें उचित मार्गदर्शन मिल सके, माता-पिता और शिक्षकों को बच्चों के पालन के ठोस सिद्धान्तों पर मानसिक स्वास्थ्य की शिक्षा दी जाए तथा स्कूल-शिक्षकों को मानसिक आचार के सम्बन्ध में प्रशिक्षण दिया जाए। सामाजिक जीवन में मनोवैज्ञानिक तत्वों की भूमिका के कारण समाज-कल्याण के कार्यक्रमों में मानसिक आचार-सम्बन्धी व्यवस्था करना आवश्यक हो गया है। भारत की अर्थव्यवस्था के विकास और उसके अधिक जटिल होने के साथ-साथ अनेक प्रकार की नई सामाजिक और मनोवैज्ञानिक समस्याएं पैदा हो रही हैं, जिनके बारे में बहुत कम ज्ञात है; इसलिए मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में अध्ययन और विशेष सर्वेक्षण की सुविधाएं दी जानी चाहिए। आम जनता को इस दिशा में शिक्षित करने, बाल-मार्ग-दर्शन-केन्द्रों को सहायता देने तथा और कई तरह से स्वैच्छिक संस्थाएं बहुत बड़ा काम कर सकती हैं।

महत्त्वपूर्ण आंकड़े

44. काफी समय से यह महसूस किया जा रहा है कि महत्त्वपूर्ण आंकड़ों की व्यवस्था का न होना वर्तमान अंक-व्यवस्था की सबसे गम्भीर त्रुटियों में से एक है। पहली पंचवर्षीय योजना में इस समस्या पर विस्तार से विचार किया गया था, परन्तु पिछले दशक में इस दिशा में अपेक्षाकृत बहुत कम प्रगति हुई है। अप्रैल 1961 में इस विषय के सभी पहलुओं पर एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में विचार किया गया था। उसने सिफारिश की है कि ऐसी महत्त्वपूर्ण जानकारी के लिए केन्द्रीय कानून बनाया जाए, जिसमें महत्त्वपूर्ण घटनाओं की सामान्य व्याख्या हो, अनिवार्य रजिस्ट्रेशन, रजिस्ट्रार के कार्य और महत्त्वपूर्ण आंकड़े देने के तरीके हों और ऐसा न होने पर दंड की व्यवस्था हो। इसको अमल में लाने के लिए प्रशासन-व्यवस्था तथा अन्य बातें राज्य-सरकारों पर छोड़ दी जाएं। नगरपालिका-क्षेत्रों, राज्य-पंचायत-कानून के अन्तर्गत अधिसूचित क्षेत्रों और अन्य देहाती क्षेत्रों के अनुरूप व्यवस्था, ज़िला-रजिस्ट्रारों की नियुक्ति, जानकारी संग्रह करने तथा उसके संकलन के सम्बन्ध में भी सुझाव दिए गए थे। यह भी सुझाव दिया गया था कि जनसंख्या की वृद्धि तथा जातियों की सामाजिक स्थिति के विवेचन के विषय में अनुमान लगाने के लिए नमूने के तौर पर वार्षिक जनगणना करने के अलावा, क्षेत्रों के नमूने के तौर पर रजिस्ट्रेशन की भी योजना बनाई जाए, जिससे विभिन्न राज्यों और प्रदेशों में जन्म-मरण के विश्वसनीय आंकड़े मिल सकें। इन सिफारिशों पर विचार किया जा रहा है। राज्यों में महत्त्वपूर्ण आंकड़े संग्रह करने के काम में सुधार का कार्यक्रम तेज़ी से अमल में लाना जरूरी है और इसके लिए केन्द्रीय सरकार से और भी आवश्यक सहायता ली जा सकती है।

औषध

45. तीसरी योजना में देश में ही औषधों का उत्पादन बढ़ाने तथा आयातित औषधों और कच्चे माल के स्थान पर देश में ही निर्मित सामग्री के प्रयोग को बढ़ावा

देने की व्यवस्था की गई है। अतीत काल में औषधों की किस्म और स्तर आयातित औषधों पर निर्भर थे, परन्तु आयात प्रायः बन्द होने और देश में ही उत्पादन बढ़ने से अब राष्ट्रीय औषधु-उत्पादन-नियम तथा सिद्धान्तों पर ही औषधों के स्तर तथा उद्योग के विकास का आधार रहेगा। आयातित और स्वदेशी औषधों की किस्म पर सन् 1940 के औषध-अधिनियम के अन्तर्गत नियन्त्रण रहता है। यह कानून सभी राज्यों में लागू है, परन्तु आम तौर पर इसे पूरी तरह अमल में नहीं लाया जा रहा है। इस ढील का कारण कुछ तो कर्मचारियों की कमी है और कुछ निर्माताओं एवं व्यापारियों से लिए गए नमूनों के रासायनिक विश्लेषण की सुविधाओं का अभाव। हाल में ही इस कानून में संशोधन करके केन्द्रीय सरकार ने औषधों के उत्पादन-सम्बन्धी अधिकार राज्यों के समान स्वयं भी ले लिए हैं। कलकत्ता-स्थित केन्द्रीय औषध-प्रयोगशाला की सेवाएं राज्य-सरकारों को भी देने की व्यवस्था कर दी गई है, परन्तु यह ज़रूरी है कि राज्य-सरकारें अपने नमूनों के परीक्षण-विश्लेषण, आदि के लिए स्वयं अपनी प्रयोगशालाएं स्थापित करें। केन्द्रीय सरकार ने राज्यों के साथ ही औषध-उत्पादन पर नियन्त्रण के लिए कुछ कर्मचारी अपनी ओर से भी नियुक्त कर दिए हैं, परन्तु कानून का रोज़ाना के कामों में पूरी तरह अमल करवाने के लिए राज्यों-द्वारा अपने कर्मचारियों की वर्तमान संख्या जल्दी ही बढ़ाया जाना ज़रूरी है। फिलहाल स्थिति यह है कि बहुत कम नमूने एकत्र किए जाते हैं और उनके विश्लेषण में बहुत समय लग जाता है।

विश्लेषण की सुविधाएं और उसके लिए कर्मचारियों की संख्या बढ़ाने के साथ-साथ यह भी ज़रूरी है कि किस्म और स्तर बनाए रखने के लिए औषध-निर्माता और विक्रेता-संघ भी अपनी जिम्मेदारी भली भांति निभाएं। उपभोक्ता-संघों, स्थानीय संस्थाओं और स्वैच्छिक संगठनों का कर्तव्य है कि स्तर में गिरावट आने अथवा मूल्य में अत्यधिक वृद्धि होने की सूचनाएं आम जनता तथा सम्बद्ध अधिकारियों तक पहुंचा दें।

46. बहुत-से आवश्यक औषधों की कीमतें उचित स्तर तक ही रखी जा रही हैं, परन्तु भारतीय एजेंटों-द्वारा वितरित अनेक विदेशी दवाओं की कीमतें अत्यधिक बढ़ जाती हैं और उन पर भारी मुनाफा कमाया जाता है। यथासम्भव औषध-निर्माताओं और वितरकों की सहायता से इस स्थिति को सुधारना चाहिए। यह भी ज़रूरी है कि भारतीय निर्माता, डाक्टर-वर्ग और राज्य-सरकारें राष्ट्रीय औषध-निर्माण फारमूलों में दिए गए निर्देशों का पालन करें। इनमें समय-समय पर संशोधन-परिवर्तन होते रहेंगे और इन्हें नवीनतम जानकारी से युक्त रखा जाएगा। बड़ी कम्पनियों के अलावा अन्य उत्पादकों के औषधों में जनता का विश्वास जमाने के लिए राज्य-सरकारों को किस्म-नियन्त्रण और निरीक्षण के लिए पर्याप्त व्यवस्था करनी चाहिए।

बाज़ारों में बिकनेवाली अनेक दवाएं, विशेष रूप से जीवाणुओं से बननेवाली, घटिया किस्म की होती हैं। अक्सर मिलावटी दवाएं भी बाज़ार में बिकती हैं। औषध-अधिनियम में हाल में संशोधन कर के मिलावटी दवा बनाने और बेचने पर कम-से-कम एक वर्ष की कैद की सज़ा की व्यवस्था कर दी गई है।

खाद्य में मिलावट

47. खाने-पीने की शुद्ध चीज़ें मुहय्या करना सभी निर्माताओं और वितरकों का समाज के प्रति एक कर्तव्य है। इसका पालन कड़ाई से होना ही चाहिए। परन्तु आज भी जो प्रमाण

मिल रहे हैं, उन्हें देखते हुए कहना पड़ता है कि स्थिति बिगड़ती ही जा रही है और शहरों एवं गांवों में भी आम उपभोग की वस्तुओं—जैसे, घी, दूध, तेल और चिकनाई, मसालों, आटा, दाल, आदि—में अक्सर मिलावट पाई जाती है। खाद्य में मिलावट के तरीके अधिक व्यवस्थित होते जा रहे हैं, जिससे उनका पता लगाना मुश्किल हो जाता है। केन्द्रीय स्वास्थ्य-परिषद् ने हाल में ही एक विशेष गोष्ठी में खाद्य में मिलावट की समस्या पर विचार किया था और अनेक सुझाव पेश किए गए थे। खाद्य-मिलावट-निरोधक अधिनियम, 1954 के अन्तर्गत अपराधियों को कड़ा दंड देने, खाद्य के निरीक्षण की व्यवस्था मज़बूत बनाने तथा नमूनों की जांच के लिए प्रयोगशाला-सम्बन्धी सुविधाएं बढ़ाने और प्रशासनिक तथा मिलावट-सम्बन्धी अपराध रोकने की अन्य प्रक्रियाओं में सुधार करने के सुझाव दिए गए हैं। उपभोग की विभिन्न वस्तुओं के एक निश्चित मान का पालन करने के सम्बन्ध में भी सिफारिश की गई है। मिलावट उत्पादन के समय भी होती है और विधायन तथा वितरण के समय भी—यह थोक और फुटकर बिक्री-स्थलों पर की जाती है। यह ज़रूरी है कि उपभोक्ता के पास मिलावटी चीज़ न पहुंचे। इस सम्बन्ध में उचित कार्यवाई के साथ-साथ ऐसी कार्यवाई भी की जाए, जिससे पहले के दौरों से गुज़रते समय मिलावट पकड़ी और रोकी जा सके तथा सभी सम्बद्ध व्यक्तियों और पक्षों को कानूनी एवं प्रशासनिक कार्रवाई के अन्तर्गत लाया जाए। स्थानीय संस्थाओं, स्वैच्छिक संस्थाओं और उपभोक्ता-संगठनों को मिलावट करनेवालों को प्रकाश में लाने के लिए प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। सम्बद्ध अधिकारियों को जनता की शिकायत पर सबसे अधिक ध्यान देना चाहिए। जैसा कि सहकारिता के अध्याय में बताया गया है, शहरों में शुद्ध खाद्य-वस्तुएं मुहय्या करने के लिए अधिक-से-अधिक सहकारी उपभोक्ता-भांडार खोलना आवश्यक है।

देशी चिकित्सा-प्रणालियां

48. पिछले दशक में देशी चिकित्सा-प्रणालियों के विकास की दिशा में निरन्तर प्रगति हुई है। देशी प्रणालियों में अनुसन्धान-कार्यों के लिए पहली योजना में 38 लाख रु० खर्च किए गए थे। दूसरी योजना में इस क्षेत्र में अनुसन्धान-कार्यक्रम बहुत बढ़ाए गए; कुल 4 करोड़ रु० इस मद में खर्च किए गए। सन् 1959 में केन्द्रीय आयुर्वेदिक अनुसन्धान-परिषद् की स्थापना की गई, जिसे देश-भर में आयुर्वेदिक अनुसन्धान के लिए समन्वित नीति बनाने तथा अनुसन्धान को प्रोत्साहन देने के उपायों पर सरकार को परामर्श देने का काम सौंपा गया। दो सलाहकार-समितियां भी स्थापित की गईं—एक होम्योपैथी के लिए और दूसरी यूनानी के लिए। जामनगर में सन् 1953 में स्थापित देशी चिकित्सा-सम्बन्धी केन्द्रीय अनुसन्धान-संस्थान ने कुछ रोगों में अनुसन्धान-कार्य किया तथा कुछ आयुर्वेदिक दवाओं, जड़ी-बूटियों की पहचान और उन्हें उगाने-सम्बन्धी समस्याओं पर भी काम किया। संस्थान में आयुर्वेदिक और आधुनिक चिकित्सा-विभागों के अतिरिक्त एक 'सिद्ध' इकाई भी है। सन् 1956 में जामनगर में ही स्थापित स्नातकोत्तर-प्रशिक्षण-केन्द्र में आयुर्वेद के उच्च अध्ययन की सुविधाएं भी दी गई हैं।

49. **आयुर्वेद :** आयुर्वेदिक शिक्षा-सम्बन्धी वर्तमान नीति से सन्तोषजनक परिणाम नहीं निकले हैं, बल्कि उससे विवाद छिड़ गया है। पहली योजना में सुझाव दिया गया था कि इस दिशा में ऐसा पाठ्यक्रम तैयार किया जाए, जो छात्रों को इसी विशेष चिकित्सा-प्रणाली में

पूर्णतः योग्य बना सके। अनेक राज्यों में मिश्रित प्रशिक्षण-क्रम चलाए जा रहे हैं, कुछ राज्यों में मिश्रित शिक्षण के अलावा शुद्ध आयुर्वेद-शिक्षा-केन्द्र भी हैं। अनुभव से मालूम हुआ है कि जहां भी मिश्रित चिकित्सा-शिक्षाक्रम चलाए गए हैं, वहां आयुर्वेदिक चिकित्सक तैयार नहीं हुए हैं, जब कि उक्त पाठ्यक्रम का लक्ष्य ही यह था। मिश्रित पाठ्यक्रम पूरा करने के बाद छात्रों की प्रवृत्ति आधुनिक चिकित्सा-प्रणाली अपनाने की ओर होती है, जिसमें उन्हें आंशिक प्रशिक्षण ही मिला होता है। सच तो यह है कि मिश्रित प्रशिक्षण देनेवाले दो कालेजों का स्वरूप हाल में ही बदल दिया गया है और उन्हें आधुनिक चिकित्सा-कालेज बना दिया गया है। यह भी देखा गया है कि कुछ वैद्य आधुनिक चिकित्सा-प्रणाली की अनेक दवाएं देने लगे हैं, जब कि उन्हें उक्त औषधों के प्रयोग का प्रशिक्षण नहीं मिला होता।

50. विभिन्न राज्यों में कालेजों में प्रवेश के लिए न्यूनतम योग्यता, पाठ्यक्रम, क्लिनिकल और पूर्व-क्लिनिकल विषयों के छात्रों की व्यावहारिक शिक्षा, क्वालिफाइंग परीक्षा के लिए न्यूनतम मानदंड तथा डिप्लोमा एवं डिग्रियों के बारे में कोई एकरूपता नहीं है।

स्वास्थ्य-मन्त्रालय-द्वारा स्थापित आयुर्वेदिक अनुसन्धान-परिषद् ने सिफारिश की है कि देशी चिकित्सा-प्रणालियों के शिक्षाक्रम में आयुर्वेद और आधुनिक चिकित्सा-प्रणाली की समानतावाले पाठ्यक्रम शामिल होने चाहिए। योजना-आयोग द्वारा आयुर्वेद के सम्बन्ध में स्थापित मंडल ने अपने सदस्यों की आम राय के अनुसार निम्नलिखित सिफारिशें की हैं :

> "आयुर्वेद के लिए चार वर्ष का डिप्लोमा-पाठ्यक्रम होना चाहिए, जिसमें आयुर्वेद का गहन अध्ययन हो। साथ ही, इससे पूर्व के एक वर्ष में भौतिकशास्त्र, रसायन-शास्त्र और जीवशास्त्र की शिक्षा की व्यवस्था रहे। इसमें पहले वर्ष में दर्शन, पदार्थ, विज्ञान, संस्कृत, आदि की प्रारम्भिक शिक्षा भी शामिल की जाए। प्री-क्लीनिकल विषयों (पहले दो वर्ष) में शरीरविज्ञान, द्रव्यगुण और रसायनशास्त्र शामिल हों। डिग्री-पाठ्यक्रम में सरकारी नौकरी करने के इच्छुकों को दो वर्ष और प्रशिक्षण दिया जाए। क्लीनिकल विषयों में (अन्तिम तीन वर्ष) निदान, चिकित्सा, स्वास्थ्यवृत्त, प्रसूति-तन्त्र, स्त्री-रोग, बाल-रोग, शल्य, शालक्य और व्यवहार-आयुर्वेद की शिक्षा देने का प्रबन्ध किया जाए। इसके साथ-साथ 'वृहद्त्रयी' (चरक संहिता, सुश्रुत-संहिता और वाग्भट्ट-संहिता) में से एक की शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जाए। छः वर्ष के प्रशिक्षण के बाद आयुर्वेदाचार्य की डिग्री दी जाए। पहले चार वर्ष केवल आयुर्वेद की महन शिक्षा दी जाए। अन्तिम दो वर्षों में वैज्ञानिक पहलुओं की शिक्षा तथा व्यावहारिक प्रशिक्षण देने की व्यवस्था होनी चाहिए। सम्बद्ध विज्ञान की प्रगति के प्रकाश में आयुर्वेद की शिक्षा में भी सुधार एवं विस्तार होना चाहिए। साधारण शल्य-क्रिया (सर्जरी), संक्रामक रोग-निवारण, मिड-वाइफ के काम, निरोधक औषधों आदि की शिक्षा भी शामिल करनी चाहिए, जिससे स्नातक राज्यों के स्वास्थ्य-संगठनों में काम करने की योग्यता भी प्राप्त कर लें।"

51. योजना-आयोग-द्वारा स्थापित आयुर्वेद-मंडल या स्वास्थ्य-मन्त्रालय-द्वारा स्थापित केन्द्रीय आयुर्वेद-परिषद् ने जो सुझाव दिए हैं, उनमें से कुछ अगले पृष्ठ दिए गए हैं।

(1) आयुर्वेदिक शिक्षा के नियमन एवं निरीक्षण के लिए भारतीय चिकित्सा-सम्बन्धी केन्द्रीय परिषद् की स्थापना;

(2) सभी राज्यों में भारतीय चिकित्सा-सम्बन्धी पृथक् निदेशालय तथा कानून-द्वारा स्थापित परिषदों एवं मंडल की स्थापना;

(3) देशी चिकित्सा-प्रणालियों के लिए पृथक् केन्द्रीय औषध-नियन्त्रण-संगठन की स्थापना;

(4) आयुर्वेदिक और यूनानी औषध-निर्माण-शास्त्र (फारमाकोपिया) का संकलन;

(5) औषध-निर्माण-सम्बन्धी अनुसन्धान-इकाइयों की स्थापना, जो आयुर्वेदिक और यूनानी फारमेसियों में प्रयुक्त कच्चे माल के लिए एक कामचलाऊ मान निश्चित करने का मार्ग तैयार कर सकें। ये इकाइयां कालेजों के वनस्पतिशास्त्र-विभागों से सम्बद्ध की जाएं, तो अधिक उपयोगी होंगी;

(6) हर राज्य में एक जड़ी-बूटी-उद्यान तथा केन्द्र की ओर से समुचित स्थान पर एक और उद्यान की स्थापना, जिनमें स्थानीय बूटियां उगाई जाएं; तथा

(7) सामान्यतः प्रचलित और अनेक आम रोगों में गुणकारी प्रमाणित हो चुकी बूटियों का सर्वेक्षण ।

आयुर्वेदिक चिकित्सा-प्रणाली को प्रोत्साहन देने और उसका प्रसार करने के लिए यह आवश्यक है कि अनुसन्धान-कार्य अधिक तेजी से और गहराई से किया जाए। इस उद्देश्य से तीसरी योजना में आयुर्वेद के मूल सिद्धान्तों, साहित्य और क्लीनिकल तथा औषध-सम्बन्धी अनुसन्धान का काम हाथ में लिया जाएगा। देशी चिकित्सा-प्रणालियों के विकास के लिए तीसरी योजना में 9.8 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। विकास-कार्यक्रम में 5 नए कालेज खोलने, 31 वर्तमान कालेजों का विस्तार करने, औषधों के सम्बन्ध में अनुसन्धान, 1,800 औषधालयों और अस्पतालों की स्थापना, वर्तमान संस्थाओं का दर्जा बढ़ाने, फारमेसियों का सुधार करने एवं जड़ी-बूटी-संग्रहालयों की स्थापना की व्यवस्था है। सर्वविदित है कि घरों में कितनी ही प्रकार की देशी दवाएं काम में लाई जाती हैं। तीसरी योजना में विचार है कि अलग-अलग विकास-खंडों में शुरू में स्थानीय रूप से प्राप्त कुछ थोड़ी-सी जड़ी-बूटियों के संग्रहालय बनाए जाएं।

52. **प्राकृतिक चिकित्सा :** भारत और अन्य देशों में प्राकृतिक चिकित्सा-द्वारा रोगों के इलाज का तरीका बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है। अनेक रोगों के उपचार के लिए आधुनिक चिकित्सा-प्रणाली में भी प्राकृतिक प्रणाली की अनेक विधियां शामिल कर ली गई हैं। इस प्रक्रिया का और भी विस्तार किया जा सकता है। प्राकृतिक चिकित्सा को संकुचित अर्थों में रोगों के उपचार की प्रणाली न मान कर जीवनचर्या का रूप ही मानना चाहिए। इसके रोग-निरोधक स्वरूप, स्वास्थ्य बनाए रखने के इसके तरीके, सीधे-सादे जीवन के ज़रिए स्वावलम्बन तथा उत्साह पैदा करने पर बल देनेवाले उपाय अधिक प्रशंसा के अधिकारी हैं। तीसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में प्राकृतिक चिकित्सा-संस्थानों को खून-थूक, आदि की जांच के लिए प्रयोगशालाएं स्थापित करने में सहायता दी जाएगी,

जिससे आधुनिक वैज्ञानिक तरीकों की सहायता लेकर प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली को अधिक ठोस आधार दिया जा सके।

53. **होम्योपैथी :** केन्द्रीय सरकार ने होम्योपैथिक संस्थाओं की स्थापना तथा वर्तमान संस्थाओं का दर्जा बढ़ाने एवं उनमें सुधार करने और अनुसन्धान-कार्यों के लिए अनुदान दिया है। स्वास्थ्य-मन्त्रालय ने होम्योपैथी-सम्बन्धी एक परामर्श-समिति भी नियुक्त की है। इस समिति की सलाह से होम्योपैथिक औषध बनाने की सुविधाएं देने और दवाओं का मान नियत करने के लिए प्रयोगशालाएं स्थापित करने के प्रश्न पर विचार किया जा रहा है। तीसरी योजना में होम्योपैथिक संस्थाओं को अनुदान देने तथा अनुसन्धान-कार्य चलाने के लिए धन की व्यवस्था की गई है। समुचित प्रशिक्षण-प्राप्त एवं सुयोग्य होम्योपैथ डाक्टरों को शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों मे सेवा-कार्य के लिए भेजने की सम्भावनाओं पर विचार किया जाना चाहिए।

• कुछ होम्योपैथिक कालेज और अस्पताल खोलने के सुझाव रखे गए है। उन पर आगे विचार किया जाना चाहिए।

54. **यूनानी :** भारत-सरकार ने स्वास्थ्य-मन्त्रालय के अन्तर्गत इस विषय पर भी एक सलाहकार-समिति नियुक्त की है। अनुसन्धान-कार्य, वर्तमान संस्थाओं का दर्जा बढ़ाने और उनमें सुधार करने तथा नई यूनानी संस्थाओं की स्थापना के लिए अनुदान दिए जा रहे हैं।

पोषण

55. स्वास्थ्य-सुधार के कार्यक्रमों में समुचित पोषण का महत्वपूर्ण स्थान है। पहली दो योजनाओं के दौरान पोषण में सुधार, भोजन की आदतों में परिवर्तन अथवा इस समस्या के प्रति जनता को जागरूक बनाने का कोई व्यवस्थित प्रयत्न नहीं किया गया था। तीसरी योजना में उत्पादन-वृद्धि और आर्थिक स्थिति में सुधार के कार्यक्रमों के कारण पोषण की समस्या के व्यवस्थित हल की कोशिश करना अब सम्भव हो गया है। ठोस परिवर्तन में समय लगेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं, परन्तु यदि शुरू से ही कार्यक्रम उचित आधार पर बनाए जाएं, कार्यक्रमों को सही प्राथमिकता दी जाए और प्रत्येक समुदाय पोषण का सही महत्व तथा अपने साधनों और प्रयत्नों से उसमें योग देने की आवश्यकता को भली भांति समझ ले, तो आगे चल कर उसके पर्याप्त परिणाम निकल सकेंगे।

पोषण की समस्या से मोटे तौर पर सभी परिचित है। आम तौर पर भारत के अधिकांश भाग में अनाज ही भोजन है। इस भोजन में शरीर की रक्षा और उसके निर्माण के लिए उपयोगी पदार्थ—जैसे, दूध, मांस, अंडे, सब्ज़ियां और फल-नही है। इंडियन कौंसिल आफ मेडिकल रिसर्च ने सन् 1935-48 तथा सन् 1955-58 की दो अवधियों में भोजन-सम्बन्धी सर्वेक्षण कराए थे। इनसे ज्ञात हुआ कि अनाज एवं दालों के इस्तेमाल में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ, परन्तु गैर-अनाजवाली चीज़ों की खपत में प्रति व्यक्ति कुछ कमी आ गई। खुराक की इस कमी का बुरा असर गरीब जनता के वृद्धिशील बच्चों पर अधिक पड़ता है। हिमालय के अंचल के क्षेत्रों में आयोडिन की कमी के कारण गिल्लड़ रोग बहुतायत से पाया जाता है। समस्या के और भी कुछ कारण है—जैसे, भोजन पकाने के गलत तरीकों से चीज़ों के पोषण-तत्वों का नष्ट हो जाना (चावल और सब्ज़ियों में विशष रूप से); अनाज साफ करने की प्रक्रिया, जैसे मिलों

में चावल की सफाई-कुटाई में; परिवहन और ठंडे स्थान पर सुरक्षित रखने की सुविधाओं के अभाव में फलों और मछली का नुकसान; तथा कम आवश्यक कामों में भोजन की विशेष चीज़ों का इस्तेमाल, जैसे मिठाई बनाने में दूध का उपयोग। इस प्रकार, पहली दो योजनाओं में दूध की प्रति व्यक्ति खपत में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई। सन्तुलित खुराक में 10 औंस दूध प्रति व्यक्ति प्रति दिन होना चाहिए, परन्तु इसकी तुलना में आज का औसत 4.9 औंस प्रति व्यक्ति प्रति दिन है। मछली का कुल उत्पादन 7,00,000 टन से बढ़ कर 14,00,000 टन हो गया है और तीसरी योजना के कार्यक्रमों के अनुसार यह उत्पादन 18,00,000 टन हो जाने की आशा है। मछली-उद्योग के समुचित संगठन तथा विभिन्न विकास-कार्यक्रमों को कुशलता से अमल में लाने से यह मात्रा बहुत अधिक बढ़ाई जा सकती है। आलू, शकरकन्द, पत्तोंवाली और अन्य प्रकार की सब्जियां, आसानी से उगाए जानेवाले फल, जैसे पपीता और केला, ताड़-गुड़ और शहद तथा केन्द्रीय खाद्य-टेक्नोलाजी-अनुसन्धान-संस्थान, मैसूर में तैयार खाद्य-सामग्रियों के पूरक खाद्य के रूप में अधिक-से-अधिक मात्रा में इस्तेमाल किए जाने की भी बहुत सम्भावनाएं हैं।

56. विकास की वर्तमान स्थिति में पोषण में सुधार के कार्यक्रम दो वर्गों में रखे जा सकते हैं– पोषण के सम्बन्ध में आम जनता तथा विभिन्न समूहों को शिक्षित करना एवं समाज के दुर्बल जन-समूहों की पोषण-सम्बन्धी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए उचित कदम उठाना। सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों के अन्तर्गत गांवों में महिला-मंडलों और स्वैच्छिक संगठनों के द्वारा प्रदर्शन, आदि की सहायता से जनता को पोषण-सम्बन्धी जानकारी भोजन में पोषक तत्व सुरक्षित रखने, गलत इस्तेमाल रोकने एवं दुरुपयोग न होने देने की सलाह दी जानी चाहिए। साथ ही, डाक्टरों, नर्सों, स्वास्थ्य-निरीक्षकों, स्कूल-शिक्षकों, आदि के दलों को पोषण-सम्बन्धी अल्पकालीन प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। जिस वर्ग को क्षति पहुंच सकती है और जिसकी ओर सबसे ज्यादा ध्यान देने की आवश्यकता है, उसमें ये लोग आते हैं: गर्भवती और दूध पिलानेवाली माताएं, शिशु, स्कूल-पूर्व और स्कूल जानेवाले बच्चे, विशेष कर निम्न वय-वर्ग के बच्चे। स्कूली छात्रों को सबसे अधिक लाभ दोपहर के भोजन के कार्यक्रम से पहुंचाया जा सकता है, जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। जिन बच्चों को पूरा पोषण नहीं मिल रहा है, उनके लिए दूध, आदि तथा भोजन की सहायता के लिए बहु-प्रयोजनीय खाद्य, विटामिन, आदि अनिवार्य हैं। औद्योगिक कारखानों की कैंटीनों, स्कूलों और कालेजों के छात्रावासों तथा आम जनता के लिए होटलों एवं रेस्तराओं में सस्ते परन्तु सन्तुलित भोजन की व्यवस्था की ओर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।

इस प्रकार के कार्यक्रमों पर अमल करने के लिए केन्द्र और राज्यों में जन-स्वास्थ्य-पोषण-सेवाओं को और भी मज़बूत बनाना चाहिए। केन्द्र में पहले ही एक राष्ट्रीय पोषण-सलाहकार-समिति काम कर रही है। राज्यों के जन-स्वास्थ्य-विभागों में पोषण-सम्बन्धी विशेष खंडों की स्थापना की आवश्यकता बराबर बताई गई है। राज्य-स्तर पर इस दिशा में, जैसा कि एक महत्वपूर्ण सामूहिक प्रयत्न में होता है, स्वास्थ्य, कृषि, पशुपालन डेरी-उद्योग, मछली-उद्योग, शिक्षा, समाज-कल्याण और प्रचार-विभागों में घनिष्ठतम सहयोग होना चाहिए। ज़िला और खंड-स्तर पर पोषण में सुधार के सुयोजित कार्यक्रमों में जनता का सहयोग, समर्थन तथा स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं और संस्थाओं की सहायता मिल सकती है। तीसरी योजना में इन आधारों पर काम होने से पोषण में सुधार के बढ़ते हुए प्रयत्नों के

लिए ठोस नींव रखी जा सकती है—समाज के स्वास्थ्य में रोगग्रस्त हो जानेवाले वर्गों के स्वास्थ्य में सुधार का काम ठोस आधार पर चलाया जा सकता है।

भविष्य के लिए आयोजन

57. 15 वर्ष पूर्व स्वास्थ्य-सर्वेक्षण और विकास-समिति (भोर-समिति) ने अपनी विस्तृत रिपोर्ट पेश की थी। तब से अब तक स्वास्थ्य के क्षेत्र मे दूरगामी परिवर्तन हो चुके हैं। यह ज़रूरी है कि अन्य क्षेत्रों में कार्यक्रमों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हुए भी स्वास्थ्य-सेवाओं के विकास के कार्यक्रम भविष्य पर दृष्टि रखते हुए बनाए जाएं, विशेष रूप से अगली तीन योजनाओं को ध्यान में रखते हुए। जून 1959 में स्वास्थ्य-मन्त्रालय ने स्वास्थ्य-सर्वेक्षण और आयोजन-समिति नियुक्त की और उसे स्वतन्त्रता के बाद से अब तक डाक्टरी सहायता एवं जन-स्वास्थ्य के क्षेत्र में हुए कार्य का मूल्यांकन करने तथा स्वास्थ्य-विकास का भावी कार्यक्रम तैयार करने के लिए अपनी सिफारिशें देने का काम सौंपा। समिति फिलहाल शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में डाक्टरी सहायता, जन-स्वास्थ्य (पास-पड़ोस की सफाई-सहित), संक्रामक रोगों की रोकथाम, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा-सम्बन्धी शिक्षा और अनुसन्धान, जनसंख्या एवं परिवार-आयोजन तथा औषधों एवं मेडिकल स्टोरों की समस्याओं का गम्भीर अध्ययन कर रही है।

(2)
परिवार-आयोजन

58. परिवार-आयोजन-कार्यक्रम की सिफारिश करते हुए पहली पंचवर्षीय योजना में कहा गया था :

> "स्पष्ट है कि पैदाइश की दर उस सीमा तक कम करने से ही आबादी पर नियन्त्रण किया जा सकता है, जो राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुसार जनता की संख्या को एक स्तर तक रखने के लिए आवश्यक है। जब बड़े पैमाने पर जनता परिवार सीमित रखने की आवश्यकता समझे, तभी यह कार्य हो सकता है। परिवार-आयोजन की आवश्यकता का मुख्य कारण परिवार के स्वास्थ्य और कल्याण का विचार ही है। माता को स्वस्थ रखने तथा बच्चों के उचित पालन-पोषण के लिए परिवार सीमित रखना अथवा बच्चों के जन्म के बीच काफी अन्तर रहना आवश्यक तथा वांछनीय है। इसलिए इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए होनेवाली कार्रवाई जन-स्वास्थ्य-कार्यक्रम का ही अंग होना चाहिए।"

उक्त नीति के अनुसार ही परिवार-आयोजन के क्षेत्र में, विशेष रूप से दूसरी योजना के काल में, कार्यों का निश्चित रूप से विस्तार हुआ है। तीसरी योजना के कार्यक्रमों पर स्वास्थ्य-मन्त्रालय की विशेष समिति और योजना-आयोग के स्वास्थ्य-सम्बन्धी मंडल ने हाल में ही विचार किया था।

59. दीर्घकालीन आर्थिक विकास के अध्याय में अगले 15 वर्ष में जनसंख्या की वृद्धि के कुछ अस्थायी अनुमानों का उल्लेख किया गया है और यह भी स्पष्ट किया गया है कि आयोजित विकास के मूल में जनसंख्या की वृद्धि को एक निश्चित काल में एक सीमा

के अन्दर ही रखने का उद्देश्य होना चाहिए। इस सन्दर्भ में, तीसरी पंचवर्षीय योजना और आगे की अन्य योजनाओं में परिवार-आयोजन पर सर्वाधिक बल देना होगा। इसके लिए सघन शिक्षा तथा प्रत्येक शहरी और ग्रामीण समुदाय को इस सम्बन्ध में अधिक-से-अधिक बड़े पैमाने पर सलाह और सुविधाएं देना तथा व्यापक रूप से जनता के अपने प्रयत्न ज़रूरी हैं। देश की आज की परिस्थिति में परिवार-आयोजन को एक बड़े विकास-कार्यक्रम के रूप में ही नहीं, बल्कि व्यक्ति, परिवार और समुदाय के लिए बेहतर जीवन की मूल प्रवृत्तिवाले राष्ट्रव्यापी आन्दोलन के रूप में चलाना होगा।

60. पहली पंचवर्षीय योजना के दौरान शहरी क्षेत्रों में 126 और देहाती क्षेत्रों में 21 परिवार-आयोजन-केन्द्र स्थापित किए गए। दूसरी योजना-काल में ऐसे केन्द्रों की संख्या बढ़ कर शहरों में 549 और गांवों में 1,100 हो गई। इनके अतिरक्त, 1,864 ग्रामीण और 330 शहरी चिकित्सा एवं स्वास्थ्य-केन्द्रों में परिवार-आयोजन-सेवाओं की व्यवस्था की गई है। बन्ध्याकरण के लिए भी अनेक केन्द्र खोले गए हैं। ये कार्यक्रम केन्द्रीय और राज्य-परिवार-आयोजन-मंडलों-द्वारा चलाए जा रहे हैं। सभी राज्यों में परिवार-आयोजन-कार्य के लिए विशेष इकाइयां स्थापित की गई हैं। इंडियन कौंसिल आफ मेडिकल रिसर्च और आल इंडिया इंस्टीट्यूट आफ हाइजीन एण्ड पब्लिक हेल्थ, कलकत्ता के निर्देशन में बम्बई के गर्भनिरोध-उपकरण-परीक्षण-केन्द्र तथा अन्य स्थानों पर काफी अनुसन्धान-कार्य किया जा रहा है। बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली और त्रिवेन्द्रम में समाजशास्त्र-सम्बन्धी अनुसन्धान-केन्द्र स्थापित किए गए हैं। अनेक उपयोगी क्षेत्रीय अनुसन्धान किए गए हैं—जैसे, भारत-हार्वर्ड-लुधियाना-जनसंख्या-अध्ययन तथा मैसूर में रामनगरम्, नई दिल्ली की लोदी कालोनी, दिल्ली के समीप नजफगढ़, और कलकत्ता के निकट सिंगूर में हुए अध्ययन। एक व्यापक प्रशिक्षण-कार्यक्रम भी शुरू किया गया है, जिसके अन्तर्गत प्रशिक्षकों के लिए प्रशिक्षण-केन्द्र, एक ग्रामीण प्रशिक्षण-प्रदर्शन-केन्द्र, प्रशिक्षण-क्लिनिकों का क्षेत्रीय प्रशिक्षण-केन्द्रों के रूप में विस्तार, पर्यटन प्रशिक्षण-दल तथा तदर्थ प्रशिक्षण-पाठ्यक्रम की व्यवस्था है। डाक्टरों तथा अन्य सहायक चिकित्सा-कर्मचारियों की शिक्षा-संस्थाओं के साधारण प्रशिक्षण-कार्यक्रम में परिवार-आयोजन भी शामिल कर दिया गया है। पहली योजना में इस मद में 65 लाख रु० रखे गए थे, परन्तु दूसरी योजना में इसके लिए 5 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई।

61. तीसरी योजना में परिवार-आयोजन के कार्यक्रम में निम्नलिखित कार्यों के लिए व्यवस्था की गई है: (1) परिवार-आयोजन के लिए प्रेरणा और शिक्षा, (2) सेवाओं की व्यवस्था, (3) प्रशिक्षण, (4) साज़-सामान की व्यवस्था, (5) उद्देश्यों का प्रचार और प्रेरणा-सम्बन्धी अनुसन्धान, (6) समाजशास्त्र-सम्बन्धी समस्याओं का अनुसन्धान, (7) डाक्टरी और जीवशास्त्र-सम्बन्धी अनुसन्धान। स्वीकृत कार्यक्रम पर 50 करोड़ रु० के खर्च की व्यवस्था की गई है। स्पष्टः परिवार-आयोजन-सम्बन्धी कार्यक्रम को सीमित करने का कारण आर्थिक नहीं, बल्कि संगठन एवं कर्मचारियों की कमी से सम्बद्ध है, क्योंकि इस कमी से ही कार्यक्रम के अमल में सबसे बड़ी बाधा आती है।

62. विभिन्न अध्ययनों से मालूम हुआ है कि जनता में परिवार के सदस्यों की संख्या सीमित रखने तथा इस सम्बन्ध में क्रियात्मक सहायता एवं मार्गदर्शन प्राप्त करने की इच्छा है। इसका यह अर्थ नहीं कि परिवार-आयोजन का सन्देश फैलाने और उसके लिए

लोगों को प्रेरणा देने की कठिन समस्या हल हो गई है अथवा सलाह और संगठन की दिशा मे भी काफी अच्छी शुरुआत हो गई, विशेष रूप से ग्रामीण समुदायों में। तीसरी योजना में इन प्रश्नों पर अधिक ध्यान देना आवश्यक है। शिक्षात्मक कार्यक्रम को तेज़ करना सारे कार्यक्रम की सफलता के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। परिवार-आयोजन-सम्बन्धी शिक्षा बेहतर जीवन बिताने की शिक्षा का अंग है; इस कारण उसे अन्य रचनात्मक कार्यों के साथ गूथ देना चाहिए, विशेष रूप से प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों, सामुदायिक विकास-खंडों और स्वैच्छिक संगठनों के कार्यों के साथ उसका गहरा सम्बन्ध रहना चाहिए। जनता को बड़े पैमाने पर उन परिस्थितियों की जानकारी देना ज़रूरी है, जिनमें हर व्यक्ति निश्चित होकर परिवार-आयोजन के तरीके अपना सके।

63. परिवार-आयोजन सम्बन्धी-सेवाएं आज की अपेक्षा अधिक व्यापक रूप में मुहय्या करनी होंगी। इस कार्य में मुख्य प्रश्न परिवार-आयोजन को सामान्य चिकित्सा और स्वास्थ्य-सेवाओं, विशेष रूप से प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों के द्वारा उपलब्ध सेवाओं से मिला देने का है। कुछ सीमा तक ये सेवाएं स्वैच्छिक संस्थाओं के केन्द्रों, चलती-फिरती इकाइयों तथा औद्योगिक एवं अन्य संस्थाओं के द्वारा भी उपलब्ध की जा सकती हैं। तीसरी योजना के लिए अस्थायी तौर पर तैयार किए गए कार्यक्रम के अनुसार परिवार-आयोजन क्लिनिकों की संख्या, जो दूसरी योजना के अन्त में 1,649 थी, बढ़ कर 8,200 हो जाएगी : इसमें से 6,100 क्लिनिक ग्रामीण क्षेत्रों में होंगे और 2,100 शहरी क्षेत्रों में। सरल गर्भनिरोध-उपकरण बांटने और सामान्य सलाह-मशिवरा देने का काम काफी बड़े पैमाने पर स्वैच्छिक संस्थाओं, परिवार-आयोजन-कार्य के लिए प्रशिक्षित दाइयों तथा अन्य चिकित्सा-कर्मचारियों को सौंपा जा सकता है। प्राथमिक स्वास्थ्य-इकाइयों को परिवार-आयोजन-सम्बन्धी सेवाएं मुहय्या करने-योग्य बनाने के लिए अतिरिक्त कर्मचारी तथा अन्य खर्च की व्यवस्था का प्रश्न प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों के कार्यक्रम में पूरे तौर पर शामिल करने का विचार है। इस कार्य में मुख्य बाधा पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित कार्यकर्ता, विशेष रूप से स्त्री कार्यकर्ता, प्राप्त करने के सम्बन्ध में है। प्रशिक्षण-सुविधाओं के विस्तार के लिए अनेक सघन अल्पकालीन पाठ्यक्रम आरम्भ करना आवश्यक है। शहरी क्षेत्रों के लिए सुझाव रखा गया है कि गैर-सरकारी डाक्टरों की अधिकाधिक मदद लेकर सलाह-मशिवरा देने, उपकरण बांटने और जहां तक सम्भव हो, बन्ध्याकरण का काम किया जाए।

64. बड़े पैमाने पर परिवार-आयोजन-कार्य को चलाने के लिए गर्भनिरोध-उपकरणों का देश में ही उत्पादन करना आवश्यक है। इस दिशा में कुछ प्रगति अवश्य हुई है, परन्तु उसे सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता। इन वस्तुओं की आपूर्ति का चालू अनुमान बहुत ही सीमित कार्यक्रम के आधार पर लगाया गया है। कार्यक्रम का स्वरूप देखते हुए यह आवश्यक है कि सरकार स्वयं इन वस्तुओं के उत्पादन मे अधिकाधिक हिस्सा लेने, उनका मानक तैयार करने तथा मूल्य निश्चित करने में पहल करे। आरम्भिक दौर में जनता के कुछ वर्गो को ये चीजें मुफ्त अथवा नाममात्र लागत पर मुहय्या करना भी ज़रूरी होगा। यह सुझाव दिया गया है कि सरकार और निजी फर्मो-द्वारा गर्भनिरोध-उपकरणों के उत्पादन के कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए; इस उद्देश्य को

सामने रखना चाहिए कि यथाशीघ्र जिस पैमाने पर आवश्यकता है, उसके अनुसार ये चीज़ें मुहय्या की जा सकें ।

65. तीसरी योजना म अनुसन्धान का पहले से अधिक विस्तृत कार्यक्रम शुरू किया जाएगा । अन्य पहलुओं-सहित निम्नलिखित क्षेत्रों में अनुसन्धान किया जा रहा है :

(1) मानव-उत्पत्ति-सम्बन्धी अध्ययन का विकास ।

(2) सन्तानोत्पत्ति के प्राकृतिक नियमों का अध्ययन ।

(3) अधिक कारगर बाहरी उपयोग-योग्य गर्भ-निरोध-उपकरणों का विकास ।

(4) खाने-योग्य उपयोगी गर्भ-निरोधक का विकास ।

(5) बन्ध्याकरण के बाद पुरुष और स्त्री, दोनों की जांच-पड़ताल, जिससे ऐसे मामलों में बाद में पड़नेवाले प्रभाव मालूम पड़ सकें ।

खाने-योग्य गर्भ-निरोधकों के सम्बन्ध में एक विशेषज्ञ-समिति की स्थापना की गई है, जो इस दिशा में होनेवाले कार्यों की समय-समय पर समीक्षा करेगी और अपनी सिफारिशें पेश करेगी । हाल में ही एक और समिति नियुक्त की गई है, जो परिवार-आयोजन का सन्देश फैलाने, प्रेरणा देने तथा कार्यान्वियन के सम्बन्ध में अनुसन्धान का काम करेगी । परिवार-आयोजन के साथ सम्बद्ध सामाजिक समस्याओं पर भी पहले से अधिक व्यापक आधार पर विचार करना चाहिए ।

66. पिछले पांच वर्षों में बन्ध्याकरण की सुविधाएं कई राज्यों में मुहय्या की गई । अब तक लगभग ऐसे 1,25,000 आपरेशन किए जा चुके हैं । परिवार-आयोजन-कार्यक्रम में स्वेच्छा से बन्ध्याकरण स्वीकार करने का बहुत बड़ा योग है । तीसरी योजना में बन्ध्याकरण की सुविधाएं ज़िला-अस्पतालों, सबडिवीज़न के अस्पतालों और ऐसे प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों में भी मुहय्या करने का इरादा है, जहां चीर-फाड़ के काम के लिए आवश्यक सुविधाएं पहले से मौजूद हैं । चलती-फिरती इकाइयों की सहायता से ये सुविधाएं और भी विस्तृत की जा सकती हैं ।

67. तीसरी योजना में परिवार-आयोजन के क्षेत्र में मुख्य काम कुछ बुनियादी समस्याओं का हल निकालना है तथा परिवार-आयोजन के समर्थन में शिक्षा तथा विस्तार-कार्य के लिए सभी उपलब्ध संस्थाओं का उपयोग करना है । केन्द्र और राज्यों में प्रशासन-संगठन बहुत मज़बूत करने होंगे । हज़ारों प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों और बाद में उनके उपकेन्द्रों को कर्मचारियों और साज़-सामान' से सुसज्जित करने के काम और गांव-गांव में केवल सलाह देने के लिए ही नहीं, बल्कि परिवार-आयोजन के लिए क्रियात्मक सहायता देने के लिए भी पहुंचने के काम को छोटा या सरल नहीं समझना चाहिए । गैर-सरकारी डाक्टरों, देशी चिकित्सकों और ग्रामीण दाइयों को परिवार-आयोजन-केन्द्रों तथा प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों के साथ परिवार-आयोजन के कार्य में सहायता देने के लिए तैयार करने के लिए स्थानीय स्तर पर पूरी सावधानी से आयोजन करना होगा । आवश्यकता के अनुसार बड़े पैमाने पर गर्भ-निरोध-उपकरणों के उत्पादन की व्यवस्था करना भी एक बड़ा काम है । इस कार्य के लिए स्वैच्छिक संगठनों, श्रम-संगठनों तथा राष्ट्रीय जीवन के अन्य क्षेत्रों में काम कर रही संस्थाओं से जितने बड़े पैमाने पर हो सके, सहायता लेना तथा प्रत्येक क्षेत्र में उन्हें एक सूत्र में बांध कर क्रियात्मक सहयोग से कार्यक्रम चलाना आवश्यक है ।

68. अन्त में, यह भी बता देना आवश्यक है कि परिवार सीमित करने के किसी भी व्यापक प्रयत्न के लिए आवश्यक सुविधाओं के साथ-साथ नैतिक और मनोवैज्ञानिक तत्वों, संयम तथा स्त्री-शिक्षा पर, जिससे स्त्रियों के लिए रोज़गार के नए अवसर उपलब्ध हों, तथा विवाह की वय बढ़ाने पर सर्वाधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। सन्तति-नियमन पर सलाह देने के साथ-साथ परिवार-आयोजन की शिक्षा में यौन और पारिवारिक जीवन-सम्बन्धी शिक्षा तथा परिवार को सुखमय बनाने के अन्य उपायों की जानकारी भी शामिल होनी चाहिए।

अध्याय 33

आवास तथा शहरी और ग्रामीण आयोजन

आवास-कार्यक्रम का, जिसे पहली पंचवर्षीय योजना में आरम्भ कर दिया गया था, मुख्य लक्ष्य औद्योगिक मज़दूरों और निम्न आयवाले वर्गों के लिए आवास की व्यवस्था करना था। इस कार्यक्रम को दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में गन्दी बस्तियों की सफाई और सुधार, बागानों के मज़दूरों के आवास, ग्राम-आवास तथा भूमि-अधिग्रहण और विकास के कार्य प्रारम्भ करके बहुत विस्तृत कर दिया गया। नीचे दी गई तालिका में दूसरी योजना में इस मद में पूर्वानुमानित व्यय-राशि दिखाई गई है :

तालिका-संख्या 1

दूसरी योजना में पूर्वानुमानित व्यय

योजनाएं	पूर्वानुमानित व्यय (करोड़ रुपये)
सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास	24.2
गन्दी बस्तियों की सफाई	9.9
निम्न आय-वर्ग के आवास	37.8
ग्राम-आवास	3.7
बागान क्षेत्रों में आवास	0.1
संघीय क्षेत्रों में मध्यवित्त-वर्ग के आवास	0.3
राज्यों की आवास-योजनाएं	1.2
भूमि-अधिग्रहण और विकास	2.0
नगर-आयोजन	1.1
योग ...	80.3

2. ऊपर बताई गई आवास-योजनाओं के अतिरिक्त समाज के विशेष वर्गों—जैसे, ग्रामीण क्षेत्रों में परिगणित जातियों, परिगणित आदिम जातियों और पिछड़ी जातियों, हथकरघा-बुनकरों, विस्थापितों, आदि के लिए भी कुछ विशेष आवास-योजनाएं प्रारम्भ की गईं। कोयला और अभ्रक-उद्योगों के मज़दूरों के लिए आवास-योजनाओं को इन उद्योगों के श्रम-कल्याण-कोश द्वारा दिए गए धन से पूरा किया गया। दूसरी योजना की अवधि में जीवन-बीमा-निगम ने मध्यवित्त-वर्ग को मकान-निर्माण के लिए और राज्य-सरकारों को अपने निम्न आयवाले कर्मचारियों के लिए किराए के मकान बनाने के लिए धन मुहय्या किया। केन्द्रीय सरकार के विभागों-द्वारा तथा निजी उद्योगपतियों-द्वारा भी अपने कर्मचारियों के लिए बड़ी संख्या में मकान बनाने का कार्य किया गया। दूसरी योजना की अवधि में सार्वजनिक आवास के लिए कुल व्यय-परिमाण 250 करोड़ रु० के लगभग था तथा लगभग 5,00,000 मकान बनाए गए।

3. यद्यपि पहली और दूसरी योजनाओं में आवास-सम्बन्धी प्रयत्नों को उत्तरोत्तर बढ़ाया गया, तथापि जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि के कारण मकानों की कमी की समस्या को हल करना आगामी अनेक वर्षों तक एक सिरदर्द बना रहेगा। सन् 1951 और सन् 1961 के बीच 20,000 या इससे अधिक की आबादीवाले नगरों की जनसंख्या में लगभग 40 प्रतिशत की वृद्धि हुई। दूसरी योजना में यह अनुमान लगाया गया कि सन् 1961 में शहरी क्षेत्रों में 50 लाख मकानों की कमी रहेगी, जब कि सन् 1951 में 25 लाख मकानों की कमी थी।

4. जनसंख्या में, विशेष रूप से शहरों की जनसंख्या में, जो वृद्धि हुई है, उससे तीसरी और उसके बाद की पंचवर्षीय योजनाओं में आवास-कार्यक्रमों को किस प्रकार विकसित किया जाए, इस सम्बन्ध में कम-से-कम तीन सामान्य विचारणीय बातें सामने आती हैं। पहली बात, आवास-नीतियों को आर्थिक विकास और बड़े तथा छोटे, दोनों पैमाने के उद्योगीकरण एवं आगामी एक या दो दशाब्दियों में सामने आनेवाली समस्याओं की व्यापक पृष्ठभूमि में निश्चित करना चाहिए। इसी कारण उद्योगों के स्थान एवं उनके बिखराव के प्रस्ताव आवास-समस्या को हल करने की दिशा में अत्यधिक महत्वपूर्ण होंगे। दूसरी बात यह आवश्यक है कि सम्बद्ध सभी अभिकरणों के प्रयत्नों मे, चाहे वे सरकारी क्षेत्र के हों, या सहकारी क्षेत्र के, या निजी क्षेत्र के, समन्वय होना चाहिए। शहरी क्षेत्रों के लिए मास्टर प्लान की तैयारी का महत्व अब पहले से अधिक हो गया है, क्योंकि इन योजनाओं के बिना सुव्यक्त सामान्य उद्देश्यों की दिशा में, जिनके लिए अनेक वर्षों से क्रमबद्ध प्रयत्न किया जा रहा है, विभिन्न अभिकरणों को समन्वित करने और उनके योगदान को अधिकतम रूप से प्राप्त करने का अन्य कोई साधन नहीं है। तीसरी बात, इस प्रकार की परिस्थितियों का निर्माण किया जाना चाहिए, जिनमें मकान-निर्माण का सारा कार्यक्रम—सरकारी और निजी, दोनों ही प्रकार का—इस तरह से नवगठित हो कि समाज के निम्न आयवाले वर्गों की आवश्यकताएं विशेष रूप से पूरी हो सकें। तीसरी योजना के लिए आवास-कार्यक्रम बनाते समय इन बातों को ध्यान में रखने का प्रयत्न किया गया है।

5. विगत कुछ वर्षों से आवास की जिन योजनाओं को कार्यान्वित किया जा रहा है, उन्हें तीसरी योजना में भी जारी रखा जाएगा तथा उनका विस्तार किया जाएगा। इनमें सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास, निम्न आयवाले वर्गों के आवास, गन्दी बस्तियों की सफाई, बागान-मज़दूरों के आवास, भूमि-अधिग्रहण और विकास, तथा ग्रामीण आवास के कार्यक्रम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भूमि-अधिग्रहण और विकास पर विशेष बल दिया जाएगा, क्योंकि यह सभी आवास-कार्यक्रमों की सफलता की बुनियाद है। आर्थिक दृष्टि से समाज के निर्धन वर्गों, गोदी-कर्मचारियों और पटरियों पर रहनेवालों के लिए भी नए आवास-कार्यक्रम हाथ में लिए जाएंगे। राजधानियों, औद्योगिक नगरों और साधन-स्रोतों से सम्पन्न क्षेत्रों के लिए मास्टर प्लान और प्रादेशिक विकास प्लानों के निर्माण के लिए सधन प्रयत्न किया जाएगा। तीसरी योजना में भवन-निर्माण की तकनीकों में अनुसन्धान और परीक्षणात्मक आवास-निर्माण का काम प्रारम्भ करने की व्यवस्था है। इसके साथ ही आवास-सम्बन्धी अंकों का भी संकलन किया जाएगा, जिनका अभाव अतीत काल में एक बड़ी बाधा रहा है।

व्यय-परिमाण और लक्ष्य

6. दूसरी योजना के संशोधित व्यय-परिमाण की तुलना में, जो 84 करोड़ रु० था, तीसरी योजना का व्यय-परिमाण 142 करोड़ रु० रखा गया है। इसके अतिरिक्त, यह आशा की जाती है कि जीवन-बीमा-निगम भी इस मद में अनुमानतः 60 करोड़ रु० की राशि प्रदान करेगा। तीसरी योजना में विभिन्न योजनाओं के लिए व्यय-परिमाण नीचे की तालिका में दिखाया गया है :

तालिका-संख्या 2

तीसरी योजना का व्यय-परिमाण—1961-66

(करोड़ रु०)

योजनाएं		व्यय-परिमाण
(1) **निर्माण, आवास और सम्भरण-मन्त्रालय**		
सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास	...	29.8
गोदी-कर्मचारियों का आवास	...	2.0
गन्दी बस्तियों की सफाई, सुधार और रैन-बसेरों का निर्माण	...	28.6
निम्न आयवाले वर्गों का आवास	...	35.2
संघीय क्षेत्रों में मध्यवित्त-वर्ग का आवास	...	2.5
ग्राम-आवास	...	12.7
बागान-मज़दूरों का आवास	...	0.7
भूमि-अधिग्रहण और विकास	...	9.5
परीक्षणात्मक आवास, अनुसन्धान और अंक-संकलन	...	1.0
योग	...	122.0
(2) **अन्य योजनाएं**	...	
राज्यों की आवास-योजनाएं	...	2.3
मास्टर प्लानों का निर्माण-सहित नगर-आयोजन	...	5.4
शहरी विकास-योजनाएं	...	12.3
योग	...	20.0
योजना में सम्मिलित कार्यक्रमों का योग (1 और 2)	...	142.0
(3) **जीवन-बीमा-निगम की वित्तीय सहायता से चलाए जानेवाले कार्यक्रम**		60.0
सर्वयोग	...	202.0

तीसरी योजना के लिए प्रस्तावित मुख्य लक्ष्य इस प्रकार हैं :

तालिका-संख्या 3

तीसरी योजना के लक्ष्य

		मकानों/झोंपड़ियों की संख्या
सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास	...	73,000
निम्न आयवाले वर्गों का आवास	...	75,000
गन्दी बस्तियों की सफाई	...	1,00,000
ग्राम-आवास	...	1,25,000

7. ऊपर वर्णित आवास-व्यवस्थाओं के अतिरिक्त अन्य स्रोतों से भी वित्तीय सहायता-प्राप्त कुछ आवास-कार्यक्रम हैं। तीसरी योजना की अवधि में कोयला और अभ्रक-खान-कल्याण-कोश-द्वारा 60,000 मकानों के निर्माण के लिए 14 करोड़ रु० दिए जाने की आशा है। पिछड़ी जातियों के लिए जो कल्याण-कार्यक्रम हैं, उनमें उन्हें आवास मुहय्या करना भी शामिल है। रेलवे, वाणिज्य और उद्योग, संचार तथा अन्य मन्त्रालयों के अस्थायी अनुमानों से पता चलता है कि ये मन्त्रालय भी तीसरी योजना की अवधि में अपने कर्मचारियों के लिए लगभग 200 करोड़ रु० खर्च करके 3,00,000 मकान बनवाएंगे। कुल मिला कर, तीसरी योजना में विभिन्न आवास-कार्यक्रमों और मन्त्रालयों के निर्माण-कार्यो के अधीन 9,00,000 मकानों के बनाए जाने की सम्भावना है, जब कि दूसरी योजना की अवधि में 5,00,000 मकान बनाए गए।

8. निजी क्षेत्रों में भी बहुत अधिक मकान बनाए गए, परन्तु उसकी विपुलता का ठीक अनुमान लगा सकना कठिन है। पहली योजना में मकानों और निजी निर्माण-कार्यों पर 900 करोड़ रु० की पूंजी लगाई गई। दूसरी योजना के लिए यह अनुमान 1,000 करोड़ रु० का है। तीसरी योजना में मकानों तथा अन्य निजी निर्माण-कार्यो में निजी क्षेत्र की पूजी के विनियोग का अनुमान 1,125 करोड़ रु० का है।

आवास-मंडल

9. विकास की वर्तमान स्थिति में सरकार-द्वारा दी गई सीधी वित्तीय सहायता से आवास-सम्बन्धी आवश्यकताओं के एक अल्प भाग की ही पूर्ति हो सकती है। इसलिए यह आवश्यक है कि लोगों की एक बहुत बड़ी संख्या, जिनमें से अधिकांश की आय बहुत कम है, अपने मकान स्वयं बनाने में समर्थ हो सके। इसके लिए संगठनात्मक व्यवस्था की ज़रूरत है। इस सम्बन्ध में एक केन्द्रीय आवास-मंडल स्थापित करने की सम्भावनाओं पर इस समय विचार किया जा रहा है। इस प्रकार का संगठन आवास के लिए अतिरिक्त कोश प्राप्त करने में सहायता कर सकता है; अनेक बातों के द्वारा, जिनमें बन्धक भी शामिल है, आसान शर्तों पर ऋण की व्यवस्था कर सकता है; ऋण-विषयक व्यवहार में सुधार कर सकता है और आवास के लिए सुधरी हुई बन्धक-पद्धति की व्यवस्था कर सकता है। उदाहरण के लिए, यह संगठन कुछ सीमा तक स्वयं वित्त जुटा सकता है और राज्य-सरकारों को या राज्यों के आवास-मंडलों को ज़मीन की खरीद और विकास के लिए, मकान बनाने के लिए तथा गन्दी बस्तियों के अधिग्रहण एवं उनके पुनर्विकास के लिए ऋण प्रदान कर सकता है। जीवन-बीमा-निगम और केन्द्रीय सरकार-द्वारा प्राप्त कोश भी इसी के माध्यम से वितरित किए जा सकते हैं। उन राज्यों में, जहां आवास-मंडल पहले से स्थापित हैं, वे सामान्यतः राज्यों के आवास-कार्यक्रमों के परिपालन के लिए निर्माण-अभिकरणों के रूप में कार्य कर रहे हैं। केन्द्रीय आवास-मंडल तथा राज्यों के आवास-मंडलों से उचित समय पर आवास-साधनों के विकास के लिए वे साधन प्राप्त हो सकते हैं, जिनका सामान्य स्थिति में उपलब्ध होना सम्भव नहीं है। ये संस्थाएं मिल कर ऐसी आवास-नीति के निर्माण में सहायता दे सकती हैं, जिससे सीमित साधनवाले व्यक्तियों को अपने निज के प्रयोग के लिए मकान बनाने में सुविधा मिले और जिससे बैंक तथा अन्य वित्तीय संगठन विभिन्न सेवा-कार्य कर सकें। यह प्रस्ताव है कि तीसरी योजना के आवास-कार्यक्रमों को पूरा करने

तथा भविष्य में विशाल विकास की बुनियाद रखने की दृष्टि से इन पहलुओं पर और अधिक विचार किया जाए ।

भूमि-अधिग्रहण और विकास

10. आवास-कार्यक्रमों के सफल सम्पादन के लिए यह आवश्यक है कि भवन-निर्माण के लिए पर्याप्त मात्रा और उचित मूल्यों पर भूमि उपलब्ध हो । इसलिए तीसरी योजना में आवास के लिए उपलब्ध धन के एक पर्याप्त बड़े भाग को भूमि-अधिग्रहण और विकास के लिए निश्चित किया गया है । सन् 1959 में राज्य-सरकारों को चुने हुए स्थानों पर भूमि का अधिग्रहण और विकास करने के लिए 10 वर्ष में लौटाने-योग्य ऋण के द्वारा वित्तीय सहायता देने के कार्यक्रम को जारी किया गया था । इस प्रकार, जिस भूमि का अधिग्रहण किया जाएगा, उसका उपयोग विभिन्न योजनाओं के अधीन आवास, निर्माण तथा समाज को दी जानेवाली विभिन्न सुविधाओं—जैसे, सार्वजनिक उद्यान, खेल के मैदान, स्कूल, अस्पताल, दुकानें, डाकघर, आदि—के लिए किया जाएगा । तीसरी योजना में (जीवन-बीमा-निगम का योगदान-सहित) भूमि के अधिग्रहण और विकास के लिए 26 करोड़ रु० का व्यय-परिमाण निश्चित किया गया है । इस कार्यक्रम के अधीन जो साधन प्राप्त होंगे, वे राज्यों में 'गतिशील कोश' के रूप में और उन्हें बड़ी मात्रा में भूमि के अधिग्रहण और विकास के लिए काम में लाया जाएगा ।

औद्योगिक श्रमिकों का आवास

11. सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास-कार्यक्रम के अधीन, जिसे सन् 1952 में मुख्यतः निजी क्षेत्र के कारखानों और खदानों में काम करनेवाले औद्योगिक मज़दूरों को आवास-सम्बन्धी सुविधा प्रदान करने के लिए बनाया गया था, केन्द्रीय सरकार राज्य-सरकारों, राज्यों के आवास-मंडलों और नगरपालिकाओं को कुल खर्च का 50 प्रतिशत ऋण के रूप में और शेष 50 प्रतिशत सहायता के रूप में प्रदान करती है । उद्योगपतियों और औद्योगिक मज़दूरों की सहकारी समितियों को कुल व्यय के क्रमशः 75 प्रतिशत और 90 प्रतिशत अंश तक वित्तीय सहायता प्रदान की गई । इन दोनों मामलों में सहायता की अनुदान-राशि 25 प्रतिशत है । औद्योगिक मज़दूरों को खर्च का शेष 10 प्रतिशत प्राप्त करने के लिए यह अनुमति दी गई कि वे अपनी भविष्य-निधि (प्राविडेंट फंड) से न लौटाने-योग्य ऋण ले सकते हैं । दूसरी योजना के अन्त तक 45 करोड़ रु० की लागत के 1,40,000 मकानों के निर्माण की अनुमति प्रदान की गई । इनमें से 1,00,000 मकान बन कर तैयार हो गए हैं तथा शेष निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं में हैं ।

12. यदि सहायता-अनुदान की दर से नियत किए गए किराए मज़दूरों की आर्थिक क्षमता की दृष्टि से अधिक न होते, तो यह कार्यक्रम और अधिक प्रगति करता । इसका परिणाम यह हुआ कि कुछ क्षेत्रों में बनाए गए मकानों में औद्योगिक मज़दूर रहने के लिए गए ही नहीं । अतः किरायों को कम करने के प्रश्न पर, जिससे वह मज़दूरों की दे सकने की क्षमता के अनुकूल हो, और विचार किया जाना चाहिए । इसके साथ ही मज़दूरों को अपने काम के स्थान तक ले जाने के लिए सस्ते परिवहन भी उपलब्ध कराने चाहिए । योजना के कुछ पहलुओं को संशोधित भी कर दिया गया है । मज़दूरों को विभिन्न प्रकार की आवास-व्यवस्थाओं में से किसी एक के चुनाव के पर्याप्त अवसर हैं । मज़दूर खाली और विकसित

प्लाट, तथा उसके साथ ही मकान बनाने एवं छत डालने के काम में आनेवाले सामान ले सकते हैं तथा निर्धारित स्वरूप के मकान स्वयं बना सकते हैं। जो मजदूर खुले प्लाट पर 'स्वनिर्मित' मकान नहीं लेना चाहते, उन्हें 'ढांचायुक्त' आवास, जिसमें नींव, भवन-कुर्सी और छत होती है, प्रदान किए जाते हैं। खुले विकसित प्लाट का मासिक किराया 2 से 3 रु० तक है, जब कि ढांचायुक्त मकान का किराया 8 रु० मासिक है। परिवार के साथ न रहनेवाले मज़दूरों के लिए ऐसे आवास या कमरे बनाए गए हैं, जिनमें एक साथ कई लोग रह सकें। आवास-निर्माण को प्रोत्साहन देने की दिशा में ऋण अदा करने की अवधि में वृद्धि, भवन-निर्माण में काम आनेवाले सामान के महंगे होने तथा मकान बनानेवाले मज़दूरों के मेहनताने में हुई वृद्धि को देखते हुए खर्च के अधिकतम स्तर को उनके अनुरूप करना, एलाटमेंट-सम्बन्धी नियमों को सरल बनाना और मालिकों तथा सहकारी समितियों को विकसित प्लाट देने की व्यवस्था करना, आदि कुछ परिवर्तन भी किए गए हैं। हाल ही में उद्योगों के मालिकों को अपने निम्न आयवाले कर्मचारियों के लिए बनाए गए नए मकानों पर आनेवाले व्यय का 20 प्रतिशत प्रारम्भिक अवमूल्यन-भत्ते के रूप में, आय-कर में, छूट दी गई है। यह छूट उससे अलग है, जो छोटे मकानों के कुल किरायों से प्राप्त आय पर 3 वर्ष तक आय-कर न देने के सम्बन्ध में है।

13. उद्योगों के मालिकों के लिए औद्योगिक आवास-कार्यक्रमों को अधिक आकर्षक बनाने के लिए उठाए गए कदमों के बावजूद, इस दिशा में तब तक अच्छी प्रगति नहीं की जा सकती, जब तक उद्योगपति अपने अधिकांश मज़दूरों के लिए आवास की व्यवस्था करना अपनी आवश्यक ज़िम्मेदारी नहीं समझते। इस बात को भी ध्यान में रखना ज़रूरी है कि औद्योगिक मज़दूरों के लिए आवास की स्थितियां निरन्तर बिगड़ती जा रही हैं। इस दिशा में सुधार न करने का प्रभाव औद्योगिक कुशलता और उत्पादकता बढ़ाने के प्रयत्नों पर भी पड़ेगा। इसलिए समस्या नए स्थापित होनेवाले और पुराने उद्योगों के लिए एक ऐसी व्यवस्था करने की है, जो वित्तीय तथा अन्य पहलुओं से क्रियात्मक हो और जिससे आवास-समस्या के समाधान में ठीक सहायता मिल सके। उदाहरण के लिए, नए उद्योगों की, जिनकी निर्धारित चुकता पूंजी सीमित (मान लीजिए, 20 लाख रु० या इससे अधिक) है, यह ज़िम्मेदारी होगी कि वे अपने कर्मचारियों के लिए आवश्यक आवास-सम्बन्धी व्यय के आधे की, एक अवधि में, अनुमानतः 10 वर्षों में, व्यवस्था करें। जहां तक पुराने उद्योगों का सम्बन्ध है, किसी भी विशेष कार्यक्रम के अधीन उद्योगपति-द्वारा मज़दूरों के आवास की व्यवस्था के लिए पहले दिए गए योग को ध्यान में रखना होगा। इन उद्योगों में भी लक्ष्य यह होना चाहिए कि एक अवधि में स्वतः उद्योग-द्वारा ही आवास की 50 प्रतिशत मांग को पूरा कर दिया जाए तथा शेष को सामान्य आवास-कार्यक्रम के अधीन पूरा किया जाए। जहां उद्योगपति स्वतः निर्माण करने में असमर्थ हैं, वहां सरकार या आवास-मंडल निर्माण-कार्य अपने हाथ में ले सकते हैं। ऐसी स्थिति में उद्योगपति को निर्माण में आनेवाला व्यय देना होगा। एक सन्तोषजनक कार्यक्रम बनाने के लिए इन तथा अन्य सुझावों पर उद्योगपतियों और श्रमिकों के प्रतिनिधियों के साथ संयुक्त रूप से विचार-विमर्श किया जाना चाहिए।

गोदी-कर्मचारियों के लिए आवास

14. तीसरी योजना में बम्बई, कलकत्ता और मद्रास के गोदी-कर्मचारी-मंडलों को 2 करोड़ रुपये की ऋण-सहायता देने की व्यवस्था की गई है, जिससे वे अपने यहां दर्ज

कर्मचारियों के लिए मकान बनवा सकें। एक उचित मार्ग यह हो सकता है कि सरकार कुल निर्माण-व्यय का 80 प्रतिशत तक ऋण-अनुदान के रूप में दे दे। योजना में जो व्यवस्था की गई है, उससे 5,000 मकानों का निर्माण सम्भव होना चाहिए। हाल के वर्षों में बन्दरगाहों का विकास बड़े पैमाने पर हो रहा है और बन्दरगाह-अधिकारियों के सहयोग से बन्दरगाहों में आवास-समस्या के लिए एक समन्वित दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए।

निम्न आयवाले वर्गों के लिए आवास

15. निम्न आयवाले वर्गों के लिए आवास-कार्यक्रम में मकान-निर्माण पर आनेवाले व्यय का 80 प्रतिशत तक ऋण-अनुदान, जो कि 8,000 रु० से अधिक नहीं होगा, ऐसे व्यक्ति को देने की व्यवस्था है, जिसकी वार्षिक आय 6,000 रु० से अधिक नहीं है। इसी पैमाने पर स्थानीय निकायों, 'न लाभ न हानि' के आधार पर चलनेवाली सार्वजनिक संस्थाओं, मान्यता-प्राप्त स्वास्थ्य, धर्मार्थ और शिक्षण-संस्थाओं एवं सहकारी समितियों को भी सहायता दी जाती है।

16.. सन् 1954 से, जब इस कार्यक्रम को प्रारम्भ किया गया, लगभग 85,000 मकानों के निर्माण की अनुमति दी जा चुकी है तथा दूसरी योजना के अन्त तक लगभग 53,000 मकान बन कर तैयार हो गए थे। इस कार्यक्रम के अधीन ऋण की बहुत मांग है। नगरों में, जहां विकसित प्लाट उपलब्ध हैं, इस दिशा में अधिक प्रगति हुई है। यह अनुभव किया गया है कि तीसरी योजना में समाज के उन वर्गों के लिए, जो आर्थिक दृष्टि से कमजोर हैं, यानी जिनकी वार्षिक आय 1,800 रु० या इससे कम है, तथा जो इस कार्यक्रम का लाभ नहीं उठा सकते हैं, विशेष कदम उठाए जाने चाहिए। इस वर्ग के लोग 10-12 रु० या बहुत हुआ तो 15 रु० मासिक तक किराया दे सकने की स्थिति में होते हैं। इनको आवास प्रदान करने का मुख्य तरीका यह है कि इनको किराए पर देने के लिए या तो आवास-मंडल और स्थानीय निकाय या आवास-सहकारी समितियां मकान बनाएं। इस समस्या पर और अधिक विचार के आधार के रूप में, यह सम्भव हो सकता है कि स्थानीय निकायों को सूद की आसान दरों पर लम्बे समय में लौटाने-योग्य ऋण दिया जा सके—पक्के मकानों के अतिरिक्त, औद्योगिक आवास-पद्धति पर खाली विकसित प्लाटों और ढांचायुक्त आवास के प्रदान करने और गन्दी बस्तियों की सफाई, कार्यक्रमों पर भी विचार किया जा सकता है। ऐसी आवास-सहकारी समितियों को, जिनके सदस्य प्रायः समाज के निर्धन वर्ग के व्यक्ति हैं, इसी प्रकार की सहायता प्रदान की जा सकती है। मोटे रूप में, निम्न आयवाले वर्गों के लिए आवास-कार्यक्रम का एक-तिहाई भाग आर्थिक दृष्टि से निर्धन व्यक्तियों के लिए होगा। राज्य और स्थानीय करों से मुक्ति के प्रश्न पर भी विचार करने की आवश्यकता है। ज्यों-ज्यों निम्न आयवाले वर्गों के आवास के लिए संस्थाओं से वित्तीय सहायता सामान्यतः उपलब्ध होगी, त्यों-त्यों सरकार-द्वारा इस मद में दी गई राशि के एक बड़े भाग को आर्थिक दृष्टि से निर्धन वर्गों के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।

बागान-मजदूरों का आवास

17. सन् 1951 के बागान-मजदूर-अधिनियम में यह व्यवस्था है कि बागान-मालिक बागान में रहनेवाले मजदूरों और उनके परिवारों के लिए आवश्यक आवास-सुविधाएं

प्रदान करें। यह आवास-व्यवस्था प्रतिवर्ष कुल मजदूरों के 8 प्रतिशत भाग को उपलब्ध कराने के हिसाब से तब तक जारी रहनी चाहिए, जब तक सभी मज़दूरों को आवास न मिल जाए। अनेक बागान-मालिकों ने, विशेषतः छोटे बागान-मालिकों ने, वित्तीय साधनों के अभाव में इस दायित्व को पूरा करने में असमर्थता अनुभव की। इसलिए ऐसे बागान-मालिको को आवश्यक वित्तीय सहायता देने के लिए सन् 1956 में बागान-मज़दूर-आवास-योजना लागू की गई। इस योजना के अधीन मकान पर आनेवाले कुल व्यय का, जिसमें भूमि का मूल्य और विकास-व्यय शामिल नहीं है, 80 प्रतिशत तक ऋण के रूप में दिया जाता है। इसके लिए शर्त यह है कि यह ऋण-राशि प्रति मकान उत्तर-भारत में 2,400 रु० और दक्षिण-भारत में 1,920 रु० से अधिक नहीं होगी। शेष 20 प्रतिशत राशि बागान-मालिकों को अपने स्रोतों से जुटानी होगी।

18. दूसरी योजना के अन्त तक केवल 700 मकान बनाने की स्वीकृति दी गई थी और 300 तैयार हो गए थे। इस कार्यक्रम के मार्ग मे मुख्य बाधा बागान-मालिकों-द्वारा ऋणों के लिए उचित गारंटी प्रदान न करने की रही है। कार्यक्रम में यह व्यवस्था है कि बागान-मालिक ऋण की गारंटी के लिए अपने बागानों में बने मकानों और उनकी भूमि को राज्य-सरकारों के नाम बन्धक रख दें। बागान-मालिक इस शर्त का पालन करने मे असमर्थ हैं, क्योंकि उनकी भूमियां एवं सम्पत्ति पहले ही बागानों को चलाने के लिए बैंकों से लिए गए ऋणों के लिए बैकों के नाम प्रायः बन्धक होती है।

19. बागान-मालिक इन ऋणों का लाभ उठा सके, इसके लिए कुछ राज्यों ने गारंटी की इस शर्त को भी ढीला कर दिया है। बागान-मालिकों को दिए गए ऋणों पर ½ प्रतिशत अतिरिक्त सूद लेकर एक 'सामूहिक गारंटी कोश' की स्थापना का भी प्रस्ताव है। इस कोश से प्राप्त होनेवाले सूद को भी इसी कोश में जमा कर दिया जाएगा। यह कोश ऋण-अनुदानों के लिए एक सामूहिक गारंटी के रूप में प्रयुक्त किया जाएगा। यदि हानि इस कोश की सम्पत्ति से अधिक हुई, तो उसका भार केन्द्रीय सरकार, राज्य-सरकार और सम्बद्ध मंडल मिल कर वहन कर लेंगे।

मध्यवित्त-वर्ग के लिए आवास

20. मध्यवित्त-वर्गों को ऋण प्रदान करने के लिए फरवरी 1959 में जीवन-बीमा-निगम-द्वारा दी गई राशि से एक कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इसका उद्देश्य ऐसे लोगों को आवास-ऋण प्रदान करना है, जिनकी वार्षिक आय 6,000 रु० से लेकर 12,000 रु० तक है। इस कार्यक्रम के अधीन मकान पर आनेवाले व्यय का 80 प्रतिशत, जो 16,000 रु० से अधिक नहीं होगा (ऐसे मामलों में, जिनके पास प्लाट भी नही है, 20,000 रु० तक) ऋण-अनुदान के रूप देने की व्यवस्था है। व्यक्तिगत उधार देनेवाले को ऋण राज्य-सरकारों के माध्यम से 5½ प्रतिशत ब्याज पर दिए जाते है। दूसरी योजना के अन्त तक 10.5 करोड़ रु० की राशि राज्य-सरकारों और संघीय क्षेत्र के अधिकारियों को दी गई। 3,600 प्रार्थियों को ऋणों की स्वीकृति दी गई तथा लगभग 500 मकान बनाए गए। प्रारम्भ में, नया कार्यक्रम होने के कारण तथा ऋण-अनुदान देने के लिए नियम बनाने एवं अन्य व्यवस्थाएं करने में विलम्ब के कारण कार्यक्रम में प्रगति कुछ मन्द हुई। तीसरी योजना में संघीय क्षेत्रों के अतिरिक्त इस कार्यक्रम के अधीन कोई वित्तीय व्यवस्था नही

की गई है, परन्तु इस बात की सम्भावना है कि जीवन-बीमा-निगम-द्वारा प्रदत्त राशि में से 20 करोड़ रु० मध्यवित्त-वर्ग की आवास-योजना के लिए तथा नीचे उल्लिखित राज्य-सरकारों के कर्मचारियों को किराए पर मकान बनाने की योजना के लिए उपलब्ध हो सकेंगे।

राज्य-सरकारों के कर्मचारियों के लिए किराए के आवास

21. राज्य-सरकारों के कर्मचारियों को किराए पर मकान देने की योजना का उद्देश्य राज्य-सरकारों को अपने निम्न आयवाले कर्मचारियों के लिए आवास-व्यवस्था करने में सहायता देना है। इस योजना के अधीन, जिसे सन् 1959 में लागू किया गया था, जीवन-बीमा-निगम 5 प्रतिशत वार्षिक सूद की दर से राज्य-सरकारों को ऋण देता है। यह ऋण 20 वर्षों में लौटाया जा सकेगा। दूसरी योजना की अवधि में इस कार्यक्रम के अधीन राज्य-सरकारों को 7 करोड़ रु० दिए गए तथा 2,500 मकानों के निर्माण की स्वीकृति दी गई, जिनमें से 735 का निर्माण पूरा हो गया।

गन्दी बस्तियों की सफाई और सुधार

22. तीसरी योजना के कार्यक्रम में गन्दी बस्तियों की सफाई और सुधार के लिए लगभग 29 करोड़ रु० रखे गए हैं। राज्य-सरकारों और स्थानीय निकायों को बड़े नगरों की कुछ अत्यधिक गन्दी बस्तियों की सफाई के लिए वित्तीय सहायता देने के कार्यक्रम को दूसरी योजना में प्रारम्भ किया गया था। दूसरी योजना के अन्त तक विभिन्न कस्बों और नगरों में गन्दगी की स्थिति में रहनेवाले 58,200 परिवारों के पुनर्वास के लिए 19 करोड़ रु० की लागत की 208 परियोजनाओं पर कार्य प्रारम्भ किया गया। मकानों की 18,000 इकाइयां तैयार हो गई हैं। ऐसे परिवारों के लिए, जो पक्के कमरों के लिए सहायता-अनुदान के अनुसार किराया देने में भी असमर्थ हैं, उक्त कार्यक्रम में ढांचा-आवासों और बिना बने विकसित प्लाटों को, जिनके साथ प्रत्येक परिवार के लिए अलग से स्नानागारों के चबूतरे और शौचालय भी हैं, देने की व्यवस्था है। गन्दी बस्तियों में रहनेवालों पर ही इसका भार छोड़ दिया जाता है कि वे राज्य-सरकारों के तकनीकी परामर्श के अनुसार बनाए गए ढंग पर अपने मकान स्वयं बना लें।

23. गन्दी बस्तियों की सफाई और उनके सुधार के कार्य में आनेवाली कुछ कठिनाइयां ये हैं: गन्दी बस्तियों के अधिग्रहण के लिए लम्बी और समय लेनेवाली प्रक्रिया, कम समय लेनेवाली प्रक्रियाएं, काम के वर्तमान स्थानों के निकट वैकल्पिक स्थानों का न मिलना और यदि मिल भी जाएं, तो उनका बहुत अधिक महंगा होना, गन्दी बस्तियों के निवासियों की सहायता-अनुदान के अनुसार किराया देने में भी असमर्थता और जिन इलाकों को सफाई के लिए चुन लिया गया है, वहां से हटने में उनकी आनाकानी। मैसूर, मद्रास, मध्यप्रदेश, असम, पंजाब, पश्चिम-बंगाल, आदि राज्यों तथा दिल्ली-प्रशासन ने गन्दी बस्तियों के अधिग्रहण के कार्य में शीघ्रता लाने तथा मुआवज़े की राशि में कमी करने के लिए कानून भी बनाए हैं। इस प्रकार के कानून जहां नहीं बने हैं, वहां भी बनाने की आवश्यकता है। योजना की परियोजना-सम्बन्धी समिति-द्वारा नियुक्त एक अध्ययन-दल ने तथा गन्दी बस्तियों की सफाई के बारे में बनाई गई परामर्श-समिति ने इस कार्यक्रम की समीक्षा की थी। इन समितियों ने यह सिफारिश की है कि जहां दीर्घकालीन योजना आवश्यक है, वहां यह और

भी ज़रूरी है कि गन्दी बस्तियों की नरक के समान स्थिति को दूर करने के लिए अल्पकालीन उपाय बरतने पर भी विचार किया जाए। इस दिशा में अविलम्ब कार्रवाई के रूप में न्यूनतम सुविधाएं—यथा, स्वच्छ शौचालय, पानी की निकासी के लिए अच्छी नालियां, स्वच्छ जल-आपूर्ति, मुख्य सड़क से मिलानेवाली सामान्यतः अच्छी सड़कें, पटी हुई गलियां और प्रकाश की समुचित व्यवस्था—प्रदान की जानी चाहिए। इन समितियों की रिपोर्टों पर विचार करने के बाद गन्दी बस्तियों की सफाई के कार्यक्रम के क्षेत्र को बढ़ा दिया गया, जिससे उसकी परिधि में गन्दी बस्तियों का सुधार भी आ जाए। छः मुख्य नगरों—यथा, कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, दिल्ली, कानपुर और अहमदाबाद—में गन्दी बस्तियों की समस्या को अविलम्ब प्राथमिकता देने के लिए बड़ी मात्रा में साधन प्रदान किए गए। इन नगरों में गन्दी बस्तियों की सफाई के लिए कुल सहायता-अनुदान को 50 प्रतिशत से बढ़ा कर 62½ प्रतिशत कर दिया गया है और इसमें केन्द्रीय सरकार का हिस्सा 25 प्रतिशत से बढ़ा कर 37½ प्रतिशत कर दिया गया है।

24. ऊपर बताए गए छः नगरों में इस कार्यक्रम के अधीन अधिकतम प्रयत्न जारी रहना चाहिए। तीसरी योजना में यह प्रस्ताव है कि सिद्धान्ततः राज्य-सरकारें जहां समझें कि गन्दी बस्ती की समस्या उग्र रूप में है, वहां गन्दी बस्तियों की सफाई और सुधार का कार्य हाथ में लिया जा सकता है। साधनों के सीमित होने के कारण यह विचार किया गया है कि सामान्यतः उन नगरों को प्राथमिकता दी जाए, जिनकी जनसंख्या 1,00,000 या इससे अधिक है। यह सुझाव दिया गया है कि राज्य-सरकारें गन्दी बस्तियों के सर्वेक्षण की व्यवस्था करा सकती हैं तथा उनका दो श्रेणियों में—ऐसे क्षेत्र, जिन्हें पूरी तरह साफ करा कर नए सिरे से विकसित करना होगा; और दूसरे वे, जिनको आसपास की परिस्थितियों में सुधार कर रहने योग्य बनाया जा सकता है—वर्गीकरण कर सकती हैं। दूसरी श्रेणी में आनेवाली गन्दी बस्तियों के मालिक यदि स्वयं आवश्यक सुधार न करें, तो स्थानीय निकायों को यह कार्य स्वयं करके उसका खर्चा मालिकों से वसूल कर लेना चाहिए; जहां कहीं आवश्यक हो, वहां सम्पत्ति को अपने अधिकार में भी लिया जा सकता है। जहां कहीं सरकारी भूमि पर या अधिग्रहण की गई भूमि पर स्थित गन्दी बस्तियों में सुधार का कार्य स्थानीय निकाय करें, वहां उन निकायों को आवश्यक सुविधाएं प्रदान करने के लिए अनुदान दिया जाना चाहिए। गन्दी बस्तियों की सफाई और सुधार के कार्य में स्वैच्छिक संगठनों और सामाजिक कार्यकर्ताओं का भी पूरा सहयोग लिया जाना चाहिए।

25. जहां वर्तमान गन्दी बस्तियों की सफाई के लिए कदम उठाए गए हैं, वहां यह बात भी महत्वपूर्ण है कि नई गन्दी बस्तियों को भी पनपने न दिया जाए। इस लक्ष्य की भी पूर्ति कोई सरल बात नहीं है। सभी बढ़नेवाले नगरों और कस्बों के लिए मास्टर प्लान बनाने तथा उस पर कठोरता से अमल करने के अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि नगरपालिका के उपनियमों और भवन-निर्माण-नियमों को भी लागू किया जाए; तथा इसके साथ-साथ निम्न आयवाले और आर्थिक दृष्टि से निर्धन वर्ग के लोगों को भी आवास-सुविधाएं प्रदान की जाएं। संक्रमणकालीन कदम के रूप में यह आवश्यक है कि पटरियों पर रहनेवालों और बिना परिवार के मज़दूरों के लिए रैन-बसेरे और शयनागार बनवाए जाएं। इसी प्रकार, भंगियों और मेहतरों के आवास पर भी विशेष ध्यान दिया जाना

चाहिए । सफाई और सुधार करने के लिए गन्दी बस्तियों के चुनाव में, जहां भंगी और मेहतर बड़ी संख्या में रहते हों, उन इलाकों को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए ।

शहरी आयोजन और भूमि-नीति

26. शहरीकरण आर्थिक और सामाजिक विकास के क्रम का एक महत्वपूर्ण पहलू है। यह अन्य अनेक समस्याओं से निकट रूप से जुड़ा हुआ है—यथा, ग्रामीणों का ग्रामों से शहरों की ओर प्रवास, ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में जीवन के स्तर, नगरों में विभिन्न प्रकार की आर्थिक और सामाजिक सेवाएं मुहय्या करने में आनेवाला सापेक्ष व्यय, जनता के विभिन्न वर्गों के लिए आवास-व्यवस्था, जल-सम्भरण, सफाई, परिवहन और बिजली, आदि की व्यवस्था करना, आर्थिक विकास का ढांचा, उद्योगों का स्थान और उनका वितरण, नागरिक प्रशासन, वित्तीय नीतियां और भूमि के उपयोग का आयोजन। शहरों के लिए, जो बड़ी तेज़ी से बढ़ रहे हैं, ये सब पहलू बड़े महत्वपूर्ण हैं । ऐसे नगरों की संख्या, जिनकी जनसंख्या 1,00,000 या इससे अधिक है, सन् 1951 में 75 थी, परन्तु सन् 1961 में इनकी संख्या बढ़ कर 115 हो गई है, तथा इनकी जनसंख्या कुल शहरों की जनसंख्या का 43 प्रतिशत भाग है। ऊपर जो पहलू बताए गए हैं, उनमें अन्ततः सर्वाधिक निर्णायक आर्थिक विकास का स्वरूप और उद्योगों के स्थान के बारे में अपनाई गई आम नीति है । व्यापक उद्देश्य यह होना चाहिए कि बड़े, मध्यम आकार के और लघु उद्योगों में तथा ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में सन्तुलित विकास हो। जब कि यह भी कोई आसान काम नहीं है, विकास-नीति के मुख्य तत्व या घटक इस प्रकार हैं :

(1) जहां तक सम्भव हो, नए उद्योगों को बड़े और अधिक घने बसे नगरों से दूर स्थापित किया जाए ।

(2) बड़े उद्योगों के आयोजन में, क्षेत्र की स्थिति को ध्यान में रखा जाना चाहिए । प्रत्येक मामले में, आयोजन वर्तमान क्षेत्र की परिधि से बाहर बड़े क्षेत्र को ध्यान में रख कर होना चाहिए, जिसके विकास के लिए नया उद्योग मुख्य केन्द्र बन सके ।

(3) सामुदायिक विकास-परियोजनाओं में या ज़िले के ही अन्य क्षेत्रों में, विकास के ग्रामीण और शहरी घटक परस्पर एक समग्र योजना के अंग में सम्बद्ध हों तथा प्रत्येक मामले में योजना का आधार नगरों और आस-पास के ग्रामीण क्षेत्रों में परस्पर आर्थिक निर्भरता को बल प्रदान करना हो ।

(4) प्रत्येक ग्रामीण क्षेत्र में इस प्रकार का प्रयत्न होना चाहिए कि खेती पर ही अत्यधिक निर्भर रहने के स्थान पर लोग अधिकाधिक पेशों के विविधता-पूर्ण ढांचे को अपनाएं।

आगामी दशाब्दी में शहरी समस्या के सम्भावित स्वरूप को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि इस समय जो स्थिति है, उसको ठीक किया जाए तथा भविष्य के लिए इस प्रकार की व्यवस्था की जाए, जिससे जो भी समस्या सामने आए, उसके लिए ठीक कदम उठाया जा सके ।

27. **शहरी विकास का व्यय :** तेज़ी से बढ़ते नगरों में जीवन की स्थितियों मे जो बिगाड़ आता जा रहा है, उसका कारण शहरी विकास का—विशेषतः जल-आपूर्ति, गन्दे पानी की निकासी के लिए नालिया, परिवहन एवं अन्य सेवाओं का—अत्यधिक व्ययसाध्य होना है। यह स्थिति बेकारी, अत्यधिक भीड़भाड़, गन्दी बस्तियों के बढ़ने और इस तथ्य के कारण और भी अधिक विषम हो गई है कि अनेक नगरों मे पर्याप्त बड़ी संख्या में लोगों के लिए आश्रय की व्यवस्था नही है। समस्याएं आकार-प्रकार, दोनों में ही विशाल और जटिल हैं। इनका समाधान दो ही प्रकार से हो सकता है : प्रथम यह, कि न केवल राज्य-सरकारें, अपितु नगरपालिका-प्रशासन और जनता भी इसकी विकरालता को समझें, और दूसरा यह कि सामुदायिक प्रयत्नों को और नागरिकों के इसमें भाग लेने को अधिकाधिक बढ़ाया जाए। कुछ ऐसे न्यूनतम निर्देश है, जिन पर तीसरी योजना में कार्रवाई की जानी चाहिए, जिससे कम-से-कम भविष्य मे एक उचित मार्ग निश्चित हो सके। ये हैं :

(1) सार्वजनिक उपयोग के लिए भूमि के अधिग्रहण-द्वारा तथा उचित वित्तीय नीतियों-द्वारा शहरी भूमि के मूल्यों पर नियन्त्रण;

(2) भूमि के प्रयोग के बारे मे भौतिक आयोजन और मास्टर प्लानों का निर्माण;

(3) आवासों तथा नगरों को उनकी आवश्यकताओं के अनुसार प्रदान की जानेवाली विभिन्न सेवाओं के लिए एक उचित मानदंड का निर्धारण; साथ ही ये सेवाएं कितनी अधिक आवश्यक है, इसका भी मानकीकरण; और

(4) विकास की नई ज़िम्मेदारियों को उठाने के लिए नगरपालिका-प्रशासन को सक्षम बनाना।

28. **शहरी भूमि के मूल्यों का नियन्त्रण :** मकानों के एवं अन्य प्रकार के खर्चों में वृद्धि का तथा निम्न आयवाले वर्गो के हित के लिए हाथ मे लिए गए विकास-कार्यो की गति को मन्द करने का सर्वाधिक मुख्य कारण भूमि की कीमतों का बहुत अधिक बढ़ जाना है। भूमि के मूल्यों में सामान्य वृद्धि के अलावा वृद्धि का एक मुख्य कारण सट्टेबाज़ी है। कुछ नगरों में नए उद्योगों तथा नए सरकारी और अन्य निजी कार्यालयों की स्थापना एक ऐसा प्रभावशाली तत्व है, जिससे भूमि की सट्टेबाज़ी को प्रोत्साहन मिलता है। चूंकि सारे देश में द्रुत गति से आर्थिक विकास हो रहा है तथा इसका प्रभाव सभी दिशाओं मे पड़ रहा है, इसलिए भूमि का मूल्य बढ़ानेवाले तत्व प्रायः सभी शहरी क्षेत्रों मे विद्यमान हैं। अनेक शहरी क्षेत्रों में इस बात की आवश्यकता है कि भूमि के मूल्यों की वृद्धि को रोकने और बड़े पैमाने पर सार्वजनिक उपयोग के लिए भूमि-अधिग्रहण के हेतु कानूनी एवं अन्य प्रकार के कठोर कदम उठाए जाएं। स्थिति के अनुसार, बिना किसी अपवाद के, प्रत्येक नगर में शहरी भूमि और सम्पत्ति पर कराधान, आदि के द्वारा उचित कदम उठाने की आवश्यकता है।

29. भूमि के मूल्यों में वृद्धि को रोकने के लिए उठाए गए कदम तभी सफल हो सकते हैं, जब भूमि के प्रयोग के बारे में मुख्यतः राजधानियों एवं बड़े और विकासशील नगरों तथा नए औद्योगिक कस्बों में, कठोर नियम बनाए जाएं। आगे चल कर मास्टर प्लानों के निर्माण की जो बात कही गई है, वह ऐसे ही नगरों के लिए विशेष महत्व की है। भूमि के बढ़ते हुए मूल्यों पर नियन्त्रण के लिए अगले पृष्ठ पर दिए हुए मुख्य कदम उठाए जा सकते हैं।

(1) सार्वजनिक अधिकारियों-द्वारा शीघ्र भूमि-अधिग्रहण को ध्यान में रखते हुए भूमि के मूल्यों को कम करने-सम्बन्धी आदेश जारी करना।

(2) सट्टेबाजी को रोकने के लिए यह आवश्यक है कि सरकारी अधिकारी अन्तरिम सामान्य प्लानों के अधीन भूमि का अधिग्रहण और विकास करें। भूमि का अधिग्रहण बड़ी मात्रा में कर लिया जाना चाहिए, हालांकि कहीं-कहीं स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार, अधिग्रहण को क्रमशः भी करना पड़ सकता है। अधिग्रहण की कार्यवाई शीघ्र होनी चाहिए। इसके लिए कानूनी प्रक्रिया भी यथासम्भव सरल होनी चाहिए। अधिग्रहण की गई भूमि का शीघ्र विकास करना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अनिवार्य सेवाओं की व्यवस्था सार्वजनिक अधिकारी करें। सरकारी अधिकारियों-द्वारा किए गए विकास-कार्यों के अतिरिक्त उचित नियमों के अधीन सहकारी समितियों और निजी अभिकरणों का भी इस कार्य में लाभ उठाया जाना चाहिए।

(3) भूमि का आवंटन लीज़ के आधार पर होना चाहिए। एक नियम के रूप में सार्वजनिक अधिकारियों-द्वारा अधिगृहीत भूमि को केवल लीज़ पर ही दिया जाना चाहिए, ताकि भूमि के किराए के रूप में आवर्तक आय के अतिरिक्त, भूमि के मूल्य में जो वृद्धि हो, उसका लाभ भी समाज को मिलता रहे।

(4) कृषि-भूमि के कृषि-भिन्न कार्यों के लिए प्रयोग पर खुशहाली उपकर और कर हो। राज्य-सरकारों और स्थानीय निकायों के लिए ये राजस्व के उत्तरोत्तर बढ़नेवाले साधन हैं, परन्तु कुछ राज्यों में इस दिशा में जो कानून हैं, वे अपर्याप्त हैं।

(5) फ्री-होल्ड भूमि के हस्तान्तरण पर पूंजी-कर।

(6) विकसित क्षेत्रों में खाली पड़े प्लाटों पर कर, और यदि उन पर एक नियत अवधि में मकान न बनाया गया, तो उनके अधिग्रहण का अधिकार।

(7) व्यक्तिगत प्लाटों के आकार की अधिकतम सीमा निर्धारित करना, और एक व्यक्ति अधिकतम कितने प्लाट रख सकता है, इसकी भी संख्या निश्चित करना।

(8) किराए के उचित ढांचे या स्वरूप का निर्धारण तथा किरायों का नियमन और नियन्त्रण।

योजनाबद्ध शहरीकरण के प्रस्तावों के आधार में यही कदम हैं तथा उच्चतम प्राथमिकता के रूप में इनको ठोस रूप प्रदान किया जाना चाहिए।

30. **मास्टर प्लानों का निर्माण :** नगरों एवं कस्बों के व्यवस्थित विकास के लिए नगर-आयोजन अपरिहार्य है। इस दिशा में प्रथम कदम के रूप में अन्तरिम ग्राम प्लाटों का निर्माण है, जिसमें विकास की जानेवाली भूमि के प्रयोग का सामान्य स्वरूप भी निर्धारित हो। इसके बाद शहरी और क्षेत्रीय विकास के लिए विस्तृत मास्टर प्लान बनाए जाने चाहिए। सर्वप्रथम बड़े नगरों, राज्यों की राजधानियों, बन्दरगाहों, नगरों, नए औद्योगिक केन्द्रों तथा अन्य बड़े और बढ़ते हुए नगरों के लिए, जहां पर सामान्यतः स्थिति के अधिक

बिगड़ने का भय है, मास्टर प्लान बनाए जाने चाहिए। तीसरी योजना की अवधि के लिए ऐसे नगरों* की एक अस्थायी सूची बनाई गई है। वर्तमान नगरों के पुर्नविकास और नए शहरों के निर्माण के लिए यह अत्यधिक आवश्यक है कि प्रादेशिक आधार पर काम हो। सामाजिक और आर्थिक विकास में उचित सन्तुलन के लिए तथा विकासशील नगर-समाज के जीवन में अधिक सांस्कृतिक एकता और सामाजिक अखंडता के लिए यह आवश्यक है। पास-पड़ोस की परिस्थितियों पर अधिक ध्यान देने तथा जनता की दिन-प्रति-दिन की आवश्यकताओं को समझने से सभी नागरिकों में परस्पर सौहार्द की भावना पैदा होगी और शहरी जीवन में अधिक तारतम्य का निर्माण होगा।

31. मास्टर प्लान के निर्माण की मुख्य ज़िम्मेदारी राज्य-सरकारों और सम्बद्ध स्थानीय प्रशासन की है। तीसरी योजना में इन नगरों का मास्टर प्लान बनाने के लिए केन्द्र-द्वारा राज्य-सरकारों को सहायता देने की सीमित व्यवस्था की गई है। इस बारे में प्राथमिक आवश्यकता इस बात की है कि नगरों और गांवों के आयोजन के लिए उचित कानून बनाया जाए। यह भी आवश्यक है कि राज्य-सरकारें नगर-आयोजन संगठन बनाएं, जिनमें काफी प्रशिक्षित कर्मचारी हों। केन्द्रीय प्रादेशिक और नगर-आयोजन संगठन राज्य-सरकारों को तथा नए नगरों की स्थापना से सम्बद्ध संगठनों को मास्टर प्लानों के निर्माण में तथा शहरी और प्रादेशिक विकास की उचित नीतियों के निर्धारण में सहायता दे सकता है।

32. **मानदंड :** अधिकांश जनता की आवास-सम्बन्धी समस्याओं के समाधान के लिए तथा गन्दी बस्तियों और अन्य बुराइयों को समाप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि सारे समाज की आवश्यकताओं को और उपलब्ध सीमित साधनों को दृष्टि में रखते हुए रिहायशी मकानों, कार्यालय-भवनों तथा अन्य सेवाओं के लिए एक न्यूनतम मानदंड निश्चित किया जाए। यह भी वांछनीय है कि अधिकतम मानदंड भी निर्धारित कर दिए जाएं। इससे आवास पर किए गए पूंजी-विनियोग का परिणाम समाज के लिए अधिक

* (अ) बड़े नगर, राज्यों की राजधानियां और बन्दरगाह वाले नगर	(आ) औद्योगिक केन्द्र	(इ) साधन स्रोतों के क्षेत्र
अहमदाबाद, बंगलोर, भोपाल, कोचीन, दिल्ली (बड़े नगर का क्षेत्र) वृहत्तर बम्बई, वृहत्तर कलकत्ता हैदराबाद-सिकन्दराबाद, जयपुर, कांडला, कानपुर, लखनऊ, मद्रास, पटना, पूना, शिलांग, श्रीनगर, वाराणसी, विशाखापटनम और त्रिवेन्द्रम।	इलाहाबाद, आसनसोल, बरौनी, भद्रावती, भिलाई, बोकारो, चित्तरंजन, कोयमुत्तूर डेहरी-आन-सोन, धनबाद, डिग्बोई, दुर्गापुर, गौहाटी, गोरखपुर, देवरिया, गुंटूर, जमशेदपुर, काठगुदाम, मिर्ज़ापुर, मुगलसराय, नंगल, पनवेल, रांची, ऋषिकेश-हरिद्वार, राउरकेला, सिन्दरी, तिनसुखिया, विजयवाड़ा और वारंगल।	भाखड़ा-नंगल-क्षेत्र, दामोदर-घाटी, दंडकारण्य, राजस्थान- नहर-क्षेत्र और रिहन्द-क्षेत्र।

उपयोगी सिद्ध हो सकेगा। ऐश्वर्यद्योतक भवनों के निर्माण एवं शहरी भूमि के दुरुपयोग को भी रोका जाना चाहिए, जिससे उतने ही खर्चे में छोटे भवन बड़ी संख्या में बनाए जा सकें। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मुख्य तरीके ये हैं: (क) वित्तीय नीतियां अपनाना, जिनमें ऐसे स्थानीय कराधान भी हों, जिनका उद्देश्य ऐश्वर्य साधनयुक्त आवासों के निर्माण में पूंजी लगाने को निरुत्साहित करना हो, (ख) मकानों के डिज़ाइनों के बारे में परामर्श, (ग) स्थानीय निकायों के वर्तमान भवन-निर्माण-नियमों में इस प्रकार का परिवर्तन, जिससे न्यूनतम मानदंडों और शर्तों के साथ कम खर्चे के घरों के निर्माण में सुविधा हो सके, (घ) भवनों के हिस्सों को पहले से ही अलग से बनाना, और (ङ) स्थानीय रूप से प्राप्त सस्ते साधनों का अधिक प्रयोग। राष्ट्रीय भवन-निर्माण-संगठन के कार्य का मुख्य पहलू मानदंडों का क्रमबद्ध अध्ययन और तदनुसार परामर्श देना है।

33. **नगरपालिका-प्रशासनों को सक्षम बनाना :** जहां तक स्थानीय स्तर का प्रश्न है, केवल नगरपालिका-प्रशासन ही शहरी क्षेत्रों के विकास के लिए आवश्यक सेवाओं को, आवास-व्यवस्था के विस्तार को और जीवन की स्थितियों में सुधार के काम को सन्तोषजनक ढंग से हाथ में ले सकते हैं। अधिकांश नगरपालिका-प्रशासन इतने समर्थ नहीं हैं कि इन कार्यों को अपने हाथ में ले सकें। इन्हें साधनों एवं कर्मचारियों में वृद्धि तथा क्षेत्र और कार्यों में विस्तार के द्वारा समर्थ बनाना चाहिए। जहां चुने हुए नगरों के वर्तमान क्षेत्र समस्या के समाधान में सहायक नहीं हैं, वहां उनके क्षेत्र का विस्तार किया जाना चाहिए। विकासशील नगरों के बारे में प्रारम्भ से ही यह वांछनीय है कि उनका नगरपालिका-क्षेत्र छोटा न रख कर बड़ा रखा जाए, जिससे भविष्य में नगर को तथा उसके आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों को अलग अधिकार-क्षेत्र के कारण आनेवाली बाधाओं के बिना समन्वित रूप से विकसित किया जा सके। नगरपालिका-प्रशासनों को सेवाएं प्रदान करने में अनिवार्य रूप से पहले से कहीं अधिक काम करना पड़ेगा। आशा है, भविष्य में अधिकांश नगरों की अपनी पृथक् विकास-योजनाएं होंगी तथा इन्हें राज्यों की योजनाओं से सुसम्बद्ध कर दिया जाएगा। इस पृष्ठभूमि में प्रत्येक राज्य में देश के बड़े नगरों को छोड़ कर एक लाख या इससे अधिक जनसंख्यावाले नगरों के लिए प्रशासनिक और वित्तीय कदमों का सावधानीपूर्वक निरीक्षण किया जाना चाहिए।

ग्रामीण आवास और आयोजन

34. ग्रामों में आवास की स्थिति का सुधार अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। इससे जीवन का स्तर ऊंचा उठेगा, काम के लिए अधिक अवसर मिलेंगे। ग्रामीण जीवन को नया रूप देने में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। फिर भी, समस्या के विशाल होने तथा सम्भावित परवर्ती कठिनाइयों के कारण, ग्रामों में आवास-स्थितियों के सुधार के काम को, एक पृथक् लक्ष्य न समझ कर, ग्रामीण विकास की एक बड़ी योजना के अंग के रूप में समझना चाहिए। परिणामतः ग्रामीण आवास सहजात रूप से सामुदायिक विकास और ग्रामीण आयोजन का एक अंग है। ग्रामीण आवास के विशेष कार्यक्रम का उद्देश्य खंड और ग्राम-स्तर पर तकनीकी परामर्श, प्रदर्शन, सुधरे हुए डिज़ाइनों और ले-आउट की व्यवस्था, स्थानीय सामान के अच्छे प्रयोग और कुछ सीमा तक वित्त की व्यवस्था, आदि के द्वारा सामुदायिक विकास-आन्दोलन के साधनों में वृद्धि करना है। इसका अनिवार्य उद्देश्य

ग्रामीण जनता के सभी वर्गों के लिए स्वस्थ वातावरण और परिस्थितियों के निर्माण में तथा सम्पूर्ण ग्रामीण जीवन के विकास मे एक सन्तुलन बनाए रखने मे सहायता देना है। सन् 1957 मे जिस आवास-कार्यक्रम को प्रारम्भ किया गया था, उस पर इसी पृष्ठभूमि में विचार और उसके कार्य की समीक्षा होनी चाहिए।

35. ग्राम-आवास-कार्यक्रम में चार से छः तक के समूहों मे गांवों को चुनने की और भौतिक, सामाजिक और आर्थिक सर्वेक्षण करने के बाद इनके लिए ले-आउट प्लान बनाने की व्यवस्था है। ले-आउट प्लान पर कार्य तथा मकानों के पुनर्निर्माण का कार्य क्रमशः हाथ में लिया जाता है, जिससे, 8-10 वर्षों में सारे गांव का ही कायाकल्प हो जाए। मकानों के विभिन्न हिस्सों के निर्माण के लिए अलग-अलग सहकारी समितियां संगठित की गई है। निर्माण पर आनेवाले व्यय का 66⅔ प्रतिशत, जो 2,000 रु० से अधिक न हो, प्रत्येक मकान के निर्माण के लिए ऋण के रूप में दिया जाता है। राज्य-सरकारों द्वारा निर्धारित मानदंडों के अनुसार वर्तमान मकानों की मरम्मत व सुधार के लिए भी ऋण दिए जाते है। कार्यक्रम में गलियों, सामुदायिक भवनों, मकानों के लिए नए स्थानों और भीड़भाड़ को कम करने, आदि के लिए भूमि का अधिग्रहण करने की व्यवस्था है। भवन-निर्माण के काम में आनेवाली सामग्री तथा निर्माण-तकनीक में सुधार के लिए अनुसन्धान करने और कार्यक्रम को अमली रूप देने के हेतु आवश्यक व्यक्तियों को प्रशिक्षण देने के लिए छः स्थानों में अनुसन्धान-सहित प्रशिक्षण-केन्द्र खोले गए है। राज्यों मे ले-आउट प्लान और आदर्श डिज़ाइन, आदि बनाने के लिए जो ग्रामीण आवास-संगठन स्थापित किए गए है, उन्हे और सुदृढ़ बनाया गया है।

36. दूसरी पंचवर्षीय योजना में 3,700 ग्रामों को चुना गया। उनमें से 2,000 का सामाजिक, आर्थिक और भौतिक सर्वेक्षण पूरा हो गया है। 1,600 गांवों के ले-आउट प्लान तैयार किए गए तथा 15,400 मकानों के निर्माण के लिए 3.6 करोड़ रु० के ऋणों की स्वीकृति दी गई। 13,000 मकान बन कर तैयार हो गए है तथा शेष निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं में है।

37. दूसरी योजना में ग्राम-आवास-कार्यक्रम पर अमल के समय यह देखा गया कि सब जगह नियम के रूप में अलग-अलग गांवों को लिया गया, जब कि कार्यक्रम में ग्राम-समूहों को लेने पर बल दिया गया था। यह पहलू महत्वपूर्ण है, क्योंकि जब एक ग्राम-समूह पर काम किया जाएगा, तभी ईटों का भट्ठा लगाना तथा निरन्तर मांग के कारण सहकारिता के आधार पर मकानों के हिस्सों को बनाने की व्यवस्था करना सम्भव हो सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में आवास-कार्य का नियोजन में वृद्धि और आसपास की परिस्थितियों में सुधार-सम्बन्धी पूरा परिणाम तब तक प्राप्त नही किया जा सकता, जब तक कार्यक्रम को निकटवर्ती ग्राम-समूहों में क्रमबद्ध रूप से प्रारम्भ नही किया जाता। इस समय सामान्य रूप से चुने हुए गांवों के ले-आउट प्लान तैयार किए जा रहे है। इनमें ग्राम-स्थान के विस्तार, गांवों की सुधरी हुई गलियों और नालियों, तथा स्कूल, बच्चों के खेलने के लिए मैदान और 'पंचायत-भवन'-जैसी ग्राम सुविधाओं की व्यवस्था है। परन्तु अभी इस दिशा में जितना चाहिए, उतना नहीं किया जा रहा है, और जो उपलब्ध राशि है, उसका उपयोग मुख्यतः छोटे घरों के निर्माण या मरम्मत में किया जा रहा है। यह सुझाव दिया गया है कि ग्राम-आवास-कार्यक्रम के अधीन प्रदान की गई राशि को सर्वप्रथम ग्राम-स्थान के विस्तार, सड़कों

और नालियों में सुधार तथा सारे ग्राम-समाज के लिए उपयोगी और आवश्यक कार्यों में लगाया जाए। मकानों में सुधार ग्राम-स्थान के विस्तार के लिए भूमि की उपलब्धि पर निर्भर करता है। जहां तक सम्भव हो सके, ग्राम-समाज को ही आपसी व्यवस्था के द्वारा आवश्यक अतिरिक्त भूमि उपलब्ध करनी चाहिए। फिर भी, ग्राम-समाज को कृषि-मज़दूरों और हरिजनों के मकानों के लिए स्थान प्राप्त करने में कुछ सीमा तक सहायता दी जानी चाहिए। ग्राम-आवास को सुधारने के कार्यक्रम में प्रथम स्थान हरिजनों, कृषि-मज़दूरों और समाज के उस वर्ग के लोगों के आवास को देना चाहिए, जिनके घरों की अवस्था अत्यधिक दयनीय है। परिगणित आदिम जातियों और परिगणित जातियों को खास तौर पर ग्राम-आवास-कार्यक्रम के अधीन उपलब्ध सहायता के अतिरिक्त पिछड़ी जातियों के कल्याण-कार्यक्रम के भी अन्तर्गत सहायता-अनुदान के रूप में मदद दी जाती है। इन दोनों कार्यक्रमों में निर्दिष्ट व्यवस्थाओं का समन्वित रूप से उपयोग किया जाना चाहिए।

38. राज्यों में स्थापित ग्रामीण आवास-संगठन और अनुसन्धान-सहित प्रशिक्षण-केन्द्र देश के विभिन्न भागों के लिए उपयुक्त आवासों के डिज़ाइन बनाने और स्थानीय सामग्री के प्रयोग के सम्बन्ध में खोज करने में लगे हैं। इस दिशा में काम और अधिक ज़ोर देकर किए जाने की आवश्यकता है। सामान्यतः प्रवृत्ति यह है कि स्थानीय सामग्री के प्रयोग, निर्माण-व्यय में मितव्ययिता, गांव की सांस्कृतिक परम्पराओं और पृष्ठभूमि की तथा ग्रामीण जीवन की औपचारिक आवश्यकताओं पर पर्याप्त बल दिए बिना ही शहरी ढंग के ईंट और सीमेंट के मकान बनाने प्रारम्भ कर दिए जाते हैं। इसके साथ ही सड़कों और नालियों को सुधारने, ग्राम-स्थान के विस्तार के लिए भूमि, आदि के योगदान पर और सुधरे हुए मकान बनाने में पारस्परिक सहायता के लिए सामुदायिक प्रयत्नों पर भी जितना बल दिया जाना चाहिए, उतना नहीं दिया जाता है। ग्रामीण-आवास समस्या का स्वरूप इतना विशाल है कि इस मद में दी गई और राशि का भी, जो कि आवश्यक है, कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ेगा। समस्या मुख्यतः उन्नत और अच्छे जीवन के लिए एक व्यापक आकांक्षा पैदा करने, ग्रामीण परिस्थितियों को सुधारने के लिए व्यावहारिक तरीके निकालने और अपेक्षतया कम मूल्य पर, सहकारी आत्म-सहायता, सामुदायिक प्रयत्न और योगदान एवं स्थानीय भवन-निर्माण-सामग्री के आधार पर अच्छे मकानों का निर्माण करने की है।

39. तीसरी योजना में यह आवश्यक होगा कि इस कार्यक्रम को सामुदायिक विकास की अन्य योजनाओं यथा जल-आपूर्ति, सड़कों, नालियों का निर्माण, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, आदि से सम्बद्ध किया जाए। यह भी आवश्यक है कि ग्रामीण आवास-कार्यों का ग्रामीण विकास के अन्य सम्बद्ध कार्यक्रमों के साथ तालमेल बिठाया जाए, जिससे ग्राम-आवास-कार्यक्रम के अधीन चुने हुए ग्रामों को उपलब्ध साधनों के सीमित होने पर भी अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। उदाहरण के लिए, परिगणित जातियों और परिगणित आदिम जातियों की जीवन-स्थिति को सुधारने के कार्यक्रम के अधीन दिए जानेवाले सहायता-अनुदान को इस योजना के अधीन चुने हुए गांवों में रहनेवाली उक्त जातियों के सदस्यों को प्रदान किया जाए। जहां तक सम्भव हो सके, इन चुने हुए गांवों में ग्रामोद्योग और लघु उद्योग भी स्थापित किए जाने चाहिए। ईंटों के भट्ठों और मकानों के हिस्सों—यथा, दरवाज़े, खिड़कियां, आदि—के उत्पादन पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए सहकारी समितियों का गठन

किया जाना चाहिए तथा उन्हें लकड़ी और कोयले का चूरा, आदि सामग्री और तकनीकी सहायता दी जानी चाहिए ।

40. विशाल परती भूमियों को कृषि-योग्य बनाने तथा नए कृषि-क्षेत्रों के विकास के कारण अनेक नए ग्रामों का निर्माण हुआ है । इन ग्रामों के ले-आउट प्लान पहले ही तैयार कर लिए जाने चाहिए तथा उनका विकास योजनापूर्वक होना चाहिए । वर्तमान गांवों में, जहां समस्या पुनर्विकास की है, कार्यक्रम की सफलता उनके समुचित चुनाव पर निर्भर करती है । योजना में पहले से ही यह व्यवस्था है कि अन्य बातों की तुलना में इन बातों को प्राथमिकता दी जाएगी : (क) ऐसे गांव, जो बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में हैं, (ख) ऐसे गांव, जिनमें पिछड़ी जातियों और कृषि-मजदूरों की संख्या काफी है, (ग) ऐसे गांव, जिनमें चकबन्दी का कार्य पूरा हो गया है या सफलतापूर्वक किया जा रहा है, और (घ) ऐसे गांव, जिनके निवासी बड़ी विकास-परियोजनाओं या प्राकृतिक विपत्ति के कारण विस्थापित हैं । ऐसे गांवों को भी, जिनमें काफी संख्या में कारीगर रहते हैं, प्राथमिकता दी जानी चाहिए । ग्राम-आवास-कार्यक्रम के लिए उपयुक्त गांव का चुनाव करने में सहकारिता के आधार पर स्वावलम्बन, ग्रामीणों की ग्राम-स्थान के विस्तार के लिए स्थान देने की इच्छा और हरिजनों एवं पिछड़ी जातियों के आवास को प्राथमिकता देने-सम्बन्धी बातों पर मुख्य रूप से विचार किया जाना चाहिए । चुने हुए गावों में, जिनमें उक्त शर्तें पूरी उतरती है, आवश्यक प्रयत्नों को सुचारु रूप देने के लिए यह आवश्यक है कि सारे गांव के पुनः-आयोजन के अनिवार्य कदम के रूप में ग्राम-पंचायत को गांव की गलियों और नालियों के सुधार के लिए कुछ सीमित वित्तीय सहायता दी जाए ।

41. ***खेतिहर श्रमिकों के लिए आवास-स्थान :*** कुछ राज्यों में भूमि-सुधार के लिए जो कानून बनाए गए हैं, उनमें ग्राम-आवास-स्थलों की किराएदारी को मौरूसी या स्वामित्व का अधिकार प्रदान करने की व्यवस्था है । कुछ राज्यों में मुआवज़ा देने पर स्वामित्व के हस्तान्तरण की व्यवस्था है । यह आवश्यक है कि भूमि-व्यवस्था के लिए प्राथमिकता भूमिहीन कृषि-मज़दूरों के परिवारों को दी जाए । इसके लिए यथासम्भव परती और भूदान में प्राप्त भूमि का उपयोग किया जाना चाहिए । कुछ घनी आबादीवाले गांवों में, जहां गांववालों को ही अपने उत्तरदायित्व को स्वयं समझने पर बल देना चाहिए, कृषि-मज़दूरों के आवास-स्थल के लिए भूमि का अधिग्रहण कर ग्राम-स्थल के विस्तार के लिए आवश्यक भूमि प्रदान करना भी जरूरी है । राज्य-सरकारों को ऐसे गांवों में, जहां भूमिहीन कृषि-मज़दूरों की संख्या बहुत अधिक है, उनके आवास के लिए स्थान प्राप्त करने के लिए तथा जो कार्यक्रम उन्होंने हाथ में ले रखे हैं, उनके लिए ग्रामीण आवास-कार्यक्रम के अधीन 5 करोड़ रु० का अनुदान देने की व्यवस्था है ।

आवास-सम्बन्धी आंकड़े

42. आयोजन की आवश्यकताओं की तुलना में आवास-सम्बन्धी आंकड़ों की वर्तमान स्थिति असन्तोषजनक है । केवल प्रति दस वर्ष बाद होनेवाली गणना के द्वारा प्रकट कुल गृहस्थों या मकानों की संख्या के अतिरिक्त, वर्तमान भवन-निर्माण-गतिविधियों, प्रत्येक वर्ष नए बननेवाले मकानों, प्रयोग की जानेवाली भवन-सामग्री की मात्रा और मूल्य, भवन-निर्माण-सामग्री का उत्पादन और खपत, और उनके मूल्यों, आदि के बारे में कोई उचित

आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। सन् 1961 की जनगणना में आवास-स्थिति के बारे में कुछ बुनियादी बातों की सूचनाएं एकत्र की गई हैं। इन आंकड़ों से देश के मकानों के बारे में एक विस्तृत सूची तैयार करने में सहायता मिलेगी।

43. राष्ट्रीय भवन-निर्माण-संगठन केन्द्रीय और राज्यों के सार्वजनिक निर्माण-विभागों तथा अन्य विभिन्न निर्माण-अभिकरणों के माध्यम से सार्वजनिक क्षेत्र में आवास-सम्बन्धी अंकों के संकलन की व्यवस्था कर रहा है। अन्य क्षेत्रों में अंकों के वास्तविक संकलन का कार्य उचित अभिकरणों-द्वारा किया जाएगा तथा इसके लिए क्या तरीका और दृष्टि रखी जाए, इस प्रश्न पर केन्द्रीय भवन-निर्माण-संगठन और केन्द्रीय अंक-संकलन-संगठन विचार करेगा। मकानों और निर्माण के बारे में अंक-संकलन की असन्तोषजनक स्थिति को देखते हुए नवम्बर 1960 में केन्द्रीय स्वायत्त-शासन-परिषद् ने यह प्रस्ताव किया कि स्थानीय निकायों को अपने उप-नियमों में इस प्रकार का संशोधन करना चाहिए कि प्रार्थी के लिए दोनों ही समय, मकान बनाने के लिए स्वीकृति लेते समय तथा पूर्णता का प्रमाणपत्र जारी करने की मांग करते समय, यह अनिवार्य हो कि वह खर्चे एवं अन्य बातों के बारे में विस्तार से सूचनाएं दे। फरवरी 1961 में केन्द्रीय अंक-संकलन-संगठन ने राज्यों के अंक-संकलन-ब्यूरो से प्रार्थना की थी कि वे नगर-निगमों और नगरपालिकाओं से एक समान ढंग पर सूचनाएं संग्रह करने के लिए कदम उठाएं। केन्द्रीय अंक-संकलन-संगठन ने इस बारे में जो स्वरूप सुझाया है, उसमें मकानों का सामान्य वर्गीकरण, निर्माण का आकार-प्रकार, क्षेत्र, अनुमानित व्यय, रिहायशी मकानों के सम्बन्ध में रहने की इकाइयां तथा दीवारों, छत और फर्श के लिए उपयोग में लाई गई सामग्री के बारे में सूचनाएं प्राप्त करना शामिल है। चूंकि यह विषय अत्यधिक जटिल है तथा इसका बड़ी संख्या में नगरों और कस्बों से सम्बन्ध है, इसलिए यह वांछनीय है कि सर्वप्रथम कुछ नगरों और कस्बों में ही भवन-सम्बन्धी संख्याओं के लिए एक उपयुक्त व्यवस्था की जाए और इसके बाद अन्य नगरों में भी इसे बढ़ाने के लिए विभिन्न चरणों में कार्यक्रम अपनाया जाए। यह लाभप्रद हो, इसके लिए यह आवश्यक है कि भवन-सम्बन्धी ये सूचनाएं नियमित रूप से भवन-निर्माण के नियम और उपनियमों के प्रशासन की सामान्य विधि के रूप में प्राप्त होती रहें।

44. भवन-निर्माण के काम आनेवाली सामग्री की मांग और सम्भरण का समय-समय पर सर्वेक्षण करने के लिए भी इस प्रकार की सामग्री के उत्पादन और खपत के आंकड़े आवश्यक हैं। इस्पात, सीमेंट, आदि संगठित उद्योगों के उत्पादन के आंकड़े तो उपलब्ध हैं, किन्तु ईंट, चूना, आदि सामग्री के बारे में, जिनका उत्पादन असंगठित क्षेत्र में है, कोई विश्वसनीय अनुमान उपलब्ध नहीं है। नियतकालिक नमूना-सर्वेक्षणों-द्वारा इन्हें प्राप्त किया जा सकता है। भवन-निर्माण-सामग्री की खपत और आवश्यकताओं के बारे में, आंकड़ों के कुछ विशेष प्रकार के अध्ययन के आधार पर, निर्माण के व्यय से सम्बद्ध तकनीकी अनुपात के प्रयोग से, अनुमान लगाया जा सकता है। कुछ प्रकार के अध्ययन देश में हो भी रहे हैं। इनके कार्य और क्षेत्र को विस्तृत करने की आवश्यकता है। कुछ चुनी हुई भवन-सामग्री के मूल्यों को तथा कुछ चुने हुए केन्द्रों में मजदूरी की दर के आंकड़ों को भी नियमित रूप से एकत्र करना चाहिए तथा राष्ट्रीय भवन-निर्माण-संगठन और राज्यों के अंक-संकलन-ब्यूरो को इन्हें प्रकाशित करना चाहिए।

अनुसन्धान और प्रशिक्षण

45. विगत कुछ वर्षों में केन्द्रीय भवन-अनुसन्धान-संस्था में तथा कुछ अन्य केन्द्रों में आवास और निर्माण के क्षेत्र में काफी अनुसन्धान-कार्य हुआ है। सन् 1954 में स्थापना के बाद से राष्ट्रीय भवन-निर्माण-संगठन ने भी अनेक अनुसन्धान-परियोजनाएं प्रारम्भ की तथा अनुसन्धान के परिणामों को लोगों तक पहुंचाने का प्रयत्न किया। इस प्रकार, मिट्टी की दीवारों पर पानी का असर न होने के लिए सामान और तकनीक के बारे में, ताप को रोकने के लिए दीवारों की मोटाई और छत की ऊंचाई का प्रभाव, हल्के पार्टीशनों के लिए घटिया किस्म के जिप्सम के प्रयोग, निर्माण-सम्बन्धी कोलतार, खोखली ईंटों और खपरैलों, हल्की-फुल्की वस्तुओं के लिए फालतू लोहे, आदि के टुकड़े-जैसे उत्पादनों का प्रयोग और घरों के डिज़ाइन तथा अन्य पहलुओं के बारे में ऋतु-सम्बन्धी एवं प्रादेशिक बातों के प्रमाण, आदि पर भी अनुसन्धान किए गए। भवन-निर्माण के खर्चे में कमी करने तथा निर्माण में सुधार के लिए यह आवश्यक है कि आवास और निर्माण के सम्बन्ध में अनुसन्धान किया जाए और इस समय जो कार्य हाथ में है, उनके लिए अधिक प्रयत्न किया जाए। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रकार का निर्माण-कार्य करनेवाले मज़दूरों को प्रशिक्षण देना अत्यधिक महत्वपूर्ण है तथा इस प्रशिक्षण-कार्य को अतीत की अपेक्षा कहीं अधिक ज़ोरदार, व्यापक और क्रमबद्ध रूप से करने की आवश्यकता है। ग्रामीण आवास के लिए अनुसन्धान-सहित प्रशिक्षण-केन्द्रों का कार्य दूरगामी परिणामवाला है। ग्रामीण आवास के लिए नए डिज़ाइनों की खोज के परिणामों और स्थानीय भवन-निर्माण-सामग्री के पूर्णतर उपयोग को शिक्षण और क्रियात्मक प्रदर्शनों-द्वारा व्यवहार में लाना चाहिए।

46. नगरों और कस्बों में जनसंख्या में भारी वृद्धि और अर्थव्यवस्था की प्रगति के कारण आवास तथा शहरी और प्रादेशिक विकास की समस्याओं का उत्तरवर्ती पंच-वर्षीय योजनाओं में बड़ा महत्वपूर्ण स्थान होगा। इन समस्याओं का उचित समाधान सामाजिक स्थिरता और जन-साधारण का कल्याण, दोनों के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण होगा। ये समस्याएं विभिन्न रूपों में उन्नत और कम-उन्नत, दोनों ही प्रकार के देशों के सामने हैं। वर्षों के प्रयत्नों के बाद संयुक्त राष्ट्र-संघ, अन्य अन्तर्राष्ट्रीय अभिकरणों तथा विदेशों के अनुसन्धान-केन्द्रों और संस्थानों ने इस बारे में पर्याप्त ज्ञान और अनुभव प्राप्त किया है। राष्ट्रीय भवन-निर्माण-संगठन, जो पहले से ही एशिया और सुदूर-पूर्व के लिए आर्थिक आयोग (इकाफे) के क्षेत्र में गरम और शुष्क क्षेत्रों की समस्याओं के अनुसन्धान और अध्ययन के लिए प्रादेशिक आवास-केन्द्र के रूप में कार्य कर रहा है, अन्य देशों और अन्तर्राष्ट्रीय अभि-करणों-द्वारा किए गए अध्ययन और परीक्षणों के परिणामों को भारत के विभिन्न भागों के निर्माण-अभिकरणों और संगठनों को उपलब्ध करा सकता है।

अध्याय 34

पिछड़े वर्गों का कल्याण

(1)

सामान्य तथ्य

अनुसूचित आदिम जातियों, अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों को शेष समाज के बराबर स्तर तक लाने से सम्बद्ध कार्यक्रमों का पहली और दूसरी योजनाओं की अवधि में हाथ में लिए गए अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्यक्रमों में स्थान था। इन कार्यक्रमों के क्षेत्र में कितनी सफलता प्राप्त हुई, इसका मूल्यांकन कर सकना एक मुश्किल काम है। सामाजिक संगठन और सामाजिक आचार-व्यवहार में दूरगामी परिवर्तन; उन वर्गों की स्थिति में सुधार, जिन पर कल्याण-कार्यों का सीधा प्रभाव पड़ता है; एवं भारतीय समाज के ढांचे का, विशेष रूप से गांवों में, पुनर्गठन करने के काम में प्रगति ही कल्याण-कार्यों की सफलता के मापदंड हो सकते हैं। संविधान के अनुच्छेद 46 में इस निदेशक सिद्धान्त की व्यवस्था है कि राज्य जनता के कमज़ोर वर्गों के शिक्षा-सम्बन्धी और आर्थिक हित-साधन का विशेष ध्यान रखेगा, खास तौर पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के हितों का, और सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण से उनकी रक्षा करेगा। संविधान में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लिए कुछ और भी संरक्षण हैं। आरम्भ में ये संरक्षण 10 वर्ष के लिए ही थे, परन्तु हाल में संविधान में संशोधन करके इन संरक्षणों की अवधि 10 वर्ष और बढ़ा दी गई है। चूंकि इन संरक्षणों से सम्बद्ध वर्गों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति प्रकट होती है, इसलिए संसद् की कार्रवाई दो प्रकार से महत्वपूर्ण है। पहली बात यह, कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों का जीवन-स्तर उठाने की समस्या पहले के अनुमान से कहीं अधिक जटिल है तथा लम्बे समय तक निरन्तर प्रयत्न करके इसे सुलझाना होगा। दूसरी बात यह, कि देश की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के सतत और द्रुत विकास के साथ-साथ, कम-से-कम अगली दो-तीन योजनाओं में, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति में सुधार के प्रयत्न तीव्र करने पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए, ताकि ये जातियां अन्य वर्गों के बराबर स्तर तक पहुंच जाएं। तीसरी योजना की अवधि में राज्यों और केन्द्र की ओर से चलाए जानेवाले विकास-कार्यक्रमों की इस दृष्टि से समीक्षा होती रहनी चाहिए और विभिन्न दिशाओं में योजना का प्रभाव बढ़ाने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए। एक संगठित समाज की स्थापना तथा देश के लिए एक सुगठित अर्थव्यवस्था के विकास की दिशा में यह एक महत्व-पूर्ण और कठिन कार्य है।

2. सन् 1956 में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों की सूची पर पुनर्विचार हुआ था। इस आधार पर, सन् 1951 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित आदिम जातियों के सदस्यों की संख्या 2 करोड़ 25 लाख और अनुसूचित

जातिवालों की संख्या 5 करोड़ 50 लाख थी। असूचित (भूतपूर्व जरायम-पेशा) आदिम जातियों के सदस्यों की संख्या का अनुमान 40 लाख था। विभिन्न राज्यों में, स्थानीय कारणों से, कुछ और भी समूह पिछड़े वर्गों में शामिल कर लिए गए हैं, जिनके हितों की रक्षा के लिए विशेष कदम उठाए गए हैं।

पंचवर्षीय योजनाओं में पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए शामिल किए गए विकास-कार्यक्रमों का उद्देश्य उन वर्गों को कृषि-सहकारिता, सिंचाई, छोटे उद्योग, संचार-साधन, शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, ग्रामों में जल-आपूर्ति, आदि विभिन्न क्षेत्रों के विकास-कार्यक्रमों से मिलनेवाले लाभ के अलावा और भी फायदे पहुंचाना है। पिछले दस वर्षों का अनुभव बताता है कि अनेक कारणों से, लाभ और आम तौर पर ये कमज़ोर वर्ग विभिन्न क्षेत्रों में होनेवाले विकास-कार्यक्रमों का पूरा लाभ नहीं उठा पाते। उन्हे उनका उचित हिस्सा प्रदान करने के लिए यह ज़रूरी है कि सहायता के सामान्य कार्यक्रम में आवश्यकतानुसार उनकी ओर विशेष ध्यान देने की व्यवस्था की जाए। यह विशेष व्यवस्था समाज के कमज़ोर वर्गों, विशेष रूप से पिछड़े वर्गों, के लिए आवश्यक है। यह देखा गया है कि पिछड़े वर्गों के लिए बनाए गए कुछ कार्यक्रमों में जितने धन की व्यवस्था की जाती है, उसका कुछ हिस्सा अतिरिक्त सहायता-अनुदान या सहायता का खर्च पूरा करने पर खर्च कर दिया जाता है, ताकि पिछड़े वर्गों के लोग सामान्य विकास-कार्यक्रमों का लाभ उठा सकें। इसका परिणाम यह होता है कि पिछड़े वर्गों के लिए जो विशेष व्यवस्था की जाती है, उसका पूरा उपयोग इन वर्गों के विकास से सम्बद्ध अतिरिक्त कार्यक्रमों में नहीं हो पाता। इस समस्या पर और भी विचार करने की आवश्यकता है, क्योंकि यह ज़रूरी है कि एक ओर आम विकास-कार्यक्रम इस प्रकार बनाए जाएं, जिससे पिछड़े वर्गों के हितों की भी पर्याप्त रक्षा हो सके तथा दूसरी ओर योजना में उन वर्गों के लिए जो पृथक् व्यवस्था की गई है, उसका उपयोग उनके अतिरिक्त एवं अधिक सघन विकास के लिए किया जाए।

3. पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए पहली योजना में 30 करोड़ रु० के व्यय की व्यवस्था की गई थी, जबकि दूसरी योजना में यह राशि 79 करोड़ रु० थी। तीसरी योजना में इन कार्यक्रमों के लिए 114 करोड़ रु० रखे गए हैं। विभिन्न वर्गों में इस राशि का वितरण इस प्रकार है:

(करोड़ रु०)

	पहली योजना (व्यय)	दूसरी योजना (प्रत्याशित व्यय)	तीसरी योजना के कार्यक्रमों का अनुमानित व्यय
अनुसूचित आदिम जातियां	19.83	43	60.43
अनुसूचित जातियां	7.08	27.66	40.4
अनुसूचित आदिम जातियां	1.1	2.89	4
अन्य पिछड़े वर्ग	2.03	5.86	9.04
योग	30.04	79.41	113.87

अनुसूचित आदिम जातियों के कल्याण के लिए राज्यों की योजनाओं में की गई व्यवस्था के अलावा उत्तर-पूर्व सीमान्त-अभिकरण, नागालैंड, मणिपुर और त्रिपुरा में, जहां

की प्रायः सारी जनसंख्या अनुसूचित आदिम जातियों की है, विकास-कार्यक्रमों के लिए तीसरी योजना में 40 करोड़ रु० से अधिक की व्यवस्था की गई है, जबकि दूसरी योजना में यह राशि 20 करोड़ रु० से कुछ ही अधिक थी।

4. तीसरी योजना में पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए रखी गई 114 करोड़ रु० की रकम में से लगभग 42 करोड़ रु० शिक्षा-विकास की योजनाओं के लिए; 47 करोड़ रु० आर्थिक विकास की योजनाओं के लिए और 25 करोड़ रु० स्वास्थ्य, आवास तथा अन्य योजनाओं के लिए हैं। अनुसचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों की समस्या समाज के आर्थिक रूप से दुर्बल वर्गों की ही समस्या है, जिन्हें सामाजिक असमानताओं से भी न्यूनाधिक क्षति उठानी पड़ती है। असूचित आदिम जातियों का अपना वर्ग है, जिसे समाज में खपा लेने में विशेष कठिनाइयां होने पर भी ऐसा करना बहुत आवश्यक है। एक तीव्र विकासशील अर्थव्यवस्था में अनुसूचित आदिम जातियां अन्य वर्गों से कटकर अलग-अलग नहीं रह सकतीं, जैसा कि वे विगत वर्षों में रहती आई हैं। उद्योगीकरण और सिंचाई तथा बिजली की परियोजनाओं के आरम्भ होने पर उनके सामने अपने को नई परिस्थितियों के अनुकूल बनाने और पुनर्वास की समस्या और भी जटिल हो गई है। यद्यपि कुछ समस्याएं सबके लिए समान हैं, तथापि देश के विभिन्न भागों में निवास कर रही अनुसूचित आदिम जातियों के अन्दर ही अनेक विभिन्नताएं हैं और इस कारण विभिन्न आदिम जाति-समूहों की वशिष्ट परिस्थितियों तथा समस्याओं को सदा ध्यान में रखना होगा।

(2)
अनुसूचित आदिम जातियां

5. आदिम जातियों और आदिम जातीय क्षेत्रों के विकास के लिए अपनायी जानेवाली व्यापक नीति की समीक्षा हाल में ही योजना की परियोजना-समिति-द्वारा स्थापित समाज-कल्याण एवं पिछड़ा-वर्ग-कल्याण अध्ययन-दल, विशेष बहूद्देश्यीय आदिम जातीय खंड-समिति, और केन्द्रीय आदिम जातीय कल्याण-परामर्शदाता-मंडल-द्वारा तथा उत्तर-पूर्व सीमान्त-अभिकरण और नागालैंड-जैसे आदिम जातीय क्षेत्रों के विशेष अध्ययनों के क्रम में की जा चुकी है। इनका सामान्य मत यही है कि जब देश की शेष जनता प्रगति कर रही है तथा भारत और विश्व तेज़ी से बदल रहे हैं, तब आदिम जातीय क्षेत्र बिल्कुल अलग कैसे रह सकते हैं। साथ ही, यह भी गलत होगा कि विकास के नाम पर इन क्षेत्रों में बहुत अधिक प्रशासन आरम्भ कर दिया जाए और बहुत-सारे अधिकारियों तथा बाहरी लोगों को आदिम जातियों में काम करने के लिए भेज दिया जाए। अतः इन दोनों के बीच का एक रास्ता निकालने की आवश्यकता है।

6. शिक्षा, प्रशिक्षण-सुविधाओं की व्यवस्था, कृषि में सुधार, संचार-साधनों का विस्तार, स्वास्थ्य-सुधार, चिकित्सा की सुविधाएं और पीने के पानी की व्यवस्था करना आवश्यक और अनिवार्य, दोनों हैं। विकास के इन कार्यक्रमों के साथ आदिम जातियों को उनके अपने तौर-तरीकों और उनकी अपनी बुद्धि के अनुसार बढ़ने का अवसर दिया जाना चाहिए। उनकी परम्परागत कला और संस्कृति का वास्तविक रूप में आदर किया जाना चाहिए तथा बाहरी दबाव या आग्रह के बिना ही उन्हें सहारा दिया

जाना चाहिए। आदिम जातीय क्षेत्रों में प्रशासन और विकास का काम सम्भालने के लिए उन्हीं लोगों में से कुछ को तैयार और प्रशिक्षित करने के सभी प्रयत्न किए जाने चाहिए। बाहर के कुछ तकनीकी कर्मचारियों को बुलाने की आवश्यकता अवश्य पड़ेगी—शुरू में तो यह और भी ज़रूरी होगा—परन्तु प्रयत्न यही होना चाहिए कि समाजसेवी और सरकारी अधिकारी, सभी स्थानीय जनता में से ही तैयार किए जाएं। विगत अनुभव बताते हैं कि विकास-कार्यक्रमों पर अमल करने का निश्चय करते समय यह ध्यान रखा जाए कि कुछ छोटी-छोटी असम्पृक्त योजनाएं न चलाई जाएं, क्योंकि उनका विशेष प्रभाव नहीं पड़ता; इसके विपरीत बुनियादी महत्त्व के कुछ थोड़े से कार्यक्रमों पर बल दिया जाना चाहिए, ताकि गरीबी कम की जा सके, नए हुनर सिखाए जाएं, जनता का स्वास्थ्य सुधरे और जीवन-स्तर ऊंचा हो, सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों एवं मान्यताओं को आघात पहुंचाए बिना संचार-साधनों का भी विकास हो तथा आदिम जातियों के अपने समाज में आपसी दायित्वों, नेतृत्व की परम्परा, आदि को भी कोई ठेस न पहुंचे।

7. विकास-कार्यक्रमों को अमल में लाने के मार्ग में बहुत-सी व्यावहारिक कठिनाइयां और बन्धन प्रकट होते हैं। उदाहरण के लिए, स्थानीय कर्मचारियों या संचार-साधनों की कमी होने पर विकास-कार्यों में लगे कर्मचारियों तथा जातीय परम्परानुसार मान्य प्रथाओं और नेतृत्व के बीच सम्बन्धों में सदैव ही आदिम जातियों के बारे में ऊपर लिखी विभिन्न नीतियों का पालन नहीं किया जा सकेगा। फिर भी, इन नीतियों से विकास-कार्यक्रम बनाने और उन पर अमल करने के कार्य का मोटे तौर पर मार्गदर्शन हो सकेगा। समस्याओं का विशिष्ट रूप देखकर ही संविधान के अनुच्छेद 339 में यह व्यवस्था की गई थी कि संविधान लागू होने के 10 वर्ष के अन्दर ही एक आयोग की स्थापना की जाए, जो अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और राज्यों में अनुसूचित आदिम जातियों के कल्याण के सम्बन्ध में रिपोर्ट पेश करे। अप्रैल 1960 में स्थापित अनुसूचित क्षेत्र और अनुसूचित आदिम जाति-आयोग ने हाल में ही 9 राज्यों (आन्ध्रप्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र उड़ीसा, पंजाब और राजस्थान) और एक केन्द्रशासित क्षेत्र (हिमाचलप्रदेश) के कार्यों के बारे में एक अन्तरिम रिपोर्ट पेश की है। इस रिपोर्ट में आयोग ने अन्य बातों के अलावा निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण प्रश्नों की ओर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता पर बल दिया है :

(1) अधिकांश राज्यों में आदिम जातियों के हितों की रक्षा करने तथा बाहरी व्यक्तियों-द्वारा उनका शोषण रोकने के लिए की गई व्यवस्था ने सन्तोषजनक ढंग से काम नहीं किया है। महाजनों, वनों के ठेकेदारों और अन्य शोषकों की अवांछनीय कार्रवाइयों से आदिम जातीय क्षेत्रों में ज़मीन का स्वामित्व बड़े पैमाने पर बदलता रहा है। वनों के पुनर्गठन तथा नई नीतियां निर्धारित होने से वनों, मछली पकड़ने और शिकार में आदिम जातियों के अधिकार कम हो गए हैं। बिहार, मध्यप्रदेश और उड़ीसा में औद्योगिक और अन्य विकास-योजनाओं के कारण बहुत-से आदिम जातिवालों को घर-बार छोड़ना पड़ा है। इसलिए अनुसूचित क्षेत्रों

की व्यवस्था मज़बूत करने तथा कुछ मामलों में उसका पुनर्गठन करने की आवश्यकता है।

(2) आदिम जातीय क्षेत्रों में काम करनेवाले लोगों—विशेष रूप से, आदिम जाति-कल्याण-अधिकारियों, तकनीकी विशेषज्ञों और क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं—की आवश्यक संख्या के बारे में पूरी तरह अनुमान नहीं लगाया गया है। कल्याण-कार्यक्रमों को अमल में लाने के क्षेत्र में इसी कारण बाधाएं उपस्थित होती हैं। आवश्यकताओं का दीर्घकालीन अनुमान लगाए बिना कर्मचारियों की भरती असन्तोषजनक सिद्ध हुई है। अनुसूचित क्षेत्रों में प्रशिक्षित कर्मचारियों की कमी की शिकायत निरन्तर बनी रही है। इन क्षेत्रों में काम करनेवालों को आदिम जातियों के तौर-तरीकों से भली प्रकार परिचित होना चाहिए और उनकी कमियों, अयोग्यताओं, आदि का भी ज्ञान होना चाहिए। गैर-आदिम जातीय क्षेत्रों के ढंग के विकास-कार्यक्रम आदिम जातीय क्षेत्रों में प्रभाव डालने या प्रगति करने में सामान्यतः असफल रहे हैं। अतः विशिष्ट संस्थाओं और अन्य माध्यमों से आदिम जातीय क्षेत्रों में विभिन्न स्तरों पर काम कर रहे कर्मचारियों को परिचयात्मक प्रशिक्षण देना अति आवश्यक है। कठिन परिस्थितियों में काम करनेवाले कर्मचारियों को विशेष भत्ते, आदि देने की समस्या का भी सन्तोषजनक हल ढूंढ़ा जाना चाहिए।

(3) आदिम जातीय क्षेत्रों में अनेक ऐसी समस्याएं उत्पन्न होती हैं, जिनका वैज्ञानिक ढंग पर मूल्यांकन और अध्ययन होना चाहिए। उदाहरण के लिए, आदिम जातीय क्षेत्रों में उद्योगीकरण का प्रभाव, भूमि की बेदखली की दर, ऋण आदि की विभिन्न प्रणालियों, विशिष्ट विकास-योजनाओं एवं आश्रम-विद्यालयों, वन-श्रमिक सहकारी संस्थाओं, अनाज-गोलों, आदि का आदिम जातियों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति पर प्रभाव, आदि कुछ ऐसी समस्याएं हैं।

(4) आदिम जातीय क्षेत्रों के विकास में गैर-सरकारी स्वैच्छिक संगठनों का बड़ा महत्त्व है। इन संगठनों को सावधानीपूर्वक बनाए गए एवं अन्य गतिविधियों से समन्वित कार्यक्रमों के आधार पर भरपूर सहायता दी जानी चाहिए।

वर्तमान व्यवस्थाओं पर आयोग की सिफारिशों के प्रकाश में आगे विचार किया जाना चाहिए और जहां कहीं आवश्यक हो, उनमें सुधार के लिए कदम उठाए जाने चाहिए।

तीसरी योजना के कार्यक्रम

8. दूसरी योजना के दौरान आदिम जातीय क्षेत्रों में विभिन्न विकास-योजनाएं शुरू की गईं। आर्थिक उन्नति के कार्यक्रम में भूमि की व्यवस्था, भूमि-पुनरुद्धार, बीज-वितरण, प्रदर्शन-फार्मों की स्थापना, सेवा-सहकारी और वन-श्रमिक सहकारी समितियों की स्थापना तथा संचार-साधनों में सुधार भी शामिल हैं। शिक्षा-सम्बन्धी

कार्यक्रम में वजीफों; फीस की माफी और अनुदान के अन्य तरीकों, मैट्रिक से पहले और बाद में छात्रवृत्तियों; नए विद्यालयों, जिनमें आश्रम-पद्धति के विद्यालय भी शामिल हैं, की स्थापना; तथा कृषि एवं औद्योगिक हस्तकलाएं सिखाने की व्यवस्था पर बल दिया गया। पीने के पानी की व्यवस्था करने, आवास-स्थिति सुधारने, औषधालय, प्रसूति एवं शिशु-कल्याण-केन्द्र खोलने तथा चलते-फिरते स्वास्थ्य-केन्द्र आरम्भ करने की योजनाओं पर भी अमल किया जा रहा है।

9. दूसरी योजना में प्राप्त अनुभव के प्रकाश में एक विशेष कार्यकारी दल ने उन सामान्य सिद्धान्तों पर विचार किया, जिनके आधार पर तीसरी योजना के कार्यक्रम तैयार किए जाने थे। यह सिफारिश की गई है कि आर्थिक उन्नति के कार्यक्रमों में, अदल-बदल कर खेती करने में जुटे हुए लोगों के आर्थिक पुनर्वास, अनुसूचित आदिम जातियों की सहकारी संस्थाओं-द्वारा वनों का कार्य-संचालन करने और आदिम जातीय किसानों एवं शिल्पियों को उनका माल बेचने में सहायता पहुंचाने के लिए बहूद्देश्यीय सहकारी संस्थाएं स्थापित करने के काम को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। विभिन्न कार्यों के लिए निर्धारित धन-राशि में से आदिम जातीय क्षेत्रों में भूमि-सुधार; भूमि-पुनरुद्धार और मिट्टी-संरक्षण; छोटी सिचाई; उन्नत बीजों, खादों, उपकरणों तथा बैलों के वितरण; प्रशिक्षण-सुविधाओं; उन्नत तरीकों के प्रदर्शन; पशुधन, मछलीपालन, मुर्गीपालन, सूअरपालन तथा भेड़पालन के विकास; प्रशिक्षण-सह-उत्पादन-केन्द्रों की स्थापना तथा कुटीर उद्योगों में लगे हुए ग्रामीण शिल्पियों को सहायता और सलाह देने की व्यवस्था की जानी चाहिए। शिक्षा-कार्यक्रम में, सामान्य योजना के अन्तर्गत प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करने के अतिरिक्त, माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्तरों पर भी छात्रावासों और छात्रवृत्तियों की व्यवस्था होनी चाहिए। तकनीकी प्रशिक्षण में भी छात्रवृत्तियों और फीस-माफी की व्यवस्था की जानी चाहिए। मुख्य राजपथों का निर्माण सामान्य विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत होना चाहिए और अनुसूचित आदिम जातियों के लिए निर्धारित धन-राशि दुर्गम स्थानों पर पहुंचने के लिए नालों, पुलियों और पुलों के निर्माण, बड़ी सड़कों को मिलानेवाली छोटी सड़कों तथा जंगल से गुज़रनेवाली जीप-यात्रा-योग्य सड़कों के निर्माण, दूरस्थ और दुर्गम स्थानों से सम्बन्ध जोड़नेवाले संचार-साधनों की मरम्मत, आदि पर ही खर्च होनी चाहिए। चिकित्सा और जन-स्वास्थ्य के कार्यक्रम के सम्बन्ध में कार्यकारी दल ने सुझाव दिया है कि हर क्षेत्र में वहां की खास बीमारियों के लिए निरोधक कार्रवाइयों, चलती-फिरती चिकित्सा-इकाइयों की स्थापना, प्रसूति एवं शिशु-कल्याण-केन्द्र तथा दुर्गम इलाकों में पीने के पानी की व्यवस्था को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

10. राज्यों की योजनाएं आम तौर पर ऊपर लिखे सुझावों के अनुसार ही बनाई गई हैं। फिर भी, उन पर दो पहलुओं से पुनर्विचार की आवश्यकता है: (क) अनुसूचित क्षेत्र और अनुसूचित आदिम जाति-आयोग की सिफारिशों के आधार पर कार्यक्रमों को मज़बूत बनाना; तथा (ख) यह देखना कि विशेष धन-व्यवस्था का उपयोग अतिरिक्त कार्यक्रमों के लिए हो, न कि विकास की सामान्य योजनाओं के अन्तर्गत पिछड़े वर्गों को उपलब्ध की जानेवाली सहायता के स्वरूप-परिवर्तन-मात्र के लिए। अनिवार्यत: इन वर्गों के हितों के लिए आवश्यक समझी जानेवाली रिआयतें

उन योजनाओं में ही निहित होनी चाहिएं और उनके लिए पिछड़े वर्गों के कल्याणार्थ विशेष रूप से निर्धारित सीमित धन-राशि पर निर्भर नहीं किया जाना चाहिए।

11. योजना में आदिम जातीय विकास-खंडों के एक विशाल कार्यक्रम की व्यवस्था है। इसका उद्देश्य आदिम जातीय क्षेत्रों में सामुदायिक विकास के सामान्य ढांचे के आधार पर समन्वित और सघन विकास करना है, परन्तु इसमें आदिम जातियों की परिस्थितियों के अनुसार थोड़ा संशोधन कर दिया गया है तथा अतिरिक्त साधन की व्यवस्था की गई है। दूसरी योजना में इस कार्यक्रम के अधीन कुल 43 विकास-खंड आए थे और हर खंड के लिए 27 लाख रु० की व्यवस्था की गई थी। इसमें से 12 लाख रु० की व्यवस्था सामुदायिक विकास के अन्तर्गत तथा शेष 15 लाख रु० की व्यवस्था गृह-मन्त्रालय की ओर से की गई थी। अब इस योजना में परिवर्तन करके ऐसी व्यवस्था कर दी गई है कि पहले चरण में इन खंडों में से प्रत्येक को 22 लाख रु० (गृह-मन्त्रालय का योगदान 10 लाख रु०) मिलें तथा दूसरे चरण के 5 वर्षों में 10 लाख रु०। इसमें से 5 लाख रु० सामुदायिक विकास की ओर से मिलेंगे और 5 लाख रु० गृह-मन्त्रालय की ओर से। विशेष बहूद्देश्यीय आदिम जातीय खंड-समिति की सिफारिशों के अनुसार इन क्षेत्रों की विकास-योजना को और उदार बना दिया गया है। अब यह कार्यक्रम केवल आदिम जातीय क्षेत्रों में ही लागू नहीं किया जाएगा, बल्कि उन क्षेत्रों में भी लागू किया जाएगा, जहां आदिम जातीय लोगों की संख्या कुल आबादी का दो-तिहाई या अधिक भाग होगी। अब जो कार्यक्रम अपनाया गया है, उसमें प्राप्त साधनों के विभिन्न कामों में वितरण का सविस्तर विवरण देने के बजाय यह निश्चित कर दिया गया है कि 60 प्रतिशत धन आर्थिक उन्नति पर, 25 प्रतिशत संचार-साधनों पर और 15 प्रतिशत सामाजिक सेवाओं पर खर्च किया जाएगा। साथ ही, यह भी सुझाव दिया गया है कि पीने के पानी की समस्या को अधिक अच्छी तरह हल करने के लिए आर्थिक उन्नति के खाते में से कुछ राशि इस पर खर्च कर दी जाए। तीसरी योजना में कुल 300 आदिम जातीय विकास-खंडों की व्यवस्था है।

12. हाल के विचार-विमर्श के फलस्वरूप उन बुनियादी आवश्यकताओं और वातावरण के सम्बन्ध में एकमत स्थापित हो गया है, जिनमें आदिम जातीय विकास-खंडों के कार्यक्रमों का सफल संचालन हो सकता है। इनमें प्रमुख हैं: सावधानी से आयोजन, कार्यक्रमों में समन्वय, आदिम जातीय समुदायों की आवश्यकता के अनुसार कर्मचारियों को प्रशिक्षण देना तथा विषयज्ञान कराना, विशेष निर्धन और अधिक दुर्गम क्षेत्रों की आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान देना, भूमि और जंगलों पर आदिम जातीय लोगों के अधिकारियों का समादर, तथा परम्परागत आदिम जातीय संगठनों और नेताओं का विकास-कार्यक्रमों की कार्यान्विति में सक्रिय सहयोग प्राप्त करना। आदिम जातीय विकास-खंडों के कार्यक्रम को एक केन्द्र-संचालित योजना के रूप में कार्यान्वित किया जा रहा है। इस वर्ग के अन्य विकास-कार्यक्रमों में सहकारिता (वन-सहकारी समितियों-सहित), हाट-व्यवस्था-सह-उपभोक्ता-सहकरी समितियों, मैट्रिक के बाद की पढ़ाई के लिए छात्रवृत्तियों, आदिम जातीय-अनुसन्धान संस्थाओं की स्थापना तथा प्रशिक्षण, अनुसन्धान एवं सर्वेक्षण आदि का स्थान है।

13. जैसा कि पहले बताया जा चुका है, अनुसूचित आदिम जातियों से सम्बद्ध कार्यक्रम पर अनुसूचित क्षेत्र और अनुसूचित आदिम जाति-आयोग के अन्तिम प्रस्ताव प्राप्त होने पर पुनर्विचार किया जाएगा। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि आयोग ने 9 राज्यों और एक केन्द्रशासित प्रदेश के बारे में दी गई अपनी अन्तिम रिपोर्ट में 73 करोड़ रु० की व्यय-राशि की सिफारिश की है, जबकि योजना में फिलहाल (राज्यों और केन्द्रीय कार्यक्रमों को मिला कर) कुल 54 करोड़ रु० की व्यवस्था है। नीचे की तालिका में सभी राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों के लिए की गई व्यवस्था तथा आयोग की अन्तरिम रिपोर्ट में वर्णित क्षेत्रों के लिए की गई सिफारिश की तुलना की गई है :

(करोड़ रु०)

	सब राज्य और केन्द्रशासित प्रदेश	9 राज्य और एक केन्द्रशासित प्रदेश	
	तीसरी योजना में व्यवस्था	तीसरी योजना में व्यवस्था केन्द्र एवं राज्य	अनुसूचित क्षेत्र और अनुसूचित आदिम जाति-आयोग की अन्तरिम रिपोर्ट में व्यय-सम्बन्धी सिफारिश
शिक्षा	14.48	12.26	15.38
आर्थिक उन्नति	37.12	34.39	48.07
स्वास्थ्य, आवास एवं अन्य योजनाएं	9.55	6.99	9.45
योग	61.15	53.64	72.9

आयोग ने यह भी संकेत दिया है कि कुछ और क्षेत्रों को अनुसूचित क्षेत्र घोषित किया जा सकता है। इनके लिए कुछ पूरक साधनों की आवश्यकता पड़ सकती है। विकास-कार्यक्रमों के सम्बन्ध में आयोग के प्रस्तावों के कारण, जिन पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाएगा, कुछ और साधनों की आवश्यकता पड़ सकती है। उचित समय पर इन बातों पर भी विचार किया जाएगा कि अनुसूचित आदिम जातियों के लिए निर्धारित धन-राशि में निश्चित रूप से और कितनी रकम जोड़ी जानी चाहिए, योजना में की गई सामान्य व्यवस्था में से ही विभिन्न कार्यक्रमों के लिए यह पूरक राशि किस सीमा तक प्राप्त की जा सकती है, और केन्द्र तथा राज्यों का योगदान कितना होना चाहिए।

विकास की समस्याएं

14. पहली दो योजनाओं की अवधि में किए गए कामों तथा विशेषज्ञ-समितियों और अन्य लोगों के अध्ययन के परिणामस्वरूप आदिम जातीय क्षेत्रों में विकास का एक सामान्य स्वरूप अब प्रायः निश्चित हो चुका है। हां, उसकी कार्यान्विति-सम्बन्धी व्यवस्था को सुदृढ़ करना निःसन्देह आवश्यक है। समय-समय पर प्रगति की समीक्षा करना भी आवश्यक है। वस्तुपरक मूल्यांकन भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि आदिम जातियों के कल्याण-जैसे जटिल क्षेत्र में अक्सर निर्धारित नीति तथा

वास्तविक क्षेत्र में उस पर हुए अमल में बहुत बड़ा अन्तर रह जाता है। आदिम जातीय क्षेत्रों में यह अन्तर न केवल अवांछनीय है, बल्कि निराशा का भी कारण बन सकता है, जिनके फलस्वरूप गम्भीर सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कठिनाइयां पैदा हो सकती हैं।

15. तीसरी योजना में विकास के कार्यक्रमों पर अमल करते समय कुछ पहलुओं पर विशेष ध्यान देना ज़रूरी है। आदिम जातियों के लोगों की मुख्य आर्थिक समस्या पूरे समय काम न मिलना तथा ऋण का बोझ है। वस्तुतः ये दोनों एक-दूसरे से सम्बद्ध समस्याएं हैं। आदिम जातियां अपनी जीविका के लिए प्रायः खेती और वनों पर निर्भर करती हैं; भूमि और जंगलों में उनके अधिकारों की रक्षा के महत्त्व पर पहले ही प्रकाश डाला जा चुका है। कुछ राज्यों में—जैसे, महाराष्ट्र और गुजरात में—अनुसूचित क्षेत्रों में जंगलों का सारा काम वन-श्रमिक-सहकारी समितियों के माध्यम से होता है; जिनके सदस्य आदिम जातियों के ही लोग होते हैं। कुल मिलाकर इन समितियों का काम सन्तोषजनक सिद्ध हुआ है। फिर भी, यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि कहीं श्रमिकों का शोषण तो नहीं किया जा रहा है—चाहे वह वन-विभाग के अधीनस्थ अधिकारियों-द्वारा हो अथवा आदिम जातीय लोगों में से ही कुछ स्वार्थी व्यक्तियों-द्वारा। समाज-सेवकों और आदिम जाति-कल्याण-विभागों के अधिकारियों को इन सहकारी समितियों के साथ सम्बन्ध रखना ही चाहिए। उन राज्यों में, जहां जंगलों का काम मुख्यतः ठेकेदारों-द्वारा किया जाता है, वर्तमान प्रथा को जल्दी-से-जल्दी समाप्त कर दिया जाना चाहिए।

16. अनुसूचित आदिम जातियों की आर्थिक स्थिति में सुधार बहुत-कुछ कृषि का स्तर उठाने में मिलनेवाली सफलता पर निर्भर करता है। इस दृष्टि से यह ज़रूरी है कि जहां भी व्यवस्थित खेती चल रही है, वहां उन्नत किस्म के बीज, खाद और ऋण की सुविधाएं देने, सिंचाई का विस्तार करने, मिट्टी-संरक्षण और भूमि सुधार, बढ़िया किस्म के उपकरणों के उपयोग और तकनीकी मार्गदर्शन पर ध्यान दिया जाए। जहां बदल-बदल कर खेती होती है, वहां व्यवस्थित खेती की नींव डालने का काम मन्द गति से और लम्बे समय तक चलने की सम्भावना है। इन क्षेत्रों में ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि बदल-बदल कर की जाने-वाली खेती भी वैज्ञानिक आधार पर हो ताकि भूमि उपजाऊ बनी रहे तथा उस रीति से होनेवाली खेती की हानियां कम-से-कम हो जाएं। बदल-बदल कर की जानेवाली खेती के मुकाबले व्यवस्थित खेती के लाभ अतीत की अपेक्षा अब अधिक अच्छी तरह समझे जाने लगे हैं, फिर भी हर क्षेत्र में उनका अध्ययन किया जाना चाहिए। यह काम कृषि एवं आदिम जातीय विशेषज्ञ तथा उस कार्य में लगे समाज-सेवक मिलकर करें। इसके बाद ही आदिम जातीय लोगों को उनकी पुरानी रीति छोड़ने के लिए परामर्श दिया जाना चाहिए।

17. आदिम जातीय लोगों के बीच सहकारिता के आधार पर विकास-कार्य चलाने के पक्ष में कई अनुकूल कारण हैं। फिर भी, आमदनी का स्तर बढ़ाने तथा उत्पादन में वृद्धि के उद्देश्य से होनेवाले सहकारी प्रयत्नों की सफलता के लिए यह ज़रूरी है कि आदिम जातीय लोगों की ऋणग्रस्तता की समस्या पर अतीत की अपेक्षा अब अधिक

बुनियादी ढंग से विचार किया जाए । राज्यों में हाल में ही इस दिशा में कुछ कार्य किया गया है। उदाहरण के लिए, आन्ध्रप्रदेश में जनवरी 1957 में किसी भी कर्ज़दार पर जो भी ब्याज चढ़ा था, वह माफ कर दिया गया, केवल मूल धन चुकाना शेष रहा। ब्याज की-दरों का भी नियमन कर दिया गया । महाराष्ट्र, गुजरात,मध्यप्रदेश, मद्रास असम, उड़ीसा, हिमाचलप्रदेश और पंजाब के लाहौल तथा स्पीति-क्षेत्र में इस बात की जांच की गई है कि अनुसूचित आदिम जातियों में ऋणग्रस्तता किस सीमा तक है । इस सम्पूर्ण समस्या पर नए सिरे से विचार किए जाने की ज़रूरत है। प्राप्त जानकारी पर एक विशेष समिति को विचार करना चाहिए, जिससे ठोस नीति और कार्यक्रम निश्चित किया जा सके। इन कार्यक्रमों में ऋण की रकमें समाप्त करना और उनका निबटारा करना तथा नए ऋणों के नियमों तथा शर्तों का नियमन, ये दोनों बातें शामिल की जानी चाहिएं। भविष्य में पूंजी लगाने तथा उत्पादित माल की बिक्री के लिए सहकारी व्यवस्था पर ही मुख्यत निर्भर रहना होगा। इस सिलसिले में आन्ध्र-अनुसूचित आदिम जाति सहकारी वित्त एवं विकास-निगम-जैसी योजनाओं का निकट से अध्ययन किया जाना चाहिए, ताकि आदिम जातीय लोगों में सहकारी विकास की दिशाएं निश्चित की जा सकें। यह ज़रूरी है कि सहकारी संगठनों की रचना अनुसूचित आदिम जातियों की वास्तविक आवश्यकताओं और विभिन्न क्षेत्रों की परिस्थितियों के अनुसार की जाए तथा उनके नियम, आदि अत्यधिक सरल बना दिए जाएं। गृह-मन्त्रालय ने अभी हाल में एक विशेषज्ञ कार्यकारी दल नियुक्त किया है, जो इस बात पर विचार करेगा कि अनुसूचित आदिम जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों को तीसरी योजना के विकास-कार्यक्रमों का पूरा लाभ उठाने में किस तरह सहायता पहुंचाई जा सकती है। दल को सर्वाधिक उपयुक्त श्रेणी के सहकारी संगठन और नियम-उप-नियमों में संशोधन सुझाने का भी काम सौंपा गया है।

18. आदिम जातीय क्षेत्रों में काफी अर्द्धबेरोज़गारी है । सुझाव दिया गया है कि तीसरी योजना के ग्रामीण निर्माण-कार्यों में आदिम जातीय क्षेत्रों में खेती की दृष्टि से निष्क्रिय मौसम में बढ़ जानेवाली बेरोज़गारी को दूर करने पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाए।

19. राज्यों की योजनाओं में आदिम जातीय क्षेत्रों में कुटीर-उद्योग शुरू करने के अनेक कार्यक्रम हैं। प्रतीत होता है कि अतीत में कुटीर-उद्योग-कार्यक्रमों का विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। इसका एक कारण तो यह हो सकता है कि किफायत में चलाए जानेवाले उद्योग चुनने में कठिनाई हुई हो तथा दूसरे यह कि कर्मचारियों की कमी रही एवं बिक्री तथा ऋण-सुविधाओं का अभाव रहा । विशेष बहूद्देश्यीय आदिम जातीय विकास-खंड-समिति के सुझाव के अनुसार यह आवश्यक है कि हर क्षेत्र की कला और हस्तशिल्प का निकट से अध्ययन किया जाए, उनके विकास और सुधार के तरीके खोजे जाएं तथा किफायती एवं सन्तोषजनक रीति से हस्तशिल्प के नए काम शुरू किए जाएं। इस सिलसिले में एक और नई समस्या का उल्लेख किया जा सकता है । आदिम जातीय क्षेत्रों में 11 और 14-15 वय-वर्ग के ऐसे लड़कों की संख्या बहुत बड़ी है, जो या तो कभी विद्यालय गए ही नहीं अथवा जिनकी शिक्षा अधूरी रह गई। यदि आदिम जातीय क्षेत्रों में सरल ढंग का व्यावसायिक प्रशिक्षण देने का कोई कार्यक्रम

चलाया जाए, तो इन लड़कों को उत्पादक धन्धों के लिए तैयार किया जा सकता है।

20. पिछले कुछ वर्षों में आदिम जातीय क्षेत्रों में सिंचाई, बिजली और उद्योगों के विकास की अनेक बड़ी परियोजनाएं शुरू की गई हैं। इन परियोजनाओं के एक तत्काल प्रभाव-स्वरूप कुछ अस्त-व्यस्तता आई है और कुछ लोगों का विस्थापन हुआ है। इस तरह विस्थापित परिवारों की संख्या हजारों तक पहुंच गई है। उन्हें भूमि या नकदी, अथवा दोनों के रूप में मुआवज़ा देने का प्रयत्न किया जाता है। यहां यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि मुआवज़ा इतना हो कि उनका पुनर्वास ठीक ढंग से हो सके। जहां तक सम्भव हो, मुआवज़ा भूमि के रूप में होना चाहिए। मुआवज़े की राशि दी जानेवाली भूमि की उत्पादन-शक्ति को ध्यान में रखकर तय की जाए। यह प्रायः देखा गया है कि कि नकदी के रूप में दिया गया मुआवज़ा जल्दी खर्च हो जाता है; भूमि के रूप में मुआवज़ा देने पर भी यह अक्सर देखा गया है कि किन्हीं कारणों से पुनर्वास सन्तोषजनक ढंग से नहीं हो पाया। परियोजना-स्थल पर कुछ समय तक तो अकुशल कर्मचारियों को काम मिल सकता है; परन्तु जब परियोजना का निर्माण का हिस्सा पूरा हो जाता है और कुशल कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ती है, तब विस्थापित आदिम जातीय लोगों को काम देने की गुंजाइश कम रह जाती है। इन परिस्थितियों में उस समुदाय या उस व्यक्ति को पहुंची हानि अपूरणीय होती है तथा इसके परिणामस्वरूप असन्तोष बढ़ता है। तीसरी और अन्य भावी योजनाओं में तेज़ विकास के साथ-साथ यह समस्या और भी बड़ी होती जाएगी और इस पर बहुत सावधानी से काम करने की ज़रूरत पड़ेगी। परियोजनाओं के लिए स्थान निश्चित करते समय उस स्थान पर पहले से बसे हुए लोगों को बेदखल न होने देने अथवा बेदखली कम-से-कम करने की सम्भावनाओं पर विचार कर लिया जाना चाहिए। जहां और कोई रास्ता नहीं हो, वहां बेदखली और पुनर्वास की समस्या से स्वयं अपने अधिकारियों अथवा राजस्व-अधिकारियों के ज़रिए उलझने के बजाय आदिम जातीय कल्याण-विभागों और स्वैच्छिक संगठनों की सहायता ली जानी चाहिए। यदि परियोजना के आरम्भ से ही इन संगठनों को विश्वास में लिया जाए और उन्हें आवश्यक साधन उपलब्ध कर दिए जाएं, तो वे आबादी के स्थानान्तरण, उनके पुनर्वास और उन्हें समुचित रूप से बसाने के अन्य कामों में बहुत सहायक हो सकते हैं। समस्याओं को हल करने में उन संगठनों को कुछ अधिकार एवं छूट भी मिलनी चाहिए। यह बात याद रखने की ज़रूरत है कि व्यक्तिगत रूप से लोगों को मुआवज़ा देने के बावजूद आदिम जातीय समाज का अंग होने के कारण उन्हें एकदम अलग, अकेला नहीं समझा जा सकता—वे एक बड़े समुदाय के अंग हैं, जिसकी अपनी जीवन-पद्धति, संगठन और आचार-संहिता है।

21. आदिम जातीय कल्याण-कार्यक्रमों का प्रभाव काफी बड़ी जनसंख्या पर पड़ता है और विकास के जो अनेक नए कार्यक्रम चल रहे हैं, उनके परिणामस्वरूप आदिम जातीय समाज के जीवन और उनकी परम्पराओं में बुनियादी तौर पर परिवर्तन आ सकते हैं। इनसे उत्पन्न होनेवाली समस्याओं को सन्तोषजनक ढंग से हल करने के लिए सरकारी कर्मचारियों और जनसेवकों के एक ऐसे वर्ग की आवश्यकता है,

जिसे उन इलाकों और निवासियों के बारे में पूरी जानकारी हो, जिसे अपने काम में पूरी तरह प्रशिक्षित किया गया हो और जो सद्भावना से परिपूर्ण हो। उन अधिकारियों से काम नहीं चल सकता, जो थोड़े समय के लिए आदिम जातीय क्षेत्रों में आएं और फिर तबादला हो जाने के कारण कहीं और चले जाएं। अनुसूचित आदिम जातियों को शेष समाज के बराबर स्तर तक लाने के लिए हज़ारों जनसेवकों और सामाजिक कार्यकर्त्ताओं की एक पूरी पीढ़ी को और सम्भवतः उससे अगली पीढ़ी को भी, इस काम में खप जाना होगा और ये कार्यकर्त्ता आदिम जातीय लोगों में से ही अधिक-से-अधिक आने चाहिएं। पहली दो योजनाओं की अवधि में काफी काम हुआ अवश्य है, परन्तु राज्यों में आदिम जातीय क्षेत्रों में विकास-कार्यक्रम चलाने के लिए स्थापित विभागों में कर्मचारियों की बहुत कमी है तथा अक्सर इस असाधारण रूप से कठिन काम के लिए उन्हें आवश्यक सहायता भी नहीं मिलती। इन परिस्थितियों में, संविधान में वर्णित विशेष दायित्वों को ध्यान में रखते हुए यह विचारणीय बात है कि राज्य-सरकारें और केन्द्रीय सरकार मिलकर तकनीकी और अन्य कर्मचारियों का एक ऐसा विशेष वर्ग तैयार करें, जो अनुसूचित क्षेत्रों में और आदिम जाति-बहुल अन्य क्षेत्रों में काम कर सके। यह क्षेत्रीय कर्मचारियों से ऊपर के स्तर के कर्मचारी तैयार कर सकता है। सामान्यतः इस वर्ग के कर्मचारी अपने-अपने राज्यों में ही काम करेंगे, परन्तु उत्तरदायित्वपूर्ण काम के स्तर पर, आवश्यकता पड़ने पर उन्हें अन्य राज्यों में भी भेजा जा सकेगा। इसका सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू निश्चय ही यह है कि प्रशिक्षित कर्मचारियों का यह वर्ग अपनी सेवा की सारी अवधि आदिम जातीय क्षेत्रों और आदिम जातीय लोगों में ही पूरी करे, ताकि उनके ज्ञान, अनुभव और आदिम जातीय लोगों के प्रति एकात्मभाव के कारण तीव्र और अबाध विकास चलता रहे। सरकारी कर्मचारी-वर्ग को मज़बूत करने के उपायों के साथ-साथ सरकारी नीति के रूप में यह भी ज़रूरी है कि आदिम जातियों के बीच काम करने के लिए मज़बूत स्वैच्छिक संगठन बनाए जाएं।

(3)
अनुसूचित जातियां

22. अनुसूचित आदिम जातियों से भिन्न, अनुसूचित जातियां सारे देश में फैली हुई हैं और यद्यपि वे सामान्य समाज का अंग हैं, तथापि सामाजिक अक्षमताओं तथा आर्थिक दुर्बलता के कारण उनका एक विशेष वर्ग तैयार हो गया है। संविधान में 'अस्पृश्यता' का उन्मूलन कर दिया गया और किसी भी रूप में उसके व्यवहार पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम 1955 के अनुसार छूआछूत सारे देश में हस्तक्षेपजन्य और दंड्य अपराध घोषित कर दिया गया। अनुसूचित जातियों की अपनी विशेष सामाजिक समस्याएं है, परन्तु जहां तक आर्थिक समस्याओं का प्रश्न है, वे प्रायः अन्य पिछड़े वर्गों की समस्याओं के समान ही हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, तीसरी योजना में अनुसूचित जातियों से सम्बद्ध विशेष कार्यक्रमों के लिए 40 करोड़ रु० की व्यवस्था है, जबकि दूसरी योजना में यह राशि 28 करोड़ रु० तथा पहली योजना में 7 करोड़ रु० थी। अनुसूचित जातियों के लिए राज्यों की योजनाओं

में 30 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। इसमें से आधी रकम शिक्षा-कार्यक्रमों के लिए है तथा शेष में से आधी-आधी (क) आर्थिक उन्नति, और (ख) स्वास्थ्य, आवास तथा अन्य कार्यक्रमों के लिए। योजना के अन्तर्गत विकास के सामान्य कार्यक्रमों से अनुसूचित जातियों को मिलनेवाले क्रमशः वृद्धिशील लाभ की मात्रा बढ़ाने के लिए ही उक्त पूरक व्यवस्था की गई है—विशेष रूप से इसलिए कि योजना में समाज के कमज़ोर वर्गों को हर कार्यक्रम के लाभ का उचित हिस्सा देने की ओर ध्यान दिया गया है। सामुदायिक विकास-कार्यक्रम, ग्रामीण निर्माण-कार्यक्रम, भूमि-पुनर्वितरण-कार्यक्रम, ग्राम और लघु उद्योग-कार्यक्रम तथा खेतिहर श्रमिकों के हितों के लिए बनाई जानेवाली योजनाओं का अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों का जीवन-स्तर उठाने के क्षेत्र में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

23. पहली दो योजनाओं में अनुसूचित जातियों के विकास-कार्यक्रमों में शिक्षा पर ही अधिक बल दिया गया था। सन् 1956-57 में जहां अनुसूचित जातियों के छात्रों को 6 लाख छात्रवृत्तियां दी गई, वहां दूसरी योजना के अन्त में छात्रवृत्ति पानेवालों की संख्या 9 लाख थी। मैट्रिक से ऊंची कक्षाओं के लिए छात्रवृत्तियां पानेवाले अनुसूचित जाति के छात्रों की संख्या पहली योजना के आरम्भ में 1,100 से भी कम थी, परन्तु दूसरी योजना के अन्त में 40 हजार हो गई।

24. जैसा कि पहले स्पष्ट किया जा चुका है, तीसरी योजना में अनुसूचित जातियों के लिए शामिल किए गए कार्यक्रमों का उद्देश्य विशेष कार्य सम्पन्न करना है। ये कार्यक्रम किसी भी रूप में सारे समाज के लिए चलाए जानेवाले विकास-कार्यक्रमों का स्थान नहीं ले सकते। शिक्षा के क्षेत्र में मुख्य उद्देश्य ये हैं कि यथासम्भव छात्रवृत्तियां उन्हीं छात्रों को दी जाएं, जो आवश्यकताग्रस्त होने के साथ-साथ योग्य भी हों, शिक्षा-संस्थाओं के मिश्रित छात्रावासों में उन्हें रहने की सुविधा दी जाए, फीस माफ हो तथा आवश्यकताग्रस्त छात्रों को आर्थिक सहायता दी जाए। आर्थिक उन्नति के लिए भूमि एवं सहायता प्रदान कर उन्हें काश्तकारों के रूप में बसाने, ग्रामोद्योगों एवं छोटे उद्योगों के प्रशिक्षण तथा परम्परागत हस्तशिल्पों में सुधरे हुए तरीके अपनाने पर भी विशेष बल दिया गया है। प्रायः अधिकांश विशेष सहायता-कार्यक्रम राज्यों की योजनाओं के अंग हैं, परन्तु निम्नलिखित केन्द्र-संचालित कार्यक्रमों के लिए गृह-मन्त्रालय ने व्यवस्था की है:

(1) गन्दगी उठाने, आदि के काम में लगे हुए लोगों की स्थिति सुधारना, जिसमें मल-मूत्र सिर पर उठाने का चलन समाप्त करने का कार्य भी शमिल हैं;

(2) भंगियों और मेहतरों के लिए मकान बनाने में सहायता;

(3) अनुसूचित जातियों के उन सदस्यों के लिए मकान बनाने के स्थान की व्यवस्था, जो (क) गन्दगी ढोने का काम करते हैं और (ख) जो भूमिहीन श्रमिक हैं;

(4) मैट्रिक से आगे पढ़ाई करने के लिए छात्रवृत्तियां देना, और

(5) स्वैच्छिक संगठनों को सहायता।

सामान्य आवास-कार्यक्रमों में भूमि के अधिग्रहण तथा उसे सुधारने के लिए धन की व्यवस्था की गई है। यह भूमि मकान बनाने के लिए खेतिहर श्रमिकों को दी जाएगी, जिनमें अनुसूचित जाति के लोग बड़ी संख्या में हैं।

25. अनुसूचित जाति के लोग आम तौर पर छोटे-छोटे समूहों में अन्य जातियों के साथ ही मिलकर रहते हैं। इसलिए उनके कल्याण और उन्नति का प्रश्न सारे समाज के साथ सम्बद्ध है। उनकी जीवन-स्थिति में सुधार और उनकी आमदनी का स्तर उठाना देश की आर्थिक और सामाजिक प्रगति का एक बड़ा प्रमाण होगा। अनुसूचित जातियों की सामाजिक अक्षमताओं को दूर करने के लिए अनेक कानून बनाए जा चुके हैं और धीरे-धीरे जनमत के समर्थन से उन कानूनों पर अमल का प्रबन्ध भी मज़बूत किया जा रहा है। अब भी जो सामाजिक अक्षमताएं बच गई हैं, उनका कारण आर्थिक पिछड़ापन है। इसलिए आर्थिक विकास के कार्यक्रमों पर तेज़ी से अमल करने का विशेष महत्त्व है। तीसरी योजना में विभिन्न विकास-कार्यक्रमों के लाभ समाज के कमज़ोर वर्गों को जिस मात्रा में पहुंचेंगे, उतनी ही मात्रा में उनका लाभ अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों को मिलेगा।

26. अनुसूचित जातियों के कल्याण-कार्यक्रमों में शिक्षा-सम्बन्धी सहायता को उच्च प्राथमिकता दी गई है और सरकारी नौकरियों में उनके लिए स्थान सुरक्षित रखे गए हैं। फिर भी, अक्सर ऐसा होता है कि निश्चित अनुपात में वे लोग उपलब्ध नहीं होते। साथ ही, कुछ क्षेत्रों में यह स्थिति भी है कि कुछ थोड़ी से शिक्षा-प्राप्त अनुसूचित या पिछड़े वर्ग के लोग भी बेरोज़गारों में शामिल हैं। उनके सम्बन्ध में यह स्थिति विशेष रूप से है, जिनकी शिक्षा उन्हें क्लर्क या ऐसी ही किसी नौकरी के योग्य बना सकी है। इसलिए तकनीकी और उद्योग-धन्धों के प्रशिक्षण पर ध्यान देना बहुत ज़रूरी है। जैसा कि शिक्षा-सम्बन्धी अध्याय में सुझाया गया है, छात्रवृत्तियों अथवा शिक्षा में सहायता के अन्य कार्यक्रम इस प्रकार चलाए जाएं कि मेधावी छात्र अपना अध्ययन पूरा कर स्थायी रोज़गार के योग्य बन सकें। यह उचित होगा कि अनुसूचित और अन्य जातियों में से कम उम्र के बच्चे छांट लिए जाएं, उन्हें अपनी शिक्षा की सारी अवधि में सहायता दी जाए और जहां भी सम्भव हो, उन्हें रोज़गार से लगा दिया जाए।

27. छुआछूत हटाने के लिए जनता को शिक्षित करने के काम में स्वैच्छिक संस्थाओं को सहायता दी जाती है। तीसरी योजना में उन्हें इस काम के लिए अधिक सहायता दी जाएगी। यह ज़रूरी है कि स्वैच्छिक संस्थाएं प्रचार और सम्बद्ध काम तक ही सीमित न रहें, बल्कि विद्यालय, अस्पताल, आवास-सहकारी समितियां, उद्योग-केन्द्र आदि खोलें तथा उन्हें चलाने में मदद दें। ऐसे केन्द्र ही स्वैच्छिक संस्थाओं के कार्य के लिए ठोस आधार बन सकेंगे तथा अनुसूचित जातियों और अन्य लोगों के आर्थिक पुनर्वास के लिए बहुत मूल्यवान प्रमाणित होंगे।

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के आयुक्त की वार्षिक रिपोर्टों से अनुसूचित जातियों की समस्याएं हल करने की प्रगति का परिचय मिलता है। योजना की परियोजनाओं-सम्बन्धी समिति-द्वारा समाज-कल्याण के बारे में गठित अध्ययन-दल ने एक सामान्य मूल्यांकन का प्रयत्न किया था। विशेष समितियों अथवा दलों ने विशिष्ट समस्याओं का अध्ययन किया है—जैसे हरिजनों की स्थिति पर

विचार करने के लिए हरिजन-कल्याण-सम्बन्धी केन्द्रीय सलाहकार-मंडलों-द्वारा नियुक्त समिति की रिपोर्ट । अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों की स्थिति पर विकास-कार्यक्रमों के प्रभाव की अधिक जल्दी-जल्दी और पूरी जांच की आवश्यकता है, जिससे अनुभव के आधार पर नए तरीके निकाले जा सकें और मौजूदा व्यवस्था को मजबूत किया जा सके।

(4)

असूचित आदिम जातियां

28. भूतपूर्व जरायमपेशा जातियों को असूचित करने के बाद राज्यों में उनके विकास और पुनर्वास के विभिन्न कार्यक्रम शुरू किए गए हैं। तीसरी योजना में इन कार्यक्रमों के लिए 4 करोड़ रु० रखे गए हैं, जबकि पहली और दूसरी योजनाओं में यह राशि क्रमशः 1 करोड़ रु० और 2.9 करोड़ रु० थी। सन् 1952 में जरायमपेशा आदिम जाति-अधिनियम 1924 के रद्द किए जाने से स्पष्ट है कि भूतपूर्व जरायमपेशा जातियों के प्रति निगरानी और दंड के रुख के बजाय सुधार, पुनर्वास और शेष समाज में खपा लेने की प्रवृत्ति पैदा हुई है। उनके प्रति दृष्टिकोण में यह निश्चय ही एक बुनियादी परिवर्तन है। इन आदिम जातियों के लोगों की कुल संख्या यद्यपि 40 लाख है, तथापि ये बहुत-से समूहों में बंटे हुए हैं, हरेक की अपनी विशेषताएं एवं स्थानीय तथा परम्परागत पृष्ठभूमि है। इनमें से कुछ अनुसूचित जातियों में शामिल किए गए हैं। इन आदिम जातियों के पुनर्वास की भी अनेक समस्याएं हैं। शिक्षा की कमी के साथ-साथ दूसरी जातियों से अलग-थलग ये लोग आम तौर पर काश्तकार भी अच्छे नहीं हैं। पीढ़ियों से चली आ रही इनकी परम्पराएं और दृष्टिकोण बदलने में समय लगेगा। कुल मिला कर हाल के कुछ वर्षों में असूचित आदिम जातियों के हितों के लिए शुरू किए गए आर्थिक विकास-कार्यक्रम का आम तौर पर बहुत सीमित प्रभाव पड़ा है। हां, उन लोगों की बात अवश्य अलग है, जिन्हें कुछ बस्तियों में बसा दिया गया था और जिनका अच्छा-खासा समृद्ध समाज बन गया है। आर्थिक, शिक्षा-सम्बन्धी और सामाजिक कार्यक्रमों की सफलता के लिए यह ज़रूरी है कि स्वैच्छिक कार्यकर्त्ताओं और संगठनों को अधिक काम सौंपा जाए। वस्तुतः इन जातियों के अन्दर बैठ गए भय और आशंका को दूर करने तथा उनका विश्वास प्राप्त करने के लिए बहुत समय तक धैर्यपूर्वक काम करने की ज़रूरत होगी। वर्षों के प्रयत्नों के बाद ही बेहतर सामाजिक और आर्थिक जीवन बिताने की भावना उनमें पैदा की जा सकेगी और उन्हें नए-नए काम सीख कर और कुशल काश्तकार बन कर शेष जनता में घुल-मिल जाने का मौका मिलेगा।

29. असूचित आदिम जातियों के पुनर्वास में अभी तक अधिक सफलता न मिलने के कारण यह ज़रूरी है कि हर क्षेत्र में उनकी आवश्यकताओं का निकट से अध्ययन किया जाए तथा समुचित कार्यक्रम तैयार किए जाएं। इस कार्य में उनकी समस्याओं की जटिलता को ध्यान में रखा जाए, साथ ही इस तथ्य को भी कि वे समस्याएं बहुत समय से चली आ रही हैं। योजना की परियोजनाओं-सम्बन्धी समिति-द्वारा नियुक्त अध्ययन-

दल की सिफारिशों के प्रकाश में मोटे तौर पर निम्नलिखित कार्यक्रम तैयार किए जा सकते हैं :

(1) असूचित आदिम जातियों के पुनर्वास के लिए सुधार और कल्याण की समन्वित नीति, जिसके साथ सामाजिक शिक्षा का भी कार्यक्रम शामिल हो;

(2) विशेष आर्थिक कार्यक्रम, जिनमें उनके स्वभाव के अनुसार तथा विशेष रूप से उनके चारित्रिक गुणों—साहसिक वृत्ति और परम्परागत कारीगरी—का पूरा ध्यान रखा गया हो;

(3) औद्योगिक और अन्य सहकारी संस्थाओं की स्थापना;

(4) सरकारी नौकरियों में भरती के अवसर देना तथा अतिरिक्त प्रशिक्षण एवं बौद्धिक स्तर उठाने की व्यवस्था;

(5) जहां भी असूचित आदिम जातियों के लोगों की संख्या काफी बड़ी हो, वहां ऐसे प्रशिक्षित कार्यकर्त्ताओं का वर्ग तैयार किया जाए, जो उन लोगों के सामाजिक और सांस्कृतिक रीति-रिवाज से परिचित हों और उनके साथ घुल-मिल कर काम कर सकें।

30. असूचित आदिम जातियों की समस्याओं को ऊपर दिए गए सुझावों के अनुसार हल करने के प्रयत्नों के साथ इन जातियों के विभिन्न वर्गों के रहन-सहन और उनकी समस्याओं का निकट से अध्ययन भी आवश्यक है। अभी तक इन आदिम जातियों के सम्बन्ध में जो जांच-पड़ताल हुई है, वह एक सीमित उद्देश्य लेकर। फलतः असूचित आदिम जातियों के बारे में न तो पूरा ज्ञान हो सका और न ही उन पर देश में चल रही आर्थिक और सामाजिक गतिविधियों के प्रभाव की जानकारी हो सकी। लोगों की संख्या तथा समस्या की जटिलता को देखते हुए यह आवश्यक है कि जांच और अध्ययन के विषयों का व्यवस्थित ढंग से चुनाव हो तथा इसमें समाज-कार्य-विद्यालयों एवं अन्य संस्थाओं की पूरी सहायता ली जाए। असूचित आदिम जातियों की समस्याओं से सम्बद्ध सरकारी संस्थाओं को मज़बूत किया जाए एवं स्वैच्छिक संगठनों तथा अनुसन्धान-कार्यकर्ताओं का घनिष्ठ सहयोग लिया जाए। आरम्भ से ही उद्देश्य यह रहे कि इन जातियों को अन्य लोगों में घुला-मिला लिया जाए तथा इस प्रयत्न में उन जातियों के प्रगतिशील तथा विचारशील तत्त्वों को अधिक-से-अधिक महत्त्वपर्ण भूमिका के लिए प्रोत्साहित किया जाए तथा उन्हें सहायता दी जाए।

अध्याय 35

कल्याण-कार्यक्रम

समाज-कल्याण

किसी विकास-योजना के आर्थिक और सामाजिक पहलू परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध होते हैं। तीसरी योजना से सम्बद्ध अनेक सामाजिक कार्यक्रमों की चर्चा पहले के अध्यायों में की जा चुकी है। इस अध्याय में तीन मुख्य कल्याण-कार्यक्रमों के बारे में जो समाज-कल्याण, मद्य-निषेध और विस्थापित व्यक्तियों के पुनर्वास से सम्बद्ध हैं, विचार किया गया है।

2. पहली और दूसरी योजनाओं के अविभाज्य अंग के रूप में गत दशाब्दी में समाज-कल्याण-सम्बन्धी क्रिया-कलापों में जो विकास हुआ है, उसका महत्त्व स्थापित सेवा-शृंखलाओं अथवा प्रयुक्त साधन-स्रोतों की तुलना में कहीं अधिक है। ये क्रिया-कलाप समाज की अपने विभिन्न पीड़ित वर्गों के कल्याण के प्रति चिन्ता को स्पष्ट करते हैं और राष्ट्रीय विकास के एक अनिवार्य मूल्य पर बल देते हैं। सृजनात्मक सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र में बड़ी संख्या में स्वैच्छिक कार्यकर्त्ताओं को, और विशेषतः महिला कार्यकर्त्ताओं को लाने के कारण समाज स्वयं भी समृद्ध और शक्तिशाली हुआ है। अनिवार्यतः समाज-कल्याण-जैसे व्यापक एवं विविधतापूर्ण क्षेत्र में क्रिया-कलापों के विस्तार से कुछ समस्याएं भी सामने आती हैं। और इसके लिए यह आवश्यक है कि जो-कुछ सफलता प्राप्त हुई है, समय-समय पर उसकी समीक्षा की जाए तथा कल्याण-सेवाओं की कोटि को सुधारने के लिए आवश्यक कार्रवाइयों पर विचार किया जाए। ज़िला और खंड-स्तर पर प्रजातान्त्रिक संस्थाओं की स्थापना के बाद स्वैच्छिक संगठन अपने काम को किस प्रकार पूरा करेंगे, इस पर और विचार करने की आवश्यकता होगी।

3. समाज-कल्याण-कार्यक्रमों में, जिन्हें केन्द्र और राज्य-सरकारों की सहायता से स्वैच्छिक संगठनों-द्वारा कार्यान्वित किया गया है, अन्य कार्यों के अतिरिक्त केन्द्र और राज्य-सरकारों के समाज-कल्याण-मंडलों-द्वारा कार्यान्वित की जा रही कल्याण-विस्तार-परियोजनाएं, सामाजिक रक्षा से सम्बद्ध कार्यक्रम, सामाजिक एवं नैतिक आरोग्य और उत्तरवर्ती सेवाएं तथा अन्य कल्याण-कार्यक्रम भी शामिल हैं। कल्याण-सेवाएं मुख्यतः समाज के उन वर्गों के लिए हैं, जिन्हें विशेष देख-रेख और संरक्षण की आवश्यकता है। इनका विकास करने में उद्देश्य यह है कि व्यक्तिगत और अव्यवस्थित सहायता अथवा दान के स्थान पर संगठित और सतत शिक्षण को तथा समाज के सामूहिक समर्थन के द्वारा कल्याण और पुनर्वास के कार्यों को पूरा किया जाए। कल्याण-सेवाओं को मात्र संस्था न रह कर अधिकाधिक रूप से सामाजिक और पारिवारिक स्वरूप ग्रहण करना चाहिए। निवारणात्मक सेवाओं का महत्त्व पूर्ववत् बना रहेगा। छात्रों और युवकों को परामर्श देने, बाल पथ-प्रदर्शन-केन्द्रों और विवाह के बारे में सलाह देने-जैसी मानसिक आरोग्य-सेवाओं पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। इन सेवाओं का जैसे-जैसे विस्तार और विकास होता है, वैसे-वैसे इनके लिए प्रशिक्षित कर्मचारियों की भी अधिक आवश्यकता

पड़ती है। चूंकि बहुत-सारे स्वैच्छिक संगठन कल्याण-कार्यों के लिए वेतनभोगी कर्मचारी रखते हैं, इसलिए यह आवश्यक है कि उनके प्रशिक्षण का एक स्तर कायम किया जाए और उनके उचित वेतन-क्रम और सेवा की शर्तों तथा परिस्थितियों को भी निश्चित कर दिया जाए। इस बात की भी बहुत अधिक आवश्यकता है कि स्वैच्छिक कल्याण-कार्यकर्त्ताओं के लिए ज्ञानवर्धन और प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए।

4. केन्द्रीय और राज्य-सरकारों की ओर से दी गई वित्तीय सहायता के द्वारा विगत कुछ वर्षों में अनेक कल्याण-सेवाओं का विकास हुआ है। विकास के प्रत्येक चरण के बाद इस बात की पर्याप्त व्यवस्था की जानी चाहिए कि नई सेवाएं स्थायी रूप से जारी रहें। तीसरी योजना में जो साधन प्रदान किए गए हैं, उनको वर्तमान कल्याण-सेवाओं का विस्तार करने और पहले से स्थापित कल्याण-सेवाओं को जारी रखने के हेतु स्वैच्छिक संगठनों को सहायता देने में प्रयुक्त किया जा रहा है। इस सीमा तक नई सेवाओं का विकास सीमित है। भावी विकास के हित में यह वांछनीय है कि स्वैच्छिक संगठनों-द्वारा पहले से स्थापित सेवाओं को जारी रखने के लिए आवश्यक व्यवस्था और नए विकास के लिए प्रदान किए गए साधनों के अन्तर को स्पष्ट कर दिया जाए। स्वैच्छिक संगठनों को वित्तीय सहायता के द्वारा इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे ऐसे क्षेत्रों में, जहां आवश्यक सेवाएं नहीं हैं, उन्हें आरम्भ करें और जिन कल्याण-सेवाओं को वे अब तक नहीं करते रहे हैं, उनके लिए भी पहल करें।

5. कल्याण-सेवाओं का विकास अब इस स्थिति में पहुंच गया है कि उपलब्ध साधनों के अधिक अच्छे उपयोग और प्रदान की गई सेवाओं को सुधारने के लिए केन्द्र और राज्य, दोनों ही स्तरों पर सम्बद्ध विभिन्न सरकारी अभिकरण परस्पर और अधिक समन्वय स्थापित करें। इससे समान प्रयोजनों के लिए की जानेवाली प्रार्थनाओं पर दुबारा और अलग-अलग विचार करने, उनके लिए दोहरी सहायता देने तथा स्वैच्छिक संगठनों-द्वारा अनेक सरकारी अभिकरणों के पास अलग-अलग जाने से बचा जा सकेगा। इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि स्वैच्छिक संगठन अपने-अपने विशिष्ट क्षेत्र में विकसित हों। प्रत्येक संगठन को अपने क्रिया-कलाप के लिए एक क्षेत्र चुना लेना चाहिए, जिसमें उसके कार्यकर्त्ता अनुभव प्राप्त करें तथा समस्याओं को निकट से समझें-बूझें।

6. समाज-कल्याण का स्वरूप ही ऐसा है कि इसकी प्रगति को आसानी से नहीं आंका जा सकता है। इसकी सच्ची कसौटियां यही हैं कि कितनी अधिक संख्या में स्वैच्छिक कार्यकर्त्ता समाज-कल्याण-सम्बन्धी कार्यों में भाग लेते हैं और प्रत्येक स्थानीय समाज अपनी सामाजिक समस्याओं को सुलझाने की दिशा में कितना योगदान करता है। इसकी चाहे जो कमियां हों—इस प्रकार के कठिन क्षेत्र में कमियां होना स्वभाविक है—गत दशाब्दी में किया गया कार्य अनेक प्रकार से विलक्षण रहा है। केन्द्र और राज्यों के समाज-कल्याण-मंडलों-द्वारा देश के विभिन्न भागों के लगभग 6,000 स्वैच्छिक कल्याण-संगठनों को सहायता दी गई है। इनमें से 2,900 संगठन महिलाओं-सम्बन्धी कल्याण-कार्य तथा 2,400 विशेष रूप से शिशु-कल्याण से सम्बद्ध कार्य कर रहे हैं। दूसरी योजना की अवधि में 3,700 से भी अधिक स्वैच्छिक कल्याण-संगठनों को 2.6 करोड़ रु० की राशि सहायता के रूप में दी गई। केन्द्र और राज्यों के समाज-कल्याण-मंडल जिन अन्य कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं, उनमें 75 शहरी सामुदायिक केन्द्रों, महिलाओं को अपनी आय बढ़ाने में सहायता

देने के लिए 21 उत्पादन-इकाइयों और शहरी क्षेत्रों में 42 रैन-बसेरों की स्थापना शामिल है। बड़ी संख्या में वयस्क महिलाओं को सघन पाठ्यक्रम के द्वारा व्यावसायिक प्रशिक्षण और नियोजन के लिए आवश्यक न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता प्राप्त कराई गई। पहली योजना की अवधि में कल्याण-विस्तार-परियोजनाओं की स्थापना के रूप में एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया गया। प्रत्येक कल्याण-विस्तार-परियोजना-द्वारा लगभग 25 गांव सेवित थे, जिनमें प्रसूति और शिशु-स्वास्थ्य-सेवाओं, हस्तशिल्प की कक्षाओं, महिलाओं के लिए समाज-शिक्षण और बालवाड़ियों-द्वारा बच्चों की निगरानी की व्यवस्था है। इन परियोजनाओं को दूसरी योजना में आरम्भ की गई 134 नई परियोजनाओं के साथ महिला-मंडलों को सौंप दिया गया है। इन्हें केन्द्रीय समाज-कल्याण-मंडल-द्वारा वित्तीय सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त दूसरी योजना में सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के सहयोग से 337 कल्याण-विस्तार-परियोजनाएं शुरू की गईं। उनके लिए कुछ सहायता केन्द्रीय समाज-कल्याण-मंडल से तथा कुछ राज्य-सरकारों और सामुदायिक विकास-खंडों के बजट से मिली।

7. दूसरी योजना में समाज-कल्याण-कार्यों पर 15 करोड़ रु० खर्च किए गए। मुख्य विकास-कार्यक्रमों में उल्लेखनीय हैं—कल्याण-विस्तार-परियोजनाएं, केन्द्रीय समाज-कल्याण मंडल-द्वारा स्वैच्छिक संगठनों को दी गई सहायता (लगभग 10 करोड़ रु०), सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक और नैतिक आरोग्य तथा उत्तरवर्ती देखभाल की सेवाएं एवं राज्य-सरकारों के कल्याण-कार्यक्रम (लगभग 5 करोड़ रु०)। सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रम और सामाजिक तथा नैतिक आरोग्य एवं उत्तरवर्ती देखभाल की सेवाओं के अधीन 327 संस्थाएं स्थापित की गईं और 128 आभ्यासिक तथा कल्याण-अधिकारी नियुक्त किए गए।

8. तीसरी योजना में इन कार्यक्रमों के लिए 28 करोड़ रु०—16 करोड़ रु० केन्द्र में और 12 करोड़ रु० राज्यों में—की व्यवस्था है। केन्द्रीय समाज-कल्याण-मंडल के कार्यक्रमों के लिए जिनमें स्वैच्छिक संगठनों और कल्याण-विस्तार-परियोजनाओं के लिए सहायता भी शामिल है, 12 करोड़ रु० की व्यवस्था है। इनके अतिरिक्त, शिक्षा की मद में शिशु-कल्याण एवं पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के लिए भी 3 करोड़ रु० की व्यवस्था है। समाज-कल्याण के अधीन जो अन्य कार्यक्रम कार्यान्वित किए जाएंगे, वे शहरी सामुदायिक कल्याण-परियोजनाओं, प्रशिक्षण, अनुसन्धान और सर्वेक्षण, सामाजिक सुरक्षा और उत्तरवर्ती देखभाल तथा केन्द्रीय सुधार-सम्बन्धी प्रशासन-संस्था की स्थापना से सम्बद्ध हैं। यह भी प्रस्ताव है कि इस प्रकार के व्यक्तियों—शारीरिक दृष्टि से विकलांग, काम करने में असमर्थ वृद्धों, महिलाओं और बच्चों—को, जिनकी आजीविका का कोई साधन या सहारा नहीं है, सहायता देने के लिए छोटे पमाने पर शुरुआत की जाए।

9. तीसरी योजना में केन्द्रीय और राज्यों के समाज-कल्याण-मंडलों-द्वारा किए जाने-वाले मुख्य कार्यक्रम निम्नलिखित हैं:

(1) लगभग 6,000 स्वैच्छिक संगठनों को अनुदान देना;

(2) महिला-मंडलों को उन्हें सौंपी गई कल्याण-विस्तार-परियोजनाओं के लगभग 1,700 केन्द्रों में सेवाएं उपलब्ध करने के लिए सहायता देना;

(3) पूरे 5 वर्षों की अवधि के लिए सामूदायिक विकास-कार्यक्रमों से समन्वित कल्याण-विस्तार-परियोजनाओं को जारी रखना;

(4) महिलाओं के लिए सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रम;
(5) वयस्क महिलाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण और नियोजन के योग्य बनाने के हेतु सघन प्रशिक्षण-पाठ्यक्रम;
(6) शहरी कल्याण-परियोजनाएं;
(7) रैन-बसेरे;
(8) बच्चों के लिए अवकाशगृह; तथा
(9) सहायता-प्राप्त संस्थानों के लिए समाज-कल्याण-प्रशासन और तकनीकी पथ-प्रदर्शन ।

तीसरी योजना में शिशु-कल्याण-कार्यक्रमों पर पर्याप्त बल दिया गया है। विचार है कि दूसरी योजना में जो कार्य प्रारम्भ किए गए थे, उनको जारी रखने के अतिरिक्त प्रत्येक राज्य और केन्द्रशासित प्रदेश में शिशु-कल्याण के बारे में चिकित्सा और सार्वजनिक स्वास्थ्य शिक्षा, समाज-कल्याण तथा अन्य अभिकरणों-द्वारा प्रदत्त सेवाओं में पूर्ण समन्वय के आधार पर कम-से-कम एक मार्गदर्शक परियोजना अवश्य आरम्भ की जाए। आशा है कि इन मार्गदर्शक परियोजनाओं से विभिन्न सेवाओं में समन्वय स्थापित करने के बारे में कुछ सुझाव प्राप्त होंगे। कुछ में तो यह समन्वय पहले से स्थापित है । प्रस्ताव है कि एक पूर्व-विद्यालय शिक्षण-कार्यक्रम और शिशु-कल्याण-कार्यकर्त्ताओं (बाल-सेविकाओं) का प्रशिक्षण-कार्यक्रम भी प्रारम्भ किया जाए। प्रशिक्षण का यह कार्यक्रम वर्तमान शिशु-कल्याण-केन्द्रों (बालवाड़ियों) को सुधारने और नए केन्द्र खोलने की योजना का एक भाग है।

10. सामाजिक सुरक्षा-कार्यक्रम में निरोधक और बाल-अपराधियों की चिकित्सा, सामाजिक और नैतिक आरोग्य तथा स्त्रियों और लड़कियों के वेश्यावृत्ति के लिए प्रयोग को रोकने की योजनाओं को प्राथमिकता दी गई है । यह सुझाया गया है कि भिक्षा-वृत्ति की समस्या पर क्रमिक रूप से प्रहार किया जाए। परामर्श और रोगोपरान्त देखभाल की सेवाओं के विकास में इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि महिलाओं और बालकों की विशेष रूप से सहायता की जाए । व्यावसायिक रूप प्राप्त वेश्यावृत्ति की समस्या को हल करने के लिए सन् 1956 में वेश्यावृत्ति-निरोधक कानून बनाया गया। इस कानून के अनुसार प्रभावित होनेवाली महिलाओं और लड़कियों के संरक्षण, प्रशिक्षण और पुनर्वास के लिए आवश्यक संस्थाएं स्थापित की जा रही है। दूसरी योजना की अवधि में 10 संरक्षण-गृह, 16 उद्धार-गृह और 70 स्वागत-केन्द्र स्थापित किए गए। तीसरी योजना में और भी केन्द्र खोले जाएंगे। इन केन्द्रों की स्थापना के अतिरिक्त इस बात पर विचार करना भी महत्त्वपूर्ण है कि किस प्रकार सामाजिक सुरक्षा का वर्तमान कार्यक्रम अधिक प्रभावशाली और उस रूप में किया जा सकता है, जिसमें महिलाओं और लड़कियों के पुनर्वास के कार्य में समुदाय और परिवार भी पूरी तरह भाग ले सकें।

11. दूसरी योजना की अवधि में बाल-अपराधियों की समस्याओं को हल करने का प्रयत्न किया गया । इसके लिए जो नई संस्थाएं स्थापित की गई, उनमें 40 संरक्षण-गृह, 17 प्रमाणित विद्यालय और 5 बोर्स्टल विद्यालय भी शामिल है । बालकों के सम्बन्ध में अनेक राज्यों में पहले से ही विशेष कानून बने हुए है, परन्तु वय-सीमा और बाल-अपराधियों की श्रेणियों के बारे में व्यवस्था एक-जैसी नहीं है। केन्द्रशासित प्रदेशों के लिए सन् 1960

में बाल-अधिनियम की स्वीकृति के साथ ही यह सुझाव दिया गया है कि आवश्यक मामलों में सम्पूर्ण देश में एकरूपता होनी चाहिए। बाल-अपराधों और व्यावसायिक ढंग की वेश्यावृत्ति और स्त्रियों के अनैतिक व्यापार के पीड़ितों से निबटने के क्षेत्र में आभ्यासिक अधिकारियों का कार्य बड़ा महत्त्वपूर्ण है। दूसरी योजना में इनकी संख्या 100 से बढ़ कर 304 हो गई है। तीसरी योजना में 112 नए आभ्यासिक अधिकारी नियुक्त करने का विचार है।

12. भिक्षावृत्ति एक बहुत पुरानी सामाजिक बुराई है, जिसे काफी लम्बे समय तक चलने दिया गया है। इसके कारण नैतिक ह्रास तो होता ही है, यह देश के लिए कलंक-स्वरूप भी है। इस समस्या का अनेक स्थानों पर अध्ययन किया गया है और अब महत्त्वपूर्ण बात यह है कि राज्य-सरकारों और स्थानीय निकायों को प्रभावशाली ढंग से इसका मुकाबला करने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। सर्वप्रथम भिक्षावृत्ति को बड़े शहरों, तीर्थस्थानों, और पर्यटन-केन्द्रों में समाप्त किया जाना चाहिए। सामान्य रूप से भिखारियों की 4 श्रेणियों हैं —(अ) बाल भिखारी, (आ) बीमार, विकलांग, असमर्थ या वृद्ध, (इ) समर्थ और पेशेवर भिखारी, तथा (ई) धार्मिक भिक्षुक।

13. बाल-भिखारियों की समस्या को अलग से देखा जाना चाहिए, क्योंकि जो बालक भिक्षावृत्ति अपनाते हैं, वे सामान्यतः शोषक दलों के शिकार होते हैं। बाल-अपराधियों के लिए जिनमें आवारागर्द, अपराधी बालक और अपराधपूर्व-स्थिति के बालक भी शामिल हैं, विशेष पुलिस-दल नियुक्त होने चाहिएं। भारतीय दंड-संहिता में ऐसे व्यक्तियों के लिए कठोर दंड की व्यवस्था है, जो समाज-विरोधी उद्देश्य के लिए बालकों का शोषण करने, उनका अपहरण करने या भिक्षावृत्ति के लिए उनको विकलांग करने के अपराधी पाए जाएंगे। बाल-कानून में भी समाज-विरोधी कार्यों के लिए, जिसमें भिक्षावृत्ति भी शामिल है, बच्चों के शोषण के विरुद्ध संरक्षण की व्यवस्था है। इस प्रकार आवश्यक कानून बने हुए हैं; आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें प्रभावशाली ढंग से अमल में लाया जाए।

14. दूसरी श्रेणी के भिखारियों की, जो बीमार, अपाहिज, असमर्थ या वृद्ध हैं, स्वैच्छिक संगठनों-द्वारा संचालित आवास-संस्थाओं में देखभाल की जानी चाहिए। राज्य-सरकारों और स्थानीय निकायों की सहायता तथा समाज के समर्थन के अतिरिक्त इन संगठनों को छोटे पैमाने पर उन विशेष कोशों से सहायता दी जा सकती है, जिनका 'श्रम-नीति' के अध्याय में उल्लेख किया गया है। प्रस्ताव किया गया है कि इस प्रकार तीन प्रकार के व्यक्तियों—विकलांगों; काम करने में असमर्थ वृद्धों; तथा महिलाओं और बालकों—को सहायता और राहत दी जाए।

15. समर्थ शरीरवाले भिखारियों को पकड़ कर विभिन्न परियोजनाओं के निर्माण-स्थलों के कार्य-शिविरों में भेज दिया जाना चाहिए। इनके लिए छोटे उद्योगों और कृषि में पुनर्वास-कार्यक्रम को भी संगठित किया जाना चाहिए। समर्थ शरीरवाले व्यक्तियों-द्वारा भिक्षावृत्ति को एक सार्वजनिक अपराध माना जाना चाहिए।

16. धार्मिक भिखारियों की भी विभिन्न श्रेणियां हैं और वर्तमान स्थिति में यह वांछनीय है कि उनकी समस्याओं का समाधान भारत-साधु-समाज या उसी प्रकार के अन्य संगठनों के माध्यम से किया जाए।

17. यह वांछनीय है कि भिक्षावृत्ति और आवारागर्दी के नियन्त्रण और निवारण के लिए केन्द्रीय कानून बनाया जाए।

18. विगत कुछ वर्षों में शारीरिक और मानसिक दृष्टि से विकलांग व्यक्तियों—विशेषत: नेत्रहीनों, गूंगों और बहरों के लिए और उन व्यक्तियों के लिए, जो विकलांग और मानसिक दृष्टि से अपूर्ण हैं—विशेष सेवाओं और सुविधाओं के विकास में प्रगति हुई है। इन समूहों के प्रत्येक वर्ग के लिए प्रदान की गई सेवाओं का मुख्य लक्ष्य काम के द्वारा उन्हें अपने पुनर्वास के लिए समर्थ बनाया जाना चाहिए। चूंकि इन समूहों के अनेक व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों के होते हैं, जहां परम्परागत रूप से समाज बड़ी उदारता से सहायता प्रदान करता है। इसलिए यह वांछनीय है कि इन समूहों के प्रशिक्षण और पुनर्वास के कार्यक्रमों को ग्रामीण स्वरूप प्रदान किया जाए। कुछ कार्य-नियोजन-कार्यालयों में भी विकलांग व्यक्यिों के लिए काम ढूंढ़ने की सुविधाएं प्रदान की गई हैं। स्थानीय निकाय और स्वैच्छिक संगठन विकलांग व्यक्तियों की सेवा करने में पहले से ही महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। इनकी सेवाओं को नीचे दिए आधार पर और विकसित किया जाना चाहिए :

(अ) विकलांग व्यक्तियों को उनके घरों में ही शिक्षा देना;

(आ) जो चल-फिर नहीं सकते, उन्हें घरों में ही या पड़ोस में काम प्रदान करना ;

(इ) विकलांगों, वृद्धों और असमर्थ लोगों को मनोरंजन-सम्बन्धी सुविधाएं प्रदान करना; तथा

(ई) विशेष अनुदानों के द्वारा मदद करना।

नए रोजगार के लिए प्रशिक्षण की अवधि में वित्तीय सहायता या छात्रवृत्ति, आदि की व्यवस्था होनी चाहिए।

19. शहरी सामुदायिक विकास में शहरी समुदायों में उनके विविधतामूलक आचार-व्यवहार के बावजूद एक सामाजिक और आस-पास की परिस्थितियों में परिवर्तन लाने की विपुल सम्भावनाएं निहित हैं। इस कार्यक्रम की सफलता मुख्यत: इस बात पर निर्भर करती है कि जनता कहां तक स्वावलम्बी होती है। अधिकारियों का काम अनिवार्य रूप से स्वैच्छिक प्रयत्नों को प्रोत्साहित करना होगा। इस क्षेत्र में स्वैच्छिक संगठनों और लोक-कार्य-क्षेत्र के लिए काम करने के व्यापक अवसर हैं, और नगर-निगम तथा नगर-पालिकाएं उनकी सेवाओं का पूरा-पूरा उपयोग कर सकती हैं। शहरी सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों के द्वारा , जिनमें जनता का समर्थन पहल और उनको गतिशील रूप में संगठित करना भी शामिल है, कठिन शहरी परिस्थितियों को सफलतापूर्वक सुलझाने के लिए कुछ अभिनव परीक्षण भी आरम्भ कर दिए गए हैं।

मद्य-निषेध

20. सन् 1956 के मार्च महीने में लोकसभा ने निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किया :

"इस सदन का मत है कि मद्य-निषेध को दूसरी पंचवर्षीय योजना का एक अविभाज्य अंग समझा जाए और यह सिफारिश की जाती है योजना-आयोग

सारे देश में शीघ्रता से और प्रभावशाली ढंग से मद्य-निषेध लागू करने के लिए आवश्यक कार्यक्रम बनाए।"

इस प्रस्ताव के अनुसार दूसरी पंचवर्षीय योजना में अनेक सिफारिशें की गईं। यह बताया गया कि संविधान में पहले ही निदेशक सिद्धान्तों के रूप में मद्य-निषेध को स्वीकार किया गया है और अब आवश्यकता इस बात की है कि इसके प्रति एक सामान्य राष्ट्रीय नीति अपनायी जाए। राज्य-सरकारों को सारे देश के लिए व्यापक रूप से स्वीकृत आधार पर अपने क्रमिक मद्य-निषेध के कार्यक्रम बनाने चाहिएं और इस बात की व्यवस्था होनी चाहिए कि निरन्तर विवेचना और स्थिति का आकलन होता रहे। प्रथम कदम के रूप में यह सुझाव दिया गया कि शराब-सम्बन्धी विज्ञापनों और शराब की ओर जनता को आकर्षित करने के अन्य तरीकों पर रोक लगाई जाए तथा सार्वजनिक स्थानों पर (होटलों, होस्टलों, रेस्तरां, क्लबों आदि में) और सार्वजनिक स्वागत-समारोहों में शराब पीने पर पाबन्दी लगाई जाए। इसके साथ ही अन्य अनेक कार्रवाइयों का भी सुझाव दिया गया है। ये सुझाव थे :

(1) शहरी और ग्रामीण, दोनों ही क्षेत्रों में शराब की दुकानों की संख्या क्रमशः कम की जाए;

(2) सप्ताह में शराब की दुकानें बन्द रखने के दिनों की संख्या बढ़ाई जाए;

(3) शराब की दुकानों को दी जानेवाली शराब की मात्रा कम की जाए;

(4) भारतीय डिस्टिलरियों में बननेवाली शराब की मात्रा में क्रमशः कमी की जाए;

(5) विशिष्ट औद्योगिक और अन्य विकास-परियोजना-क्षेत्रों में या उनके निकट शराब की दुकानें बन्द की जाएं;

(6) नगरों और ग्रामों में शराब की दुकानों को मुख्य सड़कों और रिहायशी मकानों से दूर हटा दिया जाए;

(7) सस्ते और स्वास्थ्यवर्द्धक पेयों के निर्माण एवं उत्पादन को प्रोत्साहन देने के लिए सक्रिय कदम उठाए जाएं;

(8) स्वैच्छिक अभिकरणों को मनोरंजक-केन्द्रों की स्थापना में सहायता दी जाए; और

(9) सामुदायिक विकास-क्षेत्रों में तथा समाज-कल्याण-विस्तार-परियोजनाओं में मद्य-निषेध को एक रचनात्मक कार्य के रूप में सम्मिलित किया जाए।

ऊपर दिए गए सुझावों के अनुसार अनेक राज्यों में कार्रवाई की गई है, परन्तु सामूहिक रूप से सारे देश में इस दिशा में हुई प्रगति बहुत मन्द है।

21. दूसरी योजना में यह सिफारिश की गई थी कि एक केन्द्रीय समिति नियुक्त की जाए, जो मद्य-निषेध-कार्यक्रम की प्रगति की विवेचना करे, विभिन्न राज्यों की गतिविधियों में समन्वय स्थापित करे तथा उनकी व्यावहारिक कठिनाइयों से सम्पर्क रखे। यह भी सुझाव दिया गया था कि राज्यों में मद्य-निषेध-मंडल और ज़िला-मद्य-निषेध-समितियां स्थापित की जाएं तथा कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए मद्य-निषेध-प्रशासक नियुक्त किए जाएं। गृह-मन्त्रालय ने सन् 1960 के अन्त में एक केन्द्रीय समिति का निर्माण किया

22. मद्य-निषेध अनिवार्य रूप से एक समाज-कल्याण-आन्दोलन है। समाज-सुधार के लिए एक स्वैच्छिक आन्दोलन के रूप में इसकी सफलता कुछ बातों पर निर्भर करती है। एतद्सम्बन्धी विशिष्ट बातें निम्नलिखित हैं :

(1) एक सार्वजनिक नीति के रूप में इसे स्वीकार करना और इसके साथ ही इस नीति को वास्तविक बनाने के लिए ठोस प्रशासनिक कदम उठाना;

(2) जनता के एक बड़े वर्ग-द्वारा समर्थन और मुख्य स्वैच्छिक संगठनों तथा बड़ी संख्या में सामाजिक कार्यकर्त्ताओं-द्वारा सक्रिय भाग लेना;

(3) रोज़गार-जैसी समस्याओं का व्यावहारिक हल ढूंढ़ना और उन उत्पादनों के विधायन तथा उपयोग की व्यवस्था करना; जो कि अन्यथा शराब-निर्माण के काम आएंगे; और

(4) मद्य-निषेध की प्रगति के कारण राज्यों के राजस्व में होनेवाली सम्भावित हानि को पूरा करना।

23. सर्वप्रथम राजस्व में हानि के प्रश्न पर विचार किया जा सकता है। जैसा कि दूसरी योजना में स्पष्ट किया गया है कि किसी भी बुनियादी सामाजिक नीति पर विचार करते समय वित्तीय प्रश्नों को, चाहे वे व्यावहारिक दृष्टि से कितने ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हों, निर्णयात्मक नहीं माना जा सकता। मद्य-निषेध के कारण साधनों में सम्भावित हानि स्थायी न होकर अस्थायी रूप से प्रभावित करनेवाली हो सकती है और सन्तुलन में भी यह हानि कभी-कभी लगाए जानेवाले अनुमान के मुकाबले में कहीं कम हो सकती है। यदि मद्य-निषेध-आन्दोलन ठीक मार्ग पर आगे बढ़े—और यही मान्यता है, जिस पर मद्य-निषेध के प्रस्ताव आधारित होने चाहिए—तो व्यक्ति और समुदाय का जीवन अधिक स्वस्थ हो, व्यक्तिगत रूप से श्रमिक और उसका परिवार अधिक उत्पादनशील हो, और राष्ट्रीय बचत में वृद्धि हो। परन्तु प्रारम्भिक अवस्था में यह सम्भव है कि मद्य-निषेध-नीति के अनुसार उठाए गए कदमों के कारण उत्पाद-शुल्क से प्राप्त होनेवाली राशि उससे कम हो, जिसका अनुमान राज्यों ने अपनी योजनाएं बनाते समय लगाया था। इस पहलू पर केन्द्र और राज्यों-द्वारा पुनः विचार किया जाना चाहिए। स्पष्टतः केवल वित्तीय कारण एक ऐसे सामाजिक कार्यक्रम के लिए, जिसे देशभर में बहुसंख्यक जनता के हित के लिए आवश्यक समझा गया है, बुनियादी रुकावट नहीं बन सकते।

24. मद्य-निषेध के वित्तीय पहलू के सम्बन्ध में यदि यह रुख रहे, तो प्रत्येक राज्य के लिए अगली कार्रवाइयों पर विचार कर सकना सम्भव होगा। यह परिकल्पना नहीं की गई कि राज्यों को पूर्ण मद्य-निषेध के बारे में एक तिथि निश्चित कर देनी चाहिए, क्योंकि व्यवहार में ऐसी तिथि पर कार्य करना या उस पर कायम रहना बड़ा कठिन है। फिर भी एक देश-व्यापी दृष्टिकोण से सभी राज्यों के लिए मद्य-निषेध-नीति कार्यान्वित करना और शराब के अन्तर्राज्यीय और अन्तःज़िला तस्कर-व्यापार को रोकना सरल हो जाएगा। दूसरी योजना में जो विभिन्न कदम सुझाए गए थे, वे सीमित किन्तु व्यावहारिक हैं और उन्हें आगामी 2 या 3 वर्षों की अवधि में कार्यान्वित किया जाना चाहिए। उन राज्यों के लिए, जिन्होंने कुछ ज़िलों में मद्य-निषेध लागू कर रखा है, यह भी सम्भव हो सकेगा कि वे अन्य क्षेत्रों में भी इसे क्रमशः लागू करें। इस बात की सावधानी बरती जानी चाहिए कि मद्य-निषेधवाले ज़िलों और ऐसे

ज़िलों के बीच में, जिनमें मद्य-निषेध अभी लागू नहीं हुआ है, एक निषिद्ध क्षेत्र हो। समय-समय पर समीक्षा और प्रगति के मूल्यांकन से नए कदमों के लिए भी सुझाव मिल सकते हैं। मद्य-निषेध-नीति का अनुसरण करते समय दो महत्त्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना चाहिए— प्रथमतः, आदिम जातियों के रीति-रिवाज़ों और परम्पराओं का आदर तथा दूसरे, विदेशी यात्रियों, पर्यटकों और विदेशी दूतावासों की आवश्यकताओं एवं सुविधाओं का उचित ध्यान।

25. मद्य-निषेध-जैसे कार्यक्रम में अपनाए जानेवाले साधनों और उपलब्ध अभिकरणों का प्रश्न विशेष महत्त्व का है। यह स्पष्ट है कि यदि मद्य-निषेध लागू करने का काम मुख्यतः पुलिस और आबकारी-विभाग के कर्मचारियों पर छोड़ा जाएगा, तो कोई ख़ास प्रगति नहीं हो सकेगी। अतः इस दिशा में मुख्य भरोसा निम्नलिखित बातों पर होना चाहिए :

(अ) सामाजिक कल्याण-सम्बन्धी कदम के रूप में आम जनता के हित में मद्य-निषेध के बारे में अधिकाधिक जनमत का निर्माण;

(आ) स्वैच्छिक संगठन, जिन्हें सामाजिक शिक्षण-सम्बन्धी कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए सरकार-द्वारा आवश्यक सहायता और समर्थन दिया जाना चाहिए;

(इ) शिक्षा, स्वास्थ्य, समाज-कल्याण, आदि-सम्बन्धी सरकारी अभिकरणों-द्वारा, प्रारम्भ किए गए विभिन्न विकास-कार्यक्रमों को मद्य-निषेध के महत्त्व पर बल देते हुए कार्यान्वित करना; और

(ई) उपहार-गृहों में सस्ते और पोषक आहार तथा अमद्यसारीय पेयों की उपलब्धि एवं सामूहिक तथा सामुदायिक आधार पर खेलों और मनोरंजन-सम्बन्धी क्रिया-कलापों को प्रोत्साहन।

इन दिशाओं में अधिक प्रगति करने की दृष्टि से यह उपयोगी है कि स्वैच्छिक संगठनों को जनता में शिक्षा और विकास-सम्बन्धी कार्य करने के लिए वित्तीय सहायता दी जाए। इसके अतिरिक्त, ऐसे अन्य कार्यों के लिए भी समर्थन प्रदान किया जाए, जिनसे मद्य-निषेध की प्रगति में सहायता मिले। यह सहायता बहुत हद तक योजना में 'जनसहयोग' के लिए की गई व्यवस्था के अधीन दी जा सकती है। यह राशि कोई बहुत अधिक नहीं होगी और इससे एक अच्छी शुरुआत की जा सकेगी।

विस्थापित व्यक्तियों का पुनर्वास

26. देश-विभाजन के बाद पाकिस्तान से लगभग 89 लाख व्यक्ति भारत आए। इनमें से लगभग 47 लाख पश्चिम-पाकिस्तान से और शेष पूर्व-पाकिस्तान से आए। सन् 1951 की जनगणना में विस्थापित व्यक्तियों की संख्या 75 लाख कूती गई थी। सन् 1947-48 से 1960-61 तक विस्थापित व्यक्तियों के पुनर्वास पर लगभग 239 करोड़ रु० खर्च किए गए। इस राशि में से 133 करोड़ रु० पश्चिम-पाकिस्तान से आए विस्थापितों पर और 106 रोड़ रु० पूर्व-पाकिस्तान से आए विस्थापितों पर खर्च हुए। सहायता-सम्बन्धी और अन्य कामों पर 128 करोड़ रु० का खर्च बैठा। अगले पृष्ठ की तालिका में पहली योजना से पूर्व तथा प्रथम दो योजनाओं की अवधि में पुनर्वास पर किया गया व्यय दिखाया गया है।

सन् 1947-48 से पुनर्वास पर किया गया व्यय

(करोड़ रु०)

	पश्चिम-पाकिस्तान	पूर्व-पाकिस्तान	योग
पहली योजना से पूर्व	62.34	8.53	70.87
पहली योजना	55.7	41.85	97.55
दूसरी योजना	14.95	55.37	70.32*
योग	132.99	105.75	238.74

पश्चिम-पाकिस्तान के विस्थापित व्यक्ति

27. पश्चिम-पाकितान से आए विस्थापितों के पुनर्वास का कार्य मुख्यत: पहली योजना मे पहले और पहली योजना की अवधि मे किया गया। पुनर्वास के विभिन्न कार्यक्रमों के अधीन व्यय का विभाजन नीचे की तालिका में दिखाया गया है :

पश्चिम-पाकिस्तान के विस्थापित व्यक्तियों पर पुनर्वास-व्यय

(करोड़ रु०)

कार्यक्रम	पहली योजना से पूर्व	पहली योजना	दूसरी योजना	योग
शहरी ऋण	11.38	3.66	0.09	15.13
ग्रामीण ऋण	6.71	2.16	0.43	9.3
आवास	25.17	32.08	5.41	62.66
उद्योग	—	—	2.62	2.62
पुनर्वास-वित्त-प्रशासन	2.28	8†	—	10.28
शैक्षणिक और व्यावसायिक प्रशिक्षण	16.8†	9.8	6.4	33
योग	62.34	55.7	14.95	132.99

28. पश्चिम-पाकिस्तान के भूमिधर विस्थापितों और पश्चिम-पाकिस्तान के अन्य भागों के पंजाबियों के भूमि-पुनर्वास-सम्बन्धी कार्य का अधिकांश भाग सन् 1950-51 तक पूरा हो गया था। 4,77,000 विस्थापित भूमिधरों को अर्द्धस्थायी आधार पर पंजाब के निष्क्रमित लोगों की भूमि दी गई। इसके अतिरिक्त, 33,000 काश्तकार परिवारों को भी भूमि पर बसाया गया। पंजाब से बाहर, विशेषत: राजस्थान में, अस्थायी आधार पर 58,000 व्यक्तियों को भूमि प्रदान की गई। विस्थापित व्यक्ति (मुआवज़ा और पुनर्वास) अधिनियम, 1954 के अधीन अब तक लगभग 2,70,000 व्यक्तियों के अर्द्धस्थायी भूमि-अधिकार स्वामित्व-अधिकार में बदल दिया गए हैं। ग्रामीण पुनर्वास के कार्यक्रम में मकानों के निर्माण और कृषि-सुधार-योजनाओं के लिए ऋण-अनुदान भी शामिल है। इस मद में दी गई कुल ऋण-राशि 9.3 करोड़ रु० की है। निष्क्रमितों की भूमि उपलब्ध होने के कारण ग्रामीण पुनर्वास-कार्य में बहुत सुविधा हो गई, यद्यपि यह भूमि कुल मिला कर पश्चिम-पाकिस्तान में विस्थापितों-द्वारा छोड़ी गई भूमि की तुलना में मात्रा और मूल्य, दोनों ही दृष्टियों से कम थी।

*सम्भावित व्यय लगभग 63 करोड़ रु०

†इसमें पूर्व-पाकिस्तान के विस्थापितों के लिए किया गया व्यय भी सम्मिलित है।

29. शहरी क्षेत्रों के विस्थापित व्यक्तियों के सामने अलग ढंग की समस्याएं थीं और कुछ रूपों में ये बड़ी उलझनपूर्ण थीं। विस्थापित आबादी को आवास प्रदान किया जाना था और उन्हें इस बात के लिए समर्थ बनाना था कि वे व्यापार, उद्योग और अपने पेशों में नया जीवन प्रारम्भ कर सकें। उनकी आवश्यक मांगों की पूर्ति के लिए शिक्षा और स्वास्थ्य-सम्बन्धी सेवाओं को भी बढ़ाना था। लगभग 25 लाख विस्थापित व्यक्तियों को आवास प्रदान किया जाना था, जबकि निष्क्रमितों की सम्पत्ति में इनमें से केवल आधे को ही स्थान प्रदान किया जा सकता था। कुल मिला कर 19 पूर्णतया विकसित नगरों और 136 नई बस्तियों का, जिनमें शिक्षा, स्वास्थ्य तथा अन्य नागरिक सुविधएं प्रदान की गई थीं, निर्माण किया गया। कुल 1,55,000 मकान बनाए गए। विस्थापित व्यक्तियों को व्यापार और उद्योग में अपना पुनर्वास स्वयं करने के लिए 15.13 करोड़ रु० के छोटे शहरी ऋण दिए गए। यह राशि पुनर्वास-वित्त-प्रशासन-द्वारा ऋण के रूप में दी गई 10.28 करोड़ रु० की राशि के अतिरिक्त है। मझले उद्योगों और कुटीर तथा छोटे पैमाने के उद्योगों की 23 योजनाओं के लिए भी वित्तीय सहायता प्रदान की गई।

30. विस्थापित व्यक्तियों के बच्चों को शिक्षा-सम्बन्धी सहायता देने के लिए नए विद्यालय और कालेज प्रारम्भ किए गए तथा वर्तमान संस्थाओं को अपनी क्षमता बढ़ाने के लिए सहायता दी गई। अनेक विस्थापित शिक्षा-संस्थाओं को अपने को नए केन्द्रों में स्थापित करने के लिए सहायता दी गई। 1,10,000 व्यक्तियों को व्यावसायिक एवं तकनीकी प्रशिक्षण दिया गया।

पूर्व-पाकिस्तान के विस्थापित व्यक्ति

31. पूर्व-पाकिस्तान के विस्थापित व्क्तियों का पुनर्वास मुख्यतः पहली और दूसरी योजनाओं की अवधि में हुआ। पूर्व-पाकिस्तान के विस्थापितों के पुनर्वास की समस्या अनेक वर्षों तक लगातार आव्रजन के कारण तथा पश्चिम-बंगाल की भूमि और आर्थिक जीवन पर भारी दबाव रहने के कारण विशेष रूप से कठिन हो गई थी। इस सिलसिले में विभिन्न मदों में किया गया व्यय इस प्रकार है :

पूर्व-पाकिस्तान के विस्थापितों के पुनर्वास पर व्यय (करोड़ रु०)

कार्यक्रम	पहली योजना से पूर्व	पहली योजना	दूसरी योजना	योग
शहरी ऋण	1.63	5.5	1.87	9
ग्रामीण ऋण	2.27	14.36	12.12	28.75
आवास	4.63	15.52	17.61	37.76
उद्योग	—	0.71*	3.55	4.26
पुनर्वास-वित्त-प्रशासन	—	—	0.98*	0.98
शैक्षणिक और व्यावसायिक प्रशिक्षण	—	5.76	9.36	15.12
चिकित्सा	—	—	2.13	2.13
दंडकारण्य-परियोजना	—	—	7.75	7.75
योग	8.53	41.85	55.37	105.75

*इसमें पश्चिम-पाकिस्तान के विस्थापितों के लिए किया गया व्यय भी सम्मिलित है।

32. पहली योजना के अन्त तक पूर्वी क्षेत्र में लगभग 5,00,000 परिवारों को बसाया गया। इनमें से लगभग 4,00,000 परिवारों को खेती-बारी या ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य सहायक धन्धों में लगाया गया। दूसरी योजना के बारे में अनुमान था कि लगभग 1,70,000 परिवारों का पुनर्वास किया जाएगा। पश्चिम-बंगाल में भूमि पर अधिक दबाव होने के कारण अन्य राज्यों में भी विस्थापित व्यक्तियों को बसाने के कार्यक्रम बनाए गए। कुल मिला कर ग्रामीण क्षेत्रों में 78,000 परिवारों को बसाया गया। 38,000 परिवारों को मकान बनाने के लिए ऋण दिए गए और अनेक बस्तियों का विकास किया गया। बड़े और छोटे उद्योगों में 14,000 व्यक्तियों को काम दिलाया गया। पुनर्वास-उद्योग-निगम ने—जिसे 5 करोड़ रु० की अधिकृत पूंजी से स्वयं या निजी उद्योगपतियों के सहयोग से ऐसे केन्द्रों में, जहां विस्थापितों की संख्या अधिक है, उद्योग स्थापित करने के लिए बनाया गया था—बड़े और मझले उद्योगों की 21 योजनाएं स्वीकार की हैं। पहली योजना की अवधि में 28,000 और दूसरी योजना में 22,000 विस्थापित व्यक्तियों को व्यावसायिक तथा तकनीकी प्रशिक्षण दिया गया। चिकित्सा-सम्बन्धी सुविधाओं को भी पर्याप्त रूप से बढ़ाया गया। विस्थापित व्यक्तियों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाओं के विस्तार की दृष्टि से पश्चिम-बंगाल में बड़ी संख्या में नए विद्यालय और कालेज खोले गए।

33. दूसरी योजना की अवधि में दंडकारण्य-परियोजना के विकास का काम पश्चिम-बंगाल के शिविरों में निवास कर रहे पूर्व-पाकिस्तान के विस्थापितों को बसाने और स्थानीय आबादी, विशेषत: आदिवासियों, के कल्याण-कार्य को बढ़ाने के उद्देश्य से हाथ में लिया गया। इस परियोजना के प्रारम्भ होने से लेकर अब तक 21,000 एकड़ भूमि साफ की गई है और 13,000 एकड़ से अधिक भूमि कृषि-योग्य बनाई गई है। लगभग 3,700 एकड़ भूमि में खेती भी शुरू की गई है और प्राय: 3,200 एकड़ कृषि-योग्य भूमि वितरण के लिए ज़िला-अधिकारियों को सौंपी गई है। कृषि-योग्य बनाई गई भूमि का 25 प्रतिशत हिस्सा आदिम जातियों के लिए सुरक्षित रखा गया है। मछली उद्योग और कुक्कुटपालन के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। उमरकोट-क्षेत्र में भास्कल बांध के निर्माण की बात स्वीकार कर ली गई है। इससे 13,750 एकड़ भूमि की सिंचाई हो सकेगी। 90,000 एकड़ भूमि को प्रभावित करने-वाले बांधों का सर्वेक्षण-कार्य पूरा हो गया है और विस्तृत परियोजनाएं तैयार की जा रही हैं। अन्य कार्यक्रमों—यथा मलेरिया-उन्मूलन, स्वास्थ्य-सुविधाओं की व्यवस्था, शिक्षा-सुविधाओं का विस्तार, आदि—को भी कार्यान्वित किया जा रहा है। फरवरी 1961 के अन्त तक 2,391 विस्थापित परिवारों को, जिनके सदस्यों की संख्या 10,599 है, दंडकारण्य भेजा गया था। यहां बसाए गए परिवारों को बैल, दुधारु पशु और कृषि-उपकरण, आदि खरीदने के लिए ऋण के रूप में भी सहायता दी जा रही है।

तीसरी योजना के लिए कार्यक्रम

34. विस्थापित व्यक्तियों के पुनर्वास का काम क्रमश: समाप्त हो रहा है। जहां तक पश्चिम-पाकिस्तान के विस्थापितों का सम्बन्ध है, तीसरी योजना में की गई व्यवस्था मुख्यत: आवास-योजनाओं के लिए निवास-सम्बन्धी आवश्यकताओं और शिक्षा तथा स्वास्थ्य-सेवाओं के लिए सहायता देने तक सीमित है। पूर्व-पाकिस्तान के विस्थापित व्यक्तियों के

सन्दर्भ में, दो मुख्य उद्देश्य पश्चिम-बंगाल के विस्थापित-शिविरों और अन्य केन्द्रों में रहनेवाले 28,600 और पश्चिम-बंगाल में ही आंशिक रूप से बसाए गए 2,00,000 विस्थापित परिवारों का पुनर्वास है। यद्यपि इनके लिए वित्तीय व्यवस्था 'पुनर्वास' की मद में की गई है, तथापि कुछ पुनर्वास-योजनाओं—यथा, पुनर्वास-उद्योग-निगम, विस्थापित छात्रों को वित्तीय सहायता, शय्याओं, और अस्पताल, आदि का आरक्षण—को पुनर्वास-मन्त्रालय से लेकर सम्बद्ध केन्द्रीय मन्त्रालयों को सौंप दिया गया है। शिक्षा और स्वास्थ्य-सेवा की व्यवस्था के लिए सहायता-योजनाओं और प्रशिक्षण-योजनाओं को क्रमशः राज्यों की योजनाओं में ही सम्मिलित करने का प्रस्ताव है। पुनर्वास-मन्त्रालय ने सम्बद्ध राज्य-सरकारों के परामर्श से जो कार्यक्रम बनाए हैं, उनमें 74 करोड़ रु० के व्यय की व्यवस्था है। इनमें से 41 करोड़ रु० पूर्व-पाकिस्तान से आए विस्थापितों के पुनर्वास के लिए 26 करोड़ रु० दंडकारण्य-परियोजना के लिए और लगभग 7 करोड़ रु० पश्चिम-पाकिस्तान के विस्थापितों के पुनर्वास के लिए है। अभी तक तीसरी योजना में पुनर्वास के लिए 40 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। फिर भी, चूंकि लक्ष्य यथासम्भव कम समय में पूर्ण पुनर्वास का है और पुनर्वास-कार्यक्रमों का अपना विशेष स्वरूप है, अतः यह प्रस्ताव है कि अनिवार्य कार्यक्रमों को मूर्त रूप देने के लिए आवश्यक वित्तीय व्यवस्था पुनर्वास के कार्य में हुई वास्तविक प्रगति और किए जानेवाले अवशिष्ट कार्य को देखते हुए प्रति वर्ष की जानी चाहिए।

35. पूर्व-पाकिस्तान के विस्थापितों के पुनर्वास-कार्यक्रम की कुछ मुख्य बातों का यहां संक्षेप में उल्लेख किया जा सकता है। आशा है कि 18,000 किसान-परिवारों को भूमि देकर बसा दिया जाएगा—लगभग 3,000 परिवारों को पश्चिम-बंगाल और उत्तर-प्रदेश में तथा शेष परिवारों को दंडकारण्य-क्षेत्र में। किसानों को सिंचाई, भूमि-पुनरुद्धार और आवश्यक कृषि-उपकरण खरीदने के लिए ऋण भी दिया जाएगा। आवास-इकाइयों के निर्माण और नगरों में मकानों के निर्माण के लिए ऋण-अनुदान देने का एक ठोस कार्यक्रम बना लिया गया है। छोटे पैमाने के तथा मझले स्तर के लोगों के लिए भी ऋण देने की व्यवस्था की गई है। अन्य बातों के अतिरिक्त योजना में शिविरों में रहनेवाले विस्थापितों के बच्चों को शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाएं देने, विस्थापित व्यक्तियों की आवश्यकताओं को पूरा करनेवाली निजी शिक्षा-संस्थाओं को सहायता देने और निर्धन तथा उपयुक्त विस्थापित छात्रों को मदद देने की भी व्यवस्था है। योजना में पश्चिम-बंगाल में रहनेवाले विस्थापितों के लिए व्यावसायिक एवं तकनीकी प्रशिक्षण और चिकित्सा-सम्बन्धी सुविधाएं प्रदान करने की भी व्यवस्था है। दंडकारण्य-क्षेत्र के लिए विस्तृत कार्यक्रम बनाए जा रहे हैं। इनमें भूमि-पुनरुद्धार, सिंचाई, सड़क-विकास, और पुनर्वास के लिए ऋणों और अनुदानों की योजनाएं, तथा शिक्षा एवं सामाजिक सेवाओं के लिए व्यवस्था भी सम्मिलित है।

पुनर्वास और विकास

36. अपने अन्तिम चरणों में विस्थापित व्यक्तियों का पुनर्वास-कार्य पूर्व-अवधि के अवशिष्ट कार्यों का ही रूप अधिकाधिक ग्रहण करता है और राष्ट्र की अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण के प्रयत्नों में—विशेषतः इन राज्यों और प्रदेशों के, जिन पर सर्वाधिक भार पड़ा है—विलीन हो रहा है। विकासशील राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में पुनर्वास और विकास के एकीकरण से विस्थापित व्यक्तियों की द्रुत आर्थिक एकात्मकता में सहायता मिलेगी।

लगभग 15 वर्ष पूर्व पुनर्वास की चुनौती विचलित करनेवाली, आकस्मिक, और शीघ्रता तथा तत्परतापूर्ण थी और उसके बाद से अब तक अनेक नाजुक मौके आए हैं। परन्तु कष्टों और संकटों, जिनके बीच लाखों व्यक्तियों को रहना पड़ा, और अनेक कमियों के बावजूद विस्थापितों की बड़ी समस्याओं को एक-एक करके हल किया गया है और नए जीवन की एक अच्छी और वास्तविक नींव रख दी गई है।

उपसंहार

इस रिपोर्ट में हमने उन कार्यों की व्यापकता और विशालता पर बल दिया है, जिन्हें भारत को तीसरी योजना की अवधि में पूरा करना है। हमारे साधन-स्रोतों पर इनके चलते काफी भार पड़ेगा और इनके लिए राष्ट्र तथा उसके प्रत्येक नागरिक को यथासम्भव अपने सर्वोत्तम अर्पण के लिए तैयार रहना होगा। यदि शीघ्रतापूर्वक और जी-जान लगा कर काम किया गया, तो राष्ट्र निश्चय ही अपने निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल होगा।

जवाहरलाल नेहरू
अध्यक्ष

गुलज़ारीलाल नन्दा
उपाध्यक्ष

मोरारजी आर० देसाई
वी० के० कृष्णमेनन
सी० एम० त्रिवेदी
श्रीमन्नारायण
टी० एन० सिंह
ए० एन० खोसला
पी० सी० महलानवीस
सदस्य

विष्णु सहाय
सचिव

तरलोक सिंह
अतिरिक्त सचिव

3 अगस्त, 1961

परिशिष्ट

परिशिष्ट अ : प्रमुख आर्थिक सूचक

परिशिष्ट आ : पहली, दूसरी और तीसरी योजनाओं में व्यय और व्यय-व्यवस्था

परिशिष्ट इ : जनसंख्या और नियोजन पर टिप्पणियां

परिशिष्ट अ

विवरण अ-1 : प्रमुख आर्थिक सूचक, 1950-51—1960-61

शीर्षक	1950-51	1951-52	1952-53	1953-54	1954-55	1955-56	1956-57	1957-58	1958-59	1959-60	1960-61
राष्ट्रीय आय (1960-61 के मूल्यों के आधार पर) (करोड़ रु०)	10,240	10,515	10,930	11,590	11,880	12,130	12,710	12,590	13,510	13,680	14,500
मुद्रा-आपूर्ति (क) (करोड़ रु०)	1,979	1,804	1,765	1,794	1,921	2,184	2,313	2,388	2,499	2,703	2,908
अनुसूचित बैंकों में जमा राशि (क) (करोड़ रु०)	906	878	844	856	951	1,051	1,186	1,481	1,668	1,935	1,910
योजना की व्यय-व्यवस्था (करोड़ रु०)	—	259·6	267·6	343	475·9	614·1	632·8	884·2	1001·4	2010·5	1071
घाटे की वित्त-व्यवस्था (करोड़ रु०)	—	2	44	36	94	157	253	496	136	112	(—)49
थोक मूल्यों का सूचनांक (ख) (आधार : 1952-53=100)	125·2	99·9	100·8	100·3	90·8	98·1	105·6	105·4	112·3	118·9	127·5
जीवन-यापन-व्यय का सूचनांक (आधार : 1949=100)	101	105	104	106	99	96	107	112	118	123	124
नियोजन का सूचनांक (संगठित क्षेत्र) (आधार: 1950-51=100)	100	99·3	102	101	103·5	104	111·2	115·9	114·9	119	121(ग)
पारिश्रमिक का सूचनांक (आधार : 1950-51=100)	100	107·1	115	114·9	114·9	121·3	125	127·6	132·6	135(ग)	137(ग)
कृषि-उत्पादन का सूचनांक (आधार :1949-50=100)	95·6	97·5	102	114·3	117	116·8	124	114·6	132·3	127·2	135
खाद्यान्न-उत्पादन का सूचनांक (आधार : 1949-50=100)	90·5	91·1	101·1	119·1	115	115·3	120·8	107·9	130·1	124·3	131·6
औद्योगिक उत्पादन का सूचनांक (आधार : 1950-51=100)	100	112·2	113·4	117·3	129·1	138·6	151	152·5	157·2	175	194·3
आयात (करोड़ रु०)	650	963	633	592	684	761	1,100	1,234	1,030	924	1,075
निर्यात (करोड़ रु०)	646	730	602	540	597	641	635	668	576	623	625

(क) वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार के अनुसार ।

(ख) मार्च मास के सप्ताहों के औसत से सम्बद्ध अंक ।

(ग) अनुमानित ।

विवरण अ-2 : थोक मूल्यों के सूचनांक, 1950-51—1960-61
(आधार : 1952-53=100)

(सम्बद्ध महीनों के सप्ताहों का औसत)

अवधि	खाद्य वस्तुएं	अनाज	चावल	गेहूं	शराब और तम्बाकू	ईंधन, शक्ति, प्रकाश एवं स्नेहक	औद्योगिक कच्ची सामग्रियां	कच्ची कपास	कच्चा पटसन	तेलहन	निर्मित वस्तुएं	सामान्य सूचनांक
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)	(13)
1949-50												
मार्च	108.3	92	87	98	91.6	91.1	119.1	93	128	132	98.9	106.4
1950-51												
जून	111.4	91	90	90	96	90.1	122	100	127	136	98.7	108.4
सितम्बर	116.9	94	94	93	103.8	92.3	127	104	128	147	100.7	112.8
दिसम्बर	109.2	97	96	99	100.7	93.7	132.8	128	127	144	103.5	110.6
मार्च	112.4	100	100	100	112.9	97.5	153.7	144	204	149	118.7	120.2
1951-52												
जून	116.9	104	110	93	115.3	95.4	166.8	128	314	154	123.2	126.4
सितम्बर	113.7	105	109	95	125.4	94.1	132	121	172	130	117.6	117.3
दिसम्बर	110.2	99	99	93	130	97.6	136.6	135	193	129	119.9	117.1
मार्च	93.7	95	97	90	121.5	98	103.2	109	134	85	107.6	99.9
1952-53												
जून	97.9	100	103	96	104.7	99.1	98	102	113	88	101.2	99.1
सितम्बर	103.7	102	102	100	98.3	101.4	106.1	109	104	107	100.7	103

विवरण प्र-2 (जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)	(13)
दिसम्बर	96.5	97	95	100	95.5	99.7	93.8	90	89	96	97.5	96.4
मार्च	102.2	100	99	102	92.8	98.8	101.5	96	82	115	98.9	100.8
1953-54												
जून	113.3	104	107	95	99	98.9	113.7	99	101	137	100.1	108.8
सितम्बर	111.7	103	107	95	101.7	99.8	113.8	101	95	137	98.8	107.7
दिसम्बर	101.6	92	93	92	99.2	98.5	107.2	105	108	111	98.1	101.4
मार्च	98.6	88	87	88	96	98	106.2	108	98	109	100.6	100.3
1954-55												
जून	97.3	82	88	69	94.3	98.5	103.1	103	95	102	101.1	99.3
सितम्बर	100.4	85	90	76	94.1	96.8	100.5	100	99	95	100.8	100.3
दिसम्बर	87.7	73	74	72	83.8	96.5	100.9	104	123	84	99.8	93.4
मार्च	82.9	70	72	71	86	95.7	97.2	92	142	71	101.1	90.8
1955-56												
जून	83.7	69	76	60	82.3	95	93.3	93	116	74	98.2	89.7
सितम्बर	85.3	75	81	68	79.5	94.1	94.5	95	113	81	98.3	90.6
दिसम्बर	87.5	77	76	80	79.6	95.2	101.9	102	110	92	100.2	93.5
मार्च	92.8	86	86	85	78.7	96.8	109.4	107	122	106	102.9	98.1
1956-57												
जून	99	93	85	82	80.5	98.7	112.9	111	113	116	103.5	102.1
सितम्बर	103.6	99	101	87	83.6	106.2	116.8	109	122	124	109	106.9
दिसम्बर	105.1	97	94	94	87.7	106.8	119.4	109	138	124	108.8	108.1
मार्च	102.3	99	97	95	87.2	106.5	117.3	113	133	119	106.2	105.6

1957-58												
जून.	109.4	104	107	89	92.3	112	121.4	112	146	125	108.6	110.7
सितम्बर	108.5	103	108	87	93.7	115	115.4	100	133	121	108.6	109.5
दिसम्बर	104	98	102	86	97.7	114.9	115.4	105	129	119	107.8	107.1
मार्च	102.3	95	100	84	94.9	114.3	111.3	103	120	113	107.6	105.4
1958-59												
जून	113.4	106	111	93	92.1	115.9	115.2	100	123	124	107.9	111.7
सितम्बर	121.2	115	118	105	90.9	116.1	119	99	118	137	108.9	116.5
दिसम्बर	113.3	105	98	114	96.4	115.1	112.5	99	110	122	108.3	111.4
मार्च	113.8	102	92	114	100.3	116	116	102	114	128	108.6	112.3
1959-60												
जून	118.7	102	102	93	97.6	115.9	120.3	105	114	135	109.1	115.6
सितम्बर	120.5	108	111	98	99.7	116.3	122.6	102	119	136	110	117.2
दिसम्बर	118.2	101	101	96	103.7	117	127.2	111	140	131	113.4	107.8
मार्च	117	103	106	98	96.4	117.3	131.9	113	141	141	116.8	118.8
1960-61												
जून	120.3	107	114	87	109.5	118	139.7	112	187	144	119.9	122.9
सितम्बर	123.9	109	114	90	104.5	119.8	138.7	112	180.6	147	122.7	125.3
दिसम्बर	117	100	102	89	112.1	120.3	149.5	110	226.1	154	126	124.6
मार्च	117.5	100	101	91	113.4	122.7	150.1	111	270.9	160	129.4	127.5

विवरण अ-3 : कृषि-उत्पादनों के सूचनांक (क)

(आधार : 1949-50=100)

वस्तु/वर्ग	1950-51	1951-52	1952-53	1953-54	1954-55	1955-56	1956-57	1957-58	1958-59	1959-60	1960-61
चावल	87.9	90.1	96.8	118.6	105.8	114.2	120.4	104.8	127.6	123.3	134.6
गेहूं	101.1	93.9	112.7	120	135.4	131.3	144.7	116.5	147.1	146.5	151
सभी अनाज	90.3	91.2	101.4	120.1	114.5	114.9	120.5	108.5	129.3	125.3	132.6
दालें	91.7	90.3	98.8	112	118.5	118.4	122.9	104.2	135.2	117.2	125.5
सभी खाद्यान्न	90.5	91.1	101.1	119.1	115	115.3	120.8	107.9	130.1	124.3	131.6
तेलहन	98.5	97.4	91.9	103.7	122.6	108.6	120.3	115.6	133.4	122.5	136.9
गन्ना	113.7	122.8	101.6	89.5	115.9	119.8	137.2	134.7	139.4	148.5	156.7
कपास	110.7	119.2	121	151.8	163.6	153.9	181.2	179.7	178	145.7	193.8
पटसन	106.3	151.4	148.6	100	94.8	135.8	138.7	131	158.6	139.8	122.9
चाय	103.8	109.6	115.4	100.6	110.4	107.2	108.7	116.9	122.9	124	124.9
कहवा	112.3	112.7	125.9	146.5	151.8	196.1	204.1	229.8	241.2	245.7	252.6
रबड़	93.8	94.4	106.1	131.8	127.6	146.1	143.4	140.1	143.4	137.9	155.5
सभी वस्तुएं	95.6	97.5	102	114.3	117	116.8	124	114.6	132.3	127.2	135

(क) आंकड़े जून में समाप्त होनेवाले कृषि-वर्ष के बारे में हैं।

विवरण अ-4 : औद्योगिक उत्पादनों के सूचनांक

(आधार : 1950-51=100)

वस्तु/वर्ग	1951-52	1952-53	1953-54	1954-55	1955-56	1956-57	1957-58	1958-59	1959-60 (क)	1960-61 (क)
सूती वस्त्र	109.3	116.6	123.7	126.7	127.9	134.7	127.3	123.4	127.5	133.1
रसायन और रासायनिक वस्तुएं	114.9	135	144.2	162.9	179.3	192.1	203.6	233.2	260.1	288.1
लोहा और इस्पात	111	107.3	106	119.7	121.6	126.7	126.3	130.7	189.5	238.2
मशीनें (सभी प्रकार की)	115.9	106.7	119.2	150.9	191.8	258.5	320.8	370.1	412.1	503.2
सामान्य सूचनांक	112.2	113.4	117.3	129.1	138.6	151	152.5	157.2	175	194.3

(क) अस्थायी

विवरण अ-5 : ग्रामीण और शहरी जनसंख्या, 1951 और 1961

(लाख)

राज्य/केन्द्रशासित प्रदेश	1951			1961		
	शहरी	ग्रामीण	योग	शहरी	ग्रामीण	योग
आन्ध्रप्रदेश	54.4	258.2	312.6	62.6	297.2	359.8
असम	4.1	86.3	90.4	8.9	109.7	118.6
बिहार	26.2	361.6	387.8	39.2	425.4	464.6
गुजरात }	136.5	346.1	482.6	52.8	153.4	206.2
महाराष्ट्र }				110.3	284.7	395
जम्मू-कश्मीर	—	—	44.1	6	29.8	35.8*
केरल	17.8	117.7	135.5	25.3	143.4	168.7
मध्यप्रदेश	31.3	229.4	260.7	46.3	277.6	323.9
मद्रास	73.1	226.6	299.7	89.9	246.6	336.5
मैसूर	44.5	149.5	194	51.9	183.6	235.5
उड़ीसा	6	140.5	146.5	11.1	164.5	175.6
पंजाब	30.7	130.6	161.3	40.8	162.2	203
राजस्थान	29.6	130.1	159.7	32.3	169.1	201.4
उत्तरप्रदेश	86.3	545.9	632.2	94.8	642.7	737.5
पश्चिम-बंगाल	62.8	200.2	263	81	268.7	249.7
अन्दमान और निकोबार-द्वीपसमूह	—	—	0.3	0.1	0.5	0.6
दिल्ली	14.4	3.1	17.5	23.4	3	26.4
हिमाचलप्रदेश	0.5	10.6	11.1	0.6	12.9	13.5
लक्षद्वीप, मिनिकाय और अमीनदीवी-द्वीपसमूह	—	0.2	0.2	—	0.2	0.2
त्रिपुरा	0.4	0.6	6.4	1	10.4	11.4
मणिपुर	—	—	5.8	—	—	6.4
नागालैंड	—	—	5.6	—	—	6.1
नेफा	—	—	1.4	—	—	1.8
पांडिचेरी	—	—	0.3	—	—	0.3

टिप्पणी : सन् 1951 की जनगणना में ऐसे सभी स्थान, जिनकी जनसंख्या 5,000 से अधिक थी तथा कुछ ऐसे स्थान, जिनकी जनसंख्या 5,000 से कम थी, किन्तु जिनका स्वरूप शहरी था, शहर के रूप में गिने गए। सन् 1961 की जनगणना में इन तीन शर्तों को पूरा करनेवाले स्थानों को शहर के रूप में माना गया—(1) जनसंख्या 5,000 से कम न हो, (2) जनसंख्या का घनत्व 1,000 प्रति वर्गमील से कम न हो, और (3) वयस्क पुरुषों की कम-से-कम तीन-चौथाई संख्या कृषि से भिन्न कामों या धन्धों में लगी हो।

परिशिष्ट आ

विवरण आ-1 : पहली और दूसरी योजनाओं में व्यय-व्यवस्था, वर्षानुक्रम से

(लाख रु०)

विकास की मद	1951-52	1952-53	1953-54	1954-55	1955-56	योग 1951-56	1956-57	1957-58	1958-59	* 1959-60	* 1960-61	योग 1956-61	योग 1951-61
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)	(13)	(14)
छोटी सिंचाई-सहित कृषि-उत्पादन	2,343	2,223	3,004	4,312	5,730	17,612	2,597	3,061	4,037	4,726	4,783	19,204	36,816
दूध-उद्योग और दूध-आपूर्ति-सहित पशुपालन	246	267	252	328	460	1,553	314	507	670	841	1,015	3,347	4,900
मछली-उद्योग	44	36	39	54	98	271	72	111	156	255	312	906	1,177
वन-विकास और मिट्टी-संरक्षण	96	115	147	239	553	1,150	413	550	739	995	992	3,689	4,839
1. कृषि-कार्यक्रम	2,729	2,641	3,442	4,933	6,841	20,586	3,396	4,229	5,602	6,817	7,102	27,146	47,732
गोदाम, हाट-व्यवस्था और भांडारण-सहित सहकारिता	77	71	92	98	162	500	319	645	633	939	1,345	3,881	4,381
पंचायत और स्थानीय विकास-कार्य-सहित सामुदायिक विकास	127	286	1,066	2,548	3,876	7,903	3,186	3,708	4,681	4,731	5,567	21,873	29,776
2. सामुदायिक विकास और सहकारिता	204	357	1,158	2,646	4,038	8,403	3,505	4,353	5,314	5,670	6,912	25,754	34,157
बहूद्देशीय परियोजनाएं	3,533	4,138	5,117	5,587	5,284	23,661	(क)	(क)	(क)	(क)	(क)	(क)	(क)
बाढ़-नियंत्रण-सहित सिंचाई	2,569	3,146	3,184	4,586	6,259	19,744	8,233	8,175	8,083	8,243	9,283	42,017	85,422
बिजली	2,233	2,495	2,851	2,968	4,336	14,883	8,019	7,921	8,388	9,414	10,807	44,549	59,432

*अनुमानित

(क) बहूद्देशीय परियोजनाओं के अन्तर्गत व्यय को सिंचाई और बिजली में बांट दिया गया है ।

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)	(13)	(14)
3. सिंचाई और बिजली	8,337	9,779	11,152	13,141	5,879	58,288	16,252	16,096	16,471	17,657	20,090	96,566	1,44,854
खनिज-विकास-सहित बड़े और मझोले उद्योग	918	756	1,126	993	1,679	5,472	5,287	19,391	24,149	23,109	18,053	89,989	95,461
ग्राम और लघु उद्योग	144	183	710	1,158	2,016	4,211	2,865	3,337	3,785	3,776	3,803	17,566	21,777
4. उद्योग और खनन	1,062	939	1,836	2,151	3,695	9,683	8,152	22,728	27,934	26,885	21,856	1,07,555	1,17,238
रेलवे	4,086	3,018	3,421	6,621	8,854	26,000	13,332	20,522	19,930	14,075	18,152	86,011	1,12,011
सड़कें	1,543	1,996	2,562	2,882	4,092	13,075	4,224	4,164	4,230	4,737	5,009	22,364	35,439
सड़क-परिवहन	114	264	264	344	228	1,214	349	393	267	377	432	1,818	3,032
बन्दरगाह और पत्तन	120	143	548	859	1,010	2,680	830	645	642	522	700	3,339	6,019
डाक-तार	553	617	821	968	925	3,884	952	951	1,002	1,020	1,134	5,059	8,943
जहाजरानी	194	107	343	616	566	1,826	897	882	1,072	1,161	1,256	5,268	7,094
नागरिक उड्डयन और अन्य	242	223	560	1,034	786	2,845	986	1,006	1,171	1,475	1,010	5,648	8,493
प्रसारण	23	11	49	52	122	257	123	109	75	47	114	468	725
5. परिवहन और संचार-साधन	6,875	6,379	8,568	13,376	16,583	51,781	21,693	28,672	28,389	23,414	27,807	1,29,975	1,81,756
शिक्षा	1,984	2,243	2,659	3,651	4,365	14,902	2,338	3,494	5,200	6,734	7,810	25,576	40,478
स्वास्थ्य	1,172	1,325	1,650	2,287	3,351	9,785	2,611	3,358	4,044	5,574	6,047	21,634	31,419
आवास	284	337	476	719	1,532	3,348	1,182	1,047	1,709	1,929	2,166	8,033	11,381
पिछड़े वर्गों का कल्याण	325	389	628	810	1,032	3,184	809	1,152	1,389	2,372	2,219	7,941	11,125
समाज-कल्याण, श्रम और श्रम-कल्याण	74	77	73	77	101	402	149	382	802	811	1,355	3,499	3,901
पुनर्वास	2,618	2,026	1,347	1,569	2,010	9,570	1,704	1,236	1,220	1,131	1,050	6,341	15,911
6. समाज-सेवाएं	6,457	6,397	6,833	9,113	12,391	41,191	8,793	10,669	14,364	18,551	20,647	73,024	1,14,215
7. विविध	296	261	1,315	2,232	1,964	6,068	1,492	1,672	2,070	2,057	2,689	9,980	16,048
सर्वयोग	25,960	26,753	34,304	47,592	61,391	1,96,000	63,283	88,419	1,00,144	1,01,051	1,07,103	4,06,000	6,56,000

विवरण आ-2 : दूसरी योजना में अनुमानित व्यय और तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था—राज्य

(लाख रु०)

विकास की मद	आन्ध्रप्रदेश		असम		बिहार		गुजरात		केरल	
	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)
कृषि-उत्पादन	546	1,246	235	507	1,343	1,936	424	798	464	1,400
छोटी सिंचाई	710	1,826	191	390	827	839	880	1,500	170	572
मिट्टी-संरक्षण	77	163	10	50	161	250	149	827	22	120
पशुपालन	206	385	68	117	366	468	55	250	69	150
दूध-उद्योग और दूध-आपूर्ति	54	296	6	23	41	212	117	185	18	60
वन	105	145	110	90	176	295	98	224	65	375
मछली-उद्योग	61	115	32	50	31	89	64	123	72	450
गोदाम, हाट-व्यवस्था और भांडारण	30	72	59	35	17	50	89	93	(क)	44
1. कृषि-कार्यक्रम	1,789	4,248	711	1,262	2,962	4,139	1,876	4,000	880	3,171
सहकारिता	300	575	114	200	280	518	357	457	56	246

(क) 'सहकारिता' के अन्तर्गत व्यवस्था

विवरण ग्रा-2 (जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)
सामुदायिक विकास	1,575	2,550	526	835	2,147	3,500	1,563	1,367	456	805
पंचायतें	22	300	150	140	97	92	(ख)	114	—	72
2. सामुदायिक विकास और सहकारिता	1,897	3,425	790	1,175	2,524	4,110	1,920	1,938	512	1,123
सिंचाई	5,816	7,380	97	228	2,582	6,157	3,536	5,124	834	1,142
बाढ़-नियन्त्रण	—	243	529	500	—	900	—	50	67	421
बिजली	3,469	6,494	530	2,750	3,125	7,062	1,555	4,648	2,204	4,356
3. सिंचाई और बिजली	9,285	14,117	1,156	3,478	5,707	14,119	5,091	9,822	3,105	5,919
बड़े और मझोले उद्योग	167	600	160	535	213	280	(ग)	318	118	920
खनिज-विकास	—	11	—	—	11	20	(ग)	50	—	—
ग्राम और लघु उद्योग	863	1,267	306	440	684	1,103	485	373	430	800
4. उद्योग और खनन	1,030	1,878	466	975	908	1,403	485	741	548	1,720
सड़कें	522	800	717	850	1,333	1,900	1,838	1,650	518	900
सड़क-परिवहन	32	350	68	25	30	200	355	300	102	63
बन्दरगाह और पत्तन	—	—	—	—	—	—	196	200	—	25
अन्य परिवहन	—	—	3	130	—	30	—	—	—	50
पर्यटन	7	6	10	10	1	10	—	30	6	50
5. परिवहन और संचार-साधन	561	1,156	798	1,015	1,364	2,140	2,389	2,180	626	1,088
सामान्य शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रम	968	2,066	675	1,369	1,697	3,403	1,078	1,415	1,119	1,469

तकनीकी शिक्षा	214	295	168	305	194	504	(घ)	307	(घ)	378
स्वास्थ्य	1,027	1,900	414	865	1,294	2,150	832	1,644	501	1,350
आवास	457	610	113	275	391	575	608	885	135	430
पिछड़े वर्गों का कल्याण	461	537	824	1,030	434	728	295	305	260	195
समाज-कल्याण	43	83	29	20	32	35	(ङ)	41	10	39
श्रम और श्रम-कल्याण	65	135	36	100	106	280	(ङ)	146	19	80
जन-सहयोग	—	(च)	—	(च)	—	(च)	—	5	—	5
6. समाज-सेवाएं	3,235	5,626	2,259	3,964	4,148	7,675	2,813	4,748	2,044	3,946
अंक-संकलन	15	5	17	22	36	18	—	11	—	15
सूचना और प्रचार	25	20	22	34	38	50	—	25	—	13
स्थानीय निकाय	47	—	20	25	—	—	—	35	—	—
राज्य-राजधानी-परि-योजनाएं	180	—	—	—	—	—	—	—	—	—
अन्य	—	25	76	50	—	50	—	—	—	5
7. विविध	267	50	135	131	74	118	109	71	185	33
सर्वयोग	18,064	30,500	6,315	12,000	17,687	33,704	14,683	23,500	7,900	17,000

(ख) 'सामुदायिक विकास' के अन्तर्गत व्यवस्था
(ग) 'ग्राम और लघु उद्योग' के अन्तर्गत व्यवस्था
(घ) 'सामान्य शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रम' के अन्तर्गत व्यवस्था
(ङ) 'पिछड़े वर्गों का कल्याण' के अन्तर्गत व्यवस्था
(च) इन राज्यों में जन-सहयोग के लिए व्यय-व्यवस्था तीसरी योजना के स्वीकृत अधिकतम व्यय-परिमाण में ही उपयुक्त समंजन के द्वारा करनी होगी—आन्ध्रप्रदेश और बिहार : 6 लाख रु० प्रत्येक ; असम : 1 लाख रु० ।

विवरण आ-2 (जारी)

विकास की मद	महाराष्ट्र: दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	महाराष्ट्र: तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	मध्यप्रदेश: दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	मध्यप्रदेश: तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	मद्रास: दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	मद्रास: तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	मैसूर: दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	मैसूर: तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	उड़ीसा: दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	उड़ीसा: तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था
	(12)	(13)	(14)	(15)	(16)	(17)	(18)	(19)	(20)	(21)
कृषि-उत्पादन	832	1,489	729	1,400	450	1,067	434	1,304	269	682
छोटी सिंचाई	998	1,579	849	1,500	632	1,280	1,027	1,600	165	304
मिट्टी-संरक्षण	604	2,084	95	300	134	250	152	300	50	84
पशुपालन	137	166	172	400	197	352	75	195	151	228
दूध-उद्योग और दूध-आपूर्ति	238	512	31	120	117	275	22	175	8	44
वन	124	295	196	600	71	212	106	279	48	160
मछली-उद्योग	154	249	20	75	79	222	44	130	80	190
गोदाम, हाट-व्यवस्था और भांडारण	(क)	130	—	40	(क)	40	32	112	18	30
1. **कृषि-कार्यक्रम**	3,087	6,504	2,092	4,435	1,680	3,698	1,892	4,105	789	1,722
सहकारिता	680	957	282	670	180	471	240	475	104	237
सामुदायिक विकास	2,432	2,400	1,700	2,250	1,343	2,036	999	1,535	995	1,750
पंचायतें	(ख)	227	56	290	—	10	32	69	49	101

2. **सामुदायिक विकास और सहकारिता**	3,112	3,584	2,038	3,210	1,523	2,517	1,271	2.079	1.148	2,088
सिंचाई	3,097	6,604	2,852	4,160	1,693	2,742	2,800	4,066	2,805	2,141
बाढ़-नियन्त्रण	—	30	—	20	—	—	—	—	—	250
बिजली	4,067	8,124	2,736	7,600	7,885	10,019	2,688	6,967	1,372	4,462
3. **सिंचाई और बिजली**	7,164	14,758	5,588	11,780	9,578	12,761	5,488	11,033	4,177	6,853
बड़े और मझोले उद्योग	(ग)	695	25	191	114	310	132	689	35	35
खनिज-विकास	(ग)	85	6	30	—	25	155	108	25	153
ग्राम और लघु उद्योग	498	810	362	829	1,272	2,016	512	775	353	510
4. **उद्योग और खनन**	498	1,590	393	1,050	1,386	2,351	799	1,572	413	698
सड़कें	1,582	3,051	892	1,700	533	1,100	924	900	557	800
सड़क-परिवहन	223	630	2	70	—	—	430	200	25	46
बन्दरगाह और पत्तन	96	50	—	—	—	—	5	215	—	—
अन्य परिवहन	—	30	—	—	—	—	—	—	—	—
पर्यटन	—	34	—	10	5	25	11	15	2	5
5. **परिवहन और संचार-साधन**	1,901	3,795	894	1,780	538	1,125	1,370	1,330	584	851
सामान्य शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रम	1,525	2,394	1,230	2,712	1,141	2,564	978	1,620	579	1,514
तकनीकी शिक्षा	(घ)	715	229	483	232	652	203	436	91	215
स्वास्थ्य	1,548	2,722	971	2,130	1,435	2,150	1,147	1,700	352	914

(क) 'सहकारिता' के अन्तर्गत व्यवस्था
(ख) 'सामुदायिक विकास' के अन्तर्गत व्यवस्था
(ग) 'ग्राम और लघु उद्योग' के अन्तर्गत व्यवस्था
(घ) 'सामान्य शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रम' के अन्तर्गत व्यवस्था

विवरण ग्रा-2 (जारी)

	(12)	(13)	(14)	(15)	(16)	(17)	(18)	(19)	(20)	(21)
ग्रावास	1,809	1,678	288	550	480	700	325	500	108	200
पिछड़े वर्गों का कल्याण	603	778	269	800	459	326	279	440	341	463
समाज-कल्याण	(ङ)	114	36	70	18	52	35	30	10	16
श्रम ग्रौर श्रम-कल्याण	(ङ)	302	51	120	48	133	40	102	47	76
जन-सहयोग	—	—	(च)	—	(च)	(च)	(च)	—	—	4
6. **समाज-सेवाएं**	5,485	8,703	3,074	6,865	3,813	6,577	3,007	4,828	1,528	3,402
ग्रंक-संकलन	(छ)	29	21	28	9	24	5	18	18	27
सूचना ग्रौर प्रचार	144	37	20	39	16	35	6	35	26	34
स्थानीय निकाय	—	—	61	75	76	—	34	—	18	25
राज्य-राजधानी-परियोजनाएं	—	—	365	700	—	—	—	—	215	275
ग्रन्य	12	—	4	38	—	—	—	—	20	25
7. **विविध**	156	66	471	880	101	59	45	53	297	386
सर्वयोग	21,403	39,000	14,550	30,000	18,619	29,088	13,872	25,000	8,936	16,000

(ङ) 'पिछड़े वर्गों का कल्याण' के ग्रन्तर्गत व्यवस्था

(च) इन राज्यों में जन-सहयोग के लिए व्यय-व्यवस्था तीसरी योजना में स्वीकृत ग्रधिकतम व्यय-परिमाण में ही उपयुक्त समंजन के द्वारा करनी होगी—मध्यप्रदेश ग्रौर मद्रास : 6 लाख रु० प्रत्येक, मैसूर : 5 लाख रु० ।

(छ) सूचना ग्रौर प्रचार में सम्मिलित

विवरण आ-2 (जारी)

	पंजाब		राजस्थान		उत्तरप्रदेश		प० बंगाल		जम्मू-कश्मीर		सभी राज्यों का योग	
	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था
	(22)	(23)	(24)	(25)	(26)	(27)	(28)	(29)	(30)	(31)	(32)	(33)
कृषि-उत्पादन	604	1,133	320	659	1,814	2,746	430	1,634	46	350	8,940	18,351
छोटी सिंचाई	487	752	394	670	1,634	3,300	204	1,032	99	125	9,267	17,269
मिट्टी-संरक्षण	53	189	40	140	127	409	53	466	38	100	1,765	5,732
पशुपालन	121	268	120	471	225	666	99	411	47	65	2,108	4,592
दूध-उद्योग और दूध-आपूर्ति	69	180	9	69	32	300	354	600	—	35	1,116	3,086
वन	117	278	131	245	231	662	121	234	42	100	1,741	4,204
मछली-उद्योग	8	45	6	20	33	102	36	205	6	25	726	2,090
गोदाम, हाट-व्यवस्था और भांडारण	14	31	10	26	12	97	19	43	—	—	300	843
1. **कृषि-कार्यक्रम**	1,473	2,876	1,030	2,300	4,108	8,282	1,316	4,625	278	800	25,963	56,167
सहकारिता	171	424	176	400	405	1,084	113	165	28	80	3,486	6,959
सामुदायिक विकास	839	1,230	1,095	1,200	2,644	5,167	928	1,239	345	325	19,587	28,189
पंचायतें	60	112	55	580	—	411	59	197	—	109	580	2,824

विवरण आ-2 (जारी)

	(22)	(23)	(24)	(25)	(26)	(27)	(28)	(29)	(30)	(31)	(32)	(33)
2. सामुदायिक विकास और सहकारिता	1,070	1,766	1,326	2,180	3,049	6,662	1,100	1,601	373	514	23,653	37,972
सिंचाई	3,952	2,204	2,268	8,510	2,435	5,171	2,033	1,892	93	600	36,893	58,121
बाढ़-नियन्त्रण	35	1,501	—	90	—	575	—	515	—	900	631	5,995
बिजली	3,908	6,764	1,575	3,500	5,691	10,836	1,194	3,736	370	797	42,369	88,315
3. सिंचाई और बिजली	7,895	10,469	3,843	12,100	8,126	16,582	3,227	6,143	463	2,497	79,893	1,52,431
बड़े और मझोले उद्योग	55	322	15	30	324	368	2,310	1,204	115	353	3,783	6,850
खनिज-विकास	—	10	9	365	6	6	—	92	—	153	212	1,108
ग्राम और लघु उद्योग	412	1,108	296	500	919	1,775	592	997	114	400	8,098	13,703
4. उद्योग और खनन	467	1,440	320	895	1,249	2,149	2,902	2,293	229	906	12,093	21,661
सड़कें	1,003	1,200	1,011	1,300	1,501	3,048	1,468	1,800	496	832	14,895	21,831
सड़क-परिवहन	26	60	—	—	66	—	198	100	—	—	1,557	2,044
बन्दरगाह और पत्तन	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	297	490
अन्य परिवहन	—	—	—	—	—	—	10	33	—	—	13	273
पर्यटन	6	23	12	20	19	38	4	17	56	100	139	393
5. परिवहन और संचार-साधन	1,035	1,283	1,023	1,320	1,586	3,086	1,680	1,950	552	932	16,901	25,031
सामान्य शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रम	827	1,796	1,129	1,778	1,429	5,041	2,658	2,367	213	398	17,246	31,906
तकनीकी शिक्षा	190	709	68	332	326	937	313	618	24	100	2,252	6,986
स्वास्थ्य	619	1,310	698	1,595	1,177	4,126	1,427	1,980	256	578	13,698	27,114

आवास	450	305	219	420	849	920	583	172	110	200	6,925	• 9,620
पिछड़े वर्गों का कल्याण	261	336	171	325	542	961	144	250	29	24	5,372	7,498
समाज-कल्याण	29	74	15	40	30	80	47	340	3	14	337	• 1,048
श्रम और श्रम-कल्याण	48	155	42	100	162	414	90	346	6	30	760	2,519
जन-सहयोग	—	5	—	5	—	—	—	(क)	—	4	—	34
6. **समाज-सेवाएं**	2,424	4,690	2,342	4,595	4,515	12,485	5,262	7,273	641	1,348	46,590	86,725
अंक-संकलन	9	19	8	30	25	66	1	22	3	8	—	322
सूचना और प्रचार	29	50	35	65	35	72	21	40	12	13	—	562
स्थानीय निकाय	—	—	—	75	—	—	67	—	71	75	—	310
राज्य-राजधानी-परियोजनाएं	676	500	34	—	—	—	—	1,000	—	—	—	2,475
अन्य	65	46	25	40	121	336	8	53	60	407	—	1,075
7. **विविध**	779	615	102	210	199	454	97	1,115	146	503	3,163	4,744
सर्वयोग	15,143	21,139	9,986	23,600	22,832	49,700	15,584	25,000	(ख)2,682	7,500	2,08,256	3,84,731

(क) जन-सहयोग के लिए 6 लाख रु० की व्यय-व्यवस्था तीसरी योजना की अधिकतम स्वीकृत राशि में ही उपयुक्त समंजन के द्वारा करनी होगी।

(ख) पश्चिम-बंगाल के लिए व्यय-व्यवस्था का वितरण (अ) दामोदर-घाटी-निगम में प० बंगाल के अंशदान, और (ख) बढ़े हुए साधनों के, जिनके 43 करोड़ रु० होने का अनुमान है और जिन्हें राज्य-सरकार 'वित्तीय साधन' शीर्षक छठे अध्याय में उल्लिखित ढंग से 90 करोड़ रु० से भी अधिक करने की आशा करती है, के अनुसार होनेवाले समंजन के आधार पर किया जाएगा।

विवरण आ-3 : दूसरी योजना में अनुमानित व्यय और तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था---केन्द्रशासित प्रदेश

(लाख रुपये)

विकास की मद	दिल्ली		हिमाचलप्रदेश		लक्षद्वीप-समूह		पांडिचेरी		मणिपुर	
	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)
कृषि-उत्पादन	9	23	82	199	2	2	13	39	11	29
छोटी सिंचाई	12	30	68	75	—	—	5	12	5	13
मिट्टी-संरक्षण	7	8	—	198	—	—	—	12	—	1
पशुपालन	14	18	37	64	--	3	7	14	6	15
दूध-उद्योग और दूध-आपूर्ति	—	5	—	6	—	—	—	—	—	—
वन	(क)	6	56	80	—	—	—	—	4	25
मछली-उद्योग	1	10	5	13	7	18	7	9	2	7
गोदाम, हाट-व्यवस्था और भांडारण	—	5	10	4	—	—	1	—	—	—
1. **कृषि-कार्यक्रम**	43	105	258	639	9	23	33	86	28	9
सहकारिता	15	18	9	38	—	8	7	12	9	18
सामुदायिक विकास	27	11	195	160	—	—	34	18	70	98
पंचायतें	3	—	27	22	—	—	—	—	—	3

2. **सामुदायिक विकास और सहकारिता**	45	29	231	220	—	8	41	30	79	119
सिंचाई	—	—	—	—	—	—	21	10	—	—
बाढ़-नियन्त्रण	11	110	—	—	—	—	—	5	—	12
बिजली	134	1,790	163	197	1	5	58	69	44	107
3. **सिंचाई और बिजली**	1.45	1,900	163	197	1	5	79	84	44	119
बड़े और मझोले उद्योग	—	—	1	29	—	—	—	—	—	—
खनिज-विकास	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
ग्राम और लघु उद्योग	165(ख)	165	39	82	2	6	25	30	9	49(ख)
4. **उद्योग और खनन**	165	165	40	111	2	6	25	30	9	49
सड़कें	26	220	622	800	—	—	40	60	186	397
सड़क-परिवहन	—	320	58	140	—	—	—	—	32	39
बन्दरगाह और पत्तन	—	—	—	—	8	18	37	—	—	—
अन्य परिवहन	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
पर्यटन	—	—	2	12	—	—	—	2	—	5
5. **परिवहन और संचार-साधन**	26	540	682	952	8	18	317	62	218	441
सामान्य शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रम	402	1,144	72	205	12	19	26	142	65	110
तकनीकी शिक्षा	—	114	4	18	—	—	6	25	—	—
स्वास्थ्य	115	1,509	150	213	10	10	48	160	40	172
आवास	181	1,905	33	60	—	2	14	21	13	24
पिछड़े वर्गों का कल्याण	15	23	40	82	—	5	5	10	87	128

(क) 'मिट्टी-संरक्षण' के अन्तर्गत व्यवस्था
(ख) मेट्रिक पद्धति के लिए व्यवस्था सम्मिलित।

विवरण ग्रा-3 (जारी)

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)
समाज-कल्याण	—	74	4	17	—	—	2	8	2	4
श्रम ग्रौर श्रम-कल्याण	2	141	—	331	—	—	1	5	—	—
जन-सहयोग	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
6. **समाज-सेवाएं**	715	4,910	303	632	22	36	102	371	207	438
ग्रंक-संकलन	1	3	2	7	—	—	1	4	1	2
सूचना ग्रौर प्रचार	2	3	11	25	—	1	1	5	3	5
स्थानीय निकाय	—	—	7	10	—	—	7	20	2	25
राज्य-राजधानी-परियोजनाएं	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
ग्रन्य	—	520	—	—	—	—	—	1	31	—
7. **विविध**	3	526	20	42	—	1	9	30	37	32
सर्वयोग	1,142	8,175	1,697	2,793	42	97	366	693	622	1,288

विवरण आ-3 (जारी)

विकास की मद	त्रिपुरा		अन्दमान		नेफा		नागालैंड		केन्द्रशासित प्रदेशों का योग	
	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था	दूसरी योजना में अनुमानित व्यय	तीसरी योजना में व्यय-व्यवस्था
	(12)	(13)	(14)	(15)	(16)	(17)	(18)	(19)	(20)	(21)
कृषि-उत्पादन	28	67	107	164	23	33 }	13	42	288	598
छोटी सिचाई	6	35	—	—	1	5 }	—	7	97	177
मिट्टी-संरक्षण	1	17	—	10	—	—	—	—	8	246
पशुपालन	8	24	3	4	3	20 }	4	10	82	172
दूध-उद्योग और दूध-आपूर्ति	3	9	—	4	—	— }	—	—	3	24
वन	14	44	14	57	29	43	5	12	122	268
मछली-उद्योग	4	22	2	15	—	5	1	4	29	102
गोदाम, हाट-व्यवस्था और भांडारण	—	1	—	—	—	—	—	—	11	10
1. **कृषि-कार्यक्रम**	64	219	126	254	56	106	23	75	640	1,597
सहकारिता	16	32	1	4	6	12	—	9	63	151
सामुदायिक विकास	61	90	12	25	29	93	36	83	464	578
पंचायतें	—	28	—	3	—	—	—	—	30	56

विवरण आ-3 (जारी)

	(12)	(13)	(14)	(15)	(16)	(17)	(18)	(19)	(20)	(21)
2. **सामुदायिक विकास और सहकारिता**	77	150	13	32	35	105	36	92	557	785
सिंचाई	—	—	—	—	—	—	—	—	21	10
बाढ़-नियन्त्रण	—	10	—	—	—	—	—	—	11	137
बिजली	34	73	1	14	9	60	21	30	465	2,345
3. **सिंचाई और बिजली**	34	83	1	14	9	60	21	30	497	2,492
बड़े और मझोले उद्योग	1	2	—	1	—	—	—	—	2	32
खनिज-विकास	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
ग्राम और लघु उद्योग	43	64	3	13	6	11	1	5	293	425
4. **उद्योग और खनन**	44	66	3	14	6	11	1	5	295	457
सड़कें	380	430	70	238	142	180	184	250	1,650	2,575
सड़क-परिवहन	—	50	1	10	—	—	—	—	91	559
बन्दरगाह और पत्तन	—	—	—	—	—	—	—	—	45	18
अन्य परिवहन	—	—	99	263	—	25	—	—	99	288
पर्यटन	—	—	—	3	10	—	—	—	12	22
5. **परिवहन और संचार-साधन**	380	480	170	514	152	205	184	250	1,897	3,462
सामान्य शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रम	103	240	13	57	45	82	47	105	785	2,104
तकनीकी शिक्षा	22	16	—	—	—	—	(क)	—	32	173
स्वास्थ्य	94	168	12	51	68	133	63	150	690	2,566
आवास,	10	45	24	16	—	—	1	3	276	2,076
पिछड़े वर्गों का कल्याण	76	135	—	6	—	—	—	—	223	389

समाज-कल्याण	1	11	—	—	—	—	1	—	10	114
श्रम और श्रम-कल्याण	1	1	—	3	—	—	—	2	4	189
जन-सहयोग	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
6. **समाज-सेवाएं**	307	616	49	133	113	215	112	260	1,930	7,611
अंक-संकलन	—	7	—	1	1	3	—	—	6	27
सूचना और प्रचार	3	9	—	3	2	4	1	3	23	58
स्थानीय निकाय	32	—	—	10	—	—	—	—	48	65
राज्य-राजधानी-परियोजनाएं	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
अन्य	—	2	—	4	—	6	—	—	31	533
7. **विविध**	35	18	—	18	3	13	1	3	108	683
सर्वयोग	941	1,632	362	979	374	715	378	715	5,924	1,708

टिप्पणी : दूसरी योजना का अनुमानित व्यय राज्यों-द्वारा योजना-आयोग के 7 फरवरी, 1961 के पत्र के उत्तर में दी गई सूचना के आधार पर है ।

(क) 'सामान्य शिक्षा और सांस्कृतिक कार्यक्रम' के अन्तर्गत व्यवस्था ।

परिशिष्ट ३

जनसंख्या और नियोजन पर टिप्पणियां

चौथी और पांचवीं योजनाओं में जनसंख्या का विस्तार

सन् 1951 की जनगणना-सम्बन्धी रिपोर्ट में सन् 1981 तक जनसंख्या में वृद्धि के बारे में दो विस्तार-क्रमों का अनुमान लगाया गया। ये अनुमान दो प्रकार की मान्यताओं पर आधारित थे। प्रथम यह कि इस अवधि में जनसंख्या में वृद्धि का क्रम या तो (अ) 1921-50 की अवधि के आंकड़ों के अनुसार रहेगा, या (आ) 1941-50 की अवधि के आंकड़ों के अनुसार। दूसरी पंचवर्षीय योजना की रिपोर्ट में विस्तार के लिए इन्हीं अनुमानों को आधार के रूप में स्वीकार किया गया था। तालिका-संख्या 1 के दूसरे स्तम्भ में इन अनुमानों को प्रस्तुत किया गया है।

2. सन् 1951 की जनगणना के बाद राष्ट्रीय नमूना-सर्वेक्षण-संस्था-द्वारा सामाजिक आंकड़ों का संग्रह शुरू किया गया। इन आंकड़ों से निरन्तर यह संकेत मिलता रहा कि जनसंख्या में वृद्धि की गति कहीं अधिक रहेगी। तीसरी पंचवर्षीय योजना की प्रारम्भिक रूपरेखा में प्रयोग के लिए सन् 1959 में रजिस्ट्रार-जनरल की सहायता से केन्द्रीय अंक-संकलन-संगठन-द्वारा नए अनुमान तैयार किए गए। ये अनुमान तालिका-संख्या 1 के तीसरे स्तम्भ में दिए गए हैं :

तालिका-संख्या 1

जनसंख्या का विस्तार 1961–1976 (करोड़)

वर्ष	दूसरी पंच-वर्षीय योजना	1959 के केन्द्रीय अंक-संकलन-संगठन	1961 अध्ययन-दल
1961	40.8	43.1	43.8*
1966	43.4	48	49.2
1971	46.5	52.8	55.5
1976	49.9	57.8	62.5

3. सन् 1961 की जनगणना का अस्थायी अनुमान 43.8 करोड़ है। यह संख्या तीसरी योजना की रूपरेखा में अपनाए गए अंक से 2 प्रतिशत अधिक है, तथा दूसरी पंचवर्षीय योजना में दिए गए विस्तार के अनुमान से 3 करोड़ (7 प्रतिशत) अधिक। रजिस्ट्रार-जनरल और केन्द्रीय अंक-संकलन-संगठन की सहायता से एक अध्ययन-दल ने निम्न धारणाओं पर आधारित नए अनुमान तैयार किए : सामान्य उत्पादकता-क्रम सन् 1971 तक 189 प्रति हज़ार बना रहेगा और इसके बाद सन् 1976 तक इसमें 10 प्रतिशत की कमी आ जाएगी; इसी तरह सन् 1961 में जन्म के आधार पर जो आयु-सीमा 47.5 वर्ष है, वह सन् 1966 तक प्रति वर्ष 0.75 वर्ष और सन् 1976 तक 0.5 वर्ष की गति से बढ़ेगी। इन विस्तारों को तालिका-संख्या 1 के चौथे स्तम्भ में दिया गया है। इसी अध्ययन-दल ने पुरुषों और स्त्रियों के अलग-अलग वय-वर्गों के लिए विस्तृत अनुमान तैयार किए हैं। ये अनुमान तालिका-संख्या 2 में प्रस्तुत किए गए हैं।

*सन् 1961 की जनगणना का अस्थायी योग।

तालिका-संख्या 2

1966, 1971 और 1976 में जनसंख्या में अनुमानित वृद्धि

(लाख)

वय-वर्ग	1961			1966			1971			1976		
	योग	पुरुष	स्त्रियां	योग	पुरुष	स्त्रियां	योग	पुरुष	स्त्रियां	योग	पुरुष	स्त्रियां
0—4	713	366	347	798	408	390	899	459	440	977	498	479
5—9	586	303	283	666	343	323	755	387	368	857	439	418
10—14	461	236	225	569	294	275	650	335	315	738	378	360
0—14	1,760	905	855	2,033	1,045	988	2,304	1,181	1,123	2,572	1,315	1,257
15—19	401	206	195	450	230	220	558	288	270	638	328	310
20—24	370	191	179	392	200	192	441	224	217	548	282	266
25—29	338	172	166	361	185	176	382	195	187	432	219	213
30—34	301	153	148	326	166	160	346	180	166	373	191	182
35—39	265	137	128	288	147	141	314	160	154	336	175	161
40—44	230	122	108	253	131	122	277	142	135	304	155	149
45—49	194	104	90	217	115	102	240	124	116	264	135	129
50—54	159	85	74	180	96	84	202	107	95	226	117	109
55—59	127	67	60	143	76	67	164	87	77	185	97	88
60—64	95	49	46	109	57	52	125	65	60	144	75	69
15—64	2,480	1,286	1,194	2,719	1,403	1,316	3,049	1,572	1,477	3,450	1,774	1,676
65—69	63	32	31	76	38	38	90	46	44	103	53	50
70 और ऊपर	77	35	42	87	41	46	104	49	55	126	60	66
65 और ऊपर	140	67	73	163	79	84	194	95	99	229	113	116
सभी वय-वर्ग	4,380	2,258	2,122	4,915	2,527	2,388	5,547	2,848	2,699	6,251	3,202	3,049

4. जन्म और मृत्यु की दरों में परिवर्तन अत्यधिक दुरूह किस्म के माने जाते हैं। भारत में परिवार-आयोजन पर बल दिया जा रहा है, परन्तु अभी यह अनिश्चित है कि आगामी 5 या 10 वर्षों में इसका कितना प्रभाव पड़ेगा। इसलिए तालिका-संख्या 2 में जनसंख्या के विस्तार का जो क्रम बताया गया है, वह कतिपय धारणाओं पर आधारित होने के कारण कुछ हद तक काल्पनिक है। जनसंख्या में वास्तविक वृद्धि उक्त धारणाओं से भिन्न भी हो सकती है; परन्तु आगामी वर्षों के लिए विभिन्न योजना-लक्ष्यों के आकलन के संदर्भ में जनसंख्या के आंकड़ों का एक मानक रूप अपरिहार्य है। यहां विस्तार का जो स्वरूप दिया गया है, वह अस्थायी रूप से वर्तमान प्रयोजनों के लिए ही अपनाया गया है। इस बात को अच्छी तरह समझ लिया गया है कि अनुमानों को सुधारने का एकमात्र उपाय यही है कि दो जनगणनाओं के मध्य की अवधि में पर्याप्त विश्वसनीय सामाजिक आंकड़े एकत्र किए जाएं।

(2)

तीसरी योजना में अतिरिक्त नियोजन के अनुमान

तीसरी योजना में सम्मिलित किए गए विकास-कार्यक्रमों और परियोजनाओं के फल-स्वरूप तीसरी योजना की अवधि में सम्मिलित अतिरिक्त नियोजन का अनुमान लगाते समय जो दृष्टि अपनाई गई है, उसके बारे में 'नियोजन और जनशक्ति' शीर्षक 10-वें अध्याय में एक सामान्य विवरण प्रस्तुत किया गया है। इस बात की निरन्तर आवश्यकता है कि अतिरिक्त आंकड़े एकत्र किए जाएं, धारणाओं की जांच की जाए और अनुमान लगाने के तरीकों में सुधार किया जाए। वर्तमान अनुमानों में सुधार तथा और अधिक अध्ययन में सुविधा की दृष्टि से इस टिप्पणी में ग्रामीण विकास तथा हाथ में लिए जानेवाले अन्य कार्यक्रमों की विशेष योजनाओं के अलावा तीसरी योजना में अतिरिक्त नियोजन की सम्भावनाओं का आकलन करने के लिए अपनाई गई मुख्य धारणाओं को संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है।

2. यह अनुमान लगाया गया है कि वर्तमान व्यवस्था के अनुसार तीसरी योजना में 1 करोड़ 40 लाख अतिरिक्त व्यक्तियों को रोज़गार मिल सकेगा। इनमें से लगभग 1 करोड़ 5 लाख को कृषि-भिन्न कार्यों में तथा 35 लाख को कृषि-कार्यों में काम मिलेगा। कृषि कर्म के भिन्न कार्यों में अतिरिक्त रोज़गार का वितरण इस प्रकार किया जा सकता है :

कृषि-भिन्न कार्यों में अतिरिक्त नियोजन

क्षेत्र	(लाख)
1. निर्माण-कार्य	23*
2. सिंचाई और बिजली	1

***निर्माण-कार्यों में नियोजन का आगे विभाजन :**

	(लाख में)
1. कृषि और सामुदायिक विकास	**6.1**
2. सिंचाई और बिजली	**4.9**
3. कुटीर और लघु उद्योगों-सहित उद्योग और खनिज	**4.6**
4. रेलवे-सहित परिवहन और संचार-साधन	**3.4**
5. समाज-सेवाएं	**3.5**
6. विविध	**0.5**
योग	**23**

क्षेत्र		(लाख)
3. रेलवे		1.4
4. अन्य परिवहन और संचार-साधन		8.8
5. उद्योग और खनिज		7.5
6. लघु उद्योग		9
7. वन-विकास, मछली-उद्योग और सम्बद्ध सेवाएं		7.2
8. शिक्षा		5.9
9. स्वास्थ्य		1.4
10. अन्य समाज-सेवाएं		0.8
11. सरकारी नौकरी		1.5
	योग	67.5
12. 1 से लेकर 11 तक की मदों में 56 प्रतिशत के हिसाब से व्यापार-वाणिज्य-सहित अन्य		37.8
	सर्वयोग	105.3

3. अतिरिक्त नियोजन के अनुमान तीन प्रारम्भिक धारणाओं पर आधारित हैं। पहली बात, वर्तमान क्षमता के सम्बन्ध में उत्पादन और नियोजन को वर्तमान स्तर से नीचे गिरने नहीं दिया जाएगा। विशेषत:, अपनी वर्तमान क्षमता के अनुसार काम करने में मालिक जो कठिनाइयां अनुभव करेंगे, उन्हें दूर किया जाएगा और वर्तमान इकाइयों में नियोजन को कम-से-कम यथावत् रखा जाएगा। दूसरी बात, योजना में उपबन्धित विभिन्न विकास-कार्यों को आवश्यक कुशलता और मितव्ययिता से पूरा किया जाएगा तथा उत्पादन जारी रखा जाएगा। तीसरी बात, सभी बातों को ध्यान में रखते हुए निर्माण-कार्यों में सघन श्रम-पद्धतियों को प्राथमिकता दी जाएगी।

4. तीसरी योजना में विकास के सन्दर्भ में अतिरिक्त नियोजन का अनुमान इन दृष्टियों से लगाया जाना चाहिए :

(अ) कृषि-भिन्न क्षेत्रों में इनके सम्बन्ध में :

(1) निर्माण का चरण;

(2) निर्माण-प्रक्रिया की अवधि में उत्पन्न सम्पत्ति के संचालन और रख-रखाव के परिणामस्वरूप कार्य जारी रहने का चरण; और

(3) कृषि से बाहर मुख्यत: व्यापार, वाणिज्य और विविध सेवाओं में, जिनमें संगठित क्षेत्र से बाहर की परिवहन-सेवा भी सम्मिलित है, अप्रत्यक्ष नियोजन।

(आ) कृषि में।

निर्माण-कार्यों में नियोजन

5. विकास के सभी क्षेत्रों में निर्माण एक महत्वपूर्ण तत्व है । इस शीर्षक के अन्तर्गत अतिरिक्त नियोजन के अनुमान योजना के अधीन परियोजनाओं की सम्पूर्ण श्रेणियों—यथा, सिंचाई और बिजली, सड़कें, रेलवे, कारखानों के भवन, आवास, विद्यालयों और अस्पतालों के भवन, आदि के निर्माण—के सम्बन्ध में हैं । मुख्य रूप से, निर्माण के चरण में नियोजन का अनुमान आधार-वर्ष 1960-61 के स्तर की तुलना में 1961-66 में हुई व्यय-परिमाण में वृद्धि के आधार पर लगाया गया है । व्यय-परिमाण और उनकी स्थिति के बारे में आंकड़े केन्द्रीय मन्त्रालयों और राज्य-सरकारों से प्राप्त सूचनाओं से और विशेष अध्ययनों या अन्य ऐसी सूचनाओं के आधार पर, जिन्हें एक साथ रखा जा सकता है, निकाले गए हैं । इस बात का प्रयत्न किया गया है कि कार्य की प्रत्येक श्रेणी के लिए 1 करोड़ रु० विकास-व्यय के आधार पर वर्ष में 300 दिनों के लिए नियुक्त किए जानेवाले सम्भावित व्यक्तियों की संख्या का अनुमान लगाया जाए । इस बात को उदाहरण-द्वारा समझाने के लिए निर्माण के दो महत्वपूर्ण क्षेत्रों (1) सिंचाई एवं बिजली, और (2) परिवहन के नियोजन-सम्बन्धी आकलनों को नीचे विस्तार में प्रस्तुत किया गया है :

(1) **सिंचाई :** सन् 1955-56 और 1960-61 के सम्भावित व्यय-परिमाण के अन्तर का अनुमान लगभग 37.5 करोड़ रु० है । 'दूसरी पंचवर्षीय योजना की कुछ मुख्य परियोजनाओं की प्रगति' (मार्च 1961) में किए गए विश्लेषण के अनुसार दूसरी पंचवर्षीय योजना का अनुभव यह बताता है कि विश्लेषण में सम्मिलित परियोजनाओं में मोटे तौर पर नियोजन और पूंजी-विनियोग का अनुपात प्रति करोड़ 7,000 मानव-वर्ष है । इस आधार पर सिंचाई-परियोजनाओं के निर्माण-कार्यों में अतिरिक्त नियोजन के सम्भावित मानव-वर्ष लगभग 2.63 लाख मानव-वर्ष होंगे । यहां यह उल्लेखनीय है कि चूंकि प्रगति की रिपोर्ट में वर्णित परियोजनाएं बड़ी परियोजनाओं में से हैं, अतः इस प्रकार नियोजन का जो अनुमान लगाया जाएगा, वह सिंचाई पर पूंजी-विनियोग की नियोजन-सम्बन्धी सम्भावनाओं को कुछ कम ही बतानेवाला होगा ।

बिजली : दूसरी योजना के अन्तिम वर्ष की तुलना में तीसरी योजना के प्रथम वर्ष में बिजली-परियोजनाओं के व्यय में 140 करोड़ रु० की वृद्धि का अनुमान है । दूसरी योजना का अनुभव बताता है कि बिजली-परियोजनाओं में एक करोड़ रु० के विनियोग से निर्माण-चरण में 1,600 मानव-वर्ष का नियोजन हो सकता है । इस आधार पर बिजली-परियोजनाओं और बहूद्देशीय परियोजनाओं के बिजली-सम्बन्धी अंश में अतिरिक्त निर्माण-विषयक नियोजन लगभग 2.24 लाख मानव-वर्ष होगा ।

इस प्रकार, सिंचाई और बिजली-परियोजनाओं में कुल अतिरिक्त नियोजन 4.87 (या 4.9) लाख मानव-वर्ष होगा ।

(2) **परिवहन :** परिवहन के अन्तर्गत निर्माण-कार्य मुख्यतः रेलवे, सड़कों, बन्दरगाहों और पत्तनों तथा अन्य परिवहन और संचार-साधनों के बारे में विभाजित हैं । रेलों के बारे में अनुमान है कि तीसरी योजना की अवधि में वार्षिक व्यय में लगभग 53.5 करोड़ रु० की वृद्धि होगी । रेलों में प्रति करोड़ रु० पर निर्माण-कार्यों में लगभग 1,900 मानव-वर्ष का नियोजन होगा । इस आधार पर योजना की अवधि में रेलों में अतिरिक्त निर्माण-विषयक नियोजन लगभग 1 लाख मानव-वर्ष होगा । सड़कों के बारे में भी इसी प्रकार के आकलन से,

जहां नियोजन के स्वरूप को 'भारत की सड़कों पर मुख्य इंजीनियरों की रिपोर्ट' (1961-81) के आधार पर निर्धारित किया गया है, यह पता चलता है कि योजना के अन्तिम वर्ष में सम्भावित वृद्धि के अनुसार अतिरिक्त नियोजन 2.14 लाख मानव-वर्ष होगा। बन्दरगाहों, पत्तनों तथा अन्य परिवहन और संचार-साधनों के सम्बन्ध में किए गए आकलन के अनुसार उनमें निर्माण-नियोजन के परिमाण में लगभग 31,000 की वृद्धि होगी। इस शीर्षक के अन्तर्गत कुल संख्या 3.45 लाख ठहरती है (पैराग्राफ 2 की तालिका में इसे 3.4 लाख दिखाया गया है)।

निर्माण-नियोजन के अन्य क्षेत्रों में भी आकलन की इसी तरह की पद्धतियां अपनाई गई हैं।

स्थिर नियोजन

6. निर्माण के चरण की अपेक्षा उसके बाद के स्थिरतामूलक चरण में प्रत्यक्ष नियोजन के अनुमान लगाने में कहीं अधिक कठिनाइयां हैं। आर्थिक जीवन की विभिन्न शाखाओं में अनुभवों के निकट अध्ययन पर आधारित सूचनाएं सीमित हैं। कृषि-क्षेत्र से बाहर स्थिर नियोजन के अनुमानों को या तो स्थिर नियोजन में निश्चित मूल्यों पर लगाई गई प्रति व्यक्ति आवश्यक पूंजी से जोड़ना पड़ेगा या उत्पादकता में वृद्धि के लिए उपयुक्त छूट देने के बाद प्रति व्यक्ति उत्पादन के साथ उसे सम्बद्ध करना पड़ेगा। इस पद्धति के स्पष्टीकरण की दृष्टि से तीन मुख्य क्षेत्रों (1) ग्राम और लघु उद्योगों, (2) शिक्षा, और (3) खनन के बारे में नियोजन के आकलनों को नीचे प्रस्तुत किया गया है :

(1) **ग्राम और लघु उद्योग :** लघु उद्योग-मंडल-द्वारा स्थापित अध्ययन-मंडलों ने कुछ विभिन्न क्रियाकलापों के लिए, जिन पर तीसरी योजना में खर्च किए जाने की सम्भावना है, विनियोग और नियोजन के अनुमान के बारे में कार्य किया है। लघु उद्योगों में एक व्यक्ति के नियोजन का अर्थ औसत रूप से 5,000 रु० का खर्च है। हस्तशिल्प के बारे में यह अनुमान 1,500 रु० और नारियल-जटा-उद्योग तथा रेशम के कीड़े पालने के उद्योग के बारे में मोटे तौर पर 1,000 रु० है। ग्राम और लघु उद्योगों के अन्तर्गत इनके विभिन्न कार्यों के लिए तीसरी योजना में किए गए बंटवारे के आधार पर मोटे तौर पर सरकारी क्षेत्र के व्यय-परिमाण के मुकाबले नियोजन का अनुमान 3.57 लाख है। निजी क्षेत्र में भी इसी प्रकार के अनुमानित व्यय-परिमाण से 5 लाख के नियोजन की सम्भावना है। दोनों क्षेत्रों को मिला कर कुल नियोजन 8.57 लाख या 9 लाख ठहरता है। इसमें हथकरघा, बिजली-चालित करघा और खादी तथा ग्रामोद्योगों का सरकारी क्षेत्र का 130 करोड़ रु० का व्यय-परिमाण सम्मिलित नहीं है, जिससे मुख्यतः अर्द्ध-रोजगार लोगों की स्थिति सुधरेगी।

(2) **शिक्षा :** जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, शिक्षा के क्षेत्र में स्थिर नियोजन का आकलन अध्यापक-छात्र के अनुपात पर आधारित है। आकलन के विस्तार को नीचे की तालिका में दिखाया गया है। पर्याप्त संख्या में अध्यापकों की उपलब्धि के मार्ग में उपस्थित होनेवाली कठिनाइयों के कारण इन आंकड़ों में लगभग 30,000 का समंजन किया गया है। इसलिए शिक्षा के अन्तर्गत कुल नियोजन 5.9 लाख दिखाया गया है।

शिक्षा-योजनाओं के कारण अतिरिक्त नियोजन

(लाख)

वय-वर्ग	दर्ज नाम	प्रति शिक्षक छात्र	शिक्षकों की संख्या
(अ) 6–11 वय-वर्ग			
1960-61	343.4	1:37	9.28
1965-66	496.4	1:38	13.06
	अतिरिक्त		3.78
(आ) 11–14 वय-वर्ग			
1960-61	62.9	1:28	2.25
1965-66	97.5	1:28	3.48
	अतिरिक्त		1.23
(इ) 14–17 वय-वर्ग			
1960-61	29.1	1:14	2.08
1965-66	45.6	1:16	2.85
	अतिरिक्त		0.77
(ई) विश्वविद्यालय-शिक्षा			0.4
		योग	6.18
		घटाइए	0.30
			5.88
	अथवा लगभग	5.9 लाख	

(3) **खनन:** नियोजन के ऐसे आकलन के लिए, जिसमें केवल भौतिक लक्ष्यों का प्रयोग किया गया है, उदाहरण के रूप में खनन में जिस प्रकार अतिरिक्त नियोजन के लिए कार्य किया गया है उसे पेश किया जा सकता है। पैराग्राफ 2 की तालिका में 'उद्योग और खनिज' शीर्षक के सामने 7.5 लाख का जो नियोजन दिखाया गया है, उसमें खनिज पदार्थों के बारे में नियोजन कुल का एक-तिहाई भाग (लगभग 2.5 लाख) है। आकलन के विवरण नीचे की तालिका में दिखाए गए हैं :

उत्पादन	लाख टन	उत्पादकता प्रति व्यक्ति (टनों में प्रति वर्ष)	नियोजित व्यक्तियों की संख्या (लाख में)
(अ) **कोयला :**			
1960-61	546	140	3.9
1965-66	970	180	5.4
अतिरिक्त नियोजन			1.5
(आ) **खनिज लोहा :**			
1960-61	107	170	0.6
1965-66	300	225	1.3
अतिरिक्त नियोजन			0.7
योग : कोयला और खनिज लोहा			2.2

जहां तक अन्य खनिज पदार्थों का सम्बन्ध है, सन् 1951-58 की अवधि में प्राप्त हुए अनुभवों से स्पष्ट है कि नियोजन में वृद्धि की गति प्रति वर्ष 7,000 व्यक्ति है। इसी आधार पर तीसरी पंचवर्षीय योजना में अतिरिक्त नियोजन के 35,000 होने की सम्भावना है। इसलिए कुल अतिरिक्त नियोजन का अनुमान 2.55 लाख है, जिसमें से पहले किए गए उल्लेख के अनुसार, पूर्व अनुमान में केवल 2.5 लाख को ही शामिल किया गया है।

7. बड़े और मझोले उद्योगों में स्थिर नियोजन का स्वरूप भिन्न होगा। नीचे की तालिका, जो अनिवार्यतः दृष्टान्त के रूप में है, यह संकेत देती है कि कुछ महत्वपूर्ण उद्योगों में प्रति व्यक्ति कितनी पूंजी की आवश्यकता है :

उद्योग का नाम	प्रति व्यक्ति आवश्यक पूंजी (रु०)
इस्पात	1,60,000
उर्वरक	40,000
मशीनी औजार (वर्गीकृत)	25,000
भारी मशीनी-निर्माण-संयन्त्र	1,00,000
ढलाई-गढ़ाई-संयन्त्र	1,00,000
कोयला-खनन-मशीनें	60,000
भारी बिजली का सामान	50,000

8. यहां यह कह देना उचित होगा कि जिन आंकड़ों पर उक्त आकलन आधारित हैं, वे कुल मिला कर अत्यल्प हैं। इसलिए इनसे जो परिणाम निकाले गए हैं, उनका तात्पर्य केवल एक सामान्य परिधि का सुझाव देना है। वस्तुतः इस क्षेत्र में निश्चित अनुमान सुदीर्घ अध्ययन से ही प्राप्त हो सकते हैं।

9. पैराग्राफ 2 की तालिका के प्रथम 11 क्षेत्रों की विभिन्न मदों में प्रदर्शित नियोजन के अलावा अर्थव्यवस्था में ऐसे अन्य क्रियाकलाप भी होंगे, जिनमें नियोजन में वृद्धि होगी। उदाहरण के लिए, खनन, उद्योग, रेलवे, परिवहन, निर्माण, स्वास्थ्य, शिक्षा, सार्वजनिक प्रशासन, संचार-साधन, आदि-जैसे धन्धों के समान ही व्यापार, बैंकिंग, बीमा, परिवहन (रेलवे और संगठित सड़क-परिवहन से भिन्न परिवहन), भांडारण, गोदाम, पेशों और विविध व्यक्तिगत सेवाओं के बारे में भी उनसे सम्बद्ध कार्रवाइयां होंगी, जिन्हें इस प्रकार के नियोजन की विशिष्ट स्थिति के कारण नियोजन के आकलन में सम्मिलित नहीं किया जा सकता। इनमें से कुछ क्षेत्र आत्म-नियोजन के हैं, और काम करनेवाले व्यक्तियों का एक बहुत बड़ा भाग आत्म-नियोजनमूलक धन्धों में लगा हुआ है। इसलिए इस प्रकार के अनुमानों में पर्याप्त अनिश्चय की स्थिति रहेगी, क्योंकि आत्म-नियोजित क्षेत्र में इस समय जो लोग लगे हुए हैं, वे अपने को अर्द्ध-नियोजित समझते हैं। उनमें तथा उन अन्य लोगों में, जो काम चाहते हैं, अतिरिक्त काम के वितरण की सही स्थिति मालूम करना, इस क्षेत्र में नियोजन-तन्त्र-सम्बन्धी हमारे वर्तमान ज्ञान को देखते हुए बहुत कठिन है। फिर भी, जो अध्ययन किए गए हैं, उनसे यह मालूम होता है कि इस समय इस प्रकार का अतिरिक्त नियोजन पैराग्राफ 2 की तालिका की प्रथम 11 श्रेणियों में बढ़े हुए नियोजन का 56 प्रतिशत होगा। जैसा कि 'नियोजन और जनशक्ति' शीर्षक अध्याय में बताया गया है, यह अनुमान सन् 1951 की जनगणना के आंकड़ों

पर आधारित है। जब नवीनतम जनगणना के आंकड़े उपलब्ध हो जाएंगे, तब इस प्रकार के नियोजन के परिणामों का अधिक सही लगाना सम्भव हो सकेगा।

कृषि-क्षेत्र में नियोजन

10. कृषि के क्षेत्र में, कुल अतिरिक्त नियोजन और अर्द्ध-नियोजित व्यक्तियों की स्थिति में सुधार के उद्देश्य से किए जानेवाले नियोजन के विस्तार में अन्तर करना बड़ा कठिन है। जो सीमित-सी जांच की गई है, उससे यह प्रकट होता है कि सिंचाई, मिट्टी-संरक्षण और बाढ़-नियन्त्रण से लाभान्वित क्षेत्रों में कृषि में अतिरिक्त नियोजन में 30 प्रतिशत तक वृद्धि होगी। भूमि का फिर से उद्धार करने और भूमिहीन श्रमिकों को बसाने की योजनाओं के परिणामस्वरूप होनेवाला नियोजन लगभग अतिरिक्त वृद्धि ही माना जाएगा। यदि 4 एकड़ में एक व्यक्ति को नियोजित माना जाए, तो अतिरिक्त नियोजन इस प्रकार होगा : सिंचाई से 15 लाख; मिट्टी-संरक्षण और भूमि-पुनरुद्धार से 12 लाख; बाढ़-नियन्त्रण, नालियों और प्लावन-निरोधी योजनाओं से 3 लाख; और भूमि पर भूमिहीन खेतिहर श्रमिकों को बसाने से 5 लाख। सब मिला कर लगभग 35 लाख व्यक्तियों को नियोजित किया जा सकेगा।

परिवर्तन-तालिका

एक लाख = 1,00,000

एक करोड़ = 1,00,00,000

एक गज = 0.9144 मीटर

एक मील 1.609344 किलोमीटर

एक औंस 28.3495 ग्राम

एक पौंड 0.453592 किलोग्राम

एक टन = 1.01605 मेट्रिक टन (2,240 पौंड)

एक एकड़ = 0.404687 हेक्टर

एक वर्ग गज = 0.836131 वर्ग मीटर

एक वर्ग मील = 2.589998 किलोमीटर

एक गैलन (इम्पीरियल) 4.54596 लीटर

एक घन फुट 0.028317 घन मीटर

एक ग्रास टन (जी० आर० टी०) = 2.83 घन मीटर अथवा 100 घन फुट

एक रुपया = 21 सेंट अथवा 1 शिलिंग 6 पेंस

एक डालर = 4.7619 रुपये

एक पौंड = 13.33 रुपये

पृष्ठ / पैराग्राफ / पंक्ति	निम्नलिखित के स्थान पर	निम्नलिखित पढ़िए
	अध्याय 3	
37 / फुट नोट	सांख्यिकी औसत	संख्या-संग्रह
45 / 29 / 4	तेल के पहले मुद्रित 'एक' निकाल दीजिए	
	अध्याय 4	
57 / 11 / 7	बिजली और तकनीकी शिक्षा के विकास के लिए	बिजली के विकास के लिए, तकनीकी शिक्षा के लिए
	अध्याय 5	
76 / 31 / 3	2,00,000	2,05,000
85 / स्तम्भ 5 / अन्तिम मद	40	—
87 / स्तम्भ 7 / 4.3 रेलवे-इंजिन वाष्पचालित	3,214	4,114
96 / स्तम्भ 10	मद 'जन-सहयोग और स्थानीय कार्य' के सामने 5,000 की संख्या के साथ (झ) रखिए	
97 / फुट नोट	फुट नोट (ज) के नीचे यह फुट नोट जोड़िए—'(झ) जन-सहयोग के लिए 7.5 करोड़ रुपये-सहित'	
	अध्याय 6	
131 / दूसरी मद का अन्तिम स्तम्भ	374.17	374.1
	अध्याय 8	
149 / तालिका-संख्या 4 / यरोपीय आर्थिक समुदाय के सामने का अन्तिम स्तम्भ	18	18.2
	अध्याय 12	
196 / तालिका-संख्या 1 / अन्तिम मद का अन्तिम स्तम्भ	320	330

पृष्ठ / पैराग्राफ / पंक्ति		निम्नलिखित के स्थान पर	निम्नलिखित पढ़िए
197 / तालिका-संख्या 1 / प्रथम मद का अन्तिम स्तम्भ		400	405
203 / 23 /	1	3 लाख	5 लाख 20 हज़ार
203 / 24 /	2	11 लाख टन	8.8 लाख टन
		अध्याय 13	
216 / 8 /	3	आवश्यकता	आवश्यकताओं
		अध्याय 18	
311 / 21 /	4	राष्ट्रीय विस्तार-सेवा-खंड	सामुदायिक विकास-खंड
		अध्याय 19	
315 / 4 /	2	290 करोड़ रुपये	294 करोड़ रुपये
330 / तालिका-संख्या 5 / तेलहन के सामने का अन्तिम स्तम्भ		38	38.6
342 / आन्ध्रप्रदेश के सामने 'तीसरी योजना के अन्त में अनुमानित उत्पादन' वाला स्तम्भ		87.69	87.99
342 / अन्तिम पंक्ति/ 'योग' के सामने 'तीसरी योजना में अतिरिक्त उत्पादन' वाला स्तम्भ		236.05	236.04
342 / अन्तिम पंक्ति/'योग' के सामने 'तीसरी योजना के अन्त में अनुमानित उत्पादन' वाला स्तम्भ		1,005.47	1,005.46
345 / (4) तेलहन वाले खंड में उत्तरप्रदेश के सामने दूसरा स्तम्भ		765	756
		अध्याय 20	
352 / मद-संख्या (9)		व्यापक शिक्षा तथा कर्तव्यों	व्यापक प्रशिक्षण, शिक्षा तथा कर्तव्यों
		अध्याय 22	
376 / 5 / 2		वन लगाने	वनों को फिर से ठीक-ठाक करने
381 / 28 / 3		72 करोड़ रु०	73 करोड़ रु०